होमियोपैथिक

पारिवारिक चिकित्सा

(PARIBARIK CHIKITSA)

पन्द्रहवाँ संस्करण

एम. भट्टाचार्य एण्ड कं. प्राः. लिः.
होमियोपैथिक केमिष्टस्, फार्मासिण्टस् एण्ड पाब्लिशार्स
७३ नेताजी सुभाष रोड
कलकत्ता-१

[मूल्य १०.००
[Price 10.00

भूमिका

पन्द्रहवाँ संस्करण

"पारिवारिक चिकित्सा" का १४वाँ संस्करण भी समाप्त हो गया। ईश्वरकी कृपासे इसकी हजारों-हजार प्रतियाँ हाथोंहाथ बिक गयीं। यह ग्रन्थ घरके अभिभावक, गृहिणी, पर्यटक, प्रचारक, होमियोपैथिक स्कूलके विद्यार्थी, डाक्टर प्रभृति सबके लिए ही उपयोगी है। होमियोपैथिक चिकित्सा-प्रणालीको जनप्रिय बनानेमें, हमारी यह 'पारिवारिक चिकित्सा', जो विशेष काम कर रही है, उससे हमारा परिश्रम सार्थक ही हुआ है। इस ग्रंथमें बहुतसे आवश्यक विषय, जैसे— नरदेह परिचय (सचित्र), रोगीकी सुश्रूषा, रेपर्टरी अर्थात् रोग-लक्षणके अनुसार दवाका चुनाव और इधर जिन नवीन रोगोंका पता लगा है, उन सबकी चिकित्सा, आकस्मिक विपत्तियोंकी—दुर्घटनाओंकी चिकित्सा प्रभृति दे दी गई है। सारांश यह कि एक यह पुस्तक पासमें रहनेपर ठीक एक बहुदर्शी चिकित्सक साथ रहनेका काम देगी। जिस मकानमें यह पुस्तक रहेगी, उस घरके मनुष्य थोड़े ही अभ्यास और व्ययसे हर तरहकी व्याधिसे आत्म-रक्षा कर सकेंगे। इसी उद्देश्यसे इस पुस्तककी रचना हुई है।

वर्त्तमान परिस्थितिमें कागज तथा छपाई इत्यादिका खर्च बहुत बढ़ गया है। इसलिये इसकी कीमत ज्यादे होनी चाहिये थी, फिर भी अपने ग्राहकोंकी सुविधाको देखते हुए, इसका मूल्य पूर्ववत् ही रखा गया है, जिससे इस परमोपयोगी ग्रन्थसे सर्वसाधारण भी लाभ उठा सकें।

आशा है, हमारे सुहृद पाठक-पाठिकाएँ पूर्व संस्करणोंकी तरह इस संस्करणको भी अपनाकर हमें उत्साहित करेंगे।

कलकत्ता
फरवरी, १९७०

एम. भट्टाचार्य एण्ड कं. प्राः. लिः.

सावधान ! सावधान !! सावधान !!!

होमियोपैथिक पारिवारिक-चिकित्साका बाजारोंमें नकल होना शुरू हो गया है। इससे पाठकगण सावधान रहेंगे एवं हमारे प्रकाशित 'होमियोपैथिक पारिवारिक-चिकित्सा' ध्यानपूर्वक देखकर खरीदेंगे।

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ

निर्घण्ट या वर्णानुक्रमिक

सूची

चित्र-सूची

पारिवारिक चिकित्सा

पहला अध्याय

मानव-शरीरकी रचना

किसी कार्यका भी पूरा-पूरा लाभ तबतक नहीं दिखाई दे सकता, जबतक उसको करनेवाला उसका कारण और हेतु अच्छी तरह नहीं जान जाता। किसी भी यंत्रको—एक घड़ीको ही लीजिये। उसपर अच्छी तरह ध्यान दीजिये तो आपको मालूम हो जायगा, कि इसके सभी कल-पुर्जे या चक्के अपनी-अपनी गतिके लिये भी एक दूसरेपर निर्भर हैं और यदि एक स्थानका दाँता टूट जाता है या उसका चक्का ढीला पड़ जाता है अथवा यदि वे चक्के जिस धुरीपर घूमते हैं, वही खिसक जाती है, तो सारे कल-पुर्जोंके कार्यमें गड़बड़ी पैदा हो जाती है और अन्तमें घड़ी बन्द ही हो जाती है। यदि मनुष्यके बनाये यंत्रकी यह अवस्था है, तो "मनुष्य"-रूपी ईश्वर-निर्मित इस सर्वश्रेष्ठ कारीगरीवाले यंत्रमें भी यही बात क्यों लागू नहीं हो सकती? होमियो-चिकित्सा न केवल भगवानकी इस सृष्टिकी रोग-वृद्धि-रूपी बाधाको ही दूर करती है, बल्कि इसकी सृष्टिमें इसका पुनराविर्भाव रोकती है।

अब जरा, यह सोचिये, कि यह है क्या? यह भी सोचिये, कि भगवानकी बनायी इस मूर्त्तिकी चिकित्सा करना कितना कठिन कार्य है, जिसे हमलोग करना चाहते हैं। अतएव, जो कोई, चाहे वह स्त्री हो

या पुरुष, इस मानव-शरीरके रोगोंकी चिकित्सा करना चाहता हो अथवा यों समझिये, कि बिगडे हुए स्वास्थ्यको फिरसे सुधारना चाहता हो, तो उसे उसी जगदाधारके सम्मुख नत होकर, उससे बल प्राप्त करनेकी प्रार्थना करनी चाहिये, जिसमें उसकी इस सर्वश्रेष्ठ कलाके आदर्शका स्वास्थ्य वह फिर ठीक-ठिकाने ला सके। केवल वही ऐसी शक्ति प्रदान कर सकता है, जिसमें यह कार्य हो सके। अतएव, हम सबको नत-मस्तक हो, उसकी कृपा प्राप्ति करनेके लिये सर्वप्रथम प्रार्थना करनी चाहिये।

हाँ, हमने इस मानव-शरीरकी उपमा, ऊपर एक यंत्रसे दी है। निःसन्देह यह एक यंत्र ही है और तबतक तो यह यंत्र अवश्य ही है, जबतक इसका नित्यका कार्य-कलाप चल रहा है; परन्तु यह भी समझ रखना चाहिये, कि यह केवल यंत्र ही नहीं है, बल्कि यह एक चैतन्य पदार्थ—एक जीवित शक्ति तथा एक कार्य-क्षम, बुद्धि-सम्पन्न जीव है। अब आगे हम यह बतानेकी संक्षेपमें चेष्टा करेंगे कि यह यंत्र है क्या, कैसे बना है और इसमें किन-किन प्रधान यंत्रोंका स्थान है अर्थात् इस संक्षिप्त दिग्दर्शनके आधे भागसे नरदेह-तत्त्व और दूसरे आधे अर्थात् उत्तरार्धमें उन यन्त्रोंका कार्य तथा मानव-स्वास्थ्यपर उनका प्रभाव बताया जायगा।

शरीरका निर्माण

साधारणतः यह मानव-शरीर—

(क) कंकाल या अस्थियोंका ढाँचा (skeleton),

(ख) अस्थियोंका बन्धन या आवरण (appendages),

(ग) गह्वरोंमें रखे हुए विभिन्न यंत्र या अंग (viscera)—इन तीन प्रधान उपादानोंसे रचा हुआ है और इसी ढाँचेके भीतर ईश्वरका सर्वश्रेष्ठ विकास-चैतन्य या जीवात्मा रहता है।

पहले कंकाल या अस्थियोंका ढाँचा है। जो मांस, चर्म, शिराएँ, धमनियाँ, स्नायु प्रभृति कोमल अंश तथा शरीरके भीतरके गह्वरोंमें रखे हुए यंत्रोंको सुरक्षित रखनेका आधार-स्वरूप है। हड्डियोंसे मांस-पेशी, पेशी-बन्धन, बन्धनियाँ, सौत्रिक-तन्तु आदि लिपटे हुए हैं और सुरक्षित रूपसे अपने-अपने स्थानपर रहते हैं। यदि अस्थियाँ न रहतीं, तो इन्हें आधार ही कौन-सा मिलता? हड्डियाँ आपसमें मिलकर सन्धियाँ बनाती हैं और सन्धियाँ गति प्रदान करनेमें सहायता प्रदान करती हैं।

अस्थियोंका यह सन्धि-निर्माण करनेवाला पटल अर्थात् वे स्थान, जो आपसमें एक दूसरेसे सम्मिलित होते हैं, वहाँ कोमल अस्थिकी तरहके पदार्थका एक आवरण चढ़ा हुआ है, जिसे **सन्धि-समूहोंकी उपास्थि** (articular cartilage) कहते हैं। सभी अस्थियाँ तन्तुमय, शिरा-समन्वित झिल्लियोंसे ढँकी है, इन्हें **अस्थि-गात्रावरण** (periosteum) कहते हैं। इन्हीं स्थानोंसे रक्तवाहिनियाँ (शरीरको पोषण करनेवाली धमनियाँ) हड्डियोंमें उन छोटे-छोटे **अस्थि-छिद्रों** (foramina) से प्रवेश करती हैं, जो उनके पटलपर बने हैं। जबतक यह अस्थि-गात्रा-वरण स्वास्थ्यपूर्ण और कार्य-शक्ति-सम्पन्न रहता है, तबतक अस्थियोंके सभी दोष या टूटना, खिसकना प्रभृति सुधारे जा सकते हैं, इसके बाद नहीं। यदि एक हड्डीका टुकड़ा काटा जाये, तो उसे देखनेपर मालूम होगा कि इसकी सतह कड़ी और ठोस है अर्थात् वह कठिन तन्तुओंसे निर्मित है और इसके भीतरी भागमें स्पंजकी तरह बहुतसे छेद हैं; इसीलिये इन्हें छिद्रमय या जालमय तन्तु कहते हैं। इन छिद्रमय तन्तुओंमें **लाल मज्जा** (red marrow) भरी रहती है, जिसे अस्थि-मज्जा कहते हैं। छोटी और लम्बी हड्डियोंके जालमय अंशमें जो खाली जगह है, उसीमें मज्जा भरी रहती है; परन्तु लम्बी हड्डियोंमें उनका मध्य भाग मज्जासे एकदम भरा नहीं रहता। यह खोखला स्थान हड्डियोंके बीचकी मज्जाकी नली (medullary cavity) कहलाती है।

मज्जा दो तरहकी होती है—लाल और पीली। लाल मज्जा हड्डीके जालमयी अंशोंमें और पीली मज्जा बडी हड्डियोंके शिरोंमें दिखाई देती है। आकार और लम्बाईके अनुसार हड्डियाँ भी कई प्रकारकी होती है। इनमें कुछ चिपटी; नाटी, टेढी-मेढ़ी या लम्बी होती है। हाथ-पैर आदि जिन अंगोको अधिक काम करना पडता है, उनकी हड्डियाँ लम्बी (long), पिंडली, कलाई आदिकी नाटी (short), कुछ चिपटी या खोलकी तरह, जैसे—खोपडी आदिकी हड्डियाँ तथा कूल्हा, कनपटी, गाल प्रभृति स्थानोंकी अस्थियाँ टेढ़ी-मेढी (irregular) होती हैं। लम्बी हड्डियोंमें दो शिर होते हैं और एक **मध्य-भाग** (central shaft)।

कंकालकी हड्डियाँ एक दूसरीसे तीन जरियोंसे जुड़ी हुई हैं :—प्रथम सेवनी सन्धि (sutures) अर्थात् दूसरी हड्डीके नोकीले किनारोंसे मिलती हैं, जैसे पार्श्विकास्थि (parietal bones) में होता है, जिससे मूर्द्धादेश बनता है। दूसरे उपास्थि या कोमलास्थिमे, जिसके द्वारा सन्धि-गठन करनेवाली उपास्थि (articular cartilage) बनती है और यह सन्धि-स्थानोंमें ही होता है। तीसरे बन्धन द्वारा (ligaments)। सन्धियाँ एक बहुत ही कडे चमकीले पदार्थसे घिरी रहती हैं। इन्हें **सूत्रहीन उपस्थियाँ** (articular capsule) कहते हैं ; इनके द्वारा हड्डियाँ अपने ठीक-ठीक स्थानपर रहती है और खिसक नहीं जातीं।

समूचे कंकालपर मनोयोगपूर्वक ध्यान देनेसे मालूम होता है कि :—

मेरुदण्ड :— यह बीचो-बीच का आधार है।	इससे खोपडी (skull) को आधार प्राप्त है। इससे दो गह्वर बनते हैं—वक्ष-गह्वर (thorax) और उदर-गह्वर (abdomen)। इसीपर वस्ति-गह्वरका कटिबन्ध है। उर्ध्व-शाखा (upper extremities)। अधःशाखा (lower extremities) इन दोनोंका ही इससे सम्बन्ध है।
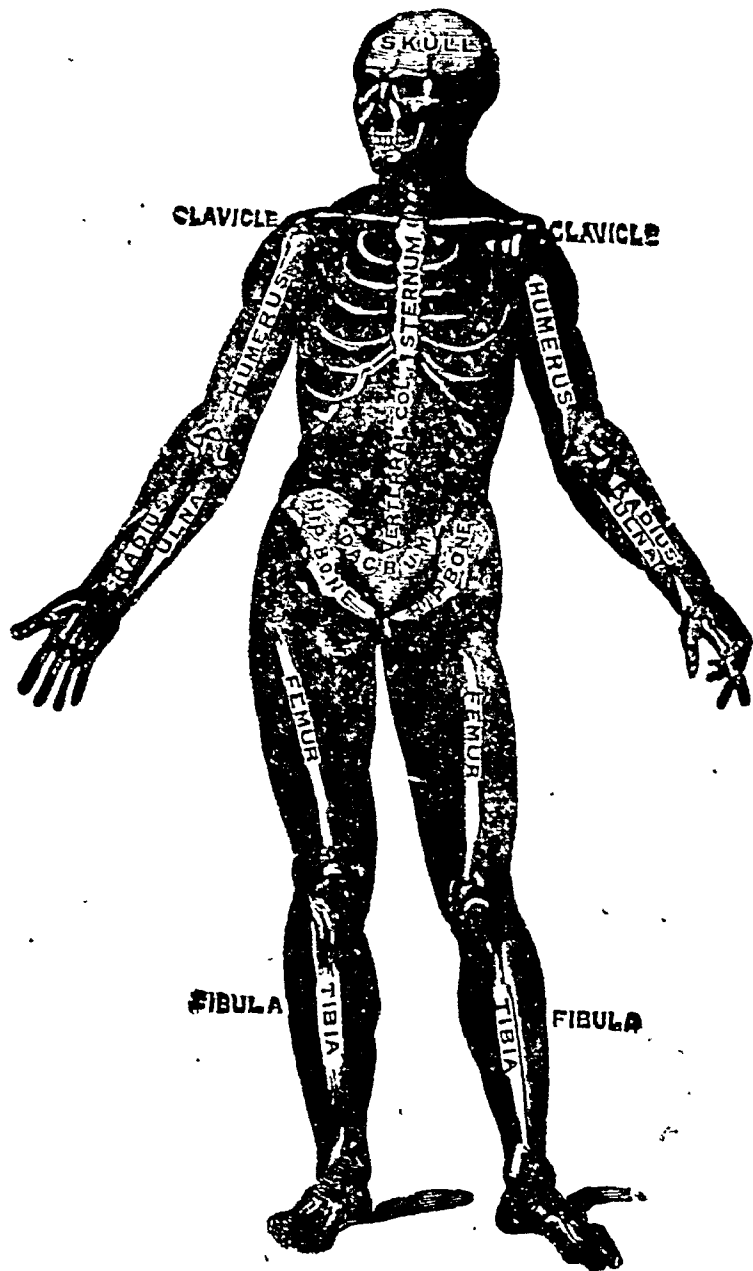
चित्र नं० १

कंकाल—इसमें प्रधान-प्रधान हड्डियाँ दिखाई गई हैं।

(१) खोपड़ी (skull), (२) वक्षोस्थि (sternum), (३) अक्षकास्थि

मेरुदंड (spinal or vertebral column) इस तरह बना है। इसमें जिन हड्डियोंकी लडी जुडी हुई हैं, उन्हें कशेरुका (vertebra). कहते हैं। गर्दन, पीठ और कमरसे नीचेतक एक डण्डे-सी जो एक कडी चीज है, उसे मेरुदण्ड, रीढ या कशेरु कहते हैं। इसमें मलद्वारके ऊपर-वाले भागसे लेकर गर्दनतक एक दण्ड-सा बन गया है। इन्हें ही कशेरुका कहते हैं। समस्त मेरुदण्डमें २६ अस्थियाँ हैं।

७ गर्दनमें (cervical or neck bones)।
१२ पृष्ठ कशेरुका (पीठमे dorsal vertebra)।
५ कटि कशेरुका (कमरमें lumber vertebra)।
५ त्रिकास्थि (sacrum bones) (एकमें मिल गई हैं)।
३ गुदास्थियाँ (tail bones) (ये भी एक हो गयी हैं)।
इस तरह वास्तवमें ३२ की ये २६ हुई हैं।

कशेरुकाकी हड्डियाँ कुछ टेढी मेढी और ऊँची-नीची होनेपर भी ठीक ढङ्गसे एक-पर-एक रखी हुई हैं और अगूठीकी भाँति होती हैं। बीचमें छिद्र होता है (vertebral foramen)। इसके अलावा इनमें एक पूँछ सी निकली होती है। इसके दो मोटे और पतले अंश हैं। मोटा अंश पिण्ड कहलाता है और यही घेरा है, जिसका पिछला भाग नोकदार है और जो **कशेरुका कंटक** (spinous process) कहलाता है और घेरा तथा पिण्ड मिलनेकी जगह **चक्रमूल** (pedicle) कहलाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि मेरुदण्ड एक अस्थिमय आधार है— यही सिरका आधार है—इसीपर सर रहता है और भीतरी अंशमे यह

(*clavicle*), (४) प्रगण्डास्थि (humerus) (५) बहिः प्रकोष्ठास्थि (radius ulna), (६) कशेरुका-अस्थि (vertebral column), (७) उर्वस्थि (hip bone), (८) जघास्था अस्थि (femur), (९) जंघास्थि (tibia), (१०) अनुजघास्थि (fibula)।

सुषुम्ना या मज्जाको भी धारण किये हुए हैं। सामने अगल-बगल तो मेरुदण्ड कुछ भी झुक सकता है ; पर इसकी पीछेकी ओर बिलकुल ही गति नहीं है। खड़े होने और बैठनेकी स्थितिपर ख्याल न रखने और टेढ़े-मेढ़े बैठने और खड़े होनेकी वजहसे कशेरुका-गात्र (vertebral body) बेतरतीब हो जाती है और इस तरह घाव या अस्थिक्षत (caries or necrosis) पैदा हो जाता है।

बराबर पीठकी कशेरुकाओंमें प्रत्येक ओरसे बारह-बारह पसलियाँ या पर्शुकाएँ आकर जुड़ गयी हैं। पसलियोंको **पंजरास्थि** (costæ) कहते हैं। बारह पसलियोंमें पहली सात सामनेकी ओर मध्य धड़में वक्षोस्थि या छातीकी हड्डीसे जुड़ी हुई हैं। वक्षोस्थि तीन भागोंसे बनी है। ऊपरके दोनों भाग अस्थिमय हैं और नीचेवाला भाग, जीवनके मध्य भागतक कोमल और लचीला रहता है। ४० वर्षकी उम्रके बाद यह हड्डीमें परिणत हो जाता है और कड़ा हो जाता है। इस शरीर-शास्त्रके सम्बन्धकी भरपूर जानकारी न रहनेके कारण ही जब चालीस वर्षकी उम्रके बाद यह कड़ा हो जाता है, तो लोग इसे यकृत रोग समझने लगते हैं।

अब हम फिर पसलीपर आते हैं। ऊपर कह चुके हैं कि वक्षोस्थि तीन भागोंमें विभक्त है ; वक्षोस्थि (sternum) कुछ चौड़ी और चिपटी है। यह गर्दनसे आरम्भ होकर 'पेटकी कौड़ी' (epigastrium) तक चली गयी है। ऊपरी भाग कुछ चौड़ा है। इसी स्थानपर **स्थालक** (facet) हैं अर्थात् दोनों ओरकी हड्डियोंके लिये गड्ढे हैं। ये सात-सात गड्ढे हैं, जिनपर पसलियोंकी नोक रहती है। ऊपरका चौड़ा भाग **ऊर्ध्व-खण्ड** (manubrium), बीचका लम्बा भाग **मध्य-खण्ड** (mesosternum) और सबसे निचला **कोमल भाग**—अग्र-खण्ड (xiphoid process या cartilage) कहलाता है। पहली सात पसलियाँ **पूर्ण पंजरास्थियाँ** (true ribs) कहलाती हैं ; क्योंकि

ये वक्षोस्थिसे जुडी हुई है। बाकी पाँचमें ऊपरवाली तीनकी उपास्थि सातवीं पसलीको उपास्थिसे जुड़ी हुई है। अन्तवाली दो पसलियाँ झूठी या तैरती पसलियाँ इसलिये कहलाती हैं, कि इनका एक सिरा किसीमें जुड़ा नहीं रहता। यहाँ यह भी समझ रखना चाहिये कि पसलियाँ वक्षोस्थिसे एकदम जुडी नहीं रहती, उनके बीचमें एक उपास्थि-सी रहती है, जिसे **उपपर्शुका** (costal cartilage) कहते है। पीठकी प्रथम कशेरुका तथा दोनों तरफकी पहली पसलियाँ और वक्षोस्थिके ऊपरी किनारेपर एक छेद रहता है। इसके ही भीतरसे रक्तवाहिनियाँ गर्दनसे वक्षमें आती हैं और अन्य कितनी ही नाड़ियाँ बीचसे ऊपरको जाती हैं।

अब हम खोपडी या माथेकी हड्डियोंका विषय बताते है।

खोपड़ीमें :—१। **सम्मुख कपालास्थि** (frontal bones)—यह ललाट या सामनेकी ओर है।

२-३। **पार्श्व कपालास्थि दोनों** (parietal bones) (ये दोनों ओर रहती हैं)—ये ही मिलकर मूर्द्धदेश या मस्तकका शिरोभाग बनाती हैं।
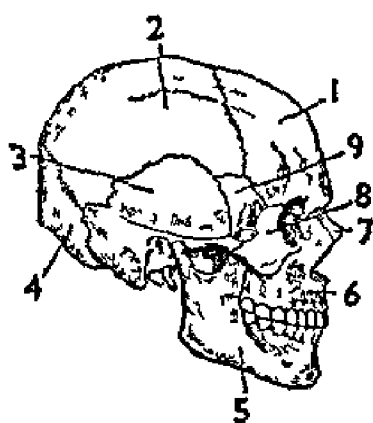
चित्र नं० २

४। **पश्चात् मस्तकास्थि** (occipital bones)—इससे माथेका पिछला भाग बनता है।

५-६। **दोनों शंखास्थियाँ** (temporal bones)—ये दोनों भी दोनों तरफ हैं। इनमें ही वाह्य कर्णरन्ध्र (outer ear) है। इनके भीतर छोटी **अस्थियाँ** (ossicles); **मध्य-कर्ण** (कानका विचला भाग—middle ear) भी है।

७। **कीलकास्थि या जतूकास्थि** (sphenoid bone)—यह दोनों शंखास्थियोंके भीतर हैं। इससे मस्तकका तलदेशका भाग बनता है।

८। **शौषिरास्थि या झर्झरास्थि** (ethmoid bone)—यह नाकके ऊपर, आँखके पीछेकी ओर है। इसके भीतरसे स्नायु सभी भीतर आँखोंमें गये हैं। बचपनमें ये मिले नहीं रहते अर्थात् असंयुक्त (open fontanelle) रहते हैं। सात-आठ वर्षकी उमरमें मिलकर दृढ़ हो जाते हैं।

इस तरह आठ हड्डियोंसे खोपड़ी बनती है।

अब चेहरेपर ध्यान दीजिये—यह नीचे लिखी हड्डियोंसे बना है :—सम्पूर्ण मुखमण्डल १४ हड्डियोंसे बना है।

२ **उर्ध-हन्वस्थि** (superior maxillary bone)—इससे गाल बननेमें सहायता मिलती है।

१ **अधो-हन्वस्थि** (inferior maxillary bone)—इस अधो-हन्वस्थिमें दाँत रहते हैं। इसे निचले जबड़ेकी हड्डी भी कहते हैं। इनके सम्मिलनसे उर्ध-हन्वस्थि या जबड़ेकी हड्डीकी सहायतासे कठिन तालु और नाककी छत बनती है। वास्तवमें प्रत्येक नाकका पिछला भाग उस शून्य स्थानसे मिला रहता है, जो **उर्ध हनु-कटोर** (antrum of highmore) कहलाता है। इसी कारण किसीको यदि सर्दीकी बीमारी हो जाती है, तो यह रोग भीतर फैलता-फैलता उर्ध-कोटरमें जा पहुँचता है और गालोंके उभारतक दर्द चला जाता है।

उर्ध-हन्वस्थिमें दो टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियाँ दाहिने और बाएँ दोनों ओर रहती हैं। इनमें १६ दाँतोंके स्थान बने हैं अर्थात् दोनों अंशोंमें आठ-आठ हैं। ये दोनों जहाँ मिलती हैं, वहीं सम्मुख भाग और नाकके नीचेकी सतह बनती है।

अधो-हन्वस्थि जूतेकी नालकी तरह रहती है। इसके महराबसे हनु बनता है। इसमें एक उभार रहता है, जिसे हनुकूट (ramus of mandible) कहते हैं। इनकी दो पीठें होती हैं, बाहरीमें ओठकी गति प्रदान करनेवाली पेशियाँ तथा भीतरीमें जीभको गतिशील बनानेवाली पेशियाँ हैं।

२ **अश्रु-अस्थि** (lachrymal bones)—ये चक्षु-गह्वरके सामनेवाले भागमें हैं। इसकी राहसे आँसू निकलते हैं और नाकमे आ जाते हैं।

२ **गण्डास्थि या कपोलास्थि**—ये चेहरेके बाहरी तथा ऊपरी भागमें हैं, इनसे ही गालोंका ऊपरी उभार बनता है।

२ **तात्वस्थि** (palate bones)—ये एक एक दोनों ओर रहती हैं और नाकके पीछेकी ओर रहती हैं। इससे तालु बनता है। तालुके दो अंश हैं। एक कठिन और दूसरा कोमल। कठिन अंश दाँतका पिछला भाग है और इसके पीछले किनारेसे कोमल तालु मिला हुआ है।

२ **अधोशुक्तिका अस्थि** (inferior turbinated bone)—ये दोनों ही नासा गह्वरोंमें एक एक कर रहती हैं।

नासा-फलकास्थि (vomers)—ये नासा विभाग या नाकके बीचकी दीवारका पिछला भाग बनाती हैं।

चक्षु-गह्वरके सम्बन्धमें अलग ही बतानेकी आवश्यकता है। सरके दोनों ओर एक एक गोल गड्ढा है, जिसमें चक्षु गोलक रखा हुआ है। यह सात हड्डियोंसे बना है—(१) ललाटास्थि (frontal bone), (२) झंझरास्थि (ethmoid bone), (३) जतुकास्थि (sphenoid bone), (४) अश्रु अस्थि (lachrymal bone), (५) उर्ध्व हन्वस्थि (superior maxillary), (६) ताल्वस्थि (palate bon) और (७) गण्डास्थि (molar bones)।

मस्तक और चेहरेका वर्णन समाप्त करनेके पहले आवश्यक है कि चिकित्सा-शास्त्र तथा शल्य-शास्त्र (surgical) सम्बन्धी बात कुछ और भी बता दी जायें। पहली बात तो यह है कि वे दोनों स्थान, जहाँ दोनों पार्श्व-कपालास्थियाँ, ललाटास्थियाँ पश्चात् मस्तकास्थिसे मिलती हैं, वे बच्चोंके **ब्रह्मरन्ध्र** (fontanelles) कहलाते हैं। यह **पूर्व-विवर** (anterior fontanelle) एक तिकोनिया गड़हा है, जो एक वर्षसे छोटे बच्चोंमें ही दिखाई देता है और यहीं सम्मुख कपालास्थिसे दोनों पार्श्व कपालास्थियोंसे मिलती है। **अधिपति रन्ध्र** (posterior fontanelle) एक सम-चतुर्भुज—चौकोना गड़हा है। यह भी पश्चात्-मस्तकास्थि और पार्श्व-कपालास्थिके संयोग स्थानपर छः महीनेसे भी छोटे बच्चोंमें दिखाई देता है। ये गड़हे ज्यों-ज्यों बच्चे बड़े होते जाते हैं, त्यों-त्यों भरते जाते हैं। दूसरी आवश्यक बात यह है, कि निम्न-हनुमें किसी तरहका झटका या आघात लगनेपर यह मस्तिष्कमें जा पहुँचता है। यह आघात यदि एकाएक और बहुत जोरका हो, तो इसमें खोपड़ीकी तली फट जा सकती है। खोपड़ीके भीतर ही **मस्तिष्क** (brain) सुरक्षित है। मस्तिष्कके विषयमें पीछे बताया जायगा।

अब हम वस्ति-गह्वर (pelvis) पर आते हैं। इनमें जनन-मूत्र-सम्बन्धी यंत्र हैं तथा इससे मेरुदण्डका भी आधार प्राप्त होता है। इसमें निम्नलिखित यंत्र हैं :—

२ **श्रोणि-फलक** (os innominata)—एक-एक दोनों ओर—दाहिने और बाएँ हैं।

१ **त्रिकास्थि** (sacrum)—यह ५ त्रिक-कशेरुकाओंसे बनी है।

१ **गुदास्थि** (coccyx)—यह तीन कशेरुकोंसे बनी है।

वस्ति-गह्वरमें ऊपरकी ओर एक छिद्र है तथा नीचेकी ओर भी एक छिद्र है, जिसे वस्ति-बहिर्द्वार कहते हैं। वस्ति-गह्वरका सामनेवाला भाग **सन्धि-विटप** (symphisis pubes) कहलाता है। इसी

स्थानपर बाह्य-जननेन्द्रियाँ रहती हैं अर्थात् पुरुषोंको पु०-जननेन्द्रिय और स्त्रियोंको योनि रहता है। वस्ति-गह्वरका वह अंश, जिसके सहारे हमलोग बैठते हैं, वह **कुकुन्दरास्थि या वंक्षणास्थि** (ischium) है।

वस्ति-गह्वरकी अस्थियाँ
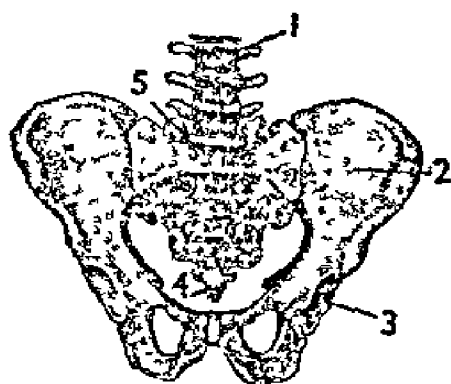
कटि-कशेरुका—vertebral column.
नितम्बास्थि—hip bone.
त्रिकास्थि—sacrum.
गुदास्थि—coccyx.
उर्वस्थि शिर-गह्वर—वंक्षणोलूखल acetabulum.

चित्र न० ३

पुरुष तथा स्त्रीके वस्ति-गह्वरमें अन्तर रहता है। नीचे दिये विवरणसे यह स्पष्ट मालूम हो जायगा :—

पु० वस्ति-गह्वर	स्त्री-वस्ति-गह्वर
हड्डियाँ दृढ रहती है। मांस-पेशियोंके कारण जो गह्वर बन जाता है, वह गहरा और संकीर्ण रहता है। वस्थि-गह्वरके ऊपरी प्रान्तका छिद्र छोटा और तग होता है।	हड्डियाँ हलकी होती हैं। वे कम ऊपर उठी रहती हैं। गह्वर में प्रशस्त स्थान रहता है। ऊपरी प्रान्तका छिद्र चौड़ा होता है।
त्रिकोणास्थि बहुत टेढी रहती है। वस्ति-गह्वरका महराव भी संकीर्ण होता है।	त्रिकोणास्थि कम टेढ़ी रहती है। वस्तिदेशका महराव अधिक चौडा होता है।

अब हम मानव-अंगकी शाखाओंका वर्णन करते हैं :—

वास्तवमें मानव शरीरके तीन भाग हैं। सबसे ऊपरवाला भाग **मस्तक** (head), बीचवाला भाग **धड़** (body) तथा उसके नीचेका

भाग **निम्नांग**। यह निम्नांग उदरके नीचेवाले भागसे ही आरम्भ हो जाता है। इसे निम्न-शाखा भी कहते हैं। शाखाएँ दो हैं—**उर्ध-शाखा** और **अधो-शाखा** (upper and lower extermities)। उर्ध-शाखामें कन्धेके बगलसे दोनों ओर की दोनों बाँह तथा हाथ और अधो-शाखामें कुल्हेसे लेकर दोनों पैर और उनके अंश आ जाते हैं।

उर्ध-शाखामें—दो बाँह हैं। प्रत्येक बाँह तीन भागोंमें विभक्त हैं :—(१) प्रगण्ड (बाँह-arm), (२) प्रकोष्ठ (fore-arm) और (३) हाथ (hand)। कन्धे (shoulders) के साथ दोनों बाँह मिले हैं। कन्धा दो स्कन्धास्थि (scapula) और कंठास्थि (clavicles or collar bones) से बना है। इसीलिये कंठास्थिकी गणना भी बाँहोंकी अस्थिमें होती है।

चित्र नं० ४

उर्ध-शाखाकी अस्थियाँ

(१) अक्षक या कंठास्थि (clavicle) सामने
(२) स्कन्ध-अस्थि (scapula) पीछे।
(३) प्रगण्डास्थि (humerus) बाँहमें।
(४) चक्रदण्ड अस्थि (radius) अग्रबाहुमें।
(५) केहुनो, प्रकोष्ठास्थि (ulna)।
(६) मणिवन्ध अस्थि (carpal bone)।
(७) करभ अस्थि (metacarpal bone)।
(८) अंगुल्यस्थि (phalanges)।
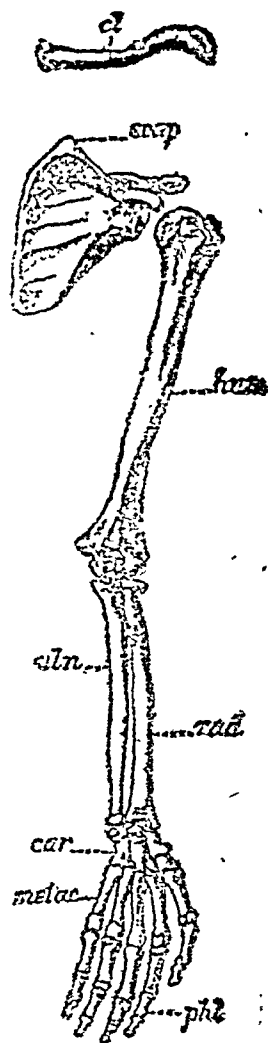
अधो-शाखाकी अस्थियाँ

बस्तिगह्वर कटिबन्ध (pelvic girdle) संयुक्त

श्रोणिफलक (सामने) oss innominatum.

त्रिकदेश (पीछे) sacrum

जंघास्थि (जंघा) femur

पश्चाद् जंघास्थि—fibula.

सम्मुख जंघास्थि—tibia.

जानु-सन्धि अस्थि—patella.

चरण-सन्धि अस्थि—tarsal bone

पदतल अस्थि—metatarsal bone.

पदांगुलि अस्थि—phalanges.

चित्र नं० ५
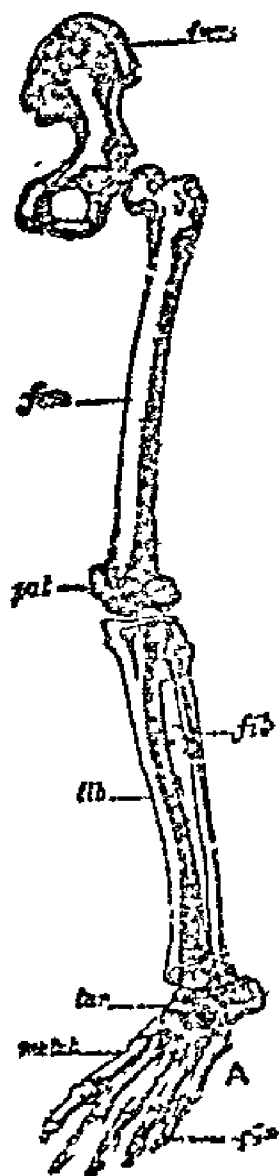
हाथ और चरणकी हड्डियोंका विवरण निम्नलिखित है :—

हाथकी हड्डियाँ

मणिवंध-अस्थि (carpal bones).
नौका-अस्थि (scaphoid).
त्रिपार्श्विक-अस्थि (cuneiform).
अर्धचंद्राकार अस्थि (semilunar)
मटराकार अस्थि (pisiform).
त्रिकोणास्थि (tepizoid)— कलाईकी दूसरी पंक्तिकी बाहरी अस्थि।
शिरोधारी अस्थि (os magnum)
करभ अस्थि कुल ५ हैं; प्रत्येक अंगुलीमें ३-३ अंगुल्यस्थियाँ (phalanges) होती हैं।

चरणकी हड्डियाँ

चरण-संधि अस्थि (tarsal bone or ankle bones)
गुल्फास्थि (astragalus)
नौकास्थि (scaphoid)।
पार्ष्णि (os calcis)।
त्रिपार्श्विका (cuneiform)।
घनास्थि (cuboid bone)॥
पदतल अस्थि (metatarsal bone) ५।
पादांगुलि अस्थि (phalanges) तीन-तीन प्रत्येक अंगुलीमें और अंगूठेमें २ होती हैं।

समूचे कंकालमें ऊपर बताई अस्थियाँ होती हैं। ये अस्थियाँ जहाँ मिलती हैं, वह सन्धि-स्थान (joint) कहलाता है।

सन्धियाँ दो प्रकारकी होती हैं—(१) चल (movable) और (२) अचल (immovable)। चल सन्धियोंसे घुमाव-फिराव, मोड़ आदि होता है। अचल सन्धियाँ ज्यों-की-त्यों रहती हैं। ये आपसमें जुड़ी रहती हैं। चल-सन्धियोंके सिरे जिस सौत्रिक-तन्तुसे बँधे रहते हैं, उन्हें ही बन्धन (ligaments) कहते हैं।

अब आगे हम अस्थिके ऊपरवाले सामानोंको बताते हैं :—

मांस-पेशियाँ

मांस-पेशियाँ (muscles) या मांस एक लसदार पदार्थका समूह है। इसमें संकोचन-शक्ति है। मांस-पेशी या तो कुछ मांसोंका गुच्छा

है या एक-एक **मांस-सूत्र** है। इसमें प्रत्येक तन्तुमें कितनी ही सेलें या कोष होते हैं। कहा जाता है कि ये मांस-पेशियाँ एक अस्थि-स्थानसे उत्पन्न होती हैं और दूसरे अस्थि-स्थानमें चिपक जाती है। मांस-पेशियोंका मध्य घना भाग मासोदर कहलाता है। इसके सिरे (अर्थात् उत्पन्न होने और मिलनेका स्थान) **कंडरा** (tendons) कहलाता है। ये बहुत ही मजबूत और चमकीले तन्तु होते हैं, जिनमें लचीलापन नहीं होता। मांस-पेशियोंमें स्नायुके सिरे प्रवेश करते हैं। इनमें अनेकानेक रक्त-वाहिनियाँ होती है। प्रत्येक मांस-पेशीमें तनाव रहनेका आभास होता है। प्रत्येक मांस-पेशीमें लचीलापन, संकोचनशीलता और उत्तेजनशीलता रहती है।

स्नायु (nerve)—स्नायु सब बिजलीके तारकी तरह जीवनसे ओत-प्रोत हैं। वे चमकीले, कड़े और डोरीकी तरह हैं। वे या तो मस्तिष्कसे अथवा मेरुदंडसे मज्जासे उत्पन्न होते हैं और चर्म, मांस-पेशी तथा अन्य यंत्रोंमे सम्मिलित होकर कार्य करते रहते हैं। ये आगे लिखी तीन क्रियाओंमेंसे कोई-न-कोई क्रिया करते हैं :—(क) **चालक स्नायु** (motor nerves)—इसका सम्बन्ध पेशियोंकी गतिसे होता अर्थात् ये कुल मास-पेशियोंकी सिकुड़ने, फैलने या इकट्ठा होनेका आदेश देते हैं, जिसमें वे अन्त होते हैं। (ख) **सांवेदनिक स्नायु** (sensory nerves) हैं—इसका सम्बन्ध ज्ञान या चेतनासे रहता है। जैसे—हाथ जला और मस्तिष्ककी खबर पहुँची—यह काम सांवेदनिक नाड़ी या स्नायुसे होता है अर्थात् चर्म, उपचर्म अथवा जहाँ वे रहते हैं, वहाँसे दुःख, कष्ट, आनन्द, सर्दी, गर्मी, स्पर्श, स्वाद जैसा कुछ हो, उसकी खबर मस्तिष्कको पहुँचा देते हैं।। (ग) इनके अलावा ; वे स्नायु हैं, जो **पोषक स्नायु** (trophic) कहलाते हैं। वे जिन स्थानोंपर हैं, वहाँ पोषक-भाव भरते हैं। उदाहरणार्थ—यदि कोई स्नायु कट जाये, तो जिन भागोंका यह पोषण-करता था, वे भाग इसके अभावमें पोषण

नहीं प्राप्त करेंगे या दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता है कि वे क्षय हो जायँगे। शरीरके प्रधान स्नायु ये हैं :—**गृध्रसी स्नायु**—यह जंघाके पीछेसे ऊपर जाता है। दूसरा है—**प्रगंडिय** (brachial) स्नायु, जो बगलके गड़हे या कक्ष-गह्वरसे निकलता है। बाकी स्नायु सब छोटे-छोटे या सूक्ष्म हैं, वे मांस-पटलसे छिपे हुए हैं। वे स्थानिक रक्त-वाहिनियोंके साथ ही पटलमें जाते हैं और उसके साथ ही बट जाते हैं। उनकी रक्षाका प्रबन्ध हड्डियों द्वारा होता है।

रक्त-वाहिनियाँ—हृत्पिण्डसे कितने ही तरहके नल या नाड़ियाँ निकलती हैं। इनके द्वारा ही सारे शरीरमें खूनका दौरान होता है। इसी वजहसे इन्हें **रक्तवहा नाड़ियाँ** (blood vessels) कहते हैं। इनके तीन विभाग हैं :—(१) **धमनी** (artery) या वे नालियाँ, जिनमें शुद्ध लाल रक्त प्रवाहित होता है और जिसके द्वारा हृदयसे निकलकर शुद्ध रक्त शरीरके दूर-दूरतकके भागमें पहुँचता है। इसपर मांसकी तह चढ़ी रहती है और ये कट तथा टूट जानेपर सिकुड़ सकती है। उनमें धमक होती है। हृदयसे जब झोंकसे रक्त निकलता है, तो वह झोंकसे ही धमनियोंमें घुसता है। इसीलिये उसमें एक प्रकारका स्पन्दन होता है। स्पन्दन भी एक स्थानसे दूसरे स्थानपर धमनी ही पहुँचाती है। जब कोई धमनी कट जाती है, तो उससे धारसे और झोंकेसे खून निकलता है और यह रक्त चमकीले रङ्गका होता है। (२) **शिराएँ** (veins)—इससे शरीरके सभी भागोंसे मैला या गन्दा काला अशुद्ध रक्त हृत्पिण्डके दाहिने भागमें पहुँचता है। इनपर मांसका आवरण नहीं रहता और ये कट जाती हैं, जो इनसे धारा बाँधकर काला रक्त निकलता है। धमनियाँ जब छोटी हो जाती हैं, तो वे **धमनिका** (arterioles) कहलाती हैं और शिराएँ जब छोटी होती हैं, तब **शिराक** (venules) कहलाती हैं। (३) **कैशिका नाड़ियाँ** (capillaries)—जब शरीरके किसी भागमें प्रवेश करती हैं, तब

धमनिका धीरे-धीरे छोटी होती जाती है, यहाँतक कि वे इतनी छोटी हो जाती हैं कि एक सेलवाली दिवारमें भी प्रवेश कर सकती हैं। इस अवस्थामें इन्हें **कैशिका नाड़ी** (capillaries) कहते हैं। इस तरहकी कैशिका नाड़ियाँ एक ओर तो धमनियोंकी क्षुद्र शाखाएँ होती हैं, जिनके द्वारा एक धमनीसे दूसरी मिलती है। दूसरी ओर ये ऐसी भी आदि शाखाएँ हैं, जो शिराकमें भी प्रवेश करती है। इस तरह ये कैशिकाएँ धमनियोंके अन्तका और शिराकके आरम्भका भाग होती हैं। इनमे धमनियोंका स्पन्दन नहीं होता ; परन्तु इनके द्वारा रक्त टेढी धारसे गिरता है। ये नदीके दियारकी भाँति हैं। ये शरीरके प्रत्येक सेल या कोषमें शुद्ध रक्त पहुँचाती है और वहाँसे अशुद्ध रक्तको एकत्रकर, शिराओंके द्वारा हृदयके दाहिने भागमें पहुँचा देती हैं। नदीके दियारकी भाँति कैशिका नाड़ियोंका घेरा कभी-कभी उन रक्त-वाहिनियों (धमनी या शिरा) से भी बड़ा होता है, जो कैशिका नाड़ियोंके भीतरसे जाती है। धमनियोंसे रक्त तेजीसे और झटकेसे, धीरे-धीरे और बिना किसी झटकेके कैशिकाओंसे, शिराकसे और शिराओंसे हृत्पिण्डमें जाकर गिरता है।
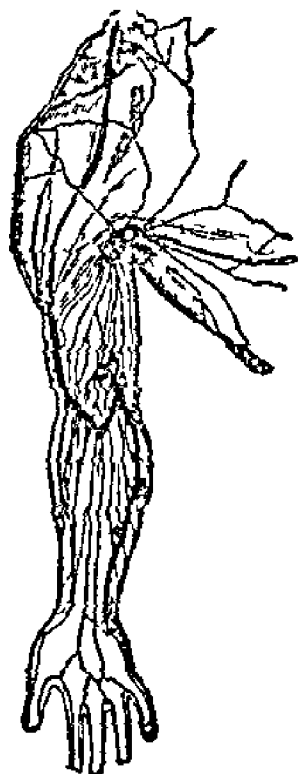
चित्र नं० ६

कैशिका-नाड़ियाँ, जो रक्त वाहिनियोंमें मिलती हैं।

लसिका-वाहिनियाँ (lymphatics)—शरीरके प्रत्येक भागमें जब रक्त कैशिकाओंमें बहता है, तो उनकी पतली-पतली दीवारोंसे उसका कुछ तरल भाग चू पड़ता है। इस चूए हुए तरल पदार्थका नाम ही

लसिका है। लसिकामें शक्कर, प्रोटीन, वसा, लवण आदि पदार्थ रहते हैं। शरीरकी सेलें लसिकामें भींगी रहती है। इन लसिकाओं द्वारा ही सेलोंका पोषण होता है। लसिका खासकर सूक्ष्म केशिकाओं-सी होती हैं, जिन्हें लसिका-प्रणाली (lymphatic ducts) कहते हैं और यह रस जिस आधारमें चूता है, उसे **लसिका-कोष** (receptaculum chyli) कहते हैं। यह लसिका-कोष वस्ति-गह्वरमें है और वहाँसे हृदयमें **महालसिका-वाहिनियाँ** (thoracic duct) द्वारा लसिका पहुँचा दिया जाता है। तन्तुओंसे लसिका-कोषमें ले जानेके पथमें, लसिका-नलियाँ उन लसिका-ग्रन्थियों (lymphatic glands) के भीतरसे जाती हैं, जो शरीरमें प्रायः सर्वत्र और खासकर सन्धियोंके निकट और वस्ति-गह्वरमें हैं। ये लसिका-प्रणालियाँ एक तरहकी भारी नली या सारे शरीरको पोषण करनेवाली सामग्रीके समान है और लसिका-ग्रन्थियाँ वे स्थान हैं, जहाँ यदि कोई वाहरी या विषैला पदार्थ लसिकामें पहुँच जाता है, तो उसे वहीं घेरकर नाश कर देती हैं।

चित्र नं० ७
लसिका-वाहिनियाँ और ग्रन्थियाँ

त्वचा—यह शरीरका वाह्य-आवरण (external covering) है। इससे स्नायु-सूत्रकी प्रतिक्षिप्त क्रिया होती है और ताप आदि बना रहता है। साथ ही इससे स्पर्श-ज्ञान होता है। मनुष्योंके केश और नाखून और जानवरोंकी सींगें त्वचासे ही उत्पन्न होती हैं। त्वचामें तीन भाग हैं। वाहरसे भीतरकी ओर वे इस तरह हैं :—(१) **वहिस्त्वक** या **उपचर्म** (वाहरी त्वचा—epidermis), इसमें स्नायु या रक्त, वाहिनियाँ नहीं है। (२) **मध्यस्तर** या **वर्ण-स्तर** है, जिससे

त्वचामें रङ्ग आता है। (२.) इसके बाद अन्तस्त्वक (dermis or true skin—भीतरी त्वचा चर्म)। ऊपरी त्वचा साँपके केचुलकी तरह सूक्ष्म रहती है। इसे नकली त्वचा भी कहते हैं। इसमें स्नायु रक्तवहा नालियाँ, मेद (fat) और स्वेद-ग्रंथियां (sweat glands)

त्वचा :—

(१) अन्तस्त्वचा (dermis or true skin)
(२) वर्ण-कोष (colour cells)
(३) स्वेद-ग्रंथियां (sweat glands)
(४) मेद या चर्बी (fat)
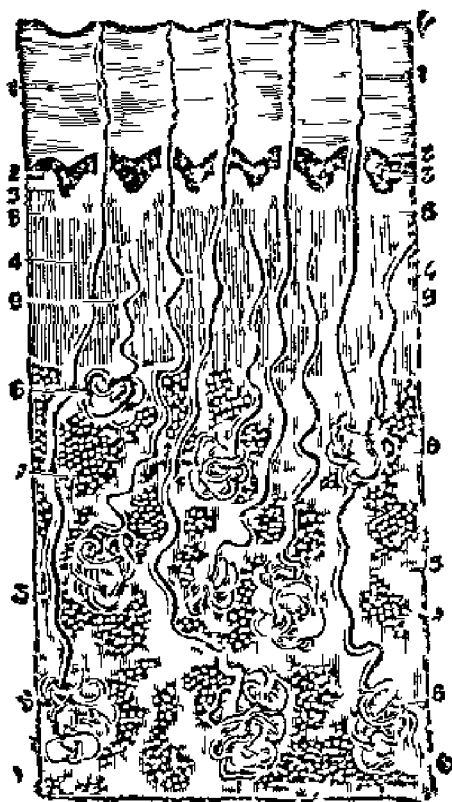
चित्र नं० ८

रहती हैं। प्रकृत त्वचामें ठीक ऊपर और नकली त्वचामें ठीक नीचे एक जालकी तरह कोष (cell) रहता है। इसका नाम मूल झिल्ली (basement membranes) है। इन कोषोंमें ऐसे उपादान हैं, जिनसे रंग-रूपमें विभिन्नता आती है, इसलिये इसका नाम वर्ण-कोष (colour cells) है।

लोमकूप—त्वचा आवरण ही नहीं, वल्कि रक्तसे दूषित पदार्थ वाहर निकाल देनेवाला एक यन्त्र भी है। त्वचामें असंख्य छोटे-छोटे छेद रहते हैं। इन छेदोंको लोमकूप (pores of the skin) कहते हैं। पसीनेके रूपमें इनके द्वारा दूषित पदार्थ वाहर निकल जाते हैं।

ग्रन्थियाँ (गाँठे-glands)—जो सव शारीरिक यंत्र रक्त आदिसे कोई पदार्थ वाहर निकाल सकते हैं या आकुञ्चन कर सकते हैं, उन्हें 'ग्रन्थि या गाठें' (glands) कहते हैं। शरीरके सभी स्थानोंमें ग्रन्थियाँ हैं। जैसे—**स्वेद-ग्रन्थि** (sweat gland)। यह एक नलियोंके चक्करकी तरह है और इसमें एक प्रणाली रहती है, जिसका मुँह त्वचापर खुला रहता है। यही वह छिद्र है, जिसे लोमकूप कहते हैं। वसा या तैल ग्रन्थियाँ भीतरी त्वचामें रहती हैं और उनमें भी प्रणालियाँ रहती हैं। उनकी प्रणालियाँ केशोंके कोषमें खुलती हैं। इनसे एक तरहका तेलहा पदार्थ निकालता है, जिससे हमारी त्वचा चिकनी रहती है।

मेद या चर्बी (fat)—यह एक तरहकी सादी और तेलही चीज है। यह मांस-पेशियोंके ऊपर, चर्मके ऊपर और चर्मके नीचे रहती है। इसका काम है, शरीरको गर्म रखना।

तन्तु (tissue)—यह डोरीकी तरहका एक बन्धन है। इसके द्वारा शरीरके सव यंत्र अपने-अपने स्थानपर रहते हैं। जव ये हड्डीके साथ हड्डीको मिलाते हैं। उस समय **अस्थि-बन्धनी** (ligaments) और मांसके साथ हड्डीकी मिलावट करनेपर **पेशी-बन्धन या कंडरा** (tendons) कहलाते हैं।

केश या लोम (hair)—महीन सूतकी तरह जो पदार्थ वाहरी त्वचापर दिखाई देते हैं, उन्हें लोम (रोआँ) कहते हैं। दाढ़ी मूँछ और माथेके रोओंको केश (hair) कहते हैं। इनमें खूब महीन-महीन कोष रहते हैं। इनकी जड़ प्रकृत चर्ममें घुसी रहती है, जिन्हें लोमकूप (hair follicle) कहते हैं।

नख—इनसे अंगोंकी रक्षा होती है। स्पर्श-शक्तिमें सहायता मिलती है। नाखून भी रोएँकी तरह वाहरी त्वचाके रूपान्तर है। नखके तीन भाग रहते हैं :—मूल (root), देह (body) और नखाग्र (free edge)। मासके ऊपरीवाला भाग देह और त्वचाके निचले-अंशको उसकी जड (root) कहते हैं।

नाड़ी-संस्थान

(Nervous System)

नाडी-मंडल—मानव-शरीरमें यन्त्रों या तन्तुओंके ऐसे समूह हैं, जो साधारणत कार्य किया करते हैं, इन्हे **संस्थान** (system) कहते हैं। इस तरह जो यन्त्र पाचन-क्रियाका कार्य करते हैं, उन्हें "पोषण-सस्थान" (digestive system) कहते हैं और इनके अन्तर्गत ही उदर-गह्वर, यकृत-ग्रथियाँ, प्लीहा प्रभृति है। अब वे यन्त्र या सस्थान, जिनसे गति भाव या चेतना प्रभृति प्राप्त होती हैं, उन्हे नाडी या स्नायु-सस्थान (nervous system) कहते हैं।

नाडी-सस्थानमें ये हैं :—

(१) सौषुम्न या मस्तिष्क मेरुदण्ड सम्बन्धी नाड़ियाँ।

(२) सांवेदनिक नाडियाँ (sympathetic nervous system)।

सांवेदनिक नाडियोंसे पोषण-यन्त्र, ग्रन्थियाँ तथा रक्त-वाहिनियोको स्नायु प्राप्त होते हैं। ये सौषुम्न-नाडियोंसे मिली हुई हैं तथा इनके दो धर होते हैं, जो कशेरुकाओंके दोनों ओर लगे रहते हैं। प्रत्येक धडमें लम्बे-लम्बे नाडी-गुच्छ है या गुच्छेके आकारके स्नायु हैं, इन्हें **नाडी-गंड** (ganglia) कहते है। (ख) नाडी या स्नायु-सूत्रके सिरे जो नाडी-गण्डसे मिल गये हैं और (ग) नाडी-जाल (plexuses) या स्नायुओंका जाल है।

सौषुम्न-नाड़ी संस्थान ये हैं :—

(१) मस्तिष्क { वृहत् मस्तिष्क (cerebrum)। लघु मस्तिष्क (cerebellum)।

(२) मस्तिष्क सेतु (pons verolii)।

(३) सुषुम्ना।

(४) नाड़ी-धड़, नाड़ी-सूत्र, नाड़ी-पुच्छ।

वृहत्-मस्तिष्क—दो भागोंमें बटा है ; इन दोनों भागोंके मध्यमें एक दरार (sagital fissures) रहती है। इसके द्वारा मस्तिष्क दो

चित्र नं० ६
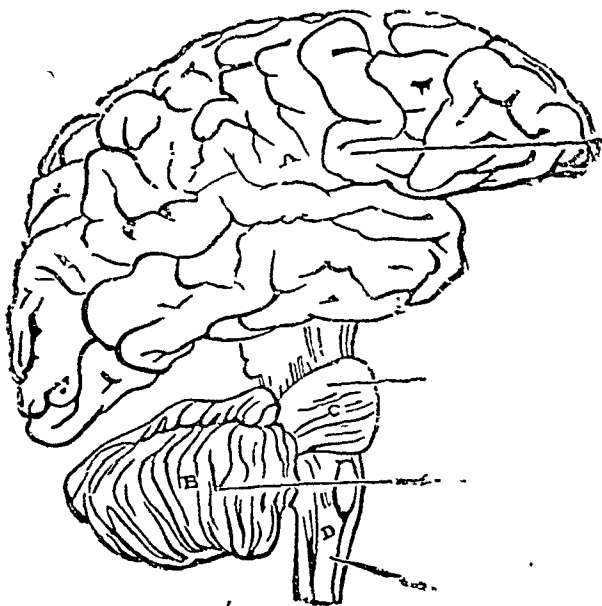
ऊपरसे नीचेकी ओर वृहत्-मस्तिष्क, लघु-मस्तिष्क, सेतु और सुषुम्नाका अर्ध भाग दिखाई देता है।

भागोंमें बटता है, उन भागोंको मस्तिष्क गोलार्ध (cerebral hemispheres) कहते हैं। ये दोनों दाहिने और बायें दोनों ओर रहते हैं।

दाहिने गोलार्धको (right hemisphere) और बायें गोलार्धको (left hemisphere) कहते हैं , परन्तु ये दोनों भाग भी नीचेसे जुडे है। जिस अशसे जुडे हैं, उसे 'महासयोजक' (corpus callosum) कहते हैं। वृहत् मस्तिष्कका भीतरी पटल धुमैला या मटमैले रगके पदार्थ या सेलोंसे बना है। इसमें कहीं उभार और कहीं गहरायी रहती है। उभार या उभरे हुए स्थानको काक (convolution) और गहरे स्थानको सीता (sulci or sulens) कहते हैं। इसका भीतरी भाग सफेद पदार्थ (white matter) से अर्थात् नाडी तन्तुओंसे बना है। दूसरे अशको वल्क (cortex or gray matter) कहते हैं। मस्तिष्कका वाह्य भाग सेलोंसे और भीतरी नाडी तन्तुओं (nervous tissues) से बना है। प्रत्येक गोलार्धका नीचेवाला भाग खोखला रहता है और दोनों गोलार्धोंके मध्यमें एक पतला पदार्थ सा रहता है। इसमें कुछ तरल पदार्थ भी रहता है।

लघु-मस्तिष्क—(cerebellum)—इसमें भी दो गोलार्ध होते हैं और यह वृहत् मस्तिष्कके नीचे रहता है। इसमें अनेक सीताएँ होती हैं, जो ज्यादा गहरी रहती हैं। इसके तीन भाग हैं—दो गोलार्ध (hemisphere) और नीचेका अश मध्याश (vernis)। इन दोनोंके बीचमें एक डठलकी तरह (corpus dentatum) रहता है। इसमें तीन स्तम्भ (peduncles) होते हैं।

सेतु—(pons verolii)—यह लघु मस्तिष्कके सामनेका एक गोल घूमा हुआ भाग है। यह सफेद है। यही सुषुम्ना, लघु मस्तिष्क और वृहत् मस्तिष्कमें जानेवाली नाड़ियाँ सब निकली हैं। सेतुके नीचे छोटे छोटे दो गोल दाने होते हैं—ये वृन्तपिण्ड (corpus mammillare) कहलाते हैं। उसके सामने एक वृहद् पिण्ड (hiphosis), फिर दृष्टि योजिका (optic chiasm) और उसके बाद प्राण पथ (medula oblongata) है।

सुषुम्ना—यह सुईकी शकलकी एक नाड़ी है। इसका लगभग एक इञ्च लम्बा सिरा ऊपरकी ओर है। इसकी मोटाई सर्वत्र एक समान नहीं। ऊपरी भाग सफेद और भीतरी धुमैला है। इसके मध्यमें एक छिद्र है, उसमें एक नाली रहती है, जो मस्तिष्कके चतुर्थ कोष्ठकसे जा मिली है तथा इसका दूसरा सिरा मेरुदण्डकी मध्य-प्रणालीमें है।

मेरुदंड (spinal cord), मेरुमज्जा—यह एक-डेढ़ फुट लम्बी हड्डी है और इस समूचे मेरुदण्डमें छिद्र भरा है। इससे नाड़ियोंके ३१ जोड़े निकले हैं। इसका वाह्य भाग धूसर रंगके पदार्थसे और भीतरी भाग सफेद रंगका पदार्थ (white matter) से भरा रहता है और मध्यमें सौषुम्न-पथ है।

वृहत् मस्तिष्क, सेतु सुषुम्ना और मेरुदण्ड—इस सवपर झिल्लियोंके तीन आवरण चढ़े हैं। बाहरी आवरणको 'मस्तिष्क वाह्यावरण' (dura mater) कहते हैं, जिसका सम्बन्ध अस्थि-गात्रावरणसे है। यह बहुत ही कोमल नाड़ी-तन्तु बन्धनकी तरह है। मध्य आवरण या मात्रिका (meninges) को 'मस्तिष्क-मध्यावरण' (archnoid) कहते हैं तथा मस्तिष्कके सबसे भीतरी आवरणको 'मस्तिष्क अन्तर आवरण' (pia mater) कहते हैं। इसमें रक्त-वाहिनियोंका जाल-सा बना है।

नाड़ी या स्नायु—मस्तिष्क शरीरके विभिन्न भागोंमें संवाद पहुँचानेका काम ये नाड़ियाँ या स्नायु करते हैं।

नाड़ियाँ निम्नलिखित भागोंमें बाँटी गई हैं :—

(१) **मस्तिष्क नाड़ियाँ** (cranial nerves) वे हैं, जो लघु-मस्तिष्कके भीतरी पटलसे निकली है। इनके २ जोड़े हैं। एक-एक प्रत्येक पार्श्वमें रहते हैं।

(२) **सौषुम्न नाड़ियाँ** (spinal nerves)—मेरुदण्ड या सौषुम्नाके दोनों पार्श्वोंसे नाड़ियोंके ३१ जोड़े निकले हैं, इन्हें सौषुम्न-नाड़ियाँ कहते हैं।

(१) मस्तिष्क नाडियाँ नीचे लिखी हैं :—

(क) **घ्राण नाडियाँ** (oflatory nerves)—इनसे घ्राण-शक्ति प्राप्त होती है।

(ख) **दृष्टि नाडियाँ** (optic nerves) ये चक्षु-गोलकके पीछेसे घुसती हैं और चक्षु-चित्रपत्र (retina) के भीतरी स्तरमें फैल जाती हैं। इससे देखनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

(ग) **नेत्र-चालिनी नाडियाँ** (oculo-motor nerves)—इनसे आँखके कोयेमें गति प्राप्त होती है।

(घ) **नेत्र-चालिनी द्वितिया** (trachlear)—इससे आँखकी पलकें ऊपरकी ओर उठती है।

(ङ) **त्रिशाखा नाडी** (trigeminal nerves)—इससे चेहरा, निचला जबडा, नाक, मुँह, जीभका दो तिहाई भाग और दाँतमें गति पैदा होती है। इनसे चबाने और कुचलनेकी शक्ति आती है।

(च) **छठा जोडा** (abducens)—इनसे आँख ऊपरकी ओर उठती है।

(छ) **मौखिकी नाडियाँ** (facial nerves)—इनसे खोपडी और चेहरेकी पेशियोंमें गति शक्ति प्राप्त होती है और ये जीभके लिये स्वाद प्रदान करती है।

(ज) **श्रावणी नाडी** (auditory or acoustic nerves)—इनसे सुननेमें सहायता मिलती है तथा स्थिति और शरीरकी समता रक्षामें सहायता प्राप्त होती है।

(झ) **जिह्वा-कंठ नाड़ियाँ** (glosso-pharyngeal)—इनसे कठकी पेशियोंमें तथा जीभमें रसका स्वाद लेनेकी शक्ति प्राप्त होती है।

(ञ) **दशमी नाड़ियाँ** (vagus or pneumogastric nerves)—ये दोनों ही बड़ी नाड़ियाँ हैं। इनसे स्वरयंत्र, टेंटुआ, फेफड़ा, आमाशय, पाकाशय, यकृत आदि में गति प्राप्त होती है।

(ट) **एकादशी नाड़ियाँ** (spinal accessory)—यह पीठ और गर्दनकी पेशियोंको गति देती हैं तथा कितनी ही मांस-पेशियोंमें गति-शक्ति प्रदान करती हैं।

(ठ) **द्वादशी या जिह्वाधोवर्त्ती नाड़ी** (hypoglossal)—इससे जीभकी पेशियोंमें गति मिलती है।

सौषुम्न नाड़ियाँ—सुषुम्नासे नाड़ियोंके ३१ जोड़े निकले हैं। ये सुषुम्नासे दो ओरसे जुड़ी है और दोनों ओरके छिद्रोंसे निकलकर समस्त शरीरमें फैल गयी हैं। जिन दो भागोंमें जुड़ी रहती हैं, उन्हें पूर्व-मूल (anterior or motor) और पिछले या दूसरेको पाश्चात्य-मूल (posterior) कहते हैं तथा कितने ही स्थानोंपर इनका गुच्छा बन गया है। ये पूर्व और पाश्चात्य-मूल तुरन्त ही नाड़ी-गण्डमें मिल जाते हैं।

सौषुम्न नाड़ियाँ नीचे लिखी हैं :—

८ कण्ठ-देशीय
१२ वक्ष-देशीय।
५ कटि-स्थानीय
५ त्रिकास्थि-स्थानीय
१ गुदास्थि या पिकचंचु-अस्थिमें।

प्रत्येक नाड़ी, जो सुषुम्नासे निकलती है या एक अथवा इसके अधिक धड़से जिसे नाड़ी-गण्ड (plexus) कहते हैं। ये नाड़ियाँ मांस-पेशियोंके कोष (cells), गाँठें या त्वचा अथवा स्वर-पटल या जिह्वामें अन्त हो जाती हैं।

रक्त-वाहक संस्थान
(The Circulatory System)

इसमें निम्नलिखित प्रत्यग रहते हैं :—

(क) एक प्रधान पम्प—हृत्पिण्ड (heart)।

(ख) बाहर निकलनेवाली रक्त-वाहिनियोंमें धमनियाँ (arteries)।

(ग) भीतरी आनेवाली रक्तवाहिनियाँ (शिराएँ—veins)।

(घ) छोटी-छोटी बिखरी रक्त-वाहिनियाँ (केशिकाएँ, लसिकाएँ—(capillaries, lymphatics)।

अन्तके तीनोंके सम्बन्धमें पहले ही बताया जा चुका है। अब हम हृत्पिण्ड (heart) और रक्त (blood) के विषयमें बताना चाहते हैं।

हृदय या हृत्पिण्ड (heart)—यह नाशपातीके आकारकी मांस-पेशियोंकी एक थैलीकी तरह है। मुट्ठी बाँधनेपर जितनी बड़ी होती है, यह भी उतना ही बड़ा है और वक्षोस्थि कुछ पीछेकी ओर, कुछ बायें हटकर दोनों फेफड़ोंके बीचमें है। ऊपरी भाग निचलेकी अपेक्षा कुछ अधिक चौड़ा है। इसपर एक झिल्लीमय आवरण रहता है, जिसे हृदावरण (pericardium) कहते हैं। इससे रस निकलता है, जिससे हृत्पिण्डका ऊपरी भाग तर रहता है।

हृत्पिण्डका भीतरी भाग खोखला रहता है। जैसे, ऊपर दिखाया गया है। यह सूक्ष्म मांस-पेशीकी झिल्लीसे चार भागोंमें विभक्त रहता है। क्रमसे ऊपर-नीचे, दाहिने-बायें ४ प्रकोष्ठ (chamber) रहते हैं। ऊपरके दोनों—दाहिने और बायें ऊर्ध्व हृद-कोष्ठ या ग्राहक-कोष्ठ (auricles) और नीचेवाले दाहिने और बायेंके कोष्ठ क्षेपक-कोष्ठ (ventricles) कहलाते हैं।

इस तरह हृत्पिण्ड दोनों ओर, दाहिने और वायें—

दाहिने—एक ग्राहक-कोष्ठ

एक क्षेपक-कोष्ठ

एक ग्राहक और क्षेपक-कोष्ठोंको अलग करनेवाली पेशी।

वायें—एक ग्राहक-कोष्ठ

एक क्षेपक-कोष्ठ

एक ग्राहक और क्षेपक-कोष्ठोंको अलग करनेवाली पेशीसे बना है।
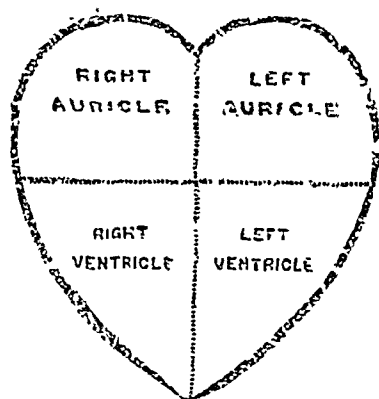
चित्र नं० १०—हृद्कोष्ठकी वाह्य रेखाएँ

(१) दाहिना ग्राहक-कोष्ठ (right auricle).
(२) दाहिना क्षेपक-कोष्ठ (right ventricle).
(३) बायाँ ग्राहक-कोष्ठ (left auricle).
(४) बायाँ क्षेपक-कोष्ठ (left ventricle).

हृदयसे शुद्ध और अशुद्ध दोनों ही प्रकारका रक्त आता-जाता है।

शुद्ध रक्त—चार फुसफुसीया शिरा (pulmonary veins) द्वारा आता है।

अशुद्ध रक्त—ऊर्ध्व महाशिरा (superior venacava) द्वारा और
अधोगा महाशिरा (inferior venacava) द्वारा आता है।
खाद्य-पदार्थोंका अंश तथा सब भागोंसे लसिकाएँ—नामहीन धमनी द्वारा
महालसिका-वाहिनीमें गिरती हैं।
हृदयसे अशुद्ध रक्त निकलकर बृहत् फुफ्फुसीया-धमनी (pulmonary artery) द्वारा फेफड़ेमें जाता है। और—
महाधमनी (aorta) द्वारा शुद्ध रक्त समूचे शरीरमें फैल जाता है।
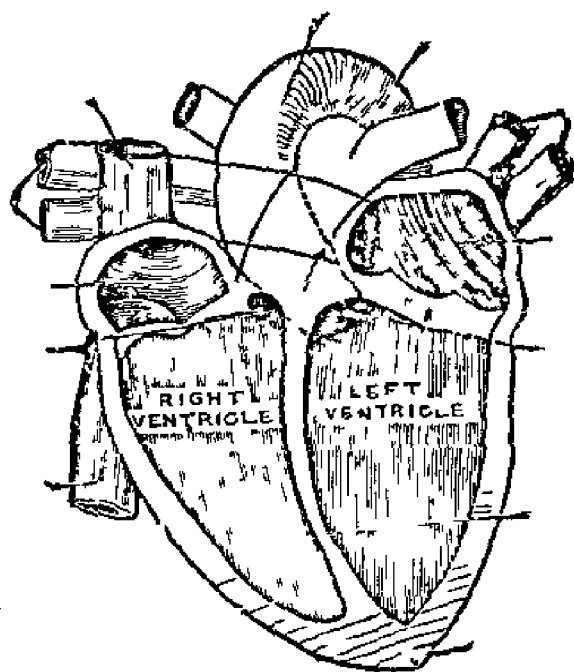
चित्र नं० ११

इसमें ऊपरी दाहिने और बायें दोनों क्षेपक-कोष्ठ दिखाये गये हैं।

अब यह कैसे होता है, इसपर ध्यान दीजिये :—

अधोगा महाशिरा (inferior venacava) जो यकृतके भीतरसे जाकर हृत्पिंडके दाहिने ग्राहक-कोष्ठ (right auricle or atrium) में

खुल जाती है। इसीमें सम्पूर्ण निम्नांगका रक्त एकत्रित होकर ऊपर जाता है, इसी तरह शरीरके सभी भागोंसे अशुद्ध रक्त उर्ध महाशिरा
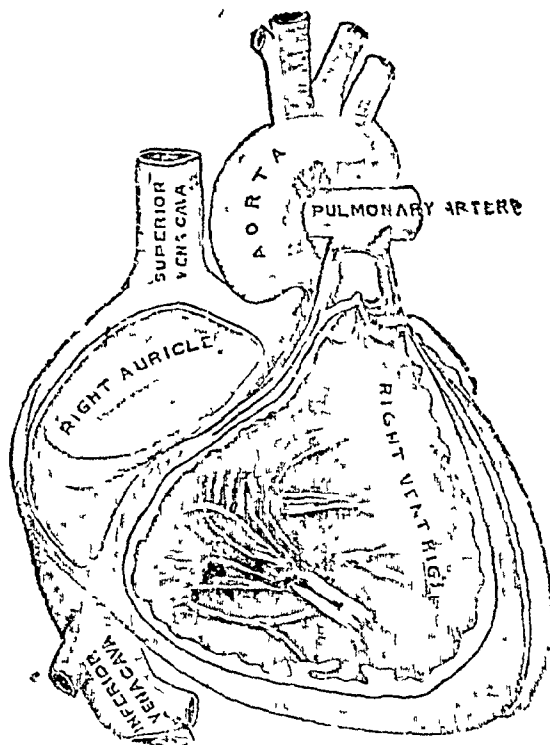
चित्र नं० १२

महाधमनी (aorta).
बृहत् फुसफुसीया धमनी (pulmonary artery).
फुसफुसीया शिरा (pulmonary veins).
बायाँ ग्राहक-कोष्ठ (left auricle).
बायाँ क्षेपक-कोष्ठ (left ventricle).

(superior venacava) में आता है, जो दाहिने ग्राहक-कोष्ठमें उसे दे देती है। ज्योंही दाहिना ग्राहक-कोष्ठ रक्तसे भर जाता है, त्योंही यह

तालुमूल (tonsils)—यह एक प्रकारकी ग्रन्थियाँ हैं।

तालु (palate)—यह हड्डी तथा श्लेष्मिक-झिल्लीसे बना है। इससे पाचन-क्रियाका कार्य होता है। इसके सम्बन्धमें आगे बताया
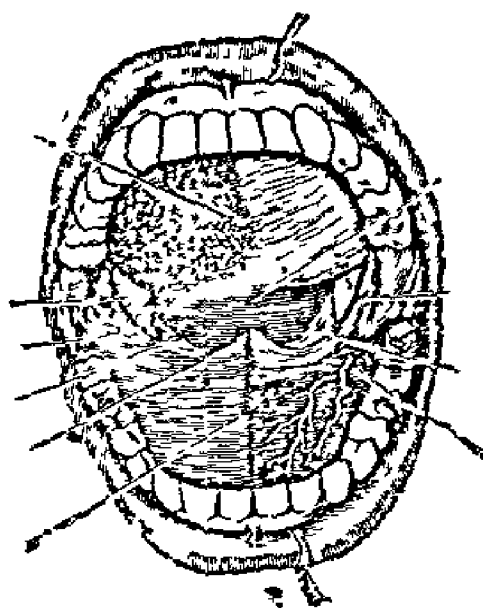
चित्र नं० १३

मुँहका भीतरी भाग—दाँत, जीभ, तालु और गलकन्द दिखाया गया है।

जायगा। जीभमें कुछ स्नायु आये हैं, जो काँटे (papillæ) के रूपमें स्वाद लेते हैं।

दाँत (teeth)—इसके नीचे लिखे भेद हैं। दाँतकी दो पंक्तियाँ होती हैं। ऊपरी और नीचली—

४ छेदक दन्त (incisor teeth)
२ श्व-दन्त (canine teeth)

४ द्विशिरा दन्त (bicuspid teeth)
६ चर्वणक दन्त (molar teeth)

ये दो पंक्तियाँ अलग-अलग जवड़ेकी हड्डीमें हैं। जिनपर ये दाँत रहते हैं, उन्हें मसूढ़ा कहते हैं। इनमें बहुत-सी रक्तवाहिनियाँ और
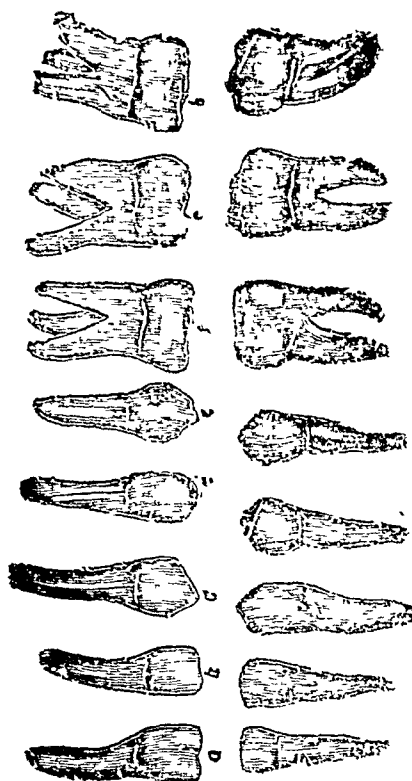
चित्र नं० १४

(ऊपरसे नीचे)—पहले तीन जोड़े चर्वणक दन्त, वादवाले दो जोड़े द्विशिरा दन्त, तीसरा एक जोड़ा श्व-दन्त और अन्तके दो जोड़े छेदक दन्त।

स्नायु रहते हैं जो उनकी जड़के छेदोंमें घुसे रहते हैं। हमलोगोंको दाँतका जो अंश दिखाई देता है, वह सफेद, कड़ा तथा एनामेल चढ़ा

रहता है। यह जब टूट जाता है, तो फिर दुबारा नहीं होता। दाँतका यह भाग जो मसूढ़ोंमें घुसा रहता है, दाँतका मूलदेश (fang) कहलाता
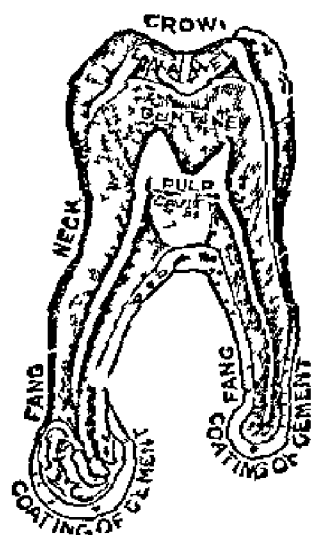
दन्त-शिखर—crown

दन्तवेष्ट—enamel.

दन्त-कोष्ठ—pulp cavity.

दन्त-ग्रीवा—neck of teeth.

दन्त-मूल—fang or root.

दन्त आवरण—dentine.

सीमेण्टका आवरण—coating of cement.

चित्र नं० १५

है। बच्चा जब पैदा होता है, तब उसे दाँत नहीं रहते। छठे महीनेसे १½ वर्षतक दूधके दाँत निकल आते है।

छः वर्षकी उम्र होते-होते ये गिर जाते हैं और नये तथा स्थायी दाँत (permanent teeth) निकलते है। ये गिनतीमें ३२ होते हैं और फिर बुढापेमें ही गिरते हैं। यदि दाँतोंकी हिफाजत की जाये, तो वे नष्ट नहीं होते।

गलनाली (æsophagus or gullet)—यह वह नली है, जिसके द्वारा खाया हुआ पदार्थ मुँहसे पेटमें जाता है। नियमानुसार यह नली हमेशा पाकस्थलीकी ओर सकुचित हुआ करती है। इसी कारणसे सर झुकाकर खानेपर भी खाया हुआ पदार्थ सरलतापूर्वक

पाकस्थलीमें पहुँच जा सकता है। पाकाशयके जिस स्थानमें गलनली मिल गई है, उसे प्रवेश द्वार (cardiac orifice) कहते हैं। वास्तवमें गलनली वक्ष-गह्वरमें जाकर उदर-वक्ष व्यवधायक-पेशी (वक्षोदर-मध्यस्थ-पेशी—diaphragm) को चीरती हुई पाकस्थलीमें चली गयी है।

पाकस्थली या आमाशय (stomach or ventriculus)—यह नाशपातीकी शकलकी एक खोखली थैली-जैसी है। यह बाईं ओरके उदर-गह्वरके ऊपरी भागमें और उदर-वक्ष-व्यवधायक पेशीके ठीक नीचेकी ओर है। इसीपर हृत्पिण्ड रहता । यह मुँहसे गलनलीके द्वारा मिल गई है। गलनली एकदम आँतोंतक नीचे चली गई है। वह स्थान जहाँ गलनली है, वह प्रवेश-स्थान (cardiac) कहलाता है। पाकस्थलीका वह स्थान, जो आँतोंसे मिल गया है, वहिर्द्वार या निगम-द्वार कहलाता है।

पाकस्थली बाहरी ओरसे जिस स्तरसे ढँकी है, उसे उदरक या ऊपर-वाला स्तर (peritoneum or serous coat) कहते हैं। यह वास्तवमें पाकस्थलीका एक ढकना है।

वास्तवमें यह उदरक-काला या ऊपरवाला स्तर एक तरहकी रस-स्रावी झिल्ली है, जो उदर-प्राचीर (abdominal wall) के भीतरकी ओर रहती है। पेरिटोनियम या उदरक कलासे और भी कई स्तर बनते हैं, जिनके भिन्न-भिन्न नाम हैं। इसके बीचमें क्रिमि-स्तर या उदरक-गह्वर (peritoneal cavity) है।

पाकस्थलीके तीन प्रधान स्तर हैं :—

(क) **बाहरी या सबसे ऊपरवाला स्तर** (peritoneum)—जिसके द्वारा यह उदर-प्राचीरसे संयुक्त रहता है तथा लसिकाका दौरान ठीक रखनेमें सहायता करता है।
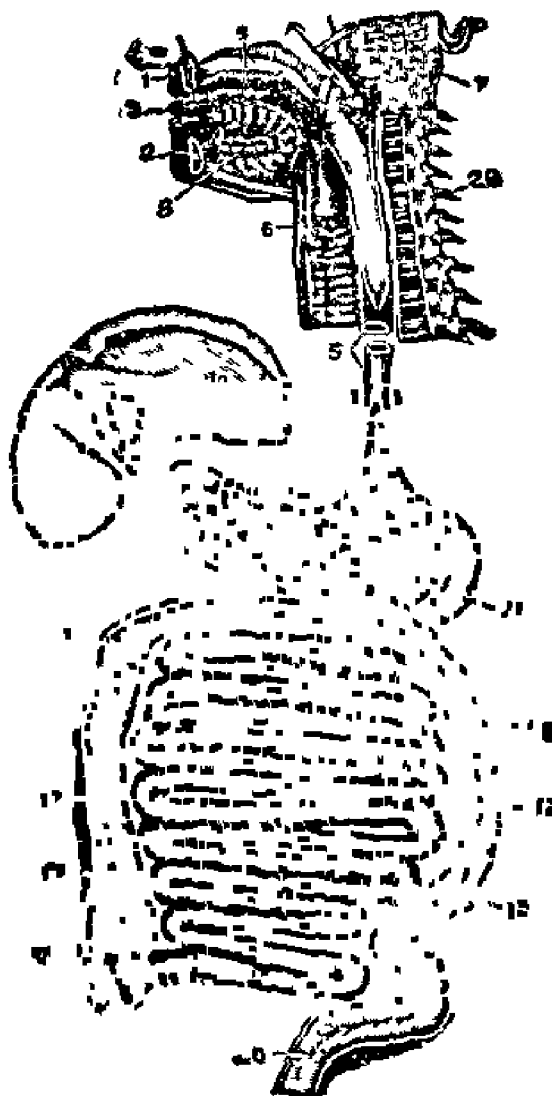
सम्पूर्ण अन्न-मार्ग— चित्र नं० १६

१। ऊपरी हनुकी अस्थि। २। निम्न-हन्वस्थि। ३। जीमकी मांस-पेशीकी बनी जड़। ४। मसूढ़ा। ५। गलनली। ६। टेंटुआ। २५। पाकाशय। ९। इसका भीतरी भाग। २१। पित्तकोष। १०। यकृतका दाहिना-बायाँ खंड। १४, १२, ११। पाकाशय। १५। क्षुद्र अन्नका घुमाव। १६। अंत्रपुट। १७। ऊर्ध्वगामी अंत्रवाहिनी। १८। अनुप्रस्त अंत्रभाग। १७। अधोगामी अन्त्रभाग। २०। स्थूलान्त्रका आन्त्रिक वक्रांश।

(ख) **मध्य स्तर** (middle or muscular coat)—यह मांस-पेशीका बना है। पाकस्थलीमें भोजनका पदार्थ जाते ही ये सब मांस-पेशियाँ एकके बाद एक संकुचित होकर लहरें-सी उठने लगती हैं अर्थात् पाकस्थलीको एक ओरसे दूसरी ओरतक बराबर चलती और हिलाती हैं। इसलिये खाया हुआ पदार्थ तुरन्त चूर-चूर हो जाता है और लेई या चटनीकी तरह बन जाता है।

(ग) **अन्तरतम स्तर** (mucous coat)—यह मधुमक्खीके छत्तेकी तरह है। इससे रस-स्राव होता है। अधिक रस निकलनेके लिये इसमें श्लैश्मिक-झिल्लीके बहुत-से छोटे-छोटे मुँह या छेद हैं। श्लैष्मिक-झिल्ली विशेष प्रकारकी सेलोंके एक ही स्तरसे बनी है। इसकी सेलोंमें कोई रक्त-वाहिनी नहीं होती है ; परन्तु इसकी जड़तक बहुत-सी रक्त-वाहिनियाँ जाती हैं। श्लैष्मिक-झिल्लीका कार्य है—रस-स्राव करना। वे सेलें, जो इस ढंगकी बनी हैं कि उनमें उत्तेजना होती है, तो रस-स्राव होता है, वे ग्रन्थियाँ कहलाती हैं। पहले ग्रन्थियोंके सम्बन्धमें यह बताया जा चुका है कि वे विदेशी पदार्थ या जहर आदि जो शरीरमें प्रवेश कर जाता है, उसे घेर लेती हैं और आगे नहीं बढ़ने देतीं। ये ग्रन्थियाँ दानेदार जैसी होती हैं और इन्हें लसिका ग्रन्थियाँ कहते हैं ; परन्तु वास्तवमें ग्रन्थियाँ, जैसा शरीर-त्वचाके अनुसार समझा जाता है, वैसी नहीं हैं, वे रस-स्रावी हैं। अतएव, ग्रन्थि उसे कहते हैं, जो विशेष प्रकारकी सेलोंसे बनी होती हैं और उनमें रस-स्राव करनेकी शक्ति रहती है। इस तरह अश्रु-ग्रंथिसे आँसू बहते हैं, पसीनेकी ग्रंथियोंसे पसीना निकलता है, शुक्र-ग्रन्थियोंसे वीर्य स्राव होता है और इसी तरह अन्य ग्रन्थियोंसे भी बराबर कार्य हुआ करते हैं। अब चूँकि यह स्थिर विषय है कि रस-स्रावी ग्रन्थियाँ, खासकर श्लैष्मिक-पटलमें रहती हैं। इसलिये यह समझ लेना भी एकदम गलत होगा कि श्लैष्मिक-पटलका सम्पूर्ण अंश ऐसी रस-स्रावी ग्रन्थियोंसे ही भरा है। वास्तवमें

ग्रन्थियाँ सर्वत्र ही नही फैली हुई है। श्लैष्मिक तथा अन्य विशेष पटलपर इधर-उधर ग्रन्थियाँ हैं तथा ये एक प्रकारकी विशेष सेलोंसे बनी रहती है, जो अपने तत्त्वमें डूबी रहती हैं। ग्रन्थियोंमे अनेक रक्त-वाहिनियाँ, स्नायु और लसिकाएँ होती है। प्रत्येक रस-स्रावी ग्रन्थि
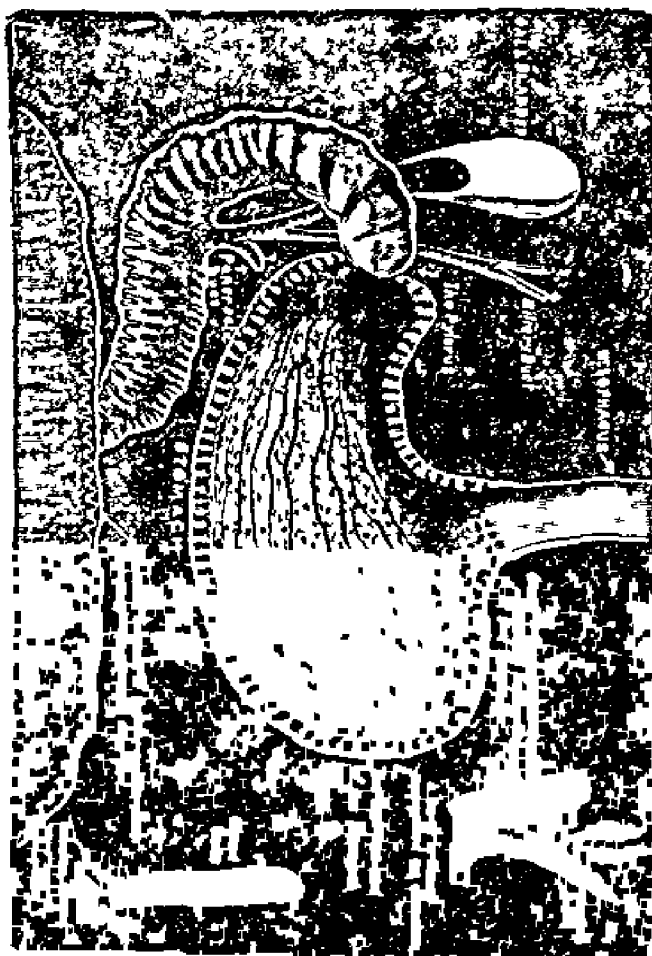
चित्र नं० १७

पित्त-कोष (gall bladder)　　निगम-द्वार (polypus).
पित्त-प्रणाली (bile duct).　　अन्नवहानाली (æsophagus).

एक अनुवीक्षण यंत्रसे दिखाई देनेवाली चीज है और इसके धड़, गला या नल अथवा प्रणाली और द्वार या मुँह होता है। श्लैष्मिक-झिल्ली या श्लैष्मिक-पटल एक ऐसी लहरदार चीज है, जिसमें ऐसी ग्रन्थियाँ रहती हैं, जिनसे ऐल्कालीन, चिकने पदार्थ और लसदार रस-स्राव—श्लेष्माका स्राव होता रहता है।

अब हमलोग फिर पाकस्थलीके सम्बन्धमें आलोचना करते हैं। हम कह चुके हैं कि इसका भीतरी भाग श्लैष्मिक-झिल्लीसे भरा रहता है। जब पेट खाली रहता है, तो इसकी श्लैष्मिक-झिल्लीकी तही सी बन जाती है। जब श्लैष्मिक-झिल्लीका अधिकांश भाग पाकस्थलीके भीतरी भागको तर रखनेके लिये श्लेष्माका स्राव करता है, तो इसके कितने ही भागोंमें रस-स्रावी ग्रन्थियाँ भर जाती हैं, जिनसे पेप्सिन और हाइड्रोक्लोरिक एसिडका स्राव होता है। ऐसी ग्रन्थियाँ पेप्टिक ग्रन्थियाँ कहलाती है।

क्लोम-ग्रन्थि (pancreatic duct .
आत या अंत्र (intestine). } पाकस्थली (stomach).

पाचक-ग्रन्थि वृहत् अवस्थामें (gastric glands).

पाचक-कोष (gastric cells).

उदरका आगम द्वार (cardiac end of the stomach).

वृहत् अंत्रकी नलाकार ग्रन्थि (tubular glands of the large intestines).

पाकस्थलीका द्वादश अंगुल अंत्र और पित्त-कोष खुला है। इसमें जो दानेदार अंश दिखाई देता है, वे पाचक ग्रन्थियाँ हैं। कीड़ेकी भाँति जो अंश हैं, वह रस-स्रावी ग्रन्थियाँ हैं।

अब पाचन-क्रिया कैसे होती है, सो देखिये। आगम-द्वार (cardiac orifice) की राहसे पाकस्थलीमें खाद्य-पदार्थ जाते ही मांस-पेशियोंके संकोचनकी वजहसे वह मथा (churned) जाता है और साथ-ही-साथ अन्तरतम स्तरके मुखों (orifices or gastric glands) से पाचक रस (gastric juice) निकलकर उसे तर करता है। इसीलिये खाया हुआ पदार्थ धीरे-धीरे दबाके कारण पिस जाता है, पानी जैसा पतला हो जाता है और बाकी अंश मांड़ या काई-जैसा हो जाता है। इस पतले अंशको पाकस्थलीके दूसरे स्तरकी पतली-पतली रक्तवहा-नाड़ियाँ चूस लेती हैं और रक्तमें परिणत कर देती है। बाकी काईकी तरह अंश (chyme) को और भी पतले अर्थात् रक्तमें मिल जाने योग्य तैयार करनेके लिये निर्गम-द्वारकी राहसे आँतोंमें भेज देती है। इस निर्गम द्वारपर एक कड़ी मांस-पेशीका कपाट रहता है, जिसे संकोचनी पेशी (sphincter) कहते हैं।

आँत (intestines)—अन्त्र, आँत या अँतड़ी (intestines or bowels) पाकस्थलीके निचले भागोंमें रहती हैं। ये टेढ़े मेढ़े नल हैं। इन टेढ़े मेढ़े नलोंने कितनी ही बार घूमकर उदर गह्वरकी बहुत सी जगह घेर रखी है। जवान आदमीकी आँत प्राय १८ हाथ लम्बी रहती है। आँतके दो भाग हैं —(१) वृहत् अन्त्र (बड़ी आँत—large intestine)। (२) क्षुद्र अन्त्र (छोटी आँत—small intestine)—यह लम्बाईमें प्रायः चौदह हाथ या २० फीट होती है।

वृहत् अंत्र (large intestine)—यह बड़ी आँत उदरके दाहिने निम्न भागसे आरम्भ होती है, जिसे कोख (iliac region) कहते है और जिससे अन्त्र पुट (intestinal cæcum) या उपान्त्र मिलती हुई है। अधो क्षुद्रांत्र (ileum) का मुँह अंत-पुटमें खुलता है और उस स्थानपर एक कपाट रहता है, जिसे कालिक वैल्व (colic valve) कहते हैं। बड़ी आँत तीन भागमें विभक्त है—अर्धगामी अन्त्र भाग (ascending colon) यकृतके भीतरसे होती हुई ऊपर जाती है। यहाँसे यह टेढ़ी

होकर घूमती है। उसे अनुप्रस्त अंत्र भाग (transverse colon) कहते हैं। इस तरह यह ऊपरी तलपेटको पार करती हुई प्लीहा-प्रदेशमें
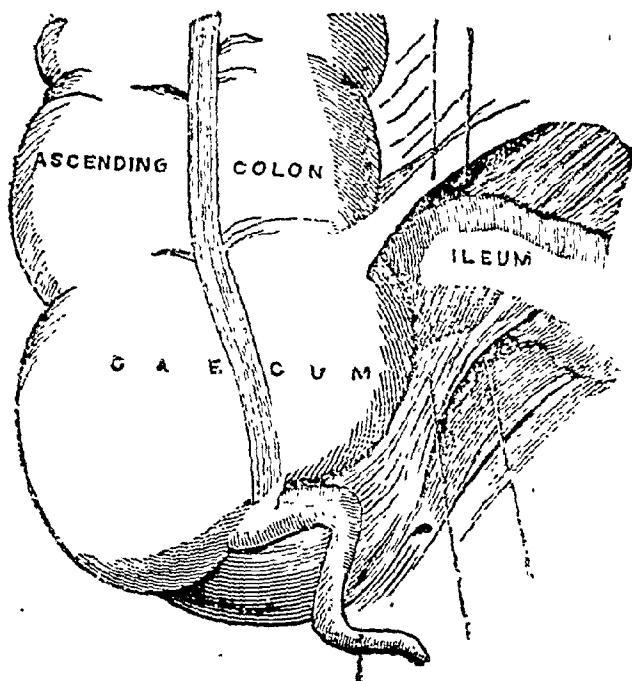
चित्र नं० १८

अंत्रपुट। कीड़ेके आकारका अंत्र-परिशिष्ट तथा अर्धगामी वृहत्-अन्त्रका आरम्भ।
उर्धगामी वृहदन्त्र (ascending colon), अन्त्रपुट (cæcum), क्षुद्रांत्र (ileum)।

घुस जाती है। यहाँसे यह नीचेकी ओर झुकती है और इसका नाम पड़ता है—अधोगामी अंत्र भाग (descending colon)। इसका सबसे नीचला भाग क्रमशः जघनिया वृहदंत्र (iliac colon) और

श्रोणिक वृहदंत्र (pelvic colon) कहलाता है। वह स्थान जहाँ बड़ी आँत झुकती है, वक्र भाग (flexures) कहलाता है। इसका कीड़ेके आकारवाला अंत्र-परिशिष्ट (vermiform appendix) लगभग ३½ इञ्च लम्बा है। इसका मुँह अन्नपुट (cæcum) में खुलता है। यह एक बन्द नल, जिसकी क्रिया अबतक अज्ञात है।

छोटी आँतोंसे बड़ी आँतका प्रभेद नीचे लिखे चार कारणोंसे जाना जाता है :—(क) इसमें बड़ी आँतोंके बाह्य पटलपर थैलीकी तरह चर्बीका अंश ऊपरवाले स्तरसे पैदा होता है। (ख) इसके बाहरी पटलपर फीतेकी तरह, मध्यमे एक बन्धन-सा होता है। (ग) इसमें थैलीकी तरह स्तर होते हैं और (घ) इसमें ग्राहांकुर (villi) और श्लैष्मिक-झिल्लीकी तहें (valvulæ conniventes) जो छोटी आँतमें होती है, नहीं रहती।

इसकी बनावटके सम्बन्धमें इतना ही जान रखना पर्याप्त है कि इसमें बाहरी ऊपरवाला स्तर, मध्य मांस-पेशीका स्तर और अन्तरतम श्लैष्मिक स्तर रहता है।

क्षुद्र अंत्र (small intestines)—छोटी आँतकी लम्बाई २० फीट है। पाकस्थलीसे गये हुए भुक्त पदार्थका न पचा हुआ भाग, इसी छोटी आँतमें प्रवेश करता है। इसके चार स्तर हैं। पचनके समय इस आँतमें पित्त-कोषसे एक नलीकी राहसे पित्त-रस (bile) और क्लोम-ग्रन्थि (pancreas) से एक दूसरी नली द्वारा क्लोम रस (pancreatic juice) आकर मिल जाता है। इस आँतसे भी एक प्रकारका रस निकलता है, उसे अम्ल-रस (intestinal juice or internal secretion) कहते हैं। पाकस्थलीसे न पचा हुआ अंश आँतोंमें आनेके बाद इन तीनों रसोंमें ही पिसा करता है। इस तरह खाद्य पदार्थका सार भाग सब पचकर रक्तमें परिणत हो जाता है और असार अंश साँपकी

कुण्डली-जैसी समूची आँतमें घूमता हुआ मल (stool) के रूपमें नीचे भेज दिया जाता है।

यकृत (liver)—मानव-शरीरमें यकृत सबसे बड़ी ग्रन्थि है। इसका वजन अन्दाजन ५० औंस है। यह उदर-गह्वरकी दाहिनी ओर ऊपरी भागमें ठीक उदर-वक्ष-व्यवधायक पेशी (diaphragm) के नीचे है। इसके दो भाग हैं—दाहिना भाग (right lobe) और बायाँ भाग (left lobe), जिसमें दाहिना भाग विशेष बड़ा है। याकृती धमनी (hepatic artery) और संयुक्ता-शिरा (portal vein) यकृतमें रक्त पहुँचाती है और याकृती-शिरा (hepatic veins) उसे वहाँसे निकालती है। यकृतके सम्बन्धमें दो चीजें ध्यान देनेकी हैं :— (१) पित्त-कोष (gall bladder) और (२) संयुक्ता-शिरा। पहले संयुक्ता-शिराके विषयमें बताया जाता है। क्लोम-ग्रन्थि, प्लीहा, पाकस्थली और छोटी आँतकी शिराओंसे यह संयुक्ता-शिरा बनी है। यह दो शाखाओंमें यकृतमें प्रवेश करती है। प्रत्येक शाखा एक-एक यकृद्-भाग या खंडमें जाती है। यकृतके भीतर जाकर यह कैशिका-नाड़ियोंमें तथा याकृती-धमनीमें समाप्त हो जाती है। याकृती-शिरा इन्हीं कैशिकाओंसे आरम्भ होती है और अधोगा महाशिरा (inferior venacava) में रक्त ले जाती है।

पित्त-कोष भी एक नाशपाती-जैसी खोखली थैली है। यह यकृतकी सतहके भीतर रहती है, जिसके भीतर इसका बड़ा अन्तिम शिरा कुछ-कुछ दिखाई देता है। इसके भीतरी भाग या गलेसे पित्ताशयिक नली (cystic duct) बनती है, जो मध्य भाग और पीछेकी ओरसे होकर याकृती-नलीमें मिल जाती है और इस तरह पित्त-प्रणाली (bile duct or ductus chole dochus) बनती है।

क्लोम-ग्रन्थि (pancreas) भी एक बड़ी ग्रन्थि है ; परन्तु यह यकृतसे छोटी हैं। यह प्लीहाके पास रहती है। इसके शिर, ग्रीवा,

धड़ और पूँछ रहती है। इसमें क्लोम-रस (pancreatic juice) रहता है, जो क्लोम-ग्रन्थिसे निकलकर आँतोंमें जाता है।

श्वास-प्रश्वास संस्थान
(Respiratory System)

इसमें नाक (nose), गलकक्ष (pharynx), वायुनली (wind-pipe), फेफड़ा या फुस्फुस (lungs) और वक्षोदर-मध्यस्थ-पेशी (diaphragm) है।

नाक (nose)—यह एक गह्वर (नासा-गह्वर) है, जिसमें भीतर और बाहर दो द्वार हैं। उसमें जो गह्वर होते हैं और दो सामनेकी ओर छेद—एक-एक दाहिने-बायें रहते हैं। इन्हें नासा-रन्ध्र कहते हैं और इन दोनों गह्वरोंके बीचमें एक दीवार-सी होती है, इसे नासिकास्थि पर्दा (septum) कहते हैं। यह नाकके बीचकी दीवार कुछ अस्थि और कुछ उपास्थिसे बनी हुई है। इस पर्देके दोनों ओर नासा-गह्वर हैं और इसीके मध्य भागमें ओशुक्तिका (inferior turbinated bones) नामकी दो घुमघुमौवा हड्डियाँ हैं। समूचे नासा-गह्वरपर श्लेष्मिक-झिल्ली चढ़ी हुई है और प्रत्येक गह्वरकी बाहरी दीवाल ऊपरी कपोलास्थिके छिद्रसे मिली हुई है, इसे ही अर्ध हनुकोटर (superior maxillary) कहते हैं। ऊपरी भागमें जहाँ नाकके पिछले दोनों छेद खुले हैं, वह मुँहका पिछला भाग गलकोष (pharynx) है। पिछले छिद्र नास पश्चिम द्वार (posterior nares) कहलाते हैं।

गलकोष (pharynx)—यह वह गह्वर है, जो मुख-गह्वर और नासिकाका पिछला भाग बनाता है और उनसे एकदम मिला हुआ है। यह वह स्थान है, जहाँ निम्नलिखित आवश्यक बनावट मिलती है :—

सामनेकी ओर और ऊपरी भागके—दोनों नासा-गह्वर।

पीछेकी ओर	दोनों कंठकर्णी-नाली।
मध्यमें और सामने—	मुँह।
नीचेकी ओर—	वायुनली सामने और गलनली पीछेकी ओर।
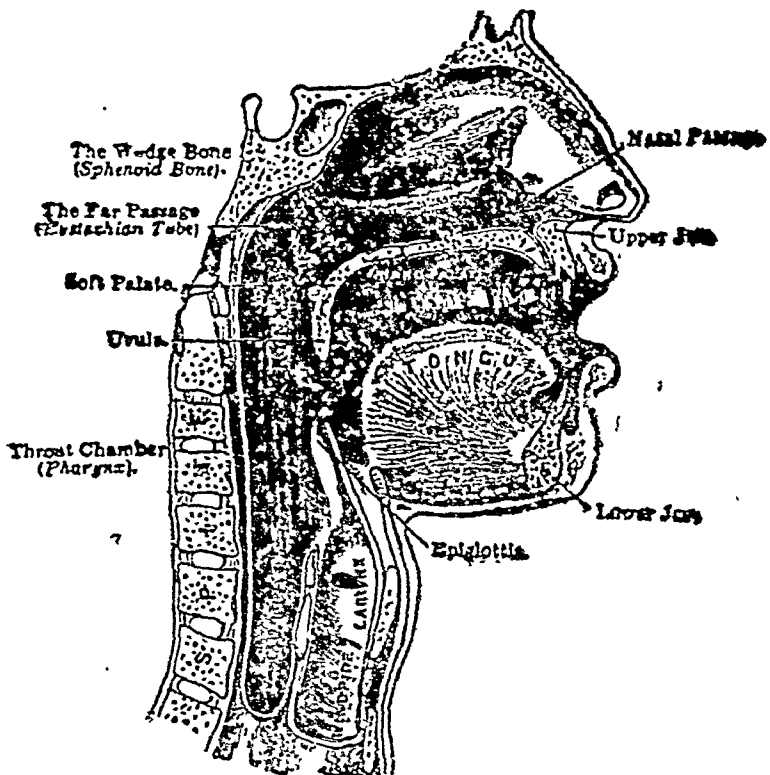
चित्र नं० १६

इसमें मुँह और नासा-गह्वर अर्ध चन्द्राकार रूपमें दिखाया गया है।

(१) कीलकास्थि (sphenoid bone)

(२) कंठकर्णी-नली (eustachian tube)

(३) कोमल तालु (soft palate). (४) शुण्डिका (uvula)

गलकोप (pharynx) का ऊपरी भाग, नासा-स्वरयन्त्र, मध्य भाग—वाक गलकक्ष (oral pharynx) और निम्न भाग स्वरयंत्र-सम्बन्धी गलकक्ष कहलाता है।

स्वर-यंत्र (larynx)—यह स्वर निकालनेका यंत्र है। यह वहींसे आरम्भ होता है, जहाँ गल-कोप समाप्त होता है अर्थात् जीभके

(१८) ऊपरी कोमल तालु। (१६) अस्थिका बना तालुका महराव। (१०, ६, ६,) घुमघुमौवा अस्थियाँ। (१४) अर्ध हनु-कोटर। देखिये, नासा-गह्वर किस तरह उर्ध हनु-कोटरसे मिल गया है।

चित्र नं० २०

नासा-रन्ध्र दिखाई देता है।

पिछले भागसे। इसमें बहुत-सी उपास्थियाँ हैं:—(१) चुल्लिका उपास्थि—यह एक चौकोर आकारकी उपास्थि है, एक-एक दोनों ओर

---

(५) गलकोप (pharynx)
(६) नासा-पथ (nasal passage).
(७) अर्ध हनु (upper jaw)
(८) निम्न हनु (lower jaw).
(९) कठिन तालु (hard palate).
(१०) जीभ (tongue). (११) अलिजिह्वा (epiglottis)
(१२) स्वर-यंत्र (larynx).
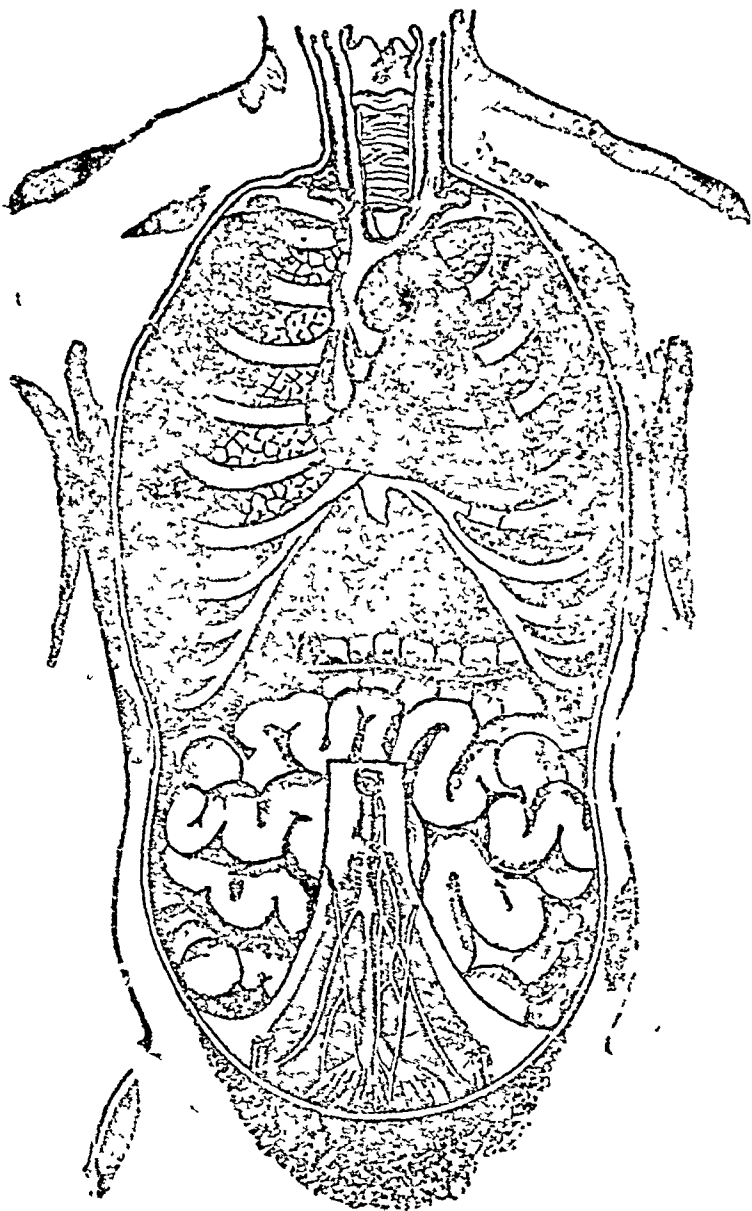
चित्र न० २१

इसमें स्वर-यंत्र, कंठनाली, फुस्फुस, हृत्पिण्ड, पाकस्थली उदरमें दाहिनी ओर यकृत, वायीं ओर प्लीहा, मूत्रपिण्ड, आँतें, मूत्राशय प्रभृति दिखाया है।

है और नाकके सामनेवाले भागमें है। जहाँ यह चुल्लि कोष (pomum adami) बनाती है। इनके भीतर स्वर-रज्जु (vocal cords) है। (२) मुद्रा उपास्थि (cricoid cartilage)—यह एक तरहकी नगदार अंगूठीकी तरह है और यह चुल्लिका उपास्थिके नीचे है। (३) मुद्रा-उपास्थिके ऊपरी किनारेपर चम्मचके आकारकी उपास्थि (arytenoid cartilage), दोनों तरफ एक एक है और उनमेंसे हरेकमें स्वर-रज्जु लगी हुई है। (४) स्वर-यन्त्रच्छद (epiglottis)—यह जीभकी जड़ है और स्वर-यन्त्रके पिछले भागमें है। इसकी शकल एक पत्तीकी तरह है।

स्वर यंत्रपर सब जगह श्लैष्मिक-झिल्ली चढ़ी हुई है और उसमे ऊपरकी ओर गल कोष और नीचेकी ओर टेंटुआ मिला है।

श्वासनली (trachea) और **वायुनली** (bronchi)—यह मुद्रा-उपास्थिके किनारेके भागसे पैदा होती है। गलेके नीचे श्वासनली (wind-pipe) वक्ष-गह्वरमें आकर दो शाखाओंमें विभक्त हो गई है। इन्हीं दोनोंको वायुनली कहते हैं। ये दोनों वायुनलियाँ फिर सूक्ष्म-से सूक्ष्मतर होती हुई असख्य प्रशाखाओंमें विभक्त होकर फेफड़ेमें फैल गयी हैं। उन प्रशाखाओंको श्वासोपनली (bronchial tubes) कहते हे। प्रत्येक श्वासोपनलीके किनारे छोटे-छोटे अंगूरके गुच्छेकी तरह कितने ही कोष या थैलियाँ हैं। इन्हें फुस्फुस कोष-गुच्छ (air sacs या lung sacs) कहते हैं। इनमें हरेक कोष हमेशा वायुसे भरा रहता है।

वक्ष-गह्वर (thorax)—यह छातीके भीतरका गह्वर है। यह दो गह्वरोंमें विभक्त है। इसीमें हृत्पिण्ड और फेफड़े है। प्रत्येक फेफड़ेपर एक बहुत ही कोमल परत चढ़ी हुई है, जिसे फुस्फुसावरण (pleura) कहते हैं।

फुस्फुस या फेफड़ा (lungs)—ये कोमल छेद-भरे और फैलने-सिकुड़नेवाले होते हैं। इनका आकार एक मन्दिरके गुम्बदकी तरह

होता है, जिसका नोकदार सिरा गर्दनकी ओर होता है और उनकी खोखली तली वक्ष-गह्वरमें होती है। फेफड़े दो होते हैं। ये वक्ष-गह्वरमें हृत्पिण्डके दोनों ओर रहते हैं और स्थितिके अनुसार दाहिना फेफड़ा या
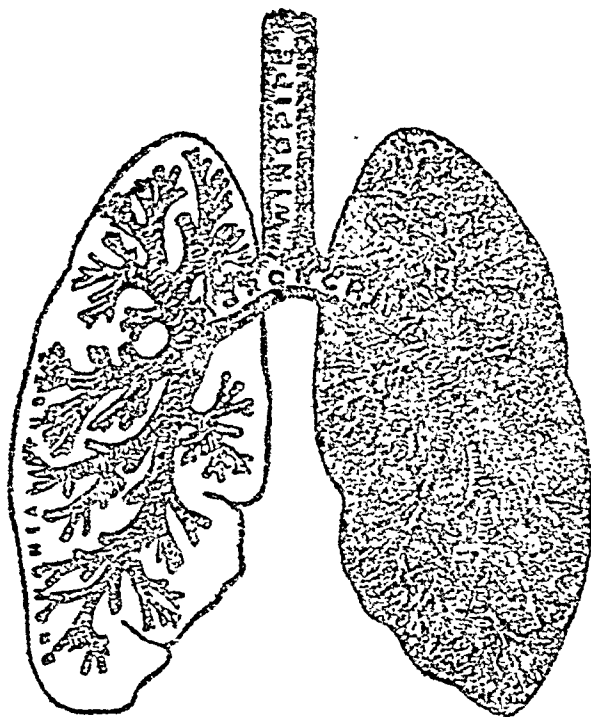
चित्र न० २२

श्वासनली—wind pipe. वायुनली— bronchi.
श्वासोपनली—bronchial tubes.

फुस्फुस (right lung) और बायाँ फुस्फुस (left lung) कहा जाता है। इसका रंग कुछ धुमैला होता है। ये स्पंजकी तरह किकुड़े होते हैं। ये कोमल और हल्के होते हैं। दाहिने फेफड़ेमें तीन और बायें फेफड़ेमें दो खंड (lobes) होते हैं। प्रत्येक खंड और भी कितने ही छोटे-छोटे उपखंडोंमें बटा है। ये दोनों खंड झिल्लीसे अलग रहते

है। दोनों फेफड़े मिलकर वक्षका करीब तीन-चौथाई भागसे भी अधिक ही घेर लेते हैं। दोनों फेफड़ोंमें अनगिनती वायु-कोष (air cells), श्वासोपनली (bronchial tubes), धमनी, शिरा और कैशिका-नाड़ियाँ भरी रहती हैं अर्थात् ये इसी तरहके सूक्ष्म यन्त्रसे बने हैं। वायु-कोषके कारण ही ये अंगूरके गुच्छेकी तरह मालूम होते हैं और इन्हीं वायु-कोषोंमें हवा भरती है। हृत्पिंडसे 'फुस्फुसीया धमनी' (pulmonary artery) यहीं आती है। असंख्य कैशिका-नाड़ियाँ वायु-

चित्र न० २३
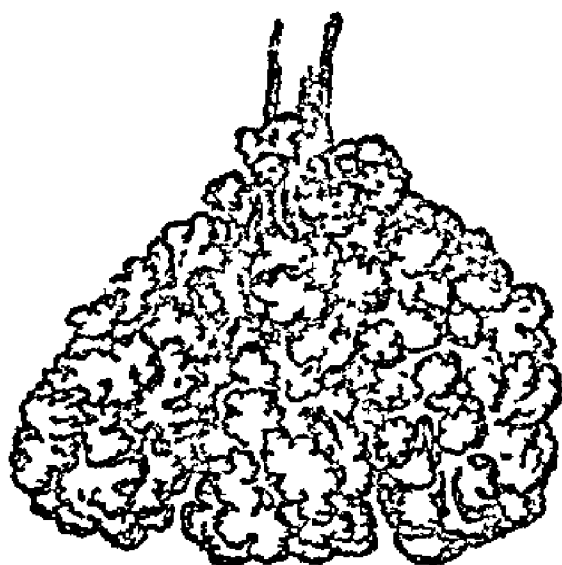
पुस्फुस-कोष-गुच्छ—*lung sacs*

कोषोंके चारों ओर लगी रहती हैं। इनके दूसरे किनारे फुस्फुसीया-शिराके साथ मिले रहते हैं।

उदर-वक्ष-व्यवधायक-पेशी (diaphragm)—वक्ष-गह्वरके नीचे की ओर चिपटी मांस-पेशी है। यह वक्ष-गह्वर और उदरको अलग करती

है, इसीलिये इसका नाम उदर-वक्ष-व्यवधायक-पेशी है। सामनेके भागमें यह अग्रखण्ड (xiphoid appendix)के पीछले भागसे और भीतरी पटलपर नीचेवाली छठी कोमल उपास्थियोंसे मिली हुई है। इसीके सहारे फेफड़ा और हृदय अवस्थित है और उदरमें इस पेशीके नीचे ही
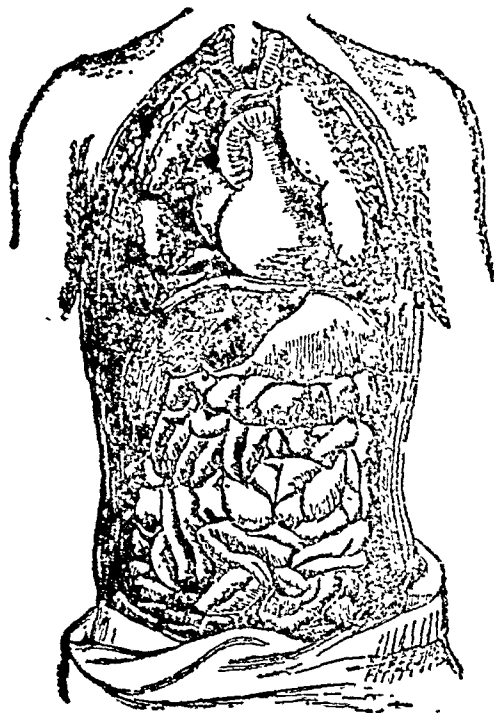
चित्र न० २४

उदर-गह्वर और वक्ष-गह्वरको अलग करती हुई वक्षोदर-मध्यस्थ-पेशी दिखाई देती है। ऊपर बीचमें हृदय और फेफड़ा प्रत्येक ओर है, नीचे बाईं ओर उदर और दाहिनी ओर यकृत है। प्लीहा पाकस्थलीमें छिपी है।

बायीं ओर प्लीहा और पाकाशय तथा दाहिनी ओर यकृत है। इसके दो स्तम्भोंसे मूत्रपिण्ड या मसानेको सहारा मिलता है। इसीके भीतरसे

होकर वक्ष-गह्वरसे गलनली और महाधमनीने प्रवेश किया है। उदरसे वक्ष-गह्वरमें अधोगा महाशिरा तथा वक्ष-प्रणाली और दूसरे-दूसरे स्नायु तथा रक्तवहा-नाडियाँ सब गई हैं।

मूत्रवाहक-संस्थान

(Urinary System)

मूत्र एक प्रकारका तरल पदार्थ है, जिसमें रक्तसे छोडा हुआ दूषित पदार्थ रहता है। मूत्र निकलना दो ग्रन्थियोंका काम है, जिन्हें मूत्र-ग्रन्थि या वृक्कक (गुर्दा—kidney) कहते हैं। मूत्र-ग्रन्थियाँ, जिस स्थानपर पसलियोंका अन्त होता है, उसी जगह कटि-प्रदेशमें दोनों ओर रहती हैं। मूत्र-ग्रन्थि गुठलीकी शकलकी रहती है और उसपर एक आवरण रहता है। इससे दोनों ओरसे एक-एक नली निकलती है, जिसे मूत्र-प्रणाली (ureter) कहते हैं। यह मूत्र तैयार होते ही उसे मूत्राशय (urinary bladder) में पहुँचा देती है, जो गुर्देके भीतर ही रहता है। यदि मूत्र-ग्रन्थि या गुर्दा काट डाला जाये, तो इसका बाहरी भाग दानेदार-जैसा दिखाई देता है और इसका भीतरी भाग छोटी-छोटी नालियोंसे चिह्नित और नोकीले स्तम्भकी तरह मालूम होता है। इसमें एक तरहका पदार्थ रहता है, जो मूत्रके भागको खूनसे अलग करता है। मूत्रग्रंथिमें बहुत-सी विशेष प्रकारकी रक्तवाहिनियाँ रहती हैं, जिनमें कि रक्तका विशेष अंश पेशाब निकलनेके लिये भीतर जा सके।

मूत्र-प्रणाली (ureter)—एक छोटी नली है, जिसकी कीडेकी तरह गति होती है। यह गुर्देसे मूत्राशयतक होती है।

मूत्राशय (urinary bladder)—*मूत्राशय मांस-पेशीकी थैलीकी* तरह है, जिसमें मूत्र इकट्ठा होता है। यह भग-सन्धिके पीछेकी ओर

रहता है और जब मूत्रसे भरा रहता है, तभी उठा रहता है। पुरुषोंमें यह मलांत्रके सामनेकी ओर रहता है और औरतोंको जरायुके सामनेवाले भागमें रहता है। वह पथ, जिससे पेशाब बाहर निकलता है, मूत्र-मार्ग
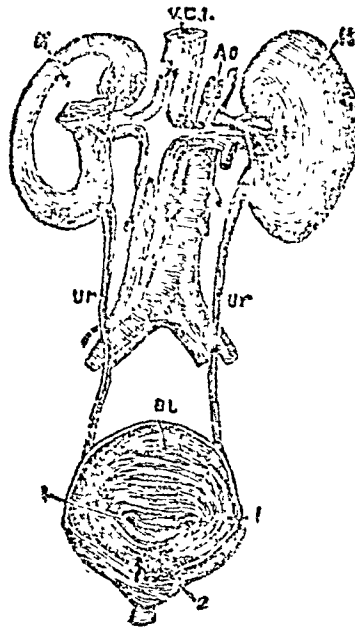
चित्र न० २५

मूत्र हमेशा मूत्र-ग्रन्थिसे निकलकर मूत्राशयमें इकट्ठा होता है।

K—मूत्रपिण्ड (kidney).
Ur—मूत्रनाली (ureter).
Bl—मूत्राशय (bladder).
2—मूत्रमार्गका मूत्राशयमें खुलना (opening of urethra).
1—मूत्र-प्रणालीका मूत्राशयमें खुलना (opening of ureter in bladder).

(urethra) कहलाता है। स्त्रियोंमें यह मूत्र-मार्ग १½ इञ्च लम्बा और सीधा रहता है और केवल मूत्र निकलनेके काममें आता है।

चित्र नं० २६

मूत्रग्रन्थिका कटा भाग—कीड़े जैसा दिखाई देनेवाला भाग पेशाब उत्पन्न करनेवाला और मूत्रवाही भाग है। यह वैसा ही दिखाया गया है,

पुरुषोंमें यह ९ इञ्च लम्बा होता है तथा इसमें दो झुकाव या घुमाव होते हैं। इसलिये इससे पेशाव और वीर्य दोनों निकलनेका काम होता है।

चौवीस घण्टोंमें स्वस्थ शरीरसे कम-से-कम डेढ़ सेर पेशाव निकला करता है। स्वाभाविक पेशावका रंग पानीकी तरह, कभी-कभी पीली आभा लिये होता है।

जननेन्द्रिय-संस्थान

(Genital System)

पुरुषोंमें—जननेन्द्रिय द्वारा ही जनन या सन्तान उत्पन्न होनेकी क्रिया हुआ करती है। इसके लिये वाह्य-यंत्र लिंग (penis) है। लिंगको चार भागोंमें विभक्त किया जा सकता है :—(१) लिंग-मूल (root), (२) लिंग-देह (body), (३) लिंग-ग्रीवा (neck or cervix) और (४) लिंग-मुण्ड (glans penis)। तीन लम्वे नलों द्वारा शिश्न वना हुआ है। इसमें दो नल लम्बे-लम्बे दोनों ओर हैं। इन दोनोंको "पार्श्व-कक्षांग" (corpora cavernosa) कहते हैं। तीसरा नल ऊपर वताये दोनो नलोंके वीचमें और नीचेकी ओर है। इस नलका नाम निम्नस्थ मध्य-कक्षांग (corpus spongiosum) हैं। मूत्र-मार्गका वहुत-सा अंश इसीमें छिपा है। ये तीनों ही आपसमें मिले हुए हैं और उनपर एक ढीला तन्तुमय आवरण चढ़ा है तथा सम्पूर्ण लिंग विटपदेशसे वन्धनीके सहारे जुड़ा हुआ है। शिश्नका नोकीला सामनेवाला भाग लिंग-मुण्ड (glans penis) कहलाता है।

जैसा प्राकृतिक अवस्थामें होता है। वायें—गुर्देकी एक कैशिक 'रक्तवाहिनी गुच्छ' (glomerules है।

इसका मुँह मूत्र-द्वार (meatus) बीचके गडहेकी तरहके अंशका नाम लिंग-ग्रीवा (neck or cervix) है। लिंग-मूलसे लेकर तीनों नलोंके सन्धि-स्थानतकके अशको लिंग-देह (body) और बस्ति-गह्वरमें बन्धनी जाल द्वारा वक्षणास्थि (ischio pubicrami) और विटप-अस्थियों (symphysis pubis) में मिला हुआ अंश लिंग-मूल (root) कहलाता है।

चित्र न० २७

(१) पु०-जननेन्द्रियका सीधा काट, (२) त्रिकास्थि, (३) मूत्राशय।

लिंगकी त्वचा ढीली रहती है, उसपर केश नहीं रहते और लिंगमुण्ड या सुपारीतक जो मचडा चला जाता है, उसे मुण्डावरक (prepuce) कहते हैं।

निम्नस्थ मध्य-कक्षांग और दोनों पार्श्व-कक्षांग बराबर पीछेकी ओर विटपदेश (preinæum) या उस त्रिकोण स्थानतक चले गये हैं, जो

सामनेकी ओर मुष्क और पीछे मलद्वारके मध्य भागमें है। निम्नस्थ मध्य-कक्षांग द्वारा मलद्वारके पास एक विस्तृत सिरा बनता है और वहाँसे यह मूत्राशय-मुखशायी-ग्रन्थिकी राहसे मूत्राशयमें चला जाता है।

पुरुषांगका एक और वाह्य अंग मुष्क (scrotum) है। यह एक थैलीकी तरह है, जिसमें दाहिने और वायें अंड रहते हैं, जो शुक्ररज्जुके सहारे मुष्कके भीतर रहते हैं।

जननेन्द्रिय-सम्बन्धी भीतरी अंश ये हैं—मूत्राशय-मुखशायी-ग्रन्थि (prostate gland), अण्डकोप (testicle), शुक्र-रज्जु (spermatic cord), उपांड (epididymis) तथा शुक्रवाहिनी-नालियाँ (seminal tubes)। इन सवके विषयमें संक्षेपमें आगे वताया जायगा।

शिश्नमें तीन ग्रन्थियाँ हैं। एकसे लिंगकी मूत्राशय-ग्रीवा घिरी है। इसका आकार वादामकी तरह है। इसका नाम पश्चात् ग्रन्थि या मुखशायी ग्रन्थि (prostate gland) है। इसमें तीन खण्ड होते हैं और इसका शिरा ठीक सामनेकी ओर है। दोनों अण्ड एक गांठकी तरह यंत्र हैं, ये रेतोरज्जुके सहारे मुष्कके भीतर अवस्थित हैं, यह रेतोरज्जु उनके पीछले किनारेसे लगी हुई है। प्रत्येक अंडका (१) एक धड़ होता है, जो सामनेवाला भाग है और (२) उपांड जो पीछेकी ओर है। काटनेपर प्रत्येक अंड दो स्तरोंमें विभाजित दिखाई देता है। इसमें वहुतसे शुक्र-कोष और शुक्र-नालियाँ हैं। उपांड एक लम्वी पतली चीज है, जिसमें शिर (globus major), पूँछ (globus minor) और देह होती हैं। शुक्र-नाली (vas deferens) एक नली है, जो उपांड शिराके निचले भागसे निकलती है और शुक्र-रज्जुके साथ-ही-साथ मूत्राशयके नीचेवाले भागतक जाती है। यह इसमें गड़हेसे वने हैं और आगे वढ़कर शुक्राशय (vesicular seminales) से मिलकर शुक्र निकालनेवाली दोनों नालियाँ (common ejaculatory duct) वना

देती हैं। शुक्र-रज्जुमें शुक्र-नालियाँ, धमनियाँ तथा शुक्र नाली और शुक्र-रज्जुके स्नायु रहते हैं। शुक्राशय (vesicular seminales) दो सिकुड़े हुए गड्ढे हैं, जो मूत्राशयके मूत्रशायिका नलीमें रहते हैं। वे मध्य-रेखामें स्थित मुखशायी-ग्रन्थिमें प्रवेश करते हैं।

चित्र न० २८

ऊपरी भागमें मध्यमें जरायु (u) खुला हुआ है। जरायुके दो ऊपरी कोनोंसे दोनों कालल नल निकले हैं और (o) डिम्ब-ग्रन्थिके नीचे मिले हुए हैं। जरायुके नीचे, पर उसमें सम्मिलित हो योनि-द्वार है (v) जो खुला हुआ है, मुष्कसे इसमें एक शुक्र-रज्जु प्रवेश कर गया है।

स्त्री-जननेन्द्रिय—स्त्री जननेन्द्रिय तीन भागोंमें विभक्त हैं, ज. वे—वहिरंग, अन्तरंग और उपांग या स्तन।

१। वहिरंग या भगमें नीचे लिखे यंत्र हैं :—

(क) **कामाद्रि** (mons vernis)—जो विटप-देशके सामने एक प्रकारका केशपूर्ण स्थान है।

(ख) **वृहत्-भगोष्ठ** (labia majora)—यह ओष्ठकी तरहका एक यंत्र है। कोमल उठे हुए तिकोनिया दो चमड़े कामाद्रिके दोनों ओरसे मलद्वारके सामनेवाले भाग (perineum) तक फैले हुए हैं। इन दोनोंको वृहत् भगोष्ठ कहते हैं। इन दोनों भगोष्ठोंका कामाद्रिमें मिल जानेका जो स्थान है अर्थात् जहाँपर ये दोनों मिल गये हैं, उसे 'उर्ध-सन्धि' (anterior commissure) और मलद्वारसे एक इञ्च ऊपर हटकर जहाँपर ये मिलते हैं, उन्हें 'निम्न-सन्धि' (posterior commissure) कहते हैं। उर्ध-सन्धिमें एक उल्टी-सी छोटी जगह है, जिसे 'वृहत्-भगोष्ठ-सन्धि' (fourchette) कहते हैं।

(ग) **क्षुद्र-भगोष्ठ** (labia minora)—दोनों वृहत् भगोष्ठोंके भीतर दो श्लैष्मिक-झिल्ली भरी त्वचाएँ हैं। उन्हीं दोनोंका नाम क्षुद्र भगोष्ठ या भगपक्ष (labia minora or nymphe) है। पीछेकी ओर ये दोनों वृहत् भगोष्ठोंसे मिल गये हैं।

(घ) **भगांकुर** (clitoris)—यह उत्थानशील तन्तु (erectile tissue) से बना इलायचीके जैसा एक यंत्र है। यह दोनों वृहत् भगोष्ठोंकी ऊपरी सन्धिके नीचेवाले स्थानमें है।

(ङ) **स्त्री-मूत्र-मार्ग** (urethra)—यह करीव १½ इञ्च लम्बी नली है। स्त्री-मूत्र-मार्गका द्वार दोनों भगोष्ठोंके वीचमें और भगांकुरके एक इञ्च नीचे रहता है।

देती हैं। शुक्र-रज्जुमें शुक्र-नालियाँ, धमनियाँ तथा शुक्र नाली और शुक्र-रज्जुके स्नायु रहते हैं। शुक्राशय (vesicular seminales) दो सिकुड़े हुए गड्ढे हैं, जो मूत्राशयके मूत्रशायिका नलीमें रहते हैं। वे मध्य-रेखामें स्थित मुखशायी-ग्रन्थिमें प्रवेश करते हैं।

चित्र नं० २८

ऊपरी भागमें मध्यमें जरायु (u) खुला हुआ है। जरायुके दो ऊपरी कोनोंसे दोनों कालल नल निकले हैं और (o) डिम्ब-ग्रन्थिके नीचे मिले हुए हैं। जरायुके नीचे, पर उसमें सम्मिलित ही योनि-द्वार है (v) जो खुला हुआ है, मुष्कसे इसमें एक शुक्र-रज्जु प्रवेश कर गया है।

स्त्री-जननेन्द्रिय—स्त्री जननेन्द्रिय तीन भागोंमें विभक्त हैं, उ. ये—वहिरंग, अन्तरंग और उपांग या स्तन।

१। वहिरंग या भगमें नीचे लिखे यंत्र हैं :—

(क) **कामाद्रि** (mons vernis)—जो विटप-देशके सामने एक प्रकारका केशपूर्ण स्थान है।

(ख) **वृहत्-भगोष्ठ** (labia majora)—यह ओष्ठकी तरहका एक यंत्र है। कोमल उठे हुए तिकोनिया दो चमड़े कामाद्रिके दोनों ओरसे मलद्वारके सामनेवाले भाग (perineum) तक फैले हुए हैं। इन दोनोंको वृहत् भगोष्ठ कहते हैं। इन दोनों भगोष्ठोंका कामाद्रिमें मिल जानेका जो स्थान है अर्थात् जहाँपर ये दोनों मिल गये हैं, उसे 'उर्ध्व-सन्धि' (anterior commissure) और मलद्वारसे एक इञ्च ऊपर हटकर जहाँपर ये मिलते हैं, उन्हें 'निम्न-सन्धि' (posterior commissure) कहते हैं। उर्ध-सन्धिमें एक उल्टी-सी छोटी जगह है, जिसे 'वृहत्-भगोष्ठ-सन्धि' (fourchette) कहते हैं।

(ग) **क्षुद्र-भगोष्ठ** (labia minora)—दोनों वृहत् भगोष्ठोंके भीतर दो श्लैष्मिक-झिल्ली भरी त्वचाएँ हैं। उन्हीं दोनोंका नाम क्षुद्र भगोष्ठ या भगपक्ष (labia minora or nymphe) है। पीछेकी ओर ये दोनों वृहत् भगोष्ठोंसे मिल गये हैं।

(घ) **भगांकुर** (clitoris)—यह उत्थानशील तन्तु (erectile tissue) से बना इलायचीके जैसा एक यंत्र है। यह दोनों वृहत् भगोष्ठोंकी ऊपरी सन्धिके नीचेवाले स्थानमें है।

(ङ) **स्त्री-मूत्र-मार्ग** (urethra)—यह करीब १½ इञ्च लम्बी नली है। स्त्री-मूत्र-मार्गका द्वार दोनों भगोष्ठोंके बीचमें और भगांकुरके एक इञ्च नीचे रहता है।
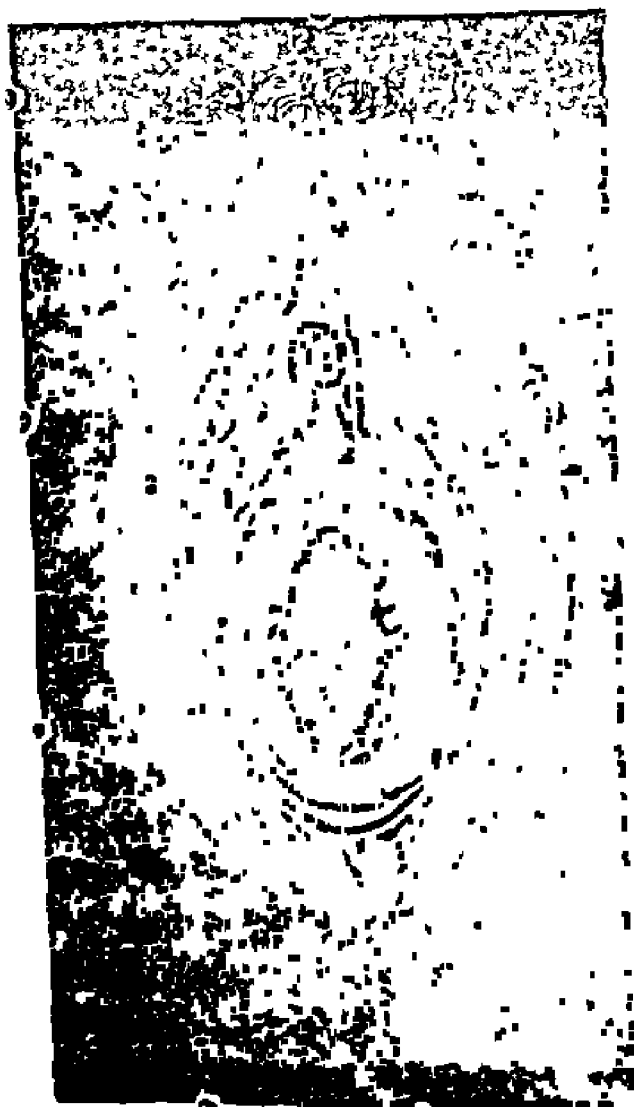
चित्र नं० २६

(१२) कामाद्रि (mons vernis). (३) भगाङ्कुरका आवरण (covering of clitoris). (४) भगांकुर (clitoris). (१) क्षुद्र-भगोष्ठ (labia minora). (२) वृहत् भगोष्ठ (labia majora).

(च) **योनि-द्वार** (orifice of vagina)—मूत्र-मार्गके निचले भागमें योनि-द्वार आरम्भ होता है। यह ५-६ इञ्च लम्बा होता है और निचला अंश श्लैष्मिक-झिल्लीसे ढँका रहता है। इसीका नाम कुमारीच्छद (hymen) है।

२। अन्तरंग—इसमें (क) योनि (vagina), (ख) जरायु (uterus), (ग) दोनों डिम्बकोष (ovaries) हैं।

(क) **योनि** (vagina)—यह चोंगाकी तरह एक नल है। जरायुसे निकलकर वस्ति-गह्वरके भीतर होता हुआ वृहत् भगोष्ठ दोनोंमें खुल गया है। इसके सामनेवाले भागमें मूत्राशय और पिछले भागमें मलाधार है। इसकी लम्बाई प्रायः ५-६ इञ्च होती है। भीतरी भाग श्लैष्मिक-झिल्लीसे ढँका रहता है।

(ख) **जरायु** (uterus)—इसका आकार नीचे मुँह किये अमरूद या नाशपातीकी तरह है। यह एक थैली है, जिसका भीतरी भाग खोखला रहता है। लम्बाई ३ इञ्च, चौड़ाई २ इञ्च और मोटाई १ इञ्च होगी। यह वस्ति-गह्वरमें योनिसे लगी हुई है। जरायुका भीतरी भाग तिकोनिया रहता है। इसे गर्भाशय भी कहते हैं। यह फ़ैलनेवाला होता है। भ्रूणके साथ-ही-साथ इसका फैलाव भी बढ़ता जाता है। यह पेशियोंसे बना है। यह तीन स्तरोंसे बना है:—पहला रस-स्रावी झिल्लीसे, दूसरा मांस-पेशीसे और तीसरा श्लैष्मिक-झिल्लीसे। इसीके ऊपरी भागको जरायु-मस्तक (fundus), मध्य भागको जरायु-

---

(५) योनिच्छद (hymen) वृहत् भगोष्ठ-सन्धि (fourchette). मूत्रनाली बहिर्द्वार (opening of urethra). (६) योनि-द्वार (orifice of vagina). मलद्वार (anus).

देह अ.र जहाँ गोल आकारमें समाप्त होता है, उसे जरायु-ग्रीवा (neck or cervix) कहते हैं। ग्रीवाके सामनेवाले छेद-रहित भागको जरायु-मुख (os-uteri-externum) कहते हैं। जरायु एक पर्देके आकारकी

चित्र नं० ३०

३। मलनाली (rectum). ८। क्षुद्र भगोष्ठ (labia minora). ९। बृहत् भगोष्ठ (labia majora). ४। जरायु (uterus). १६। कटि-कशेरुका (lumber vertebra). ७। पिक्चचु अस्थि (coccyx). ६। त्रिकास्थिकी कशेरुका (vertebra of sacrum),

वन्धनीसे वँधा है, इसे चौड़ी वन्धनी (broad ligament) कहते हैं। इसके अलावा गोल-वन्धन (round ligament) भी हैं, जो दो डोरियोंकी तरह चौड़ी वन्धनीके वीचमें है और सीधा ईंग्विनल कैनलतक जाकर वृहत् भगोष्ठोंमें मिल जाता है।

(ग) **कालल नल** (fallopian tubes)—ये भी दो हैं। दोनों जरायुके ऊपरी भागमें, दोनों ओरसे, दोनों तरफके डिम्वकोषतक फैले हुए हैं। उसकी लम्बाई प्रायः ४ इञ्च रहती है। इनका एक शिरा जरायुमें और दूसरा डिम्वकोपके पास वस्ति-गह्वरमें चला गया है। इन नलोंके अन्तिम भागमें झालरदार फूलकी तरह एक अंश रहता है। इससे ही जरायुमें डिम्व जाते हैं।

स्तन (mammæ or breast)—स्तन एक थुलथुली और झूलती हुई आकृतिका अंग है। इसमें मेद अधिक रहता है और स्तन-कोष (gland tissue) वढ़े रहते हैं। स्तन दो हैं। प्रत्येक स्तनके अन्तिम भागमें एक उठा हुआ मांस पिण्ड-सा है, इसे चुचुक या स्तन-वृन्त (nipple) कहते हैं। इसके नीचे एक चक्कर-सा रहता है। यह गोल चमड़ेसे घिरा रहता है। इसका नाम कृष्णमंडल (areola) है।

५। मलाशय जरायु-प्रणाली (retro uterine excavation). १। योनि-पथ (vagina). १८। जरायु-मूत्राशय-प्रणाली (utero vesical excavation). C जरायु-ग्रीवा (cervix of the uterus). D जरायु-शिखर (fundus of the uterus).

आँख (EYES)

आँखें दो हैं। प्रत्येक दाहिने और बायें रहती हैं। आँखमें (क) चक्षु-गह्वर और (ख) उसके उपांग—ये दो समान हैं। इसका बाहरी आयतन बादामकी तरह होता है; परन्तु पिछला अंश गोल रहता है। इसके पिछले भागमें मस्तिष्क रहता है। उपांगोमें नीचे लिखे अंग हैं :—
भौहें—प्रत्येक चक्षु गह्वरके ऊपर एक टेढी केशदार लकीर-सी रहती हैं, इसे भौं (*eye brows*) कहते हैं। पलकें (*eye lids*) ऊपरी और निचली—इनसे आँखकी रक्षा होती है। यह एक खुलने और बन्द होनेवाली चीज है। इसका वह अंश, जो ऊपरी और निचली पलकसे मिला है, चक्षु-कोण (canthus) कहलाता है। नेत्रोच्छदा-पेशीके सहारे आँखकी पलकोंका यह ढकना उठता है। भीतरी चक्षु-कोणमें चक्षु-कला (conjunctiva) की एक तही है, जिसे उर्ध-चन्द्राकार पलक-चक्षुकला (plica semilunaries) कहते है। इसके विपरीत भागमें प्रत्येक पलकके सामनेकी ओर अश्रु-स्रावी दाने (lachrymal papillæ) है, जो अश्रुवाहिनी नाली (punctum lachrymal) या अश्रु-प्रणालीसे दबे रहते हैं। चक्षु-गह्वरके ऊपरी कोनेमें अश्रु-स्रावी- [illegible] हैं। अस्थियोंके वर्णनमें चक्षु-गह्वरका वर्णन हो चुका है। पलकोंके [illegible] भागमें एक दर्जन प्रणालियाँ हैं। अश्रुवाहिनी नाली अश्रु ग्रन्थिसे [illegible] होती और भीतर-ही-भीतर अश्रु-खात (lachrymal sac) तक जाती है।

चक्षु-गह्वरमें चक्षु-गोलक (eye-ball) रहते हैं। इसमें नीचे लिखे अंश हैं :—

चक्षु-गोलक तीन पर्दोंसे घिरा है। बाहरी आवरण, कनीनिका या कार्निया (cornea) है। ऊपरका यह चमड़ा सब स्थानोंसे कड़ा है। घड़ीके डायलकी तरह इसी चमड़ेसे आँखका गोला ढँका रहता है।

ऑखकी पुतलीके ऊपरी भागके अतिरिक्त अन्य सभी भागोंका आवरण सफेद है। चक्षु-गोलक आवरणके ऊपरवाला वीचका भाग वहुत चमकीला होता है। इसके वादवाले पर्देको शुभ्रमंडल (sclerotic)
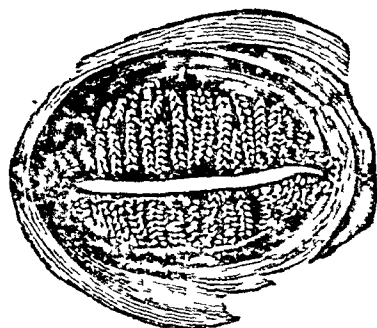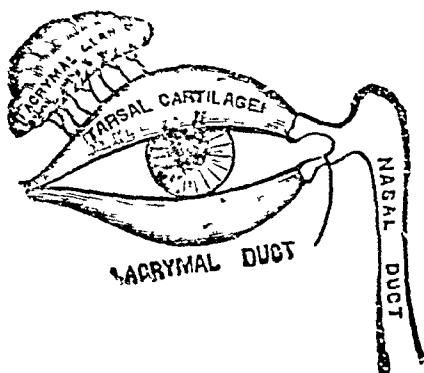
चित्र न० ३१

अश्रु-ग्रन्थि—lachrymal gland.
नेत्रच्छद-उपास्थि—tarsal cartilage.
अश्रुवाहिनी नाली—lachrymal duct
नासा-पथ—nasal duct.

पलकका भीतरी भाग—इसमें चक्षु-छिद्र, ग्रन्थियोंके मुख और पलककी ग्रन्थियाँ रहती हैं।

कहते हैं। यह सफेद पर्दा है। इस दूसरे पर्देके निचले भागमें एक छेद है। इसको ऑखोंका तारा (pupil) कहते हैं। इसी छेद होकर दर्शन-स्नायु (optic nerve) भीतर आये हैं। आँखके गोलेके ऊपरी भागमें और नाकके पीछेकी ओर एक कोनेमें ऊपर वतायी अश्रु (lachrymal) ग्रन्थि है। इसके वादवाला तीसरा अर्थात् ठीक ऑखके गोलेके ऊपरवाला पर्दा या आवरण कृष्ण-पट (choroid) है। इसमें वहुतसे स्नायु तथा रक्तवाहिनियाँ हैं। यह देखनेमें एक महीन जालकी तरह है। इसका दूसरा नाम चित्र-पत्र (retnia) है। ऑखकी

बीचवाला झिल्ली और जाल-जैसे आवरणके बीचमें वहिर्वर्तुल काँचकी तरह (convex lens) एक स्वच्छ पदार्थ लगा है। आँखकी पुतलीके भीतरसे जो रश्मि चक्षु-गोलकमें जाती है, उसीकी सहायतासे हमलोगोंमें दर्शन ज्ञान पैदा होता है। उस समय उस चीजकी तस्वीर, रक्त रश्मिके
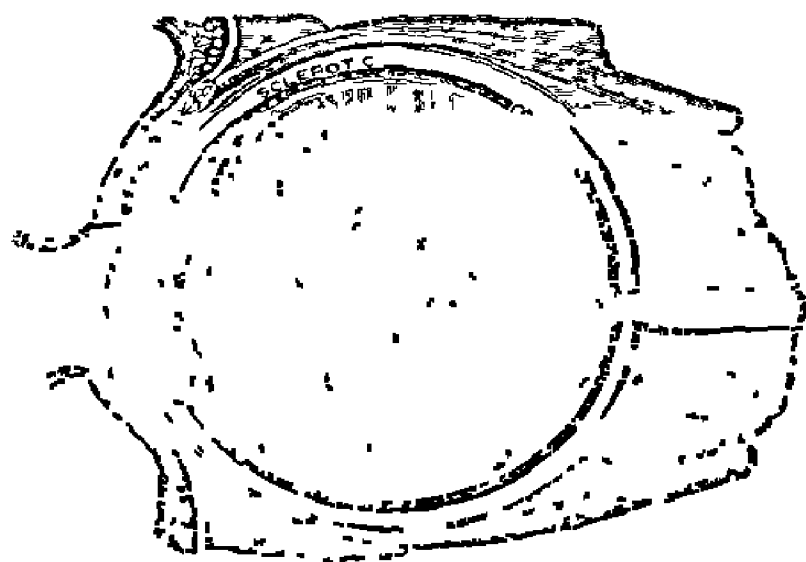
चित्र नं० ३२

नीचेकी ओर—दर्शन स्नायु (optic nerve)।
ऊपरकी ओर—कनीनिका (cornea)।
आँखका अगला कोष्ठ (front chamber)।
उपतारा (Iris)।
बृहत् कोष्ठ (vitreous humour)।
अन्तस्तीय पटल (choroid)—कृष्णमण्डल।
ताल (lens)।
चित्र पत्र—(retina)।
बाह्य पटल (sclerotic)—शुभ्रमण्डल।

द्वारा आँखोंके पिछले भागमें अर्थात् पानी और अंडलालकी तरह चमकीले दो पदार्थ (agnous and vitreon humour) हैं। बीचमें चित्र-पत्र (retina) पर गिरती है। यह तस्वीर तुरन्त मस्तिष्कमें जा पहुँचती है और उस समय मनके द्वारा उसकी उपलब्धि होती है। छः छोटी मांस-पेशियों द्वारा चक्षु-गोलक चक्षु-गह्वरमें बँधा हुआ है। इन्हीं मांस पेशियोंके सहारे इच्छानुसार आँख घुमायी जा सकती है।

चक्षु-गोलकके पिछले भागमें मस्तिष्क है। मस्तिष्कसे निकलकर स्नायु पीछेकी ओरसे चक्षु-गह्वरमें घुसता है और चित्र-पत्रमें खुलता है। **उपतारा** एक रंगीन भाग है, जो चित्र-पत्रके सामनेकी ओर उस जलीय पदार्थमें है।

कान (EAR)

आँखकी तरह कान भी दो होते हैं। ये खोपड़ीकी जड़में दाहिने और बायें दो हैं। कान तीन भागोंमें विभक्त किये गये हैं :—(१) वाह्य-कर्ण (external ear), (२) मध्य-कर्ण (middle ear) और (३) अन्तःकर्ण (internal ear or labrynth)।

(१) **वाह्य-कर्ण** (external ear)—इसके दो अंश हैं। (क) कर्ण-पुट और (ख) कर्ण-कुहर। कर्ण-पुट (pinna)—यह एक उपास्थि है, जो शब्दोंको संग्रह करती है। (ख) कर्ण-कुहर (external auditory meatus) और वह शब्द कर्ण-कुहरमें जाता है। कोई-कोई कर्ण-कुहरको श्रवण-नाली भी कहते हैं। यह कर्ण-कुहर भीतरकी ओर धीरे-धीरे पतला और संकीर्ण होकर टेढ़ा होता हुआ एक झिल्लीसे मिल गया है। इसी झिल्लीको "कर्ण-पटह" (tympanic membrane) भी कहते हैं। श्रवण-नालीके गात्रमें कानका मैल
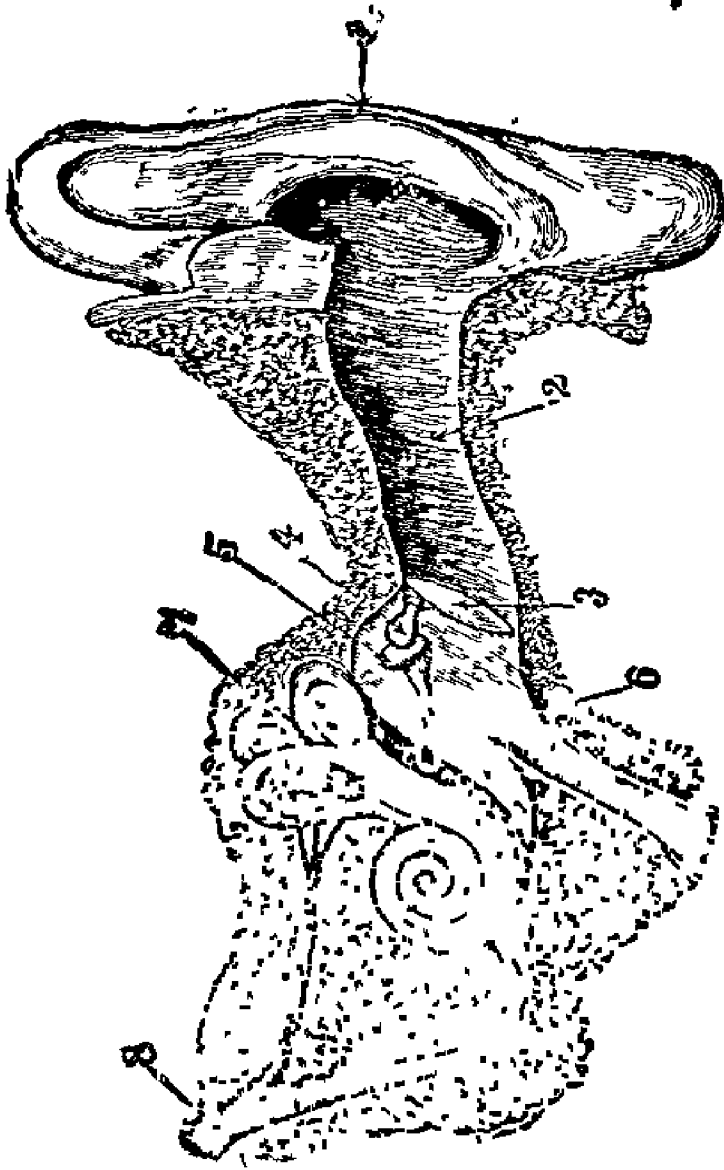
चित्र नं० ३३

(१) वहि:कर्ण। (२) बाह्यकर्णी नाली। (३) कर्ण-पटह (४) मुद्रास्थि। (५) शुमिकास्थि। (६) रकाबास्थि। (७) अर्ध

निकालनेवाली कई ग्रन्थियाँ हैं, उन्हें कर्ण-मल-स्रावीग्रन्थि (wax gland) कहते हैं। इनसे मैल निकलकर श्रवण-नालीको तर रखता है।

इसके अलावा, एक कंठकर्णी-नाली (eustachian tube) है, जिसके द्वारा कर्ण-गह्वर या कर्ण-कुहरके भीतरी और वाहरी भागके दवावकी समता ठीक-ठीक वनी रहती है।

(२) **मध्य-कर्ण** (middle ear)—इस मध्य-कर्णकी सुरंग हवासे भरी रहती है। इसमें तीन छोटी हड्डियाँ शंखकी तरह आपसमें मिल गयी हैं। एक देखनेमें हथौड़ी, दूसरी निहाई और तीसरी रकावकी तरह होती है। ये शब्दोंको ले जाती हैं।

(३) **अन्तःकर्ण** (internal ear or labrynth)—इसमें तीन अंश हैं। इसकी रचना वड़ी विचित्र है। यह पानी जैसे एक तरहके पदार्थसे भरा रहता है। मस्तिष्कसे निकलकर श्रवण-स्नायु (auditory nerves) इसमें प्रवेश करनेके वाद हजारों भागमें बँट गया है। अन्तःकर्णका पहला शिरा वहुत कुछ अंगूठोकी तरह है। वीचका भागमें अंडेकी भाँति और अन्तका भाग घोंघे-जैसा है।

वाहरी कान केवल समाचार संग्रह करता है और उसे कर्ण-पटहतक पहुँचा देता है। पटह अपने स्पन्दनसे उसकी तेजी वढ़ा देता है। कानमें प्रसारक और उत्थापिका नामकी दो पेशियाँ हैं। ये शब्दोंको ठीक-ठीक नियोजित करती हैं। कर्णास्थियाँ कम्पनोंको ठीक-ठीक स्थानपर पहुँचाती हैं और कंठकर्णी-नालीसे शब्दोंका दवाव और सामंजस्य ठीक रहता है।

चन्द्राकार नालियाँ। (८) श्रावणी नाड़ी। १ से ६—वाह्यकर्ण। ४ से ६—
ध्य-कर्ण। ७ से ८—अन्तःकर्ण।

मानव-अंगोंकी क्रिया

(Functions of the Human-body)

शरीर-विज्ञानके सम्बन्धमें संक्षेपमें बताया जा चुका। अब हम मानव-अंगोंके कार्य-कलाप तथा क्रियाके सम्बन्धमें बतायेंगे अर्थात् स्वास्थ्यपर किस अंगका कैसा प्रभाव पहुँचता है और कौन अंग क्या काम करते हैं।

मानव-शरीरकी रचना 'कोष या सेलों' (cells) से ही पहले आरम्भ होती है। यह कोष ऐसी चीज है, जो केवल आँखोंसे दिखाई नहीं देती। सेलोंमें एक प्राचीर (wall) जीवोज (protoplasm) रहता है, जिसके बीचोबीचमें मींगी (nucleus) रहती है। जो सेलोंके कार्योंपर शासन करती है। सेल या कोष तबतक जीवित रहते हैं, जबतक उन्हें खाद्य रूपमें तरी (पानी), गर्मी और अम्लजान (oxygen) मिलता रहता है। गर्मी, सूखना, खाद्यका न प्राप्त होना या अम्लजानका न मिलना ही सेलोंकी मृत्युका कारण होता है। सर्दीसे वे मरती नहीं हैं, पर उनकी कार्य-शक्ति रुक जाती है। मानव शरीरके ये कोष जहाँ पैदा होते हैं, विशेषकर ये वहीं रहते हैं। समय पाकर ये पुराने पड़ जाते हैं और क्षय हो जाते हैं अथवा इनसे दो नये कोष बन जाते हैं। सेलों या कोषोंका परिवर्त्तन या पुनर्निर्माण तीन तरहसे होता है :- पहला अर्थात् पुरानी सेलमें एक कली-सी पैदा हो जाती है, यह बढ़ती है और बढ़ते-बढ़ते पुरानी सेलसे अलग हो पड़ती है। इस तरह दो सेलें या कोष बने। पहला तो एक रह गया और दूसरा नया निकल आया। इनकी वृद्धिका दूसरा क्रम सरल-विभाजन है अर्थात् एक सेल बढ़कर दो हो जाती है। दोसे चार इसी तरह बढ़ती जाती है और तीसरा क्रम यह है कि मींगी या अणुकोषमें ही विभाग होता जाता है और नयी बनावटें भी पैदा होती जाती हैं। जब मींगी दो होती है

उसके दोनों भाग कोष-स्तम्भकी ओर दौड़ जाते हैं और वहाँ सेलोंके दो भाग हो जाते हैं। खूनके दौरानके साथ ही इन्हें भोजन और अम्लजान प्राप्त होता है। शरीरमें वर्त्तमान रक्तसे ही सेलोंको खाद्य और अम्लजान मिलता है और वे शरीरकी CO_2 और अपने शरीरका क्षयिक भाग दे देती है, जो मेटावोलिक प्रोडक्ट (metabolic product) कहलाता है।

शरीरके जिस अंशके जो कोष हैं, वे वहीं रहते हैं; पर उस अंगकी आवश्यकताके अनुसार सेलोंमें परिवर्त्तन या सुधार होता है। उनकी या वनावट इस तरह की होती है कि उनका पहचानना कठिन हो जाता है। जैसा नाखूनमें वे सींगकी तरह टीले वनाती हैं। वायुनलीमें केश-भरे उभार वनते हैं। मांस-पेशियोंके कोष टेढ़े-मेढ़े और लम्बे होते हैं। अंडकोषमें इनमें पूँछें होती हैं। पेटमें वे सफेद प्याले या गिलास-जैसी शकलके होते हैं। सारांश यह है कि इन सेलों की वनावट भिन्न-भिन्न प्रकारकी, स्थान तथा अवश्यकताके अनुसार होती है; शरीरमें सेलें एकत्र होकर तन्तु वनाती हैं, जिनसे एक विशेष प्रकारका कार्य होता है। इसी तरह अस्थि-तन्तु, स्नायु-तन्तु, पेशी-तन्तु आदि तैयार होते हैं। इन तन्तुओंसे ही शरीरके उपादान तैयार होते हैं।

पाचन-संस्थानकी क्रिया—पाचनका मतलव है, ऐसा खाद्य-पदार्थ तैयार करना, जो सोख लिया जा सके और इस तरह रस पचकर रक्तमें मिल सके। इस तरह पचनेमें तीन क्रियाएँ होती हैं—पदार्थोंका तरल या रस वनना। इसका अशोषण या सोखना तथा पक्वीकरण या अन्य पदार्थसे मिल जाना। अशोषणके योग्य उपयुक्त भोजन वनानेके लिये, इसे काटना या चटनीकी तरह वना डालना जरूरी होता है तथा इसमें कुछ ऐसे भी रसायनिक पदार्थ मिलनेकी जरूरत रहती है, जिनसे उनके रूपमें ऐसा परिवर्त्तन हो जाये, कि वे सहजमें ही उन अन्तवाली कोमल श्लैष्मिक-झिल्लियोंसे अशोषित या चूस लिये जा सके।

हमलोग जो कुछ भोजन करते हैं, वे साधारणतः निम्नलिखित कई भागोंमें विभक्त किये जा सकते हैं :—

१ प्रोटीड—इनमें मास, दूध, अण्डे, मछली, दाल, मटर, दही, छाना मैदा, आँटा, प्रभृति हैं इनसे शरीरमें मांस तैयार होता है।

२ कार्बो हाइड्रेट्स या श्वेतसार या चीनी—इनमें चावल, गेहूँ, मकई, आँटा, तरकारियाँ, फल, आलू, कन्द, सागू, बार्ली, आरारूट, चीनी, शक्कर, अँचार प्रभृति हैं।

३ चर्बी (हाइड्रो-कार्बोन्स)—इसमें मक्खन, घी, तेल प्रभृति हैं। इनसे शरीरमें गर्मी और शक्ति प्राप्त होती हैं।

४ नमक—इनमें प्रधान है, साधारण नमक (sodium chloride), कैलसियम नमक, फास्फैट्स प्रभृति।

५ पानी—यह भोजन और प्राण-धारक दोनों ही कार्योंके लिये है।

इसके अलावा एक चीज और है जिसे :—

६ खाद्योज (vitamins) कहते हैं, जिसका खाद्य-पदार्थमें रहना स्वास्थ्यप्रद है और जो भोजनके पदार्थोंमें न रहनेपर रोग तथा मृत्यु हो जाती है। चाहे आप कितना ही खाते जायें, यदि यह न रहेगा तो आपका शरीर पुष्ट न होगा। विटामिन या खाद्योज ताजे फल तथा रसोंमें पाया जाता है।

ऐसे प्रोटीड, जो अन्न-पथसे आशोपित नही हो सकते, उन्हें लगने योग्य बना लिया जाता है। यह सब कैसे होता है, सो नीचे देखिये—

(१) मुँहमें—

दाँत—काटना, फाड़ना, कुचलना और सभी कड़ी चीजोंको चटनीकी तरह बना देता है।

जीभ—सबसे पहली और जरूरी बात जो है, उसीपर ध्यान नहीं दिया जाता है। मुँहमें पदार्थ जाते ही एक तरहकी लार

तैयार होने लगती है। इस लारसे केवल भोजन ही नहीं, वल्कि इससे श्वेतसार वगैरह वदलकर चीनीके रूपमें परिवर्त्तित हो जाते हैं। जीभ खाद्य-पदार्थोंको मुँहमें ले जानेमें, इधर-से-उधर हिलाने, रसमें मिलाने और फिर गलनालीमें पहुँचानेमें सहायता पहुँचाती है। इसीसे स्वाद भी मिलता है।

(२) गलनाली—इससे विना रोक-टोक खाद्य-पदार्थ पाकाशयमें पहुँच जाता है।

(३) उदर-गह्वरके भीतर—

(क) **यकृतके कार्य**—यकृतके सम्बन्धमें पहले वताया जा चुका है। अव उसकी क्रिया देखिये। यकृतमें पित्त वनता है। यह शर्कराका विशेष भाग रक्तमें नहीं जाने देता। पेशावमें जो मूत्राम्ल वनता है, वह भी यकृतमें ही तैयार होता है। यह अन्नके साथ विषाक्त पदार्थ पहुँच जानेपर, ऐसे पदार्थ वनता है, जिससे उस विषका विकार शरीरमें न पहुँच सके।

(ख) **पित्ताशयकी क्रिया**—पित्ताशय नाशपातीकी तरह एक चीज है, इसमें पित्त नामक एक पाचक रस रहता है। यह पीलापन लिये क्षार प्रकृतिका होता है। पाकाशयमें भोजन रहनेपर यह रस उसमें मिलकर उसके पाचनमें सहायता पहुँचाता है।

(ग) **क्लोम-ग्रंथिकी क्रिया**—यह उदरकी पिछली दीवारमें है। इसमें जो पाचक रस वनता है, उसे क्लोम-रस कहते हैं। यह एक पतला क्षारीय द्रव-पदार्थ होता है। इसमें तीन तरहके पाचक-पदार्थ हैं :—

(१) **प्रोटीन विश्लेषक**—इससे प्रोटीनका विश्लेषण होता है।

(२) **श्वेतसार विश्लेषक**—इसकी सहायतासे श्वेतसारसे शर्करा बन जाती है।

(३) **चर्बी विश्लेषक**—इसकी सहायतासे चर्बीसे गिलसरिन अम्ल बनता है।

पित्तसे मिलकर क्लोम क्रिया बडी प्रबल हो जाती है। चर्बीवाले पदार्थको पचानेके लिये इसकी बहुत जरूरत हैं। आँतोमें पित्तके रहनेपर सडना कम होता है और पित्त न रहनेपर सडनेकी क्रिया अधिक होती है। इसीसे मलमें तेज गन्ध आती है।

(घ) **प्लीहाकी क्रिया**—अबतक अच्छी तरह प्रकट नही हुई।

(ङ) **क्षुद्र अंत्रकी क्रिया**—क्षुद्र अन्त्रमें जो गति या लहर-सी होती हैं, उसमे पिसाई तो होती ही हैं, साथ ही उनमेंसे एक तरहका रस निकलता है। इसको *क्षुद्रान्त्रीय रस कहते हैं।*

इससे यह कार्य होता है :—क्लोम-रसमें उत्तेजना देनेवाला पदार्थ पैदा होता है, *जिससे क्लोम-ग्रन्थि बडी शीघ्रतासे रस बनाने लगती है।* (२) ऐसा पदार्थ बनता है, जिससे क्लोम-ग्रन्थिकी प्रोटीन बनानेकी शक्ति बढती है। (३) प्रोटीन विश्लेषक रहता है, जो प्रोटीनका विश्लेषण करता है। (४) शर्करा परिवर्त्तक—इसकी क्रियासे अनेक प्रकारकी शर्करायें बनती हैं।

यह आहार-द्रव्यके रसको और भी मथकर तथा चूसकर बडी आँतमें भेज देता है।

(च) **बृहत् अंत्रकी क्रिया**—*छोटी आँतमें पच-पचाकर जितने* पदार्थ रक्त और लासिकामें चले जाते है, उन्हे छोडकर बाकी भाग बृहत् अन्त्रमें आता है। इसमे भी मासका सकोचन और प्रसारण होकर जो रस आता है, वह पहले ऊपर यकृतमें, फिर प्लीहामें और फिर नीचे बस्ति-गह्वरमें आता है। बृहत् अन्त्रकी श्लैष्मिक-झिल्लीसे जल, रक्त और

लासिकामें जाता है और वह गाढ़ा होता जाता है। यह गाढ़ी चीज श्रोणिगा वृहत् अंत्रमें जाती है और वहाँसे मलद्वारमें होकर वाहर निकलती है। यही विष्ठा है।

पाचन-क्रिया

पाचन-क्रिया एक प्रकारसे मुँहसे ही आरम्भ हो जाती है। लार-मिला भोजन पाकाशयके वायीं ओरके चौड़े भागमें एकत्र होता है। इसी समय आमाशयिक रस वनना आरम्भ होता है। जवतक यह अम्ल-रस भोजनमें नहीं मिल जाता, तवतक लारका श्वेतसारको परिवर्त्तन कर देनेवाला पदार्थ खाये हुए पदार्थपर कोई प्रभाव नहीं पहुँचाता। इसके वाद अम्ल-रस वनने लगता है। अव यहाँ पाकाशयकी दीवारोंमें गति होने लगती है। कभी मांस सिकुड़ता है और कभी फैलता है। इससे भोजनपर दवाव पड़ता है। इस तरह पाकाशयमें गया हुआ भोजन अच्छी तरह मथ जाता है और आमाशयिक रस मिलकर वह पतला भी हो जाता है। इस तरह साढ़े चार घण्टेतक खूव पिसाई होते-होते, आँतोंमें पहुँचकर यह पतला भोजन क्षारिय हो जाता है; परन्तु दूधकी क्रिया कुछ दूसरी ही होती है। दूध जव पाकाशयमें पहुँचता है तो वहाँ अम्ल मिलनेके कारण जम जाता है। वह पदार्थ, जिसके कारण दूध जमता हैं "रेनेर" कहलाता है। अव इस "रेनेर" के गुणसे वह दही वनता है और इसके वाद उसका पाचन होता है।

पाकाशयसे मथा हुआ भोजन अंत्राशयमें जाता है परन्तु पहले यह क्षुद्र अंत्रमें जाता है, यहाँ उसमें क्षुद्रांत्रका रस मिल जाता है। यहाँ भी आँतोंमें केचुएकी तरह गति होने लगती है। इससे पाचक-रस भोजनमें अच्छी तरह मिल जाता है। इतना ही नहीं, पाकाशयमें पित्त, क्लोम-रस आदि मिलकर इसके गलनेमें पूरी-पूरी सहायता करते हैं।

सबसे पहले भोजन मुँहमें जाता है। जहाँ चबाने और लार मिलनेकी क्रिया होती है। इससे वह गीला होता है। लारकी श्वेत-सारको बदल देनेवाली क्रियाके अनुसार श्वेतसारमे शर्करा बनने लगती है। लार मिलने के बाद भोजन अन्न-मार्गसे पकाशयमें आता है। पाकाशयमें आनेपर आमाशयिक रस बननेके बाद, प्रोटीनोका विश्लेपण होता है। चर्बी पिघल जाती है, दूध जम जाता है। पाकाशयमें भोजन खूब मथा जाता है और उनकी प्रतिक्रिया अम्ल हो जाती है। इसके बाद यह क्षुद्रान्त्रमें जाता है। यहाँ पित्त, छोटी आँतसे निकला हुआ क्षुद्रांत्रीय रस और क्लोम-रस अपना प्रभाव डालते हैं। इससे उसका खट्टापन या अम्लत्व नष्ट हो जाता है और उसकी प्रतिक्रिया क्षारमय हो जाती है। अब सब पदार्थ पचने और यथोचित मार्गमें आनेके योग्य हो जाते हैं। यह क्रिया पकीकरणकी क्रिया कहलाती है।

यह पकीकरणकी क्रिया हो जानेके बाद भोजन रस के आवश्यक पदार्थ श्लैष्मिक-झिल्लीसे होकर रक्त और लासिकामें जाते है और शरीरमें मिल जाते हैं। यही क्रिया आत्मीकरण है। चर्बीका आत्मीकरण छोटी आँतके ग्राहकाकुरोकी कैशिकाओमेसे होता है। बाकी पदार्थ रक्तमें चले जाते हैं। जल और नमक, लसिका और रक्त दोनो प्रकारकी कैशिकाओंमें जाते हैं। प्रोटीन, शर्करा और चर्बीका आत्मीकरण छोटी आँतमें होता है। छोटी आँतसे बचा हुआ रस बडी आँतमें जाते-जाते गाढा हो जाता है, क्योंकि यहाँ पानीका अंश सोख लिया जाता है। जिस भोजनका आत्मीकरण नहीं होता, उससे विष्ठा बन जाता है।

मल—भोजनमें सभी पदार्थ पचने योग्य नही होते। कुछ-न-कुछ विना-पचे ही रह जाते हैं। वे मलके साथ निकलते हैं। मल या विष्ठामें—(१) पानी, (२) विना पचा भोजनका अंश, (३) जो पचने योग्य पदार्थ नहीं रहते, वे तथा (४) इण्डोल या स्कटोल नामक

पदार्थ, जो आँतके सड़नेके कारण पैदा होते हैं, (५) अन्न-मार्गकी श्लैष्मिक-झिल्लीकी सेलें और (६) पाचक रसोंका कुछ भाग रहता है।

—मलका रंग भोजनपर निर्भर करता है। शाकाहारियोंका मल पीलापन लिये। मांसाहारियोंका भूरा। रोगियोंका काला, सफेद, हरा आदि रंगका होता है।

श्वास-प्रश्वास संस्थानके कार्य—श्वास-प्रश्वासकी क्रिया फेफड़े द्वारा होती है। फेफड़ेके निर्माणके सम्बन्धमें पहले ही बताया जा चुका है। वायुका फेफड़ोंसे भीतर जाना और निकलना यही श्वास-प्रश्वासकी क्रिया है। जब हम साँस खींचते हैं, तो वायु भीतर जाती है। यह वायु नाकसे होकर भीतर जाती है। इसी वजहसे छाती फैलकर बड़ी हो जाती है, फिर जब वायु नाकके भीतरसे बाहर निकलती है, तो छाती पूर्व दशामें आ जाती है। साँस लेनेपर फुस्फुस या फेफड़े फैलते हैं और छोड़नेपर सिकुरते या छोटे हो जाते हैं। यदि क्रिया श्वास-प्रश्वास कहलाती है।

साँस खींचनेके समय वक्षकी समायी अधिक होती है, वक्षोदर-मध्यस्थ-पेशी सिकुड़ती हैं और उदरकी ओर दब जाती है। पसलियाँ तथा कई दूसरी पेशियाँ ऊपरकी ओर उठती है, इससे वक्षका भाग बढ़ता है। ज्यों-ज्यों वक्षकी समायी बढ़ती है, हवा फुस्सफुसोंमें घुसती है, वायु-मन्दिर पहलेसे बड़े हो जाते हैं।

श्वास-कर्म अर्थात् साँस लेने-छोड़नेसे दो कार्य होते हैं :—(क) रक्तमें आक्सिजन (अम्लजान) का मिलना। (ख) रक्तसे कार्बोनिक एसिड गैसका निकलना। इस तरह प्रत्येक श्वास-प्रश्वासमें रक्तसे कार्बोनिक एसिड गैस निकाली जाती है और आक्सिजन भरा जाता है। यह आक्सिजन (औषजन) जीवनके लिये एक परम आवश्यक चीज है। इसके बिना कोई प्राणी जीवित नहीं रह सकता। कार्बोनिक एसिड गैस जहरका काम करती है।

स्वस्थ मनुष्य १ मिनटमें प्रायः १८ बार साँस लेता-छोडता है। नन्हें बच्चोंमें यह संख्या ४४, पाँच वर्षकी आयुमें २५-२६ रहती है। साँस लेनेमें वक्ष-गह्वर पसलियोंसे मिली हुई पेशियाँ, पसलियाँ, फेफड़े—इन सभी यंत्रोंसे सहायता मिलती है। इसके साथ नाडी या स्नायुओंसे भी कम मदद नहीं मिलती है। कार्बोनिक एसिड गैस जमा होते ही स्नायु इसको निकाल देनेमें जोर लगाते हैं। ज्योंही यह गैस अधिक मात्रामें रक्तमें जमा होती है, त्योंही स्नायुसे ऐसा झटका आता है कि श्वास-प्रश्वासके सहायक यंत्र तेजीसे काम करने लगते हैं और श्वास-प्रश्वासकी क्रिया जोरसे होने लगती है यही क्रिया हमारे जीवनका आधार-स्वरूप है।

जो हवा भीतर जाती है निकलती है, उसके विषयमें जी जान लेना जहाँ जरूरी है। जो हवा भीतर जाती और निकलती है, उसे 'निश्वास-प्रश्वास-वायु' (tadal air) कहते हैं। उतनी हवा जो फेफड़ेमें गहरे निश्वास द्वारा खिंची जा सकती है, पूरक वायु (complemental air) कहलाती है ; जोरसे साँस छोड देने पर जितनी हवा निकल जाती है, उसे रेचक वायु (suppemental air) कहते है। श्वास-रोध (asphyxia) एक वह अवस्था है, जिसमें श्वास-प्रश्वासकी क्रिया रुक जाती है। साँस लेनेमें जो कष्ट होता है, उसे 'कष्टकर श्वास' (dyspnœa) कहते हैं। बैठनेसे जो श्वास-कष्ट घट जाता है, उस अवस्थाको अर्थोपनिना (orthopnœa) हैं।

फेफड़ेमें रक्त-शुद्धि—हमारे शरीरमें सेलोंके टूटने और कितनी ही दूसरी रासायनिक क्रियाओंके कारण कार्बोनिक एसिड गैस बना करती है। इससे रक्त काला पड़ जाता है। यह कालिमा लिये रक्त शरीरके सभी भागोंमें इकट्ठा होकर हृदयके दाहिने ग्राहक-कोष्ठमें दो महाशिराओं द्वारा पहुँचता है। इसके बाद हृदयसे फुस्फुसीया धमनी द्वारा यह रक्त दोनों फेफड़ोंमें जाता है। यहाँ प्रश्वासमें इससे कार्बोनिक एसिड गैस

निकलकर इसमें अम्लजान (oxygen) मिलता है और यह रक्त शुद्ध होता है।

रक्तवाहक-संस्थानकी क्रिया—रक्तका कुछ अंश तरल और कुछ जमा होता है। इसमें लाल और सफेद कण रहते हैं। यह तरल पदार्थ या plasma शरीरके सभी भागोंकी सेलोंमें जाता है तथा इससे उन सेलोंको अम्लजान, लवण तथा खाद्य-पदार्थ प्राप्त होते हैं तथा उन सेलोंसे उनका क्षय हुआ अंश ले लेता है। जब रक्त जमता है, तो उसका घासके रंगवाला तरल अंश जो रह जाता है, वह 'रक्त-रस' (serum) कहलाता है। यह तरल पदार्थ लगातार रक्त-वाहिनियोंसे चुआ करता है और यह चुआ हुआ पदार्थ लसिका (lymph) कहलाता है। रक्तका तरल अंश 'रक्त-वारि' (plasma) है और वह पदार्थ, जो रक्तके जमनेके बाद रह जाता है—'रक्त-रस' है। रक्त-वारिकी अपेक्षा रक्त-रसमें लवणका भाग अधिक है। अम्लजानसे शुद्ध हुआ रक्त धमनियों और महाधमनी द्वारा शरीरके सब भागोमें उदर से जाता है। ये धमनियाँ छोटी होती-होती आर्टियोल बनाती है और फिर और भी छोटी और पतली कैशिकाओंका रूप धारणकर एक दीवारतककी सूक्ष्म सेलोंमें यह शुद्ध रक्त खाद्य-रूपमें पहुँचा देती हैं। सेलें भी क्षय हुआ पदार्थ रक्तको दे देती हैं। इस तरह रक्तके द्वारा आदान-प्रदान होकर मानव-जीवनकी रक्षा होती है।

रक्तमें दो कड़े पदार्थ भी हैं। ये दो अणु हैं—रक्त-कण और श्वेत-कण। रक्तके प्रत्येक सहस्रांश मीटरमें रक्त-कण लगभग ५०००००० होंगे और श्वेत-कण ६००० हैं।

रक्त-कण—इनसे रक्तका लाल रंग बनता है। इनमें कण-रंजक (hæmoglobin) नामक एक तत्व रहता है, जो अम्लजानसे तुरन्त

मिल जाता है। इन रक्त-कणोंका हमेशा क्षय होता है और इनसे ही पित्त, मल, पेशाब आदिमें रंग आता है।

श्वेत-कण—आकारमें टेढे-मेढे होते हैं। ये इधर-उधर घूमते हैं तथा इन मृत तन्तुओंको नष्ट करते हैं। ये बाहरी कीटाणुओंको रोककर ग्रास कर जाते हैं।

यहाँ प्रदाहके सम्बन्धमें कुछ बता देना आवश्यक है।

प्रदाह—लाली, गर्मी, सूजन और दर्द—इन चारोंका सम्मिलित नाम प्रदाह है। प्रदाह करनेसे ही समझ लेना चाहिये कि उस स्थानपर लाली है, सूजन है, गर्मी है और दर्द है। प्रदाह क्यों होता है? अथवा यदि कोई बाहरी पदार्थ शरीरमें प्रवेश करता है, तो क्या हो जाता है? ज्योंही शरीरके किसी अंशमें बाहरी पदार्थ प्रवेश करता है, त्योंही वहाँकी रक्तवाहिनियाँ फैल जाती हैं, इससे वहाँ खून इकट्ठा हो जाता है अर्थात् वहाँ जितना होना चाहिये, उससे अधिक खून आ जाता है और वहाँ परागपुष्ट कीट (leucocytes) की भी संख्या बढ जाती है। अब इस स्थानको तर रखनेके लिये केशिकाकी दीवारोंमें बहुत अधिक लसीका चूती है और तुरन्त ही एक दूसरी तरहके अणु-जीवनाशक (phagocytes) उन्हें खा जानेके लिये दौड पडते हैं। यदि वह बाहरी पदार्थ परन्तु हटा दिया जा सका तो रक्त-सञ्चय धीरे-धीरे कम हो जाता है; पर यदि दोनोंमें झगडा देरतक रह गया, तो इतने अणु-जीव-नाशक (कीटाणु— phagocytes) वहाँ आ पहुँचते हैं कि वह स्थान सफेद दिखाई देता है और पीब पैदा होती है। यह पीब मृत ल्यूकोसाइट हैं जो लसिकामें तैयार और इकट्ठे रहते हैं। अब शायद यह समझनेमें कठिनता होगी कि वह स्थान क्यों लाल दिखाई देता है (क्योंकि वहाँ बहुत रक्त भर जाता है)। क्यों फूलता है (उसी कारणसे)? क्यों दर्द करता है? (क्योंकि स्नायुओंपर रक्तका अधिक दबाव पडता है)।

रक्तके दौरानकी क्रियापर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि—

(क) हृदय—एक प्रधान पम्प है, जिसमें शरीरके सभी भागोंसे रक्त या तरल आता है और जहाँसे शरीरके सभी अंशोंमें यह तरल भेजा जाता है।

(ख) धमनियों द्वारा—शुद्ध रक्त हृदयसे शरीरके सब भागोंमें जाता है। धमनियाँ छोटीसे और भी छोटी होती जाती हैं और अन्तमें—

(ग) कैशिकाओंमें—परिणत होती है, जिनसे लसिका निकलकर शरीर के सभी सेलोंको तर करती, खाद्य देतीं और काम योग्य बनाती रहती हैं।

(घ) शिराएँ—इनसे समस्त क्षय पदार्थ रक्तमें मिलकर हृदयके दाहिने भागमें आते हैं और फिर फेफड़ेमें जाकर आक्सिजन द्वारा रक्त शुद्ध हो जाता है।

मूत्रवाहक-संस्थान—खाद्य-पदार्थमें जो भाग सोखा जाकर आँतोंसे मूत्रवाही-शिरा (portal vein) में चला जाता है, उसमें प्रोटीन और कार्वो-हाइड्रेट बहुत रहता है। खाया हुआ खाद्योज बदलकर पाचन द्वारा ऐमिनी अम्ल बन जाता है; परन्तु ऐल्बुमेन और ग्लोब्यूलि (अण्डलालका रक्त-कणिकाकी तरह उपादान) के रूपमें अन्त्राशयके रसोंसे चूसा जाता है। ऐल्बुमेन और ग्लोबिन रक्तमें और फिर यकृतमें जाता है। यकृतमें जाकर यह ऐमिनी एसिड यूरिया बन जाता है और रक्तमें चला जाता है। इसके अलावा, सभी पेशियों और जीव-बीज (protoplasm) ऐमोनिया त्यागते हैं, जो यकृतमें मूत्राम्लमें मिलता है। यह यूरिया ही है, जो रक्तसे निकलकर मूत्राम्ल बनता है; पर मूत्र

केवल यूरिया ही नहीं है। मूत्रमें बहुत-सा मैल, मूत्राम्ल, सोडियम क्लोराइड आदि कई पदार्थ भी रहते हैं।

मसानेसे पेशावका कोई उपादान नहीं निकलता। यह तो केवल शरीरके हानिकर पदार्थ रक्तसे अलग कर लेता है। इसीलिये मसानेमें बहुत सी रक्त वाहिनियाँ और नालियाँ रहती हैं। मसानेके कार्यपर ध्यान देनेसे ही आश्चर्यमें पड जाना पडता है।

अवस्था-भेदसे पेशाबके परिमाणमें भी अन्तर पडता है। साथ ही पुरुष और स्त्री-जाति, तापमान, आबहवा या मौसम, भोजन और पान-सामग्रियाँ, वस्त्र, पोशाक, व्यायाम आदिके कारण भी अन्तर आ जाता है, परन्तु तो भी अनदाजन ५० औंस पेशाब नित्य होता है। पेशाबकी परीक्षा करनेपर हमलोगोंके खाद्य, रहन-सहन आदि बहुतसे विषयोंका पता लगता है।

चर्म—चर्ममें दो तरहकी गाँठें होती हैं। इनमेंसे एकमें पसीना होता है और दूसरेसे वसा या चर्बी निकलती है, जो हमारी त्वचाको चिकनी नरम और कोमल रखती है। हमारे शरीरमें जो लोम-कूप हैं, वे स्वेद-प्रणालियोंके मुँह हैं। पसीना एक जलीय खारा और नमकीन तरल पदार्थ है। वे स्थान जहाँ बहुत दबाव या घर्षण होता है, कडे पड जाते हैं और ऐसे स्थान, जो उत्तेजना-प्रवण हैं, उनमें खास तरहके स्नायु रहते हैं, जैसे—तलहत्थी और अंगुलियोंमें, वहाँ पसीना कम होता है।

नाड़ी या स्नायु-संस्थान—नाडी-संस्थानका पूरा हाल चीर-फाडके बिना पूरा नहीं मालूम हो सकता, तथापि यहाँ संक्षेपमें बताया जाता है।

मस्तिष्क या वृहत् मस्तिष्कसे तीन प्रधान कार्य होते हैं :—

वृहत् मस्तिष्कि—ज्ञान—चेतना और स्मृति।

भाव—भावोंका आदान-प्रदान।

इच्छा—ऐच्छिक पेशियोंकी गति, कार्यमें पेशियोंका सहयोग, पेशियोंके कार्यका प्रतिषेध या रोक और ग्रन्थियोंके कार्य होते हैं।

मतलव यह कि हमलोगोंमें तवतक ही ज्ञान रहता है, जवतक मस्तिष्क जीवित है और यह चेतना मस्तिष्कमें रक्तकी उपस्थितिपर निर्भर करती है। स्मरणके सभी कार्य (ज्ञान, अनुभव, भाव इत्यादि) मस्तिष्ककी क्रियाके ही परिणाम हैं। भाव—केवल ग्रहण किया हुआ पदार्थ है, यह ज्ञान-नाड़ियोंका कार्य है। उदाहरणके लिये, यदि हम चूना खा जायें, तो दर्द होता है ; परन्तु मस्तिष्कमें भी वेचैनी होती है। सभी पेशियोंकी गतियोंपर मस्तिष्कका ही शासन रहता है। हम अपने हाथको हिलने या रुक जानेकी आज्ञा दे सकते हैं अर्थात् उसकी गतिको नियमित रखनेकी शक्ति रखते हैं। ग्रन्थियोंकी. क्रिया भी इसी तरह मस्तिष्ककी ही क्रिया है, यहाँतक कि वढ़ियाँ भोजन देखनेपर हमारे मुँहमें पानी भर आता है अर्थात् मुँहकी लाला-ग्रन्थियाँ लार वहाने लगती हैं। इस तरहकी गतिको "परावर्त्तित क्रिया" (reflex action) कहते हैं। इसका अर्थ यह है कि ऐसा भी भाव-प्रवण पटल है, जो मस्तिष्कसे अलग है जिसमें जव उत्तेजना होती है, तो वह भाव मस्तिष्कमें भेज देता है कि मस्तिष्क फिर पेशियों अथवा ग्रन्थियोंको जैसा आदेश देता है, वैसा ही ये कार्य करती हैं। इसकी वैसी ही हालत है, जैसे किसी परदेशमें रहनेवाले लड़केकी तकलीफोंका तार पाकर पिता तुरन्त

रुपये भेज देता है। तब यह परावर्त्तित क्रिया मांस-पेशियों अथवा ग्रन्थियोंकी वह क्रिया है, जो किसी सहानुभूतिक पटलकी उत्तेजनाके कारण मस्तिष्कके आदेशके अनुसार होती है।

लघुमस्तिष्क—यह रक्तमें पेशियोकी गतिको सहयोग कर समताकी रक्षा करता है।

सुषुम्नासे निम्नलिखित क्रियाएँ होती है :—

(क) हृदयकी धड़कन।

(ख) रक्तवाहिनियोंमें खिंचाव बनाये रखता है या दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता है कि यह रक्त वाहिनियाँ तथा मांस-पेशियोंकी अवस्थापर शासन करता है।

(ग) श्वास-प्रश्वासकी क्रिया।

(घ) निगलना, बोलना, लाल-स्राव, प्रसव।

मेरुदंड—इसकी दो क्रियाएँ होती हैं—(क) कुछ कार्योंकी गौण-क्रियाका यह केन्द्र है और (ख) यह मस्तिष्कमें भाव पहुँचाता और ले आता है।

मेरुदण्डके केन्द्रसे निम्नलिखित शरीर-शासन-सम्बन्धी कार्य होते है :—

(क) पेशियोंकी शक्तिमें बल भरनेका केन्द्र।

(ख) मलद्वारकी पेशीकी क्रिया ठीक रखनेका केन्द्र, साथ ही मूत्राशय ग्रीवा तथा मलद्वार-ग्रीवाकी क्रियाकी रक्षा।

(ग) जरायुमें संकोचन पैदा करनेवाला केन्द्र।

(घ) लिंगमें उत्तेजना पैदा करनेवाला केन्द्र।

मेरुदंडकी अन्य क्रियाओंमें एक क्रिया यह भी है कि शरीरके किसी स्थान अथवा यंत्रसे जो भाव या अवस्था मालूम हो, उसकी मस्तिष्कको खवर देना। यह खवर सुषुम्ना, सेतु और लघुमस्तिष्क द्वारा दी जाती है ; इसके अलावा, पेशियों और ग्रंथियोंकी क्रियाके मस्तिष्क-खात; लघुमस्तिष्क, सेतु, सुषुम्ना, मेरुदण्ड, सुषुम्ना नाड़ियाँ आदि केन्द्र हैं, जिनसे ग्रन्थियों और पेशियोंका सम्बन्ध है।

सहानुभूतिक नाड़ियोंकी ४ प्रधान क्रियाएँ हैं :—

(क) हृदयकी गतिको तेज करना।

(ख) रक्त-वाहिनियोंके भीतरका व्यास ठीक रखना।

(ग) पाकाशय, आमाशय, जरायु आदिकी लहरकी तरहकी क्रियाको ठीक रखना।

(घ) औदरिक झिल्लियोंकी रस-स्रावी क्रियाओंको नियमित रखना।

इस तरह, यद्यपि यह देखनेमें आता है कि नाड़ी-संस्थानके अंग अलग-अलग हैं ; पर वास्तवमें वे क्रिया-रूपमें स्वतंत्र रहनेपर भी एक दूसरेसे मिले हुए हैं।

ज्ञानेन्द्रिय—हमलोग जो कुछ देखते हैं, वह वास्तवमें मस्तिष्कसे देखते हैं, चित्र-पत्र तो केवल देखे हुए पदार्थकी मूर्त्ति ग्रहण करता है। बाहरी स्पन्दन, कर्ण-पटहपर स्पन्दन पैदा करता है, जो अन्तमें कर्ण-नाड़ीमें उत्तेजना पैदाकर मस्तिष्क को खवर भेजता है। इसी तरह गन्धसे घ्राण-नाड़ियोंमें उत्तेजना होती है ; परन्तु गन्धकी प्रकृतिका निर्णय मस्तिष्क ही करता है। इसीलिये यह कहा जाता है कि हम अपने मनसे देखते हैं, आँखसे नहीं ; कानसे नहीं सुनते, बल्कि मस्तिष्कके भीतरी यंत्रोंसे सुनते हैं। इसी तरह सारी क्रियाएँ होती है।

जनन-संस्थान—पुरुषोंमें मुष्कसे एक तरहका गाढा तरल पदार्थ निकलता है, शुक्रनाली द्वारा आता है और इसमें बहुतसे कीडे रहते हैं, ये बातें पहले बतायी जा चुकी हैं। वीर्य हमेशा तैयार नहीं रहता, ये सगम क्रियाके फलस्वरूप बन जाता है और मूत्रनालीकी पेशियाँ इस तेजीसे इसे फेकती हे कि इसका एक बून्द भी नष्ट नहीं होता।

स्त्रियोके डिम्बके सम्बन्धमें पहले बताया जा चुका है।

पुरुष शुक्र-कीट और स्त्री डिम्बके सम्मिलनसे ही गर्भाधान होता है।

गर्भ-विज्ञान

पुरुष-शुक्र-कीट और स्त्री-डिम्ब (ovum) के सयोगसे यह गर्भाधान *डिम्ब प्रणाली (fallopion tubes) में हुआ करता है, गर्भाशयमें भी* होता है। शुकाणुका माथा और डिम्बकी मीगी आपससे मिल जाती है और शुक्र-कीटके सरको छोडकर बाकी भाग डिम्बके शरीरमें चिपक जाता है, इस तरह दोनोंके मिलनेपर एक सेल तैयार होती है। यही गर्भ सेल या भ्रूण-कोष (zygote) है और इस भ्रूण सेलोमें जो परिवर्त्तन होता है, उसे प्रभेदन (segmentation) कहते हैं।

यह भ्रूण-कोष बहुत तेजीसे डिम्ब-प्रणालीकी राहसे गर्भाशयमें जाकर वहाँकी एक श्लैष्मिक झिल्लीसे चिपक जाता है। यहाँ इसकी दूसरी क्रिया होती है अर्थात् इसका फटना आरम्भ होता है। यह फटकर दो, फिर दोसे चार, चारसे आठ, इसी तरह लगातार फटता जाता है और फटते फटते एक सेलोंका समूह बन जाता है। इसे 'कलल' (morula) कहते हैं। कललके भीतरी भागकी सेलें कुछ छोटी होती हैं, बाहरकी बडी। बाहरकी सेलें भीतरकी सेलोंका घेरकर एक वेस्ट बनाती हैं। इस कललमें एक खोखला स्थान भी बन जाता है, जिसमें एक प्रकारका तरल पदार्थ इकट्ठा होने लगता है। इसके दबावसे बाहरकी सेलें

भीतरकी सेलोंसे अलग हो जाती है। गर्भकी यह अवस्था गर्भ-बुदबुद (blastocyst) कहलाती है। इसी बुदबुदके भीतर जो सेलका समूह

चित्र न० ३७

प्रसवके पहले एक गर्भवतीके गर्भाशयका अर्ध-चन्द्राकार काट। ऊपर दाहिनी ओर आँतें तथा गर्भाशय इसलिये दिखाया गया है कि गर्भमें भ्रूण किस प्रकार रहता है।

रहता है, उससे गर्भका माथा और गर्भको ढँकनेवाली झिल्लीका कुछ काम बनता है ।

गर्भाशयमें इस समय परिवर्त्तन आरम्भ हो जाता है । गर्भ धारणके बाद गर्भाशयकी श्लैष्मिक-झिल्लियाँ मोटी होने लगती हैं और उसकी वे ग्रन्थियाँ, जो नलके आकारकी ग्रन्थियाँ हैं, वे सब अधिक लम्बी हो जाती हैं । श्लैष्मिक-झिल्ली गर्भस्थ भ्रूणको चारों ओरसे घेर लेती हैं अर्थात् भ्रूणके चारों ओर श्लैष्मिक-झिल्लीका एक आवरण बन जाता है । इस अवस्थामें गर्भाशयकी झिल्ली गर्भ-कला (decidua) कहलाती है । भ्रूण धीरे-धीरे बड़ा होता है । इस अवस्थामें उसपर सेलों और श्लैष्मिक-तन्तुओंके दो आवरण चढ़ जाते हैं । वह आवरण जो बाहर रहता है, वह गर्भ-कलासे मिला रहता है । यह 'भ्रूणका बाह्यावरण' (chorion) कहलाता है । दूसरा आवरण भीतरकी ओर रहता है । यह भ्रूणका 'अन्तरावरण' (mesoblast) कहलाता है ।

बाहरी आवरण धीरे-धीरे मोटा होता जाता है, इस समय उस बाहरी आवरणकी पीठपर बहुतसे छोटे-छोटे केशोंकी तरह अकुर निकलते हैं । इनसे भ्रूणका पोषण होता है । इस अवस्थामें भ्रूण गर्भाशयकी दीवारसे चिपका रहता है । भ्रूणके आस-पासके बाह्यावरणके अकुर कुछ घने रहते हैं । बाकी स्थानोंके छोटे और परिमाणमें भी कम होते हैं । दो महीने बाद नये अङ्कुर तो बनते नही, जो बन गये थे, वे भी धीरे-धीरे गायब हो जाते हैं । इन स्थानपर फिर छोटे छोटे गड्ढे या आशय बन जाते हैं । ये आशय रक्तसे भरे रहते हैं और इन्ही गड्ढोंमें उस बाहरी आवरणके रेशे डूबे रहते हैं ।

जब भ्रूण चार या पाँच सप्ताहका हो जाता है, तो भ्रूण और उसके भीतरी आवरणके बीचमें एक प्रकारका तरल पदार्थ इकट्ठा होने लगता है । इसे गर्भोदक कहते हैं । इस गर्भोदकका दबाव इतना अधिक

होता है कि वाह्यावरण और अन्तावरण एक हो जाते हैं। यह गर्भोदक ६-७ महीनेतक वरावर वढ़ता ही जाता है और नवाँ महीना लगते-लगते
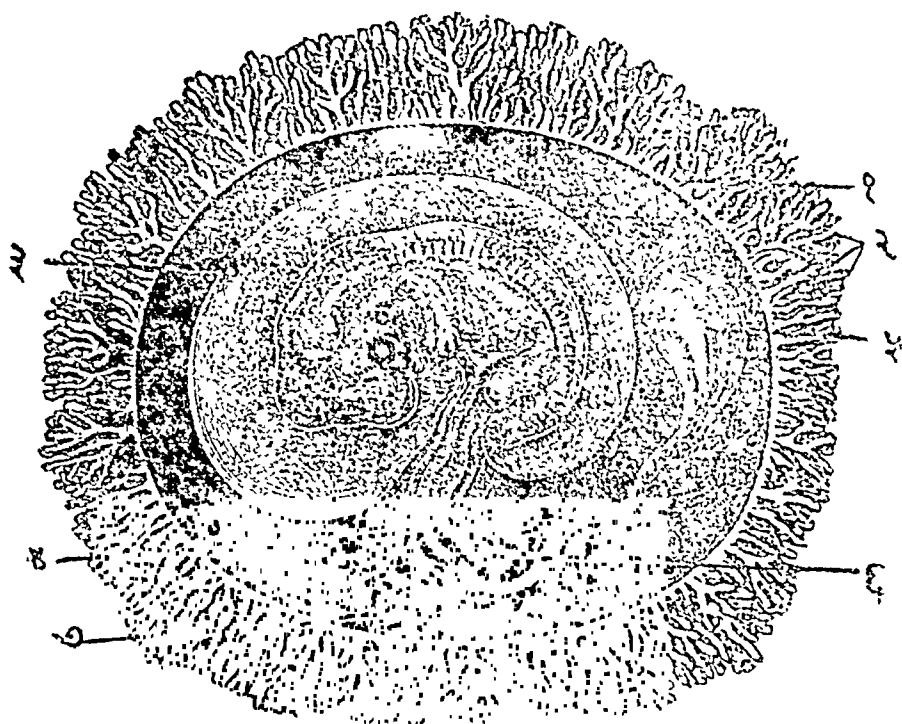
छः सप्ताहका गर्भ

चित्र न० ३५

१। भ्रूण वाह्यावरण (chorion).
२। अंकुर (fibre).
३। भ्रूण अन्तरावरण (mesoblast).
४। नाल (placenta).
५। थैली इसमें पोषक पदार्थ रहते हैं।
६। नाभिपुट।
७। कमल बननेका स्थान ।

लगभग सेर-सवा-सेर गर्भोदक (liquor amni) इकट्ठा हो जाता है। यह गर्भोदक गर्भ-रक्षाका एक प्रधान साधन है।

इस समय गर्भ कलामें अन्तर पड़ता है। यह दो प्रकारकी हो जाती है। पहले उसका ऊपरी अंश निचले अंशसे अलग रहता है। इसीलिये गर्भाशयमें गर्भ तथा उसकी दीवारमें अन्तर रहता है; परन्तु जब भ्रूण बड़ा हो जाता है, तब ऊपरवाली गर्भ कला गर्भ-कलाके पास चली जाती है और जब भ्रूण तीन मासका हो जाता है, तब दोनो ही आपसमें मिल जाती हैं। गर्भोदकके दबावसे गर्भ-कला पतली पड़ जाती है। गर्भाशयका मुँह श्लेष्मासे बन्द हो जाता है और कोई भी बाहरी पदार्थ उसमें प्रवेश नहीं कर पाता।

नाल—नाल एक वह चीज है, जिसके सहारे भ्रूण गर्भाशयकी दीवारसे लटका रहता है। इसे नाभि-नाल (umbilical cord) कहते हैं। नाल एक ओर भ्रूणकी नाभिसे मिला रहता है तथा दूसरी ओर कमलसे। वास्तवमें नाल कई नालियाँ पास-पास रहनेसे बन जाता है। इनमें प्रधान चीजें दो होती हैं:—दो धमनियाँ और एक शिरा। इनके अलावा और भी कुछ चीजें होती है। ये सभी एक प्रकारके लसदार पदार्थसे आपससे सम्मिलित रहतो हैं और इनपर एक अन्तरावरण चढ़ा रहता है। इसकी लम्बाई भ्रूणकी लम्बाईकी तरह ही होती है। रक्त-वाहिनियाँ कमलमे जाकर कई शाखाओंमें विभक्त हो जाती हैं।

कमल (placenta)—जिस स्थानपर नालके सहारे भ्रूण गर्भाशयसे लटका रहता है, वह कमल कहलाता है। यह कमल गर्भ-कलासे चिपका रहता है। कमलमें ऐसे बहुतसे स्थान होते हैं, जो रक्तसे भरे रहते हैं। इनमें बाह्यावरणके अंकुर डूबे रहते हैं। उन अंकुरोंमें छोटी-छोटी रक्त वाहिनियाँ होती हैं। गर्भाशयमें यह कमल ऊपरकी ओर या उसके आगेवाली अथवा पीछेकी दीवारसे बनता है। कमल ही वह चीज है, जिसके द्वारा भ्रूण माताके शरीरसे मिला रहता है। इसके द्वारा ही भ्रूणकी श्वास-प्रश्वास क्रिया होती है अर्थात् कमल

भ्रूणका श्वास-प्रश्वास यंत्र है और यही भ्रूणका रक्त-शोधनका भी काम करता है ; क्योंकि भ्रूण इसीके द्वारा अपने शरीरके मलिन पदार्थोंको त्यागता है।

कमल

चित्र न० ३६

१। परिस्रवका भ्रूण-तल (back of placenta).
२। भ्रूण-अन्तरावरण (mesoblast).
३। रक्तवाहिनियाँ (blood vessels).
४। नाल (umbilical cord).

गर्भाशयमें भ्रूणका पोषण—चार सप्ताहका भ्रूण होनेतक उसके बाह्यावरणमें रक्त-वाहिनियाँ नहीं होतीं। इस समयतक भ्रूण गर्भाशयकी श्लैष्मिक-झिल्ली और लसिकाओंसे ही आवश्यक पदार्थ चूस-चूसकर अपना

पोषण करता है। चौथे सप्ताहके बाद गर्भ कलामें कई रक्तसे बने गड्डे बनते हैं और साथ ही बाह्यावरणमें कितनी ही रक्त-वाहिनी नालियाँ भी बनने लगती हैं। कमल तीसरे महीनेमें अच्छी तरह बन जाता है और नालकी रक्त-वाहिनियाँ कमलके स्थानसे ही पौष्टिक पदार्थ ग्रहण करती हैं। उन गड्डहोंमें भरे माताके रक्त और अंकुरोंकी रक्त वाहिनियोंके बीचमें रक्त वाहिनियोंकी ही दीवार और उनपर बाह्यावरण रहता है। यह इतनी पतली रहती है कि आचूषणका कार्य बड़े मजेमें होता है। गर्भाशयमें जब तक बच्चा रहता है, तबतक स्वयं साँस नहीं लेता, माताके द्वारा ही यह क्रिया हो जाती है।

गर्भ-वृद्धि—गर्भकी वृद्धि बहुत धीरे-धीरे होती है। पहले मासमें १ इञ्च रहता है, दूसरेमें १½, तीसरेमें ३ और इसी तरह बढ़ता-बढ़ता दसवें महीनेतक प्रायः १० इञ्च लम्बा और वजनमें भी अन्दाज आधा सेर हो जाता है।

गर्भका अंग-निर्माण—एक मासका गर्भ चींटीकी तरह रहता है। एक सिरा मोटा, दूसरा पतला। मुँह स्थानपर एक दरार और ओंठकी जगहपर तिलकी तरह दाग रहता है। दूसरोमें नाक, ओंठ और भौंहें दिखाई देती है। जननेन्द्रिय और मलद्वार का आकार भी बनता है। फेफड़े, प्लीहा और छोटा मसाना आँतोंका, नालके भीतरवाला भाग। नालमें ऐंठन आदि रहती हैं। तीसरा महीना होनेपर अंगुलियाँ अलग दिखाई देती, पलक और ओंठ जुटे रहते हैं। हृदयका भी कुछ अंश बन जाता है। इस तरह बढ़ते-बढ़ते सातवें महीनेमें गर्भका बहुत कुछ अंश बन जाता है। त्वचाके नीचे चर्बी आ जाती है। अंड नीचे उतर आते हैं। दसवें महीनेमें शरीर पूरा-पूरा बन जाता है। हाथकी अंगुलियोंके नख अंगुलीके आगे निकले रहते हैं। केश भी लगभग १ इञ्च लम्बे रहते हैं।
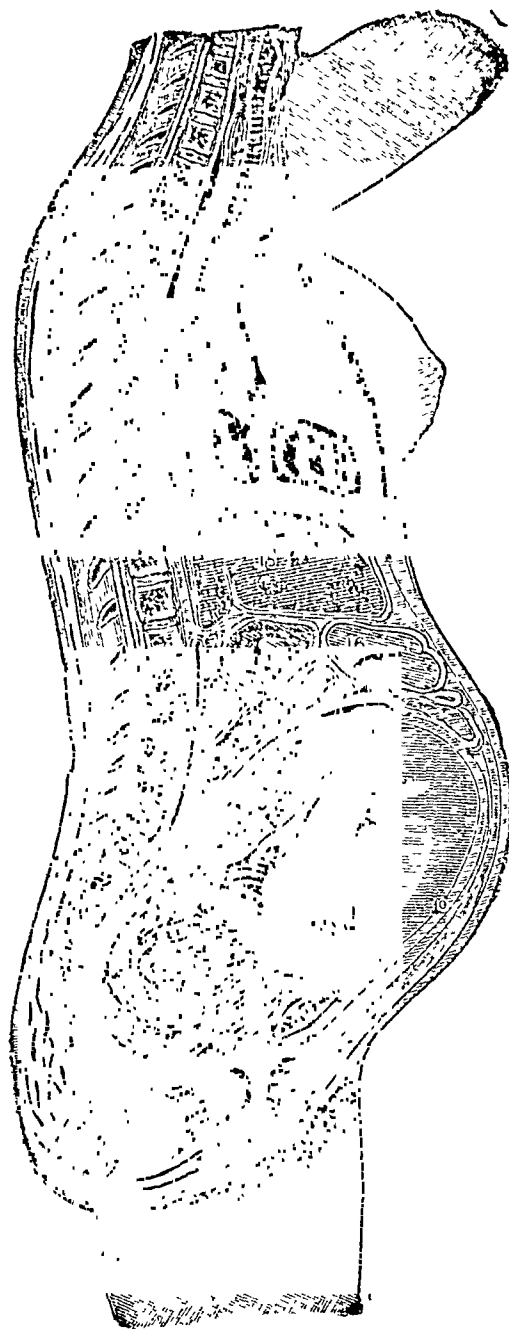
चित्र न० ३७

गर्भवती स्त्रीकी लम्बाईके रख काटा गर्भ। इसमें जरायु तथा भ्रूणकी स्थिति तथा अन्य शारीरिक यंत्रसे उसका सम्बन्ध बताया गया है।

भ्रूणके बढ़नेके साथ-ही-साथ गर्भाशय भी बड़ा हो जाता है। दसवें महीनेमें उसकी लम्बाई १० इञ्च हो जाती है, पर भ्रूणकी २० इञ्च
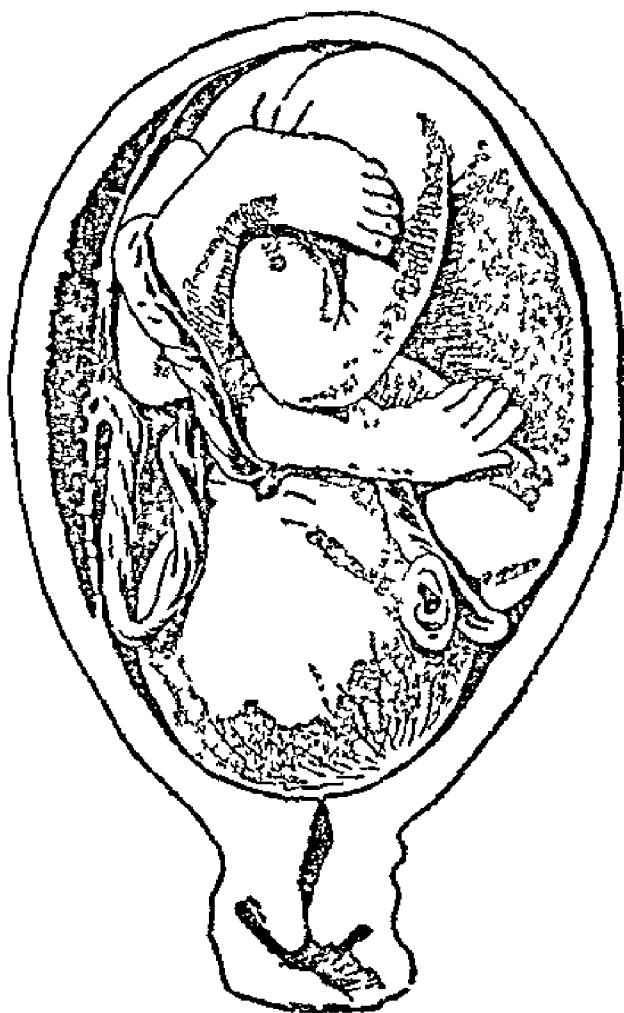
चित्र नं० ३८

पूरे दिनोंके भ्रूणकी स्थिति

रहती है। यह कैसे होता है? कारण यह है कि भ्रूण गर्भाशयमें बहुत सिकुड़ा हुआ रहता है। उसके हाथ-पैर भी फैले नहीं रहते।

चित्र नं० ३९
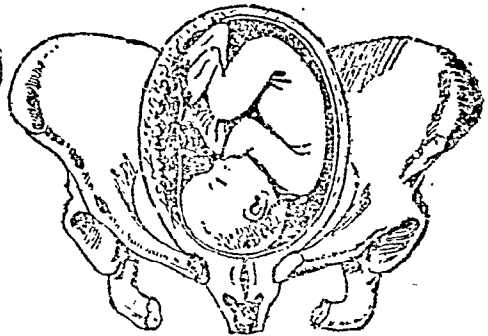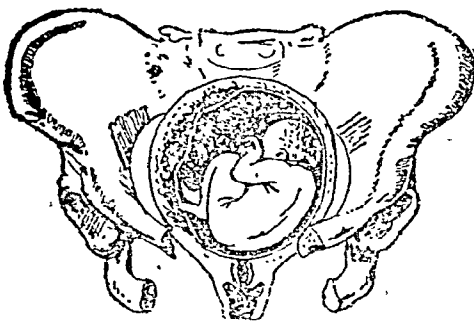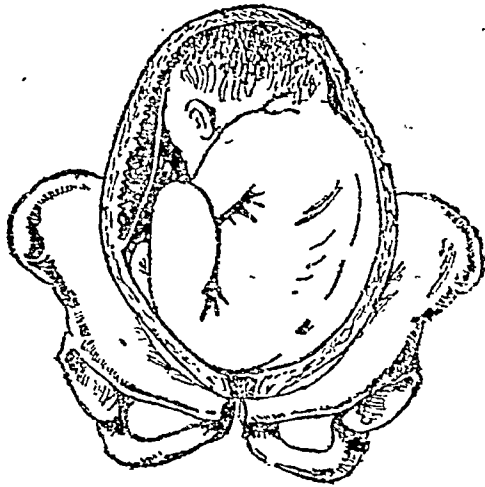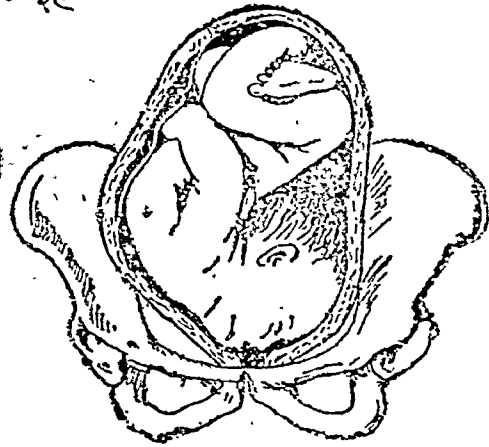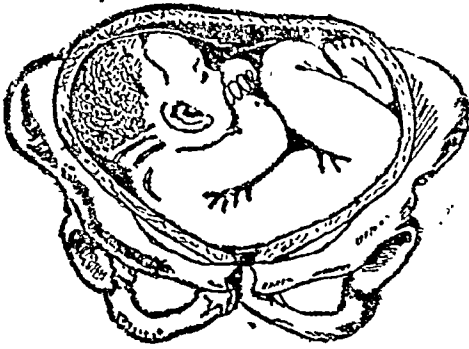
भ्रूणकी विभिन्न स्थितियाँ

माथा और पीठ छातीपर झुकी रहती है। पीठकी रीढ भी सामनेकी ओर मुडी रहती है। दोनों जाघें, उदर और टागें जाघोंपर मुडकर दबी रहती हैं, मुट्ठियाँ बन्द रहती हैं। इसीलिये वह अडेकी तरह दिखाई देता है।

गर्भ-धारणके बाद कई महीनोंतक जब भ्रूण बहुत छोटा रहता है, उस समय उसका माथा ऊपरकी ओर रहता है और धड नीचेकी ओर; पर पिछले महीनोंमें माथा नीचेकी तरफ हो जाता है और नितम्ब ऊपरकी तरफ रहता है।

अधिकाश भ्रूण इसी अवस्थामें रहते हैं। इसीलिये प्रसवके समय योनिसे पहले माथा निकलता है, पीछे धड निकलता है। पर जब भ्रूण उलटा रहता है, तब पहले चूतड और पीछे माथा निकलता है। कभी-कभी कन्धेके बल भी सन्तान जन्म ग्रहण करती है।

प्रसव—माताके शरीरसे भ्रूणका बाहर निकलना प्रसव कहलाता है। इस समय प्रसूताको कुछ-न कुछ कष्ट अवश्य ही होता है; परन्तु जो स्त्रियाँ अपने दिन आलस्यमें बिताती हैं और परिश्रम नहीं करती अथवा जो बहुत कमजोर होती हैं या जिनके बस्ति गह्वरकी अस्थियाँ किसी रोगके कारण मुडी या टेढी-मेढी रहती हैं, उन्हें विशेष कष्ट होता है। जो नित्य शारीरिक परिश्रम किया करती हैं और जिनका स्वभाव शान्त है, उन्हें कम तकलीफ होती है।

प्रसव-क्रिया—गर्भाशयका मास सिकुडने-फैलनेके कारण प्रसव-कालमें दर्द होता है; परन्तु गर्भाशयका मास इस समय बिलकुल ही सिकुड नहीं जाता। उसमें रह-रहकर लहर-सी उठती है। यह दर्द सकोचनके कारण होता है। सकोचन होनेके कारण गर्भाशयकी भीतरकी समायी घटने लगती है। अतएव, उसके भीतरकी चीज बाहर निकलनेकी यह क्रिया होती है। गर्भाशयकी दीवारपर इस तरह दबाव पडनेके कारण वह भीतरी चीज बाहरकी ओर ठेलती है। गर्भाशयके भीतर

बच्चेका शरीर और गर्भोदक रहता है। अतः मांसके संकोचनके कारण जब गर्भाशयकी समायी घटने लगती है, तो उसके भीतरकी चीजें बाहर निकलने लगती हैं। इस समय गर्भोदकसे पूर्ण एक झिल्लीकी थैली गर्भाशयके मुँहपर अड़ जाती है। दवावके कारण गर्भाशयके मुँहके पासका चमड़ा फैल जाता है और मुँह चौड़ा हो जाता है। यह इतना चौड़ा हो जाता है कि बच्चेका मुँह बाहर निकल आये। इसी तरह समूचा शरीर बाहर निकलता है। प्रसवके समय गर्भोदककी थैली फट जाती है। थैली फटनेके कारण गर्भोदक वहकर योनिसे बाहर निकलने लगता है। इससे योनि-मार्गमें चिकनाहट पैदा हो जाती है और बच्चा आसानीसे निकल आता है।

इस समय नाल बच्चेकी नाभीसे लगा रहता है। इस नाल द्वारा ही वह गर्भाशयमें जुड़ा रहता है; नाल अन्दाजन १० इञ्च लम्बा रहता है। इसमें धमनियोंका स्पन्दन मालूम होता है। यह स्पन्दन प्रसव होनेके थोड़ी ही देर वाद वन्द हो जाता है और बच्चा योनिसे निकलते ही जोरसे चिल्ला उठता है; क्योंकि वह श्वास लेता है और वायु पहले-पहल उसके फेफड़ेमें प्रवेश करती है। यदि बच्चा न रोये, तो उसके मरनेका भय रहता है।

नाल काटना—नालका स्पन्दन वन्द होनेपर उसे काटना चाहिये अर्थात् उसमें दो गाँठें इस तरह लगानी चाहियें कि गांठ बच्चेकी नाभीसे दो इञ्चकी दूरीपर और दूसरी माताके प्रसव-द्वारके पास रहे। गांठ देनेके बाद दोनों वन्धनोंके बीचमें; पर पहले वन्धनके पास काट देना चाहिये। डोरा तथा छुरीको गर्म पानीमें कुछ देरतक खौला लेने बाद काटना चाहिये।

परिस्रव—यद्यपि इस समय बच्चा माताके शरीरसे अलग हो जाता है, परन्तु कमल तथा भ्रणावरेण माताके शरीरके साथ रहता है। लगभग

आध घण्टेमें कमल गर्भाशयसे अलग होकर भ्रूणाव णके साथ गर्भ-कला, कमल, रक्त—ये सभी निकलते हैं। इस समय कुछ रक्त-स्राव भी होता है। यदि इस समय ये चीजें न निकल जायें, तो निकालनेकी चेष्टा करनी चाहिये।

भ्रूणमें रक्त-संचालन

मानव-शरीर तथा गर्भस्थ भ्रूणके रक्त-संचालनमें अन्तर रहता है; क्योंकि गर्भस्थ भ्रूणके श्वास-प्रश्वासकी क्रिया फेफड़ोंके द्वारा नहीं होती।

यह पहले कहा जा चुका है कि नाल एक ओर भ्रूणकी नाभीसे सटा रहता है, दूसरी ओर कमलसे। नालमें तीन रक्त-वाहिनियाँ होती हैं—इनमें दो धमनियाँ और एक शिरा रहती है। इन धमनियोंसे भ्रूणका अशुद्ध रक्तकमलमें पहुँचता है और शिरासे मुँहतक लौटकर भ्रूणके शरीरमें आता है। इसके अलावा भ्रूणकी महाधमनी भी अपने अन्तिम भागमें कई शाखाओंमें विभक्त हो जाती है। प्रत्येककी दो बडी शाखाएँ बन जाती हैं। इनमेंसे एकका काम है, बस्ति-गह्वरके भीतरी अंगोंका पोषण और दूसरी वंक्षण-स्थानसे घूमती हुई उदरमें प्रवेश करती है। इसके बाद वस्ति गह्वरको धमनियोंसे दो शाखाएँ निकलती हैं। इन्हें नाभी-धमनियाँ कहते हैं।

नाभि-शिरा कमलसे आरम्भ होकर नालके भीतर होती हुई उदर-गह्वरमें जा पहुँचती है और वहाँसे बराबर यकृतके निचले भागमें जाकर कई शाखाओंमें बँट जाती है। एक शाखा यकृतके बायें भागकी ओर, और दो शाखाएँ बीचके भागमें चली जाती हैं अर्थात् एक संयुक्ता-शिरामें मिल जाती है और दूसरी अधोगा महाशिरामें। अन्त शाखाएँ भी यकृतमें ही जाती हैं। इससे होता यह है कि उसका विशेष भाग यकृतमें ही जाता है और थोडा अधोभाग महाशिरामें जाता है। इसके

चित्र न० ४०

भ्रूणमें रक्त-संचालन
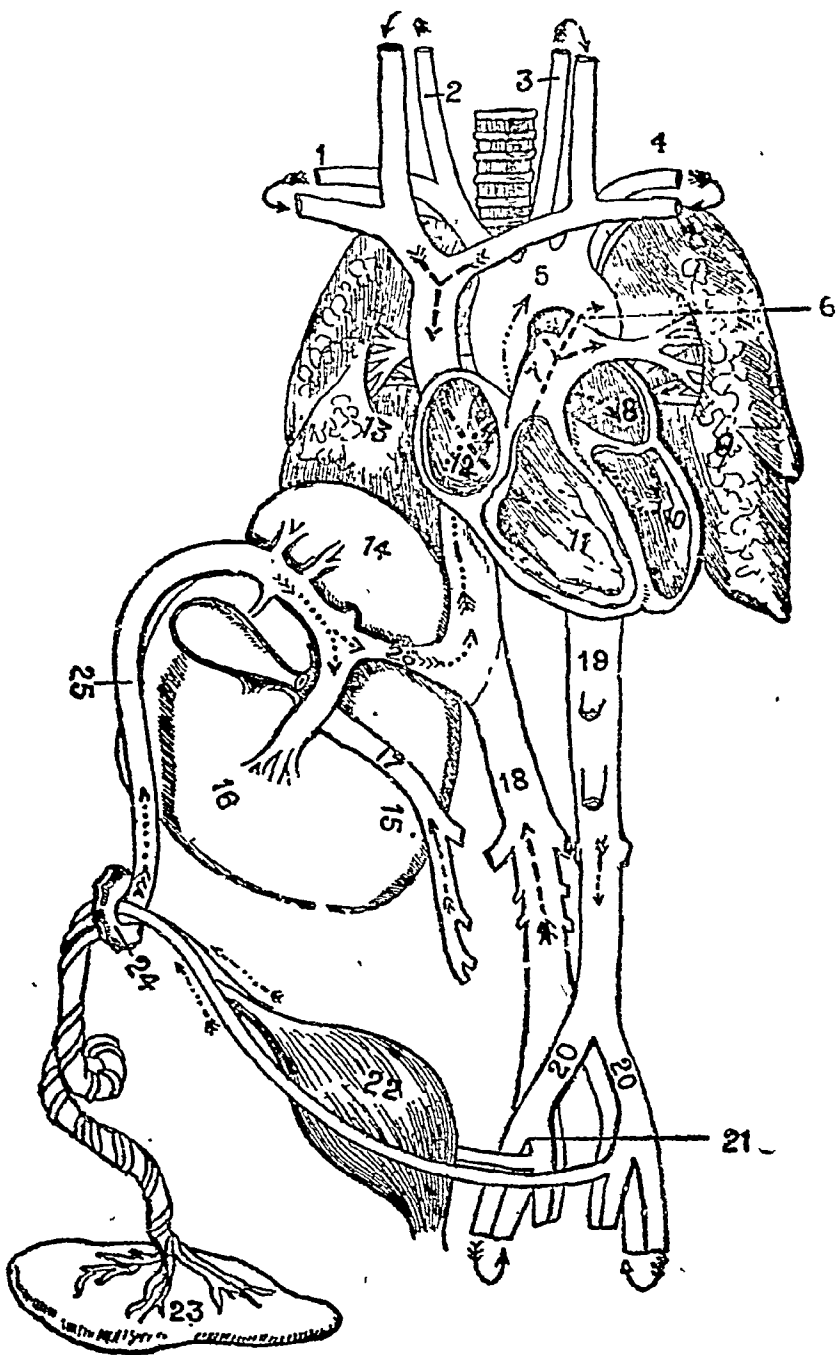
चित्र नं० ४० का परिचय

1. Right sub-clavian artery—दक्षिण अक्षकाधोवर्त्तिनी धमनी।
2. Right common carotid artery—दक्षिण मूल शिरोधीया धमनी।
3. Left common carotid—वाम मूल शिरोधीया धमनी।
4. Left sub-clavian artery—वाम अक्षकाधोवर्त्तिनी धमनी।
5. Aorta—महाधमनी (महराव)।
6 Ductus arterious—धमनी सयोजक।
8 Left atrium—वाम ग्राहक कोष्ठ।
9 Left lung—बायाँ फेफड़ा।
10. Left ventricle—बायाँ क्षेपक कोष्ठ।
11 Right ventricle—दाहिना क्षेपक कोष्ठ।
12. Right atrium—दाहिना ग्राहक कोष्ठ।
13 Right lung—दाहिना फेफड़ा।
14 Left lobe of the liver—यकृतका वाम भाग।
15. Liver—यकृत।
16 Right lobe—यकृतका दाहिना भाग।
17. Portal veins—सयुक्ता शिरा। (इसमें अग्र-ऊर्ध्वगामी शिरा, प्लीहा, शिरा और अधोगा शिरा मिल गयी है)।
18. Inferior venacave—अधोगा महाशिरा।
19 Aorta—महाधमनी।
20. Common illiac—श्रोणिगा मूलिया धमनी।
20. Common illiac—श्रोणिगा मूलिया धमनी।
21. Hypogastric arteries—अतः श्रोणिगा धमनी।
22. Bladder—मूत्राशय।
23. Placenta – कमल।
24. Umbilicus—नाभिकमल।
25. Ductus venosus—शिरा संयोजक।

वाद यकृतमें गया हुआ रक्त भी यकृतकी शिराओंका राहसे अधोगा-महाशिरामें जा पहुँचता है। इससे यह मालूम हुआ कि अधोगा-महा-शिरामें शुद्ध और अशुद्ध दोनों ही रक्त रहते हैं। शुद्ध रक्त नाभि-शिरा द्वारा आता है और अशुद्ध यकृत, उदर तथा अधो-शाखासे जा पहुँचता है। यह सभी रक्त अधोगा-महाशिरा द्वारा ग्राहक-कोष्ठमें जाता है। भ्रूणके दोनों ग्राहक-कोष्ठोंको मिलानेवाला एक छिद्र रहता है। इसे अंडाकार विवर कहते हैं। अधोगा-महाशिरासे रक्त उर्धगा-महाशिरामें मिले विना ही इस छिद्रके भीतरसे निकलकर वायें ग्राहक-कोष्ठमें जाता है, वहाँसे द्विधार-पथ द्वारा वायें क्षेपक-कोष्ठमें और उर्धगा महाशिराका रक्त दाहिने क्षेपक-कोष्ठमें जाता है। जव क्षेपक-कोष्ठ सिकुड़ने लगता है, तो वायें क्षेपक कोष्ठका रक्त महाधमनीमें चला जाता है। इस समय एक छोटी धमनीसे फुस्फुसीया-धमनी महाधमनीके महारावसे मिल जाती हैं। यह एक ऐसे स्थानपर मिलती है, जहाँ महाधमनीसे तीन शाखाएँ निकली हुई होती हैं। इसी जगह महराव वनता है। अव वायें क्षेपक-कोष्ठसे जो रक्त महाधमनीके महाराबमें जाता है, वह हृदयमें जाता है तथा तीन वड़ी धमनियों द्वारा शिरामें और दोनों उर्ध-शाखाओमें जाकर इन अंशोंको पोषण करता हुआ वाकी नीचेवाली महाशिरामें चला जाता है।

अव वह रक्त जो उर्ध-शाखाओंका पोषण करता है, उर्धगा-शिराकी राहसे दाहिने ग्राहक-कोष्ठमें जाकर इन अंगोंका पोषण करता हुआ अधोगा महाधमनीमें मिल जाता है। इसकी क्रिया यह होती है कि उर्ध-शाखाओंका पोषण करता हुआ जो रक्त लौटता है, वह दाहिने ग्राहक-कोष्ठमें आता है; फिर उर्धगा-शिराका रक्त तीन कपाटवाले द्वारमें जाकर दाहिने क्षेपक-कोष्टमें जाता है। इसके वाद दाहिने क्षेपक कोष्ठका रक्त फुस्फुसीया-धमनीमें जाकर महाधमनीमें प्रवेशकर उसके रक्तसे मिल जाता है। फेफड़े काम नहीं करते, इसलिये धमनीके स्थानोंसे रक्त

छातीकी धमनीमें मिल जाता है। इसके बाद यह सब रक्त उदरकी महाधमनीमें जाता है। कुछ नीचे उतरकर उदरकी महाधमनीसे और भी दो सयुक्त धमनियाँ निकलती हैं। इनकी दो-दो शाखाएँ हैं :—एक नाभिकी धमनी, दूसरी बाह्य वक्षण-धमनी दोनों मिश्र-शाखाओंमें जाती हैं, इसके, बाद नाभितक कैशिका शिराओंके सूक्ष्म रक्त-वाहक स्थानोंमें जाता है और इस तरह साफ हुआ रक्त ऊपर बताये हुए पथोंसे भ्रूणके हृदयमें जा पहुँचता है। भ्रूणमें रक्तका एक चक्कर इसी तरह होता है।

मृत्यु

जन्मके बाद जीवनी-शक्तिका विकास होता हुआ जब निर्दिष्ट सीमापर पहुँचता है, तब वृद्धि रुक जाती है और क्षय होने लगता है। अन्तमें एक ऐसी अवस्था आ जाती है कि फिर शक्ति नहीं रहती। सभी यत्र अपनी-अपनी क्रिया बन्द कर देते हैं और जीवात्मा इस क्षय हुए यत्रको छोड देता है। यही स्वाभाविक मृत्यु है।

दूसरा अध्याय

होमियोपैथी या सादृश-विधान

चिकित्सा या इलाजका काम शुरू करनेके पहले "होमियोपैथी" के सम्बन्धमें कम-से-कम कुछ मोटी बातें जान लेना बहुत ही जरूरी है। इसीलिये पाठक-पाठिकाओंसे निवेदन है कि वे सदा इस अध्यायको बहुत ध्यानसे और जी लगाकर पढ़ें।

औषध किसे कहते हैं?—जो पदार्थ अच्छे-भले स्वस्थ शरीरको बिगाड़ सकता है और बिगड़े हुएको ठीक कर सकता है, उसे "औषध कहते हैं।" जैसे—संखिया, क्विनाइन, अफीम इत्यादि ("औषध-प्रस्तुत प्रकरण")।

होमियोपैथी क्या है?—अच्छी-भली स्वस्थ अवस्थामें कोई दवा खानेपर शरीरमें जो सब लक्षण प्रकट होने लगते हैं, वैसे ही लक्षणवाली बीमारी, उसी दवाकी बहुत थोरी मात्राके प्रयोगसे, आराम हो जानेका नाम "होमियोपैथी" या "सम-विधान" अथवा "सदृश-विधान" है। जैसे—स्वस्थ शरीरवालेको थोड़ी संखिया (आर्सेनिक) खिला दी जाये, तो हैजाकी भाँति दस्त, कै, प्यास वगैरह लक्षण दिखाई देने लगते हैं; उसी तरह दस्त, कै प्यासका लक्षण जिस हैजामें दिखाई दे, उसमें बहुत, थोड़ी मात्रामें आर्सेनिकका प्रयोग करनेसे वह अच्छा हो जाता है। स्वस्थ शरीरवाला थोड़ी क्विनाइन खा ले, तो मैलेरिया या जाड़ा बुखार (ague) के लक्षण उसके शरीरमें बहुत कुछ पैदा हो जाते हैं, इसीलिये क्विनाइनकी एक छोटी मात्रा मैलेरिया या कम्प-ज्वर (जाड़ा बुखार)

नाश कर सकती है। शरीर भला-चगा रहनेपर अफीम ज्यादा खा लेनेसे कब्जियत हो जाती है, नीद नहीं आती, यहाँतक कि बेहोशी भी आ जाती है। इसलिये अफीम बहुत थोडी मात्रामें कब्जियत, "अनिद्रा" बेहोशी वगैरह रोगमें फायदा पहुँचाती है। इसलिये, 'सम-शुद्ध-सूक्ष्म' औषध-विधानको ही होमियोपैथीका मूल-सूत्र समझना चाहिये। यही सम-शास्त्र है।

होमियोपैथी कितने दिनोंसे है?—कम-से-कम दो हजार वर्ष पहले समे-समे* (Similia Similibus) होमियोपैथी मतका यह बीज मात्र पहले आर्यावर्त्त और प्राचीन ग्रीसमें जपा गया था। इसके बाद लगभग एक सौ वर्ष हुए हैनिमैन नामके एक महात्माने जी-जानसे कोशिशकर, कायदेसे इसकी साधना की और अच्छी तरह प्रचार किया, जिससे चिकित्सा-जगतमें (इलाज करनेवालोंमें) एक भयानक हलचल और उलट-फेर-सा हो गया, साथ ही उनका नाम भी अमर हो गया।

हैनिमैन कौन थे?—एक नया युग लानेवाले, पुण्य चरित श्रीमान क्रिश्चियान फ्रेडरिक सैमुएल हैनिमैनने १० एप्रील १७५५ ईस्वीके दिन जर्मनीके अन्तर्गत सैक्सन राज्यके माईसेन नगरमें मिट्टीका वर्त्तन रगनेवाले एक दरिद्रके घरमें जन्म लिया था। बडे कष्टसे इन्होंने लिखना-पढना सीखा, यहाँतक कि अपने हाथका बनाया मिट्टीका दीया जलाकर उसीकी रोशनीके सहारे वे रातमें पढा करते थे। वे ग्रीक, हिब्रू, अरबी, लैटिन, इटालियन, स्पेनिश, सीरियन, फ्रेञ्च, जर्मन, अंग्रेजी प्रभृति भाषाएँ और चिकित्सा-शास्त्र तथा रसायन-विद्याके पूरे पंडित थे। बात यह थी कि उनमें बहुतसे विषयोंकी विद्या और

---

* "समः समे शमयति 'हेतुर्व्याधि विपर्यस्तु विपर्यस्तार्थ कारिणी" "विषस्य विषमौषधम्" प्रभृति वेद और निदानमें कहे हुए वाक्य भी इसी सम सूत्रके प्रतिपादक हैं।

सर्वतोमुखी प्रतिभा, इन दोनोंका इतना सुन्दर समावेश हो गया था कि सुपरिच्चित रसग्राही रिक्टर साहव उन्हें एक "आलौकिक दो सरका जीव" (Dophelkoph double-headed prodigy of erudition and genius) कहा करते हैं। चौबीस वर्षकी उम्रमें ही उन्होंने एम० डी० की उपाधि प्राप्त कर ली। १८७२ ईस्वीमें कुमारी हेनरीयेटा-कुक्लर नामकी एक रूपवती और गुणवती जर्मन रमणीसे विवाह किया। इसके वाद कुछ दिनोंतक वे ड्रेसडेन अस्पतालके प्रधान अस्त्र-चिकित्सक (Civil surgeon) के पदपर काम करते रहे, फिर उन्होंने यह काम छोड़कर लीपजिक नगरके पास एक छोटे गाँवमें रहकर इलाज करना आरम्भ किया। इस तरह वड़ी प्रतिष्ठाके साथ दस वर्षतक डाक्टरी करनेके वाद, उस समय जो इलाज करनेका ढंग वहाँ चल रहा था, उसमें कोई सार न देख तथा उससे हानि होती है समझकर इस धर्मभीरु पुरुष सिंहने वह काम छोड़ दिया और एकान्तमें बैठकर रसायन-शास्त्रकी खोज और कितनी ही वैज्ञानिक पुस्तकोंका अनुवादकर वड़े कष्टसे अपने परिवारका पालन करने लगे। इसी समयमें वहुतसे प्राच्य (पूर्व-देशके) और प्रतीच्य (पश्चिमीय देशोंके) कितने ही चिकित्सा-शास्त्रको पढ़कर सत्यनिष्ठ हैनिमैनने हताश होकर कहा, कि सव तरहकी चिकित्सा-प्रथा ही एक काल्पनिक सामग्री है। रोगको हटानेकी सच्ची दवा नहीं है या हो नहीं सकती; परन्तु जिसके भाग्यमें चिकित्सा-जगतमें एक नया युग लाना वदा था, उनके मनमें यह सन्देह भरी वात कितने दिन टिक सकती थी। थोड़े ही दिन वाद उसके घरमें रोग आ पहुँचा—उनका प्राणसे प्यारा वच्चा वीमार पड़ा। रोगी बच्चेके मर्ममेदी आर्त्त-स्वरको सुनना, इधर दवाओंपर उनकी आस्था नहीं, दरिद्रता घरमें अखाड़ा जमाये खड़ी, परन्तु ऐसी अवस्थामें भी सन्तानवत्सल शान्त-चित्त हैनिमैन परमपिता ईश्वरपर भरोसा किये रोगीकी खाटके पास बैठे थे—यह अपूर्व दृश्य था। उसी शुभ मुहूर्त्तमें "विश्वपिता, परम करुणामयने,

अपनी प्रियतम सन्तानोंका रोग दूर करनेका कोई सच्चा उपाय अवश्य ही कर रखा है"—यह धारणा, यह मूक अश्रामन-वाणी एकाएक उनके हृदयमें बोल उठी ; उन्होंने चिकित्साका सस्कार या इलाजकी रीतिमें सुधार करनेका बीडा उठाया। १७६० ईस्वीमें कालेन साहबका लिखा "मेटिरिया-मेडिका" ग्रन्थ अगरेजीसे जर्मन भाषामें अनुवाद करते समय, उस ग्रन्थमें सिनकोना (Peruvian bark) नामकी एक दवाका बुखार हटानेवाला जो गुण लिखा हुआ था और उसकी जो व्याख्या की गयी थी, उससे वे सन्तुष्ट न हुए। इसके बाद इस दवाकी आपसमें विरुद्ध भावसे भरी गुणावलीपर गहरे भावसे विचार करते-करते उनके मनमें एक यह भाव पैदा हो गया कि "भले-चगे शरीरवालेको सिनकोना खिलानेसे जाडा-बुखार जैसा रोग पैदा हो जाता है, इसीलिये, शायद सिनकोना जाडा बुखारको लाभ भी पहुँचाता है।" उन्होंने तुरन्त ही स्वय सिनकोना खाकर परीक्षा कर ली, कि वह सचमुच ही मैलेरिया (या जाडा बुखार जैसा ज्वर) पैदा करता है। अब उन्होंने यह सोचा कि दूसरी दवाओंमें भी सिनकोनाकी तरह ही "बीमारी पैदा करनेवाली" और "बीमारीको नष्ट करनेवाली" शक्ति रह सकती है। उनके मनके इस भावने ही इन्हें धीरे-धीरे सम ममे शमयति (Similia Similibus Curentur) की राहपर लाकर खडा कर दिया। इसके बाद लगातार छ वर्षों तक खोज, सब तरहकी जाँच, गरल-विज्ञान (विष-विज्ञान) का अध्ययन और खुद कितने ही विष खाकर वे इस सिद्धान्तपर आ पहुँचे कि "होमियोपैथी सचाईके अटल पर्वतपर बहुत मजबूतीसे बैठी है—अनुमान या कल्पना इसकी जड नहीं है", डालसे गिरा हुआ फल ऊपर न जाकर नीचे जमीनपर ही क्यों गिर पडता है? इसके उत्तरकी खोज करते-करते जिस तरह बुद्धिमानी न्यूटनने माध्याकर्ष शक्तिका पता लगाकर जड-विज्ञानकी रीढ तैयार कर ली थी, उसी तरह "सिनकोना क्यों कम्प ज्वरको नाश करता है"—इस सवालको हल करते-करते

महानुभाव हैनिमैनने उसी तरह "सम मत" खोज निकालकर चिकित्सा-शास्त्रको विज्ञानकी भित्तिपर स्थापित किया है। छः वर्षों तक लगातार खोज करने और अनुभव करनेके बाद १७६६ ईस्वीमें "ह्यूफेलैंडस जर्नल" नामक एक ऐसी पत्रिकामें उनका एक लेख प्रकाशित हुआ, जो उस समय चिकित्सा-जगतमें सबसे बढ़िया पत्रिका मानी जाती थी। उनके इस बिलकुल ही नये मतका प्रचार होते ही चारों ओर एक प्रकारकी हलचल-सी मच गयी। सत्यपर प्रेम और अनुराग रखनेवाले कितने ही ज्ञानी चिकित्सक उसके शिष्य हुए; लेकिन साथ-ही-साथ कितने ही ऐसे अनुदार चिकित्सक तथा नीच बुद्धिवाले स्वार्थी डाक्टर, उनके घोर विरोधी भी हो गये; परन्तु जो महापुरुष अग्नि-मंत्रकी दीक्षा ले चुका है, वह इस तरहकी निन्दा या स्तुतिके फेरमें पड़कर क्या अपनी साधना त्याग सकता है? १८०५ ईस्वीमें उन्होंने Fragmenta de viribus नामकी एक किताब लैटिन भाषामें छपायी। इसमें इन्हीं बातोंका वे वर्णन कर गये हैं कि भले-चंगे शरीरमें सत्ताइस दवाओंके सेवन करनेपर कौन-कौनसे लक्षण प्रकट हुए थे, यही सबसे पहली होमियोपैथिक मेटिरिया-मेडिका या भेषज-लक्षण-संग्रह। १८१० ईस्वीमें उनका "आर्गेनन" ("आरोग्य-साधन") नामक एक महाग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इस अमूल्य पुस्तकमें जिस तरह विलक्षण पाण्डित्य और अकाट्य युक्तियोंके साथ सदृश-विधान-तत्वका वर्णन और समर्थन किया गया है, उसी तरह खून निकालना आदि उस समयकी चली हुई आसुरिक चिकित्सा करनेकी प्रथाकी भी तीव्र भाषामें समालोचना की गई है। यही कारण हुआ कि उनके शत्रु क्रोधसे पागल हो उठे। इसके बाद १८१२ ईस्वीमें जब अपने गुणोंकी बदौलत वे लिपजिक विश्वविद्यालयके सम-शास्त्रके अध्यापक (Teacher of Homœopathy) के पदपर जा पहुँचे और नवयुवक विद्यार्थी तथा प्रवीण चिकित्सकोंको अपने नये मन्त्रकी दीक्षा देने लगे (१८१२—१८२१ ईस्वी), उस समय उनके विपक्षी नाना प्रकारके

षडयंत्रकर उन्हे हानि पहुंचानेकी चेष्टा करने लगे और अन्तमें उन्होंने ऐसा फन्दा रचा कि १८२१ ई० में इस जर्मन-कुल-तिलकको लिपजिकसे निर्वासित ही करा छोडा, परन्तु वीरोंके हृदयकी उद्यम-रूपी आग सहजमें दवनेवाली नहीं होती, बुझती भी नहीं है—उन्होंने कोटेन नगरमें चौदह वर्षका समय विताया। यहाँके किसी सामान्त राजाका ऐसा रोग उन्होंने आरोग्य किया, जिसके आराम होनेकी आशा ही नहीं थी और इसीका यह फल हुआ कि वे बडे सम्मानके साथ राज-वैद्यके पदपर वैठाये गये। इसी कोटेन नगरमें उनके जीवनका मध्य भाग बीता, हजारों रोगी भयानक रोगोंसे आराम हुए और सब रोगोंका प्रकृत-निन्दा (मूल कारण-तत्व) खोजकर, १८२८ ई० में Chronischen Krankheiten ("क्रानिक डिजिज" या पुरानी बीमारियाँ) नामक पुस्तक तैयार रहनेके कारण उनका यश समस्त जगतमें फैल गया।

उस समयकी प्रचलित मात्राके हिसाबसे हैनिमैन भी पहले होमियोपैथिक दवा अधिक परिमाणमें (जैसे—फी खुराक नक्स-वोमिका ४ ग्रेन, इपिकाक ५ ग्रेन, सिनकोना २ ड्रामतक) देते थे, इससे रोग तो अच्छा हो जाता था, परन्तु दवा पेटमें जाते ही रोग कुछ वढ जाता था। इस बुराईको हटानेके लिये उन्होंने दवाकी मात्रा घटानी शुरू की। अन्तमें बहुत सूक्ष्म अशमें उसको बाँटकर, जब उन्होंने दवाका प्रभाव और फल देखा, तो आश्चर्यमें आ गये। उस समयसे उन्होंने अपना यह सिद्धान्त बनाया कि मर्दन आदि क्रिया द्वारा कोई पदार्थ सूक्ष्म अशमें बाँट देनेपर स्थूल भाग (जड अश) छोडकर वैद्युतिक-शक्ति-सम्पन्न हो जाता है और सचल भाव धारण करता है—साराश यह कि उस समय वह पदार्थ "अपना रूप" या "शक्ति"—रूप प्राप्त कर लेता है* और यही

---

* उनकी यह सरल तर्क-भरी उक्ति पदार्थोंका "शक्ति विकाशन" (Dynamisation) तत्व—केवल प्रलाप या बकवास कहकर जड़वादियोंने

शक्ति समस्त शरीरमें बिजलीकी तरह प्रवेशकर जल्दी रोगको आराम कर देती है (The Organon Para 269 और इस ग्रन्थका "औषध प्रस्तुति-प्रकरण" देखिये)।

१८३० ईस्वीमें उनकी स्त्रीका देहान्त हुआ। अस्सी वर्षकी उम्रमें उन्होंने दूसरा विवाहकर, जीवनके आठ वर्ष फ्रांस देशकी राजधानी पेरिस नगरमें विताये। इस नयी स्त्रीका नाम मेलानी था। इस रूपवती गुणवती तथा धनवती उच्च कुलकी फ्रेञ्च महिलाने जब हैनिमैनकी प्रशंसा सुनी, तब वह वेश बदलकर कोटन नगरमें गयी और इस वृद्धकी गुण तथा चिकित्सामें निपुणता देखकर मोहित हो गयी। इसके बाद उसने इनसे

उड़ा देना चाहा था (इसमें सन्देह नहीं कि इस सौ वर्षोंमें भी कोई अकाट्य युक्ति द्वारा वे इसका खण्डन नहीं कर सके), परन्तु सौभाग्यवश उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी-विज्ञानका झुकाव "शक्ति" वादकी ओर है [परिशिष्ट (क) देखिये]। हैनिमैनका कहा औषधोंके "शक्ति विकाशन" तत्व पाठकोंके समझनेमें बहुत कुछ सहायता देगा, यह सोचकर उन्नीसवीं शताब्दीके आखिरी वर्षमें डाक्टर गैचेलये पेरिस कांग्रेसमें जो कहा है—(vide The Medical Era April 1910), वह संक्षेपमें नीचे लिखा जाता है—कोई यौगिक पदार्थ (जैसे—नमक Chloride of Sodium) अपने हजार गुने सुरासारके साथ गलनेपर, उसके सब अणु विद्युत-विन्दुमें बदल जाते हैं, इसी परिणति या बदलनेका नाम "अणु-वियोजन (dissociation of molecules) है—सभी अणु अचल (pasxive) हैं; परन्तु ताड़ित-विन्दु सचल (active) तेजोमय पदार्थ या मूर्त्तिमती "शक्ति" हैं। अतएव, ऊपर कहा द्रव (the solution) अब शक्तिपूर्ण अर्थात् अच्छी तरह गलकर, उस योगिक पदार्थमें मानो एक नया बल आ गया है, ऐसा कहा जा सकता है (a fresh force may be said to have bee imparted to the orinal substance).

विवाह किया। इसकी सलाहसे न्यायी हैनिमैनने अपने भरण-पोषणके योग्य सामान्य रकम (तीन हजार रुपये) रखकर बाकी समस्त सम्पत्ति (लाखों रुपये और दो सजे-सजाये मकान) पहली स्त्रीसे उत्पन्न लडके-लडकियोंको बाँट दिये। उनकी जीवनी बहुतसे उपदेशोंसे भरी है। उनकी जीवनीकी प्रत्येक सीढी—बाल्य, कैशोर, यौवन, प्रौढ, बुढापा—सभी घटनाओंसे भरी है—उनका घोर परिश्रम, अध्यवसाय, अध्ययनकी प्रबल रुचि, जनसाधारणके हितके लिये विज्ञानका अनुराग, एकाग्रता, सत्यनिष्ठा, सौजन्य, विनय आदि सद्गुण हमलोगोंके लिये आदर्श हैं। वे एकेश्वरवादी (Theist) थे। भगवानके मंगलमय रूपपर उनका पूरा विश्वास था—यह बात उनके जीवनके अन्तिम मुहुर्त्ततक दिखाई दी। वह पहले ही कहा जा चुका है कि हृदयकी साधु उत्तेजना ही उन्हें निराशाके अन्धेरे कूएँमे "सम-विधान" रूपी उजियालेमें ले आयी थी। इस शुभ समके शंखनादसे इस जगतके मनुष्य जाग उठेंगे—यह उन्होने अपने विश्वास-नेत्रोंसे पहले ही देख लिया था। २री जुलाई १८४३ ईस्वीमें यह सदृश-विधानाचार्य इस मर्त्तलोकके महाव्रतका उद्यापना कर अमरलोकमें चले गये। मरनेके समय वे लगभग दो लाख पौंड अर्थात् तीस लाख रुपयोंकी सम्पत्ति छोड गये। मोनमार्ट (Montmartre) नामक समाधि-स्थानमें इस जगद्बन्धुकी लाश गाडी गयी। इसके बाद १८६६ ईस्वीमें वहाँसे निकालकर यथायोग्य आदरसे परे-ला शेज (Pere-la chaise) नामकी श्मशान-भूमिमें वह दफनाई गयी। इस अन्तिम स्थानमें उनकी समाधि-शिला और अमेरिकाके वाशिंगटन नगरमें उसका स्मृति-मन्दिर उनके मित्र और शिष्योंकी गहरी प्रीति और श्रद्धाके चित्र-रूपमें खडा है। १८५१ ईस्वीमें इस महापुरुषके देशवालेने उनकी आदि लीला-भूमि लिपजिक नगरमें उनकी पीतलकी मूर्ति स्थापितकर अपने पहले किये हुए अपराधोंका प्रायश्चित किया है।

"सम-मत" उसके प्रचार करनेवालेके साथ ही सदाके लिये समाधिस्थ हुआ अथवा उसके ललाटमें अविनश्वर अक्षरोंमें अंकित है :—

"जय श्री"? धन्य कर्मयोगी हैनिमैन! अपने दुःसह तपके प्रभावसे तुमने रोग हटानेका उपाय ढूँढ़ निकालकर समस्त मनुष्य जातिका जो असाधारण उपकार किया है, उसे स्मरणकर किसके हृदयका उच्छ्वास तुम्हारे चरणोंकी ओर न दौड़ पड़ेगा। जन समाजकी भलाईकी इच्छासे तुमने अपनी मर्जीसे विना हिचकिचाये, घोर कालकूट जहर खा लिया। जहर खानेपर मौत होती है; परन्तु भगवानकी विचित्र लीलाके अनुसार तुम्हारा कुछ भी नहीं विगड़ा। विषम विष खाकर, अमृत-तत्वका पता लगा, जवतक सूर्य, चन्द्रमा इस जगतमें दिखाई देते रहेंगे, तवतकके लिये तुम अमर हो गये। भगवान, तुम्हारी ही मन्थन गुणसे हलाहल विष अमृतमें वदल गया। आज जर्मनी, फ्रांस, आस्ट्रिया, इटैली, इङ्गलैण्ड, अमेरिका, आस्ट्रेलिया वगैरह सभी सभ्य देश तुम्हारी चलाई हुई इस चिकित्सा-प्रणालीको सर झुकाकर मान रहे हैं। केवल अमेरिकामें २२ होमियोपैथिक मेडिकल कालेज और १०३ अस्पताल, लगभग छः हजार बीमारोंका सहारा और आश्रय दे रहे हैं तथा तुम्हारी जय-घोषणा कर रहे हैं। राजेन्द्रलाल दत्त, इङ्गलैण्डके भारतमंत्री सभाके भूतपूर्व सदस्य माननीय सैयद हसन विलग्रामी, इटैलियन डाक्टर मेरिनी, वंगालके उज्वलरत्न महेन्द्रलाल सरकार, दरिद्रोंके सेवक, भक्ति-भजन फादर मुलर (ईसाई) प्रभृति महोदयोंके असाधारण अध्यवसाय और चेष्टासे आज बंगालके गाँव-गाँव तथा नगरोंमें और भारतकी कितनी ही जगहोंमें तुम्हारी ही कीर्त्तिकी ध्वजा फहरा रही है।

---

* यहाँ यह कह देना बहुत ही आवश्यक है कि १८३५ ईस्वीमें पंजाव केशरी रणजीत सिंहकी राजसभाके वैद्य (जर्मन डाक्टर) हनिङ्गचार्जने सवसे पहले

जिस "जयपत्र" को स्वयं अपने हाथसे नियति सतीने तुम्हारे ललाटमें लिख दिया है, किसकी सामर्थ्य है कि विज्ञानाभिमानी, अव्यवस्थित

भारतवर्षमें और १८५१ ईस्वीमें कलकत्ताके पहले हेल्थ अफसर (फ्रेंच डाक्टर) टनेयर साहबने सबसे पहले बंगालमें होमियोपैथीका प्रचार करनेकी चेष्टा की ; परन्तु दुर्भाग्यवश इनमेंसे किसीकी भी चेष्टा फलवती नहीं हुई। इसके बाद विख्यात पण्डित, दयाके अवतार ईश्वरचन्द्र विद्यासागरके भाई देवता-स्वरूप दीनबन्धु न्यायरत्न (उनके शिष्य बिनोदबिहारी बन्दोपाध्याय, नवगोपाल घोष और शशिभूषण बिश्वास) अध्यापक प्यारीचरण सरकार, बारासातके ऋषिकल्प कालीकृष्ण मित्र, डाक्टर बिहारीलाल भादुड़ी, प्रातः स्मरणीय भूदेव मुखोपाध्याय प्रभृति विद्वानोंने बंगालमें और कर्मशील लोकनाथ मैत्रने बनारसमें, होमियोपैथी फैलानेकी बड़ी कोशिश की है। यद्यपि ये महात्मा सदाके लिये चले गये हैं, परन्तु यदि स्वर्ग और मर्त्यमें सम्बन्ध है, तो इनका लगाया हुआ होमियोपैथीका अंकुर इस रोग-शोक भरी बंगालकी भूमिमें इतना फैला है और ऐसा अमृत भरा फल दे रहा है कि दिव्यधाममें बैठी हुई इनकी आत्माएं इसे देखकर बहुत ही प्रसन्न होती होंगी।

दक्षिणमें आगष्टस मूलर द्वारा स्थापित किया हुआ होमियोपैथिक औषधालय, आतुराश्रम दीनावास, कुष्ठाश्रम, प्लेग अस्पताल—हजारों दीन-दुखियोंको मौतके मुँहसे बचा रहा है—वह देख मुग्ध हो भारत सरकारने उसकी प्रतिष्ठा करनेवालेको १९०७ ईस्वीमें "केसरे हिन्द" पदक प्रदान किया था और जर्मन सम्राट भी वैसे ही सम्मानमूलक पदवीसे भूषित कर होमियोपैथीकी महिमा अस्फुट स्वरमें कीर्तन करनेके लिये बाध्य हुए थे (The Catholic Times 9th August 1907 देखिये)। इसी धर्मात्माने पहले-पहल कम दाममें होमियोपैथिक दवा बेचनेका दृष्टान्त सबको दिखाया था, १९१० ईस्वीमें ये परलोक सिधार गये। अब भी तीस स्वेच्छासेवक कर्मवीर इनके कार्यक्षेत्रमें मौजूद हैं (Vide The Statesman, November 22, 1910)।

मति पुराने चिकित्सा-जगतकी कोई भी ऐसी-वैसी दुर्द्धर्ष राज-शक्तिकी सहायतासे हीरोंके अक्षरमें लिखी हुई उस भाग्य-लिपिको पोंछकर देव-यज्ञमें विघ्न उत्पन्न करे। सत्यके तेज सोतेकी गतिको रोकनेकी चेष्टाकर कितने ही राजाओंके पागल विघ्न-रूपी हाथी, न जाने कहाँ वह गये। प्रत्येक देशके होमियोपैथिक इतिहास ज्वलन्त अक्षरोंमें इसकी गवाही दे रहे हैं। *Transaction of the Inter-national Homœo pathic Congresses,* held quinquennially since 1876 देखिये।)

हे आर्य ! तुमने बहुत बड़ी अभिज्ञता और गहरी चिन्ताके प्रभावसे "साधन" ग्रन्थ, सूत्रके रूपमें बनाया था अथवा किसी महाप्राण देवताने चुपचाप आकर तुम्हारी कमलको जबर्दस्ती चला दिया था ? वीरवर, उस समय क्या क्षणभरके लिये भी तुमने सोचा था कि रक्तका एक बून्द भी गिराये विना समस्त भूमंडलमें सत्यका सिंहासन इतना शीघ्र प्रतिष्ठित कर दिया जायगा और यह अघटन-घटित होगा ? केवल एक शताब्दीमें खून निकालना, चीर-फाड़ आदि आसुरी चालोंका एकदम निकाल वाहर होना और सुसलर साहबकी "वायोकेमिक", पोस्टेउर साहबका "ऐण्टि टाक्सिन", राइट साहबका "आप्सोनिन", क्विण्टन साहबका "आइसो टानिक प्लाजमा" वगैरह इलाज करनेके नये-नये तरीकोंकी सूचना ऊपर कहे हुए सार्वजनीय सूत्रोंकी अलौकिक सारता दिखाकर तुम्हारी निष्कलङ्क कीर्त्ति दिनोंदिन दसो दिशामें फैलाये जा रहे हैं।

हे संसारके लिये अमृत धारण करनेवाले, नीलकंठ महादेवका अनुसरणकर तुमने तेज जहर खाकर, दवा खोज निकाली और संसारकी भलाईके लिये, जो सरल और सुगम राह तुमने दिखा दी है, उसके लिये वर्त्तमान और भविष्य वंशवाले सदा तुम्हारे आगे कृतज्ञता-पाशमें बँधे रहेंगे।

औषध-प्रस्तुति प्रकरण

भेषज और भेषजवह—लोहा (फेरम), कस्तूरी (मस्कस), बच्छनाग विष (ऐकोनाइट) वगैरह कितने ही पदार्थोंमें रोगको पैदा करने और नष्ट करनेकी ताकत है। इनको ही "भेषज" या "औषध" कहते हैं। चुआया हुआ (डिस्टिल्ड) पानी, सुरासार (एलकोहल), दूधकी चीनी (सुगर आफ मिल्क), वटिका (पिल्यूल), अनुवटिका (ग्लोब्यूल) वगैरह कितनी ही चीजोंमें रोग हटानेवाली ताकत या शक्ति नहीं है। इन सब चीजोंके सहारे दवा तैयार होती है और सेवन की जाती है, इसीलिये इन्हे "भेषजवह" कहते हैं।

औषध दो रूपमें होता है—औषध या दवाका सार भाग (अर्थात् रोगको हटानेवाली शक्ति) दो तरहसे सुरक्षित रहती है—विचूर्ण और अरिष्ट—रूपमें।

विचूर्ण—लोहा वगैरह कडी चीजें, जो सहजमें नहीं लगती हैं, उन्हे दूधकी चीनीके साथ खरलमें खूब घोटकर चूर्ण कर लिया जाता है। यही चूर्ण—बुकनी बनाये हुए लोहा आदिको "विचूर्ण" (ट्रिट्यूरेशन) कहते हैं; परन्तु विचूर्ण होनेके पहले उस लोहा आदिका नाम **मूल औषध** (crude drugs) रहता है।

अरिष्ट—जडी-बुटियोंका रस निचोडकर सुरासारके साथ मिला देनेपर, इस मिश्र-पदार्थको "अरिष्ट" (टिंचर) कहते हैं। इस निकाले हुए रसमें **मूल पदार्थके सभी गुण मौजूद** रहते हैं (सुरासारके सहारे तो बहुत दिनोतक स्थायी रहता है)। इसीलिये, इस अरिष्टको **मूल अरिष्ट** या **मदर टिंचर** (सांकेतिक चिह्न "θ") कहते हैं।

क्रम—"मूल औषध" या "मूल अरिष्ट" दूधकी चीनी या सुरासारके साथ अच्छी तरह मिलाकर, घोटने या हिलानेपर सूक्ष्मासे-सूक्ष्मतर

अंशमें विभाजित हो जाता है। इस तरह जो दवा तैयार होती है, उसे "क्रम" (attenuation) कहते हैं। जैसे—"मूल औषध" (जैसे सोना, पारा, कोयला प्रभृति) का एक भाग ९ भाग दूधकी चीनीके साथ मिलाकर घोटनेपर पहला दशमिक क्रम (सांकेतिक चिह्न "१x" या "१द" विचूर्ण) तैयार होता है और १ भाग मूल "औषध" ९९ भाग दूधकी चीनीके साथ मिलाकर घोटनेपर पहला सौवाँ क्रम तैयार होता है। इसी तरह, पहलेके क्रमका विचूर्ण या अरिष्ट एक भाग और दूधकी चीनी या सुरासार ९ भाग या ९९ भागके साथ मिलानेपर, क्रमसे परवर्ती दसवाँ या सौवाँ "क्रम" तैयार होता है। खास-खास स्थानपर दसवाँ या सौवाँ क्रम तैयार करनेके सम्बन्धमें इस नियममें कुछ उलट-फेर भी हो जाता है।

यदि दसवाँ क्रम वताना है, तो दवाके नामके वाद "x" या "द" अक्षरको काममें लाना चाहिये। जैसे—चायना "३x" या चायना "३द"=चायना "३ दसवाँ क्रम" और सौवाँ क्रम वताना हो, दो दवाके नामके वाद सिर्फ "क्रम" वता देनेवाला "अंक" लिख देनेकी ही चाल है। जैसे—चायना "३"=चायना "३" सौवाँ क्रम।

"क्रम" दो तरहका है—(१) **द्रव-क्रम** (liquid attenuation) या अरिष्ट-क्रम (dilution—डाइल्यूशन) और (२) **शुष्क-क्रम** (dry attenuation) या विचूर्ण (trituration—ट्रिट्यूरेशन)। औषध-प्रस्तुति प्रकरणके सम्बन्धमें यदि विशेष वातें जाननी हों, तो हमारा छपाया हुआ '**भेषज-विधान**' (फार्माकोपिया) ग्रन्थ खूब जी लगाकर पढ़ना चाहिये।

निम्न, मध्यम और उच्चक्रम—१x, २x, ३x, ३, ६, १२, १८, ३०—ये निम्न क्रम हैं। १००, २००, ५०० (D.), १००० (1M.), १०००० (10M.), ५०००० (50M.), १०००००० (CM.) पद्धति उच्च क्रम हैं।

अमेरिकाकी होमियोपैथिक फार्माकोपियाके मतसे १x—३० निम्न-क्रम हैं और ३० शक्तिसे ऊपर होनेपर उच्च क्रम।

एक बून्द दवासे लाभ क्यों होता है?—क्रम-से कम सूक्ष्म अंशमें बाँटी हुई औषधकी भीतरी शक्ति बढ़ जाती है (अर्थात् जो दवा सबसे ज्यादा सूक्ष्म अंशमें बाँट दी गयी है, उसकी रोग आराम करनेवाली ताकत बढ़ती हुई देखी जाती है)। आयुर्वेदका सोना घोटकर छोटे से छोटे अंशमें बना दिया जाता है, इसीलिये आयुर्वेदके मतसे सोना एक बहुत ही जबर्दस्त रोग हरण करनेवाली दवा है। अवधूती मतमे तैयार दवा कितनी सूक्ष्म होती हैं। नमक, चूना, सोना, गन्धक, कस्तूरी, धतूरा वगैरह जड पदार्थ और उद्भिद राज्यके बहुतसे पदार्थ, होमियो-पैथीकी क्रम पद्धतिके अनुसार, जब एकदम सूक्ष्म अंशमें बाँट दिये जाते हैं, तो रोग आराम करनेवाली उनकी ताकत इतनी बढ जाती है कि देखकर चकित होना पड़ता है। यही शक्ति रोगी शरीरमें (सूक्ष्म देहमें) जाते ही बिजलीकी तरह काम करती है (The *Organon* Paras 128 and 269 देखिये)। इसीलिये एक बून्द होमियो-पैथिक दवा सजीवनकी भाँति मरते हुएमें नयी जान ला देती है। इसलिये, इन सौ वर्षोंके भीतर इस सदृश विधानका समूचे संसारमें इतना आदर हुआ है।

क्रम या घनीभूत सूक्ष्म-शक्ति—क्रम पद्धतिके मुताबिक तैयार की हुई होमियोपैथिक दवाकी रोग हरण करनेवाली ताकत बढ जाती है, इसीलिये 'क्रम" शब्दके बदले "शक्ति" (drug-energy drug-potency) शब्दका प्रयोग होता है। जैसे—"छठी शक्तिका चायना" कहनेका मतलब "चायना ६ क्रम" समझना चाहिये। विद्वान डाक्टर ऐलेन प्रभृति महोदयोंने होमियोपैथीसे "डाइल्यूशन" या 'क्रम' शब्द उठाकर उसके बदले "पोटेन्सी" अर्थात् 'शक्ति' शब्दकी चाल चला देनेकी

सलाह दी है। (The *North Western Journal of Homœopathy* for July 1890 Pages 507 देखिये।

औषध-प्रयोग प्रकरण

बराबरसे व्यवहारमें आये हुए होमियोपैथिक औषधोंके नाम—हमलोग साधारणतः जिन होमियोपैथिक दवाओंका व्यवहार करते हैं, उनके नाम और बराबरसे व्यवहृत क्रमके लिये, पुस्तकके चौथे परिच्छेदका दूसरा अध्याय "भेषज-तालिका" देखना चाहिये। उस सूचीमें दिये हुए औषध खिलाये जाते हैं; उनमें आर्निका, कैलेण्डुला, हैमामेलिस वगैरह दवाएँ लगाने और खिलाने अर्थात् बाहरी और भीतरी, दोनों प्रयोगोंके काममें आती हैं। ४२ प्रधान होमियोपैथिक दवाओंकी मेटिरिया-मेडिका उस चतुर्थ परिच्छेदके पहले अध्यायमें लिखी गयी हैं।

बाहरी प्रयोगकी दवाएँ—होमियोपैथिक दवाका मूल अर्क एक भाग, सदासे अठगुने पानी या तेल साबुन अथवा चर्वी या मोम वगैरहके साथ मिलाकर होमियोपैथिक **धावन** (lotion), **मालिश** (liniment) या **मलहम** (ointment) प्रभृति बाहरी प्रयोगकी होमियोपैथिक दवाएँ तैयार होती हैं।

औषध किस तरह रखना चाहिये?—दवाएँ विश्वासी दवाखानोंसे खरीदनी चाहियें; क्योंकि यह समझना असम्भव है कि ये "असली हैं या नकली"। जिस कमरेमें दवाका वक्स रखा जाये, वह सूखा और साफ-सुथरा होना चाहिये। धूप, धूलके कण, तेज गन्ध और धुआँ वक्सके भीतर न जाने पाये। कर्पूरारिष्ट (कपूर अर्क), ऐलोपैथिक दवाएँ, तेज गन्धवाली चीजें या सुगन्धित पदार्थ वक्सके पास न रखने चाहियें। रोगीके कमरेमें भी दवाका यह वक्स न रखना चाहिये।

एक शीशीकी दवा या काग दूसरी शीशीमें रखना या देना 'मना' है। यदि घरमें धूप देना हो, तो दवाका वक्स दूसरे कमरेमें हटाकर रख देना चाहिये।

औषधका प्रयोग कैसे किया जाये?—विचूर्ण मुँहमें डाल लेनेसे ही काम हो जाता है। अरिष्ट भेषजवहके साथ देना चाहिये अर्थात् चुआया हुआ पानी (distilled water) न मिले, साफ पानीके साथ अरिष्ट देना चाहिये। यदि साफ पानी न हो, तो वटिका, अनुवटिका या दूधकी चीनीके साथ अरिष्टका प्रयोग करना चाहिये। दवा खानेके पहले अच्छी तरह मुँह साफ कर लेना चाहिये। कागके बीचमें शीशीका मुँह लगाकर दवा ढाली जाती है, नहीं तो बून्द टपकानेवाले यत्रसे दवा ढालनी चाहिये; परन्तु हर वार दवा ढालनेके पहले गरम पानी या सुरासारसे वह बून्द टपकानेवाला यन्त्र साफ कर लेना चाहिये। अर्कवाली दवा पथरी या चीनी मिट्टी अथवा काँचके वरतनमें खानी चाहिये। पुराना एनामेल, अलम्युनियम या लोहे आदिके वरतनमें भूलकर भी दवा न खानी चाहिये।

क्रम-निरूपन—कैम्फर, हैमामेलिस प्रभृति दवाएँ मूल अरिष्ट निम्न-क्रममें और नेट्रम-म्यूर, लाइकोपोडियम प्रभृति दवाएँ उच्च-क्रममें व्यवहृत होती हैं। जबतक खूब अभिज्ञता नहीं हो जाती, तबतक क्रमका निर्णय करना बहुत मुश्किल है; परन्तु साधारणतः नयी बीमारीमें निम्न-शक्तिकी और पुरानी बीमारीमें अवस्था-भेदके अनुसार उच्च शक्तिकी औषधोंका प्रयोग होता है। किस रोगकी किस अवस्थामें किस क्रमका प्रयोग करना होगा; वह (इस ग्रन्थमें हरेक रोगीकी चिकित्साके समय) प्रायः हरेक दवाकी बगलमें लिख दिया गया है। जिन स्थानोंपर दवाका क्रम या शक्ति नहीं लिखी गयी है, उनका क्रम-निर्द्धारणके लिये इस ग्रन्थका पाँचवाँ परिच्छेद "ग्रन्थोक्त भेषज-तालिका" अध्यायका चतुर्थ स्तम्भ देखिये।

औषधकी मात्रा—रोगीकी उमर और रोगकी अवस्थाके अनुसार, दवाकी मात्रा स्थिर करनी चाहिये। साधारेणतः 'पूरी उमरवाले आदमियोंके लिये' १ बून्द अरिष्ट १ तोला जलके साथ देना चाहिये। बटिका २, अनुबटिका ४, विचूर्ण १ ग्रेन। 'लड़कोंके लिये'—१ बून्द अरिष्ट १ तोला जलके साथ दो बार देना चाहिये। वटिका १, अनु-बटिका २; विचूर्ण आधा ग्रेन। 'छोटे शिशुके लिये'—१ बून्द अरिष्ट २ तोला पानीके साथ चार खुराककर देना चाहिये। वटिका आधी, अनुवटिका १; विचूर्ण चौथाई ग्रेन।

कितने समयका अन्तर देकर दवा देनी चाहिये ?—बढ़ी हुई नयी बीमारीमें १, २, ३ या ४ घण्टेका अन्तर देकर दवा खिलानी चाहिये। तुरन्त प्राण लेनेवाले रोगमें १० या १५ अथवा २० या ३० मिनटका अन्तर देकर दवा देनी चाहिये। पुराने रोगमें नित्य या सप्ताहमें एक वार या दो बार ही दवा देनी चाहिये। नये रोगमें चुनी हुई दवा दो तीन वार देनेपर यदि लाभ न हो, तो उसी दवाको दूसरे क्रममें देना चाहिये।

दवा देनेके सम्बन्धमें कुछ जरूरी बातें—होमियोपैथिक दवा दो या अधिक एक ही शीशीमें मिलाकर नहीं दी जाती; एक ही दवा एक वारमें दी जाती है। यदि एकदम ऐसा लक्षण दिखाई दे, कि दो दवाएँ जरूरी हैं, तो पर्यायक्रमसे अर्थात् एकके वाद दूसरी देनी चाहिये; परन्तु डनहम आदि विलक्षण डाक्टरगण 'पर्यायक्रमसे दवा' देनेका विरोध करते हैं।'

(खाली पेटमें) सवेरेका समय ही दवा खानेका मुख्य समय है। यदि वरावर खाना हो, तो भोजनके एक घण्टा पहले और एक घण्टा वाद खाना चाहिये। दवा खानेके एक घण्टा पहले और एक घण्टा बाद पान, तम्बाकू या अफीम खानेमें वाधा नहीं है। वुखारमें जब बदनकी

गर्मी कम होने लगे, तब दवा देनी चाहिये। हिस्टीरिया, अकडन वगैरह रोगोंमें आक्रमणके समय ही दवा देनी चाहिये। यदि किसी दवासे फायदा मालूम होता हो, तो जबतक फायदा दिखाई देता रहे, तबतक दवा बन्द रखनी चाहिये। ऐलोपैथिक, आयुर्वेदिक, हकीमी या किसी दूसरी तरहके इलाजके बाद, होमियोपैथिक मतके अनुसार, चिकित्सा आरम्भ करनेपर या बहुत अधिक होमियोपैथिक दवाका व्यवहार होनेपर, पहले दो तीन मात्रा कैम्फर या नक्स वोमिका ३० या व्यू क्रियम ३० का प्रयोग करनेके बाद, तब जरूरी चुनी हुई दवा देनी चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—दवा देनेके साथ-ही साथ कभी-कभी दूसरे उपाय करनेसे इलाजके काममें बहुत कुछ मदद की जा सकती है। दवा खिलानेपर यदि दस्त न हो, तो हलके गरम जलमें साबुन घोलकर मलद्वारसे पिचकारी देनी चाहिये। यदि विकारके कारण माथा गरम हो गया हो या सरमें जोरोंका दर्द हो, यदि नाक, मुँहसे खून गिरता हो, तो सरपर बरफ और ठण्डे पानीका प्रयोग करना चाहिये। कभी-कभी गरम पानीका सेंक या फ्लानेलसे सेंक भी जरूरी हो जाता है। पथ्यापथ्यपर भी इलाज करनेवालेको विशेष और सतर्क दृष्टि रखनी चाहिये।

औषध-सेवनके समय पथ्यापथ्य—साबूदाना, बार्ली, आरारोट, मिसरी, दूध, धानके लावाका माँड, मूँग या मसूरका शोरबा, कसेरू, *सिंहाडा, बेदाना, अनार, मैंगोस्टीन वगैरह रोगकी अवस्थाके अनुसार* सुपथ्य हैं। अदरख, मूली, कपूर, हींग, मिर्च, काली मिर्च, पियाज, लहसुन, पोस्तेका दाना, छोटी इलाइची, दालचीनी, लौंग, जावित्री प्रभृति गरम मसाले, नेबूका छिलका या छाल, लेमोनेड अथवा जो पीनेकी अम्ल-रस (acid) द्वारा तैयार होती हों, चाय, काफी, तुरन्तकी बनी पाव रोटी, खनिज पानी (mineral waters), गर्म-वीर्य शराब

(जैसे—ब्रांडी) प्रभृति चीजें दवा खानेके समय निसिद्ध हैं। बाहरी प्रयोगकी कोई दवा वैसिलिनके साथ तैयारकर व्यवहार करना भी ठीक नहीं है। होमियोपैथिक दवा सेवन करनेके समय नेबू, चूना इत्यादि चीजोंको भी कोई-कोई मना ही किया करते हैं; परन्तु हमारा ऐसा मत नहीं है; क्योंकि वे सभी (स्थूल) भोजनोंकी क्रिया और होमियोपैथिक (सूक्ष्म) दवाओंकी क्रिया समक्षेत्र (same plane) में नहीं हैं। भोजनकी चीजोंकी क्रिया भौतिक शरीर (material or physical body) के ऊपर होती है और होमियोपैथिक दवाकी क्रिया जीवनी-शक्ति (vital energy) पर होती है (Hahnemann's *Organon* para 148 देखिये)। तम्बाकू, गाँजा, अफीम वगैरह सेवन करने-वालोंको दवा खानेके एक घण्टा पहले और एक घण्टा बाद सब नशा खाना बन्द कर देना चाहिये। 'पथ्यापथ्य-निर्णय' और 'प्रस्तुति-प्रणाली' के सम्बन्धमें एक अलग अध्यायमें ही बहुत कुछ बताया गया है।

रोगके लक्षण और औषधका चुनाव

'रोग' किसे कहते हैं?—भीतरी लक्षण (अन्तर लक्षण) और बाहरी लक्षण (बाह्य लक्षण) के द्वारा शरीरके किसी अंशमें या यन्त्रमें हेर-फेर या विकार दिखाई दे, तो वह जीव-देहका (organism) "रोग" कहलाता है।

रोगका 'लक्षण' कहनेसे क्या समझा जाता है?—स्वास्थ्य खराब होनेपर शरीर और मनमें जो विकार पैदा हो जाते हैं, उन्हीं विकार-समूहोंका नाम "रोग लक्षण" (symptoms) है। जैसे—शरीरकी गर्मीका बढ़ना, नाड़ीकी चाल तेज, जोर-जोरसे साँस लेना,

छोड़ना, कमरमें दर्द, प्यास, भूख बन्द होना वगैरह बुखारके लक्षण हैं। इनमें पहले तीन लक्षणोंको बाहरी लक्षण (objective symptoms) कहते हैं, क्योंकि ये बाहर अर्थात् रोगीके शरीरमें दिखाई देते हैं। बाकी अन्तवाले तीन लक्षण, अन्तर लक्षण (subjective symptoms) कहलाते हैं, क्योंकि इन्हे रोगी अपने भीतर अनुभव करता है। यदि रोगी न बताये, तो जाने नही जा सकते।

औषधका 'लक्षण' कहनेपर क्या समझा जाता है ?—अच्छे भले शरीरमें जो दवाएँ खानेपर, शरीर और मनके जो-जो लक्षण प्रकट होते हैं, उन लक्षणोंको उस दवाका "लक्षण" कहते हैं। जैसे—स्वस्थ शरीरमें अधिक मात्रामें ऐकोनाइट मूल अरिष्ट खानेपर—प्यास, नाडीकी गति तेज, बदन सूखा, चेहरा लाल, पेशाबका रग लाल, जोर-जोरसे साँस लेना, छींकना प्रभृति लक्षण पैदा हो जाते हैं। इसीलिये इन्हें ऐकोनाइट दवाके लक्षण कहते हैं। औषधोंके लक्षण हमारी होमियो-पैथिक "भैषज-लक्षण-सग्रह" पुस्तकमें विस्तारसे और "पारिवारिक भैषज तत्व" में सक्षेपमें लिखे गये हैं।

औषधका चुनाव (Selection of Medicines)—किसी रोगके लक्षणोंका किसी दवाके सब या अधिकाश लक्षणोंके साथ मिलान होनेपर वही दवा, उस रोगकी सच्ची होमियोपैथिक दवा समझनी चाहिये। जैसे—तेज प्यास, तेज नाडी, सूखा चमडा वगैरह प्रादाहिक ज्वरके लक्षण पहले कहे हुए ऐकोनाइटके अधिकाश लक्षणके साथ मिलते हैं इसीलिये इस तरहके प्रादाहिक ज्वरमें ऐकोनाइटका प्रयोग किया जाता है। इस ग्रन्थमें हरएक रोग-चिकित्सा प्रकरणमें जो-जो दवाएँ लिखी हैं, वे सभी इस तरह चुनी हुई रहनेके कारण तुरन्त फायदा दिखानेवाली हैं (Consult *Boericke's compend of the Principles of Homœopathy*)।

इससे मालूम होता है कि होमियोपैथीकी सभी दवाओंकी परीक्षा पहले भले-चंगे शरीरपर होती है। इसके बाद "भेषज-लक्षण संग्रह", "भेषज-तत्व" या अन्य मेटिरिया-मेडिका ग्रन्थमें लिखी गयी हैं। परीक्षाके लक्षणोंका रोगीके रोग-लक्षणोंके साथ मिलाकर दवा यदि चुनी जाये—इसी अवस्थामें यह कहा जा सकता है, कि होमियोपैथिक सच्ची दवा मिली ; परन्तु कभी-कभी इस तरह ठीक ठीक रोग-लक्षण और दवाका ठीक-ठीक लक्षण मिलान करना, व्यस्त चिकित्सकोंके लिये असम्भव हो जाता है। इस हालतमें जिस दवाके विशेष लक्षणोंके साथ, किसी रोगके विशेष लक्षणोंका सादृश्य हो, तो वही दवा देनेपर वहुत जगह खासा फायदा दिखाई देता है। जैसे—कोई छोटा वच्चा सदा ही नाक खुजलाता और तकियेमें नाक रगड़ता है और सदा ही अपनी माँके कन्धेमें नाक रगड़ा करता है (क्रिमी थी कि नहीं, मालूम नहीं हुआ), यह लक्षण देखते ही साइना (Cina) खिलानेसे ही वच्चा अच्छा हो गया। एक डाक्टर वहुत-सी दवाएँ देखर भी वाधक-वेदना (मासिक ऋतु-स्रावके समयका दर्द) को कुछ लाभ न पहुँचा सके, तब उन्होंने स्त्री-चिकित्सामें सिद्धहस्त डाक्टर गैरेन्सीको सलाह करनेके लिये बुलाया। गैरेन्सीने इस रोगिणीका "भक्ति-भाव और लगातार वकवाद" देखकर उसे स्ट्रैमोनियम खिलाया और रोग वहुत जल्द अच्छा हो गया। अतएव यह कहना ही पड़ता है कि कभी-कभी दो-एक विशेष लक्षणोंकी ओर ध्यान रखकर दवा देनेपर भी आशासे अधिक लाभ हो जाता है ; परन्तु उसे पूर्ण होमियोपैथी नहीं कह सकते। **लक्षणोंको मिलाकर ठीक-ठीक दवा चुनना** ही हैनिमैनकी कही हुई पद्धति **होमियोपैथी** है।

'रोगके लक्षण' कैसे जानने चाहियें ?—(१) रोगीके पास वैठकर पहले उसके भीतरी लक्षण [जैसे जाड़ा लगना, सर घूमना, पैर ऐंठना, मुँहका तीता स्वाद, कलेजेमें जलन, डर, उद्वेग इत्यादि]।

(२) रोगका कारण तत्व [जैसे—सर्दी लगना, वृष्टि (वर्षा) में भीगना, गरिष्ट भोजन करना, भारी चीज उठाना इत्यादि]। (३) किस समय या किस अवस्थामें रोगमें कमी या वृद्धि होती है [जैसे—सवेरे रोगका बढ़ना, रातमें ११ बजे घटना, बदन दबानेसे आराम मालूम होना, हिलने डुलनेमें तकलीफ बढ़ना, बायीं करवट सोनेसे शान्ति] प्रभृति विषय धीरे-धीरे जान लेना चाहिये। इसके बाद (४) बाहरी लक्षण सब [जैसे—शरीरकी गर्मी, नाडी, जीभ, चमडा, वक्षस्थल, पाखाना, पेशाब वगैरहकी परीक्षा] इलाज करनेवालेको स्वयं जाँच लेना चाहिये और (५) अन्तमें रोगीकी वर्त्तमान और रोगके पूर्वकी अवस्थाके विशेष लक्षण सब [जैसे—प्रबल ज्वरमें शरीरमें बहुत दाह रहनेपर भी प्यास न होना या किसी रोगमें छोटे बच्चेका सदा ही नाक खुजलाना प्रभृति लक्षण] समझ और जाँचकर दवा देनी चाहिये। (Nash's *How to take the case* Doctor Yingling's *Suggestions to the Patient* और इस ग्रन्थका "रोग-लक्षण लिखनेका सबब" प्रकरण देखिये।)

इस ग्रन्थमें बताये हुए रोग-चिकित्साके समय जिन-जिन दवाओंका उल्लेख किया गया है, नवसिखुए विद्यार्थियोंकी सुविधाके लिये उनके प्रधान-प्रधान लक्षण भी दे दिये गये हैं। इनके अलावा यदि और भी ज्यादा लक्षण जानने हों, तो कोई अच्छी होमियोपैथिक मेटिरिया-मेडिका या भेषज-लक्षण संग्रहसे सहायता लेनी चाहिये। किसी-किसी रोगकी कई प्रधान दवाओंके लक्षण बता देने बाद, कुछ दवाओंके सिर्फ नाम दे दिये गये हैं, उनके लक्षण नहीं लिखे गये हैं। समझना चाहिये कि ये दवाएँ व्यस्त चिकित्सकोंकी सुविधाके लिये दी गयी हैं। उनका लक्षण जाननेके लिये भी कोई अच्छा "भेषज-लक्षण-संग्रह" देखना चाहिये।

अब शरीरकी गर्मी आदिकी कैसे परीक्षा करनी चाहिये, यही नीचे साधारण ढंगसे लिखा जाता है :—

शरीरकी गर्मी—शरीरकी गर्मी क्लिनिकल थर्मामीटर (उष्णतामान यन्त्र) द्वारा जाँच लेनी चाहिये।

तापमान यन्त्र पारा-भरा काँचका एक ऐसा नल होता है, जिसमें बीच-बीचमें लकीरें पड़ी रहती हैं, सबके नीचे पाराका थका रहता है, उसके ऊपर कुछ छोटी-बड़ी रेखाएँ और अङ्कका चिह्न रहता है। पहली बड़ी रेखा ९०° या ९५° डिगरी, इसके बाद ४ छोटी रेखाएँ रहती हैं, सभी एक-एक डिगरीका पाँचवाँ हिस्सा बताती हैं। हरएक बड़ी रेखा एक-एक डिगरी है। ९८ डिगरीके ऊपर दूसरी छोटी रेखाके ऊपर एक तीसरा चिह्न रहता है ; यह आदमियोंकी स्वाभाविक गर्मीको बताता है। इस तापमान यन्त्रका पारावाला हिस्सा रोगीकी बगल, जीभके नीचे या मलद्वारमें लगाकर गर्मीको जाँच की जाती है। उस समय ध्यान रखना चाहिये कि इसमें बाहरकी हवा न लगने पाये। १, २, ३ या ५ मिनटतक शान्त-भावसे बगलमें रखकर बाहर निकालकर उसे देखना चाहिये। पाराके थक्केसे सुईकी तरह एक पतली लकीर ऊपर उठ कर जिस खानेमें, जिस अङ्कके पास जाकर रुक जाये, शरीरकी गर्मी उतने ही अंशकी (डिगरी) समझनी चाहिये।

भले-चंगे शरीरकी गर्मी ९८.४° डिगरी, मुँहमें लगानेपर ९९.५° डिगरीतक बढ़ जाती है। यहाँ यह ख्याल रखना चाहिये कि यह माप सर्द मुल्कोंका है। भारतके अधिकांश मनुष्योंकी साधारण गर्मी ९७-९७½ डिगरी ही रहती दिखाई देती है। बहुत बलिष्ठ मनुष्योंकी ९८.४° रहती है। लड़कोंके शरीरकी गर्मी जवानोंके बनिस्वत कुछ ज्यादे रहती है और जवानोंकी बनिस्वत ४० वर्षसे ऊपरके मनुष्योंके शरीरकी गर्मी कुछ कम हो जाती है। नींद और विश्राम करनेके समय शरीरकी गर्मी डेढ़ डिगरी कम होती है। शरीरकी गर्मी अढ़ाई डिगरी बढ़ जानेकी बनिस्वत एक डिगरी कम हो जाना खटकेकी बात है। मैलेरिया बुखारमें मस्तिष्क-आवरक-झिल्ली-प्रदाह, फुस्फुस-प्रदाह आरक्त

ज्वर, मोह ज्वर और चेचक रोगमें शरीरकी गर्मी १०६° या १०७° डिगरीतक बढ़ जाती है, दूसरे बुखारोंमें १०३°, १०४° या १०५° डिगरीसे नीचे ही रहा करती है। यदि शरीरकी गर्मी ६६° डिगरीसे ऊपर चढ़ जाये या ६७° डिगरीके नीचे उतर जाये, तो समझना चाहिये कि कोई रोग हुआ है। ६६° से १०१° डिगरी सामान्य ज्वर, १०५° तक हो जाये, तो प्रबल ज्वर, १०७° हो जाये, तो साघातिक ज्वर और १०८° या ११०° हो, तो समझना चाहिये, कि जल्दी ही मृत्यु होगी। टाइफायड या आन्त्रिक ज्वरमें, दूसरे हफ्तेमें सन्ध्याके समय शरीरकी गर्मी १०२° या १०३° हो जाये तो साधारण बुखार समझना चाहिये; परन्तु यदि १०५° हो, तो डरकी बात हो जाती है। नये मैलेरिया बुखारमें १०६° डिगरी भी उतनी डरकी बात नहीं है, पर नये वात-रोगमें १०५° डिगरी या इससे भी ऊपर बढ़ना बहुत ही चिन्ता और आशंकाका कारण हो जाता है। सूतिका ज्वर अक्सर शरीरकी गर्मी १०५° तक बढ़ आया करती है। ६६° से ६०° डिगरीतक पतन अवस्था दिखाती है। हैजाके अलावा और किसी रोगमें शरीरकी गर्मी ६३° डिगरीतक उतरना बहुत ही खराब लक्षण है। हैजा रोगमें कभी-कभी हिमांग होकर ८० तक गर्मी उतर जाती है। तरुण और सविराम ज्वर (पारीका बुखार) और पुराने क्षय करनेवाले रोगमें यदि शरीरकी गर्मी एकाएक बहुत कम हो जाये, तो भयकी बात हो जाती है।

नाड़ी-स्पन्दन—भ्रूणकी नाड़ीकी चाल (स्पन्दन) फी मिनट लगभग १०१ बार। जन्मसे १ वर्षकी उमरतक भली-चंगी अवस्थामें फी मिनट १४०—१२० बार, २ से ५ वर्षतक ११५—६० बार, ६ से १५ तक ६०—८०, १६ से ६० वर्षतक ६६—७० बार और बुढ़ापेमें ६५—५० बार। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी नाड़ीका चलना फी मिनट प्रायः दस-पन्द्रह बार अधिक हुआ करता है। भोजन इत्यादि या कसरतके बाद नाड़ीकी चाल, स्वभाविक स्पन्दनकी बनिस्बत अधिक रहती है

और नींदमें या बिजली रातमें कम हो जाया करती है। यदि स्वाभाविक स्पन्दनसे २० बार कम स्पन्दन हो, तो समझना चाहिये कि जीवनी-शक्ति घट रही हैं। नाड़ी ठीक चल रही है ; परन्तु एकाएक रुक जाती है— यह अशुभ लक्षण है। नाड़ी क्षीण, पर वेगवती होना बहुत ही खराब लक्षण है (रक्त-संचालन यंत्रका पीड़ा अध्याय "नाड़ी" देखिये)।

श्वास-प्रश्वास—अच्छे-भले शरीरमें साँस लेना और छोड़ना (श्वास-प्रश्वास) धीरे-भावसे और सहजमें बिना किसी तकलीफ और आवाजके हुआ करता है। एक वर्षकी उम्रमें फी मिनट ३५ बार साँस ली जाती है ; दो वर्षकी उम्रमें २५ बार और १५ से पूरी उम्रतकके मनुष्योंका २०—१८ बार। साँसकी गतिका धीर होना शुभ लक्षण है और ठण्डी तथा जल्दी-जल्दी होना मौतका लक्षण है। वक्षस्थल या फुस्फुसके रोगमें साँसकी गति बढ़ जाती है। कमजोरीमें कम पड़ जाती है।

नाड़ी, साँस और शरीरके तापका परस्पर सम्बन्ध— शरीरकी गर्मी एक डिगरी बढ़नेपर, नाड़ीकी चाल १० बार और साँसकी गति २ बार बढ़ जाती है। स्वाभाविक शरीरका ताप ९८·४° डिगरी, तो नाड़ीका स्पन्दन ७२ और साँसकी गति १८—२० बार रहती है। शरीरका ताप १००° होनेपर, नाड़ी का चलना ९१ बार, साँसकी गति २२-२३ बार हो जाती है। साधारणतः एक बारके श्वास लेनेपर नाड़ी ४ बार चलती है।

जीभकी परीक्षा—रोग निर्णय करनेके लिये "जीभ" एक प्रधान सहायक है। इसका बदला हुआ जुदा-जुदा रंग देखकर सहजमें ही रोग पहचाना जा सकता है। चंगी अवस्थामें जीभ सदा ही सरस और निर्मल रहती है। तेज सान्निपातिक विकारमें और नये बुखारमें स्नायविक दुर्बलताके कारण जीभ सूख जाती है। लाल रंगकी जीभ, स्फोटक ज्वर (फोड़ेके कारण बुखार) या हाजमा-सम्बन्धी रोग बताती है। सफेद

लेप-चढ़ी हुई जीभके ऊपर लाल-लाल दाने पड़े हुए दिखाई दें, तो आरक्त ज्वर समझना चाहिये। जीभकी जड़का भाग या अगला भाग सूखा रहे, तो पैत्तिक ज्वर समझना चाहिये। सफेद जीभ खूनकी कमी या कमजोरीका लक्षण है। सूखी जीभ यदि तर हो जाये और आगेकी ओरसे साफ होती चले, तो समझना चाहिये कि रोग घट रहा है। जीभपर सफेद लेप-सा चढ़ा हो, कब्जियत या पाकाशयकी क्रियाकी गड़बड़ी समझनी चाहिये। जीभ यदि पीली हो, तो समझना चाहिये कि पित्त निकलनेके यन्त्रमें या यकृत-यन्त्रमें कुछ गोलमाल हो गया है या होगा। नीली आभा लिये हुए अगर जीभ हो, तो समझना चाहिये कि खूनके दौरानमें कुछ गड़बड़ी आ गयी है। काली जीभ अकसर अशुभ लक्षण मानी जाती है। आमाशय रोगमें यदि जीभपर काले रंगका दाग दिखाई दे, तो निस्तेज भाव या जीवनी शक्तिका नाश या तुरन्त मृत्यु होगी—यह मालूम होता है। पाण्डु-रोगमें जीभपर यदि काली पट्टी-सी चढ़ी मालूम हो तो समझना चाहिये कि यकृतका गहरा यान्त्रिक रोग हो गया है। चेचक रोगमें तो काली जीभ बहुत ही बुरा लक्षण है। जीभ बिलकुल ही हिल न सके या जीभ बाहर निकलकर एक ओर लटकी रहे तो समझना चाहिये कि मस्तिष्क अवश हो गया है। जीभपर घाव या छाले रहें, तो समझना चाहिये कि अच्छी तरह भोजन नहीं पचता है। काली या बैंगनी रंगकी जीभ देखकर यह समझना चाहिये कि नाड़ियोंमें रक्तका रुकना शुरू हो गया है।

मुखमंडल—मुखमंडल (चेहरा) शरीरके आइनेकी तरह है, अतः चेहरा देखकर भी शरीरकी बीमारीके विषयमें बहुत कुछ जाना जा सकता है। प्रसन्न चेहरा तन्दुरुस्तीकी निशानी है; परन्तु कलेजेके रोगकी तकलीफके बाद रोगीका प्रशान्त या प्रसन्न वदन दिखाई देना अच्छा लक्षण नहीं है। फुस्फुसके नये प्रदाह में चेहरा चिन्ता-भरा, सिकुड़ा हुआ और श्वासमें कष्ट दिखाई देता है। ललाई मुखमंडल धातु-

दौर्वल्यकी निशानी है। ज्वरके साथ कब्जियत रहनेपर, चेहरेकी मलिनता या आरक्त रोग, काले ओठ प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

गात्र-चर्म—शरीरका चमड़ा सूखा, रुखड़ा और उत्तप्त होनेपर बुखार समझना चाहिये। शरीरका ताप कम हो जानेके साथ-ही-साथ यदि दूसरे उपसर्ग भी कम हो जायँ और पसीना हो, तो अच्छा लक्षण है। यदि सब शरीरमें पसीना न होकर, किसी खास जगहमें पसीना हो, तो स्नायविक दुर्बलता और उस स्थानके नीचे प्रदाहका लक्षण समझा जाता है। नये ज्वरके छुटनेके समय पसीना हो, तो, रोगका छूटना समझा जाता है; परन्तु पुराने या जीर्ण ज्वरमें यदि बहुत पसीना रातके समय हो, तो समझना चाहिये कि यक्ष्मा प्रभृति क्षय करनेवाला रोग आरम्भ हो गया है। विषम प्रादाहिक ज्वरमें पसीना होनेपर भी यदि दूसरे-दूसरे उपसर्ग कम न हो जाये, तो अशुभ लक्षण समझना चाहिये। विषम ज्वर, मलेरिया ज्वर, सूतिका ज्वर और दूसरे-दूसरे तेज बुखारोंमें शीत और कँपकँपी होने लगती है। एकाएक बहुत अधिक पसीना होना अच्छा लक्षण नहीं है।

वमन और हिचकी—पाकस्थलीके रोग और मस्तिष्क-सम्बन्धी बीमारीमें तथा वक्षस्थल और फेफड़ा, जरायु वगैरह यंत्रोंकी क्रियामें गड़बड़ी होनेके कारण वमन होता है। कृमि, आमाशय या यकृतके प्रदाहके कारण "हिचकी" होती है।

दर्द—यदि किसी खास स्थानमें लगातार दर्द मालूम हो, दर्दवाली जगह गर्म हो और दबानेपर दर्द बढ़ता हो, तो समझना चाहिये कि यह दर्द प्रदाहके कारण उत्पन्न हुआ है। यदि दर्द हिलने-डुलनेपर बढ़ता हो, तो पेशीका दर्द है; घुटनेमें दर्द हो, तो वंक्षण (या जाँघके पुट्ठेकी गिल्टी) का प्रदाह समझना चाहिये। यकृतके प्रदाहमें, दाहिने कन्धेमें दर्द होता है और हृत्पिण्डके रोगमें बायीं बाँहमें दर्द होता है। पथरी रोगमें लिंगेन्द्रियके अगले भागमें दर्द होता है।

वक्षस्थल—वक्षकी परीक्षा खासकर तीन तरहसे होती है :—(क) दर्शन या देखकर, (ख) स्पर्शन या छूकर और (ग) आकर्णन या सुनकर होती है। (क) **दर्शन या देखकर**—रोगीको स्थिर भावसे बैठाकर स्थिर दृष्टिसे देखना चाहिये कि वक्षस्थल अच्छी तरह फैलता और सिकुड़ता है या नहीं। हर बार साँस लेने और छोड़नेमें ठीक-ठीक ऊँचा होता अथवा झुकता है या नहीं अथवा कोई जगह फूली तो नहीं है—इन बातोंपर भी ध्यान रखना चाहिये। (ख) **स्पर्शन या छूकर या चोट देकर**—(आघात) बायें हाथकी तलहत्थीको रोगी रोगीकी छातीपर रख, दाहिने हाथकी तर्जनी अंगुलीसे उसपर चोट देनेसे यदि ठन-ठन शब्द हो, तो समझना चाहिये कि स्वाभाविक अवस्था है ; टप्-टप् शब्द हो, तो फेफड़ेका प्रदाह, वक्षकी सूजन आदि समझना चाहिये। दमा रोगमें वक्षमें अधिक परिमाणमें हवा घुसती है, इसीलिये टन्-टन् शब्द होता है। (ग) **आकर्णन या सुनकर**—यह काम स्टैथस्कोप नामक यन्त्रकी सहायता से होता है। स्टैथस्कोप कई तरहका होता है। जैसे—काठका, सींगका, जर्मन सिलवरका और रबरका नल लगा हुआ। रोगीको चित्त सुलाकर अथवा शान्त स्थिर-भावसे खड़ाकर वक्षस्थलमें (हृत्पिण्ड और उसके बगलकी जगहमें) स्टैथस्कोपका छोटा मुँह लगाकर दूसरा चौड़ा मुँह कानमें लगा, परीक्षा करनी पड़ती है। रबरके स्टैथस्कोपका जो मुँह चौड़ा रहता है, वह छातीमें और छोटे दोनों मुँह कानमें घुसाकर परीक्षा करनी पड़ती है। स्वाभाविक अवस्थामें सों-सों शब्द सुन पड़ता है। श्वासनली-प्रदाह, दमा, खाँसी, यक्ष्मा खाँसी प्रभृति रोगोंमें कितने ही बाजों-जैसी ध्वनि सुन पड़ती है। यदि बलगम अधिक रहता है, तो घरघर शब्द सुन पड़ता है। फुस्फुस-प्रदाहमें केश घसनेकी तरह और फुस्फुसको ढँकनेवाली झिल्लीके प्रदाहमें खस-खस शब्द होता है (विशेष विवरण हमारे "वक्ष-परीक्षा" ग्रन्थमें देखिये)।

मल—स्वाभाविक मलका रंग पीला होता है। मटमैला, भूरा या कीचड़की तरह पाखाना होनेपर पित्तका हिस्सा कम या यकृतका दोष हुआ है समझना चाहिये। काला, भूरा या बहुत पीला दस्त होनेपर पित्तका भाग अधिक और हरे रंगका मल (विशेषकर शिशुको) पाकाशयका अम्लत्व बताता है। पाखानेके साथ रक्त-मिला हुआ श्लेष्मा रहे, तो अंत्र-प्रदाह और मल कड़ा और सूखा हो, तो समझना चाहिये कि अँतड़ियोंकी क्रियामें गड़बड़ी हो गयी है। मांड़ या चावलके धोवनकी तरह दस्त होनेपर हैजा समझना चाहिये या यकृत, प्लीहा आदि बीमारियोंमें मल लाल रंगका हो, तो समझना चाहिये कि उसमें रक्त मिला है। आप-ही-आप या अनजानमें पाखाना (रोगीको मालूम भी न हो) हो जाना बड़ा ही खराब लक्षण है; यह अकसर मृत्युकी निशानी माना जाता है।

मूत्र—स्वाभाविक अवस्थामें जवान आदमियों को डेढ़ सेर पेशाब होता है। यकृत रोग होनेपर, घोर पीले रंगका पेशाब होता है या पेशाबमें नीचे कुछ जम जाता है। बुखारकी हालतमें नाड़ीमें वेग मौजूद रहनेपर, पेशाब कम और लाल होता है। यदि पेशाब वजनमें ज्यादा और साफ हो तो स्नायविक:पीड़ा समझना चाहिये। पेशाब करनेके बाद ही यदि पेशाब दूधकी तरह या चूनेके पानीकी तरह सफेद हो, तो क्रिमि-दोष; पेशाबमें चीनी हो, तो मधुमेह समझना चाहिये। पेशाब धुमैला हो, तो समझना चाहिये कि उसमें रक्त वर्त्तमान है! यदि पेशाब गहरे लाल रंगका हो, तो उसमें समझना चाहिये कि अम्लत्व (acidity) है और पेशाब गहरा गेहुँआ या काले रंगका हो, तो समझना चाहिये कि रोग बहुत बढ़ गया है। (हमारा "मूत्र-परीक्षा" ग्रन्थ देखिये)।

स्वास्थ्य-रक्षा-सम्बन्धी कई आवश्यक बातें

स्वास्थ्यको हमेशा बनाये रखनेके लिये नीचे लिखी बातोंपर विशेष ध्यान रखना होगा। जैसे—खाद्य (भोजनकी सामग्री), पानी, रोशनी, हवा, पोशाक और स्नान वगैरह।

आहार—यह धारणा गलत है कि पुष्टिकर या बल देनेवाला पदार्थ खानेसे ही शरीर भला-चगा और सबल रहता है। खानेके पहले देखना चाहिये कि वह खाद्य पदार्थ पचानेकी शक्ति उसमें है या नहीं। भोजन पचानेका काम परिश्रमपर ही बहुत कुछ निर्भर करता है। बहुत अधिक परिश्रम करनेपर उसी तरहका पौष्टिक भोजन करनेकी जरूरत पड़ती है; परन्तु अधिक खाना उचित नहीं है। उमरके अनुसार भोजनकी सामग्री और उनका वजन ठीक कर लेना चाहिये। थोड़ा खानेवालोंके लिये पौष्टिक भोजनकी जरूरत है। जाड़ेके समय और शीत ऋतुमें चर्बी-मिला भोजन उपयोगी है और इस समय गर्मीकी दिनोंकी अपेक्षा कुछ अधिक खा लेनेमें भी हानि नहीं है।

ज्यादा लाल मिर्च, काली मिर्च और गरम मसाले मिली उग्र चीजें खाना मना है। अच्छी तरह पकाया हुआ, हल्का भोजन धीरे-धीरे चबाकर खाना चाहिये। तरकारी बीच बीचमें अदल-बदल करते रहना चाहिये। भोजनके बाद ठण्डा पानी न पीना ही अच्छा है; क्योंकि ठण्डा पानी पाकस्थलीमें जाकर वहाँकी गर्मीको दबा देता है, इसलिये पाचन क्रियामें गड़बड़ी पैदा हो जाती है। जिसे अजीर्ण रोग हो, उसे भोजनके बाद थोड़ा हल्का गरम पानी पीना चाहिये। भोजनके बाद थोरी देरतक विश्राम करना भी उचित है।

पाकस्थली बहुत देरतक खाली पड़े रहनेसे भी स्वास्थ्य नष्ट हो सकता है। दिनके आहारकी बनिस्बत रातका भोजन कुछ अधिक सीधा-सादा होना जरूरी है। सोनेके समय पाकस्थली एकदम खाली

या ठसमठस भरी भी न रहनी चाहिये। सोनेसे कम-से-कम एक घण्टा पहले भोजन करना चाहिये। जो बहुत राततक लिखने-पढ़नेमें लगे रहते हों, उन्हें सोनेके पहले बहुत थोड़ा भोजन करना चाहिये। बहुतोंकी ऐसी धारणा है कि बुढ़ापेमें अधिक खानेसे बहुत दिनोंतक जीवीत रहा जा सकता है; परन्तु यह बड़ी भारी भूल है। प्रौढ़ अवस्था आनेपर धीरे-धीरे आहार घटा देना चाहिये।

खाद्य साधारणतः चार प्रकारका होता है :—जैसे—(१) "छाना जातीय" या मांस-गठक आहार (जैसे—छाना, मछली, मांस, अण्डेका सफेद हिस्सा, दाल आदि)—इनसे हमारा पोषण और मांस-पेशियोंकी क्षय पूर्त्ति होती है। (२) "स्नेह या मक्खन-जातीय खाद्य" (जैसे—घी, मक्खन, तेल, चर्वी आदि)—इनके द्वारा हमारे शरीरकी रक्षाके लिये आवश्यक गर्मी मिलती है और मेहनत करनेकी ताकत भी अच्छी तरह उत्पन्न होती है, साथ ही हमारे शरीरका मेद भी कुछ-कुछ गठित होता है। (३) "शर्करा-जातीय खाद्य" (जैसे—चीनी, मिसरी, गुड़, खजूरका रस, चावल, चूड़ा, लाई, धानका मीठा लावा, चना, साबूदाना, बार्ली, आरारोट, शटी, मैदा, आलू इत्यादि)—इनके द्वारा हमारे शरीरकी गर्मी और काम करनेकी शक्ति और मेद भी बहुत कुछ गठित होता है। (४) "लवण-जातीय खाद्य" (जैसे—खाद्य नमक, लौह-घटित लवण, चूना-घटित लवण, दाल आदि)—इनके द्वारा हमारा रक्त शुद्ध होता है और शरीर के यंत्र और हाड़ दुरुस्त होते हैं। वास्तवमें यदि नमक न खाया जाये, तो हमारा जीना असम्भव हो पड़े।

भात, दाल, रोटी, तरकारी, घी, तेल, गुड़, नेबू, फल-मूल, आलू, मछली, मांस, दूध, पानी वगैरह खाने-पीनेकी सामग्री से हमलोग शारिरीक रक्षाके लिये उपयोगी छाना, मक्खन, चीनी और नमक-जातिके उपदान जितना चाहिये, उतना संग्रहकर देहका पोषण करते और जीवित रहते

है। सिर्फ दूध और अडेमें ये ऊपर कहे हुए चारों तरहके उपादान एक साथ ही मौजूद रहनेके कारण हमलोग सिर्फ दूध या सिर्फ अण्डा खाकर जीवित रह सकते हैं।

हमारी भोजनकी सामग्रीमें किस किसमें क्या क्या मिलावट रह सकती है, उसकी सूची नीचे दी जाती है :—

(१) अमावटमें—खट्टे आमका रस और रेशा, इमली, गुड और मैदा।

(२) आँटेमें—सफेद खडी, चूना, चीनी, मिट्टी, भूसी, चावलका पिसान, चनेका सत्तू और खडिया मिट्टी।

(३) आरारोटमें—चावलका पिसान, भुट्टे (मकई) का पिसान आलूका मैदा।

(४) घीमें—नारियलका तेल, पोस्ताका तेल, कुसुमके बीजका तेल, महुआका तेल, रेंडीका तेल, मूँगफलीका तेल, "वैसेलिन" चर्बी, चावलके पीसानके साथ पीसा हुआ केला, अरवी या सकरकन्द, बाजरा और जुआरका चूर। खूब खराब या सडे घी के साथ थोरा ताजा दूध या दही और कुछ अच्छा घी डालकर औंटनेमे अच्छे घीकी बहुत सुगन्ध आती है, इसमे लोग सहज ही धोखेमें आ जाते हैं कि घी अच्छा है।

(५) चावलमें—टूटा कीडे लगा दाना, वर्माका चावल, चूनेकी बुकनी।

(६) दूधमें—"फूका" देकर बीमार गायके दूधसे मक्खन निकालकर, बताशा, कितनी ही बार पुराने तालावका सडा जल, भैंसका दूध और सिंघाडेकी बुकनी मिली रहती है।

(७) दालीमें—शटीको बुकनी, चनेका सत्तू, आलूका मैदा, केसुआका मैदा, गेहूँका मैदा।

(८) शहदमें—चीनी और "जिलाटीन" नामक एक तरहका आमिष पदार्थ।

(९) मक्खनमें—सोरगोंजाका तेल, तिलका तेल, वैसेलिन, मोम, चर्बी, नारियलका तेल, केला (पीसा हुआ)।

(१०) मांसमें—वकरेके मांसमें वकरीका मांस, वधिया वकरेका मांस, यहाँतक कि मरे जन्तु या किसी भी जन्तुका मांस।

(११) सरसोंके तेलमें—सोरगोंजा विनोला, तिल, पोस्तेका दाना, मूँगफलीका तेल, "ब्लूमलेस आयल" नामक किरासन तेल और लाल मिर्चकी बुकनी।

दूध—पहले ही कहा जा चुका है कि दूधमें चारों प्रकारकी खानेकी सामग्री अच्छी तरह है, इसलिये दूधको "पूर्ण खाद्य" कहा जा सकता है अर्थात् सिर्फ दूध पीकर ही हमलोग जीवित रह सकते हैं। लड़कपनमें माँका दूध ही हमारा आहार है। गधीका दुध, वकरीका दूध, भेंड़ीका दूध या (बर्दास्त हो तो) भैंसका दूध भी मजेमें काममें लाया जा सकता है। विना उवाला कच्चा दूध पीना फायदेमन्द जरूर है; क्योंकि उवालनेसे दूधका विटामिन (vitamin—पुष्टिकारक उत्कृष्ट गुण) वहुत कुछ कम हो जाता है; परन्तु हमारे यहाँ गाय आदि पशु वहुत गन्दी जगहमें रखे जाते हैं और उसी अवस्थामें दुहे जाते हैं, इसलिये उनका कच्चा दूध पीना भयसे खाली नहीं है। सिर्फ दूध न पीकर यदि उसके साथ चीनी, मिसरी, भात या वार्ली प्रभृति मिलाकर काममें लाया जाये, तो वह जल्दी हजम हो जाता है।

बच्चे दूधमें मथनी देकर मथनेपर जो चीज ऊपर तैरने लगती है, उसे "मक्खन" कहते हैं। कुछ गर्म दूधमें थोड़ा दहीका जोरन या न मिले तो कोई दूसरी खट्टी चीज डाल रखनेसे वह दूध जम जाता है, यह "दही" कहलाता है। ताजे दहीको इस तरह मथनेपर जो चीज इस

तरह तैरने लगती है, उसे "ननी" कहते हैं और नीचे जो पानी-सा रह जाता है, उसे 'मट्ठा' कहते हैं। किसी-किसी रोगीके लिये यह मट्ठा बड़े फायदेकी चीज है। खूब गर्म दूधमें छानेका पानी या फिटकिरी या नेबूका रस या कोई दूसरा खट्टा पदार्थ डालनेसे दूध फट जाता है और "छाना" तैयार होता है। इस छानेके नीचे जो पानी रहता है, वही "छानेका पानी" कहलाता है। यह छानेका पानी भी बलकारक सुपथ्य है।

चाय पीना—साधारणतः स्वास्थ्यके लिये चाय पानी फायदेमन्द है। जो बहुत घूमते या परिश्रम करते हैं, उनके लिये या कफ-प्रधान धातुवालोंके लिये चाय पीना उतना हानिकर नहीं है। इसके व्यवहारसे बहुत कुछ थकावट दूर हो जाती है। चायके साथ कुछ फल-मूल या जिनमें पचानेकी खूब ताकत हो, वे थोड़ी मछली, मांस, अंडा या छाना-जातीय कुछ चीज खायें, तो और भी अच्छा होता है।

चाय पीनेसे हानि—बहुत चाय पीने अर्थात् दिनभरमें एक बारसे अधिक चाय पीनेसे अजीर्ण ; भूख न लगना, कलेजा धड़कना, मानसिक उद्वेग, नींद आना प्रभृति उपसर्ग पैदा हो जाते हैं। ऐसी हालतमें चाय पीना बन्द कर देना चाहिये। मछली, मांसके साथ चाय न पीकर मांस, मछली खानेके एक घण्टे बाद यदि चाय पी जाये तो अच्छा है। सोनेके ठीक पहले चाय पीना मना है। जिनमें चर्बी अधिक हो, उन्हें चीनीके बदले नेबूका रस डालकर चाय पीनी चाहिये। इससे फायदा होता है।

काफी—चायकी तरह काफी पीनेसे नशा नहीं आता और उससे फुर्ती भी आती है। काफी पीनेसे परिश्रम करनेकी थकावट, सुस्ती आदि दूर हो जाती है।

काफी पीनेसे नुकसान—चायकी तरह अधिक काफी पीनेसे सर-दर्द, नींद न आना, सपने देखना, मानसिक उद्वेग, छाती धड़कना

और अजीर्ण आदि उपसर्ग पैदा हो सकते हैं। काफी पीनेसे किसी-किसीको पाखाना साफ होता है। किसी-किसीका कोठा और भी कड़ा हो जाता है। कब्जियत हो जाती है। चायकी अपेक्षा इसमें उत्तेजक शक्ति अधिक है और यह हाजमाको अधिक नुकसान पहुँचाती है।

पानी—साफ पानी ही सबसे बढ़िया पानीकी सामग्री है। शुद्ध पानी पेशियोंको मजबूत बनाने और शरीरके बढ़नेमें मदद पहुँचाता है, इसलिये यह स्वास्थ्य और जीवनी-धारणके लिये बहुत जरूरी है। पानीके बिना खाया हुआ पदार्थ पचता नहीं है; इसलिये साफ और शुद्ध पानी बहुत ही फायदेमन्द और आवश्यक है।

साफ पानी कैसे मिलता है?—नद, नदी, समुद्र, झरना वगैरहका जल कितने ही धातु और विषैले पदार्थ मिले रहनेके कारण पीनेके काममें लाने लायक नहीं रहता। यहाँतक कि उससे भोजन बनाना या स्नान करना भी भयसे खाली नहीं है। साफ और शुद्ध पानी, गहरे कूएँ या वृष्टिसे मिल सकता है। जलाशय, तलैया, कूआँ, चौबच्चे वगैरहमें बीच-बीचमें, विशेषकर जाड़ा आनेके पहले या गर्मीके पहले—पानी कम हो जानेपर कम-से-कम एक बार साफ कर देने चाहियें। जलाशयको बीच-बीचमें साफ न करनेसे नुकसान होता है। यद्यपि यह हानि तुरन्त दिखाई नहीं देती, तथापि होती अवश्य है।

किसी भी फिल्टर (filter)को काममें लाना भी भयसे खाली है—यह समझना भारी भूल है। अधिकांश फिल्टरोंसे फायदेके बदले नुकसान ही होता है।

कूएँके पानीका ऊपरी भाग साफ-सुथरा दिखाई देनेपर भी 'अंगाराम्ल वाष्प' (carbonic acid gas) उसमें मिली रहनेके कारण, उसको काममें लाना भी भयसे खाली नहीं है। उसकी बनिस्बत कूएँके नीचेका पानी शुद्ध होता है, इसलिये उसे ही बेखटके व्यवहारमें लाया जा सकता है।

पोशाक—भोजनके साथ-ही-साथ पोशाकके विषयमें भी संयमकी बहुत जरूरत है। पहननेके कपडेमें देहको गरम करनेकी कुछ ताकत नहीं रहती, देहकी गर्मीको बनाये रखनेके लिये ही कपडे पहने जाते है। खाली शरीरपर फ्लानेल पहन लेनेसे नुकसान होता है। वृथा ही बहुतसे कपड़े पहनकर सर्दी-गर्मी न सहने लायक बना डालना भी अच्छा नहीं है, इसलिये लडकपनसे ही शरीरको कष्ट सहने लायक बनाना चाहिये। पसीनेके साथ-साथ हमारे शरीरसे बहुत-सा मैल (क्लेद) बराबर निकल जाया करता है, उसका दाग कपडेपर मौजूद रहता है ; कहना वृथा है कि वह शरीरके लिये नुकसान पहुँचानेवाला है। इसलिये पहननेके कपडे हमेशा साफ-सुथरे रखना, यहाँतक कि रोज धोकर धूपमें सुखा लेना बहुत ही फायदेमन्द होता है। रातमें सोनेके समय कसा कपडा पहनना नुकसान पहुँचाता है। जूतेका फीता भी कसकर बाँधना उचित नहीं है।

हवा—जीवन और प्राण धारणके लिये हवा बहुत ही जरूरी चीज है। इसीलिये प्राचीन-कालके विद्वानोंने उसे "जगत प्राण" कहा है। अशुद्ध हवा सेवन करनेपर यद्यपि मनुष्य तुरन्त नहीं मर जाते ; परन्तु उनके शरीर, मन स्वास्थ्य सभी नष्ट हो जाया करते हैं। रोगी और दुबले आदमियोंके लिये तो यह बहुत नुकसानकी चीज है। हमारी साँसके साथ सदा ही "अंगाराम्ल वाष्प" (carbonic acid gas) निकला करती है। यह जीवनको नष्ट करनेवाली है। जिस कमरेमें बहुतसे आदमी रहते हैं, उसमें साफ हवाका बाहरसे बराबर आना-जाना न रहनेके कारण, वह कमरा हमारी साँससे निकले हुए "Carbonic acid gas" से भर जाता है और बहुत देरतक ऐसी हवाका सेवन करनेपर मृत्यु हो जानेका भी डर रहता है—इसलिये सोनेकी कोठरी या बैठकखानेमें ऐसी हवा बाहर निकल जानेका पूरा प्रबन्ध रहना चाहिये और बाहरसे दूसरी साफ हवा आनेके लिये भी बडी-बडी खिडकियों और दरवाजोंका रहना बहुत जरूरी है।

कितने ही स्कूल, कालेज, होस्टेल और गृहस्थोंके मकानोंमें अच्छी हवाके आगमनका प्रबन्ध ठीक-ठीक नहीं रहता, इसका नतीजा बुरा होता है ।

सूर्यकी रोशनी—शरीरकी सुन्दरताको बढ़ाने और जीवन-धारणके लिये सूर्यकी रोशनी बहुत जरूरी है । स्वस्थ और निरोग रहनेके लिये छोटे, बच्चे, बड़े सबको ही कुछ देरतक रोशनीसे भरी जगहमें (खुले स्थानमें) घूमना चाहिये । जहाँ सूर्यकी रोशनी नहीं पहुँचती, वे सभी स्थान बीमारीके घर हैं । जहाँ सूर्यकी रोशनी पहुँचती ऐसी जगहोंमें हैजा, शीतला प्रभृति प्राण ले लेनेवाले रोगके कीड़े सहजमें ही नष्ट हो जाते हैं, इसीलिये रहनेका मकान इत्यादि ऐसा बनना चाहिये, जिसमें सूर्यकी रोशनी काफी पहुँच सके ।

कसरत—व्यायाम या कसरत सबके लिये लाभदायक नहीं है । रोगी, और कमजोर मनुष्योंको व्यायामसे नुकसान होता है । "डण्ड" लगाना, मुद्गरकी जोड़ी हिलना, तैरना, तेज चलना, ये सभी बहुत अच्छी और शरीरमें फुर्ती पैदा करनेवाली कसरतें हैं । नित्य ये बँधे समयपर खुली हवामें सवेरे या तीसरे पहर कुछ देरतक व्यायाम करनेसे शरीर अच्छा रहता है ।

स्नान—भले-चंगे मनुष्यके लिये पानीमें डुबकी लगाकर स्नान करना फायदेमन्द है । नहानेसे पहले समूचे शरीरमें तेल लगाना फायदा करता है । रोज नहानेके समय बदन जरूर रगड़ना चाहिये । पहले सरपर थोड़ा पानी डालने बाद, दूसरे अंगोंपर पानी डालना चाहिये । सवेरे खाटसे उठनेके बाद जो कसरत करते हैं, इन्हें ठहरकर नहाना चाहिये । समुद्रके पानीमें नमक मिला रहता है, इसलिये उस पानीमें नहाना स्वास्थ्यके लिये लाभदायक है । यदि समुद्रका पानी न मिले, तो नहानेके पानीमें थोड़ा नमक मिलाकर नहाना अच्छा है । ताकतवर

आदमियोंको सबेरे और कमजोर मनुष्योंके लिये ९-१० बजे नहाना अच्छा है।

बहुत गर्म (hot) पानीका ताप ८८°—११२° डिगरी है ; गर्म (warm) पानीका ताप ९२°—९८° ; हलके सुसुम गर्म पानीका ताप ८५°—९२° ; शीतल (cool) पानीका ताप ६०°—७५° और ठण्डे (cold) पानीका ताप ४०°—६०° डिगरी रहता है।

हैनिमैनके बताये हुए नये और पुराने रोगोंके लक्षण

स्वास्थ्यके नियमोंको न माननेके कारण या शरीरमें कोई विष घुस जानेके कारण, शरीरकी अवस्थामें उलट-पलट हो जाता है, इसीका नाम "बीमारी" या "रोग" है।

बीमारी—खाने पीनेके दोषसे, ज्यादा सर्दी या गर्मी लगनेके कारण, ऋतु बदलनेके समय होशियार न रहनेकी वजहसे, शोक, क्रोध आदि मानसिक उत्तेजनाओंके कारण, बहुत मेहनत करने, सीड-भरी जगहमें रहने वगैरह स्वास्थ्यके नियमोंको न मानकर चलनेके कारण शरीरकी अवस्थामें जो उलट-पलट या हेर-फेर हो जाता है, उसे बीमारी (*साधारणत• रोग कहते हैं*)। खाने-पीनेमें सयम या उपवास, जाडे, गर्मी या दूसरी ऋतुओंके लिये उपयोगी भोजन, वस्त्र आदिका प्रबन्ध, हवादार और साफ-सुथरे मकानमें रहना प्रभृति स्वास्थ्यके नियमोंको पालनकर जो इस बीमारीके मूल कारणको हटा सकता है, स्वय ही (अर्थात् बिना दवाके सेवन किये) आराम हो सकता है।

रोग (*disease*)—खूनमें कोई विष फैलनेके कारण शरीरकी हालतमें जो अदल-बदल होता है, उसका नाम "रोग" (या पीडा अथवा व्याधि) है। रोग पैदा करनेवाले ऐसे विष (virus) को "रोग बीज

(disease-germs—जीवाणु या उद्भिज्जाणु)" अथवा "कल्मष (miasms)" कहते हैं।

केण्टका कथन है कि कल्मष दो प्रकारका होता है :—नया और पुराना। जैसे—खसरा-विष, चेचक-विष, प्लेग-विष प्रभृति "नये कल्मष" हैं और प्रमेह-विष, उपदंश-विष प्रभृति "पुराने कल्मष" हैं। दोनों तरहके कल्मषोंका संक्रमण क्षणभरमें ही हो जाता है और उसी समय समूचा स्नायुमंडल दूषित हो जाता है। इस संक्रमणके बाद उसमें अंकुर पैदा होते हैं और वे बढ़ने लगते हैं। "नया विष" (acute miasms, जैसे—खसरा-विष) संक्रमण होनेपर रोगीकी देहमें उसका "प्रभाव या पूर्वाभास" (prodrome), "बढ़ना या विकास" (progress) और "ह्रास या क्षय" (घटना—decline)—ये तीन अवस्थाएँ एकके बाद दूसरी आ जाती हैं और "ह्रासावस्था" (घटना) अकसर ही आरोग्यकी अवस्थामें बदल जाती है (अर्थात् नया विष शरीरसे एकदम निकल जाता है); परन्तु पुराना या चिर-कल्मष (chronic miasms, जैसे—उपदंश-विष) फैल जानेपर, रोगीके शरीरमें उसका "प्रारम्भ" या "बढ़ना"—ये दो ही अवस्थाएँ दिखाई देती हैं और "ह्रासावस्था" नहीं रहती (अर्थात् मरनेके समयतक रोगीके शरीरमें मौजूद रहता है और सच्ची होमियोपैथिक दवा सेवन किये बिना वह विष किसी तरह निकल नहीं सकता)। चिर-कल्मषका दूसरा नाम "धातुगत-विष" या "धातु-दोष" (dyscrasiæ)।

शरीरमें ऊपर बताया हुआ "तरुण" और "पुराना" विष संक्रमणके कारण रोग भी दो तरहके हुआ करते हैं। जैसे—"तरुण (acute ऐक्यूट) रोग" और "पुरातन या चिर (chronic क्रानिक) रोग।"

तरुण (नया) और चिर-रोग (पुराना)—शरीरमें कोई "नया विष (या जीवाणु)" प्रवेश करनेसे जो रोग पैदा होता है, उसे

"तरुण या नया (acute)" रोग कहते हैं। चिर-रोग (पुरानी बीमारी) के सम्बन्धमें हैनिमैनने "क्रानिक डिजिज" नामक ग्रन्थमें लिखा है कि धातुगत कोई पुराना विष (जैसे—कच्छु-विष, उपदंश-विष या प्रच्छन्न प्रमेह विष) शरीरमें प्रवेश कर जानेपर जो व्याधि उत्पन्न होती है, उसे पुराना या चिर (chronic) रोग कहते अर्थात् नया रोग (जैसे—खसरा या छोटी माता) शरीरके भीतर कोई "नया विष" (जैसे—खसरा विष) फैलनेका परिणाम है और चिर रोग (जैसे—उपदंश) शरीरके भीतर "धातुगत" कोई पुराना विष (जैसे—उपदंश-विष) फैलनेका फल है। नये रोगमें "प्रारम्भ (prodrome)", "वर्द्धन (बढ़ना progress)" और "ह्रास (घटना decline)"—ये तीन अवस्थाएँ एकके बाद दूसरी हुआ करती है और यह अक्सर "आरोग्य" अर्थात् पुरानी बीमारी (या कभी मृत्यु) में बदला करती हैं; परन्तु चिर-रोग अर्थात् पुरानी बीमारीमें "प्रारम्भ और वर्द्धन"—ये दो ही अवस्थाएँ हुआ करती है और 'ह्रासावस्था' या घटनेकी अवस्था नहीं रहती अर्थात् जबतक शरीर रहता है, तबतक इसका विष मौजूद रहता है। इसीसे मालूम होता है कि "नया रोग" आरोग्य-प्रवण है (having a tendency to recovery—जिसका झुकाव आराम होनेकी ओर रहता है) और "चिर-रोग" कभी 'आरामकी ओर जाने-वाला नहीं, बल्कि हमेशा बढ़नेवाला (पुरानी बीमारी)* (having a continuous progressive tendency बढ़नेकी ओर ही प्रवणता

---

* पाठकोंको स्मरण रखना चाहिये कि "तरुण रोग (नयी बीमारी)" इन दो शब्दोंका जैसा अर्थ एलोपैथिक लिखा जाता है, होमियोपैथिकमें ये दोनों शब्द वैसे ही अर्थमें नहीं लिये जाते—जिन रोगोंका स्थितिकाल दो महीनेसे अधीक नहीं है, वे ही एलोपैथिकके अनुसार तरुण (acute) रोग हैं। दो महीने बादसे दस-बारह महीनेतक वह रोग "बहुत तरुण" नहीं (sub-acute) रोग कहलाता

and with no tendency to recovery आरोग्य-प्रवणता नहीं) होता है। "नयी बीमारी" दो-एक मनुष्य (sporadically) या एक देशमें (endemically) बनी रहती है अथवा बहुत व्यापक आकार (epidemically) में दिखाई देती है और "चिर-रोग" वंश-परम्परा-तक चला करता है और उसके उद्भेद आदि चर्म-रोग शरीरके बाहरी भागसे शरीरके भीतरी अंशमें घुसते हैं (अर्थात् बहुत-सी एलोपैथिक दवाएँ खानेके कारण चर्म-रोग दबकर (suppressed) शरीरके भीतरी यंत्रोंपर हमला करता है और बहुतसे भयंकर लक्षण पैदा कर देता है। "नयी बीमारी" बिना दवाके ही आराम हो सकती है ; परन्तु धातु-दोषको दूर करने वाली दवाएँ सेवन किये बिना पुराना रोग कभी आराम नहीं होता।

जायुज-व्याधि—ऊपर कहे "तरुण और पुरातन" रोगोंके अलावा हैनिमैनने एक प्रकारका रोग और भी बताया है। किनाइन, अफीम पारा, संखिया या नाना प्रकारकी पेटेण्ट दवाएँ अधिक मात्रामें बहुत दिनोंतक सेवन करनेकी वजहसे, चिर-रोगके जैसे लक्षण रोगके शरीरपर दिखाई देने लगते हैं ; इन्हें वे "जायुज-व्याधि" (drug-diseases) कहते हैं। रोगीके किसी एक अंग या सब अंगोंका बढ़ना या दुबला हो जाना ; समझने या अनुभव करनेकी शक्तिका बढ़ना या कम हो जाना, यकृत प्रभृति यंत्रोंका कोमल, कड़ा या घाव-भरा हो जाना, "जायुज-व्याधि" का प्रधान लक्षण है ('जायुज-व्याधि' अध्याय देखिये)।

है ; उससे भी अस्थायी रहनेपर उस रोगका नाम "पुरातन या चिर (chronic) रोग" होता है।

होमियोपैथिकमें "तरुण रोग" और "चिर-रोग" किस अर्थमें व्यवहृत होता है, उसका व्याख्या ऊपर की गयी है।

'जायुज-व्याधि' के साथ "धातु-दोष" मिल जानेपर वह अकसर दुरारोग्य हो जाता है।

चिर-रोगकी चिकित्साका संकेत—"पुराने रोगका इलाज" बड़ा ही मुश्किल काम है। चिर-रोगकी प्रकृतिका निर्णयकर दवा चुनना और उसे आराम करना होमियोपैथिक चिकित्सा करनेवालेकी बहुत बड़ी परीक्षा और अभिज्ञताका द्योतक है। अभी ऊपर कहा जा चुका है कि चिर-रोगका विष "शरीरके बाहरी भागसे भीतर घुसा करता है।" इसलिये (हैनिमैनके मतसे) जिन होमियोपैथिक दवाओंकी क्रिया "शरीरके भीतरसे शरीरके बाहरकी ओर" हो, उन्हीं दवाओंको खासकर पुराने रोगोंमें प्रयोग करना होगा। दवा खानेमे यदि दबा हुआ (suppressed) धातु-दोष शरीरके बाहर चर्म-रोग आदिके रूपमें दिखाई दे, तो समझना चाहिये कि रोग आराम होनेकी ओर बढ़ रहा है और दवा कुछ दिनतक स्थगित रखनी होगी। पुराने रोगका इलाज समय लेता है (कम-से-कम दो वर्षतक अच्छी तरह इलाज हो, तो यह आराम होनेकी ओर बढता दिखाई देता है)। सब रोग-लक्षणोंको मिलाकर इसकी दवा चुननी पड़ती है और चुनी हुई दवाकी उच्च-शक्ति (high potency) सप्ताहमें, पक्षमें या महीनेमें एक मात्राके हिसाबसे देनी पड़ती है। (अधिक हाल जाननेके लिये परिशिष्ट (ख) अध्यायमें "धातु-दोष और उसका निराकरण" और Hahnemann's *Organon* para 72-82 देखिये।)

रोग-लक्षण लिखनेका संकेत

किसी रोगी या रोगिणीको रोगका पूरा विवरण लिखनेको कहा जाये, तो वे लिख नहीं सकते या लिखते भी हैं, तो अधूरा। इसलिये, होमियोपैथिक इलाज करते समय रोगीको अपने रोगका हाल किस ढगसे

लिखना चाहिये, इस सम्बन्धमें कुछ 'साधारण' और 'विशेष' विधियाँ संक्षेपमें लिखी जाती हैं।

१। कई साधारण विधियाँ

(१) स्याहीसे, स्पष्ट अक्षरोंमें अपना नाम, धाम, पेशा, उमर, प्रभृति लिखकर पीछे "रोगका लक्षण आदि" वर्णन करना चाहिये।

(२) शरीर खराव (या स्वास्थ्यभंग) होनेपर शारीरिक या मानसिक अवस्थामें जो-जो हेर-फेर, गड़वड़ी या उपसर्ग होते हों, उनमें एक-एकको "रोगका लक्षण" (symptom) कहते हैं। हरएक लक्षण रोगी या रोगिणीके लिये, चाहे जितने ही सामान्य या तुच्छ हो, उन्हें खूब सरल भाषाके लिखनेमें संकोच या लज्जा न करनी चाहिये। जैसे—

(क) रोग कितने दिनोंका है, वह कैसे शुरू हुआ, वह एक ही ढंगसे है या घटता-वढ़ता है।

(ख) इस रोगको आराम करनेके लिये कोई ऐलोपैथिक, होमियोपैथिक, वायोकेमिक, आयुर्वेदिक या हकीमी इलाज हुआ है या नहीं। यदि हुआ हो, तो उसका व्यवस्था-पत्र (prescription) या उसकी नकल हो, तो इलाज करनेवालेको दिखाना जरूरी है।

(ग) वर्त्तमान रोग शुरू होनेके कुछ ही पहले गो-वीजका टीका लिया था या नहीं अथवा कोई तेज बीमारी (जैसे—मैलेरिया, बुखार खसरा, चेचक या किसी तरहका चर्म-रोग—खुजली, एकजिमा, घाव आदि) हुआ था या नहीं और उसे अच्छा करनेके लिये भीतरी या वाहरी दवाएँ (जैसे—जिङ्क या गन्धकका मलहम) काममें लाया गया था या नहीं।

(घ) पिता-माताके कुलमें यक्ष्मा, उपदंश (गर्मी), सुजाक आदि कोई रोग है या था, कि नहीं। रोगीका पहलेका इतिहास।

(३) स्मरण रखना चाहिये, कि—

(क) पुराने रोगमें होमियापैथिक दवा सेवनके बाद, १५ दिनोंके भीतर यदि कभी रोग बढ जाये या सुजाक आदि रोगका स्राव या चर्म-रोगका पहला उपसर्ग (जो ऐलोपैथिक या दूसरी कोई तेज दवा खानेके कारण दब गया हो, परन्तु वास्तवमें आराम न हुआ हो) फिर दिखाई दे, तो रोगीको डरना या निराश न होना चाहिये ; क्योंकि ऐसा होनेपर समझना चाहिये कि होमियोपैथिक दवाका चुनाव ठीक हुआ है। ऐसी व्यवस्थामें रोगका बढना रोकनेके लिये, दवा बदलनेपर, बहुत कुछ नुकसान हो जाया करता है ("चिर-रोगके इलाजका संकेत" देखिये)।

(ख) जिसका इलाज हो रहा हो, उसकी आज्ञा बिना रोगी कोई दूसरी दवा न खा ले। कितनी ही बार ऐसा देखा जाता है कि इलाज करने वालेसे पूछे बिना ही कब्जियत दूर करनेके लिये रोगी कोई नुकसान करनेवाला जुलाब, दर्द हटानेके लिये अफीमसे बनी दवा या कोई दूसरा ही उपसर्ग दवा देनेके लिये कोई पेटेण्ट ऐलोपैथिक या होमियोपैथिक दवा खाकर बीमारी और भी बढा लेते हैं।

(ग) प्रकृतिका नियम है कि भूख लगनेपर खाये ; भूख अच्छी तरह न लगी हो, तो थोडा सा हल्का भोजन खाया या बिलकुल ही न खाना—यही नियम है। किसी खास हालतमें उपवास कर डालना फायदेमन्द है। यह तो कहना ही वृथा है कि भूख-प्यासको हटानेके लिये, हल्का भोजन या पुष्टिकर पदार्थ खाना और शुद्ध निर्मल पानी पीनी या विशुद्ध दूध पीना मना नही है। चाय, काफी भी थोड़ी मात्रामें पीनेमें बाधा नही है ; परन्तु देरसे पचनेवाले गरिष्ठ पदार्थ खाना, तेज अँचार और ऐसी अन्य भोजन-सामग्रियाँ तथा पेय, जो शरीरको नुकसान पहुँचानेवाले हैं, उनको विषकी तरह त्याग देना चाहिये।

(४) वर्त्तमान चिकित्साके समय दवा खानेके वादसे रोग बढ़ता है, घटता है या ज्यों-का-त्यों है, यह लिखकर उस इलाज करनेवालेके पास भेज देना चाहिये।

दवा सेवन करनेके वाद कोई नई उपसर्ग या कई नये-नये उपसर्ग मालूम हों, तो इलाज करनेवालेकी जानकारीके लिये उस रोगका लक्षण या जो-जो लक्षण हों, वे सव लिखकर उनके नीचे एक लकीर (line) खींच देनी चाहिये। जिन उपसर्गोंके कारण वहुत तकलीफ होती हो, उनके नीचे दो रेखाएँ (lines) खींच देनी होगी और यदि दवा खानेपर कोई पुराना दवा हुआ उपसर्ग फिर दिखाई दे, तो चिकित्सककी जानकारीके लिये, उल्लिखित रोगके लक्षण लिखकर, उसके नीचे तीन रेखाएँ खींच देनी चाहियें। वाकी रोग-लक्षणोंके नीचे लकीर खींचनेकी कोई ज़रूरत नहीं है।

(५) और भी, चिकित्सकको लिखकर वता देना होगा कि उनकी दवासे रोग वढ़ रहा है, घट रहा है या ज्यों-की-त्यों अवस्थामें है या इलाजका भार दूसरे चिकित्सकको सौंपा गया है; क्योंकि होमियो-चिकित्सा-विज्ञानकी भविष्यकी उन्नतिके लिये ऐसा करना आवश्यक है।

(६) अपने जीवनमें प्रायः सवको ही वहुत वार रोग भोग करना पड़ता है। उन रोगोंका इतिहास और इलाज करनेवालेके नुस्खे तारीखवार धारावाहिक-रूपमें वड़े यत्नसे सजाकर रखना चाहिये। इसके वाद, यदि कोई वीमारी हो, तो इन्हें चिकित्सकको दिखाने और रोगी-विवरण वतानेसे चिकित्सकको इलाज करनेमें खूब सुविधा हो जाती है और इसका यह परिणाम होता है कि रोगी भी वहुत थोड़े समयमें आरोग्य हो जाता है।

२। कई विशेष विधियाँ

रोगका नहीं, बल्कि रोगीकी चिकित्सा करना ही "प्रकृत होमियोपैथी" है अर्थात् सिर्फ रोगके नामके अनुसार या दो-चार लक्षणों-पर नजर रखकर दवा चुनना ही होमियोपैथिक मतके अनुसार इलाज करना नहीं कहलाता, बल्कि रोगीके छोटे-से-छोटे और सूक्ष्म-से-सूक्ष्म लक्षणको जानकर दवा देना ही होमियोपैथी चिकित्साका प्रधान काम है। जैसे, यह मालूम होनेपर कि रक्तामाशय हुआ है, तो मर्क्यूरियस दे देना होमियोपैथीक चिकित्सकका काम नहीं है ; बल्कि रोगीके सब लक्षणोंके जानकर उपयोगी दवा चुनना और देना (जैसे—मर्क्यूरियस, ऐकोन, ऐलो, नक्स-वोम, पोडो, पल्स या कोई दूसरी दवा चुन लेना) ही वास्तविक होमियोपैथिक है।

इसलिये १। (क) दर्द, (ख) अनुभूति, (ग) सब अंगोंकी अवस्था, (घ) स्राव (जैसे—सर्दी, लार, रजःस्राव प्रभृति), (ङ) रोग पैदा होनेका कारण, (च) रोग-लक्षणोंका घटना-बढ़ना, (छ) रोगीका विशेष लक्षण, (ज) व्यक्तिगत वैशिष्ट्य, (झ) धातु-दोष—यथासम्भव वर्णन करनेके बाद—२। (क) रोगीके मानसिक भाव, (ख) सरके केशसे लेकर पैरतक सब अंगोंका लक्षण पूरा-पूरा और विस्तृत भावसे लिखना होगा। जैसे—

१। (क) **दर्द** (Pain)—शरीरके किसी भी जगह (जैसे—घुटने, कमर, स्तन, नाक आदिमें) दर्द मालूम होता हो और उसकी प्रकृति (जैसे—जलन हो, बहुत तेज दर्द हो, जगह बदलता हो, इधर-उधर घूमता हो, कनकनी, झुनझुनी, टपक हो, काटनेकी तरह, चबानेकी तरह नोंच डालनेकी तरह, सुई भोंकनेकी तरह, कसकर पकड़नेकी तरह दर्द, एकाएक शुरू होकर कुछ देर बाद ही एकाएक रुक जाये या दर्द धीरे-धीरे बढ़ता हो और बढ़कर धीरे-धीरे बंद हो जाता है या धीरे-धीरे

आरम्भ होकर एकाएक रुक जाता है आदि लक्षण) अच्छी तरह समझा-कर पूरा-पूरा लिखना चाहिये ।

(ख) **अनुभूति** (Sensation)—गलेमें मानो कोई पोटली बँधी-सी है, पेटमें मानो अण्डा सीझ रहा है । कलेजा मानो सट गया है, वाँहोंपर मानो चींटी रेंग रही है, रोगको ऐसी आशंका होती है, मानो आँखें वन्द करते ही गिर पड़ेगा, रोगीको ऐसा मालूम हो, मानो पैरोंमें ठण्डा वरफसे भिगोया मोजा पहना है इत्यादि मनोभाव रत्ती-रत्ती और पूरी तरह वताना होगा ।

(ग) **सब अंगोंकी अवस्था** (General conditions)—जैसे—इन्द्रियोंकी तेजी, देहका दुवला होना, अवसन्नता, रुचि, अरुचि, सोते समय किस भावसे सोता है (चित, करवट या औंघा), रातके अन्तिम भागमें सपने देखना, दाहिना या वायाँ अंग, एकके वाद दूसरेपर रोगका हमला होना, सरसे पैरतक मानो विजलीकी लहर दौड़ती है, कानमें मानो ठण्डी हवा वह रही है—इस तरहके सभी उपसर्ग सोच-सोचकर लिख देने चाहिये ।

(घ) **स्राव** (Discharge)—जैसे—घाव अथवा मुँह, नाक, आँख, कान, फेफड़ा, जननेन्द्रिय या किसी दूसरे अंगसे किसी प्रकारका स्राव निकलता हो, तो वह भी लिखना होगा । स्रावकी मात्रा, रंग (कपड़ेमें दाग लगता है या नहीं), गन्ध, प्रकृति (जैसे—जलन करने-वाला, उधेड़नेवाला, किस समय और किस अवस्थामें स्राव घटता या वढ़ता है), इन सव वातोंका उल्लेख करना होगा ।

(ङ) **रोग पैदा होनेका कारण** (Cause)—जैसे—जाड़ेकी सूखी हवा लगना, वर्सामें तर हवा लग जाना, ठण्डे पानीमें नहाना या डर जाना, उद्भेद (जैसे—खसरा चेचक, खुजलीके दाने या गोटियाँ) वैठ जाना, खाने-पीनेका नियम न रहना, गिर पड़ना या वरफ खाना,

तेज दवाओंसे सुजाकका स्राव रोकना, मैलेरिया बुखारका बन्द करना, किनाइन, पोटासियम आफ आयोड, मर्करी (पारा), आर्ज-नाइट, ब्रोमाइड, अफीम, स्ट्रिकनिया, पेट्रोल, आर्सेनिक, लोहा आदि दवाएँ सेवनके कारणसे यदि रोग पैदा हुआ हो, तो लिखना जरूरी है।

(च) **रोग-लक्षणोंका घटना बढ़ना** (Aggravations and ameliorations of symptomes)—दिनमें या रातमें या आधी रातके बाद या रातके अन्तिम भागोंमें, गर्मी या बर्सातके मासमें, भोजनके समय, भोजनके पहले या पीछे, नींदके समय, नींदके पहले या बाद, सोने या घूमनेपर, बदन दबाने या किसी दूसरी अवस्थामें रोग बढ़ता हो या कम होता हो, यह बताना भी जरूरी है। "रोगके बढ़ने या घटनेकी अवस्था" को अच्छी तरह जानकर ही होमियोपैथिकका सच्चा इलाज करनेवाला, दवा चुन सकेगा—इस बातको रोगीको अच्छी तरह याद रखना चाहिये। Bœnninghausen प्रमुख प्राचीन होमियोपैथिक दवा करनेवाले खासकर "रोगके घटने और बढ़ने" के ऊपर ही ध्यान रखकर दवा चुनते हैं और अकसर सभी जगह सफल होते हैं। इसी कारणसे आज होमियोपैथीका इतना विस्तार और आदर हो रहा है।

(छ) **रोगीके विशेष लक्षण** (Characteristics)—जो-जो उपसर्ग रोगीके प्रकृतिगत हो गये हों (अर्थात् उनके धातुमें ही मिल गये हैं) उनका नाम ही "विशेष लक्षण" है। जैसे—नाकका हमेशा फुन्सी-भरा या लाल रंगका रहना, ऊपर (कंठ) या अधोभाग (गुदा) से वायु निकला करना, बदन बहुत गर्म रहनेपर भी प्यासका न होना, सबेरे बिछावनसे उठते ही पाखानेके लिये दौड़ जाना, बाईं करवट सोनेसे ही कलेजा धड़कना, मल थोड़ा सा निकलने बाद ही उसका फिर मलनालीमें लौट जाना, शरीरका सुन्न भाव, दबानेसे ही शान्ति मालूम होना प्रभृति रोगोंके विशेष लक्षण भी बताने चाहियें।

(ज) **व्यक्तिगत वैशिष्ट्य** (Idiosyncrasy)—किसी-किसी मनुष्यका धातु ऐसा है कि क्विनाइन बिलकुल सहन नहीं होती, कमरेमें किरासिन तेलकी या चम्पाका फूल रखनेपर किसी-किसीको बिलकुल ही नींद नहीं आती, ये सब व्यक्तिगत प्रकृतियाँ भी बता देनी चाहियें।

(झ) **कोई धातुगत दोष** (Chronic disease)—रहना। जैसे—प्रमेह या सुजाकका विष (sycosis), कच्छु-विष (psora) या उपदंश-विष (syphilis) रोगीके शरीरमें मौजूद है या नहीं, यह भी बता देना चाहिये।

२। (क) **मानसिक अवस्था, मिजाज या स्वभाव आदि**—जैसे—हर्ष-विषाद, शोक, भय, क्रोध आ जाना, ईर्षा, आत्महत्या करनेकी प्रबल इच्छा, रुलाई आती रहना, चिड़चिड़ा मिजाज, कलह-प्रियता, लड़ना-झगड़ना, उदासीनता, निराशा, व्याधिकी कल्पना, भ्रान्त-विश्वास, प्रलाप, अहंकार, उद्धत होना, बदला लेनेकी इच्छा, तेजी, स्मरण-शक्तिका घटना प्रभृति मानसिक लक्षण हैं।

(ख) **सर्वाङ्गीन अवस्था :—**

१। **बाहरी भाग**—जैसे—सर भारी, सरमें चक्कर, माथा खुजलाना, ब्रह्मतालुमें जलन, कनपटीमें टनक, माथेकी खोलमें भार मालूम होना।

२। **आँख और दृष्टि-शक्तिके उपसर्ग**—जैसे—आँखें, आँखोंकी पलक, बरुनी, आँखकी पुतली, आँखका सफेद अंश प्रभृतिकी अवस्थाएँ और दृष्टि-शक्तिकी कमी, आंशिक-दृष्टि, आधी दृष्टि, दृष्टिका थक जाना प्रभृति लक्षण।

३। **कान और श्रवण-शक्तिके उपसर्ग**—जैसे—कानका बाहरी भाग, बिचला भाग या भीतरी भागकी जलन, यंत्रणा आदि, बहरापन,

स्पष्ट न सुनना या सुननेकी शक्तिकी कमी या तेजी वगैरह श्रवणेन्द्रियके अन्यान्य दोष।

४। **नाक और घ्राण-शक्तिके उपसर्ग**—जैसे—नाकसे खून गिरना, नाकमें पपड़ी जम जाना, सूँघनेकी शक्तिकी कमी।

५। **चेहरा, ओंठ, दाढ़ी आदिके उपसर्ग**—जैसे—चेहरा बदरंग हो जाना, सूखा भाव, फुन्सी या फोड़ा मौजूद रहना आदि।

६। **मुख-विवर, जीभ, दांत, मसूढ़ा, उपजिह्वा प्रभृतिकी अवस्था**—जैसे मुँहमें दुर्गन्ध, जीभ लाल, सूखी या घाव-भरी, मसूढ़ोंसे खून बहना, दाँतकी जड़में दर्द और घाव, उपजिह्वामें सुरसुरी होना।

७। **गला**—जैसे—तालुमूलमें जलन और गलेकी नलीकी उपझिल्लीका प्रदाह, गलेमें जलन होना प्रभृति।

८। **उदर, पाकस्थली, प्लीहा, यकृत इत्यादिके उपसर्ग**—जैसे—पाकाशयका दर्द, आँतोंमें दर्द, यकृत फूला और उसमें दर्द, अतिसार (पतले दस्त), पानी पीनेकी प्रबल इच्छा, परन्तु पानी पीते ही कै हो जाना, किसी भोजनके पदार्थ या पीनेकी चीजोंमें रुचि या अरुचिका होना, किसी समय भूख लगती है प्रभृति उपसर्ग।

९। **मल और मलांत्र**—जैसे मल वजनमें थोड़ा, गाढ़ा, पीली आभा लिये, दुर्गन्धभरा, उसमें कृमि है या नहीं।

१०। **मूत्र या मूत्रयंत्र**—जैसे—रातमें नींदमें आप-ही-आप अनजानमें पेशाब हो जाना, पेशाब रोकनेमें असमर्थ, पेशाब गाढ़ा पीला रंग, पेशाबके वक्त मूत्रनलीमें बहुत जलन।

११। **लिंगेन्द्रिय**—मेह, प्रमेह और उसके कारण लिंगको ढँकनेवाले चमड़े और सुपारीमें खाज होना, लिंगेन्द्रियका प्रदाह और दर्द होना, सूजना, पतला दस्त होनेके समय मूत्राशय-मुखशायी-ग्रन्थिसे रक्तस्राव प्रभृति समस्त लक्षण और वह वंश परम्परागत है या नहीं।

१२। **स्त्री-जननेन्द्रिय**—प्रमेह आदिके कारण डिम्बाशय प्रदेशमें जलन होना, ऐसा मालूम होना, मानो जलती हुई धातुके सूत्र सब चारों ओर फैले हुए हैं, पहले रजःस्रावमें देर, रजोरोध (मासिक रजःस्रावका न होना), थोड़ा रजःस्राव, ऋतुका ठीक समयपर न होना, ऋतुकालमें पेटमें दर्द, बाधक-दोष, प्रदर आदि उपसर्ग।

१३। **श्वासयंत्र**—हाँफनेकी तरह श्वास-प्रश्वास, वायुनलीभुज-प्रदाह, सूखी खाँसी, वक्षावरण-प्रदाह प्रभृति।

१४। **हृत्पिण्ड**—कलेजेका धड़कना, हृत्पिण्डके ऊपर या नीचेके स्थानमें दर्द आदि।

१५। **फुस्फुस या फेफड़ा**—दाहिने या बायें फेफड़ेमें दर्द, भार मालूम होना, खाँसनेपर ऐसी तकलीफ होना, मानो छाती फटी जाती है, सुई गड़नेकी तरह दर्द।

१६। **गर्दनका पिछला भाग या कमर**—दोनों अंशफलकोंके बीचमें सुई बेधनेकी तरह दर्द, पीठके दोनों फलकोंके बीचमें जलन मालूम होना, कमरमें सुई गड़नेकी तरह दर्द, कमर कसकर दबा रखनेपर दर्दका घटना प्रभृति लक्षण।

१७। **उर्द्धाङ्ग** (जैसे—बाँह केहुनी, कलाई, हाथ, अंगुली, नख)—बाँहकी मांस-पेशीमें वातके जैसा दर्द, सन्धि और हाड़ोंमें तेज दर्द, तलहत्थीमें पसीना होता रहता है, थोड़ा भी परिश्रम करनेपर अंगुलियाँ काँपती रहती हैं, नख निकल जाता है इत्यादि।

१८। **निम्नांग** (उरु, पैर, घुटने, ऍड़ी, तलवा, पैरकी अंगुलियाँ)—उरुके ऊपरी भागमें किसी भयानक अस्त्रकी चोटकी तरह दर्द और जलनकी तरह दर्द, थोड़ा-सा भी चलनेपर घुटनोंमें ऐंठनकी तरह दर्द, पैरकी पोटली कसकर ऐंठ जाती हैं, ऍड़ीमें चोट लगनेकी तरह दर्द, तलवा और अंगुलियोंका चमड़ा निकल जाता है।

१६। **नींद और स्वप्न**—नींद गाढी अथवा रात्रिके पहले या अन्तिम भागमें विलकुल ही नींद नही आती, सपनेमें डकैती देखता है, सपनेमें देखता है कि विदेश गया हुआ घर लौट आया इत्यादि।

२०। **त्वचा**—खुजली या अकौता वगैरहका हमेशा ही लगे रहना, वदनसे वदवूदार पसीना निकलना, शरीर सदा गरम रहना (ज्वर १०१°) या हमेशा जाडा लगते रहना, शरीरमें जलन, तलवेमें हमेशा पसीना होना, सब शरीरमें मानो सुई भोंकी जा रही है, ऐसा मालूम होना, हाथ-पैरोमें हमेशा जलन मालूम होना प्रभृति।

☞ स्मरण योग्य—इस अनुच्छेदके साथ परिशिष्ट (ख)—'धातु-दोष और उसका निवारण' अध्याय विद्यार्थियोको अवश्य पढ़ना चाहिये।

नरदेह-परिचय और रोग-निर्णय

"एनाटोमी" अर्थात् "शरीर-रचना" पढनेपर शरीरके विभिन्न अंगोकी सूक्ष्म और स्थूल गठन-प्रणाली मालूम हो जाती है और "फिजियोलोजी" अर्थात् "शारीर-धर्म-विद्या" पढ़नेपर प्रत्येक अंग और कोषोंके क्रियाके सम्बन्धमें पूरा-पूरा ज्ञान हो जाता है। पारिवारिक चिकित्साके प्रथम अंशमें आरम्भमें ही शरीर-रचना सम्बन्धी विषय वता दिये गये हैं। अब इस अध्यायमें शरीरके कई आभ्यन्तरीन अगोकी क्रिया और उन अगोंके रोगके सम्बन्धमें कुछ आभास देनेकी चेष्टा की गयी है। "एनाटोमी" और "फिजियोलोजी" के विशद विवरणके लिये हमारा प्रकाशित "नरदेह-परिचय" ग्रन्थ देखिये।

मस्तक—माथेकी खोल—कटोरी (४१ न० चित्र) के भीतर एक तीन तही किया हुआ कडा तन्तुमय थैलीकी तरह आवरण है (४१ न० चित्र—१), उसीके भीतर मस्तिष्क (४१ न० चित्र—३) रहता है।

चोट लगना, गुटिका-दोष, जीवाणुका संक्रमण करना प्रभृति कारणोंसे "मस्तिष्कावरण-प्रदाह" (मेनिञ्जाइटिस) हो सकता है। इस तन्तुमय आवरणके गासेमें जल (रक्ताम्बु) जब इकट्ठा होता है, तो "हाइड्रो-केफालस या मस्तिष्कमें जल-संचय" की बीमारी हो जाती है।

मस्तिष्क—मस्तिष्क स्नायु-केन्द्र है। समूची देहकी अनुभूति, अनुभूति देनेवाले स्नायु अथवा "सेन्सरी नर्व" द्वारा मस्तिष्कमें पहुँचती है और क्रिया-विधायक स्नायु या "मोटर नर्व" द्वारा मस्तिष्क या मेरुमज्जासे सारे शरीरमें आदेश पहुँचाये जाते हैं। सारांश यह कि इसी तरह मस्तिष्क द्वारा जीव-देहकी समस्त क्रिया परिचालित होती है। मस्तिष्कके भीतर अलग-अलग अंश, पृथक-पृथक स्नायुओंके द्वारा कार्य परिचालन करते हैं। जैसे—अन्तर्दृष्टि, वाह्य-दृष्टि, वाक्-शक्ति श्रवण-शक्ति, संचालन-शक्ति इत्यादि विभिन्न कार्योंके अधिकारी मस्तिष्कके विभिन्न अंश हैं। इसलिये मस्तिष्कके जिस अंशमें विकार होता है, उसी अंशकी क्रियामें वाधा पड़ती है और इसीकी यह क्रिया होती है कि स्नायु-घटित रोग होते हैं। चोट, बहुत अधिक शोक या आनन्द, भय, रक्तका चाप बढ़ना, अत्यधिक शराब पानी, बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम प्रभृति बहुतसे कारणोंसे मस्तिष्कमें विकार होकर "मृगी संन्यास क्षय, पक्षाघात, उन्माद, जड़बुद्धित्व इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं"।

आँख—पहले ही बताया जा चुका है कि आँख दर्शनेन्द्रिय है। आँखका उपतारा या आइरिसके पीछे साफ काँचकी तरह पदार्थमें (लेन्समें) गदलापन या कड़ापन आ जाता है, तो "मोतियाविन्द या कैटारैक्ट" पैदा हो जाता है। इसके अलावा, बेरी-बेरी रोगके परिणामस्वरूप 'ग्लोकोमा' (अस्वच्छ दृष्टि—धुन्ध रोग), उपदंश आदि रोगके कारण 'टेरिनाइटिस' (चक्षु-चित्र पत्रका प्रदाह), चोट आदि कारणोंसे या स्नायु और पेशियोंकी विकलताके कारण "डोरा-दृष्टि" प्रभृति कई आँखकी बीमारियाँ हो जाती हैं।

कान—कानके भीतर ढोलके चमडेकी तरह एक स्वच्छ पर्दा (कर्ण पटह) रहता है। कानके भीतरका यह पर्दा (कर्ण-पटह), तीन छोटी अस्थियाँ और स्नायुकी सहायतासे शब्द मस्तिष्कमें पहुँचता है। यदि यह पर्दा वाहर अथवा भीतरकी ओर टेढा पड जाता है, तो नाना प्रकारकी सुननेकी गडबडियाँ पैदा हो जाती हैं। भीतरकी ओर टेढा पड जानेपर नाकके भीतर और वाहरकी ओर टेढ़ा पडनेपर कानके भीतर "पम्प" करनेसे यह वीमारी आरोग्य होती है। कर्ण पटहका मोटा हो जाना और सिकुडना, छेद हो जाना प्रभृति वीमारियोंमें "बहरापन" उत्पन्न होता है।

कितनी ही बार डिफ्थीरिया, टाइफायड आदि वीमारियोंके वाद या पुराना कान पकना रोगके कारण ठीक कानके पीछे ऊंची-सी हड्डीके भीतर प्रदाह और पीव हो जाता है। इसको "मैस्टाय ऐब्सेम" (कर्णमूल-स्फोटक) कहते हैं, परन्तु यह वीमारी बहुत कम होती है।

कानके नीचे जबडेकी जडमें कर्णमूल ग्रन्थि या पैरोटिड ग्रन्थिमें "पैरोटाइटिस या मम्पस" (कर्णमूल-प्रदाह) नामक लरछुत वीमारी हो सकती है।

नाक—दो नासा-रंध्रोंके बीचकी उपास्थि और नासा-मूलकी उपास्थि उपदंश आदिके कारणसे क्षय होकर नाक वैठ जाती है। इसको नाकका अस्थि-क्षय ("नैजेल-कैरीज) कहते हैं। नाककी भीतरी शिरा फूलकर नासा-रोग होता है, यह नासा फटकर बहुत रक्त-स्राव होता है।

मुँह और गलेके भीतर—जीभ, मसूढा तालुमूल, श्वासनली-मुख, अन्ननली, ओंठ प्रभृति किसी भी स्थानमें कैन्सर हो सकता है।

कर्णमूल, हनु और जीभके नीचेवाली लाला-ग्रन्थिसे एक तरहका रस (लार या सैलाइवा) निकला करता है। लालारस मुँहकी आवरक-झिल्ली तर हो जाती है और वोलनेमें मदद प्राप्त होती है तथा खाद्यका

भी बहुत कुछ अंश गल जाता है। यह खाद्यके ग्रासको "म्यूसिन" नामक पदार्थसे चिकना कर देता है, इसी वजहसे निगलनेमें सहायता

चित्र न० ४१

मिलती है। लारमें का "टायलिन" नामक पदार्थके योगसे खाद्यका श्वेतसार-जातीय पदार्थ (carbohydrate) पचनेमें सहायता मिला करती है।
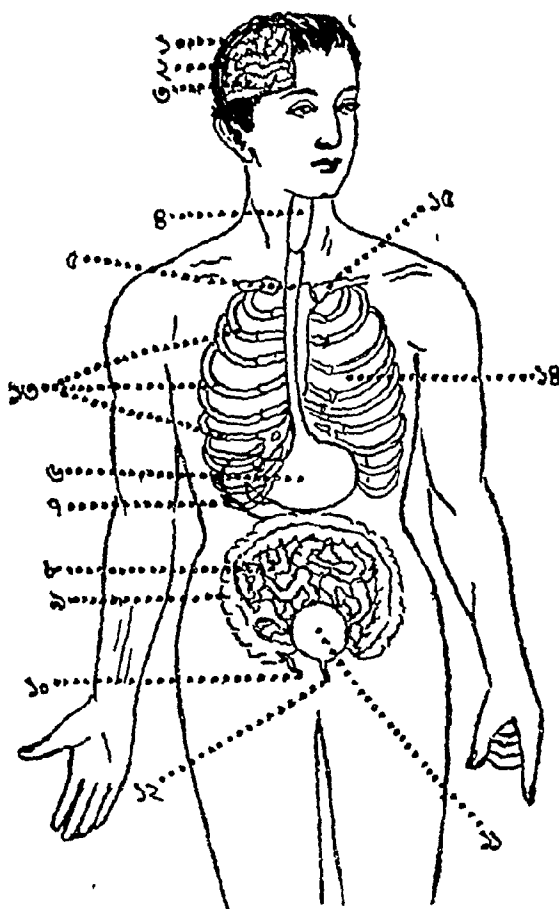
जीभकी जड़में उपजिह्वाके पास टानसिल या तालुमूल-ग्रन्थि नामकी दो ग्रन्थियाँ हैं। टानसिलका सबसे प्रधान काम है—जीवाणुका ध्वंस करना। यदि मुँहकी राहसे कोई जीवाणु संक्रमित हो जाता है, तो टानसिल उसे नष्ट कर देता है। 'टानसिलाइटिस' या तालुमूल-ग्रन्थिका प्रदाह, 'मुँहमें जख्म', जबड़े अटक जाना, दाँतमें दर्द' वगैरह बीमारियाँ विशेष उल्लेख योग्य हैं। 'डिफ्थीरिया' या श्लैष्मिक-झिल्ली-प्रदाह गलनलीकी एक दूसरी प्राणघातक बीमारी है।

वक्ष-देश—वक्ष-गह्वरके बीचमें कुछ बायीं ओर हृत्पिण्ड (४२ नं० चित्र—१) बताया जा चुका है और हृत्पिण्डके दोनों पार्श्वोंमें श्वासयंत्र या फुस्फुस हैं (४२ नं० चित्र—२)। प्रत्येक बार श्वासके साथ वायुसे विशुद्ध अम्लजान (oxygen) वाष्प संग्रहकर प्रश्वासके साथ देहके भीतरका दूषित अम्लांगारक वाष्प (carbon dioxide) निकाल डालना ही फेफड़ेका प्रधान काम है। श्वासके साथ खींची हुई विशुद्ध वायुमें आक्सिजेन ग्रहण करनेके लिये हृत्पिण्डसे अशुद्ध रक्त पल्मोनेरी आर्टरी (फुस्फुसीया धमनी) की राहसे (४१ नं० चित्र—४) फेफड़ेमें आता है और विशोधित होकर फिर पल्मोनेरी वेन (फुस्फुसीया शिरा) की राहसे हृत्पिण्डमें चला जाता है।

दोनों फेफड़े एक-दो तहवाले पर्दे (प्लुरा) से ढँके हैं (४२ नं० चित्र—३)। पसलियोंके (४१ नं० चित्र—१३) ठीक नीचे ही प्लुरा है और प्लुराके भीतर फेफड़ा रहता है। इस पर्देमें प्रदाह ('प्लुरिसी'); जोड़ लग जाना ('प्लुरैल ऐडिसन'), फुस्फुस-प्रदाह ('न्युमोनिया'), क्षय ('थाइसिस') प्रभृति रोग हो सकते हैं। श्वास-नलीका प्रदाह ('ब्राकाइटिस'), श्वासनली और फुस्फुस दोनोंका प्रदाह ('ब्राको न्युमोनिया'), फुस्फुस या श्वासनलीका सड़नेवाला जखम या 'गैंग्रीन' प्रभृति बीमारियाँ भी श्वासयन्त्र-घटित रोगोंमें उल्लेख करने योग्य हैं।

हृत्पिण्ड (४३ न० चित्र—१) एक स्वयंक्रिय पम्प है। सारे शरीरमें जो क्रिया होती है, उसका परिणाम यह होता है कि देह-तन्तुके
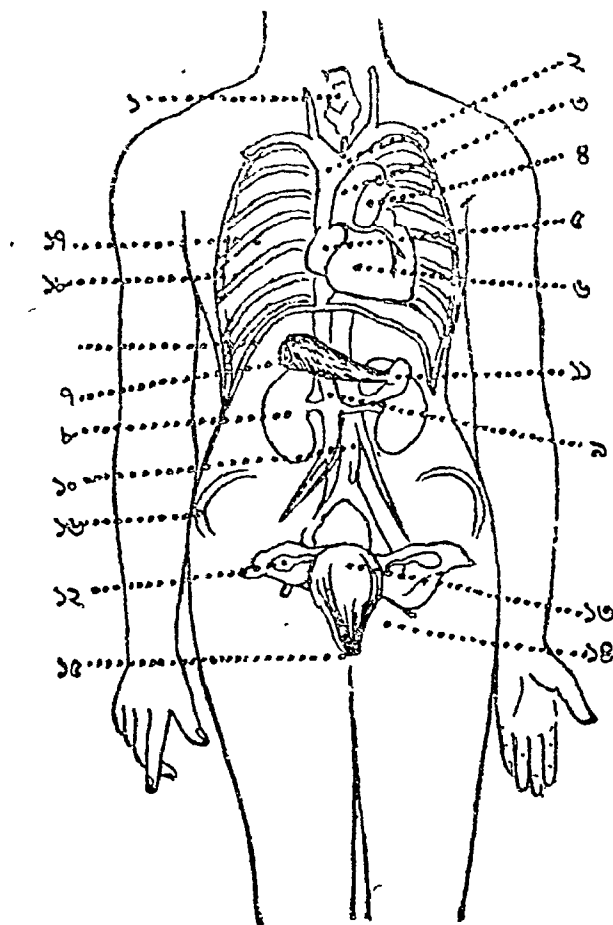
चित्र न० ४२

क्षयके कारण अशोधित रक्त वेन या शिराओं द्वारा संग्रहकर शुद्ध करनेके लिये फुस्फुसमें भेजा जाता है और वहाँ विशुद्ध होकर यह साफ रक्त आर्टरी या धमनीके राहसे शरीरमें जाता है। हृत्पिण्डपर भी एक

दु-तही पर्दा है (पेरिकार्डियम—हृदावरक-झिल्ली—४३ न० चित्र—११), इस पर्देका प्रदाह या "पेरिकार्डाइटिस", हृद्-पेशी और हृद्-कपाटकी बहुत सी बीमारियाँ ('वेल्वुलर डिजिजेस'—हृद्कपाटके राग), हृत्पिंडके किसी स्थान-विशेपका फैलना ('डाइलेटेशन'), हृद्-शूल (ऐंञ्जिना पेक्टोरिस) प्रभृति बहुत-सी बीमारियाँ हा जाती है।

उदर—वक्षदेश और उदर वक्ष व्यवधायक-पेशी अथवा डायाफ्रामका (४२ न० चित्र—७) प्रदाह (डायाफ्रामाइटिस') और एकाएक सकोचनके कारण "हिचकी" हो सकती है। उदर-गह्वरमें और क्या क्या यत्र हैं, उनका परिचय पहले ही दिया जा चुका है। साधारणतः उदर-गह्वरमें पाकाशय (४१ न० चित्र—६), यकृत (४३ न० चित्र—५) प्लीहा (४२ न० चित्र—११), क्लोम (४१ न० चित्र—१२) क्षुद्रान्त्र (४२ न० चित्र—८), वृहदन्त्र (४३ न० चित्र—७) प्रभृति और निम्नोदरमें मलान्त्र, मूत्राशय (४१ न० चित्र—११), मूत्र-ग्रन्थि (४२ न० चित्र—८) रहते हैं। स्त्रियोंके निम्नोदरके निम्न भागमें (वस्ति-गह्वरमें), योनि, जरायु (४२ न० चित्र—१३) और डिम्वाशय (४२ न० चित्र—१४) ये तीन प्रकारके यत्र अधिक रहते हैं।

पाकाशय (४१ और ४३ न० चित्र—६)—पाचनके लिये पाकाशयकी ग्रन्थियोंसे जो रस निकलता है, उसे गैस्ट्रिक जूस या पाकाशयिक रस कहते हैं। यह पाकाशयिक रस अम्ल स्वभावका रहता है, इसीलिये यह खाद्यक शर्करा-जातीय पदार्थके पाचनमें सहायता करता है। जो कुछ जीवाणु खाद्यके साथ निगलनेमें आ जाते है, यह उन जीवाणुओंको नष्ट करता है। श्वेतसार-जातीय खाद्यपर इसकी कोई क्रिया नहीं हाती, पाकाशयिक रस दूधको जमा देता है और छाना-जातीय पदार्थ (protein) को बहुत कुछ परिवर्त्तन कर देता है।

पाकाशय-शूल, पाकाशय-क्षत (गैस्ट्रिक अलसर), "कैन्सर", पाकाशय-प्रदाह ('गैस्ट्राइटिस'), पाकाशयका प्रसारण प्रभृति पाकाशयकी उल्लेख योग्य बीमारियाँ हैं।
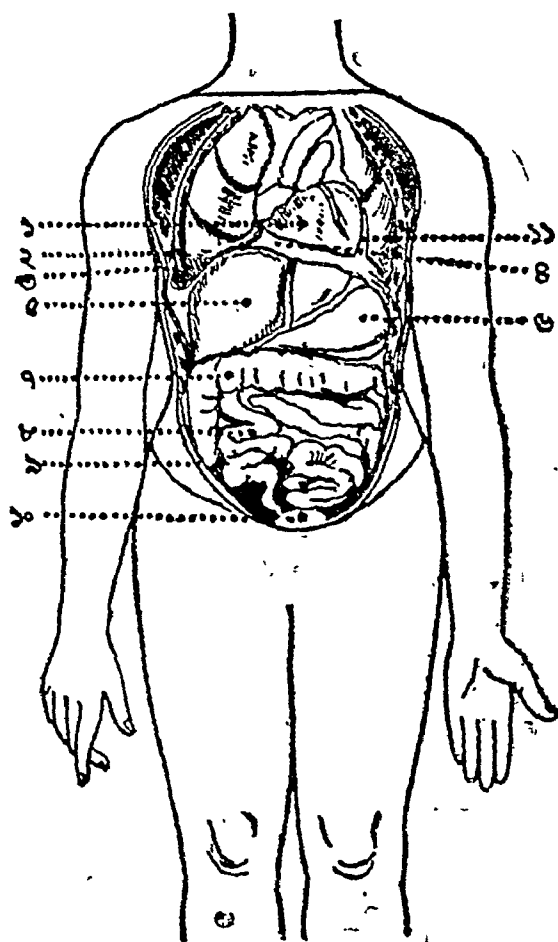
चित्र न० ४३

यकृत (लिवर)—४३ न० चित्र—५)—दाहिने फेफड़ेके निचले भागमें कुक्षि-देशके ऊपर एक बहुत बड़ी ग्रन्थि है। पित्त निकालना,

युरीमिया तैयार करना और शर्करा-जातीय खाद्य और वसा जातीय खाद्यका पाचन और नियन्त्रण करना और अकर्मण्य रक्त कणिकाओंको ध्वंस करना यकृतका प्रधान कार्य है। यकृतमें प्रदाह ('हिपेटाइटिस'), फोड़ा ('हिपाटिक ऐबसेस'), विवृद्धि ('हाइपरट्रोफी') या संकोचन ('ऐट्रोफी'), केन्सर, पित्तशूल ('विलियरी कालिक'), पित्त-पथरी-शूल ('गाल-स्टोन कालिक'), पित्त पथरी ('गाल स्टोन'), और यकृतकी क्रियामें विकारके कारण शीर्णता ('मारास्मस'), शोथ ('ड्राप्सी'), उदरी ('एसाइटिस'), पांडु ('जांडिस') प्रभृति रोग हो सकते हैं।

यकृतसे पित्त (बाइल) नामक एक प्रकारका पीली आभा लिये हरे रंगका तीता रस निकलकर पित्त-कोष (गाल ब्लैडर) में इकट्ठा होता है और क्षुद्रांत्रके प्रथम अंशमें खाद्य पदार्थके साथ मिलकर पाचनमें सहायता पहुँचाता है, यह (१) सड़ना रोकनेवाले, (२) क्षार प्रधान, (३) पाकाशय रसका समताकारक, (४) श्वेतसार-जातीय और चर्बी-जातीय पदार्थका पाचक तथा (५) पोषक है। पित्त-अन्नकी संचालन-क्रियाको बढ़ाकर परिपाक और शोषण कार्यमें सहायता करता है।

क्लोम (पेनक्रियास)—उदरके पीछे और वक्षोदर-मध्यस्थ-पेशीके नीचे रहनेवाली एक बड़ी ग्रन्थि (४१ नं० चित्र—१२) है। पित्तवाही-नलीके साथ मिलकर क्लोमनली क्षुद्रांत्रके पहले अंशमें मिल जाती है। इस तरह पित्तके साथ क्लोम-रस आँतोंमें गिरता है। क्लोम रस श्वेतसार-जातीय, छाना-जातीय और वसा-जातीय खाद्यके पाचनमें सहायता करता है। क्लोममें प्रदाह, दर्द और कैन्सर प्रभृति रोग होते देखे जाते हैं।

अंत्र—आँत पाकाशयसे मलद्वारतक फैला है। अन्त्रका जो अंश (पहला आधा भाग) टेढ़े-मेढ़े भावसे या गुच्छेके आकारमें है, उसीको क्षुद्रांत्र कहते हैं (४१ नं० और ४३ नं० चित्र—८) और जो अपेक्षाकृत

प्रशस्त अंश है (अन्तिम अंश), वह एक महारावके आकारमें रहता है, उसे बृहदंत्र (४१ नं० चित्र—६ और ४३ नं० चित्र—७) कहते हैं। इसी वृहदंत्रके नीचे मलांत्र और मलद्वार है। उदरके दाहिने पार्श्वमें क्षुद्रांत्र और वृहदंत्रके मिलनेकी जगहपर एक छोटी पूँछकी तरह आँत है, इसको 'उपांत्र' (एपेण्डिक्स) कहते हैं (४१ नं० चित्र—१०)। पुराना कब्ज, अतिसार, वहुत ज्यादा मांस खाना, खाद्यके साथ केश, नख, आल्पीन, कीड़े आदि पेटमें जाना और उपांत्रमें प्रवेश कर जाना प्रभृति कारणोंसे जो प्रदाह होता है, उसको "एपेण्डिसाइटिस" कहते हैं। नाभि-मूलसे दाहिनी वस्ति-अस्थिके ऊपरके कोनेतक अगर एक रेखा खींच दी जाये और दाहिनी रेक्टस पेशीके बाहरी भागसे सटाकर एक रेखा अगर खींची जाये, तो इन दोनों रेखाओंके संयोग-स्थलपर (McBurneys point) प्रदाह, दर्द, अकड़न, स्पर्श-कातरता इत्यादि रहना इस रोगका निर्णायक लक्षण हैं।

पाकाशय और मुँहमें पाकाशय-रस और लारकी सहायतासे कुछ पचा हुआ खाया पदार्थ आँतोंमें आता है। यहाँ यकृत-रस (पित्त या वाइल) क्लोम-रस (पेनक्रियाटिक जूस) और अंत्र-ग्रन्थि रस (सक्कस एण्टिरिकस) मिलकर खाद्यको छाना और श्वेतसार-जातीय और सर्करा तथा बसा-जातीय खाद्यके पाचनमें सहायता करते हैं। मुँहमें और पाकाशयमें खाद्यका कुछ अंश रक्तके साथ मिलकर बाकी देह-पुष्टिके उपयोगी खाद्यांश अंत्रसे रक्तके साथ यकृतमें जाता है और वहाँसे सारे शरीरमें पहुँच जाता है। इसी तरह परिपोषणकी क्रिया होती है ; बाकी अनावश्यक खाद्यांश मलके रूपमें शरीरसे निकल जाता है।

आँतोंमें शूल (कालिक), जखम (इण्टेस्टाइनल अलसर), प्रदाह (एण्टेराइटिस), अतिसार (इण्टेस्टाइनल कैटार), क्रिमि, "कैन्सर, अंत्रावरोध" (इण्टेस्टाइनल आब्सट्रक्शन) "ट्युमर", क्षय प्रभृति रोग होते हैं। उदरके किसी भी स्थानमें, कमर, नाभि, पुट्ठे, उरु, अण्ड-

कोषकी थैली इत्यादि स्थानोंमें, आँत उतर आती है। ये सब स्थान फूल जा सकते हैं, इसे अन्त्र-वृद्धि या "हार्निया" कहते हैं। यन्त्रसे ऊपर ढकेल देनेपर आँत फिर अपनी जगहपर चली जाती है।

मलान्त्रमें अर्श (हेमारायड) अर्बुद, मलद्वारका नासूर और मलान्त्रका अपनी जगहसे हट जाना प्रभृति रोग होते है।

उदरमें धोती पहननेकी जगहके समान्तरालमें मेरुदण्डके दोनों पार्श्वोंमें दो मूत्र-ग्रन्थियाँ हैं (किडनी ४१ न० चित्र—८), मूत्रग्रन्थि या गुर्दा रक्तसे अनावश्यक पदार्थ मूत्रके रूपमें अलग कर देता है। यह मूत्र मूत्र-ग्रन्थियोंसे निकली हुई नली (युरेटर) की राहसे मूत्राशयमें जाता है। मूत्राशय तलपेटमें या बस्ति-गह्वरके सामनेवाले भागमें ठीक जननेन्द्रियके ऊपर है (४१ न० चित्र—११, ४३ न० चित्र—१०)। मूत्राशयमें इकट्ठा हुआ पेशाब मूत्रनली (युरेथ्रा—४१ न० चित्र—१२) की राहसे निकल जाता है। मूत्र-ग्रन्थिमें "पथरी" (renal calculus), "प्रदाह, मूत्र-ग्रन्थि-शूल" (दर्द-गुर्दा—रेनल कालिक), अर्बुद, कैन्सर, फोड़ा प्रभृति बीमारियाँ हो सकती हैं। मूत्राशयमें प्रदाह (सिस्टाइटिस), अर्बुद, मूत्र-रोध आदि रोग, सुजाकका घाव या मूत्रनलीमें सुजाकका जख्म इत्यादि बीमारियाँ होती दिखाई देती हैं।

उदरके भीतरके सभी पदार्थ, एक दु-तही बड़ी थैली (पेरिटो-नियम—४३ न० चित्र—६) के भीतर रहते हैं। इस थैलीका प्रदाह ('पेरिटोनाइटिस'), रस-सञ्चय या "उदरी" (एसाइटिस) की बीमारी होती है।

प्लीहा—उदर-गह्वरके बायीं ओर, पञ्जरेके नीचे प्लीहा (स्प्लीन) नामकी एक ग्रन्थि है (४२ न० चित्र—११)। यकृत या लिवरकी तरह इस ग्रन्थिकी भी मानव शरीरपर एक विशेष क्रिया है। रक्तकी श्वेत-कणिका, रक्त कणिका और मूत्राम्ल (युरिक एसिड) का उत्पन्न करना और रक्त-सञ्चय—ये प्लीहाकी कई मुख्य क्रियाएँ हैं। मैलेरिया,

काला ज्वर आदि संक्रामक ज्वरोंमें, प्रदाह ज्वरमें तथा बहुत दिनोंकी पुरानी जीवाणु-घटित बीमारियोंमें प्लीहा बढ़ जाती है।

पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंका वस्ति-गह्वर और तलपेट अधिक प्रशस्त रहता है। गर्भ-धारण और सन्तान-प्रसवके लिये स्त्री-वस्ति-गह्वरमें जरायु, डिम्बाशय, डिम्ब-प्रणाली, योनि इत्यादि कई अतिरिक्त अंग रहते हैं। वस्ति गह्वरमें मूत्राशयके ठीक पीछे मलांत्रके सम्मुख भागमें और योनि-पथके ऊपरी भागमें कुछ सामनेकी ओर झुककर औंधे घड़ेकी तरह या अमरूदकी तरह जरायु (४२ न० चित्र—१३) है। जरायुके दोनों पार्श्वोंमें दो अण्डे आकारके डिम्बाशय या ओवरी (४२ नं० चित्र—१४) के साथ जरायु मिला हुआ है। प्रत्येक बार मासिक ऋतु-स्राव होनेके साथ-साथ एक या दो पका हुआ डिम्ब डिम्बाशयको भेदकर निकलता है और प्रान्तस्थ डिम्ब-प्रणाली या फेलोपियन टियुबकी राहसे जरायुमें जाता है। संगमके अन्तमें एक शुक्र-कीट जरायुमें प्रवेश करता है और वहाँसे डिम्ब-प्रणाली या कालल-नलकी राहसे आगे बढ़ा करता है—यहाँ कालल-नलमें स्त्री-डिम्ब और शुक्र-कीटका मिलन होता है और यह सम्मिलित डिम्ब जरायुके तन्तुमें चिपक जाता है। जरायुमें २८० दिनोंतक भ्रूण बढ़ता-बढ़ता योनि-पथसे फिर बाहर निकल आता है।

डिम्बाशयमें प्रदाह ("ओवराइटिस"), डिम्बाशय-शूल, डिम्बा-शयमें अर्बुद (ओवेरियन टियुमर), कैन्सर, क्षय प्रभृति जरायुका क्षय, प्रदाह, अर्बुद (युटेराइन टियुमर), विभिन्न प्रकारके आवर्त्तन या टेढ़ापन (various kinds of versions and flexions), श्वेत और रक्त-प्रदर, अतिरजः, स्वल्परजः, ऋतु शूल, जरायु-च्युति (prolapsus uteri), कैन्सर, जरायु-मुख अवरोध प्रभृति रोग, योनिमें उपदंशका घाव, योनि-भ्रंश, अर्बुद आदि रोग हो सकते हैं। पुरुषोंका डिम्बाशय,

उपस्थके निम्न-भागमें एक थैलीमें रहता है। प्रमेह आदि कारणोंसे इस स्थानका प्रदाह, काठिन्य, अन्त्र-वृद्धि या हार्निया आदि बीमारियाँ होती हैं।

वंक्षणदेश—प्रमेह, उपदंश या चोटकी वजहसे बाघी, अन्त्र-वृद्धि या हार्निया प्रभृति पुट्ठे या वंक्षणदेशकी साधारण बीमारियाँ हैं।

कमरमें—कटि-शूल, वात, दर्द-गुर्दा (रेनल कालिक) प्रभृति बीमारियाँ होती हैं। लम्बर हार्नियाकी बीमारी बहुत कम होती है।

उरुमें "हार्निया" या अन्त्र-च्युति और उरुके पीछेकी ओर सायेटिक स्नायु-शूल ("सायेटिका") बहुत ही कष्टदायक बीमारी होती है।

मेरुदण्ड—क्षय, क्षयके कारण टेढ़ापन, मेरुमज्जाका अर्बुद प्रभृति भारात्मक बीमारियाँ होती हैं।

हाथ-पैर—हाथमें हृत्पिण्डकी बीमारीके कारण प्रतिफलित स्नायु-शूल, पक्षाघात, वात प्रभृति कठिन रोग हो सकते हैं। पैरमें उपदंशके कारण नाना प्रकारके विकार, सड़े घाव (गैंग्रीन), रेनल्डस डिजीज प्रभृति दुरारोग्य बीमारियाँ होती हैं।

रोगीकी सुश्रूषा

परिष्कार-परिच्छन्नता, धैर्य और निष्ठा—रोगीकी सुश्रूषाके ये तीन सबसे प्रधान अंग हैं। "ये तीनों कर्त्तव्य अवश्य पालन करूँगा"—मनमें ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा कर सुश्रूषा करनेवालेको रोगीके घरमें प्रवेश करना चाहिये। स्वभावतः जिनमें इन तीन गुणोंमेंसे किसी एकका भी अभाव दिखाई देता हो ; उसको सुश्रूषा करनेवालेका एकदम अभाव न हो, तो सुश्रूषा करना तो दूर रहा, रोगीको देखनेके लिये भी ऐसे मनुष्यको रोगी-गृहमें प्रवेश न करने देना चाहिये।

परिष्कार-परिच्छन्नता—सुश्रूषा करनेवालोंका अंग, पोशाक, रोगीके घरमें रहनेवाले समान, बिछावन, पात्र आदि साफ-सुथरे न रहनेपर, खासकर जो व्यक्ति स्वभावतः गन्दे अर्थात् साफ-सुथरे रहना नहीं जानते, उनपर सुश्रूषाका भार यदि दे दिया जाता है, तो गन्दीके कारण रोग दबनेके बदले बढ़ जाता है। आधुनिक विज्ञानने प्रमाणित कर दिया है कि गन्दगीसे रोग-जीवाणुओंकी वृद्धि होती है और रोगी-देहमें नये जीवाणुओंके संक्रमणमें सहायता प्राप्त होती है। इसके विपरीत सफाई रहनेपर अधिकांश रोग-जीवाणु बढ़ नहीं पाते ; बल्कि उनमेंसे अनेक ध्वंस हो जाते हैं। पाश्चात्य देशमें एक प्रवाद है—Cleanliness is next to godliness अर्थात् सफाई ही ईश्वर-प्राप्तिका सर्वश्रेष्ठ उपाय है। केवल सफाई अर्थात् शारीरिक सफाई रहनेपर ही भगवद्-प्राप्ति होती है कि नहीं, इस विषयमें यथेष्ट सन्देह है; परन्तु शारीरिक परिच्छन्न रहनेपर देह और मन शुद्ध और प्रफुल्ल रहते हैं और देह, मन, स्वस्थ और प्रफुल्ल रहनेपर कुचिन्ता दूर होकर सत्चिन्तामें सहायता प्राप्त होती है। इस विषयमें तो कोई सन्देह ही नहीं है। यदि इस Cleanliness शब्द देह और मन दोनों ही क्षेत्रोंके लिये प्रयोग किया जाता, तो ऊपर लिखे प्रवाद वाक्यकी सर्वाङ्गीण सार्थकता हो जाती। साधारण रोगमें साफ रहना तो कर्त्तव्य है ही ; परन्तु संक्रामक रोग होनेपर सफाई तो अपरिहार्य हो जाती है। पाश्चात्य-देशोंमें संक्रामक रोगमें खूब निष्ठाके साथ सफाईपर ध्यान दिया जाता है। पूर्वके देश-समूह भी पहले यह अच्छी तरह ही जानते थे, इसका प्रमाण भी भरपूर मिलता है। छोटी माता, चेचक वगैरह संक्रामक बीमारियोंमें शारीरिक और आन्तरिक पवित्रताकी रक्षाकर रोगी और रोगीके बिछावन आदि स्पर्श करनेका नियम अब भी इस देशमें प्रचलित है ; पर आजकल धर्मका अंग समझकर ही अन्धभावसे अनेक स्थलोंमें इस पवित्रताकी रक्षा की जाती है।

उपस्थके निम्न-भागमें एक थैलीमें रहता है। प्रमेह आदि कारणोंसे इस स्थानका प्रदाह, काठिन्य, अंत्र-वृद्धि या हार्निया आदि बीमारियाँ होती हैं।

वंक्षणदेश—प्रमेह, उपदंश या चोटकी वजहसे बाघी, अन्त्र-वृद्धि या हार्निया प्रभृति पुट्ठे या वक्षणदेशकी साधारण बीमारियाँ हैं।

कमरमें— कटि-शूल, वात, दर्द-गुर्दा (रेनल कालिक) प्रभृति बीमारियाँ होती हैं। लम्बर हार्नियाकी बीमारी बहुत कम होती है।

उरुमें "हार्निया" या अंत्र-च्युति और उरुके पीछेकी ओर सायेटिक स्नायु-शूल ("सायेटिका") बहुत ही कष्टदायक बीमारी होती है।

मेरुदण्ड—क्षय, क्षयके कारण टेढ़ापन, मेरुमज्जाका अर्बुद प्रभृति मारात्मक बीमारियाँ होती हैं।

हाथ-पैर—हाथमें हृत्पिण्डकी बीमारीके कारण प्रतिफलित स्नायु-शूल, पक्षाघात, वात प्रभृति कठिन रोग हो सकते है। पैरमें उपदंशके कारण नाना प्रकारके विकार, सड़े घाव (गैंग्रीन), रेनल्डस डिजीज प्रभृति दुरारोग्य बीमारियाँ होती हैं।

रोगीकी सुश्रूषा

परिष्कार-परिच्छन्नता, धैर्य और निष्ठा—रोगीकी सुश्रूषाके ये तीन सबसे प्रधान अंग हैं। "ये तीनों कर्त्तव्य अवश्य पालन करूँगा"—मनमें ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा कर सुश्रूषा करनेवालेको रोगीके घरमें प्रवेश करना चाहिये। स्वभावतः जिनमें इन तीन गुणोंमेंसे किसी एकका भी अभाव दिखाई देता हो, उसको सुश्रूषा करनेवालेका एकदम अभाव न हो, तो सुश्रूषा करना तो दूर रहा, रोगीको देखनेके लिये भी ऐसे मनुष्यको रोगी-गृहमें प्रवेश न करने देना चाहिये।

परिष्कार-परिच्छन्नता—सुश्रूषा करनेवालोंका अंग, पोशाक, रोगीके घरमें रहनेवाले समान, बिछावन, पात्र आदि साफ-सुथरे न रहनेपर, खासकर जो व्यक्ति स्वभावतः गन्दे अर्थात् साफ-सुथरे रहना नहीं जानते, उनपर सुश्रूषाका भार यदि दे दिया जाता है, तो गन्दीके कारण रोग दबनेके बदले बढ़ जाता है। आधुनिक विज्ञानने प्रमाणित कर दिया है कि गन्दगीसे रोग-जीवाणुओंकी वृद्धि होती है और रोगी-देहमें नये जीवाणुओंके संक्रमणमें सहायता प्राप्त होती है। इसके विपरीत सफाई रहनेपर अधिकांश रोग-जीवाणु बढ़ नहीं पाते ; बल्कि उनमेंसे अनेक ध्वंस हो जाते हैं। पाश्चात्य देशमें एक प्रवाद है—Cleanliness is next to godliness अर्थात् सफाई ही ईश्वर-प्राप्तिका सर्वश्रेष्ठ उपाय है। केवल सफाई अर्थात् शारीरिक सफाई रहनेपर ही भगवद्-प्राप्ति होती है कि नहीं, इस विषयमें यथेष्ट सन्देह है ; परन्तु शारीरिक परिच्छन्न रहनेपर देह और मन शुद्ध और प्रफुल्ल रहते हैं और देह, मन, स्वस्थ और प्रफुल्ल रहनेपर कुचिन्ता दूर होकर सत्‌चिन्तामें सहायता प्राप्त होती है। इस विषयमें तो कोई सन्देह ही नहीं है। यदि इस Cleanliness शब्द देह और मन दोनों ही क्षेत्रोंके लिये प्रयोग किया जाता, तो ऊपर लिखे प्रवाद वाक्यकी सर्वाङ्गीण सार्थकता हो जाती। साधारण रोगमें साफ रहना तो कर्त्तव्य है ही ; परन्तु संक्रामक रोग होनेपर सफाई तो अपरिहार्य हो जाती है। पाश्चात्य-देशोंमें संक्रामक रोगमें खूब निष्ठाके साथ सफाईपर ध्यान दिया जाता है। पूर्वके देश-समूह भी पहले यह अच्छी तरह ही जानते थे, इसका प्रमाण भी भरपूर मिलता है। छोटी माता, चेचक वगैरह संक्रामक बीमारियोंमें शारीरिक और आन्तरिक पवित्रताकी रक्षाकर रोगी और रोगीके बिछावन आदि स्पर्श करनेका नियम अब भी इस देशमें प्रचलित है ; पर आजकल धर्मका अंग समझकर ही अन्धभावसे अनेक स्थलोंमें इस पवित्रताकी रक्षा की जाती है।

काम करता है। रोगी बहुत दिनोंतक एक ही घरमें, एक ही शय्यापर एकमात्र सुश्रूषाकारीका संग प्राप्तकर स्वभावतः स्नायु-प्रधान हो जाता है। रोगीकी ऐसी इच्छा होती है कि सुश्रूषाकारी उसके दुःखका साथी हो, उसके मनके अनुसार हो और उसके दुःखमें सहानुभूति-सम्पन्न हो। इस कारणसे और दूसरा कोई काम न रहनेके कारण, बहुत दिनोंका शय्याशायी रोगी हमेशा अपने सुश्रूषाकारीका व्यवहार चेहरा और हाव-भाव विशेषकर लक्ष्य किया करता है। सुश्रूषा करनेवालेके चेहरेपर थोडा-सा भी असन्तोषका भाव, विरक्तिका भाव, लक्ष्य करते ही रोगीका मन वेतरह खराब हो जाता है और साथ-ही-साथ रोग-वृद्धि भी हो जाती है। इसलिये सुश्रूषा करनेवालेको हमेशा प्रफुल्ल रहना चाहिये और रोगीके प्रति स्नेह, प्रीत और सहानुभूति दिखाते रहना चाहिये; अपने किसी काम या व्यवहारसे अधीरता या असन्तोष न प्रकट होने देने चाहिये। पहले ही बताया जा चुका है कि किसी भी रोगीके सामने अनर्थक खेद प्रकट करने, आँसू बहाने, रोने या दुःख सूचक भाव-भंगी करनेसे रोगी हताश हो जाता है और उसका परिणाम यह होता है कि उसमे रोगीकी वृद्धि हो जाती है। इसीलिये, दुर्बल चित्त और अधीर व्यक्तियोंको रोगके पास नहीं जाने देना चाहिये। अन्तमें चिकित्सकके धैर्यके सम्बन्धमें संक्षेपमें कुछ कहा जाता है। यदि चिकित्सक धैर्य अवलम्बन न करेगा, तो रोगीके राग निदानमें भूल हो जायगी। व्यवस्था किये हुए औषधकी क्रिया प्रकट करनेका उपयुक्त समय न देकर बार-बार व्यवस्था-पत्रका परिवर्त्तन किया जाता है, तो रोगीको अशेष हानि पहुँचती है।

"निष्ठा" सुश्रूषाकारीका एक प्रधान अंग है। रोगीको सब तरहसे सहायता पहुँचाकर उसे आरोग्य-पथपर लानेका संकल्प किये बिना जो सुश्रूषाके लिये रोगी-गृहमें प्रवेश करता है, वह सुश्रूषाकारी कहलाने योग्य नहीं है। पार्थिव प्रतिदानकी प्रत्याशा न कर, रोगीके आरोग्य

कार्यमें सहायता करना ही एकमात्र कर्त्तव्य है। यह ज्ञान, विश्वास और दृढ़-प्रतिज्ञा, जिसमें है, वे ही ठीक-ठीक भावसे रोगीकी सुश्रूषा कर सकते हैं। निष्ठावान सुश्रूषाकारी रोगीके मनमें जो शान्त दे सकता है, उतनी शान्ति और शायद किसी तरह उसके मनमें नहीं पहुँच सकती। निष्ठावान सुश्रूषाकारीकी सेवा और यत्नसे रोगीके मनमें विमल आनन्द और अतुल्यनीय वल प्राप्त होता है और इसीका यह परिणाम होता है कि वह सहजमें ही आरोग्य प्राप्त कर सकता है।

अब हमलोग संक्षेपमें सुश्रूषाके दूसरे-दूसरे प्रधान ज्ञातव्य विषयोंका एक-एककर वर्णन करेंगे।

रोगी-गृह—घरमें जो सवसे अच्छा कमरा हो, वही रोगीके लिये चुनना चाहिये। शहरमें घरका जो कमरा सवसे प्रशस्त हो, खूब हवा और रोशनी आती हो, अन्य कमरोंसे कुछ अलग हो, वही रोगीके लिये निर्वाचन करना चाहिये; क्योंकि रोग आरोग्यके लिये सेवा-सुश्रूषा और चिकित्सा जितनी आवश्यक है, रोशनी और हवा भी उतनी ही आवश्यक है। कितनी ही वार चिकित्सककी सहायताके विना ही आरोग्य हो जाना आश्चर्यकी बात नहीं; परन्तु प्रकृतिदत्त इन दोनों चीजोंके विना रोगी आरोग्य नहीं हो सकता; यदि यह भी कहा जाये, तो अत्युक्ति नहीं। धनुष्टंकार तथा आँखकी कुछ बीमारियोंमें अन्धेरा या अन्धेरी कोठरीकी जरूरत पड़ती है; परन्तु कोठरी प्रशस्त होनी चाहिये, जिसमें रोगी अपनेको संकीर्ण न समझे। प्रशस्त कमरेमें अधिकतर विशुद्ध हवा और रोशनी प्रवेश कर सकती है और विशुद्ध वायुके आवा-गमनमें भी सहायता मिलती है। प्रशस्त गृह सेवा-सुश्रूषाके भी अनुकूल होता है। ग्राममें घरके जिस कमरेमें रोशनी और हवा जाती हो, वही निर्जन-गृह रोगीके लिये चुनना चाहिये। रोगीके लिये दक्षिण ओरके दरवाजेवाला कमरा प्रशस्त होता है। रोगीवाले कमरेमें अनावश्यक

असबाब और रोगीके पसन्दमें न आनेवाली चीजें न रखनी चाहियें। कमरेके बीचमें खाट या चौकी, नहीं तो फर्शपर ही बिछावन लगाना चाहिये। दरवाजेमें एक पर्दा रहे, तो और भी अच्छा है। दवा इत्यादिके लिये कोनेमें टेबिल रखना चाहिये। दूसरे कोनेमें पथ्य आदि और अन्यान्य आवश्यक पदार्थोंके लिये एक टेबिल रहे, तो और भी अच्छा है। उपयुक्त स्थानपर एक घड़ी रख देनी चाहिये। औषधके टेबिलपर, रोगीका विवरण लिखनेके लिये एक पुस्तिका, दवात, कलम, थर्मामीटर, औषध-पत्रादि और व्यवस्था-पत्र, सब सजाकर इस तरह रखने चाहिये कि जरूरत पड़ते ही सहजमें सब चीजें मिल जायें; दूसरे कोनेके टेबिलपर पथ्य आदि सजाकर रखना चाहिये। दरवाजेके पास अथवा किसी दूसरे उचित स्थानपर गमछा या तौलिया, साबुन, हाथ धोनेका पानी और पात्र आदि रखना चाहिये। घरकी खिड़कियोंमें साफ पर्दे लगा देना चाहिये, जिसमें कि चिकित्सकके उपदेशके अनुसार रोशनी और हवा नियमित की जा सके। रोगीकी शय्याके बगलमें सुश्रूषा करनेवालेके लिये एक अलग आसन रखना चाहिये। सुश्रूषामें सुविधाके लिये रोगीकी शय्याके बगलमें एक छोटा टेबिल या चौकी अलग ही रखनी चाहिये। दीवारमें आइना, कंघी, कैलेण्डर और तस्वीरें न रहेंगी; सहजमें ही देखनेमें आये, ऐसी जगहपर रोगीका प्रियतम चित्र रह सकता है। कमरेमें आलमारी या कोई दूसरा अनावश्यक पदार्थ न रहे। दिनमें दो बार अच्छी तरह धो पोंछकर कमरा साफ कर देना चाहिये। शय्याके बगलमें थूकनेके लिये उगालदान या चिकित्सकके आदेशके अनुसार राख, कोयला या औषध-मिला पानी-भरा पात्र रखना चाहिये। हैजा, चेचक आदि संक्रामक बीमारियोंमें शहरमें मकान हो, तो घरमें एक तरफ और गाँवमें घर हो, तो बाहरी भागका कोई कमरा रोगीके लिये निश्चित करना चाहिये। रोगी गीले, भीड़-भरे घरमें कदापि न रखना चाहिये।

शय्या—पहले ही कहा जा चुका है कि कमरेके बीचमें रोगीकी शय्याका प्रवन्ध करना चाहिये, जिसमें शय्याके चारों तरफ जाने-आनेमें किसी तरहकी असुविधा न हो जाये। रोगीके लिये शय्या वहुत चौड़ी न होनी चाहिये ; परन्तु जो रोगी वेचैन हो, उसके लिये चौड़ी शय्याका प्रवन्ध करना चाहिये। शान्त रोगीके लिये चौकी या खाटके ऊपर और वेचैन रोगीके लिये, जमीनमें ही बिछावनका प्रवन्ध करना चाहिये। चिकित्सकके आदेशके अनुसार बिछावन मोटा या पतला करना होगा। जिन रोगियोंको अनजानमें पाखाना, पेशाव हो जाता है, उनके बिछावनकी चादरके नीचे एक प्रशस्त आयल क्लाथ या रवर क्लाथ देना चाहिये। आवश्यकताके अनुसार नित्य, एक, दो या इससे भी अधिक बार बिछावनकी चादर परिवर्त्तनकर साफ चादर बिछा देनी चाहिये। वीच-वीचमें शय्याकी गद्दी, तोषक आदि धूपमें देना चाहिये। इसी लिये दीर्घ-भोगके रोगीकी सुश्रूषाके लिये बिछावनोंका दो सेट रखना चाहिये। शय्या, मसहरी, शरीरका वस्त्र, तौलिया इत्यादि साफ-सुथरे रहना आवश्यक है।

चीज-वस्तु—अवसादके सम्बन्धमें 'रोगीका गृह' परिच्छेदमें कुछ अभास दिया जा चुका है। रोगीके लिये आवश्यक चीजोंके सिवा रोगीके घरमें और कुछ न रहेगा। चिकित्सकके उपदेशके अनुसार सुश्रूषाकारीके तत्वावधानमें रोगीका ताप देखनेके लिये थर्मामीटर, पथ्य-सेवनके लिये कई छोटे-वड़े चम्मच, फीडिंग कप या छोटी कटोरी, पेशाव करनेका वर्त्तन (युरिनल), मल-पात्र (वेड-पैन), थूकनेका पात्र या स्पिटून (न मिले तो उगालदान), गरम पानीसे सेंकनेका थैला (हाट-वाटर वैग), पेशाव करानेका यन्त्र (कैथिटर), दस्त करानेकी पिचकारी, डूश, आइस वैग (माथेपर वरफ देनेके लिये वरफकी थैली), घड़ी इत्यादि आवश्यक पदार्थ रोगीवाले कमरेमें सजाकर रखना चाहिये।

शुश्रूषाकारी—शुश्रूषाकारीके सम्बन्धमें इस अध्यायमें पहले कुछ बताया गया है। माता, पिता, भ्राता, भग्नी, बन्धु इत्यादि नजदीकी रिश्तेदार और रोगीके प्रियजनोंमेंसे किसीको शुश्रूषाकारी निर्वाचन करना अच्छा होता है; क्योंकि इनकी आन्तरिक सेवामें और अस्वस्थावस्थामें इन सब अपने आदमियोंके पास रहनेपर रोगीको बहुत कुछ आराम मिलता है, परन्तु इन सब आदमियोंमें यदि "परिष्कार-परिच्छन्नता, धैर्य और निष्ठा" प्रभृति गुण न हो, तो किसी बाहरी मनुष्यको शुश्रूषाकारीको चुनना चाहिये। ऊपर बताये तीनों गुणोंके साथ-ही-साथ शुश्रूषाकारीको स्वस्थ, क्रोधहीन, नम्र और चतुर भी होना चाहिये। कठिन रोगीके लिये पारी बाँधकर दो, तीन या चार मनुष्य और साधारण रोगीके लिये एक मनुष्य होनेसे ही काम चल जायगा। शुश्रूषाकारीको धीरे-धीरे मुस्कुराते हुए रोगीके कमरेमें प्रवेश करना चाहिये और जितनी देरतक रोगीकी सेवा करता रहे, तबतक उसको हमेशा प्रसन्न भावसे रोगीकी सेवामें लगे रहना चाहिये। शुश्रूषा करनेवालेका चेहरा दुःखित देखकर रोगी निरुत्साह हो जाता है। निराशा रोगीके आरोग्यकी एक बहुत बड़ी बाधा है। कालरा चेचक वगैरह सक्रामक बीमारियोंमें शुश्रूषाकारीको कभी खाली पेट रोगीके कमरेमें न जाना चाहिये। शुश्रूषा करनेके समय जो वस्त्र पहनना हो, उसे शुश्रूषा करनेके बाद, रोगीके कमरेके पास ही ऐसी जगह उतारकर रख देना चाहिये कि कोई उसे छुये नहीं; फिर शुश्रूषा करनेके समय उसे पहन लेना चाहिये। शुश्रूषाकारी, खासकर सक्रामक रोगोंके शुश्रूषाकारीको चाहिये कि जहाँतक सम्भव हो, अन्य मनुष्योंसे न मिले। शुश्रूषाके समय अनावश्यक पोशाक न पहननी चाहिये। ढीली-ढाली पोशाक ही अच्छी होती है। शुश्रूषा करनेवालेके केश, वस्त्र, दाढी इत्यादि बढ़ी न रहना चाहिये। इसपर हमेशा ध्यान रखना चाहिये। रोगी, खासकर सक्रामक रोगीकी शुश्रूषाके समय शुश्रूषा करनेवालेको सभी विषयोंमें संयमी होना चाहिये।

ग्रामोंमें बहुत रात गये कठिन रोगी और संक्रामक रोगीकी सुश्रूषा करनेमें लोगोंको डर मालूम होता है। ऐसे डरपोक मनुष्यपर सुश्रूषाका भार कभी न सौंपना चाहिये ; क्योंकि इनके भयके कारण उपयुक्त सेवा नहीं होती। भयके कारण सुश्रूषाकारीको कड़ी बीमारी या संक्रामक बीमारी होकर मर जाते भी देखा जाता है। संक्रामक रोगीको सेवा करनेके पहले चिकित्सकके आदेशके अनुसार प्रतिषेधक औषध सेवनकर और इस संक्रामक बीमारीके आक्रमणसे आत्मरक्षा करनेका उपाय चिकित्सकसे अच्छी तरह समझ लेने बाद सेवा-कार्यमें ब्रती होना चाहिये। रोगीकी सुश्रूषा करते समय रोगीके कमरेमें पान, सिगरेट, तम्बाकू इत्यादि विलास-द्रव्य सेवन करना अनुचित है और रोगी तथा सुश्रूषाकारी दोनोंके लिये ही अनिष्टकारक है। सुश्रूषाकारीमें एक साथ ही माताकी तरह स्नेह, बन्धुकी तरह प्रेम और नौकरकी तरह आनुगत्य रहना चाहिये।

सुश्रूषा करनेवालेको अति भोजन, अनिद्रा, मैथुन इत्यादि त्याग देना चाहिये। भूखी अवस्थामें सुश्रूषा करनेको न जाना चाहिये। हैजा, क्षय आदि रोगोंमें खाली पेट सुश्रूषा न करनी चाहिये। प्लेगकी बीमारीमें कमर या हाथमें इग्नेशिया-बीन बाँधकर, हैजामें कमरमें ताँबेका पैसा या अधेला अथवा हाथमें बड़ी हड़ बाँधकर और पैर तथा हाथमें सल्फर या गन्धककी बुकनी लगाकर ; क्षय, न्युमोनिया, प्लुरिसी, चेचक इत्यादि रोगोंमें युकैलिप्टस आयल लगाकर सुश्रूषा करना उचित है।

सुश्रूषा—सुश्रूषा करनेवालेको सुश्रूषाके सम्बन्धमें एक साधारण ज्ञान रहना आवश्यक है ; परन्तु हरेक स्थानपर एकदम बँधी गतसे सुश्रूषा नहीं हो सकती और उचित भी नहीं हैं ; पर प्रत्येक रोगीकी सुश्रूषा चिकित्सकके बताये अनुसार करना कर्त्तव्य है। ऐसा भी हो सकता है कि साधारण प्रणालीसे एक रोगीकी सेवा करनेपर उसका रोग और

रोगकी तकलीफ घटनेके बदले बढ़ जा सकती है। कितने ही साधारण नियम नीचे संक्षेपमें बताये जाते हैं।

प्रायः सब तरहकी बीमारीमें रोगीके लिये सम्पूर्ण विश्रामकी व्यवस्था करना उचित है। इसीलिये सभी समय सुश्रूषाकारीको रोगीपर सतर्क दृष्टि रखनी पड़ती है। कोमल और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहारसे रोगीको पूरी तरह वशीभूत करना सुश्रूषाकारीका एक प्रधान गुण है। जो रोगी सहानुभूति और कोमल व्यवहारसे वशीभूत नहीं हो सकते, उनको प्रभुत्वव्यंजक आदेश और व्यवहार द्वारा वशीभूत रखना उचित है। सहानुभूति और प्रबोध आदि द्वारा रोगीका मन जयकर उसको चिकित्सकके निर्देशके अनुसार चलाना पड़ेगा। रोगीकी सुश्रूषा करनेके समय उसके प्रति विरुद्ध और अप्रीतिकर व्यवहार करनेसे रोगीकी यंत्रणा बढ़ जाती है और सुश्रूषाकारीकी सेवासे उपकारके बदले अपकार ही होता है।

हैजा, चेचक, छोटी माता, डिफ्थीरिया, टायफायड, क्षय इत्यादि संक्रामक रोगोंकी सुश्रूषा करनेके पहले, सबके पूर्व चिकित्सकके निर्देशके अनुसार आत्मरक्षार्थ प्रतिषेधकका प्रबन्धकर और प्रतिषेधक उपाय अच्छी तरह जानकर सुश्रूषा-कार्यमें व्रती होना पड़ता है। सुश्रूषाका भार ग्रहण करनेके साथ-ही-साथ इस बातपर भी नजर रखने और ऐसा प्रबन्ध करनेकी जरूरत है कि रोग परिवार या मुहल्लेमें न फैल जाये। रोगीके रहनेकी व्यवस्था ऐसे स्थानमें करनी होगी, जहाँ बस्ती कम हो और रोशनी तथा हवा भरपूर प्राप्त हो। रोगी-गृहके सम्बन्धमें पहले ही संक्षेपमें बताया जा चुका है। पहले जिस घरमें रोगी रहता था, उस घरको चिकित्सकके कहे अनुसार जीवाणु-रहित करना होगा। रोग पकड़में आनेके पहले रोगीके व्यवहारमें आयी हुई चीजें और वस्त्र चिकित्सकके निर्देशके अनुसार नष्ट या शोधन कर लेना होगा। रोगीका मल, मूत्र और थूक इत्यादि चिकित्सकके निर्देशके अनुसार रोगाणु-वर्जित

कर नष्ट कर देना पड़ेगा। रोगीके व्यवहृत तथा अन्य पदार्थ चिकित्सकके बताये ढंगसे औषध डालकर पृथक-भावसे संशोधन कर लेना होगा। ये साधन सर्वसाधारणके व्यवहृत स्थानमें न रखने चाहियें। रोगीके वस्त्र इत्यादि शोधन किये बिना धोबीको न देने चाहियें या तालाबके पानीमें धोने न चाहियें। संक्रामक रोगीका मल, मूत्र आदि शोधन किये बिना सर्व साधारणके मल-मूत्र त्यागनेके स्थानपर न फेंकना चाहिये। ग्रामोंमें रोगीका मल, मूत्र, थूक इधर-उधर फेंक दिया जाता है और तालाबमें वस्त्र तथा अन्य चीजें धो दी जाती हैं इत्यादि कारणोंसे रोग फैल जाता है और महामारी पैदा हो जाती है।

रोगी, रोगीकी चीजें, रोगीका मल, मूत्र, थूक इत्यादिपर तथा रोगीके पास मच्छर, मक्खी, कीड़े आदि न आने पाये, इसपर तीक्ष्ण दृष्टि रखनी होगी। अभिज्ञतासे मालूम हुआ है और आधुनिक विज्ञानने प्रमाणित कर दिया है कि मच्छर और मक्खियोंके द्वारा ही रोग फैलता है और जन-पद-ध्वनी भीषण महामारीकी सृष्टि हो जाती है। मच्छर, मक्खी, खटमल प्रभृति कीट-पतंगोंको साक्षात् यमदूत या प्रलय-दूत भी यदि कहा जाये, तो अत्युक्ति नहीं है।

वकवादी, दुर्बल-चित्त और रोगीका जो अप्रिय है, ऐसे मनुष्यको रोगीके घरमें आने देना तथा एक साथ वहुतसे मनुष्योंका रोगीके कमरेमें इकट्ठा होने देना उचित नहीं है। रोगी देखनेके लिये आनेवालेको रोगीके कमरेमें प्रवेश करने देनेके पहले, रोगीका किसमें मंगल और अमंगल हो सकता है, यह उन्हें समझा देना चाहिये। संक्रामण रोगीके कमरेमें नितान्त प्रिय-पात्रके सिवा और किसीको जाने देना उचित नहीं है।

एक सादी कापी या एक्सरसाइज बुकमें प्रत्येक दिनके लिये एक या दो पृष्ठ बना रखना चाहिये और इसमें उत्ताप, मल, मूत्र, वमन, पथ्य, नाड़ीकी गति, श्वास-प्रश्वास, औषध और विशेष लक्षणके लिये एक

विभाग या खाना बना लेना चाहिये और उसमें यथा समय यह सब लिख रखना चाहिये। पाठकोंकी सुविधाके लिये १८२ न० पृष्ठमें एक "रोगीकी सुश्रूषा-निर्घण्ट" की प्रतिलिपि छपा दी गयी है।

ताप—चिकित्सकके निर्देशके अनुसार प्रत्येक ३, ४ या ६ घण्टोंके अन्तरसे तापमान यन्त्र (थर्मामीटर) की सहायतासे ताप ग्रहणकर समय और तापका परिमाण पुस्तकके तापके विभागमें लिख रखना चाहिये। साधारणतः तापमान यंत्र बगलमें ही लगाया जाता है; परन्तु रोग और अवस्था-भेदके अनुसार, चिकित्सकके बताये अनुसार, मुँह, बगल, घुटनेकी सन्धि प्रभृति स्थानोंसे भी ताप लिया जा सकता है। बगलका ताप स्वस्थ शरीरमें ९७°—९८° और मुँहका ताप एक डिगरी ज्यादा अर्थात् ९८°—९९° रहता है।

मल—पाखाना होनेके समय घडी देखकर मलके खानेमें लिख रखना चाहिये। मलमें अगर कोई विशेषत्व हो या किसी तरहका परिवर्त्तन दिखाई दे, तो वह भी लिख रखना चाहिये। कमजोर रोगीके लिये सोये-सोये बेड पेनमें या गाँवोंमें मिट्टीके बरतनमें पाखाना फिरनेका प्रबन्ध कर देना चाहिये। पहले बताये अनुसार और चिकित्सककी व्यवस्थाके अनुसार मलको रोग-जीवाणुसे रहित कर नष्ट करना होगा।

मूत्र—पेशाबके सम्बन्धमें भी मलके विषयमें बताया नियम ही पालन करना पडता है। युरिनेल और यह न हो, तो मिट्टीके बरतनमें या चौडे मुँहके बोतलमें पेशाब करनेका प्रबन्ध करना चाहिये।

वमन—वमनके सम्बन्धमें भी मल सम्बन्धी नियम ही पालन करने चाहियें।

नाड़ी—चिकित्सकके बताये अनुसार निर्द्धारित समयके अन्तरसे नाडीकी गति, प्रति मिनट नाडीका स्पन्दन, कोमलता, दुर्बलता या कठिनता, सविरामता या रुककर चलना अथवा कोई दूसरी विशेषता

हो, तो ध्यान देकर उसे देखना और नाड़ीवाले खानेमें लिख देना चाहिये। घड़ीकी सेकेण्डवाली सुई एक निर्दिष्ट स्थानसे चलकर फिर उसी स्थानपर पहुँचनेतक जितनी बार नाड़ीका स्पन्दन होता है, नाड़ीकी गति मिनटमें उतनी ही बार जाननी चाहिये।

श्वास-प्रश्वास—न्युमोनिया, प्लुरिसी, थाइसीस, दमा प्रभृति श्वास-यंत्र-सम्बन्धी बीमारियोंमें और दूसरी-दूसरी सब बीमारियोंमें, जिनमें श्वास-प्रश्वासके सम्बन्धमें ठीक-ठीक समाचार चिकित्सकको मालूम होना आवश्यक रहता है, उन सब बीमारियोंमें निर्दिष्ट समयके अन्तरसे प्रति मिनट कितनी बार साँस चलती है, साँस लेने-छोड़नेमें तकलीफ होती है या नहीं, नाकसे या मुँहसे रोगी साँस लेता है, श्वासकी क्रिया दीर्घ है या प्रश्वासका कार्य दीर्घ है, श्वास-प्रश्वासके समय दूसरी क्या तकलीफें होती हैं इत्यादि श्वास-प्रश्वासवाले खानेमें लिखा देना चाहिये। सीनेपर हाथ रखकर या रोगीके सीनेपर घड़ी रखकर घड़ीकी सेकेण्डवाली सुईके एक बार पूरी तरह घूम आनेके समयके बीचमें कितनी बार श्वास-प्रश्वासकी क्रिया हुई, इसकी गणना सहजमें ही हो सकती है।

पथ्य—चिकित्सकके बताये अनुसार अपने हाथसे या अपनी देख-रेखमें या निर्भर करने योग्य मनुष्यके द्वारा पथ्य तैयार कराकर निर्दिष्ट समयके अन्तरसे रोगीको सेवन करना पड़ता है और पुस्तकके निर्दिष्ट खानेमें लिख रखना पड़ता है। कितनी ही बार रोगीमें कुपथ्य खानेकी प्रबल इच्छा होती है और वह सुश्रूषा करनेवालेसे इसके लिये अनेक प्रकारका अनुनय-विनय करता और भय दिखाता है। सुश्रूषा करनेवालेको इस विषयमें सावधान रहना आवश्यक है। प्रत्येक बार पथ्य देनेके पहले नवीन पथ्य तैयार कर लेना पड़ता है। पथ्यकी सामग्री कभी खुली न रखनी चाहिये; साफ बरतनमें ढँककर रखनी चाहिये। दुर्बल रोगीको तरल पथ्य लेटे-लेटे ही फीडिंग कप, चम्मच या सीपके सहारे

बार-बार थोड़ा-थोड़ाकर खिलाना चाहिये। सभी रोगोंमें एक ही बार बहुत-सा पथ्य न खिलाकर बार-बार थोड़ा-थोड़ाकर देना चाहिये।

औषध—चिकित्सककी रायके अनुसार रोगीको यथा समय दवा खिलानी पड़ती है और उसे यथा-स्थान लिख रखना पड़ता है। नींदसे जागकर कभी दवा या पथ्य न देना चाहिये या नाड़ी, श्वास-प्रश्वासकी गति प्रभृति न जाँचनी चाहिये।

विशेष लक्षणादि—जैसे—प्रलाप (हल्का या तेज, प्रलापमें कैसी बातें कहता है), पसीना, प्यास, नींद, भूख, मानसिक अवस्था, शय्याक्षत (bed-sore), रक्त-स्राव (कहाँसे कैसा रक्त-स्राव होता है), लार बहना, प्रदाह दर्द (कहाँ किस तरहका), जलन, सर-दर्द, हाथ-पैरोंकी ठण्डक, बहुत ज्यादा पंखेकी हवा खानेकी इच्छा, मुँहमें घाव, श्वासकष्ट, बेचैनी प्रभृति विशेष लक्षणमें या मन्तव्यवाले खानेमें लिख रखना होगा। अनियमित और बहुत कमजोर नाड़ी, श्वासकृच्छ्रता, रक्त-वमन, असामान्य और तेजीसे बढ़ती हुई अवसन्नता, आँख, मुँह बैठ जाना, हिमांग इत्यादि मारात्मक लक्षण प्रकट होनेपर सुश्रूषाकारीको तुरन्त चिकित्सकको समाचार भेजवाना चाहिये।

डूश देना—चिकित्सकके निर्देशके अनुसार रोगीको समयपर डूश देना सुश्रूषाकारीका कर्त्तव्य है। चिकित्सकके निर्देशके अनुसार थोड़े गर्म पानीमें साबुन या नमक मिला लेना पड़ता है। साधारणतः बृहदंत्रसे दूषित मल निकालनेके लिये ही डूश दिया जाता है। छोटी कृमि आदि उपसर्गोंमें अधिकतर मात्रामें लवण या क्वासियाके पानीसे डूश दिया जाता है।

डूश देनेके पहले—डूश, डूशका नल, नलके मुँहपरका कैथिटर, यह सब गर्म पानीमें अच्छी तरह धो लेना आवश्यक है। इसके बाद डूशमें आवश्यकतानुसार साबुन या नमक मिलाकर थोड़ा गर्म पानी ले,

बिछावनसे कुछ ऊँचेपर रखना चाहिये। डूशमें पानी भरकर डूश देनेके पहले थोड़ा पानी निकाल देना चाहिये। इससे डूशके नलसे वायु निकल जाती है।

रोगीके बिछावनपर आयल क्लाथ बिछाकर रोगीको दाहिनी करवट सुला देना चाहिये या रोगी यदि बहुत कमजोर न हो, तो घुटने मोड़कर पट सुला देने बाद डूशका प्रयोग करना चाहिये। डूशके कैथिटरके मुँहपर और मलद्वारमें थोड़ा-सा ओलिव आयल, नारियलका तेल या घी लगा देना अच्छा रहता है। कैथिटर या नोजल मलद्वारमें धीरे-धीरे १-२ इञ्च परिमाणमें प्रवेश कराकर धीरे-धीरे नलकी चाभी खोल देनी चाहिये, जिसमें पानी धीरे-धीरे आँतोंमें प्रवेश कर सके। डूश-कैनका पानी घटता दिखाई देनेसे ही मालूम हो जाता है, कि पानी भीतर जा रहा है। इस समय धीरे धीरे डूश-कैन ऊँचे उठाना और नल दो-अढ़ाई इञ्च मलद्वारमें प्रवेश करा देना पड़ता है। पानी जानेके समय जोरका पाखाना लग सकता है, ऐसे मौकेपर कल बन्दकर थोड़ी देरके लिये जल प्रवाह बन्द कर देना चाहिये।

साधारणतः तीन पावसे लेकर पाँच पाव पानी आँतोंमें प्रवेश कर जानेसे ही काम हो जाता है। डूश-कैनका सब पानी समाप्त होनेके पहले ही कल बन्दकर जलका आना बन्द कर देना चाहिये। आँतोंमें पानी जानेके समय दुबारा डूश-कैनमें पानी डालना उचित नहीं है।

डूशकी नली बाहर निकालनेके साथ-ही-साथ थोड़ा साफ कपड़ा या रूईसे केवल मलद्वारको कसकर दबा रखना चाहिये। इसके बाद दुर्बल रोगीको शायितावस्थामें और सबल रोगीको बैठाकर मिट्टीकी हाँडी या बेड-पैनमें पाखाना फिराना चाहिये।

बहुत बार डूश देनेपर रोगी कमजोर हो जाता है। इसलिये रोगीके प्रति विशेष लक्ष्य रखना चाहिये। हवाकर और माथा, आँख, मुँह धुलाकर रोगीको शान्त करनी चाहिये।

पिचकारी और ग्लिसरिन सपोजिटरी प्रयोग—चिकित्सकके उपदेशके अनुसार यथा-समय पिचकारीमें ग्लिसरिन भरकर, डूश देनेकी तरह, रोगीको सुलाकर मलद्वारमें पिचकारी देनी पड़ती है। पिचकारी देनेके वाद नली निकालकर डूश देनेकी तरह ही साथ-ही-साथ मलद्वारको साफ कपड़ा या रूईसे कुछ देरतक दबा रखना पड़ता है, जिससे ग्लिसरिन मलांत्रके मलके साथ अच्छी तरह मिल जाये। ग्लिसरिन सपोजिटरी भी मलांत्रमें घुसाकर कुछ देरतक साफ कपड़ेसे मलद्वारको दवा रखना पड़ता है, जिससे शरीरकी गर्मीसे सपोजिटरी गलकर मलसे खूब मिल जाये। इसके वाद वेड-पैन या मिट्टीके वरतनमें पाखाना फिराना पड़ता है। पिचकारी या सपोजिटरीके वाद मलांत्रका मल निकालनेमें सहायता मिलती है।

कैथिटरसे पेशाब कराना—यदि रोगीका पेशाव रुक जाये, तो चिकित्सककी रायके अनुसार कैथिटरके सहारे पेशाव कराना पड़ता है। कैथिटर दो तरहका होता है—धातुका और रवरका। आजकल सुजाक और पथरीके सिवा अन्य बीमारीमें धातुके कैथिटरका प्रयोग नहीं होता। कैथिटर डालनेके पहले, कैथिटर सुश्रूषा करनेवालेका हाथ और रोगीका मूत्रद्वार परिष्कार और जीवाणु-रहित (sterilized) कर लेना आवश्यक है। इसके वाद रोगीको चित सुलाकर, पैर दोनों फैलाकर, रोगीके दाहिनी बगलमें वैठकर, बाँयें हाथसे उपस्थ ऊपरकी अ र उठाकर धीरे-धीरे कैथिटर प्रवेश करना पड़ता है। कैथिटर प्रवेश करानेके पहले विशुद्ध ओलिव आयल या ग्लिसरिन लगाकर कैथिटर खूब चिकना कर लेना चाहिये। कुछ देरतक कैथिटर प्रवेश कराने वाद, उसकी देह शय्यापर सीधी ऊपरकी ओर रखकर धीरे-धीरे कैथिटर प्रवेश करना पड़ता है। कैथिटरके मलके मुँहपर एक चौड़े मुँहका वोतल या युरिनल रखना चाहिये। कैथिटर प्रवेश करानेके समय यदि बीचमें बाधा प्राप्त हो, तो जोरसे प्रवेश करनेकी चेष्टा न करें, कैथिटर निकालकर, फिर

उसमें तेल या ग्लिसरिन लगाकर चिकना करने बाद धीरे-धीरे प्रवेश करना चाहिये। जबर्दस्ती कैथिटर प्रवेश करानेकी चेष्टा करनेपर मूत्रनली अधिकतर सकुचित हो जाती है। स्त्रियोंको कैथिटर प्रयोग करना कष्टकर नहीं है; परन्तु सफाईकी ओर विशेष दृष्टि रखना आवश्यक है।

स्पंज करना—रोगीवाले कमरेका दरवाजा, खिडकियाँ बन्दकर और रोगीको आयल क्लाथपर सुलाकर, चिकित्सकके उपदेशके अनुसार ठण्डे या गरम पानीमें साफ कपडा या तौलिया भिगाकर रोगीका समूचा शरीर पोछ देना चाहिये; सर्दी लगने लगे, इतना ठण्डा पानी या बदन जलने लगे, ऐसा गरम जल काममें न लाना चाहिये। साधारण ठण्डा पानी और हाथमें सहे, इतना गरम पानी ही स्पजके उपयुक्त होता है। स्पज कराने बाद रोगीका समूचा शरीर साफ कपडेसे ढँककर धीरे-धीरे एक-एककर दरवाजे, खिडकियाँ खोल देनी चाहियें।

थर्मामीटर—शरीरका ताप मापनेके लिये थर्मामीटरका प्रयोग किया जाता है। साधारण स्वस्थ व्यक्तियोंका गात्र-ताप ९७°—९८° रहता है; ज्वर आनेपर यह उत्ताप बढ जाता है। सबेरेके वक्तके गात्र-तापसे सन्ध्याके समयका गात्र-ताप साधारणतः एक आध डिगरी ज्यादा रहता है। समूचा दिन काम करने रहनेकी वजहसे क्षय ही सन्ध्याकी ताप-वृद्धिका प्रधान कारण है। बगलमें ही थर्मामीटर लगाना प्रशस्त है। बगलमें यदि पसीना हो, तो पसीना पोंछकर और थर्मामीटरका पारा ९५° तक उतारकर थर्मामीटर बगलमें देकर हाथसे ४-५ मिनट दबा रखना चाहिये। साधारणतः थर्मामीटर आध मिनट या एक मिनटतक लगानेका नियम है; पर ये सब पूर्ण परीक्षित नहीं रहते। इसलिये आध मिनटमें प्रायः किसीमें भी ठीक नहीं उठता है। ताप लिखकर फिर थर्मामीटरका पारा ९५° तक उतारकर, थर्मामीटर खोलमें रख देना चाहिये। मुँहके भीतरका ताप बगलके तापसे एक डिगरी ज्यादा रहता है। आबहवाके परिवर्त्तनसे मुँहके तापका परिवर्त्तन

नहीं होता। इसलिये मुँहका ताप ठीक माना जाता है; पर यदि थर्मामीटर टूटकर पारा मुँहमें चला जाये, तो नाना प्रकारका अनिष्ट हो सकता है, इसलिये बगलमें लगाना ही उचित है। रोगके जीवाणु नष्ट करनेवाली दवासे शोधन किये विना एक रोगीके काममें लाया हुआ थर्मामीटर दूसरेको न लगाना चाहिये।

रोगीका सुश्रूषामें चिकित्सकका कर्त्तव्य—रोगीकी सुश्रूषा-कार्यमें भी चिकित्सककी जिम्मेदारी कम नहीं है। ठीक दवा चुनने और व्यवस्था कर देनेसे ही उनकी जिम्मेदारी खतम नहीं हो जाती। रोगीकी सुश्रूषा और पथ्यापथ्यका भार सुश्रूषाकारी या आत्मीय-स्वजनके ऊपर छोड़कर निर्लिप्त भावसे रहनेपर उनका ठीक-ठीक कर्त्तव्य पालन नहीं होता। प्रत्येक रोगीकी उपयोगी सुश्रूषा और पथ्यकी व्यवस्था ठीक-ठीक रोगीके रिश्तेदारी और सुश्रूषा करनेवालोंको समझा देना चिकित्सकका आवश्यक कर्त्तव्य है। रिश्तेदार और सुश्रूषाकारी अपना कर्त्तव्य ठीक-ठीक पालन करते हैं कि नहीं, रोगीको देखनेके लिये आनेके समय इसपर भी चिकित्सकको विशेष ध्यान रखना चाहिये।

पथ्य और पथ्य-प्रस्तुत-प्रणाली

देहका क्षय परिपूर्ण करनेके लिये खाद्य खानेकी आवश्यकता पड़ती है। खाया हुआ पदार्थ पचकर रस, रक्त, भेद, मज्जा इत्यादिमें परिणत होते हैं और शरीरको पुष्ट वनाते हैं। स्थान, काल, पात्र, समाजिक रीति प्रभृतिके भेदसे मनुष्य विभिन्न प्रकारके खाद्य ग्रहण किया करता है। शरीर अस्वस्थ रहनेपर भी पोषण और जीवन-धारणके लिये खाद्य ग्रहण करना आवश्यक है; परन्तु रोगीकी पाचन-शक्ति दुर्बल रहती है, इसलिये रुग्न देहकी आवश्यकताके अनुसार पुष्टिकर और सहजमें पचनेवालें खाद्यकी जरूरत पड़ती है। रोगीके खाद्यको ही पथ्य कहते हैं।

पथ्यके सम्बन्धमें कोई बँधा नियम लागू नहीं हो सकता। प्रत्येक रोगके साधारण उपसर्ग और लक्षणके अनुसार एक साधारण पथ्यकी व्यवस्था जरूर है, प्रत्येक रोगीका गठन, धातु, रुचि और प्रिय, अप्रिय इत्यादि व्यक्तिगत विशेषताओंके अनुसार पथ्यका चुनाव करना पड़ता है। *रोगीका स्वभाव, अभ्यास, रोगका प्रकोप, रोगका अवस्था,* रोगके अनुसार क्षय, सामाजिक और पारिवारिक रीति-नीति, शीत, ग्रीष्म आदि ऋतु, शीत प्रधान, ग्रीष्म-प्रधान इत्यादि वासस्थानके तारतम्यमें इन सबपर भी पथ्यका निर्णय करते समय विचार करना पड़ता है। साराश यह कि सभी रोगमें ही रोगीको सहजमें पच जाये और रुग्न-शरीरमें पोषणकी कमी न हो तथा बीमारी भी न बढ़ जाये—ऐसा पथ्य चुनकर रोगीको देना पड़ता है। धर्म-विश्वासके अनुसार निषिद्ध पथ्य या ऐसी चीजें, जिनसे रोगी घृणा करता हो, अनिवार्य हुए विना पथ्यमें कभी शामिल न करनी चाहिये; क्योंकि ऐसे पथ्योंसे रोगीके मनमें भयानक चोट पहुँचती है और कितनी ही बार अगर जबर्दस्ती खिलाया भी जाता है, तो रोगीको सहन नहीं होता—वमनके साथ निकल जाता है।

रुग्न अवस्थामें पथ्यके चुनावमें बहुत शतर्क रहना आवश्यक है; नहीं तो ठीक-ठीक दवाका प्रयोग होनेपर भी चिकित्सक तथा अपने लोगोंकी समस्त चेष्टाएँ व्यर्थ हो जाती है और रोगी परलोकको पधार जाता है। प्रत्येक पदार्थमें कुछ न कुछ भेषज-गुण है। इसके अलावा पथ्य प्रस्तुत करते समय ये पदार्थ इतने सूक्ष्म और सहज ग्राह्य रूपमें रूपान्तरित कर दिये जाते हैं कि उनसे रोगी के शरीरमें भेषज-गुण प्रकट हो जाते हैं। इसलिये निर्वाचित औषधका प्रयोग करनेपर भी अगर विपरीत पथ्यका प्रयोग हो जाता है, तो रोगीका उपकार होनेके बदले ऐसा अनिष्ट हो जाता है, जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती। कितनी ही बार दवा दिये विना ही, केवल उपयुक्त पथ्य द्वारा ही रोग आरोग्य किया गया है।

रोगीसे छिपाकर, खूब सफाईसे प्रीति-पूर्ण हृदयसे पथ्य तैयार करना चाहिये। बेगार टालनेकी तरह, एक ही बार बहुत-सा पथ्यका पदार्थ तैयारकर रखना और उसीमेंसे बार-बार रोगीको पथ्य देना उचित नहीं है। आलस्य त्यागकर प्रत्येक बार ताजा पथ्य प्रस्तुतकर सेवन करना उचित है। पथ्य बेस्वाद और देखनेमें गन्दा न हो, इसपर भी लक्ष्य रखना चाहिये।

रोगीको एक ही बार बहुत-सा पथ्य सेवन न कराकर, बार-बार थोड़ा-थोड़ा खिलाना चाहिये। दुर्बल रोगीको बिछावनपर न बैठाकर लेटे रहनेकी अवस्थामें ही चम्मच, सीपा या फीडिङ्ग कपके सहारे पथ्य खिलाना चाहिये। पथ्य खिलानेके बाद रोगीका मुँह अच्छी तरह कुल्ला कराकर साफ कर देना चाहिये, जिसमें खाद्य-पदार्थ मुँहमें रहकर सड़ न जाये।

नीचे कई साधारण पथ्य तैयार करनेकी प्रणालियाँ संक्षेपमें वर्णन की जाती हैं :—

सागू—सागूदाना सिझानेके पहले चुन-बीन लेना चाहिये और पूर्णवयस्क व्यक्तिके लिये—एक बारके पथ्यके लिये, चायके चम्मचसे दो चम्मच सागू लेकर पानीमें पहले खूब साफकर धो लेना चाहिये; फिर कुछ देरतक पानीमें भिगो रखना चाहिये। इसके बाद साफ बरतनमें धीमी आँचपर एक सेर मात्रामें पानीमें सिझाकर, जब आधा सेर पानी रहे, तब उतारकर साफ कपड़ेसे छान लेना चाहिये। चिकित्सकके निर्देशके अनुसार कुछ गर्म रहते थोड़ी मिश्रीकी बुकनी या उसके साथ नेबूका रस और नमक मिलाकर सेवन करना चाहिये। चिकित्सक अगर बताये तो थोड़ा दूध भी मिला दिया जा सकता है। नये और पुराने ज्वरकी सभी अवस्थाओंमें, अम्ल-रोगमें और प्रायः सब तरहकी बीमारियोंकी नयी अवस्थाके लिये सागू उत्तम पथ्य है। हमेशा पर्ल-सागू लेना चाहिये। इसे लकड़ीकी आँचमें बहुत देरतक सिझाना पड़ता है।

बार्ली—पूर्णवयस्क व्यक्तिके एक बारके पथ्यके लिये, एक साफ कटोरी या प्यालेमें चायके चम्मचसे दो चम्मच बार्ली लेकर थोड़े पानीमें अच्छी तरह मिला लेना चाहिये। एक साफ बरतनमें एक सेरकी वजनमें पानी इस बार्लीमें मिलाकर पानीको ५-१० मिनटतक सिझाने बाद, उतारकर एक साफ छननेसे छान लेनेके बाद, चिकित्सकके आदेशानुसार नमक, नेबू, मिश्री या दूधके साथ रोगीको सेवन कराना चाहिये।

पहले यह धारणा थी कि बार्ली जितनी ज्यादा सिझायी जाती है, उतनी ही ज्यादा फायदा करती है; परन्तु आधुनिक वैज्ञानिक खोजमें स्थिर हुआ है कि ५—१० मिनटोंसे ज्यादा सिझानेपर बार्लीका पोषक-पदार्थ और खाद्य-प्राण (विटामिन) एकदम नष्ट हो जाता है। अतिसार, अम्ल, हैजा, आमाशय प्रभृति बीमारियोंका बार्ली उत्तम पथ्य है।

पर्ल बार्ली—बार्लीके दानोंको बाछकर एक पूरी उमरवाले मनुष्यके लिये चायके चम्मचसे ४ चम्मच पर्ल बार्ली एक साफ बरतनमें निकालकर खूब सफाईसे धो लेना चाहिये। इसके बाद एक सेर पानीमें एक साफ बरतनमें धीमी आँचपर सिझाना चाहिये। जब आध सेर अन्दाज पानी रह जाये, तब उतारकर छान लेना चाहिये। यह बार्लीका पानी चिकित्सकके आदेशके अनुसार नमक, नेबू, मिश्री या दूधके साथ रोगीको सेवन करनेके लिये देना चाहिये।

आरारोट या शटीका शोरबा—इसको तैयार करनेकी प्रणाली भी ठीक बार्लीकी तरह है। अम्ल अतिसार, हैजा, आमाशय इत्यादि रोगोंमें बार्लीके बदले इसका प्रयोग किया जा सकता है।

दालका रस—चिकित्सकके उपदेशके अनुसार—मूंग, मसूर इत्यादि दाल बाछकर अच्छी तरह धो लेना चाहिये और एक साफ कपड़ेमें ढीली पोटली बाँधकर १६-२० गुने पानीमें बहुत देरतक सिझाकर छान लेना चाहिये। सिद्ध करनेके समय उसमें एक टुकड़ा हल्दी, थोड़ा

नमक और एक-दो गोलमिर्च डालना चाहिये। इस तरह तैयार किये इसमें थोड़ा-सा नेबूका रस डालकर कुछ गर्म रहते ही खानेको देना चाहिये। सब तरहकी नयी और पुरानी बीमारीके वादकी दुर्बलता, अरुचि इत्यादिमें दालका जूस एक उत्तम पथ्य है।

छानाका पानी—एक साफ बरतनमें दूध खौलते रहना चाहिये। दूसरे एक बरतनमें फिटकीरीका पानी बनाकर यह पानी थोड़ा-थोड़ाकर खौलते हुए दूधमें डालते रहना चाहिये। जब दूध फटकर पानी अलग होना आरम्भ हो जाये, तब फिटकिरीका पानी मिलाना बन्द कर देना चाहिये। यदि फिटकिरीका पानी ज्यादा पड़ जाता है, तो छानाका जल बेस्वाद हो जाता है; फिटकिरीके पानीके पहले नेबूका रस डालकर भी छानेका पानी तैयार किया जाता है। इसके वाद साफ बरतनपर एक साफ कपड़ा रखकर छान लेना चाहिये और चिकित्सकके बताये अनुसार नेबूका रस या मिश्री डालकर रोगीको सेवन करना चाहिये। प्रथम बारके बाद, जितनी बार छानेका पानी तैयार करना हो, तो फिटकिरीका पानी या नेबूके रसके बदले पहलेके छानेका पानी डालकर ही ताजा छानेका पानी बना लिया जा सकता है। एक ही बार बहुत-सा पानी बना रखना उचित नहीं है; क्योंकि कुछ देर बाद वह खट्टा हो जाता है। टाइफायड, अविराम ज्वर, पुराना मैलेरिया, अतिसार और आँतोंकी नयी-पुरानी बीमारियोंमें छानेका पानी लाभ करता है।

चीड़ेका पानी—साफ चीड़ा कई वार साफ किये हुए पानीमें धोकर कुछ देरतक भिगो रखना चाहिये। इसके बाद खूब उबालकर लईकी तरह बनाकर यह माँड़ साफ पानीमें घोल, एक साफ कपड़ेमें छान लेना चाहिये। इस तरह जो साफ पानी निकलता है, वह चिकित्सकके बताये अनुसार नेबू, नमक इत्यादि मिलाकर रोगीको पथ्य देना पड़ता है। अजीर्ण, पुराना उदरामय, अमाशय, पुराना ज्वर, टाइफायड इत्यादिमें चोड़ेका पानी लाभ करता है।

चीड़ेका मण्ड—साफकर धोया हुआ चीडा एक साफ कपडेमें ढीलाकर बाँधने बाद एक साफ हाँडीमें पानी डालकर खूब सिझा लेना पडता है। इसके बाद यह चीडा अच्छी तरह मसलकर चिकित्सकके उपदेशानुसार उपयुक्त मात्रा गर्म पानी मिलाकर छान लेना चाहिये। इसके बाद नेबू, नमक, चीनी या मिश्रीके साथ रोगीको पथ्यके रूपमें दिया जा सकता है।

धानके लावाका मण्ड—साफ धानका लावा कपडेमें बाँधकर चीडेके मण्डकी तरह एक ही प्रस्तुत-प्रणालीसे तैयार करना पडता है। अन्तर इतना ही है कि मण्ड तैयार करनेके पहले धानका लावा चीडेकी तरह पानीसे धोया नहीं जाता।

जवका मण्ड—परिष्कार धोया जवका चावल २०-२५ गुने पानीमें मिलाकर खूब उबाल और खौला लेनेके बाद छान लेनेसे जवका मण्ड तैयार हो जाता है।

सूजी—साफ कराहीमें धीमी आँचपर सूजीको धीरे-धीरे भूनकर अन्दाजसे पानी डालकर सिझा लेना चाहिए। इसके बाद खौलती हुई अवस्थामें ही चीनी या मिश्रीका चूर्ण डाल देना चाहिये। इस तरह रोगीके लिये सूजी तैयार होती है। रोगीके लिये तैयारकी जानेवाली सूजीको घीमें न भूनना चाहिये और जबतक चिकित्सककी राय न हो, दूधमें भी न सिझाना चाहिये। रोगीके लिये तैयार की हुई सूजी तरल होनी चाहिये।

सूजीकी रोटी—साफ सूजी देकर पानीमें भिगोंकर और उसका लोंदा बनाकर कुछ देरतक खौलते हुए पानीमें सिझाना होगा। इसके बाद उसकी छोटी-छोटी रोटी बनाकर गर्म पानीमें डूबा लेनेसे सूजीकी रोटी तैयार होती है।

चोकरकी रोटी—चोकरको बहुत देरतक भिगोनेके बाद नरम होनेपर बेलकर रोटी बनायी जाती है। तावेपर हल्की आँचमें सेंक लेने

बाद गर्म पानीसे धो देनेपर रोटी तैयार होती है। पुराना कब्ज, पुराना ज्वर और बहुमूत्र रोगका यह उत्कृष्ट पथ्य है।

पारका भात—पुराना महीन चावल अच्छी तरह धोकर एक साफ वस्त्रमें ढीले भावसे बाँधकर एक हाँड़ी पानीमें सिझाना और भातको खूब उबाल लेना पड़ता है।

रोगीके लिये शोरबा या रसा—चिकित्सकके बताये अनुसार झींगा, परबल, बैगन, कच्चा केला, गूलर प्रभृति, थोड़ा-सा अदरखका रस, हल्दी और नमक डालकर रोगीके लिये शोरबा या गरम रसा तैयार होता है।

मांसका जूस—कोमल मांसको कुचलकर ८-१० गुने पानीमें, एक मुँह बन्द हाँड़ीमें धीमी-धीमी आँचपर सिझाना पड़ता है। पीसा या बुकनी मसाला न देकर एक साफ कपड़ेके टुकड़ेमें हल्दी, कई दाना गोलमिर्च और धनियाँ, थोड़ा-सा अदरख और अन्दाजसे थोड़ा-सा नमक बाँधकर इस मांसके साथ सिझाना पड़ता है। इस सुसिद्ध मांससे हड्डियाँ निकालकर एक तीन तही साफ कपड़ेमें छान और कसकर रस निचोड़ लेनेसे ही माँसका जूस तैयार होता है।

याग सूप—कोमल मांसका कुचलकर चीना मिट्टीके बैयाम या सख्त काँचके चौड़े मुँहके बोतलमें थोड़ी हल्दी, अदरख, धनियाँ और नमक मिलाकर बैयाम या बोतलका मुँह अच्छी तरह पुडिङ्ग या मैदा लगाकर बन्द कर देना पड़ता है। इसके बाद एक बड़ी हाँड़ीमें पानी भरकर बैयाम या बोतल उसीमें डालकर बहुत देरतक आँच देनी पड़ती है। इसके बाद बैयाम या बोतलका मांस और रस एक तीन तही साफ कपड़ेके टुकड़ेसे छान देनेपर याग सूप तैयार होता है।

एग-फ्लिप या अंडा दूध—एक ताजा अण्डा पानीमें धोकर साफ बरतनमें तोड़ देना चाहिये। इसके बाद एक साफ चम्मचसे या साफ

किये हुए हाथसे अच्छी तरह हिलाकर थोडी चीनी उस अंडेमें अच्छी तरह मिला लेनी चाहिए, उसके साथ अन्दाजसे गर्म दूध मिला देनेसे एक-फ्लिप तैयार होता है। यह बहुत जल्द पचनेवाला और पुष्ट भोजन है। क्षय, बेरी-बेरी प्रभृति रोगमें और टाइफायड, न्युमोनिया प्रभृति रोगोंके बाद एग फ्लिप खूब फायदा करता है।

एल्बुमेन वाटर या अंडेके सफेदी मिला पानी—एक धोया अण्डा तोडकर उसका सफेद अंश साफ कटोरीमें लेकर हिलाना चाहिये। इसके बाद, उसके साथ आन्दाजन एक प्याला पानी मिलाकर अच्छी तरह छान लेना चाहिये। पुराना अतिसार, आमाशय और क्षयके रोगीके लिये यह एक उत्तम पथ्य है।

मिश्रीका पानी—साफ बरतनमें अन्दाजके अनुसार पानी रखकर, उसमें मिश्री डालकर, खौला लेनेसे मिश्रीका पानी तैयार होता है।

ग्लुकोज वाटर—साफ बरतनमें गरम पानी लेकर चिकित्सकके निर्देशके अनुसार एक, दो या तीन चायके चम्मचमे ग्लुकोज मिलाकर ग्लुकोज वाटर तैयार कर लेना चाहिये।

मेलिन्स फुड, हार्लिक्स मिल्क, क्वेकर ओट्स, ओवल्टीन प्रभृति पेटेण्ट खाद्योंकी प्रस्तुत-प्रणाली, इन सब खाद्योंके साथ विना मूल्य मिलती है। इसलिये उन्हें लिखकर ग्रन्थका कलेवर निरर्थक न बढ़ाया गया।

जीवाणु-प्रसंग
(Bacteriology)

संक्रामक और स्पर्शाक्रमक बीमारियाँ तथा उनके रोकनेके उपाय
(Infections and Contagious Diseases with their Preventive measures)

साधारणतः ऐसा देखनेमें आता है कि कर्णमूल-प्रदाह, हूप खाँसी, छोटी माता वगैरह रोग यदि किसी छोटे बच्चेको हो जाते हैं, तो मकान या मुहल्लेके दूसरे-दूसरे बच्चोंके साथ खेलने, एक साथ सोने या मिलने-जुलनेसे यह बीमारीयाँ उन्हें भी हो जाती है। इससे स्पष्ट मालूम होता है कि रोगग्रस्त बच्चेके संस्पर्शके कारण ही (सिर्फ छू जाने या स्पर्श द्वारा ही) स्वस्थ बच्चा रोगी हो गया। स्पर्श-जन्य रोग, रोगका बीज रोगी शरीरसे अच्छे शरीरमें चला जाता है। इसीलिये ऐसे रोगको "स्पर्शाक्रमक" (लरछुत) रोग कहते हैं और चेचक, आँत्रिक ज्वर (मियादी बुखार) वगैरह रोग यदि किसीको होते हैं, तो स्पष्ट छू जानेके अलावा, रोगीके बरते हुए कपड़े-लते, चीज-वस्तुके सहारे भी यह बीज उसके रहनेकी जगहसे बहुत दूर रहनेवाले भले चंगे मनुष्योंपर जाकर हमला करते हैं—ऐसा भी देखा गया है अर्थात् हवा, पानी, दूध, धूलके कण, झींगुर, चूहे, मक्खी, रुपये-पैसे, चिट्ठी, छुरा वगैरह चीजोंके सहारे रोगका बीज एक जगहके रोगी मनुष्यसे दूसरे जगहके निरोग मनुष्यके पास जा पहुँचता है। इसीलिये ऐसे रोगोंको "संक्रामक रोग" कहते हैं।

कुष्ठ-व्याधि, यक्ष्मा-रोग, आंत्रिक ज्वर, चेचक, आरक्त ज्वर, न्युमोनिया, हैजा, रक्तामाशय, इन्फ्लुएञ्जा प्रभृति रोगोंमें, स्पर्शाक्रमक

और संक्रामक दोनों तरहके ही लक्षण दिखाई देते हैं। वास्तवमें, वैज्ञानिक यन्त्रोंकी सहायतासे रोग-तत्वकी जितनी ही खोज बढ़ती जा रही है, उतना ही "स्पर्शाक्रमक" और "संक्रामक रोग" का भेद हटता जाता है। पहले लोगोंकी यह धारणा अधिक नहीं थी, कि रोगका बीज एक जगहसे दूसरी जगह जा सकता है। जबर्दस्त खुर्दबीन (अनुवीक्षण यन्त्र) आदिकी सहायतासे अब साफ-साफ साबित हो गया है कि हवा, पानी, रेलगाड़ी, जहाज आदिके सहारे एक राज्यका रोग दूसरे राज्यके जहाज ही जा सकता है। (अर्थात् जिन रोगोंको हमलोग "स्पर्शाक्रमक" कहते हैं, वे वास्तवमें "संक्रामक" रोगके अन्तर्गत हैं)।

रोकनेके उपाय—नीचे लिखे सहज-साध्य उपायोंको करनेसे खसरा, चेचक, आरक्त-ज्वर, यक्ष्मा प्रभृति लरछुत बीमारियोंका बढना रोका जा सकता है :—(क) स्वास्थ्यके साधारण नियमोंका पालन, जैसे—सूखे, साफ-सुथरे, हवादार और रोशनी-भरे उजियाले घरमें रहना और सोना (सूर्यकी किरणें रोगके बीजको नष्ट करती हैं ; जिस जगहमें धूप न लगती हो, अन्धेरा हो या जहाँ हवा न जाती-आती हो, वह रोगके जीवाणुओंके पैदा होने और फैलनेकी जगह है), नियमित शारीरिक और मानसिक परिश्रम करना। (ख) रूई या धूलके कण नाकके छेदकी राहसे, जिससे साँसमें प्रवेश न करें—इस बातकी यथा-साध्य चेष्टा करते रहना चाहिये। (ग) ऐसे रोगीको, जिन्हें संक्रामक (फैलनेवाला) रोग हो गया है, अलग रखना, परिवारवालोंका जहाँतक बन पड़े, उसके संसर्गसे अलग रहना। (घ) हैजा रोगीका दस्त, कै और यक्ष्मा रोगीका थूक, खखार वगैरह यदि किसी तरह उसकी सेवा-सुश्रूषा करनेवालेके शरीरमें लग जाये, तो उसे तुरन्त धो डालना चाहिये। (ङ) रोगीके कमरेमें उसका या किसी दूसरेका खाने-पीनेका समान या दवा आदि न रहना चाहिये। (च) रोगीवाली कोठरीमें धूप, धूना, गन्धक, कपूर, जलाना या फिनाइल छिड़कना। (छ) यदि

हलवाई या बनियेको संक्रामक रोग हो, तो उसकी दूकानसे खाने-पीनेकी चीजें, मिठाई आदि न खरीदनी चाहियें (जहाँ-तहाँ संक्रामक रोग खूब फैला हुआ दिखाई दे, वहाँसे कोई चीज, जैसे—चावल, तरकारी, कपड़े, रुपये-पैसे, चिट्ठी-पत्री वगैरह आवे, तो खूब गर्म पानीमें धो लेना या किसी दूसरी उपायसे उन्हें शोध लेना चाहिये)। "यक्ष्मा", "हैजा", "इन्फ्लुएञ्जा" प्रभृति रोगोंकी "आनुसंगिक" और "प्रतिषेधक चिकित्सा" देखना चाहिये।

रोग-बीज

(Disease-Cerms)

वहुत कुछ खोज करनेपर विद्वान इलाज करनेवाले चिकित्सकोंने फैलनेवाले (संक्रामक) रोगोंका मुख्य कारण जीवाणु वताया है। पेंड़, लता आदिसे घिरे हुए अन्धेरे छोटे-छोटे जलाशयके ऊपर अकसर काईकी तरह एक हल्का आवरण दिखाई देता है। खुर्दवीनकी सहायतासे इस काईकी परीक्षा करनेपर उसमें वहुतसे छोटे-छोटे जीवाणु दिखाई देते हैं। जीवाणु आकारमें कुछ गोल, कुछ टेढ़े और कुछ सीधे होते हैं। वहुत ही थोड़े वक्तमें एक-एक जीवाणु हजारों हो जा सकते हैं। ये जीवाणु पृथ्वीके सभी जल, थल और वायु-मंडलमें दिखाई देते हैं; लेकिन खासकर रोगी शरीर, वदबूदार और गन्दी जगहोंमें, लाशमें, पेंड़-पत्तोंसे ढँके जलाशय प्रभृति स्थानोंमें ये अधिक करके देखे जाते हैं। ये जीवाणु साधारणतः तीन तरहसे मनुष्यकी देहमें घुस सकते हैं। जैसे—खाने-पीनेके साथ पाकाशयमें, साँसके साथ फेफड़ेमें या अस्त्र-चिकित्सककी पिचकारीकी दवा (injection) के साथ रक्तमें घुस जाते हैं।

वैज्ञानिकगण जीवाणुको मनुष्य शरीरका "अदृश्य शत्रु"—न दिखाई देनेवाला दुश्मन कहा करते हैं; परन्तु इन रोगोंको उत्पन्न करनेवाले

जीवाणुओंके अलावा मनुष्यके शरीरमें जगह-जगह हितकारी जीवाणु भी हैं, जिनके द्वारा बहुत कुछ उपकार होता है। ये वास्तवमें मनुष्यके "अदृश्य मित्र" हैं। खानेके पदार्थ या साँस लेने या छोड़नेके साथ ये हितकारी जीवाणु मनुष्यके शरीरमें घुसकर पचानेवाले यन्त्रोंको सहायता पहुँचाया करते हैं; परन्तु ये जीवाणु उद्भिद हैं कि प्राणी। इस विषयमें वैज्ञानिकोंमें आज भी मतभेद है। रोग उत्पन्न करनेवाले ये जीवाणु बहुत समयतक निर्जीवकी तरह पडे रह सकते हैं; परन्तु उनकी रोग उत्पन्न करनेकी शक्ति नष्ट नहीं होती। खाने या पीनेके पदार्थके संयोगसे अथवा साँस लेनेके साथ मनुष्यके शरीरमें घुसकर देहके भीतर उपयुक्त भोजन, हवा और तरी पाकर ये पुष्ट होते तथा बढते हैं और थोडे ही समयमें लाखों जीवाणु उत्पन्न कर सकते हैं। उनके इस तेजीसे उत्पन्न और नाशके कारण शरीरमें एक तरहकी रसायनिक क्रियाके कारण विषमय यौगिक पदार्थ (chemical compounds) पैदा होते हैं, उसी विषकी उत्तेजनासे शरीर बीमार हो पडता है; इसीका नाम "संक्रामक" रोग है। कहना वृथा है कि खसरा, यक्ष्मा प्रभृति भिन्न-भिन्न प्रकारके संक्रामक रोगोंकी उत्पत्तिका कारण भिन्न-भिन्न प्रकारके जीवाणु या रोग-बीज हैं (अधिक हाल जाननेके लिये, अगले अध्यायमें "रक्ताम्बु चिकित्सा प्रणाली" और "परिशिष्ट (ग) जीवागम रहस्य" देखिये)।

रक्ताम्बु चिकित्सा-प्रणाली

(Serum Therapy)

रोगज-जायु-विधान Treatment by Nosodes)

या

अनन्य विधान (Isopathy आइसोपैथी)

पहलेकी बनिस्बत आजकल जीवाणुओंके सम्बन्धमें बहुत कुछ विचार हुआ करता है। जीवाणु सब जगह मौजूद हैं, विशेषकर पेड़, लता पत्ता आदिसे ढँकी अन्धेरी अथवा जहाँ हवा वगैरह नहीं जाती, ऐसी जगहोंमें और छोटी तलैयोंपर कुछ ध्यान देनेसे ही, अकसर पतली काईकी तरह एक परत-सी दिखाई देती है। यह परत या आवरण जीवाणुओंसे भरा है। सभी कीटाणु या जीवाणु मनुष्योंको नुकसान पहुँचानेवाले हैं, ऐसी बात नहीं है। पहले प्रकरणमें कहा जा चुका है कि उनमें कितनी ही उन लोगोंकी भलाई भी करते हैं, उन्हें, मित्र-जीवाणु कहा जा सकता है। इसके अलावा कुछ ऐसी भी हैं, जो साँस, खाद्य, पानी, दवा या किसी दूसरे ही ढ़ंगसे रक्तके साथ मिलकर मनुष्य-जीवनको बहुत कुछ नुकसान पहुँचाते रहते हैं।

इन जीवाणुओंके बचने या जाननेके लिये चार बातोंकी बहुत जरूरत है। जैसे—(१) खाद्य, (२) हवा, (३) यथेष्ट परिमाणमें (खूब अधिक नहीं) तरी, (४) हल्की गर्मी। इनके अलावा ऐसे भी कुछ जीवाणु हैं (जैसे—धनुष्टंकार पैदा करनेवाले कीटाणु), जो सिर्फ हवामें (अर्थात् अम्लजानसे रहित स्थानमें ही) जीवित रहते हैं, कोई भी जीवाणु ऊपर कही तीन अवस्थाएँ अर्थात् भोजन, तरी और हल्की गर्मीके बिना जी नहीं सकता। सूखी जगह या सूखी अवस्थामें अधिकांश जीवाणु ही मर जाते हैं, इसलिये सोनेका कमरा, रसोई घर, गोशाला, अस्तबल

वगैरह जिसमें खूब साफ सुथरे रहे, वहाँ हवा और रोशनी भरपूर रहें और सूखे रहें, इसका प्रबन्ध रखना बहुत जरूरी है।

जीवाणु सब शरीरमें कैसे घुसते हैं?—जीवाणु सब पहले और खासकर इन तीन ढगोंसे शरीरमें प्रवेश करते हैं। जैसे—(१) साँस खींचनेके साथ, (२) खाने-पीनेके साथ और (३) बदनका चमड़ा छिल या कट जानेपर रक्तके साथ।

क्यों या किस तरह जीवाणु प्राणी-देहका अनिष्ट करते हैं? सभी जीवाणु शरीरमें घुसते ही वहाँ अपना वंश बढाना शुरु करते हैं और इसके साथ ही अपने शरीरका मैल, जैसे—मल, मूत्र आदि या अपनी रक्षाके लिये अपने शरीरसे निकला हुआ कोई विषैला पदार्थ (toxin—टाक्सिन) छोड़ना आरम्भ करते हैं। यह मल या अपनी रक्षाके लिये छोड़ा हुआ पदार्थ "विष" है अर्थात् मनुष्यके शरीरमें वह विष-जैसा काम करते हैं। इसीलिये इसे "टाक्सिन" कहते हैं। यही 'टाक्सिन' ऐसी चीज है, जिसमे रक्तको नष्ट करनेकी बहुत बडी ताकत है और यही मनुष्यके शरीरके जीवनके सब उपादानोंको नाश कर देते हैं।

प्रतिकार—हमलोग जिसे "रक्त" कहते हैं, वह कोई मूल पदार्थ नहीं है, बल्कि यौगिक पदार्थ है, अर्थात् रक्तका एक अंश पानी-जैसा तरल पदार्थ है, उसका नाम "Plasma प्लाजमा" है। इस प्लाजमाके भीतर अनगिनती सफेद और लाल-कण बहते रहते हैं। ये सफेद कण मनुष्यके शरीर राज्यके "झाडूबरदार" और "सिपाही" जैसे हैं। देहमें किसी जीवाणुके घुसते ही वहाँ बडी तेजीसे थोडा-सा ज्यादा खून आकर इकट्ठा हो जाता है। इस खूनके साथ कुछ ज्यादा सफेद कण भी उस जगहपर आ पहुँचते हैं। खूनके ये सफेद कण भी उस जगहपर, जहाँ जीवाणु है, आकर कायदेसे जीवाणुके बढनेमें बाधा पहुँचाते हैं और जितने

वगैरह जिसमें खूब साफ सुथरे रहें, वहाँ हवा और रोशनी भरपूर रहे और सूखे रहे, इसका प्रबन्ध रखना बहुत जरूरी है।

जीवाणु सब शरीरमें कैसे घुसते हैं?—जीवाणु सब पहले और खासकर इन तीन ढगोंसे शरीरमें प्रवेश करते हैं। जैसे—(१) साँस खींचनेके साथ, (२) खाने-पीनेके साथ और (३) बदनका चमडा छिल या कट जानेपर रक्तके साथ।

क्यों या किस तरह जीवाणु प्राणी-देहका अनिष्ट करते हैं? सभी जीवाणु शरीरमें घुसते ही वहाँ अपना वश बढाना शुरू करते हैं और इसके साथ ही अपने शरीरका मैल, जैसे—मल, मूत्र आदि या अपनी रक्षाके लिये अपने शरीरसे निकला हुआ कोई विषैला पदार्थ (toxin—टाक्सिन) छोडना आरम्भ करते हैं। यह मल या अपनी रक्षाके लिये छोडा हुआ पदार्थ "विष" है अर्थात् मनुष्यके शरीरमें वह विष-जैसा काम करते हैं। इसीलिये इसे "टाक्सिन" कहते हैं। यही 'टाक्सिन' ऐसी चीज है, जिससे रक्तको नष्ट करनेकी बहुत बडी ताकत है और यही मनुष्यके शरीरके जीवनके सब उपादानोंको नाश कर देते हैं।

प्रतिकार—हमलोग जिसे "रक्त" कहते हैं, वह कोई मूल पदार्थ नहीं है, बल्कि यौगिक पदार्थ है, अर्थात् रक्तका एक अंश पानी-जैसा तरल पदार्थ है, उसका नाम "Plasma प्लाजमा" है। इस प्लाजमाके भीतर अनगिनती सफेद और लाल-कण बहते रहते है। ये सफेद कण मनुष्यके शरीर राज्यके "झाडूबरदार" और "सिपाही" जैसे हैं। देहमें किसी जीवाणुके घुसते ही वहाँ बडी तेजीसे थोडा-सा ज्यादा खून आकर इकट्ठा हो जाता है। इस खूनके साथ कुछ ज्यादा सफेद कण भी उस जगहपर आ पहुँचते हैं। खूनके ये सफेद कण भी उस जगहपर, जहाँ जीवाणु हैं, आकर कायदेसे जीवाणुके बढनेमें बाधा पहुँचाते हैं और जितने

(क) शोणित रोग

(Blood Diseases)

याद रखने योग्य—कितने ही इलाज करनेवाले चिकित्सक इस "पारिवारिक चिकित्सा" पुस्तकका वड़ा आदर करते हैं और इलाज करते समय इससे वहुत कुछ मदद लेते हैं, यह हमलोगोंके लिये गौरवकी वात है ; परन्तु असल वात यह है कि किताव खासकर उनके लिये लिखी गयी है, जिनको इलाज करनेका ज्ञान नहीं है (laymen)। इसीलिये इस पुस्तकके आगेके अध्यायोंमें रोगके नामके मुताविक (जैसे—उदरामय, खसरा, ज्वर प्रभृति) दवाएँ खास-खास प्रधान उपसर्गोंको ध्यानमें रखकर लिखी गयी है, इससे हमारे पाठक-पाठिकाओं को दवा चुन लेनेमें वड़ी सुविधा होती है, इसमें सन्देह नहीं है ; परन्तु वास्तविक या ऊँचे दर्जेके सदृश-विधानवादी (होमियोपैथिक डाक्टर) जानते हैं कि ऐसा इलाज सहजमें होनेवाला और वहुतसे स्थानोंमें लाभदायक होनेपर भी यह पूर्णाङ्ग होमियोपैथी नहीं है,—लक्षणोंपर पूरी दृष्टि रखकर, दवा चुनना ही "सच्ची होमियोपैथी" है। "यह वात हमारे पाठक कभी भूल न जायें।" एक वात और भी "मोह-ज्वर (typhus fever), पौनःपुनिक ज्वर (relapsing fever)" नाम आजकलके ऐलोपैथिक चिकित्सा-ग्रन्थ (practice of medicines) से विदा हो जानेपर भी हमने उन रोगोंको इस पुस्तकसे नहीं हटाया है ; क्योंकि इनके लक्षण (symptoms) इस पुस्तकमें वताये हुए दूसरे-दूसरे रोगोंके लक्षणोंकी भाँति दवा चुननेमें पाठकोंको वहुत ही सहायता पहुँचायेंगे।

हैजा, मैलेरिया ज्वर, चेचक वगैरह रोगोंमें शरीरका समूचा खून दूषित हो जाता है, इसीलिये इनका साधारण नाम "शोणित रोग" है। आगे क्रमसे इसका विषय लिखा जाता है :—

लिये आजकल चिकित्सा-जगतमें—"एण्टि-टाक्सिन इञ्जेक्शन" (या "रक्ताम्बु चिकित्सा-प्रणाली") चल रही है।

"एण्टि-टाक्सिन सीरम" दूसरे प्रणालीके शरीरसे बड़े यत्नसे निकाला हुआ प्रतिविष मात्र है। यह विशेष प्रकारके जीवाणुमें उत्पन्न विषको रोकता है; इसीलिये इसका "इञ्जेक्शन" (अर्थात् पिचकारीसे शरीरमें दवा डालना), जीवाणुओं उत्पन्न हुआ विशेष जातिका टाक्सिन या विषका काम रोकनेके लिये उपयोगी, तुरन्तका तैयार हुआ प्रतिविष खूनके साथ फैला देता है। यह रक्ताम्बुज-प्रणाली हमारे सदृश-विधान (Homœopathy) इलाजमें बहुत दिनोंसे "Isopathy—आइसो-पैथी" नामसे चल रही हैं। ईसाके लगभग चार सौ वर्ष पहले जेनोक्रेटिस द्वारा यह इलाजका ढग शायद चलाया गया था। इसके बाद १८२३ ईस्वीमें डाक्टर Lux ने पहले-पहल इसे होमियोपैथीमें चलाया। कुछ दिनोंके बाद १८३० ईस्वीमें सदृश विधानाचार्य डाक्टर हैनिमैनके दाहिने हाथ डाक्टर हरिंगने और १८३४ ईस्वीमें होमियोपैथीके एक अग्र नायक डाक्टर Stapf ने इस मतको बड़े आदरसे होमियोपैथीमें अपना लिया। सबके आखिरमें होमियो डाक्टर बार्नेट, रसायनिक फ्रेंच डाक्टर Pasteur और कीटाणु-तत्वज्ञ विश्व-विख्यात जर्मनीके दो डाक्टरों (डा० Koch और Behrin) ने वर्त्तमान चिकित्सा-जगतमें इस प्रणालीको बड़े समारोहसे चला दिया है।

साधारण रोग

(General Diseases)

जिन रोगोंसे शरीरके सभी रक्त या समस्त यन्त्रोंपर रोगका हमला होता है, उनका नाम "साधारण रोग" है। साधारण रोग दो तरहका होता है :—(क) शोणित रोग और (ख) धातुगत रोग।

लगनेके कारण वहुतसे आदमी आये थे। एकाएक वहाँ एक रोग दिखाई दिया, फिर तो कलकत्ता, ढाका, मैमनसिंह, चट्टग्राम प्रभृति शहरोंमें और इनके पासके जिलों में यह फैल गया। आस्ट्रेलिया, ऐण्डामान टापू वगैरह कई जगहोंके सिवा, अब तो यह रोग समस्त भूमण्डलमें अपना अधिकार जमा बैठा है।

हैजा खासकर दो तरहका होता है—"सामान्य" और "सांघातिक"। सामान्य हैजाको "विसूचिका" (कालेरिन) या तेज अतिसार (उदरामय) भी कहते हैं और सांघातिक हैजेको "प्रकृत हैजा" (या एशियाटिक कालेरा) कहते हैं। कभी-कभी सामान्य हैजा "सांघातिक हैजा" में भी बदल जाता है। इलाजकी सुविधाके लिये, दो तरहके हैजेका पार्थक्य नीचे दिया जाता है :—

विसूचिका और हैजाका पार्थक्य

विसूचिका (कालेरिन)	प्रकृत हैजा (कालेरा)
१। इसमें पहले 'पित्त-मिला' (हरे रंगका) दस्त होता है, फिर पित्त नहीं रहता।	१। इसमें पहलेसे ही (चावलके धोवनकी तरह) 'पित्त-हीन' दस्त होता है।
२। पेटमें (खासकर 'नाभी' के चारों तरफ खींचनकी तरह) दर्द रहता है।	२। इसमें 'पेटमें दर्द' नहीं होता (शायद कभी उरुमें दर्द होता हो)।
३। पहले-पहल 'पेटमें ऐंठन' होती है; परन्तु ऊपरके अंगोंमें ऐंठन नहीं होती।	३। इसमें पहले पैरोंकी 'अंगुलियाँ' ऐंठने लगती हैं, इसके बाद हाथ-पैर ऐंठते हैं।
४। शरीरकी गर्मी 'धीरे-धीरे' घटती है; परन्तु रोगी एकदम अवसन्न नहीं होता।	४। शरीरकी 'गर्मी एकाएक' कम हो जाती है और रोगी जल्दी-जल्दी 'सुस्त होने लगता है।

हैजा

(Cholera—कालेरा)

हैजाका मतलब है—"दस्त—कै ।"

सड़े कोहड़ेका पानी या चावलके धोवन अथवा बासी भातके नीचेका पानी-जैसा, फेनकी तरह दस्त और पानीकी तरह बिना किसी गन्धकी कै होना, हैजा रोगका लक्षण है। धीरे-धीरे सुस्ती, आँख-मुँहका बैठ जाना, प्यास, पेशाबका बन्द होना, ऐंठन, स्वर-भंग, नाड़ी लोप, हिमांग (शरीर ठंडा पड़ जाना), ठंडा पसीना, गड्ढेमें धँसी आँखें, देह (खासकर हाथ-पैर) नीली, साँस लेनेमें तकलीफ प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं और रोगीको संकटमें डाल देते हैं।

हैजा या कालेराके रोगीके दस्त और वमनमें एक तरहके विषैले जीवाणु मिलते हैं (जीवाणु-तत्वज्ञोंके मतसे); 'ये ही इस रोगके पैदा करनेवाले सच्चे कारण हैं।' भला-चंगा मनुष्य पानी या दूध या दूसरी खानेकी चीजोंके साथ इनको खा जाता है और उसे हैजा हो जाता है। जिन जलाशयोंमें रोगीका दस्त, कै फेंका जाता है या रोगीका पहना कपड़ा धोया जाता है, उसका पानी पीनेके कारण गाँव या मुहल्लेके बहुतसे आदमियोंको यह बीमारी होती देखी गयी है (Macnamara's "*Treatise on Asiatic Cholera*" देखिये)।

१०३१ ईस्वीमें भारतवर्ष, फारस, रूस आदि देशोंमें पहले-पहल हैजा रोग दिखाई दिया। इसके बाद सोलहवीं शताब्दीमें शायद यह रोग फैलता हुआ भारतमें व्यापक रूपमें प्रकट हुआ। कहा जाता है कि 'बङ्गाल' में १८१७ ईस्वीमें यह भयानक रोग पहले-पहल हुआ। उस वर्ष यशोहर जिलेके अन्तर्गत नलडांगा नामके एक गांवमें मेला

लगनेके कारण वहुतसे आदमी आये थे। एकाएक वहाँ एक रोग दिखाई दिया, फिर तो कलकत्ता, ढाका, मैमनसिंह, चट्टग्राम प्रभृति शहरोंमें और इनके पासके जिलों में यह फैल गया। आस्ट्रेलिया, ऐण्डामान टापू वगैरह कई जगहोंके सिवा, अव तो यह रोग समस्त भूमण्डलमें अपना अधिकार जमा वैठा है।

हैजा खासकर दो तरहका होता है—"सामान्य" और "सांघातिक"। सामान्य हैजाको "विसूचिका" (कालेरिन) या तेज अतिसार (उदरामय) भी कहते हैं और सांघातिक हैजेको "प्रकृत हैजा" (या एशियाटिक कालेरा) कहते हैं। कभी-कभी सामान्य हैजा "सांघातिक हैजा" में भी वदल जाता है। इलाजकी सुविधाके लिये, दो तरहके हैजेका पार्थक्य नीचे दिया जाता है :—

विसूचिका और हैजाका पार्थक्य

विसूचिका (कालेरिन)	प्रकृत हैजा (कालेरा)
१। इसमें पहले 'पित्त-मिला' (हरे रंगका) दस्त होता है, फिर पित्त नहीं रहता।	१। इसमें पहलेसे ही (चावलके धोवनकी तरह) 'पित्त-हीन' दस्त होता है।
२। पेटमें (खासकर 'नाभी' के चारों तरफ खींचनकी तरह) दर्द रहता है।	२। इसमें 'पेटमें दर्द' नहीं होता (शायद कभी उरुमें दर्द होता हो)।
३। पहले-पहल 'पेटमें ऐंठन' होती है; परन्तु ऊपरके अंगोंमें ऐंठन नहीं होती।	३। इसमें पहले पैरोंकी 'अंगुलियाँ' ऐंठने लगती हैं, इसके वाद हाथ-पैर ऐंठते हैं।
४। शरीरकी गर्मी 'धीरे-धीरे' घटती है; परन्तु रोगी एकदम अवसन्न नहीं होता।	४। शरीरकी 'गर्मी एकाएक' कम हो जाती है और रोगी जल्दी-जल्दी 'सुस्त होने लगता है।

विसूचिका (कालेरिन)	प्रकृत हैजा (कालेरा)
५। इसमें अकसर 'पेशाब नहीं बन्द होता है।'	५। इसमें पहले ही 'पेशाब रुक' जाता है।
६। यह हमेशा 'भोजनकी गडबड़ी' से ही होता है।	६। इसका खास कारण एक तरहके 'कीटाणु' का शरीरमें घुसना है, परन्तु खाने पीनेकी गडबडी इसका पूर्ववर्त्ती कारण हो सकता है।
७। इसमें रोगीका रंग बहुत थोडा बदलता है।	७। इसमें पहले नाखूनकी जड, फिर समूचा शरीर 'नीला' हो जाता है।

पूर्ववर्त्ती (या गौण) कारण—अधकचरे फलमूल या खट्टे या सडे पदार्थ (विशेषकर सडी मछलियाँ और मास) खाना, केंकडा, चिंगडी मछली, चीडा, सत्त , चर्वी-मिला भोजनका पदार्थ, चावल, चना या पापड, नये चावलका भात, कचौरी, पकौडी, बैंगनी वगैरह खराब खाद्य खाने, बहुत ज्यादा खाने, उपवास करने, गन्दी हवा सेवन करने, रातमें जागने, दूषित पानी पीने या बहुत नशीले पदार्थका सेवन करने, अथवा विशेष सम्भोग करने, अधिक सर्दी-गर्मी लगते, जुलाब लेने, हैजा फैला हो, ऐसे समयपर मनमें बहुत डर पैदा हो जाने, कमजोरी, स्वास्थ्यके साधारण नियमोंको न मानने, ऋतु-परिवर्त्तन आदि हैजा रोग पैदा होनेके पूर्ववर्त्ती कारण है। इस देशमें गरीब आदमियोंको ही अधिकतर हैजा होता है।

उत्तेजक या मुख्य कारण—ऊपर कहे हुए "कीटाणु-बीज" ये जीवाणु (bacilli) खासकर हैजा रोगीके दस्त-कैमें दिखाई देते है। डाक्टर कोकके मतसे इन जीवाणुओंका आकार "नख-चिह्न"

("comma") की तरह होता है। इनकी लम्बाई १/२५००० इञ्च चौड़ाई १/१२५००० इञ्च होती है। परिशिष्ट (ग), "(४)" अंग देखिये।

प्रतिषेधक (रोकनेवाले) उपाय—हैजा फैला रहनेके समय गन्दी या बदबू भरी जगहोंमें रहना, ज्यादा खाना, उपवास करना, विना साफ किया हुआ पानी पीना और वहुत परिश्रम करना तथा सड़ी मछली, मांस लाना एकदम मना है। इस रोगके समय ऐसा उपाय करना चाहिये, जिससे "मनमें डर न पैदा हो।" वहुत राततक जागना, ठंडी और वदबूदार हवाका सेवन त्याग देना चाहिये। नित्य हरएक कमरेमें कपूर जलाना चाहिये। घरकी जो जगह नीची, तर या बदबूदार हो, वहाँ कार्बोलिक एसिड, फिनाइल, चूना, अंगारे, डाल देना उचित है। महामारीके समय क्यूप्रम ३० या सल्फर ३० सेवन कराना लाभदायक है। पानी या भोजन, किसीके संयोगसे भी रोगीका दस्त-कै दूसरेके पेटमें न जाना चाहिये। हैजाके रोगीका दस्त-कै अलकतरा या चूना डालकर, मिट्टीके नीचे गाड़ देनेपर बीमारी फैलनेका डर वहुत कुछ घट जाता है। यदि माँको हैजा हो जाये, तो लड़केको उसका दूध पीने देना मना है। खाली पेट, किसीको हैजाके रोगीको सेवा न करनी चाहिये। रोगीका मल, मूत्र, पसीना या लार यदि किसी दूसरेके वदनमें लग जाये, तो उसे तुरन्त अच्छी तरह धो डालना चाहिये। जिस कोठरीमें रोगी हो, वहाँ दवा या खानेकी चीज न रखनी चाहियें। यदि कोई खाने या पीनेका पदार्थ रहे, तो किसी दूसरेको उसे व्यवहारमें न लाना चाहिये।

पीनेका पानी, दूध, मक्खी आदिके द्वारा हैजा रोगका विष एक जगहसे दूसरी जगह फैला करता है। इसलिये जहाँ हैजा दिखाई दे, वहाँका पानी, दूध वगैरह खूब गरमाकर (अर्थात् खौलाकर) काममें लाना उचित है। ताजा चूना या फिटकिरीकी बुकनी कुएँ, तालाव

इत्यादिमें डालकर, बाँससे अच्छी तरह मिला देनेपर पानी साफ हो जाता है। डा० हाफकिन और कनिंगहम कुएँका पानी पर्मांगनेट आफ पोटास द्वारा शुद्ध कर लेनेकी सलाह देते है। जहाँ हैजा फैलता हुआ मालूम हो, वहाँकी कोई चीज (जैसे—तरकारी, चावल, कपडे, मिट्टीके बरतन, रुपये-पैसे प्रभृति) आनेपर, खूब गर्म पानीमें धो लेनेके बाद काममें लाना उचित है। इसी तरह हैजा-विष लगे हुए पदार्थोंका शोधन हो जाता है।

हैजेकी पाँच अवस्थाएँ

(१) **आक्रमणावस्था**—इस अवस्थामें रोगीको सुस्ती और बिना दर्दके दस्त हुआ करते है। इसका स्थितिकाल (रोग ठहरनेका समय) १ से ६० घण्टोतक है।

(२) **पूर्ण विकसित अवस्था**—चावलकी धोवनकी तरह दस्तके होना और ऐंठन इस अवस्थाके खास लक्षण हैं। इसका स्थितिकाल ३ से २४ घण्टोतक है।

(३) **हिमांग या पतनावस्था**—इस अवस्थामें समूचा शरीर बरफकी तरह ठण्डा हो जाता है। नाडी गायब होती जाती है। इसका स्थितिकाल १२ से ३६ घण्टा है।

(४) **प्रतिक्रियावस्था**—इस अवस्थामें शरीर फिर गरम हो जाया करता है और कलाईमें नाडी मिलने लगती है। यह अवस्था थोडी देर बाद बहुत ज्यादा देरतक रह सकती है।

(५) **परिणामावस्था**—इस अवस्थाका लक्षण है—फिर दस्त, कै, ज्वर विकार या हिचकी प्रभृति पैदा हो जाना।

हैजेकी स्थूल चिकित्सा

हैजेकी ऊपर कही हुई पाँच तरहकी अवस्थाओंका पूरा-पूरा विवरण और चिकित्सा क्रमसे आगे लिखी गयी है ; परन्तु नवसिखुए चिकित्सा करनेवालोंके लिये खूब ध्यानसे समूचा प्रवन्ध पढ़कर, लक्षणके अनुसार उपयोगी दवा चुनना वहुत मुश्किल हो जाता है ; क्योंकि उस समय यदि उतना पढ़ा जाये, तो इलाजका वक्त ही नहीं मिलता। इसके अलावा, खास-खास मौकेपर, जैसे—घरमें कोई मर्द न मौजूद रहनेपर या इलाज करनेवाला अच्छा डाक्टर न मिलनेके कारण, घरकी औरतोंको वाध्य होकर इलाज करनेका भार लेना पड़ता है। इनकी सुविधाके लिये कुछ खास-खास प्रधान दवाओंके सहारे इस भंयानक रोगकी चिकित्सा संक्षेपमें यहाँ लिखी जाती है।

यदि वार-वार वहुत ज्यादा मात्रामें पानीकी तरह या हल्के हरे रंगका दस्त हो और हरे रंगका पित्त वमनमें निकलता हो और उसके साथ-ही-साथ "पेटमें दर्द हो" या दस्तके बाद मलद्वारमें जलन होती हो, तो "आइरिस ३x" देना चाहिये। "परन्तु यदि चावलके धोवनकी तरह" वार-वार विना दर्दके दस्त और वार-वार उसी तरहकी कै होती हो ; पर दर्द न हो, यह लक्षण धीरे-धीरे प्रकट होता हो और दस्तपर यदि छोटे-छोटे थक्के तैरते दिखाई देते हों और उसके साथ ही ऐंठन और गहरी सुस्ती देखी जाये, परन्तु पेटमें दर्द न हों, तो "रिसिनस ३" देना चाहिये।

कुछ हरे रंगका पानी-जैसा दस्त (और उसमें सड़े कोहड़ेकी तरह कुछ टुकड़े-टुकड़े पदार्थ नीचे वैठ जाते हों), कै या ओकाई आये, "पेटमें दर्द, कपालमें ठंडा पसीना' और वहुत-सा ठंडा पानी पीनेकी तेज प्यास हो, शरीर ठण्डा और रंग नीला हो जाये, अंगुलियोंमें झुर्री या

ऐंठन हो, कमजोरी आदि लक्षण यदि धीरे-धीरे पैदा न होकर एकएक तेजीसे पैदा हो जायें, तो "विरेट्रम-ऐल्व ६" देना चाहिये।

हैजेमें खींचन या ऐंठनका लक्षण ज्यादा दिखाई दे (विशेषकर हाथ-पैरकी अगुलियाँ सामनेकी ओर टेढी होती जाती हों), तो "क्यूप्रम ऐसेट ३x विचूर्ण या क्यूप्रम मेट ६" देना चाहिये ; परन्तु ऐंठनके कारण अगुलियाँ (सामनेकी ओर टेढी न हों) फैल-फैलकर पीछेकी ओर टेढी होती हों, तो क्यूप्रमके वदले "सिकेलि ३—६" देना चाहिये। दस्त कैके साथ तेज प्यास। वदनमें दाह रहनेपर भी रोगी शरीरको कपडेसे ढँका रखना चाहता हो ; हिमाग, गहरी सुस्ती, कमजोरी और बेचैनी रहे, तो आर्सेनिक ६x—६, इसके साथ ही ऐंठनका उपसर्ग भी यदि मौजूद हो, तो आर्सेनिकके वदले क्यूप्रम-आर्स ३x विचूर्ण देना चाहिये। दस्त-कैके साथ पेटमें जलन या तेज दर्द, प्यास और मरनेका डर हो तथा रोगी छटपटाता हो, तो ऐकोनाइट रैडिक्स θ (मदर) के सेवनसे आश्चर्यमय फल दिखाई देता है। लगातार मिचली, कै हो जानेपर भी मिचलीका कम न होना, इस लक्षणमें इपिकाक ३ ; परन्तु कै होनेके वाद ही यदि मिचली वन्द हो जाये, तो ऐण्टिम-टार्ट ६। रोगीका शरीर ठण्डा, परन्तु भीतर उसे जलन मालूम होती हो, "हमेशा हवा करनेको कहता हो", वदनका कपडा निकाल डालता हो, अनजानमें दस्त हो जाता हो, मलद्वार खुला रहता (मानो दरार पड गयी है) हो, "खींचन (हाथ-पैरकी अगुलियोंका पीछेकी ओर खिच जाना)" वगैरह लक्षणोंमें सिकेलि ३ लाभ करता है। यदि पाखाना और पेशाव वन्द होकर पेट फूल गया हो, साँसमें तकलीफ होती हो इत्यादि अन्त समयके लक्षण दिखाई दें, तो "ओपियम ३" सवसे अच्छी दवा होती है।

एक तरहका हैजा और भी है, जिसमें रोगीको दस्त-कै या पसीना बिलकुल ही नहीं होता ; परन्तु रोग आरम्भ होते ही "कष्ट देनेवाली ऐंठन हो जाती है", साँसमें कष्ट, शरीर नीला, आँखें, मुँह वैठ जाते

हैं, गहरा हिमांग, गहरी सुस्ती प्रभृति डरावने उपसर्ग पहले ही दिखाई देने लगते हैं, ऐसे मौकेपर रोगीको "स्पिरिट कैम्फर" खिलाने और शरीरमें मल देनेसे लाभ होता है ; यदि कैम्फरसे लाभ न हो, तो "हाइड्रोसियानिक एसिड ३" देना चाहिये। यदि हैजेकी हिमांगावस्था कट जाये और शरीरमें गर्मी आने लगे, परन्तु "पेशाब न हो, तो कैन्थ-रिस ३—६" देनेसे पेशाब हो सकता है। चेहरा मुर्दे-जैसा बिगड़ा और बदरंग, देह बरफकी तरह ठण्डी, नाड़ी गायब, नाभि-श्वास वगैरह अन्त समयके लक्षण प्रकट होने लगें, तो "कोब्रा या नैजा ३" विचूर्ण खिलानेसे बहुत बार फायदा हुआ है।

शिशु हैजेमें—गरम दस्त, गरम कै, तेज प्यास या प्यास लगे ही नहीं (या दाँत निकलनेके समय हैजा या पेटकी बीमारी हो जाये), तो "पोडोफाइलम ६" से फायदा होता है। यदि खूब पतला दस्त होता हो, डकार आती हो या खट्टे दहीकी तरह फटी कै होती हो या कै होनेके बाद ही बच्चा सुस्त पड़ जाता हो, गाफिल हो जाता हो, सो जाता हो और नींद खुलते ही भूख लगती हो, तो "इथूजा ६" देना चाहिये। बच्चेकी गहरी सुस्ती, शरीर ठण्डा और नीला हो जाना, नाड़ीका लोप हो जाना, ऐंठन या अकड़न प्रभृति तीव्र लक्षणोंमें "कैलि-ब्रोम ३x विचूर्ण" सेवन कराना चाहिये। मल पतला पानीकी तरह, काली आभा लिये, हरा, श्लेष्मा-भरा, खून-मिला, सड़े अण्डेकी तरह बहुत बदबूदार, बच्चोंके हैजा या अतिसारमें बहुत बदबू रहनेपर (हैजा कोई भी क्यों न हो), एक मात्रा "सोरिनम ३०—२००" के प्रयोगसे खूब फायदा होता है।

और सफाईकी ओर ज्यादा ध्यान रखना चाहिये। रोगीके पहनने और बिछानेके कपड़े, सोनेका कमरा, रहनेका मकान साफ-सुथरा रखना बहुत ही जरूरी है। रोगीका दस्त-कै या दस्त-कै लगा हुआ कपड़ा, रहनेकी जगहसे दूर गाड़ देना या जला देना चाहिये। पासके तलाब

वगैरहमें ये कपडे न धोये जायें और दस्त-कै, पाखानामें या किसी खुली जगहमें न फेंकने चाहियें। इन नियमोंको न पालनेसे मुहल्ले या गावमें यह रोग फैल सकता है।

यह भी याद रखना चाहिये कि रोग शुरू होनेसे लेकर रोग आराम होनेकी ओर बढनेकी अवस्थामें पेशाब हो जानेके तीन या चार घण्टे बादतक, रोगीको जरूरतके मुताबिक पानी पीनेको और बरफका टुकडा चूसनेको देना चाहिये। इससे विपरीत कर बैठनेसे (अर्थात् "पेशाब होनेके पहले दूसरा पथ्य देनेसे) रोगीकी मौततक हो जानेका डर रहता है।" प्रतिक्रिया अवस्था शुरू होनेके कम-से-कम तीन-चार घण्टे बाद पथ्यका प्रबन्ध करना चाहिये। पेशाब हो जाने बाद (या जब स्पष्ट मालूम हो कि पेशाबकी थैलीमें पेशाब जमा है, लेकिन होता नहीं, उस समय) पानीका बना मागू, थोडी चीनी या नमक देकर खानेको दिया जा सकता है। यदि मलमें पित्तका भाग दिखाई दे, तो बार्ली, गन्ध भादुलियाका शोरबा या पानीके साथ मिलाकर बहुत थोडा दूध देना चाहिये। किसी कारणसे भी हो, दस्त-कै शुरू होनेपर कभी रोगीको नहाने न देना चाहिये। बहुतसे आदमी समझते हैं कि "गरम" से दस्त कै होता है, नहाने या "ठण्डा उपचार" करनेसे रोग दब जायगा; परन्तु ऐसी धारणा एकदम गलत है—दस्त-कै होनेपर नहाने या खानेसे बहुतोंकी जान चली जाती है।

शुभ-अशुभ लक्षण—दस्त-कै ज्यादा न होना, चेहरा (विशेषकर चेहरेकी कान्ति) अधिक बदरंग न होना, शरीरकी गर्मीका अधिक न घट जाना, रोगीमें बेचैनी या श्वास-कष्ट न रहना, नीद आना, ऐंठनका कम होना, प्यास न रहना, हिमाग अवस्थामें नाडीका लोप न होना, जल्दी-जल्दी स्वाभाविक प्रतिक्रियाका आरम्भ होना (जैसे—शरीरकी गर्मीका स्वाभाविक होते आना, पेशाब होना, दस्तका रंग पीला धुमैला होना) वगैरह "शुभ" लक्षण हैं।

रातके पिछले पहरमें एकाएक हैजा, होना जल्दी-जल्दी अवसन्न होना, बार-बार अनजानमें मल निकल जाना या कै होना, तन्द्रा, मोह, नींद न आना, तेजीसे हिमांगावस्थाका आ जाना, बेचैनी, साँसमें कष्ट, नाड़ी लोप, शरीरकी गर्मीका बहुत घटना या बहुत बढ़ जाना, पेटमें तेज दर्द, दस्त-कैमें खून, बहुत देरतक पित्त न निकलना या पेशाब न होना या ऐंठनका बन्द न होना, बकना-झकना, निगल न सकना, बेहोशीकी हालतमें एक पैर मोड़कर ऊँचा रखना और उसके घुटनेपर दूसरा पैर रखकर चित्त सोना, सन्निपातके लक्षण—ये सब उपसर्ग "अशुभ" हैं। गर्भवती स्त्री, शराबी, अफीमची, बहुत छोटा लड़का या बहुत बूढ़ा, दुबला अथवा मलेरियाग्रस्त रोगी मनुष्यको हैजा होना बहुत ही डरकी बात है। यदि गर्भवतीको हैजा हो जाये, तो गर्भ गिर जाता है।

पथ्यापथ्य—हैजाका "आक्रमण", "पूर्ण-विकास" और "पतन"—इन तीन दशाओंमें (खासकर पतन अवस्थामें) किसी तरहका कोई पथ्य न देना चाहिये। प्यास बन्द करनेके लिये खूब गर्म पानी पीनेको या बरफ चूसनेको दिया जा सकता है; परन्तु बरफको चबाकर खाने या निगलनेकी मना ही है। पेशाब होनेके कम-से-कम चार घण्टेके बाद खूब पतला पानीका बना हुआ आरारूट (थोड़ा कागजी नेबूका रस और नमक मिलाकर) दिया जा सकता है। यदि दस्तमें पित्तका अंश दिखाई दे (अर्थात् मल पीला या भूरा हो), तो पानीकी बनी बार्ली, पानीका सागू, दूध-सागू और गन्धभादुलियाका शोरबा दिया जा सकता है। ये सब पथ्य जब सहन हो जायें, तब चावलका माँड़ और अन्तमें खूब पुराने चावलका भात दिया जा सकता है। बहुत सोच-विचारकर पथ्य देना चाहिये। आरोग्य होनेकी ओर बढ़ती हुई अवस्थामें पानीका बार्ली देनेसे भी बहुत बार रोग पलटा खा जाता है और रोगीकी अवस्था खराब हो जाती है। रोग आराम होनेके बाद कुछ दिनोंतक रोगीको तेल या घीमें बनी चीजें या कोई दूसरी देरमें पचनेवाली चीजें न देनी चाहियें

या निराशा न पैदा हो जाये। यदि रोगी बहुत कमजोर हो जाये, तो उसे उठाकर पाखाना न बिठाया जाये; प्रत्येक बार नयी हाँड़ीमें चूना डालकर उसीमें रोगीसे पाखाना और कै कराया जाये और उसपर फिर चूना या फिनाइल डालकर दस्त-कैके साथ उसे मकानसे दूर मिट्टीके नीचे गड़वा दिया जाये। हैजेके रोगीको सहजमें ही नींद नहीं आती; यदि वह सो जाये, तो उसे कभी भी (दवा लेनेके लिये भी न जगाया जाये। अधिक पसीना हो, तो उसे साफ सुखे कपड़ेसे पोंछ देना चाहिये। जहाँ अच्छा पानी न मिलता हो, वहाँ पानी खूब औंटाकर ठण्डाकर रोगीको पिलाया जाये।

जाड़ेमें हैजा हो जाये, तो रोगीका कमरा कुछ गरम रखना चाहिये। शरीरमें किसी जगह ऐंठन होना आरम्भ हो गया हो, तो उस स्थानको हाथसे जोरसे दवाने या रगड़ने या अलकोहलसे भिगाकर उस जगहकी अच्छी तरह हाथसे मलनेपर या बोतलमें गरम पानी भरकर उससे सेंकनेसे अकड़न कम हो जाती है। हाथ-पैर ठण्डे होने लगें, तो फ्लैनेल गरमकर सेंकनेसे फायदा होता है। जिसे अजीर्ण या उदरामय रोग हो, उसे हैजा रोगीकी सेवा-सुश्रूषा न करनी चाहिये। खाली पेट रोगीवाले कमरेमें जाना अच्छा नहीं। रोगीका दस्त-कै या लार यदि किसी तरह अंगमें लग जाये, तो उस स्थानको तुरन्त धो डालना चाहिये; क्योंकि यदि वह किसी तरह पेटमें चली जायगी, तो उसे भी हैजा हो सकता है।

औषध-प्रयोग—हमेशा दो-तीन मात्रा दवा खिलानेसे ही फायदा होनेकी सम्भावना रहती है; पर यदि फायदा न हो, तो दूसरी दवा चुननी चाहिये। रोग जितना ही कड़ा रूप धारण करता चले, दवा भी उतनी ही जल्दी-जल्दी देनी चाहिये (१०-१५ मिनटका अन्तर देकर) और रोगकी तेजी जैसे-जैसे घटती जाये, दवाके समयका अन्तर वैसे ही बढ़ाते जाना चाहिये। रोग बढ़नेके समय प्रत्येक दस्त-कैके

दस्त-कै प्रधान या आंत्रिक पाकाशयिक हैजा—बार-बार एक ही तरह दस्त-कै होना, इसका प्रधान लक्षण है। आर्सेनिक ६, रिसिनस ३, वेरेट्रम-ऐल्ब ६ इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

रक्त-दस्त-कै मिला हैजा—खूनका दस्त या खूनकी कै होना, इसका खास लक्षण है। ऐकोन १x, आइरिस ३x, कार्बो-वेज ६, मर्क-कोर ६, कैन्थरिस ३, फास्फोरस ३ इसकी उत्तम दवाएँ हैं।

ज्वर-संयुक्त हैजा—इसका प्रधान लक्षण है—शरीरकी गर्मी बढ़नेके साथ-ही-साथ रोगीको दस्त-कै होना। एकोन १x, बेलेडोना ६, ब्रायोनिया ३, बैप्टीशिया १x—६, रस-टक्स ६, रिसिनस ३x इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

अकड़न-प्रधान हैजा—रोगीके अंग-प्रत्यंगमें बड़ी ही तेज अकड़न या खींचन होना, इसका खास लक्षण है। क्यूप्रम ६, सिकेलि ६, कैम्फर θ और क्यूप्रम आर्सेनिकम ३x इसकी खास दवाएँ हैं।

शुष्क या दस्त-कैसे रहित हैजा*—इसमें दस्त-कै होनेके पहले ही रोगीकी हिमांग अवस्था आ जाती है और रोगीका जीवन संशयमें हो जाता है। कैम्फर θ, आर्सेनिक ३x—६, एसिड-हाइड्रो ६ कार्बो-वेज ३० और टैबेकम ६० इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

---

* इस जातिके हैजेमें रोगीके शरीरसे रस या पानीका हिस्सा नहीं निकलता है। इसलिये इसका नाम *"रस-शून्य" या "शुष्क" हैजा। यह रोग* एकाएक रोगीपर हमला करता है, उस समय सुस्ती, प्यास, पेशाबकी तकलीफ, बदनमें जलन प्रभृति लक्षण पैदा हो जाते हैं और देखते-देखते समूचा शरीर नीला और ठण्डा, नाड़ी गायबकी तरह, स्वर-भंग या क्षीण-स्वर और पेशाब बन्द होना वगैरह सांघातिक लक्षण प्रकट होते हैं। (रुबिनीका स्पिरिट कैम्फर या कपूर अर्क इस दस्त-कैसे रहित हैजाकी एकमात्र दवा है) कोई दूसरी दवा देनेसे पहले इस

पाक्षाघातिक हैजा—रोगका आक्रमण होते ही सब शरीर नीला हो जाना, हृत्पिण्डका सुन्न पड जाना, छातीपर भार मालूम होना, साँसमें कष्ट, नाडी क्षीण और रोगीका बेहोश-जैसा पडे रहना—इसका प्रधान लक्षण है। विरेट्रम-ऐल्व ६ या विरेट्रम ३x विचूर्ण; आर्सेनिकम ऐल्बम ६, निकोटिन ३ इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

ऊपर लिखी दवाएँ और दूसरी-दूसरी दवाओंके लक्षणोंके लिये, आगे लिखा "हैजाकी पाँच अवस्थाओंके लक्षण और चिकित्सा" अनुच्छेद देखिये।

हैजाकी पाँच अवस्थाओंका लक्षण और चिकित्सा

आक्रमणावस्था—हैजाका विष या जीवाणु शरीरमें घुसनेके समयसे लेकर फेनकी तरह दस्त होनेतक "आक्रमणावस्था" कहलाती है। यह अवस्था एक दो घण्टेसे लेकर चार दिनोंतक मौजूद रह सकती है। इस अवस्थामें शरीरकी गर्मी धीरे-धीरे कम होकर कमजोरी, स्फूर्तिकी कमी, सरमें चक्कर, नींद न आना, मुँहमें रुचिका न होना, मिचली, मुँहका स्वाद बिगडा रहना, पेटमें भार या दर्द मालूम होना, कभी जाडा

दवाको जरूर देना चाहिये। पाँच-सात बून्द कैम्फर चीनीके साथ, पचीस-तीस मिनटका अन्तर देकर सेवन करना और बीच बीचमें रोगीके शरीरमें कपूर मलना जरूरी है। जबतक रोगी न सम्हल जाय, तबतक कैम्फर देना उचित है। यदि कैम्फरके व्यवहारसे रोगीको फायदा न होता हो और रोगीकी हालत बिगडती जाती हो, तो एसिड हाइड्रोसियानिक ३—३०, आर्सेनिक ३—२००, कार्बो वेज ३० या टैबेकम ६, लक्षणके अनुसार देना चाहिये। कहना वृथा है कि जल्दी-जल्दी चिकित्साका प्रबन्ध न करनेपर, यह "निरस" हैजा अकसर साधातिक हो जाता है।

और कभी गर्मी मालूम होना, कानमें सों-सों या दम-दम शब्द अनुभव होना, पतले दस्त वगैरह लक्षण पहले दिखाई देते हैं, पीछे फेन या चावलके धोवनकी तरह दस्त होता है।

पूर्ण विकसितावस्था—जब फेन या चावलके धोवनकी तरह दस्त और कै होते रहे, तब समझना चाहिये कि दूसरी या "विकास" अवस्था आरम्भ हुई है। इस अवस्थामें चावलके धोवनके पानीकी तरह दस्त और कै या मिचली, तेज प्यास, चेहरा मलिन, आँखोंका बैठ जाना, शरीरका रंग बदल जाना ; सब शरीरमें ठण्डा पसीना होना (खासकर माथेमें), धीरे-धीरे पेशाब बन्द होकर नाड़ीका क्षीण होना; नीले रंगकी एक लकीर आँखोंके चारों तरफ दिखाई देना, स्वरभंग, पेटमें दर्द, पाकस्थलीमें जलन, पेट गड़गड़ाते रहना ; शरीरमें जगह-जगह (विशेषकर हाथ-पैरोंको अंगुलियोंमें) ऐंठन, शरीरमें सुस्ती और बेचैनी ; मुँह और ओठोंका सूखना वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। खास-खास अवसरपर किसी उपसर्गकी कमी या अधिकता नजर पड़ती है। जैसे, किसी-किसी रोगीको बहुत दस्त आते हैं, परन्तु कै कम होती है। किसी-किसीको दस्त कम, परन्तु कै अधिक होती है। यह दशा ३ से २४ घण्ठोंतक रह सकती है। इस विकसित अवस्थाके लक्षण यदि ८ से लेकर १२ घंटेतक मौजूद रहे और दस्तके साथ पित्त (पीला अथवा हरे रंगका) निकलता हो, तो रोगी धीरे-धीरे अच्छा हो जाता है ; परन्तु यदि ऐसा न होकर, समूचा शरीर ठण्डा पड़ जाये, चेहरा सिकुड़ जाये, नाड़ी गायब प्रभृति लक्षण दिखाई दें, तो समझना चाहिये कि रोग पतनावस्थामें आ गया है। इस अवस्थामें बहुतसे रोगी मर जाते हैं। यदि बारह घण्टेतक रोगी जीता रहे, तो समझना चाहिये कि वह बच जायगा।

हिमांग या पतनावस्था—यही अवस्था सच्चा हैजा है। यह पतनावस्था बड़ी ही भयानक होती है। इसी अवस्थामें अकसर रोगी मर जाया करते हैं। द्वितीय अवस्थामें दस्त-कै एकाएक कम हो जाता

है, रोगी प्याससे वेचैन हो जाता है; पर प्यासके साथ ही वमन इतना बढ़ जाता है कि पानी पीनेके बाद ही बडे कष्टसे कै होकर वह पानी निकल जाता है। बार-बार कै होनेके बाद रोगी एकदम निस्तेज हो जाता है और धीरे-धीरे कलाईमें नाडी नही मिलती है (यहाँतक कि बाँहकी अडतक नाडी नही मिलती), इसके बाद जीवनी-शक्ति घट जाती है, देह बरफकी तरह ठण्डी हो जाती है; ओठ नीले, सब शरीर मलिन या पीला; आँखोंका बैठ जाना, चमकका कम पड जाना, लाल रहना; आँखकी पुतली फैली हुई, साँसमें कष्ट, स्वर-भंग या एकदम धीमी आवाज (यहाँतक कि बाततक सुननेमें नही आती); पेशाब बन्द और हाथ-पैरकी अंगुलियोंका अगला भाग सिकुडा हुआ (जैसा, अधिक देरतक पानीमें भीगनेपर होता है) रहना वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। बदनमें तेज दाह रहनेके कारण रोगी खाटपर पडा-पडा छटपटाया करता है और बदनका कपडा (यहाँतक कि पहननेका कपडा) उतार फेंकता है। थोडी-थोड़ी देर बाद चेहरेपर पसीनेकी बून्दे दिखाई देती हैं। इस हालतमें अक्सर अनजानमें ही पाखाना हो जाया करता है या पाखाना बन्द होकर पेट फूल जाता है। तीसरी अवस्थाके आखीरमें, रोगी इतना कमजोर हो जाता है कि उसमें करवट लेनेकी भी ताकत नही रहती; परन्तु हैजाके रोगीको मृत्युके पहलेतक ज्ञान नही लोप होता। इस अवस्थामें दस्त-कै बन्द होनेके बाद ही मृत्यु हो जाती है या दो-तीन घण्टेतक चुप पडे रहनेके बाद मृत्यु होती। यदि दस्त-कै बन्द होनेके बाद चार-पाँच घण्टेतक रोगी न मरे, तो समझना चाहिये कि "प्रतिक्रिया अवस्था" आरम्भ हो गयी है।

प्रतिक्रियावस्था—तीसरी अवस्थाके अन्तमें दस्त-कै बन्द और नाडी लोप हो जानेके बाद, यदि मृत्यु नही होती, तो फिर नाडी मिलने लगती है। इसके साथ दूसरी या पूर्ण विकसित अवस्थाका लक्षण फिर प्रकट होने लगता है। प्रतिक्रियावस्था—स्वाभाविक या अस्वा-

भाविक। यदि स्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ होती है, तो शरीर धीरे-धीरे गरम होने लगता है और फिर पित्त मिला हुआ दस्त-कै शुरू होकर जीवनी-शक्ति बढ़ने लगती है। इसके बाद पेशाब होता है या पेशाबकी थैलीमें पेशाब इकट्ठा होने लगता है। शरीरका रंग और आँखोंकी ज्योति भी स्वाभाविक हो जाती है।

इसके अलावा, कभी-कभी अस्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाती है और रोग "परिणामावस्था" में आ पहुँचता है।

परिणामावस्था—हैजेकी "परिणामावस्था" में (अर्थात् जब अस्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाती है) शरीरके विविध यंत्रोंमें रक्तका संचार होता है और रोगीका जो यंत्र सबसे ज्यादा कमजोर रहता है, वही अधिकतर आक्रान्त होता है। नीचे लिखे लक्षण बराबर पाये जाते हैं :—रोगका फिरसे आक्रमण, बुखार, पेशाब न होना, तन्द्रा, हिचकी, कै या मिचली, पतले दस्त, पेट फूलना, फोड़ा और कर्णमूल-प्रदाह, फुस्फुस-प्रदाह (फेफड़ेका प्रदाह)।

कैम्फर—इन ऊपर कही हुई पाँचों अवस्थाओंके इलाजके विषयमें लिखनेके पहले, इस रोगमें कैम्फर देनेके सम्बन्धमें कुछ कहते हैं। इटली देशके डाक्टर रुबिनीने कपूर अर्क (स्पिरिट कैम्फर) तैयार किया। उन्होंने इस दवासे सैकड़ों हैजेके रोगी अच्छे किये थे। विशेष अवस्थाओंमें एक कैम्फर देनेसे ही प्रायः रोग आराम हो सकता है। "पेटमें जलन या दर्दके साथ दस्त" और "साथ ही जाड़ा लगना और अकड़न" कैम्फर देनेका प्रधान लक्षण हैं।

(क) महामति हैनिमैन कहते हैं कि हैजेकी 'पहली हालतमें (अर्थात् जबतक दस्तके साथ मल दिखाई दे) रोगी एकाएक कमजोर हो जाये, चेहरा बदल जाये,स्वरभंग हो या आवाज बदल जाये, आँखें धँसी हों, समूचा शरीर ठण्डा पड़ गया हो, पाकस्थलीमें जलन मालूम होती हो प्रभृति

आयुर्वेदिक, हकीमी या ऐलोपैथिक इलाजके वाद होमियोपैथिक दवा शुरू करनी हो, तो पहले दो-एक खुराक कपूर अर्क खिलानेके वाद कोई दवा देनी चाहिये।

कपूर अर्क देनेकी मात्रा—पाँच, दस या पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर एक-एक मात्रा रुबिनीका कैम्फर थोड़ी चीनी या वताशेके साथ देना चाहिये। छोटे बच्चोंके लिये दो-एक बून्द और जवान तथा बूढ़ोंके लिये (रोगकी तेजीके मुताबित) ५ से १५ बून्दतक देना चाहिये। यदि दो धण्टेके बीचमें दस-बारह बार कैम्फर देकर भी कोई लाभ न हो, तो दूसरी दवाका वन्दोवस्त करना चाहिये।

आक्रमण अवस्थाका इलाज

कैम्फर—जिस हैजाके आरम्भमें एकाएक फेनकी तरह दस्त-कै होती है, जाड़ा मालूल होता है और बलका क्षय हो जाता है अथवा जिस हैजामें पहलेसे सब "शरीर नीला और ठण्डा" हो जाता है, उस हैजामें कैम्फर लाभ पहुँचाता है। सर्दी लगनेके कारण हैजा हो जाये, तो भी कैम्फर देना चाहिये। इसके पहले भी लिखा जा चुका है कि आक्षेप-प्रधान हैजाकी दस्त-कै न होनेवाले हैजाकी और पाक्षाघातिक हैजाकी कैम्फर एक अति उत्तम दवा है (पहले अनुच्छेदका "कैम्फर" देखिये); परन्तु दस्तकी अपेक्षा कै अधिक या कैके कारण हिमांग अवस्था तेजीसे आ जाये, तो कैम्फर बन्द रखकर, लक्षणके अनुसार आर्सेनिक प्रभृति दवाएँ देनी पड़ती है।

आर्सेनिक-पेल्ब ६—बहुत फल-मूल या वरफ पीनेके कारण हैजा हो जाये, विना-दर्दका पानी-जैसा, परिणाममें ज्यादा और वदबूदार दस्त होता हो, पेटमें, विशेषकर तलपेटमें गड़बड़ी रहे, मृत्युका भय, "पेटमें जलन", तेज प्यास ; परन्तु थोड़ा पानी पीनेपर ही प्यास शान्त हो

जाती हो। दस्त-कै या सिर्फ कै; बहुत बेचैनी; बहुत ज्यादा कमजोरी, आधी रातके बाद या ठण्डी चीज खाने पीनेके बाद रोग बढ़ा हो। पूर्ण विकसितावस्थाका अनुच्छेदमें "आर्सेनिक" देखिये।

चायना ३, ६—फल मूल खानेके कारण दस्त; बिना दर्दका पानीकी तरह, परिणाममें ज्यादा और बदबूदार दस्त; आधी रातके बाद रोगका बढ़ना, पीले पानी-जैसा दस्त और खायी हुई चीजका अनपचकी अवस्थामें निकलना। पेट गड़गड़ाना, पेट फूलना, कानमें भों-भों शब्द होना, अधिक रक्त-क्षय या शुक्रक्षयके कारण रोग। आर्सेनिककी तरह विसूचिका रोगकी यह भी एक बढ़िया दवा है।

पेकोनाइट-नैप १x—गले हुए तरबूजके पानीकी तरह दस्त, पेटमें बहुत दर्द, बेचैनी, प्यास; ठण्ड मालूम होना; मृत्युका डर; बुखारके साथ दस्त-कै; खूनके दस्त, गर्मी या सर्दी लगकर हैजा। खून मिले हुए दस्त-कै या बुखार मिले हैजाकी यह एक बढ़िया दवा है।

पसिड-फास ३—बिना दर्दका भूरे रंगका दस्त। पुराना अतिसार यदि हैजा रोगमें बदल जाये अथवा बहुत अधिक इन्द्रिय-सेवन करनेके कारण हैजा हो जाये तथा भोजनके बाद दाहिनी करवट सोनेसे रोगके लक्षण बढ़ जाते हों, तो यह दवा लाभ करता है।

आइरिस ३—बहुत दस्त या कै; पतले पानीकी तरह, ढीले, पीले दस्त, श्लेष्मा या रक्त मिले दस्त; काले, हल्के, हरे या अजीर्णके दस्त; पेट गड़गड़ाना, पर दर्दका न रहना; दस्तके बाद मलद्वारमें तेज जलन, हवा खुलनेसे पेटका दर्द घटना; आँखें बैठ जाना; जीभ बरफकी तरह ठण्डी, खाली डकार, मिचली, पतली खट्टी कै। कालेरिन या विसूचिका रोगकी यह बहुत बढ़िया दवा है (हैजाकी द्वितीय या पूर्ण विकसित अवस्थामें "आइरिस" देखिये)।

क्रोटोन-टिग ३—गोली या पिचकारीकी तरह जोरसे एकाएक दस्त होना ; गहरा हरा या हरी आभा लिये पीले रंगके पतले दस्त ; अजीर्णका दस्त ; मिचली या कै ; नाभीके चारों ओर खींचनकी तरह दर्द । 'पीले, पानीकी तरह दस्त, दस्त तीरकी तरह जोरसे निकलता है ;" खाने-पीनेके बाद ही दस्त या कै होना (हैजा रोगमें ये तीन लक्षण मौजूद रहनेपर क्रोटोन-टिग अकसर अचूक दवा होती है)।

इलाटेरियम ३—"फेन-फेन पानीकी तरह दस्त ; हरे रंगके दस्त और उसके साथ सफेद आभा लिये या खून मिले दस्त ; पेटमें दर्द रहे या न रहे ।" कोई भी दवाके देनेपर हैजा रोगका अधिक (परिणाममें) दस्त होना या कै होना बन्द न हो, तो "इलाटेरियम" देना चाहिये ।

बेलेडोना ३, ६—पानीकी तरह, सादे या पीले श्लेष्मा-मिले, आँव-मिले, परिमाणमें थोड़े, मिट्टीके रंगके, खट्टे या बदबूदार दस्त। बच्चोंकी अकड़न, माथा गर्म और हाथ-पैर ठंडे, सरमें टपकका दर्द या सर हिलाना ; बुखार, वदन सूखा या गर्म पसीनेसे भरा ; तन्द्राका भाव ; बच्चेका मुँह इस तरह चला करता है, मानो कुछ चबा रहा है ; गों-गों करना । जो धूप या आगके सामने काम किया करते हैं, उन्हें हैजा होनेपर या ज्वर मिले हैजामें यह बहुत फायदेमन्द होता है ।

ब्रायोनिया ३—पतले खून-मिले दस्त, परिमाणमें ज्यादा, मांड़की तरह गाढ़े, हरे रंगके या पतले खून-भरे दस्त, अजीर्णके दस्त, सड़े या बदबूदार दस्त ; बुखार ; मुँह और जीभ सूखी, बहुत ज्यादा परिमाणमें पानी पीनेका प्यास ; सरमें दर्द ; मुँहका स्वाद तीता ; मिचली ; तीतो, पीली या हरे रंगकी कै ; पेटमें दर्द ; सर हिलाना, बकना-झकना ; ठण्डी या खट्टी चीजें पीनेकी इच्छा ; बुखार मिले हैजामें यह बहुत ही फायदेमन्द है ।

बैप्टीशिया १x, ६—पानी-जैसे, पीली आभा लिये बदबूदार, रक्त-मिले या श्लेष्मा-मिले, खूनके दस्त ; कै और मिचली ; साँस और

पसीनेमें बहुत बदबू ; ज्वर ; नाडी कोमल और पूर्ण , सब शरीरमें दर्द , गहरी सुस्ती ; चेहरेका रंग गहरा लाल ; बकना झकना ; मोह , बात करते-करते सो जाना , नींद न आना या गहरी नींद , रोगी ऐसा समझता है, मानो उसका शरीर टुकडे-टुकडे होकर बिछावनपर पडा है ; जीभके बीचका भाग पीला और भूरा तथा किनारेवाला भाग चमकीला और लाल रंगका, दर्दके बिना ही कूथन ; पेट खूब धँस जाना । ज्वर-मिले हैजाकी बैप्टीशिया एक बहुत उत्कृष्ट दवा है ।

फास्फोरस ६—हरे या श्लेष्मा-भरे, बिना दर्द हुए ही दस्त, मलद्वार खुला रहता है और अनजानमें पाखाना हो जाता है ; गरम चीज खाने-पीनेके बाद (या बायीं करवट सोनेपर) रोग बढता है ; बहुत ज्यादा नमक खानेके कारण दस्त ; पानीकी तरह बिना दर्दके दस्त ; गरम दस्त ; गरम कै ; मलमें सागूदानाकी तरह पदार्थ रहता है ।

कार्बो वेज ६, ३०—मक्खन, बरफका पानी, कुल्फी सडी या नमकीन मछली, मांस या बासी तरकारी प्रभृति खानेपर हैजा हुआ हो, बूढे या दुबले मनुष्यको अथवा रसोइया, कुम्हार, राज-मिस्री वगैरह, जिन्हें धूप या आगके पास रहना पडता है, उन्हें हैजा हो जाये । खून या खूनकी कै ; लाल रंगके दस्त ; शुष्क या बिना दस्त-कैका हैजा , सब शरीर ठण्डा । खूनके दस्त कैवाले हैजे और शुष्क हैजेकी यह एक प्रधान दवा है ।

रिसिनस ३x—"बहुत दस्त और कै, बिना खींचन या दर्दका हैजा । दस्त-कै या दस्त-प्रधान हैजेकी प्रधान दवा है । द्वितीय या पूर्ण विकसित अवस्थामें "रिसिनस" देखिये ।

कैमोमिला ६—क्रोध या विरक्तिके कारण हैजा हो जाये , दस्त गर्म, खट्टा, खाल उधेड देनेवाला या बदबूदार हो ; दाँत निकलनेके समय (शिशु हैजेमें) पित्त-मिले हरे रंगके पतले दस्त आते हो और दर्द होता हो , दस्तके बाद पेटका मरोड घट जाता है ।

इपिकाक ३x, ६—रोगके प्रारम्भसे ही मिचली, ओकाई या कै ; की अपेक्षा कै ज्यादा आना ; हरे रंगके फेन भरे वदबूदार या आँव र रक्त-मिले दस्त ; पाखाना होनेके समय आमाशय रोगकी तरह वेग, ड़ या कूथन। पेट फूलना, नाभीके चारों ओर खोंचा मारनेकी ह तेज दर्द ; छातीमें दबाव मालूम होना और हाँफना। मिचली वमन-प्रधान विसूचिकाकी यह एक उत्कृष्ट दवा है।

टेर्टिम-टार्ट ६—अगर "बहुत तेज मिचली" होती हों ; गलेका घर करना, परन्तु बलगम न निकलना ; साँसमें कष्ट।

पोडोफाइलम ६—बिना दर्दके या गरम दस्त ; "गरम दस्त-क ; ्यासका न रहना या तेज प्यास।" शिशु हैजेकी (खासकर दाँत िकलनेके समय हैजा होनेपर) यह एक उत्कृष्ट दवा है। सफेद हरी ाभा लिये या फेन, फेन या खून-भरे दस्त ; सबेरेके वक्त दस्तका ज्यादा ाना, इतने जोरसे और इतने ज्यादा परिमाणमें दस्त आते हैं कि ोगीका शरीर एकदम रस-शून्य-सा निस्तेज हो जाता है, परन्तु रोगी हता पहलेकी तरह ही है, उसमें कोई विलक्षणता नहीं पैदा होती।

नक्स-वोमिका ६—बहुत शराब पीने ; रातमें जागने, भोजनका ानियम, "गर्म" दवाएँ खाने या जुलाब लेने अथवा मानसिक परिश्रमके ारण पतले दस्त। पेट फूला हुआ, बार-बार पाखानेकी चेष्टा, पर ्स्त नहीं होता। पित्त-मिले बदबूदार दस्त ; सवेरे या भोजनके बाद ्स्त। जो पुरुष बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम करते हैं, उनके लिये यह खासकर बहुत लाभदायक है।

पल्सेटिला ६—तेल या घी अथवा चर्बी-मिली चीजें खानेकी वजहसे पतले दस्त, हरे रंगके या श्लेष्मा-भरे दस्त, दस्तका रंग बदलते रहना ; प्यासका न होना ; रातमें रोगका बढ़ना ; रोगिणी औरत या कोमल प्रकृतिवाले पुरुषोंके लिये पल्सेटिला अधिक फायदेमन्द है।

विरेट्रम पेल्बम ६, ३०, २००—अधिक परिमाणमें चावलके धोवनकी तरह दस्त और कै ; सूतकी तरह सूक्ष्म नाड़ी ; पेशाव बन्द ; तेज प्यास (ज्यादा परिमाणमें पानी पीनेपर भी प्यास न बुझती हो) ; दस्तके पहले पेटमें दर्द ; ठंडा पसीना (विशेषकर कपालमें) ; आँखोंकी पुतली छोटी ; हाथ-पैरोंमें ऐंठन ; नाड़ी लोप हो जानेकी तरह ; तलपेट या उरूमें अकड़न ; हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण ; सव शरीर ठण्डा और नीला ; चेहरा मलीन और दुवला ; साँस लेने और छोड़नेमें ठण्डी और जीभ भी ठण्डी प्रभृति लक्षणोंमें विरेट्रम २० या २५ मिनटोंका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये। दस्त-कै या दस्त-प्रधान हैजेकी यह एक अच्छी दवा है। "पाक्षाघातिक" हैजेमें भी यह फायदा करती है।

आर्सेनिक ६, ३०, २००—दस्त और वमनका परिमाण कम ; न बुझनेवाली प्यास (विशेषकर ठंडा पानी पीनेकी इच्छा, परन्तु थोड़ा पीनेसे ही तृप्ति); पानी पीनेके बाद ही कै ; पेशाब बन्द ; वहुत सुस्ती और बेचैनी ; जल्दी-जल्दी वलका कम होना ; अनजानमें दस्त हो जाना ; पाकस्थलीमें जलन ; सब शरीर ठण्डा ; एकाएक शरीरका वदरंग हो जाना ; नाड़ी क्षीण या लुप्तप्राय: ; हाथ-पैरोंकी अंगुलियोंका अगला भाग सिकुड़ा ; गमिचली ; वमन हो जानेके वाद पाकाशयमें आगसे जलनेकी तरह जलन; मुर्देकी तरह चेहरा, कष्टकर और तेज श्वास-प्रश्वास; सीनेपर दवाव मालूम होना ; दस्त और वमन होनेके बाद हृत्पिण्डकी क्रिया तेज ; स्वर-भंग या क्षीण स्वर ; ऐंठन ; अंगोंका फड़कना ; जीभ सूखी और खरखरी तथा ठण्डी ; पानी या पतली चीज पीनेके समय ढक-ढक आवाज होना ; एक साथ दस्त और कै आना प्रभृति लक्षणोंमें २०-२५ मिनटका अन्तर देकर "आर्सेनिक" देना चाहिये।

ऊपर लिखे लक्षणोंके मौजूद रहनेपर भी यदि चावलके धोवनकी तरह दस्त न होकर पित्त-मिला पीले रंगका पतला दस्त आता हो या

कुछ सफेद रंगका श्लेष्मा-मिला दस्त हो, तो भी आर्सेनिक देना चाहिये। डाक्टर रसेलका कथन है कि यदि केम्फर देनेका समय बीत गया हो, तो आर्सेनिकका प्रयोग करना उचित है और भी बहुतसे चिकित्सकोंका भी यही मत है। डाक्टर ह्यूजेस हैजेको साधातिक मैलेरिया समझकर आर्सेनिककी बहुत तारीफ करते हैं— बहुत बेचैनी, व्याकुलता, सुस्ती, तेज प्यास और मुर्दे-जैसा चेहरा (उनके मतसे) आर्सेनिक प्रयोग करनेका प्रधान लक्षण है। हैजेकी सब अवस्थाओंमें आर्सेनिकका प्रयोग किया जा सकता है। दस्त कै या वमन-प्रधान, शुष्क और पाक्षाघातिक हैजेको आर्सेनिक एक बढ़िया दवा है।

क्यूप्रम-मेट ६, १२, ३०—ऐंठनकी यह एक बढ़िया दवा है। हैजेके दूसरे-दूसरे उपसर्गोंके साथ जब ऐंठन या खोंचन पैदा हो जाये, तब क्यूप्रम देना चाहिये। सब शरीर ठण्डा या नीला होकर हाथ पैर (विशेषकर ऐंठनके कारण हाथ-पैरकी अंगुलियाँ सामनेकी ओर टेढी हो जाये) और पैरकी पोटलीमें ऐंठन हो, बेचैनी या छटपटी, सूतकी तरह क्षीण नाड़ी या लोप होने-जैसी नाडी हो, आँखें ऊपर उठी या गढहेमें बैठी हो, कानसे कम सुन पडता हो या कान बन्दकी तरह हो जाये, पानी या पतला पदार्थ पीनेके समय कल-कल या घरघर शब्द होता हो, ठण्डी चीजोंकी बनिस्बत गर्म चीजें खानेकी इच्छा होती हो, कै या मिचली और उसके साथ ही-साथ पेटमें बहुत दर्द, ठण्डा पानी पीनेपर वमनका बन्द हो जाना; कै करनेके समय आँखोंसे पानी गिरना, गुदास्थानमें खाज, जीभ अकड जानेके कारण बात साफ न निकलना, पानीकी तरह, फटे मठेकी भाँति दस्त-कै; पेशाब करनेकी इच्छा, पर पेशाबका बिलकुल न होना, श्वास-प्रश्वास तेज; प्रलाप, चिल्लाना, हाथ-पैरमें खोंचन, दाँत कडमडाना प्रभृति लक्षणोंमें यह फायदा पहुँचाता है।

अकड़नवाले सांघातिक हैजेमें जव खाद्य-वाहिनी नलीमें उत्तेजना पैदा हो जानेके कारण खायी हुई चीज कै हो जाती हो, उस समय क्यूप्रमका प्रयोग करनेसे खायी या पाई हुई चीज हजम करनेकी ताकत रोगीमें पैदा होती है। डाक्टर प्रोक्टर कहते हैं कि क्यूप्रम ऐंठन वन्द करनेकी वहुत बढ़िया दवा है।

सिकेलि-कोर ३, ६, ३०—ऐंठन वन्द करनेकी यह भी एक अच्छी दवा है। क्यूप्रम प्रयोग करनेपर यदि खींचन या अकड़न वन्द न हो, बल्कि नीचे लिखे लक्षण दिखाई देने लगें, तो सिकेलि देना चाहिये। मृत्युका भय आँखें बैठ जाना, कानसे कम सुनना, चेहरा मलिन, सूखा और रक्तहीन, साफ या सफेद रंगकी जीभ और वह भी रह-रहकर काँपती हो, तेज प्यास और भूख, कै या मिचली पाकस्थलीमें जलन, पेशाव रुकना, वक्षस्थलके वायें पार्श्वमें ऐंठनकी तरह दर्द, नाड़ी कमजोर या लोप हो जानेकी तरह, हाथ-पैरकी अंगुलियोंमें अकड़न होती है या वे अलग-अलग होकर पीछेकी ओर टेढ़ी हो जाती हैं, शरीरमें जलन और इसी कारणसे रोगी शरीरपर कपड़ा नहीं रख सकता; हाथ पैरोंका काँपना या हिलते रहना, मुँह टेढ़ा हो जाना, जीभ खुजलाना और अनजानमें पाखाना हो जाना प्रभृति लक्षणोंमें सिकेलि ज्यादा फायदा करता है।

हैजाकी पतन अवस्थामें भी यह फायदा करता है। हाथ-पैरोंमें ऐंठन; धनुष्टंकारके रोगीकी तरह "पीछेकी तरह अकड़ जाना।" सब अंगोंमें (विशेषकर चेहरा) नीलापन, क्रिमि या श्लेष्माका वमन और वमनके वाद ही आराम मालूम होना प्रभृति इस दवाके प्रधान लक्षण हैं।

कैन्थरिस ३x, ६—रक्त-भरे दस्त; मांस धोये हुए पानीकी तरह दस्त; पीला, सफेद चमड़ेकी तरह दस्त; खून-मिले श्लेष्मा-भरे दस्त (देखनेमें आँतके टुकड़ेकी तरह), खूनकी कै होना, खूनका पेशाव; पेशाव वन्द; हाथ-पैर या शरीरका ऊपरी भाग ठण्डा (पर

भावसे पड़े रहना, किसी बातका जवाब देनेकी इच्छा न होना ; बार-बार कराहना ; प्रश्वासकी अपेक्षा श्वास दीर्घ ; क्षीण और कोमल नाड़ी ; पानीकी तरह या फेन-न मिला हरे रंगका मल ; अनजानमें दस्त होना ; "कष्ट देनेवाली मिचली" ; बतहु तकलीफ थोड़ी-सी कै होती है ; कै होते ही मिचली बन्द हो जाती है, आँखें गड़हेमें धँसी ; कम दिखाई देना प्रभृति लक्षणोंमें यह लाभ करता है। चेचककी बीमारी फैलनेके समय यदि हैजा हो जाये, तो ऐण्टिम-टार्ट विशेष रूपसे लाभ करता है।

पतनावस्थामें यदि हृत्पिण्डकी क्रिया बन्द हो जानेकी आशंका पैदा हो जाये, तो ऐण्टिम-टार्ट फायदा करता है। विरेट्रम और ऐण्टिम-टार्टके लक्षण प्रायः एक जैसे हैं ; परन्तु मांस-पेशियोंका काँपना और अभिभूत भाव यदि ज्यादा हो, तो ऐण्टिम-टार्ट और हृत्पिण्डकी कमजोरी या पक्षाघातमें विरेट्रम देनेपर कोई लाभ न हो, तो ऐण्टिम-टार्ट देना चाहिये।

आइरिस-वार्स ३x—नाभीके चारों तरफ और तलपेटमें दर्दके साथ खट्टी गन्ध-भरी दस्त-कै ; सफेद या पित्त-मिले पतले दस्त ; खट्टी कै और पित्त मिले पतले दस्त ; खून-भरे दस्त ; खूनकी कै ; मुख-गह्वरसे लेकर मलद्वारतक जलन ; रातके पिछले पहरमें रोगका आक्रमण ; खायी हुई चीजके खंड वमनमें निकलना, इसके बाद पित्त-वमन और वमनके बाद शरीरमें दाह, पसीना और मुँहमें जलन वगैरह लक्षणोंमें इसका प्रयोग करना चाहिये। ऊपर लिखे लक्षणोंके साथ सब शरीर यदि ठण्डा रहे, तो इसके प्रयोगसे कोई लाभ नहीं हो। यह खूनके कै-दस्त मिले हैजेमें अत्युत्तम है।

रिसिनस ३x, ६—बहुत ज्यादा पानीकी तरह दस्त ; पित्तकी कै ; ज्वर ; कपालमें ठण्डा पसीना ; ऐंठन ; पेटमें जलन मालूम होना (परन्तु पेटमें दर्द न होना) ; पेशाब बन्द। ज्वर-मिले हैजेमें भी "रिसिनस" लाभ पहुँचाता है।

मर्क-कोर ३, ६—हैजाके दूसरे-दूसरे लक्षणोंके साथ (चावलके धोवनकी तरह दस्त न होकर) यदि रक्त-मिला श्लेष्मा दस्तमें आता हो या अतिसारके बाद यदि हैजा हो जाये और उसके साथ ही कूथन और उदरमें तेज दर्द मौजूद रहे, तो मर्क-कोरसे ज्यादा फायदा होता है। यह रक्तके दस्त, खनकी कै, खून-मिला पेशाब इत्यादि उपसर्गोंमें खूनके दस्त-कै मिले हैजेकी यह एक उपयोगी दवा है।

कोटन-टिग ३, ६—पिचकारीकी तरह वेगसे एकाएक पतले पीले दस्त ; पाकस्थलीमें तेज यंत्रणा, कूथन या वेग, पानी या दूसरी पतली चीज पीते ही कै हो जाना वगैरह लक्षणोंमें यह उपयोगी है।

जैट्रोफा ३, ६—चावलके धोवनकी तरह दस्तोंके बदले गांठ-गांठ सफेद रंगके पतले दस्त ; सब शरीर ठण्डा ; ठण्डा पसीना ; हाथ पैरोंमें ऐंठन ; पेटमें गड़गड़, कलकल शब्द।

मात्रा—रोगकी तेजीके अनुसार १०, १५, २० मिनट या आधे घण्टेका अन्तर देकर एक-एक मात्रा दवा देनी चाहिये।

आनुसंगिक उपाय—रोगकी खबर मिलते ही रोगीको सूखे और साफ-सुथरे कमरेमें सुला रखना उचित है। हमेशा ऐसा उपाय करना चाहिये कि रोगीके कमरेमें साफ हवा आती-जाती रहे। कमरेमें धूप, धूना, गन्धक, कपूर आदि जलाना अच्छा है। द्वितीय अवस्थामें रोगीको कोई पथ्य न देनी चाहिये। प्यास लगनेपर ठण्डा पानी पीने या बरफका टुकड़ा चूसनेके लिये दिया जा सकता है। घरसे बहुत दूर मिट्टीके नीचे दस्त-कै ले जाकर गाड़ देना चाहिये। जिस अंगमें ऐंठन हो, उसे हाथसे रगड़ने या कपड़ेकी थैलीमें बालू भरकर गरमकर सेंक देनेसे या अलकोहल या स्पिरिट लगाकर रगड़नेपर ऐंठन कम हो सकती है।

हिमाग अवस्थाकी चिकित्सा

कितनी ही ऐसी दवाएं हैं, जो पूर्ण विकसित अवस्थामें और हिमाग अवस्थामें भी दी जा सकती हैं, परन्तु जो दवाएँ पूर्ण विकसितावस्थामें एक बार ही दी जा चुकी हैं, उन्हे ही यदि हिमाग अवस्थामें भी दिया जाती है, तो फायदेकी सम्भावना प्राय नही रहती है।

पर यदि हिमाग अवस्थाके पहले कोई दवा न दी गयी हो, तो हिमाग अवस्थाके आरम्भमें दो तीन मात्रा कैम्फर देना अच्छा है। यदि "आक्रमण" और "पूर्ण विकास" अवस्थामें ऐलोपैथिक या होमियोपैथिक दवाए अधिक दी गयी हों, तो उनकी हानिको दूर करनेके लिये कैम्फर देना पड़ता है और जिस हैजेके प्रारम्भमें "हिमाग भाव" मौजूद रहे, उसमें भी कैम्फर जरूर देना चाहिये।

हिमाग अवस्थाके पहले अगर "आर्सेनिक", विरेट्रम, "क्यूप्रम, सिकेलि कोर" या एकोनाइट वगैरह दवाओंका प्रयोग न हुआ हो, तो हिमाग अवस्थामें ये सब दवाएँ लक्षणके अनुसार देनी पड़ती है। लक्षणोंके लिये "आक्रमण" और "पूर्ण विकास" अवस्थाकी दवाए देखनी चाहियें।

विरेट्रम ऐल्ब ६, ३०—बहुत ज्यादा दस्त-कै होनेके कारण हिमाग अवस्था अगर बहुत जल्द आ जाये, तो यह उपयोगी है।

आर्सेनिक ६—दस्त-कैकी तेजीके कारण बहुत तेजीसे हिमाग अवस्था आ जाना, सब शरीरमें (खासकर उदरमें) जलन मालूम होना, बेचैनी, पेशाब बन्द हो जाना, साँसमें कष्ट इत्यादि लक्षणमें यह लाभप्रद है।

क्यूप्रम ६ या **सिकेलि** ६—खोचन अथवा ऐंठन अधिक होनेके कारण और हिमाग अवस्था आ जाये या हिमागावस्थामें ऐंठनका उपसर्ग ज्यादा दिखाई दे अथवा ऐंठनके कारण साँस बन्द होनेकी आशंका हो

(पहले ही कहा जा चुका है कि अकड़नमें अंगुलियाँ "सामनेकी ओर" टेढ़ी हो पड़ें, तो क्यूप्रम और अलग-अलग होकर, "पीछेकी. ओर" मुड़ जायें, तो सिकेलि फायदेमन्द है)। इन दोनोंमेंसे एक लक्षणके अनुसार देना चाहिये।

कोब्रा या नैजा ६—आर्सेनिक खिलानेपर यदि साँसकी तकलीफ कम न हो, तो नैजा देना पड़ता है। रोगी मुर्देकी तरह पड़ा रहे, कुछ निगल न सके ; नाड़ी सूतकी तरह, "श्वासकष्ट" प्रभृति अन्त समयके लक्षण रहनेपर नैजाका प्रयोग होता है।

निकोटिन ३, ६, ३०—(यदि किसी दूसरी दवासे साँसका कष्ट न दूर हो, तो निकोटिन दिया जाता है)। कपालपर ठण्डा पसीना ; दस्त-कै ; पेशाव बन्द ; "बहुत श्वासकष्ट" प्रभृति इसके प्रधान लक्षण हैं। पक्षाघातिक हैजाकी यह बढ़िया दवा है।

कार्बो-वेज ६, १२, ३०—हिमांगावस्थामें कार्बो-वेज ज्यादा लाभ पहुँचाता है। सब शरीर बरफकी तरह ठण्डा ; जीभ ठण्डी और नीली ; नाड़ी प्रायः लुप्त ; आँखें गड़हेमें धँसी ; कपाल और गलेमें बून्द-बून्द पसीना ; स्वरभंग या अस्पष्ट बोली ; दस्त-कै बन्द होकर पेट फूला हुआ ; बहुत श्वासकष्ट ; शरीरमें तेज दाह ; समूचा शरीर नीला हो जाना प्रभृति लक्षणोंमें कार्बो-वेजका प्रयोग किया जाता है। यदि इस अवस्थाके पहले विरेट्रम या आर्सेनिक न दिया गया हो, तो (किसी-किसीके मतसे) कार्बो-वेजके साथ विरे-ऐल्व या आर्स पर्यायक्रमसे देनेपर लाभ होता है। "पेट फूला रहनेके साथ बदबूदार दस्त होना", कार्बो-वेजके प्रयोग विशेष लक्षण है।

एसिड-हाइड्रो ३, ६—दस्त-कै न होनेपर भी आँख-मुँहका बैठ जाना ; चेहरा नीला, मुर्देकी तरह देह ; पानी कण्ठसे नीचे न उतरना ; धीरे-धीरे साँसका निकलना ; ठण्डा पसीना ; नाड़ी लोप ; सब शरीर

पेगरिकस ६—खूब गहरी हिमांगावस्था (मानो बरफकी सुईसे रोगीकी देह बेधी जा रही है, पेशाव बन्द, पेट फूलना, बिछावनसे उठकर भागनेकी चेष्टा करना - लक्षणोंमें यह दवा फलप्रद है ।

मात्रा—अवस्थाके अनुसार १० या १५ अथवा २० मिनटका अन्तर देकर एक-एक मात्रा दवा सेवन कराना चाहिये ।

आनुसंगिक चिकित्सा—तेज ऐंठन (या अकड़न) या साँसमें बहुत कष्ट रहनेके कारण रोगीके तुरन्त मर जानेका भय हो, तो कलेजेपर मस्टर्डकी पोल्टिस देनेसे लाभ होता है । किसी-किसीकी राय है कि ठण्डा पसीना ज्यादा हो, तो ईंटकी सुरखी कपड़ेमें बांधकर गरमकर सेंक-देना चाहिये ।

प्रतिक्रियावस्थाका इलाज

स्वाभाविक प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर कोई दवा देना उचित नहीं है, उस समय पथ्य आदिकी व्यवस्था करनी चाहिये । प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर, यदि एक-दो बार साधारण दस्त भी हो, तो कोई दवा न देनी चाहिये ; पर यदि कष्ट देनेवाले लक्षण प्रकट होने लगें, तो रोगकी बढ़ी हुई अवस्थामें जो दवाएँ दी गयीं थीं, उन्हीं दवाओंको (लक्षणके अनुसार) थोड़ी मात्रामें (और ऊँचे क्रममें) और देरसे (काफी समयका अन्तर देकर) देना होगा ।

☞ **एक बात और भी**—हैजा रोगमें, दस्त और कैके साथ खूनका पानीवाला हिस्सा और नमकका अंश निकल जाता है । इसलिये खून गाढ़ा हो जाता है । अतः पानीके साथ थोड़ी मात्रामें नमक मिलाकर रोगीको पिलानेसे वह पानी और नमक सहजमें ही खूनमें मिल जाता है, खून पतला हो जाता है तथा शरीरके यन्त्रोंमें रक्त जमा भी नहीं होता और बढ़ भी नहीं जाता है । इसलिये, स्वाभाविक प्रतिक्रिया

वमन भी हो, तो "नक्स-वोमिका" ६। इपिकाक देनेपर भी यदि फायदा न दिखाई दे, तो नक्स वोमिका देना चाहिये और नक्स-वोमिका देनेपर फायदा न हो, तो इपिकाक देना चाहिये। यदि इपिकाक और नक्स-वोमिकाकी तीन-चार मात्राएँ देनेपर भी फायदा न दिखाई दे, तो दो-चार मात्रा "पोडोफाइलम" ६ देना चाहिये। कुछ (पानी या पतली चीज) पीनेके 'बाद तुरन्त ही' कै होने लगे, तो युपेटोरियम-पर्फ" ६। पानी पीनेके बाद ही अगर वमन हो, तो 'आर्सेनिक' को स्मरण करना उचित है। बार-बार पानीकी इच्छा, मृत्यु-भय, बेचैनी और बहुत सुस्ती रहनेपर आर्सेनिकका प्रयोग करना चाहिये; परन्तु कुछ देर बाद कै हो, तो "फास्फोरस" ६। तेज प्यास, बहुत-सा ठण्डा पानी पीनेकी इच्छा, पानी पेटमें जाकर कुछ गरम होते ही कैके लक्षणमें, डाक्टर नेशने "फास्फोरस" खिलाकर ही एक रोगीको अच्छा कर दिया था।

अतिसार—प्रतिक्रिया आरम्भ होनेके बाद या पेशाब होनेके बाद, थोड़े-थोड़े पदले दस्त, तो डरकी कोई बात नहीं है। पथ्यकी ओर नजर रखी जायगी, तो जल्दी ही आराम हो जायगा; पर अगर आरोग्य न होकर दस्त लगातार बढ़ता ही जाये, तो हैजेकी तेज दशामें जो दवाएँ दी गयी थीं, अवस्था देखकर, वे ही दवाएँ ऊँचे क्रममें अधिक समयका अन्तर देकर देनी चाहियें। इन दवाओंके खिलानेपर भी यदि पतले दस्त बन्द न हों, तो लक्षणके अनुसार नीचे लिखी दवाएँ देनी चाहियें :—

पेशाब होनेके बाद पतले दस्त और स्नायविक दुर्बलतामें "एसिड-फास" ६ या ३०। यकृतमें दर्द और पित्त-मिला थोड़ा-थोड़ा पतला दस्त होनेपर "पोडोफाइलम" ३, ३०। पेट कुछ फूला आर उदरमें गड़गड़ाहट होकर पीला, थोड़ा पतला बदबूदार दस्त हो, तो "चायना" ६, ३०। बहुतोंकी ऐसी धारणा है कि फेरम और चायना पर्यायक्रमसे

(एकके बाद दूसरा) देनेपर पतले दस्त और कमजोरी दोनों ही दूर हो जाती है। लसदार श्लेष्माभरा (कभी रक्त-मिला) दस्त, यकृतमें दर्द कुछ सफेद आभा लिये पीला आँखें और मुँहमें बदबू होनेके लक्षणमें 'मर्क-सोल' ६। मैले, कुछ काले, पतले दस्त हो, तो "रस-टक्स" ६ या "रिसिनस" ६। खून-मिले दस्त होनेपर "कार्बो-वेज" ६ और चमकीले लाल रगके दस्त होनेपर "इपिकाक" ६, ३० देना चाहिये।

पेट फूलना—प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर (अथवा प्रतिक्रियाके बाद) कभी-कभी पेट फूलनेका लक्षण दिखाई देता है (ऐलोपैथिक मतसे इलाज करनेपर) अफीमसे बनी हुई दवाएँ खानेके कारण पेट फूल सकता है। पतले दस्त होनेके साथ पेटमें वायु इकट्ठा हो या पेट फूला हो, तो 'कार्बो-वेज' ३०, कब्जियतके साथ पेट फूला हो, तो "लाइको-पोडियम" ३०, ओपियम ३० या मर्क-सोल ६। अतिसार या कब्जियतके साथ पेट फूला हो, तो नक्स-वोमिका ६ लाभदायक है।

कमजोर—हैजेकी परिणामावस्थामें रोगीके शरीरमें अकसर खून नही रहता। कुछ पीली आभा मिला सफेद शरीर, गड्ढेमें धँसी आँखें, स्वर भग प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। रोगी इतना कमजोर हो जाता है कि उसमें उठनेकी ताकत नही रहती। इस अवस्थामें 'चायना' ३० या 'एसिड फास' ३० लाभदायक है।

अनिद्रा—हैजेके बाद 'नीद न आती हो', तो 'काफिया ६ लाभदायक है।

फोड़ा और कर्णमूल-प्रदाह—प्रतिक्रियाके बाद शरीरमें किसी-किसी जगह फोड़ा या व्रण होकर पीव हो जाये, तो 'हिपर-सल्फर' ६। फोड़ा फटकर या चिरवानेके बाद पीव बहता रहे, तो "सिलिका" ३० देना चाहिये। कर्णमूल-ग्रन्थि फूल जाये और लाल, गर्म या टपक-जैसा दर्द होता हो, तो "बेलेडोना" ३x। शय्याक्षत होकर उससे रस बहता हो, तो "लैकेसिस ६, आर्सेनिक ६, कार्बो-वेज ६, या आर्निका" ६।

मुँहमें या दाँतके मसूढ़ोंमें घाव होनेपर "एसिड नाइट्रिक ६, हिपर-सल्फर ६ या कार्बो-वेज ६, चायना ६, सल्फर ३० या पल्सेटिला" ६। मुँहमें घाव होनेपर अरम ६, आर्सेनिक ६, सल्फर ३० या सिलिका ३०। सड़ा घाव (gangrene) होनेपर आर्सेनिक ६—२००, लैकेसिस ६ या क्रोटेलस ६ देना चाहिये।

फेफड़ेमें प्रदाह—ऐकोनाइट ३ और फास्फोरस ६ इसकी प्रधान दवाएँ हैं। इस ग्रन्थका "फेफड़ेका प्रदाह" देखिये।

बच्चोंका हैजा—बाल रोगाध्यायमें "बच्चोंका उदरामय" और "बच्चेका हैजा" देखिये।

हैजा रोगका "पूरा-पूरा विवरण और इलाज" जाननेके लिये हमारा "हैजा और उसकी चिकित्सा" ग्रन्थ अच्छी तरह अध्ययन करना चाहिये।

प्लेग (महामारी)
(Plague)

मिश्र देश ही इस बीमारीको पैदा करनेवाला है। लगभग २४०० वर्ष पहले उस देशमें यह रोग पैदा हुआ था। ईसाकी छठी शताब्दीसे अठारहवीं शताब्दीतक इसका जोर दिखाई दिया। १८१५ ईस्वीमें भारतवर्षमें इसके पहले-पहल आनेकी बात सुनी जाती है। मौजूद महामारी १८२६ ईस्वीमें हांगकांगसे बंगाल पहुँची है। बच्चे और जवानोंको यह रोग ज्यादा होता दिखाई देता है; एक बार यह रोग होनेपर फिर दुबारा होनेका डर नहीं रहता। यह व्याधि स्पर्शक्रमक और संक्रामक है।

इसे भारतवर्षमें महामारी और पाश्चात्य देशोंमें प्लेग (plague), पेस्टिलेन्स (pestilence) या ब्लैक डेथ (plack death) कहते हैं।

यह भी चेचककी तरह ही एक फैलनेवाली बीमारी है। इसमें पहले प्रबल ज्वर, इसके बाद शरीरके कितने ही स्थानोंकी ग्रन्थियाँ फूल उठती हैं और इसके बाद रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

एक प्रकारका विष (किसी-किसीके मतसे जीवाणु—bacillus pestes) या उद्भिज्जाणु, किसी-किसीके मतसे जमीनसे निकली भाफ (effluvium) स्पर्श या साँसके साथ शरीरमें घुसनेपर प्लेग रोग आरम्भ होता है।

कोको बैसिलस (coco bacillus) नामक एक तरहका ऐसा जीवाणु, जो खुर्दबीनसे ही देखा जा सकता है, शरीरमें घुसनेपर यह बीमारी पैदा हो जाया करती है। यह जीवाणु देखनेमें टेढ़ा-मेढ़ा रहता है और इसका माथा गोल रहता है। यह देखनेमें सेमिकोलनकी तरह दिखाई देता है। इसीलिये कितने ही इसे "सेमिकोलन बैसिलस" भी कहते हैं। रोगीके खूनमें, रक्त-रस (serum) में, ग्रन्थियोंमें, पेशाब या थूकमें तथा पसीनेमें यह जीवाणु मौजूद रहता है। साँस भोजन-सामग्री या शरीरमें किसी जगह घाव हो जानेपर, उसी घावकी राहसे, ये जीवाणु शरीरमें घुसकर, खूनमें मिल जाते हैं और बीमारी पैदा कर देते हैं। अन्धेरी कोठरियाँ, तर, सीड-भरी जगह आदिमें ये जीवाणु बढ़ते हैं। किसी-किसीका कथन है कि बदबूदार भाफसे यह रोग-बीज पैदा होता या बढ़ता है। प्रमाण स्वरूपमें यह देखा जाता है कि चूहे आदि जो सब जीव तर बदबूदार जगहोंमें और मिट्टीके नीचे बिलोंमें रहते हैं, उनको ही यह बीमारी पहले होती है। चिड़ियोंको अकसर यह रोग नहीं होता। चूहे ही इस रोगके दूत माने जाते हैं। चूहे खटमल, मक्खी, झींगुर* आदिके द्वारा यह रोग दूर-दूरतकमें फैल जाता है।

---

* हालमें १९११ ईस्वीमें बम्बई सरकारने घोषणा की है कि चूहेके अलावा एक तरहकी मक्खी प्लेगके कीड़ोंको पहुँचाती है। प्लेगको पहुँचानेवाली ये

वास्तवमें मक्खियोंको छोटी-छोटी पैरकी अंगुलियोंमें असंख्य जीवाणु रहते हैं (रोग-बीज पृष्ठ १६७ और परिशिष्ट "ग" अंक ४ देखिये)। जो स्थान बहुत मनुष्य और भीड़ भाड़से भरे रहते हैं (जैसे—बड़े-बड़े शहर, बस्तियाँ और होटल आदि), जहाँ निर्मल हवाके आने-जाने अथवा धूपकी गुञ्जायश नहीं रहती, पानीकी निकासीका भरपूर प्रबन्ध नहीं रहता, नालियाँ गन्दी, मैले पानीसे भरी रहती हैं, बदबू फैली रहती है तथा सीड़-भरे तर स्थानोंमें ही पहले-पहल प्लेगका आक्रमण होता है और अधिक होता है। ये ऊपर लिखी वजहें और उपयुक्त भोजन न मिलनेके कारण जीवनी-शक्तिका कमजोर पड़ जाना आदि कारणोंसे दरिद्र मनुष्योंपर ही इसका प्रभाव अधिक होता है। धोबी, मछुए-मल्लाह इत्यादि जो जलका काम अधिक करते हैं या चर्बी और तेलके व्यापारी तथा गाड़ीवानोंपर भी इस रोगका प्रकोप हुआ करता है।

इसका आक्रमण सभी उमरके स्त्री-पुरुषोंपर हो सकता है; पर पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंको अधिक होता है। इसके अलावा, युवकों (१५ से ३५ वर्ष) को अधिक होता है।

रोगकी अंकुरावस्थामें (अर्थात् शरीरमें विष-प्रवेशके मुहूर्त्तसे लेकर ज्वर आनेके कालतक) शरीरकी दुर्बलता और मन सुस्त रहनेके सिवा

मक्खियाँ या चूहे, मनुष्यके कपड़े, खाट, भोजनके सामान आदिमें छिपकर या बैठकर, एक स्थानसे दूसरी जगह यह रोग पहुँचा देते हैं, इस तरह प्लेगका बीज मनुष्य शरीरमें जाता है। यदि इन मक्खियोंको नष्ट कर दिये जायें, तो प्लेग निर्मूल हो सकता है। बहुत तरहसे जाँच करनेपर यह सिद्धान्त निकला है कि नित्य पहनने और शय्याके कपड़े यदि धूपमें बहुत देरतक सुखाये जायें, तो ये मक्खियाँ और प्लेगके बीजाणु नष्ट हो जाते हैं और इस उपायसे प्लेगका फैलना बन्द होकर धीरे-धीरे भारत प्लेग-शून्य हो सकता है।

कोई दूसरा लक्षण नहीं दिखाई देता। यह अवस्था ५-७ घण्टेसे लेकर ५-७ दिनोतक रहनेके बाद एक सान्निपातिक ज्वरके लक्षण (जैसा— तेज शीत, कम्प, शरीरका ताप १०॰ डिगरीतक बढ जाना, समूची देहमें दर्द वमन, प्रलाप या बेहोशी, बलको क्षय करनेवाला पसीना, किसी शारीरिक यन्त्रसे रक्त-स्राव, अत्यन्त दुर्वलता प्रभृति उपसर्ग) प्रकट हो जाते है और २४ दिनोंके भीतर ही पुट्ठे, बगल, गर्दन प्रभृति स्थानोंमें गांठ (bubo) निकल जाती है। कभी कभी रोगीको ज्वर आनेके ४-५ घण्टोंके भीतर ही (अर्थात ऊपर कहे लक्षण प्रकट होनेके पहले ही) रक्त वमन करते करते रोगीकी मृत्यु हो जाती है। गाठ निकलनेके चार-पाँच दिनोंके भीतर पककर बुखार छूट जाना "अच्छा लक्षण" है। काली लकीरें पडना, पतले दस्त, रक्त-स्राव, गांठ पककर सडने लगना प्रभृति उपसर्ग "कुलक्षण" है।

डाइसन और कैलवर्ट नामक दोनों डाक्टरोंने इलाजकी सुविधाके लिये प्लेगको चार प्रकारका बताया है —

(१) **सेप्टीसिमिक** (Septicæmic) "खून खराब करने-वाला" या "सडनेवाला" प्लेग—इसमें शरीरके सब यन्त्र आक्रान्त होकर सडने लगते है। यह तो कहना ही वृथा है कि इस तरह खून खराब होनेका नतीजा बहुत ही खराब होता है।

(२) **ब्यूबोनिक** (Bubonic) प्लेग—इसमें लसिका-ग्रन्थियाँ (lymphatic glands) विशेष रूपसे आक्रान्त होती हैं अर्थात पुट्ठे, बगल, गर्दन आदिमें छोटी और कडी गाठें होती है। गाठमें पीब होना "अच्छा लक्षण" है, परन्तु गांठका बैठ जाना रुका ही "खराब लक्षण" है। कब्जियत, मूत्र ग्रन्थि या जरायुसे खून जाना, लाल या काले रंगकी कै प्रभृति बुरे लक्षण हैं और बडे ही शंकाजनक है।

(३) **न्यूमोनिया** (Pneumonic) प्लेग—इसमें खासकर फेफड़ा आक्रान्त होता है अर्थात् सूखी, खाँसी छातीमें दर्द, साँसमें कष्ट, फेफड़ेसे खून जाना वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं।

(४) **इण्टेस्टाइनल** (Intestinal) प्लेग—इसमें खासकर आँतोंपर हमला होता है अर्थात् पीठ, तलपेट और कमरमें दर्द, पेट फूलना, दस्त, कै वगैरह लक्षणोंकी ज्यादती दिखाई देती है।

यह वीमारी जव व्यापक भावमें दिखाई देती है, उस समय रोग-निदानमें कोई विशेष असुविधा नहीं होती। खुर्दबीनके सहारे देखनेपर यदि कोको बैसिलस मिल जाये, तो निदानमें कोई सन्देह ही नहीं रह जाता।

इसका भावी फल अच्छा नहीं है। सैकड़े पीछेसे ६० से ६० रोगीकी मृत्यु ही हो जाती है।

सीड़-भरी जगहमें या वदबूदार और मनुष्योंकी भीड़से भरी जगह त्याग देना चाहिये। जो जगह खुली और हवादार हो, सूखी रहे, धूप अच्छी तरह लगती हो, ऐसी जगहमें चले जाना चाहिये। मैले पीनीकी निकासीका पूरा वन्दोवस्त रखना चाहिये। रोज शरीरमें अच्छी तरह तेल लगाकर नाहाना चाहिये। हल्की सहजमें पचनेवाली और ताजी चीजें, दही भी थोड़ा रोज खाना चाहिये।

संक्षिप्त चिकित्सा—वीमारीके आरम्भमें आर्सेनिक या वैप्टीशिया; शोथ वगैरह रहें, तो एपिस। तकलीफ देनेवाला फोड़ा या गांठमें—वेल। इसके वादके उपसर्गोंके लिये लक्षणके अनुसार—लैकेसिस (चर्मपर वैंगनी रंगके दाने और गहरी सुस्ती); क्रोटेलस (रक्तास्रावका लक्षण रहनेपर); इलैप्स (अगर काले रंगका स्राव हो; क्यूप्रम-ऐसेट (आक्षेप या खींचनकी प्रधानता रहनेपर); हाइड्रोसियानिक एसिड (हिमांग या पतनावस्थामें) प्रयोग करना चाहिये।

प्रतिषेधक चिकित्सा—(१) एक इग्नेशिया बीन (Ignatia Bean) के बीचमें छेदकर उसमें सूता डालकर दाहिने या बायें बाँहमें अथवा कमरमें पहन लेना चाहिये। (२) नित्य अच्छी तरह सरसोंका तेल मालिशकर नहाना चाहिये। (३) नीबूका रस या खट्टी चीज खाना और (४) घरमें चूहा न घुसे, इसपर विशेष दृष्टि रखनी चाहिये।

अंकुरावस्थामें—इग्नेशिया ३।

ज्वरावस्थामें—

(क) **प्रारम्भमें** (प्रलाप रहनेपर)—बेलेडोना।

(ख) **पूर्ण विकारमें**—जब रक्त दूषित होकर समूचे शरीरके यन्त्र आक्रान्त हो जाते हैं (अर्थात् सेप्टीसिमिक प्लेगमें) नैजा ३ या ६।

गांठ निकलनेपर (ब्यूबोनिक प्लेगमें)—बेडियेगा १x सेवन और बेडियेगा १x गांठपर लगाना चाहिये। इस दवासे बहुत बार गाँठें कम हो जाती हैं और बीमारी जल्द आराम हो जाती है।

फेफड़ा आक्रान्त होनेपर (न्युमोनिक प्लेगमें)—फास्फोरस ६, ३० ("फुस्फुस-प्रदाह" देखिये)।

आँतें आक्रान्त होनेपर (इण्टेस्टाइनल प्लेगमें)—आर्सेनिक ६, ३० ("अन्त्र-प्रदाह" देखिये)।

हिमांग (Collapse) अवस्थामें—हाइड्रोसि-एसिड ६।

प्रकृति प्लेग निर्णय होते ही "पेस्टिनम" या "प्लेगिनम" (plaginum) ३०, २०० नित्य दो बार सेवन कराना चाहिये और बीच-बीचमें लक्षणके अनुसार उसके साथ ही अन्य दवाओंका भी प्रयोग हो सकता है। जैसे—'रोगके आरम्भमें'—आर्सेनिक ३x, ३० (डा० मिल्स कहते हैं

कि साधारणतः प्लेगकी यह सर्वोत्कृष्ट दवा है)। "शोथ" में—एपिस ३, ३०। बहुत "प्रलाप या गांठमें दर्द" रहनेपर—बेलेडोना ३x, ६। सुस्ती और शीताद (purpura) होनेपर—लैकेसिस ६, ३०। "अकड़न या खींचन" होनेपर—क्यूप्रम ऐसेट ६x विचूर्ण। "रक्त-स्राव" में—क्रोटेलस ३, ६। 'गहरी सुस्ती', कमजोरी, जखम; रोगी अपनेको घायल समझता है और आँख पीली होना प्रभृति लक्षणोंमें नैजा ३, ६ का प्रयोग करना चाहिये।

कोब्रा या नैजा ३ (विचूर्ण)—इस रोगका एक महौषध है। नीचे लिखे लक्षणोंमें यह विशेषकर फायदा करता है:—समूचे शरीरमें दर्द, बेचैनी, श्वास-कष्ट, सुस्ती (शराबियोंका भाव), बेहोशी जीवनी-शक्तिका ह्रास, खून निकलना नाड़ी लोप; सारा शरीर पीला हो जाना। यदि निगलनेकी शक्ति न रहे, तो यह दवा हाइपोडर्मिक पिचकारीसे रोगकी त्वचाके निचले भागमें प्रवेश करा देना पड़ता है।*

पाइरोजिनियम ३०, २००—ज्वरकी गर्मी खूब बढ़कर मृत्युकी सम्भावना हो जाये, तो इसके व्यवहारसे ज्वरकी उष्णता (अतएव, रोगकी तेजी) घट जाती है।

---

* यहाँ कोब्रा या गेहुअन साँपके विषके सम्बन्धमें एक बात कहनी बहुत जरूरी है। मेजर (अब कर्नल) डीनके (Dean's) हाथोंमें जब बम्बईके अस्पतालका प्लेगके इलाजका था, उस समय उन्होंने नैना या कोब्रा (कोब्रा १ भाग—ग्लिसरिन १०००० भाग = ३x क्रम), लैकेसिस वगैरह विष खिलाकर सैकड़ों प्लेग रोगियोंकी जान बचायी थी। इसलिये सरकार तथा सर्वसाधारण सबने उनकी बड़ी प्रशंसा की थी। सौभाग्यसे इस समय वे सरकारसे पेन्सन पा रहे हैं अब वे इङ्गलैंडमें रहकर जी-जानसे होमियोपैथीकी उन्नतिकी चेष्टा कर रहे हैं।

आर्सेनिक—३०, २००—जलन, तेज प्यास, बेचैनी, मृत्यु-भय, बहुत अधिक कमजोरी और सुस्ती, मानसिक अस्थिरता ; परन्तु सुस्तीके कारण चुपचाप बिना हिले-डुले पड़े रहना, श्वासमें तकलीफ प्रभृति लक्षणोंमें लाभदायक है।

बेलेडोना १x, २००—रोगकी पहली अवस्थामें तेज बुखार, प्रलाप आँख मुँहका लाल हो जाना, सर-दर्द, गाठ फूली और लाल, उसमें टपककी तरह दर्द, अकड़न वगैरह प्रदाहके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

बैप्टीशिया ३x, २००—मुँहमें बदबू, मल-मूत्रमें दुर्गन्ध, पतले दस्त, बेहोशकी तरह भाव, धीमा प्रलाप (अट-सट बकना), शय्या कड़ा मालूम होना प्रभृति सान्निपातिक लक्षणोंकी अधिकता रहनेपर लाभदायक है।

कार्बो-वेज ३०, २००—अन्तिम अवस्थामें सारे शरीरमें ठण्डा पसीना, नाक-मुँहके पास लगातार पंखेसे हवा करनेके लिये कहना, साँसमें कष्ट, आँख मुँहका धँस जाना, साँस ठण्डी, स्वरभग प्रभृति अन्तिम लक्षणोंमें फायदेमन्द है।

कार्बो-एनिमेलिस ३०, २००—गाठमें दर्द, कड़ापन और प्रदाह, तेज सर-दर्द। सारे शरीरमें, खासकर गाठमें नीली आभाके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

एचिनेशिया ¤, ६—पतले दस्त, ज्वर, सुस्ती, बेहोशीका भाव, सब तरहके स्रावमें बदबू, दर्द, गाठ फूली वगैरह लक्षणोंमें एचिनेशिया मूल अर्क १० से १५ बून्दकी मात्रामें दिनमें तीन बार सेवन करना चाहिये।

फेरम-फास ३x विचूर्ण—यदि प्रदाहका लक्षण प्रबल हो, तो इस दवाका विचूर्ण दो घण्टेके अन्तरसे प्रयोग करनेपर लाभ होता है।

जेलसिमियम १x, २००—औंघाई, तन्द्रालुता, मानसिक सुस्ती, माथेके पिछले भागमें दर्द, धीमा प्रलाप और कँपकँपी ।

इग्नेशिया ३०, २००—डा० हानिङ्ग वावर और डाक्टर महेन्द्रलाल सरकार इग्नेशियाको प्लेगकी सर्वश्रेष्ठ दवा समझते हैं। उनके मतसे प्लेगकी सभी अवस्थाओंमें इससे लाभ होता है। इससे रोग आराम भी होता है और उसका होना भी रुकता है। दोनों ही काम होते हैं। रोग होना रोकनेके लिये चार-पाँच दिनका अन्तर देकर एक मात्रा इग्नेशिया ३० सेवन करना और जव रोग फैला हो, तो एक इग्नेशिया वीन कमरमें वाँध रखनेपर प्लेग होनेका भय नहीं रहता ।

कैलि-म्यूर ३x, २००—वायोकेमिक मतसे यह प्लेगकी एक उत्तम दवा है। प्रदाहका लक्षण अधिक रहनेपर फेरम-फासके साथ पर्यायक्रमसे इसका प्रयोग करना चाहिये। कैलि-म्यूरका प्लेगकी सभी अवस्थाओंमें प्रयोग किया जा सकता है।

लैकेसिस ३०, २००—वाईं ओर रोगका अधिक आक्रमण और इसके वाद उसका दाहिनी ओर फैल जाना, छूना सहन न होना, सोनेके वाद रोगका वढ़ना, शरीरके स्रावके साथ खून निकलना, सर-दर्द, गांठका रंग काली आभा लिये नीला या वैंगनी, सुस्ती, प्रलाप प्रभृति लक्षणोंमें फायदेमन्द है।

म्यूरियेटिक एसिड ३०, २००—विछावनसे उतर पड़ना या पायतानेकी ओर सरक जाना, कमजोरी, ठण्डा पसीना, वहुत अधिक सुस्ती, आँख, मुँहका धँस जाना, वेहोशी आदिमें यह उपयोगी है।

ओपियम ६, २००—गलेमें श्लेष्माकी घरघराहट, वेहोशी, लम्वी साँस लेना, तन्द्रा प्रभृतिमें उपयोगी है।

सदृश-विधानके लक्षणके अनुसार डा० महेन्द्रलाल सरकार निम्न-लिखित औषध अवस्था-विशेषमें देनेका परामर्श दे गये :—इग्नेशिया,

ऐकोनाइट, बेलेडोना, कोब्रा, क्रोटेलस, लैकेसिस, इलैप्स, फास्फोरस, आर्सेनिक, मर्क-कोर, वैप्टीशिया, कार्बोलिक-एसिड, ऐण्टिम-टार्ट, कार्बो ऐनिमेलिस, कार्बो-वेज, पाइरोजेन, ऐन्थ्रासिनम, कैलि-फास, लायामिन, रस-टक्स, एइलेन्थस, म्यूरियेटिक-एसिड, फाइटोलैका, ऐपियम-विरस, ओपियम, हायोसायामस, स्ट्रैमोनियम, इपिकाक, ऐण्टिम-क्रूड, हिपर-सल्फर, सिलिका और वैडियेगा।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको हवादार कमरेमें रखना चाहिये। दूध, साबू, बार्ली, आरारूट, नारंगीके साथ नमक, मांस या मसूरकी दालका जूस, रोगके समय (जरूरत पड़नेपर पिचकारी द्वारा) खिलाना, चाहिये। यदि गांठ पक जाये, तो उसपर पोल्टीस देना और फट जानेपर (या चिरवा देनेपर) कैलेण्डुला तेल घावपर लगाना चाहिये। गोयठा गन्धक या नीमका पत्ता पीसकर, जलानेसे हवा साफ हो जाती है।

ज्वर (Fever)

शरीरका ताप बढ़ जानेको ही लोग साधारणतः बुखार (ज्वर) कहते हैं। शरीरके किसी अंशमें (या यन्त्रमें) प्रदाह या किसी तरहका जहर खूनके साथ मिल जानेपर बुखार पैदा हो जाता है। जो ज्वर एक बार छूटकर फिर आ जाता है, उसे "सविराम" या "विषम-ज्वर" कहते हैं। जो ज्वर हमेशा बना रहता है, बिलकुल ही नहीं छूटता, उसे "अविराम ज्वर" या "एक ज्वर" कहते हैं, जो बुखार घटते-न-घटते फिर बढ़ जाये, उसे "स्वल्प-विराम ज्वर" कहते हैं। सामान्य ज्वर, सर्दीका बुखार मैलेरिया ज्वर प्रभृति जो ज्वर इस देशवालोंको अकसर हुआ करते हैं, उनकी प्रकृति ऊपर कहे तीन तरहके ज्वरोंमें किसी-न-किसीसे मिलती है। इसका वर्णन नीचे दिया जाता है :—

सामान्य ज्वर
(Simple Fever)

सर्दी लग जाना, वरसाती पानीमें भींगना, तेज धूपमें घूमना, वहुत ज्यादा खाना-पीना या अत्यधिक परिश्रम वगैरह कारणोंसे यह ज्वर आता है।

चिकित्सा—सूखी ठंडी हवा लगनेके कारण ज्वर हो या डर जानेके कारण ज्वर हो, तेज प्यास या वेच्चैनीके साथ ज्वर हो, नश्तर लगवानेके वादका बुखार, जाड़ेके दिनोंमें जोस लगनेके कारण ज्वर आ जाये, तो ऐकोनाइट ३x, दो-तीन घण्टेका अन्तर देकर एक-एक वून्द देना चाहिये। सर-दर्द, आँखें लाल प्रभृति लक्षणोंमें "वेलेडोना" ६। सव शरीरमें (विशेषकर कमरमें) दर्द रहे और वरसाती ठण्डी हवा लगनेके कारण बुखार आये, तो रस-टक्स ६ देना चाहिये। वरसातके पानीमें भींगनेके कारण ज्वर आ गया हो, तो डल्कामारा ६। तेज कै या मिचली हो, तो इपिकाक ६। वहुत खाने-पीने या नहाने वाद बुखार हो या जिस बुखारमें प्यास विलकुल ही न हो, उसमें पल्सेटिला ६ का प्रयोग करना चाहिये। दूसरे-दूसरे "ज्वरोंकी दवाएँ" देखिये।

सर्दीका ज्वर
(Catarrhal Fever)

आँख, नाकसे पानीकी तरह वलगमका निकलना, शरीरमें ऐंठनका दर्द या सव देहमें दर्द, सरमें टपकका दर्द, आँखें पानीसे भरी हुई, छींक, सर भारी, कै या मिचली, कब्जियत, जम्हाई आना, आँख और मुँह भारी मालूम होना, आँखें लाल रहना, आवाज वैठ जाना, खाँसी,

छातीमें दर्द प्रभृति "सर्दीके बुखार" के लक्षण हैं। सर्दी या ओस लगना पानीमें भींगना, पेटका गर्म होना, एकाएक गर्मीसे सर्दीमें जा पहुँचना, एकाएक पसीना बन्द कर देना, दही, खटाई इत्यादि श्लेष्मा पैदा करनेवाली चीजोंका ज्यादा खाना वगैरह इस रोगके प्रधान कारण हैं।

चिकित्सा—सर्दीकी पहली अवस्थामें जब देहमें थोड़ा-थोड़ा सिहरावन होता हो और नाक, आँखसे पानी गिरता हो, तो सिर्फ एक बून्द "अर्क कपूर" (या पानीके साथ थोड़ा कपूर) खानेसे ही फायदा हो जाता है। छींक, शरीरका ताप बढ़ना, आँख और नाकसे पानी बहना, बेचैनी, प्यास इत्यादि लक्षणोंमें "ऐकोनाइट" 3x, ६। आँख, नाकसे पानी गिरना, आवाज भारी, गलेमें सुरसुरी, बार-बार बहुत-सा पेशाब होना, हाथ-पैरोंमें दर्द, गर्म कमरेमें रोग बढ़ता हुआ मालूम हो, ऐसे लक्षणोंमें 'एलियम सिपा' 3x। कब्ज और सर्दीसे नाक बन्द हो जाना (विशेषकर रातमें) "नक्स-वोम" ६, ३०। कै या मिचली रहनेपर "इपिकाक" 3x। पानीकी तरह जलन पैदा करनेवाली सर्दीका स्राव होनेपर "आर्सेनिक" ६। आँखें लाल, नींद न आना, सरमें दर्द प्रभृति लक्षणोंमें "बेलेडोना" ६। छातीमें दर्द और सर्दी लगकर स्वर भारी, हाथ-पैर तथा पीठमें दर्द और बेहद कब्जमें "ब्रायोनिया" ६। ज्वर बन्द होनेके बाद नक्स-वोमिका ३, पल्सेटिला ६ या रस-टक्स ६, लक्षणके अनुसार फायदा पहुँचाते हैं ("बहुव्यापक सर्दी या इन्फ्लुएञ्जा" देखिये)।

आनुसंगिक चिकित्सा—सर्दी न लगना, सदा बदन ढँके रहना, नाक बन्द होनेपर नाकके ऊपर और सीनेपर सरसोंका तेल मालिश करना। धानका लावा, सागू, बार्ली वगैरह हल्की चीजें खाना चाहिये। दूसरे-दूसरे "ज्वरोंकी दवाएं और आनुसंगिक चिकित्सा" देखिये।

अविराम ज्वर
(Continued Fever)

पहले थोड़ा जाड़ा मालूम होता है, इसके बाद कँपकँपी होकर यह बुखार आता है। कभी जाड़ा, कभी गर्मी मालूम होती है, देहमें दाह, चमड़ा सूखा और रुखड़ा, वेचैनी, प्यास, जीभ सूखी और सफेद, नाड़ी तेज, तेजीसे जल्दी-जल्दी साँस लेता और छोड़ता है। पेशाव परिमाणमें थोड़ा और लाल, कमर और पीठकी रीढ़में दर्द होता; कभी-कभी कब्जियत रहती है या कभी पतले दस्त आते हैं, सरमें दर्द, अरुचि (खानेकी इच्छा न होना) आदि इसके प्रधान लक्षण हैं।

कारण—ऋतुका वदलना, वहुत गर्मी या वहुत सर्दी लग जाना, गीले कपड़े पहनना, एकाएक पसीना वन्द हो जाना, वहुत ज्यादा शारीरिक और मानसिक परिश्रम, ज्यादा खाना-पीना, शरीरका मैल न निकलना, चोट लगना, कब्जियत, रातमें जागरण आदि कारणोंसे यह अविराम ज्वर होता है।

चिकित्सा—एकोनाइट ३x—नाड़ी सूक्ष्म, तेज, कठिन और उछलती हुई; शरीर गर्म और सूखा; कभी जाड़ा, कभी गर्मी मालूम होना; वार-वार छींकें आना और वेचैनी; सरमें तेज दर्द; श्वास-प्रश्वास तेज। रातमें रोगका वढ़ना और हल्का प्रलाप; गलेकी नसोंका फड़कना; वेचैनी; प्यासके साथ तेज बुखार; रोगी समझता हो कि इस रोगमें वह अवश्य ही मर जायगा प्रभृति लक्षणोंमें इसका प्रयोग होता है; परन्तु पसीना जव होने लगे, तव ऐकोनाइट वन्द कर देना चाहिये।

वेलेडोना ३, ३०—माथे और गलेकी नालियोंमें जलन, जाड़ा थोड़ा, पर शरीरमें जलन ज्यादा रहती है; पसीना नहीं होता अथवा

कपडेसे ढँकी जगहमें थोड़ा पसीना होता है ; आँखें लाल, नींद नहीं आती, प्यास, मुँह और ओंठ सूखे, प्रलाप और सरमें दर्द, कराहता है। बच्चे, रक्त-प्रधान और मोटे-ताजे मनुष्योंके लिये यह ज्यादा फायदेमन्द है।

ब्रायोनिया ३, ६, ३०—सर भारी, गलेकी नसें, माथा, गर्दन, हाथ, पैर और पीठमें दर्द ; हिलने-डुलनेमें दर्द बढ़ता है ; श्वासमें कष्ट और सूखी खाँसी ; पाकस्थलीमें जलनकी तरह दर्द ; जीभ पीली ; खायी हुई चीजकी कै हो जाना, श्लेष्मा या पित्तकी कै होना ; चेहरा पीला, कब्जियत और तेज प्यास, यकृत प्रदेशमें दर्द। शरीरकी गर्मी कभी कम और कभी ज्यादा, नाडी तेज। अरुचि और डकार आनेपर मुँहका स्वाद तीता, मुँह मानो लसदार हो रहा है।

साइना २x, २००—क्रिमिके साथ बुखार।

जेलसिमियम १x—बहुत कमजोरी (कमजोरीकी वजहसे हाथ, पैर, जीभ काँपती है, बोलीका जकड जाना, आँखोंका बन्द होते जाना, सर न उठा सकना, तन्द्राका भाव), धुँधला देखना नाडी क्षीण और कोमल, थोड़ी प्यास और प्यासका न रहना (विशेषकर बच्चोंके बुखारमें)।

विरेट्रम-विरिडि १x—नाडी भारी, कड़ी और तेज ; जीभ पीली उसके बीचके हिस्सेमें लाल रेखा ; बहुत कँपकँपी, सरमें चक्कर आना, सरमें दर्द (खासकर सरके अगले भागमें तेज दर्द), मिचली और शारीरिक दुर्बलताके लक्षणमें फलप्रद है।

युपेटोरियम-पर्फ ३—सरमें दर्द, मिचली या पित्तकी कै ; पानी पीने बाद वमन ; कँपकँपी कम होनेके समय पित्तका वमन ; सब शरीरमें दर्द (विशेषकर हड्डियोंमें)।

फेरम-फास ३x, ६x, १२x चूर्ण—ऐकोनाइटवाले ज्वरकी तरह तेज ज्वर न हो या जेलसिमियमकी नाड़ीकी भाँति नाड़ी उतना कोमल न होना ; अविराम ज्वरके साथ खाँसी ।

इपिकाक ३x, नक्स वोमिका ३, पल्सेटिला ३, रस-टक्स ६, फास्फोरस ६, सलफर ३० इत्यादि दवाएँ और दूसरी-दूसरी बुखारकी दवाएँ भी लक्षणके अनुसार इस बुखारमें दी जा सकती हैं ।

पथ्य—ज्वर जबतक एकदम न छूट जाये, तबतक सागू, वार्ली, आरारूट, धानका लावा, ठण्डा पानी देना चाहिये और बुखार छूटनेके ४-५ दिन बाद अन्न देना चाहिये ।

माल्टा फीवर
(Malta Fever)

भारतवर्ष, फिलिपाइन टापू और भूमध्य सागरके किनारेके जनपदोंमें यह रोग होता दिखाई देता है । माल्टा द्वीपमें यह रोग खासकर बहुत ज्यादा होनेके कारण इस रोगको "माल्टा ज्वर" कहते हैं । "Micrococcus melitensis" नामका एक तरहका जीवाणु है, जो (खासकर बकरीके दूधके साथ) अच्छे-भले शरीरमें जाकर, यह रोग पैदा कर देता है ।

लक्षण—एक सप्ताहतक यह बीमारी भीतर ही अंकुरावस्थामें छिपी रहनेके बाद एकाएक अविराम ज्वर पैदा हो जाता है, जो दो-तीन सप्ताहतक रहता है । इसके बाद, दो चार दिन बुखार छूट जाता है और फिर बुखार होकर रोगी पाँच सात महीनेतक यह अविराम ज्वर भोगा करता है । इस ज्वरके साथ बहुत कब्ज रहता है, खूनकी कमी धीरे-धीरे बढ़ती जाती है और सुस्ती, प्लीहाका बढ़ जाना, स्नायु और

सन्धियोंमें दर्द, सन्धिवात प्रभृति उपसर्ग दिखाई देने लगते हैं; कभी-कभी तो कई वर्षों तक यह रोग भोगना पड़ता है।

चिकित्सा—रोगकी पहली अवस्थामें ब्रायोनिया ३x, ३० (जब खासकर ज्वर-भाव, वात या कब्जियतकी प्रधानता रहती है); बेप्टीशिया θ, ३x और आर्सेनिक ३x, ६ भी उपयोगी है। इसके बाद आर्स-आयोड ३x विचूर्ण, मर्क, नेट्रम-म्यूर ३०, सियानोथस १x, फेरम-फास ३x, फास्फोरस ३, लाइको ६, ३०, सिपिया ३०, सिमिसिफ्यूगा ३x, रस-टक्स ३, ३० प्रभृति दवाएँ लक्षणके अनुसार देनेकी जरूरत पड़ सकती है। रोगीको अलग रखना, उसका पाखाना-पेशाब होशियारीसे फेंकना, हल्का पथ्य देना और गरम पानीसे नहलाना उचित है। यदि १०५ डिगरीसे ज्यादा ताप बढ़ जाये, तो ठण्डे पानीसे शरीर या बदन पोंछ सकते हैं। क्विनाइन या अलकोहल प्रभृतिके व्यवहारसे कोई फायदा नहीं होता। बकरीका दूध न पीना, इसके रोकनेका बढ़िया उपाय है (खासकर माल्टा टापूके रोगियोंके लिये)।

मैलेरिया ज्वर-समूह
(Malarial Fevers)

मैलेरिया बुखार स्पर्शाक्रमक (लरछुत) नहीं है, बल्कि खूनमें एक तरहका जीवाणु प्रवेश कर जाना, इस रोगके पैदा होनेका कारण है। यह ज्वर कभी छूट जाता है, कभी नहीं छूटता। प्लीहा और यकृत अकसर बढ़ जाते हैं और खूनकी कमी हो जाती है। यही इस रोगका परिणाम है। खासकर शरद्-ऋतुमें बंगालमें बहुत ज्यादा मैलेरियाका प्रकोप होता है।

आदि कारण—सीड़-भरी, नीचे तल्लेकी या तर जगहमें रहना या ऐसी जगहमें रहना, जहाँ पानीकी निकासी अच्छी तरह नहीं होती,

मैलेरिया-भरी जगहोंमें मसहरी लगाये बिना ही सोना, बरसात या शरत्-ऋतु।

मैलेरियाके रोगीके रक्तकी परीक्षा करनेपर एक तरहका जीवाणु (Hæmatozoa of laveron) पाया जाता है। यही इस रोगका मुख्य कारण है।

बरसात और शरत्-ऋतुमें मैलेरिया ज्यादा होता है और साधारणतः गरीब आदमियोंको ही यह बीमारी होती है।

मैलेरिया ज्वर, खासकर पाँच प्रकारका होता है :—

(१) सविराम ज्वर। (२) स्वल्प-विराम ज्वर। (३) छिपा हुआ या छद्मवेशी मैलेरिया। (४) मैलेरियाके कारण धातु-विकार। (५) उत्कट (या सांघातिक) मैलेरिया।

मैलेरियासे उत्पन्न सविराम ज्वर
(Intermittent Malarious Fever)

ज्वर छूटकर फिर आ जाये, तो उसे "सविराम ज्वर" कहते हैं; यह ज्वर बंगालमें ज्यादा होता है। यह बुखार होनेपर धीरे-धीरे प्लीहा, यकृत आदि बढ़ जाते हैं, जाड़ा-बुखार, धीमा बुखार, विषम, दिनमें दो बार आनेवाला द्वैकालीन ज्वर, शोथ, उदरी वगैरह बहुतसे भयानक उपसर्ग हो सकते हैं। इसीलिये ऊपर कहे सभी बुखारोंका इलाज एक साथ ही लिखा जाता है।

हर रोज (अर्थात् २४ घण्टेके भीतर) सिर्फ एक वार जो बुखार आकर छूट जाता है, उसे "ऐकाहिका या दैनिक" नित्य आनेवाला ज्वर (quotidian) कहते हैं।

जाड़ा-बुखार—एक दिन नागा देकर जो ज्वर आता है, उसे द्वाहिक या तृतीयक (rertian) ज्वर कहते हैं। जो दो दिनका नागा

देकर आता है, उसे "त्र्यहिक" या "चतुर्थक" (quartan) ज्वर कहते हैं। दिन रात अर्थात् २४ घण्टोंमें दो बार आनेवाले बुखारको "द्वैकालीन ज्वर" कहते हैं। यह दो बार आनेवाला बुखार बहुत ही कड़ा होता है इसका इलाज बहुत विवेचनासे करना पड़ता है। पित्तके कारण पैदा हुआ बुखार एक दिन ज्यादा और एक दिन कम होता है। कोई-कोई ज्वर रोज एक ही वक्तपर (बँधे समयपर) आता है और कोई कोई बुखार ऐसा होता है कि किस वक्त आयगा, इसका कोई ठीक नहीं है। किसी बुखारमें ऐसा भी होता है कि आज एक वक्त आया, तो कल उससे दो-एक घण्टा पहले ही आ गया—ऐसा बुखार बहुत भयका कारण है; परन्तु यह ज्वर यदि दो-एक घण्टा पीछे हटकर (समय बढ़ाकर), आये, तो यह अच्छा लक्षण समझा जाता है। सवेरेके वक्त बुखारका बढ़ना अशुभ लक्षण है। खासकर किनाइनके अपव्यवहारसे प्लीहा और यकृत बढ़ जाती हैं और शोथ तथा उदरी हो जाया करती है।

पहले ही कहा जा चुका है कि सविराम ज्वरका दूसरा नाम "विषम ज्वर" है। यह बुखार एक बार छूटनेके बाद थोड़े या अधिक वक्तके (कई घण्टे या कई दिन) बाद फिर आ जाता है। इसीलिये, इसका नाम "विषम (अर्थात् विरामशील intermittent) ज्वर" है। इसीलिये दुजरा या द्वाहिक, त्र्यहिक, द्वैकालीन—दो बार आनेवाले बुखारका साधारण नाम "विषम ज्वर" है।

कारण—हैजा, प्लेग, चेचक वगैरह रोगोंकी उत्पत्तिका कारण जिस तरह रोगका जीवाणु बीज (bacillus) है, उसी तरह मैलेरिया रोगका कारण भी वैसे ही एक प्रकारका जीवाणु-बीज है ["परिशिष्ट (ग)—(४) अंक" देखिये]। ये मैलेरिया-कीटाणु बहुत ही सूक्ष्म होते हैं। तेज खुर्दबीन (अनुवीक्षण यन्त्र) की सहायताके बिना ये

दिखाई नहीं देते। केवल ऐनोफेलिस (anopheles) नामक एक तरहका मच्छर और मनुष्य-शरीरके सिवा, यह खुर्दबीनके सहारे दिखाई देनेवाला जीव और कहीं दिखाई नहीं देता। मच्छर या मनुष्यके शरीरमें यह सूक्ष्म-शरीर कीड़ा घुसनेके कुछ देर बाद ही अपना वंश बढ़ाकर, बहुत जल्दी समूचे शरीरके खूनको खराब कर डालता है। इसी अवस्थाको हमलोग कहते हैं कि इसे "मैलेरिया" हुआ है।

चूहा जिस तरह प्लेग ले आता है, यह मच्छर उसी तरह मैलेरिया ले आता है अर्थात् वर्त्तमान वैज्ञानिक युगमें चूहेको गणेश-वाहन न कहकर प्लेग-वाहन और मच्छरको "मैलेरिया-वाहन" ही कहना उचित है। अण्डे और बच्चेकी हालतमें ये मच्छर दल बाँधकर मैलेरिया-भरी जगहकी मोरी, पनाले, चौभच्चे प्रभृतिके पानीमें रहते हैं; बचपनमें ये पानीके काले कीड़ेके रूपमें रहते हैं। देखनेमें बड़ी-बड़ी आल्पीनोंकी तरह होते हैं। इसके बाद जब बड़े होते हैं, तब बाहर निकल आते हैं। मैलेरियाके कीटाणुसे भरे ये मच्छर जब किसी भले-चंगे आदमीको काटते हैं, तो उसके मुँहसे निकलकर मैलेरियाके कीटाणु उस आदमीके खूनके लाल कणोंमें मिल जाते हैं और बात-की-बातमें उनके सभी रक्तोंको दूषित कर देते हैं। इसके बाद दस-पन्द्रह दिनोंमें ही उसे "मैलेरिया" बुखार आने लगता है। इस तरह मैलेरियाका विष एक मनुष्यके शरीरसे दूसरे मनुष्यके शरीरमें मच्छरों द्वारा पहुँचाया जाता है।

तीन अवस्थाएँ—इस ज्वरके नये आक्रमणकी साधारणतः तीन अवस्थाएँ दिखाई देती हैं—"शीतावस्था, उष्णावस्था और पसीनेकी अवस्था।" 'शीतावस्थामें' पहले जाड़ा लगता है, इसके बाद कँपकँपी होती है (कभी-कभी इतना जाड़ा और कम्प देकर बुखार होता है कि तीन-चार रजाइयाँ ओढ़ानेपर भी जाड़ा नहीं जाता)। वदनमें दर्द, माथेमें टपकका दर्द, प्यास, कभी-कभी खुसखुसी खाँसी प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। "उष्णावस्था" में अकसर सरमें दर्द, चेहरा लाल

शरीरका चमड़ा सूखा, प्यास और साँस लेने-छोड़नेमें तकलीफ रहती है। शरीरका ताप १००° से १०७° डिगरीतक बढ़ जाता है; शरीरमें दाह पैदा हो जानेपर अक्सर जाड़ा कम होने लगता है। कई घण्टेका बाद "पसीनेवाली अवस्था" आती है और पसीना होकर बुखार छूट जाता है।

द्वीकालीन ज्वर, प्रातःकालीन ज्वर, अग्रगामी ज्वर (अर्थात् जो बुखार दो-एक घण्टा पहले या आगे बढ़कर आता है) या "सविराम ज्वर एक ज्वरमें बदल जाये", तो समझना चाहिये कि बीमारी मुश्किल होती जा रही है।

चिकित्सा—लक्षणोंपर भरपूर नजर रखकर इलाज करना पड़ेगा (क्योंकि ऊपर लिखे सब बुखारोंका इलाज एक साथ ही लिखा गया है)। "ज्वरके न रहनेपर अर्थात् विराम अवस्थामें ही दवा सेवन करनी चाहिये।"

किनिन-सल्फ १x, ३x चूर्ण—यदि नये सविराम मेलेरिया ज्वरमें शीत, ताप और पसीना—ये तीनों अवस्थाएँ ही क्रमसे रोगीकी शरीरमें स्पष्ट दिखाई देती हों (अर्थात् शीत, ताप और पसीना—इन तीनों अवस्थाओंमें किसी तरहका उलट-फेर या कभी न दिखाई दे)। इसके बाद विराम अवस्था (बुखार न रहना) भी हुआ करती है। ऐसी दशामें, जब बुखार न रहे, तब तीन घण्टेका अन्तर देकर यह दवा देनी चाहिये।

युपेटोरियम-पर्फ २—बुखार आनेके पहले ही अगर मिचली हो और पीठमें जाड़ा लगकर बुखार आरम्भ हो और जाड़ा लगनेके पहलेसे ही ताप चढ़नेतक प्यास रहती हो; पानी पीनेके बाद ही कै हो जाती हो या पित्तकी कै होती हो; उष्णावस्थाके बाद थोड़ा पसीना हो; हाड़-हाड़, जोड़-जोड़में तेज दर्द; रोगी दर्दसे छटपटाता हो, परन्तु हिलने-डुलनेसे दर्द घटता न हो, तो इसका प्रयोग करना चाहिये।

आर्सेनिक-एल्ब ३, ६, ३०, २००—पुराने विषम-ज्वरमें और उसके साथ-ही-साथ प्लीहा और यकृत आदिके बढ़नेपर, आर्सेनिक बहुत लाभ करता है ('विषम-ज्वरमें') जब शीत या उष्णावस्थाका पूरी तरह विकास नहीं होता या किसी एककी अधिकता या किसी एककी कमी हो; पसीना बिलकुल ही न होता हो ; दाह या उष्णावस्थाके बहुत देर बाद, बहुत देरतक ज्यादा पसीना होता रहे ; प्लीहा और यकृत बढ़ जायें। बुखारके समयकी बेचैनी और दर्द, बकना-झकना और ज्वर न रहनेके भी इस उपसर्गोंके साथ कमजोरी और सुस्ती रहे, तो अधिक फायदा करता है। एक दिन, दो दिन और तीन दिनके अन्तरसे आनेवाले "जाड़ा-बुखारमें ;" नित्य २-३ बार बुखार आनेपर, क्विनाइनके अप-व्यवहार होनेके कारण उत्पन्न विष-ज्वरमें ; "धीमे बुखारमें, प्लीहा, यकृत संयुक्त पुराने ज्वरमें शोथ" होनेपर यह बहुत लाभदायक है। हाथ-पैर ठण्डे होकर बुखार शुरू होता है ; कँपकँपी आरम्भके पहले ही शरीरका ताप बढ़ जाता है और जलनकी तरह दाह होने लगती है ; दुर्निवार प्यास रहती है, परन्तु "थोड़ा पानी पीनेके साथ ही प्यास कम हो जाती है ;" साँसमें कष्ट ; पानी या पतला पदार्थ पीनेसे ही मिचली या वमन ; जीभ साफ ; हर बार बुखार छूटनेके बाद ही रोगी बहुत कमजोर हो जाता है ; रातके बारह बजेके बादसे रोग बढ़ जाता है प्रभृति लक्षणोंमें आर्सेनिक खूब फायदा करता है।

बैराइटा-कार्ब ६, ३०—इसमें शीत, ताप और पसीना—इन तीनों अवस्थाओंमें किसीमें भी प्यास नहीं रहती—इस लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

कैप्सिकम ६—जाड़ा लगनेके पहले ही प्यास लगती है (विशेष-कर सवेरे), बुखारके समय पित्तकी कै होती है ; उष्णावस्था शुरू होनेके कुछ ही देर बाद, थोड़ा पसीना होता है ; परन्तु पसीनेवाली अवस्थामें प्यास नहीं रहती ; हाड़ोंमें दर्द आदि लक्षणोंमें लाभदायक है।

साइमेक्स ३०—शीतवाली अवस्थामें शरीरकी सन्धियोंमें (खासकर घुटनेमें) इतना दर्द होता है कि वहाँकी पेशियाँ और कडराएं (tendons) छोटी मालूम होने लगती हैं। कँपकँपीके साथ या कम्पक पहले प्यास, पसीना, सर भारी ; शीतक शुरू होते वक्त, मुट्ठी बाँध रहना, जाड़ा छूटनेपर तेज प्यास और पानी पीने बाद ही पेशाब होना प्रभृति लक्षणोंमें उपयोगी है।

आर्निका ३०, २००—("सवेरे आनेवाले विषम-ज्वरमें") शीत आरम्भ होनेके पहले बहुत जम्हाई, बहुत कमजोरी, हाड़ोंके भीतर तेज दर्द, नर्म बिछावन भी कड़ा मालूम होता है और इसी कारणसे हमेशा करवट बदलता रहता है, माथा और चेहरा गर्म हो जाता है (पर दूसरे अंग ठण्डे रहते हैं), पसीना नहीं होता या पसीनेमें खट्टी दुर्गन्ध आती है वगैरह लक्षणोंमें यह फायदा करता है। ("समान्य ज्वरमें) भीतर शीत, परन्तु बाहर ताप मालूम हो, पानी पीनेपर (या बाहरी उत्तापसे) जाड़ा बढ़ जाता हो प्रभृति लक्षणोंमें यह फायदेमन्द है। यदि बुखारका अच्छी तरह इलाज न हुआ हो अथवा किनाइनका अपव्यवहार हुआ हो तो आर्निका देना चाहिये।

इपिकाक ३x, ६, ३०—पाकस्थलीकी क्रियाकी गड़बड़ीके कारण बुखार होना, खाने-पानेके दोषसे ज्वर, मिचली या कै ; पीली जीभ ; थोड़ी देर बाद बहुत जाड़ा मालूम हो, परन्तु उष्णावस्था बहुत देरतक स्थायी रहे ; बुखार आनेके पहले जम्हाई, अंगराई लेना, बाहरी गर्म प्रयोगसे जाड़ा बढ़ जाना, उष्णावस्थामें तेज प्यास, पर जाड़ा लगता रहनेपर प्यासका न रहना, उष्णावस्थाके बाद बहुत पसीना ; हरे रंगके आम-भरे पतले दस्त, मुँहका स्वाद तीता। किनाइनके अपव्यवहारके कारण उत्पन्न बुखारमें, मैलेरियासे उत्पन्न पुराने बुखारमें (विशेषकर एक दिनके अन्तरसे आनेवाले ज्वरमें), विशेषकर अगर प्रधान लक्षण न प्रकट हों, तो इपिकाक ३० देना चाहिये। इसके बाद जब दूसरे-दूसरे

लक्षण साफ प्रकट हो जायें, तो उन लक्षणोंके अनुसार दवा चुननी चाहिये ।

हुगली जिलेके एक डाक्टरने अपने ४० वर्षों का अनुभव हमें बताया है कि "सविराम-ज्वर" में इपिकाक देनेपर अकसर अधिकांश स्थानोंमें, उससे या तो बुखार अच्छा हो जाता है अथवा लक्षणोंको साफ प्रकट कर देता है । उस समय दवा चुनना बहुत सहज हो जाता है ।

मशहूर डा० जार (Jahr) कँपकँपी देकर आनेवाले बुखारके आरम्भमें सिर्फ इपिकाक ३० एक बार देनेकी राय देते हैं । ऐसा प्रयोगकर हमलोग भी बहुत बार फायदा होते देखा है ।

इग्नेशिया ६, १२, ३०—("विषम-ज्वरमें") सीर्फ जाड़ा लगनेवाली अवस्थामें प्यास ; ताप या पसीनेवाली हालतमें प्यासका न रहना ; बाहरी गर्मीसे जाड़ेका कम हो जाना ; बाहर जाड़ा, पर भीतर ताप मालूम होना या भीतर जाड़ा और बाहर गर्मी मालूम होना । तापवाली अवस्थामें सर भारी और चेहरा दबा हुआ रहता है । शोक-दुःखके कारण आया हुआ ज्वर ।

("सविराम-ज्वरमें") समूचे शरीरमें खुजली, बदनमें जुलपित्तीकी तरह फुन्सियाँ ; चेहरेके एक भागमें जलन करनेवाला दाह, पसीना कम या सिर्फ चेहरेपर ही पसीना होता है ; तीसरे पहरके वक्त समूची देहमें तेज गर्मी मालूम होती है ; परन्तु प्यास नहीं रहती ।

ऐण्टिम-क्रूड ६—("विषम-ज्वर") नाड़ीका वेग नियमित (नाड़ी ठीक चलती है) ; बहुत जाड़ा, यहाँतक कि गर्म कमरेमें भी जाड़ा नहीं घटता ; प्यास नहीं रहती ; रातमें तलवे ठण्डे हो जाते हैं ; सवेरे सोकर उठनेके समय पसीना होता है ; जीभ सादी या सफेद मैल-चढ़ी ; कब्जियत या पतले दस्त (पर्यायक्रमसे) । खट्टी चीजोंके सिवा कोई दूसरी चीज रोगी खाना नहीं चाहता ; रोगी बराबर सोया रहना

चाहता है (बुड्ढे और मोटे-ताजे जवानोंके रोगमें ऐण्टिम-क्रूड ज्यादा फायदा पहुँचाता है)।

पोडाफाइलम ६—सवेरे आनेवाले बुखारमें और इसके साथ ही पतले दस्त होनेपर (हर बारके दस्तका रंग बदला हुआ रहता है); जीभपर सफेद लेप चढी रहती है, भूख नहीं लगती; साँसमें दुर्गन्ध रहती है, प्लीहा और यकृत-प्रदेशमें दर्द; शीतावस्था आरम्भ होनेके पहले पीठमें तेज दर्द; पसीनेवाली अवस्थामें नींद आ जाती है।

साइना २x, २००—कृमिके कारण पैदा हुए बच्चोंके बुखारमें; बुखार अकसर नही छूटता; नाक खुजलाती है; भूख रहती है। परन्तु प्यास नहीं रहती; कभी कभी तो बुखार किसी तरह भी नही छोड़ता; भूख नहीं लगती या दूषित भूख रहती है। बच्चा अगर "लगातार नाक खुजलाता हो" या उसके दोनों गाल लाल हों, तो साइनाके प्रयोगसे बुखार छूट जाता है।

इलाटेरियम ३, ६—सवेरेके वक्त आनेवाला बुखार; बुखार बन्द हो जानेपर आमवात हो जाता है (जुलपित्ती निकल आती है)। (खुजलानेसे आराम मालूम होता हो)। ऐसे लक्षणोंमें यह फायदेमन्द है।

रस-टक्स ६, ३०—यदि सविराम ज्वर बदलकर एक-ज्वर हो जाये, पानीमें भीगने या गीले कपडे पहननेके कारण बुखार आया हो; बेचैनी, रोगी बिछावनपर हमेशा करवट बदलता रहे; कमरमें दर्द; अतिसार, रक्त-मिले पतले दस्त।

डाक्टर डनहमका कथन है कि "जिस बुखारमें जाड़ा लगनेके कई घण्टे पहले कष्ट देनेवाली और सुस्त कर देनेवाली सूखी खाँसी आती है और यह खाँसी जबतक जाड़ा रहता है, तबतक मौजूद रहती हो, तो उस बुखारमें रस-टक्स फायदेमन्द होता है।"

फास्फोरिक-एसिड २x, ६—तेज जाड़ा और कँपकँपी, शरीरका ताप बहुत तेज और इसके बाद ही कमजोर करनेवाला पसीना ; शीत और तापवाली अवस्थामें प्यास नहीं रहती, पर पसीनेवाली अवस्थामें तेज प्यास रहती है ; उदास भाव, गहरी नींद, प्रलाप, सरमें दर्द, विना कष्टका उदरामय, स्वप्न-दोष ; रक्त-स्राव प्रभृति लक्षणोंमें इसका प्रयोग होता है।

पेरानिया ६—जाड़ा या कँप-कँपी तेज और बहुत देरतक ठहरती है (२४ घंटोंतक) ; दिन-रात जाड़ा मालूम होता है ; ताप पसीनेवाली अवस्था बिलकुल ही नहीं होती (अर्थात् शरीरमें ताप या पसीना नहीं होता), प्यास नहीं लगती ; पानीमें भींगने या गीली जगहमें रहनेके कारण बुखार, प्लीहा बढ़ी हुई रहनेपर इससे खूब फायदा होता है।

हाइड्रैस्टिस θ—रोगीके शरीरमें मैलेरियाका जहर रहनेके कारण धातु-विकार, यकृत और पाकाशयकी गड़बड़ीके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

सिपिया १२, ३०—पुराना बुखार, मासिक-ज्वर, गर्भिणीका बुखार ; प्यास न रहनेवाला बुखार ; हिलने-डुलनेसे ही जाड़ा मालूम हो ; अंग-प्रत्यंग मानो बरफमें पड़े हैं, इतना जाड़ा मालूम होता है।

एण्टिम-टार्ट ३ विचूर्ण या ६—('विषम-ज्वरमें') शीतावस्थामें प्यासकी कमी ; जांघमें दर्द ; सारे शरीरमें शीत और कम्प और ठण्डा लसदार पसीना, सारे शरीरमें बहुत अधिक दाह ; बुखारके समय औंघाई आने लगती है।

कार्बो-वेज ६, ३०—('विषम-ज्वर') नाड़ी क्षीण और तेज ; सन्ध्याके समय शीत ज्यादा मालूम होता है ; कभी-कभी शरीरके केवल एक बगलमें ही जाड़ा मालूम होता है, जाड़ा शुरू होनेके पहले हाथ-पैर ठण्डे हो जाते हैं और प्यास लगती है ; धूप लगनेके कारण बुखार ;

शीतावस्थामें प्यास, इसके बाद ही तेज दाह, अन्तमें कमजोर करनेवाला खट्टी गन्ध मिला पसीना होता है; जाडा लगनेके पहले सरमें दर्द, अगोंमें दर्द, हाथ-पैर और साँस ठण्डी; चेहरा लाल; रोगी बराबर हवा करनेको कहता है; मर्करी या क्विनाइनके कारण उत्पन्न ज्वरमें लाभप्रद है।

ओपियम ६, ३०—('नये बुखारमें') नाडी भरी, चाल धीमी, गहरी नीदमें मुँह फाडे रहता है, इसके साथ ही नाकमें घरघर आवाज होती है। शीत, उत्ताप और पसीना—इन तीनों अवस्थाओंमें ही नींद आती है। पसीना होनेके बाद तेज दाह होती है ("विषम ज्वरमें") बहुत शीत और कँपकँपी लगकर बुखार आता है; प्रबल शीतावस्थामें नींद आती है और अग फडकते हैं; प्यास नहीं रहती; उष्णावस्थामें प्यास और बहुत पसीना होता है; अधखुली आँखें रहती है; बच्चों और बूढोंके बुखारमें ज्यादा फायदा करता है।

कैक्टस १—("विषम-ज्वर") ठीक एक ही समय (विशेषकर दो पहरके समय) जाडा लगकर बुखार आता है, इसके बाद जलन-जैसी और साँस तेज हो जाती है, अन्तमें शीतावस्थामें बुन्द-बून्द पसीना होता है। तेज प्यास, पीठमे जाड़ा और हाथकी तलहत्थी बरफकी तरह ठण्डी रहती है।

चायना ३x, ६, २००—("चायनाके लक्षणोंवाला बुखार कभी रातमें नहीं आता") नाड़ी क्षुद्र, द्रुत और अनियमित; भोजनके बाद नाडीका वेग कम और तन्द्रा; प्लीहा और यकृतका बढ़ना और दर्द; पानीकी तरह या गोंदकी तरह लसदार या पित्त-मिले दस्त; शीत और उष्णावस्थाके एकदम पहले या बाद प्यास; ज्वर आरम्भ होते ही हृत्पिण्डका धड़कना या हिलना; सरमें तेज दर्द, कपालकी शिराएँ फूली; शीतावस्थामें सर-दर्द; समूचे शरीरमें जाड़ा मालूम होना; मिचली और प्यास नहीं रहती; उष्णावस्थामें मुँह और ओंठ सूख जाते

हैं और जलन होती है। शीतावस्थाके पहले भूख, प्यास; शीतावस्था और उष्णावस्थामें प्यास नहीं रहती; उष्णावस्थाके बाद प्यास लगती है और बहुत पसीना होता है (शीतावस्थामें प्यास और पसीना रहे या न रहे)। "क्विनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुए विषम-ज्वरमें चायना फायदा नहीं करता (शायद चायना २०० लाभ करें।"

जेलसिमियम १x, ६—नाड़ी क्षीण, कोमल, तेज; पीठमें जाड़ा लगकर बुखार आता है। पीठ या समूचे शरीरमें दर्द, रोज तीसरे पहरके वक्त बुखार आता है, हाथ-पैर बरफकी तरह ठण्डे रहते हैं, सर उत्तप्त और चेहरा लाल रहता है। उत्तापावस्थामें रोगी स्थिर-भावसे पड़ा रहता है, प्यास अकसर नहीं रहती; जाड़ेवाली अवस्थाके अन्तिम भागमें नींद आती है।

बैप्टीशिया θ, ६—सड़ा पाखाना या दुर्गन्ध-भरे चौभच्चे वगैरहकी गैस (gas) साँसकी राहसे शरीरमें जाकर या सड़े तालाबका पानी पीनेकी वजहसे पैदा हुआ बुखार; दो-एक दिनोंके बुखारमें ही रोगी बहुत कमजोर हो जाता है और शय्याशायी हो पड़ता है; सरमें तेज दर्द; अंट-संट बातें बकना; रोगी समझता है कि उसका शरीर दो-तीन टुकड़े हो गया है; किसी तरहसे भी टुकड़े हुए अंगको मिला न सकनेके कारण उसे बहुत तकलीफ होती है; तेज ताप १०४°—१०७° डिगरी; पेशाब बहुत थोड़े होता है; दस्त काले या स्लेटके रंगके होते हैं।

नक्स वोमिका ३x, ६, ३०—"सवेरेके वक्त आनेवाले बुखारमें; तीसरे पहर, सन्ध्याके समय या रातमें बुखार आते ही; हाथ-पैर ढीले पड़ जाते हैं; बुखार आनेके पहले बहुत जम्हाई आती है या शरीर टूटता है; भीतर जाड़ा और बाहरी ताप, या भीतर ताप, बाहर सर्दी मालूम होती है। तेज ताप, मानो समूचा शरीर गर्मीसे जला जाता है (विशेषकर चेहरा बहुत गर्म और लाल हो जाता) और इतनी गर्मी

मालूम होनेपर भी जाड़ा लगनेके कारण रोगी कपड़े न उतारना चाहता है। अत्यन्त तापवाली अवस्थामें शरीरका कपड़ा उतारनेसे ही जाड़ा लगने लगता है, मिचली, सरमें चक्कर, कब्जियत, हाथ-पैरोंके नख नीले, बाहरी गर्मीसे भी जाड़ा कम नहीं होता; शीतावस्थामें कँपकँपी होकर जाड़ा लगता है, पानी पानेसे जाड़ा बढ़ जाता है। शीतके पहले और पीछे उत्ताप, सबेरे या आधी रातके वक्त खट्टी गन्ध लिये पसीना। "जो ज्वर नित्य आगे समय बढ़ाकर आता हो", उसे बन्द करनेकी नक्स-वामिका अच्छी दवा है। (ठीक सूर्यास्तके समय सेवन करनेपर और भी उत्तम और तुरन्त लाभ होता है।)

सल्फर ३०—जाड़ा लगनेके पहले प्यास, जाड़ा लगनेपर फिर प्यास नहीं रहती, तेज ताप (१०३°—१०५°), ऐसा मालूम होता है कि "सब शरीर मानो जला देता है" और दिन रात बराबर यह ताप मौजूद रहता है। रातके समय बहुत पसीना होता है, बुखार छूटनेपर एकदम सुस्त होकर पड़ जाता है, जीभ सफेद या पीली आभा लिये रहती है—इन सब लक्षणोंमें नये या पुराने (विशेषकर क्विनाइनके अपव्यवहारसे उत्पन्न) ज्वरमें यह बहुत लाभदायक है, किसी तरहका चर्मरोग बैठ जानेपर जो बुखार आता है, उसमें भी सल्फर फायदा करता है। इस स्थानपर यदि सल्फरसे लाभ न हो, तो सोरिनम ३०—२०० देना चाहिये। डाक्टर एच० सी० ऐलेनके मतसे मैलेरिया बुखारमें क्विनाइनकी अपेक्षा यदि सल्फर दिया जाय, तो रोगीकी बहुत कुछ भलाई हो सकती है। इसी सलाहके अनुसार कामकर हमने भी बहुत जगह फायदा उठाया है। (Allen's *Fevers* pp 364 देखिये)।

युकेलिप्टस ग्लोब—किसी-किसी मैलेरिया जनित सविराम ज्वरमें रोगीके शरीरमें कोई लक्षण साफ नहीं दिखाई देता, ऐसे स्थानपर डाक्टर डिवुड, यारिक और एन्ड्रूज—यह दवा देनेकी सलाह देते हैं।

निचे लिखे उपसर्गोंमें भी यह फायदा करता है :—शरीरकी गर्मी वहुत बढ़ जाती है, कलेजा धड़कता है, पीव और श्लेष्मा मिला बलगम निकलता है, पाकाशयकी गड़बड़ी, मूत्र-ग्रन्थिका प्रदाह, पाकाशयमें बदबूदार वायु पैदा होता है, सुस्ती रहती है और खून खराब हो जाता है।

मिनियेन्थिस ३, ३०—बहुत जाड़ा ; प्यास नहीं रहती ; तलपेट, हाथ, पैर और नाकका अगला भाग वरफ-जैसा ठण्डा रहता है ; पेशियोंका सिकुड़ना (twitchings) ; चौथिया बुखारमें (जो बुखार दो दिनका नागा देकर आता है) फायदा पहुँचता है।

लैकेसिस ३०, २००—"नींद खुलनेके बाद ही" सब उपसर्गोंका वढ़ना ; शराबियों और रजोनिवृत्तिके समय औरतोंको होनेवाले शीत-ज्वर ; बगलके पसीनेमें लहसुनकी गन्ध आती है ; बुखारके समय शरीरका रंग नीला हो जाता है ; क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण उत्पन्न बुखार।

कैल्केरिया-कार्ब ६, ३०—पुराना मैलेरिया बुखार ; ज्वर उतर जानेपर भी कुछ-न-कुछ रह जाता है ; धीमा बुखार ; ग्यारह या दो बजेके समय बुखार आता है। शीतावस्थामें प्यास ; "गर्मी या पसीनेवाली अवस्थामें प्यास" प्रायः नहीं रहती। अजीर्णके दस्त ; कभी कब्ज, कभी पतले दस्त। (जिन रोगियोंका पेट बड़ा रहता है या जिन्हें सहजमें ही सर्दी लग जाती है, उनके लिये यह ज्यादा लाभदायक है।)

कैल्के-आर्स ६ चूर्ण—विषम ज्वर, प्लीहा और यकृतका बढ़ना (खासकर बच्चोंकी) ; साँसमें कष्ट , कलेजेमें धड़कन।

ऐलस्टोनिया θ, ३x—पुराने मैलेरिया बुखारके साथ रक्तामाशय और शरीरमें "रक्तकी कमी"।

कैमोमिला ६, १२—बच्चों या वालकोंका बुखार ; दाँत निकलनेके समय ज्वर और पतले दस्त ; बच्चोंका स्वभाव चिड़चिड़ा ; "गोदमें

चढ़कर घूमना चाहता है" ; बच्चा बेचैन, एक गाल लाल, दूसरा मलीन रहता है ; जीभ पीली ; बार-बार बहुत ज्यादा पेशाब होता है ; जाड़ा थोड़ा लगकर बुखार आता है , उत्ताप और पसीनेवाली अवस्थामें प्यास रहती है , शरीरमें एक जगह जाड़ा लगता है और दूसरी जगह गर्मी मालूम होती है ।

नेट्रम-म्यूर ३०—"दस-ग्यारह बजे दिनके समय" बहुत जाड़ा और प्यासके साथ बुखार आता है और उष्णावस्थामें तथा उसके बाद, बहुत तेज सर-दर्द होता है ; शरीर एकदम शीर्ण ; ओठोंपर ज्वरके दाने ; प्लीहा और यकृत बढ़े और दर्द ; ज्वर छूटनेपर सुस्ती और बहुत पसीना ; पसीनेवाली अवस्थामें सब उपसर्ग कम हो जाते हैं (सिर्फ सर-दर्द नहीं घटता) ; "क्विनाइन या आर्सेनिकके अपव्यवहारसे उत्पन्न ज्वरमें" यह लाभदायक है ।

पल्सेटिला ६, १२, ३०—पाकाशयकी क्रियाकी गड़बड़ीके कारण उत्पन्न ज्वर या पैत्तिक ज्वर . तीसरे पहर १ से ४ बजेके भीतर ज्वर आता है । सूर्यास्तके समय बिना प्यासका ज्वर रहता है ; जाड़ा बहुत देरतक रहता है और कँपकँपी होती है ; तापावस्था बहुत थोड़ी देरतक ठहरती है ; प्यास अकसर नहीं रहती ; बिना पसीनेका असह्य उत्ताप (विशेषकर सवेरे और सन्ध्याके समय) ; हाथ और पैरोंमें जलन मालूम होना, कभी-कभी जाड़ेके कुछ ही देर बाद तापावस्था आ जाती है (या ये दोनों ही अवस्थाएँ एक साथ पैदा होती हैं) । "शरीरके एक पार्श्वमें" (खासकर केवल चेहरेमें) पसीना, भोजनके बाद तन्द्रा, "क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण आया हुआ बुखार ।"

लाइकोपोडियम और पल्सेटिला—दोनों ही दवाओंमें—एक ही समय (तीसरे पहर ४ बजे) ज्वर आता है ; दोनों ही दवाओंमें ज्वरके साथ पाचन-सम्बन्धी लक्षण वर्तमान रहते हैं ।

लाइकोके ज्वरके साथ पेट फूला रहता है, खट्टी डकारें आती हैं, प्यास रहती है, गर्म पानी पीना पसन्द करता है; पसीना होनेके बाद ही प्यास बढ़ जाती है और पेशाबके साथ लाल तलछट निकलता है।

पल्सेटिलामें कितनी ही वार तेल या घीकी वनी चीजें खानेके वाद ही ज्वरका आक्रमण होता दिखाई देता है; पसीना या ताप साधारणतः शरीरके एक ही ओर होता है, दो आक्रमण एक ही तरहका नहीं होता। किनाइनके अपव्यवहारके कारण उत्पन्न ज्वरकी पल्सेटिला (इपिकाक, नेट्रम-म्यूर) लाभदायक और उत्कृष्ट दवा है।

तीसरे पहर ४ बजनेके समय जाड़ा लगकर ज्वर आता है; प्यास बिलकुल ही नहीं रहती। सभी समय और सारे शरीरमें शीत-शीत भाव, यहाँतक कि कमरेके भीतर भी शीत मालूम होता है। "पल्सेटिला" के ज्वरमें साधारणतः "प्यास नहीं रहती।" सभी रोगोंमें प्यासका न रहना, इसका निर्णायक लक्षण है; पर स्मरण रखना होगा कि उष्णावस्थामें बहुतसे रोगियोंमें पल्सेटिलाके अन्यान्य लक्षणोंके साथ पानीकी प्यास मौजूद रहती है।

फेरम-मेट ६, ३०—किनाइनके अपव्यवहारके कारण पैदा हुए बुखारमें, विशेषकर प्लीहा बढ़ जानेपर और उसके साथ ही शोथ या पतले दस्त होनेपर इसका प्रयोग होता है; नाड़ी भरी और पूर्ण; रह-रहकर जाड़ा और कँपकँपी; स्वाभाविक उष्णताकी कमी (९७·४° की अपेक्षा भी कम); रक्त-शून्य पीला रंग; खायी हुई चीजकी कै करना; बहुत देरतक पसीना होते रहना; पसीनेवाली अवस्थामें उपसर्गोंका बढ़ना।

फेरम-आर्स ६—बुखारके साथ प्लीहाका बढ़ना; किनाइनके अपव्यवहारके कारण खूनकी कमी, विषम-ज्वर; अजीर्णके दस्त; शोथके साथ पेशाबका दोष रहनेपर फेरम आर्सेनिकमसे विशेष फायदा होता है।

सियेनॉथस θ, १x—बढ़ी हुई प्लीहा (मैलेरिया बुखार छूट जानेके बाद प्लीहा बढ़ी रहनेपर यह फायदा करता है ; परन्तु अगर बुखारके साथ प्लीहा रहे, तो अधिक लाभ नहीं होता) ; यकृत और प्लीहाकी जगहपर दर्द ।

मैलेरिया ऑफिसिनेलिस ३x, १०००—पुराने मैलेरिया ज्वरमें ; किनाइन वगैरह ऐलोपैथिक दवाएँ ज्यादा खानेके कारण बुखार अटक जानेपर ।

आर्टिका युरेन्स—मैलेरियाके कारण उत्पन्न फोड़ा, गठिया (gout) ; प्लीहा या यकृत-दोष , अनिद्रा । मूल अरिष्ट दस बून्दकी मात्रामें एक औंस गर्म पानीमें डालकर नित्य दो बार सेवन करना चाहिये । (इस तरह आर्टिका युरेन्स सेवन करनेपर अगर ज्वरका आक्रमण तेज हो अथवा बहुत देरतक शरीर गर्म रहे, तो घबड़ानेकी कोई बात नहीं है । ज्वर आप-ही-आप छूट जायगा । बहुत जरूरत हो, तो "नेट्रम-म्यूर" ६x विचूर्ण दो-चार मात्रा देनेसे ही फायदा हो जायगा) ।

कास्टिकम ६—यदि आराम होनेके समय पेशाब ज्यादा होता हो ।

म्यूरियेटिक एसिड ६—रोगी बहुत सुस्त हो जाये और उसी अवस्थामें बदबूदार पाखाना होता हो ।

एपिस-मेल ३, ६, ३०—नाड़ी पूर्ण और तेज ; पीठ, कोख और यकृतकी जगहपर दर्द ; तीता स्वाद , पीला जीभ ; सर भारी और दर्द , कभी "जाड़ा", कभी "गर्मी" मालूम होना ; पित्तका वमन या मिचली ; कष्टकर खाँसी ; सन्ध्याके पहले दाहिने अंगमें जाड़ा ; खुली जगहकी बनिस्वत कमरेके भीतर ज्यादा सर्दी मालूम होना ; थोड़ी प्यास या प्यासका बिलकुल ही न रहना , सर गर्म , कभी-कभी पसीना बहुत ज्यादा ; पसीनेवाली अवस्थामें नींद ; सूखा और रुखड़ा शरीर ; शोथ ; प्रलाप ; एकाएक जोरसे चिल्ला उठना (खासकर बच्चोंका) ; स्पर्शका

ज्ञान और हिलने-डुलनेकी शक्तिका लोप हो जाना ; थोड़ा पेशाब ; जीभ फूली (बहुत दिनोंतक बुखार भोगनेके बाद रोगीको अकसर पसीना नहीं होता)।

नेट्रम-सल्फ ३० २००—तर सीड़-भरी जगह या कोठरीमें रहनेकी वजहसे मैलेरिया ज्वर। अन्धड़-पानी होनेपर या नहानेके बाद ज्वरका दुहरा जाना। प्रमेह-विष-दूषित व्यक्तियोंका मैलेरिया ज्वर ; तीसरे पहर ४ बजेसे ८ बजेके भीतर जाड़ा लगकर ज्वर आरम्भ होता है। शीत और पसीनेवाली अवस्थामें प्यास नहीं रहती।

थूजा ३०, २००—प्रमेह-विष-दूषित धातुवाले व्यक्तियोंके लिये तथा जो थोड़ी भी गीली हवा लगनेके बाद ही बीमारी हो जाते हैं, ऐसे मनुष्यके लिये यह विशेष उपयोगी है। साधारणतः थूजाका ज्वर सवेरे ३-४ बजनेके समय जाड़ा देकर आता है। खूब शीत रहता है, गर्म हवा, यहाँतक कि धूपमें भी जाड़ा नहीं घटता ; खूब जम्हाई आती है। सब शरीरको कँपा देनेवाला जाड़ा रहता है ; जाड़ा विशेषकर उरु-देशसे आरम्भ होता है ; शरीरसे कपड़ा उतारते ही जाड़ा मालूम होने लगता है, यहाँतक कि गर्म हवामें भी जाड़ा लगता है ; ठण्डी हवा सहन नहीं होती ; खुली हवामें जाड़ा लगता है (नक्स) ; बिछावनसे उठते ही जाड़ा (कैन्थ) ; सन्ध्याके ६ बजेसे ७ बजेतक शीत ; शरीर खूब गरम, मुँह सूखा और प्यास खूब ज्यादा रहती है। उत्तापावस्थामें प्यास, भीतर शीत, बाहर उत्ताप, तेज प्यास। सोते ही पसीना होने लगता है और जागते ही बन्द हो जाता है ; शीतके बाद प्यास, इसके बाद ही बहुत ज्यादा पसीना होता है ; परन्तु सरमें पसीना नहीं होता।

विरेट्रम-विरिडि १, ३x—नाड़ी भरी और कठिन, तेज और उछलती हुई ; शरीर बहुत गर्म ; जोर-जोरसे कलेजा धड़कना और मिचलीके साथ जाड़ा ; प्रबल ऐंठन ; माथेमें रक्त इकट्ठा होता है।

विरेट्रम पेल्बम ३x, ३०—"सवेरे ६ बजनेके समय प्यासके साथ जाड़ा लगकर बुखार आता है; बहुत देरतक जाडा लगता रहता है;" शीतावस्थामें प्यासके साथ समूचा शरीर ठंडा और अवसन्न, नाड़ी क्षीण। उष्णावस्थामें, "कपालमें ठण्डा पसीना", पसीनेवाली अवस्थामें चेहरा मुर्दे-जैसा बदरंग हो जाता है। तेज मैलेरिया बुखारमें विरेट्रम-ऐल्बम बहुत फायदेमन्द है। जहाँ जीवनी-शक्ति बहुत जल्दी जल्दी घटती जाती है और जहाँ बहुत कमजोरी और हिमांग अवस्था खूब स्पष्ट हो, वहाँ विरेट्रम-ऐल्बम फायदा करता है।

ज्वर तीसरे पहर ६-७ बजे आता है, रातभर बना रहता है; "पुराने ज्वरमें पेशाब लाल होता है और बालूके कणका तलछट पड़ता है।

लाइकोपोडियम १२, ३०—"सन्ध्या ४ बजे बुखार आकर ८ बजेतक बढ़ता जाये", बहुत कँपकँपी और जाडा; सब अंगोंमें ठण्डक मालूम होना, कब्ज; पेट फूला हुआ; यकृत प्रदेशमें दर्द; दाह।

सिड्रन १x, २x या २—मस्तिष्कमें रक्त-सचय; बहुत थोडा पसीना या बिलकुल ही पसीना न होना; जाडा और कँपकँपी मिला बुखार; रोज ठीक "एक ही समय" बुखार शुरु हो जाता है; नीचेके स्थान या "जलाशयसे-भरे" स्थानका ज्वर।

द्वीकालीन ज्वरमें (दो बार दिनमें आनेवाले ज्वरमें (इलाटेरियम ३, चायना ६, बेलेडोना ६, ग्रैफाइटिस ६, स्ट्रैमो ३, सल्फर ३०, ऐण्टिम-क्रूड ६।

अग्रगामी ज्वरमें (समय आगे बढ़ाकर आनेवालेमें)—ऐण्टिम-टार्ट ६, आर्स ६, किनिन-सल्फ ३x विचूर्ण, चायना ६, इग्ने ६, नेट्रम ३०, नक्स-वोम ६।

सवेरे आनेवाले बुखारमें—नक्स-वोम ६, ब्रायोनिया ६, हिपर ६, फेरम ६, लाइको ३०, पोल्स १x, नेट्रम २०, पोडो ६, सिपिया १२, सल्फर ३० या थूजा ६।

पित्तजनित ज्वरमें—ब्रायो, चेलिडो, इपि, पोडो, नेट्रम-सल्फ, निकटेन्थिस ।

परिवर्त्तनशील ज्वरमें (अर्थात् बुखार आनेका समय ठीक न रहनेपर)—पल्स, इलाटे, सोरिनम, इग्ने ।

ज्वरावेश (paroxysm) **का समय अनियमित** (अर्थात् बुखारका बढ़ना या अधिक होना, अनियमित रहनेपर)—आर्स, इपि, नक्स-वोम, सोरिनम, पल्स, सिपि, सैम्बु, ओपि ।

दैनिक ज्वरमें—ऐरेनिया, आर्स, कैक्टस, कैप्सि, सिड्रन, साइना, जेल्स, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम, पोडो, पल्स, रस, सल्फ ।

दैनिक ज्वर दो बार आये—चायना, इलाटे, ग्रैफा, स्ट्रैमो, सल्फ, एपिस, ऐण्टिम-क्रूड ।

रोज एक ही समय बुखार आनेपर—ऐरेनिया, सिड्र, जेल्स, सैवा, स्पाइ, ऐङ्गस्टियुरा ।

रोज समय बदलकर आनेवाले बुखारमें—नेट्र-म्यू, युपेट-पर्फ ।

पारीके बुखारमें (एक दिन नागा देकर जो ज्वर आता है)—ऐटिस्टा, ऐरेनिया, सीड्रन, किनन-सल्फ, चायना, नेट्रम-म्यूर, ऐण्टिम-क्रूड, एपिस. आर्स, वेल, ब्रायो, कैन्थ, कैल्के कार्व, कैप्सि, कार्बो-वेज, इपि, नक्स-वोम, मेजे, पोडो, पल्स, रस-टक्स, सल्फ, जेल्स (पारीके बुखारमें जाड़ा न लगता हो), लाइको (पारीका बुखार दिनमें १ से ५ बजेके बीचमें आता हो) ।

पारीका बुखार दिनमें "दो बार" आता हो—आर्स, चायना, एस्क्यु, इलाटे, युपे-पर्फ, लाइको, नक्स-वोम, नक्स-मस, गैम्बो, रस-टक्स ।

दो दिनका नागा देकर आनेवाले बुखारमें—आर्नि, आर्स, कार्बो-वेज, चायना, साइना, इलाटे, हायोसा, आयोड, इग्ने, इपि,

मिनियेन, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम, नक्स-मस, पल्स, सैबा, विरेट्रम-ऐल्बम।

दो दिनका नागा देकर "दोकालीन" ज्वरमें—आर्स, चायना, डल्का, युपेट-पर्फ, लाइको, नक्स-म, पल्स, रस।

साप्ताहिक ज्वरमें—चायना, लाइको, ऐमोन-म्यूर, मिनि, रस-टक्स, सल्फ, टियुवर।

पाक्षिक ज्वरमें—आर्स, ऐमोन-म्यूर, कैल्के-कार्ब, किनि-सल्फ, चायना, लैके, पल्स, सोरि।

प्रति तीन सप्ताहका नागा देकर आनेवाले बुखारमें—सल्फ, किनन-सल्फ, मैग्ने, सोरि।

छः महीनेका नागा देकर आनेवाले बुखारमें—लैकेसिस, सिपिया।

वात्सरिक ज्वरमें—आर्स, कार्बो-वेज, लैके, नेट्रम-म्यूर, सोरि, सल्फ, थूजा, टियुवरक्युलिनम।

हेमन्त-ऋतुके ज्वरमें—ऐकोन, ब्रायो, बेल।

शीत-ऋतुके ज्वरमें—ऐण्टिम-टार्ट, नेट्रम म्यूर, सोरिनम।

ग्रीष्म ऋतुके ज्वरमें—कैप्सि, सोरि, वेप्टी, नेट्रम-म्यूर।

बरसाती बुखारमें—डल्का, रस, फास।

शरत्-ऋतुके ज्वरमें—एस्क्युलस, ब्रायो, चायना, आर्स, कोलचि, युपेट-पर्फ, नक्स-वोम, नेट्रम-म्यूर, विरे-ऐल्ब, टियुवर।

वसन्त ऋतुके ज्वरमें—आर्स, एण्टिम-टार्ट, लैके, सल्फ, जेल्स, सोरि, सिपि, कार्बो-वेज।

बुखारमें खट्टी चीजें खा लेनेके कारण ओठोंमें छाले पड़नेपर—नेट्रम-म्यूर, कार्बो-वेज, अरम-ट्राई, मर्क, सल्फ, रस-टक्स।

सविराम ज्वर, यदि एक ज्वरमें परिणत हो जाये—गैम्बो ६, जेल्स १x, पोडो ६, युपेट-पर्फ १x—३।

बुखार अच्छा हो जानेके बाद—प्लीहा बढ़ी रहे, तो सियेनोथस θ या मर्क-बिन ३x—६x विचूर्ण ; यकृत या लिवरका दोष रहे, तो फास्फोरस ६, ३० ; स्नायु शूल या कामला रहनेपर चेलिडोनियम ६ का प्रयोग करना चाहिये ।

वहुत दिनोंतक मैलेरिया भोगनेके कारण यदि रोगीकी धातु खराब हो जाये, तो आर्स ३०, २०० ; या नेट्रम-म्यूर ३०, २०० ; मैलेरिया भोगता-भोगता रोगी रक्तहीन और एकदम कमजोर हो जाये (शोथ होनेके पहले), फेरम ६ या फेरम आर्स ६ ; मैलेरिया भोगते-भोगते यदि रोगिणीको हरित्पाण्डु रोग हो जाये, तो पल्सेटिला ६, २०० देना चाहिये ।

मैलेरियाके कारण खूनका पेशाब आदि उपसर्ग रहें—मैलेरिया बुखारमें कभी-कभी खूनका पेशाव होनेके साथ-ही-साथ जोरका जाड़ा, अनियमित उष्णावस्था, श्वासका कष्ट, कै, कामला वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं ।

परन्तु बहुत ज्यादा किनाइन खानेके कारण यदि खूनका पेशाब वगैरह आने लगा हो, तो टेरिविन्थ, कैन्थरिस, न्यूफर लूटियम प्रभृति "खूनका पेशाव" रोगकी दवा चुन लेनी चाहिये या (जरूरत होनेपर) "किनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुए रोगोंकी" दवाओंमेंसे दवा चुन लेनी चाहिये ।

शायद अफ्रिकामें यह रोग "Black Water fever" नामसे कभी-कभी खूब फैल जाता है । बहुतोंकी जान भी जाती है ।

सविराम ज्वरकी चिकित्सा

सिड्रन, चायना, क्विनाइन, आर्स, इपिका, सलफर, नेट्रम-म्यूर और कार्बो-वेज—ये आठ मैलेरिया बुखारकी चुनी हुई दवाएँ हैं । इनमें पहली पाँच नये (तरुण) रोगमें और अन्तकी तीनों पुराने

(पुरातन—chronic) रोगमें खासकर काममें लायी जाती है। "सिड्रन" θ—३ (स्नायु-शूलके साथ साधारण ढगके मैलेरिया बुखारकी खास महौषध है)। "चायना" १x (जाड़ा लगनेके पहले प्यास, शीत और उष्णावस्थामें प्यासका न रहना, पसीनेवाली अवस्थामें तेज प्यास और कमजोर बना देनेवाला पसीना ; यकृतवाली जगहपर दर्द ; सरमें टपकका दर्द ; उष्णावस्थामें शरीरके कपड़े उतार फेंकनेकी इच्छा ; परन्तु कपड़ा उतारनेके साथ ही जाड़ा मालूम होने लगना ; अकसर भूख और तन्द्राका भाव तैयार रहता है ; खाने-पिनेसे रोग बढ़ता है)। "आर्सेनिक" ३x ३० (शीत ताप और पसीना—इन तीनों ही अवस्थाओंमें बार-बार, पर थोड़ा-थोड़ा पानी पीनेकी दुर्दमनीय इच्छा ; पसीनेवाली अवस्था आरम्भ होते ही रोगीके सब उपसर्ग कम हो जाते हैं ; शीतावस्थामें एकदम "जाड़ा" नहीं मालूम होता, होता भी है, तो बहुत थोड़ा ; अधकपारीका दर्द ; ठहर-ठहरकर स्नायु शूल ; (किनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्ग)। "इपिकाक" २x, ३० (शीत आरम्भ होनेके पहले और शीत तथा तापवाली अवस्थामें के मिचली या पाकाशयकी गड़बड़ीका दूसरा लक्षण प्रकट हो, हाथ-पैर ठण्डे, छातीमें भार, जीभ पीले रंगकी या तर लेप-चढ़ी या बहुत मैल-चढ़ी या मैलेरिया ज्वरके उपसर्ग साफ-साफ न प्रकट हो—पृष्ठ २६६। "सल्फर" ३० (नये, पुराने दोनों प्रकारके बुखारोंमें ही फायदा करता है)। "नेट्रम-म्यूर" ३०, २००) 'पुराना मैलेरिया बुखार'—सवेरे ८ से ११ बजेके भीतर बुखार आता है, शीतावस्था और जाड़ा शुरू होनेके पहले पित्तका वमन, शीतावस्थामें तेज प्यास ; पसीना होनेपर सब उपसर्ग कम हो जाते हैं ; बुखारवाली हालतमें, खट्टा खानेके कारण ओठोंमें पैदा हुआ घाव, किनाइनके अपव्यवहारसे उत्पन्न उपसर्ग। 'कार्बो वेज" ६, ३० ('पुराने' मैलेरिया बुखार, शीतवाली अवस्थामें रोगीका शरीर बरफ-जैसा ठण्डा रहे, तो इसका प्रयोग करना चाहिये)।

मैलेरियाजनित धातु-विकृति
(Malarial Cachexia)

आर्सेनिक ६, २०० (रोगीका शरीर कुछ पीला, जीभ लाल, क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण उत्पन्न रोग और यक्ष्मा-रोग हो जानेकी सम्भावना)। कैल्केरिया-आर्स विचूर्ण (पेशावके दोष, कलेजा धड़कना बच्चोंकी प्लीहा और यकृतका बढ़ना)। किनिन-आर्स २—३ चूर्ण (ज्वरके साथ बराबर कमजोरी मालूम होना और सुस्ती, स्नायु-शूल, शरीर बरफकी तरह ठण्डा और हफनी); नेट्रम-म्यूर ३० (मटमैला रंग, शरीरमें हमेशा कुछ-न-कुछ सर्दी मालूम होती रहना ; बढ़ी हुई प्लीहा, कब्जियत, दिनके समय सरमें दर्द, क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण उत्पन्न उपसर्ग); सल्फर ३० (रोग धीरे-धीरे घटता जाता हो)। विशेष हाल जाननेके लिये "मैलेरियाजनित धातु-विकृति" आगे लिखा अध्याय देखिये।

पुराने बुखारमें—आर्सेनिक, कार्बो-वेज, नक्स-वोमिका पल्सेटिला, विरेट्रम ऐल्ब, इग्नेशिया, इपिका, नेट्रम-म्यूर, आर्निका, कैप्सिकम, एसिड-फास, सल्फर, ऐरेनिया, सिड्रन और युपेटोरियम प्रभृति दवाएँ दी जाती हैं। ये सभी दवाएँ ६—३० शक्तिकी देनी चाहियें। नये सविराम मैलेरिया ज्वरमें क्विनाइनसे लाभ होता है। यह बात हम पहले ही कह चुके हैं ; परन्तु पुराने मैलेरिया ज्वरमें क्विनाइन शायद ही कभी लाभ करता है ; बल्कि अधिकतर इससे हानि ही पहुँचती है।

क्विनाइनसे रुके हुए बुखारमें—"जयुज-व्याधि" वाले अध्यायमें 'क्विनाइन' देखिये।

पथ्य—(नये ज्वरमें) जब बुखार तेज चढ़ा हो उस समय रोगीको गर्म पानीके सिवा और कोई पथ्य न देना चाहिये। ज्वर न रहे (विराम-काल), तब सागू, आरारूट, बार्ली, धानके लावेके माँड़,

जगहें अच्छी हैं। यकृतमें गड़बड़ी न हो, तो मधुपुर, देवघर, गिरिडिह, राँची, दार्जिलिंग, शिलांग प्रभृति जगहें आबहवा बदलनेके लिये अच्छी हैं।

मैलेरियासे उत्पन्न स्वल्प-विराम ज्वर

(Simple or Malarious Remittent Fever)

जो बुखार एकदम छोड़ नहीं जाता (अर्थात् बदनकी गर्मी ६७°६ नहीं होती), सिर्फ कुछ देरके लिये बदनका ताप कुछ कम (६६° या उससे अधिक) रहता है और बुखार रहते-रहते ही फिर शरीरका ताप बढ़ने लगता है, उसीका नाम "स्वल्प-विराम-ज्वर" है। कुछ हल्का-सा जाड़ा लगकर बुखार शुरू होता है ; सामने कपालमें दर्द, यकृतका दोष (कभी-कभी कामला), ताप १०१°—१०६° ; कब्जियत, अतिसार वगैरह इसर रोगके लक्षण हैं। इसका भोगकाल बराबरसे दो सप्ताह है। पित्तकी अधिकता रह जानेपर, चार हफ्तेतक रोग ठहर सकता है। बहुत पसीना होकर कभी-कभी ज्वर छूट जाता है और कभी सविराम ज्वर और कभी सान्निपातिक-विकार भी हो जाता है। एक तरहका मैलेरियाका कीटाणु ही इस रोगका मुख्य कारण है।

व्यवहार। परन्तु १६१६ ई० में सर रोनेल्ड रास प्रमुख सम्प्रदायके चिकित्सकोंने कहा है कि क्विनिन मैलेरिया रोगका प्रतिषेधक नहीं है। यह केवल मैलेरिया रोगके आरोग्यमें सहायता करता है (British Medical Association) १६१६ ई० के एप्रिल मासका विवरण देखिये।

कुछ दिन पहले (१६१२ ई० में) "मद्रास मैलेरिया कान्फरेन्स" के बहुतसे सभ्योंने स्वीकार किया था, कि लोगोंकी दरिद्रताके कारण मैलेरिया रोग बढ़ता जा रहा है।

चिकित्सा—बुखारको पहली अवस्थामें (जब यह समझमें नहीं आता कि यह सविराम या स्वल्प-विराम ज्वर है) तेज प्यास, बदनमें दाह, बेचैनी, मृत्युका भय वगैरह लक्षणोंमें "एकोनाइट" ३x । सर खूब गरम या रक्तकी अधिकता, पैर ठण्ड, सरमें दर्द, कराहना, तेज बुखार, चेहरा तमतमाया, प्रलाप, जीभका रग लाल, पेट फूलना वगैरह लक्षणोंमें "बेलेडोना" ३ । सर्दी के या मिचलीकी तेजी हो, तो "इपिकाक" ३x । रोगी बहुत कमजोर और सुस्त हो जाये, तो "आर्सेनिक" ,x । बच्चोंके स्वल्प विराम ज्वरमें "जेलसिमियम" ३x । पित्त ज्यादा हो, तो "ब्रायोनिया" ३ या "काटेलस" ६x । बुखार एकदम छूट जाये तो *"चायना ३x या क्विनिनम सल्फ" ३ विचूर्ण । क्रिमिजनित उपसर्गमें* "सिना' ३x—२०० ।

ज्यादा लक्षणोंके लिये, दूसरे दूसरे ज्वरोंकी (विशेषकर 'सन्निपात-विकार या टाइफायड ज्वर" को) 'चिकित्सा' और 'आनुसगिक चिकित्सा' देखिये ।

छिपा या गुप्त मैलेरिया

(Masked Malarious Fever)

मैलेरिया भरे देशके रहनेवालोंमें, किसी किसीकी देहमें मेलेरियाका जहर रहनेपर भी सर्दी, गर्मी या पसीना, इन तीनोंमेंसे कोई भी लक्षण नहीं प्रकट होता । सदा ही ज्वरहीन अवस्थामें रहते हैं । इस अवस्थामें सिर्फ कभी-कभी स्नायुशूल या प्लीहाका वदना या रक्तकी कमी या रक्ता-माशय दिखाई देता है । इसका नाम "छिपा या गुप्त मैलेरिया' है ।

चिकित्साके लिये "सविराम मैलेरिया" ज्वरकी चिकित्सासे लक्षणके अनुसार दवा चुननी चाहिये ।

मैलेरियासे उत्पन्न धातु-विकृति

(Malarial Cachexia)

बहुत दिनोंतक मैलेरिया बुखार भोगनेपर कभी-कभी रोगीकी प्लीहा और यकृत बढ़ जाता है, रक्त कम हो जाता है, कामला या स्नायु-शूल उदरामय या पाकाशयकी गड़बड़ी प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—खूनकी कमीके लक्षणमें फेरम-मेट ३०। कुछ पीला या सफेद, लाल जीभ ; सुस्ती ; क्विनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्गोंमें आर्सेनिक ६, ३०। मटमैला रंग, जाड़ा, प्लीहा, बढ़ी, कब्जियत, सरमें दर्द पैदा होकर दिनभर रहता है, क्विनाइनके अपव्यव-हारसे उत्पन्न उपसर्गोंमें नेट्रम-म्यूर ३०। प्लीहा बढ़ने और दर्द होनेपर सियेनोथस २x। इनके अलावा नक्स-वोमिका, पल्सेटिला, मर्क-विन, विरेट्रम-ऐल्व, आर्निका, इग्नेशिया, इपिकाक, कैप्सिकम, सिड्रन, युपेट-पर्फ, ऐरेनिया, फास-एसिड, सल्फर वगैरह दवाओंकी समय-समयपर जरूरत पड़ सकती हैं। इनके क्रम और लक्षणोंके लिये "मैलेरिया-जनित सविराम ज्वरकी चिकित्सा" पृष्ठ २६६ देखना चाहिये। इस रोगमें क्विनाइन खानेसे नुकसान होता है ; कभी-कभी चायनाकी भी जरूरत पड़ सकती है।

सांघातिक मैलेरिया ज्वर

(Malignant of Peruicious Malarial Fever)

यह रोग बड़ा ही भयानक है। साधारणतः गर्म देशोंमें यह सविराम (intermittent) या स्वल्प-विराम (remittent) के रूपमें दिखाई देता है। इसका विशेष लक्षण है, शरीरके भीतरी यंत्रोंमें रक्त ज्यादा हो जाना। इसे लोग "जंगली बुखार" भी कहते हैं साधारणतः

चिकित्सा—बुखारकी पहली अवस्थामें (जब यह समझमें नहीं आता कि यह सविराम या स्वल्प-विराम ज्वर है) तेज प्यास, बदनमें दाह, बेचैनी, मृत्युका भय वगैरह लक्षणोंमें "एकोनाइट" ३x । सर खूब गरम या रक्तकी अधिकता, पैर ठण्डे, सरमें दर्द, कराहना, तेज बुखार, चेहरा तमतमाया, प्रलाप, जीभका रंग लाल, पेट फूलना वगैरह लक्षणोंमें "बेलेडोना" ३ । सर्दी, कै या मिचलीकी तेजी हो, तो "इपिकाक" ३x । रोगी बहुत कमजोर और सुस्त हो जाये, तो "आर्सेनिक" ६x । बच्चोंके स्वल्प-विराम ज्वरमें "जेलसिमियम" ३x । पित्त ज्यादा हो, तो "ब्रायोनिया" ३ या "क्रोटेलस" ६x । बुखार एकदम छूट जाये, तो "चायना ३x या किनिनम-सल्फ" ३ विचूर्ण । क्रिमिजनित उपसर्गमें "सिना" ३x—२०० ।

ज्यादा लक्षणोंके लिये, दूसरे-दूसरे ज्वरोंको (विशेषकर 'सन्निपात-विकार या टाइफायड ज्वर" को) 'चिकित्सा' और 'आनुषंगिक चिकित्सा' देखिये ।

छिपा या गुप्त मैलेरिया

(Masked Malarious Fever)

मैलेरिया भरे देशके रहनेवालोंमें, किसी-किसीकी देहमें मैलेरियाका जहर रहनेपर भी सर्दी, गर्मी या पसीना, इन तीनोंमेंसे कोई भी लक्षण नहीं प्रकट होता । सदा ही ज्वरहीन अवस्थामें रहते हैं । इस अवस्थामें सिर्फ कभी-कभी स्नायुशूल या प्लीहाका बढ़ना या रक्तकी कमी या रक्ता-भाराप दिखाई देता है । इसका नाम "छिपा या गुप्त मैलेरिया" है ।

चिकित्साके लिये "सविराम मैलेरिया" ज्वरकी चिकित्सासे लक्षणके अनुसार दवा चुननी चाहिये ।

मैलेरियासे उत्पन्न धातु-विकृति
(Malarial Cachexia)

बहुत दिनोंतक मैलेरिया बुखार भोगनेपर कभी-कभी रोगीकी प्लीहा और यकृत बढ़ जाता है, रक्त कम हो जाता है, कामला या स्नायु-शूल उदरामय या पाकाशयकी गड़बड़ी प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—खूनकी कमीके लक्षणमें फेरम-मेट ३०। कुछ पीला या सफेद, लाल जीभ ; सुस्ती ; क्विनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्गोंमें आर्सेनिक ६, ३०। मटमैला रंग, जाड़ा, प्लीहा, बढ़ी, कब्जियत, सरमें दर्द पैदा होकर दिनभर रहता है, क्विनाइनके अपव्यवहारसे उत्पन्न उपसर्गों में नेट्रम-म्यूर ३०। प्लीहा बढ़ने और दर्द होनेपर सियेनोथस २४। इनके अलावा नक्स-वोमिका, पल्सेटिला, मर्क-विन, विरेट्रम-ऐल्ब, आर्निका, इग्नेशिया, इपिकाक, कैप्सिकम, सिड्रन, युपेट-पर्फ, ऐरेनिया, फास-एसिड, सल्फर वगैरह दवाओंकी समय-समयपर जरूरत पड़ सकती हैं। इनके क्रम और लक्षणोंके लिये "मैलेरिया-जनित सविराम ज्वरकी चिकित्सा" पृष्ठ २६६ देखना चाहिये। इस रोगमें क्विनाइन खानेसे नुकसान होता है ; कभी-कभी चायनाकी भी जरूरत पड़ सकती है।

सांघातिक मैलेरिया ज्वर
(Malignant of Peruicious Malarial Fever)

यह रोग बड़ा ही भयानक है। साधारणतः गर्म देशोंमें यह सविराम (intermittent) या स्वल्प-विराम (remittent) के रूपमें दिखाई देता है। इसका विशेष लक्षण है, शरीरके भीतरी यंत्रोंमें रक्त ज्यादा हो जाना। इसे लोग "जंगली बुखार" भी कहते हैं साधारणतः

दो-तीन बार बुखार आनेके बाद (paroxysm) ज्वरकी कुपित अवस्थाके लक्षण सब दिखाई देने लगते हैं।

यह बुखार सात तरहका है :—संज्ञा शून्यकारक, प्रलाप-प्रधान, औदरामयिक, हिमाग प्रधान, घर्म-प्रधान (पसीना), कामला-प्रधान और रक्त-स्राविक। इस रोगमें किसी-किसीके नख नीले हो जाते हैं; प्रबल ज्वरमें नख लाल रगका रहता है और अगर परीक्षा करनेपर हृत्पिण्ड कमजोर दिखाई दे, तो यह सन्देह हो सकता कि "सांघातिक मैलेरिया" हुआ है।

संज्ञा शून्यकारक (बेहोश करनेवाला Comatose variety)—सर-दर्द, सरमें चक्कर, उदासी, बोलीकी जडता, बदनका ताप १०५°—१०७°, नाक घरघराना और बेहोशी, इसके प्रधान लक्षण हैं। रोगी कई घण्टोंमें ही मर जा सकता है अथवा होश आनेके बाद रोगका आक्रमण फिर हो सकता है। ओपियम ६, जेल्स ३० रस-टक्स ६ इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

प्रलाप प्रधान (Delirious)—बुखारके तेज प्रकोपमें सरमें जोरोंका दर्द, कानमें भों-भों करना, बेचैनी, शरीरका ताप १०५°—१०८° और बहुत प्रचण्ड प्रलाप इसका प्रधान लक्षण है कभी-कभी हिमांग (शीत) होकर अर्थात् शीत आकर रोगी एकदम बेहोश हो जाता है और इसी बेहोशीके बाद मृत्यु हो जाती है। बेलेडोना ३, ३० और हायोसायमस ३, ३० इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

औदरामयिक (पतले दस्त आनेवाला—Diarrhœic or choleric)—बुखारकी तेज अवस्थामें एकाएक दस्त या हैजेके लक्षण आ पहुँचते हैं। जैसे—'दस्त' पानीकी तरह, हरी आभा लिए या खून-भरे, तेज 'वमन' (पीला रग), तेज प्यास, पेटमें दर्द, पैरकी पीटलीमें ऐंठन, श्वास-कष्ट, नाडी तेज चलती है या थर-थर काँपती है, ठण्डा पसीना वगैरह उपसर्ग पैदा होकर रोगीका जीवन सकटमें डाल देते हैं।

आर्सेनिक ३x—६, विरेट्रम ऐल्ब ६, पोडो ६, मर्क-कोर ६ इत्यादि इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

हिमांग (algid) अवस्था—बुखारकी प्रकोपवाली अवस्थामें रोगीको बहुत तेज प्यास होती है, गर्मी मालूम होती है, देहका ताप ६५°—६६° हो जाता है, नाड़ी क्षीण, साँस ठण्डी, स्वरभङ्ग, "शरीरका ऊपरी भाग बहुत ठण्डा" (परन्तु रोगीको ज्ञान रहता है), ठण्डा पसीना होना प्रभृति लक्षण पैदा होकर रोगीकी हालत खराब कर देते हैं रुबिनीका कपूर अर्क, विरेट्रम-ऐल्ब ६, मिनियेन्थिस ६, ३०, कार्बो-वेज ६, ३० इस अवस्थाकी प्रधान दवाएँ हैं।

घर्म-प्रधान (जिसमें पसीना ज्यादा हो—colliquative)—उष्णावस्थाके अन्तिम भागमें लगातार 'पसीना होना' सुस्ती, त्वचा ठंडी और बदरंग, हृत्पिण्डकी क्रिया कमजोर और बहुत पसीना होकर रोगीकी मृत्यु, इस घर्म (पसीना) प्रधान ज्वरका खास लक्षण है। चायना ६, जैबोरेण्डि २—३, फास्फोरस ६, कार्बो-वेज ३० और विरेट्रम-ऐल्ब ६ इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

कामला-प्रधान (जिसमें खून घट जाता है—icteric variety)—शीत और उष्णावस्थामें आँखें और शरीरका रंग ढीला होना, पित्तकी कै और दस्त होना, थोड़ा (परिमाणमें) पेशाब, कूथन और पसीनेवाली अवस्थामें बहुत पसीना निकलना, इसका विशेष लक्षण है। ब्रायोनिया ३, युपेट-पर्फ १x क्रोटेलस ३ इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

रक्त-स्राविक (जिसमें खून जाता है—hæmorrhagic)—मूत्र-ग्रन्थिका ऊपरी भाग या शरीरकी कोई दूसरी "श्लैष्मिक-झिल्ली" (mucous membrane, जैसे—नाक, मुँह, पाकाशय, जननेन्द्रिय या मलद्वार) से रक्त, निकलना, इसका विशेष लक्षण है। हैमामेलिस २x इपिकाक २x और कैक्टस २x इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—शीतावस्थामें हाथ और पैरोंको सेंकना और बहुत ही सुस्त हो जानेपर ब्रांडी या ह्विस्की सेवन करना और तेज प्यास रहनेपर बरफका टुकड़ा चूसनेको दिया जा सकता है।

काला ज्वर ; दमदम फीवर
(Kala Azar ; Dum-Dum Fever)

यह एक पुराना रोग है—"बढ़ी हुई प्लीहा, रक्तकी कमी" और "अनियमित ज्वर"—इस रोगके तीन खास लक्षण हैं। खूनकी कमीके साथ रोगीका शरीर 'काला' पड़ता जाता है। इसीलिये, आसाम देशमें इसका नाम "काला आजार" पड़ गया है। परांगपुष्ट (parasitic) एक प्रकारके जीवाणु इस रोगके उत्तेजक कारण हैं। आसाम, लंका, चीन और मिश्रमें यह खूब फैला है। इसमें नीचे लिखे उपसर्ग साधारणतः दिखाई देते हैं :—"बढ़ी हुई प्लीहा", (कभी-कभी) बढ़ा हुआ यकृत, कृशता, शरीरका रंग मटमैला, "अनियमित स्वल्प-विराम ज्वर" ज्यादा दिनोंतक भोग करना, मसूड़ेसे खून निकलना और बहुत तरहके दाने आदि निकलना (purpura), सामयिक शोथ, "रक्त-स्वल्पता" और उसके साथवाले अन्य लक्षण इत्यादि।

चिकित्सा—आर्सेनिक ३x, २००—ज्वर, शोथ, खूनकी कमीके लक्षणमें।

फास्फोरस ३, ३०—रक्त-स्राव होनेकी प्रवणतामें।

सियेनोथस २x—बढ़ी हुई प्लीहाके लक्षणमें।

कार्डुअस-मेरि θ, ३x—बढ़ा हुआ यकृत रहनेके लक्षणमें।

एपिस, लैकेसिस, क्रोटेलस, ऐण्टिम-टार्ट, ऐण्टिम-आर्स, सोरिनम बैसि ल्यूबर, नेट्रम-आर्स, क्विनाइन, एसिड-फास, फेरम-आयोड, फेरम-

आर्स, फेरम-सियेनेटम, फेरम-मेट वगैरह दवाओंकी जरूरत पड़ सकती है। ये दवाएँ ३—६ शक्तिकी लेनी चाहियें।

दोगाछिया, बारासात वगैरह गाँवों ऐण्टिमोनी इन्जेक्शन और क्विनाइनके व्यवहारसे ऐलापैथ इलाज करनेवालोंने बहुत फायदा उठाया है।

१६१७ ईस्वीमें डाक्टर सर लिउनाड रोजर्सने बहुत चेष्टाके बाद पता पाया है कि ऐनोफिलिस मच्छर, जिस तरह मैलेरिया फैलनेका कारण है, उसी तरह खटमल द्वारा यह काला ज्वर फैलता है। इसलिये बंगालसे मच्छर निकालकर मैलेरिया दूर करनेका जैसा बन्दोबस्त किया जा रहा है, वैसा ही कुछ खटमलोंके लिये भी नये यंत्रोंकी सृष्टि करनी पड़ेगी। डाक्टर रोजर्सने पहले आर्सेनिक-घटित औषधोंका प्रयोगकर कुछ अधिक फायदा नहीं देखा। इसके बाद ऐण्टिम-टार्ट सेवन कराकर इन्जेक्शन देकर २५ में २३ मनुष्योंको आराम कर चुके हैं।

डाक्टरोंका कहना है कि इन खटमलोंके रहनेकी जगह और घरकी दीवारोंमें नाड़ियलका तेल छिड़कनेसे खटमल नष्ट होते हैं।

टाइफायड ज्वर

(Typhoid Fever)

इस ज्वरमें विशेषकर आँतोंपर बीमारीका आक्रमण होता है। इसलिये, इसे "आंत्रिक-ज्वर" कहते हैं। इसका दूसरा नाम "वात-श्लेष्मा-विकार" है। इस देशमें भादो और आश्विन महीनोंमें बहुतसे मनुष्योंको यह बीमारी होती है। खाद्य या दूध आदि पीनेके पदार्थोंके साथ एक तरहका जीवाणु एवटीस बैसिलस या बैसिलस टाइफोसस (eberte's bacillustyphosus) नामक एक तरहका जीवाणु ही इसके पैदा होनेका कारण है। हमेशा रोगीके मल-मूत्रमें यह जीवाणु

दिखाई देता है (परिशिष्ट ग अक ४), अविराम ज्वर (लगातार बना रहना), पेटमें अकडन और वायु इकट्ठा होना, प्लीहाका बढना, आँतोंमें जखम, मध्यान्त्रका बढना और मल, मूत्र और रक्त तथा पसीनेमें बैसिलस टाइफोससका दिखाई देना इस बीमारीका निर्णायक लक्षण है। इस बीमारीमें आँतोंपर ही रोगका विशेष हमला होता है, इसी वजहसे इसे आन्त्रिक ज्वर कहते हैं। सडी विष्ठा या नली तथा गले हुए मुर्दोंसे निकली हुई एक तरहकी विषैली भाफ या जीवाणु इस रोगकी उत्पत्तिके कारण हैं और शरद्-ऋतुमें होनेके कारण इसे आटम फीवर (autumn fever) भी कहते हैं।

जो देश न बहुत ठण्डे और न बहुत गर्म हैं तथा गाँवकी अपेक्षा शहरमें और बडे शहरोंकी अपेक्षा छोटे शहरोंमें यह बीमारी अधिक होती है। पानी बहनेकी नालियाँ और पीनेके पानीकी सफाईकी ओर ध्यान न रखनेके कारण और उनके दोषसे तथा मक्खी आदि के द्वारा ही यह बीमारी एक जगहसे दूसरी जगह फैलती है। जिन शहरों या गाँवोंमें टाइफायड (मियादी बुखार) सक्रामक रूपसे फैला रहता है, उन स्थानोंके पीनेका पानी और मोरी, पनालोंके पानीकी परीक्षाकर देखा गया है कि उसमें टाइफायडके जीवाणु हैं।

जवानोंको ही यह बीमारी अधिक होती है तथा जो ताकतवर हैं, उनपर ज्यादा हमला होता है। बच्चोंको यह बीमारी बहुत कम होती है। एक बार यह बीमारी हो जानेपर फिर सारी जिन्दगी या बीमारी होनेका डर नहीं रह जाता ; परन्तु आराम हो जानेके बाद कुछ दिनों-तक फिर दोहरा जानेका डर रहता है।

जीवाणु—एबर्टीस बैसिलस टाइफोसस (eberte's bacillus typhosus) एक तरहका गति-शक्तिसे सम्पन्न, महीन सूतकी तरह, खुर्दबीनसे दिखाई देनेवाला जीवाणु है। इसके दोनों सिरोंपर दो गोल

आकारके बहुत कुछ ढकनेकी तरह रहता है। इसलिये इसको कोई-कोई ड्रम बैसिलस (drum bacillus) भी कहते हैं ; परन्तु सूर्यकी यह जीवाणु बहुत दिनोंतक जीवित रहता है ; परन्तु सूर्यकी किरणोंसे चारसे दस घंटोंके भीतर ही मर जाता है। रोगका आक्रमण होनेके दूसरे सप्ताहसे ही खून और पाखाना, पेशाब तथा पसीनेमें खुर्दबीनसे देखनेपर ये जीवाणु दिखाई देते हैं। बरफमें यह जीवाणु बहुत दिनोंतक जीवित नहीं रह सकता।

फैलना—रोगीकी सेवा-सुश्रूषा करनेके समय सुश्रूषा करनेवालेके शरीरमें, मल-मूत्र आदिके साथ तथा खाद्य, दूषित ज्वर, जल आदि दूषित भूमिके धूलके कण आदिके साथ साँसके द्वारा यह रोग एक मनुष्यसे दूसरेमें चला जाता है। ऐसा भी दिखाई देता है कि कोई आदमी देखनेमें तो बहुत निरोग मालूम होता है ; परन्तु जो कोई उसके संसर्गमें जाता है, उसीको टायफायड ज्वर हो जाता है। इन्हें रोगवाहक या कैरियर कहते हैं। इन्हीं रोगवाहकोंके द्वारा यह बीमारी इधर-उधर फैलती है।

रोग-भेद—टाइफायड ज्वर बहुत तरहका हो सकता है :—(१) जिसमें सिर्फ आँतोंपर आक्रमण होता है। (२) आँतोंपर तो थोड़ा आक्रमण होता है, पर प्लीहा, यकृत, मूत्राशय, मस्तिष्कावरण आदिपर अधिक आक्रमण होता है। (३) आँतोंपर बिलकुल ही आक्रमण नहीं होता। (४) मिश्रित आक्रमण, जैसे—टाइफायडकी बीमारी, मुख्य भावसे आक्रनण होनेके वाद स्टेप्टोकोक्कस, स्टेफाइलोकोक्कस, कोलन बैसिलाई आदिका आक्रमण होता है। (५) स्थानिक आक्रमण, जैसे—टाइफायड बैसिलस द्वारा फोड़ा या मूत्राशय-प्रदाह इत्यादि बैरा-टाइफायडका आक्रमण। (६) किसी दूसरी बीमारीकी अन्तिम अवस्थामें टाइफायडका आक्रमण।

आंत्रिक-विकार—इस जीवाणुके शरीरमें प्रवेश कर जानेका यह परिणाम होता है कि आँतोंके क्षुद्रांत और अंत्रपुट प्रदेशके अन्तिम अंशकी कई ग्रन्थियाँ फूल जाती हैं। इसके बाद वह जगह सडकर पीव पैदा हो जाता है और वह सडी जगह निकल जाया करती है। यह इस तरह गिरकर जखम पैदा हो जाता है और खून निकला करता है। इसके बाद बीमारी आराम होनेके साथ-ही-साथ यह जखम बहुत कुछ घट जाता है। कभी-कभी आतोंका जखम बढ़कर फैल जाता है और साधारणतः श्रोणि-देशकी १२ इञ्च लम्बी आँतमें ही ऐसा हुआ करता है। प्रायः सभी रोगियोंकी प्लीहा बढ जाती है, हड्डियोंका सडना भी आरम्भ हो जाता है, यकृतमें भी यान्त्रिक परिवर्त्तन आरम्भ होता है, मसानेमें फोडा निकल आता है। श्वासयन्त्रमें खूनकी अधिकता और प्रदाह हो जाता है, हृत्पिण्डकी आवरक-झिल्लीका प्रदाह, मस्तिष्कावरण-प्रदाह प्रभृति यान्त्रिक परिवर्त्तन इस रोगके भोगकालमें दिखाई देते हैं।

लक्षण—शरीरमें जीवाणु तो प्रवेश कर गया है, परन्तु रोग प्रकट नहीं हुआ—इस अवस्थाका "पूर्वावस्था" (encubation period) कहते हैं। इस अवस्थाके ठहरनेका समय एकसे दो सप्ताहतक हो सकता है। इस अवस्थामें शरीरमें सुस्ती, कामकी इच्छाका न होना, शारीरिक और मानसिक गडबडी प्रकट हो जाती है, अन्तमें रोगी विछावनपर जा पडता है। बीमारी अक्सर एकाएक नहीं प्रकट हो जाती, सर-दर्द, कँपकँपी, भूख न लगना, पतले दस्त आना या कभी-कभी आँतोंसे रक्त-स्राव, प्लीहा बढ़ना, चावलके धोवन या उडदकी दालकी तरह दस्त, भयानक कब्ज , श्वास-प्रश्वासमें ऐमोनियाकी गन्ध, कपालमें दर्द, सरमें चक्कर, उदरमें शूलका दर्द, पेट फूलना, पेट दबानेपर दर्द और एक तरहकी आवाज ; यकृतके नीचे अंगुलीसे दबानेपर एक तरहकी आवाज होती है ; नाकसे रक्त-स्राव, बेचैनी, प्रलाप, चौंक उठना अथवा निश्चेष्ट अधमुँदी आँखोंसे पडे रहना प्रभृति उपसर्ग दिखाई देते हैं।

इस रोगका भोगकाल हमेंशा तीन सप्ताह है ; परन्तु कभी-कभी छः सप्ताह या उससे भी अधिक समयतक हो सकता है। बुखार आनेके पहले जी अच्छा न मालूम होना, सर-दर्द (खासकर माथेके पिछले भागमें), कमजोरी, भूख न लगना, नींद न आना, जाड़ा लगना, उदासीन भाव प्रकृति "प्राथमिक लक्षण" प्राप्त होते हैं।

प्रथम सप्ताह—ज्वर आ जानेपर समझना होगा कि इस रोगका प्रथम सप्ताह आरम्भ हुआ है। इस सप्ताहमें धीरे-धीरे शरीरका गर्मी वढ़ा करती है ; कभी-कभी ज्वर नियमित भावसे बढ़कर सातवें दिनसे १०५° डिगरीतक पहुँच जाता है और तीसरे पहरके समय उत्ताप सवेरेके वक्तकी वनिस्वत १-१½ डिगरी ज्यादा रहता है। बुखारके अनुसार नाड़ी तेज नहीं रहती ; नाड़ीकी स्पन्दन प्रति मिनट ९० वार या ज्यादा होता है। यह पूर्ण, कड़ी रहती है और एक साथ ही दो आघात दिया करती है ; जीभ मैली रहती है और सफेद, पेट थोड़ा फूला रहता है और वेदना रहती है (खासकर दाहिनी तरफ), पेट गड़गड़ाता है और सिझाये हुए उड़दकी तरह दस्त होता है, फेन-भरे, हरी आभा लिये पतले दस्त आते हैं ; कभी-कभी नाकसे रक्त-स्राव होता है, वहरापन रहता है। यदि ज्वर अधिक नहीं रहता, तो प्रलाप (अंट-संट बकना) का लक्षण भी नहीं रहता, परन्तु सर-दर्द और रातके समय मानसिक भ्रमका लक्षण रह सकता है। पहले सप्ताहकी अन्तिम अवस्थामें प्लीहा वढ़ जाती है और पहले उदरमें और उसके बाद शरीरपर एक तरहके "गुलाबी दाने निकल आते हैं।" शरीरका रंग गोरा न रहनेपर और अच्छी तरह न देखनेपर ये दाने नहीं दिखाई देते। सर्दी खाँसीका लक्षण भी रह सकता है।

दूसरी सप्ताह—सभी लक्षण वढ़ जाते हैं ; बुखारका ताप भी वढ़ जाता है और पहले सप्ताहकी तरह सवेरेके वक्त वहुत नहीं घटता। नाड़ी तेज रहती है और दो आघातवाली अवस्था नहीं दिखाई देती,

सर दर्द नहीं रहता ; परन्तु मानसिक सुस्ती और चुप रहनेका भाव बढ़ जाता है। चेहरा, ओंठ और जीभ सूखी, रोगी सुस्त मालूम होता है, कृश, पेशाव थोड़ा, पतले दस्त, चौबीस घण्टोंमें सात-आठ वार बदबूदार, पित्त-शून्य बुलबुलेकी तरह पीला या स्लेटके रंगका दस्त अथवा कीचके रंगका दस्त होते हैं ; कभी-कभी कब्ज रहता है। पेशीका काँपना बेहोशी, प्लीहाका बढ़ना, सूखी खाँसी, उदरमें वायुका इकट्ठा होना, अकड़नका दर्द रह सकता है। कड़ी बीमारीवालोंके आँतोंसे रक्त-स्राव और स्नायविक दुर्बलताके कारण मृत्युतक हो जा सकती है और साधारण रोगमें बुखार धीरे-धीरे घटकर रोगी आरोग्य हो जा सकता है।

तीसरा सप्ताह—नाड़ीकी गति ११० से १२० फी मिनट हो जाती है, सबेरेके वक्त बुखार खासा घटता है और क्रमशः ज्वर घटता आता है। कमजोरी और शीर्णता अधिक बढ़ती जाती है, दाँतपर मैल, दाँतपर काला दाग पड़ता है, रोगी चित पड़ा रहता है, पेशाब रुक जाता है, गहरी नींद या मोह ; जीभ सूखी, भूरे रंगकी या चमकीली लाल या पुराने चमड़ेकी तरह सूखी रहती है, पतले दस्त और पेट फूलनेका लक्षण भी रह सकता है। श्वास यन्त्रपर आक्रमण (न्युमोनिया, ब्राकाइटिस इत्यादि), हृत्पिण्डकी कमजोरीका बढ़ना, तेज प्रलाप, पेशियोंका काँपना और विशेषकर आँतामें छेद और रक्त जाना, शून्यमें हाथसे कुछ पकड़ना, लोगोंको पहचान न सकना, पातानेकी तरफ सरक जाना प्रभृति संकटापन्न अवस्था होकर मृत्यु हो जाती है अथवा शरीरका ताप घटकर आरोग्योन्मुख अवस्था आती है।

रोगका आक्रमण हल्का होनेपर सत्रह-अठारह दिनोंके बाद (कम से-कम तृतीय सप्ताहके अन्तमें) ऊपर लिखी उपसर्गों का प्रकोप घट जाया करता है और रोगीको भूख लगती है, जीभ साफ हो जाती है, कुछ ताकत मिलती है प्रभृति स्वास्थ्यके लक्षण लौट आते हैं ; पर यदि रोग

टाइफायड ज्वरका चार्ट

टाइफायड ज्वरमें अवश्य पालन करना चाहिये

१। टाइफायडकी बीमारीमें दवाकी अपेक्षा उपयुक्त सेवा-शुश्रूषा ही अधिकतर लाभदायक है। इसे स्मरणकर, उपयुक्त सुश्रूषाकी व्यवस्था करनी चाहिये।

बीच बीचमें गरम पानीसे बदन पोंछ (स्पंज) देना अच्छा है।

३। जिसमें शय्याक्षत (bed-sore) न हो जाये, इसके प्रति लक्ष्य रखना उचित है।

४। कड़ा पथ्य नहीं देना चाहिये—पतली, पुष्टिकर, सहजमें पचनेवाली चीजें और बहुत ज्यादा पानी पीनेको देना चाहिये।

५। लेटे ही-लेटे पथ्यादि और पाखाना, पेशाब करना चाहिये।

६। रोगीकी शय्या बीच बीचमें बदलकर धूपमें देना और बिछावनकी चादर और पहने हुए वस्त्र रोज बदलकर धो डालना अच्छा है।

७। सब प्रकारकी सफाईकी ओर लक्ष्य रखना पड़ेगा।

८। हवा और रोशनीसे भरे साफ-सुथरे कमरेमें बिछावनपर रोगीको सुलाये रखना उचित है। किसी तरह भी घूमने-फिरने नहीं देना चाहिये।

आरोग्यमें विलम्ब होता है, तो "बादके सप्ताहमें तृतीय सप्ताहके लक्षण और अनियमित ज्वर प्रभृति प्रकट होते हैं।*

चौथा सप्ताह—इस सप्ताहमें आकर अधिकांश रोगी ही आरोग्य पथपर अग्रसर होते हैं और शरीरका ताप भी स्वाभाविक अवस्थापर आने

---

* इसके साथ ही एक टाइफायड चार्ट प्रकाशित किया जाता है। सुश्रूषा करनेवालेको इसको चार्टके खानाको अच्छी तरह पूरी कर देना चाहिये, इससे चिकित्सको खूब सुविधा होती है और बहुत सहजमें ही समझमें आ जाता है कि बीमारी आराम होनेकी ओर है या बिगड़ती जा रही है। सुश्रूषाकारी या गृहस्थ इस चार्टके अनुसार एक चार्ट अलग कागजपर बना ले सकते हैं। चार्टके मल और मूत्रके खानेमें तारीखके अनुसार मल और मूत्रकी संख्या लिख देनी पड़ती है। प्रति मिनट श्वस-प्रश्वास और नाड़ीकी संख्या, इस चार्टमें तारीखके अनुसार निर्दिष्ट स्थानपर लिख देना पड़ता है। दैनिक तारीख और रोग-भोगका दिन भी यथाक्रमसे पूर्ण कर लेना पड़ता है। भारतवासियोंके साधारण तापके अनुसार विज्वर-रेखा ९७·४° बतायी गयी है। पाश्चात्य देशोंमें यह रेखा ९८·४° मानी जाती है। लटकती हुई एक लम्बी रेखा २° और चौड़ी प्रशस्त रेखा १° ताप प्रकट करती है। पूर्वाह्णकालीन (आधी रातसे दोपहरतक) और अपराह्णकाल (दिनके दोपहरसे आधी राततक) तापका रहना, यथाक्रम तारीखके अनुसार पूर्वाह्ण और अपराह्ण भागमें एक बड़े बिन्दु द्वारा चिह्नित करना पड़ता है। जैसे—चार्टमें २६ और २७ आषाढ़के पूर्वाह्णमें ताप और अपराह्णमें ताप क्रमसे १०१·०, १०० और १०३·२, १०२·८ डिगरी हुआ। इस ताप निर्देशक स्नानमें एक-एक बड़ा बिन्दु बैठाकर सरल रेखा खींचकर इनको मिला देना पड़ता है। ज्वर-वृद्धि निर्देशक अर्धगामी रेखाएँ अविच्छिन्न और ज्वरका घटना बतानेवाली निम्नगामी रेखाएँ छिन्न-रेखा (dotted line) द्वारा मिला देनेपर सहजमें ही इसका पता लग जाता है कि ताप कितना हुआ। चार्टमें बतायी ताप-रेखा और मल, मूत्र, नाड़ी, श्वास-प्रश्वास आदिकी गति देखकर सहजमें ही रोगकी गति समझमें आ जाती है।

लगता है, जीभ साफ हो जाती है और भूख लगने लगती है। मरनेवाले रोगियोके तीसरे सप्ताहके लक्षण सब बढने लगते हैं। रोगी बेहोशकी तरह पडा रहता है, बीच-बीचमें बुदबुदाकर कुछ बकता है। शून्यमें हाथ पटकता है, मानो किसी चीजको पकडना चाहता है, वह पकड़ नही सकता, अनजानमें पाखाना, पेशाब हुआ करता है, शय्याक्षत (पीठकी रीढमें जख्म) पैदा हो जाता है।

पाँचवाँ और छठा सप्ताह—हल्का ज्वर रहता है, अन्तमें ४० दिनोके बाद बुखार घटता है, रोगका दुबारा आक्रमण (दोहराना) भी हो सकता है।

साधारणतः टाइफायडके ऊपर लिखे सभी लक्षण नही दिखाई देते है या इसमें गडबडी दिखाई देती है। अतएव इस रोगकी पहली अवस्थामें रोगका निर्णय करना बहुत कठिन हो जाता है; परन्तु जब बेहद सर दर्द, स्नायु-शूल, अकडन, मस्तिष्क-प्रदाह, श्वास-नलीका प्रदाह, न्युमोनिया, प्लुरिसी, एकाएक मिचली इत्यादि प्रदाह वगैरहके लक्षणोके साथ रोग आरम्भ होनेतक रोगका निर्णय करना, रोगकी पहली अवस्थामें प्रायः असम्भव ही हो जाता है। टाइफायडके दूसरे दूसरे लक्षण प्रकट न होनेपर टाइफायडकी चिकित्सा नहीं की जाती; ऐसा भी देखा गया है कि कितने ही स्थानोंपर आँतोके जखममें भी छेद होकर जबतक बहुत ज्यादा रक्त स्राव नही होता, तबतक रोगी बिना ध्यान दिये ही पडा रहता है, टाइफायडपर किसीका ध्यान ही नही जाता।

टाइफायड ज्वरका ताप धीरे-धीरे बढता है; सवेरेके बुखारका ताप सन्ध्याकी अपेक्षा एक डेढ डिगरी कम रहता है। यदि रोग आरोग्यकी ओर जाता है, तो ताप धीरे-धीरे घट जाता है; परन्तु एकाएक तापका बढना या घटना—यह लक्षण भी देखनेमें आता है।

कभी-कभी बुखार एकदम छूट जानेके बाद एकाएक एक दिन ज्वर आ जाता है या प्रायः तीसरे पहरके समय तापकी वृद्धि होती दिखाई देती है और दूसरे-दूसरे उपसर्ग नहीं दिखाई देते ; कभी-कभी स्वाभाविककी अपेक्षा कम ताप भी दिखाई देता है। न्युमोनिया, प्लुरिसी इत्यादि उपसर्ग पैदा हो जानेपर शीत भी आ सकता है।

टाइफायड त्वचापर एक तरहके दाने प्रथम सप्ताहके अन्तमें या द्वितीय सप्ताहके आरम्भमें दिखाई देते हैं ; परन्तु साँवले या मैले शरीरपर ये दाने नहीं दिखाई देते। इन दानोंके अलावा, शोथ, पसीना वगैरह होता है और केश झड़ जाते हैं, शय्याक्षत अकसर हो जाता है, कभी-कभी फोड़ा होता भी दिखाई देता है।

टाइफायड ज्वरमें खूनमें बहुत कुछ परिवर्त्तन हो जाता है। रक्तके सफेद कण बहुत कुछ घट जाते हैं ; परन्तु किसी दूसरी संक्रामक बीमारीमें या प्रादाहिक रोगमें इस तरह सफेद कण नहीं घट जाते हैं। यह टाइफायड रोगकी एक विशेषता है। हिमोग्लोबिन घट जाता है और रक्तहीनता दिखाई देने लगती है। नाड़ी तेज हो जाती है ; परन्तु जितना ज्वर रहता है, उतनी तेज नहीं रहती। नाड़ीका दो आघात होता है—यह दो आघात किसी दूसरी नयी बीमारीमें देखनेमें नहीं आते। रोग बढ़नेके साथ-ही-साथ नाड़ी क्रमशः पतली और चंचल होती है। रोग आरोग्य होनेके समय रोगीकी अवस्था स्वाभाविक होती जाती है और कभी-कभी क्षीण गति हो जाती है, किसी दूसरे रोगमें नाड़ीकी गति इस तरहकी नहीं होती। हृत्पिण्डकी गति भी किसी-किसी रोगमें बढ़ती दिखाई देती है ; पर ऐसा बहुत कम होता है। खूनका दबाव धीरे-धीरे घट जाता है। साधारणतः हृत्पिण्डकी आवाजमें कोई गड़बड़ी नहीं दिखाई देती।" पैरकी शिराओंसे खूनका दबाव घटकर उत्तापका घटना, ठण्डा होना, दर्द, सूजन वगैरह होती भी देखी जाती है।

टाइफायडमें पहलेसे ही भूख घट जाती है, जीभपर सफेद मोटा लेप चढ़ा रहता है, रोगकी अवस्थामें जीभ अकसर तर दिखाई देती है; परन्तु अन्तिम अवस्थामें सूखी जीभ रहती है, जीभपर भूरे रंगका लेप भी रहता है। ओंठ और मसूढ़ोंमें मैलकी तह जम जाती है। कर्ण-मूलकी गांठ फूली और प्रदाहित अकसर देखी जाती है। मिचली और वमन किसी-किसीको होता है। सैकड़े २० से ३० रोगीको बीमारीको पहली अवस्थाके अन्तमें और दूसरी अवस्थाके आरम्भसे ही पतले दस्त आने लगते हैं। मल दाना-दाना, पतला और बादामी रंगका होता है; परन्तु अधिक रोगियोंको कब्जियत रहती है। सैकड़े ७ रोगियोंको दूसरा सप्ताह समाप्त होनेसे लेकर चौथे सप्ताहके आरम्भमें आँतमें जखम होता है, जिससे खूनका स्राव होता है। यह खूनका स्राव बहुत ही खराब लक्षण है। इस समय अधिकांश रोगियोंकी नाड़ी दूषित हो जाती है और उत्तापको स्वाभाविक गति घटकर पतन अवस्था (अर्थात् शीत आ जाना) के लक्षण प्रकट होते हैं तथा रोगी मर जाता है। पेट फूलना और उदरके दाहिनी ओर गुड़गुड़ आवाज अकसर हुआ करती है। पेटमें दर्द और ऐंठन रहती है, आँतोंके इस जखमके कारणसे ही प्रायः तिहाई भाग रोगीकी अवस्था खराब हो जाती है। यह अकसर तीसरे सप्ताहमें होता है। एकाएक उदरमें, विशेषकर यकृतके निचले भागमें अकड़नका दर्द, दबानेपर दर्द मालूम होना, उदरकी पेशीका अकड़ना, उत्ताप बढ़कर एकाएक घट जाना वगैरह आँतोंमें छेद होनेके लक्षण हैं। प्लीहा बढ़ जाती है, पर यकृतमें कोई विशेष उल्लेख योग्य लक्षण नहीं दिखाई देता है।

रोगकी पहली अवस्थामें अकसर नाकसे खून जाता दिखाई देता है। श्वासनली-भुज-प्रदाह (bronchitis) और ब्रांकी न्युमोनिया भी अकसर हो जाया करता है। दूसरे या तीसरे सप्ताहमें यह न्युमोनिया होता है। खून-मिली खाँसी या प्लुरिसी भी किसीको हो जाती है।

टाइफायडके साथ गलेकी अकड़न, गर्दनका पीछेकी ओर जकड़ जाना, रोशनीका सहन न होना, सर-दर्द, स्नायु-शूल प्रभृति मस्तिष्क-दोषके लक्षण प्रकट होते हैं। प्रलाप भी हो जाता है, प्रत्येक मारात्मक रोगीकी ही प्रलापका लक्षण पैदा होता है ; पर साधारणतः धीमा प्रलाप, रातके समय प्रलाप, अंगुलियोंका फड़कना, बिछावनकी चादर नोंचना आदि लक्षण दिखाई देते हैं, पेशाब रुकना या बहुत पेशाव होना—ये लक्षण भी रह सकते हैं।

निर्णायक लक्षण—लगातार बुखार बना रहना, नाक़से रक्त-स्राव, धीरे-धीरे ज्वरका बढ़ना, सवेरेकी अपेक्षा सन्ध्याके समय तापका ज्यादा होना, नाड़ीका एक साथ दो आघात। रक्तमें श्वेत-कणका बढ़ जाना, रक्त, मल, मूत्र और पसीनेमें टाइफायड बैसिलसका होना इसके निर्देशक लक्षण हैं।

भावी-फल—सैकड़े ५ से १५ रोगी मर जाते हैं। मस्तिष्क, मूत्र-ग्रन्थि या गुर्दा अथवा हृत्पिण्डपर रोगका आक्रमण होनेपर एकाएक मृत्यु हो जा सकती। बहुत अधिक उत्ताप, प्रलाप, पेट फूलना, आँतोंसे खून जाना, आँतें फट जाना आदि बुरे लक्षण हैं।

रोकनेका उपाय—टाइफायड ज्वर फैलता दिखाई देनेके समय घरको चारों ओरसे खूब साफ-सुथरा रखना चाहिये। पानीकी निकासीका पूरा प्रबन्ध रखना चाहिये। पानी खौलाकर पीना चाहिये। खानेकी चीजोंपर मक्खी न बैठे या धूल आदि न गिरने पाये, इसपर नजर रखनी चाहिये। सड़ी-गली चीजें खाना, अधिक खाना, बहुत ज्यादा परिश्रम और रातमें जागरण, यह सब छोड़ देना चाहिये। रोगीको अलग घरमें रखना, मल, मूत्र और वमन आदि दूर गाड़ देना और सेवा-सुश्रूषा करनेवालोंके सिवा और किसीको उस घरमें न जाने देना चाहिये, जहाँ रोगी हो।

संक्षिप्त चिकित्सा—"ब्रायोनिया" ३X, ६ (प्रति मात्रा दो घण्टेके अन्तरसे) निःसंशय रूपसे रोग पहचानमें आते ही आरम्भावस्थासे शेषतककी सब अवस्थाओंमें यह लाभदायक है, विशेषकर सर-दर्द या आंत्रिक उपसर्गोंकी प्रधानतामें। "रस-टक्स" ६ (बेचैनी या जीभका अग्रभाग लाल होनेपर)। "बैप्टीशिया" θ, १X (रोगीकी उदासीनता या बदबू भरा पाखाना या सान्निपातिक-विकारकी वजहसे खूनकी खराबी होनेपर)। "आर्सेनिक" ३X, ३० (गहरी सुस्तीमें); "म्यूर-एसिड" ३ (विकारकी वजहसे निस्तब्ध भाव, सूखी जीभ और दाँतपर मैल)। "एसिड-फास" २X, ३ (शारीरिक उपसर्ग सब पैदा होनेके पहले ही मानसिक उपसर्ग स्पष्ट रूपसे प्रकट होनेपर)। "टेरिबिन्थ" ३X, ६ (पेट फूलनेका लक्षण) का सेवन और मदर टिंचरका या तार्पिनके तेलमें कपड़ा भिगाकर पेटके ऊपर लगाना। "ओपियम ६, इपिकाक ३X या हैमामेलिस" θ (पेटसे रक्त-स्राव होनेपर) का सेवन और पेटपर बरफका बाहरी प्रयोग करना उचित है। "स्टिकनिन" १/६४ ग्रेन मात्रामें प्रति चार घण्टेके अन्तरसे (हृत्पिण्डको उत्तेजित करनेके लिये) प्रयोग किया जा सकता है; लेकिन सावधान! रोगीकी अवस्था नितान्त संकटापन्न न होनेपर भी बिना चिकित्सकके परामर्शके इस दवाका व्यवहार करना युक्तिसंगत नहीं है; क्योंकि इसके अधिक व्यवहारसे आँतोंमें पक्षाघात उपस्थित होकर सन्निपात-विकारकी तरह कठिन कर डालता है।

प्रतिषेधक चिकित्सा—टायफायेटिनम θ, ३०, २००।

ज्वरकी अवस्थामें—ब्रायोनिया, जेलसिमियम, बैप्टीशिया, आर्सेनिक, रस-टक्स।

रक्त-स्रावमें—हैमामेलिस, इपिकाक, टेरिबिन्थ, नाइट्रिक एसिड, ऐल्यूमिना, आर्निका, मिलिफोलियम ३X।

सार्वाङ्गिक कम्पन—जेलसिमियम, एपिस, जिंकम।

नाकसे खून गिरना—ऐकोनाइट, इपिकाक, क्रोकस, हैमामेलिस, मेलिफोलियम।

पाकाशयकी गड़बड़ी—पल्स, कैन्थरिस, हाइड्रै स्टिस।

अतिसार- रस-टक्स, मर्क, क्यूप्रम, आर्स, फास-एसिड।

सर-दर्द—वेलेडोना, हायोसायमस।

प्रलापका-लक्षण—वेलेडोना, हायोसायमस, स्ट्रैमोनियम, व्रायो, रस-टक्स, ओपि, ऐगरि, सल्फर, एसिड-फास, जिनेसि।

बहरापन या याददाश्तके घटनेका लक्षण—फास।

फुस्फुस-प्रदाह या न्युमोनिया—फास्फोरस, लाइको, हायोसा, रस-टक्स, सल्फर, ऐण्टिम-टार्ट, आर्निका।

स्नायविक उपसर्गोंमें—ऐगरि, इग्ने, वेल, हायोसा।

अंत्रावरण-प्रदाह (peritonitis) के उपसर्गों—आर्सेनिक, वेलेडोना, रस-टक्स, टेरेबिन्थ।

पित्तकी अधिकतामें—मर्क, हाइड्रै, व्रायो, चेलि, लेप्टे।

पेट फूले रहनेपर—रस-टक्स, टेरिबिन्थ, आर्स, फास-एसिड, ओपियम, लाइको, कार्वो-वेज।

कृमिके उपसर्गोंमें—सिना, स्पाइजे, टियुक्रियम।

मूर्च्छामें—बेल, ओपि, नक्स-मस, एसिड फास, हेलिबो, रस-टक्स, एपिस, स्ट्रैमो, हायोसा, जिकम, (परवर्ती परिच्छेदमें "मोह ज्वर" की दवा देखिये)।

अन्तिम या पतनावस्थामें—आर्सेनिक, कार्वो-वेज, एसिड-म्यूर, सिकेलि, विरेट्रम, कैम्पर।

यकृत या लिवरमें दोष रहनेपर—चेलिडो, मर्क-आ-फ्लेव (२x चूर्ण), लेप्टे, मेलिलो, पोडो, कार्डु-मेरि।

आरोग्यावस्थाके उपसर्गोंमें—जैसे, माथेमें दर्द रहने (वेले, हायो, जिकम, ओपि, एपिस, रस)। "छाती अक्रमन्त होनेपर"—

(ब्रायो, फास-आयोड)। "अजीर्णता"—(नक्स-वोम, कार्बो-वेज, इग्ने, मर्क)। "बहरापनमें"—(एसिड फास, चायना, चिनि-सल्फ)। "राक्षसी भूखमें"—(चायना, सिना, सल्फर)।

उल्लिखित दवाएँ ३ से २०० शक्तिककी व्यवहृत होती है। रोग घटकर बहुत दिनोंतक कमजोरी रहनेपर एसिड-फास ६, चायना ६, ऐमोन कार्ब ६, नक्स वोम ६ का प्रयोग करना चाहिये।

औषधकी अपेक्षा पथ्यपर अधिक नजर रखना जरूरी है। रोगीको रोशनी और हवा-भरे कमरेमें कोमल और साफ बिछावनपर सुला रखना चाहिये। बिछावनकी चादरके नीचे आयल-क्लाथ बिछा रखना चाहिये। पतला, तरल, खूब सिझाया हुआ; पर सजहमें पचनेवाला भोजन होना चाहिये। खूब पानी पिलाया जा सकता है। छानाका पानी, ग्लुकोज वाटर, मिश्री डालकर औंटाया हुआ पानी, ये सब पथ्य हैं। मुँह और जीभ खूब साफ कर देनी चाहिये। पीठपर बीच-बीचमें बोरिक एसिड लगा देना चाहिये, इससे शय्याक्षत न होगा। आँतें फट जानेपर अस्त्र-चिकित्सककी सहायताकी जरूरत पड़ सकती है।

कई प्रधान औषधोंके लक्षण

ब्रायोनिया ३, ६, ३०— मुँहका स्वाद तीता, अरुचि; जीभ सूखी और मैल-भरी; सरमें असह्य दर्द; खाँसी, वक्षमें दर्द प्रभृति लक्षणोंमें। [यदि विकार धीरे-धीरे प्रकट हो और धीमी हो, तो ब्रायोनिया; पर यदि रोगका विकास बहुत तेजीसे हो, तो रस-टक्सका प्रयोग करना उचित है; पर अगर पतले दस्त आते हो, तो ब्रायोनियाका व्यवहार करना उचित नहीं है।] रोगकी पहली अवस्थाकी ब्रायोनिया प्रधान दवा है। यदि कोई दूसरा उपसर्ग न रहे, तो रोगके अन्ततक इसीका प्रयोग करते रहनेपर फायदा होता है। बहुत सुस्ती, "रोगी हिलना-

डुलना नहीं चाहता", चोट खा जानेकी तरह समूचे शरीरमें दर्द ; भूख न लगना, कब्ज, शरीर भारी मालूम होना, सरमें दर्द (माथेके सामने या पीछले भागमें) प्रभृति लक्षणोंमें भी ब्रायोनियासे फायदा होता है। टाइफायड रोगमें हल्का प्रलाप और प्रलापमें दिनभरके किये हुए कामोंका जिक्र रहनेपर यह दवा रामवाणकी तरह काम करती है।

ऐल्यूमिना ६—ब्रायोनियाके प्रयोगसे फायदा न दिखाई देनेपर ऐल्यूमिना देनेपर बहुत बार फायदा होता है।

ऐबसिन्थियम ३x—मस्तिष्कमें खून ज्यादा हो जानेकी वजहसे नींद न आना। प्रलाप, सरमें चक्कर, जबड़े अटक जाना और इच्छा न रहनेपर अनजानमें जीभ बाहर निकल पड़ना प्रभृति लक्षणोंमें फायदा करता है।

ऐल्यूमेन ३—आँतोंसे रक्त-स्राव (डा० हेरिङ्ग कहते हैं—ज्यादा मात्रामें जमा हुआ या थक्का-थक्का खून निकलता हो तो यह फायदा करता है।

कैल्के-कार्ब ६—पतले दस्त या कब्ज ; नाकसे खून गिरना ; तीसरे सप्ताहमें शरीरमें दाने नहीं निकलना ; नींद न आना ; अचैतन्य भाव। चुनी हुई दवासे भी फायदा न होनेपर, कितनी बार कैल्केरियासे खूब फायदा होता है।

कोलचिकम ६—गहरी दुर्बलता और पेट ज्यादा फूलना।

युपेटोरियम-पर्फ ६x—ज्वरके साथ हड्डियोंमें तेज दर्द।

एसिड नाइट्रिक ६—आँतोंसे रक्त-स्राव ; पेटमें बहुत दर्द ; हिलने-डुलनेपर मूर्च्छा।

पल्सेटिला ६—रोगकी पहली अवस्थामें ही पतले दस्त आने लगना ; मुँहका स्वाद तीता, जीभ सफेद लेपसे ढँकी ; वमन या मिचली; हमेशा शामके वक्त रोगका बढ़ना।

बैप्टीशिया १x, ३x—नाड़ी मोटी, कोमल, पर तेज ; प्रलाप उदासीनता ; औंघता ; बोलते-बोलते तन्द्रा आ जाना ; सरमें दर्द ; शरीरमें दर्द ; ओंठ और जीभ सूखी ; दाँतपर मैल या कीट जमना , टकटकी लगाकर देखना ; जीभ काली ; बिछावन कड़ा मालूम होना (आर्निका) ; दस्त तथा देहके पसीने आदि स्रावोंमें दुर्गन्ध ; बेचैनी या बेहोशी , शरीर या मनकी सुस्ती , शय्या काँटे-सी गड़ना ; गलेमें जखम , श्वास-प्रश्वासमें बदबू ; वमन या ओकाई प्रभृति लक्षणोंमें ("रोगकी प्रथम अवस्थामें") यह फायदा करता है । यदि स्लेटके रंगके दस्त हों (रोगाक्रमणके "दूसरे सप्ताहमें", कभी-कभी इस रंगके दस्त आते दिखाई देते हैं) , रोगी समझता है कि उसके अंग-प्रत्यंग शरीरसे अलग हो पड़े हैं , बहुत चेष्टा करनेपर भी उनको ठीक-ठीक स्थानपर जोड़ नहीं सकता, इसीलिये घबड़ाता है ।

जेलसिमियम १x, ६—"सुस्ती, आच्छन्न भाव, सरमें चक्कर, तन्द्राका भाव और कँपकँपी"—ये जेलसिमियमके विशेष लक्षण हैं । पलकें भारी, आँखें बन्द रहना, सरमें दर्द, कमजोरीके कारण "सारे शरीरका (हाथ, पैर, जीभ प्रभृति) काँपना ।" यह बच्चोंके लिये ज्यादा फायदेमन्द है ।

ओपियम ३०, २००—आच्छन्न या मोहका भाव, किसी तरह भी रोगीको सावधान नहीं किया जा सकता , आँखें बन्द या अधखुली रहती हैं , आवाजके साथ श्वास-प्रश्वास । प्रबल प्रलाप, जोरकी आवाजमें बोलना, हँसना या गाना, भागनेकी चेष्टा । जड़ बुद्धि या ज्ञानहीनोंकी तरह भाव इस दवाके प्रयोगका निर्देशक लक्षण है ।

आर्निका ३x, २००—श्वास-प्रश्वासमें बदबू ; उदासीनता, शरीर-पर लाल, काले या पीले दाने निकलना ; काली लकीरें पड़ जाना ; समूची देह ठण्डी, पर माथा बेहद गर्म , अपना मनोभाव प्रकट नहीं कर

सकता ; प्रलाप ; अचेतन अवस्था या मोह ; बहुत कमजोरी ; शय्या कड़ी मालूम होना (बैप्टीशिया) और बार-बार इधर-उधर करवट बदलना। अनजानसे पेशाब हो जाना ; सारे शरीरमें दर्द—रोगी समझता है कि किसीने उसपर प्रहार किया है ; जबड़े लटक जाना ; नाकसे खून गिरना (आर्निकाके लक्षणोंके साथ बैप्टीशियाके लक्षणोंमें बहुत समानता है)।

रस-टक्स ६, ३०—पेट फूलना, पेट दबानेपर दर्द मालूम होना ; सुस्ती ; बीच-बीचमें पानीकी तरह आम-मिले पतले दस्त ; अनजानमें पाखाना हो जाना ; औषध सेवनकी इच्छा न होना ; रोगकी जखम हो जाने या सड़नेवाली दशा ; मलमें बहुत ही सड़ी गन्ध ; हड्डीका काँपना। स्मरण-शक्तिका लोप ; दिनमें तन्द्रा-भाव। शीत या उत्तापके साथ ज्वर ; एक बगलमें पसीना ; बुदबुदाकर बकना ; नाकसे खून गिरना , जीभ सफेद मैलसे ढँकी, केवल जीभका अगला भाग लाल रहता है (तिकोनिया लाल दाग)। बेचैनी, हाथ-पैर या धड़ लगातार हिलता है (आर्सेनिकमें धड़ नहीं हिला सकता) ; करवट बदलनेपर आराम मालूम होता है।

आर्सेनिक ३x, ३०—तेजी और कड़ी नाड़ी ; गहरी सुस्ती, पर इतनेपर भी रोगी स्थिर नहीं रह सकता ; छटपटाया करता है ; हाथ-पैर हिलाते हैं, पड़ धड़ (कांड) नहीं हिलता। शरीरकी त्वचा रूखी ; प्रबल ज्वर और ज्वालाकर दाह ; ठण्डा पसीना ; तेज प्यास बार-बार थोड़ी मात्रामें पानी पीनेकी इच्छा। प्रदाहयुक्त गहरे लाल रंगकी जीभ ; शरीरमें फुन्सियाँ निकलना और उसके साथ ही पतले दस्त आना ; शरीरका ताप ज्यादा ; आधी रातके बाद बीमारीका बढ़ना ; रोगी बिछावन नोंचा करता है ; ज्वरका आक्रमण होनेपर समस्त शरीर सुस्त हो पड़ता है प्रभृति लक्षणोंमें यह लाभदायक है। (रोगीकी नयी अवस्थामें मुश्किलसे कभी आर्सेनिकके प्रयोगकी आवश्यकता पड़ती है)।

एसिड म्यूर ६—स्नायविक क्रियाकी गडबड़ीकी वजहसे रोगी प्राय. अवसन्न रहता है। गलेमें जख्म ; हाथ-पैर ठण्डे ; जीभ सूखी, जीभ पक्षाघातग्रस्त , बात नहीं कर सकता ; दाँतपर मैल (sordes) ; ठण्ड सहन नहीं होती। नाडी क्षीण या तेज ; ओठपर सफेद बून्दोंकी तरह फुन्सियाँ , निचला जबडा झूल पडना ; मुँहमें जख्म। अतिसार—पतले बदबूदार दस्त, रोगी एकदम निस्तेज हो पडता है ; रोगी बिछा-वनसे लुढक पड़ता है या पातानेकी ओर सरक जाता है। गुह्यावरक (मलद्वारको ढँकनेवाली) पेशीका पक्षाघात ; अनजानमें पाखाना हो जाना , शरीरमें फुन्सियाँ।

एसिड-फास ३x, ३०—(बाहरी या शारीरिक कोई भी रोग-लक्षण प्रकट होनेके पहले 'उदासीनता" प्रभृति मानसिक उपसर्ग) कम्प और शीत, प्यास न लगना, लगातार पाखाना होता ही रहता है। बेहोशीकी अवस्था, चुपचाप पड़ा रहता है, हाथ-पैरोंकी अंगुलियाँ बरफकी तरह ठण्डी रहती हैं , पसीनेवाली अवस्थामें बहुत ज्यादा गर्मी रहती है, लेकिन प्यास नहीं रहती है , भीतर ताप, बाहर ठण्डक ; रातमें और सवेरेके समय बहुत ज्यादा परिमाणमें पसीना (दूसरी दवासे विकार घटनेपर, ताकत लानेके लिये एसिड-फास देना चाहिये)।

कार्बो-वेज ३ विचूर्ण या ३०—हाथ-पैर ठंडे, ठंडा पसीना, डकार, आना, सारा शरीर ठण्डा (विशेषकर घुटनेसे पैरके तलवेतक बरफके समान ठण्डा), नाडी लुप्त, सड़ी बदबू-भरा पाखाना, चेहरा एकदम बदरंग (मुर्देके समान)। रोगी हमेशा ही हवा करनेके लिये कहा करता है , जिस समय रोगीकी जीवनी-शक्ति घटती जाती है, देखनेकी शक्ति घट जाती है कान बहरे हो जाते हैं प्रभृति लक्षणोंमें ३० या उससे ऊँची शक्तिका कार्बो-वेज (अन्तिम समयके उपसर्गोंमें) "केवल एक ही बार सेवन करना चाहिये।" एक खुराक देनेके बाद पाँच-सात घण्टोंके बीचमें दूसरी मात्राका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

टेरिबिन्थिना ६—आँतोंसे रक्त-स्राव, पेशाब रुका हुआ; आमाशयमें जलन; आँव या पतला पाखाना; नाकसे रक्तस्राव। रोग घटनेके साथ यदि आँतोंमें जखम रहे और इसीलिये यदि बार-बार पाखाना हो, तो टेरिबिन्थनाके प्रयोगसे विशेष लाभ होता है। पेट फूलनेकी भी यह एक उत्कृष्ट दवा है। दो-तीन मात्रा प्रयोग करनेपर भी यदि सूजन न घटे, तो रोगीके पेटके ऊपर एक पतला कपड़ा बिछा-कर उसपर थोड़ा विशुद्ध तारपीनका तेल छिड़क देनेपर पेटकी सूजन घट सकती है।

एपिस-मेल ३, ३०—शरीरका चमड़ा सूखा और गरम; जीभ और दोनों ओंठ सूखे और फटा-फटा भाव; कम्पन; प्यासका न लगना; हल्का प्रलाप; पेट फूला, जाग्रत या निद्रित अवस्थामें रोगी एकाएक जोरसे चिल्ला उठता है।

जिंकम-मेट ६, ३०—मस्तिष्कमें पक्षाघात हो जानेकी आशंका या पक्षाघात रहनेपर इसका प्रयोग होता है।

पाइरोजिनियम ६, २००—वैप्टीशियाके लक्षण वर्त्तमान रहें, पर वैप्टीशियासे लाभ न होनेपर। दूसरी चुनी हुई दवासे लाभ न होनेपर पाइरोजिनियमकी सिर्फ एक मात्रा देनी चाहिये।

एचिनेशिया θ—समूचे शरीरमें ठण्डा पसीना; रोगकी परिणामा-वस्थामें तन्तु ध्वंस करनेवाला जखम; काले रंगका खून निकलना; वदबूदार श्वास-प्रश्वास; सुस्त।

वेलेडोना ६, ३०—सर-दर्द; चेहरा लाल; गलेकी शिराओंका फड़कना; आँखकी पुतली फैली; आवाज या रोशनी सहन नहीं होती है; "तेज प्रलाप", उछल पड़ता है; दाँत काटता है।

साइना २x, २००—पृष्ठ २५८ देखिये।

अरम ट्राइफाइलम ३०—लगातार नाक खुजलाना ; नाक, ओंठ खूँटते-खूँटते नाक और ओठसे खून निकलने लगता ; जीभ और मुँहके भीतरके भागका रंग लाल ; मुँहका कोना फटा और जखमसे भरा ; स्वरभंग ।

नक्स मस्केटा २x, २००—बेहोशकी तरह नींद ; पेट गड़गड़ करना , सड़ा पाखाना होना , मुँह, गला और जीभ सूख जाती है, पर प्यास बिलकुल ही नहीं रहती है , मोह ।

विरेट्रम एल्बम ६, १२, ३०—दस्तके साथ बीमारी आरम्भ होना ; अनजानमें चावलके धोवनकी तरह पतले दस्त ; कै या मिचली उदरमें बहुत दर्द, कपालमें ठण्डा पसीना ; अंग प्रत्यंगमें ठण्डे ; बहुत शीघ्र सुस्त हो जाता है ।

मर्क-सोल, मर्क-वाई २x, विचूर्ण ६—आँतोंकी ग्रन्थियोंमें जखम होकर रक्त-स्राव और उसके साथ ही बुखारका बढ़ना ; चमकीली जीभ ; मुँहका तीता या सड़ा स्वाद ; गलेमें या दाँतके मसूढ़ेमें जखम ; पीला या हरी आभा लिये दस्त ; जीभ गाढ़े मैलसे ढँकी ; बहुत ज्यादा पसीना , कामला ।

मर्क सायानेटस ६—उपझिल्ली-प्रदाह (डिफ्थीरिया) के साथ सान्निपातिक ज्वर ।

लैकेसिस ३०, २००—जीभ सूखी, काली आभा लिये लाल, जीभ बाहर निकालनेपर काँपती रहती है ; आच्छन्न भाव ; शरीर नीली आभा लिये ; कमर या गलेपर कपड़ा रखना नहीं चाहता है या रख नहीं सकता , मुँह फाड़कर सोता है ; सोनेपर रोग या उसके उपसर्ग सब बढ़ जाते हैं ; नीचेका जबड़ा झूल पड़ता है ; पाखानेमें बहुत बदबू रहती है । (सोरिनम) काले रंगका खूनका स्राव । जिस समय लक्षण सब स्पष्ट नहीं रहते हैं और ये अस्पष्ट लक्षण अब औषध निर्वाचनके

लिये यथेष्ट नहीं होते, उस समय एक मात्रा "लैकेसिस" के प्रयोगसे या तो रोग आरोग्यकी ओर बढ़ता जाता है अथवा दूसरी दवाके लक्षण-समूहोंको स्पष्ट कर देता है।

लाइकोपोडियम १२, ३०, २००—पेट फूलना, कब्जियत, पेटमें गड़गड़ आवाज ; रोगी बहुत कृश, दुबला हो जाता है (मानो बिछावनके साथ मिल गया है); बेहोशी ; पेशाब रुक जाता है या अनजानमें पेशाब होता रहता है।

हैमामेलिस १x—गाढ़ा या हल्के काले रंगका रक्त-स्राव।

कास्टिकम ६—आराम होनेकी ओर बढ़नेवाली अवस्थामें अगर बहुत ज्यादा पेशाब होता हो, तो इससे लाभ होता है।

कार्बो-वेज, ओपियम, सिना, सल्फर, एपिस प्रभृतिके लक्षणोंके लिये—"सविराम ज्वर" के अध्यायमें इन सब दवाओंको देखिये।

टाइफायेडिनम २००—रोग आरम्भ होनेके समयसे रोगके अन्ततक इस दवापर निर्भर किया जा सकता है ; ऐसा सन्देह होते ही कि मियादी बुखार हुआ है, तो इसकी दो-एक मात्रा देना अच्छा है। जिस जगहपर यह बीमारी फैली हो, वहाँ किसीको भी ज्वर आनेपर इस दवाका सेवन करना चाहिये।

हेलिबोरस ६, २००—सन्ध्याके समय ४ बजेसे रातके ८ बजेतक उत्ताप या बुखारका बढ़ना (लाइको) ; मन मराकी तरह भाव, सहजमें ही रंज हो जाना तथा समझानेपर और भी क्रोधित होना ; बेहोशी ; सवाल करनेपर धीरे-धीरे उत्तर देता है, एकाएक चिल्ला उठता है ; अर्थ-शून्य दृष्टि ; आँखकी पुतली फैली, रोशनीमें संकुचित नहीं होती ; ऐसा मुँह चलाता है, मानो कुछ चबा रहा है। लगातार ओंठ और नाक खोंटना (होशमें रहनेकी अवस्थामें—एरम ; कृमिके कारण—सिना) ; माथा तकियेमें गड़ाकर लगातार इधर-से-उधर हिलाया करता

है और हाथसे माथा ठोकता है। अनजानमें श्लेष्मा-मिला मल, काली आभा लिये थोड़ा पेशाब या पेशाबका रुक जाना।

हायोसायमस ६, २००—परिणत अवस्था या अन्तिम अवस्था। गहरी तन्द्रा, पर जागनेपर ठीक-ठीक उत्तर देता है। नाड़ी तेज, भरी और कड़ी ; चेहरा गरम , अंगोंका फड़कना ; रोगीका मन भ्रमसे भरा भूत प्रेत आदिके सपने देखना, जागते ही प्रलाप बकना आरम्भ कर देना, कोई आदमी मौजूद नहीं है, पर उसे उपस्थित समझकर उससे बात करने लगना, शरीरका कपड़ा फेंक देना, नंगे हो जाना, लगातार जननेन्द्रियपर हाथ दिये रहना, अश्लील बातें करना। बोले बिना रह नहीं सकता ; लगातार बड़बड़ाया करता है। अनजानमें पाखाना-पेशाब, बिछावनकी चादर और शरीरके कपड़े नोंचना, दाँत कटकटाना, पेशियोंका आक्षेपिक फड़कना, अकेले रहनेपर डरना, मनमें सोचना कि कहीं कोई विष न खिला दे, कोई विष खिलानेका षडयन्त्र कर रहा है और प्रलाप ; सभी बातें गड़बड़ और असलग्न बोलना।

इग्नेशिया ३०, २००—निराश प्रेम या भयानक शोक-दुःखकी वजहसे बीमारी ; लम्बी साँस लेना ; छातीमें खालीपन मालूम होना ; सहजमें ही दुःखित होना प्रभृति मानसिक लक्षणोंमें विशेष लाभदायक है।

इपिकाक ६, २००—किसी रोगकी पूर्वावस्थामें जलन। भूख न रहना, बेचैनी, मिचली, धीमा बुखार आदि मौजूद रहे, तो यह एक बढ़िया दवा है। रोगकी पहली अवस्थामें मिचली, वमन, पित्तमय मल, उदरमें वायु सञ्चय, सर-दर्द प्रभृति लक्षणोंमें भी यह लाभदायक है।

म्यूरियेटिक एसिड ३०, २००—सुस्ती, निस्तेज भाव, ठण्डा पसीना, जबड़े झूल पड़ना, बिछावनपर नीचे सरक जाना ; बेहोशी ; जीभ सूखी और सुन्न, अनजानमें आप ही-आप पाखाना और पेशाब होना, लगातार शय्यामें नीचेकी ओर सरक जाना, गति सविराम।

नाइट्रिक एसिड ३०, २००—आँतके जखमसे बहुत ज्यादा चमकीला लाल रक्त-स्राव ; पतला, हरा पीव और खून-मिला बदबूदार मल ; पेशाबमें घोड़ेके पेशाबकी गन्ध ; उदरमें अकड़न, सुस्ती आदि लक्षणोंमें लाभदायक है।

नक्स वोमिका ६, २००—मुँहका स्वाद तीता, पित्तमय, पतले दस्त या कब्जियत, चिड़चिड़ा स्वभाव, रातमें जागना और गरिष्ट भोजनकी वजहसे बीमारियाँ ; आक्षेप, पर ज्ञान रहता है ; कमरमें दर्द, शरीरको ढँके रहनेकी इच्छा।

ओपियम ६, २००—गहरी तन्द्रा, तन्द्रासे जगाया नहीं जा सकता ; नाकमें श्वास-प्रश्वासकी घरघर आवाज ; शरीरपर गर्म पसीना ; निचले जबड़ेका झूल पड़ना, चेहरा काला, पेट फूलना, अनजानमें बहुत ज्यादा पेशाब होना या पेशाब रुकना ; आधी खुली आँखें . बिछावनकी चादर नोंचना।

फास्फोरस ३०, २००—प्यास, शीतल पानी पीनेपर घटना ; सारे शरीरमें जलन, सुस्ती, माथा, छाती और उदरमें खाली-खाली मालूम होना, पानी पीनेके कुछ देर बाद वमन, उदरामय, मलमें साबूदानेकी तरह पदार्थ, आँतोंसे रक्त-स्राव। टाइफायड ज्वरके साथ न्युमोनिया।

सोरिनम ३०, २००—यदि दूसरी चुनी हुई दवासे आशाके अनुसार लाभ न हो।

पल्सेटिला ३०, २००—तेल या घीकी बनी चीजें खानेकी वजहसे बीमारी, प्यास न रहना, शरीरके एक पार्श्वमें उत्ताप, दूसरे पार्श्वमें शीतलता, पतले दस्त, एक बारके मलसे दूसरी बारका मल नहीं मिलता, फर्क रहता है, खट्टी डकार, लगातार लक्षणोंका बढ़ना।

स्ट्रैमोनियम ३०, २००—प्रलापादि, मस्तिष्कके विकारके लक्षण सब ; बेलेडोनाके उपसर्गोंकी अपेक्षा ज्यादा प्रचण्ड होनेपर इसका प्रयोग

होता है। होश न रहना, रोगी हाथ-पैर सिकोड़कर सोना पसन्द करता है। पर्यायक्रमसे (एकके बाद दूसरा) प्रलाप और आक्षेप, हाथ-पैरको दाँतसे काटता और दूसरोंको मारना चाहता है ; कड़वा बोलता है। लगातार प्रलाप बका करता है ; रोशनी तथा मनुष्योंके सामने रहना चाहता है। प्रलापके समय दूसरोंको गाली देता है, गाता है, कविता करता है, हँसता है या प्रार्थना तथा अनुनय-विनय किया करता है। असत्य और डरावने सपने देखकर जाग उठता है और मनुष्य तथा रोशनीके पास रहना चाहता है ; सोचता है कि वह दो भागोंमें विभक्त हो गया है या शय्यापर आड़े भावसे सोया हुआ है। आँखें फटी, तुतलाकर बोलता है, दर्द नहीं रहता।

सल्फर ३०, २००—जब कोई दूसरी दवासे भरपूर फायदा नहीं दिखाई देता ; सवेरेके समय पतले दस्त आते हैं, हाथ-पैरोंमें जलन, मलद्वारकी खाल उधड़ जाना, शरीरकी त्वचा रुखड़ी, सोरा-धातु।

जिंकम-मेट ३०, २००—लगातार पैर हिलाना ; बेहोशी, रुक-रुककर चलनेवाली मृदु नाड़ी, निचला जबड़ा झूल पड़ना, लगातार इधर-उधर माथा हिलाना, चेहरा मलिन, समूचे मेरुदण्डमें जलन होनेपर इससे लाभ होता है।

शय्याक्षत—बहुत दिनोंतक बुखारमें पड़े रहनेकी वजहसे रोगीके शरीरमें जख्म हो जाता है, इसीका नाम "शय्याक्षत" (ped-sores) है। लेकेसिस ३ सेवन करनेसे और हाइड्रैस्टिस θ (θ, १ भाग × ४० गुना साफ जल) धावन या कैलेण्डुला θ (१ भाग+साफ पानी) धावनका बाहरी प्रयोग करनेसे शय्याक्षत जल्दी आराम होता है। रोगीकी पीठ, कमर या जिस करवट सोये, उसी तरफ बीच-बीचमें विशुद्ध अलकोहल या बोरिक पाउडर लगा देनेपर शय्याक्षत होनेका डर नहीं रहता।

पथ्यादि—रोगके समय ठण्डा पानी, जवका माँड़, सागू, वार्ली, आरारूट देना चाहिये। पतला दस्त आते हों, तो छानेका जल (whey) अच्छा पथ्य है। वहुत वार रोग आरम्भसे लेकर अन्ततक एक छानेके जलके सिवा और कुछ न दें। रोगी वहुत कमजोर हो जाये, तो प्लेजमन आरारूट (plasmon arrowroot) या माँगुर मछली या सिंगी मछलीका शोरवा या थोड़ा दूध देना चाहिये। रोगीको अकेला न छोड़ना चाहिये। रोगीके कमरेमें हवा आने देना चाहिये और धूना या काली काफी जलानी चाहिये। रोगीके खानेकी चीज और दवाएँ दूसरे घरमें रखनी चाहियें। रोगीको मजवूत रखनेके लिये शराव या मांस या कोई दूसरी उत्तेजक दवा देनेकी जरूरत नहीं ; देनेपर खरावी होनेका भय है। रोगीके कमरेमें भीड़ न होनी चाहिये। रोगीको एकदम विश्राम देना चाहिये तथा यथोचित स्वास्थ्य-विधिका पालन करना चाहिये।

दूसरे-दूसरे बुखारोंकी दवाएँ और "मस्तिष्क-आवरक-झिल्ली-प्रदाह" (meningitis) और "संक्रामक या स्पर्शाक्रम रोग और उन्हें दूर करनेके उपाय" देखिये।

मोह-ज्वर (Typhus)

यह वहुत फैलनेवाला और संक्रामक रोग है। एकाएक सिहरावन होकर (१०३ से १०५ डिगरी) और उसके साथ ही सरमें दर्द शुरू होता है। तुरन्त ही रोगी 'वेहोश' हो जाता है और देखते-देखते उनका शरीर काला या नीला हो जाता है। चौथे दिन बुखार खूव वढ़ जाता है और कभी रोगीका ज्वर छूट जातस है। ५-६ दिनोंमें वदनपर छोटी-छोटी वैंगनी रंगकी फुन्सियाँ निकल आती हैं (कभी-कभी इन फुन्सियोंमें खून भी निकलता)। इस वुखारका भोग-काल दो हफ्ता है। इस

रोगके साथ अकड़न, वायुनली-प्रदाह या फेफड़ेका रोग हो जाये, तो समझना चाहिये कि बीमारी बढ़ गयी।

संक्षिप्त चिकित्सा—ज्वराधिकारमें (ऐकोन, ब्रायोनिया, जेल्स, बेप्टिशिया), मस्तिष्कके उपसर्गमें (बेल, हायोसा, स्ट्रैमो, विरेट्रम-विर, टेरिविन्थ—मूत्र-विकारसे उत्पन्न रोगमें); नींद न आनेपर (काफिया, बेल, जेल्स), बेहोशीकी अवस्थामें (ओपि, रस-टक्स), गहरी सुस्तीमें (एसिड फास, आर्स, एसिड-म्यूर), फेफड़ेपर रोगका आक्रमण होनेपर (ऐकोन, ब्रायो, फास); खून दूषित होनेपर (आर्सेनिक, कार्बो वेज, रस-टक्स, बेप्टीशिया), आरामकी ओर आनेपर (एसिड फास, एसिड नाई, चायना, सल्फर, सोरिनम)।

रस टक्स ३, ३०—सहज साध्य मोह-ज्वरमें कोई विशेष उपसर्ग न रहनेपर।

आर्निका ६, २००—गहरी बदहवासी; बैंगनी रंगकी फुन्सियाँ रहनेपर।

लैकेसिस ६, २००—खून खराब होनेके लक्षणमें।

पेगरिकस ३—बहुत बेचैनी, पेशियोंका सिकुड़ना और काँपना लक्षणमें।

टाइफायड ज्वर, वायुनलीका प्रदाह और फेफड़ेका प्रदाहकी दवाएँ और आनुषंगिक चिकित्सा देखिये।

पौनःपुनिक ज्वर

(Relapsing Fever)

जिन्हें पेटभर भोजन नहीं मिलता है, जो बहुत अभावग्रस्त हैं, गन्दी बदबूदार जगहोंमें रहा करते हैं, साधारणतः उसमें ही यह रोग अधिक हुआ करता है। साधारण ज्वरमें किनाइन सेवन करनेके कारण यह रोग हुआ करता है।

१९०३ ईस्वीमें डा० ओवरमियाने जब रोगीके खूनकी परीक्षा की, तो उसके खूनमें "स्पिरिल्लाम" या "स्पिरोकिटो" नामक एक प्रकारका जीवाणु दिखलाई पड़ा—जीवाणु ज्वरके आक्रमणके समय ही खूनमें दिखलाई पड़ता है। ज्वर छूट जानेपर ये जीवाणु नहीं मिलते हैं। इसलिये बहुत दिनोंतक आनेवाले ज्वरोंका यह भी एक कारण मान लिया गया है। खटमल ही इसका ले जानेवाला है।

मोह-ज्वरकी भाँति इसमें भी एकाएक बदनमें जाड़ा लगकर तेजीसे जोरका बुखार आ जाता है। पहले छः-सात दिनोंतक बुखार रहता है, इसके बाद हफ्ताभर बुखार नहीं रहता। फिर बुखार आता है और एक हफ्ते ठहरकर छूट जाता है—हफ्ताभर फिर नहीं रहता। बुखार छूटते वक्त बहुत पसीना होता है। इस तरह चार-पाँच बार बारम्बार बुखारका हमला होता और छूटता है। इसका नाम "पौनःपुनिक" (बार-बार आनेवाला) बुखार है। बदन, हाथ-पैर और माथेमें बहुत तेज दर्द, प्यास, खट्टी बदबू-भरा पसीना, कै (कभी-कभी खूनकी कै), कामला, बढ़ी हुई प्लीहा वगैरह इसके प्रधान लक्षण हैं। शरीरकी गर्मी १०४°—१०५° ; नाड़ी पूर्ण, उछलती हुई, नाड़ीका वेग ११°—१४° बार ; भोग-काल अनिश्चित।

चिकित्सा—ब्रायोनिया ३x, ६—सरमें दर्द या देह तथा हाथ-पैरमें दर्द ; हिलने-डुलनेसे दर्द बढ़ता है।

इपिकाक ३x, ३—कै या मिचली।

आर्सेनिक ३x, ३—तेज और क्षीण नाड़ी, गहरी सुस्ती और बेचैनी रहनेपर।

बैप्टीशिया १x—पाकाशयकी गड़बड़ीमें।

युपेटोरियम-पर्फ ३x—हाड़ोंमें कष्टकर दर्द (वातके दर्दकी तरह दर्द) रहनेपर।

रस-टक्स ३—बेचैनी और रोगी हमेशा हिलता-डुलता रहता है लक्षणमें ।

मोह ज्वर और टाइफायड ज्वरकी दवाएँ और आनुषंगिक चिकित्सा देखिये ।

हवा पानी बदल देनेपर यह "विषम-ज्वर" बहुत बार अच्छा हो जाता है ।

डेंगू-ज्वर (Dengue)

१८७२ ईस्वीके मध्य भागमें और १९११ ईस्वीके आखीरमें यह रोग कलकत्ता और बंगालके बहुतसे स्थानोंमें फैल गया था ।

सब शरीरमें (खासकर जाडोंमें) तेज दर्द और हल्के जाडेके साथ यह डेंगू बुखार शुरू होता है । देखते-देखते सरमें दर्द, कभी-कभी कै, कँपकँपी, इसके बाद बहुत गर्म हो जाना (१०२ से १०६ डिगरीतक), बदन कहा-कही सूज उठता है, किसी-किसीको पनसाहा माताकी तरह फुन्सियाँ निकलती हैं, चेहरा लाल, भूखका न लगना, कब्जियत, कभी कामला प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं । तीन-चार दिनोंसे लेकर एक हफ्ता (कभी-कभी तीन हफ्ता) यह रहता है । कभी-कभी रोग अच्छे होनेके समय व लक्षण सब कुछ हल्के ढगसे फिर दिखाई देने लगते हैं, कभी कभी गहरी सुस्ती और श्लैष्मिक-झिल्लियोंसे रक्त-स्राव होने लगता है । इस रोगका कारण अभीतक निर्णय नही हुआ । रोग अच्छा हो जानेपर भी रोगीको बहुत कमजोरी मालूम होती है । कोई-कोई कहते हैं कि छुआछुतसे ही यह बीमारी फैलती है । सब देशोंमें, सभी ऋतुओंमें और सभी अवस्थाओंके लोगोंको यह हो सकता है ।

हालही कलकत्ताके "Tropical Medicine" स्कूलके अध्यापक डा० मिगो Megaw (Lt Col I M S) कहते हैं कि डेंगू रोगके

साथ "पीले बुखार" का बड़ा घना सम्बन्ध है और "Spirochoetes" नामके जीवाणु सम्भवतः इस रोगके खास कारण हैं। [Indian Medical Gazette, सेप्टेम्बर १९२३ पृष्ठ ४०१ देखिये।]

इस रोगके साधारण आक्रमणमें अकसर दवा खानेकी जरूरत नहीं पड़ती, उपवास करनेसे ही बीमारी अच्छी हो जाती है।

चिकित्सा—रोगकी पहली अवस्थामें "जेल्स" θ—३x या बैप्टीशिया ३x सेवन करना चाहिये। इसके बाद "युपेट-पर्फ" १x (हड्डियोंके दर्दमें) या "सिमिसिफ्यूगा" ३x या "आर्स" ३x फायदेमन्द हैं और अन्तमें बहुत सुस्ती वगैरह उपसर्ग मालूम हों, तो एसिड-फास ३ या कार्वो-वेज ३० देना चाहिये। 'कार्वो-वेज' ३०—माथा गर्म; परन्तु सब शरीर ठण्डा हो जानेपर प्रयोग करना चाहिये।

एकोनाइट १x—रोगकी पहली अवस्थामें, तेज बुखार (१०४°—१०५°) के लक्षणमें।

बेलेडोना ६—लाल रंगकी फुन्सियाँ या सरमें दर्द।

ब्रायोनिया ३, ६—बदनमें दर्द, पसीना, सरमें दर्द (खासकर माथेके पीछेकी ओर), कब्जियत, बहुत पसीना।

युपेट-पर्फ १x—हड्डियोंमें बहुत दर्द रहनेपर।

लैकेसिस ६ या **क्रोटेलस** ३—खूनके स्रावके लक्षणमें।

रस-टक्स ३—उद्भेदोंके साथ ज्यादा सर्दी रहनेपर। हाथ-पैरोंमें ऐंठन या गठिया रहनेपर।

जेलसिमियम १x—हल्का बुखार होनेपर।

आर्सेनिक ६—अतिसार हो जानेपर।

इन्फ्लुएंजा रोगके लक्षणोंके साथ इस रोगके लक्षण बहुत कुछ मिलते हैं, इसलिये इन्फ्लुएञ्जा रोगकी दवाएँ देखनी चाहिये। दूसरे-दूसरे ज्वरोंकी दवाएँ देखिये।

पीत ज्वर (Yellow Fever)

आजकल यह भयानक रोग धीरे धीरे कलकत्तामें अपना अधिकार फैला रहा है। १६१५ ईस्वीमें चिकित्सा विभागके डाइरेक्टर-जेनरलके इच्छाके अनुसार मेजर क्रस्टोफार्सने कलकत्ता शहरकी बहुत-सी जगहोंकी मच्छरोंकी परीक्षाकर सिद्धान्त स्थिर किया है कि "बन्दर मच्छर" नामका एक प्रकारका मच्छर इस पीले बुखारको फैलाता है। ये मच्छर जहाज और नावोंमें बहुत पैदा होते हैं, इसलिये इन्हें "बन्दर-मच्छर" कहते हैं। जब अमेरिकाकी पनामा नामकी नहर बनी, उसी समयसे जहाजोंके साथ मच्छर कलकत्तामें आ पहुँचे।

पीत ज्वर एक तरहकी नयी लरछुत बीमारी है, गर्म देशोंमें (खासकर दक्षिण अमेरिका, युक्त-राज्यका दक्षिणी अंश, पश्चिम भारतके टापू, पश्चिम अफ्रिका और भूमध्य-सागरके जनपदोंमें) खासकर यह बुखार आता है। "स्टैगोमिया" (stegomya) नामक शायद एक तरहका मच्छर है, जो कि इस "रोगका बीज" या "जहर" फैलाता है। इस भयानक रोगसे ऐलोपैथिक चिकित्साके अनुसार सैकड़े ८५ मनुष्य मरते हैं, परन्तु होमियोपैथिक इलाजसे बहुत अधिक फायदा दिखाई दिया है। इस रोगकी एकके बाद दूसरी, इस तरह चार अवस्थाएं दिखाई देती हैं —

(१) अंकुरावस्था (period of incubation), (२) ज्वरावस्था (febrile stage), (३) विज्वरावस्था (stage of remission) और (४) पतनावस्था (staga of collapse)। इसके ठहरनेका समय या 'स्थितिकाल' बुखारकी आरम्भावस्थासे पतनावस्था या अन्तिम अवस्थातक सात आठ दिन है।

अंकुरावस्था—स्वस्थ शरीरमें इस रोगका बीज घुसनेसे लेकर १ से ५ दिनातक यह अंकुर अवस्था रहती है, सुस्ती, भूख मन्द और

मिचली इसके प्रधान लक्षण हैं। "इपिकाक" ३ (तेज मिचली हो, तो) या "आर्सेनिक" ६ (सुस्ती ज्यादा होनेपर) इस अवस्थाकी प्रधान दवाएँ हैं।

ज्वरावस्था—जाड़ा लगना, कँपकँपी होना, तेज बुखार (बदनकी गर्मी १०१°—१०६°), नाड़ी तेज, चेहरा उदास, बदनमें दुर्गन्ध, सरमें जोरोंसे दर्द, शरीरमें जगह-जगह दर्द, पेशाब थोड़ा और कब्जियत, बेचैनी, विकार प्रभृति—ये 'ज्वरावस्था' के प्रधान लक्षण हैं। "स्पिरिट कैम्फर" ३ (तेज जाड़ा और कँपकँपीके लक्षणमें); "ऐकोनाइट" ३x (प्रबल ज्वर); "बेलेडोना" ३ (बुखारके साथ तेज दर्द); "सिमिसिफ्यूगा" ६ (बदनमें बहुत तेज दर्द); "ब्रायोनिया" ३ या "जेल्स" ३x (बुखार २४ घण्टोंमें यदि कुछ भी कम न हो) या "इपिकाक" ३ (बहुत कै या मिचली) इस अवस्थाकी प्रधान दवा है। २४ से लेकर ६० घण्टेतक बुखार झेलनेके बाद विज्वरावस्था आरम्भ हो सकती है।

विज्वरावस्था—दर्दसे छुटकारेके साथ "बुखारका छूटना" इस अवस्थाका लक्षण है। अच्छी तरह सुश्रूषा होनेपर रोगी जल्दी अच्छा हो जाता है और पतनावस्था नहीं आती; परन्तु नींद न आना, अजीर्ण या राक्षसी भूख, शरीरका पीला होना वगैरह जीवनी-शक्तिके घटनेका लक्षण इस अवस्थामें मौजूद रहना—खतरेकी बात है। "काफिया" ६ (नींद न आनेके लक्षणोंमें); "मर्क" (बदन पीला होना ; "आर्सेनिक ३ या ३० (गहरी सुस्तीमें) इसकी उत्कृष्ट दवा है। दो-एक दिनोंमें या तो रोगी धीरे-धीरे ताकत पाकर आरोग्य हो जायगा, नहीं तो बुखार आदि उपसर्ग फिर आकर "पतनावस्था" आ जायगी।

पतनावस्था—"बदनका चमड़ा पीले रंगका", बहुत कै या मिचली, गला और पेटमें जलन, काली कै, कुछ काले खूनके साथ श्लेष्माका दस्त-कै, काला पेशाब, शरीरके कई स्थान या यन्त्रोंसे "रक्त-स्राव", हिमांग, पेशाब बन्द, "गहरी अवसन्नता" प्रलाप, हिचकी, ऐंठन,

बदहवासी या बेहोशी वगैरह अवसन्न-कालके उपसर्ग पतनावस्थामें दिखाई देते हैं। "कोटेलस" ३, ६ इस अवस्थाकी सबसे बढ़िया दवा है। "कैडमियम सल्फ" ३, ३० काले रंगकी कैके लक्षणमें अधिकतर लाभदायक है। आर्सेनिक ३x—६ की भी कभी-कभी जरूरत पड सकती है। यह अवस्था तीन-चार घण्टोंसे ज्यादा नहीं ठहरती।

प्रतिषेधक चिकित्सा—वेप्टी θ, १x या सिमिसि ३, ६।

कई प्रधान दवाओंके लक्षण—रुबिनीका कैम्फर (एक एक बून्द दस-पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर) बुखारवाली अवस्थाके शुरूमें और तेज तथा बहुत देरतक ठहरनेवाला जाडा और 'कँपकँपी' के लक्षणमें।

ऐकोनाइट १x, ६—ज्वरावस्थासे जाडा लगनेके बाद शरीरकी गर्मी १०२° या उसके ऊपर होना, बदन लाल, रुखडा और नाडी भरी, कडी और तेज, बहुत प्यास, चेहरा लाल, सरमें दर्द, श्लेष्मा और पित्तकी कै।

बेलेडोना ३, ३०—दिमागमें खून अधिक हो जानेके लक्षणमें (जैसे—आँखे लाल, कपालकी नसें फूली, नाडी भरी और तेज, प्रलाप, कटकटानेकी इच्छा)।

ब्रायोनिया ३—पाकाशयकी गडबडीके लक्षणमें (जैसे—जीभ सादी या पीली, ओठ सूखे, कब्जियत, कै या कै करनेकी इच्छा होती है)।

ऐण्टिम-टार्ट ३ विचूर्ण ६—तकलीफ देनेवाली मिचली देरतक बनी रहे।

आर्सेनिक-ऐल्ब ३, ६—पतनावस्थामें खासकर जब विकार दिखाई दे, ऐसे लक्षणोंकी यह एक बढ़िया दवा है। मुँह पीला या नीला, नाकका अगला भाग पतला और ठण्डा ; जीभ सूखी, धुमैली या काली, जल्दी-जल्दी "बहुत सुस्त" हो जाना, खाने-पीने बाद ही कै, बार-बार जोरसे कै, मृत्युका डर, पेटमें दर्द (परिमाणमें थोडा) और

जलनके साथ या बून्द-बून्द पेशाब, पेशाबमें कष्ट ; हिमांग, ठण्डा और लसदार पसीना ; मूत्राशय या जरायुसे रक्त बहना लक्षणमें लाभदायक है।

क्रोटेलस ३—पतनावस्थामें 'रक्त-दोष' के लक्षणमें (जैसे—ताकतका घटना, आँखें लाल, नाक, पाकाशय, आँत और रोएँके छेदोंसे (लोमकूप), शरीरके सब जगहोंसे खून बहना, खूनका पसीना, वदनका चमड़ा और आँखें पीली पड़ जाना।

लैकेसिस ६—'स्नायु-दोष' के लक्षणमें (जैसे—काला रक्तस्राव, गहरी सुस्ती, जीभ सूखी और काँपती हुई, प्रलाप, काले रंगका पेशाब पेटपर कपड़ा न रख सकना)।

कंडमियम-सल्फ ३, ३०—पाकाशयमें जलन और कतरने-जैसा दर्द, साँस बन्द करनेवाली मिचली, तेज कै या कै करनेकी इच्छा, काली कै।

आर्ज-नाई ३, कैन्थरिस ३x (मूत्ररोध या मूत्रकृच्छ्रतामें), काफिया ६ (नींद न आती हो), सिकेलि ३x (गर्भ गिरनेकी आशंकामें), फास्फोरस ३ (क्रोटेलस और लैकेसिस प्रयोग करनेपर अगर कमला और रक्त-स्राव न बन्द हो), विरेट्रम-ऐल्व ६, मर्क-सोल ३, जेल्स ३x और रस-टक्स ३ सान्निपातिक लक्षणमें), कार्बो-वेज ३० (पतनावस्थामें) वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार दी जा सकती हैं।

बायोकेमिक मतसे इलाज—फेरम-फास १२ विचूर्ण (बुखारकी हालतमें); नेट्रम-सल्फ ३ विचूर्ण (सविराम पैत्तिक ज्वरमें, पित्त अधिक या हरी आभा लिये पीला, घासके रंगकी या काजी कै होनेके लक्षणमें) और कैलि-फास ३x (पतनावस्थामें निस्तेज भाव या हरी आभा लिये नीले या काले रंगकी कै और स्राव आदि लक्षणोंमें दिया जाता है)।

आनुसंगिक चिकित्सा—हवा आने-जानेवाले कमरेमें रोगीको खूब साफ सुथरा रखना चाहिये। रोगीका पाखाना, पेशाब, कै आदि मकानसे दूर मिट्टीके नीचे गाड़ देना चाहिये और रोगीके कपड़े तथा बिछावनके वस्त्र शुद्ध कर डालना चाहिये। कम्प अवस्थामें—खूब गर्म पानीमें थोड़ा-सा सरसोंका चूर मिलाकर उससे फुट-बाथ देना चाहिये। अगर बुखार खूब तेज हो, तो इस अवस्थामें भी गर्म जलसे बदन पोंछ देना अच्छा है। यदि कब्जियत ज्यादा हो, तो साबुनके पानीकी पिचकारी देनेसे लाभ हो सकता है। ज्वरकी हालतमें पानी या कागजी नीबूका रस पथ्यके रूपमें देना चाहिये और बुखार उतर जानेपर पानीकी बार्ली, छेनेका पानी, पानीके साथ थोड़ा ताजा दूध दिया जा सकता है और पतनावस्थामें अगर रोगी एकदम सुस्त हो जाये, तो ह्विस्की, शेम्पेन, ब्रांडी वगैरह उत्तेजक शराब पथ्यके रूपमें देनेकी जरूरत पड़ सकती है। पतले पदार्थके सिवा दूसरी चीजें खानेको देना मना है। रोगीको हमेशा लेटे रहना चाहिये। उठना अच्छा नहीं होता, इसमें खतरा रहता है।

ग्रन्थि-शोथ ज्वर

(Glandular Fever)

यह एक तरहकी बच्चोंकी लत्तुर बीमारी है। तेज (१०३°) बुखारके साथ गला कुछ लाल हो जाता है। गले तथा नाककी गाँठें फूलती हैं और दर्द होता है। यकृत और प्लीहा बढ़ जाती है, भूख नहीं लगती—ये ही इस बुखारके प्रधान लक्षण हैं। बुखार बहुत थोड़े दिनोंतक रह सकता है; परन्तु गाँठोंकी सूजन और वृद्धि दो-तीन हफ्तेतक भी रहती है। किसी-किसी बच्चेको यह रोग बार-बार हुआ करता है। इस रोगका कारण अभीतक निर्णय नहीं हुआ)। यह ज्वर एकाएक

आरम्भ होता है। जिन्हें बचपनमें यह रोग होता है, बड़े होनेपर उन्हें अकसर यक्ष्मा रोग हो जाया करता है।

चिकित्सा— बुखारकी अवस्थामें ग्रन्थियाँ सूज उठें, तो बेलेडोना ३x। जिन लड़कोंका पोषण अच्छी तरह नहीं होता या जो मोटे होते हैं और जिन्हें सहजमें ही पसीना हो जाता है, उन्हें कैल्केरिया-कार्ब ६, ३० लाभदायक होता है। जिन्हें बार-बार यह रोग हो, उन्हें कई महीनोंतक बीच-बीचमें कैल्केरिया खिलाते रहनेपर फायदा होता है। बुखार छूट जानेके बाद यदि ग्रन्थियाँ फूली रहें, तो फाइटोलैका ३, ३० देना चाहिये। यदि पीव हो जाये, तो हिपर-सल्फर ६, पीव निकल जानेपर सिलिका ६ देनी चाहिये और कैलेण्डुला (θ १ भाग+जल ८ भाग) देकर धोना चाहिये। पुराने रोगमें बैसिलिनम ३०, आर्स-आयोड ३x, ३०, कैलि-आयोड १x, ३०, कैल्के-आयोड ३, बैराइटा-कार्ब ६, प्रभृति दवाएँ लाभदायक होती है।

बच्चोंके खाने-पीने तथा स्वास्थ्यके नियमोंपर ध्यान रखना चाहिये।

खसरा या छोटी माता
(Measles)

यह स्पर्शाक्रमक (लरछुत) रोग है। बच्चोंको ही यह बुखार हुआ करता है. कभी-कभी इसका हमला बड़ोंपर भी होता है, पर होनेसे ही बहुत तेज हो जाता है; जाड़े या वसन्त ऋतुमें यह बीमारी होती है। इसका विष शरीरमें फैलनेके १०-१२ दिन बाद सर्दी, खाँसी और छींके आने लगती हैं। नाकसे पानी गिरता है; आँखें लाल और पानी भरी रहती हैं; कपालमें दर्द, स्वरभंग मिली खाँसी; सरमें दर्द; पीठ और हाथ-पैरोंमें दर्दके साथ बुखार शुरू होता है। इसके तीन-चार दिन बाद खसरा निकलना आरम्भ होता है। खसरा पहले चेहरेमें,

पीछे गर्दन और छाती और अन्तमें सब शरीरमें निकल आता है ; तीन-चार दिन रहनेके बाद यह आप-ही-आप मिट जाता है और साथ-साथ बुखार भी छूट जाता है। यदि यह बुखार एकाएक बढ़ जाये, ताप १०३ से १०६ डिगरीतक बढ़कर रोगको बढ़ा दे, तो रोगी उसी समय अट-सट बकने लगता है और तन्द्रामें जा पड़ता है। अरुचि, कै या मिचली, कब्ज या पतले 'दस्त, श्वासनलीका प्रदाह, फेफड़ेका प्रदाह, साँसमें कष्ट आदि लक्षण दिखाई देने लगते हैं। किसी-किसी रोगीको अतिसार या रक्तातिसार होकर जीवन संकटमें जा पड़ता है। खसरेका बैठ जाना या बहुत ज्यादा काला या लाल होना बुरा लक्षण है ("सङ्क्रामक और स्पर्शाक्रमक रोग और उन्हें दूर करनेका उपाय" देखना चाहिये)।

आरम्भिक बुखारमें—ऐकोन ३x खिलाना और गर्म पानीसे बदन पोंछ देना।

खसरा निकल आनेपर—पल्स, जेल्स, युफ्रेशिया (नाक और आँखोंसे बहुत स्राव), एलियम-सिपा।

गोटियाँ अच्छी तरह बाहर न निकलनेपर—बेल (नींदमें औंघाना या चौंक उठना) पल्स (पाकाशयकी गड़बड़ी), ऐमोन-कार्ब (फिर रोग होनेकी आशंका होनेपर) गर्म पानीसे बदन पोंछ देना चाहिये।

खसराके दाने बैठ जानेपर—ब्रायो, जेल्स, ऐमोन-कार्ब, जिंकम, सल्फर।

कष्टकर खांसीके लक्षणमें—कैलि-बाई, स्पञ्जिया, बेलेडोना, इपिकाक, ब्रायो, ऐन्टिम-टार्ट।

बीमारी बढ़ जानेपर—कैम्फर, आर्स, एसिड म्यूर, फास्फोरस, बेलेडोना, रस-टक्स।

प्रतिषेधक—(जब खसरा रोग विशेष रूपसे फैला हो) मार्बिलिनम ३०—२०० रोज एक बार सेवन करना चाहिये। F A. Bœricke and F.P Anshutz—इन दोनों डाक्टरोंका कहना है कि घरमें किसी बच्चेको खसरा निकल आनेपर, जिन्हें न निकला हो, उन बच्चोंको दिनमें तीन बार पल्सेटिला ३ सेवन कराना उत्तम प्रतिषेधक उपाय है।

चिकित्सा—सामान्य खसराके ज्वरमें दवाकी जरूरत नहीं पड़ती है।

मार्बिलिनम ३०, २००—रोगके आरम्भसे अन्ततक यही दवा खिला दी जाये, तो दूसरी दवाओंकी जरूरत नहीं पड़ती; खास मौकोंपर :—

एकोनाइट—१, ३—तेज बुखार, पूर्ण, कड़ी और तेज नाड़ी, बार-बार छींक; जलभरी आँखें; कपालमें दर्द; सूखी खाँसी; गलेमें सुरसुराहट, कब्ज, छातीमें दर्द बेचैनी और तेज प्यास।

पल्सेटिला ३, ६—शामको और रातमें खाँसीका बढ़ना; गला घरघराना; नाकसे गाढ़ा श्लेष्मा या खून गिरना, पतले दस्त; पाकाशयकी गड़बड़ी; प्यास न रहना या थोड़ी प्यास। हमने अपने देशमें पल्सेटिला खिलाकर कितने ही रोगियोंको चंगा किया है। डा० Mills कहते हैं कि यह खसरा ज्वरकी सभी अवस्थाओंमें और सर्दी, अतिसार वगैरह सब तरहके उपसर्गोंमें फायदा करता है।

जेलसिमियम १x, ३—खसरा बैठकर तेज बुखार और सर्दी वगैरह उपसर्ग हों, सभी विषयोंमें रोगी उदासीन रहता हो, तो इस दवासे विशेष लाभ होता है।

ब्रायोनिया ३x, ३०—सूखी और कष्ट देनेवाली खाँसी; खसरेका बैठ जाना।

कैलि-बाई २ विचूर्ण—खाँसी, ब्राकाइटिस (वायुनली भुज-प्रदाह) में यह फायदा करता है।

आर्सेनिक ६, ३०—दाने काले रंगके निकलनेपर और पाकाशयकी गड़बड़ीमें यह लाभदायक है।

विरेट्रम-विरिडि θ, २x—खसरा अच्छी तरह न निकलनेके कारण अकड़न पैदा हो जाये, फेफड़ेमें खून जमा होता हो वगैरह लक्षणोंमें यह लाभदायक है।

कैम्फर θ—सब शरीर ठण्डा और नीला, बहुत सुस्ती या पतनकी अवस्था (एक एक बून्द बार बार खाना चाहिये)।

ऐण्टिम टार्ट ६, **फास्फोरस** ६—वायुनली या फेफड़ेपर हमला होनेपर।

बेलेडोना ३, ६—नाड़ी भरी, कड़ी, आँखें और चेहरा लाल, खाँसनेके समय स्वरनलीमें दर्द स्वरभंग माथा गर्म तन्द्रामें पड़े रहना या नींद एकाएक चौंक उठना।

यदि आँख, नाकसे पानी गिरे, तो युफ्रेशिया ३, कै या ओकाईके साथ हरे रंगके आमयुक्त पतले दस्त और सूखी खाँसी रहनेपर इपिकाक ३, रोग घटनेके बाद सूखी खाँसी मौजूद रहे, तो फास्फोरस ६, ढीली खाँसी और गला घरघर करे, तो ऐण्टिम-टार्ट ६x विचूर्ण, कर्ण-प्रदाहमें—फेरम फास ६x विचूर्ण कानमें पीब होनेपर—कैल्केरिया पाइक्रेटा ३x विचूर्ण खसरा अच्छी तरह न निकले या बैठ जाये तो ब्रायोनिया ३, जेल्स १x या जिंकम ६, रातमें बहुत पसीना और कमजोरीके लक्षणमें आर्स आयोड ३x, खसरा बैठ जाये, और ऐंठन हो तो क्यूप्रम ६ नाक मुँहसे पतले पानीकी तरह खून निकले, तो क्रोटेलस ६। हलियोरस ३, सल्फर ३०, विरेट्रम ६ और रस-टक्स ३ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। "मस्तिष्कावरक-झिल्ली प्रदाह" (meningitis) देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—हल्के गरम पानीसे शरीर धोकर सूखे कपड़ेसे पोंछ देना चाहिये। शरीरमें ठण्डी हवा लगना उचित नहीं है। पल्सेटिला ६ खानेसे सर्दी और अतिसार आरम्भ हो जाता है। बुखारकी हालतमें ठण्डा पानी, वार्ली, मिश्री और आरारूट पथ्यके रूपमें देना चाहिये।

चेचक या शीतला (मसूरिका)
(Small Pox)

यह बहुत ही लरछुत और फैलनेवाली बीमारी है। इसका बीज (जहर या कीटाणु) देहमें घुसनेके कारणसे ही चेचक रोग होता है। चेचक या शीतलाके बीजाणु इतने छोटे होते हैं, कि खुर्दबीनके सहारे भी आजतक दिखाई न दिये ; इसीलिये आजतक चेचकके जीवाणुओंका पता नहीं लगा। हवा और मक्खियोंके द्वारा यह विष एक जगहसे दूसरी जगह जा पहुँचता [परिशिष्ट (ग) अध्यायमें (४) अङ्क देखना चाहिये]। एक वार चेचक होनेपर फिर दुवारा नहीं होता। यह खासकर दो तरहकी होती है—संयुक्त चेकक और असंयुक्त चेचक।

संयुक्त चेचक—दो तीन या इससे भी अधिक गोटियाँ एक साथ जुड़ी रहें तो उन्हें "संयुक्त चेचक" कहते हैं, ये गोटियाँ पक जाती हैं और इनसे पीव पैदा हो जाता है। चेहरा, गला, माथा और नाकके भीतर गोटियाँ होनेपर रोग सांघातिक हो सकता है। चेचकका बीज या विष शरीरमें जानेके ११-१२ दिन वाद बुखार (शरीरका ताप १०३°—१०७°) आता है। इस बुखारमें जाड़ा, दाह, सब बदनमें दर्द, कै वगैरह उपसर्ग होते हैं, बुखार आनेके २-३ दिन वाद गोटियाँ निकल आती हैं और बुखारकी तेजी भी कम जो जाती है। ५-६ दिनोंमें इन गोटिनोंमें पानी भरता है और पीव हो जाता है। उस

समय शरीरका ताप फिर १०३°—१०८° हो जाता है और ९-१० दिनमें बुखार बहुत ज्यादा हो जाता है, तो रोगीकी मौततक हो सकती है।

असंयुक्त चेचक—यदि गोटियाँ अलग-अलग निकलें तो उन्हें "असयुक्त चेचक" कहते हैं। इसमें ऊपर लिखे सभी लक्षण रहते हैं, पर बुखार उतना तेज नहीं होता।

प्रतिषेधक—अगरेजी इलाजके मतसे* टीका (vaccination) लेना। साधारणतः बाँह छेदकर चेचकका बीज शरीरमें डाल दिया जाता है, पर आजकल होमियोपैथिक चिकित्सक वैक्सिनिनम, वैरियोलिनम या मैलेण्ड्रिनम खिलाकर टीका देते हैं। हाथमें छेदकर टीका देनेपर जो लाभ होता है, वेरियोलिनम आदि दवाएँ खिलानेपर भी वही लाभ होता है। इतना अवश्य होता है कि पहले ढंगसे टीका देनेके कारण जो हानियाँ होती हैं, वे इससे नहीं होतीं। अमेरिकाके युक्त राज्यमें कितनी ही जगह इस उपायसे टीका न दिया जाये, इसलिये

---

* अच्छे शरीरमें गो-बीज या चेचकका बीज (विष) प्रवेश करनेका नाम टीका लेना है। दो तरहसे टीका लिया जाता है :—(१) यन्त्रकी सहायतासे शरीरमें (खासकर बाँहमें) जखमकर वह विष खूनमें मिला दिया जाता है। (२) यह विष होमियोपैथिक क्रम पद्धतिके अनुसार शक्तिकृत रूपमें सेवन कराया जाता है। पहले तरहसे टीका लेनेपर समस्त विष शरीरमें फैल जाता है, इस वजहसे बहुत सी बीमारियाँ होती हैं। डाक्टर बर्नेटने मुझा व्यवहार कर वसन्त बीजसे दूषित बहुतसे रोग आराम किये हैं। सिलिका ३०, मेजेरियम २००, मैलिन्ड्रिनम (सैलिन-स्यूर) २०० वगैरह दवाएँ बीच-बीचमें आवश्यक हो सकती हैं। दूसरी तरहके टीकासे कोई बुराई होनेका डर नहीं रहता, क्योंकि होमियोपैथिक मतसे शक्तिकृत होनेपर विकार विषैला दाँत टूट जाता है।

किसी-किसीने नालिशतक भी कर दी है ; परन्तु इस विचारमें स्थिर हुआ, है, कि दोनों तरफसे टीका देना कानूनसे जायज है। इङ्गलैण्डमें होमियोपैथिक दवा खिलाकर टीका लेना अवतक कानूनी नहीं माना गया है। भूतपूर्व राजा भारत सम्राट सप्तम एडवर्डको अन्तिम समयमें ऐसी ही दवा खिलाई गयी थी। वैक्सिनिनम ३०, वेरियोलिनम ३० या मैलेण्ड्रिम ३० नित्य दो वार, अन्दाजन दो सप्ताहतक खाना चाहिये। ये दवायें खानेके कारण जवतक बुखार न हो जाय या किसी तरहकी बीमारी न हो, तबतक समझना चाहिये कि इस दवाने अपना काम नहीं किया और अभी टीका नहीं लगा, परन्तु अमेरिकाके बहुतसे विद्वान डाक्टरोंका मत है कि—"वैक्सिनिनम ६x चूर्ण एक मात्रा सेवन करनेसे ही टीकाका काम हो जाता है ; बल्कि टीका देनेसे जो हानि होनेकी सम्भावना रहती है, वह नहीं होती। यदि चेचक खूब फैल जाये, तो भले-चंगे आदमियोंको वेरियोलिनम ३०, हफ्तेमें दो-एक वार खा लेनेसे ही रोग होनेका डर नहीं रहता और यदि चेचकका रोगी इसे खाये तो कठिन बीमारी बहुत कुछ हल्की हो जाती है।

—बोरिक एण्ड टेफल

इसलिये, चेचकी बीमारी शुरू होनेके समय मैक्सिनिनम ६x चूर्ण एक ग्रेन एक वार खाना चाहिये या वैक्सिनिनम ३०, वैरियोलिनम ३० या मैलेण्ड्रिनम ३० सप्ताहमें कम-से-कम एक मात्रा अवश्य खाना चाहिये। दाँत निकलनेके पहले ही वच्चोंको टीका दिलानेका नियम है। यदि वच्चा निरोग न हो या किसी दूसरे कारणसे उसे टीका न दिया जाये, तो वैक्सिनिनम ६ एक मात्रा बीच बीचमें खिला देनेसे टीकाका मतलब निकल जायगा। गधीका दूध पीना या शरीरमें मलना भी शायद वढ़िया प्रतिषेधक है, इसीलिये शायद शीतला देवी गर्दभवाहिनी कहलाती हैं। "संक्रामक और स्पर्शाक्रमक रोग और उनके हटानेके उपाय" अध्याय देखिये।

आरम्भके बुखारमें—ऐकोनाइट, बेलेडोना, बेप्टीशिया, विरेट्रम-विर, थूजा।

गोटियां निकलनेपर—ऐण्टिम-टार्ट, थूजा, वैरालिनिया ६ रस-टक्स।

पांव भरनेपर—ऐण्टिम-टार्ट, मर्क, लैके, एसिड।

गोटी बैठ जानेपर—कैम्फर, सल्फर, थूजा।

चेचकका दाग मिटानेके लिये—सेरासिनियाका सेवन और चेहरा ढंके रखना या रोशनी न लगने देना चाहिये। हाइड्रैस्टिसका धावन या हाइड्रैस्टिसका तेल लगानेपर भी चेचकके दाग मिटते हैं।

भूसी उड़ना—सल्फर खाना, गर्म पानीसे बदन पोंछना और साफ-सुथरे रहना चाहिये। पीला चन्दन या हाइड्रैस्टिस तेल १ औंस जैतूनके तेलके साथ ० या ६० बून्द हाइड्रैस्टिस मिलाकर बाहरी प्रयोग करना चाहिये। कबूतरका पर या रुई द्वारा मरा चमड़ा उड़ जा सकता है। कुछ तकलीफ घट सकती है।

आनुषङ्गिक उपसर्गोंमें—फास और ऐण्टिम-टार्ट (फेफड़ेका प्रदाह); ऐकोन और ब्रायो (फेफड़ेमें रक्त-सञ्चय); ब्रायो, केलि-बाई और ऐण्टि-टार्ट (ब्रांकाइटिस—वायुनलीभुज-प्रदाह होनेपर); एसिड या बेल (सूजन, आंख बन्द रहने और गला रुंध जानेपर); बेल, हायोस, स्ट्रैमो, विरे-विर (प्रलाप अधिक होनेपर); आर्स और बेप्टी (एकाएक सुस्त हो जाने या मस्तिष्कके लक्षणमें); मर्क-कोर और सल्फर (आंखोंका प्रदाह); हिपर-सल्फर, फास्फोरस और सल्फर (फोड़ा होनेपर)।

चिकित्सा—चेचक होनेके पहले दो-एक दिन आलस्य, अरुचि, दौर्बल्य प्रभृति पूर्व लक्षण प्रकट होनेके बाद बुखार आने और गोटियाँ अच्छी तरह न निकलनेतक रोज एक बार गरम पानीसे स्नान कर लेनेपर गोटी अच्छी तरह निकल आती है और योंही दूसरे उपसर्ग नहीं प्रकट होते।

पहली अवस्थामें (अर्थात् गोटियोंमें पीव न भरनेतक) ऐण्टिम-टार्ट ३x, सेवन करानेके सम्बन्धमें सब एकमत हैं और दूसरी अवस्थामें (पीव होनेपर) मर्क-सोल प्रधान दवा है। चेचक रोगकी (पहली अवस्थामें) गोटियोंसे खून बहता हो और रोगी एकदम सुस्त पड़ गया हो, तो लक्षणके अनुसार बैप्टीशिया ३x, आर्निका ३ या मिलिफो ६ के प्रयोगसे लाभ होता है। पीठ या कमरमें दर्द, नाड़ी तेज, बुखार और पानीकी तरह पतले दस्तमें विरेट्रम-विर ६x। पीवभरी गोटियां, श्वासनलीमें दर्द, कै या मिचली, बुखार वगैरह लक्षणोंमें ऐण्टिम-टार्ट ३x क्रमका विचूर्ण और रोगीको सभी अवस्थाओंमें कोई-कोई दूसरी दवाओंके साथ पर्यायक्रमसे इसका व्यवहार करनेकी भी सलाह देते हैं। (दूसरी अवस्थामें) बुखार, गोटियोंमें पीव, गलेमें जखम, खून-मिला आम-भरा अतिसार वगैरह लक्षणोंमें मर्क-सोल ६, गोटियाँ अच्छी तरहसे न निकली हों या एकाएक बैठ गयी हों, तो रुबिनीका स्पिरिट कैम्फर या जेलसिमिसम १x या जिङ्कम ६ प्रयोग करना चाहिये। गोटियाँ काली हो जायें तो क्रोटेलस ६x, रोग आराम-होनेकी तरफ हो या रोगीके कड़े उपसर्ग हटानेके लिये सल्फर १x बढ़िया दवा है। (कोई-कोई डाक्टर सल्फर ३x की भी चेचककी प्रतिषेधक दवाओंमें मानते हैं) बहुतसे डाक्टरोंकी राय है कि सैरासिनिया ३—६ इस रोगकी सभी अवस्थाओंमें बहुत लाभ पहुँचाता है। यह रोगकी तेजी कम कर देता है और गोटियोंमें पीव भरना रोक देता है। गो-बोजका टीका लेनेके बाद यदि चेचक हो जाये और इसी कारणसे दूसरे-दूसरे उपसर्ग दिखाई दें, तो थूजा (मूल अरिष्ट) सेवन करना चाहिये। गोटियाँ पकनेके समय अगर सान्निपातिक ज्वरके लक्षण मालूम पड़ते हों, तो रस-टक्स ३—३०। गोटियाँ निकलनेके बाद यदि चेहरा और गोटियोंके अगल-बगलकी जगह फूल उठे और रातमें खुजली बढ़ जाये, तो एपिस-मेल ३x। गोटियोंमें पीव होनेके बाद ज्वरातिसारका लक्षण हों, तो आर्सेनिक ६ या

३० । रक्त-स्रावमें भी हैमामेलिस ३x, आर्निका ३० या मिलिफो ६ उत्तम दवाएं हैं । चेचकमें पीव पैदा होने या बढ़नेकी अवस्थामें लार बहना, गलेमें जखम, साँसमें दुर्गन्ध या रक्तके दस्त हों, तो मर्क बाइवस ३x विचूर्ण—६ । चेहरा और पलको ज्यादा फूल गयी हो, तो एपिस ३x—३० । नींद न आना और बेचैनीके लक्षणमें, काफिया ३ । एकाएक गोटियाँ बैठ जायें और हिमांग हो पड़े, साँसमें कष्ट या मस्तिष्कका पक्षाघात पैदा हो जाये, थोड़े गरम पानीमें, तीन-चार बुन्द रुबिनीका कैम्फर डालकर दस पन्द्रह मिनटका अन्दर दे, कई बार खिलाना चाहिये (तबतक, जबतक कि शरीर गर्म न हो जाये और गोटियाँ न निकल पड़े)। तन्द्रा, मोह या जोरसे नाक घरघरानेपर ओपियम ३—३० । पीब भरी गोटियाँ साफ या पीले रंगकी न होकर हरी बैंगनी या काली हो या बहुत खुजलाती हो, तो सल्फर १x—३० देना चाहिये । उसके बाद कार्बो वेज ६ या नाइट्रिक एसिड ३ या आर्सेनिक ३x खिलाना चाहिये । यदि व्यापक रूपसे चेचककी बीमारी फैली हो या गर्भकी अवस्थामें चेचक हो जाये या बहुत परिमाणमें कष्ट देनेवाली कै होती हो और समूचे बदनमें बेहद दर्द हो, तो सैरासिनिया १x—३ लाभदायक होती है । समयपर खानेसे चेचककी प्रकृतिको यह बदल देता है, शरीरपरके गोटियोंके दागको भी हटा देता है । यदि चेचक भयावह हो जाये, तो देशी प्रवीण टीका देनेवालोंकी सलाह देनी चाहिये ।

आनुसंगिक उपाय—रोगीको हवादार कमरेमें रखना चाहिये । बार बार रोगीका बिछावन बदल देना और मुलायम शय्यापर रोगीको सुलाना चाहिये । हमेशा एक भावसे न सुलाये रखना चाहिये । गोटियोंमें पीब होनेपर बोरिक एसिड (एक भाग), ओलिव आयल (बीस गुना) मिलाकर सब शरीरमें मल देना चाहिये । जब गोटियोंमें पीब हो जानेके बाद वे सूखने लगें, गर्म पानीमें साफ कपड़ा भिगोकर

पोंछ देना चाहिये। रोगके समय—सागू, वार्ली, आरारूट, सोडा-वाटरके साथ दूध, अंगूर, सेव, गधीका दूध वगैरह देना चाहिये और आराम हो जानेपर हल्का और पुष्ट भोजन देना चाहिये। मछली, मांस और सेम खाना मना है। पवित्र भावसे रखना और गधीका दूध या गायके दूधका मक्खन रोज रोगीके शरीरमें लगा देना चाहिये। ख्याल रखना चाहिये कि रोगी अपना बदन जोरसे न खुजलाये, इसलिये अंगुलियोंके आगे कपड़ा बाँध देना चाहिये। यह कपड़ा हमेशा बदलते रहना चाहिये।

चेचकका दाग मिटानेके लिये जैतूनका तेल (olive oil) के साथ दूधकी मलाई मिलाकर गोटियोंपर लगाना चाहिये। घिसा हुआ चन्दन या हाइड्रैस्टिसका धावन या हाइड्रैस्टिसका तेल लगानेपर बहुत फायदा होता है। चेचकके रोगीके पहनने और सोनेके कपड़ेको जला देना चाहिये, नहीं तो बीमारी फैल जाती है।

टीका लेनेके बाद किसी-किसीका स्वास्थ्य एकदम बिगड़ जाता है या किसी तरहका चर्म-रोग होते दिखाई देता है, ऐसे स्थानमें थूजा ३०—२०० खिलाना उचित है।

जल-चेचक

(Chicken Pox)

यह चेचकके जैसा लरछुत नहीं है। यह बालकों और बच्चोंको ज्यादा हुआ करता है। जल-चेचकका बुखार हल्का आता है। गोटियाँ चिपटी न होकर, ऊपर उठी और नुकिली होती हैं। तीन-चार दिन बाद गोटियोंमें पानी भर आनेके कारण फफोले-जैसी दिखाई देने लगती हैं और उनमें पीव होता है। प्रायः छः-सात दिनोंमें ही वे गोटियाँ सूख जाती हैं। इसमें प्राण जानेका कोई डर नहीं रहता। यदि बुखार तेज हो तो ऐकोनाइट ३x देना चाहिये। यदि यह कहा जाये

कि रस-टक्स ३४ इस रोगोंको एकमात्र दवा है, तो बेजा नहीं। यदि रस-टक्ससे लाभ न हो, तो ऐण्टिम-टार्ट ६ देना चाहिये। बदनमें दर्द, सर भारी और कँपकँपी रहनेपर जेल्स १४। सर्दी न लगने देना चाहिये। दूध आदि हल्का पथ्य देना चाहिये। विस्तृत चिकित्साके लिये "चेचकका अध्याय" पढ़िये।

आरक्त ज्वर

(Scarlatina)

खसरा या चेचककी तरह यह भी एक तरहका उग्र और फैलनेवाला रोग है। गुजलो और गलेमें जखम इस रोगका खास लक्षण है। शिशु और बालक-बालिकाओंको यह राग अधिक हुआ करता है। यह बीमारी इस देशमें बहुत कम होती है। सम्भव है कि Stepto cocci जीवाणु इस रोगका प्रधान कारण है। हवा, दूध वगैरह खाने या छेदवाले बर्तनोंके साथ इस रोगका बीज स्वच्छ शरीरमें घुसता है। जाड़ा, बदनका ताप (१०५ डिगरीतक), नाड़ीकी गति १०० से १६० तक। प्यास, सरमें दर्द, के, गलेमें जखम आदि इस रोगके पूर्व लक्षण है। २४ घण्टोंमें शरीरपर चमकीले लाल रंगके खुजली-भरे दाने (पहले कन्धे और छातीपर और देखते-देखते सब शरीरमें फैल जाते हैं) निकल आते हैं। तेज सर-दर्द, प्रलाप, जीभ पहले मैल चढ़ी, अगल-बगल और आगेका भाग लाल ; जीभ काँटे (Papillæ) लाल रंगके और उभरे हुए इस रोगके उपसर्ग हैं। चार-पाँच दिनोंतक रोज बुखार रहनेके बाद, बदनका ताप कम होने लगता है, दानोंकी लाली और लम्बाई-चौड़ाई भी घटने लगती है और नवें दिन भूसी निकलने लगती है। यह रोग दो हफ्तोंसे ज्यादा कभी नहीं ठहरता ("संक्रामक और स्पर्शात्मक रोग और उन्हें हटानेके उपाय" का अध्याय देखिये)

खसरा और आरक्त ज्वरका भेद—खसरेके ज्वरमें सर्दीके लक्षण (जैसा—नाक, आँखोंसे पानी गिरना, छींक, खाँसी वगैरह) रहते हैं ; पर आरक्त ज्वरमें सर्दीके लक्षण ज्यादा नहीं रहते, परन्तु शरीर गर्म और गलेमें जखम रहता है। तीन-चार दिन बुखार भोग लेनेके बाद खसरा निकलता है, परन्तु आरक्त ज्वरमें सदा पहले दिनसे ही समूचा शरीर लाल हो जाता है।

आरक्त ज्वर तीन तरहका है—(क) **सरल** (simple)—लाल दाने, गला लाल (परन्तु गलेमें घाव न रहना) इसका प्रधान लक्षण है। अच्छी तरह इलाज होनेपर यह रोग सहजमें ही आराम हो जाता है। बेलेडोना ३, ऐकोनाइट ३x, सल्फर ३०, आर्सेनिक ३x, इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

(ख) **गलेमें जखमवाला** (anginoid)—गला लाल, गलेमें जखम और कन्धा फूल जाना इसका विशेष लक्षण है। यह कठिन रोग है (खासकर जाड़ेके दिनोंमें तो अच्छी तरह इलाज न होनेपर प्राण जानेका भय रहता है)। बेलेडोना ३, एपिस ३, मर्क-विन ३ विचूर्ण, क्रोटेलस ३, ऐचिनेशिया θ इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

(ग) **सांघातिक** (malignant)—इस मारात्मक बुखारमें ये प्रधान लक्षण दिखाई देते हैं—तेज जाड़ेके साथ बुखारका शुरू होना, शरीरका ताप अस्वाभाविक (११० डिगरीतक), प्रलाप, बेहोशी और दानोंका दिखाई न देना, यदि दिखाई भी देते हैं, तो लाल न होकर काले रंगके निकलते हैं (कितनी ही बार तो दाने निकलनेके पहले ही रोगी मर जाता है)। एइलेन्थस १x, क्यूप्रम ऐसेटिकम ३x, आर्सेनिक ३x, एसिड-म्यूर ६ इसकी खास दवाएँ हैं।

चिकित्सा—प्रतिषेधक—बेलेडोना १x नित्य दो बार सेवन करना चाहिये।

बेलेडोना ६—बुखार, गलेमें घाव, लाल रंगके दाने और प्रलाप। हैनिमैनने आरक्त ज्वरमें बेलेडोना ३० प्रयोग करनेका उपदेश दिया है। उन्होंने ही सबसे पहले आरक्त ज्वरमें बेलेडोनाका प्रयोग किया था और जर्मनीके बच्चोंकी महामारी दूर की थी।

फाइटोलैका १x—गलेके उपसर्ग कड़े दिखाई दें, तो यह फायदेमन्द है।

मर्क-कोर ३—गाँठें सूजी; गलेमें जख्म; बहुत लार गिरना; साँसमें बदबू; सुस्ती। यदि गुर्दा भी आक्रान्त हो, तो यह विशेष फायदा करता है।

ऐकोनाइट ३x—बुखारकी पहली हालतमें या हृदन्तरवेष्ट-प्रदाह (endocarditis) हो आनेपर।

एपिस ६—तेज बुखार; तन्द्रा; गला फूला; मुँहके भीतरका भाग और जीभ लाल, जीभमें फफोले, दाने; खुजलानेवाले दाने; शोथ, मूत्र-ग्रन्थि-प्रदाह; हृदन्तरवेष्ट-प्रदाह।

आर्सेनिक ३x—दाने अच्छी तरह न निकलें या निकलते ही मलिन हो जायें; बदन ठण्डा; तेजीसे सुस्त हो जाना; बेचैनी; प्यास; शोथ; ऐंठन रहे या न रहे; मूत्र-ग्रन्थि-प्रदाह।

सल्फर ३०—सब शरीरका चमकीला लाल रङ्ग; शरीर खुजलाना और जलन।

एलैन्थस १x—तन्द्रा; बेहोशी; सरमें दर्द; चेहरा गर्म और घोर लाल; गला फूला; नाकसे खाल निकाल देनेवाला पानी बहना; दाने काले या नीली आभा लिये या बहुत थोड़े निकलना; तेज वमन; साघातिक उपसर्गोंमें यह दवा जरूर देनी चाहिये।

क्यूप्रम-ऐसेट ३x—दानोंका बैठ जाना; वमन, ऐंठन; दिमाग-पर हमला होनेपर।

एसिड-फ्यूर २x—कानसे पीव वहने या कानसे कम सुन पड़नेपर ।

क्रोटेलस ३—गलेमें जखम ; कन्धेकी ग्रन्थियाँ फूलीं ।

एकिनेशिया θ—खून विषैला होनेके लक्षणमें ; गलेमें दर्द या गला रुक जाना ; ग्रन्थियाँ वढ़ने या उनमें पीव आ जानेके लक्षणमें ।

हिपर ३०— रोग आरम्भ होनेकी ओर हो, तो ।

शोथ ; मूत्र-दोष, वात-रोग या हृद्‌रोग होनेपर उन रोगोंका अध्याय देखना चाहिये ।

विसर्प

(Erysipelas)

यह एक तरहका नया फैलनेवाला और छुतहर रोग है । किसी अंगके घायल होने अथवा छिल जानेपर उसकी राहसे Streptococcus pyogenes नामके जीवाणु, शरीरमें घुसकर चमड़ा या श्लैष्मिक-झिल्लीका प्रदाह उत्पन्न कर देता है । इसीका नाम "विसर्प" है । धातुगत दुर्बलता रहना या स्वास्थ्यके नियमोंका ठीक-ठीक न पालन करना (जैसे—जीवनी-शक्तिकी कमी, सूतिकावस्था, चोट लगना वगैरह) इस रोगके गौण कारण हैं ।

जो विसर्प एक ही अंगमें न रहकर शरीरके बहुत स्थानोंमें घूमता फिरे, उसका नाम "भ्रमणशील (wandering) विसर्प" है । जिस विसर्पमें सूजन और जलन हो, उसे "दाहक (phlegmonous) विसर्प" कहते हैं । जिस विसर्पमें सड़ना आरम्भ हो जाय, उसे "विगलित (gangrenous) विसर्प" कहते हैं ।

एकसे सात दिनतक इस रोगीकी अंकुरावस्था रहती है । वदनमें सिहरावन मालूम होना, जी अच्छा न मालूम होना, हल्का बुखार,

रोगवाला अंग काँप उठना वगैरह इसके प्रारम्भिक लक्षण हैं। इसके बाद कँपकँपी, शरीरकी गरमीका तेजीसे बढ़ना, बकना-झकना, आक्रान्त अंग (जैसे—नाक, गला आदि) फूले, चमकीले और लाल दिखाई देना ; उसके बाद धीरे-धीरे सूजन बढ़ती जाती है, पानी-भरी गोटियाँ या छाले पैदा होते हैं। पाँचवें दिन दाने सुखाने लगते हैं, शरीरका ताप कम हो जाता है और बीमारी आराम हो जाती है। हमेशा इस रोगका दुबारा हमला हुआ करता है। पीवके कारण पैदा हुआ ज्वर, अण्डलाल मिला पेशाब, जखम करनेवाला हृदन्तरवेष्टका प्रदाह, फेफड़ेका प्रदाह वगैरह उपसर्ग दिखाई दें, तो समझना चाहिये कि रोग बहुत उत्कट हो गया।

ज्वर होनेपर—ऐकोन, विरे-विर।

चिकने या रसहीन छालेवाले विसर्पमें—बेल, ब्रायो, पल्स, आर्निका।

जल या रससे भरे फफोले रहनेपर—रस-टक्स, कैन्थरिस, विरेट्रम-विर।

सूजनकी प्रधानतामें—एपिस।

दाहकी प्रधानतामें—आर्स, कार्बो-वेज, नाइट्रिक एसिड।

विगलित विसर्पमें—लैके, आर्स।

रोग पुराना होनेपर या रोग आराम होनेकी ओर बढ़ने लगनेपर—सल्फर।

बेलेडोना १, ३—शरीरका चमड़ा प्रदाह भरा, रोगवाली जगह चमकीली लाल रंगकी और कुछ फूली (बहुत फूली—एपिस) चेहरा प्रदाहयुक्त ; प्रबल उत्ताप ; तेज सर-दर्द, आँखोंकी पुतली फैली, प्रलाप ; कोचन, पेशाब गाढ़ा और भूरे लाल रंगका।

रस-टक्स ६—गला, चेहरा, सरका चमड़ा और देहकी दूसरी जगहोंमें लाल रंगके जलभरे छाले ; उसकी बगलके स्थान फूले हों ;

सब शरीरमें डङ्क मारनेकी तरह दर्द, फुन्सियोंसे रस निकलना और जलन होना ; विसर्प वाईं ओरसे आरम्भ होकर दाहिनी ओर फैल जाता है।

एपिस-मेल ३, ६ **या एपियम-वाइरस** ६—रसभरी, गर्म, जलनेवाली फुन्सियाँ ; ये फुन्सियाँ वहुत फूल उठती है और खुजलाती हैं ; छेदनेकी तरह दर्द ; प्रदाहवाली जगह लाल रसभरी न होकर तेजीसे फूल जाती है।

आर्सेनिक ६, ३०—जलनके साथ, दर्द-भरा काले रंगका छाला या पीव भरा छाला ; सुस्ती और दुबलापन, बेचैनी और तेज प्यास और बुखार हो ; सान्निपातिक उपसर्गोंमें सड़नेका लक्षण मौजूद रहनेपर।

एमोन-कार्ब ३—बूढ़े या वृढ़ियोंके रोगमें ; विसर्प रोगमें अस्पष्ट धारणा, विषाद, याददाश्तका घटना प्रभृति उपसर्ग दिखाई देनेपर।

कैन्थरिस ३—रस-भरी फुन्सियाँ ; गोटियोंका रस लगनेसे बदनकी छाल उधड़ जाती है।

हिपर सल्फ ६—पीव पैदा होने या पकनेके लिये। स्पर्श और ठण्ड सहन न होनेके लक्षणमें।

चायना १x—साधारण प्रकारके विसर्प रोगकी तरुण अवस्थामें।

ग्रैफाइटिस ६—भ्रमणशील विसर्प (जो विसर्प शरीरके एक अंगसे दूसरे अंगमें फैलता है); रोगका बार-बार आक्रमण (खासकर चेहरेपर); आयोडिनके अपव्यवहारसे उत्पन्न उपसर्ग। डाक्टर गुड्नो (goodno) के मतसे यह विसर्पकी एक उत्तम दवा है। इसके सेवनसे रोगीका धातु इतना वदल जाता है कि उसे फिर विसर्प होनेका डर नहीं रहता।

क्रोटेलस ६—सड़ना (gangrene) आरम्भ होनेपर।

एकोनाइट ६—विसर्पकी फुन्सियाँ निकलनेके पहले, आक्रान्त स्थानमें जलन होनेपर ; सिहरावन या दाहके लक्षणमें। "दाह" विसर्पकी प्रधान लक्षण है।

एन्थ्रासिनम ३०, २००—चमकीले लाल रंगका प्रदाह, सहन न होनेवाली जलन ; सड़ना या रक्तस्राव आरम्भ होनेका उपक्रम होनेपर।

पेचिलेशिया θ, ३x—सांघातिक विसर्प ; तेज शरीरका ताप, बेचैनी ; रक्तदोषके लक्षण सब रहनेपर।

आक्रान्त स्थानमें जलन पैदा करनेवाली दाह और छालेसे रस निकलते रहना, कैन्थरिस ६ ; *छालोंमें पीव होनेकी सम्भावना हो, तो* आर्सेनिक ६ या कार्बो-वेज ६ ; *सड़ना आरम्भ होनेपर* लैकेसिस ६ ; *छालोंका एक जगह अच्छे होकर दूसरी जगह निकलना,* पल्सेटिला ६ ; *पीव पैदा करना जरूरी हो तो,* हिपर-सल्फर २x विचूर्ण।

पथ्य—रोगकी बढ़ी हुई अवस्थामें सागू, बार्ली, आरारूट। डा० आर्नल्डका कथन है, कि मठा (*अर्थात् मक्खन निकला हुआ मठा*) आक्रान्त स्थानमें लगानेसे, तकलीफ तुरन्त घट जाती है और थोड़े ही समयमें विसर्प घट जाता है (Vide The Indian Medical Record for January 1915, Page 17)। दर्द हटानेके लिये गर्म पानीका सेंक (३-४ बून्द रस-टक्स मिलाकर) देना अच्छा है। रोगकी जगह रूईसे ढँकी रखनी चाहिये।

भिल्लीक-प्रदाह
(Diphtheria)

यह एक तरहका फैलनेवाला रोग है। एक तरहका विष या "Klebs-Lœffler's Bacillus" नामक एक तरहका जीवाणु खूनमें (परिशिष्ट ग, अंक ४ देखिये) मिलनेपर, यह बीमारी पैदा होती है। गलेके स्रावमें इस रोगके जीवाणु मिलते हैं। यह रोग बच्चोंको ज्यादा होता है ; कई वर्ष पहले मैसूरके राजाने कलकत्ते आकर इसी रोगसे प्राण त्यागा था। इस रोगमें गलेकी श्लैष्मिक-झिल्लीमें एक तरहका

मैला और धुमैला पर्दा पड़ जाता है, इससे साँस वन्द होकर रोगी मर जाता है ; कुछ दिन पहले साँस वन्द होनेका लक्षण देखकर, गलेकी नली काट, रोगीको कुछ देरतक जीवित रखते थे। कृत्रिम और प्रकृति झिल्लीमें एक तरहका दूषित खून-भरा स्राव निकलनेके कारण रोगीकी साँसमें वड़ी वदवू पैदा हो जाती है। साधारण डिफ्थीरियामें गलेमें दर्द, कोई चीज निगलनेमें कष्ट, गलेसे वरावर थूक या श्लेष्मा निकालनेकी चेष्टा करना, गलेकी गाँठोंका बढ़ जाना या कड़ी हो जाना, कृत्रिम पर्देका फट जाना और टुकड़े-टुकड़े रूपमें वाहर निकलना और समूचा पर्दा फटनेपर वहाँका चमड़ा जख्मकी तरह नहीं दिखाई देता, वल्कि एकदम लाल मालूम होता है—ये सव लक्षण दिखाई देते हैं। अगर रोग सांघातिक रूपमें प्रकट होता है, तो पहले तेज बुखार, दस्त, कै, कँपकँपी, कमजोरी, वेचैनी प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। इसके वाद झिल्ली आक्रान्त होकर लाल हो जाती है ; तालुमूल-ग्रन्थि और तालु फूलकर उसपर नकली पर्दा पड़ जाता है। यदि यह नकली पर्दा न हटा, तो साँस वन्द होकर मृत्यु हो जाती है। रोगकी परिणामावस्थामें फोड़ा या पूरा-पूरा पक्षाघात, थूक लेनेमें तकलीफ, स्वरभंग, हृत्पिण्डकी क्रिया कमजोर या एकदम बन्द वगैरह उपसर्ग भयंकर हैं। "संक्राम और स्पर्शाक्रमक रोग और उनके हटानेका उपाय देखिये"।

सामान्य डिफ्थीरियामें—(रोगके शुरूमें) ऐकोन, वेल या वैप्टीशिया ; इसके वाद (जरूरत पड़नेपर) मर्क-आयोड या एसिड नाइट्रिक।

प्रबल डिफ्थीरियामें—"मर्क-सायेनेटस" ; कैलि-पारमैङ्ग, एसिड-म्यूर, कैलि-वाई, आर्स, ऐमोन-कार्व, "लैकेसिस", लाइको।

रोगके वादवाली अवस्थामें—फास और फाइटो (स्वर-भंगमें); डिजिटेलिस (हृत्पिण्ड कमजोर हो जानेपर); चायना या क्विनाइन (कमजोरीमें); कोनायम, जेल्स, रस-टक्स, सल्फ।

प्रतिषेधक—मुहल्ले या गाँवमें "डिफ्थीरिया" बहुत फैला हुआ हो तो डिफ्थीरिनम ३० सिर्फ एक बार सेवन करना चाहिये।

चिकित्सा- डाक्टर एच० सी० ऐलेनने बहुतसे रोगियोंको केवल "डिफ्थीरिनम" (ऊँचे क्रममें) खिलाकर अच्छा कर दिया है। १८७४ ईस्वीसे १९०६ ईस्वीतक, इस दवाको व्यवहारकर वे भी असफल न हुए। वास्तविक डिफ्थीरियाका लक्षण दिखाई देते ही किसी दूसरी तरहका इलाज करनेके बाद, यदि होमियोपैथिक मतसे इसका इलाज करना पड़े और डिफ्थीरिया आराम होनेके बाद कमजोरी, सुस्ती, हाथ पैरोंका वशमें न रहना वगैरह लक्षण दिखाई दें, तो डा० ऐलेन "डिफ्थीरिनम" देनेकी अवस्था ही देते हैं। डाक्टर क्लार्क प्रकृत डिफ्थीरिया रोगमें (१) पहले और इसके बाद डिफ्थीरिनम (३०—२००) दो घंटेका अन्तर देकर, (२) मर्क सायेनेटस (६—३०) घंटे-घंटेपर देनेकी व्यवस्था देते हैं और फाइटोलैक्का θ पाँच बुन्द एक औंस पानीमें मिलाकर, उससे बीच बीचमें अच्छी तरह धोनेकी सलाह देते हैं। डाक्टर कास्टिस (Custis) मर्क-सायेनेटसके आगे लिखे लक्षण बताते हैं—"सड़नेवाली डिफ्थीरिया (जैसे, मुखविवर, गलकोष और मुँहमें ऊपरका भाग और गलेके भीतरी गह्वरतक फैली हो) और लार बहती हो, तो इसके सेवनसे ऐसे रोगी अच्छे हो गये हैं, जिनके बचनेकी कोई आशा ही न थी।" डा० विलर्सका मत है कि "बदबू और जीवनी-शक्तिकी गहरी अवसन्नतामें मर्क-सायेनेटस बहुत फायदा करता है।" मुख और गलेका भीतरी भाग खूब लाल, गर्दनकी ग्रन्थि और लाला-ग्रन्थि खूब फूली, घूँट लेनेमें तकलीफ और सड़नेवाला गलेका घाव प्रभृति लक्षणोंमें मर्क-बिन-आयोड १X लाभदायक है। ज्यादा सूजन, चमकीला लाल रंग, पेशाब रुका रहनेके लक्षणमें एपिस ३। कड़ा श्लेष्मा निकलता हो, जीभ पीली, झिल्ली मलिन, पीली और सूतकी तरह कड़ी हो, तो कैलि-बाई ३ विचूर्ण। लैकेसिस ६ (खून ज्यादा दूषित हो

गया हो) जैसे—गहरी सुस्ती, हृत्पिण्डकी क्रिया बहुत क्षीण—बाहरसे दवानेपर गलेमें बहुत दर्द मालूम होना, सभी ग्रन्थियाँ आक्रान्त ; बाईं ओरसे शुरू होकर दाहिनी ओरके अंगमें रोग फैल जाये, तो इसका प्रयोग करना चाहिये (परन्तु डिफ्थीरिया दाहिनी ओरसे शुरू होकर बायें अंगमें फैल जाये, तो लैकेसिसके बदले लाइको ६ देना चाहिये)। बदबूदार भाफ वगैरहके कारणोंसे रोग होनेपर बैप्टीशिया θ, ३x। रोगवाली जगह प्रदाहित और लाल रंगका चेहरा और आँखें लाल, सरमें दर्द, निकलनेमें दर्द, नाड़ी भरी और कड़ी, कोमल तालु, उपजिह्वा और स्वरनलीका प्रदाह आदि लक्षणोंमें ऐकोनाइट ३x या (किसी-किसीके मतसे) बेलेडोना ३x का प्रयोग करना चाहिये। रोगवाली जगहपर दर्द, बहुत सुस्ती, रोगका आक्रमण होनेके पहलेसे ही नाड़ीकी चाल तेज, ग्रन्थि फूली, कृत्रिम पर्दा पैदा हो जाना, तालुमूल और गलकोष लाल, लाल या भूरे रंगकी जीभ, श्वास-प्रश्वासमें दुर्गन्ध, निगलमें तकलीफ, बहुत लार बहना, गला दबादेपर दर्द मालूम होना वगैरह लक्षणोंमें मर्क्यूरियस ३x। गलेके भीतर धुमैला जखम, सुस्ती, साँस लेने और छोड़नेमें बदबू रहनेपर एसिड म्यूरियेटिक ३ सेवन करना और बाहर भी लगाना चाहिये। (अर्थात् गलेमें एसिड-म्यूरका लेप लगाना या कुल्ला करना चाहिये)।

कैलि-म्यूर ६—घूंट लेनेमें तकलीफ और उसके साथ ही गलेमें सादा पर्दा पड़ जाना।

ऐचिनेशिया—(५—१० बून्दकी खुराकमें) बहुतसे डाक्टर केवल इसी दवासे यह रोग आराम किया करते हैं (खासकर सड़नेवाली अवस्थामें)।

आर्सेनिक ६—रोगकी अन्तिम अवस्थामें नाड़ी क्षीण, जखमसे पीब या खून बहना प्रभृति उपसर्गोंमें (गहरी सुस्ती, गला फूला, गला और साँसकी नलीसे सड़ी दुर्गन्ध, नाकके भीतरकी आवरक झिल्लीसे

लसदार बदबूदार स्राव होना वगैरह भयावह लक्षण प्रकट हों, तो कोई-कोई आर्सेनिकके साथ ऐमोन-कार्ब पर्यायक्रमसे व्यवहार करनेको कहते हैं।

डिफ्थीरियाके जीवाणुका पता लगनेके बाद अध्यापक Von Behring और डाक्टर Roux ने प्रमाणित कर दिया है कि यह रोग मनुष्यके गलेमें जो "विष (toxin)" पैदा होता है, वही रोगीमें धातुगत उपसर्गोंको लाता है और वही—रोगीकी देहसे जो दूसरा एक "विष" आप ही-आप पैदा होता है, उससे बाधा पाता है या रोक दिया जाता है ; उपर्युक्त विष प्रक्रिया द्वारा यह प्रतिविष (antitoxin) घोड़ेके रक्ताम्बुमें पैदा किया जा सकता है। इसके बाद वही रक्ताम्बु घोड़ेकी देहसे हटाकर डिफ्थीरिया रोगकी पतली अवस्थामें रोगीके शरीरमें प्रवेश कराया जाता है—ऐसी चिकित्सा-प्रणालीका इस समय समस्त सभ्य जगतमें आदर हो रहा है।

आनुसंगिक चिकित्सा—डाक्टर प्लोरेयमका कथन है, कि अनारसका बहुत-सा रस खिलानेसे आशातीत फल मिलता है (*The Hom Recorder* 5th June, 1919 देखिये)। अनारसका रस शायद झिल्ली (membrane) को साफ करनेवाला है। डाइल्यूट कार्बोलिक एसिड बदबूको नष्ट करता है। जबतक डिफ्थीरियाका जहर रोगीके शरीरसे पूरी तरह नहीं निकल जाता, तबतक उसका बदन गरम और सूखा तथा पाखाना-पेशाब बन्द रहता है। खूब गर्म पानीमें नहाने और ठण्डा पानी पीनेसे उपसर्ग दूर हो जाते हैं। प्यास मिटानेके लिये बरफके टुकड़े चूसनेको दिया जा सकते हैं। पुष्ट भोजन, सम्पूर्ण विश्राम और आबहवा बदलना बहुत जरूरी है। कभी-कभी बहुदर्शी अस्त्र-चिकित्सकके श्वासनली कटवाने (Tracheotomy) की भी जरूरत पड़ सकती है।

इन्फ्लुएञ्जा
(Influenza)

यह रोग लरछुत और बहुत फैलनेवाला है। एक तरहके जीवाणु (pfeiffer's bacillus) इस रोगमें मौजूद रहते हैं। शरीरमें कीटाणु घुसनेके बाद दो-एक दिनतक बदनमें कड़मड़ाहटके सिवा रोगीको और कुछ मालूम नहीं होता। इसके बाद नीचे लिखे लक्षण दिखाई देते हैं। बार-बार जाड़ा लगता है ; बुखार (१००°—१०३° ; बीमारी कड़ी होनेपर १०६° तक), नाड़ी कभी कोमल, कभी तेज रहती है, सरमें दर्द, नाक और आँखोंसे पानी-जैसा पतला श्लेष्मा, छींक, खाँसी, अंगड़ाई लेना, सब शरीरमें (विशेषकर हड्डियोंमें) तेज दर्द, गर्दन अंकड़ना, जीभ मैली, कै या मिचली, क्लान्ति, नींद न आना, भूख न लगना और सुस्ती वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। "सर्दी-ज्वर" (पृष्ठ २५५ देखिये) से बहुत-कुछ मिलता-जुलता है, इसीसे इसका नाम "बहुव्यापक सर्दी" रखा गया है।

कभी पाकाशय, कभी आँतोंके दोषसे पतले दस्त या आमाशय, पेशाव कम या ज्यादा होना, पेशाबकी कोई दूसरी बीमारी, कलेजा धड़कना उदासी, श्वासनली या फेफड़ेका प्रदाह (ब्रांको न्युमोनिया) वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। फेफड़ेका प्रदाह (न्युमोनिया), कैशिक-नाली-प्रदाह (कैपिलरी ब्रांकाइटिस), कर्णमूल-प्रदाह ; तालुमूल-प्रदाह, नाक, मुँह या मलद्वारसे खून गिरना झिल्लीक-प्रदाह (डिफ्थीरिया), सान्निपात ज्वर, प्रलाप, तन्द्रा (coma), आक्षेप, श्वासकष्ट, अतिसार, शोथ या सड़न (gangrene) वगैरह उपसर्ग पैदा हो जाते हैं, तो बीमारी कड़ी हो जाती है। इस रोगमें शरीरके सभी यन्त्रोंपर बीमारीका दौरा हो सकता है ; इसलिये पहलेसे ही अच्छी तरह इलाज न हुआ, तो रोगीपर विपद् आनेकी सम्भावना रहती है।

ईसाकी नवीं शताब्दीसे ही इस संसार-व्यापी रोगका विवरण मिलता है। १८९० ईस्वीमें, जाड़ेके दिनोंमें, यह भयानक रोग रूससे आरम्भ होकर सारी दुनियामें फैल गया। १९१८—१९ ईस्वीमें यह समर-ज्वर (war fever) के नामसे पहले स्पेनमें फैल गया और थोड़े ही दिनोंमें समस्त संसारमें फैल गया।* केवल बंगालमें ही नहीं, संसारके अनगिनती नर-नारी इस रोगके कालके गालमें चले गये हैं।

प्रतिषेधक—रोगके आरम्भके समय इन्फ्लुएञ्जिनम† ३०—२०० दो-एक दिनका अन्तर देकर एक-एक मात्रा सेवन करना चाहिये। इन्फ्लुएञ्जिनम न मिले, तो बेप्टीशिया १x—३x सेवन करना चाहिये। इङ्गलैण्डके कोई-कोई डाक्टर कहते हैं कि आर्सेनिक ३ (रोज तीन-चार मात्रा) इसका बढ़िया रोकनेवाला दवा है।

---

* विगत भयंकर युरोपीय महायुद्धके समय मित्र-शक्तियोंकी ओरसे जब अमेरिकाने साथ दिया, तब स्पेनकी राजधानी मैड्रिड नगरमें जर्मनोंके किसी बहुत बड़े परीक्षागार (laboratory) के वैज्ञानिकोंको शायद इन्फ्लुएञ्जाके जीवाणु पैदा करनेकी आज्ञा दी गयी। उद्देश्य था—इन जीवाणुओंको अमेरिकाके बन्दरोंमें छोड़ देना, जिससे वहांके जहाजोंके मल्लाह वगैरह बीमार हो जायें और अमेरिकाकी फौज न आ सके, परन्तु यह विचार कार्यमें परिणत न हो पाया; क्योंकि वैज्ञानिकोंमें आपसमें ही झगड़ा हो गया और सब जीवाणु स्पेनमें ही फैल गये। इसीसे वहीं पहले-पहल अचानक इन्फ्लुएञ्जा हो गया और तुरन्त समस्त संसारमें फैल गया।

† बड़े आश्चर्यका विषय है कि सन् १३२५ सालके अगहन मासके "भारतवर्ष" पत्रिकामें एक होमियोपैथने "इन्फ्लुएञ्जिनम" औषधको ऐलोपैथिक दवा कहा था। वेरियोलिनम, सोरिनम, मेडोरिनम, लिसिन वा हाइड्रोफोबिनम, डिफ्थेरिनम, टिउबरक्युलिनम प्रभृति दवाएं होमियोपैथिक मतसे शक्तिकृत कर "रोगज औषध" या नोसोड्स" बहुत दिनोंसे कही जाती हैं। पास्टर (pasteur)

गत १६१६ ईस्वीमें बंगालके स्वास्थ्य-विभागके अधिष्ठाता डाक्टर बेण्टली साहबने घोषना की, कि दालचीनीका तेल (cinnamon oil) दो बून्द थोड़े गर्म पानीमें मिलाकर रोज तीन वार सेवन करनेसे, इन्फ्लुएञ्जासे छुटकारा मिल सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि रोगीका थूक, बलगम या साँसकी हवा निरोग मनुष्यके शरीरमें प्रवेश करनेपर, उसे भी यह रोग हो जाता है। इसलिये रोगीको अलग रखा जाये और उनकी सेवा-सुश्रूषा करनेवाला भी कपड़ेसे नाक, मुँह अच्छी तरह ढँककर उसकी सुश्रूषा करे।

कोई-कोई चिकित्सक सर्दी और बदनमें दर्द होते ही नमक मिला पानी नाकसे सुड़कना और कण्ठवाली धो डालना भी इस रोगसे बचनेका उपाय बताते हैं।

जेल्सिमियम θ, ३x—जाड़ा लगना, बुखार, चेहरा तमतमाया, आँखें पानीसे भरी, सरमें दर्द या सर भारी औंघना, सब शरीमें

और पागल कुत्ता काट लेनेको दवा निकलनेके अर्ध शताब्दी पहले ही डा० हेरिंगने लिसिन या हाइड्रोफोबिनमकी परीक्षा की थी और डा० कोक (koch) ने "टियुबरक्युलिनम" को यक्ष्मा रोगकी अमोघ दवा घोषणा कर ही संसारको मुग्ध करनेके बहुत पहले ही डाक्टर बर्नेटका बनाया टियुबरक्युलिनम या वेसिलिनम द्वारा बहुतसे रोगी आरोग्य हो चुके थे। वस्तुतः इन सब रोगज औषधों या नोसोड्स (nosodes) का बहुत दिनोंसे होमियोपैथीमें व्यवहार होता आ रहा है और भविष्यके अन्धकारसे इस तरहके बहुत से भेषजरत्न होमियोपैथिक पद्धतिके मतसे तैयार होकर संसारका हित करेंगे, ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है।

[परिशिष्ट (क) अंक (६) और हैनिमैनकी बनायी हुई आर्गेनन ६ठे संस्करणकी पादटीका ५६ पारा देखिये।]

(खासकर पीठमें) अकड़न या दर्द, कँपकँपी और सुस्ती वगैरह लक्षणोंमें लाभदायक है।

ब्रायोनिया ३x, ६—श्वासनली, फेफड़ा या फुस्फुसवेष्ट विशेष रूपसे आक्रान्त होनेपर, खाँसी, "गर्म घरमें आनेपर खाँसीका बढ़ना ;" गला अकड़ जाना ; सब शरीरमें (खासकर कपालमें) दर्द ; ओंठ सूखे, इसीसे रोगी जीभसे दोनों ओंठ तर रखना चाहता है ; सभी श्लैष्मिक-झिल्लियाँ सूखी, शरीरकी त्वचा सूखी ; जीभ सूखी और मैली ; सुस्ती ; रोगी स्थिर पड़ा रहता है, क्योंकि हिलने-डुलनेसे ही दर्द बढ़ता है, खाँसनेपर छाती और सरका दर्द बढ़ता है, दर्दवाली जगह (बगल) को दबाकर सोनेसे खाँसी दब जाती है। कब्जियत, "पाखाना एकदम नहीं लगना" आदि लक्षण रहनेपर फलप्रद है।

आर्सेनिक ३x, ६—डा० ह्यूजने इसे इन्फ्लुएञ्जा रोगकी सबसे प्रधान दवा बताया है। पहले बहुत ज्यादा श्लेष्मा (खासकर आँख, नाक और गलकोषकी सर्दी) निकलती है। पतला, गर्म, जलन पैदा करनेवाले श्लेष्माका स्राव होता है ; छींक, स्वरभंग, शरीरमें कँपकँपी शरीर गर्म, सूखा और रूखा ; सविराम या स्वल्पविराम ज्वरमें ; गहरी सुस्ती, यहाँतक कि साधारण हिलने-डुलनेसे ही क्लान्ति बहुत बढ़ जाती है ; बेचैनी, प्यास बढ़नेमें जलन रहनेपर भी शरीरको ढँके रहनेकी इच्छा ; उद्वेग और मृत्यु-भयका लक्षण ; कड़ा और लसदार बलगम निकालना, कष्ट देनेवाली खाँसी ठण्डा पसीना और श्वासकष्ट। प्रधान फ्रेञ्च होमियोपैथिक चिकित्सक डाक्टर जूसे (Jousset) इन्फ्लुएञ्जाके सविराम ज्वरमें क्विनाइनकी व्यवस्था करते हैं, परन्तु हमारे देशमें ऐसी जगह "आर्सेनिक" के प्रयोगसे खासा फायदा होता है।

लक्षणके अनुसार ऊपर कही तीनों दवाओंके प्रयोगसे हमलोगोंने बहुत फायदा होते देखा है। दूसरी दवाओंकी जरूरत ही नहीं पड़ती। कावपरथायेट, सैण्डर्स-मिल्स, कास्टिस, गैचेल, गुडनी वगैरह अमेरिकाके

वहुतसे मशहूर डाक्टर पहले "जेलसिमियम" और इसके बाद 'ब्रायोनिया' व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं ; परन्तु इङ्गलैण्डमें क्लार्क, ह्वीलर वगैरह डाक्टरगण "वैप्टीशिया" को इन्फ्लुएञ्जाकी अव्यर्थ दवा समझकर इसे ही सबसे पहले काममें लाते हैं और उससे (उनका कथन है) फिर दूसरी दवा देनेकी जरूरत नहीं पड़ती।

सरकोलैक्टिक एसिड ६, ३०—इन्फ्लुएञ्जा जिस समय खूब तेजीसे फ़ैलता रहता है, वहुत कमजोरी, तेज पतले दस्त और वमन ; मिचली ; समूचे शरीरमें दर्द और सुस्तीके लक्षणमें आर्सेनिकसे लाभ न होनेपर इसकी व्यवस्था करनी चाहिये।

बैप्टीशिया १x, ६—आलस्य मालूम होना, मूर्खोंकी तरह देखना, आँखोंमें भार या दर्द मालूम होना ; सर भारी ; जीभ मैली या सूखी, गलेमें घाव ; पतले और काले रंगके दस्त ; सब शरीरमें दर्द और अकड़न ; खाँसी ; बेचैनी (डा० ह्वीलरके मतसे बुखार रहने या न रहने-पर भी) ; सुस्ती ; साँसमें वदबू ; रोगी बिछावनपर हाथ फैलाया करता है, मानो कुछ खो गया है। प्रलाप ; कभी-कभी रोगी ऐसा समझता है कि उसकी देह तीन टुकड़े होकर बिछावनपर पड़ी है और उसे जोड़ न सकनेके कारण उसके मनमें कष्ट होता है।

युपेटोरियम-पर्फ ६, ३०—हड्डियोंमें दर्द ; ऐसा मालूम पड़ता है मानो हड्डी टूट गया है। बेचैनी, प्यास, जी मिचलाना, शीत-शीत भाव, सर-दर्द, पसीना नहीं होता।

नेट्रम-सल्फ १२x चूर्ण—डाक्टर बोरिक और ऐनसूट्ज कहते हैं, कि वहुतसे चिकित्सकोंके मतसे इन्फ्लुएञ्जाकी यह एक अमोघ दवा है (खासकर जब तर ठण्डी हवा लगाकर या ठण्डी जगहपर रहनेसे यह रोग पैदा होता है) ; इस दवाके सम्बन्धमें हमारी कोई अधिक जानकारी नहीं है, परन्तु रोग आराम होनेके वाद "सर्दी मालूम होना और

दुर्बलता" मौजूद रहे, तो इस दवाके सेवनसे रोगी जल्दी अच्छा हो जाता है।

साधारण रोगमें सिर्फ इन्फ्लुएञ्जिनम ३० की दो एक मात्रा खानेसे ही रोग अच्छा हो जाता है। रोगकी पहली अवस्थामें तेज बुखारके साथ प्यास, बेचैनी, शरीरकी त्वचा सूखी और उद्वेग वगैरह लक्षणोंमें, ऐकोनाइट ३x। दिनमें नींदकी तरह झूमना और शामके वक्त सर्दी लगना, जोरोंमें दर्द, त्वचा-सूखी, छींकसे खाँसी, बहुत छींक, आँखोंसे पानी गिरना, शरीरके नीचले भागसे मानो ऊपरकी ओर कोई कीड़ा रेंग रहा है, ऐसा मालूम होना प्रभृति लक्षणोंमें सैबाडिला ३x। (डेंगू बुखारकी तरह) हाडोंके भीतर दर्दमें युपेटोरियम पर्फोलियेटम १x—३x। पीठमें जोरका दर्द, वैरियोलिनम ६—३०। खाँसी, नाकसे पानी गिरना, दर्द (खासकर दाहिने अंगमें), कफ निकालनेमें तकलीफ मालूम होती है; परन्तु निकाल देनेपर आराम मालूम होता है—सैंगुनेरिया ३x। सरमें तेज दर्द, ऐसा मालूम होता है, मानो दर्दसे सर फट जाता है—ग्लोनोइन ३। माथेमें टनक जैसा दर्द, गलेमें घाव, स्वरभंग, सूखी खाँसी, बदन गर्म, बेचैनी, दाहिने कानका प्रदाह, चेहरे और माथेके दाहिनी ओरके स्नायु-शूल—बेल ३x। सर और पीठमें दर्द समूचे शरीरमें वातका दर्द; तालुमूल प्रदाहित और बढ़ा हुआ तथा उसपर सादे दाग रहनेपर फाइटो ३x। कै, मिचली और अतिसारके लक्षणमें चायना ३x। वातकी तरह दर्द, कटिवात या साजियातिक ज्वर-विकारके लक्षणमें, रस-टक्स ३x—३०। साँस लेने और छोड़नेमें साँय साँय शब्द, तकलीफ देनेवाली खाँसी, श्लेष्मा निकलना, गला घरघराना; कमर, माथा और पीठमें दर्द रहनेपर ऐण्टिम-टार्ट ३x विचूर्ण—६। स्वरनली और वक्षस्थलका प्रदाह; कष्ट देनेवाली खाँसी, कभी सफेद और कभी पीले सूतकी तरह कड़ा श्लेष्मा निकलनेवाली खाँसी होनेपर ब्रायोनिया ३०। रोगकी पुरानी अवस्थामें

फेफड़ेका प्रदाह (विशेषकर बाईं ओर दबाकर सोनेसे खाँसीका बढ़ना), कमजोरी, बलगम निकालनेकी ताकतका न रहना ; फेन-भरा, खून-मिला या पीवकी तरह श्लेष्मा निकता हो, तो फास्फोरस ६ । हूप खाँसीकी तरह खाँसी होनेपर, ड्रोसेरा ३x । लगातार खाँसी (जरा भी बन्द नहीं होती), हाइड्रोसियानिक एसिड ३ ।* मूत्रग्रन्थिका प्रदाह, युकैलिप्टस १x । हृत्पिण्डपर आक्रमण होनेपर, आइबेरिस १ । जोरोंका सर-दर्द रहनेपर, मेलिलोटस २x । यकृत आक्रान्त होनेपर, कार्डुयस-मेरि θ ।

ज्वरकी तेजी कम करनेके लिये सैलिसिलिक एसिड, ऐण्टिमफेब्रिन, ऐस्पिरिन प्रभृति दवाएँ प्रयोग करना, बहुत ही नुक्सान करता है ।

अतिसार, न्युमोनिया, मूत्रकृच्छ्र प्रभृति उपसर्ग हो जायें, तो इस पुस्तकमें लिखे हुए "श्वास-यन्त्रके रोग", "पारिपाक-यन्त्र", और "मूत्र-यन्त्रकी बीमारी" प्रभृति देखना चाहिये ।

हमलोग प्रायः इस रोगमें (क) श्वास-यंत्र, (ख) पाकाशय, (ग) स्नायुमण्डल या (घ) मस्तिष्कपर विशेष रूपसे आक्रमण होते देखते हैं ।

(क) श्वास-यंत्रपर आक्रमण होनेपर—छींक, सर्दी, गलेमें दर्द, स्वर-भंग, श्वास छोड़नेमें तकलीफ, औंघाई, समूचे शरीरमें अकड़न, गर्दन अकड़ जाना, शरीरका ताप १००°—१०५° प्रभृति लक्षण पैदा हो जाते हैं । चिकित्साके लिये, इस ग्रन्थिकी "श्वास-यन्त्रकी बीमारी" से दवाका चुनाव करें ।

---

* बहुत तकलीफ देनेवाली खाँसी या गलेकी नलीपर रोगका आक्रमण होनेपर वर्त्तमान इन्फ्लुएञ्जा रोगमें Dr. Gailhard of Marseilles ड्रोसेरा और रियुमेक्सका प्रयोगकर आशासे अधिक फायदा देख चुके हैं । सजनेकी तरकारी भी फायदा करती है ।

बेदाना या अनार, कसेरू, ठण्डा पानी पीना, रसा वगैरह पतली चीजें सुपथ्य हैं।

बीमारी संक्रामक है, इसलिये जो सेवा करें, उन्हें खूब सावधान और साफ-सुथरे रहना चाहिये। थूक और कफ थूकनेके बर्त्तनमें चूनेका चूर डाल रखना चाहिये ; बीच-बीचमें उसे साफकर, फिर चूना छिड़ककर, तब थूकना चाहिये। यह रोग होनेके समय एक मकानमें बहुतसे आदमियोंको न रहना चाहिये। बीच-बीचमें युकैलिपटसका तेल सूँघते या तुलसीके पत्तेका रस सेवनसे रोगके आक्रमण होनेकी सम्भावना नहीं रहती।

मछली, मांस खाना और धूम्रपान न करना ही अच्छा है। जहाँतक रोग फैला हो, वहाँतक मुँह ढँककर ही चलना चाहिये।

१८वीं दिसम्बर १९१८ के लण्डन टाइम्सने लिखा था, कि उसके पहले सप्ताहमें इस प्रचण्ड रोगसे लगभग ६० लाख मनुष्य मरे ; टाइम्सने हिसाब लगाकर लिखा था, कि इस हिसाबसे महायुद्धकी मृत्यु-संख्याकी अपेक्षा इसकी मृत्यु-संख्या लगभग पाँचगुनी अधिक है।

इस ग्रन्थिकी "विविध ज्वरोंकी दवाएँ और आनुसंगिक चिकित्सा" देखिये।

मस्तिष्क-कशेरुक ज्वर या मेरुमज्जा-प्रदाह

(Cerebro spinal fever of Meningitis)

यह एक तरहका लरछुत जीवाणु (diplococcus) से पैदा हुआ तरुण ज्वर है। जवानीमें शीतऋतु और स्वास्थ्यके नियमोंका ठीक-ठीक पालन न करना ही इस रोगका गौण कारण है। मेरुदण्ड (पीठकी रीढ़ आदि मस्तिष्कावरण (सरको ढँकनेवाली) झिल्लीका प्रदाह ही इसका प्रधान लक्षण है। एकाएक जाड़ा लगकर बुखार आता है (कभी-कभी तेज बुखार १०३—१०७° तक); प्रलाप, कै या मिचली, चेहरेपर

फुन्सियाँ निकलना ; फेफड़ेका प्रदाह ; पीछेकी ओर या एक तरफ शरीरका टेढ़ा हो जाना ; आँखें कभी खुली (परन्तु दिखाई न देना), कभी डेरा देखना, बहरापन, पेशियोंका सिकुड़ना, गहरी सुस्ती, माथे और पीठमें बहुत तेज दर्द, चुप पड़े रहना (stupor), तन्द्रा (coma), स्नायुका पक्षाघात इसका प्रधान लक्षण है। कभी-कभी रोगका इतनी जल्दी और तेजीसे आक्रमण होता है, कि रोगीकी मृत्यु कइएक घण्टोंमें ही हो जाती है। भावी-फल अच्छा नहीं है। बहुत बार इस रोगमें मस्तिष्क बिलकुल ही विकृत हो जाता है और रोगी जड़की तरह जीवन यापन करता है। छोटे बच्चे और किशोर-किशोरियोंको भी प्रायः यह बीमारी होती है।

संक्षिप्त चिकित्सा—कैल्के-कार्ब, सल्फर, फेरम-आयोड या सिलिका वगैरह दवाएं जो धातुके विकारको संशोधन करनेवाली है, उनका सेवन करना चाहिये। बेल, एपिस, आर्सेनिक-आयोड, क्यूप्रम-ऐसेट, हेलिबोरस, ब्रिजि, मर्क, कैल्के-फास १२x विचूर्ण वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी सहायक रूपमें जरूरत पड़ सकती है।

साइक्यूटा ३, ६—इसे यदि रोगकी अव्यर्थ दवा कहा जाये, तो अत्युक्ति नहीं ; खासकर पीछेकी तरफ या एक ओर अगर शरीर टेढ़ा हो जाये।

बेलेडोना ३x, ६—प्रलापके साथ मस्तिष्कके विकारकी तेजी रहनेपर।

ओपियम ३, ६—तन्द्रा या जड़की तरह अवस्था ; धीरे-धीरे श्वास-प्रश्वास, स्थिर दृष्टि ; अंग-प्रत्यग टेढ़े ; मुँह खुला और नाकसे जोरकी आवाज।

हेलिबोरस ३x—मनका गहरा अवसन्न भाव, माथेके पीछेकी ओर और गर्दनके पीछे ज्यादा दर्द। लगातार सर हिलाया करता है और तकियेमें माथा घुमाये रखना चाहता है।

विरेट्रम-विरिड θ—माथा पीछेकी ओर टेढ़ा हो जाता है, अकड़न और खींचन।

सिमिसिफ्यूगा ३—पेशियोंका सिकुड़ना या अकड़ बन्द करनेके लिये, जब किसी दूसरी दवासे फायदा न हो, तो इसका प्रयोग करना चाहिये।

पेमोन-कार्ब २००—कानके नीचे और पीछेकी ओर तेज दर्द रहनेपर लाभदायक है।

क्रोटेलस ३—टाइफायड ज्वरके लक्षण रहनेपर, रोगीका निस्तेज भाव; खूनका विषैला हो जाना।

एसिड-हाइड्रो ३x—रोगीमें एकाएक उत्कट या हिमांग (शरीर आ जाना) प्रभृति सांघातिक लक्षणोंमें।

जेलसिमियम १x, ३x—रोगके बादवाले उपसर्गों (जैसे—पक्षाघात, बहरापन वगैरह) में लाभदायक है। रोगीकी पहली अवस्था जिस समय खूब शीत, शरीरकी गर्मी खूब वेशी, तेज सर-दर्द ; तन्द्रा, नाड़ी कोमल, मृदु और पूर्ण, आँखकी पुतली फैली।

सिलिका ६ या **सल्फर** ३०—वहरापनके उपसर्गमें इसका प्रयोग होता है।

पूर्ववर्त्ती "सान्निपातिक ज्वर", "मोह ज्वर", मस्तिष्क और मस्तिष्क आवरक-झिल्ली-प्रदाह" प्रभृति दूसरे-दूसरे ज्वरोंकी दवाएँ और आनुसंगिक चिकित्सा देखनी चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—हवादार, अन्धेरे और कोलाहलसे रहित कमरेमें रोगीको रखना, गर्म जलसे वदन पोंछना, पुष्ट, पर पतला और हल्का पथ्य, भरपूर पानी पिलाना वगैरह लाभदायक होते हैं। शराव वगैरह उत्तेजक पदार्थ पीना मना है।

सड़ा-ज्वर या रक्तदुष्टि
(Putrid Fever)
(Septic poisoning, Pyæmia, Gangrene etc.)

प्लेग, नया सूतिका ज्वर, पीत ज्वर, सान्निपातिक ज्वर वगैरह रोगोंमें चोट लगनेके कारण या चाहे जिस कारणसे हो, निरोग मनुष्यके खूनमें कोई जीवाणु (१) या विष प्रवेश करनेके कारण खून दूषित होकर ज्वर-विकार, पसीना, कमजोरी, शरीरकी ग्रन्थियाँ कड़ी या उसमें पीब, शरीरमें जगह जगह जखम और पीबके लक्षण पैदा हो जाते हैं। इसका नाम सड़ा-ज्वर या सेप्टीसीमिया है। बाहरसे अगर शरीरमें कोई जहर प्रवेश न कर गया हो और पीब शरीरके भीतर ही सड़कर खून खराब हो गया हो, तो कोई-कोई इसे 'पाइमिया' भी कहा करते हैं, परन्तु वास्तविकमें सेप्टीसीमिया और पाइमिया रोगमें कोई फर्क है या नहीं, यह आजकल नि:संशय रूपसे निर्णय नहीं हो सका। जीवित देहका कोई हिस्सा जब पहले सड़ने लगता है, तब उसे "सड़ा घाव" या "गैंग्रीन" कहते हैं।

शरीरका रक्त जहरीला हो जानेका लक्षण दिखाई देनेपर समझना होगा कि शरीरके भीतर, खूब गहराईपर कोई फोड़ा, हृदन्तर्वेष्ट प्रदाह (endocarditis) पैदा हो गया है। तीन कारणोंसे यह जहर (sepsis) शरीरमें फैल सकता है :—

(१) कोई रसायनिक सड़नेवाला पदार्थ खूनमें मिलकर बुखार आ जाना।

(२) खूनमें जीवाणु प्रवेश करनेके कारण बुखारका लक्षण प्रकट होना।

(३) शरीरके कितने ही तन्तुओं और यन्त्रोंसे फोड़ा वगैरहकी वजहसे पीव पैदा हो जाना।

चिकित्सा—फाइटोलैका θ – (फी मात्रामें २ से ५ बून्द) यह सन्देह होते ही कि खूनमें दोष पैदा होना आरम्भ हो गया है।

आर्निका ३—चोट, गिरना, जखम या नश्तर लगवानेके कारण उत्पन्न रोगमें। लड़का होनेके बाद प्रसूताका खून दूषित हो जानेपर इससे लाभ होता है।

पाइरोजेन ६—तेज बुखार। बहुत बेचैनी, बहुत तेजीसे शरीरकी गर्मीका बढ़ना, बहुत ज्यादा पसीनेके साथ गात्रताप; पसीना होनेपर भी शरीरकी गर्मी नहीं घटती; पसीना प्रभृति सब प्रकारके स्रावोंमें बहुत बदबू रहती है। हृत्पिण्ड कमजोर रहता है; हृत्पिण्डकी क्रिया बन्द हो जानेकी आशंका होनेपर। "प्रसवांतिक विषाक्त ज्वरका पाइरोजेन महौषध है।"

मर्क-सोल ६—सड़नेका लक्षण दिखाई देनेपर।

आर्सेनिक ३x—बेचैनी, जलन पैदा करनेवाला दर्द, बुखारके साथ सुस्ती, जीभ लाल और बहुत दिनोंसे खून दूषित रहनेपर। शायद यही इन रोगकी प्रधान दवा है।

लैकेसिस ६—खूनका दूषित होना, कमजोरी, तन्द्रा और प्रलाप रहनेपर इसका व्यवहार करना चाहिये।

बैप्टीशिया θ, ३x—टाइफायड ज्वरके लक्षणमें (जैसे—ताप १०२°—१०५°) पतला, बदबूदार, कुछ काले रंगका दस्त तथा साँसमें दुर्गन्ध, जीभ सूखी और मलिन।

किनिनम-सल्फ ३x—क्षय करनेवाला बुखार; हल्का, धीमा, पर बहुत दिनोंतक रहनेवाला बुखार।

रस-टक्स ३—शरीरकी ग्रन्थियोंपर रोगका दौरा होनेपर।

और पुष्टिकर भोजन रोगीको थोड़ा-थोड़ाकर खिलाना चाहिये। रोगी हवादार कमरेमें रखना चाहिये। यदि रोगी बहुत कमजोर हो जाये, तो उसे थोड़ी शराब दी जा सकती है।

धातुगत रोग
(Constitutional Diseases)

वात, यक्ष्मा-खाँसी वगैरह कितने ही रोग शरीरके सब अंग (या एकके बाद दूसरे अंग) पर आक्रमण किया करते हैं ; इन्हें ही "धातुगत" या "सार्वाङ्गीण" रोग कहते हैं। ये सब रोग दवाओंके द्वारा यदि जड़से आराम न हों, तो पुश्त-दरपुश्ततक चला करते हैं। इसका विवरण नीचे लिखा जाता है :—

वात रोग (Rheumatism)

शरीरकी बिजलीकी कमीके कारण, देहकी पोषण-क्रियामें गड़बड़ी होती है और जीवनी-शक्ति कमजोर पड़ जाती है, इसी हालतमें यह बीमारी पैदा होती है। सम्भवतः एक तरहके जीवाणु इस रोगके खास कारण हैं।

वात रोगमें साधारणतः शरीरकी "बड़ी सन्धियोंपर रोगका आक्रमण" होता है ; कभी-कभी पेशियोंपर भी हमला होता है। बड़ी सन्धियोंपर रोगका आक्रमण होनेपर उसे "सन्धि-वात" (rheumatism) कहते हैं और यदि मांस-पेशियोंपर रोगका आक्रमण हो, तो उसे "पेशी-वात" (muscular rheumatism) कहते हैं।

इसके अलावा, कभी छोटी सन्धियाँ (जोड़) भी आक्रान्त होती हैं, उस अवस्थामें इसे "ग्रन्थि-वात" या "गठिया" (gout) कहते हैं। मध्यवित्तके गृहस्थ या जो परिश्रमकर खानेवाले हैं, उन्हें ही सन्धि-वात

पसीना ; बुखार ; रातमें अथवा बिछावनकी गर्मीसे बीमारी बढ़ जाती है।

वायोला ओडारेटा ३—शरीरके ऊपरी अगके दाहिनी तरफके वातमें इसके द्वारा डाक्टर ह्य जने बहुतसे रोगियोंको अच्छा किया है।

युपेट-पर्फ १x—यह पीठके दर्दका महौषध है। इन्फ्लुएञ्जा, मेलेरिया या पित्त-जनित या हड्डी अथवा पेशियोंसे बहुत काम लेनेके कारण पैदा हुए पीठके दर्दमें (खासकर अजीर्ण रोगके रोगियोंके लिये और आर्निका, बेलिस-पेरिनिस, ब्रायोनिया, रस-टक्स वगैरह दवाएँ फायदा न करने या बहुत कम फायदा करनेपर) इससे बहुत फायदा होता है।

आर्निका ३, ३०—पेशियोंमें दर्द, इसके बाद उन पेशियोंका कड़ा हो जाना, चोट लगने या गिर जानेके बाद वात होनेपर यह लाभ करता है।

फाइटोलेक्का ३०—उपदंशके कारण वात। अगुलियोंकी सन्धियाँ फूली, दर्द-भरी, कड़ी और चमकीली हो जाती हैं।

नेट्रम-सल्फ १२x (विचूर्ण)—प्रमेहके साथ वात। बरसात और बरसाती हवामें बीमारी बढ़ जाती है।

आरम-मेटालिकम ३ विचूर्ण ३०—एक सन्धिसे दूसरी सन्धिमें घूमनेवाला वात, अन्तमें वह वक्षस्थलपर आक्रमण करता है। सोना मुश्किल हो जाता है, सामनेकी ओर झुककर बैठना पड़ता है; बहुत पसीना होता है; सूजाक या गर्मी रोगके कारण पैदा हुआ वात।

हालमें (१९२२ ईस्वीमें) पेरिसके डा० Grenet साहबने घोषणा की है, कि Colloidal Gold (1 or 1. 5cc) इञ्जेक्शन तरुण सन्धि-वातकी एकमात्र दवा है।

फास्फोरस ३, ३०—बहुत देरतक पानीमें रहकर कपड़े वगैरह धोने या धोबीका काम करनेसे पैदा हुए वातमें इसका प्रयोग होता है।

डल्कामारा ६—पानीमें (विशेषकर बरसातके पानीमें) भींगनेके कारण वात होनेपर ; नये और पुराने दोनों ही तरहके वात-रोगमें यह फायदा करता है ।

लैक्टिक-एसिड ३, ३०—घुटने, कन्धा, कलाई, केहुनी और हाथ-पैरोंकी छोटी-छोटी सन्धियोंका वात ; वातके साथ गर्म डकार या धुन्ध डकार आना, मुँहमें पानी भर आना, मुँहमें जखम, मिचली, कै वगैरह अजीर्ण रोगके लक्षणोंमें और बहुमूत्र या रक्तकी कमीके साथ वात होनेपर इससे खूब लाभ होता है ।

कोलोफाइलम ३—छोटे-छोटे जोड़ों, खासकर हाथ-पैरोंके जोड़ और अंगुलियोंकी सन्धियोंमें तेज दर्द ; सरमें दर्द ; दर्द एक जगह अधिक देरतक नहीं रहता है ।

गल्थेरिया θ (फी खुराक पाँच-सात बून्द)—बहुत तेज प्रदाहिक वातमें ।

बर्बेरिस वल्गेरिस पेशाबकी गड़बड़ीके साथ पुराने सन्धिवातमें (खासकर घुटनेके सन्धि-वातमें), अंगुलियोंके जोड़ फूले, अंगुलीके नखके भीतर दर्द, हाथ, पैर, अंगुली, कन्धा प्रभृति शरीरके नाना स्थानोंमें पक्षाघातिक दर्द ।

फेरम-फास १२x विचूर्ण—ऐकोनाइटकी तरहके लक्षणमें ।

बेंजायिक एसिड ६x—रोगवाली जगह फूलकर लाल हो जाती है, इतना दर्द होता है कि छुआ नहीं जा सकता है । "बदबूदार पेशाब" प्रभृति लक्षणोंमें इसका प्रयोग होता है ।

आर्जेण्टम मेटालिकम ६—घुटने या केहुनीके दर्दमें (बर्छी भोंकनेकी तरह दर्द) ; प्रदाह या सूजन नहीं रहती ।

कैलि-बाइक्रोम ३—पुराने वातमें ; उपदंशके कारण वात ; (मेजेरियम) इधर-उधर हिलनेवाला वात ; दर्द एक जगहसे दूसरी जगह चला जाता है । एँड़ीके ऊपरी भागमें दर्द, हड्डीमें दर्द ।

कैल्के-फास—बरसातमें रोग बढ़नेपर।

लीडम ६ नये या पुराने वातमें (विशेषकर दर्द नीचेकी ओरसे ऊपरकी ओर चढ़ता हो)।

कैल्मिया ३—दाहिनी ओर (खासकर बाँहके) दाहिने अगमें वात हो जाता है ; दर्द ऊपरकी ओरसे नीचेकी ओर उतरता है।

कास्टिकम ६, ३०—बायें हाथकी वात-व्याधिमें हिलने-डुलनेसे दर्दका बढ़ना।

रूटा ३—कमरके वातमें। चोट लगनेकी वजहसे वात होनेपर और आर्निका तथा रस-टक्ससे लाभ होनेपर।

पुराने वातका इलाज—देखिये।

बहुत देरतक पानीमें रहनेके कारण वात होनेपर—रस-टक्स, फास्फोरस।

वात ज्वरमें देहका ताप १०५ डिगरीसे अधिक होनेपर—रुबिनीका कैम्फर θ, ऐकानाइट २x, ऐगेरिकस θ, विरेट्रम विरिडि १x, सिमिसिफ्यूगा १x, बेलेडोना ३x।

सन्धिका वात और सूजनके लक्षणमें—बेलेडोना, ब्रायोनिया, कोलचिकम, सल्फर, मर्क्युरियस।

वातके समय रोगवाली जगह कड़ी या टेढ़ी हो जानेपर—चायना, रस टक्स।

इधर-उधर टहलनेवाले वातमें—पल्सेटिला।

मर्क्यूरीके अपव्यवहारसे पैदा हुए वातमें—चायना, गुयेकम, हिपर।

वातर रोगकी अच्छी तरह चिकित्सा न होनेपर—क्लिमेटिस, थूजा।

सूजाकके कारण पैदा हुए वातमें—मेडोरिनम, ऐकोनाइट, मर्क-सोल, आर्जेण्ट-नाई, थूजा, सल्फर, पल्सेटिला, सार्सा, मर्क-बिन-आयोड ("प्रमेह रोग" देखिये)।

उपदंशजनित वातमें—एसिड नाइट्रिक, कैलि-बाइक्रोम, कैलि-आयोड, मर्क-सोल, मेजेरियम, सिफिलिनम, आरम। ("उपदंश रोग" देखिये)।

ठण्डी हवा लगनेके कारण पैदा हुए वातमें—डल्कामारा, रस-टक्स, कैल्के-कार्ब।

हरएक ऋतु परिवर्त्तनमें वात होनेपर—ब्रायोनिया, कार्बो-वेज, रोडो, सिलिका, विरेट्रम-ऐल्ब।

छातीके वातमें—ब्रायोनिया, आर्निका, रोडोडेण्ड्रन, रस-टक्स, सिमिसिफ्यूगा।

हृत्पिण्डके वातमें—स्पाइजि, डिजिट, ऐकोन।

छाती और पीठके वातमें—आर्निका, आर्सेनिक, रस-टक्स, युपेट-पर्फ १x।

कमरके वातमें—ऐकोन, आर्निका, सिमिसि, सिकेलि, ऐण्टिम-टार्ट, आर्सेनिक, रस, नैपथैलिनम ३ और मैग्नेशिया-फास ३x गर्म पानीके साथ सेवन करना चाहिये। ("कटिवात" अध्याय देखिये)।

उरु-सन्धि वातमें—कोलोसिन्थ, ऐकोन, रस, आर्स, सिमिसि, नक्स, फाइटो।

कलाई, अंगुली या छोटी सन्धियोंके वातमें—ऐक्टिया-स्पाइकटा।

घुटना या पैरकी अंगुलियोंकी गांठोंके वातमें—पल्स ३०; विश्रामावस्थामें रोग बढ़नेपर रस-टक्स ३०; हिलने-डुलनेसे बढ़नेपर

ब्रायो ३०, छोटी छोटी सन्धियोंमें दर्द होनेपर और रोग जड़से आराम करनेके लिये सल्फर २०० देना चाहिये।

बाँहके वातमें—फाइटोलेका, कैल्मिया।

बाएँ बाँहके वातमें— नक्स-मस्केटा।

दाहिने कन्धे या दाहिनी बाँहके वातमें—फेरम, फाइटो, सैंगुइनेरिया, चेलिडानियम।

मणिबन्ध और एड़ीमें दर्द होनेपर—(मानो वहाँकी हड्डी खिसक गयी हो) ब्रायो, रस, रूटा।

बड़े हाड़ोंमें दर्द—मेजेरियम।

बाएँ पैरमें दर्द—इलैप्स।

दाहिने पैरमें दर्द—लैकेसिस।

गर्म प्रयागसे वातकी वृद्धि—ब्रायो, फास्फोरस, पल्सेटिला।

हिलने डुलनेसे—ब्रायो, कैल्केरिया।

शामके वक्त—पल्स, रस, कोलचि।

रातमें—आर्स, पल्स।

आधी रातके पहले—ब्रायोनिया।

दो पहरसे आधी राततक—बेलेडोना और रस-टक्स।

आधी रातके बाद—आर्सेनिक, मर्क्युरी, सल्फर, थूजा।

सवेरे—आर्स, नक्स, कैल्के-कार्ब, थूजा।

वातका घटना—"गरम प्रयोगसे"—आर्स, रस, लाइको, मैग्नेफास, सल्फर।

वातका घटना—"ठण्डे प्रयोगसे"—पल्स, थूजा।

„ „ —"दबानेसे"—चेल, पल्स, रस-टक्स।

ठण्डी सूखी हवा लगनेके कारण वात—ऐकोन, ब्रायो।

ठण्डी तरह हवा लगनेके कारण वात—डल्कामारा, रस-टक्स, कोलच्चि, विरेट्रम, नेट्रम-सल्फ ।

ऊपर कही दवाएँ रोगकी कमी-बेशीके अनुसार ३—३० क्रमकी देनी चाहिये ।

पथ्यादि—रोगीकी पहली अवस्थामें बुखार रहनेपर सागू, आरारूट, बार्ली और थोड़ा दूध दिया जा सकता है । ओस और सर्दी लगना उचित नहीं है । रोगवाली जगह गर्म कपड़े या रूई देकर बाँध रखनी चाहिये । रोगके समय शराब, मांस और उत्तेजक खाद्य अथवा खट्टे फल न खाने चाहियें । ताजी साग सब्जी लाभदायक है । रोग घट जानेपर रोटी या भात खाया जा सकता है । गर्म पानीसे नहाना चाहिये । वातके रोगियोंके लिये समुद्रके किनारेकी जगहमें रहना फायदेमन्द होता है । दर्द ज्यादा होनेपर दर्दवाली जगहमें सेंकना या नमककी पोटलीसे सेंकना या मिथिलेटेड स्पिरिट मालिस करनेसे फायदा होता है । प्रत्येक रोगीका कम्बल व्यवहार करना चाहिये ।

पेशी वात

(Myalgia of Muscular Rheumatism)

सन्धियोंकी अपेक्षा इन रोगोंमें पेशियाँ ही अधिक आक्रान्त होती हैं । मांस-पेशी (muscles) और उनसे लगी हुई पेशी-बन्धन (fascia) और अस्थि-वेष्ट (periosteum) का टटाना और दर्दसे भरा रहना तथा अकड़ जाना प्रभृति इस रोगके प्रधान लक्षण है ; सूजन, लाली वगैरह प्रदाहके दूसरे लक्षण इसमें बहुत कम और शायद ही कभी दिखाई देते हैं । रोगी बहुत बार ठीक-ठीक बता भी नहीं सकता, कि यह दर्द रोगवाली जगहकी पेशियों (muscles) में है या उसके स्नायुओं (nerves) में मालूम होता है ।

इस बीमारीकी तरुण अवस्थामें एक खास पेशी या कई पेशियोंपर बीमारीका दौरा होता है, कभी-कभी साथ ही बुखार भी हो जाता है। रोगकी पुरनी अवस्थामें रागीको रोगवाले स्थानमें भाँति-भाँतिका तेज दर्द अनुभव होता है (खासकर मौसम weather बदलनेके समय)। रोगकी पुरानी अवस्थामें रोगीको "जीवन्त वायुमान यन्त्र" (live barometer) कहा जाये, तो बेजा न होगा।

गर्दनकी पेशियोंपर रोगका आक्रमण होनेपर, उसे "गर्दनका वात"; कन्धेकी पेशियोंपर रोगका आक्रमण होनेपर उसे "स्कन्ध-वात", सीनेकी पेशियोंपर रोगका आक्रमण होनेपर "पार्श्व-वात" और कमरकी पेशियों-पर रोगका आक्रमण होनेपर उसे "कटि-वात" कहते हैं। इसका पूरा-पूरा हाल अगले चार अध्यायोंमें लिखा गया है।

कारण तत्व—तरी, ठण्डी हवा लगना या मेहनत करनेके बाद सर्दी लग जाना प्रभृति कारणोंसे यह रोग हुआ करता है। कितनी ही बार ऐसा भी देखनेमें आता है कि जिन्हें सन्धिवात या ग्रन्थि-वात हुआ है, उन्हें ही अकसर यह रोग भी हुआ करता है। औरतोंकी बनिस्बत मर्दोंको यह रोग ज्यादा होता है।

चिकित्सा—सिमिसिफ्युगा ३x—६ या मैक्रोटीन ३x विचूर्ण पेशी वातकी सबसे बढ़ियाँ दवा है। सैंगुनेरिया ६ भी एक अच्छी दवा है (खासकर जब दाहिनी ओर वात हो), ब्रायोनिया ३, ३० (खासकर पीठके वातमें), रस टक्स ६, ३० (पीठके नीचेसे पैरतक दर्द फैला हुआ हो), कोलचिकम ३, ३० (पेट, पीठ और कन्धेके दर्दमें), रेनानक्युलस ३x, ६ (बगलमें दर्दमें), जेलसिमियम ३x,३०, मैक्रोटीन २x, डल्कामारा ३, कास्टिकम ६ वगैरहकी भी जरूरत पड़ सकती है। खाने-पीनेका संयम जरूरी है, सेंकना या दवा देना भी अच्छा है। "वात-रोग" और "ग्रन्थि-वात" का इलाज देखिये।

गर्दनकी अकड़न (Stiff-neck)

गर्दनके पिछले भागकी पेशियोंमें वात होनेपर, गर्दन कड़ी और दर्द-भरी हो जाती है तथा अकड़ जाती है। गर्दनके दर्दकी वजहसे रोगीको माथा हिलानेकी शक्ति बिलकुल ही नहीं रहती है; परन्तु दर्द एक बगलमें ही ज्यादा हुआ करता है। विशेषकर बाईं ओर ज्यादाकर दर्द हुआ करता है। सर एक ओर टेढ़ा हो जाता है या झुक जाता है।

चिकित्सा—एकोनाइट ३—(यह पहली अवस्थाकी दवा है) खासकर बुखार, बेचैनी, सर्दी लगनेके कारण दर्द होनेके लक्षणमें यह लाभदायक है।

लैकनैन्थिस ३—इस रोगकी बहुत बढ़िया दवा है। गर्दन एक ओर (खासकर दाहिनी ओर) टेढ़ी हो जानेपर और उसके साथ गलेमें पसीना होनेपर यह ज्यादा फायदा करता है।

बेलेडोना θ, ३x—दर्द एकाएक पैदा होता है और उसी तरह एकाएक गायब हो जाता है।

सिमिसिफ्यूगा ३x—बहुत जगह यह भी लाभ करता है।

ब्रायोनिया ३—डाक्टर काउपरथायेटकी मतसे यह इस रोगकी खास दवा है (खासकर गलेमें तेज दर्द हो, पर दर्दवाली जगह दवा रखनेपर दर्द कम हो जाये)।

चेलिडोनियम २x—गर्दनकी दाहिनी ओर कड़ापन और दर्द होनेपर यह उपयोगी है।

मैग्नेशिया-फास २x, ६x विचूर्ण—("खूब गर्म पानीके साथ सेवन करना चाहिये") नये और पुराने रोगकी यह बहुत ही बढ़िया दवा है। डा० मैकनिशने १८ महीनोंतक एक रोगीको यही दवा खिलाकर एकदम अच्छा कर दिया था।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगवाले स्थानमें थोड़ा फ्लानेल रखकर उसपर एक चिकने लोहेके टुकड़े या इस्तरी द्वारा घसनेसे तेज दर्द भी कम पड़ जाता है। रोगीके सरके नीचेका तकिया और बिछावन धूपमें डालना आवश्यक है।

स्कन्ध-वात (Omalgia)

गर्दनकी पेशीका आकार कुछ तिकोनिया है। इसीलिये इसे त्रिकोणपेशी (deltoid) कहते हैं। इस पेशीमें वात या स्नायु-शूल होनेपर, कन्धेके जोड़की जगहपर एक तरहका दर्द होता है। रोगी अपने हाथ नहीं हिला सकता। सँगुनेरिया ६, इसकी प्रधान दवा है। आक्रान्त स्थान रुई या फ्लानेलसे ढँक रखना अच्छा है। "वात-रोग" की दवाएं देखिये।

पार्श्व-वात (Pleurodynia)

पजरेकी हड्डीकी (खासकर बाएं भागकी) बीचवाली पेशी आक्रान्त होनेपर, उसे "पार्श्व-वात" कहते हैं। हिलने-डुलने, साँस छोड़ने और खाँसनेपर छातीमें दर्द मालूम होना इस रोगका प्रधान लक्षण है। रैननक्यूलस-बल्ब ३, ३० इसकी प्रधान दवा है। "वात-रोग" और "ग्रन्थि-वात" की चिकित्सा और दवाएं देखिये। "पुरानी वात-व्याधि" की दवाएं देखिये।

कटि-वात या कटि-पेशी-वात
(Lumbago)

वात अगर कमरकी माम पेशियोंमें हो जाये, तो उसे "कटि-वात" या "कटि-पेशी-वात" कहते हैं। कमरकी ये पेशियाँ पीठकी रीढ़ (spinal column) का भार वहन करती हैं, इसीलिये साधारणतः

इस वातके ज्यादा हो जानेपर रोगी न तो सीधा होकर बैठ सकता है और न खड़ा हो सकता है। सर्दी लगना, पानीमें भींगना, भारी चीज उठाना वगैरह कारणोंसे यह रोग एकाएक पैदा हो जाता है। कमरमें तेज दर्द, धीमा बुखार या बुखारका न रहना, दबाने या हिलने-डुलनेसे दर्दका बढ़ना, दर्द बहुत तेज हो जानेपर खाटसे न उठ सकना वगैरह लक्षण इसमें दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—रस-टक्स ६, ३०—इस रोगकी प्रधान दवा है (खासकर जब ठण्डी और तर हवा लगने या भारी चीज उठानेके कारण यह रोग पैदा हो जाये)। पुराने कटि-वातमें इससे लाभ होता है। पुराने कटिवातमें यदि अकड़नका भाव रहे या रातमें विश्रामके समय या सवेरे सोकर उठनेपर और रोगवाले अंगको हिलानेपर दर्द बढ़ें, तो रस-टक्स फायदा करता है। यदि टस-टक्ससे फायदा न हो, तो बर्बेरिस वलगेरिस देना चाहिये।

बर्बेरिस वलगेरिस २, ३—अगर यकृत और पेशाबका दोष मौजूद हो, पंजरेके नीचे दर्द हो, यकृतके दर्दमें, पित्त-पथरी (gall-stone) के साथ-साथवाले दर्दमें इसका प्रयोग होता है।

ऐकोनाइट ३x—नये कटिवातमें, खासकर जब ठण्डी, सूखी हवा लगकर रोग पैदा हुआ हो।

आर्निका ३, ३०—भारी चीज उठाने या चोट लगनेके कारण कटि-वात हुआ हो। ऐकोनाइट या रस-टक्सके व्यवहारके बाद इससे फायदा होता है।

सिमिफ्यूगा १x,३ **या मैक्रोटीन** ३x,३—पेशियोंकी तकलीफके साथ बेचैनी हो और नींद न आती हो, तो इसे देना चाहिये। डा० क्लार्क कहते हैं, कि उन्हें मैक्रोटीन ३x के प्रयोगने बहुत ही अच्छी सफलता दिखाई है।

बेंज़िम-टार्ट ३x चूर्ण ६—पीठमें दर्द (खासकर भोजन और बैठनेके बाद) ; पीठकी रीढ़की हड्डियों और कमरमें दर्द, ठण्डा और लसदार पसीना, कभी-कभी खींचन, थोड़ा भी हिलने-डुलने, के करने या मिचली या ठण्डा लसदार पसीना निकलनेसे दर्द बढ़ जाता है। डा० बेयर, क्लार्क, ज़ुसे और क्रेटिन इस दवाके ज्यादा पक्षपाती हैं। लगातार दर्द बना रहे, तो ऐसी अवस्थामें इसे खिलाकर डा० ह्यूजको बहुत लाभ दिखाई दिया है। डाक्टर क्लार्कका मत है, कि १२ क्रममें यह दवा दी जाये।

फाइटोलैक्का ३x—तेज दर्द (वृक्क-प्रदाहके कारण)।

सल्फर ३०, २००—पुराने रोगमें बीच-बीचमें इस दवाका व्यवहार करना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—नये रोगमें दर्दवाली जगहपर थोड़ा तारपीनका तेल या गर्म फ्लेनेलसे मालिश करना चाहिये। पुराने रोगमें रूईका कमरबन्द काममें लाना चाहिये। "वात" रोगकी दवाएँ देखिये।

कटिस्नायु-वात या गृध्रसी-वात

(Sciatica)

कटिस्नायु या ऊरुस्नायु (thing-nerve) के प्रदाहके कारण जो स्नायु-शूलकी तरह दर्द होता है, उनका नाम "कटिस्नायु-वात" है। ठण्डी सूखी या तर हवा लगना, भारी चीज उठाना वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है। वात, गठिया तथा स्नायुशूलके धातुवाले व्यक्तियोंको यह रोग होनेकी सम्भावना रहती है। यह रोग जिस स्थानपर होता है, वह फूलता भी नहीं और लाल भी नहीं होता। इस रोगसे धीरे-धीरे "मेरुमज्जाका क्षय (locomotor-ataxia)" रोग पैदा हो सकता है।

चिकित्सा—ऐमोन-म्यूर ३x, ३—बैठे रहनेपर दर्दका बढ़ना, चलने फिरनेसे कुछ कम होना और सो जानेपर दर्द बिलकुल बन्द हो जाना प्रभृति लक्षणोंमें ऐमोन म्यूरियेटिकमका प्रयोग होता है।

कोलोसिन्थ १, ३—इस रोगकी यह एक उत्कृष्ट दवा है। दर्द एकाएक पैदा हो जाये। सर्दी लगने या तरीके कारण रोग पैदा होनेपर।

नैफेलियम (gnaphalium) ३, ३०—स्नायुओंमें तेज दर्दके साथ ऐंठन (पर्यायक्रमसे)। रोगवाले स्थानमें तेज दर्द और सुन्न हो जाना।

लाइको १२—दाहिने अंगका वात, दिनके तीसरे पहर या रोगवाले अंग दवाकर सोने अथवा जरा छू देनेसे ही दर्द बढ़ जाता है।

कार्बोनियम-सल्फ—नया या पुराना कटि-वात, यदि आराम होने योग्य न समझा जाये या कोई दूसरी दवा फायदा न करे, तो इससे लाभ होता है।

मैग्नेशिया-फास २x, ३x—(फी खुराक ५ ग्रेन, गर्म पानीके साथ) विजलीकी तरह दर्द अथवा सेंकनेसे दर्द कम हो जाता हो।

आर्स-सल्फ-रूब्रम ६, ३०—बूढ़े या दुवले रोगियोंके लिये, इन्फ्लुएञ्जाके वाद वात रोग होनेपर इसका प्रयोग होता है।

नेट्रम-सल्फ १२x चूर्ण—वैठनेकी जगहसे उठते ही दर्द, कुबड़े होकर वैठनेपर दर्द वढ़ता हो।

लैकेसिस ६, ३०—रजःस्राव वन्द (menopause) होनेके वाद रोग हो, नींद खुलनेपर दर्द बढ़ता हो।

ऐकोनाइट ३x—तेज हवा लगकर कमरके स्नायुओंमें वात हो गया हो. शरीरमें झुनझुनी या सुन्न मालूम होना।

रस-टक्स ६—गीलापनके कारण कटिस्नायु-वात।

आर्सेनिक ३—बूढे और कमजोर मनुष्योंको कटि-स्नायुशूल या पक्षाघात होनेपर। गर्म प्रयोगसे, सेंकनेसे दर्द कम हो जाता है।

सल्फर ६, ३०—पुराने रोगमें बीच-बीचमें सल्फरकी दो-एक मात्रा देनी चाहिये।

"स्नायुशूल" और "कटि-पेशीवात" रोगीकी दवाएं देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—शरीरमें झोककी हवा न लगे, गर्म कमरेमें दवा या जायतून तेलकी मालिश करना, कमर को दवा देना रोगवाले अगपर कम्बल या कोई दूसरा गर्म कपडा रखकर उसपर इस्तरी करना और नीबुका रस पीना फायदेमन्द है।

पुराना वात
(Chronic Rheumatism)

इसमें खासकर जाघकी सन्धियोंमें बीमारी होती है और तरुण सन्धि वातके दूसरे-दूसरे सभी लक्षण दिखाई देते हैं ; परन्तु बुखार या पसीना होता बहुत कम दिखाई देता है। केवल सन्धिवाली जगह कडी और टेढी हो जाती है, दर्द या सूजन भी कम ही रहती है ; परन्तु रोगवाले स्थानमें रस जमा होकर वह फूल जाता है। इस रोगमें अजीर्ण रोगके लक्षण अकसर मौजूद रहते हैं।

चिकित्सा—इस बीमारीका इलाज करते वक्त अजीर्ण रोगके लक्षणोपर ध्यान रखकर दवा चुननी चाहिये।

कैलि-हाइड्रो १x विचूर्ण ३०—बहुत तेज दर्दके साथ बार-बार बीमारीकी हालत बदलती हो, नये वात रोगके बाद, रोगवाला स्थान फूला और कडा हो गया हो, रोगीमें चलनेकी ताकत नहीं रहती ; सन्धिमें कमजोरी ; "उपदश रोगके कारण पैदा हुआ ग्रन्थिवात।"

रोडोडेण्ड्रन ३०—हाथ, पैर, जांघ और हाथके बीचमें दर्द मालूम हो, पर स्थिर रहने और पानी बरसनेके बाद दर्द बढ़ जाता है ; भोजनके समय और भोजनके अन्तमें दर्द कम हो जाता है। रातमें (खासकर पिछली रातमें) दर्द बढ़ता है ; पानी बरसनेके पहले और ग्रीष्म ऋतुमें रोगका हमला होता है : सन्धियोंमें मोच आनेकी तरह दर्द होता है।

रस-टक्स ६, ३०—मांस-पेशियाँ और बन्धनीकी नसें खासकर आक्रान्त होनेपर। हिलानेपर दर्द घटता है ; विश्रामसे बढ़ता है।

ब्रायोनिया ६x, ३०—पैरकी एँड़ीमें तेज दर्द ; चमकीले लाल रंगकी सूजन ; सूखी और गर्म सूजन ; "हिलने-डुलनेसे दर्दका बढ़ना ;" अजीर्ण या "कब्जियत" में इस दवाके प्रयोगसे फायदा होता है।

आर्निका ३x, ६—बड़ी-बड़ी सन्धियोंका कड़ा होना और छोटी सन्धियोंमें फटनेकी तरह, जखम हो जाने या चोट लगनेकी तरह दर्द पुराने वातका पहला कारण अगर किसी तरह चोट लगना हो।

डल्कामारा ६—पानी बरसनेके बाद या "पानीमें भींगने" या तर जगहमें रहनेके कारण यह बीमारी होनेपर, विश्रामसे दर्द बढ़ जाता है ; हिलने-डुलनेपर घटता है ; रह रहकर टूटनेकी तरह दर्द ; पीठ, बाँह और पैरकी सन्धियोंमें ज्यादा दर्द होता है ; ज्यादा पसीना और बदबूदार पेशाब होता है।

गल्थेरिया θ (मूल अरिष्ट)—प्रदाहवाले वातमें ; २ से ५ बून्द-तक की मात्रा देना चाहिये।

लेडम ६—छोटी-छोटी सन्धियोंका वात, पैरसे तलवेके ऊपरकी ओर चलानेवाला वात। बदन ठण्डा, परन्तु रोगी बिछावनकी गर्मी नहीं सह सकता ; नया या पुराना वात।

कैलमिया ३, ६—शरीरके ऊपरकी ओरसे दर्द नीचेकी ओर बढ़ता है ; रोगवाली जगह सुन्न हो जाती है ; दर्द इधर-उधर हटता है ; दाहिने अंगका वात ; हृत्पिण्डका वात।

फाइटोलैक्का ३—रोगवाली जगह भारी और दर्द-भरी तथा ठंडी ; गर्मी और बरसातमें रोगका बढ़ना ; रोगवाली जगह सूजी हुई और लाल। हड्डीके उपदंश या विष फैलनेकी वजहसे दर्द, दाहिने कन्धेमें तीर लगनेकी तरह दर्द, कन्धेकी हड्डी कड़ी, हाथ उठा नहीं सकता है।

कास्टिकम ६, ३०—कन्धे, उरु और घुटनेमें दर्द, दर्दकी वजहसे बदन हिलानेकी इच्छा, पर हिलानेसे दर्दका कम न होना (रस), कन्धेमें दर्दके कारण माथेकी ओर हाथ न उठाया जाता हो ; शामके वक्त दर्दका बढ़ना और सवेरे कम हो जाना ; रातमें स्थिर भावसे सोया न जाता हो , अंगुलीकी सन्धियोंमें दबा रखनेकी तरह दर्द। बिछावन गर्म रहने अथवा बाहरी गर्मीसे दर्दका घटना।

थूजा ६, २००—टीका लेनेके कारण पैदा हुए (अर्थात् टीका लेनेके बहुत समय बाद) वात रोगमें। एक अधेड़ वयसके मनुष्योंको बायें कन्धेमें वात हुआ ; परन्तु किसी दवासे लाभ नहीं हुआ, पीछे मालूम हुआ कि उसने लड़कपनमें कई बार टीका लिया था इस समय थूजा २०० देनेसे उसे बहुत फायदा हुआ।

मर्क-सोल ६, ३०—कुचल डालनेकी तरह हाड़ोंके भीतर दर्द और इसके साथ ही थोड़ा बुखार, जाड़ा मालूम होना ; रोगवाली जगहपर खट्टी दुर्गन्ध-भरा बहुत पसीना, परन्तु पसीना होनेपर भी दर्दका कम न होना , रातमें बिछावनकी गर्मीसे दर्दका बढ़ना ; कभी-कभी पेटमें ऐंठनके साथ आम मिले दस्त ; सुजाक या गर्मीके कारण पैदा हुए वातमें (यदि पारा या मर्क्युरी न खिलाया गया हो)। "तरुण-वात" रोगकी दवाएं देखिये।

नाइट्रिक एसिड ३, २००—पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुए वातमें यह लाभदायक है। सिपिया, सल्फर वगैरह दवाओंकी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—दूध, मक्खन और पनीर पुराने वात-रोगीका पथ्य हैं ; गूलर भी सुपथ्य है। पुराने रोगीको सूखी जगहमें रखना चाहिये, पैरमें पानी या सर्दी न लगने पाये। कुछ गर्म पानीमें (बहुत थोड़ा नमक मिलाकर) नहाना ; जल्दी पचनेवाली चिजें खाना और थोड़ी मात्रामें काड-लीवर आयल सेवन करना चाहिये। शराव वगैरह न पीनी चाहिये।

गठिया (Gout)

किसीके शरीरकी छोटी-छोटी सन्धियों (Small joints, जैसे—पैरके अंगूठेकी सन्धि) पर रोगका आक्रमण होनेपर, हमलोग उसे "गठिया वात" हुआ है, कहा करते हैं। सम्भवतः इन छोटे जोड़ोंमें युरेट आफ सोडियम जमा हुआ करता है और खूनमें युरिक एसिड मौजूद रहता है ; यह रोग धनी और विलासी आदमियोंमें ही खासकर देखा जाता है। गठियावाले रोगियोंमें पेटकी गड़बड़ी अकसर रहा करती है। यदि माता-पिताको यह रोग हो, तो पुश्त-दर-पुश्त चला करता है।

वदहजमी, शरीर अच्छा न करना, सर भारी ठण्ड लगा करना, रातमें तकलीफोंका वढ़ना वगैरह नये गठिया वातके पूर्वके लक्षण हैं। इसके वाद धीरे-धीरे सव सन्धियाँ आक्रान्त हो जाती हैं और पुराना गठिया हो जाता है। इसके बाद हृत्पिण्ड और पेशावकी वीमारी भी पैदा हो जाती है।

चिकित्सा—आर्टिका युरेन्स θ—फी खुराक ५ वून्द, खूव गर्म पानीके साथ चार घण्टेका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये। युरिक एसिड और पेशावके कण शरीरसे निकाल देनेसे रोग जल्द अच्छा हो जाता है।

कोलचिकम ३—पाकाशय या हृत्पिण्डका दोष रहनेपर यह दवा देकर हमलागोंको बहुत लाभ दिखाइ दिया है। ऐलोपैथिक डाक्टर रोगीका ज्यादा मात्रामें कोलचिकम सेवन करा, उसमें अण्डलाल मिला मूत्र-रोग प्रभृति पैदा कर देते हैं, यह ठीक नहो है।

आरम-म्यूर ३x—हृत्पिण्डको कमजोरीक लक्षणमें।

सैवाइना ३x—वातक साथ साथ यदि जरायुका दोष हा।

पल्सेटिला ६—इधर-उधर हटनेवाला वात ; यदि एक सन्धिसे दूसरी सन्धिमें वात घूमता फिरता है।

नेट्रम-म्यूर ३० — हमेशा जाडा मालूम हाता हो, समुद्रक किनारेका जगहमें रहनपर रोग बढ जाता है।

लाइकोपाडियम १२—"पेशावमें लाल रंग" की तली जमना। अजीर्ण, पेट फूलना आदि उपसर्ग रहनेपर।

आर्निका ३x— रोगीका ऐसा भय हाता है कि मानो कोई उसका पैर काटकर फेंक रहा है। कुचले जानेकी तरह दर्द।

बेंजोयिक एसिड ३—हाथकी अगुलियोंमें वात हो। "पेशावमें बदबू।"

ऐकोन, कैल्के कार्ब, सैबाइना (नयी बीमारीमें), ऐमोन-फास, कैल्क-फास कास्टिकम, लाइको, पल्स, नक्स-वोम, ऐण्टिम-क्रूड, सल्फर, (पुरानी अवस्थामें) लाभदायक हैं। ये दवाएं ३—३० शक्तिकी देनी चाहिये। "वात" की दवाएं देखिये।

पथ्यापथ्य—बहुत ज्यादा परिमाणमें घी या तेल-भरी चीजें और रक्तसार मिले पदार्थ, मछली, मांस और शराब पीना मना है। पुराने चावलका भात, थाडा दूध, दाल, रोटी, पूरी हलवा, सेब वगैरह सुपथ्य है। ग्रन्थि-वात रोगवालोंको खूब गर्म पानी पाने और रस-भरे फल खानेसे लाभ होता है।

पुराना सन्धि-प्रदाह
(Arthritis-Deformaus)

बहुत दिनोंतक जोड़ों (joints) प्रदाह रहनेपर, उस जगहका "रंग बहुत जाता" है (beformed) अर्थात् रोगी सन्धियोंका बन्धन (ligaments), स्नैहिक-झिल्ली (synovial membranes) और हड्डियाँ पतली हो जाती हैं या बढ़ जाती हैं। इस तरह पतलापन या बढ़नेका लक्षण दिखाई देनेपर समझना चाहिये कि रोगीको "पुराना सन्धिवात" हो गया है। इसके पहले निदान करनेवाले इस रोगको "वातिक ग्रन्थि-वात" (rheumatic gout) कहते थे ; परन्तु वास्तवमें यह पहले कहा जा चुका है कि "वात" या "ग्रन्थि-वात रोग नहीं— यह एक अलग रोग है।

इसका कारण अबतक निश्चय नहीं हुआ ; परन्तु पिता या माताके वंशमें यह बीमारी रहना, तरी या सर्दी लगना वगैरह कारणोंसे कोई भी या सभी, इसके पहलेके कारण हो सकते हैं। बहुत दिनोंसे पीव बहना, दाँत या मसूढ़ोंके रोग, प्रमेह, वस्ति-गह्वर-प्रदाह, श्वेत-प्रदर इत्यादि रोग भोगनेपर, पुराना सन्धिवात हो सकता है। पहले बुखारके साथ रोगवाली सन्धियाँ लाल हो जाती हैं ; इसके बाद, एकके बाद दूसरी सन्धिपर हमला होता है अर्थात् सन्धियाँ फूल जाती है, कड़ी हो जाती हैं और हिलने-डुलनेसे कट-कट शब्द होता है और सन्धियोंके अगल-बगल या चारों ओरकी पेशियाँ पतली और टेढ़ी-मेढ़ी तथा बदशकल हो जाती हैं। कभी-कभी रोगीमें खूनकी कमी भी हो जाती है। मर्दोंकी अपेक्षा औरतोंको यह बीमारी ज्यादा पैदा होती है।

रोगकी पहली अवस्थामें—पल्सेटिला ३x—६, ऐकोनाइट ३x—३, ब्रायोनिया ३।

रोग पुराना होनेपर—गुयेकम ३x—६ या कोलचिकम ६ (खासकर जांघकी सन्धि आक्रान्त होनेपर) और सल्फर ३०। रस-टक्स ३—३० नये और पुराने दोनों तरहके रोगोंमें फायदा करता है। मर्क, रोडो और सिलिकाकी भी बीच-बीचमें जरूरत पड़ सकती है।

औरतोंको यह बीमारी होनेपर—पल्सेटिला ६ (इस रोगके साथ यदि रज थोड़ा निकले या रजोरोधकी बीमारी हो); सेबाइना ३ (खासकर बहुत खून जाता हो); सिमिसिफ्यूगा ३ (दर्द रहनेपर); कालोफाइलम १x।

आनुसंगिक चिकित्सा—अच्छी तरह विश्राम करना और साधारण स्वास्थ्यके नियमका पालन करना, गरम कपड़े पहनना; आक्रान्त सन्धियोंको सवेरे-शाम सेंक देने बाद कार्ड-लीवर आयलसे मालिस करना चाहिये। उत्तेजक पदार्थ (जैसे—शराब आदि) खाना पिना मना है।

"वात-रोग" और "ग्रन्थि-वात" की चिकित्सा देखिये

वात-वेदनाके कई प्रकृतिगत लक्षण और उनकी दवाएँ

अगोंका सुन्न होना और बेचैनीके साथ सब शरीर विद्ध होना; दाहिने अंगका वात; सविराम वात; जोरसे दबा रखनेपर दर्दका कम होना, जीवनी-शक्तिका ह्रास होनेके लक्षणमें—"सिनकोना" या "चायना।"

असह्य दर्द बना रहता है, टनक और रोगवाली जगहका सुन्न हो जाना, सूखापन और जलन; ठण्डी हवा लगकर वात होनेपर—"ऐकोनाइट।"

असह्य दर्द—"काफिया।"

असह्य दर्द ; खींचन या काट डालनेकी तरह दर्द ; घूमनेवाला दर्द ; रोगवाला अंग पतला हो जाना, रोगीको हमेशा जाड़ा लगता हो और शरीरका कपाल पकड़े रखता हो, रातमें बढ़ना ; खुली हवामें दर्दका कम हो जाना "पल्सेटिला ।"

असह्य-दर्द ; रातमें दर्दका बढ़ना, सो नहीं सकता, क्रोधी स्वभाव, जरासेमें ही क्रोधित हो जाता है। साधारण रोगकी तकलीफमें घबड़ा उठता है—"कैमोमिला ।"

बदहवासी, कमजोरी और कँपकँपीके साथ सुई भोकनेकी तरह, तोड़ने या बर्छी भोंकनेकी तरह दर्दमें—"फेरम ।"

हाड़ोंमें दर्द (छूने या गर्म प्रयोगसे) ; सन्धियाँ कड़ी हो जाने और सूजनके लक्षणमें—"कैलि-आयोड ।"

हाड़में दर्द ; रातमें बढ़ना ; रोगी अधिक सर्दी या गर्मी बिलकुल ही सहन न कर सकता हो ; सन्धियोंकी जगहमें प्रदाह और साँसमें दुर्गन्ध उपसर्ग—"मर्क्यूरियस ।"

हाड़में दर्द ; कुचलनेकी तरह, फैलनेवाला, काटनेकी तरह दर्द ; पेटमें गड़बड़ी और धीरे-धीरे सन्धियोंपर वातका आक्रमण (पर्यायक्रमसे हो) लक्षणमें—"कैलि-बाइक्रोम ।"

खींचनकी तरह, नोंच फेंकने या दबानेकी तरह दर्द ; यह दर्द बायीं ओरसे शुरू होकर शरीरकी दाहिनी ओर फैलनेके लक्षणमें—"कोलचिकम ।"

रोगवाले स्थानके (जैसे—आँख, कान, चेहरा वगैरहमें) हाड़में दर्द दबानेसे दर्दका बढ़ना प्रभृति लक्षणमें—"आरम ।"

घुटनेका जोड़ सुन्न, मानो फीतेसे बँधा हुआ है—ऐसा ही दर्द हो—अंगूठेमें दर्द हो, तो—"ऐनाकार्डियम ।"

तर ठण्डी हवा लगकर वात होनेपर—"डल्कामारा ।"

आर्सेनिकके लक्षणकी तरह वात (खासकर यक्ष्मा रोगके वात) में "आर्स आयोड" बहुत लाभदायक है।

कमरमें वात ; बायें अगमें वात ; दर्दके साथ बदहवासी ; वातका दर्द पहले हिलने-डुलनेसे बढ़ना ; परन्तु थोड़ा चलनेसे ही आराम मालूम होना ; भींग जानेके कारण वात होनेपर ; गर्म प्रयोगसे दर्द कम होनेपर "रस-टक्स" (रस और ब्रायोनियाके लक्षणमें कुछ फर्क है, परन्तु रस और "कैल्के-कार्बका" लक्षण बहुत कुछ मिलता है)।

खोंचा मारने या दबा रखनेकी तरह दर्द, दर्द धीरे-धीरे बढ़ता हो और धीरे-धीरे कम होता हो—"प्लाटिना।"

गर्दनमें वात हो या गर्दन अकड़ जाये—"लेकनेन्थिस।"

कुचलनेकी तरह दर्द बराबर बना रहे, तो ऐसे लक्षणमें—"रेनानक्युलस।"

छुरा मारनेकी तरह दर्द ; टीका लगाने बाद वात-रोग ; बायें अगमें वात ; चाय पीनेवालोंके वातमें—"थूजा।"

छिल जाने जैसा ; दपदप् या खोंचा मारनेकी तरह दर्द ; क्रोधसे पैदा हुए वातमें ; कमरका स्नायुवात ; कमरसे लेकर पैरके तलवेतक ऐसा दर्द होता है, मानो फटा जाता है—"थूजा।"

पानीमें रहनेकी वजहसे वात होनेपर—"कैल्के-कार्ब।"

जलन करनेवाला दर्द, बेचैनी, जाड़ा मालूम होना ; बराबर आधी रातमें दर्द बढ़ना ; गर्म प्रयोगसे कम होना ; सन्धि-स्थानका सूजन और दर्दवाले उपसर्गमें (पुराना वात)—"आर्सेनिक।"

अन्धड़ आनेके कुछ ही पहले होनेवाला वातके दर्दमें—रोडो।

टीका देनेके बाद वात होनेपर और पाकाशयकी गड़बड़ीके साथ वात ; स्नान करने बाद वात बढ़नेपर—"एण्टिम-क्रूड।"

नये वातके बाद सन्धियोंका बढ़ना और कड़ापन तथा सूजनके लक्षणमें—"आयोडिन।"

नये और पुराने वात रोगमें 'सल्फर' बहुत फायदा करता है। नये वात रोगमें 'ऐकोनाइट' खिलानेपर रोग कुछ कम हो जाये, तो 'सल्फर' लाभ करता है। रोगीको हमेशा गर्मी मालूम होती है और शरीरका कपड़ा उतार डालता है। पैर ठण्डे, सर गम, परिमाणमें ज्यादा और खट्टा पसीना; सवेरे बिछावनसे उठते ही पाखानेके लिये दौड़ता है; रातमें रोग बढ़ जाता है; बायें अंगके वात प्रभृति लक्षणोंमें 'सल्फर' देना चाहिये।

तीर वेधने या बर्छी लगनेकी तरह; इधर-उधर हटनेवाले दर्दमें—"फाइटोलैक्का।"

शरीरके दाहिनी ओरसे बायीं आर दर्द फैल जाये; रोगवाली जगहको दबानेपर दर्द बढ़ता है; रातके आठ बजेतक रोग बढ़ता हो; वातके कारण हाथ-पैरोंकी अंगुलियाँ टेढ़ि या बदशकल हो जायें—"लाइकोपोडियम।"

शरीरका रोगवाला स्थान, मानो फैल गया है—ऐसा मालूम होता है। दर्द धीरे-धीरे बढ़ता है और धीरे-धीरे कम होता है—"आर्जेण्टम नाइट्रिकम।"

शरीरके कितने ही स्थानोंपर रोगका आक्रमण होता है, बदहवासी, ठण्डक और कांटा चुभनेकी तरह दर्द; वात ऊपरकी ओरसे नीचेकी ओर उतरनेपर—"कैलमिया।"

नीचेके अंगसे ऊपरके अंगमें दर्द चढ़ता है; रोगी गर्मी बर्दाश्त नहीं कर सकता है; बरफके पानीमें पैर डुबोये रखना चाहता है, लक्षणमें—"लेडम"

पेशियोंमें खोंचा मारनेकी तरह दर्दके कारण रोगी पागलकी तरह चिल्लाता है—"क्यूमप्रम।"

बर्छी लगनेकी तरह दर्द ; रोगवाले स्थानको दबाकर सो न सकना ; चुपचाप नही बैठ सकता है, नींद खुलनेपर सुस्त हो जाता है ; दोपहरके पहले पसीना प्रभृति लक्षणमें—"सिपिया ।"

बर्छा बेधनेकी तरह दर्द, छूनेसे जलन मालूम होना, दाहिने अगमें वात, नींद खुलनेपर तकलीफका बढना वगैरह लक्षणोंमें—"लैकेसिस ।"

बायें अगमें वात या कटि-स्नायु-शूल, खाँसने या रातमें चित होकर सोनेपर दर्दका बढना वगैरह उपसर्गोंमें—"टेल्यूरियम ।"

बिजलीकी तरह खून रोकनेवाला, काँटा गडनेकी तरह दर्द या शिराओंमें मानो गलाया हुआ सीसा किसीने ढाल दिया है, ऐसा मालूम होना—"प्लम्बम ।"

कई अग-प्रत्यगोंमें जलनकी तरह दर्दके लक्षणमें—कार्बो-वेज ।

दर्द बहुत ज्यादा अनुभव होता है । शय्या कडी मालूम होती है, इसलिये रोगी इधर-उधर करवट बदलता है, कुचल जानेकी तरह दर्द मालूम होता है, चोट लगना या भारी चीज उठाना या बहुत परिश्रम करना प्रभृति कारणोंसे वात होनेपर—"आर्निका ।"

दर्द धीरे-धीरे बढकर एकाएक बन्द हो जाता है और कुछ देर बाद फिर आरम्भ हो जाता है—"बेलेडोना ।"

मलद्वारमें काठकी सींकें गड रही हैं इस ढगका दर्द—"एसिड नाइट्रिकम ।"

चेहरेमें दर्द, मानो मासखण्ड नोंचा जा रहा है, इस तरहके उपसर्गमें—"फास्फोरस ।"

रातमें इस तरहका दर्द मानो हाड़ टूट गया है—एसिड-फास ।

सूखी ठडी हवा लगकर वात ; थोडा हिलने-डुलनेसे ही वातका बढना ; रोगी स्थिर होकर बैठना नही चाहता है ; हृत्पिण्ड और पेशियोका वात प्रभृति लक्षणोंमें—' ब्रायोनिया ।"

इधर-उधर हटनेवाला, सुई भोंकनेकी तरह जलनवाला दर्द और सन्धियाँ फूलीं, रोगी अंश चमकीला लाल रंगका इत्यादि लक्षणोंमें—"एपिस ।"

सब अंगोंकी पेशियोंका टटाना ; पेटकी बड़ी पेशियोंका वात (रोग पैदा करनेवाले सविराम स्नायु-शूलमें), बिजलीकी तरह एकाएक तेज उपघात ; प्रसव-वेदनाकी तरह दर्द ; गर्दनका वात ; मेरुदण्डकी सन्धिवाली जगहमें दर्द—"सिमिसिफ्यूगा ।"

सुई वेधनेकी तरह या झोंका देनेकी तरह दर्द कमरसे लेकर जांघतक तीर वेधने, काटने या लगातार तकलीफ देनेवाला दर्द (खासकर दाहिने अंगमें), रातके दो बजेसे लेकर ५ बजे सवेरेतक रोग बढ़ता है—"कैलि-कार्ब ।"

हाथकी अंगुलियोंके छोटे-छोटे जोड़ोंका वात ; पुराना स्नायु-शूल ; अंगूठेके वातकी पहली अवस्थामें—"कालोफाइलम ।"

हृत्पिण्डके चारों ओर दर्द (हृत्शूलकी भाँति), गर्म प्रयोगसे घटता हो ; वात या स्नायुशूलका असह्य दर्द (खासकर दाहिने अंगमें), सर्दी लगनेपर बढ़ जाता हो—"मैग्नेशिया-फास ।"

गण्डमाला या कण्ठमाला

(Scrofula)

खून खराब होनेपर, शरीरके बहुतसे स्थानों (जैसे—गला, गर्दन, बगल या कोख) की गांठोंमें सूजन हो जाती है (अर्थात् गांठें फूल उठती हैं), सूजन, लाल रंग, दर्द प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं, कभी-कभी छाती, आँखें, कान, नाक वगैरह स्थानोंमें घाव होकर रोगीको कमजोर बना देता है ।

पिता-माताको कंठमाला या गर्मी रोगका दोष, अस्वास्थ्यकर स्थानमें रहना, अच्छे भोजनकी कमी वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा

होता है। अच्छी तरह इलाज न होनेपर इस रोगसे यक्ष्मा-कासतक हो जानेकी पूरी आशंका रहती है।

चिकित्सा—बेलेडोना ३, ६—प्रदाहके कारण गांठोंमें सूजन और दर्द ; निगलनेमें तकलीफ।

कैल्केरिया-कार्ब ६, ३०—आँखोंमें जलन ; पेट-स्थूल ; पतले दस्त, कान या कर्णमूल-ग्रन्थि फूली और पीव-भरी ; नाक लाल और फूली, बच्चेका ब्रह्मतालु पिलपिला।

सल्फर ६, ३०—बगलकी ग्रन्थि, तालुमूल, नाक और ओंठकी सूजन ; घुटने और दूसरे-दूसरे जोड कडे ; पुट्ठेका सूजना, लडके-लडकियोंका चक्षु-प्रदाह ; कानमें पीव, कानके पीछे और शरीरकी कितनी ही जगहोंमें फुन्सियाँ ; रोगी शरीर।

लेपिस एल्बस (Lapis Albus) ६—शरीरके जिस किसी स्थानकी ग्रन्थियाँ फूल गई हों या वाघी निकली हो, उसकी यह एक बढ़िया दवा है।

मर्क-आयोड ३x विचूर्ण—तालुमूलमें घाव और जलन ; गलेकी गांठें सूजी, कडी और कठिन ; तालुमूलमें टपक और दर्द होता है।

सिलिका ६, ३०—अगर सभी गांठें फूलकर सफेद रंगकी हो जायें ; फोडा या पीब हो जाना चाहता हो, तो इसका प्रयोग करें।

बैसिलिनम ३०, २००—(हफ्तेमें एक बार सेवन करना चाहिये) यदि बाल-रोगीके बाप या माँसे वंशमें यक्ष्मा रोग हो।

कैल्के-फास १२x चूर्ण—कंठमाला रोगीको गठिया बात होनेपर, यह सबसे बढ़िया दवा है।

इथियाप्स ऐण्टम (Aethiops Antimonialis)—Dr Goullon के मतसे कंठमालाके रोगियोंके लिये यह सबसे अच्छी दवा है। २x—६x चूर्ण की मात्रा दो-तीन ग्रेन दिनमें दो बार देना चाहिये।

चलनेका समय हो गया हो, पर वच्चा चलना नहीं सीखता है (रोग आरम्भ होनेपर)—सल्फर ३०, कैल्के-कार्व ३०, लाइको २००, वेलेडोना ६, सिलिका ३०, हाथ-पैरमें पसीना आता हो या शरीरकी गर्मी साधारणतः कम रहनेपर।

दूसरे-दूसरे अंग-प्रत्यंगोंकी अपेक्षा यदि वच्चोंका पेट वड़ा (लम्वोदर) मालूम होता हो, तो आर्सेनिक ३०, वैराइटा-कार्व ६, साइना ३x।

ग्रन्थियोंके आक्रान्त होनेपर—वेलेडोना ३, मर्क-आयोड ६x, वैराइटा-आयोड ६, कैल्के-कार्व ३०, कैल्के-आयोड ३०, सिलिका ३०, ग्रैफाइटिस ६, वैसिलिनम २०० (सप्ताहमें एक मात्रा)।

आरम-मेट ६, फास्फोरस -६, फेरम ६, चायना ६, सिपिया ६, आयोडियम ६, डल्कामारा ६, वैडियेगा १, आर्स-आयोड ३०, आर्स-मेट ३०, हिपर-सल्फर ६, कैल्के-फास १२x विचूर्णकी भी वीचमें जरूरत पड़ सकती है।

पथ्यादि—विशुद्ध वायुका सेवन और ठण्डे पानीसे नहाना फायदे-मन्द है। नींबू, मछली, मांस रोटी, दूध पथ्य हैं। शरीरको ढँके रखना और धुप खाना अच्छा है।

यक्ष्मा (Tuberculosis)

यह यक्ष्मा दोष रोग फैलनेवाला है; इस दोषवाले रोगीके थूक और तन्तुओंमें एक तरहका जीवाणु दिखाई देता है। ये जीवाणु गांटोंके आकारके (nodular) होते हैं; ये ही इस रोगको फैलानेवाले हैं। भले-चंगे आदमियोंके शरीरमें प्रवेश कर जानेपर, वहाँके तन्तुओंमें एक तरहकी गोटियाँ (tubercle) पैदा हो जाती हैं, उस समय हमलोग उसे गुटिका-दोष या यक्ष्मा (tuberculosis) कहते हैं। शरीरके भीतरवाले किसी भी यंत्रमें या गुटिका-दोष हो सकता है; परन्तु

फेफड़ा आक्रमण होनेवाले गुटिका रोगीकी संख्या ही ज्यादा है। आँतोंमें गुटिका-दोषवाले रोगियोंकी संख्या भी कम नहीं है।

जीवनी-शक्तिकी कमजोरीकी अवस्था ; वंशगत दोष, लन्दन या अस्वास्थ्यकर स्थानमें रहना, पत्थर गढ़नेका व्यवसाय, इन्फ्लुएञ्जाका आक्रमण वगैरह कारणोंसे जब शरीर एकदम कमजोर हो जाता है, तब सहजमें ही यह गुटिका-दोष पैदा हो जानेका डर रहता है। गुटिका-जीवाणु (tubercle-bacillus) इस रोगके खास कारण हैं, अन्न ले जानेवाली नली साँसकी राहसे (अर्थात् मुख गह्वर या नाकके भीतरसे) ये जीवाणु शरीरमें घुस जाया करते हैं। टियुबर्क्युलिनम ३०, आर्स-आयोड ३x विचूर्ण (पानीके साथ खाना मना है); कैल्केरिया-कार्ब ३०, सल्फर ३०, आयोडियम ६, फेरम ६, फास ६, आर्स ३x, ३०, मर्क-बाई ३x विचूर्ण, ६ प्रभृति इसकी प्रधान दवाएं हैं।

यहाँ सिर्फ (क) फेफड़ेकी गुटिका या "यक्ष्माकास" और (ख) आँतोंके गुटिका दोषके सम्बन्धमें लिखेंगे :—

यक्ष्माकास या क्षय रोग

(Tuberculosis of the Lungs or Phthisis or Consumption)

एक तरहके गुटिका जीवाणु (tubercle-bacillus) [परिशिष्ट (ग) (४) अंक देखिये] या उद्भिज्जाणु साँसके साथ फेफड़ेमें या भोजनके साथ देहमें जानेपर फेफड़ा जल्दी-जल्दी क्षय होने लगता है, इसमें जखम हो जाता है, इसीका नाम "क्षयकास" है। सिर्फ फेफड़ा ही नहीं, रोगीके यकृत, आँत और मूत्र यन्त्र वगैरहमें भी इस रोगके बीज रहते हैं। ये उद्भिज्जाणु बलगम तथा पाखाना-पेशावके साथ निकला करते हैं, मक्खियाँ इस रोगको एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचा देती हैं।

भोजनकी चीजोंके साथ भी इस रोगका बीज आँतोंमें घुसकर यक्ष्मा रोग पैदा कर देता है। बाप-माँको यह रोग रहनेपर उनके बच्चोंको भी रोग होगा, यह जरूरी नहीं है; लेकिन यक्ष्मा रोग अगर बाप-माँको रहेगा, तो उनके वंशवालोंको यह रोग हो जानेकी सम्भावना ज्यादा रहती है। सदा दूषित वायुका सेवन, तर जगहमें रहना, अपुष्टिकर पदार्थ खाना, रक्तकी ज्यादती, मांसके साथ दूधके कण, खासकर पाटकी धूल शरीरमें घुसना, बहुत मेहनत, दुश्चिन्ता, बार-बार गर्भ-धारण वगैरह कारणोंसे जब शरीर कमजोर हो जाता है, तब सहजमें ही इस रोगका हमला हो सकता है। पहले सूखी खाँसी शुरू होती है (खासकर सवेरे और शामके वक्त), थोड़ी ही मेहनत करनेपर तकलीफ मालूम होने लगती है, भूख नहीं लगती, अजीर्ण, कै या मिचली, जीभ मैली और लाल रहना (कभी जीभके बीचका भाग सादा और धुमैला और अगला भाग खूब लाल), बार-बार प्यास लगना, छातीमें लगातार दर्द रहना, साँस लेनेमें तकलीफ, नाड़ीका चाल तेज, मिनटमें १८०—१६०, शामके वक्त बदनकी गर्मी ९९ डिगरी बढ़ना, रातमें बहुत पसीना होना, स्वरभंग, श्लेष्मा प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं। धीरे-धीरे खाँसी बढ़कर पीले रंगका बलगम निकलने लगता है। कभी-कभी उसमें खून भी मिला रहता है। इस तरह दो-चार महीनेतक रोग भोगते रहनेपर रोगी कमजोर हो जाता है; इसके बाद स्वरनलीमें भी जखम हो जाता है और स्वरभंग और रक्त निकला करता है तथा अतिसार और शोथ भी हो जाता है। "हल्का बुखार और रातमें पसीना" इस रोगका प्रधान लक्षण है।

चिकित्सा

बैसिलिनम या टियुबर्क्युलिनम ३०, २००—यक्ष्मा रोगकी यह एक प्रधान दवा है। ये दोनों ही दवाएँ क्षयकासवाले रोगसे तैयार की

गयी है* और पन्द्रह दिन या एक महीनेका अन्तर देकर ऊँचे क्रममें दी जाती हैं, छोटे क्रममें या बार बार खानेसे रोगीको नुकसान होता है।

इस दवाके प्रयोग करनेके कई प्रधान लक्षण—सब तरहकी खाँसी, पहले सूखी पीछे पतली, बहुत ज्यादा पतला बलगम निकलना; सहजमें ही रोगीका सर्दी हो जाना, रोग आक्रमण होते ही "जल्दी जल्दी दुबला होने लगता है", रोगीकी तकलीफ रोज कुछ-न-कुछ बदला करती है देखते देखते रोगी बहुत दुबला और कमजोर होता जाता है। फेफड़ेमें (खासकर बायें फेफड़ेमें) गुटिका जमा होती है।

कैल्के-कार्ब ३०—अग्निमान्द्य, खट्टी डकार (खासकर तेल, घी या मीठा पदार्थ खानेपर रातके समय खाँसीका बढ़ना), खाँसते खाँसते कड़ी, पीली आभा लिये हरे रंगका पीब भरा बलगम निकलता है, कमजोरी, पसीना, रक्तस्राव, गाँठें सूजीं, छातीमें छूनेके साथ ही दर्द। 'मोटे-ताजे' रोगी या जिनके दोनों पैर हमेशा ठण्डे रहते हैं, उन्हें ज्यादा फायदा करता है।

कैलि-कार्ब ६, ३०—न्युमोनिया या प्लुरिसीके बदले यक्ष्मा, खाँसी सूखी और कष्टदायक, खाँसते खाँसते छोटा गोलाकार कफका टुकड़ा निकला करता है। कफ पीबकी तरह, कभी-कभी इसके साथ खून भी रहता है। सवेरे तीन बजे खाँसी बढ़ जाती है। छातीमें भार

---

* प्रकृत क्षय कास रोगीके फेफड़ेकी तर करने बाद अंगरेज डाक्टर बार्नेटने "बैसिलिनम" पहले तैयार किया है और यक्ष्मा रोगीके आक्रान्त फेफड़के जख्मसे जर्मन डाक्टर कोक साहबने 'टियुबरक्युलिनम" तैयार किया है। रोग पैदा करने-वाली इन दोनों दवाओंकी क्रिया एक तरहकी है, कोई फर्क नहीं है। उष्ण-प्रधान देशके यक्ष्मा रोगमें "टियुबरक्युलिनम" ज्यादा फायदा करता है और तर स्थानमें जो रहते हैं, उनके लिये "बैसिलिनम" ज्यादा फायदा करता है।

और दवाव, स्वरभंग। वहुत वार आँखकी पुतली फूली भी दिखाई देती है। छाती और पीठमें दर्द होता है। हवा-पानी वदलनेपर रोगी स्वस्थ मालूम करता है। सर्दी और वदली पानीमें रोग-लक्षण वढ़ जाते हैं। गर्मीमें अच्छा रहता है। दाहिने फेफड़ेके विचले भागमें रोगका आक्रमण होनेपर यह दवा विशेष फायदा करता है।

कैल्के-आयोड ३x—सव लक्षण तो कैल्के-कार्वके हों, पर रोगी दुवला हो, उसे यह ज्यादा फायदा करता है, खासकर जव अम्ल रोग हो; मसुढ़ेमें सूजन।

कैल्केरिया आर्सेनिक ३x—फेफड़ेका पुराना यक्ष्मा, खासकर रक्त स्रावका लक्षण रहनेपर।

जैवारेण्डी २x—वहुत पसीना होनेपर।

हाइड्रैस्टिस θ—(फी खुराक तीन व्रुन्द, रोज तीन वार सेवन करना चाहिये) "भोजनमें अरुचि" के सिवा जव रोगका कोई दूसरा लक्षण न मालूम होता हो।

कैल्केरिया-फास १२x चूर्ण ३०—रोगीमें खूनकी कमी, रातमें वहुत पसीना और साथ-ही-साथ पैर ठण्डे, वुखार थोड़ा और पतले दस्त आना, गला सूख जाना। स्वरभंग, टियुवरक्युलिनमसे प्रयोगके वाद कैल्केरिया-फास अच्छा काम करता है।

हैमामेलिस θ—काला या थक्का-थक्का खून निकलनेपर।

पेकालिफा-इण्डिका १x—सूखी खाँसीके वाद खून भरा थूक निकलना।

आर्स-आयोड २x, ६x विचूर्ण—(ताजा तैयार किया हुआ) रोगकी सभी हालतोंमें यह फायदा करता है। इस दवाको भोजनके वाद खाना चाहिये। सर्दी निकलना, गहरी सुस्ती, नाड़ी तेज, रोज वुखार रातमें पसीना, वहुत दुवलापन, खूनकी कमी, खूनका दोष, खासकर तालुमूल-प्रदाह या इन्फ्लुएञ्जा होनेके वाद यक्ष्माकास होनेपर

यह दवा फायदा करती है। "पानीके साथ" आर्स-आयोड "विचूर्ण न खाया जावे" और दवा खानेके बाद भी नहीं पिया जावे।

पेट्रोलियम १x—(फी मात्रा पाँच बुन्द, दो घण्टेका अन्तर देकर) क्षयकासके साथ, अन्त्रावरक-प्रदाह (peritonitis) होनेपर [खासकर नीचे लिखे लक्षणोंमें :—नीचेका दोनों शाखाओंका बहुत "दुबलापन" रहनेके साथ-साथ पेट हमेशा "फूला रहे" चेहरा सिकुड़ा, ठण्डा, सूखा और पतली ; रोगीको ऐसा मालूम होता है कि उसका पेट चिपका हुआ है—Dr. Jones]

बेलडोना ३x, ६— सूखी खाँसी, बाहरसे दबानेपर स्वरनलीमें दर्द, स्वरभंग ; तीसरे पहर बदनका ताप बढ़ जाना ; बहुत देरतक खाँसनेपर खून-मिला कफ निकलता है (शामको या रातमें सोनेके वक्त) ; छातीमें दर्दके साथ खाँसीका बढ़ना।

आयोडियम ३x, ६ क्षय खाँसीके साथ ग्रन्थियोंका सूजना पेटमें दर्द और उदरामय ; बदनका चमड़ा सूखा और खुरखुरा ; चेहरा लाल ; भूखकी तेजी ; तेल या चर्बी मिला भोजन और दूध आदि न पचा सकना ; जल्दी-जल्दी शरीरका क्षय होना।

फस्फोरस ३, ३०—(दिनमें सिर्फ एक मात्रा सेवन करना चाहिये) हल्की, पर तेज नाड़ी, सूखा और गर्म चमड़ा छातीमें दर्दके साथ सूखी खाँसी ; फेफड़ेमें घावके कारण कुछ हल्का हरे रंगका बदबूदार कफ निकलना ; अक्सर पसीना और पतले दस्त आना ; भूख न लगना ; देह क्षीण, थूकके साथ खून आना, शामके वक्त बुखार और तकलीफका बढ़ना। स्वभावतः लम्बे शीर्णकाय सकरी छातीके युवक और युवतियाँ या जो बहुत जल्दी ही बड़े हो जाते हैं, उनकी बीमारीमें यह लाभदायक है।

ब्रायोनिया ३x, ६—सूखी खाँसी, खाँसते-खाँसते मानो कलेजा फटा जाता है ; दोनों बगलमें मानो सुई भोंकनेकी तरह दर्द ; साँसमें तकलीफ, माथेके आगे या पीछे दर्द।

फेरम-मेट ३ या चूर्ण ६—फेफड़ेसे खून निकलना ; हाथ-पैरोंमें सूजन ; उदरामय ; शरीरमें खूनकी कमी, सूखी खाँसी और छातीमें दर्दके साथ खून निकलना ।

ड्रासेरा १x, २—जोरकी खाँसी, खाँसते-खाँसते खून निकलना, खाँसीके कारण छातीमें दर्द ।

पल्सेटिला ६—रोगकी पहली अवस्थामें, जब भूख मन्द होकर तेल या चर्बी-मिला पदार्थ या काड-लीवर आयल न पचता हो, रातमें खाँसी और कफकी वढ़ती हो ; ज्यादा परिमाणमें पीले रंगका और स्वादमें तीता कफ निकलती हो ।

नक्स-जुग्लान्स θ, ३x—खाँसी, स्वरभंग, छातीमें भार मालूम होना, पेट फूलना या कड़ा होना, उदरामय, अजीर्ण, बगल या पुट्ठेमें गांठ निकलना और पीव होना ।

लाइकोपोडियम १२, ३०—आमाशय और पेटमें दर्द ; आँत फूलनेके कारण पाखाना बन्द ; भूख न लगना ; खून-मिला नमकीन कफ निकलना ; सूखी खाँसी ; खाँसते-खाँसते थक जाना ; फेफड़ेमें जलन । वदबूदार डकार ; थोड़ा खानेपर भी पेट फूलना, पेटमें हमेशा शब्द होना । तीसरे पहर ४ वजेके समय बुखार और उपसर्गोंका बढ़ना ।

आर्सेनिक ३x, ३०—रोगकी सभी हालतमें (खासकर अन्तिम अवस्थाके अतिसारमें) देना चाहिये ।

हिपर-सल्फर ३, ३०—स्वरभंग, हल्की खाँसी (सूखी ठंडी हवा लगनेसे बढ़ना), खाँसते-खाँसते कफ और खून (या पीव) निकलना ; सोनेपर साँस लेने और छोड़नेमें कष्ट ; कण्ठमाला धातुवाले युवक-युवतियोंके लिये यह दवा ज्यादा फायदेमन्द है ।

मैलेरिया आफिसिनेलिस ३x—Dr. Bowen कहते हैं, कि जहाँ मैलेरिया होता हो (अथवा जहाँकी जलाभूमिमें हमेशा पड़े-पत्ते

रहा करते हों), वहाँके यक्ष्मा रोगियोंको यह दवा ज्यादा फायदा करती है ।

नेट्रम-आर्स २ विचूर्ण—(फी खुराक तीन ग्रेन रोज तीन बार सेवन करना चाहिये) रोग बढ़कर "हरी आभा" वाली अवस्थामें आ जाये (अर्थात् जब बहुत हरी आभा लिये श्लेष्मा निकला करता हो), तब इसके प्रयोगसे अक्सर लाभ दिखाई देता है, कुछ दिन सेवनके बाद जब रोग कम होने लगे, तो दवा बन्द कर देनी चाहिये ।

थ्लैस्पि बर्सा ३x (Thlaspi Bursa Pasroris)–खाँसीके साथ चमकीला लाल रंगका खून आनेपर ।

मिलिफोलियम १x, ३ साधारण खाँसीके साथ गदला खून आनेपर ।

सल्फर ३०—बीच बीचमें (खासकर बीमारी पुरानी होनेपर) देना अच्छा है ।

नाइट्रिक एसिड ६—चमकीला लाल रंगका रक्त-स्राव ।

इपिकाक ३x—खाँसी (दमाकी तरह), कै या मिचली, चमकीला लाल रंगका खून निकलना ।

सिलिका ३०—जखमवाली अवस्थामें, रातमें बहुत पसीना आता हो, पीबकी तरह बहुत कफ निकलता हो ।

ओलिव आयल या जैतूनका तेल—फी खुराक आधा औंससे एक औंसतक, दो घण्टेका अन्तर देकर, यह तेल सेवन करनेसे यक्ष्मावाले शरीरके रोगीका भार बढ़ता है । दूसरी दवा सेवन करते रहनेपर भी इसे अनायास ही खाया जा सकता है, इससे उस दूसरी दवाके काममें कोई खलल नहीं पहुँचाता । थोड़ा नमक मिलाकर यह तेल सेवन करनेपर पचनेकी क्रियामें भी मदद करता है ।

प्याज—बहुतेरे चिकित्सकोंका मत है कि प्याजका रस या कच्चा प्याज नमकके साथ खानेपर रोगीको लाभ हो सकता है । डा० पियर्सका

कथन है कि यदि रोगी कच्चा प्याज न खा सकता हो, तो उसे प्याज छौंककर खिलाना चाहिये। जगत-विख्यात Lancet पत्रिकामें डाक्टर W C. Minchin ने लिखा है कि जो जीवाणु मनुष्यके शरीरपर आक्रमण किया करते हैं, प्याज उन्हें नष्ट कर देता है। लहसुन काटकर उसे सूँघनेसे भी यक्ष्मा रोग अच्छा होता है। विगत युरोपीय समरमें यह सिद्ध हो चुका है कि लहसुन पाचन-क्रियाका मददगार (antiseptic) है।

माता वसुन्धरा—मेथडिस्ट नामक ईसाई धर्म-मंडलीके प्रतिष्ठाता डाक्टर जान वेस्ली साहबने (१७०३—१७९१) अपनी Primitive Physic नामक चिकित्सा-पुस्तकमें यक्ष्मा रोगकी ऐसी व्यवस्था की है—"साफ घासके मैदानमें किसी जगह मिट्टीमें एक छोटा गड़हा खोदकर (वहाँ पट्ट सोकर) उसपर नाक रख, रोज १५ मिनटतक साँस लेना और छोड़ना चाहिये।" परीक्षा करनी चाहिये।

ऐकोनाइट ६, डल्कामारा ३, ड्रोसेरा ६, स्टैनम ६ (बहुत कमजोरी) ब्रायोनिया ६, कार्बो-वेज ३०, सोरिनम २०० कभी-कभी फायदा करता है।

Saint Jacques अस्पतालके भूतपूर्व और *Therapeutique Das Voies Respirationes* नामक ग्रन्थिके प्रणेता फ्रेञ्च डाक्टर Cartier M. D. साहब और यक्ष्मा रोगकी चिकित्सामें सिद्धहस्त कई जगद्विख्यात डाक्टरोंके ग्रन्थोंसे सार रूपमें इस भयानक रोगका संक्षिप्त इलाज नीचे लिखा जाता है :—

यह सन्देह होनेपर कि यक्ष्मा हुआ है (या रोग मालूम होनेसे लेकर अन्ततक सभी अवस्थाओंमें)—टियुबरक्युलिनम २०० (हफ्तेमें एक मात्रा), फेरम-फास (बुखारके साथ खून आता हो) और आर्स-आयोड ३x विचूर्ण (रोज तीन बार)।

बुखार रहनेपर—बैप्टीशिया, सैंगुइनेरिया, फेरम-फास, चायना, किनिम-आर्स, ऐचिनेशिया, पाइरो।

धातु-विकृत—आर्स-आयोड, सल्फ, आर्सेनिक, कैल्के-आयोड, मर्क-आयाड।

बहुत पसीना—कैल्के-कार्ब, जैबोरैण्डी, ऐगरिकस, एसिड-फास सिलिका।

पाकस्थलीकी गड़बड़ीमें—नक्स, पल्सेटिला, ऐबिन-सैट (भूख न लगती हो) जेण्टियाना-खुटिया (भूख बिलकुल ही न लगती हो)।

उदरामय—आर्स-आयोड, किनिन-आर्स, एसिड-फास।

खून आना—जिरेनियम θ, ऐकालिफा θ, मिलि θ, इपिकाक, ट्रिलियम, फास्फो, हैमा, फेरम-ऐसेट, आर्निका, लैके।

फेफड़ेकी सूजन—एपिस, ऐपोसाई, आर्स-आयोड, सैंगुइ।

खांसी—फास्फो, बेल, ड्रोसे, ब्रायो, हायोसा, कोनायम, स्टैनम, ऐण्टिम-टार्ट, केलि-बाई, केलि-कार्ब।

श्वासकष्ट—आर्स, ऐण्टिम-टार्ट, स्ट्रिकनि, नाइट्रि।

Iowa University के मेटिरिया-मेडिकाके अध्यापक जार्ज रायल M. D. ने अपनी तीस बरसकी अभिज्ञताका फल १९२३ ईस्वीमें "Practice" नामक अपने ग्रन्थमें लिखा है। उन्होंने बताया है, कि आयोडियम, केल्के-आयोड ३ विचूर्ण, मर्क-प्रोटो-आयोड, आर्स-आयोड ३ या ३०, फास्फो ३०, कैल्के-फास १२, टियुबरक्युलिनम ऊँचे क्रममें, कैल्केरिया-कार्ब ३, पल्स ३, ३०, थाइरो ३०, फेरम-मेट ३०, सल्फ ३०—१००००, हाइड्रेस्टिस, नक्स-मस गैलिक-एसिड, एसिड-फास, एसिड-म्यूर, इरिजियन, इपिकाक, जेलसिमियम और एसिड-नाइट्रिक—ये २१ दवाएं यक्ष्मा रोगकी प्रधान दवाएं हैं।

पथ्यादि—"पिंड खजूर या बक्स खजूर", बकरी का दूध, गायका दूध, घी, ताजामक्खन, छोटी मछली या बकरेके मांसका शोरवा,

सूजीकी रोटी, मूँग, केलेका फूल, परबल वगैरह सुपथ्य हैं। कब्जियत रहे तो बक्स-खजूर ज्यादा फायदा करता है। इस रोगमें काड-लिवर आयल (थोड़ी मात्रामें) फायदा करता है। इमलसन (खासकर angier's emulsion) का व्यवहार न करना ही अच्छा है, ओस या सर्दी भी न लगनी चाहिये। नहाना, नहाने बाद ही शरीर रगड़कर पोंछ डालना चाहिये। "रातमें जागना, बहुत परिश्रम करना और स्त्री-सहवास" मना है। बीमारवाले कमरेकी खिड़कियाँ, दरवाजे हमेशा खुले रहने चाहियें। अच्छी तरह खुली हवा सेवन करनेसे फेफड़ा फैलता है; यक्ष्मावाले रोगीके लिये समुद्रके किनारेवाले मकानमें रहना अच्छा है (खासकर जब यकृतका दोष मौजूद हो); यदि यकृतका दोष न हो तो छोटा नागपुर अच्छी जगह है।

परित्यज्य—यक्ष्माका बीज स्वस्थ मनुष्यके शरीरमें न घुसने पाये, इसलिये, उन्हें नीचे लिखे विषय छोड़ देने चाहियें :—(क) बीमारका काममें लाया हुआ खानेका बरतन, कपड़े, बिछावन, लार, जूठा, हुक्का, सवारी और रोगीवाले कमरेमें रखे हुए असबाब। (ख) रोगीके कमरेमें या एक बिछावनपर सोना, रोगीका मुँह चूमना, रोगीकी खाँसी और साँस लेने-छोड़ने, जहाँ रोगी बैठता या घूमता-फिरता हो (जैसे—अस्पताल, पढ़नेकी जगह, थियेटर, खेलनेका मैदान वगैरह), इन विषयोंमें धूलिके कण अच्छे-भले मनुष्यके शरीरमें न लगें—इन विषयोंमें सावधान रहना चाहिये।

आँतोंकी टी० बी०

(Tuberculosis of the Intestine)

यह रोग भी पहले परिच्छेदमें बताये हुए यक्ष्मा रोगकी एक गौण अवस्था है। यह कभी ही अपनी मुख्य रोगरूपवाली दशामें दिखाई देता है। ऊपर कहे हुए गुटिका-जीवाणु (tubercle-bacillus) इसके

खास लक्षण है। "अच्छा न होनेपर पुराना दस्त," आँतोंसे खून निकलना, सूजन, पेट सट जाना, अजीर्णता, पेटमें मीठा दर्द या ऐंठन (कभी पेटमें अर्बुद जैसा कड़ा मालूम होता है)। पाखानेमें बदबू, दस्तके साथ खाई हुई चीजका अजीर्ण अवस्थामें निकलना, चदनका चमड़ा बदरंग, भगन्दर, दुबलापन, शोथ, रक्त-स्वल्पता वगैरह इस रोगके खास लक्षण हैं। यह रोग अक्सर अच्छा नहीं होता—दुरारोग्य है।

चिकित्सा—चापरो-अमारगोसा θ, ३—डा० Bleim ने चापरा θ की खुराक २—४ ड्राम (रोज, दिनमें तीन बार) सेवन कराकर कई पुराने अतिसारके रोगियोंको पूरी तरह जड़से अच्छा कर दिया है। बहुत कब्जियत रहती हो, तो प्लम्बम ऐसेट ६x विचूर्ण (दिनमें की खुराक २-३ ग्रेन) बहुत फायदा करता है। कैल्के-कार्ब ६, आयोडियम ६, सल्फर ३०, आर्स ३x, आर्स-आयोड ३x विचूर्ण (पानीके साथ या दवा खानेके बाद पानी पीना मना है), ऐलो ६—२००, कास्टिकम ६, कोटन-टिग ६, रस-टक्स ३ वगैरह दवाओंकी भी बीच बीचमें जरूरत पड़ सकती है। "यक्ष्मा रोग" का पथ्य देखना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—दस्त ज्यादा हो, तो बकरीका दूध, दूधके साथ सोडा वाटर और काड-लिवर आयल सेवन और पेटमें काड-लिवर आयल मलनेसे बहुत कुछ लाभ होता है।

बहुमूत्र (Diabetes)

इस देशके बहुत बड़े बड़े नामी मनुष्योंने इस रोगसे अपने प्राण त्यागे हैं। आजतक इस रोगके पैदा होनेका कारण समझमें नहीं आया। रोगकी पहली अवस्थामें चमड़ा सूखा और रूखड़ा, शरीरकी गर्मी ९४°—९७°, तेज श्वास, बहुत ज्यादा भूख, दाँतकी जड़में सूजन,

कब्जियत या सूखा मल, बराबर पेशाब होना, शरीरका क्षीण होना, साँस लेने और छोड़नेमें दुर्गन्ध, जीभ फटी-फटी और लाल, मल स्पंजकी तरह—ये सव लक्षण दिखाई देते हैं। फिर धीरे-धीरे भूख न लगना, शरीर दुबला-पतला, पर सूखे, दूषित फोड़ा (कार्बङ्कल) या पृष्ठाघात, स्त्रियोंके जरायुमें खुजली, पुरुषोंमें कामेच्छा ज्यादा हो जाना वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं और अन्तमें फेफड़ेका प्रदाह और क्षय-खाँसीतक पैदा हो जाती है। रोगी दिन-रातमें ४ से लेकर २० सेरतक पेशाब करता है। मूत्रका आपेक्षिक गुरुत्व १'०२५—१'०५०। पेशाबमें चीनी रहे, तो "मधुमेह" (diabetes mellitus) कहते हैं ; चीनी न रहें, तो "मूत्रमेह" (diabetes insipidus.) कहते हैं। पेशाब करने बाद उसमें मक्खी या चींटी लगती है, तो समझना चाहिये कि उसमें चीनी है।

मधुमेह रोगके ये 'तीन प्रधान उपसर्ग' हैं :—(क) पेशाबमें चीनी मौजूद रहना, (ख) बहुत पेशाब होना, (ग) रातमें तेज प्यासके साथ गलेका सूख जाना। यहाँ मधुमेहका इलाज लिखा जाता है। मूत्रमेहके इलाजके लिये 'मूत्र-यंत्रके रोग' के अध्यायमें "मूत्रमेह", "मूत्राधिक्य" देखिये। "मूत्रमेह" रोग मधुमेहके पहले या पीछे भी हो सकता है।

चिकित्सा—सिजिजियम जैम्बोलिनम १x, ६x—(यह काले जामुनके बीजके चूर्णसे बनाया जाता है। यह रोगकी सभी अवस्थाओंमें दिया जा सकता है। इसके सेवनसे पेशाबका वजन और चीनीका लक्षणमें कम हो जाता है।

सेफेलेण्ड्रा इण्डिका θ (५ से १० बुन्द सवेरे और शामको)—बहुमूत्र रोगकी वजहसे हाथ-पैरोंमें जलन प्रभृति, पित्तकी अधिकताके लक्षण इस दवाके व्यवहारसे खासकर लाभ होता है।

नेट्रम सल्फ १२x, २०० और **नेट्रम-फास** ६x, २००—इस रोगकी एक महौषध है। चाहे कितना भी भयानक रोग हो, ये दोनों

दवाएँ ४-५ हफ्तेतक सेवन करनेसे पेशाबका शक्करका हिस्सा एकबारगी कम हो जाता है और लगातार ४-५ महीनेतक यह दवा सेवन करनेपर रोग अवश्य ही कितनी ही बार जड़से आराम हो जाता है। विलायतके डाक्टर सेण्डरने इन्हीं दोनों दवाओं द्वारा बहुतसे रोगियोंको अच्छा किया है। उनका कथन है कि आजतक कोई भी रोग ऐसा नहीं मिला, जो आराम न हुआ हो। खासकर जिन्हें गठिया वात है, उन्हें नेट्रम-सल्फ ज्यादा फायदा करता है।

लैक्टिक-एसिड—यह बहुमूत्रकी उत्तम दवा है।

प्लम्बम-आयोड ६x—युरिक एसिडग्रस्त रोगियोंके लिये यह ज्यादा फायदा करता है।

सिकेलि—इस दवाके व्यवहारसे पेशाबका शक्करका भाग कम हो जाता है।

एसिड-फास्फोरिक १x,६—स्नायुमण्डलके किसी रोगके साथ बहुत बार पेशाब होना, रातमें कमरमें दर्द; शरीरका क्षय; धातु-दौर्बल्य; चित्तका चचल रहना। नीचे लिखे लक्षणोंमें एसिड-फाससे ज्यादा फायदा होता है:—उदासी या सुस्ती; चीनी मिला बहुत ज्यादा पेशाब; पीठ और मूत्र-ग्रन्थिमें दर्द; बहुत ज्यादा प्यास; अदम्य प्यास; याददाश्तका घटना; कमजोरी; जननेन्द्रियकी कमजोरी।

आर्जेण्टम मेटालिकम ३, ३०—एँड़ी या दोनों पैरोंमें सूजनके साथ रोगीका बहुत कमजोर हो जाना; ज्यादा मात्रामें पेशाब, विशेषकर रातके समय और गदलापन, उसमें कुछ चीनी; जननेन्द्रियकी कमजोरी।

टेरिबिन्थिना ३—पेशाबमें शक्कर; डकार; किसी काममें जी न लगना; रातके समय बार-बार पेशाबका वेग होना; पेशाब करते समय जलन, अडलाल मिला पेशाब। तली जमना, पेशाब कभी-कभी बिना रगका सफेद।

हेलोनियस θ, ६—ज्यादा परिमाणमें पेशाव और उसके साथ खूनका सफेद अंश (अंडेके भीतरके सादे भागकी तरह) निकलना ; पेशावमें चीनी या फास्फेट मौजूद रहना ; प्यास, बेचैनी, विमर्ष भाव और रोगी एकदम क्षीण हो जाये, तो इसका प्रयोग होता है।

युरेनियम नाइट्रिकम १x, ३—पाचन न होना ; वहुत प्यास ; कब्जियत ; जीभका लाल रहना ; नींद न आना ; पेशावके समय जननेन्द्रियमें जलन ; आँख, नाकसे पीवकी तरह श्लेष्मा निकलना ; कमजोर ; पेशाबमें 'चीनी ज्यादा' रहनेपर यह ज्यादा फायदा करता है।

क्रियोजोट ६, १२ या ३०—बार-वार पेशाव करनेकी इच्छा, वहुत ज्यादा परिमाणमें लाल रंगका नीचे तलछट जमनेवाला वर्णहीन पेशाव ; पेशावका वेग रोकनेकी ताकत न रहना प्रभृति लक्षणमें यह लाभदायक है।

कोडिनम (Codeinum) २—वहुमूत्रके साथ वेचैनी ; मानसिक अवसन्नता ; त्वचाका उनदाह (जैसे—खुजली, गर्मी मालूम होना, सुन्न हो जाना) ; वदहवासी ; काँटा चुभनेकी तरह दर्द, सव वदनमें कँपकँपी, हाथ-पैरोंका आप-ही-आप ऐंठना।

नेट्रम-म्यूर ३०—पेशाव ज्याद वढ़ा हुआ ; खाँसने या चलनेपर आप-ही-आप अनजानमें पेशाव निकल जाना, पेशाव होनेके वाद ही दर्द होना।

इन सभी दवाओंसे फायदा न हो, तो **सिलिका** ३, ६ दें।

वहुमूत्रके साथ शोथमें आर्सेनिक ६, ३० ; पेशाव करते समय जलन रहनेपर कैन्थरिस ३ ; कोई-कोई चिकित्सक पेशावके साथ रस-ऐरो-मेटिका θ (मदर टिंचर), प्रतिमात्रा १० या इससे भी ज्यादा बून्दकी मात्रा देकर, रोग आराम कर चुके हैं। गिरनेके कारण वहुमूत्र रोग हो, तो आर्निका ३, ३० ; वहुमूत्र रोगमें तन्द्रा (coma) हो तो ओपियम ३, ३०। स्कुइला २x (पेशावकी ज्यादतीमें), एरम-ट्राई,

डिजि, नक्स वोम, चिमाफिला वगैरह दवाओंकी वक्त-बेवक्त जरूरत पड़ सकती है।

पथ्यादि—बहुत देरतक कड़वा तेल मालिशकर नहानसे चमड़ेकी अवस्था अच्छी रहती है। मैदेकी रोटी या नये चावलका भात, मछली, चीनी, गुड़ मिठाई, घी या ज्यादा तेल देकर पकाया हुआ भोजन मना है। पुराने चावलका भात, धानका लावा, शहद, जवकी भूसीकी रोटी (bran bread) और लसोढा, केलेका फूल, मूली, मूलीकी पत्तोंका साग, परवलकी तरकारी, "मांसका शारवा, मक्खन निकाला हुआ दूध बहुत ज्यादा परिमाणमें व्यवहार किया जा सकता है।" नेबूका रस मिलाकर ठण्डा पानी और आमले खानेपर प्यास शान्त होती है।

आबहवा बदलनेके लिये, छोटा नागपुर, सन्थाल परगना या समुद्रके किनारेकी जगह फायदेमन्द है।

लेफ्टेनेण्ट कर्नल ई० ई० वाटरसने कुछ दिन पहले इण्डियन मेडिकल गजटमें बहुमूत्रकी चिकित्साके सम्बन्धमें एक लेख लिखा है, उसमें उन्होंने बताया है, कि पहले दो-तीन दिन उपवास और इसके बाद बँधे हुए नियमित भोजन द्वारा उन्होंने छः रोगियोंका (१ आयरिश, २ बंगाली, २ हिन्दुस्तानी और १ मारवाड़ी) बहुमूत्रमें शक्कर आना बन्द कर दिया है और अन्तमें वे एकदम अच्छे हो गये हैं।

शोथ (Dropsy)

समूचे शरीर या किसी खास अंगमें (जैसे—मुँह, हाथ, पैरोंमें) पानी इकट्ठा होनेपर, वह जगह फूल उठती है; इसीको "शोथ" कहते हैं। मर, पेट, बाँह वगैरह शरीरके किसी खास अंगमें सूजन होनेपर उसे "स्थानीय शोथ" (œdema) कहते हैं और समूचे शरीरमें शोथ होनेपर उसे "सार्वाङ्गीण शोथ" (anasarca) कहते हैं। त्वचाके नीचे

जो शोथ होता है, वह पहले पैरोंमें पैदा होता है, इसके बाद धीरे-धीरे ऊपर उठता है और समूचे शरीरमें फैल जाता है। प्लीहा या यकृतका बढ़ना, रजःस्रावकी गड़बड़ी, मैलेरिया या आरक्त ज्वर, बहुत संखिया खाना, पुराना अतिसार या हृत्पिण्ड या मूत्रयंत्रके रोगकी अन्तिम अवस्थामें "शोथ" होता है। शरीरसे पाखाना, पेशाब, पसीना वगैरह अच्छी तरह न निकलनेपर "शोथ" हो सकता है। सूजी हुई जगह नरम और गुदगुदी हो जाती है। अंगुलीसे दबानेपर गड़हा पड़ जाता है। अरुचि, प्यास, बदनका चमड़ा रुखड़ा और सूखा; पेशाब लाल और थोड़ा वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। यदि हृत्पिण्डकी किसी बीमारीके कारण शोथ पैदा हो जाये, तो वह पहले जांघ और बाँहोंपर हमला करता है; प्लीहा और यकृतके रोग बहुत दिनोंतक भोगनेपर जो शोथ होता है, वह पहले पेटपर होता है (अर्थात् "उदरी" ascites) होता है; रजःस्राव बिगड़नेसे जो सूजन आती है, वह पैर, हाथ तथा चेहरेपर हो सकती है।

शोथ तीन तरहके दिखाई दे सकता है:—(क) आंशिक शोथ; (ख) पहले आंशिक, पीछे सार्वाङ्गीण शोथ; (ग) पहलेसे ही सार्वाङ्गीण शोथ।

(क) शिराओंमें खूनके दौरानकी क्रिया रुकनेके कारण अगर शिराएँ बहुत ज्यादा फैल जायँ, तो उनसे "आंशिक शोथ" पैदा होता है। यकृतकी शिराओंमें खूनका दौरान रुक जानेपर उदर-शोथ पैदा होता है। इसमें बराबर साँसकी तकलीफ, मिचली, उदरामय, बवासीर या खूनकी कै होना, प्लीहाका बढ़ना और पेटकी दाहिनी तरफकी शिराओंका फैलना वगैरह लक्षण पैदा हो जाते हैं। (ख) दो परतों (द्विकपाट) के हृत्पिण्डकी गड़बड़ी या हृत्पिण्डकी दाहिनी ओर सूजनके कारण शिराओंका रक्त-संचालन रुक जानेपर, पहले पैर आक्रान्त होकर "आंशिक शोथ" पैदा होता है; पीछे यही "सार्वाङ्गीण शोथ" हो

जाता है। (ग) मूत्राशय-सम्बन्धी शोथ "सार्वाङ्गीण शोथ" के रूपमें दिखाई देता है और इससे रोगीके पेशाबमें अण्डीन (अण्डेके भीतरके सफेद अंश जैसा पदार्थ—albumen) मौजूद रहता है। मूत्र-ग्रन्थिकी क्रिया कमजोर पड़ जानेसे ही शोथ पैदा होता है।

संक्षिप्त चिकित्सा

सार्वाङ्गीन शोथ—एपिस, आर्सेनिक, ब्रायोनिया, ऐपोसाइनम θ, डिजि ३x, नेट्रम-सल्फ ६x, सल्फ।

सन्धिका शोथ – ऐकोनाइट, पल्स, आयोडि, रस-टक्स।

मस्तिष्क-शोथ—हेलिबोरस, मरक्यूरियस, बेलेडोना, एपिस।

वक्षका शोथ—ब्रायोनिया, डिजिटेलिस १x, ३x, आर्सेनिक, हेलिबोरस।

हृत्पिण्डका शोथ—डिजिटेलिस १x, ३x, स्पाइजिलिया ३, आर्सेनिक, क्रेटेगस θ, केक्टस θ।

उदर-शोथ – ऐपोसाइनम θ, आर्सेनिक, चायना, क्रोटन-टिग्लियम, एपिस, सल्फर।

अण्डकोष-शोथ—आयोडियम, रोडो, पल्स, ग्रैफाइटिस, सल्फर, एम्पिलैप्सिस θ।

पाँड़ीका-शोथ—फेरम, चायना, आर्सेनिक।

आर्सेनिक ३x, ६ या ३०—सब तरहके शोथमें आर्सेनिक फायदा करता है। वक्षस्थलका खासकर हाथ पैर या सब अंगोंमें शोथ हो जाये और प्लीहा और यकृत आदि बढ़ जानेके कारण उदरीमें ; कमजोरी और दुबलापन, लाल रंगकी रुखड़ी, सूखी, जीभ ; नाड़ी सूक्ष्म और गति विषम , हाथ-पैर ठण्डे ; बार-बार, प्यास, परन्तु थोड़ा पानी पीनेसे ही तृप्ति ; छातीमें दबा रखनेकी तरह दर्द ; सोते समय साँसमें तकलीफ, शरीरका रंग पीला। रक्ताम्बु निकलना (oozing serum),

मोमकी तरह चमड़ा, प्यास, जखम प्रभृति लक्षणोंमें आर्सेनिक ज्यादा फायदा करता है।

एपोसाइनम-क्वाथ (decoction of apocynum)—शोथकी (खासकर यकृतकी गड़बड़ीके कारण उदर-शोथकी) एक उत्तम दवा है। मात्रा १५-२० बून्द, रोज दो बार सेवन करनेसे जवान आदमियोंको बहुत फायदा दिखाई देता है।

ऐपोसाइनम θ—माथा भारी ; कमजोरी ; हमेशा तन्द्रा आना या नींदमें बेचैनी ; नाड़ी मृदु ; कब्जियत ; परन्तु पाखाना कड़ा न हो ; अनजानमें पेशाब निकल जाना ; पेटसे लेकर छातीतक भार मालूम होना और सीनेके दर्दके कारण रोगी बार-बार लम्बी साँस छोड़ता हो ; हृत्पिण्डकी क्रिया कमजोर ; "गर्म प्रयोगसे दर्दका कम होना।"

एपिस-मेल ३x, ३०—मूत्र-विकारके कारण शोथ ; आरक्त ज्वरके बादवाला शोथ ; पैरोंकी सूजन (खासकर गर्भावस्थामें) ; नये शोथमें अगर प्यास कम हो ; प्रलाप ; इधर-उधर देखना ; दाँत कड़मड़ाना ; शरीरके आधे अंशका फड़कना ; पेशाब परिमाणमें कम और सरमें पसीना ; थोड़े परिमाणमें काली या थोड़ी लाल आभा लिये पेशाब। "ठण्डे प्रयोगसे तकलीफका कम होना" (डा० पियर्स एपिस ३० क्रमके पक्षपाती हैं)।

एपिस और ऐपोसाइनमका पार्थक्य :—तापसे (जैसे—धूपका सेवन करना ; गर्म कमरेमें रहना ; गर्म कपड़े पहनना, गर्म पानी पीना, गर्म पानीसे सेंक देना, रोज सूर्योदयसे लेकर सूर्यास्ततक धूपकी गर्मी बढ़नेके साथ शोथका भी बढ़ना और रातमें सूजनका कुछ कम हो जाना), शोथ रोगीकी तकलीफ बढ़नेपर एपिस देना पड़ता है। सर्दीसे (जैसे—ठण्डा पानी पीना, ठण्डे पानीसे बदन पोंछना,

ठण्डी हवा लगना प्रभृतिमें) शोथ-रोगकी तकलीफ बढ़नेपर, ऐपोसाइनम देना चाहिये।

डिजिटेलिस ३x—कमजोर, क्षीण, चंचल और विषम गतिवाली नाड़ी ; साँस लेने-छोड़नेमें कष्ट, चेहरा मलिन, रोगी चित्त होकर सो नहीं सकता ; हृत्पिण्डकी क्रियाका बिगड़ना ; हृत्रोग या मूत्रग्रन्थि रोगके कारण शोथ।

ऐसेटिक-एसिड ३x—पैरमें बहुत शोथ, पेटके शोथ अथवा समूचे शरीरमें शोथ रहने और उसके साथ ही तेज प्यास रहनेपर लाभदायक है।

टेरिबिन्थिना ३—गुर्देकी बीमारीके कारण मूत्र-पिण्डसे खून निकलनेपर लाभदायक है।

हेलिबोरस १२ या ३०—मस्तिष्कका शोथ, वक्षका शोथ, सार्वाङ्गीण शोथ या मूत्र-विकारके बाद शोथ।

ब्रायोनिया ३, ३०—यकृतके रोग या कब्जियतके कारण शोथ ; गर्भावस्थामें पैरमें सूजन ; पसीना रुकने या बदनके दोनोंके लोप होनेके कारण शोथ ; सन्धिका शोथ ; साँसकी तकलीफ ; सूखी खाँसी ; वक्षस्थलमें दर्द।

पल्सेटिला ६—मासिकमें गड़बड़ीके कारण शोथ।

कैलिकार्ब ३x, ३—मूत्रके विकारकी वजहसे सार्वाङ्गीण शोथ या पेटका शोथ, अण्डलाल मिला पेशाबके साथ रातमें श्वासकष्ट, पेशाब गरम और चमड़ा सूखा।

कैक्टस θ—हृत्पिण्डकी क्रियाकी विषमताकी वजहसे हृदयका शोथ या समूचे शरीरका शोथ, थोड़े परिश्रमसे ही श्वास-कष्ट, ५—१० बून्दका दिनमें २ बार प्रयोग करना चाहिये।

स्किला ३x—नये शोथमें पेशाब रुकनेपर।

आर्स-आयोड २x—(भोजनके बाद तुरन्त ही दो ग्रेनके हिसाबसे सेवन करना चाहिये) हृत्पिण्डकी रोगके कारण शोथ। "आर्स-आयोड विचूर्ण" कभी पानीके साथ न खाया जाये।

स्ट्रोफैन्थस θ—हृत्पिण्डकी पेशीके रोगके कारण शोथ ; पतली, तेज और अनियमित नाड़ी ; श्वास-कष्ट, गलेमें और पाकाशयमें जलन ; मिचली या कै ; उदरामय।

कैल्केरिया-कार्ब ६, ३०—खूनमें सफेद कण वढ़ जानेके कारण शोथ ; नहानेके बाद वढ़ना।

सल्फर θ, ३०—कोई चमड़ेकी बीमारी बैठ जानेपर स्राव-रोधकी वजहसे शोथ होनेपर।

फेरम-मेट ६, ३०—साँवला या पीला देहका चमड़ा ; बहुत कमजोरी ; कब्जियत ; भोजनके बाद जी मिचलाना। रजः-स्रावकी गड़बड़ीके कारण शोथ।

कभी-कभी चायना ६, कोलचि ६, लैकेसिस ६, लाइको ३० ऐकोन ६, वगैरह दवाएँ भी लक्षणके अनुसार दी जाती हैं।

१६२३ ईस्वीके अन्तिम भागमें कलकत्तेमें एक तरहका "शोथ" रोग बहुत फैला हुआ दिखाई दिया। तबसे यह रोग प्रायः सभी जगह फैलता दिखाई देता है, बरसातमें ज्यादा होता है। गोदाममें चावल वहुत दिनोंतक रखे रहनेपर उसमें कीड़े लग जाते हैं, जाली पड़ जाती है। यही जाली लगा हुआ चावल खानेके कारण कलकत्तेमें यह रोग फैला था और भात खाना वन्द कर देनेसे ही "सूजन" कम हो गयी थी। किसी-किसीका मत है कि मिलावटी सरसोंका तेल ही इस रोगका मुख्य कारण है।

आनुसंगिक चिकित्सा—नीचे लिखे तीन विषय याद रखने योग्य हैं :—

१। रोगीका शरीर अच्छी तरह ढँका रखना चाहिये जिससे सर्दी या हवा न लगे।

२। पेशाव ज्यादा होनेपर, सूजन कम हो जाया करती है, इसीलिये पानी ज्यादा पिलानेसे पेशाव भी ज्यादा हो सकता है।

रोज सवेरे एक मिट्टीके वरतनमें या पत्थरके वरतनमें कइएक साफ वेलपत्तेको मिलाकर यही पानी पीनेको देना चाहिये। शोथ रोगमें इससे लाभ होता है। सफेद नुनवेके पत्तेका रस रोज सवेरे थोड़ा-सा पानीकी ही लोग सलाह देते हैं। भोजनके समय नुनवेकी तरकारी फायदा करती है।

३। Sweating Bath (नित्य) से रोगीको रोज इस तरह नहलाना चाहिये कि पसीना खूब हो। पहले रोगीका शरीर कम्बलसे ढँककर, पीछे सरपर ठण्डे जलकी पट्टी लगाकर और दोनों पैर गर्म पानीमें डुवोकर, शरीरपर गर्म पानी ढालने और पुराने साफ कपड़ेसे बदन पोछकर रोगीको विछावनपर सुला गर्म कपडेसे ढक देना चाहिये। सावधान, किसी तरह भी सर्दी न लगने पाये। नहानेके एक घण्टा पहले या वाद रोगीको खाने और सोने न देना चाहिये।

पथ्यापथ्य—नये शोथमें, नये बुखारकी भाँति हल्का पथ्य, पुराने शोथमें पुष्ट हल्का पथ्य देना चाहिये। ताजा मठा लाभदायक है। "इस देशके वैद्योंके मतसे पानी और नमक खाना मना है।" यदि यकृत रोगके कारण शोथ हो, तो दूध और मिठाई न खानी चाहिये। मासका शोरवा अच्छा है, परन्तु कब्जियत रहनेपर मना है। रोटी सुपथ्य है, परन्तु उमरामय हो, तो मना है। ठण्डा पानी पीनेको दिया जा सकता है, परन्तु पेशावमें गड़बड़ी होनेपर नुक्सान करता है, इसके बदले शुद्ध दूध देना चाहिये। गर्म पानीमें नहाना फायदेमन्द है। रोग कुछ घटनेपर पुराने चावलका भात, मूँग या मसूरका शोरवा, मासका शोरवा, सजनेकी फली, परवल और वैंगन सुपथ्य हैं।

रक्त-स्वल्पता (Anæmia)

किसीके खूनका स्वभाविक परिमाण कम हो आये या उसके लाल कण कम हो जायें या उसके उत्पादन [जैसे—उसका सफेद अंश (albumen), रक्त-रण (hæmoglobin) वगैरह गुणोंका] वगैरह की कमी हो जाय, तो उसे "रक्त-स्वल्पता" कहते हैं। ताकतका कम हो जाना, भूख कम हो जाना, अजीर्ण, श्लैष्मिक-झिल्लियोंमें खूनकी कमी मालूम होना, सरमें दर्द या सर घूमना, फी मिनटमें ८० बार नाड़ी, चलना, शरीरकी गर्मीकी कमी, कभी-कभी एँड़ियोंमें सूजन, शरीर दुवला, मलिन और पीला, आलस्य और सुस्ती, श्वासमें कष्ट, कलेजेमें धड़कन वगैरह इस रोगके "साधारण लक्षण हैं।" रोशनी और हवाकी कमी, बहुत ज्यादा अपुष्टिकर खाद्य खाना, अच्छी तरह नींद न आना बहुत ज्यादा नींदमें गड़बड़ी, बहुत ज्यादा परिश्रम करना या आलसीकी तरह जीवन यापन करना, पाचन-क्रियाकी गड़बड़ी, वैसि·ट्यु बर-क्युलिनम। बहुत अधिक रजःस्राव या खून निकलना, गन्दी जगहमें रहना, बवासीर, शरीरमें ज्यादा रस, रक्त आदि निकलना वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है।

ज्यादा रस-रक्त निकलनेके कारण यह रोग होनेपर—चायना एसिड-फास, कार्बो-वेज, कैलि-फास, कैल्के-फास लाभदायक है।

थोड़े रजःस्रावमें—पल्स, फेरम।

रोशनी और हवा वगैरहके अभावके कारण रोग होनेपर—फेरम, पल्स, नक्स-वोम, नेट्रम-सल्फ, कैल्के-कार्ब।

यह रोग दो तरहका होता है:—(१) मुख्य या स्वयम्भूत (primary) रक्त-स्वल्पता और (२) गौण या आनुसंगिक (secondary) रक्त-स्वल्पता। जैसे—

मुख्य या स्वयम्भूत रक्त-स्वल्पता
(Primary Anæmia)

स्वयम्भूत (आप-से आप पैदा हुई) रक्त स्वल्पता भी दो तरहकी होती है —(क) हरित् रोग (chlorosis) और (ख) बढ़ती हुई सांघातिक रक्त-स्वल्पता (progressive pernicious anæmia)। यथा—

हरित् रोग—यह रोग ज्यादातर जवानीमें स्त्रियोंको ही हुआ करता है। पुरुषोंको शायद ही कभी होता है। शरीरका चमड़ा पीला या खाकी रंगका या 'हरी आभा" लिये हो जाता है। फोड़ा, दोनों गाल लाल, कलेजा धड़कना चेहरेपर सूजन, साँसमें कष्ट, सूखी खाँसी स्वभाविक गर्मी (९७४° से भी कम), श्वास-यन्त्र और खून सञ्चालन यन्त्रादि या पाकाशयके यन्त्रकी गड़बड़ी होना। सदा दुःखित रहना, इस रोगके "प्रधान लक्षण" हैं। साधारणतः १४ से २८ वर्षके युवक-युवती ही इस रोगसे आक्रान्त हुआ करते हैं। माताको हरित् रोग रहनेपर कन्याको यह रोग हो सकता है। गुटिका-दोष सम्पन्न स्त्रियोंकी कन्यामें हरित् बीमारीकी आशंका रहती है। औरतोंको होनेपर ऊपर लिखे उपसर्गोंके साथ रजस्रावकी गड़बड़ी भी मालूम होती है। हरित् रोगके साथ यक्ष्मा या हृत्पिण्डका रोग, आँतोंमें घाव, शोथ, रजोरोध, मूत्र ग्रन्थि प्रदाह, बहुत रक्त-स्राव वगैरह उपसर्ग वर्त्तमान रहते हैं।

चिकित्सा—रोगके आरम्भमें 'फेरम म्यूर' ३x या पल्सेटिला (खासकर औरतोंके लिये)। डा० मुलर, डा० हार्ट, डा० जार वगैरह बहुतसे विद्वान डाक्टरोंके मतसे 'पल्स" ज्यादा फायदा करता है। यदि यह रोग पुराना और बढ़ा हुआ हो तो "नेट्रम-म्यूर" ३० खासकर यदि शरीर और मन सुस्त और काहिल रहता हो) या

"कैल्केरिया-फास" ६ विचूर्ण देना चाहिये। कैल्केरिया-फास ३ का व्यवहार कर डा० जार्ज रायलने आशासे अधिक फल पाया है। औरतोंको रक्त-स्वल्पताके साथ अगर हरित् रोग हो, तो मुसलर साहबका मत है कि उसके लिये "कैल्केरिया-फास" सबसे अच्छी दवा है। "फेरम-म्यूर" ३x (भोजनके बाद खाना चाहिये) रक्त-स्वल्पताकी बढ़िया दवा है।

दूसरी दवाएँ—आर्सेनिक, कार्बो वेज, कैल्केरिया-कार्ब फास्फोरस, ग्रैफाइटिस, चायना, पल्स, फेरम-फास, नक्स-वोम, इग्नेशिया, कोनायम, ऐल्यूमिना, सिपिया, सल्फर, सियानोथस, हेलोनियस, एब्रोटम, अगस्टा।

आनुसंगिक चिकित्सा—साधारण स्वास्थ्यके नियमोंका पालन करना चाहिये। पुष्ट और सहजमें पचनेवाली चीजें खाना, सवेरे-शाम घूमना, अच्छे मकानमें रहना, यदि सहन हो, तो नदीमें या कुछ गर्म पानीमें नमक मिलाकर नहाना चाहिये। पालक सागका शोरवा नित्य खानेसे लाल कण जल्दी-जल्दी बढ़ते हैं, इसीलिये, रोगी जल्दी अच्छा हो जाता है।

औरतोंकी हरित् रोगका ज्यादा हाल जाननेके लिये 'स्त्री-रोग' अध्यायमें "हरित-पीड़ा" देखिये।

बढ़ती हुई तेज (या प्राण लेनेवाली) रक्तस्वल्पता—यह रोग धीरे-धीरे बढ़कर बहुत ही कड़े उपसर्ग पैदा कर देता है; इसीलिये इसका ऐसा नाम पड़ा है। इसका खास कारण अबतक मालूम नहीं हुआ, परन्तु अस्वास्थ्यकर जगहमें रहना, स्नायविक या मानसिक उत्तेजना, बहुत दिनोंतक स्तनका दूध पिलाना पेटकी गड़बड़ी वगैरह कारणोंसे खूनके लाल कण धीरे-धीरे कम होते जाते हैं और कणोंकी सूरत भी बदल जाती है, इसी कारणसे यह रोग हो जाता है।

धीरे-धीरे इस रोगका हमला होनेपर (अनजानमें) नींबूके जैसे कुछ 'हल्के पीले' रंगके या मोमकी तरह सफेद शरीरका चमड़ा (कभी-कभी थोड़े दिन रहनेवाले कामला रोगके साथ) कुछ दुबलापन, शरीरके तन्तुओंका कोमल थुलथुला हो जाना, कृशता, सुस्ती, शरीरका ताप कुछ बढ़ जाना, कलेजा धड़कना, बेहोशी, नाकसे खून आना, साँसकी तकलीफ, अजीर्णसा भूख कम हो जाना, पतले दस्त आना, शरीर और मनकी सुस्ती वगैरह "इसके प्रधान लक्षण उत्पन्न हो जाते है।" अन्तिम अवस्थामें कोई-कोई मोटा भी हो जाता है। "भावी फल" बुरा है— अच्छी तरह इलाज होनेपर भी शायद ही रोग अच्छा होता है। ऊपर कहे हुए हरित् रागमें चमड़ा 'हरी आभा लिये' रहता है, परन्तु इसमें चमड़ा 'पीला हो जाता है।

चिकित्सा—आर्सेनिक २x—इस दवाके सेवनसे बहुत कुछ फायदा दिखाई दिया है। इस दवाका प्रधान लक्षण है—"बहुत कमजोरी।"

गेचेल, सैण्डस, मिल्स वगैरह अमेरिकन विख्यात होमियोपैथिक डाक्टरगण लिकर-आर्सेनिक (fowler's solution) मात्रा एक बून्दसे पाँच, दस बून्दतक, दिनमें तीन बार सेवन करनेकी व्यवस्था देते हैं। जबतक यह अच्छी तरह मालूम होता रहे कि शरीरके लाल कण बढ रहे हैं, तबतक इसे लगातार देना चाहिये, परन्तु यदि पाकाशयमें उपदाह (irritation) या आँखका निचला भाग फैला हुआ हो, तो आर्सेनिक देना बन्द कर देना चाहिये। जरूरत पड़नेपर फिर आर्सेनिक ३x, ३० या कोई दूसरी दवा चुनकर देनी चाहिये।

फास्फोरस ६, ३x—"रक्त स्राव", यकृत, हृत्पिण्ड और मूत्र-पिण्डके मेदका बढ़ना वगैरह विधान-विकार, दिनके समय निद्रालुता और रातमें बेचैनी।

वैसिलिनम ३०, २०० (हफ्तेमें एक मात्रा सेवन), चायना ३—३० आर्जेण्ट नाई ६, हाइड्रैस्टिस ३, मर्क-वाई ६X विचूर्ण, क्यूप्रम ३, प्लम्बम ६ वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। इस रोगमें फेरम या लोहेसे बनी दवाएँ लाभ नहीं करती।

माँगुर मछलीका शोरबा खाना फायदेमन्द है। पुराना "सूतिका" रोगका इलाज देखिये।

गौण या आनुसंगिक रक्त-स्वल्पता
(Secondary Anæmia)

शरीरका रंग बदला हुआ, सफेद आभा लिये, पीली आभा या कुछ धुमैला या पीला ; दुवलापन ; पाकाशय या आँतोंमें गड़बड़ी ; नाड़ी क्षीण ; शोथ ; सरमें दर्द ; सरमें चक्कर ; वेहोशी ; भूख न लगना ; स्नायुशूल ; सब शरीरमें कमजोरी और मानसिक सुस्ती वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

अस्वास्थ्यकर जगहमें रहना, अपुष्टिकर भोजन, रक्त-स्राव ; परांगपुष्ट संक्रामक रोग (जैसे—मैलेरिया, कालाज्वर, उपदंश, यक्ष्मा)। विषैले पदार्थ (क्विनाइन, आर्सेनिक, पारा, ताम्बा, सीसा, जस्ता) वहुत दिनोंतक या ज्यादा मात्रामें सेवन करना ; पाकाशयमें प्रदाह या पाकाशयमें जखम, पुराना मूत्रग्रन्थि-प्रदाह, वालास्थि-विकृत ; तेज अर्बुद ; चोट, गिरने या नश्तर लगने या प्रसवके कारण खून वहुत निकलना ; शराव ज्यादा पीनेके कारण लम्पटता वगैरह कारणोंसे यह वीमारी पैदा होता है।

चिकित्सा—फेरम-रिडैक्टस, चायना १X—३, आर्सेनिक ३X, कैल्के-कार्ब ६, हेलोनियस २X, प्लम्बम ३, फास्फोरस ३, इस रोगकी

प्रधान दवाएं। मूल कारण (मैलेरिया, यक्ष्मा, अतिसार वगैरह) निर्णयकर उसकी दवा देनी चाहिये। जहाँ रक्त स्वल्पताके मूल कारणका पता न लगे, वहाँ आर्सेनिक ३x—३०, एपिस ३-३०, कैल्के-कार्ब ६-३०, कार्बो वेज ६-३०, चायना ६, पल्सेटिला ६ वगैरह दवाओंकी परीक्षा करनी चाहिये।

मैलेरिया रोग भोगनेके कारण रक्त-स्वल्पता हो जाये, तो नेट्रम-म्यूर ३०, मैलेरियाके कारण रक्त-स्वल्पता, जीभ पीली, भूख न लगना, बराबर मिचली रहनेके साथ ही सामने कपालमें दर्द, पित्तकी अधिकता वगैरह लक्षणोंमें—आस्ट्रिया वर्जिनिका २x, ६x लाभदायक है। शारीरिक या मानसिक परिश्रमसे अनिच्छा, पेशाबमें Urates और Phosphates बढ़नेके लक्षणमें पिक्रिक-एसिड ३ (फी मात्रा दो ग्रेन ६ घण्टेका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये); ज्यादा कब्जियत हो, तो प्लम्बम-एसेटिकम ३ (फी मात्रा २ ग्रेनके हिसाबसे दिनमें तीन बार सेवन करना चाहिये)। रजःस्राव थोड़ा होकर या बन्द होकर यह रोग हो जाये तो पल्सेटिला ३ या फेरम-मेट ६। श्वेत-प्रदर, शुक्रका स्राव, रक्त-स्राव या अतिसारके कारण खूनकी कमी होनेपर, चायना ३ या फासफोरिक एसिड ३ देना चाहिये। शोथ, उठने-बैठनेकी ताकत न रहना या जीवनी-शक्तिकी कमीवाली अवस्थामें, आर्सेनिक ६ ; यक्ष्मा, खाँसीका लक्षण रहनेपर फास्फोरस ६। शराब आदि पीनेके कारण हो तो नक्स-वोमिका १x—३०। पारेके अपव्यवहारके कारण रोग होनेपर नाइट्रिक-एसिड ६ या आरम-मेट ६x—३० ; क्विनाइन या लोहेके अति व्यवहारके कारण रक्त-स्वल्पता होनेपर या शरीरमें सिहरावन मालूम होनेपर पल्स ६-३०। उपरोक्त किसी दवासे भी फायदा न हो, तो सल्फर ३० दो दिन सेवनकर फिर दो दिनोंतक दवा न खानी चाहिये। इसके बाद लक्षणके अनुसार ऊपर लिखी दवाओंमेंसे कोई दवा चुनकर देनी चाहिये। यदि इससे भी कोई फायदा न हो, तो

"नेट्रम-सल्फ" ३x विचूर्ण ३० देना चाहिये। यह दवा रोगकी सभी अवस्थाओंमें फायदा करती है।

इस ग्रन्थमें कहे हुए "प्लीला", "उदरामय", "अतिरजः", पुराना "सूतिका रोग" स्त्री-रोग अध्यायका "हरित रोग" प्रभृति बीमारियाँ देखनी चाहियें।

श्वेतकणिकाधिक्य रक्त-स्वल्पता

(Leukemia)

जिस रक्त-स्वल्पता रोगमें खूनके सफेद कण बढ़ जाते हैं, उसका नाम "श्वेतकणिकाधिक्य रक्त-स्वल्पता" है। इस श्वेतकणिकाधिक्यके साथ प्लीहा या लसिका ग्रन्थियों (lymphatic glands) की वृद्धि होती है या अस्थि मज्जा (bone-marrow) पर भी रोगका आक्रमण हो जाता है। रक्त-स्वल्पताके उपसर्गोंके साथ प्लीहा, यकृत और लसिका ग्रन्थियोंका (खासकर गर्दनकी ग्रन्थियोंका) बढ़ना ; हाड़ (विशेषकर छातीके हाड़ और पंजरे) में दर्द ; चेहरा मलिन या मोमकी तरह हो जाना ; चर्म-रोग ; शोथ ; नाक आदिसे रक्त-स्राव ; लिङ्गोद्रेक प्रभृति इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। यह रोग जल्द आराम नहीं होता ; पर अच्छी तरह इलाज होनेपर इसके उपसर्ग दबे रहते हैं।

चिकित्सा—आर्सेनिक-आयोड ३x (भोजनके बाद फी मात्रा दो ग्रेनके हिसाबसे सेवन करना चाहिये) यह इसकी उत्कृष्ट औषधि है। प्लीहाके दर्दमें सियेनोथस २x, लिङ्गोद्रेकमें पिक्रिक-एसिड ३x (फी मात्रा एक ग्रेन), शरीरका रंग मटमैला, ठंढक धातु-विकार वगैरह उपसर्गोंमें नेट्रम-म्यूर ३० ; दोनों पैरोंमें ठण्डा लसदार पसीना, शोथके कारण सूजन, ठण्डे जलसे नहाने या बदन धोनेके बाद रोग बढ़नेके लक्षणमें कैल्के-कार्ब ६ और प्रमेह-धातुग्रस्त लोगोंके लिये थूजा या नेट्रम-सल्फ ३x देना चाहिये।

खुली हवाका सेवन, विश्राम, पुष्ट भोजन वगैरह लाभदायक हैं। जिन्हें हमेशा सिहरावन मालूम होती हो, वे सवेरे शरीरमें शराब (wine) मालिश कर सकते हैं।

धूमल रोग (Purpura)

इस रोगमें पहले चमडेपर धुमैला या वैंगनी रंगकी छोटी-छोटी फुन्सियाँ पैदा होती है और चमडे तथा श्लैष्मिक-झिल्लियोंमें रक्त-स्राव होता है। इस रक्त-स्रावके बाद चमडेका रंग धुमैला हो जाता है, इसीलिये, इसका नाम "धुमैला रोग" है। धुमैला रोग तीन तरहका होता है :—

(क) "साधारण ढंगका" (simplex)—इसमें सिर्फ फुन्सियाँ पैदा होती हैं। (ख) "रक्त-स्राविक" (hæmorrhagic)—इसमें फुन्सियोंके साथ दाँतकी जड़, मस्तिष्क, पाकाशय, यकृत, फेफड़ा, मूत्र-ग्रन्थि (गुर्दा) और शरीरके भीतरके यन्त्रोंसे खून बहता है और पेटमें बहुत दर्द होता है। (ग) "वातिक" (rheumatic)—इसमें बुखारके साथ नये वातरोगके उपसर्ग (कभी-कभी आमवात) भी दिखाई देता है।

क्लान्ति मालूम होना; शरीरके कितने ही स्थानोंमें धुमैला फुन्सियाँ (ये फुन्सियाँ न खुजलाती हैं, न पकती हैं और अंगुलीसे दबानेपर दब भी नहीं जाती हैं), थोडी-सी चोट लगनेपर भी देहमें काला दाग पड़ता है, रक्त-स्राव होता है; शोथ; रक्त-स्वल्पता; जोडोंका फूलना और दर्द होना वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—(क) साधारण धूमल रोगमें प्रधान दवा—'आर्निका' ३x (खासकर काला दाग पडना और मार खानेकी तरह दर्द मालूम

होनेपर) और "ऐकोन" ३x (बुखारके लक्षणमें), वेल, सल्फ-एसि, मर्क, रस-टक्स ।

(ख) रक्त-स्राविक धूमल रोगकी प्रधान दवा—"फास्फोरस" ३ (नाक और मसूढ़ोंसे रक्त बहना, कलेजा धड़कना, चमड़ेका रंग पीला और जरा-सा चोटसे ही रक्त निकल पड़ना); "क्रोटेलस" ३ (खूनकी गड़बड़ी—blood-disorganisation के लक्षणमें); "क्रोटेलस" ३ (काला रक्त निकलना, थकावट मालूम होना और मार खानेकी तरह सब शरीरमें दर्द), लैकेसिस ६, नैजा, मर्क, आर्सेनिक ।

(ग) वातिक धूमल रोगकी प्रधान दवा—"ऐकोनाइट" ३ (बुखारके साथ शरीरमें दर्द और अकड़न); "मर्क-वाई" ६ (बहुत ज्यादा गर्मी या ज्यादा सर्दी न सह सकना, रातमें रोगका बढ़ना ; मुँहमें प्रदाह और जखम); "रस-वेनिनेटा" θ (बेचैनी, सब शरीर अकड़ना, विश्रामके समय दर्द बढ़नेके लक्षणमें); "एपिस" ३ (शोथ), "आर्सेनिक" ३x, ६ (बुखारमें रोगीके ज्यादा निस्तेज हो जानेपर) ।

साधारण स्वास्थ्य विधिका पालन करना चाहिये । खुली हवाका सेवन, सूर्यकी रोशनीमें थोरी देरतक टहलना, ऐसे घरमें रहना चाहिये, जिसमें धूप आती हो और पुष्ट खाद्य (खासकर ताजे फल) फायदेमन्द हैं ।

ठीक पोषण न होनेके कारण पैदा हुआ धूमल रोग (Scurvy)

ताजी साग-सब्जी या उपयुक्त भोजन न मिलनेके कारण परिपोषण क्रियामें जो गड़बड़ी पैदा होती हैं, उससे एक तरहका धूमला रोग पैदा होता है । इस शोणित रोगका नाम "अपूर्ण पोषणजनित धूमल रोग" है । बैंगनी रंगकी छोटी-छोटी फुन्सियाँ, कमजोरी (जैसे—हाँफना,

कलेजा धड़कना, चल न सकना वगैरह), श्वास-प्रश्वासमें बदबू, दाँत हिलना ; चमड़ेपर काला धब्बा पड़ना ; मसूड़ोंमें छेद हो जाना ; नाक आदि शारीरिक यन्त्रोंसे खून गिरना ; भूख न लगना या राक्षसी भूख , रक्तस्वल्पता वगैरह इसके विशेष लक्षण हैं ।

चिकित्सा—बहुत ज्यादा परिमाणमें नीबूका रस, दूध, आलू या ताजी साग-सब्जी और पूरी तरह विश्राम करनेसे यह रोग आप-ही-आप आराम हो जाता है। यदि आराम न हो, तो नीचे लिखी दवाएं देनी चाहियें :—"मर्क्युरियस" ३x चूर्ण या "कार्बो-वेज" ३x (मुँह या मसूड़ोंमें जख्म होनेपर); 'चायना' ३ (कानमें भों-भों शब्द होना, दुबलापन या कमजोरी, मुँह या आँतोंसे खून जाना); "फास्फोरस" ३, ३० (बालास्थि-विकृतिके साथ यह रोग होनेपर); आर्सेनिक ३x, ३० और एसिड म्यूर ६, ब्रायोनिया २, फेरम ६ प्रभृति दवाओंका प्रयोग होता है। काला दाग पड़नेपर, विनिगरके साथ स्पिरिट कैम्फर मिलाकर उसपर बाहर लगाना चाहिये ।

ठीक पोषण न होनेके कारण पैदा हुआ लाल चमड़ा (Pellagra)

जीवन धारणके लिये आवश्यक भोजनके सारभाग (protein) की कमीके कारण चमड़ा लाल रंगका तथा पाकाशय और स्नायुओंकी गड़बड़ी वगैरह उपसर्ग हो जायें, तो कहा जाता है कि "ठीक पोषण न होनेके कारण लाल चमड़ा" रोग पैदा हुआ है। दरिद्रताके कारण इस देशमें तथा दक्षिणी युरोपमें यह रोग फैला है। इसका दूसरा नाम "इटलीका कुष्ठ रोग" है। इस बीमारीके इलाजके लिये इटलीमें खासकर २३ अस्पताल हैं।

शरीरमें जगह-जगह (खासकर हाथमें) लाल रंगके दाग और जखम होना, शरीर रुखड़ा हो जाना, सरके पीछेकी ओर दर्द, अजीर्ण (कभी पतले दस्त), मुँहसे लार बहना वगैरह उपसर्ग बार-बार दिखाई देते हैं। ये ही इस रोगके प्रधान लक्षण है। रोग बढ़ जानेपर ऊपर कहे हुए लक्षणोंके साथ सर और पीठमें दर्द, ऐंठन, पक्षाघात, विषाद या पागलपन वगैरह रोग होकर रोगी मर जाता है।

चिकित्सा—सल्फर (डा० डनलप ६x प्रयोगसे लाभ हुआ बताते हैं); सिपिया ६ ; फास्फोरस ३—६ ; नेट्रम-म्यूर ६x विचूर्ण ३० ; लैथाइरस ३ (खासकर पाक्षाघातिक लक्षणमें); आर्ज-नाई ३—३० ; लैकेसिस ६ ; आर्स ३x—३० ; सिकेलि ३x—३० वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार देनी चाहियें। रोगकी पहली अवस्थाओंमें अंडा और मांसको कोई-कोई फायदेमन्द बताते हैं। विश्राम, पुष्ट भोजन और साधारण स्वास्थ्यके नियमोंका रोगकी सभी अवस्थाओंमें पालन करना चाहिये।

अर्बुद (Tumour)

शरीरकी किसी-किसी जगहके नये तन्तुओंके फूल उठनेको "अर्बुद" कहते हैं। इसका संस्कृत नाम "विद्रधि" है। इसके पैदा होनेका कारण आजतक निर्णय नहीं हुआ। इस रोगमें रोगवाली जगहपर कभी दर्द होता है और कभी नहीं भी होता।

अर्बुद दो तरहका है—हल्का (मृदु प्रकृति) और भारी (भीषण प्रकृति)। "हल्का अर्बुद" पासवाले तन्तुओंको कोई हानि नहीं पहुँचाता। जो अर्बुद पासवाले तन्तुओंको ध्वंस करते और बढ़ते रहते हैं, उन्हें "भीषण प्रकृतिका अर्बुद" कहते हैं।

चिकित्सा—कैराइना-कार्ब ६—इस रोगकी एक उत्कृष्ट दवा है (खासकर गालमें जब चर्बीके साथ अर्बुद हो)।

आर्सेनिक १x, ३x—रोगवाली जगहपर दर्द और धातु-विकारके लक्षणमें लाभदायक है।

कैल्के-फ्लुओर १२x—पत्थरकी तरह कड़ा अर्बुद रहनेपर।

थूजा ३०, २००—साइकोसिस दोषसे दूषित व्यक्तियोंके जरायुकी, हड्डी, चर्म, आँतें आदि किसी भी स्थानके अर्बुदमें फलप्रद है। अर्बुद कड़ा, फटा-फूटा। एक बड़े अर्बुदके ऊपर मसेकी तरह उद्भेद निकलते हैं।

कोनायम ३०, २००—कड़ा अर्बुद; स्त्रियोंके वय-सन्धिके समय जरायुका अर्बुद। बूढ़ोंके कन्धे और पीठके अर्बुद तथा मूत्राशय-मुखशायी-ग्रन्थि और अण्डकोषके कड़ापनमें इसका प्रयोग होता है।

चर्बी-भरे अर्बुदमें कैल्केरिया-कार्ब ३०; जलनवाले अर्बुदमें हाइड्रैस्टिस १x, ६ (खासकर ग्रन्थियों और जरायुके अर्बुदमें); मूत्रमार्गके अर्बुदमें—युकेलिप्टस ३x सेवन और युकेलिप्टस θ रोगवाली जगहपर लगाना चाहिये। थूजा, कार्बो-ऐन, कोनायम, ऐकोन-रेडिक्स (फी मात्रा आधा बून्दसे लेकर ३ बून्दतक); फास्फोरस, मेडोरिनम ३०—२०० वगैरहका सेवन फायदा करता है। बाहरी प्रयोग :—जख्मवाले अर्बुदके ऊपर आयडोफार्म विचूर्ण या कार्बो-वेज छिड़क देनेसे तकलीफ कम हो जाती है। डाक्टर Cooper रूटाका मलहम (ताजा रूटा θ के साथ वैसलिन मिलाया हुआ) लगातार लाभ उठाया बताते हैं। "कर्कट-रोग" की दवाएँ देखिये।

उपदंश (गर्मी) और **प्रमेह** (सुजाक)—इन संक्रामक रोगोंका पूरा हाल और इलाजके लिये "जननेन्द्रियके रोग" अध्यायमें "रतिज-रोग" (veneral diseases) अनुच्छेद देखिये।

स्नायुमंडलके रोग

मस्तिष्कके साथ समस्त स्नायुओंको "स्नायुमंडल" कहते हैं। इस स्नायुमंडलके भीतर एक ऐसी शक्ति छिपी हुई है, जिसके बलपर हृत्पिंड आदि शरीरके सभी यंत्र अपना-अपना काम करते हैं, जिसके प्रभावसे हमलोग अपने हाथ-पैर हिलाते हैं और हमलोगोंमें समझने और विचार करनेकी ताकत पैदा होती है।

मस्तिष्क (दिमाग) के रोगोंमें, ठण्डी और पहाड़ी जगहोंमें बीच-बीचमें आबहवा बदलनेके जाना और रहना फायदा करता है।

मस्तिष्क और कशेरुकाका प्रदाह

इस अध्यायमें मस्तिष्क और कशेरुक-झिल्लीके प्रदाहका वर्णन किया जायगा। मस्तिष्कका आवरण और मस्तिष्कके गह्वरके आवरणका प्रदाह, मस्तिष्क-झिल्ली-प्रदाह कहलाता है।

खोपड़ीमें चोट या कानके मध्यवाले भागमें रोग होने या फैलनेसे यह रोग पैदा होता है। मस्तिष्क तीन पर्दोंसे छिपा हुआ है। उसमें एक-एकको मस्तिष्क-आवरक-झिल्ली कहते हैं। पहले "मस्तिष्क और कशेरुका-प्रदाह", इसके बाद "मस्तिष्क झिल्ली-प्रदाह" लिखा जायगा। यह रोग सहजमें आराम होनेवाला नहीं है ; इसलिये, पहलेसे ही अच्छे चिकित्सकके हाथोंमें रोगीको सौंपना चाहिये।

साधारण लक्षण—मस्तिष्क-प्रदाहमें बहुत तेज बुखार, सरमें तेज दर्द, मस्तिष्कमें दर्द, प्रलाप, चेहरा लाल, नाड़ी तेज ; कपाल और गलेकी नसोंका फड़कना ; कब्जियत ; कै या मिचली ; नींद न आना ; रोगके आरम्भमें ही आँखोंकी पुतलीका सिकुड़ना, परन्तु बीमारी बढ़ जानेपर उसका फैल जाना और इस समय रोशनीका बिलकुल ही सहन न होना ; रोगकी तेज हालतमें कभी-कभी दाँत-कड़कड़ाना ; सरमें

चक्कर आना, साँसमें तकलीफ और पेशाबमें खट्टी बदबू प्रभृति लक्षण रहते हैं। कशेरुका-प्रदाहमें सिहरावन मालूम होना, धीमा बुखार, हाथ-पैरमें तेज दर्द; पीठका कड़ा हो जाना, अंग पतले होते जाना और धीरे-धीरे पक्षाघात पैदा हो जाता है।

कारण—गिरना या किसी दूसरे ढंगसे चोट आना; ज्यादा देरतक धूपमें घूमना; मानसिक अवसन्नता या उत्तेजना वगैरह इस रोगके कारण हैं। बच्चोंका यह रोग ज्यादा होता है।

चिकित्सा—तेज बुखार, प्यास, मृत्यु-भय वगैरह लक्षणोंमें ऐकोन २x। चोटके कारण मस्तिष्क-प्रदाहमें बुखार रहनेपर, आर्निका ३—६। बुखारके साथ प्रलाप, मस्तिष्क गर्म, आँखें लाल वगैरह लक्षणोंमें बेलेडोना ६, ३०। तकियेमें सर घसते रहना या एकाएक जोरसे चिल्ला उठना लक्षणमें एपिस ३x, ३०। मस्तिष्कमें तेज दर्द और उसके साथ ही रातमें थोड़ा प्रलाप; "नींद खुलकर एकाएक चौंक उठना" वगैरह लक्षणोंमें ब्रायोनिया ३, हेलिबोरस ६ या सल्फर ३० देना चाहिये।

"मस्तिष्क-कशेरुका ज्वर", मस्तिष्क-झिल्ली-प्रदाह", "मेरु मज्जा-ज्वर-झिल्ली-प्रदाह" "मेरु-मज्जावरक-प्रदाह" देखिये।

मस्तिष्कावरण-प्रदाह या मस्तिष्कावरक-झिल्ली-प्रदाह (Meningitis)

यह एक नयी सक्रामक बीमारी है और अक्सर यह बहुव्यापक (फैलनेवाले) भावसे प्रकट होती है। मेनिञ्जोकोकस (meningo-coccus) नामक एक प्रकारका जीवाणु ही इस बीमारीका कारण है। नाककी राहसे ही यह जीवाणु शरीरमें प्रवेश करता है। इस बीमारीके पैदा होनेके समय परीक्षा कर देखा है कि किसी-किसीकी नाकमें

ये जीवाणु हैं अथवा वे इस बीमारीमें रोगका आक्रमण नहीं होने देते, परन्तु उनके संसर्गमें जो आते हैं, वे बीमार हो जाते हैं। ऐसे मनुष्योंको कैरियर या पीड़ा-वाहक कहते हैं। यह बीमारी पैदा होनेके समय, सतर्क भावसे विशेष परीक्षा कर देखा गया है कि ऐसे मनुष्योंको लोक-समाजसे अलग रखकर चिकित्सा करनी पड़ती है।

ऊपर लिखे नये फैलनेवाले प्रकारके सिवा, अन्य प्रकारके मेनिञ्जाइटिस भी हो सकते हैं, गुटिका-दोषयुक्त (टियुबरक्युलर) या (जब टियुबरक्युलर जीवाणु मस्तिष्कपर आक्रमण करते हैं), इन्फ्लुएञ्जा, न्युमोनिया, खसरा, चेचक, वात, ग्लैण्डुलर डिफ्थीरिया, टाइफायड ज्वर प्रभृतिके सहायक रूपमें या चोट आदिके कारण भी यह बीमारी पैदा हो सकती है; इनके चुनावमें किसी तरहकी विशेष असुविधा नहीं होती। कारण संक्रामक बीमारी बहुत फैलती हुई दिखाई देती है और कटिदेश (कमरके स्थानपर मेरुदण्डके भीतर रस निकलना) को छेदकर जो रस निकलता है, उसकी अनुवीक्षण यंत्रकी सहायतासे परीक्षा करनेपर मेनिञ्जाइटिसके जीवाणु मिलते हैं और बीमारीकी गति मालूम होती है। एक दूसरी तरहकी बीमारीका इतिहास मिलता है या रोगीकी गति इतनी नहीं बदल जाती।

मस्तिष्कमें उद्वेग, बहुत अधिक परिश्रमके कारण सुस्ती इस बीमारीका उत्तेजक कारण हो सकता है। "सांघातिक" प्रकारके आक्रमणमें मस्तिष्क-मेरुमज्जामें रक्तका बहुत अधिक बढ़ जाना, मस्तिष्कके निचले भागमें बहुत अधिक पीवकी तरह पदार्थ संचित होता है। पुराने और ऐसे मेनिंजाइटिसमें जो बहुत अधिक सांघातिक नहीं हैं, उनका आक्रमण होनेपर मस्तिष्ककी झिल्ली मोटी हो जाती है। मस्तिष्क अपेक्षाकृत कोमल हो जाता है, जगह-जगह खून जानेका लक्षण दिखाई देता है। मस्तिष्क-स्नायुओंमें गड़बड़ी पैदा हो जाती है और कभी-कभी नाकके स्रावमें भी जीवाणु पाये जाते हैं; अन्तमें न्युमोनिया या प्लुरिसी हो

जाती है। कभी-कभी प्लीहा बढ़ जाती है और मूत्रग्रन्थि-प्रदाह होता भी दिखाई देता है।

लक्षण **सांघातिक प्रकारकी बीमारीमें**—बहुत शीत, कम्प और सर-दर्दके साथ रोगका आक्रमण होता है। क्रमसे आक्षेप, औंघाई, सुस्ती, थोड़ा-सा सामान्य उत्ताप, कोमल और धीमी नाड़ी, शरीरपर छोटी-छोटी फुन्सियाँ निकलना आदि लक्षण पैदा हो जाते हैं। ५ से २० घण्टोंमें मृत्यु हो जाती है।

साधारण प्रकारकी बीमारीमें—भूख न लगना, सर-दर्द और कमरमें दर्द इसका पूर्व लक्षण है। कभी-कभी सर-दर्द शीत, कम्प, कठिन और मोटी नाडी १०१°—१०२° ज्वरके साथ एकाएक रोगका आक्रमण होते भी देखा जाता है। "गलेकी पेशियोंमें अकड़न" इसका एक प्राथमिक और निर्वाचक लक्षण है। क्रमशः सर-दर्द, बेचैनी और आवाजका सहन न होना लक्षण बढ़ जाता है और जलातंक अर्थात् पानीसे भय पैदा हो जाता है। सांघातिक रोगमें गलेकी पेशियोंमें अकड़न, पहलेसे ही प्रकट होती है और शरीर धनुषकी तरह टेढ़ा हो जाता है। पेशियोंमें आक्षेप हुआ करता है। रोगी नींदमें एकाएक जोरसे चिल्ला उठता है, गर्दन अकड़ जाती है और पीछेकी ओर टेढ़ी हो जाती है। मुँहकी पेशियोंमें आक्षेप पैदा हो जाता है, आँखें टेढ़ी हो जाती हैं। यह तिर्यक-दृष्टि या वक्र-दृष्टि मेनिञ्जाइटिसका एक उल्लेख-योग्य लक्षण है। प्रायः सभी रोगियोंमें प्रलाप, सर-दर्द और मेरुदण्डमें स्पर्श सहन नहीं होता। क्रमसे बेहोशी आ जाती है और यह बेहोशी बढ़नेके साथ-ही-साथ प्रलाप घट जाता है। कितने ही रोगी एकदम बेहोशी हो जाते हैं और मानो गहरी नींदमें पड़े रहते हैं। उत्तापकी स्थिरता नहीं रहती—कभी-कभी १०५°—१०६° तक ताप बढ़ जाता है। किसी-किसीको थोड़ा उत्ताप भी दिखाई देता है। त्वचापर नाना प्रकारके दाने निकलते हैं। रक्तकी श्वेत-कणिका बढ़

जाती हैं। आनुवीक्षणिक परीक्षामें श्वेत-कणिकाओंमें मेनिञ्जाइटिसके जीवाणु दिखाई देते हैं। प्लीहा बढ़ जाती है, वमन और मिचली पैदा हो जाती है ; पतले दस्त या कब्जियत भी रह सकती है ; पेशाबमें श्वेतसार, चीनी और खून रह सकता है।

इस रोगका स्थितिकाल अनिश्चित है। कई घण्टोंसे कई मास भी हो सकता है। एक सप्ताहमें उत्ताप और आक्षेप घटना और बुद्धि-वृत्तिका लौट आना आशाप्रद लक्षण है। एकाएक उत्तापका घटना अच्छा लक्षण नहीं है। इस रोगका यह परिणाम होता है, कि साधारणतः प्लुरिसी, हृद्वेष्ट-प्रदाह, कर्णमूल-प्रदाह, न्युमोनिया, गठिया वात, पुराना मस्तिष्कमें जल-संचय, मानसिक दुर्बलता, वाक्-शक्तिका लोप हो जाना, थोड़ी देरके लिये बेहोशी, स्मरण शक्तिका लोप होना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। सैकड़े ७०—७५ रोगी मर जाते हैं। बच्चोंकी मृत्यु और भी अधिक होती है।

संक्षिप्त चिकित्सा—रोगका पता लग जानेपर (खासकर एकाएक चिल्ला उठनेपर) एपिस ३x—२०० प्रयोग किया जाय तो दूसरी दवाकी जरूरत ही नहीं पड़ती। एपिससे फायदा न हो तो जिकम ६x—२०० सेवन करना चाहिये। माथा, गर्दन, पीठकी रीढ़, पीछेकी तरफ टेढ़ी पड़ जाये अथवा गर्दन कड़ी, माथा एक तरफ लुढ़का हुआ, खाँखें स्थिर प्रभृति लक्षणोंमें साइक्यूटा ६—३०। माथेके भीतर सुई गड़नेकी तरह तेज दर्दमें टैरेण्टुला ६ का प्रयोग करना चाहिये।

रोगीको निराली हवादार जगहमें शय्यापर एकदम सुला रखना और माथेके केश कटवा देना तथा आइस बैग या वह न मिले तो पानीकी धारा देनी चाहिये। इस बातपर नजर रखनी चाहिये कि शय्या-क्षत न हो जाये। बीच-बीचमें पतली चीजें खानेको देनी चाहियें। पानी खूब पीलाना चाहिये। यदि रोगी पथ्य निगल न सके, तो टबरकी नलीसे पाकाशयमें पथ्य प्रवेश करा देना चाहिये।

चिकित्सा—एकोनाइट ३०—रोगकी नयी अवस्थामें जब सर-दर्द, बेचैनी, प्यास प्रभृति अधिक रहे, खासकर क्रोध या लु लग जाना, इस रोगका उत्तेजक कारण होनेपर।

बेलेडोना ३०, २००—इसे इस रोगकी सर्वश्रेष्ठ दवा कहा जा सकता है। सर-दर्द, माथेमें रक्तकी अधिकताकी वजहसे चेहरा तथा आँखें लाल हो जाना। कनपटीमें टपककी तरह दर्द, प्रलाप, माथा गर्म, शरीर और पैर अपेक्षाकृत ठण्डे, माथा तकियेमें गड़ानेकी चेष्टा शब्द या रोशनी सहन न होना, आक्षेप, माथा पीछेकी ओर टेढ़ा हो जाना, बेहोशी प्रभृति इस दवाके निर्देशक लक्षण हैं।

ब्रायोनिया ३०, २००—त्वचाकी गोटियाँ, दाने बैठकर मस्तिष्कावरण-प्रदाह। आक्षेप और प्रलाप, प्रलापमें दिनमें किये हुये कामोंको बकना, तेज प्यास, सामान्य हिलने-डुलनेसे ही यन्त्रणा, ऐसा भाव मानो कुछ चबा रहा है, जबड़े हिलाना, कब्जियत, अंग-प्रत्यङ्गमें दर्द।

बैप्टीशिया ६, ३०—टाइफायडके बादका मस्तिष्कावरण-प्रदाह, सारे शरीरमें ऐंठनकी तरह दर्द, ऐसा मालूम होना कि अंग-प्रत्यंग शरीरसे अलग है, हल्का प्रलाप, बुदबुदाकर बकना, शय्या कड़ी मालूम होना, सारे शरीरसे बदबू, मल-मूत्रमें बदबू वगैरह टाइफायडके लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

आर्निका ६, २००—चोट आदिके कारण मस्तिष्कावरण-प्रदाह, सारे शरीरमें ऐंठन, गलेकी हड्डीमें स्पर्शका सहन न होना, चेहरा लाल, आँखोंकी कनीनिका सकुंचित, अनजानमें पाखाना-पेशाब, नाडी मोटी और कडी; बेहोश हो जाना, बेहोशकी तरह नींद, शय्या कड़ी मालूम होना, धीमा प्रलाप।

कैम्फर ६, ३०—मस्तिष्कमें रक्त-सञ्चयकी वजहसे अचेतन भाव, माथा हिलानेपर टपककी तरह दर्द, धनुष्टंकार, दाँती लगना, माथा एक ओर झुल पड़ना।

हेल्लिबोरस ६, २००—बेहोशी, जगाया नहीं जा सकता, माथा पीछेकी ओर टेढ़ा हो जाता है। आँखकी पुतली फैली, रोशनीमें सिकुड़ती नहीं है। लगातार दाँत कड़मड़ाना, मूत्र-स्राव रुक जाना, लगातार एक हाथ और एक पैर हिलाना, सुस्ती। एपिसके बाद यह अच्छा काम करता है।

हाइड्रोसियानिक एसिड ३०—रोगका एकाएक आक्रमण, अधखुली आँखें, आँखकी पुतली फैली, चेहरा दब जाना और काली आभा लिये सुन्न जीभ, अनजानमें बाहर निकल पड़ती है। गलेमें घरघर आवाज, सुस्ती, सारा शरीर ठण्डा ; नाड़ी सूतकी तरह और असमान।

जेलसिमियम ३०, २००—रोगकी पहली अवस्थामें प्रबल वमन, माथेमें खूनकी अधिकता, माथेमें पीछेकी ओर दर्द, पेशियोंके हिलानेकी शक्तिका न रहना, या घटना, कम्पन, आँखकी पुतली फैली, निस्तेज हो जाना, बोल न सकना, जीभ सुन्न, तन्द्रालुता।

ग्लोनोयिन ६, ३०—माथा बड़ा मालूम होना, मानो कट जायागा। टपककी तरह दर्द, दर्द गर्दनके पिछले भागसे आरम्भ होकर माथेके पीछेकी ओर फैल जाता है। दृष्टि-शक्तिका लोप हो जाना, मिचली और बेहोशी, समूचे मेरुदण्डमें दर्द, सूर्यकी किरण लगनेपर घटना, गैसकी रोशनीके नीचे बहुत देरतक काम करनेके कारण रक्त-प्रधान व्यक्तियोंकी बीमारी।

हायोसायमस ३०, २००—धीमा प्रलाप, बिछावनकी चादर नोचना, कामपूर्ण प्रलाप, नंगे हो जाना, हमेशा जननेन्द्रियपर हाथ रखना, गर्दन एक ओर अकड़ जाना, दाँती लग जाना, सर-दर्द, आक्षेप।

हाइपेरिकम ६, ३०—मेरुदण्डमें चोटकी वजहसे बीमारी, मेरुदण्डमें स्पर्शका सहन न होना, अंग-प्रत्यंगमें सुस्ती।

इग्नेशिया ३०, २००—शोक या मानसिक आघातके कारण बीमारी, लगातार लक्षणोंका बदलना।

नक्स वामिका ३०, २००—धनुष्टकारकी तरह आक्षेप, पर बहुत थोडे भी बेहोशी नहीं आती जरा भी छू देनेपर आक्षेप पैदा हो जाना।

ओपियम ३०, २००—तन्द्रालुता, प्रलाप, कामोन्माद, "माथेके पिछले भागमें सीसा भरा है, इस तरहका भार", अधखुली आँखें, टकटकी लगाकर एक ओर देखते रहना, आँखकी पुतली फैली या सकुचित, रोशनीसे आँखकी पुतली नहीं सिकुडती, मुँहमें एक तरहकी गन्ध, दाँती लगना, पसीना होनेपर बढना।

जिंकम ३०, २००—दृष्टि-लोप, स्मरण शक्तिका घटना, कब्जियत एकाएक माथा गर्म मालूम होना। उद्‌भेद बैठ जानेके कारण बीमारी, लगातार हाथ-पैर हिलाना।

इनके अलावा—एपिस इथूजा, मर्क, नाइट्रिक, आर्स, कैन्थरिस, कैनाबिस-इण्डिका, साइक्यूटा, सिमिसिफ्यूगा, क्रोटेलस, क्यूप्रम, डिजी, लाइको, फास, विरे-ऐल्ब, टैरेण्टुला प्रभृतिका भी लक्षणके अनुसार प्रयोग होता है।

मस्तिष्ककी रक्त-स्वल्पतासे पैदा हुए विकार
(Hydrocephaloid Brain)

हैजा, अतिसार अथवा दूसरे सुस्ती लगनेवाले रोगोंमें खूनका क्षय हो जानेके कारण, पोषणका काम बन्द हो जाता है—इस अवस्थामें पहले बेचैनी, ज्वर-भाव, कराहना, जोरसे साँस फेंकना, चौंक उठना, सोयी हुई हालतमें एकाएक जोरसे चिल्ला उठना, दाँत कडमडाना, सीना और गलेका घरघराना, हरे रगका बदबूदार दस्त होना, अधखुली आँखें वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। इसके बाद उदासी, चेहरा बदरग और

ठण्डा रहना, सम्पूर्ण शरीर (खासकर हाथ-पैर) ठण्डे, नाड़ी और साँस क्षीण. "ब्रह्मरन्ध्रमें गड़हा पड़ जाना", मोह पैदा हो जाना (इस मोहके बाद ही मौत होती है)। मस्तिष्कमें उपयुक्त खूनके संचालनका काम न होना या खूनमें लाल कणकी कमीके कारण यह बीमारी पैदा होती है।

चिकित्सा -फास्फोरस ३ इसकी उत्तम दवा है। यदि फास्फोरससे थोड़ा फायदा हो अथवा बिलकुल ही नहीं हो, तो जिकम ३x विचूर्ण या जिकम म्यूर ६ देना चाहिये। दूसरी-दूसरी दवाओंके लिये बाल-रोगाध्यायमें "बच्चाके मस्तिष्ककी रक्त-स्वल्पताकी वजहसे विकार" देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको बिछावनमें चित सुलाकर (दोनों पैरोंकी अपेक्षा सर कुछ नीचा रहे) एक कपड़ेमें थोड़ा बरफ रख, रोज तीन-चार बार शरीरपर मलना चाहिये, निर्मल वायु सेवन करना और पुष्ट भोजन देना (जैसे—दूध, मसूरकी दालका पानी; पानीके साथ शराबकी बून्दें, अण्डेका सफेद हिस्सा, माँगूर या सिंगी मछलीका शोरवा वगैरह चीजें खिलानी चाहिये) फायदेमन्द हैं।

मस्तिष्कमें जल-संचय और पहले कहा हुआ "मस्तिष्कावरक-झिल्ली-प्रदाह" और खून तथा बलको घटानेवाले इस रोगका भेद तथा और-और दवाओंके लिये हमारी प्रकाशित "हैजा और उसकी चिकित्सा" देखिये।

मस्तिष्कमें खून ज्यादा बढ़ जाना या रक्त-संचय
(Cerebral Congestion)

शरीरके किसी भी अंगमें अस्वाभाविक या अनियमित खून जमा होनेका नाम उस "अंगका रक्ताधिक्य" या "रक्त-संचय" है। माथेकी कैशिक पतली नालियोंमें बहुत ज्यादा खूनका बढ़ जाना "माथेमें रक्त-संचय" कहलाता है। यह रक्त-संचय दो तरहका है:—(क)

धामनिक या प्रबल रक्त-सञ्चय (arterial or active congestion) और (ख) शैरिक या अप्रबल रक्त-सञ्चय (venous or passive congestion)। तेज या अप्रबल वेगसे रक्त सञ्चालनकी क्रियाके कारण पैदा हुए रक्त सञ्चयका नाम "धमनिक रक्त-सञ्चय" है और रुके हुए या क्षीण रक्त-सञ्चालन क्रियासे पैदा हुआ रोग "अप्रबल रक्त-सञ्चय" कहलाता है।

(क) **मस्तिष्कमें प्रबल रक्त-संचय**—चेहरा लाल और फूला, माथा गर्म, आँखोंका सफेद अंश "चमकीला और लाल" (कभी-कभी यकृतके गड़बड़ीके कारण पीला रहता है), शरीरका रंग मटमैला, हाथ-पैर गर्म और पसीना नहीं होता, परन्तु दोनों पैर ठण्ड रहते हैं और कभी-कभी टपक होती है या किसी चीजसे मारनेकी तरह या जारसे दवानेकी तरह या भार मालूम होना); प्रलाप रहे या न रहे, पेशाव परिमाणमें थोड़ा और लाल, तेज रोशनी या तेज आवाजका सहन न होना प्रभृति "मस्तिष्कमें प्रबल रक्त सञ्चय" के लक्षण हैं।

हृत्पिण्डकी क्रियाका तेज हो जाना ; रक्त प्रधान आदमियोंका अच्छा खान-पान रहनेपर भी जितनी चाहिये, उतनी मेहनत न करना ; एकाएक किसी पुराने चर्म रोगका बैठ जाना ; पुराने घावका एकाएक अच्छा हो जाना ; एकाएक पसीना बन्द हो जाना ; एकाएक स्राव (जैसे— ऋतु या ववासीरसे खूनका स्राव) होना या रुक जाना ; नये गठिया वातके तेज आक्रमणकी अवस्थामें गठिया रोगका दर्द एकाएक रुक जाना, बहुत शराब पानी वगैरह कारणोंसे "मस्तिष्कमें प्रबल रक्त-सञ्चय" होता है।

चिकित्सा—अधिकांश स्थानोंमें बेलेडोना ३x—३० फायदा करता है। बेलेडोना ३—चेहरा और आँखें लाल, कपड़ेसे ढँके हुए शरीरमें पसीना, प्रलाप, आँखोंकी पुतली फैली हुई वगैरह रक्ताधिक्यके साधारण लक्षणोंमें इसका प्रयोग ता है और बच्चोंके रक्ताधिक्यकी प्रधान दवा है।

ऐकोन ३x (सर्दी लगना या तेज मानसिक आवेगसे पैदा हुए रक्ताधिक्य के साथ बुखार); ग्लोनोइन ३ (तेज टनकका दर्द, धूप या गर्मी लगने या ऋतु वन्द हो जाने के कारण रक्ताधिक्य होनेपर, बुखारका न रहना); विरेट्रम-विर ३x (बुखारके साथ माथा गर्म, चेहरा और आँखें लाल, गर्दनके पीछेसे लेकर सरतक दर्द, आँखोंकी पुतली फैली, दो दिखाई देना, सर भारी, चेहरेकी पेशियोंका फड़कना वगैरह ऐकोनाइट और बेलेडोना दोनों ही के लक्षण मौजूद रहनेपर); क्यूप्रम ऐसेटिकम ३ (उद्भेदोंका वैठ जाना या दाँत निकलनेके कारण रक्ताधिक्य); मस्तिष्कके "प्रचण्ड रक्ताधिक्य" की प्रधान दवा है। बिछावनसे न उठना, शारीरिक और मानसिक उत्तेजनाका रोकना, पतली चीजें पीना और कपाल तथा माथेपर ठण्डे पानीकी पट्टी या बरफ देना चाहिये।

(ख) **मस्तिष्कमें अप्रबल रक्त-संचय**—रोज कुछ-न कुछ सरमें दर्द मिजाज चिड़चिड़ा, माथेमें गड़बड़ी, सुस्ती, कमजोर हृत्पिण्ड, नसोंमें धीरे-धीरे खूनका संचालन, चेहरा पहले मलिन और उत्कंठासे भरा, कभी-कभी लाल होना ; हाथ ठण्डे (या पसीना), "आँखोंकी चमक" घटी और "ज्योति-हीन" ; रोगिणी अपने कपालमें या ब्रह्मतालुमें अथवा माथेके पिछले भागकी ओर हमेशा हाथ लगाता है ; रोगिणी कहती है, उसका माथा "बहुत गर्म" है ; परन्तु किसी दूसरेके हाथ लगानेपर सर बिलकुल ही गर्म नहीं मालूम होता है ; सर भारी हतबुद्धिकी तरह अकेलेमें और शान्त रहनेकी इच्छा, हल्की रोशनी या सुमधुर गाना-बजाना भी सहन नहीं होता ; कै या मिचली, कभी-कभी सरके दर्दसे बेचैन होकर रोना वगैरह इसके प्रधान लक्षण हैं।

हृत्पिण्डकी क्रिया कमजोर ; बहुत दिनोंतक स्राव बहना, बहुत संगम, बहुत दिनोंतक मनःकष्ट भोगना ; लगातार मानसिक परिश्रम ; धातुगत रोग (जैसे—गर्मी, यक्ष्मा, कर्कट-रोग अंडलाल-मिला पेशाब, गठिया

वात), बहुत दिनोंतक बुखार या कृमि रोग भोगना, पित्तकी अधिकता, अजीर्ण रोग वगैरह कारणोंसे मस्तिष्कमें अप्रबल रक्त-संचय होता है।

चिकित्सा—जेलसिमियम १x—३० ; नयी अवस्थाकी सबसे प्रधान दवा है। पुरानी अवस्थामें सल्फर ३० फायदा करता है "जेल्स" ३ सरमें चक्कर, कपालके चारों ओर किसीने बन्धनसे बाँध दिया है, ऐसा मालूम होना, मनको स्थिर न रख सकना, दो देखना ; "ओपियम" ३—३० घोर तन्द्रा, कब्ज और दबाव मालूम होना।

दिमागकी कमजोरी (Brain Fag)

बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम करनेके कारण दिमागमें थकावट मालूम होती है, इसीका नाम "दिमागकी कमजोरी" या "मस्तिष्कका अवसाद" है। *स्नायुओंके अवसादमें एसिड-फास २x ; बहुत उदासीनता* या किसी कामकी इच्छा ही न होना—एसिड पिक्रिक ३x ; याददाश्तकी कमजोरी और बुद्धिका जड हो जाना जिंक ६ या जिंक-पिक्रिक ३ ; स्मरण-शक्तिका नाश (खासकर इम्तिहान देनेके समय) इथ्यूजा ३, ऐनाकार्डी ३ ; तेज बीमारी या गृहस्थीके बोझसे घबड़ाकर यदि मस्तिष्क दुर्बल हो जाये, तो केल्के-फास ६x विचूर्ण ; पुराना सर-दर्द, बहुत परिश्रम करनेके कारण स्मरण शक्तिका घट जाना ; स्नायविक दुर्बलता ; ठण्डसे उपसर्गोंका बढ़ना और गर्मीमें कम होना वगैरह लक्षणोंमें सिलिका ६ का प्रयोग करना चाहिये।

सर-दर्द (Headache)

"सरका दर्द" बहुत जगह दूसरे-दूसरे रोगोंका लक्षणभर होता है। स्नायविक सर-दर्दमें रगोंमें टपक-सी होती है ; माथेमें तेज दर्द, भूख न लगना, मुँह लसदार हो जाना ; कै, मिचली, ओकाई आना वगैरह

उपसर्ग दिखाई देते हैं। ज्यादा चाय या काफी पीना, मैलेरिया, दाँतका दर्द, वहुत शराव पीना, धूपमें घूमना, वहुत ज्यादा डर जाना, देह या मनकी थकन, दुर्भावना, नींद न आना और पाकाशयकी गड़बड़ीसे यह रोग पैदा होता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—नये आक्रमणमें—नक्स वोमिका (माथेमें रक्त-संचयके कारण सरके दर्दके साथ सरमें चक्कर और कब्जियत आदि लक्षणोंमें); वेल (चेहरा लाल, आँखें गर्म या वड़ी मालूम होना); व्रायो (तीती कै) ग्लोनोइन (टनक, खासकर सर मानो फटा जाता है ऐसा सरका दर्द); काक्युलस (कै या मिचलीके कारण सर दर्द, थोड़ा पानी या वलगम निकलना); विरे-ऐल्व (कैके कारण सर-दर्दके साथ सुस्ती और ठण्डा पसीना रहनेपर): काफिया (स्नायविक सर-दर्दके साथ नींद न आना); सिमिसिफ्यूगा [औरतोंको हिस्टीरियाके कारण सरमें दर्द (खासकर ऋतुमें गड़वड़ीके लक्षण रहनेपर)]; ऐकोन (सर्दीके साथ सर-दर्द होनेपर और रक्त-संचालनमें गड़वड़ी रहनेपर); आइरिस (सर-दर्दके साथ वहुत ज्यादा पित्तकी कै होनेपर)।

पुराने सर-दर्दमें—सल्फर, कैल्के-कार्व, नेट्रम-म्यूर, किनिनम-सल्फ (३x—३०), सिपिया, कैलि-वाई, कैलि-कार्व, सैंगुइनेरिया, नक्स वोम, आर्स, काक्यु, जिंकम (स्नायविक दुर्वलतामें) वगैरह दवाएँ ६ से २० शक्तिककी फायदा करती हैं।

ऐकोनाइट ६, ३०—रक्त-संचयसे पैदा हुए सर-दर्दमें ; भयानक दर्द, ऐसा मालूम होता है मानो सरके भीतरकी सव चीजें ठेलकर वाहर निकलना चाहती हैं। अधकपारीका दर्द ; कभी-कभी कपाल और कनपट्टीमें टपकका दर्द, यहाँतक कि आँखोंमें भी दर्द होने लगता है। हिलने-डुलने, सर झुकाने और गड़वड़ी सर-दर्द वढ़ जाता है और विश्रामके समय क़म हो जाता है।

बेलेडोना ३, ६, ३०—सरमें टपककी तरह दर्द, रोशनी या कोई आवाज रोगी बिलकुल सहन नहीं कर सकता, तेज दर्द, एकाएक शुरू और बन्द होता है। रोगीका चेहरा एकदम लाल और गर्म हो जाता है।

मेलिलोटस १x— रक्त-संचयसे पैदा हुआ (congestive) तेज दर्द, मानो माथा फटा जाता है। सर-दर्दसे रोगी व्याकुल होकर दीवाल या जमीनमें माथा पटकने लगे या पागलकी तरह प्रलाप बकना आरम्भ करे, तो यह दवा दो-एक दिन व्यवहार करनेसे बहुत उत्तम फल हो सकता है (आधे घण्टेका अन्तर देकर मेलिलोटस θ या १x सेवन करना चाहिये)।

जेलसिमियम ३—सर-दर्दके कारण रोगीको चारों ओर अन्धेरा दिखाई दे या अन्धा जैसा हो जाये। माथा तमतमाया और गर्दनमें दर्द ज्यादा होता है। माथेके पीछेकी ओर गर्दनमें दर्द ज्यादा होता है। रोगीका चेहरा और आँखें लाल, दर्दकी वजहसे रोगी बिलकुल घबड़ा जाता है और माथा मानो सुन्न हो जाता है।

क्रोटेलस ६—Dr. Schell कहते हैं कि सर-दर्दकी वजहसे रोगी चुप रहे या लँगड़ाकर चलता हो (अर्थात् जोरसे चलना या कुछ बड़बड़ाते हुए घूमना, रोगीके लिये बहुत तकलीफका काम हो जाता है)। ऐसी अवस्थामें यह दवा बहुत ही अच्छा काम करती है।

इग्नेशिया ३, ६, ३०—जल्दीबाजी, चिड़चिड़ापन या मानसिक उत्तेजनाके कारण सरमें दर्द होनेपर ; दारुण शोकके कारण सरमें दर्द ; गुल्म-वायुवाले रोगीको सर-दर्द हो, काँटी ठोकने-जैसा दर्द और दर्द एक ही जगहमें रुका तो यह दवा लाभ करता है।

नाइट्रिक एसिड सरके पिछले भागमें दर्द होनेपर।

मैग्नेशिया-फास २x, १२x—चूर्ण ("गर्म पानीके साथ सेवन" करना चाहिये)—असह्य दर्द, दर्द माथेके एक स्थानसे दूसरी जगह हट जाता है, कभी-कभी बन्द हो जाता है और फिर पैदा हो जाता है।

आर्निका ६, १२, ३०—रक्त-संचय या स्नायविक-दुर्बलताके कारण पैदा हुआ सर-दर्द ; आँखोंका पलकोंका भारी मालूम होना, आँखोंके आगे अन्धेरा, आँखें लाल. आँखोंमें जलन, माथेका गर्म रहना ; कपाल, कनपटी और गर्दनकी शिराओंका फड़कना ; ऊँची आवाज ; रोशनी, हिलना डुलना और सोनेसे रोगका बढ़ना और शान्त बैठनेसे बीमारी घटी मालूम होना ; गिर जानेके कारण पुराना सर-दर्द ।

ब्रायोनिया ३, ६, १२, ३०—रक्त-संचय और वातके कारण उत्पन्न सर-दर्द हिलने-डुलनेसे बढ़ता है ; सरमें चक्कर ; सर ज्यादा भारी मालूम होना ; सर झुकानेसे ऐसा मालूम होना, मानो कपालकी राहसे माथेकी सब चीजें बाहर निकल पड़ेंगी ; कपाल और कनपटीमें दर्द, दबानेसे यह दर्द कम हो जाता है, अधकपारी (खासकर दाहिनी ओर) का दर्द । बारम्बार डकार और पित्तकी कै होना । सर-दर्दके बाद नाकसे रक्त गिरना, कपालमें दर्द, सर मानो फटा जाता है, ऐसे लक्षणमें ब्रायोनिया ३ प्रयोग करनेपर बहुत बार खासा फायदा दिखाई देता है ।

कैल्केरिया-कार्ब ३०—बहुत मानसिक चिन्ताकी वजहसे सरमें दर्द ; सरमें जोरका दर्द (सनेरे) ; रातमें शरीरके ऊपरी अंगमें बहुत पसीना, खाली पेट रहनेपर बार-बार डकार आना और दिमागमें ठण्डक मालूम होना ; अधकपारीका सर-दर्द ।

चायना ६, १२, ३०—कानमें गुनगुन शब्द ; लाल चेहरा ; शरीर कमजोर ; बार-बार जम्हाई आना ।

लिलियम-टिग ६—समूचे सरके ऊपर दर्द और भार मालूम होना ; दोनों हाथोंसे माथा पकड़े रखनेकी इच्छा ; बाएँ कपालसे

लेकर सरके पिछले भागतक दर्द ; सवेरे पतले दस्त आनेके साथ सर भारी ; बन्द गर्म कमरेमें दर्द बढ़ जाता है ; ऋतु-दोषके कारण सरका दर्द, खुली हवामें और सूर्यास्तके समय घटता है। स्त्रियोंके जरायु रोगके कारण सर-दर्द।

नक्स-वोमिका ६, १२, ३०—सरमें चक्कर ; कपाल और कनपटीकी शिराओंका फड़कना ; फाड़नेकी तरह दर्द ; कै, मिचली, कब्जियत, भोजनके बाद, मानसिक परिश्रमके बाद और सर झुकनेपर दर्द बढ़ जाता है ; बलगम या रक्त-प्रधान मनुष्योंका सर-दर्द, अधकपारीका दर्द जो सवेरे आरम्भ होता है और तेज दर्द होता है तथा सन्ध्यामें कम हो जाता है ; (सैंगुनेरिया अम्ल या पित्तकी कै), पाचन-यन्त्रकी गड़बड़ीके कारण या बवासीरकी वजहसे सर-दर्द तथा शराबियोंके सर-दर्दमें यह ज्यादा फायदा करता है।

पल्सेटिला ३, ६, १२—पचनेके काममें गड़बड़ीके कारण, तेल तथा घीकी बनी चीजें ज्यादा खानेकी वजहसे भोजनके बाद, सरमें दर्द ; औरतोंकी जननेन्द्रियकी क्रियामें विकार हो जानेके कारण सरमें दर्द ; एक ओरके कानके पीछे तेज दर्द मालूम होता है, मानो कोई कांटी गड़ रही है।

फास्फोरिक-एसिड ६, ३०—स्नायविक दुर्बलता और धातु-दौर्बल्यके कारण मस्तक और गर्दनके पीछे दर्द ; स्मरण-शक्तिका घट जाना ; देखनेकी ताकत कम हो जाना और कानसे कम सुनना प्रभृति लक्षणोंमें उपयोगी है।

सिलिका ६, १२ या ३०—तेज सर-दर्दके कारण ज्ञान-शून्य हो जाता है। सवेरेके वक्त जाड़ा मालूम होता है और मिचलीके साथ दबा रखनेकी तरह दर्द होता है, माथेके एक ओर फट जानेकी तरह दर्द ; आँखोंके ऊपर दर्द ; यहाँतक कि देखा नहीं जाता आदि लक्षणोंमें लाभदायक है।

सिपिया ६, १२, ३०—मस्तकमें भार और खोंचा मारनेकी तरह दर्द, रजःस्रावकी गड़बड़ीके कारण वमन (मिचली) के साथ सर-दर्द ; कब्जियत ; दाहिनी या बाईं आँखके ऊपरवाले भागमें दर्दके लक्षणमें।

पर्फिगस ३—औरतोंको मिचलीके साथ सर-दर्द (घूमने या मेहनत करनेकी वजहसे सर-दर्द)।

आर्जेण्टम-नाइट्रिकम ६—सरमें चक्कर ; माथेके भीतर खूब गहराईपर दर्द ; कपड़ेसे बाँधनेसे कम होना ; अधकपारीका दर्द ; जोरोंकी मिचली।

प्लम्बम ६—(कब्जके कारण) पुराना सर-दर्द।

फेलाण्ड्रियम ३x—ब्रह्मतालुमें दर्द, मानो उसपर कोई भारी चीज रखी है।

सिमिसिफ्यूगा ३—स्नायवीय वात या रजःस्रावमें गड़बड़ीके कारण पैदा हुआ सर-दर्द, माथे और आँखोंमें तेज दर्द ; आँख हिलानेपर दर्द बढ़ जाता है, कपालसे लेकर गर्दनके पीछेवाले भागतक दर्द फैल जाता है ; सरके पिछले भागमें दर्द ; तेज सर-दर्दके कारण आँखोंकी पुतलियाँ फैली ; प्रलाप और दृष्टिका विकार ; गुल्मवायु (हिस्टीरिया) वाली दुबली औरतोंका केके साथ सर-दर्द, शराबी और विद्यार्थियोंका सर-दर्द ; नींद न आना वगैरह लक्षणोंमें लाभदायक है।

साइक्लामेन ३—तेज सर-दर्द ; आँखोंके आगे मानो नाना प्रकारके रंग काँपते हुए घूमते हैं ; सवेरे और ऋतुके समय रोग बढ़ जाता है।

आइरिस-वार्स ३—कै या मिचलीके साथ दाहिनी ओरका रस-दर्द। खासकर यकृत दोष और बहुत मानसिक परिश्रमके कारण पैदा हुआ सर-दर्द ; सन्ध्याके समय, ठण्डी हवामें, विश्रामके समय या खाँसनेपर बढ़ जाता है ; लगातार हिलते-डुलते रहनेपर घटता है। सात दिनोंके अन्तरसे सर-दर्द।

कैलि-बाई ६—एक आँखके (खासकर दाहिनी आँखके) ठीक ऊपरी भागमें, कपालमें दर्द ।

स्पाइजिलिया ३—सामने कपालमें नोंच फेंकनेकी तरह दर्द ; यह दर्द आँखोंतक फैल जाता है, हिलनेसे दर्द बढ़ता है और उसके साथ ही कलेजेमें धड़कन और बेचैनी रहती है ; जोरसे दबा रखनेपर दर्द घटता है। आधी ओर (खासकर बाईं ओर) दर्द, सूर्योदयके समय दर्द आरम्भ होता है, दोपहरतक धीरे-धीरे बढ़ता है और उसके बाद धीरे-धीरे कम होकर सूर्यास्ततक शान्त हो जाता है ।

सैंगुइनेरिया ३, ३०—सूर्योदयसे सूर्यास्तक सरमें दर्द ; आधे कपालमें (खासकर बाईं ओर) सरमें दर्द ; हर सातवें दिन सरमें दर्द होना ; "रज स्राव बन्द होनेके समयका" सर-दर्द ।

चियोनैन्थस वर्जिनिका (Chionanthus Virg,) १x—मिचलीके साथ रज.स्रावकी गड़बड़ी या पित्तसे पैदा हुआ सर दर्द पाँच, दस, पन्द्रह मिनटका अन्तर या नियमित समयका अन्तर देकर सरमें दर्द होता है। इसका मूल अरिष्ट कुछ समयतक सेवन करनेपर सर दर्द होना बन्द हो जाता है ।

ग्लोनोइन ३—धूप या आगकी गर्मीके कारण सरमें दर्द, क्लर्क, समाचार पत्रोंके रिपोर्टर, कम्पोजीटर वगैरह जिन्हें गैस या बिजलीके नीचे बैठकर हमेशा काम करना पड़ता है, उनके सरका दर्द अधकपारी का दर्द , आधी अन्धकारमय दिखाई देती हैं ।

सल्फर ६, १२, ३०—कपाल या कानके पीछे टपककी तरह दर्द ; माथेके ऊपरी भागमें गर्मी मालूम होना ; सवेरेके वक्त पतले दस्त, बवासीरसे खून निकलना रुक जानेपर मस्तकमें रक्त-सञ्चयके कारण सरमें चक्कर या दर्द ।

विरेट्रम-विर ३x, ३०— माथा भरा और भारी ; सब शिराओंका फड़कना ; वेहोशी कानमें भों-भों शब्द ; कै या मिचलीके साथ अतिसार ।

पथ्यापथ्य—रोगकी पहली अवस्थामें कुछ न खाना अच्छा है । यदि कसकर पकड़नेसे दर्द कम हो, तो कपड़ा (खासकर गीला कपड़ा) माथेमें वाँधनेसे फायदा होता है । ठण्डे कमरेमें विश्राम, थोड़ी मात्रामें खूब गर्म चाय या काफी पीना कभी-कभी फायदा करता है ।

सूर्य्यावर्त्त ; आधे सिरका दर्द

(Hemicrania)

पाकाशय या अनुभावक (sensory) स्नायुओंकी गड़बड़ीके साथ माथेके आधे भागमें (कभी बाईं या कभी दाहिनी ओरकी भौंहोंके ऊपर) एक तरहका स्नायुशूल या सर-दर्द हुआ करता है ; इसीका नाम "अर्धकपारीका सर-दर्द" है । यह एक दुरारोग्य रोग है—मुश्किलसे एकदम आराम होता है ।

वहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम, पेशावकी बीमारी, वात, धातु-दोष वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है । मर्दोंकी अपेक्षा औरतोंको यह बीमारी ज्यादा होती देखी जाती है । जिस वंशमें स्नायुओंके रोग ज्यादा होते हैं, वहीं यह रोग होता है । कापलमें तेज दर्द (खासकर वाँएँ कपालमें) जाड़ा लगना, जम्हाई आना, कै या मिचली, रोशनी या आवाज बिलकुल ही सहन न होना, पसीना होना, बोली वन्द होना, सरमें चक्कर, रक्तकी कमी, अग्निमान्द्य वगैरह इसके प्रधान लक्षण हैं ।

रोगके आक्रमणके समयकी चिकित्सा—चियोनैन्थ, जेल्स, सैंगुइनेरिया या आइरिसका सेवन और अन्धेरेसे शान्त कमरेमें सोना और सिर्फ पतली चीजें पीनी चाहियें ।

विरामके समय—नैजा, नक्स वोमिका, पोडोफाइलम, सिपिया, स्पाइजिलिया, चायना, आर्स, काफिया, कैलि-कार्ब, कैलि-बाई या आगे लिखी किसी दवाको चुनकर कुछ दिनोंतक सेवन करना चाहिये। ध्यान रखना चाहिये कि किसी तरहकी शारीरिक या मानसिक उत्तेजना या किसी तरहकी स्वास्थ्य-विधिका लंघन न हो जाये और शराब, मांस वगैरह उत्तेजक भोजन और रातका जागना एकदम त्याग देना चाहिये।

प्रुनस स्पाइनोसा ३, ६ और सैंगुइनेरिया ३x, २०० ; प्लेटिना ६, पल्स ३, सिलिका ३० कपालके दाहिनी ओरके दर्दमें फायदा करते हैं और स्पाइजिलिया ३, ३० और थूजा ६, २०० कपालके बाईं ओरके दर्दमें फायदा करते हैं। डा० काउपरथायेट नीचे लिखी दवाएँ सेवन करनेकी राय देते हैं :—ड्यूबोइसिन x, विरेट्रम-विर ३x इपिकाक ३० स्ट्रिकनिया ३०, ऐट्रोपिन ३x या ३०, हायोसियामिन-हाइड्रोब्रोमेट ६x चूर्ण और केनाबिस-इण्डिका θ ३x। डाक्टर हेम्पेल गाढ़ी काली काफीके साथ सैलिसिलेट आफ सोडा २०-३० ग्रेन खानेकी राय देते हैं। "सर-दर्द" की दवाएँ देखिये।

रोगके आक्रमणके समय यदि तेज दर्द हो, तो जेलसिमियम १x-३, आइरिस १x—३०, चियोनैन्थस θ—२x और सैंगुइनेरिया θ वगैरह दवाएँ तुरन्त फायदा दिखानेवाली हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—अन्धेरी कोठरीमें सोना और पतली चीजें खानी चाहियें। ठण्डी या बहुत गर्म जलपट्टी माथेमें या सरसोंकी गर्म पोल्टीस गर्दनके नीचे और पीठमें देनेसे तुरन्त फायदा होता है। ब्रोमाइड अथवा अफीम मिली दवाएँ या जुलाब वगैरह देनेसे हानि होती है। पेशाबका दोष रहनेपर, उसका इलाज किया जाये, तो यह रोग भी अच्छा हो जा सकता है। ["मूत्र-यन्त्रके रोग" देखिये]।

सरमें चक्कर आना
(Vertigo or Giddiness)

सरमें चक्कर रोगमें रोगीको ऐसा मालूम होता है, मानो उसका शरीर हिल रहा है अथवा उसके चारों ओरके पदार्थ मानो घूम रहे हैं। साधारणतः एकाएक उठकर खड़े हो जानेपर रोगीकी आँखोंके आगे सरसोंका फूल या अन्धेरा दिखाई देता है, कभी-कभी तो चक्कर खाकर गिर पड़ता है। माथेमें खूनकी कमी या रक्त-संचयके कारण यह रोग पैदा होता है। बहुत पढ़ने, बहुत इन्द्रिय-सेवन करने, नशा पीने, रातमें जागने, माथेमें चोट लगने, अजीर्ण, मस्तिष्क, हृत्पिण्ड या मूत्रग्रन्थिकी बीमारी वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है। "सरमें चक्कर" दूसरे रोगोंका उपसर्गभर है। अतएव, मूल रोगका इलाज करनेसे ही यह अच्छा हो जाता है।

चिकित्सा—साधारण सरके चक्करमें—जेलसिमियम ३, रोगीको डर हो कि शायद वह पीछे उलटकर गिर पड़ेगा—ऐसे लक्षणोंमें—बोरैक्स ६ ; सोनेके समय सरमें चक्कर आनेपर कोनायम ३ या नेट्रम-म्यूर ६ ; प्लीहा के कारण सरमें चक्कर आनेपर कोएर्कस ३x ; बहरापनके साथ सरमें चक्कर और कानमें अनेक प्रकारके शब्द होनेके लक्षणमें चायना ३ या नेट्रम-सैलेसिलिक ३ ; नींद खुलनेपर सरमें चक्कर आता हो या कुछ बाद आता हो, तो लैकेसिस ६ देना चाहिये।

स्नायविक शिरोघूर्णन—मस्तिष्कके बहुतसे रोगोंके कारण (खासकर अर्बुद पैदा होना) सरमें चक्कर आनेपर काफिया ६, नक्स-मस्केटा १x—३, इग्नेशिया ३, जिंकम ३—३०, थिरिडियन ३० (कै या मिचलीके कारण सरमें चक्कर, सामान्य चलने फिरने या आँखें बन्द करनेपर बढ़ना) ऐम्ब्रा ३।

आँखोंकी बीमारीके कारण सरमें चक्कर—बहुत देरतक आँखें खोले रहने या फैलाने (strain) के कारण सरमें दर्द होनेपर रूटा १—३, आँखोंकी पुतलियों और पेशियों सिकुड़नेपर, फाइसस्टिग्मा ०—३।

कानकी बीमारीके कारण सरमें चक्कर—कास्टिकम ६—३०, जेलसिमियम ३x—३०, स्ट्रैमोनियम ३x—३०।

पाकाशय या आँतोंकी गड़बड़ीके कारण सरमें चक्कर—नक्स-वामिका ३x—३०, पल्सेटिला ६, ब्रायोनिया ६, ३०।

रक्त-स्वल्पताके कारण सरमें बराबर चक्कर, सवेरेके वक्त ही आरम्भ होता है और इसमें सर दर्द अकसर नहीं रहता। भोजन इत्यादिके बाद सरमें चक्कर आना प्राय घट जाता है और मेहनतके बाद बढ़ता है। वैराइटा-कार्ब १२, लाइकोपोडियम ३० या सिलिका ३० इसकी उत्तम दवाएँ हैं। पुष्ट भोजन और ज्यादा परिश्रम न करना फायदेमन्द है।

रक्तके अधिकताके कारण सरमें चक्कर अकसर सवेरे शुरू नहीं होता है और इसके साथ सरका दर्द भी मौजूद रहता है। भोजनके बाद सरमें चक्कर आना बढ़ जाता है और मेहनतके बाद कम हो जाता है। बेलेडोना १x—३०, नक्स-वोम ६—३०, आर्निका ३, जेल्स १x, ग्लोनोइन ३, काक्युलस ३, नेट्रम-म्यूर १२x विचूर्ण २०० या लैकेसिस ६, इसकी उत्तम दवाएँ हैं। हल्का भोजन और नियमित परिश्रमसे फायदा होता है यदि सर झुकानेपर सरमें चक्कर आता हो, तो कैल्केरिया-कार्ब ६—२००, ब्रायोनिया ३—३० या सिपिया ६—२०० का प्रयोग करना चाहिये।

स्नायविक दुर्बलताके कारण सरमें चक्कर—फास्फोरस ३, एसिड-फास ३०, चायना ३, जिंकम ६।

सरमें चक्कर आकर सामनेकी ओर गिर जानेपर—स्पाइजिलिया ३—३०, साइक्यूटा ६ ।

सरमें चक्कर आकर पीछेकी ओर गिरनेपर—ब्रायोनिया ६, ३०, नक्स-वोमिका ३X, २००, रस-टक्स ६, ३० ।

सरमें चक्कर आकर यदि दाहिनी या बायीं ओर गिर पड़े—सल्फर ।

आनुसंगिक चिकित्सा—उत्तेजक पदार्थ खाना-पीना मना है। शुद्ध हवाका सेवन, ठण्डे पानीमें नहाना, जल्दी पचनेवाली और पौष्टिक चीजें खाना उचित है ।

कंठनालीका आक्षेप या क्रूप खाँसी

स्वर-यन्त्रके ऊपरी भागका नाम "कंठनाली" है। नींदके पहले भागमें (खासकर दांत निकलनेके समय) यदि वच्चेको कंठनलीका छेद वन्द होकर, उसकी साँस रुक जानेकी तैयारी हो, तो उससे श्वासनलीका आक्षेप या क्रूप कहते हैं। इसमें अकसर साँसमें तकलीफके साथ घं-घं आवाजकी तरह खाँसी आती है, उससे भी साँस रुकती है। एक रातमें इसके कई दौरे हो सकते हैं। दौरेके समय शरीर गर्म और शरीरकी त्वचा सूखी और चेहरा नीला हो जाता है। यह एक स्नायविक रोग है, कोई श्वासयंत्रका रोग या खाँसीकी वीमारी नहीं है। पिता-माताके वंशमें यह रोग रहना, वालास्थित विकार, सर्दी लग जाना, पाकाशयकी गड़बड़ी, दाँत निकलनेके, कारण प्रदाह वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है।

रोगाक्रमणके समयका इलाज—ऐकोनाइट १X (सूखी खाँसी, श्वास वन्द होनेकी आशंका); वेल ३X या जेल्स २X (अकड़न पैदा होनेपर); इपिकाक ३X (वमन और वलगम वढ़ जानेपर); क्यूप्रम ६

(खींचन या अकड़न ज्यादा हो) ; सैम्बुकस ३x— ६ (भयानक श्वास-कष्ट, बच्चा जागकर उठ बैठता है, उसका चेहरा नीला हो जाता है, हाँफा करता है, श्वास खींच सकता है, पर छोड़ नहीं सकता ; नाक बन्द रहती है)। निद्रित अवस्थामें दौरा हो, तो लैकेसिस ३० के प्रयोगसे फायदा होता है। ऐण्टिम-टार्ट ६ (साँस रुक जानेकी तैयारी घरघर शब्द, ऐसा मालूम हो कि बहुत बलगम जमा है, पर निकलता कुछ भी नहीं ; स्वरभंग)। रोगकी तेजीके अनुसार ये दवाएँ दस-पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर देनी चाहिये।

रोगकी तेजी घटनेपर इलाज—फास्फोरस ३ (खाँसीके साथ सीनेमें दर्द), स्पञ्जिया १x या ३x (सूखी कड़ी खाँसी), हिपर-सल्फर (स्वरभंगके साथ साँय-साँय शब्दवाली खाँसी)। ये सभी दवाएँ—दिनमें तीन-चार घन्टेका अन्तर देकर देनी चाहियें। अधिक हाल जाननेके लिये बाल-रोगाध्यायमें "क्रूप खाँसी" देखना चाहिये।

अनिद्रा

(Sleeplessness)

यह भी कितनी ही बार दूसरे रोगका लक्षण ही रहता है। माथेमें रक्तकी अधिकता और पैर ठण्डे होना, बहुत खाना, उपवास, बहुत ज्यादा चाय या काफी पीना ; कब्जियत, मानसिक उत्तेजना, चिन्ता वगैरह कारणोंसे यह अनिद्रा रोग होता है।

चिकित्सा—काफिया ६, ३० इस रोगकी प्रधान दवा है, खासकर जब किसी वजहसे मन उत्तेजित रहता है।

इग्नेशिया ३, ३०—दुःख, मनस्ताप वगैरह कारणोंसे नींद न आनेपर ; लगातार चौंक उठनेकी वजहसे नींदमें गड़बड़ी होती है, तो इससे फायदा होता है।

कैमोमिला १२—दाँत निकलनेके समय बच्चोंको नींद न आना ; जम्हाई आती है, औंघाता है, पर नींद नहीं लगती। अनिद्रा और बेचैनी।

बेलेडोना ३०—कैमोमिलासे यदि फायदा न हो ; चिन्ताके कारण नींद न आना ; तन्द्रा होती है, पर नींद नहीं होती।

नक्स-वोमिका ६, ३०—रातके दो तीन बजे नींद खुल जानेपर फिर बहुत देरतक नींद नहीं आती, इसके बाद नींद लग जाती है ; बहुत खाने या कब्जियतके कारण नींद न आना ; पढ़ने या नशा पीने, अजीर्ण या क्रिमिके कारण अनिद्रा रोगमें इससे बहुत फायदा होता है।

विरेट्रम-एलब ३०—भयसे चौंक पड़नेके कारण नींदमें व्याघात होनेपर यह उपयोगी है।

लाइकोपोडियम ३०—दोपहरके समय भोजनके बाद ही नींद न रोक सकना ; नींद खुलनेके बाद बहुत ही सुस्ती मालूम होती है।

काक्युलस ३०—आँखें बन्द करते ही भयानक स्वप्न देखना ; नींदकी इच्छा, पर सोनेमें डर लगता हो।

पैसिफ्लोराशिया ३०—काम-काजकी चिन्ताके कारण नींद न आनेपर इससे लाभ होता है।

पल्सेटिला ६, ३०—रातके पहले भागमें नींद न आना।

साइना २x, २००—क्रिमिके कारण नींद न आना।

आरम ६, या **नाइट्रिक एसिड** ६—उपदंश अथवा पारा खानेके कारण नींदका न आना।

चायना ६, ३०—रक्त-स्राव या दस्त होनेके कारण कमजोरी आ जानेकी वजहसे नींद न आना ; चाय पीनेके कारण अनिद्रा।

लैकेसिस ६, ३०—अच्छी नींद नहीं आती ; स्वप्न-भरी क्षण-स्थायी नींद, किसी तरह नींद नहीं आती, यदि आती भी है, तो एक

वार नींद खुलने वाद फिर नहीं आती। नींद खुलनेके बाद मन बहुत ही खराब रहता है।

पेविना सैटाइवा θ (की मात्रा ३—५ बून्द)—नींद न आनेका कोई विशेष कारण निर्णय न होनेपर।

पैसिफ्लोरा इन्कारनेट θ—यह नींद न आनेकी एक महौषधि है। मात्रा—मूल अरिष्ट एक बून्दसे ३० बून्दतक। मेदनीपुरकी ओरके एक सज्जनको दस वर्षतक नींद न आयी। एक हिन्दू धर्म-प्रचारकने इस पुस्तकमें देखकर ही यह दवा दी और इसी दवाकी सेवन करते ही उन्हें सुखसे नींद आने लगी और तबसे उनका अनिद्रा रोग बिलकुल दूर हो गया।

ऐकोनाइट (बेचैनीके कारण नींद न आना); ओपियम, साइप्रिपिडियम, फास्फोरस ३ (बुढ़ापेमें नींद न आना); सिपिया १२ और सिमिसि ३ (स्त्रियोंके वस्ति गह्वरकी गड़बड़ीके कारण अनिद्रा), फेरम ६ और थूजा ६ (चाय पीने या रक्त-स्वल्पताके कारण नींद न आना), केलि ब्रोमेटम, आर्स, केलि-आयोड, कैम्फर वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार देनी चाहिये। रक्त संचयके कारण अनिद्रामें, फेरम-फास ३० बहुत दिनोंतक सेवन करना चाहिये। सल्फर ३०, खासकर रातको २ बजेसे ५ बजेतक नींद न आती हो। पैसिफ्लोराके अलावा अनिद्राकी सब दवाएं साधारणतः "ऊँचे क्रममें" दी जाती हैं।

आनुसंगिक उपाय—सोनेके पहले मुँह, कपाल, गर्दनका पिछला भाग, कान और दोनो पैर ठण्डे पानीसे धोना चाहिये और गीले वस्त्र (या गर्म पानी) से सब शरीर अच्छी तरह पोंछ डालना चाहिये या थोड़ी देरतक ठण्डी हवामें घूमना चाहिये, इससे नींद खूब आयेगी। भारी पदार्थ खाना, नशा पीना या खूब ऊँचो तकियापर सर रखकर सोना मना है।

अधिक नींद
(Sleeping-Sickness)

यह गर्म देशका एक रोग है। इस भयानक रोगने अफ्रिकाके किसी-किसी स्थानको एकदम जन-शून्य बना दिया है। इस देशमें कभी-कभी गहरी नींदवाले रोगी देखनेमें आते हैं। ग्लोसिना नामक एक मक्खीके काटनेकी वजहसे पहले बुखार, दुबलापन, सुस्ती, प्लीहाका बढ़ना, नाक और गलाका फूलना, हाथ-पैरमें कँपकँपी, उदासी, बोलीमें जड़ता वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं। इसके बाद तन्द्रा या गहरी नींद और अन्तमें मृत्यु हो जाती है। इस रोगका पहला लक्षण यह है, कि रोगी कई दिनोंतक मुर्दे-जैसा पड़ा रहता है। उस समय इस बातका पता लगाना मुश्किल हो जाता है, कि यह जीवित है, कि मर गया। कितनोंका यह मत है कि यह एक खास तरहका मैलेरिया ज्वर है। मक्खी इसे एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचाती है और एक मनुष्यसे दूसरेमें वह फैलता है। इसलिये, वे जंगल-झाड़ी साफ रखनेके लिये कहते हैं।

रोकनेवाला इलाज—ग्लोसिना मक्खी न काटने पाये, ऐसा उपाय अगर किया जाये, तो इस रोगसे छुटकारा मिल सकता है।

चिकित्सा—इस रोगका पता लगते ही आर्सेनिक ३x या ऐण्टिम-टार्ट ३x विचूर्ण देना चाहिये। यदि इन दवाओंसे फायदा न हो, तो क्लोरल-हाइड्रेट २x तीन-चार घंटेका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये। दो-एक हफ्ता खाने बाद अगर फायदा मालूम हो, तो २x के बदले ३x देना चाहिये। भरपूर फायदा दिखाई देनेपर दवा बन्द कर देनी चाहिये। क्लोरलसे अगर फायदा न हो, तो लक्षणके अनुसार ओपियम, नक्स-मस्केटा, एपिस, आर्स, हेलिबोरस, लैकेसिस, नैजा, कैलि-ब्रोम, मस्कस, सल्फर वगैरह दवाएँ देनी चाहियें।

१६२१-२२ ईस्वीमें फ्रांस, इङ्गलैण्ड, स्विटजरलैण्ड और कैनाडा राज्यमें "हिचकीके साथ एक तरहकी गहरी नींद" (sleeping hiccoughs) नामक एक भयानक रोग दिखाई दिया है। इसका निदान नहीं हो रहा है, इसलिये ऐलापैथिक डाक्टर इसको दवा देकर रोग अच्छा नहीं कर सके, परन्तु होमियो-चिकित्सक निराश न हुए। एक उत्तम मेटीरिया-मेडिका लेकर, उसकी सहायतासे, जिन दवाओंके लक्षणोंसे रोगके अधिकांश उपसर्ग मिलते थे, वही दवा चुनकर रोगीको वे देते थे। इससे बहुत फायदा हुआ।

छाती दबानेका सपना

(Nightmare)

अजीर्ण, बिछावनपर जैसी-तैसी हालतमें सो जाना, ज्यादा रातमें अधिक भोजन, बच्चोंकी घटीका बढ़ना वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है।

छातीपर मानो कोई गहरी भारी चीज रखी है, ऐसी ही तकलीफ देनेवाले सपनेको "बोबियाना" या "छाती दबानेका सपना" कहते हैं। सपनेवाली हालतमें रोगीको बोलने या हिलने डुलनेकी ताकत नहीं रहती। जब चिल्लाकर नींद खुल जाती है, तो रोगीको बहुत कुछ आराम मालूम होता है।

चिकित्सा—कैलि-ब्रोमेटम १x (या पियोनिया २x) सोनेके कुछ ही पहले सेवन करनेसे फायदा होता है। नक्स-वोम ६ (भोजनके दोषसे बीमारी होनेपर); चायना ३ (छातीपर दबाव या भार मालूम होनेपर); सल्फर ३० (कलेजा धड़कना), फेरम-फास ६x या ऐकोन ३ (रक्त-सञ्चयके कारण रोग होनेपर); बहुत ज्यादा खाना या उत्तेजक पदार्थ खाना पीना और चित्त होकर सोना छोड़ देना चाहिये। मकानके बाहर खेलना या बदन दबा देना फायदेमन्द है।

हिस्टीरिया (Hysteria)

आयुर्वेदमें कहा हुआ "गुल्मवायु" और "हिस्टीरिया" एक ही रोग नहीं है ; परन्तु दोनोंमें वहुत कुछ समझता दिखाई देती है। स्नायु-मंडलकी क्रियामें विकारसे ही साधारणतः यह रोग होता है। इसी कारणसे पेट फूलना ; कष्ट देनेवाली डकारें या हिचकी ; साँसमें तेज कष्ट और साँस लेने तथा छोड़नेमें जोरकी आवाज ; स्वरभंग ; पेशाव वन्द ; बोली वन्द ; ऐसा अनुभव होना कि पेटसे गलेतक गलेकी तरह कोई पदार्थ चढ़ रहा है ; सरमें दर्द वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं। हिस्टीरियामें एकदम ज्ञान लोप नहीं हो जाता। वहुतसे रोगियोंको जरायु या डिम्बकोषकी गड़वड़ीके कारण ही यह वीमारी होती है। जवान औरतोंको (और कभी-कभी पुरुषोंको भी) यह वीमारी होती दिखाई देती है।

चिकित्सा—मूर्च्छा (वेहोशी) के समय, कैम्फर या मस्कस θ या ऐमोनिया नाकके पास रखनेपर (या मस्कस ३ सेवन करानेसे) रोगी जल्दी होशमें आ जाता है। अच्छी हालतमें नीचे लिखी दवाएँ देनेसे रोग घट सकता है। रोगी हमेशा उदास, वेचैन, नियमित समयमें, परन्तु वहुत दिनोंतक जारी रहनेवाला ज्यादा रजःस्राव या एकदम रजः-स्राव वन्द होकर, गर्भाशयमें खून एकत्र होनेके कारण हिस्टीरिया रोग हो, तो प्लैटिना ६ या ३० देना चाहिये। जो औरतें अपनी तकलीफ हमेशा दूसरोंसे कहा करती हैं, उनको प्लैटिनासे ज़्यादा फायदा होता है। ऐसा मालूम हो कि पेटसे गलेतक कोई गला उठ रहा है, उसके साथ ही साँस रुकती हो ; थूक न निगला जाय ; आक्षेप या खींचन ; माथेका ऊपरी भाग गर्म ; आँखें जल-भरी ; एक वार खुशी और कुछ ही देर वाद उदासी—लक्षणमें इग्नेशिया ६ या ३० देनी चाहिये। जो औरतें अपना मनोभाव छिपा रखती हैं, उनके लिये इग्नेशिया ज्यादा

फायदेमन्द है। पेटसे गलेतक गोला उठता है—यह अच्छी तरह मालूम होना ; साँसमें तकलीफ होकर पेट फूलना लक्षणमें—एसाफिटिडा ६। रज-स्राव बन्द होनेके समय या मृतुकालके दर्दके कारण हिस्टीरिया होनेपर—पल्सेटिला ६, सेबाइना ६, सिलिका ३० या काक्युलस ६। जरायु विकारकी वजहसे हिस्टीरिया हो—मानसिक बेचैनी, तेजी या निराशा, बाएँ बगलमें या बाएँ स्तनके नीचे दर्दके लक्षणमें—सिमिसिफ्यूगा ३। बेहोशीके समय प्रलाप और बेहोशी न रहनेके समय बहुत तरहकी बीमारी मालूम होती हो, तो वेलेरियाना ३। गलेमें या तलपेटमें दर्द ; ज्यादा मात्रामें पेशाब, स्वर-भग, उदासी वगैरह लक्षणोंमें कास्टिकम ६, बेलेडोना ६, नक्स-वोमिका ३०, कैमोमिला ६, कैनाबिस इण्डिका x, काफिया ६, नक्स वोमिका २x, हायोसायमस ६, अरम-मेट, टैरेण्टुला ६ और जिकम-फास ३ बीच-बीचमें देना चाहिये। हिस्टीरियाका फिट होते ही रोगीका कपड़ा ढीलाकर मुँहपर ठडे पानीका छींटा देना चाहिये। उसके साथ कोई सहानुभूति न दिखाये, ज्यादा पेशाब होनेपर बहुत बार आप ही रोग कम हो जाता है। इसीलिये, रोगीको बार-बार पेशाब करनेकी कोशिश करनी चाहिये। "विषाद-वायु रोग", "मूर्च्छा" और "जरायुज मूर्च्छा" देखिये। हिस्टीरियावाले रोगीको ठण्डी जगहमें रखना अच्छा है ; काशी वगैरह जगहें भी अच्छी हैं। शारीरिक और मानसिक विश्रामकी बहुत आवश्यकता रहती है।

संन्यास (Apoplexy)

अच्छी-भली अवस्थामें, चलने फिरनेके समय, एकाएक गिरकर एकदम या कुछ बेहोश हो जानेको सन्यास कहते हैं। यह तीन कारणसे होता है :—(१) मस्तिष्कमें रक्त पहुँचानेवाली नाड़ियोंमें खून ज्यादा हो जानेके कारण। (२) मस्तिष्कमें रक्त वहन करनेवाली नाड़ियाँ कट जानेके कारण बहुत ज्यादा खून निकलनेके कारण। (३) एकाएक

माथेमें पानी जमा होनेके कारण। यह रोग कभी-कभी तो "धीरे-धीरे" प्रकट होता है और कभी-कभी "एकाएक" शुरू हो जाता है। रोगी अभी अच्छा-भला है, एकाएक गिड़ पड़ा और इन्द्रियोंका ज्ञान या चलने-फिरनेकी शक्ति खो बैठा; परन्तु साँस या रक्तके चलनेकी क्रियामें कोई वाधा नहीं पड़ती; पूर्ण, क्षीण और द्रुत नाड़ी; कभी-कभी मृदु या धीर नाड़ी; गला घरघराना; आँखोंकी पुतली फैली (अथवा एक फैली हुई, दूसरी सिकुड़ी); आधे या समूचे अंगमें खींचन; एक ओर अकड़ जाना वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। इसके अलावा, कभी-कभी रोगीके एकाएक वेहोश होनेके पहले कई दिनोंतक सर झुकानेपर मिचली वेहोशीका भाव, "सरमें दर्द", वमन, माथेका ऊपरी भाग गर्म मालूम होना, कब्जियत, पेशावका परिमाण घट जाना, मन चंचल वगैरह लक्षण प्रकट होने लगते हैं। एक दूसरे तरहका भी संन्यास रोग होता है (आधे अंगके पक्षाघात रोगमें) सर भारी, नाकसे खून गिरना, तन्द्रा, कानके भीतर एक तरहकी आवाज मालूम होना, नाड़ी पूर्ण और तेज, किसी-किसी अंगका अवश होना, मिचली, चलनेकी ताकतका न रहना वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। शराब आदि पीना, वहुत ज्यादा खाना-पीना, कन्धेपर भारी चीजका वोझा पड़ना, छाती चौड़ी और गर्दन छोटी, वहुत अधिक मानसिक चिन्ता या उत्तेजना, रजोरोध, हृत्पिण्डकी क्रियाकी गड़वड़ी, गिरना, माथेके किसी हिस्सेमें चोट पहुँचाना, गर्मी रोग पेशावका अण्डलालमय रहना, ज्यादा उमर (चालिसके ऊपर), गठिया वात, सीसेका अपव्यवहार वगैरह कारणोंसे यह संन्यास रोग होता है। प्राढ़ अवस्थामें वहुत ज्यादा खाने-पीने या अधिक मानसिक उत्तेजना, मूत्रपिण्ड या हृत्पिण्डकी वीमारीके कारण पैदा हुआ संन्यास रोग वहुत ही आशंकाजनक होता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—अंकुरावस्थामें—नक्स-वोमिका, ऐकोनाइट वेलेडोना।

माथेसे रक्त निकलनेके कारण—ऐकोन θ, बेल, ओपि।

परिणामावस्था (पक्षाघात आदि उपसर्गोंमें)—ऐकोन, बेल, फास, कास्युलस, रस टक्स, लैकेसिस।

जारोसिरेसस १x—सन्यास रोगकी एक उत्तम दवा है। खासकर रोग "एकाएक" पैदा हो जाये, तो इसका प्रयोग होता है।

ऐकोनाइट १x—भरी, तेज और सरल नाडी; शरीरका चमड़ा सूखा और गर्म, जीभके पक्षाघातके कारण बोली न निकलना। डाक्टर सैण्डस मिल्स बहुत बेचैन, तुरन्त मृत्यु होगी, ऐसे एक रोगीको ऐकोन २०० खिलाकर आराम कर चुके हैं।

आर्निका ६ बूढे मनुष्योंके मस्तकमें रक्त-सञ्चय; गिरने या चोट लगनेके कारण रोग होनेपर।

बेलेडोना ६—बेहोशी; बोलीका न निकलना; चेहरा लाल और फूला हुआ; माथे और गलेकी रक्त वहन करनेवाली शिराओंका फड़कना और सूजन, चेहरे और हाथ-पैरोंमें अकड़न, आँखोंकी पुतली फैली, पेशाब बन्द या अनजानमें पेशाब निकल जाना, नाडी भरी और उछलती हुई।

बैराइटा-कार्ब ६—बूढोंकी बीमारीमें; जीभपर रोगका दौरा होनेपर; दाहिने अगमें लकवा मार जानेपर।

हायोसायमस ३x, ६—अनजानमें पाखाना-पेशाब हो जानेपर यह लाभदायक है।

ओपियम ६, ३०—तन्द्रा या गाढ़ी नींद (बेहोशीकी तरह), पूर्ण या मृदु नाडी, साँसमें जोरकी आवाज, चेहरा फूला, कालिमा लिये लाल रंग; अधखुली आँखें या आँखोंकी पुतली फैली हुई; हाथ-पैर ठण्डे; रक्त वहन करनेवाली शिराओंसे खून बहना। कोई फायदा न मिलनेतक यह दवा घण्टे-घण्टेपर देनी चाहिये।

होशमें आनेपर रोगीको आर्निका ३ कई बार देनी चाहिये।

नक्स-वोमिका ६, १२, ३०—माथेमें खून जमा होनेके कारण संन्यास रोग। माथेसे रस या रक्त निकलना ; बहुत भोजन, शराब पीना, रातमें जागरण वगैरह उपद्रवोंके कारण पैदा हुए संन्यास रोगमें इसका प्रयोग होता है।

ग्लोनाइन ३—सरमें चक्कर ; माथेमें सामने और पीछेकी ओर दर्द, मिचली, रोशनीमें रोगका बढ़ना।

स्ट्रीक्निनयम-फास्फोरिका २x, ३x—यह भी इस रोगकी एक बढ़िया दवा है।

मात्रा—रोगकी बढ़ी हुई अवस्थामें २०-३० मिनटका अन्तर देकर एक-एक मात्रा दवा देनी चाहिये। संन्यास रोगके बाद पक्षाघात होनेपर कास्टिकम ६, क्यूप्रम ६, काक्युलस ६, सल्फर ३०, प्लम्बम ६, ३०, जिंकम ६x, ६, फास्फोरस ३, ऐड्रिनेलिन ३x या ऐस्टेरियस ६ देना चाहिये।

हाइड्रोसियानिक एसिड ३x, आर्ज-नाई ६, विरेट्रम-विर १x, ६ वगैरह दवाएँ भी बीच-बीचमें जरूरी हो सकती हैं। इस दवासे ज्यादा फायदा न होनेपर, बिजलीका प्रयोग किया जा सकता है।

आनुसंगिक चिकित्सा—शय्यापर पूरी तरह आराम करना, मानसिक उत्तेजना त्याग देना, इसपर नजर रखना, कि रोगीको शय्याक्षत न हो जाये ; हल्का गर्म पानी (९०°—९५°) में थोड़ा नमक मिलाकर एक दिनका अन्तर देकर उससे नहाना चाहिये। पहली अवस्थामें बिजली (electricity) का प्रयोग करना और एक महीने बाद, बदन, हाथ-पैर दबा देना चाहिये।

अन्न, मिठाई, दूध, ताजी मछलीका शोरबा लाभदायक पथ्य हैं। चाय, काफी, शराब प्रभृति उत्तेजक पीनेकी चीजें और मांस या घृत या गरम मसालेसे बने पदार्थ खाना मना है। रोगकी तेज हालतमें या बेहोशी होते ही रोगीको बड़े कमरेमें ले जाकर गरम बिछौनपर सुला

देना चाहिये। तकियेपर सर रख देना चाहिये और गरम कपड़े उतार देने चाहिये। इसके बाद गर्म पानीमें कपड़ा भिगो और निचोड़कर हाथ-पैरोंमें सेंक देना और पेटपर राईकी पट्टी देना जरूरी है। इसके साथ ऐकोन, बेल या ओपि (लक्षणके अनुसार) सेवन करना चाहिये। (रोगके जोरके समय) हाथ-पैर ठण्डे पड़ जानेपर गरम पानीका सेंक। सरपर ठण्डे पानीकी पट्टी और पहना हुआ कपड़ा ढीला कर देना चाहिये। रोगीके आस-पास साफ हवाके आवागमनमें कोई बाधा न पहुँचायी जाये। ("सर्दी-गर्मी" रोग देखिये)।

अपस्मार या मृगी रोग

(Epilepsy)

मृगी कोई यांत्रिक रोग नहीं है, यह स्नायुमण्डलकी एक पुरानी बीमारी है। इसका खास लक्षण है, एकाएक बेहोश हो जाना और हाथ-पैर खिंचने लगना। इसका असली कारण आजतक निर्णय नहीं हुआ; परन्तु पिता-माताके वंशमें यह रोग रहना, चोट लगना, डर जाना, लरछूल बीमारियाँ, हस्तमैथुन, उपदंश, ज्यादा शराब पीना, बहुत बोलना या जड़ हो जाना, अर्बुद, कृमि, शारीरिक या मानसिक अवसन्नता, दूसरी बार दाँत निकलनेके समय, किशोरावस्थामें, दूसरे मृगी रोगकी खींचन आदि देखना वगैरह इस रोगके गौण कारण कहे जा सकते हैं।

एकाएक बेहोश होकर रोगी जमीनपर गिर पड़ता है, किसी-किसीको रोग आरम्भ होनेके पहले सरमें चक्कर आने लगता है; सरमें दर्द, ऐसा मालूम होना कि माथेके भीतर कोई कीड़ा रेंग रहा है; धुँधला दिखाई देता है; कानमें भों-भों शब्द, बदनमें दर्द; सब शरीरमें कँपकँपी, सरका अवश हो जाना वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। अक्सर रोगी

जोरसे एकाएक रोता हुआ गिर जाता है ; रोग आरम्भ होते ही सब शरीरमें अकड़न ; गर्दन कड़ी और टेढ़ी हो जाती है, आँखोंकी पुतलियाँ नीचे-ऊपर उठने लगती हैं ; हाथकी अंगुलियाँ सिकुड़ने लगती हैं और कलेजा धड़कने लगता है। चेहरा पहले पीला, पीछे लाल हो जाता है ; "मुँहसे फेन निकलने लगता है", हाथ-पैर पटकता है ; ठण्डा और लसदार पसीना निकलता है। बीस-तीस मिनटके बाद ये उपसर्ग कम होने लगते हैं और रोगी सो जाता है ; बहुत दिनोंतक यह रोग भोग लेनेपर, धीरे-धीरे मानसिक वृत्तियाँ क्षीण हो जाती हैं और रोगीको पागलपन (उन्माद रोग या सार्वाङ्गिक पक्षाघात हो जा सकता है)।

रोग-निर्णय—गुल्मवायु (हिस्टीरिया) रोगमें मृगी रोगकी तरह एकदम बेहोशी नहीं आ जाती या रोग होनेके पहले रोगी एकदम चिल्ला नहीं उठता। "संन्यास" रोगमें, मृगी रोगकी तरह लगातार खींचन नहीं बनी रहती और "मृगी रोग" में खींचनके साथ-ही-साथ मुँहसे निकलता है और संन्यास रोगकी तरह साँस लेने और छोड़नेमें आवाज नहीं होती।

संक्षिप्त चिकित्सा :—

नये मृगी रोगमें—इग्नेशिया, एसिड-हाइड्रो, कैलि-ब्रोम।

पुराने मृगी रोगमें—बेलेडोना, क्यूप्रम-ऐसेट, कैल्के-कार्ब, सल्फ, हाइड्रियाड, इनान्थि-क्रोकेटा, प्लम्बम।

कृमिसे पैदा हुए मृगी रोगमें—साइना २x, सेण्टोनाइन १x विचूर्ण, फिलिक्स ३x, स्यूक्रियम ६।

हस्तमैथुन आदि कारणोंसे उत्पन्न मृगी रोगमें—एसिड-फास, चायना, फास्फोरस, फेरम, एसिड-सल्फ।

भयजनित मृगीमें (या नींदके समय बेहोशी होनेपर)—ऐकोनाइट, ओपियम।

दाँत निकलते समय मृगी रोगमें—बाल-रोगाध्यायका "अकड़न" रोगकी दवाएँ देनी चाहियें।

इनान्थि-क्रोकेटा ३x, ३—जवान मनुष्योंको मृगीके नये आक्रमण अवस्थाकी पहली दशामें (खासकर तेज खींचन, अकड़न और मुँहसे फेन निकलनेके लक्षणमें) यह ज्यादा लाभ करता है।

साइक्यूटा ६—भयानक खींचन (contortions), खासकर बच्चोंको यह ज्यादा फायदा करता है।

आर्टिमीसिया १x—(शराब या अंगूरके फेन-भरे रससे तैयार शराबके साथ इसे सेवन करनेसे ज्यादा फायदा होता है) बार-बार जल्दी-जल्दी रोगका आक्रमण हो; भय, शोक, दुःख, माथेमें गहरी चोट, रजःस्रावमें गड़बड़ी, दाँत निकलनेमें तकलीफके कारण मृगी, क्रिमिकी वजहसे मृगी; रोग आक्रमणके पहले रोगी भयानक उत्तेजित हो जाता है।

एब्सिन्थ-इण्ड्रो ३x—आँखोंकी पुतली फैली; स्थिर और तेज दृष्टि-भरी आँखें; चिल्लाकर और बेहोश होकर गिर पड़ना; मुँहसे फेन निकलना प्रभृति लक्षणोंमें लाभ करता है।

बेलेडोना १x—चमकीली लाल आँखें, चेहरा लाल, आँखें फैलीं, भीतर जलन, रोशनीका सहन न होना, चौंक उठना वगैरह लक्षणवाले नये रोगमें।

कैलि-सायानेटस ३—बेहोश होकर पड़े रहना, तेज खींचन या अकड़न, शरीर नीला पड़ जाना, श्वासमें कष्ट आदि लक्षणोंमें।

इग्नेशिया ६—मानसिक गड़बड़ी (जैसे—शोक, भय, आत्म-ग्लानि) के कारण या किसी तरहकी विरक्तिसे पैदा हुए नये रोगोंमें यदि रोगी बेहोश न हो, तो इसका प्रयोग होता है।

क्युप्रम ३x, ६, ३०—बहुत खींचन और चेहरा नीला।

कैल्केरिया-कार्ब ३०—गण्डमाला रोगकी बीमारीवाले रोगियोंके लिये और मोटे, ढीली मांस-पेशीवाले व्यक्तियोंके लिये लाभदायक है।

ब्यूफो ६—हस्तमैथुनसे पैदा हुए रोगमें, पुराने मृगी रोगकी यह एक उत्कृष्ट दवा है।

ओपियम ६—(पुराने रोगमें) यदि खींचनेके बाद बहुत देरतक रोगी सोता रहे। जोरसे चिल्लाकर रोगी बेहोश हो पड़ता है, मुँहसे फेन निकलता हो, अधखुली आँखें, आँखें ऊपर चढ़ीं, आँखकी तली सिकुड़ी या फैली।

कैनाबिस इण्डिका १x, ३—मृगी रोगके साथ पाकाशय, मूत्रयंत्र अथवा संगम-इन्द्रियमें दोष हो जानेपर।

नये रोगकी और भी कई दवाएँ :—ऐब्सिन्थियम ३, स्ट्रैमोनियम ३, आर्ज-नाई ६, कैलि-ब्रोम ३०, हायोस ६, जिजिया २x।

पुराने रोगकी और भी कई दवाएँ :—जिंकम-फास ३, सिलिका ३०, क्युप्रम ३०, ऐगरिकस ६ या सलफर ३०। धातु दौर्बल्यके कारण मृगी रोग हो, तो एसिड-फास ६, फास्फोरस ६, चायना ६ या फेरम ६, डरनेके कारण मृगी रोग हो जाये, तो ओपियम ३० या ऐकोनाइट ३x।

किसी-किसीका कथन है कि कैलि-म्यूर १२x, कैलि-फास १२x विचूर्ण, कैलि-सल्फ १२x चूर्ण इस रोगकी बढ़िया दवाएँ हैं। (रोगी अगर सहज अवस्थामें रहे, तो लक्षणके अनुसार ऊपर लिखी दवाएँ दी जा सकती है)।

आनुसंगिक चिकित्सा—यदि रोगीकी जीभ बाहर निकली हो, तो उसे भीतर डाल देना उचित है। दाँती लग गयी हो, तो उसे छुड़ाकर दाँतोंके बीचमें एक काग या नरम काठका एक टुकड़ा या कपड़ेकी पोटली लगा देनी चाहिये। रोगीको जोरसे हवा करने और एमिल-नाइट्रेट नाकके पास रखनेसे फायदा होता है। यदि आक्रमण जोरका हो, तो क्लोरोफार्म सुँघाना पड़ता है। उत्तेजक भोजन और

सब तरहका नशा और बहुत लिखना-पढ़ना मना है। निरामिष भोजन, हल्का पथ्य, उपवास और ठण्डे पानीसे नहाना उचित है।

किसी-किसीका कथन है कि जूता सूघानेसे ही मृगी आराम हो जाती है और रोगी उसी समय होशमें आ जाता है। परीक्षा किजिये।

धनुष्टंकार (Tetanus)

इस रोगमें शरीर धनुषकी तरह टेढ़ा हो जाता है। शरीरकी कोई जगह कट जानेपर उसमें धूलके साथ एक तरहके जीवाणु [परिशिष्ट (ग) अक (४) देखिये] घुसनेके कारण यह रोग पैदा होता है। घोडेकी लीदमें इस रोगके बीज बहुत होते है। डाक्टरोने इस रोगको दो भागोमें विभक्त किया है.—(१) "स्वयम्भूत" और (२) "आभिघातिक।" खून खराब होकर स्नायुमण्डल बिगड जाने बाद, जो धनुष्टका होता है उसे "स्वयम्भूत धनुष्टङ्कार" कहते हैं और शरीरके किसी अशमे गहरी चोट लगनेपर, चोटवाली जगहमें स्नायुओंकी उत्तेजना होकर जो धनुष्टकार होता है, उसे "आभिघातिक धनुष्टङ्कार" कहते हैं ; परन्तु मालूम होता है कि डाक्टरोंकी यह धारणा गलत है ; क्योंकि कोई जगह कटे बिना (घाव हुए बिना) यह रोग नही होता। पहले मुँह फाडनेकी शक्ति नहीं रहती, गर्दन कडी, अकडी, गलेमें दर्द, जबडे बन्द, पर रोगीका चेहरा प्रसन्न दिखाई देता है, चेहरेकी पेशियाँ सभी कडी होकर आक्षेप या खींचन आरम्भ होती है ; चेहरा तकलीफसे भरा मालूम होता है, रोगी टकटकी लगाये देखता रहता है ; अन्तमें अकडन होकर समूचा शरीर धनुषकी तरह टेढा हो जाता है। कोई रोग सामनेकी ओर और कोई पीछेकी ओर झुक पडता है। यह रोग सभी उम्रोमें होता है। रोगीके पेशाबमें एक तरहके जीवाणु मिलते है, वे ही यह रोग पैदा करनेके खास कारण हैं। साधारणतः तुरन्तका जन्मा बच्चा, प्रसवके बाद

प्रसूति और जिसका पैर कट गया है या किसी दूसरी वजहसे पैरमें जखम हो गया हो, उन्हें ही धनुष्टङ्कार होनेका ज्यादा भय रहता है। तुरन्तके जन्मे बच्चेकी नाभी एक ताजे घावकी तरह रहती है ; उसमें मैला कपड़ा बांध देनेके कारण, इस कपड़ेके साथ या धायके हाथके मैलके साथ, धनुष्टङ्कारके जीवाणु बच्चेकी नाभीके घावकी राहसे उसके शरीरमें घुस जाते हैं। बाल-रोगाध्यायमें "अकड़न" देखना चाहिये और प्रसवके बाद प्रसूतिके नालमें (जहाँ फूल लगा था) उसी जगहपर, दो हफ्तेतक फोड़े-जैसी हालत रहती है, मैला कपड़ा व्यवहार करनेके कारण उसके साथ ही धनुष्टङ्कारके जीवाणु प्रसूतिके नालके घावकी राहसे उसके शरीरमें प्रवेश कर जाते हैं।

चिकित्सा—स्वयम्भूत धनुष्टङ्कारमें यदि जोरकी खींचन न रहे तो हाइपेरिकम θ—३०, नक्स-वोमिका १x, "स्ट्रिकनिया ६x चूर्ण," हाइड्रोसियानिक-एसिड ३, इनान्थि ३x, आर्निका ३ इस रोगकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। यह रोग हुआ है, यह मालूम होते ही हाइपेरिकम १x का व्यवहारकर दोनों तरहके धनुष्टङ्कारोंमें लोगोंने बहुत फायदा उठाया है (खासकर आभिघातिक धनुष्टंकारमें)। थोड़ा दबानेसे ही दर्द मालूम होनेके लक्षणमें—आर्निका ३ ; चेहरा नीला—इनान्थि ३x ; अकड़नके समय सर्दी मालूम हो और पसीना होता हो, तो ऐकोनाइट-रैडिक्स १x। (आघातसे पैदा हुए धनुष्टंकारमें) रह-रहकर अकड़न हो और रोगी पीछेको ओर झुक जाये, तो नक्स-वोमिका ६। (अभिघातसे पैदा हुए धनुष्टंकारमें) बहुत तेज अकड़न रहनेपर, एसिड-हाइड्रो ३, ३०। रोगीके समूचे शरीरकी पेशियाँ सख्त हो जाये, तो फाइसस्टिग्मा ३ देना चाहिये। देह कड़ी, टकटकी लगाकर देखते रहना, बेहोशी, अंगका टेढ़ा होना बहुत देर बाद अकड़न छूटना (छूनेसे बढ़ना), साँसमें तकलीफ, चेहरा लाल, मुँहसे फेन निकलना और पीछेकी ओर झुक जाना—साइक्यूटा-विरोसा ६। चोटसे पैदा हुए धनुष्टङ्कारमें होश

रहनेपर और साँस बन्द होनेकी तैयारी होनेपर या सब शरीर कभी नरम और कभी कड़ा होनेपर, नक्स-वोमिका ३x। चोटवाली जगहपर कैलेण्डुला-लोशन (एक औंस पानीमें एक ड्राम कैलेण्डुला θ मूल अरिष्ट) लगाना चाहिये। पीठकी रीढ़पर बरफ रगड़ना चाहिये। बाल-रोग "शिशु धनुष्टङ्कार" देखिये। गत युरोपीय महायुद्धके समय टिटानिस ऐण्टिटाक्सिन (tetanus-antitoxin) चिकित्सा-प्रणाली बहुतसे रोगी आराम हुए थे।

बेल, क्यूप्रम, इग्नेशिया, लैकेसिस, रस-टक्स, स्ट्रैमोनियम वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक हो सकती हैं।

मात्रा—रोगका पूर्व लक्षण दिखाई देते ही बीस-बीस मिनटका अन्तर देकर दवा देनी चाहिये।

प्रतिषेधक उपाय—सोनेका कमरा, रसोई घर, भोजन-घर वगैरह स्थानोंमें जूता उतारकर जाना चाहिये; क्योंकि घोड़ेकी लीद (या धनुष्टङ्कारक जीवाणु) से भरा जूता घरमें ले जानेपर घरके निरोग आदमियोंको भी धनुष्टङ्कार हो सकता है।

दूध, साबू, बार्ली, शोरबा वगैरह पतली और हल्की चीजें बार-बार खिलानी चाहियें। रोगीको जमीनमें सुलाना चाहिये, क्योंकि खाट, चौकी आदिसे गिरनेपर चोट आ सकती है। बहुत तेज अकड़नके उपसर्गमें, क्लोरोफार्म सुँघाना या ब्रोमाइड आफ पोटासियम सेवन कराया जाता है।

जलातंक (Hydrophobia)

पागल कुत्ता, सियार, लकड़बग्घा या बिल्लीके काटने या कटा हुआ चमड़ा चाटनेसे यह रोग पैदा होता है। इनके दाँत और नखोंसे किसी-किसी जगहमें जख्म होकर, उस जगहपर इसकी लार लगकर शरीरमें विष फैल जाता है। काटते ही बीमारी नहीं पैदा हो जाती। प्रायः

सत्रह-अट्ठारह दिनोंतक रोगका कोई लक्षण नहीं दिखाई देता। कपड़ेके ऊपर काटनेसे लार कपड़ेमें लग जाती है, इसलिये बीमारी होनेका कोई डर नहीं रहता। काटनेके १७-१८ दिन बाद जखमवाली जगहपर साधारण जलन और उसके आस-पासकी जगह खुजलाने लगती है। धीरे-धीरे मन चंचल और स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। रातमें बुरे-बुरे सपने दिखाई देते हैं, गलेकी पेशियाँ सिकुड़कर गर्दन अकड़ जाती है ; तेज रोशनी नहीं सह सकता, कोई पतली चीज गलेसे नीचे उतारनेमें तकलीफ ; साँसमें तकलीफ और पानी या पतला पदार्थ देखते ही रोगीको भय मालूम होता है, इसके बाद कमजोर होकर ऐंठन, मृगी, धनुष्टङ्कार आदि उपसर्ग होते हैं और रोगी जल्द ही मर जाता है ; कभी-कभी पागलकी तरह चिल्लाता है, काटता है या दीवालपर सर पटकता है। इस रोगके रोगियोंके मेरुमज्जा और मस्तिष्कके पदार्थोंमें बहुत कुछ भावान्तर हो जाता है।

चिकित्सा—काटते ही जखमके कुछ ऊपर हटकर कसकर बाँध देना चाहिये। इसके बाद जिसके दाँतमें कोई रोग न हो, उसे वह जगह चूसकर थोड़ा खून निकाल डालना चाहिये ; फिर लोहा तपाकर उस स्थानपर दाग देना या जला देना और कार्बोलिक-एसिड या नाइट्रिक-एसिडसे भी वह जगह जला देनी चाहिये और महीनेभरसे भी ज्यादा दिनोंतक भाफ लेना और रोज दिनमें तीन बार थोड़ा गुड़ खाना फायदा करता है। इसके अलावा, कोई-कोई इस समय नैजा ६x भी एक मात्रा खिलानेकी राय देते हैं। पहले हाइड्रोफोबिनम ३०—२०० एक हफ्तेतक दिनमें तीन बारके हिसाबसे सेवन करना चाहिये। इसके बाद वर्ष भरतक बेलेडोना ३—३० दो बार कर खाना चाहिये। डाक्टर ह्यूजेसके मतसे बेलेडोना और डाक्टर हेलेके मतसे स्कुटेलेरिया इस रोगकी खास दवा है। स्नायविक उत्तेजना और प्रलाप ज्यादा रहे, तो स्ट्रैमोनियम १x देना चाहिये। अकड़न या खींचन ज्यादा रहनेपर

डाक्टर हेरिङ्ग लैकेसिस ६, ३० की व्यवस्था करते हैं। हायोसायमस १, बेलेडोना १x और आर्सेनिक ६ की बीच बीचमें जरूरत पड़ सकती है। लिसिन या "हाइड्रोफोबिनम ३x इस रोगकी बढ़िया दवा है।" गायका घी और दूध सुपथ्य।

रोगीके मुँहसे जो लार निकलती है, वह बहुत ही विषैली होती है; उस समय सफेद मदारके पत्तेका रस आधा पाव और कच्चा शुद्ध दूध आधा पाव, पत्थर या काँचके बर्त्तनमें एक साथ मिलाकर खिला देनेसे शायद बहुत फायदा होता है।

चक्रदत्तकी नीचे लिखी रीति अवलम्बनकर कितनो ही ने कुत्ता काटनेके इलाजमें बहुत कुछ फायदा उठाया है।

धतूरेके पत्तेका रस, ईखका गुड़, गायका शुद्ध घी, गायका (कच्चा) दूध—ये चारों चीजें दो तोला वजनके हिसाबसे ले, अच्छी तरह मिलाकर कुत्ता काटे हुए मनुष्यको खाली पेट सवरे खिलाना पड़ता है। खाने बाद रोगीको थोड़ा नशा हो जाता है; परन्तु सोकर उठनेके बाद फिर पागल जैसी हालत नहीं रहती। दवा खानेके बाद थोड़ा नशा हो, तो रोगीको नहलाकर मट्ठा, भात वगैरह खिलाना चाहिये। रातके समय नित्यकी तरह दाल-भात खा सकते हैं, परन्तु पागलपन छूटनेतक मीठी चीज खानेको न देनी चाहिये।

ऊपर लिखी मात्रा जवान मनुष्योंके लिये है। बच्चे वगैरहके लिये, उनकी उम्रके अनुसार मात्रा स्थिर कर लेनी चाहिये। बात यह कि दवा खाने बाद "यदि अधिक नशा आ जाये, तो समझना चाहिये कि कुत्तेका विष नष्ट हो गया है।" इसलिये, जिसे जिस मात्रासे नशा पैदा हो, उसे उसी मात्रामें दवा खिलानी चाहिये। यह मात्रा कम होनेके कारण नशा न हो, तो कई दिनोंतक" यही दवा खिलानी चाहिये।

पक्षाघात या लकवा
(Paralysis)

किसी अंगका (या आधा अंग—एक पार्श्वका अंग) स्पर्श-ज्ञान रहित हो जाये, सुन्न और हिलने-डुलनेकी शक्तिसे रहित हो जाये अर्थात् वशमें न रहे, तो उसे "पक्षाघात या लकवा" कहते हैं। लकवा बहुत तरहका है। जैसे—मेरुदण्डमें चोटके कारण पक्षाघात ; मुखमण्डलका पक्षाघत ; कँपकँपीके साथ पक्षाघात (हाथ, वाँह, माथा या सब शरीरका बराबर काँपते रहना) ; नीचे तथा ऊपरके अंगका पक्षाघात।

पक्षाघात सम्पूर्ण आरोग्य होना प्रायः दिखाई नहीं देता।

संक्षिप्त चिकित्सा—समूचे शरीरके पक्षाघात (सार्वाङ्गीण पक्षाघात) में—ल्मम्बम कमजोरी, दुबलापनके साथ पक्षाघात होनेपर); फास (क्षयके कारण पक्षाघात) ; बैराइटा-कार्ब (बूढ़ोंकी बीमारीमें) ; मर्क-कोर, काक्यु, कोनायम।

आधे अंगके पक्षाघात (अर्द्धाङ्ग पक्षाघात) में—नक्स-वोम, फास्फो (कशेरुका-मज्जाके क्षय रोगमें), आर्निका और लैकेसिस (बाएँ अंगमें पक्षाघात)।

चेहरेके पक्षाघातमें—वैराइटा-कार्व, कास्टि, वेल, ऐकोन।

आँखोंके ऊपरवाली पलकके पक्षाघातमें—जेलस, स्पाइजि, वेल, स्ट्रैमो।

झिल्लीक-प्रदाह (डिफ्थीरिया) सम्बन्धी पक्षाघातमें—जेलस, कोनायम।

चित्रकारोंके पक्षाघातमें—ओपि, आयोड, क्यूप्रम-मेट, आर्स, ऐल्यूमेन, स्टैनम।

कशेरुका-मज्जाके क्षय रोगमें—ऐल्यूमिना, आर्ज-नाई, आर्स, आरम, फास।

वात जैसा दर्द ; कम दिखाई देना ; रातमें पेशाव न रोक सकना ; चला न जाना—वेलेडोना ३ । बहुत धातु निकल जानेके कारण ध्वजभंग या पक्षाघात होनेपर—फास्फोरस ६ या ३० । अंगुलियोंके पक्षाघात या कँपकँपीमें (क्लर्क इत्यादि लिखानेका काम करनेवालोंको ज्यादा होता है) जेलसिमियम २x, ३० । खसड़ा वगैरहके दाने बैठ जानेके कारण पक्षाघातमें सल्फर ६, २०० । हाथ पैरोंका फड़कना ; स्नायुमण्डलके रोगके कारण लकवा मार जानेपर, मर्क-सोल ६ । कांटा गड़नेपर दर्द मालूम हो, पर छूनेपर स्पर्श न मालूम हो ; सन्धियोमें कड़कड़ शब्दके साथ आधे अंगके पक्षाघातमें काक्युलस ३ । बूढ़ोंके पक्षाघातमें कोनाय़म ६ । बहुत शराब पीनेके कारण पीठकी रीढ़के पक्षाघातमें और उसके साथ-ही-साथ ओकाई, कब्जियत, अरुचि वगैरह लक्षणोंमें, नक्स-वोमिका θ—३x । पलकोंके पक्षाघातमें जेलसिमियम १ का प्रयोग करना चाहिये ।

आनुसंगिक चिकित्सा—प्रदाहका उपसर्ग कम पड़ जाने बाद बिजली लगनेसे फायदा होता है । समुद्रके पानीसे (न मिले तो ठण्डा पानीमें बहुत थोड़ा नमक मिलाकर) नहाना, पोषण-क्रियामें सहायता पहुँचाता है । बदन, हाथ-पैर दवाने या रगड़नेसे फायदा होता है । थोड़ी कसरत करनेसे रोगीके अवश अंगोंकी अकड़न बहुत कुछ कम हो जाती है ।

लू लगना (Sunstroke)

तेज धूप या दूसरी तरहसे बहुत गर्मी (जैसे—इञ्जिन या भांफके यंत्र अथवा आगका कुण्ड, चूल्हा वगैरहकी आँच) लगनेकी वजहसे सरमें चक्कर, सरका दर्द, ऊपरी पेटमें दर्द, कै या मिचली, शरीरकी त्वचा सूखी और खूब उत्तप्त या कभी-कभी शीत आ जानेकी तरह ठण्डी,

कमजोरी, देखनेकी ताकतका घटना और नाकसे जोरकी आवाजके साथ बेहोशी ; साँस बन्द, बार-बार पेशाब (कभी मल-मूत्रका रुक जाना), मूर्च्छा, सन्यास रोगीकी तरह खींचन वगैरह उपसर्ग एकाएक या धीरे-धीरे हो जानेका नाम सर्दी-गर्मी है ।

सर्दी गर्मी दो तरहकी है :—(क) "सूर्य किरणोंसे पैदा हुई सर्दी-गर्मी"—sunstroke (लू लगना—तेज सूर्यकी किरण ही सर्दी-गर्मीकी खास वजह है)। देहका ताप बढा हुआ (११०° तक), नाडी तेज और उछलती हुई—ये ही इसके प्रधान लक्षण हैं ।

इसमें शरीरकी गर्मीका घटाना जरूरी है। गर्मी कम करनेके लिये न बहुत ठण्डा, न गर्म पानी (खूब ठण्डा पानी, बरफ नहीं) उसके माथे और सब शरीरमें सींचना और बेल ३, स्ट्रैमोनियम ३ (खासकर तेज प्रलाप होनेपर), ग्लोनोइन ३, ६ (खासकर चेहरा बदरंग होनेपर) और एमिल-नाइट्रेट सेवन करना चाहिये ; बदनकी गर्मी १०२ डिगरी उतर जानेपर पानी डालना बन्द कर देना चाहिये। रोगीका बल बढानेके लिये शराब या अल्कोहल पिलाना कभी उचित नहीं है। यह बहुत नुकसान करता है।

बहुत गर्मीके कारण सर्दी गर्मी—प्रत्यक्ष रूपसे सूर्यकी किरण न लगकर दूसरे कारणोंसे (जैसे—गर्म कमरे या आगके कुण्ड आदिके पास रहना अथवा रातमें बडी गर्मी होनेके कारण) सर्दी-गर्मी—heatstroke or heat prostration (अर्थात् बहुत गर्मी" जिसका मुख्य कारण है) शरीरकी गर्मी (९८४°) स्वाभाविक गर्मी भी कम, नाडी, मृदु और कमजोर और दिमागके दूसरे-दूसरे लक्षणोंका प्रकट होना, इसका प्रधान लक्षण है।

इसमें रोगीके शरीरकी गर्मी बढाना जरूरी है। शरीरकी गर्मी बढानेके लिये रोगीके माथे और हाथ पैरोंपर गरम प्रयोग करना और चीनीके साथ स्पिरिट कैम्फर ५-७ मिनटका अन्तर देकर एक-एक बून्द

सेवन कराना चाहिये। शरीरकी गर्मी स्वाभाविक गर्मीकी अपेक्षा कम हो जाये, तो रोगीको खूब गर्म पानीसे नहलाना और बीच-बीचमें शराब या अलकोहल पिलाना जरूरी रहता है।

चिकित्सा—पहलेके डाक्टरोंकी धारणा थी, कि सर्दी गर्मी रोग शरीरकी उत्तेजनाके कारण हुआ करता है; परन्तु यह धारणा गलत है—अब सभी अच्छी तरह समझ गये हैं, कि शरीरके अवसादसे सर्दी-गर्मी होती है। अब खून निकलना वगैरह कामोंके बदले माथा, गर्दनका पिछला भाग और सीनेपर ठण्डे जलकी पट्टी या ठण्डा पानी छिड़का जाता है। सरमें चक्कर, सरमें दर्द, बार-बार पेशाब आना वगैरह सर्दी-गर्मीके पूर्व लक्षण मालूम पड़ते हों, तो रोगीको ठण्डी जगहमें ले जाना और पहननेके कपड़े ढीले कर जेल्स १x या ३x घण्टे-घण्टेपर सेवन कराना चाहिये। यदि अकड़न या खींचन पैदा हो जाये, तो डाक्टर आंसलर क्लोरोफार्म सुँघानेकी सलाह देते हैं। रोग आराम होनेकी ओर वढ़नेपर (खासकर सर-दर्द मौजूद रहनेपर) ग्लोनोइन ६ देना चाहिये। दूध और मक्खन निकाला हुआ दूध वगैरह पतली चीजें खानेको देनी चाहियें। सरमें अत्यन्त चक्कर; भीतर जलन-जैसा उत्ताप; माथेके पिछले भागमें दर्द; एकाएक चैतन्यका गायब हो जाना वगैरह लक्षणोंमें ग्लोनोइन ३ (पाँच मिनटका अन्तर देकर) देना चाहिये। ऊपर लिखे लक्षणोंके साथ आँखें और चेहरा लाल रहनेपर वेलेडोना ३। हर वर्ष गर्मीके दिनोंमें सर्दी गर्मीके कारण सर-दर्द होनेपर नेट्रम-कार्ब ६, वीच-वीचमें ऐकोनाइट ३, विरेट्रम-विर १x—३, कैक्टस ३, नेट्रम-म्यूर ६x चूर्ण, ओपियम ६, कार्बो-वेज ३० और (क), (ख) अनुच्छेदमें वर्णित दवाओंकी भी जरूरत पड़ सकती है। "संन्यास रोग" देखिये।

देखिये। मूत्र-रोगसे पैदा हुआ आक्षेप या तड़का होनेपर "मूत्ररोध विकार" रोगकी दवाएँ देखिये।

तरका ; अकड़न
(Convulsion)

बच्चोंकी अकड़न या खींचनेकी (पहला अनुच्छेद देखिये) ही तड़का कहा जा सकता है। बचपनमें मस्तिष्कके किसी रोगके कारण या दाँत निकलनेके समय यह अकड़नकी बीमारी होती है। कभी-कभी "मस्तिष्कमें जल-संचय" या कोई दूसरा नया रोग होनेके पहलेके उपसर्ग-रूपमें यह अकड़न हुआ करती है ; यह अकसर बहुत बचपनमें होती है। अवस्था कुछ ज्यादा होनेपर अकड़नके बदले बालक-बालिकाओंको "कम्प" होता है।

हल्की अकड़नमें बच्चा चौंक उठता है, चेहरेकी मांस-पेशियाँ सिकुड़ जाती हैं ; साँस लेनेमें कष्ट होता है और आँखोंकी पुतली चक्कर खाने लगती है प्रभृति लक्षण दिखाई देने लगते हैं। **तेज अकड़नमें** बच्चा एकाएक बेहोश हो जाता है ; माथा, हाथ, पैर आदिकी मांस-पेशियोंका संकोचन या अकड़न हो जाती है ; आँखोंके आगे तेज रोशनी रखनेपर भी वह आवाज नहीं देता, मुँहसे फेन निकलता है, कसकर मुट्ठी बांध लेता है, पैरकी अंगुलियाँ तलवेकी तरफ टेढ़ी हो जाती हैं और दो-एक मिनटके बाद या तो अकड़न एकदम अच्छी हो जाती है या कुछ ठहरकर फिर होने लगती है। इसी तरह बार बार हुआ करता है।

चिकित्सा—बेलेडोना ३x (फी खुराक एक बून्द, पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये)—अकड़नके साथ मस्तिष्कमें प्रदाह या मस्तिष्कमें रक्त-संचय। चेहरा गर्म, लाल, नींदसे एकाएक चौंक उठना, टकटकी लगाकर देखना। सारांश यह कि लड़कों को बेलेडोना बहुत फायदा करता है।

पेकोनाइट १x—बुखार, बेचैनी चेहरा तमतमाया, अकड़न होनेकी सम्भावना, डर जानेकी वजहसे अकड़न ।

जेलसिमियम २x—मस्तिष्कके उपसर्गके कारण अकड़न ।

साइना २x—सूतकी तरह क्रिमिके कारण अकड़न ।

ओपियम ६—भयके कारण अकड़न । अकड़न हो जानेके बाद ही बेहोश हो जाना, साँसमें तकलीफ कब्जियत ।

कैमोमिला ६—अजीर्णके कारण अकड़न ; आँखोंकी पलक और चेहरेकी मांस-पेशियोंका फड़कना ; "बच्चेका एक गाल लाल, दूसरा सफेद" (चिड़चिड़े स्वभाववाले शिशुके लिये कैमोमिला उपयोगी है)। दाँत निकलनेके समय अकड़न ।

क्यूप्रम ६—चेहरा फूला और लाल । अकड़न आरम्भ होनेके पहले सिकुड़ जाता है । मृगी रोगकी तरह उपसर्ग ।

आनुसंगिक चिकित्सा—गर्दनका पिछला भाग, छाती और शरीरके सब अंगोंके कपड़े ढीले कर देने चाहिये । सर कुछ ऊँचा रखना चाहिये ; मुँहपर पानीके छींटे देना और हवा करनी चाहिये । गर्म पानीसे शरीर धोना या ठण्डे पानीमें कपड़ेका टुकड़ा भिगोकर माथेपर लगाना अच्छा है । (दूसरी-दूसरी दवाओंके लिये बाल-रोगाध्यायका "अकड़न" देखना चाहिये)।

स्नायु-प्रदाह (Neuritis)

सभी स्नायु या उसका कुछ अंश फूलना, लाल होना या उसमें दर्द होनेका नाम "स्नायु-प्रदाह" है । धीरे-धीरे या तेजीसे रोग आक्रमण, रोगवाली जगहके स्नायु या सभी स्नायुओंमें दर्द ; दबानेपर दर्द बढ़ जाता है, प्रदाहवाली जगह सुन्न और वहाँ जलन और टनक इस रोगके

प्रधान लक्षण हैं। सर्दी लगना, चोट, ज्वरके बादकी अवस्था, स्नायुके पासवाले यंत्रोंका प्रदाह, यक्ष्मा वगैरह फैलनेवाली बीमारियाँ, कोढ़ और सीसा, संखिया वगैरह विषैले पदार्थोंके अपव्यवहारके कारण यह बीमारी पैदा होती है।

स्नायु-प्रदाह दो तरहका है:—"स्थानिक" (localized or simple neuritis) और "सार्वाङ्गीण" (poly neuritis) एक ही स्नायुका प्रदाह होनेको 'स्थानिक-प्रदाह कहते हैं और बहुतसे स्नायुओंमें प्रदाह पैदा होनेपर उसका नाम 'सर्वाङ्गीण-प्रदाह' होता है (बेरी-बेरी देखिये)।

चिकित्सा—इस प्रदाहको घटानेके लिये बहुत दिनोंतक ऐकोनाइट ३x का सेवन करना आवश्यक है। पीस डालने या नोंच डालनेकी तरह या ऐंठनकी तरह अथवा टनककी भाँति दर्द; ज्यादा बुखार प्रदाहवाली जगह छूनेसे दर्दका बढ़ना वगैरह लक्षणोंमें बेल ३x; शराब पीनेके कारण रोग हुआ हो, तो नक्स-वोमिका १x; गहरी सुस्तीमें आर्सेनिक ६x या स्ट्रिकनिया २x; वातके लक्षणमें सिमिसिफ्यूगा १x; दुबलापनके लक्षणमें ह्मम्बम-फास ३x। इन्फ्लुएञ्जाके बाद स्नायु-प्रदाह होनेपर टियुबरक्युलिनम २०० (फी सप्ताह एक बार देना चाहिये); यदि नींद खुलनेके बाद ही रोग बढ़ जाये, तो लैकेसिस ६ का प्रयोग करना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—शय्यासे न उठना चाहिये। ज्यादा पुष्ट चीजें खानी चाहिये, पर वे उत्तेजक न हों। रोगवाला स्थान उपयुक्त व्यक्ति द्वारा दबवाना चाहिये, जरूरत पड़नेपर बिजली (galvanism) या नश्तर लगवाना चाहिये।

स्नायविक दुर्बलता
(Neurasthenia)

यह स्नायुमडलकी एक प्रकारकी विशेष कमजोरी है। किसी कामकी जी न लगना, शारीरिक और मानसिक सुस्ती, नीद न आना, सरमें चक्कर, सरमें दर्द, हिस्टीरिया (मूर्च्छावायु) माथेके सामने या पिछले भागमें दर्द, कलेजा धडकना, देखने या सुननेकी ताकतका कम हो जाना, पेट फूलना, अरुचि, अजीर्ण शरीर और हाथ-पैरोंमें झुनझुनी, स्मरण शक्तिका कम पड जाना वगैरह स्नायविक दुर्बलताके लक्षण हैं। बहुत शारीरिक या मानसिक परिश्रम करना, हस्तमैथुन या लगातार इन्द्रिय-परिचालन, व्यवसाय तथा काम-काज आदि की चिन्ता, पिता-माताका स्नायविक दुर्बलता रोग, बहुतसे रज.स्राव, बार-बार गर्भ धारण वगैरह कारणोंसे बहुतसे पुरुष और स्त्रियोंको यह रोग आजकल हो जाता है।

चिकित्सा—कभी हँसना, कभी रोना वगैरह हिस्टीरियाके लक्षण मिली दुर्बलतामें इग्नेशिया ६ ; पेट फूलना, कब्जियत या पतले दस्त अथवा श्लेष्मा रहनेपर आर्जेण्ट-नाइट्रि ३० ; वीर्यपातके कारण स्मरण-शक्ति घट जानेपर ऐनाकार्डियम ३ , हमेशा काम काजमें लगे रहनेके कारण दिमागमें थकावट, थोड़ी मेहनत करनेपर ही सुस्ती, पीठमें दर्द—पिकरिक एसिड ६ ; नींद खुलनेके बाद ही रोगके उपसर्गोंके बढनेपर लैकेसिस ६ , कामोन्मादके कारण पैदा हुई स्नायविक दुर्बलतामें प्लाटिना ६ ; रोगी हमेशा डरता रहे (खासकर अकेला रहनेपर) ऐकोनाइट ३x ; रोगी हमेशा टहलते रहना चाहता हो (क्योंकि मनमें वह समझता है कि न "चलनेसे" उसके हृत्पिण्डकी चाल बन्द हो जायगी), हृत्पिण्ड मानो सुस्त हो गया है ऐसा मालूम होना, मस्तिष्कके नीचे दबाव, सहजमें ही क्रोधित हो जाना इत्यादि लक्षणोंमें जेलसिमियम ३x ;

रोगिणी समझती है कि चलने-फिरनेसे ही वह गिर पड़ेगी, थकावट या कमजोरी मालूम होती है और सुस्ती वगैरह लक्षणोंमें नक्स-वोम ३ ; स्नायुविक अजीर्ण और कलेजा धड़कना कैक्टस ग्रैण्डिफ्लोरा १x ; पेटमें वायु इकट्ठा होनेके कारण कार्वो-वेज ३x चूर्ण या नक्स-वोमिका ३x ; घर लौट चलनेके लिये घबड़ाहटमें एसिड-फास ६ ; सहजमें ही थक जाना और समूचे शरीरमें कुचल जानेकी तरह दर्द मालूम होना, इस प्रकारके लक्षणमें आर्निका ३ ।

कैमोमिला १२, ऐम्ब्रा ग्रीशिया ३०, पल्सेटिला ६, हायोसायमस ३, कैलि-ब्रोमेटम ६, जिंकम ६, ब्रायोनिया ३, स्ट्रिकनिया-सल्फ ३x, स्ट्रिकनिया २ या वैलेरिन ३x—३ चूर्ण, मस्कस ६ प्रभृति दवाएँ भी कभी-कभी आवश्यक हो सकती हैं ।

रोज खुली हवाका सेवन, सब शरीरका हिलाना, पुष्ट भोजन (जिसके पचनेमें गड़बड़ी न हो), समयपर नहाना, खाना और सोना वगैरह स्वास्थ्यके नियमोंका पालन रोगीके लिये फायदेमन्द है । काम-काजकी चिन्ता जहाँतक बने छोड़ देनी चाहिये । मेस्मेरिज्म, झड़वाना वगैरह भी कभी-कभी फायदा होता है ।

स्नायु-शूल (Neuralgia)

यह कोई खास बीमारी नहीं है ; दूसरे रोगका लक्षण मात्र है । स्नायुओंके दर्दके कारण पेटके कितने ही स्थानोंमें टपक या खोंचा मारने या जलनकी तरह दर्द होता है, इसीको “स्नायु-शूल” कहते हैं । स्नायु-शूल बहुत तरहका होता है । जैसे—चेहरेका स्नायु-शूल, अधकपारीका दर्द, पार्श्व-शूल, गृध्रसी (कमरके स्नायुका दर्द) । देहके भीतरवाले यंत्रोंमें भी स्नायु-शूल हो सकता है । जैसे—आमाशयमें, हृत्पिण्डमें, यकृतमें, डिम्बाशयमें, अंडकोषमें । इनमें चेहरेका स्नायु-शूल और

गृध्रसी शूल ही ज्यादा होता देखा जाता है। ऋतु परिवर्त्तन, मेलेरिया, वात या गठिया वात, गर्मी रोग, वंशगत दोष, क्षय हुए दाँत, किसी अंगसे बहुत ज्यादा काम लेना, चोट या सर्दी लगना, शराब पीना वगैरह कारणोंसे शरीर खराब हो जानेपर यह रोग होता है।

चिकित्सा—चेहरेके स्नायु-शूलमें—बेलेडोना, आर्सेनिकम, ऐकोनाइट, कालोफाइलम, स्पाइजिलिया और फास्फोरस। अधकपारीकी बीमारीमें—आर्स, इग्नेशिया, काफिया, चायना, जेलसिमियम, नक्स-वोम और बेलेडोना। आमाशयके शूलमें—आर्सेनिक, ऐलो, कोलोसिन्थ, नक्स-वोम और लाइकोपोडियम। हृत्पिण्डके शूलमें—केक्टस, बेलेडोना, विरेट्रम विर १x—३ और लाइकोपोडियम। गृध्रसी-शूलमें—कैमोमिला, इग्नेशिया, कोलोसिंथ, आर्सेनिक, लाइको, प्लम्बम, सल्फर और फासफोरस। ये सभी दवाएँ ६ शक्तिकी काममें लानी चाहियें।

आर्सेनिक ३x, ६, ३०—रोगी बहुत चचल, घबराया हुआ या दुखित भावसे भरा और क्रोधी रहता है। कमजोर, आराम करनेके समय सर्दी लगनेपर (खासकर रातमें) रोग बढ़ जाता है; मेलेरियासे पैदा हुआ स्नायु-शूल।

मैग्नेशिया-फास २x, ६x विचूर्ण—खूब गर्म पानीके साथ सेवन करनेपर अकसर सब तरहके स्नायु-शूल अच्छे हो जाते हैं।

गलथेरिया—की मात्रा ५ बून्द देना चाहिये। पाकाशयके स्नायु-शूलमें और प्रदाहिक वात-रोगियोंको खूब लाभ करता है।

प्लैण्टेगो θ—बहुत गर्म पानीमें मिलाकर लगानेसे सब तरहके स्नायु शूलोंमें फायदा होता है।

फास्फोरस ६, ३०—चेहरेके स्नायु-शूलमें फायदा करता है।

ऐकोनाइट ३—ठण्डी हवा लगनेके कारण पैदा हुए नये स्नायु-शूलमें। कपालमें दर्द होता है और गालमें खींचने या दबा रखनेकी तरह दर्द होता है; रक्त-सञ्चयके कारण चेहरेमें दर्द और गृध्रसी-शूल।

बेलेडोना—अधकपारीका दर्द, जो तीसरे पहर बढ़ जाता है और जिसके साथ ही चेहरा लाल हो जाता है। चेहरेकी दाहिनी ओरका स्नायु-शूल ; जरायु या 'किसी भी दूसरी जगहके स्नायु-शूलमें, यह उपयोगी है। चेहरे या दाँतमें इतना दर्द कि रोगी उसे छूने नहीं देता, ऐसे लक्षणमें Dr. Sands Mills को सिर्फ एक मात्रा बेल २x—६ प्रयोगकर बहुत बार खूब फायदा दिखाई दिया है। "स्नायु-शूलका दर्द एकाएक होता है और एकाएक ही छोड़ जाता है।"

स्पाइजिलिया ३—सर और चेहरेको काट डालने या नोंच फेंकने-जैसा दर्द ; यह दर्द जब आँखोंतक फैल जाता है, उस समय सर झुकाने या हिलानेसे दर्द बढ़ता है, इसके साथ ही कलेजेमें धड़कन और बेचैनीका लक्षण प्रकट हो जाता है। "रवि स्नायु-शूल" अर्थात् सूर्योदयसे सूर्यास्त-तकके स्नायु-शूलमें यह बहुत लाभ करता है।

कोलोसिन्थ ६—अधकपारीका दर्द ; सर और दाँतोंके दर्दके साथ चेहरेके बायों ओर तोड़ने या सुई गड़नेकी तरह दर्द ; यह दर्द गर्मी लगने या हिलने-डुलनेसे बढ़ता है; सब पेशियाँ भड़कती हैं और औरतोंके ऋतु-शूल और पुरुषोंके अर्श-शूल (बवासीरके दर्द) में यह खूब फायदा करता है। गृध्रसी रोगमें खोंचा मारनेकी तरह दर्द, हिलनेपर दर्द बढ़ता है, लगातार हिलानेपर कम हो जाता है। माथेमें तेज दर्द—ऐसा मालूम हो, मानो कपाल और आँखोंके ऊपर कोई सुई भोंकता है ; कानके भीतरकी शिराएँ सब काँपती हैं और उनके साथ ही आँखकी पुतलीमें जलन करनेवाला काटनेकी तरह दर्द होनेके साथ अधकपारीके दर्दमें तथा दाहिनी अण्डकोषके शूलमें यह उपयोगी है।

सिमिसिफ्यूगा ३x—स्नायविक और वातके कारण उत्पन्न स्नायु-शूलमें। जरायु या डिम्बकोषके प्रदाह आदिके कारण पैदा हुआ स्नायु-शूल।

रस-टक्स ६—कमरके स्नायु-वातमें। "कटि-स्नायु-वातवाला" अध्याय देखिये।

हाइपेरिकम ३x या **आर्निका** ३x—चोट लगने या गिर जानेके कारण स्नायु शूलमें यह लाभदायक है।

प्लैण्टेगो ३x—दाँत और कानोंमें स्नायु-शूलके लिये।

जेलसिमियम ३—स्नायुविक दुर्बलताके कारण सब अंगोंके फड़कनेके साथ स्नायुशूल। पीठ, कन्धा और गर्दनके पिछले भागमें दर्द।

काफिया ६—दाहिनी ओरकी अधकपारीके दर्दमें, जो सवेरेसे आरम्भ होकर दिनभर रहता हो; कपालके बगलवाले भागमें कांटी ठोंकनेकी तरह तेज दर्द (ऐसा मालूम होता है, मानो सर फट जायगा), हिलने या आवाज सुननेपर दर्द बढ़ जाता है; हाथ-पैर ठण्डे रहनेके साथ बहुत जाड़ा मालूम होना।

दाहिनी ओरके स्नायु शूलमें—बेलेडोना और कैल्मिया।

बायें पार्श्वके स्नायु-शूलमें—स्पाइजि और कॉलोसिन्थ।

मैलेरियासे पैदा हुए स्नायु-शूलमें—किनिन-सल्फ ३x चूर्ण और आर्सेनिक ३x—३०।

कैमोमिला १२, इग्नेशिया ३, रूटा ३, कैल्मिया ३, आर्जेण्टम नाइट्रिक ६, मेजेरियम २, जिंक-फास ३x विचूर्ण, पल्सेटिला ३, २०० वगैरह दवाएँ बीच बीचमें देनी चाहियें। पाकाशयकी गड़बड़ीके कारण होनेवाले स्नायु-शूलमें कैलि-बाई १२ या नक्स ३० देना चाहिये। कैल्के-फ्लुआर और कैल्के-सल्फके अलावा, सभी बायोकेमिक दवाएँ स्नायु-शूलमें लाभ करती हैं।

"नींद आनेसे तकलीफ कम हो जायगी"—इसी विचारसे मार्फिया वगैरह अफीम मिली दवाएँ अगर रोगियोंको खिला दी जाती हैं, तो उन्हें बहुत नुकसान पहुँचता है।

रोगवाली जगहपर खूब गर्म सेंक देना फायदा देता है। "स्नायविक दुर्बलता" सम्बन्धी स्वास्थ्यके नियम पालन करना चाहिये।

व्याधिकल्पना रोग

(Hypochondriasis)

यह वास्तवमें एक मानसिक रोग है। शरीरके किसी यन्त्रका रोग नहीं है। कोई वास्तविक रोग न होनेपर भी रोगी सोचा करता है, कि "उसे कोई भयानक रोग हुआ है, जिससे उसका स्वास्थ्य खराब हुआ जाता है।" यही सोच-सोचकर वह दुःखित रहता है। इसे ही "व्याधि-कल्पना" कहते हैं। पहले पेट फूलना, कब्जियत, भूख न लगना या राक्षसी भूख वगैरह उपसर्ग यदि हो जाते हैं, तो रोगी समझता है कि उसे अजीर्ण या कोई दूसरा भयानक रोग हुआ है। इस उपसर्गोंको बराबर चिन्ता करते-करते रोगीको कलेजेकी धड़कन, पतले दस्त वगैरह उपसर्ग दिखाई देने लगते हैं। इससे भी पूर्ण विश्वास हो जाता है। कि यकृत या किसी दूसरे शारीरिक यन्त्रका कोई तेज रोग हुआ है। विलासिता, आलस्य, मर्माहत, घटना, यकृत इत्यादिका दोष और डाक्टरी या वैद्यकी पुस्तकोंमें कठिन रोगोंका हाल पढ़ते-पढ़ते यह रोग पैदा होता है।

चिकित्सा—नक्स-वोमिका ३—अजीर्णके उपसर्गमें, आरम-म्यूर ३x—आत्महत्या करनेकी इच्छा ; गर्मी-रोगके कारण रोग होनेपर। आर्स ३—विमर्षता, कमजोरी, जलन पैदा करनेवाला दर्द, जीभ लाल, प्यास। इग्नेशिया ३—धन-हानि, अपने किसी रिश्तेदार या स्नेहीका वियोग वगैरह कारणोंसे यह रोग होनेपर, प्लाटिना ६—जरायु-दोषसे पैदा हुए रोगमें कोनायम ३—बलपूर्वक इन्द्रिय-निग्रहके कारण डरपोकपन, मौनावलम्बन, आदमियोंसे अलग रहनेकी इच्छा। हायोसायमस ३—एक ही विषयपर मन लगा रहना (जैसे—रोगी हमेशा सोचता हो, कि

उन्हें गर्मी या कोई दूसरी न आराम होनेवाली बीमारी हुई है) विमर्ष भाव ; वेलेरियाना—पागलपनके साथ विमर्ष भाव, स्नायविक दुर्बलता, उत्तेजना, अनिद्रा प्रभृति मानसिक उपसर्ग रोगाध्यायमें "कुक्षि-रोग" देखिये।

ताण्डव या नर्त्तन-रोग

(Chorea of St. vitus's dance)

चेहरे या किसी दूसरे अंगकी पेशियोंका इच्छा न रहनेपर भी फड़कने (twitching) को "नर्त्तक-रोग" कहते हैं—इसे "ऐच्छिक-पेशियोंका उन्माद-रोग" भी कहा जा सकता है। ज्यादातर १०-१५ वर्षकी उमरवालोंको ही यह बीमारी होती देखी जाती है।

गन्दी जगहपर रहना, अपुष्ट पदार्थ खाना, क्षय या कमजोर करनेवाला बीमारियाँ होना, शरीरमें रक्तकी कमी, क्रिमि, शारीरिक अथवा मानसिक सुस्ती, बहुत ज्यादा उत्तेजना, भय, हस्तमैथुन, हृत्पिण्डकी गड़बड़ी प्रभृति इस रोगके कारण हैं। प्रथम रजोदर्शनमें विलम्ब और अनियमित ऋतुके कारण भी यह रोग हो सकता है। किसी-किसी स्थानपर यह रोग वंशगत-रूपसे भी होता देखा जाता है। कोई-कोई ताण्डव रोगवालोंकी नकल किया करते हैं, उन्हें भी यह रोग हो जाता है।

भयसे पैदा हुए रोगमें—ऐकोनाइट, इग्नेशिया, स्ट्रैमोनियम। "क्रिमिके कारण पैदा हुए रोग"—साइना, स्पाइजिलिया, सैण्टोनाइन, मर्क्युरियस, नेट्रम-फास। "वातके कारण पैदा हुए रोगमें"—सिमिसिफ्यूगा, स्पाइजिलिया। "हस्तमैथुनके कारण रोगमें"—एसिड-फास, कैन्थरिस, प्लाटिना। "कमजोरीसे पैदा हुए रोगमें"—आयोड, फेरम। रोगका असली कारण न मालूम पड़नेपर—बेल, ऐगरिकस,

क्यूप्रम-मेट, "आर्स," हायोस, स्ट्रैमो, जिकम प्रभृतिका प्रयोग करना चाहिये। "आर्सेनिक" इसकी उत्तम दवा है।

कास्टिकम, टैरेण्टुला, कैल्के-कार्ब वगैरह दवाएँ बीच-बीचमें दी जाती हैं।

ऊपर लिखी दवाएँ ३—६ क्रममें देनी चाहियें।

आनुसंगिक चिकित्सा—देह और मनको एकदम विश्राम, कसरत, खुली जगहमें हवा खाना, पुष्ट स्वास्थ्यवर्द्धक पदार्थ खाना उचित है। कभी-कभी विजलीकी सहायता (galvanism) से भी यह रोग कम हो जाता है। जिसे ताण्डव-रोग हो, उसे दूसरे ताण्डव-रोग-वाले मनुष्यसे ज्यादा मिलना जुलना न चाहिये। रोगीके सामने कोई उसके रोगका "जिक्र न करे, किसी तरहकी सहानुभूति भी न प्रकट करे या उसे चिढ़ाये।"

झटके (Tremor)

मृगी रोगमें जिस तरह कँपकँपी होकर आदमी वेहोश हो जाता है, इस रोगमें भी उसी तरह कँपकँपी होती है, परन्तु वेहोशी नहीं आती।

ऐगरिकस θ—सरमें कँपकँपी शुरू होकर हाथकी तलहत्थीतक फैल जाती है (खासकर बूढ़ोंको ही ऐसा होता है); ऐगरिकस ३ (हाथ-पैर काँपना, शरीरका नीला और ठण्डा होना); मर्क-सोल १२—३० (हाथकी अंगुलीसे कँपकँपी आरम्भ होनेपर); इग्नेशिया ३ (मानसिक उद्वेगके कारण काँपना); स्ट्रैमोनियम ३x या ऐकोनाइट ३ (भयसे काँपना); वेल ३, इपिकाक ३x या नक्स-वोम १x (अफीम खानेके कारण कँपकँपी); ऐण्टिम-टार्ट ६ या नक्स १x (शराबियोंकी कँपकँपी); जेलसिमियम १x, ३ (हाथकी अंगुली या सब शरीरका कम्पन); सिमिसिफ्यूगा ३ (कँपकँपीके कारण चलने न सकना)। हायोसायमस ३ और जिकम-पिकरिक ३x भी बीचमें फायदा करता है।

निस्पन्द-वायु-रोग (Catalepsy)

जिस स्नायविक या आक्षेपिक रोगमें अपनी इच्छाके अनुसार चला-फिरा नही जाता या बेहोशीके साथ सब पेशियाँ अकड जाती हैं या कड़ी हो जाती है (परन्तु रक्तका सचालन ठीक-ठीक बना रहता है), उसका नाम "निस्पन्दन-वायु-रोग" है। निस्पन्द (सुन्न) अवस्थामें रोगीके हाथ पैर आदि जिस हालतमें दूसरे रख देंगे उसी तरह पडे रहेंगे। उसे उस समय अपने चारों ओरकी किसी चीज या विषयका कोई ज्ञान नही रहता। इस रोगका सच्चा कारण आजतक न मालूम हुआ। यह कोई स्वतन्त्र रोग नही है—हिस्टीरिया, विषाद-रोग, पक्षाघात या मस्तिष्क रोगका लक्षणभर है। ६

कैनाबिस इण्डिका १x—३० इसकी बहुत बढिया दवा है। कई दिनोंतक सेवन करनेके बाद भी यदि इससे फायदा न हो तो साइक्युटा-विरोसा ३ देना चाहिये। सरमें चक्कर, औंधना, झिल्लीका सूखापन वगैरह लक्षणोंमें—नक्स-मस्केटा २x—३०; मानसिक रजःस्रावके साथ यह मौजूद रहे, तो मस्क ६; मानसिक उद्वेग या हिस्टीरियाके कारण रोग पैदा हो, तो इग्नेशिया ६; धर्मोन्मादके कारण हो, तो स्ट्रैमोनियम ३x—३, विरेट्रम-विरिडि १x, सल्फर ३० देना चाहिये।

क्षीर्णता या पेशियोंकी क्षीर्णता (Muscular Atrophy)

ऐच्छिक पेशियोंका धीरे-धीरे क्षय होनेका नाम "शीर्णता" या "पेशियोंकी शीर्णता" है। अगूठा और तलहत्थीकी मास-पेशियाँ पहले पतली हो जाती है और वहाँसे यह बाँह और कंधोंतक यह बीमारी फैलती है। इसके बाद दोनों पैर पतले हो जाते हैं, पीछे चेहरे और जीभपर इस रोगका हमला होता है, उस समय बोलना और घूँट लेना

बहुत ही कष्टकर हो जाता है, अंतमें सब अंग कृश होकर रोगका हाड़-हाड़भर रह जाता है। रोगवाले स्थान सब ठण्डे और निस्तेज हो जाते हैं ; कभी-कभी पक्षाघात भी मौजूद रहता है।

प्लम्बम ६—२०० और आयोड ३० इसकी उत्कृष्ट दवा है। आर्जनाई ६, प्लम्बम-ऐसेटिकम ६, आर्निका ३, जेल्स ३x, फास ३, सल्फर ६, जिंकम ६, क्यूप्रम ६, आर्सेनिक-ऐल्ब ३x, नेट्रम-म्यूर ३० प्रभृति दवाओंकी भी बीच-बीचमें जरूरत पड़ सकती है। "पेशियोंकी क्रमवर्द्धित शीर्णता" वाला अध्याय देखिये।

बेरी-बेरी (Beri-Beri)

स्नायु दो तरहके होते हैं :—(१) गति-विधायक स्नायु (motor nerves)। (२) चैतन्य-वाहक स्नायु (sensory nerves)। इन दोनों ही स्नायुओंमें प्रदाह होनेका नाम "बेरी-बेरी" है। भारतवर्ष, चीन, जापान, मालय उपद्वीप, ब्रह्मदेश (और आजकल) इङ्गलैण्ड, अमेरिका प्रभृति देशमें भी यह बीमारी होती है।

लंकाकी सिंहली भाषामें "बेरी-बेरी" शब्दका अर्थ है—तीव्र दुर्बलता। कोई-कोई निदानवेत्ता यह भी कहते हैं, कि यह एक प्रकारका स्नायुओंका प्रदाह है (स्नायु-प्रदाह अध्यायमें "सर्वाङ्गीण-स्नायु-प्रदाह" देखिये)। किसी-किसीका मत है, कि "बेरी-बेरी" रोग बहुव्यापक शोथका एक दूसरा नाम है। डा० स्टिरका कथन है कि ठीक-ठीक भोजन न मिलने अथवा भरपूर भोजन मिलनेके कारण यह बीमारी होती है) जो हो, इस रोगीकी पहली अवस्थामें पैरोंमें ऐंठन होती है और गुल्फ फूल उठते हैं, इसके बाद दोनों पैर फूल जाते हैं और फिर पक्षाघातकी तरह समूची देह अवश या सुन्न हो जाती है। त्वचा सूखी, कब्ज या पतले दस्त, पेशाब लाल और अन्तमें हृत्पिण्डपर बीमारीका दौरा हो जाता है। ऐसी अवस्थामें श्वास-प्रश्वासमें तकलीफ

होती है और कलेजेमें धड़कन होने लगती है। इस रोगमें दिमागमें बिलकुल ही खराबी नहीं पहुँचती, पेशाब और पसीना बहुत थोड़ा या एकदम बन्द रहता है ; रक्तस्वल्पता, खींचन, समूची देहमें सूजन आदि लक्षण 'भयावह' हैं। इसके विपरीत खूब ज्यादा पसीना और पेशाब होना तथा पतले दस्त आना ; शोथका निचले ही अंशमें रहना, मूत्रयन्त्र, फेफड़ा और हृत्पिण्डपर रोगका आक्रमण न होना शुभ लक्षण हैं।*

---

* Dr Hirzog ने दो तरहके बेरी-बेरीका उल्लेख किया है :— (१) मृदु अर्थात् हल्की प्रकृतिका (mild) बेरी-बेरी ; (२) "उत्कट" बेरी-बेरी। जैसे :—

(१) तबियत खराब मालूम होना, सर्दी, दोनों पैरोंमें दर्द और कमजोरी, जरा हिलने डुलनेसे ही कलेजा धड़कने लगना प्रभृति "मृदु-प्रकृति" के बेरी-बेरीके प्रधान लक्षण हैं। यह सामान्य स्नायु-प्रदाह (neuritis) है, यह मृदु-प्रकृतिका बेरी-बेरी या तो सहजमें ही आराम हो जाता है अथवा खूब तेज उत्कट आकार धारण करता है। (२) उत्कट बेरी-बेरी भी तीन प्रकारका होता है :— (क) **शीर्ण या शुष्क आकारका बेरी-बेरी** ; पहले पैरोंमें साधारण-सी सूजन होती है। इसके बाद दोनों पैरोंकी पेशियाँ अकड़ जाती हैं और उसमें दुबलापन या शीर्णताके साथ दर्द होता है और कभी-कभी पक्षाघात भी हो जाता है ; यह इसका प्रधान लक्षण है। (ख) **"आर्द्र" या सूजन होनेवाला बेरी-बेरी** ; अरुचि, पैर और तलवोंमें शोथ, वक्ष-गह्वर और उदरमें रस-क्षरण (effusion), कलेजा धड़कना, चलनेकी शक्तिका न रहना, दबानेपर शरीरकी सूजनवाली जगहपर गड्ढा पड़ना इसका प्रधान लक्षण है। (ग) **"सांघातिक" प्रकारका बेरी-बेरी** ; दोनों पैरोंमें कमजोरी, वमन, श्वासमें कष्ट, हृत्पिण्डके भयङ्कर उपसर्गोंका पैदा हो जाना (कितनी ही बार हृत्पिण्डपर बीमारीका दौरा होकर चौबीस घण्टोंमें मृत्यु हो जाती है)। इस श्रेणीके बेरी बेरीका यही विशेष लक्षण है।

चिकित्सा—आर्सेनिक सब तरहके बेरी-बेरीकी प्रधान दवा है। अङ्गोंका अवश हो जाना, दर्द, सूजन, खूनकी कमी प्रभृति लक्षणोंमें—आर्स ३x, ६ ; अगर प्रधानतया हृत्पिण्डकी गड़बड़ी हो, तो आर्सकी अपेक्षा आयोड ३x या लैकेसिस ६ ज्यादा फायदा करते हैं। दो-तीन दिनोंतक आर्सेनिक सेवन करनेपर, अगर फायदा न दिखाई दे, तो पल्स २x या रस-टक्स ३x, २०० देना चाहिये। रोगीकी पहली अवस्थामें (खासकर चैतन्यवाहक स्नायु ज्यादा आक्रान्त होनेपर) ऐकोनाइट ३x। अधिक मात्रामें स्नायुओंका प्रदाह हो जाये, तो स्ट्रिकनिया-फास ३ विचूर्ण देना चाहिये। पक्षाघात, शरीर दुबला होते जाना, अंग-प्रत्यङ्ग (वात रोगकी तरह) कड़े हो जायें प्रभृति लक्षणोंमें फास्फोरस ३x, ३०। पक्षाघातकी तरह लक्षणोंमें (खासकर निम्नांगमें होनेपर)—जेल्स ३। शोथ या कोई अंग अगर फैल जाये, तो ब्रायोनिया ३, सिपिया ६, लैथाइटस-सैटाइवा ३, सिकेलि ६ या एपिस २। हृत्पिण्ड बहुत कमजोर हो जाये—क्रैटेगस θ, कैक्टस θ, ऐमिल-नाई १x, ३ (खासकर ऐसी आशंका होकर कि हृत्पिण्डकी क्रिया अभी रुक जायगी) या जिन्सेङ्ग ३x। शोथ, श्वास-कष्ट, कलेजा धड़कना, नाड़ी तेज और अनियमित लक्षणमें—कान्वैलेरिया θ, नेट्रम-सल्फ, सम्बम, फास्फोरस, लाइकोपोडियम, इलाटेरियम, प्रभृतिकी समय-समयपर जरूरत हो सकती है। ये सभी दवाएँ ६—३० शक्तिकी देनी चाहियें।

आनुसंगिक चिकित्सा—गर्म, परन्तु हवा खूब आती हो, ऐसे कमरेमें रोगीको स्वतन्त्र भावसे रखना उचित है। गिरिडिह, वैद्यनाथ प्रभृति सूखी, ऊँची भूमिपर रहना फायदा करता है। पसीना निकलनेके लिये रोगीको बीच-बीचमें गरम पानीसे नहलाया जा सकता है। गरम वस्त्रसे रोगीका शरीर हमेशा ढँका रहना चाहिये। सागू, दूध, मट्ठा, अनारसका रस, बेदाना प्रभृति सुपथ्य हैं। खट्टी या कड़ी चीजें खिलाना कभी उचित नहीं है। गत बार जब बेरी-बेरी फैला था, तो

बहुतसे चिकित्सकोंने भात, दही, चीडा खिलाकर बहुतसे रोगियोंको तकलीफ दी थी। कलकत्तेमें बेरी-बेरी रोगका कारण-तत्व निर्णय करनेके लिये कमिशन नियुक्त हुआ था। १६०६ ईस्वीमें डाकर मिगने जो राय दी थी, उसका सारांश नीचे लिखा जाता है :—

१६०६-१० ईस्वीमें बङ्गालमें जो बीमारी फैली थी, वह असली बेरी-बेरी नहीं थी, एक प्रकारका शोथ था। यह रोग जीवाणु-दोषसे नहीं उत्पन्न हुआ था। छाँटा (polished) साफ चावल, मैदा प्रभृति खानेकी वजहसे वह उत्पन्न होता है। मारवारियों अथवा युक्त-प्रदेशके अधिवासियोंको यह बीमारी नहीं हुई, बंगालियोंको ही ज्यादा हुई थी ; क्योंकि उनका खाद्य तेज ज्यादा है, पर उसमें फास्फोरस और यवक्षारजान (nitrogen) नहीं है। अतएव (१) बिना छाँटे चावलका भात और मोटे आँटेकी रोटी खानेसे ; (२) मूंगकी दाल अथवा मास खानेपर ; (३) छाँटे चावलमें कुछ छिलका और महीन मैदेमें कुछ भूसी मिलाकर खानेपर इस रोगसे छुटकारा मिल सकता है।

कुछ दिन पहले कोदाई, सिमासुरा, ओड्किस, सुज्की प्रभृति जापानके विद्वान चिकित्सकोंने बहुत तरहकी परीक्षाएँ कर प्रमाणित किया है. कि धान, गेहूँ, जव प्रभृतिके छिलकेमें "ओरिजानिन" नामक एक तरहका रसायनिक पदार्थ रहता है, उससे मानव-शरीरका पोषण होता है। इसलिये इन्हें कदापि न फेकना चाहिये अर्थात् बिना छाँटे चावलका भात और गेहूँके आँटेका रोटी ही लाभदायक है।

गत १६२४ ईस्वीकी १२वीं नोवेम्बरको एशियाटिक सोसाइटीके Major H. W. Acton ने बेरी-बेरीके कारण-तत्व और निवारणके सम्बन्धमें एक प्रबन्ध पढ़ा था। उन्होंने कहा कि छोटे दानेवाले मोटे चावल खानेसे "बेरी-बेरी" और मझोले दानेवाले चावल खानेपर "बहुव्यापक शोथ" होता है। छोटे चावल या बरसातमें ढेर लगाकर जो

चावल खाये जाते हैं और सूखी मछलियाँ खाना एकदम बन्द कर देना चाहिये ; हवादार गुदामोंमें रखे चावल खाने चाहियें ।

मेरुमज्जाके रोग
(Diseases of the Spine)

यह पहले बताया जा चुका है, कि "स्नायुमण्डल" किसे कहते हैं । स्नायुमण्डलका जो अंश मेरुदण्ड-प्रणाली (spinal canal) में है, उसका नाम "मेरु-मज्जा" है । मेरुदण्डके कई रोग क्रमसे नीचे लिखे जाते हैं :—

स्नायविक दौर्बल्य—"स्नायविक दौर्बल्य" देखिये ।

मेरुमज्जाकी उत्तेजना (Spinal irritation)—पीठमें (खासकर मेरुदंडमें) और कमरमें दर्द इस रोगका 'प्रधान लक्षण' है । दबाने, कसकर पकड़ रखने अथवा थोड़ी मिहनत करनेसे (चलना-फिरना, लिखना-पढ़ना, सोना इत्यादि) मेरुदण्ड या दूसरे अंशमें दर्द बढ़ जाता है । यह एक तरहका स्नायु-दुर्बलता है और पुरुषोंकी बनिस्बत औरतोंको ज्यादा होती है । शरीरमें सुरसुराहट या सुन्न मालूम होना, स्वप्नदोष, ध्वजभंग या वन्ध्यत्व, मूत्राशयकी उत्तेजना वगैरह उपसर्ग भी मौजूद रह सकते हैं । डा० सैण्डस मिल्सका कथन है कि बहुत दिनोंतक नक्स-वोमिका खाना इस रोगकी सबसे अच्छी दवा है । डा० ह्यूजेस टेल्यू-रियम ६ सेवनकी सलाह देते हैं । यदि बाप-दादाको गुटिका-दोष रहे, तो वैसिलिनम २०० ; सरमें दर्द, अंग-प्रत्यङ्ग सुन्न हो जानेका भाव, पेटमें दर्द, पेट फूलना, कब्जियत वगैरह लक्षणोंमें आर्जे-नाई ६ देना चाहिये । मेरुदण्डमें जलन और पैरोंमें कमजोरी, मेरुदण्डसे लेकर माथेतक दर्द रहनेके लक्षणमें पिकरिक-एसिड ३० ; ज्यादा चाय पीनेकी वजहसे हुआ हो, तो थूजा ६, कमजोर औरतोंको हुआ हो, तो ऐगरिकस ३,

इग्नेशिया ३, सिलिका ३०, सल्फर ३०, सिमिसिफ्यूगा ३, सिकेलि ३, बेल ६, रस-टक्स ६, कास्युलस ६, ऐसाफिटिडा ३ वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार बीच-बीचमें देनी चाहियें। ठण्डे पानीसे नहाना या कुछ गर्म पानीसे पीठको धो देना चाहिये। खुली हवाका सेवन और पुष्ट पदार्थोंका खाना लाभदायक है। "स्नायु-दौर्बल्य", "स्नायुशूल" और स्त्री-रोगमें "मेरुदंडका उपदाह" देखिये।

मेरुमज्जाकी रक्त-स्वल्पता (Spinal anæmia)—खून निकल जाना, हृत्पिण्डकी कमजोरी वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है। फेरम ६, आर्स-आयोड ६x विचूर्ण, एसिड-फास १x—६, कैल्के-कार्ब ६, चायना ६, सिकेलि ३ इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

मेरुमज्जामें रक्तकी अधिकता (Spinal hyperæmia)—मासिक रजःस्राव रुका, ववासीर, सर्दी या चोट लगना, बहुत संगम या ज्यादा परिश्रम करना या स्ट्रिकनिया वगैरह दवाएँ खानेके कारण यह रोग पैदा होता है। मेरुदण्ड और कमरमें दर्द, शरीरमें भुनभुनी इस रोगका प्रधान लक्षण है। आर्स ६, हाइपेरिकम ३, रस-टक्स ६, सल्फर ३० इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

मेरुमज्जासे रक्त-स्राव (Spinal apoplexy)—मेरुमज्जामें या मेरुमज्जाको ढँकनेवाली झिल्लीके भीतर रक्त-स्राव होनेपर, संन्यास या पक्षाघातकी तरह उपसर्ग दिखाई देते हैं। "संन्यास" और "पक्षाघात" रोगकी दवाएँ इसमें लक्षणके अनुसार दी जाती हैं। रक्त-स्रावके कारण जीभ और हाथ-पैर आदि सुन्न हो जानेपर गुयेकम ३।

मेरुमज्जामें जल-संचय—मस्तिष्कमें जल-संचयकी तरह मेरुमज्जामें भी पानी इकट्ठा हुआ करता है। "बाल-रोगाध्याय" में मेरुमज्जामें जल-संचयसे पैदा हुआ शिशुका विभाजित मेरु (spinal bifida) देखिये।

मेरुमज्जावरक झिल्ली-प्रदाह (Spinal meningitis)—मज्जाको ढँकनेवाली झिल्लीके प्रदाहकी भाँति मेरुमज्जाको ढँनेवाली झिल्लीमें भी प्रदाह होता है। दोनों रोगोंका कारण-तत्व और लक्षण आदि एक समान हैं। बुखार, बेचैनी, पसीना रुक जाना या चोटके कारण दर्दमें ऐकोनाइट ३। सब शरीरमें दर्द, हिलने-डुलनेपर दर्दका बढ़ना ब्रायोनिया ३। बहुत सुस्ती, बदहवासी, कँपकँपी वगैरह लक्षणोंमें जेल्स १x। पैर कड़े और पक्षाघात-जैसे हो जानेपर, आक्जैलिक एसिड ३। "मस्तिष्क-कशेरुक-ज्वर" देखिये।

मेरुमज्जाका प्रदाह (Myelitis)—गिर जाना, चोट या सर्दी लगना, मेरुदण्डकी हड्डी टूट जाना, कोई तेज बीमारी (जैसे, सान्निपातिक बुखार, खसरा), बहुत परिश्रमके कारणसे समूची मेरुमज्जाका या कुछ अंशका प्रदाह होता है। मानो शरीर खिंचा हुआ है, ऐसा मालूम होना और कई घण्टोंके भीतर ही पक्षाघात हो जाता है, ऐसी दशामें समझना चाहिये कि समूचा मेरुदण्ड या उसके कुछ अंशमें प्रदाह हुआ है। "मस्तिष्क कशेरुक-ज्वर" अध्याय देखिये।

नया आक्रमण—ऐकोन ३ (मेरुदण्डमें तेज दर्द, धनुष्टंकार जैसी खींचन, बुखार); नक्स-वोम ३ (धनुष्टंकार, स्पर्श सहन न होना); साइक्यूटा ३ (तेज खींचन, विकट चीत्कार।

रोग पुराना होनेपर—आक्जैलिक एसिड ३x (पैर कड़े और शीतके साथ दर्द); आर्सेनिक ३ (पक्षाघातवाले अंगका खिचना contraction, सामान्य परिश्रमसे ही थकावट आ जाना, बदहवासी); प्लम्बम ६ (मेरुदण्डकी बीमारीमें); पिक्रिक-एसिड ३० (संगमेन्द्रियकी कमजोरीमें); मर्क्युरियस ३ (पैर अवश या पैरोंमें पक्षाघात होनेपर); फास्फोरस ३ (हाथ-पैर अवश हो या थोड़ा ही चलने-फिरनेसे काँपने लगें); सिलिका ६ (प्रत्यंग आदिमें पक्षाघात और रोगवाले स्थान ठण्डा मालूम होनेपर)।

आनुसंगिक चिकित्सा—स्थिर भावसे सोना। नरम बिछावन-पर सोनेसे शय्याक्षत (bed-sores) नहीं होता। दूध आदि पुष्टिकर पतली चीजें पथ्य रूपमें देनी चाहियें। ठण्डे जलमें कपडेका टुकडा भिगोकर सरकी पट्टी मेरुदण्डपर लगा रखना चाहिये। पक्षाघातवाले उपसर्गमें यह फायदा करता है—(Dr. Kafka)।

मेरुदण्डका पक्षाघात—यह रोग ज्यादातर बच्चोंको, शायद ही कभी जवानोंको हुआ करता है। बाल-रोगाध्यायमें "शिशुके मेरुदण्डका पक्षाघात" देखिये।

पेशियोंकी क्रमवर्द्धित शीर्णता (Progressiva muscular atrophy)—यह शीर्णता पेशियों (muscles) की है या वातरज्जु (spinal cord) की? अतएव डाक्टरोंकी धारणा थी कि यह शीर्णता खासकर पेशियोंकी है, परन्तु अब निःसंशय रूपसे यह स्थिर हो गया है कि यह "वात-रज्जु" का रोग है; शीर्णता पहले हाथके अगूठे (thumb) में दिखाई देती है, पीछे बाँह और कन्धे भी शीर्ण हो जाया करते हैं और अन्तमें पेशियोंके बाद पेशियोपर हमला होकर रोगी जीता ही ठठरी (living skeleton) जैसा हो जाता है। "शीर्णता" देखिये।

प्लम्बम ६ और फास्फोरस ३ के सेवनसे बहुतसे रोगियोंको फायदा हुआ है। "आर्ज-नाई" ६, जेल्स ३x, आर्निका ३ और सल्फर ३० की परीक्षा करनी चाहिये।

पिकचंचु-अस्थि-प्रदाह (Coccy-godynia)—मेरुदण्डके नीचेका अंश देखनेमें कोयलकी चोंचकी तरह है, इसीलिये, इसे "पिक-चंचु-अस्थि" (गुदास्थि coccyx) कहते हैं। सर्दी या चोट लगने, बदनकी खुजली बैठ जाने, अस्त्रके सहारे प्रसव कराने वगैरह कारणोंसे "पिक चंचु अस्थि-प्रदाह" होता है और वहाँ दर्द होने लगता है।

जकड़ जाने या कुचलने-जैसे दर्दमें कास्टिकम ६ । नोंच डालने या झटका देनेकी तरह दर्दमें साइक्यूटा १ । यदि दबा रखनेसे दर्द बढ़ता हो, तो सिलिका ६ । बैठे रहनेपर दर्द, छूने या घूमनेपर दर्दका बढ़ना लक्षणमें कैलि-ब्राई ६x, पिक-चंचु-अस्थिके निचले भागमें बोझकी तरह भार मालूम हो, तकलीफकी वजहसे रोगी लेट जाये, तो ऐण्टिम-टार्ट ६ । कनकनीकी तरहके दर्दमें रस-टक्स ६ या रूटा १ । स्त्री-रोग अध्यायमें "पिक-चंचु-अस्थि-प्रदाह" देखिये ।

मेरुमज्जाका क्षय (Locomotor ataxia)—सर्दी लगने, बहुत संगम या बहुत परिश्रम (शारीरिक या मानसिक), गर्मी रोगके कारण मेरुमज्जाका-क्षय होता है । पहले पाकाशयकी गड़बड़ी और सब बदनमें (खासकर दोनों पैरोंमें) वात या स्नायुशूलकी तरह दर्द, पीछेकी अनुभव करनेकी ताकतका कम हो जाना और अन्तमें रोगीका अपनी इच्छासे पैर ठीक न रख सकना इस रोगका प्रधान लक्षण है ।

रोगकी पहली अवस्थामें सिकेलि ३, इसके बाद फ्लुओरिक-एसिड ३ । उपदंशके कारण पैदा हुए रोगमें कैलि-आयोड ३ । रोगी सहजमें ही थक जानेपर पिकरिक-एसिड ३ । हाथ काँपना और देखनेकी ताकतका कम होना, आर्ज-नाई ३ या फास्फोरस ३ । नक्स वोम ३, आरम ३—२००, मेडोरिनम २००, मैग्नेशिया-फास ६x चूर्ण, ३०, ऐल्यूमेन ६, लाइको ६, आर्स ३, कार्बो-वेज ३x चूर्ण, वेल ३, स्ट्रिक-निया, ऐङ्गटियुरा ३ और कास्टिकम २००, जेल्स ३, फास्फोरस ६, प्लम्बम ३०, रस-टक्स ३०, जिंकम ३० प्रभृति दवाएँ लक्षणके अनुसार आवश्यक हो सकती हैं । (Dr. T. F. Allen साहबके मतसे) आयोडाइड आफ कापर वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार आवश्यक हो सकती हैं ।

आनुसंगिक चिकित्सा—शराब और धूम्रपान मना है, मछली, मांस और अंडा—इस रोगमें एकदम निषिद्ध है । सर्दी लगना बहुत ही

हानि करता है। सर्दी न लगे, इस तरह कोठरी बन्दकर नहलानेसे बहुतसे रोगियों फायदा होता है। दूध इस रोगमें ज्यादा फायदा करता है। कुछ कसरत करनेसे भी फायदा होता है।

चक्षु-रोग

आँखकी बीमारियोंकी कई प्रधान दवाएं

आरम-मेट ६x चूर्ण, २००—ऐसा मालूम होता है, मानो आँखके बाहरकी ओरसे उसके भीतरकी तरफ चारों ओर दर्द फैलता जाता है।

आर्जेण्टम-नाई ३—आँखें चिपक जाना या आँखोंसे पीब निकलना ; आँखके सामने मानो साँप घूम रहे हैं।

आर्स-पेट्य ३—जलन करनेवाले आँसू ; गालपर गिरनेपर मानो वह जगह सफेद हो जाती है।

आलू—आँखोंमें जलन होनेपर, कच्चे आलूको छीलकर उसका गुद्दा कुछ देरतक आँखोंमें बांध रखना फायदेमन्द है।

एकोनाइट ३—विना कारणके एकाएक अन्धे हो जानेपर।

एगारिकस ३—पलकोंको पेशियोंका सिकुड़ना।

बेलियम-सिपा ६—आँखोंसे पानी बहुत ज्यादा निकलनेपर और आँखोंके करकरानेपर। सर्दी, नाकसे पानी टपकता है।

एसाफिटिडा ३, ६—आँखोंके भीतरसे बाहरी भागके चारों ओर मानो दर्द फैलता जाता है—ऐसा मालूम होना। [विपरीत—आरम मेटालिकम]।

युपेट-पर्फ ३x—आँखोंकी पुतलियोंका अकड़ना, पानी बहना (खासकर खाँसनेके समय)।

युफ्रेशिया ३—आँखोंसे जलन पैदा करनेवाला स्राव। बहुत आँसू गिरना ; आँखें लाल ; सवेरे आँखें सट जाती हैं ; कनीनिक (cornea) में श्लेष्मा। आवश्यक होनेपर युफ्रेशिया θ अठगुने पानीके साथ मिलाकर बीच-बीचमें आँखोंमें डालना चाहिये।

एइलैन्थस ३—आँखोंमें खून इकट्ठा होना ; आँखोंकी पुतलियाँ फूली हुईं।

एपिस ६—आँखोंके नीचे सूजन, सुई गड़नेकी तरह दर्द ; ठण्डे प्रयोगसे कष्ट घटता है।

कास्टिकम ६—आँखोंकी पलकें आप-ही-आप गिर जाती हैं, रोगी कोशिश करनेपर भी उसे उठा नहीं सकता।

कैलि-कार्ब ३०—आँखोंके ऊपर फूल उठना ; लसदार स्राव।

कैलि-सल्फ ६x—"पीवकी तरह" आँसू गिरना।

क्लिमेटिस ३—आँखें सूखीं, लाल और गरम ; आँखोंके बीचके भागमें जलनकी तरह दर्द ; सर्दीमें या रातमें दर्दका बढ़ना ; आँखोंसे पानी गिरना।

क्रोटेलस ३—आँखोंसे खून निकलनेपर ; आँखें पीली हो जाना।

जेलसिमियम आँखोंकी पेशियोंका फड़कना या वशमें न रहना। कम दिखाई देना और सरमें चक्कर। आँखकी पुतलीकी फैली ; आँखोंका स्नायु-शूल।

नेट्रम-म्यूर १२x विचूर्ण, ३० जलभरी आँखें ; आँखोंसे पानी गिरना (खासकर खाँसनेके समय)।

पल्सेटिला ६—आँखें लाल ; खाली जगहमें या ठण्डी हवामें आँखोंसे पानी निकलनेपर, "पीले रंगका स्राव।" "पल्स ३०" गुहौरी (अंजनी, खासकर पलकके ऊपर होनेवाली गुहौरी) की उत्तम दवा है।

प्रूनस-स्पाइनोसा θ—आँखोंके दर्दकी उत्कृष्ट दवा है। आँखोंमें केवल तेज दर्द भर रहे, दूसरा कोई उपसर्ग न रहनेपर (वटिका, मूल अरिष्टसे तुरन्त तरकर सेवन करनेसे ज्यादा लाभ होता है)।

प्लाटिना ६—कोई चीज असली लम्बाई चौडाईसे छोटी दिखाई देनेपर।

प्लैटेनम θ—(कुछ दिनोंतक सेवन करना चाहिये) पलकोंपर अर्बुद, फुन्सियाँ, कोनेमें गुहोरी वगैरह। आधा औंस पानीमें पाँच बून्द मिलाकर आँखें धो डालनी चाहियें। इससे मोतियाबिन्दमें भी फायदा होता है।

फाइसोस्टिग्मा ३—आँखोंका करकराना—यह दर्द अगर चश्मा लगाने पर भी न दूर हो।

फ्लुओरिक एसिड ६—ऐसा मालूम होना, मानों आँखोंमें ठंडी हवा लग रही है।

बेलेडोना ६—आँखोंमें रोशनी जरा भी सहन नहीं होती; आँखें लाल, टपककी तरह दर्द, दर्द माथेतक फैल जाता है।

बोरैक्स ३x चूर्ण—पलकोंपर छोटी-छोटी फुन्सियाँ, पलकोंकी बरुनियाँ जुड़ जाना; पलकोंका भीतरकी ओर उलट जाना, आँखोंके कोनोंमें खुजली और दर्द।

रस-टक्स ६—समूची आँख और उसके चारों ओरका स्थान फूल जाना। आँखोंसे गर्म आँसू गिरना, पलकें भारी और कडी मालूम होना। पानीमें भींगने या गीली जगहपर रहनेकी वजहसे बीमारी (डल्का)।

रूटा ३—सिलाई करना, पढना वगैरह कारणोंसे आँखें लाल और गरम, आँखमें दर्द। दीयेकी रोशनीमें पढ़नेपर आँखमें जलन; रातके समय ऐसा मालूम होता है, मानो हरे रंगका घेरा है; आँखें फैलाने या आँखोंपर जोर देकर कोई भी चीज देखने या पढनेपर सरमें दर्द हो जाता है।

स्टैफिसेग्रिया ६—पलकोंपर कड़ी बतौड़ी या ऊँची गोटियाँ या अस्थि-गुल्म (nodes) होनेपर ।

स्ट्रैमोनियम ३—दो दिखाई देना । डेरा देखना ; छोटी चीज बड़ी देखना, सभी चीजें काली मालूम होती हैं, आँखें फाड़ टकटकी लगाकर देखता है । आँखकी पुतली फैली ।

साइक्यूटा ३—आँखोंकी पुतली बड़ी हो जाना ; आँखें सुन्न हो जाना ; दृष्टि टेढ़ी हो जाना ; पढ़नेके समय अक्षर ऊँचे-नीचे दिखाई देना या एकदम न दिखाई देना ।

साइना ३x, २००—धुँधला दिखाई देना, पर आँखें रगड़ देनेपर कुछ साफ दिखाई देने लगना ।

सल्फर ३०—आँखोंमें जलन मानो आँखोंके भीतर बालू गिर गयी है । आँखें धो डालनेपर दर्द बढ़ जाता है ; आँखोंके सामने मानो पर्दा पड़ा हुआ है ; आँखोंमें मानो सुई गड़ रही है ।

साइक्लामेन ३—अस्पष्ट देखना, आँखोंके सामने धुआँ या कुहासा दिखाई देना ।

सिपिया १२—आँखें भरी मालूम होना (मानो पक्षाघात हो गया है); पलकोंका आप-ही-आप गिर जाना ।

सिमिसिफ्यूगा ६—चक्षु-गह्वरमें दर्द, आँखोंमें (या कानोंमें) लगातार तेज दर्द होता है, तो उसके चारों तरफ त्वचाके ऊपर सिमिसिफ्यूगा θ लगाना और ३ क्रम सेवन करनेसे फायदा होता है ।

सिलिका ३०—आँसू बहानेवाली गाँठकी सूजन । रोशनी या धूप देखनेसे ही सरमें चक्कर आ जाता है, दृष्टि-भ्रम होता है ; पढ़नेके समय अक्षर सब आपसमें सट जाते हैं । मोतियाबिन्द, पलकोंपर छोटी कड़ी बतौड़ी या मांसपिण्ड ।

आँख आना (Ophthalmia)

आँखोंमें धूलके कण, धूप, ओस, ठण्डी हवा, धुआँ, चोट, स्वास्थ्यका भग होना प्रकृति कारणोंसे आँखें उठती हैं। खसरा चेचक और सुजाकके कारण भी आँखोंमें प्रदाह होता है।

लक्षण—आँखोंका सफेद अंश (कोया) लाल ; आँखोंसे पानी या पीब निकलना ; आँखें जुड जाना ; आँखोंसे मैल निकलना , बालू रहने या काँटा गडनेकी तरह दर्द ; आँखें कुटकुट् करना ; रोशनीका सहन न होना।

चिकित्सा—फेरम-फास ६x—साधारण प्रकारका चक्षु-प्रदाहमें लाभदायक है।

बेलेडोना ३x—चमकीली लाल आँखे ; बहुत दर्द ; आँखें फूल जाना ; आँखें या कपालकी बगलमें टनक, दोनों गाल लाल ; रोशनी या धूपकी गर्मीका सहन न होना।

पेल्यूमिना ३०—आँखें बहुत सूखी (या आँसूसे रहित) रहनेपर फलप्रद है।

आरम-मेट ६—गर्मी रोगके कारण आँखोंकी बीमारी होनेपर इसका प्रयोग होता है।

एकोनाइट ३x, ६—वातसे पैदा हुआ, प्रमेहसे पैदा हुआ या सर्दीसे उत्पन्न नया प्रदाह ; धीमा-धीमा ज्वर। दर्द बन्द न होनेतक बोरासिक-एसिड (८ ग्रेन+जल १ औंस) का धावन लगाना चाहिये। यदि ४८ घंटोंमें प्रदाह कम न हो, तो युफ्रेशियाका (θ १० बून्द+पानी १ औंस) धावनका व्यवहार करना चाहिये। बहुत ही अस्वस्थ मनुष्यके लिये सल्फर ६—३० देना चाहिये।

एकोनाइटसे फायदा न हो और ज्यादा पीव न हो, तो "रस-टक्स" ६।

मर्क्यूरियस-कोर ३—आँखोसे पानी गिरने वाद ही जब खूब पीव हो जाता है, मैल निकलता है, आँखें सट जाती हैं, करकराती हैं, गर्मी और दर्द मालूम होता है, देखने और हिलनेसे दर्द वढ़ता है, बहुत कुटकुटी और रोशनी सहन नहीं होती, उस समय इसका प्रयोग होता है। प्रमेहके कारण चक्षु-प्रदाहमें मर्क-कोर के वाद "हिपर-सल्फर" ६ फायदा करता है ; हिपर-सल्फरसे फायदा न हो, तो सिलिका ६ देना चाहिये।

एपिस-मेल ३०—वहुत ज्यादा पीव निकलना, रोशनी सहन न होना ; जलन, खुजली ; सुई गड़नेकी तरह दर्द ; आँखोंकी पलकें फूलीं।

युफ्रेशिया ३x—(सभी अवस्थाओंमें इसका प्रयोग किया जा सकता है) आँखें लाल ; रोशनी सहन नहीं होती ; नाक और आँखोंसे बहुत ज्यादा पानी गिरता है ; दर्द ; वार-वार छींक ; आँखोसे सफेद अंश और पलकोंके वगलमें छोटी-छोटी फुन्सियाँ निकलती है। आँखोंसे पीव वहता है और सूतकी तरह पीवका आँखोंपर पर्दा-सा पड़कर देखनेमें अड़चन आ जाती है। युफेशिया θ दस बून्द एक औंस पानीमें मिलाकर आँखें धोनी चाहिये।

पल्सेटिला ३, ३०—नया या पुराना चक्षु-प्रदाह, सुजाकके कारण पैदा हुआ चक्षु-प्रदाह।

आर्जेण्टम नाइट्रिकम ३, ३०—वहुत पीव वहना (खासकर बच्चोंके चक्षु-प्रदाहमें ; पुराने चक्षु-प्रदाहमें जव कुछ पीले रंगका पीव वहता है, पर कोई दूसरी तकलीफ नहीं रहती।

हिपर-सल्फर ६, ३०—प्रमेहसे पैदा हुआ चक्षु-प्रदाह। आँखोमें स्पर्श सहन नहीं होता, दर्द और सर्दी सहन नहीं होती।

नाइट्रिक-एसिड ६, २००—गर्मी रोगसे पैदा हुए चक्षु-प्रदाह ; सुजाकके कारण चक्षु-प्रदाह।

जेक्विरेटी ३x—पीव बहनेवाला शुक्लमण्डलका प्रदाह ; चेहरा और गर्दनतकमें प्रदाह हो जाता है। दानेदार आँखोंका प्रदाह। पानीमें मिलाकर आँखोंमें डालनेसे लाभ होता है।

सल्फर ३, ३०—आँखोंकी पुतलियोंका प्रदाह और उसके चारों ओर लाल रंगके गोल-गोल घाव ; सुई गड़नेकी तरह दर्द, पानी लगनेसे दर्द बढ़ता है। गण्डमालाके कारण पैदा हुआ चक्षु-प्रदाह।

आँखोंके कोयोंपर (सफेद भागपर) छोटे-छोटे दाने होनेपर मर्क-सोल ६, ३०। आँखोंके प्रदाहके साथ पलकोंमें इसी तरह दाना होनेपर पल्स ६ या सल्फर ३०। प्रदाहके साथ पीव निकलनेपर, आर्जेण्टम-नाइट्रिकम ३, ३०। (जरूरत पड़नेपर २ बुन्द आर्जेण्टम-नाई θ आधा औंस पानीमें मिलाकर, आँखें धोनी पड़ती हैं)।

फास्फो ६, जेल्स ६, कैल्केरिया-आयोड ६x, कैल्के-कार्ब ६, सिलिका ६, स्टैफिसेग्रिया ६, आर्सेनिक ६, जिंकम ६ वगैरह दवाओंकी बीच-बीचमें आवश्यकता हो सकती है।

पथ्यादि—हल्का पुष्ट भोजन खाना चाहिये। मछली और मीठी चीजें खाना मना है। रोगीको साफ बिछावनपर रखना उचित है। गुलाब जल या कुछ गर्म दूधसे आँखें साफ करनी चाहियें। आठ ग्रेन फिटकिरी (या बोरासिक-एसिड) एक औंस पानीके साथ अच्छी तरह मिलाकर आँखें धो डालनेसे दर्द कम हो जाता है। बाँधा कोबीका पत्ता निचोड़कर उसके रसमें दो-एक बून्द शहद मिलाकर आँखोंपर लेप चढ़ा देनेसे फायदा होता है। ठण्डा पानी या बरफ किसी तरह न लगाना चाहिये। पीले या हरे रंगके कपड़ेके टुकड़ेसे आँखें ढँकी रखनी चाहियें।

आँखोंमें काला दाग पड़ना

चोट या बार-बार जोरसे खाँसी आनेके कारण कभी-कभी आँखोंसे खून गिरता है या आँखोंके सफेद भागमें काला दाग पड़ जाता है, इसीका नाम "कालशिरा या काला दाग पड़ना है।"

आर्निका ३—३० का सेवन और आर्निका θ (पाँच बून्द) आधा औंस पानीमें मिलाकर आँखोंपर पट्टी लगानेसे फायदा होता है।

कम दिखाई देना

(Amblyopia)

कारण—बहुतसे कारणोंसे कम दिखाई देनेकी बीमारी हो सकती है। बहुत छोटे या चमकीले पदार्थको बहुत देरतक स्थिर दृष्टिसे देखना बहुत सोना या ज्यादा नशा पीना, सर्दी लग जानेके कारण एकाएक पसीना रुक जाना, रज रुक जाना वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा—ज्यादा रस-रक्त निकलकर शरीरमें खूनकी कमी हो जानेके कारण, अगर कम दिखाई दे, तो चायना ६, ३० ; चायनासे फायदा न हो, तो फास्फोरस ६, ३०। बहुत ज्यादा नशा खानेसे नजर कमजोर पड़नेपर नक्स-वोमिका १x। ज्यादा खून एकत्र होनेके कारण दृष्टि-क्षीणता हो, तो बेलेडोना ६, ३०। मानसिक रजःस्राव रुककर दृष्टि-क्षीणता हो, तो पल्सेटिला ६, ३०। हृत्पिण्डके रोगके कारण होनेपर कैक्टस ६। तेज सर-दर्दके साथ क्षीण-दृष्टिमें, सैंगुइनेरिया ३। आँखोंकी पुतलीमें दर्द रहनेपर, सिमिसिफ्यूगा ३। आँखोंके सफेद भाग बहुत दर्द रहनेपर, स्पाइजिलिया ६ या कोलोसिन्थ ६। माथेमें रक्तकी अधिकता और नाकसे रक्त-स्राव होता हो, तो फास्फोरस ६। वातके कारण रहनेपर ब्रायोनिया ६। खूनकी कमीके कारण अगर दृष्टि क्षीण हो पड़े, तो फेरम ६, एसिड-फाड ६, आर्सेनिक ३०, चायना ६ या

युफ्रेशिया २x देना चाहिये। पाचन-शक्तिकी कमीके कारण यह रोग होनेपर, नक्स-वोमिका ३०, पल्सेटिला ३०, मर्क्यूरियस ६, चायना ६, सल्फर ३० या बेलेडोना ३ का प्रयोग करना चाहिये।

साधारण नियम—आँखोंमें धुआँ, धूल या तेज रोशनी न लगनी चाहिये। सीना या छोटे अक्षरोंमें छपी किताबें या अखबार पढ़ना मना है। जरूरत पड़नेपर आँखकी परीक्षाकर चश्मा लगाया जा सकता है। रक्त स्वल्पताके कारण दृष्टि-क्षीणता होनेपर पुष्ट और ताकत देनेवाली चीजें खाना, नदीमें स्नान, साफ हवाका सेवन प्रभृति कार्य लाभदायक है।

रतौंधी

(Night-Blindness)

बहुतसे मनुष्य हल्की रोशनीमें (या सूर्यास्तसे सूर्योदयतक) बिलकुल ही नहीं देख पाते; इसीका नाम रतौंधी है। फाइसोस्टिग्मा ३ के प्रयोगसे हमलोगोंको बहुत फायदा दिखाई दिया है। यकृतकी गड़बड़ीके कारण हो तो नक्स वोम देना चाहिये। हस्तमैथुन प्रभृति अनाचारोंके कारण हो, तो फास्फोरिक एसिड ३, ३०। हेलिबोरस-नाइग्रा ३, २००, चायना ६, बेलेडोना ६, लाइकोपोडियम ३०, हाइयोस ६, रैनेन ३०, नाइट्रिक-एसिड ३० वगैरह दवाओंसे फायदा होता है।

दिनौंधी

(Day-Blindness)

बहुतसे मनुष्यको तेज रोशनी दिखाई नहीं देता। "बोथ्रप्स" (bothrops) ६, ३० इस रोगकी प्रधान दवा है। सिलिका ३०, फास्फोरस ६, सल्फ्युरिक-एसिड ६, बेलेडोना ३०, स्ट्रैमो ६ वगैरह दवाओंसे फायदा होता है।

आंशिक अन्धापन
(Partial-Blindness)

किसी चीजका सिर्फ ऊपरी अंश न दिखाई दे, तो आरम-मेट ६। किसी चीजका दाहिना आधा अंश न दिखाई दे, तो लिथियम-कार्ब ६। किसी चीजका सिर्फ बायाँ आधा अंश दिखाई देनेपर, लाइको १२।

अर्द्ध-दृष्टि रोग
(Hemiopia)

किसी चीजका ऊपरी भाग या नीचेवाला भाग दिखाई न देनेका नाम "अर्द्ध-दृष्टि रोग" है। डाक्टर नार्टनका कथन है, कि कैल्के-कार्ब, चिनिन-सल्फ, एसिड-म्यूर, नेट्रम-म्यूर, रस-टक्स, सिपिया और स्ट्रैमो इस रोगकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। ये सभी दवाएँ ३—३० क्रमकी देनी चाहियें।

दृष्टि-क्लान्ति

किसी चीजकी ओर थोरी देरतक देखनेसे ही अगर आँखें थक जायें, तो कैल्केरिया-कार्ब ६ या नेट्रम म्यूर ३० का प्रयोग करना चाहिये।

एक फ्रेंच लेखकका कथन है कि वहुत देरतक लिखने-पढ़नेपर यदि आँखें वहुत थक जायँ, तो कई रंगके चमकीले रेशमी कपड़ोंके टुकड़ोंकी ओर देखनेसे, दृष्टि-क्लान्ति दूर होकर आँखोंको आराम मिलता है।

डेरा देखना

दाहिनी या वाईं किसी भी आँखसे टेढ़ा या डेरा दिखाई देनेपर ऐल्यूमिना ६ खूब फायदा करता है। पेटमें कृमिके कारण डेरा देखता हो, तो स्पाइजिलिया ३ या सांइना ३; हायोसायमस ३, जेलसि-

मियम ३, साइक्लामेन ३ या स्ट्रैमो ३ की बीच-बीचमें आवश्यकता पड़ सकती है।

जाला पड़ना
(Muscæ Volitantes)

इस रोगमें ऐसा मालूम होता है, मानो आँखोंके आगे छोटी-छोटी फतिंगियाँ या छोटा सूत जैसा कुछ या धूलका कण उड़ रहा है। पुराना बुखार, बहुत शुक्र-क्षय, खूनकी कमी वगैरह कई कारणोंसे यह रोग होता है। कारणका पता लगाकर असली रोगका इलाज करनेसे ही यह रोग अच्छा हो जाता है; परन्तु बहुतसे स्थानोंमें देखा जाता है कि कमजोरीके कारण ही यह रोग पैदा हुआ करता है। ऐसी जगह चायना ६ या एसिड-फास ३० प्रायः सभी लक्षणोंमें दिया जा सकता है।

दूरकी चीज़ न दिखाई देना
(Short-Sight)

जिनकी नजर कम हो या जो दूरकी चीज बिलकुल ही न देख सकते हों या धुँधली देखते हों, तो उनके लिये फाइसोस्टिग्मा ३—६ लाभदायक है।

धुन्द-रोग (Glaucoma)

कभी-कभी आँखोंके आगे अन्धेरा या कुहरा-सा दिखाई देता है, यही इस रोगका लक्षण है। आजतक रोगका कारण ठीक-ठीक निर्णय नहीं हो सका। शरीर खराब हो जानेपर ही अक्सर यह बीमारी होती है। किसी-किसी बीमारीके साथ भी यह बीमारी होती दिखाई देती

है। ऐकोनाइट ६, आर्जेण्ट-नाई ६, फास्फोरस ६, बेलेडोना ६, जेलसिमियम ३, स्पाइजिलिया ३, ओस्मियम ६ का लक्षणके अनुसार प्रयोग करना चाहिये।

तारकामंडल-प्रदाह (Iritis)

आँखकी पुतलीके चारों ओरके रंगीन मंडलको "तारकामंडल" कहते हैं। इसी तारकामंडलमें प्रदाह पैदा हो जानेपर अगर उसका ठीक-ठीक इलाज नहीं होता, तो आँखोंमें जाला पड़कर या मोतियाबिन्द होकर बिलकुल ही दिखाई नहीं देता।

वह प्रदाह बहुतसे कारणोंसे पैदा हो सकता है :—चोट लगना, वात या सुजाकके कारण।

साधारण लक्षण—आँखोंसे कम दिखाई देना या एकदम न दिखाई देना। दीये या सूर्यकी रोशनीमें तकलीफ, आँखें बन्द करनेपर दर्द, दोनों कनपट्टीमें सुई गड़नेकी तरह दर्द वगैरह।

चिकित्सा—यदि चोटके कारण तारकामंडल-प्रदाह हो, तो आर्निका ३ सेवन (और आर्निका θ दस बून्द, आधा पाव पानीमें मिलाकर दिनमें तीन-चार बार धोना चाहिये)। प्रदाहके साथ बुखार हो, तो ऐकोनाइट ३x। यदि दिमागपर हमला हो, तो आर्निका ३ या बेलेडोना ३। वातके कारण हो, तो ब्रायोनिया स्पाइजिलिया, युफ्रेशिया। ग्रन्थिवातके कारण हो, तो आर्सेनिक, कोलोसिन्थ, काक्युलस या सल्फर। गर्मी रोगके कारण हो, तो कैलि-कार्ब मर्क-सोल, एसिड-फास। सुजाकके कारण हो, तो एसिड-फास, मर्क-सोल, आर्जेण्टम नाइट्रिकम। ये सभी दवाएँ ६ शक्तिकी देनी चाहिये।

अंजनी या गुहौरी

(Hordeolum or Stye)

आँखोंकी पलकके ऊपर या नीचे एक तरहकी फुन्सियाँ होती हैं, इन्हें "अजनी या गुहौरी" कहते हैं। सर्दी लगना, कमजोरी वगैरह कारणोंसे अजनी होती है। पल्सेटिला ६—३० इसकी उत्तम दवा है। यदि पल्सेटिलासे फायदा न हो, तो हिपर-सल्फर ६। बार-बार फोड़ा होनेपर या फोड़ा सूखकर वह जगह कड़ी हो जानेपर सल्फर ३० या स्टैफिसेग्रिया ६। आँखोंकी ऊपरी पलकपर गुहौरी होनेपर—मर्क्यूरियस ३, सल्फर ३०, कास्टिकम ६, ऐल्यूमिना ६ फायदा करता है। आँखोंकी नीचेवाली पलकपर गुहौरी होनेपर—स्टैफिसेग्रिया ६, फास्फोरस ६, रस-टक्स ६ फायदा करता है। आँखोंके कोनेमें गुहौरी होनेपर, लाइको १२ या स्टैनम ६ देना चाहिये; पीव होनेपर—हिपर ६ या मर्क-सोल देना चाहिये।

पोल्टीस (या गर्म पानीका सेंक) देनेसे गुहौरी सहजमें ही फट जाती है। इसके बाद उसपर गर्म घी लगानेसे जल्द ही सूख जाती है।

पलक स्थिर भावसे रखनेपर, मगर ऐसा मालूम हो कि गुहौरी हुई है, तो मेनियेन्थिस देना चाहिये।

गुहौरी पकने या पीव होनेपर—लाइको।

गुहौरीके साथ पलकें लाल होनेपर—सिपिया।

गुहौरीमें दवा रखने या नोच डालनेकी तरह (रह-रहकर) दर्द हो, तो—स्टैफिसेग्रिया।

गुहौरीमें खिचाव मालूम होनेपर—ऐमोन-कार्ब।

गुहौरीमें टपकका दर्द और गर्म प्रयोगसे यह दर्द घटता हो, तो—हिपर।

गुहौरी छूनेसे बढ़नेपर—हिपर।

ऊपरी पलकपर गुहारी होनेपर—ऐमोन-कार्व ।

दाहिनी आँखकी गुहौरीमें—कैल्के-कार्व, नेट्रम-म्यूर, ऐमोन-कार्व कैन्थिरिस, टेप्लिज (Teplitz), जिजिया ।

वार-वार गुहौरी होना वन्द करनेके लिये—स्टैफिसेग्रिया, ग्रैफाइटिस, सल्फर ।

वायीं आँखमें गुहौरी – पल्सेटिला, स्टैफिसेग्रिया, इलैप्स, लाइको, युरेनियन-नाइट्रिकम ३x विचूर्ण ।

आँखोंकी पलक फड़कना
(Nictitation)

यदि आँखें वरावर फड़कती हों, तो पल्सेटिला ६ अथवा इग्नेशिया ६ देना चाहिये ।

पलकका लटक पड़ना

रोगी ऊपरी पलक उठा न सकता हो, इस कारण आँखोंमें धुआँ, दर्द वगैरह रह जाता है । आँखें थोड़ी खुलनेपर आँखोंसे पानी गिरता है और लाल हो जाती है ।

जेलसिमियम ३x—३० इसकी उत्तम दवा है । इससे लाभ न हो, तो ऐल्यूमिना, कास्टिकम, कोनायम, कैल्के-फास, नाइट्रिक-एसिड, नक्स, फास्फोरस, सिपिया, जिंकम प्रभृतिका लक्षणके अनुसार प्रयोग करना चाहिये । पहलेसे ही इलाज करना उचित है, नहीं तो आँखोंमें लकवा मार जा सकता है ।

पलकोंका सिकुड़ना

१। पलक अकड़कर बाहरकी ओर सिकुड़ जाये, तो एपिस ६ या आर्जेण्ट-नाई ६ (पलक फूल जाये या आँखोंसे पीव गिरे) और नाइट्रिक एसिड ६ (गर्मी रोगसे पैदा हुए उपसर्गोंमें) और हैमामेलिस θ (दसगुने पानीके साथ)) लगाना चाहिये।

२। पलक ऐंठकर भीतरकी ओर सिकुड़ जाये, तो कैल्केरिया-कार्ब ६, बोरैक्स ३, लाइकोपोडियम ३०, सल्फर ३० या मर्क्यूरियस ३ फायदा करता है।

पाकाशयकी गड़बड़ीमें (या स्नायविक दुर्बलतामें) अकसर "पलकोंके सिकुड़ने" का यह उपसर्ग शामिल रहता है। इसलिये, ठीक-ठीक चश्मा लगाना या नक्स-वोम, पल्स, लाइको वगैरह दवाएँ (जिनसे अजीर्ण रोग दूर हो) सेवन करना और स्वास्थ्यके नियमोंका पालन करना चाहिये। इससे रोगीकी स्नायविक-शक्ति बढ़ सकती है।

मोतियाबिन्द (Cataract)

चोट लगने या बुढ़ापेके कारण आँखकी पुतलीपर एक तरहका पर्दा पड़ जाता है; इससे धीरे-धीरे नजर कम होती जाती है और फिर बिलकुल ही दिखाई नहीं देता। यह बीमारी एक या दोनों आँखोंमें हो सकती है।

चिकित्सा—"सिनेरिया-मेरिटिमा-सकस" नये और पुराने दोनों तरहके मोतियाबिन्दकी उत्कृष्ट दवा है। इसे रोगी आँखमें एक बून्दकर, दिनमें तीन-चार बार बहुत दिनोंतक (पाँच महीने) देनेपर बहुतसे मनुष्य अच्छे होते सुने गये हैं। इस दवाको लगाते समय कैल्केरिया-फ्लुओरेटा १२x विचूर्ण सेवन करनेपर बहुत फायदा होता है। यदि

इससे फायदा न हो, तो कैनाविस इण्डिका ३ सेवन करना चाहिये। कोई-कोई फ्लुओरिक-एसिड ६ का सेवनकर भी अच्छे हुए हैं।

रोगकी प्रथम अवस्थामें आयडोफार्म २ विचूर्ण (खासकर बूढ़ोंकी आँखोंमें मोतियाविन्द होनेपर), कैल्के-फास ६x विचूर्ण (खासकर दाहिनी आँखोंमें रोग होनेपर), कास्टिकम ६, सिपिया १२, लाइको १२, फास्फोरस ६ वगैरह दवाओंका व्यवहार करनेसे मोतियाविन्द दूर हो जाता है—ऐसा करनेसे बहुतसे स्थानोंमें रोग आराम होता देखा गया है।

आँखोंमें कीड़ा घुस जाना—'आकस्मिक दुर्घटनामें'—"नाक, कान, आँखोंमें कीड़ा घुस जाना" देखिये।

आँखोंकी बीमारीके कई उपसर्ग और चिकित्सा

आँखोंमें जलन मालूम होना—बेलेडोना ६, आर्सेनिक ६, सल्फर ३०।

आँखोंमें सर्दी मालूम होना—एसिड-फास ६।

आँखोंमें भार मालूम होना या आँखें मींच न सकना—जेलसिमियम १x।

आँखें फूल जाना—एपिस, ६, रस-टक्स ६।

आँखें काँपना या फड़कना (आँखोंकी पुतली या पलक हिलना)—ऐगरिकस ६, पल्स ३।

आँखें सदा खुजलाना—सल्फर ३०, पल्स ३।

आँखोंसे पानी गिरना—युफ्रेशिया ३x, पल्स ३।

आँखोंसे गर्म पानी गिरना—आर्स ३x, ३०।

आँखोंसे स्निग्ध जल गिरना—पल्स ३, ३०।

[किसी-किसी वैज्ञानिकका कथन है, कि मनुष्यके आँसू रोगके बीजाणुको नष्ट, कर सकते हैं]

आँखें अड़कना या दर्द होना (रोगी आँखें छूने नहीं देता)—नेट्रम-म्यूर १२X चूर्ण—३०, ब्रायोनिया ६, हिपर-सल्फर ६, बेलेडाना ३।

आँखोंमें स्नायु-शूलकी तरह दर्द—आर्स, ३, जेल्स १X—३, स्पाइजिलिया ६—३०।

आँखें मानो **भीतरकी ओर** अकड़ गई हों, ऐसा मालूम होना—एसिड-फास ६, क्रोटन ६।

आँखें मानो **बाहरकी ओर** अकड़ गई हों, ऐसा मालूम होना—ब्रायोनिया ६, लाइको १२।

आँखोंमें **कुचल जानेकी तरह दर्द**—आर्निका ३, जेल्स १X। आँखोंमें "सुई वेधने या कट जाने" जैसा दर्द—ब्रायोनिया ३X—३०, नाइट्रिक एसिड ६।

धारदार काँटा गड़नेकी तरह दर्द (splinter like) मालूम होना—एसिड-नाइट्रिक ६, हिपर ६, ३०, थूजा ३०।

आँखोंमें "तीर चुभने जैसा दर्द"—एपिस ६।

आँखोंमें "नोच फेंकने" जैसा दर्द मालूम होनेपर—पल्सेटिला ३, अरम-म्यूर ६।

आँखोंमें "टनक" मालूम होना—बेल ३, हिपर।

आँखोंमें "दर्द एकाएक बढ़ जाये और एकाएक ही घट जाये" तो—बेल ६, सिड्रन ६।

आँखोंका दर्द "धीरे-धीरे बढ़ता हो और धीरे-धीरे घटता हो"—स्टेनम ६।

आँखोंका दर्द "आँखोंकी चारों ओर" फैल जाये—स्पाइजिलिया ३, मेजेरियम ३०।

आँखोंमें "ठीक एक ही समय दर्द शुरू हो"—सिड्रन ६।

आँखोंका दर्द "असह्य"—कैमोमिला १२।

आँखोंमें दर्दके बाद वह जगह "सुन्न" हो जाती हो—मेजे ६।

आँखोंका दर्द 'भीतरकी ओर' फैल जाये—आरम ६x चूर्ण, ३०।

आँखोंका दर्द "बाहरकी ओर" फैलता हो—ऐसाफिटिडा ३।

आँखोंमें "दर्दके साथ जखम"—कोनायम ६।

आँखोंमें "बिना दर्दके जखम"—कैलि-बाई।

आँखोंमें मानो "बालू पड़ा है," ऐसा मालूम होना—कास्टिकम ६, हिपर ३०, नेट्रम-म्यूर ३०।

सूर्यकी रोशनीकी अपेक्षा "गैसकी रोशनीमें" दर्दका बढ़ जाना—सल्फर ३०।

तेलकी तरह आँसू निकलनेपर—सल्फर ३०।

आँखोंमें "अकड़नेका भाव" मालूम होनेपर—नेट्रम-म्यूर ३०, आर्ज-नाई ६।

रातमें आँखोंका दर्द बढ़नेपर—आर्सेनिक ६, सिफिलि ३०।

धूप या तेज रोशनीमें दर्द बढ़नेपर—मर्क ३।

आँख हिलानेसे दर्दका बढ़ना—ब्रायोनिया ३, नेट्रम-म्यूर ३०, आर्ज-नाई।

सेंकनेसे आँखोंका दर्द "बढ़ना"—सल्फर ३०।

सेंकनेसे आँखोंका दर्द "कम होना"—हिपर ६।

आँखोंकी पुतली "खुली हुई"—बेल ६, स्ट्रैमो ३।

आँखोंकी पुतली **सिकुड़ी हुई**—साईना २x, २००, ओपियम ६, फाइसोस्टिग्मा ३।

डेरा देखना (तिर्यक दृष्टि)—सेण्टोनाइन २x, बेलेडोना ३, जेलसिमियम ३x, हायोसायमस ६।

वर्णान्धता या दृष्टि-विकार (colour-blindness) अर्थात् रंग न पहचान सकता हो—बेञ्जिनम डिनाइट्रिकम (benzinum dinitricum) ३, ३०, सैण्टोनाइन ३x।

दिनौंधी होनेपर—बोथ्राप्स ६। ("दिवान्धता देखिये)। पेकोन, लाइको, फास्फो, रैनान-बल्ब, साइली प्रभृति दवाएँ लक्षणके अनुसार प्रयोग करनी चाहिये।

रतौंधी होनेपर—बेलेडोना ६, नक्स-वोम ६, ३०, फाइसोस्टिग्मा ३, कैडमी-सल्फ, चायना, हेलिबोरस, लाइको, पल्स, हायोसायमस हिपर प्रभृति दवाओंकी आवश्यकता हो सकती है। ("राज्यन्धता" देखिये)।

क्षीण दृष्टि—फास्फोरस ६, कास्टिकम ६, टैबेकम ६।

धुँधला देखना—फास्फोरस ६, टैबेकम ६, कास्टिकम ६।

पलकोंके भीतर छोटी-छोटी फुन्सियाँ, प्रदाह और जख्म—जेक्युरिटी १x।

आँखोंके सामने "लाल या हरा रंग दिखाई देना"—फास ६।

आँखोंके सामने "पीला रंग दिखाई देना"—सैण्टो १x, ३x।

पढ़नेके समय "आँखें तुरन्त थक जानेपर"—जैबोरेण्डी ३, नेट्रम-आर्स ३—३०।

पढ़नेके समय मानो "अक्षर आपसमें सट जाते हैं"—नेट्रम म्यूरियेटिकम २०।

पढ़नेके समय मानो "अक्षर सब गायब हो जाते हैं"—साइक्यूटा ३।

कर्ण-रोग

(Diseases of the Far)

कर्ण-प्रदाह (Otitis)

अक्सर सर्दी लगकर "नया कर्ण-प्रदाह" पैदा हो जाया करता है और कंठ या नासा-गल-कोषकी दूषित अवस्था या किसी चर्म-रोगके साथ इसका कुछ-न-कुछ सम्वन्ध रहता है। कानमें "टपक", सूजन लाली और बुखारके साथ, कुछ कम या ज्यादा न सुन पड़नेका भाव, इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। कभी-कभी एकाएक दर्द बन्द हो जाता है और कानसे पीव गिरने लगता है। पहलेसे इलाज नहीं किया जाता, तो कानका भीतरी अंशतक आक्रान्त हो जाता है और धीरे-धीरे वदबूदार पीव निकलने लगता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—ऐकोनाइट १x (प्रदाहकी पहली अवस्थामें); बेल ३x (मस्तिष्कके उपसर्गों में ; रक्त-संचय); पल्स (खसराके वाद कर्ण-प्रदाह ; नोंच डालने या तीर लगनेकी तरह दर्द) ; मर्क-वाई ३x विचूर्ण (चेचकके वाद कर्ण-प्रदाह ; दर्द दाँततक फैल जाता है या गर्म शय्यापर सोनेसे वढ़ जाता है) ; कैमोमिला ३० (असह्य दर्द) ; सल्फर (आराम होनेकी ओर रोग वढ़नेपर)।

कई दवाओंके लक्षण—प्रथमावस्थामें (खासकर सर-दर्द और गलेमें दर्द रहनेपर) वेलेडोना ३x सेवन और फ्लानेल गर्मकर सेंक देना चाहिये। सर्दीसे पैदा हुए कर्ण-प्रदाहमें—पल्सेटिला ३ ; परन्तु यदि कानके भीतरतक दर्द हो और उसके साथ-ही-साथ बुखार रहे, तो ऐकोनाइट ३x का प्रयोग करना चाहिये। सुई भोंकनेकी तरह दर्द और कर्णमूल-ग्रन्थिमें असह्य दर्द रहनेपर कैमोमिला ६ देना चाहिये। कानमें टनक और दर्द तथा कानके नीचेकी गांठ फूल जानेपर, मर्क-सोल

६ से खूब लाभ होता है। ये दवाएँ देनेपर भी अगर दर्द कम न हो, तो प्लैण्टेगो θ देना चाहिये। रोग पुराना होनेपर नाइट्रिक-एसिड ६ या सल्फर ३० देना चाहिये। कानके बाहरी भागमें प्रदाह और वहाँ छोटी-छोटी पीव-भरी फुन्सियाँ होनेके लक्षणमें कैल्केरिया-पिकरिक ३ सेवन करनेसे और फुन्सियाँ रूईसे ढँके रहनेपर दर्द कम हो जाता है।

आनुसंगिक चिकित्सा—रूई या फ्लानेलसे कान ढँके रहना चाहिये, जिसमें कानके छेदमें सर्दी न लगने पाये। फ्लानेल या नमकीन पोटली बनाकर, गर्मकर या सूखा स्पंज खूब गर्मकर सेंकनेसे या दो-एक बून्द मूलेन आयल या गर्म सरसोंका तेल या पल्सेटिला θ कानमें डालनेसे भी दर्द कम हो जाता है।

कर्ण-शूल (Otalgia)

कर्ण-प्रदाहमें ज्वर और "टपकका दर्द" रहता है और कर्ण-शूलमें कानमें सिर्फ "शूल वेधनेकी तरह तेज दर्द" पैदा हो जाता है। यह दर्द कभी कभी दाँतकी जड़तक फैल जाया करता है।

सर्दी या चोट लगने, कानको बार-बार खोदने, कानमें पानी घुसने, कानका मैल और कानकी भूँसीके इधर उधर हिलाने, कानमें फुन्सियाँ या जख्म होने वगैरह कारणोंसे यह असहनीय दर्द पैदा होता है। खसरा या चेचककी बीमारीके बाद भी कभी-कभी कर्ण-शूल हुआ करता है।

चिकित्सा—सर्दी लगने या कानमें ठण्डा पानी जानेके कारण कानमें दर्द हो, तो ऐकोनाइट ३x। प्रमेहसे पैदा हुए कर्ण-शूलमें भी ऐकोन ३x फायदा करता है। चोट लगनेके कारण कानमें दर्द होनेपर आर्निका ३। डङ्क मारनेकी तरह दर्दमें एपिस ३। नोंच फेंकनेकी तरह या तीर बेधनेकी तरह दर्दमें पल्सेटिला ३x; सर्दीके कारण कर्ण-

शूल हो जाये, तो भी पल्सेटिला फायदा करता है। दाँतमें दर्दके साथ कर्ण-शूल होनेपर कैमोमिला १२ या मर्क-सोल ६ गुणकारी है। कर्ण-प्रदाह रोगकी "आनुसंगिक चिकित्सा" देखिये।

कानमें दर्द (Pain in the Ear)

कर्ण-प्रदाह, कर्णमूल-प्रदाह या कान मल देना प्रभृति कारणोंसे कानमें टनक या एक तरहका दर्द होता है। इसका कारण खोजकर उसका इलाज करना चाहिये। ऐकोन, वेल, कैमोमिला फेरम-फास, हिपर, मर्क, पल्सेटिला, सल्फर वगैरह इसकी उत्तम दवाएँ हैं ("कर्ण-रोग" की दवाएँ और "आनुसंगिक चिकित्सा" देखिये।

दर्दकी प्रकृतिके अनुसार चिकित्सा

पल्स ३ सेवन और रूईमें कई बुन्द मुलेन आयल (या प्लैण्टेगो θ) डालकर उसके द्वारा कानका छेद बन्द रखना, इसका उत्कृष्ट इलाज है। कानमें हमेशा दर्द करता रहे, तो मर्क ६। कानमें कोई चीज गड़ती हो या छेद होता है, ऐसे ढंका दर्द होनेपर कैप्सिकम ६। जलन पैदा करनेवाले दर्दमें आर्सेनिक ३। खोंचाकी तरह दर्दमें, पल्स ३; स्नायुशूलकी तरह दर्दमें, कैमो ६ या वेल ६; टपक-जैसे दर्दमें वेल ३; डंक मारने-जैसे दर्दमें एपिस ६; सुई गड़नेकी तरह दर्दमें कैमो या कैलि-कार्ब ६; छिल जानेकी तरह दर्दमें वेल ३, कैमो ६, पल्स। कुचल जानेकी तरह दर्दमें या कानमें चोट लगनेके कारण दर्द होनेपर आर्निका ३ का प्रयोग करना चाहिये। बच्चोंके कानके दर्दकी कैमोमिला ३—१२ अच्छी दवा है। निगलनेके समय दोनों कानोंमें दर्द हो, तो फाइटोलैका ३ का प्रयोग करनेसे खूब फायदा होता है।

कर्ण-व्रण

(Furuncle of the Meatus)

कानके छेदके आस-पास छोटी-छोटी फुन्सियाँ होकर दर्द होता है, सूजन होती है और रंग लाल हो जाता है; इससे सुननेकी ताकतमें बाधा पड़ती है।

चिकित्सा—टनककी तरह दर्द, रोगवाले स्थानका रंग लाल और सूजन होनेपर बेलेडोना ३x खाना चाहिये और बेलेडोना θ लगाना चाहिये। यदि बेलेडोनासे फायदा न हो, तो सिलिका ३०; पीब होनेकी तैयारी हो, तो शीघ्र पकानेके लिये हिपर-सल्फर ६। प्रदाह घटनेपर सल्फर ३० ("कानके भीतरका फोड़ा" रोग देखिये।

कानमें वृन्तविशिष्ट अर्बुद

(Polypus of the Ear)

थूजा ३० सेवन और अर्बुदके ऊपर थूजा θ लगाना बढ़िया दवा है। इससे फायदा न हो, तो नाइट्रिक-एसिड ६ सेवन करना चाहिये। गण्डमालावाले रोगियोंके लिये केल्केरिया-कार्ब ३० देना चाहिये।

कर्णनाद (Tinnitus Aurium)

इस रोगमें कानमें गुन-गुन, सों-सों, फस्-फस् या बाजेकी तरह आवाज सुन पड़ती है। दूसरे-दूसरे रोगोंके बादके उपसर्गोंके कारण या स्नायविक दुर्बलताकी वजहसे "कर्णनाद" रोग होता है। यह रोग बढ़कर धीरे-धीरे बहरापन भी पैदा कर सकता है।

चिकित्सा—कानमें घण्टेकी आवाज और गुनगुन शब्द होनेपर एसिड-फास्फोरिक ३, ३०। क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण कानमें

नाना प्रकारकी आवाजें आती हों, तो एसिड-नाई ६ या चायना २०० । मस्तकमें रक्त-संचयके कारण कर्ण-नादमें, वेलेडोना ६ । कानमें भनभनाहट, बादलकी गरज, संगीत, हिस्-हिस् शब्द सुन पड़ता हो, तो किनिन-सल्फ ३x ; कानमें भनभनाहट; सिसकारीकी आवाज, गाना या हिस-हिस शब्द सुन पड़े तो डिजि ३ सेवन करना चाहिये। सरमें चक्करके साथ कानमें गरजकी आवाज होना और कानसे कम सुनना, नेट्रम-सैलिसिलिक ३x, वहरापनके साथ कानमें घण्टेकी आवाज या जोरका शब्द सुन पड़े तो कार्बोन सल्फ ३, साइलिसिया ३, २००; गरज या वज्रकी आवाजके साथ वहरापन (परन्तु कुछ शोर-गुलका सुन पड़ना), ग्रैफाइटिस ६ । पुराने रोगमें सिर्फ एक मात्रा कैलि-आयोड् ३० देना चाहिये। हाइड्रैस्टिस ३ और मर्क-सोल ६ भी बीच-बीचमें आवश्यक हो सकते हैं। यदि कैके साथ कर्ण-नाद हो, तो विरेट्रम-ब्रेल्बम ३ । मोटर गाड़ीकी आवाजकी तरह आवज या "हिस्-हिस्" शब्द मिले हुए कर्णनादमें डिजिटेलिस फायदा करता है।

थियोसिनामिन २x, ३०—सब तरहके कर्णनादकी उत्कृष्ट दवा है।

कर्णमूल-प्रदाह (Parotitis)

वास्तवमें यह एक "साधारण बीमारी" है ("साधारण रोग" देखिये), कानकी बीमारी नहीं है। एक खास तरहके जीवाणु इस रोगके मुख्य कारण हैं, जो स्पर्श द्वारा फैलते हैं। दो-तीन सप्ताहतक अंकुरावस्थामें रहने बाद यह संक्रामक रोग अकसर बहुत व्यापक रूपमें दिखाई देता है (खासकर जाड़े या बरसातमें)। निचले जबड़ेके कोनेमें और कानके नीचे लार निकलनेवाली एक बड़ी गांठ (gland) है, इसीको "कर्णमूल" कहते हैं। यह कर्ण-मूल प्रदाहित होनेपर वह गांठ (एक या दोनों ओरकी गांठें अर्थात् कानके सामने और नीचेवाली

गाँठें) सूजती, लाल होती और कड़ी हो जाती है, दर्द करती है। बुखार, मिचली, लार बहना, गालका फूलना, चबाने और निगलनेमें तकलीफ, गलेका फूल उठना, गर्दन हिला सकना वगैरह इस रोगके "प्रधान लक्षण" हैं। साधारणतः चौथे दिन यह रोग पूरी तरह बढ़ा हुआ दिखाई देता है और आठ-दस दिनोंमें इसके सब उपसर्ग दब जाते हैं। इसलिये, इसमें डरकी कोई बात नहीं रहती, परन्तु यदि यह रोग गाँठों (glands) को छोड़कर हृत्पिण्ड, मस्तिष्क, स्त्रियोंके स्तन या पुरुषोंके अण्डकोषपर आक्रमण करे, तो भयंकर हो सकता है। यह रोग बच्चों और जवानोंको ही ज्यादा होता है। बूढ़ों या स्त्रियोंको बहुत कम होता है। तरी या सर्दी लगना वगैरह कारणोंसे यह रोग नये आकारमें पैदा होता है, परन्तु वक्त-बे-वक्त बुखार वगैरहकी वजहसे भी यह बीमारी पैदा हो जाती है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) गाँठें फूल जायें या चबानेमें कष्ट हो तो—मर्क-बिन-आयोड ६x विचूर्ण, फाइटो १x। छः-छः घण्टेका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये। (२) बुखारके लक्षणमें—ऐकोन ३x दो-तीन मात्रा ही यथेष्ट होती है। (३) मस्तिष्क, स्तन या अडकोष आदिमें बीमारी होनेपर—डिजि ३, स्पाइजि ३, कैक्टस १x का सेवन करना चाहिये। बेलेडोना, कार्बो-वेज, पल्स प्रभृति दवाएँ भी लक्षणके अनुसार देनी चाहियें।

ऐकोनाइट ३x, ३—बुखार, प्यास, बेचैनी, यंत्रणा वगैरह लक्षणोंमें (खासकर रोगकी पहली अवस्थामें)। जाड़ेके दिनोंमें सर्दी लगकर अगर बीमारी पैदा हो जाये।

मर्क्युरियस-बिन-आयोडेटस ३x, ३—इस रोगकी एक बहुत उत्तम दवा है (खासकर रोग कुछ बढ़ जानेपर, बुखार कुछ घटने और लार बहना बढ़ जानेपर इसका प्रयोग होता है।

पल्सेटिला ३x—अण्डकोष (testicles) पर रोगका आक्रमण हो जाये और कर्णमूल-प्रदाह होनेके बाद वायु रोग (mania) दिखाई दे कर्णमूल छोड़कर यह सूजन अगर स्तन या अण्डकोषपर आक्रमण करे, तो पल्स बहुत फायदा करता है।

बेलेडोना ३, ३०—गाल (खासकर "दाहिना गाल") फूले और लाल, प्रलाप, तेज दर्द, मस्तिष्कपर बीमारीका हमला होना वगैरह लक्षणोंमें इसका प्रयोग होता है; परन्तु फूला हुआ स्थान अगर बहुत कड़ा हो, तो "कार्बो-वेज" ३x चूर्ण—६ देना चाहिये। फाइटोलैका १x इस रोगकी सभी दवाओंमें फायदा करता है (सैण्डस मिल्स)।

रस-टक्स ३—कर्णमूल-ग्रन्थि ("खासकर बाईं ओरकी") फूली और गहरी लाल, तेज दर्द वगैरह लक्षणोंमें (खासकर बरसाती हवा लगकर बीमारी होनेपर)।

सल्फर ३०—पीव होनेकी आशंका हो, तो इसका प्रयोग करना चाहिये।

हिपर-सल्फर ६, ३०—रोगकी अन्तिमावस्थामें पीव पैदा होनेपर।

सिलिका ६, ३०—नासूर होनेपर।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको हमेशा खाटपर सुलाये रखना चाहिये और इस विषयपर नजर रखनी चाहिये कि ठण्डी या गीली हवा न लगे। रोगवाले अंगमें गर्म सेंक देना फायदेमन्द है। मतलब यह कि बाहरकी सब तरहकी सर्दी नुक्सान कर सकती है। ज्यादा दूध या मछली मांस खाना उचित नहीं है। रोगवाली जगह रूईसे ढँके रखना जरूरी है। रोगकी पहली अवस्थामें सागू, बार्ली, शोरवा वगैरह देना चाहिये। इसके बाद हल्का भोजन, पुष्ट और पतली चीजें खाना आवश्यक है। बिन-आयोडाइड आफ मर्करी ५ ग्रेन एक औंस ओलिव आयलके साथ मिलाकर, उसमें थोड़ी रूई तरकर, प्रदाहवाली जगहपर लगानेसे फायदा होता है।

कान बहना (Otorrhœa)

छोटी माता या खसराका बुखार आदि रोगके बाद और जिस बच्चेको कण्ठमाला रोग रहता है, उसके कानमें पीव हुआ करता है। यह बीमारी बहुत दिनोंतक अगर आराम न हो ; तो बहरापन और दूसरी खौफनाक बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं, इसलिये, इसे बन्द करनेका उपाय बहुत जल्द करना चाहिये। जवान आदमियोंके कानमें पीव होना, बहरापनका पूर्व-लक्षण है। बहुतसे आदमियोंका कहना है। कि "मूलेन आयल" इस रोगकी बढ़िया दवा है। जिस कानसे पीव बहता हो, उसमें नित्य मूलेन आयल कई बून्द डाल देना चाहिये।

चिकित्सा—डा० हाउटनका कहना है कि कैप्सिकम इस रोगकी अमूल्य दवा है। कानसे पीव और खून बहनेपर हमलोगोंने कई बार कैप्सिकम ६ का व्यवहारकर बहुत बार फायदा होता देखा है। गाढ़ा बदबूदार पीव और खून निकलता हो खासकर चेचक रोगके बाद कान बहनेपर) और उसके साथ कानकी चारों ओरकी गाँठें फूलने और दर्द होनेपर रोगवाले अगमें नोंच फेंकनेकी तरह दर्द होनेपर मर्क वा ६X विचूर्ण देना चाहिये। दुर्गन्ध-रहित पतला पानीकी तरह स्राव या पीव निकलना (खासकर खसरा या कर्णमूल-प्रदाहके बाद कान बहनेपर) पल्स ३—६। यदि पल्ससे फायदा न हो, तो केलि-बाई २ विचूर्ण देना चाहिये। पीव खूब बहता हो (खासकर मर्करी या पारेके अपव्यवहारके कारण बीमारी होनेपर) हिपर सल्फर ६ ; कानमें दर्द और पीव होनेपर आर्निका ३X सेवन और "आर्निका तेल" दो-एक बून्द कानमें डाल देना चाहिये। यदि ज्यादा मात्रामें बदबूदार पीव निकलता हो, तो आरम-मेट ६। कानके पीछेवाले भागमें और नीचे दर्द और सूजनके साथ बदबूदार पीव निकलता हो (खासकर शरीरमें पारेका दोष रहनेपर), तो नाइट्रिक-एसिड ६। पुरानी कान बहनेकी बीमारी, जो

बहुत कुछ चेष्टा करनेपर भी आराम न होती हो, तो सल्फर ३० या "कैल्केरिया-कार्ब" ३-३० ; जिन्हें सहजमें ही सर्दी लग जाती है और जो बराबर सर्दीकी बीमारी भोगा करते हैं, उनके लिये कैल्केरिया-कार्ब ३०, २०० महौषध है। ऐसी जगह हिपर भी फायदा करता है। कानके बाहर सूजन और कानके भीतरसे पतला पीव बहना—सिलिका ३० ; कान हमेशा बन्द रहना (किन्तु जोड़से नाक छिड़कने या कानके भीतर जोरसे आवाज होनेपर यह बन्द रहनेका भाव छूट जाता है), कानमें पपड़ी पड़ना वगैरह लक्षणोंके साथ कानसे पतला पीव बहता हो, तो सिलिका ३० फायदा करता है। खून-भरा और चिपकनेवाला बदबूदार पीव बहना, ग्रैफाइटिस ६। बहुत बदबूदार पीव बहना, सोरिनम ३०। खूब 'पुरानी' कान बहनेकी बीमारीमें टेल्यूरियम ६ लाभ करता है। पीव सूखकर अगर बहरापन पैदा हो गया हो, तो कुछ दिन सल्फर ३० और फास्फोरस ३ पर्यायक्रमसे प्रयोग करनेकी कोई-कोई सलाह देते हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—किसी तेज दवासे पीव बन्द करनेसे बहुत नुकसान होता है। साफ पानीमें, पानीका दूना दूध मिलाकर रोगीका कान धोनेके बाद ब्लाटिङ्ग कागजसे सूखा लेना चाहिये। इसके बाद रुईमें दो-एक बून्द सड़ा अतर या कार्बोलिक एसिडका धावन—कार्बोलिक एसिड एक ड्राम, ग्लिसरिन एक औंस, चुआया हुआ (distilled water) पानी पाँच औंस मिलाकर, कानमें डाल देनेसे, कान खूब साफ रहता है और पीनकी बदबू बहुत कुछ मर जाती है। पिचकारी कानमें न लगाना ही अच्छा है।

पाँच छः ग्रेन बोरासिक एसिड अच्छी तरह पीसकर, रातमें सोनेके पहले कानमें डाल देना चाहिये (रातमें किसी तरह पीव गिरना बन्द न किया जाय, बराबर पीव गिरता रहे, कोई हानि नहीं होगी) और सवेरे सुसुम (थोड़ा गर्म पानीसे काक धो डालना चाहिये)।

कर्ण-कुहरमें फोड़ा
(Abscess of the Meatus)

कानके भीतर (कर्ण-कुहर) में फुन्सी या फोडा होनेपर कानमें टनक, सूजन, थकडन और कभी कभी कानसे कम सुन पडने लगता है।

चिकित्सा—कान लाल और टनककी तरह दर्द, सर-दर्द, चेहरा तमतमा उठना—वेल १x यथासमय देनेसे प्रदाह वन्द होता है और पीव नहीं पैदा होने पाता। यदि वेलेडोनासे लाभ न हो, तो साइलि ६ देना चाहिये। पीव होनेपर मर्क-सोल ६; फोडा पकनेपर हिपर-सल्फर ६ का प्रयोग करनेसे पीव सहजमें ही निकल आता है। आराम होनेकी ओर बढनेपर सल्फर ३०। पहले खूब गर्म सेंक और उसके वाद दो-तीन वुन्द वेल θ एक कपडेपर डालकर कानके छेदमें बीच बीचमें रख देनेसे दर्द कम होकर फोडा जल्द अच्छा हो जाता है।

बहरापन (Deafness)

बहरापन तीन तरहका होता है—(१) स्नायविक क्रियाकी गडवडी या शारीरिक दुर्बलताके कारण, (२) दूसरे-दूसरे रोगोंसे पैदा हुआ और (३) मूक वधिरता (जन्मसे ही बहरा होना) के कारण। पहले दोनों तरहके बहरापन इलाजसे अच्छे हो सकते हैं।

सर्दी लगना, एकाएक ऊँची या तेज आवाजके कारण कान वन्द हो जाना, माथेमें घूसा या चोट लगना, नहानेके बाद कानका पानी अच्छी तरह पोंछ न देना या कानमें सख्त मैल इकट्ठा होना, कान बहना, मस्तिष्क या कठकी कोई बीमारी, किसी नयी या पुरानी बीमारीका बहुत दिनोंतक भोगना या क्विनाइन आदि तेज दवाओंके अपव्यवहार करनेके कारण बहरापन पैदा हो जाता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—शारीरिक कमजोरीके कारण बहरापन—फास ३ (स्नायविक बधिरता); चिनी-सल्फ ३x विचूर्ण (स्नायविक या कुछ समय के लिये बहरापन); कैक्टस ३x (बहरापनके साथ कलेजा धड़कना), पेट्रोल ३x, आर्स ३।

सर्दी लगकर बहरापन हो तो—पल्स ३ (नया बहरापन), कैलि-हाइड्रो ३x विचूर्ण या मर्क-वाई ६x विचूर्ण (पुराने रोगमें), डल्कामारा ६ (बरसातकी तर हवा लगनेके कारण बहरापन), ऐकोन २x (ठण्डी सूखी हवा लगनेके कारण); ब्रायो (वातके साथ बहरापन)।

बुखार आदिके बाद बहरापन पैदा होनेपर—बेल ३ (बहरापनके साथ सरमें चक्कर); चायना ३x या एसिड-फास (शरीरके रस-रक्त आदिका स्राव होने बाद बहरापन) पल्स ६, सल्फ ३०।

चमड़ेकी कोई बीमारी वगैरह दब जाने या कानका पीब बन्द हो जानेके कारण बहरापन—हिपर-सल्फर ६, सल्फर ३०, आरम ३x—२००।

तालुमूल-प्रदाह या उपजिह्वा फूलनेके कारण बहरापन पैदा होनेपर—मर्क-विन आयोड ६x, मर्क-कोर ६, कैलि-हाइड्रो ३x विचूर्ण—३०, ब्रैराइटा-कार्ब ६।

मस्तिष्कमें गहरी चोट लगनेके कारण या बहरापनके साथ "कानमें सुरसुरी होना"—आर्निका ३x।

कर्ण-नाद (बहरापनके साथ कानमें धीमी आवाज)—नेट्रम-सैलिसिलिकम ३, नक्स-वोम ३ या इग्नेशिया ६ (बहरापनके साथ सुननेकी तेजीमें), वैप्टीशिया २x (बहरापनके साथ कानमें गहरी गरज या बायीं कर्ण-मूल ग्रन्थियोंमें थोड़ा दर्द)। हमलोगोंने साइलिसिया २०० से कइएक रोगियोंको विशेष लाभ होते देखा है।

कई दवाओंके लक्षण—बहरापनकी पहली अवस्थामें मूलेन आयल ३-४ बून्दकी मात्रामें दिनमें दो बार कानमें डालना (या रुईके साथ रखना) बहुत फायदा करता है। सब शरीरकी कमजोरी या गण्डमालाके कारण पैदा हुई बधिरतामें बाजेकी आवाज या दूसरे-दूसरे शब्द सुन पड़े या मनुष्यकी बात न समझ पड़े और कानमें हमेशा एक तरहकी आवाज मालूम होनेके लक्षणमें, फास्फोरस ३०। रक्त-सञ्चयकी वजहसे सरके दर्दमें, कानमें एक तरहका शब्द अनुभव होता है, इसके साथ होनेवाले बहरापनमें, चिनिनम-सल्फ ३ विचूर्ण। बहुत ज्यादा शुक्र क्षय होनेके कारण, सुननेकी ताकत कम होनेपर, एसिड फास ६। बहुत दिनोंके बहरापनके साथ कान बहनेपर इलेप्स ३। तालुमूल बढ़नेके साथ बहरापनमें केल्के-फास ३x (Dr. Cooper)। रोगीकी अपनी बात ही उसके कानमें प्रतिध्वनित होती है या उसके कानमें सूखापन अनुभव हो, तो ग्रैफाइटिस ६। बुखारके बादके बहरापनमें ग्रैफाइटिस २००, सर्दीसे पैदा हुए नये बहरापनमें ऐकोनाइट ६, बेलेडोना ६ या पल्सेटिला ६ और पुरानी अवस्थामें मर्क्युरियस ६ देना चाहिये. बुखार या किसी दूसरी बीमारीके बाद बहरापन होनेपर, बेलेडोना ३, पल्सेटिला ६, सिलिका ३०, चायना ६, सल्फर ३० या एसिड-फास ३। कर्ण-गह्वरमें घाव हो अगर उसमेंसे स्राव बन्द होनेके कारण बहरापन हो जाय, तो सल्फर ३०, हिपर-सल्फर ६, अरम-मेट ३, कास्टिकम ६ या ऐण्टिम-क्रूड ६। कानमें मैल होने के कारण कम सुननेपर "कर्णमल" अध्याय देखिये। नाइट्रिक-एसिड, आयोड, आरम, मर्क-आयोड, कैलि-आयोड वगैरह दवाएँ बीचमें आवश्यक हो सकती हैं।

बच्चोंका कान मल देना या कानपर मार देना किसी तरह भी उचित नहीं है। नहाने बाद कानमें पानी न रहना चाहिये। कानमें कड़ा मैल होनेपर कुछ गर्म पानीके सहारे, पिचकारीसे मैल बाहर निकाल डालना चाहिये। कानमें डालनेवाली कोई दवा न देनी चाहिये।

श्रवन-शक्तिका ह्रास

(Hardness of Hearing)

सर्दी लगना, कानका प्रदाह, कानमें मैल होना या पीव होना, स्नायविक दुर्बलता वगैरह कारणोंसे, कानकी सुननेकी ताकत कम हो जाती है ।

चिकित्सा—जाड़ेके दिनोंकी सूखी ठण्डी हवा लगनेके कारण होनेपर—ऐकोनाइट ३x, कैमोमिला ६, पल्सेटिला ३ या मर्क ३ । बरसातकी तर हवा लगनेके कारण यदि कम सुन पड़े, तो डल्कामारा ६ । कानमें प्रदाह होनेके कारण हो और कानमें गुनगुनाहटको आवाज मालूम हो, तो बेलेडोना ३, कास्टिकम ६, साइलिसिया ६, सल्फर ३० । कानमें पीव या घाव अथवा पीव निकलना एकाएक बन्द होकर सुननेकी ताकत कम पड़ जाये, तो हिपर-सल्फ ६, सल्फर ३०, पल्सेटिला ६, मर्क ६, कैल्केरिया ६ । खसरा वगैरह बीमारियोंके बाद होनेपर—पल्स ३०, सल्फर ६, मर्क ३, कार्बो-वेज ३० । स्नायविक दुर्बलताके कारण होनेपर फास्फोरिक-एसिड १x—६, फास्फोरस ६ । ज्यादा मात्रामें पारा या मर्करी व्यवहार करनेके कारण पैदा हुई श्रवण-शक्तिकी कमीमें नाइट्रिक-एसिड ६ हिपर-सल्फर ६ आरम्-मेट ३x—२०० । क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण सुननेकी ताकत कम हो जानेपर, कैल्के-कार्ब ६ ; वृद्धोंकी श्रवन-शक्तिकी कमीमें—पेट्रोलियम ६ या साइक्यूटा ३ । मोह-ज्वरमें एकदम बहरे हो जानेपर—आर्जेण्ट-नाई ६ । केश कटवानेके बाद या सरमें सर्दी लगकर सुननेकी शक्ति घटी हो, तो लिडम ६ । नये चर्म रोगके बाद या खसरा, चेचक होने अथवा पाराके अपव्यवहारके बाद सुननेकी ताकत घट जाये, तो कार्बो-वेज ३x—२०० देना चाहिये ।

कानमें मैल (Earwax)

कानसे जो तेलकी तरह एक तरहका पदार्थ निकलता और जमकर कड़ा हो जाता है, उसे "मैल" कहते हैं। कान साफ रखनेके लिये बार-बार कान खोदनेसे, ज्यादा मैल होता है। किसी-किसीके कानमें मैल ज्यादा होता है, इस कारणसे दर्द होता है। किसीको मैल होता ही नहीं।

चिकित्सा—मैल जमकर पीब या बदबू होनेपर कोनायम ३ या कार्बो-वेज ३०। कानसे कम सुनता है, यद्यपि कानमें जरा भी मैल नहीं है, कान बहुत सूखा और कानका मैल भी सूखा और काला—लैकेसिस ६ या म्यूरियेटिक एसिड ६ या ग्रैफाइटिस अथवा स्पञ्जिया ३x या सल्फर ३० देना चाहिये। कानके मैलका रंग लाल हो, तो कोनायम ६।

आनुसंगिक चिकित्सा—तीन-चार दिन रातके समय बराबर कानमें कुछ गर्म तेल डालने और कान धोनेकी पिचकारीसे सुसुम पानीसे कान धोनेपर, मैल सहजमें ही निकल जाता है। रातमें बादामका तेल कुछ गर्मकर दो तीन बुन्द कानमें डालनेसे नींद भी अच्छी तरह आती है।

कानका एक्जिमा
(Eczema of Ear)

कानके बगलमें कभी-कभी लाल फुन्सियाँ (या इकजिमा) हो जाता है, तो वह खुजलाता या पकता है और कभी-कभी इससे बहरापन भी पैदा हो जाता है।

चिकित्सा—कानके पीछे अकौता होनेपर ग्रैफाइटिस ६ ; फुन्सियाँ चिकनी होनेपर बेल या पल्स ३ ; छाले-भरा अकौता हो, तो रस-टक्स ६ या विरे-विर ३x ; अकौता पुराना होनेपर, आर्स ३ या सल्फर ३x की व्यवस्था करनी चाहिये। मेजेरियम २०० और पेट्रोलियम ३ की भी बीच-बीचमें जरूरत पड़ सकती है। जो अकौता सर्दीके दिनोमें होता है और दूसरे समयोंमें अच्छा हो जाता है, उसमें सोरिनम २०० विशेष लाभदायक है।

आनुसंगिक चिकित्सा—पिचकारीसे कान धोनेके बाद उसे अच्छी तरह पोंछ देना चाहिये। गीला न रह जाये। सड़ा अतर रूईमें डालकर कानमें दे देना और कानके बाहर शुद्ध जैतूनका तेल (olive oil) अकौतापर लगाना चाहिये। रोज नहाना और सहजमें पचनेवाली चीजें खानी चाहियें।

सावधान, जिंक या गन्धकका मलहम कभी उसपर न लगाया जाये। उससे ऐसा मालूम होता है, कि एकजिमा आराम हो गया, पर वास्तवमें रोग आराम न होकर भीतरकी ओर बैठ जाता है और शरीरके दूसरे यन्त्रोंपर हमला करता है, जिससे रोगी मृत्युतक हो सकती है। हाँ जैतूनका तेल (olive oil) बिना किसी सन्देहके उसपर लगाया जा सकता है।

कानमें कीड़े आदिका घुसना—"आकस्मिक दुर्घटना" अध्यायमें "नाक, आँख और कानमें कीड़ा आदि घुसना" देखना चाहिये।

कर्ण रोगके कई उपसर्ग और दवाएँ

पेण्टिम-क्रूड ३—कानके पीछेवाले भागमें तर दाने होना।

एसिड-नाइट्रिक ६—चिबानेके समय एक तरहकी आवाज होती है। सुननेकी ताकत घट जाती है।

ग्रैफ़ाइटिस ३०—बराबर बहरापन, नाना प्रकारके बाजोंकी आवाज सुनना, सीढ़ी चढ़ते समय साँस बन्द होना।

कैलि-बाइक्रोम ६ **या हिपर-सल्फर** ६—गलेमें जख्मके साथ कानोंमें सुई गड़नेकी तरह दर्द।

कैलेण्डुला θ (प्रति बार पानीके साथ ५ बून्द मिलाकर सेवन करना चाहिये)—नहाने या दूसरी बीमारियोंके बाद बहरापन।

कैल्केरिया-कार्ब ६—पीब बहना, गाँठें फूलना।

ग्रैफाइटिस ३०, २००—बुखारके (खासकर आरक्त ज्वरके) बाद बहना।

चायना ३—कर्णनाद (कानमें आवाज)के समय बहुत तरहकी आवाजें सुनना।

चेइरैन्स-चेइरि (Cheiranthus Cheiri) θ—दो बून्द हिसाबसे फी बार सेवन करना चाहिये। इससे बहरापन दूर होता है।

टेल्यूरियम ६, २००—खुजली और सूजनके साथ कानके छेदमें टनककी तरह दर्द ; तीन-चार दिन बाद पानीकी तरह बदबूदार स्राव निकलता है। यह स्राव जिस जगह लग जाता है, वहीं खुजली हो जाती है ; कान नीली आभा लिये लाल, देखनेमें शोथकी तरह रहता है ; सुननेकी ताकत घट जाती है (Dunham)।

थूजा ३०—(रोज एक बार सेवन)—कानमें अर्बुद होने और पीव, खून वगैरह निकलनेपर।

थियोसिनामिन (Thiosinamine)३x—कानमें बहुतसे शब्द, जैसे—कानमें भों-भों, हिस्-हिस् करना।

फाइटोलैका ३x **या लैकेसिस** ६—निगलनेके समय दर्द।

बेलेडोना ६—ऊँची आवाज बिलकुल ही सहन नहीं होती।

बैराइटा कार्ब ६—श्रवण शक्तिकी कमी, कानकी चारों तरफकी ग्रन्थियोंका फूलना और दर्द।

नाकके रोग
(Diseases of the Nose)

नासिका-प्रदाह
(Rhinitis)

नाककी झिल्लियोंके प्रदाहमें, नाक गर्म फूली और लाल रहती है। बेलेडोना १x—३, ऐकोनाइट ३x, मर्क ३, इस रोगकी प्रधान दवाएँ हैं। पीव होनेपर—हिपर-सल्फर ६, मर्क ६ या कैलि-बाई ३ की व्यवस्था करनी चाहिये।

जुकाम (Coryza)

नाककी श्लैष्मिक-झिल्लीमें रक्त बढ़ जानेके कारण श्लेष्मा निकलनेका नाम "सर्दी" है।

ऐकोनाइट ३x (छींक, नाकके अगले भागमें जलन, ज्वर-भाव वगैरह लक्षणोंके साथ रोगके आरम्भमें); "कैम्फर" (देहमें सिहरावन मालूम होना या शीतावस्था ; ऊपर कहे ऐकोनाइटके लक्षण प्रकट होनेकी पहली दशामें दस-पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर पाँच-छः वार सेवन करनेसे रोग घट जाता है); "एलियम-सिपा" १x—३ (नाकसे बहुत पतली, तेज, खाल उधेड़नेवाली सर्दी निकलनेपर); "आर्सेनिक" ३x (नाक तथा आँखोंसे पतली-सर्दी निकलनेपर भी बीच-बीचमें नाक बन्द हो जाती हो); "पल्स" ३ (पकी हुई सर्दी—पीले रंगकी पीवकी तरह सर्दी); "नक्स-वोम" ६ (सर्दी बहना बन्द होकर नाक चिपक जाना ; सरमें दर्द, कब्जियत, दिनमें नाकसे पानी गिरता है और रातमें तथा खुली हवामें वह बन्द हो जाती है वगैरह लक्षणोंवाले नये सर्दी रोगकी यह प्रधान दवा है); सर्दी पुरानी होनेपर, "कैलि-बाई" ३x

चूर्ण ३ (गाढ़े हरे रंगके स्रावमें) और "केल्के कार्ब" ६ (बदबूदार स्रावमें) फायदेमन्द है और-और उपसर्गों और दवाओंके लिये, श्वास-यन्त्रके रोगी "नयी और पुरानी सर्दी" देखिये। रोगी हालतमें हल्का पथ्य देना चाहिये। रोग कम होनेपर, खुली हवामें, घूमना और सवेरे ठण्डे पानीसे नहाना फायदेमन्द होता है।

लाल नाक (Flushing)

नाकका बाहरी भाग लाल होनेपर बेल २x (नाकके बाहरी भागमें नये प्रदाहमें); सल्फर ३x (हल्के प्रदाहमें); अरम म्यूर ३x या फ्लुओरिक एसिड ३ (पुराने प्रदाहमें); एपिस ३x (भोजनके बाद नाक लाल होनेपर); बोरेक्स ३ (युवतियोंकी नाक लाल होनेपर)।

नाककी पीव-भरी फुन्सियाँ
(Pustule)

नाकमें पीव भरी फुन्सियाँ होनेपर, पेट्रोलियम ३ उत्तम दवा है।

नाककी जड़ (ROOT) के रोग

नाककी जड़में दबाव मालूम होनेपर, कैलि-बाई ३ ; सर-दर्दके कारण नाककी जड़में दबाव मालूम होनेके लक्षणमें, कैप्सिकम ३ लाभदायक है।

नाकके अगले भाग (TIP) के रोग

नाककी नोकमें फुन्सियाँ होनेपर, एमोन-कार्ब ३ ; पीव-भरी फुन्सियाँ होनेपर कैलि ब्रोम २x ; दर्द-भरा फोड़ा होनेपर बोरेक्स ३ ; लालीके साथ दबाव मालूम होनेपर, कैप्सिकम ३ ; खुजलाने और लाल

होनेपर साइलिसिया ६ ; जलनके लक्षणमें, आक्जैलिक-एसिड ३ ; खुजली और अकड़न होनेपर कार्बो-ऐनिमेलिस ६ लाभदायक है।

नाकमें यंत्रणा (Soreness)

अकड़नके लक्षणमें ग्रैफाइटिस ६ का सेवन और ग्रैफ़ाइटिसका मलहम बाहर लगाना चाहिये (रातमें सोनेके समय); नाकके छेदमें पीव, दर्द या पीव-भरी फुन्सी होनेपर, कैलि-बाई ३x विचूर्ण सेवन करना चाहिये।

नाकके छेदमें कीड़ा घुसना

नाकके छेदमें कीड़ा या कोई छोटी चीज बहुत दिनोंतक पड़ी रहने पर, नाकके छेदसे वदबूदार मवाद निकला करता है ; पिचकारी वगैरहसे उसे निकालसेकी कोशिश न करनी चाहिये। कानखोदनी, चिमटी या कोई फन्दा वगैरह बनाकर धीरे-धीरे उसे खींच लेना चाहिये। (सावधान, यह सब चीजें नाकके छेदमें ज्यादा दूरतक न घुसानी चाहियें)।

पीनस रोग (Ozaena)

नाककी श्लैष्मिक-झिल्लीमें जखम होकर, वदबूदार पीव या खूनके साथ श्लेष्मा या क्लेद निकलता है। नाककी झिल्लीका पतलापन और नाकके छेदमें पपड़ी होना इसका खास लक्षण है। यह रोग होनेपर नाककी उपास्थि या अस्थिका नाश होकर गन्ध लेनेकी ताकत चली जाती है। पारेका अपव्यवहार, गर्मी रोगका घाव, पुरानी सर्दी आघात (चोट), नाकके छेदमें पत्थरके टुकड़े आदिका जाना, वंशगत

पारा-दोष, शरीरका कमजोर हो जाना वगैरह कारणोंसे यह रोग होता है।

चिकित्सा—यह रोग मालूम होते ही कैडमियम-सल्फ ३x चूर्ण ३० सेवन करना चाहिये। नाक लाल, फूली और दर्द-भरी ; नाकके छेदमें गर्मी और थोड़ा-थोड़ा दर्द मालूम होना ; पीला या पीली आभा लिये बदबूदार पीब निकलना , कभी-कभी सूखा, आधा तरल पीब भरा स्राव वगैरह लक्षणोंमें—आरम-मेट ६। (नयी सर्दीमें) नाकसे बहुत-सा पानी निकलकर नाकका ऊपरी भाग लाल और दर्द होनेपर ; इसके बाद नाकका बिचला भाग दब जाता है और सूँघनेकी ताकत नष्ट हो जाती है, उसमेंसे पीब भरा या रक्त-मिला मवाद या मांसके धोवनकी भाँति बदबूदार पानी बहता है प्रभृति लक्षणोंमें—कैलि-बाईक्रोम ३। पारेके अदव्यवहारके कारण या उपदंश रोगके बाद या पिता मातामें पारेके दोषके कारण, पीनस रोग हो जाये और उसके साथ ही-साथ प्रदाह और सूजनके साथ नाकसे बदबूदार पीब या श्लेष्मा मिला पीब निकलता हो, तो एसिड-नाइट्रिक ६। बहुत दाह और जलनके साथ, नाकसे पानीकी तरह पीब निकलना तथा छींक और स्वरभंग वगैरह लक्षणोंमें (पुराना नाकका घाव), आर्सेनिक ३—३०। सिफिलिनम २००, आयोड ३ (ज्यादा बदबू और सड़ा घाव); मर्क-बिन-आयोड सैंगुइनेरिया, स्टिक्टा (सूखापन); जिंक, साइक्ला ३, ३० (लगातार छींक); हैपा ६, सोरिनम ३०, कैल्केरिया-कार्ब ३०, मर्क ३, ऐल्यू-मिना ६, सैंगुइनेरिया १x—६, पल्सेटिला ६ और अरम-मेट ३x—३० की भी समय-समयपर जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—नाकका छेद हमेशा साफ रखना चाहिये। गर्म पानीमें थोड़ा नमक मिलाकर, इस पानीसे रोगीके नाक और मुँह धोकर डालना फायदेमन्द है। हल्की चीजें खानी चाहियें।

नाकसे खून बहना
(Epistaxis)

यह रोग यदि साधारण ढंगका हो तो दवा देनेकी जरूरत ही नहीं होती। परन्तु बार-बार यह रोग होने लगे, तो इसे रोकना बहुत ही जरूरी है।

खून हमेशा एक ही तरफकी नाकसे न आकर, स्वर-नली या गल-कोष या आमाशयमें आ जाता है। नाकमें या सरमें चोट लगना, मस्तिष्कमें रक्तकी ज्यादती, यकृतकी बीमारी, गर्मी रोगका दोष, बहुत ज्यादा मेहनत और खाँसीकी वजहसे नाकसे खून गिरता है। कभी-कभी ऋतु बन्द होकर या बवासीरके मसेसे खून आना बन्द होकर, नाककी राहसे खून निकलने लगता है। सर्दीका स्राव रुका रहनेकी वजहसे नाकसे रक्त-स्राव हो सकता है।

चिकित्सा—फेरम-आयोड ३ विचूर्ण या मिलिफोलियम θ—३ या 'एम्ब्राग्रीशिया' ३ पानीके साथ खून बहनेके समय और बाद सेवन करना इस रोगकी उत्कृष्ट दवा है। कोई-कोई "नेट्रम-नाइट्रिकम २x विचूर्णको" नाकसे खून गिरनेकी "अव्यर्थ" दवा कहते हैं।

बराबर थक्का-थक्का शैरिक रक्त-स्राव होनेपर, हैमामेलिस १x खाना और दो-तीन बुन्द हैमामेलिस नाकमें डालनेसे रक्त-स्रावमें बन्द हो जाता है। मस्तिष्कमें खून अधिक होनेके कारण रक्त-स्रावमें—ऐकोनाइट ३x, बेलेडोना ३x, जेल्स या विरेट्रम-विर ३x। दुर्बलताके कारण नाकसे रक्तस्राव होनेपर चायना ३-३०, शराब आदि पीना या अजीर्णके कारण होनेवाले रक्त-स्रावमें, नक्स-वोमिका १x, ६; सड़नेकी अवस्थामें, लैकेसिस ६, ३० या आर्सेनिक ३, ३०; रजःस्रावके बदले या बवासीरके मसेसे रक्तका जाना बन्द होकर, नाकसे खून गिरनेपर ब्रायोनिया ६,

पल्सेटिला, सल्फर ३० या पोडो ६। माथे या नाकमें चोट लगनेके कारण नाकसे खून गिरनेपर, आर्निका ३x, रह-रहकर जल्दी-जल्दी खून बहनेपर, चायना ६ या कार्बो-वेज ३०। काले रंगके स्रावमें सिकेलि ३०। माथेमें टपककी तरह दर्द और रक्त-स्रावमें बेलेडोना ३। ऊपर कही हुई किसी दवासे अगर रोग कुछ ही घटकर रह जाये, तो "फेरम-पिक्रिकम" २x, ३x देनेसे बाकी अंश भी अच्छी तरह आराम हो जाता है।

आनुसंगिक चिकित्सा—दो-एक बून्द हैमामेलिस θ को सुडक लेनेसे, हल्का रक्त-स्राव अक्सर बन्द हो जाता है। साधारण गरम पानीमें थोड़ा नमक मिलाकर उससे नाक धो डालनेपर नाककी खरोंट बाहर निकल आती है और कभी-कभी खून गिरना बन्द हो जाता है। माथेके ऊपरी भागमें दोनों हाथ कुछ ऊँचाकर रखनेपर, खून गिरना बन्द हो जाता है। मुँह बन्दकर नाकसे साँस लेने छोड़नेकी क्रिया करनी चाहिये। गर्दन और नाककी जड़में बरफ या ठण्डा जल देना चाहिये। तेज रक्त-स्रावमें मेरुदण्डपर ठण्डा पानी या बरफ देना चाहिये। इससे लाभ न हो, तो जननेन्द्रियपर ठण्डा पानी या बरफ लगानेसे कम-से-कम थोड़ी देरके लिये तो रक्त-स्राव बन्द ही हो जाता है। इससे भी फायदा न हो और रोगीके जल्द ही मर जानेकी सम्भावना हो तो लिण्ट (lint) या खूब नरम वस्त्रकी पोटली बनाकर नाकका छेद बन्द कर देना चाहिये। शुद्ध सरसोंका तेल सुड़कना या ठण्डे पानीमें नहाना, हल्का और पुष्ट भोजन वगैरह लाभदायक है। नशा करना या उत्तेजक चीजें खाना पीना, ज्यादा पढ़ना लिखना या मेहनत करना मना है।

डाक्टर हेरिंगका कथन है, कि रोगीके भलेके लिये ही रोगीकी नाकसे प्रकृति खून गिरने देती है—यह "प्रकृति द्वारा रक्त-मोक्षण क्रिया" होती है, इसलिये, यह खून गिरना कभी भी बन्द न करना चाहिये;

परन्तु अगर चोट वगैरहके कारण खून गिरता हो या किसी कारणसे ज्यादा रक्त-स्राव होता हो, तो तुरन्त दवा देनी चाहिये।

नासा-ज्वर

नासिका-गह्वर (नाकके छेद) के भीतर लहसुन या प्याजकी फलीकी तरह सूजन हो जाती है, इसीका नाम "नासा" है। यह नाकके एक या दोनों छेदोंमें हो सकता है। नासा होनेके पहले अक्सर सर्दी हुआ करती है। पहले गर्दनमें थोड़ा-थोड़ा दर्द इसके बाद सब देहमें दर्द आँखें और चेहरा लाल, बुखार, बदनमें दाह वगैरह लक्षण पैदा होते हैं। नासा-ज्वर एकाएक शुरू होता है और एकाएक ही छूट जाता है।

तुरन्त तकलीफको हटानेके लिये लोग नासाको फोड़ देते हैं अर्थात नाकके भीतरका प्याजकी तरह फूला हुआ स्थान सुईसे छेद देते हैं; ऐसे उपायसे उस समय तो फायदा हो जाता है; परन्तु बार-बार इस बीमारीका हमला होनेपर तकलीफ बढ़ सकती है। इसलिये, नीचे लिखी दवाएँ खिलाकर रोगकी जड़ ही उखाड़ फेंकनी चाहिये।

बेलेडोना १x और **सैंगुइनेरिया** *θ* इस रोगकी प्रधान दवाएँ हैं। कोई-कोई यह दोनों दवाएँ पर्यायक्रमसे देकर लाभ उठाया हुआ बताते हैं। किसी-किसीके मतसे "कैल्के-कार्ब" ३ और "मेलिलोटस-ऐल्ब" ३ इस बीमारीकी-उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

कैडमियम-सल्फ ३, ३०—बदबूदार स्राव; नाक सिकोड़ न सकना वगैरह लक्षणोंमें लाभ करता है।

फास्फोरस ३—छूनेसे ही रक्त-स्राव, नाकसे हरा या पीला श्लेष्मा निकलना वगैरह लक्षणोंमें लाभदायक है।

सोरिनम ३०—पुराना नासा-स्राव, सर्दी मालूम होना, कमजोरी वगैरह लक्षणोंमें फायदा करता है। सोरिनमका सब तरहका स्राव बदबूसे भरा रहता है।

ओपियम, कैलि-बाइक्रोम, थूजा, मर्क-आयोड, फास्फोरस, टियु-क्रियम प्रभृतिका लक्षणोंके अनुसार जरूरत हो सकती है।

सूँघनेकी शक्तिका बिगड़ना या लोप होना

दूसरे रोग (खासकर पुरानी सर्दी) के कारण यह उपसर्ग होता है। सर्दी लगना या वातके कारण पैदा हुई नयी बीमारीमें, ऐकोन ३X फायदा करता है। बिगडी हुई सूँघनेकी ताकतकी पुरानी अवस्थामें, पल्स ३ या मर्क-वाई ६X या सल्फर ३० अक्सर फायदा करता है। कैल्के-कार्ब, सिपिया, जेल्स, कैलि-बाइक्रोम या कैलि आयोडकी भी कभी-कभी जरूरत पड सकती है।

नासिकाका अर्बुद
(Nasal Polypus)

नासा-रंध्रकी श्लैष्मिक-झिल्लीके "नासार्बुद" पैदा होता है। यह अर्बुद फूला हुआ श्लैष्मिक-झिल्लीके ढेर-सा होता है। अर्बुद अक्सर ही गिनतीमें अधिक, चिकने, कोमल, नीली आभा लिये हुए सफेद और इधर-उधर हटानेवाले होते हैं। कभी-कभी इसमें पीब भी पैदा हो जाता है। नकियाकर बातें करना, मुँहसे साँस लेना और छोड़ना, मुँह खुला रखना, पतली चीजें निगलनेमें तकलीफ; रोगवाली नाकका बाहरी भाग बढ जाना, नाक छिडकनेपर, नाकका अर्बुद नाकके छेदके पास झुक आना और साँस बन्द होना वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण है।

चिकित्सा—फार्मिका-रूफा १X—रोग चिकित्सामें सिद्धहस्त डा० कूपरका कहना है कि नासा रंध्रके अर्बुदकी इससे बढकर दूसरी दवा नहीं है। थूजा ३० का सेवन और थूजा θ बराबर लगाना फायदा

करता है। यदि अर्बुदसे खून निकलता हो, तो फास्फोरस ३ ; रोग पुराना होनेपर, सोरिनम ३०, टियुक्रियम θ लगानेपर बहुत फायदा होता है। सैंगुइनेरिया १x सेवन और सैंगुइनेरियाके विचूर्णका बाहरी प्रयोग भी बहुत बार फायदा करता है। कैल्के-कार्ब, मर्क-आयोड, कैलि-बाई और ओपियम वगैरह दवाओंकी भी परीक्षा करनी चाहिये।

नासा और कंठतन्तुओंका बढ़ना
(Adenoids)

इस रोगमें नासा और कंठ लसिका-सम्बन्धी तन्तु बढ़ जाते हैं ; तालुमूल-प्रदाह या नासिकाकी सर्दीके साथ यह बीमारी बनी रहती है। पाँच वर्षकी उम्रसे लेकर पन्द्रह वर्षकी उम्रतक बराबर यह रोग बढ़ता दिखाई देता है। इसके बाद बढ़नेके बदले, दुबला ही होता जाता है। नाकसे साँस छोड़नेमें तकलीफ, मुँहसे साँस लेना और छोड़ना, बार-बार सर्दी होना, कानमें दर्द, कानमें पीब, कुछ-न-कुछ बहरापन, बिछावनमें पेशाब, नर्त्तन रोग वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

बैराइटा-कार्ब ३०, कैल्के-कार्ब ३०, फास ६, नेट्रम-म्यूर ३०, पल्स ३, सल्फर ३०, सोरिनम ३० वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार दी जाती है। खास मौकोंपर, नश्तर भी लगवाया जा सकता है। मुँह बन्दकर नाकसे साँस लेना, पुष्ट भोजन और खुली हवाका सेवन और सूर्यकी रोशनीमें घूमना वगैरह स्वास्थ्यके नियम पालन करने चाहियें।

नासा रोगके कई उपसर्ग और दवाएँ

आरम-मेट ३x विचूर्ण, ३०—बदबूदार सड़ा खूनभरा स्राव और उसके साथ ही नाककी हड्डीका खुजलाना या घाव।

आर्जेण्ट-नाइट्रिक ६—नाक खुजलाना, नाक जरा भी रगड़नेसे खून गिरने लगता है।

आर्निका ३x—गिरने या चोट लगनेके कारण नाकसे खून गिरना। जरूरत पड़नेपर चोटवाली जगहपर आर्निका θ (२० गुना पानी मिलाकर) धोना चाहिये।

आर्सेनिक ६—जलन करनेवाला श्लेष्मा निकलना, नाक बन्द हो जानेके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

ऐलियम-सिपा ६—नाकसे बहुत-सा पानीकी तरह, जलन पैदा करनेवाला स्राव निकलता है। गर्म कमरेमें जानेपर छींकें आने लगती हैं।

ऐगरिकस ६—"बूढ़ोंकी" नाकसे रक्त-स्राव। काले रंगका खून-मिला बदबूदार स्राव।

ऐमोन कार्ब ६—रातमें नाक बन्द हो जानेके कारण साँस लेने और छोड़नेमें कष्ट ; नाकमें घाव ; खून-भरा श्लेष्मा निकलना ; नाककी नोक लाल ; सवेरे मुँह धोनेके वक्त नाकसे खून गिरता है।

युफ्रेशिया θ—बहुत जलन करनेवाले आँसुओंके साथ श्लेष्मा निकलना।

एपिस ३x, ३०—नाक फूली और लाल।

कार्बो-वेज ६, ३०—"नाकसे" बहुत दिनोंतक रक्त-स्राव होना ; कई हफ्तेतक रोज कितनी ही बार रक्तस्राव, चेहरा पीला।

कैलि-आयोड θ, ३०—बहुत-सा पानीकी तरह जलन करनेवाला बलगम निकलना और उसके साथ ही नाककी जड़में दर्द।

कैलि-बाइक्रोम ३०—बदबूदार, पीली आभा लिये, लसदार बलगम निकलना। नाकका जख्म ; गन्ध लेनेकी ताकतका घटना या एकदम न रहना।

कैक्टस १x—हृत्पिण्डके रोगके साथ नाकसे खून गिरना। स्राव बहुत जल्दी रुक जाता है; लगातार श्लेष्माका स्राव होता है।

कैल्के-कार्ब ६, ३०—बदबूदार और पीली सर्दी, नाकमें बदबू; गन्धवि-भ्रम (गन्धमें भ्रम हो जाना)।

क्रोटेलस ३—नाक और शरीरके दूसरे-दूसरे रन्ध्रोंसे खून गिरना।

जेल्सिमियम १x: ३—बहुत ज्यादा मात्रामें पानीकी तरह सर्दीके स्रावके साथ कँपकँपी और बुखार।

टियुक्रियम ६—चश्मा लगानेके कारण नाकमें कोई खराबी आनेपर इसका प्रयोग होता है। आँखकी परीक्षा कराने बाद बढ़िया चश्मा लगानेपर भी यदि वह नाकमें कोई खराबी लाये, तो उसके लिये यह बहुत बढ़िया दवा है।

नक्स-वोमिका ३—एक नाक बन्द हो जाती है और दूसरी नाकसे बलगम निकलता है। दिनके समय नाकसे पतला बलगम निकलता है, पर रातमें नाक बन्द हो जाती है। जलन करनेवाला स्राव।

पल्सेटिला ३—पीली आभा लिये हरे रंगका स्राव, स्वाद लेने और सूंघनेकी ताकतका घटना, गर्म कमड़ेमें साँस बन्द हो जाना।

मर्क्यूरियस ३—पीवकी तरह गाढ़ा हरे रंगका स्राव; नाककी हड्डीमें घाव।

सिना ३x—बराबर नाकमें सुरसुरी हुआ करती है, इसीलिये रोगी तबतक नाक रगड़ता और खोंटा करता है, जबतक उससे खून नहीं गिरता है। क्रिमिग्रस्त धातुके मनुष्योंमें प्रायः यह उपसर्ग दिखाई देते हैं।

सिपिया ३०—बारहो महीने जिनकी नाकसे पानीकी तरह या श्लेष्मा-भरी सर्दी निकलती रहती है, उनके लिये फायदेमन्द है।

हाइड्रेस्टिस १x, ३—पानीकी तरह पीली आभा लिये, हरा, गाढ़ा बदबूदार स्राव, यह जहाँ लगता है, वहीं खाल उधेड़नेकी तरह हो

आता है ; श्लेष्मा गलेमें गिरता है, दोनों नाकोंके छिद्रको अलग करनेवाली बीचकी हड्डी (septum) में घाव।

हिपर-सल्फर—नाकके घावमें।

रक्त-संचालन-यन्त्रके रोग

(Diseases of Circulatory-System)

हृत्पिण्ड और रक्तवहा-नाड़ी

वक्षस्थलके ठीक बीचोबीच, छातीकी हड्डीके पीछे और दोनों फेफड़ोंके बीचमें "हृत्पिण्ड (heart) या कलेजा" है इसका अगला भाग (apex) हमारे शरीरकी दाहिनी तरफ और निचला भाग (base) बाईं ओर झूला हुआ (चित्र देखिये)। यह हृत्पिण्ड एक खोखली चीज है, जिसका भीतरी भाग हमेशा खूनसे भरा रहता है। हृत्पिण्डके बाएँ भागमें जो खून रहता है, वह हमेशा साफ और देखनेमें लाल रहता है। उसके दाहिने भागमें जो खून रहता है, वह दूषित, देखनेमें काला या बैंगनी रंगका होता है। इस हृत्पिण्डसे छोटी-छोटी बहुत-सी नसें (नाड़ियाँ) निकलती हैं, इन्हीं नाड़ियोंसे हृत्पिण्ड शरीरमें सब जगह खून फेंका और पहुँचाया करता है, इसीलिये, इनका नाम "रक्तवहा नाड़ी" (खून ले जानेवाली नसें—blood vessels) है। इन खून ले जानेवाली नालियोंमें कितनोंको ही "धमनी", कितनोंको "शिरा" और कितनोंको "कैशिक-नल" या "कैशिक" कहते हैं। जिस नलमें लाल खून रहता है, उसे "धमनी (artery)" जिसमें बैंगनी या कुछ कालिमा लिये खून रहता है, उसे "शिरा" (vein) और केशकी तरह बहुत पतली नालियाँ, जो धमनी और शिराओंको आपसमें मिलाती हैं, उन्हें "कैशिका नाड़ी" (capillaries) कहते हैं। "धमनियाँ" हृत्पिण्डसे खून लेकर पहले फेफड़ेमें और शरीरके सब जगहोंमें पहुँचाती हैं ;

"शिराएँ" फेफड़े और देहके दूसरे अंशोंसे मैला खून लौटा लाती है और "कैशिका नाड़ी" धमनीसे शिरामें खून घुसानेके पुलकी तरह हैं। लगभग ३० सेकेण्डमें एक बून्द खून हृत्पिण्डसे निकलकर धमनी, कैशिक नाड़ी, शिरा वगैरहसे होकर शरीरके सब स्थानोंमें चक्कर लगाता हुआ हृत्पिण्डकी उसी जगहपर लौट आता है। इसी तरह खूनके दौरानके कामको (circulation of the blood) कहते हैं और यह काम हमारे शरीरमें बराबर हुआ करता है।

छातीकी बाईं ओर, हृत्पिडके ऊपर, हाथ या कान रखनेसे कलेजेका स्पन्दन-शब्द अच्छी तरह सुन पड़ता है। यह आवाज ठीक समान गतिसे हुआ करती है ; पहला शब्द कुछ देरतक, दूसरा उससे तेज गति और फिर बन्द। इसके बाद फिर इसी तरह लयके अनुसार चाल शुरू हो जाती है। ठीक मानो लब-डप, लब-डप शब्द, फिर बन्द, इसी तरह जीवनभर—जागते, सोते—सभी अवस्थाओंमें दिन-रात हृत्स्पन्दन बराबर हुआ करता है।

यदि एकाएक शरीरकी कोई "धमनी" कट जाये, तो लाल रंगके खूनकी धारा बराबर एक भावसे न निकलकर, ठोप-ठोप तेजीसे या झोंकसे बाहर निकलती है, यह बाहर निकलनेकी भी एक मात्रा है—यह भी हृत्पिण्डके प्रत्येक स्पन्दन या चालके अनुसार होता है ; परन्तु अगर कोई शिरा कट जाती है, तो उससे कालिमा लिये रक्त-प्रवाह झोंकसे या तीरकी तरह तेजीसे निकलकर धीरे-धीरे सम-भावसे निकलता है या बून्द बून्द गिरा करता है। इसका यही कारण है, कि धमनियोंके साथ कलेजेकी चालका तो मिलान है ; परन्तु शिरा साथ हृत्पिण्डका वैसा कोई विशेष संयोग नहीं है।

धमनीका स्पन्दन (या गति, चाल) हृत्पिण्डकी चालके अनुरूप ही होता है। जितने झोंकके साथ खूनका दबाव या बहाव धमनियोंमें होता है, धमनीका स्पन्दन भी उसी तरह हृत्पिण्डके स्पन्दनकी तरह हुआ

करता है। इसलिये धमनीमें जो स्पन्दन मालूम होता है, उससे हृत्पिण्डकी पूरी-पूरी अवस्था (अर्थात् हृत्-स्पन्दनका फलाफल) अच्छी तरह समझमें आ जाता है। हाथकी कलाईमें, पैरकी घुट्ठीके पास, गलेमें, कपालकी रगोंमें या त्वचाके बहुत पास जो नसें हैं, उन्हें छूनेसे ही वहाँकी धमनीका (या नाड़ीका) स्पन्दन मालूम हुआ करता है। चिकित्सक हमेशा रोगीकी भलाईसे धमनीका स्पन्दन मालूम किया करते हैं। इसीका नाम "नाडी देखना या हाथ देखना" है। हमारा प्रकाशित "नर-देह परिचय पुस्तक देखिये।"

वातजनित ज्वर, बहुत शारीरिक या मानसिक परिश्रम करना, उत्कंठा, नाम मात्रके लिये विश्राम लेना वगैरह कारणोंसे जवानोंको भी आजकल हृत्पिण्डके रोग होते देखे जाते है और इन्फ्लुएञ्जा, मूत्र-ग्रन्थियोंके रोग, "ऐथिरोमा" नामक अर्बुद प्रभृतिकी बीमारी आदिके कारण अपेक्षाकृत वयःप्राप्त मनुष्योंको भी हृद्रोग हो जाया करता है।

नाड़ी (Pulse)

नाड़ीकी कई अवस्थाएँ

नाड़ी परीक्षा—ऊपर नाडी देखनेकी बात कही गयी है। मणि-बन्ध (अर्थात् हाथकी कलाईके पास) की करास्थिके बगलमें स्थित धमनीके भीतर होकर हृत्पिण्डसे खूनका प्रवाह आता है, उसी धमनीको लोग साधारणतः "नाडी" (pulse) कहते हैं। सभी जानते हैं कि रोगकी परीक्षाके लिये नाडी देखना जरूरी है, परन्तु बहुत दिनोंकी जानकारी और अभ्यासके बिना किसीको अच्छा नाड़ी-ज्ञान नहीं हो सकता। अंगूठेके ऊपर ठीक समसूत्रमें कलाईको छूनेसे "नाडी-स्पन्दन" मालूम होता है। तीन अंगुलियोंसे कलाई जरा दबाकर बहुत सावधानीसे नाड़ी देखी जाती है।

नाड़ी देखते समय रोगीके हाथकी कोई जगह न दबे या बन्द न हो जाये। इसपर ख्याल रखना चाहिये कि नाड़ी-परीक्षाके समय नाड़ीकी **गति** (या फी मिनट नाड़ी-स्पन्दनकी संख्या), स्पन्दनकी **धारा** (अर्थात् एक स्पन्दनके बाद दूसरा ठीक नियमित रूपसे होता है या नहीं), **प्रकृति** (अर्थात् नाड़ी पूर्ण, कठीन, कोमल, स्थूल, सूक्ष्म, काँपती हुई, सविराम या लुप्त वगैरह है या नहीं) प्रभृति नाड़ीका अलग-अलग अवस्थाओंके प्रति विशेष दृष्टि रखें।

विभिन्न अवस्थाओंकी नाड़ी—परीक्षाके लिये नाड़ीपर अंगुलियाँ रखनेपर रोगीकी नाड़ी "मोटी" मालूम हो, तो उसे "पूर्ण" (full) नाड़ी कहते हैं। 'ज्यादा मोटी' मालूम होनेपर उसे "स्थूल" (large) नाड़ी कहते हैं। 'बहुत पतली, मालूम होनेपर "सूक्ष्म" या क्षुद्र (small) नाड़ी ; बहुत ही पतली (अर्थात् सूतकी तरह पतली) मालूम होनेपर, उसे "सूत्रवत्" (thready) नाड़ी ; कड़ी मालूम होनेपर, उसे "कठीन" (hard) नाड़ी ; नरम मालूम होनेपर "कोमल" (soft) नाड़ी ; 'सबल' मालूम होनेपर "बलवती" (strong) नाड़ी ; कमजोर मालूम होनेपर "क्षीणा" (weak) नाड़ी ; मणि-बन्धमें नाड़ी बिलकुल ही मालूम न हो, तो उसे "लुप्त" (pulseless) नाड़ी ; अंगुलीसे दबानेसे ही यदि नाड़ीका स्पन्दन 'बन्द हो जाये, तो "संकोचनिय या चाप्य" (compressible) नाड़ी ; अंगुलीसे दबाने नाड़ीका स्पन्दन बन्द न होकर चलती रहे, तो 'असंकोचनीय या दुश्चाप्य' (incompressible) नाड़ी ; नाड़ीका स्पन्दन द्रुत मालूम होनेपर "द्रुत" (quick) नाड़ी ; नाड़ीका स्पन्दन धीरे-धीरे होता हो, तो "मृदु या धीर," (slow) नाड़ी ; नाड़ीकी स्पन्दन गति 'एक-भावसे, होती रहे, तो "सम-भाव विशिष्ट" (uniform या regular) नाड़ी। नाड़ीकी स्पन्दन-गति 'एक भावसे' न होती रहनेपर "असम" (erre-gular) नाड़ो ; नाड़ी चलती-चलती कुछ देरके लिये अगर उसकी

गति स्थगित हो जाती हो, तो "सविराम" (intermittent) नाड़ी कहलाती है। नाड़ी झोंका देती हो (अर्थात् चिकित्सककी अंगुलीमें जोरसे धक्का देती हो, तो उसे उत्क्षेपयुक्त या उल्लम्फनशील" (jarking) नाड़ी कहते हैं। अंगुली लगानेसे अगर रोगीकी नाड़ी काँपती है, ऐसा मालूम होता हो, तो उसे "कम्पमान" (tremulous) नाड़ी कहते हैं। चिकित्सककी अंगुलीमें "दो-दो बार नाड़ीका प्रतिघात" मालूम होनेपर उसे "द्वगुणित-स्पन्दनशील या द्विघाती" (dicrotic नाड़ी कहते हैं।

स्वस्थ और रोगी नाड़ीका लक्षण

स्वस्थ नाड़ी—स्वस्थ—निरोग अवस्थामें नाड़ी बहुत कुछ "पूर्ण" (moderately full), "सम-भावसे चलनेवाली" (uniform) और "मृदु" *अर्थात् अंगुलीके नीचे धीरे-धीरे चलती है (swelling slowly under the fingers*)। स्त्री और बच्चोंकी नाड़ी पुरुषोंकी नाड़ीकी अपेक्षा ज्यादा तेज रहती है। बुढ़ापेकी नाड़ी कड़ी हो जाती है। अलग-अलग उम्रमें नाड़ी स्पन्दन फी मिनट अक्सर इस तरह होता है :—
जन्मकालमें १४० ; बहुत बचपनमें १२५ ; बालकपनमें १०० , जवानीमें ६० ; प्रौढ़ावस्थामें ७५ ; बुढ़ापेमें ७० ; बहुत बुढ़ापेमें ५० ('नाड़ी-स्पन्दन' देखिये)।

रुग्न नाड़ी—स्वस्थ अवस्थामें नाड़ी जिस तरह पूर्ण, मृदु और सम भावकी रहती है, उसमें गड़बड़ी होनेसे ही नाड़ी "बीगड़ी या रोगी" हो गयी है, यह समझना चाहिये (अगला अनुच्छेद देखिये)।

नाड़ी हमारे मनका वाहनभर है

आजकलके विज्ञानकी खोजके कारण यह निःसन्देह रूपसे प्रमाणित हो गया है कि हमारी नाड़ी हमारी मानसिक अवस्थाके अधीन है अर्थात् मनुष्यका मन अपने शरीरके रक्त-प्रवाहको नियन्त्रित कर सकता है।

जैसे—मान लीजिये कि एक तख्तेके बीचमें डोरी बाँधकर उसे इस तरह लटका दिया जाये, कि वह जमीनके साथ ठीक समानान्तर (parrallel) रहे और मान लीजिये, कि उस तख्तेपर किसी मनुष्यको सुलाकर फीतेसे उसे तख्तेके साथ बाँध दिया जाये। इस अवस्थामें यदि यह मनुष्य पैरकी बात सोचे (अर्थात् अपनी इच्छा-शक्तिकी सहायतासे, अपने शरीरके खूनका प्रभाव पैरकी ओर बहाये), तो उसके पैरकी ओरका तख्ता झुक जायगा और यदि वह अपने माथेके विषयमें सोचे (अर्थात् अपनी इच्छा-शक्तिकी सहायतासे अपने शरीरका खून सरकी ओर बहा सके), तो माथेकी ओरका तख्ता झुक जायगा।

नाड़ीकी विविध अवस्थाओंसे मालूम होनेवाले रोग और उनकी दवाएँ

पहले अनुच्छेदमें रोगी-नाड़ीके विषयमें कहा गया है कि बीमार पड़नेसे ही रोगीकी नाड़ी विकृत हो जाती है (अर्थात् रोगीकी नाड़ीकी गति और आयतन आदि बदल जाते हैं), रुग्न-नाड़ीके कई उपसर्ग और उनकी दवाएँ नीचे लिखी जाती हैं :—

नाड़ीकी अवस्थासे मालूम होनेवाले रोग—नाड़ी 'द्रुत', पूर्ण और कठिन होनेपर समझना चाहिये कि रोगीको "बुखार या प्रदाह" हुआ है; तुरन्त यदि नाड़ी बहुत द्रुत और क्षुद्र हो, तो उससे रोगीकी "कमजोरी" मालूम होती है। पूर्ण नाड़ी "तरुण रोग" या "रक्ताधिक्य" बताती है। दुर्बल नाड़ी "रक्त-स्वल्पता" और "सर्वाङ्गीण दौर्बल्य" बतलाती है। अनियमित नाड़ी या काँपती हुई नाड़ी या नाड़ी अगर चिकित्सककी अंगुलीमें तेजीसे अथवा जोरसे धक्का देती हो, तो समझना चाहिये कि रोगीको हृत्पिण्डका कोई रोग हुआ है। नाड़ी सविराम हो जाये (अर्थात् नाड़ी चलती-चलती क्षणभरके लिये रुक जाये), तो

"अजीर्ण" या "हृत्पिण्डका रोग" या बहुत धूम्रपान या चाय पीनेका "अनिष्ट फल" पैदा हुआ है, यह समझना चाहिये। नाड़ीका दो स्पन्दन (अर्थात् पर्यायक्रमसे नाड़ीका "स्थूल" और "क्षुद्र" स्पन्दन चिकित्सककी अगुलीमें मालूम होता हो), तो समझना होगा कि रोगीको "सान्निपात-विकार" या "बहुत अधिक तापवाला कोई तेज बुखार" हुआ है। काँपती हुई नाड़ी रोगीको अत्यन्त "अवसन्न या सकटापन्न" अवस्थाका परिचायक है। नाड़ी सूतकी तरह चलनेपर समझना चाहिये कि रोगीको "हैजा, रक्त-स्राव या तेज बल क्षयकर" रोग हुआ है। भोजनके बाद ही या सन्ध्याके समय रोगीकी नाड़ीकी स्पन्दन गति बढ़ जाये, तो समझना चाहिये कि 'यक्ष्मा' या 'क्षय-ज्वर' (hectic fever) हुआ है।

रोगी नाड़ीकी कई प्रधान दवाएँ

आरम-मेट—नाड़ी तेज, क्षीण, असम।

आर्सेनिक—नाड़ी क्षुद्र, द्रुत, सूतकी तरह और सविराम।

एकोनाइट—नाड़ी द्रुत, कठिन और बलवती।

एपिस्टम-टार्ट—नाड़ीका स्पन्दन अगर सुन पड़ता हो (audible)।

एसिड म्यूर—नाड़ी द्रुत, क्षुद्र, क्षीण, नाड़ीका प्रत्येक तीसरा आघात क्षणभरके लिये बन्द हो जाता है (intermits every third beat)।

ओपियम—नाक घरघरानेके साथ नाड़ी पूर्ण और धीर।

कोलचिकम—सूतकी तरह नाड़ी।

कोटिलस—सूतकी तरह नाड़ी।

कैटिगस θ—नाड़ी चंचल, असम, सविराम दुर्बल।

ग्लोनोइन—नाड़ी कठिन, नाड़ीका हर एक घात (beat) मालूम हो। गति तेज ; पर्यायशील—एक बार कम, एक बार ज्यादा।—चलने, हिलने-डुलने और सरमें दर्द होनेपर स्पन्दन बढ़ता है। सर्दी-गर्मीमें नाड़ी मृदु और दुर्बल।

जेलसिमियम—कोमल, क्षीण नाड़ी, सहजमें ही अनुभवमें नहीं आती ; द्रुत, मृदु और पूर्ण।

डिजिटेलिस——नाड़ी असम, क्षुद्र, दुर्वल, सविराम ; नाड़ी पूर्ण और कठिन ; विश्रामके समय मृदु ; हिलने-डुलनेपर तेज हो जाती है। तीसरा, पाँचवाँ और सातवाँ स्पन्दन अनुभवमें नहीं आता।

फास्फोरस—नाड़ी भरी, पूर्ण, कठिन, द्रुत, एक वार महीन, फिर प्रायः दूनी मोटी।

लैक्टीशिया—दबी हुई नाड़ी।

विरेट्रम-विर (२x)—नाड़ी पूर्ण, धीर, शिथिल, परन्तु कठिन ; क्षीण, सूतकी तरह, असम और सविराम।

लारासिरेसस—नाड़ी वहुत धीमी।

सिकेलि—नाड़ी क्षुद्र, द्रुत, संकुचित और सविराम।

नाड़ी स्पन्दनके अनुसार दवाएँ

नाड़ी पूर्ण और बहुत बलवती—ऐकोनाइट, आरम, वेलेडोना ओपियम, विरेट्रम-विर।

नाड़ी सविराम—कार्बो-वेज, डिजिटेलिस, आइवेरिस, मर्क, सिकेलि, लाइको, नेट्रम-म्यूर, स्पाई, विरे-विर, क्रेटिगस θ, ऐकोन, वेल, नक्स-वोम, एसिड फास, फास। (डा० रिचार्डसन कहते हैं कि वहुत अधिक मानसिक परिश्रम, शोक, दुःख, निराशा, व्यवसायमें हानि, क्रोध आदिके कारण नाड़ी अक्सर सविराम हो जाती है)।

नाड़ी (हरएक तीसरा, चौथा, पाँचवाँ, छठा या सातवाँ स्पन्दन अनुभवमें नहीं आता)—एसिड-म्यूर, डिजि।

नाड़ी असम—आर्निका, आर्स, आरम, कैक्टस, कैंटिगस, डिजि एसिड-हाइड्रो, आइबेरिस, लैके, लाइको, नैजा, फास-एसिड, नेट्रम-म्यूर, स्पाइजिलिया, टैबेकम, विरेट्रम-विर।

नाड़ी द्रुत—ऐकोन, ऐण्टिम-टार्ट, बेल, जेल्स, आइबेरिस, लाइको, नैजा, फास्फो, डिजि, कैंटिगस।

नाड़ी द्रुत (केवल सवेरे)—आर्सेनिक, सल्फर।

नाड़ी धीर गति—कैम्फर θ, कैनाबिस इण्डिका १x, जेलसिमियम, डिजिटेलिस।

नाड़ी (पर्यायक्रमसे द्रुत और धीर गति होनेपर)—जेलसिमियम, डिजिटेलिस, ग्लोनोइन।

नाड़ी कोमल या दब जानेवाली—आर्स, जेल्स, फास, विरे-विर, फेरम-फास।

नाड़ी कठिन या दुश्चाप्य—ऐकोन, बेल, ब्रायो, हायोस, स्ट्रैमो बार्बेरिस, चेलिडो, ऐण्टिम-टार्ट, कैन्थरिस, कैक्टस, साइना चायना, डिजि, हिपर लैकेसिस, मर्क, सल्फ, नक्स-वोम, फास्फोरस, सिपिया, सिलिका।

नाड़ी क्षीण, चंचल, लुप्तप्राय या सूतकी तरह—आर्स, आरम, कैक्टस, कैम्फर θ, डिजि, जेल्स, एसिड-हाइड्रो, लोरो, लैके, फास्फो, फास-एसिड, एसिड म्यूर, स्पाई, विरे ऐल्ब विरे-विर, फेरम मेट।

नाड़ी उछलती हुई—ऐकोन, आर्निका, आरम, प्लम्बम।

नाड़ी काँपती हुई—ऐण्टिम टार्ट, कैल्के कार्ब, स्पाइजि, आर्स, साइक्यूटा, रस-टक्स, सिपिया, हेलि, सैबाइ, बेल, जेल्स।

नाड़ीका दूना स्पन्दन—फास्फोरस, स्ट्रैमोनियम, प्लम्बम, ऐगारिकस, बेलेडोना।

नाड़ी लुप्त—कार्बो-वेज, क्युप्रम, विरे-ऐल्ब, ओपियम, कोलचि, सिकेलि, मर्क, नैजा, आर्स, साइलिसिया, कैन्थरिस, इपि, टैबेकम, स्ट्रैमोनियम, फास्फो, रस-टक्स, एसिड-फास, कैक्टस।

हृत्स्पन्दनकी अपेक्षा नाड़ी-स्पन्दन कमजोर होनेपर—डिजि, लोरो, सिकेलि, विरे-ऐल्वम, हेलि, कैनाबिस सैटाइवा, ऐगरिकस, डल्कामारा।

ये सब दवाएँ हमेशा ३x—६ क्रममें व्यवहार की जाती है।

हृत्वृद्धि

(Hypertrophy of the Heart)

हृत्पिण्डका आकार बहुत कुछ नाशपाती जैसा होता है; परन्तु कलेजेकी विवृद्धि रोगमें यह बढ़ जाता है। हृत्पिण्ड बढ़नेपर, गोल और भारी हो जाता है और सब पेशियाँ मोटी हो जाती हैं। बहुत परिश्रम और व्यायाम आदिके कारण रक्त-संचालन क्रिया बन्द हो जानेकी वजहसे यह रोग पैदा हो जाता है।

लक्षण—हृत्पिण्डकी क्रिया तेज होकर जोरकी आवाजके साथ धड़कन हुआ करती है। कलेजा धड़कता है और एक तरहकी तकलीफ मालूम होती है। गलेमें सुरसुरी या खुसखुसी खाँसी आती है; मेहनत करनेपर श्वास-प्रश्वासमें कष्ट होने लगता है और नाड़ी क्षुद्र तथा तेज हो जाती है। कभी-कभी छातीकी बगलवाली जगह फूल जाती है। हृद्रोगमें समुद्रके किनारेकी जगहोंमें रहना फायदेमन्द है। हजारीबाग जिलेके अर्जुन नामक जंगली प्रान्तकी हवा भी हृत्पिण्डके रोगियोंके लिये लाभदायक है।

चिकित्सा—हृत्पिण्डकी क्रिया बढ़ी हुई और तेज; बाईं ओर दर्द; नाड़ी तीक्ष्ण और द्रुत तथा श्वासकष्टके लक्षणमें—ऐकोनाइट ३।

हृत्पिण्डकी पेशी कमजोर, सरमें चक्कर, मूर्च्छा-भाव; मेहनत करनेपर श्वासकष्ट और हृत्कम्प तथा वक्षस्थिके नीचे दर्द रहनेके लक्षणमें, डिजिटेलिस ३। हृत्पिण्डका बढ़ना, लुप्तप्राय नाड़ी, शारीरिक अवसन्नता, श्वास प्रश्वासमें बहुत तकलीफ, इसी कारणसे रोगीको सोने या बात करनेमें तकलीफ होती है, नींद नहीं आती, पैरमें सूजन, कलेजा धड़कना, हृत्पिण्डका प्रदाह, हृत्पिण्डकी विशुद्धि और हृत्शूल होनेपर—कैक्टस १x। मल्लाह और जो मुग्दर आदि भाँजते हैं, उन सब मनुष्योंके हृत्पिण्डक स्नायुशूल और पेशी-शूल तथा हृत्वृद्धिमें आर्निका ६ का प्रयोग करना चाहिये।

दूसरी दवाएँ—आर्सेनिक ६ स्पाइजिलिया।

हृद्वेष्ट-प्रदाह
(Pericarditis)

साधारणतः तीन कारणोंसे हृद्वेष्ट प्रदाह (हृत्पिण्डके बाहरी आवरणको हृद्वेष्ट—pericardium कहते हैं) होता देखा जाता है। 'सबसे पहले'—चोट या क्षय रोग आदि मुख्य कारण हैं। 'दूसरे'—वात, सड़नेके कारण उत्पन्न क्षय-रोग, डिफ्थीरिया, टाइफायड या सान्निपातिक ज्वर, चेचक, बहुमूत्र, मूत्रग्रन्थि-प्रदाह प्रभृति इसके "गौण कारण" हैं। 'तीसरे'—न्युमोनिया, प्लुरिसी प्रभृति अगल-बगलके स्थानोंकी बीमारी फैलनेकी वजहसे भी यह बीमारी हुआ करती है। यह बीमारी सभी उमरोंमें हुआ करती है।

हृद्वेष्ट-प्रदाह हमेशा तीन तरहका हुआ करता है —

(१) **नया तन्तुघटित हृद्वेष्ट-प्रदाह** (Acute Fibrinous Pericarditis)—हृद्वेष्टनामें अधिक तन्तु सञ्चय होनेकी वजहसे वह बहुत कुछ कड़ी हो जाती है और हृत्पिण्डके सिकुड़ने, फैलनेके समय धीमा-

धीमा दर्द हुआ करता है। इसके साथ ही धीमा बुखार भी रहता है। स्टैथेस्कोप (वक्ष परीक्षा करनेका यंत्र) की सहायतासे परीक्षा करनेपर हृत्पिण्डके सिकुड़ने, फैलने—दोनों ही समय एक तरहकी मरमर आवाज (friction) सुन पड़ती है। दो नये चमड़ोंके रगड़नेपर जैसी आवाज सुन पड़ती है, यह आवाज भी ठीक वैसी ही होती है। स्टैथेस्कोपसे सुननेपर यह समझमें आता है, मानो यह आवाज ठीक वक्ष-प्राचीरके नीचेसे आ रही है और वक्षपर स्टैथेस्कोप जरा जोरसे दबा रखनेपर यह आवाज और भी स्पष्ट सुन पड़ती है।

यह रोग अक्सर जान लेनेवाला—मारात्मक नहीं होता। दो-चार दिनके भीतर ही रोगकी तेजी कम हो जाती है। किसी-किसी रोगीमें यह रस-स्रावका आकार भी धारण करती है।

(२) आर्द्र या रस-स्रावी हृद्वेष्ट-प्रदाह (Pericarditis with Effusion)—अक्सर तन्तुघटित हृद्वेष्ट प्रदाहसे ही इस तरहका प्रदाह पैदा हो जाता है। वात, सड़ी गन्धके कारण उत्पन्न हुआ ज्वर, क्षय-रोग प्रभृति ही इस बीमारीके मुख्य कारण हैं। रक्ताम्बु (serous) की तरह, पीवकी तरह या खून मिला, किसी भी तरहका स्राव इस बीमारीमें हो सकता है। हृद्वेष्टनीके दो पर्दोंके बीचमें यह रस-क्षरण (effusion) हुआ करता है।

छुरी मारनेकी तरह तेज दर्द, हृत्पिण्ड-प्रदेशमें एक तरहकी बेचैनी मालूम होना, साँसमें तकलीफ, बेचैनी, नाड़ी चंचल और बराबर न चलनेवाली असम श्वास खींचनेके समय नाड़ीका लोप हो जाना, ज्वर प्रभृति इसके निर्देशक लक्षण हैं। रोगी दाहिनी करवट नहीं सो सकता—बाईं करवट सोता है या एकदम सो न सकनेके कारण बैठा रहता है, रोगीके वक्षदेशके पंजरेके मध्य भागका अंश कुछ ऊपर उठ जाता है। कलेजेपर हाथ रखनेसे हृत्पिण्डकी चाल बिलकुल ही नहीं मालूम होती याअस्पष्ट मालूम होता है। छातीपर अंगुलीसे धीरे-धीरे

चोट देनेपर हृत्पिण्ड प्रदेशमें अधिकतर भारी आवाज सुन पड़ती है, जिससे स्पष्ट मालूम होता है कि उसके भीतर पानी भरा है। स्टेथास्कोपकी सहायतासे सुननेपर जलीय पदार्थसे ढँके रहनेके कारण आवाज ठोस सुन पड़ती है। रोगके प्रथम भागमें और अन्तिम अवस्थामें जब यह जलीय अंश सूख जाता है, उस समय गम्भीर मरमर शब्द सुन पड़ता है। भावीफल और भोगकाल निश्चयपूर्वक नहीं बताया जा सकता, पर इसमें सन्देह नहीं कि यह बीमारी भयावह है।

रोग-निर्णय "हृत्पिण्डके प्रसारण" रोगके साथ इस बीमारीके निदानमें भ्रम हो सकता है।

१। हृद्-प्रसारणमें हृत्पिण्डका आघात सहजमें ही दिखाई देता है और अनुभव भी किया जा सकता है।

२। हृद्-प्रसारणमें त्रिकोणाकार स्थानमें अस्पष्ट आवाज नहीं सुन पड़ती है।

३। हृत्पिण्डके शब्द अस्पष्ट और हृत्पिण्डकी चाल तेज सुनाई देती है।

आनुसंगिक उपाय—ऊपर कही और यह दोनों ही प्रकारकी बीमारियोंमें उचित है कि शय्यापर एकदम आराम करे। हृत्पिण्ड-प्रदेशमें बरफकी थैली (ice-bag) देना फायदा करता है; तीसी या मसीनाकी पोल्टीस देना भी फायदा करता है।

(२) पुराना संयोजनशील हृद्वेष्ट-प्रदाह (Chronic Adhesive Pericarditis)—यह साधारणत दो तरहका हुआ करता है। **एकमें**—दो आवरक पर्दे एक साथ सट जाते हैं। **दूसरेमें**—बाहरी पर्दा फुस्फुसवेष्ट (pleura) या वक्ष प्राचीरके साथ चिपक जाता है। इस ढंगकी बीमारी बहुत भयंकर होती है।

हृद्पिण्डका प्रसारण और हृत्पिण्डकी दुर्बलताके साथ इसके लक्षण बहुत कुछ मिलते जुलते हैं।

एकदम विश्राम, तरल, पर पुष्ट पदार्थ खाना, कोमल शय्यामें सोना. रोशनी तथा हवासे भरे कमरेमें रहना और चुनी हुई दवाका सेवन करना उचित है।

औषध व्यवस्था—ऐकोन ३, ३०—प्रबल ज्वर, मृत्यु-भय, बेचैनी, नाड़ी चंचल, प्यास, हृद्प्रदेशमें दबाव मालूम होना और अस्थि-भाव, कलेजा धड़कना।

ब्रायोनिया ३, ३०—वात रोगका इतिहास पाया जाये, हिलने-डुलनेपर तकलीफ बढ़े. हृत्पिण्ड-प्रदेशमें सुई बेधनेकी तरह या बोड़ डालनेकी तरह दर्द हो, पेशाब थोड़ा, ज्वर, तेज प्यास प्रभृति लक्षणोंमें ऐकोनाइटके बाद यह बहुत फायदा करता है।

कोलचिकम १x. ६—पुराने वात रोगका इतिहास, दर्द, बेचैनी, हृत्पिण्डका शब्द अनियमित और अस्पष्ट, अनियमित और कोमल, मृदु नाड़ी।

स्पाइजिलिया ३, ३०—कलेजा काँपना, बेहद हृत्शूल, हृत्पिण्डसे काटनेकी तरह तेज दर्द आरम्भ होकर बायाँ कन्धा और बाँहकी राहसे अंगुलीतक फैल जानेके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

आर्निका ३, ३०—चोटकी वजहसे बीमारी होनेपर।

कैक्टस—किसी कड़ी चीजसे हृत्पिण्ड दबाया जा रहा है, इस लक्षणमें यह लाभदायक होता है।

इसके अलावा, हृत्पिण्डावरक पेशीकी निम्नलिखित और "चार बीमारियाँ" होती दिखाई देती हैं :—

१। **हृत्पिण्डावरक पर्देमें जल-संचय** (Hydro-pericardium)—दो थैलियोंके भीतर यह जल संचय होता है। अस्त्र-चिकित्सककी सहायतासे ट्रोकर यंत्र द्वारा टैप करा पानी निकाल देना और लक्षणके अनुसार होमियोपैथिक दवाओंका सेवन करना उचित है।

२। **हृत्पिण्डावरक पर्देमें रक्त-संचय** (Hæmo-pericardium)—हृत्पिण्डमें चोट या जख्म और आओर्टा (महाधमनी), हृद्‌पेशी या हृद्‌धमनीका भासमान अर्वुद (aneurism) के कारण यह बीमारी हुआ करती है। यह रोग अकसर मारात्मक (जान ले लेनेवाला) हुआ करता है। इलाज करनेका भी अवसर नहीं मिलता। यदि नयी अवस्थामें बीमारी पकड़में आ जाता है, तो आर्निका, इपिकाक कैलेण्डुला, हैमामेलिस वगैरह रक्त-रोधक दवाओंका प्रयोग किया जा सकता है।

३। **हृत्पिण्डावरक पर्देमें वायु-संचय** (Pneumo pericardium)—यह बीमारी शायद ही किसीको हाती दिखाई देती है। साधारणतः यह बीमारी चोट, अन्ननालीके इधर-उधर छिल जाना, पाकाशयका कैन्सर फट जाना प्रभृति कारणोंमे होती है। वक्षस्थलके जिस अशमें हृद्‌यन्त्र है, उस स्थानके ऊपर अगुलीसे धीरे-धीरे आघात करनेपर, आवाज अस्पष्ट सुन पड़ती है ; परन्तु इस रोगमें इस जगहपर वायु-सञ्चित होनेकी वजहसे ऊँची आवाज सुन पड़ती है। यह रोग होनेपर वहुत जल्द अस्त्र-चिकित्सककी सहायता लेनी चाहिये।

४। **हृदावरणमें चूना इकट्ठा होना** (Calcifiab peaicardium)—समूचे पर्देमें या किसी अशमें चूनेकी तरह पदार्थ इकट्ठा होकर स्वच्छ और लचीले पर्देको गदला और कड़ा वना देता है। साधारणतः क्षय रोगकी वजहसे या रस-स्रावी हृत्पिण्डावरक-प्रदाहके कारण यह बीमारी पैदा हो जाया करती है। एपिस, कैलि-कार्ब, ब्रायो, टियुबरक्युलिनम वगैरह दवाएं लक्षणके अनुसार प्रयोग की जायें, तो लाभ होनेकी आशा की जा सकती है।

नया हृद्-अन्तर्वेष्ट-प्रदाह
(Acute Endocarditis)

हृद्-अन्तरस्थ आवरक झिल्लीके नये प्रदाहको नया 'एण्डोकार्डाइटिस' कहते हैं। इसमें रोगका आक्रमण हृद्कपाटपर अधिक होता है और प्रदाह होनेका परिणाम यह होता है, कि जखम हो जाता है।

यह रोग कभी स्वतंत्र-भावसे नहीं होता। सभी स्थानोंमें वात, खसरा, चेचक, न्युमोनिया, डिफ्थीरिया, गल-ग्रन्थि-प्रदाह प्रभृति बीमारियोंके परिणामस्वरूप यह बीमारी होती देखी जाती है। किसी-किसीका कथन है, कि गलग्रन्थिकी राहसे यह बीमारी फैलती है और किसी-किसीका यह मत है, कि इसी बीमारीका यह नतीजा होता है कि गलग्रन्थि-प्रदाह हो जाता है। सूजाकके फलस्वरूप भी यह बीमारी होती देखी जाती है।

मृत्युके बाद हृद्यंत्रको चीरकर देखनेपर सुईकी नोंकके बराबसे लेकर मटरके बराबरतक जखम और किसी किसीको कितनी ही गोटियोंकी तरह उद्भेद भी दिखाई देते हैं। जखमसे थक्का-थक्का रक्त या सड़े तन्तु सब निकलकर मस्तिष्क, मूत्रपिंड वगैरहके खूनके दौरानमें बाधा पहुँचाते हैं।

पहला अवस्थामें सामान्य ज्वर, अनियमित नाड़ी रहती है, कड़ी बीमारीमें तेज बुखार, पसीना, प्रलाप या गहरी तन्द्रा, शरीरमें जगह-जगह रक्तार्बुद निकलकर रक्तका दौरान रुकना, अर्द्धाङ्ग वात प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं। स्वास्थ्यावस्थामें हृत्पिण्डकी पहली और दूसरी आवाजके बाद कुछ दीर्घ समयके बाद फिर पहली और दूसरी आवाज होती है; परन्तु इस बीमारीमें, यही समय घटकर ठीक पहली और दूसरी आवाजके बीचके समयकी तरह थोड़े समयतक आवज रुक जाती है। किसी-किसी रोगीमें मरमर शब्द भी सुन पड़ता है।

सकते, इस अवस्थाको कपाटका सकीर्णन (valvular stenosis) कहते हैं।

साथ-ही-साथ कुछ-न-कुछ रक्त इसी राहसे बाहर निकल जाता है। अंगरेजीमें इसे Regurgitation (उद्गीरण) कहते हैं।

इस अवस्थामें हृत्पिण्डको बहुत ज्यादा काम करना पड़ता है और शारीरिक रक्त-सचालन क्रियाको पूरा करना पड़ता है। इसी वजहसे हृद् पेशीकी विवृद्धि (hypertrophy) होती है। इस अवस्थाको हृत्पिण्डका क्षति-पूर्ण (compensation) कहते हैं।

(क) द्वि-कपाटका उद्गीरण
(Mitral Regurgitation)

माइट्रेल या द्वि-कपाटवाला द्वार ऊपर लिखे कारणसे वन्द न होनेपर जो खून निकलकर आता है, उसे द्वि-कपाटका उद्गीरण कहते हैं। हृत्कपाटकी बीमारियोंमें यही बीमारी अधिक होती दिखाई देती है। बाएँ निम्न हृद्कोष्ठके सकोचनके साथ द्विकपाटके छेदकी राहसे थोड़ा-सा रक्त ऊपर बायें हृद्कोपमें चला जाता है। इसीलिये, महा-धमनी (aorta) में रक्त भेजनेके लिये बायें निम्न हृद्कोपको बहुत अधिक काम करना पड़ता है। इसीलिये हृद्पिण्डके बायें अगकी अत्यन्त विवृद्धि (बढ़ना) और प्रसारण (फैलना) हो जाता है। इसके बाद क्रमसे दाहिना निम्न हृद्कोप और अन्तमें सारे शरीरको धमनियोंमें खूनके दौरानमें बाधा पड़कर शरीरकी आभा नीली हो जाती है ; पहले चेहरा और निम्नागमें और फिर समूचे शरीरमें शोथ हो जाता है।

स्टेथास्कोपकी सहायतासे परीक्षा करनेपर हृत्पिण्डके सबसे नीचे और अग्रभाग (apex) में प्रथम शब्दके स्थानमें ऊँचा आकुञ्चन और उद्गीरण शब्द (systolic murmurs) सुन पड़ता है। निचला और

अग्रभाग स्वाभाविक स्थानसे बायें पार्श्वकी ओर हट जाता है। हाथसे ठोंककर परीक्षा करनेपर भी हृत्पिण्ड बायें पार्श्वमें फैलता और किसी-किसीको दाहिनी ओर फैलता हुआ मालूम होता है।

(ख) द्वि-कपाटकी शीर्णता
(Mitral Stenosis)

मोटा पड़ जाने या सट जानेके कारण इन दोनों कपाटोंमें शीर्णता आ जानेके कारण बायें ऊपरवाले हृद्कोषसे निम्नकोषमें खूनके आनेमें बाधा पड़ती है।

इस रोगका परिणाम यह होता है कि बाईं ओरकी ऊपरी वक्ष-पेशीको बहुत अधिक काम करना पड़ता है। इसलिये पहले उसकी विवृद्धि और प्रसारण होता है। बायें निम्न हृद्कोषमें थोड़ा-सा रक्त आता है। इसी कारणसे सारे शरीरमें यह रक्त प्रवाहित होनेके समय अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता, इसलिये यह धीरे-धीरे संकुचित हो जाता हैं। बायें ऊपरी हृद्कोषके प्रसारण और विवृद्धिके कारण दाहिने निम्न हृद्कोषके रक्त भेजनेमें अधिक परिश्रम करना पड़ता है, इसी वजहसे इस अंगकी भी विवृद्धि और प्रसारण होता है। इसके अलावा हृद्पेशीको उपयुक्त परिमाणमें विशुद्ध रक्त नहीं मिलता। यही कारण है, कि हृद्क्रिया अनियमित हो जाती है। इसमें नाड़ी मृदु रहती है।

इस रोगमें गलेकी शिराएँ अधिकतर मोटी हो जाती हैं। उनका फड़कना स्पष्ट दिखाई देता है। हृद्पिण्डका निम्न और अग्रभाग अपनी स्वाभाविक अवस्थामें ही रहता है। अंगुलीसे ठोंककर वक्षदेशकी परीक्षा करनेपर हृत्पिण्ड दाहिने ओर बायें फैल गया है, यह अच्छी तरह समझमें आ जाता है। स्टैथास्कोपकी सहायतासे परीक्षा करनेपर हृत्पिण्डके अगले भागमें फैलनेके समयका या संकोचनके समयके पूर्वका उद्गीरण शब्द सुन पड़ता है।

यह बीमारी बहुत ही डरावनी है। कभी-कभी बहुत दिनोंतक इलाज करनेपर भी ठीक-ठीक आरोग्य करना कठिन हो जाता है।

(ग) महाधमनीके कपाटका उद्गीरण
(Aortic Regurgitation)

मेदार्बुद और उपदंश—इस रोगके कारण हैं। इस रोगमें साधारणतः महाधमनी-द्वारके कपाटके सकोचनकी वजहसे और कभी-कभी पार्श्ववर्ती स्थानसे सट जाने या एकाएक शारीरिक परिश्रमसे छुटकारा पानेके लिये (athletics heart) यह बीमारी हुआ करती है।

इस कपाटकी असम्पूर्णताकी वजहसे बायें निम्न हृद्‌कोपके प्रसारणके समय महाधमनीमे थोड़ा सा रक्त बायें निम्न हृद्‌कोषमें चला जाता है। इसलिये पहले बायें निम्न हृद्‌कोपका प्रसारण और फिर विवृद्धि हो जाती है। इस तरहकी ऐसी अधिक परिमाणमें विवृद्धि और किसी भी हृत्पिंडकी बीमारीमें नहीं दिखाई देती। पहली अवस्थामें बहुत दिनोंतक रोगीके अनजानमें यह बीमारी बढ़ती रहती है और एकाएक बहुत तेजीसे बढ़कर रोगीको मृत्युके मुँहमें पहुँचा देती है।

हृत्पिण्डके अगले भागकी आवाज सातवीं पसलीके नीचे सुन पड़ती है। गलेके दोनों ओरकी धमनियोंका फड़कना स्पष्ट दिखाई देता है। वक्षदेशके अंशपर सामान्य दबाव डालनेपर हाथमें धमनियोंकी अनुभूति मिलती है। छातीको अंगुलीसे ठोंककर परीक्षा करनेपर एक विस्तृत स्थानमें अस्पष्ट आवाज सुन पड़ती है। इससे मालूम होता है कि हृत्पिंडका प्रसारण हुआ है। धमनियाँ अनमनीय, मोटी और द्रुत हो जाते हैं।

स्टेथास्कोपसे परीक्षा करनेपर वक्षोस्थि या स्टर्नमकी अस्थिके ऊपरी अंशमें हृत्पिंडके फैलनेके समय एक मरमर (मानो बंशी बज रही है,

इस तरहकी) आवाज सुन पड़ती है। कभी-कभी धमनीमें भी दो आवाजें सुन पड़ती हैं। इस बीमारीमें ठीक-ठीक परिमित रक्त-संचालनकी कमीकी वजहसे धमनियोंमें अधिक रक्त-संचय होता है और इसका परिणाम यह होता है कि खाँसी, श्वासकष्ट, रक्त-मिली खाँसी और इसके बाद शोथ दिखाई देता है।

(घ) महाधमनीके कपाटकी शीर्णता
(Aortic Stenosis)

यह बीमारी बहुत कम होती है। महाधमनीके दरवाजेपरवाले कपाटकी स्थूलता या अगल बगलके अंगोंसे उसका जुड़ जाना, इन कारणोंसे ही यह बीमारी होती है। इसलिये बायें निचले हृद्प्रकोष्ठसे महाधमनीमें स्वाभाविक रक्तके दौरानमें गड़बड़ी या बाधा पैदा हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि बायें निचले हृद्प्रकोष्ठकी बहुत अधिक क्रियाके कारण विवृद्धि पैदा हो जाती है और महाधमनीमें खूनका दौरान थोरा होनेके कारण नाड़ीकी गति मृदु और पतली होती है।

हाथसे छूकर या स्टैथास्कोप द्वारा परीक्षा करनेपर हृत्पिण्डके अगले भागकी आवाज कुछ बाईं ओर हटकर और अधिककर स्पष्ट सुन पड़ती है। दवा हुआ भाव या श्वासकष्ट भी दिखाई देता है। ऐसी अवस्थामें फेफड़ेमें ज्यादा वायु संचय होनेकी वजहसे हृत्पिण्डका स्थान कुछ बढ़ा हुआ मालूम होता है। दाहिनी दूसरी पसलीकी जगहपर हृद्-संकोचनके समयका मरमर शब्द सुन पड़ता है।

रक्तवहा-नाड़ीके कड़ापनकी वजहसे वृद्धोंको ही यह बीमारी अधिक होती है। यह बीमारी अक्सर बहुत दिनोंतक रहती है; परन्तु कभी-कभी रोगका हमला होनेके साथ-ही-साथ सरमें चक्कर, मूर्च्छा, आक्षेप वगैरह लक्षण पैदा होकर थोड़े ही समयमें रोगी मृत्युके मुँहमें जा पड़ता है।

(ङ) त्रिकपाटीका उद्‌गीरण
(Tricuspid Regurgitation)

यह बीमारी प्रायः मुख्य भावसे नहीं होती। हृत्पिण्डके बायें अंशकी बीमारीके परिणामस्वरूप ही ज्यादातर यह बीमारी होती दिखाई देती है। हृद्‌कपाटोंका सकोचन या शीर्णताकी वजहसे या किसी-किसी स्थानपर नीचेवाले दाहिने हृद्‌प्रकोष्ठके अधिक फैलनेकी वजहसे कपाट अच्छी तरह रध्रको बन्द नहीं कर सकता ; इसीलिये दाहिने निम्न-प्रकोष्ठके सकोचनके समय थोड़ा सा रक्त दाहिने ऊर्द्ध-प्रकोष्ठमें लौट जाता है। परिणाम यह होता है, कि दाहिने ऊपरी प्रकोष्ठमें स्थानाभावके कारण आ नहीं सकता। इसीलिये सारे शरीरमें शुद्ध न हुए नीली आभा लिये खूनकी अधिकता पैदा हो जाती है और किसी-किसी जगह सारे शरीरकी धमनीमें नाड़ी (pulse) मिलती है। गलदेशकी खासकर दाहिनी अगमें ही यह धामनिक नाड़ी अधिकतर स्पष्ट अनुभूति होती है। साधारणतः जरा ध्यानके साथ देखनेपर ही ऐसी धामनिक नाड़ी (venous pulse) दिखाई देती है। गलेकी जुगुलर धमनी ही अशुद्ध रक्त ऊपरी अगोंसे हृत्पिण्डमें साफ होनेके लिये भेजती है और इससे रक्तकी गति ऊपरसे नीचेकी ओर होती है। यदि नीचेसे दबाकर कुछ रक्त ऊपरतक ले जाकर दबा रखा जाय, तो प्रति बार हृत्पिण्डके सकोचनके साथ ही रक्त लौटकर इसे भर डालेगा। स्टेथास्कोपसे परीक्षा करनेपर वक्षोस्थिके नीचेकी ओर और दाहिने पार्श्वमें हृत्पिण्डके सकोचनके समयका मरमर शब्द (systole murmur) सुन पड़ता है।

(च) त्रिकपाटीकी शीर्णता
(Tricuspid Stenosis)

यह बीमारी बहुत ही कम देखनेमें आती है। साधारणतः यह वंशपरम्परागत दिखाई देती है। प्रायः द्विकपाटकी शीर्णताके साथ ही यह रोग होता है।

मरमर शब्द साधारणतः वक्षोस्थिके निम्न भागमें और हृत्पिण्डके निम्न-प्रकोष्ठके प्रसारणके समय ही हुआ करता है।

(छ) फुस्फुसिया धमनी-द्वारका उद्गीरण

यह रोग तो बहुत ही कम होता है। महाधमनीका उद्गीरण जिस तरह हृत्पिण्डके बाएँ पार्श्वकी बीमारीको पैदा करता है। यह भी ठीक उसी तरह हृत्पिण्डके दाहिने पार्श्वमें लक्षणोंको पैदा करता है। यह तो जानी हुई बात है, कि महाधमनी बायें निम्न-हृद्कोषके साथ और फुस्फुसीया धमनी दाहिने निम्न-हृद्कोषके साथ मिली हुई है।

(ज) फुस्फुसिया धमनी कपाटकी शीर्णता
(Pulmonary Stenosis)

यह रोग भी वंशपरम्परागत रूपमें ही अधिक होता है। इस रोगवाले रोगी प्रायः पन्द्रह वर्षसे अधिक उम्रकी नहीं पाये जाते। शरीर भी ठीक-ठीक पुष्ट नहीं होता, उनकी अंगुलियाँ अपेक्षाकृत मोटी रहती हैं और दोनों आँखें बहुत चमकीली रहती हैं। सारा शरीर नीली आभा लिये रहता है।

हृत्पिण्डका दाहिना अंश प्रसारित हो जाता है। हृत्पिण्डमें सभी जगह संकोचनके समयका मरमर शब्द सुन पड़ता है। यह शब्द बायीं

दूसरी पसलीके पास अधिकतर सुना जाता है। प्रायः खूनके दौरानकी कमीसे या यक्ष्मा रोगसे इस रोगीकी मृत्यु होती है।

ये सब बीमारियाँ एक साथ या दो अथवा तीन भी एक साथ आक्रमण कर सकती हैं।

चिकित्सा—**पेकोन** ३०, ३००—रोगके लक्षणके अनुसार दवा चुननी पड़ती है। रोगकी पहली अवस्थामें और नयी बीमारीमें बेचैनी, प्यास इत्यादि लक्षण वर्त्तमान रहनेपर।

नाजा ३, २००—हृत्पिण्डके कपाटोंकी बीमारीकी वजहसे शोथ, सारा शरीर नीला हो जाना, डङ्क मारनेकी तरह दर्दके लक्षणमें यह लाभदायक है।

आर्सेनिक ३०, २००—शोथ, बेचैनी, प्यास, जलन, कमजोरी प्रभृति लक्षणोंमें।

आर्निका ३०, २००—बहुत ज्यादा परिश्रम और चोटकी वजहसे बीमारी होनेपर।

कैम्फर—हृद्क्रिया बन्द होकर इस तरहके लक्षण होनेपर कैम्फर २ से ५ बुन्द की मात्रामें दस-दस मिनटोंके अन्तरसे प्रयोग करना चाहिये।

डिजिटेलिस θ, २००—हिलने डुलनेपर हृद-क्रिया बन्द हो जानेकी तरह मालूम होना, शोथ वगैरह लक्षणोंमें।

इनके अलावा स्ट्रोफेन्थस, कैक्टिगस, कैफिन वगैरह दवाओंका भी लक्षणके अनुसार प्रयोग होता है।

आनुसंगिक चिकित्सा—जिन सब बीमारियोंके परिणामस्वरूप हृत्पिण्डको ऊपर लिखी बीमारियाँ हो सकती हैं, उन सब बीमारियोंके होनेपर सावधानतापूर्वक हृत्पिण्डकी क्रियाको देखते रहना चाहिये। रोगका आक्रमण होनेपर शय्यापर सम्पूर्ण विश्राम (शारीरिक और मानसिक) लेना उचित है। यदि मिचलीका लक्षण दिखाई दे, तो मिचली बन्द करनेके लिये शय्यापर चुपचाप बैठे रहना उचित है।

खूब सरल भावसे और आडम्बर-रहित जीवन व्यतीत करना चाहिये। शराब पीना, गुरुपाक द्रव्य भोजन करना और स्त्री सहवास इत्यादि त्याग देना चाहिये। यदि शोथका लक्षण न रहे, तो तरल और पुष्ट भोजन करना चाहिये।

हृद्पेशीका प्रदाह

(Myocarditis)

हृत्पिण्डकी पेशीके प्रदाहको माइयोकार्डाइटिस कहते हैं। नया, पुराना, सीमावद्ध या विस्तृत—इस तरह चार प्रकारका माइयोकार्डाइ-टिस (हृद्पेशीका-प्रदाह) हो सकता है। हृत्पिण्डकी या पल्मोनारी आर्टरीकी राहसे जीवाणु भीतर प्रवेश करनेपर हृद्पेशीमें नया सीमावद्ध हृद्पेशी-प्रदाह हुआ करता है। इसे कोई-कोई हृत्पिण्डका फोड़ा भी कहते हैं। हृदावरक और हृद्-अन्तरस्थ झिल्लीके प्रदाहके परिणामस्वरूप कभी-कभी यह वीमारी हुआ करती है। टाइफायड, डिफ्थीरिया, दूषित जखम इत्यादिके जीवाणु संक्रमण करनेके कारण ही वहुतसे प्रदाह होते हैं। वात, उपदंश, पुराना मूत्राशय-प्रदाह प्रभृति कारणोंसे भी यह वीमारी होती है।

थोड़ा-सा भी परिश्रम करनेपर साँसमें कष्ट, थोड़ा परिश्रम या उद्वेगसे ही धमनीका अनियमित हो जाना, कलेजा धड़कना, कलेजेमें वेचैनी मालूम होना, कलेजेमें शूलका दर्द, हृद्पेशीकी दुर्वलताकी वजहसे हाथ, पैर और नाककी ठोर ठण्डी होना, गांठोंमें या हाथ-पैरोंमें शोथ दिखाई देना और पेशावका परिमाण घट जाना प्रभृति लक्षण पैदा हो सकते हैं। स्टैथास्कोपकी सहायतासे छातीकी परीक्षा करनेपर मालूम होता है कि हृत्पिण्डकी क्रिया अनियमित और दुर्वल है, हृत्पिण्ड फैल गया है और हृत्पिण्डके अगले भागमें आक्षेपके समय मरमर शब्द सुन पड़ता है। नाड़ीकी गति मिनटमें ५०-६० हो जाती है। एक ही

समय किसी अगमें रक्तकी अधिकता और किसी अगमें रक्तकी कमी दिखाई देती है।

कोरोनरी शिरामें रक्तका थक्का जमकर या हृत्प्रसारणके कारण दम फूलकर हाँफते-हाँफते मृत्यु हो सकती है।

इस रोगमें अक्सर एकाएक या रोग निर्वाचनके पहले ही मृत्यु हो जाती है। रोग निर्णय होते ही या यह रोग हुआ है, यह सन्देह होते ही शय्यामें सम्पूर्ण रूपसे विश्राम करना, तरल और हल्की चीजोंका पथ्य लेना, पुष्टिकर भोजन करना उचित है। रोगका आक्रमण दब जानेपर क्रमसे हल्का परिश्रम करना आरम्भ किया जा सकता है। शराब या तम्बाकूका सेवन करना एकदम मना है।

औषध व्यवस्था—डा० हेल Aromatic Spirits of Ammonia, घण्टा घण्टाभरका अन्तर देकर १० बुन्द मात्रामें सेवन करा खासा फायदा देख चुके हैं। डिजिटेलिस, स्ट्रोफेन्थस इत्यादि प्रचलित बलकारक औषधियोंका प्रयोग भी लाभ करता है।

हृद्पेशीका प्रदाह, हिलने-डुलनेपर बढ़ना, टायफायड, वात-ज्वर इत्यादिका पूर्व इतिहास मिलनेके लक्षणमें ब्रायोनिया ६, २०० इस रोगकी उत्कृष्ट दवा होती है।

"हृद्वेष्ट प्रदाह" (pericarditis) और "हृदन्तरवेष्ट-प्रदाह" (endocarditis) की दवाएँ इस रोगकी चिकित्साके समय देखनी चाहिये।

हृद्प्रसारण

(Dilation of the Heart)

यह भी स्वतंत्र बीमारी नहीं है, दूसरी बीमारीका लक्षणभर है। पुरानी हृत्कपाटकी बीमारी, नया हृद्पेशी-प्रदाह, बहुत अधिक शारीरिक परिश्रम, एकाएक शरीरपर अस्वाभाविक झटका लगना, संक्रामक

बीमारियाँ, गहरा शोक, मानसिक आघात आदि कारणोंसे यह बीमारी हो सकती है। इससे हृद्‌प्रकोष्ठ सब फैल सकते हैं और हृद्‌प्राचीर स्वाभाविक रूपसे बढ़ सकता है या पतला पड़ जा सकता है।

पुराने हृदन्तरवेष्ट झिल्ली-प्रदाहकी तरह इसमें श्वासकष्ट, कलेजा धड़कना, शरीर पीला पड़ जाना, तेज और कमजोर नाड़ी, मूर्च्छा, जी मिचलाना प्रभृति लक्षण प्रकट होते हैं।

अंगुलीसे ठोंककर परीक्षा करनेपर अपेक्षाकृत विस्तृत स्थानमें कड़ी आवाज सुन पड़ती है। इससे भी अनुमान किया जाता है कि हृत्पिण्ड प्रसारित हो गया है। हृत्पिण्डके ऊपर ठोकनेसे, हृत्पिड तो मांसपेशीका बना है, पर कड़ी चीजपर ठोकनेसे जिस तरहकी कड़ी आवाज आती है, उसी तरहकी आवाज सुन पड़ती है और फेफड़ा वायुसे भरा रहनेके कारण ढपढप आवाज सुन पड़ती है। स्टैथास्कोपकी सहायतासे परीक्षा करनेपर बहुत विस्तृत स्थानमें हृत्पिडकी आवाज सुन पड़ती है।

दूसरी-दूसरी हृत्पिडकी बीमारियोंकी तरह, इसमें भी एकदम विश्राम करना और मानसिक विश्राम करना भी सबसे जरूरी है।

दूसरी हृत्पिडकी बीमारियोंकी तरह लक्षणके अनुसार औषध प्रयोग करनेपर उपकारकी आशा की जाती है।

हृत्स्पन्दन

(Palpitation of the Heart)

स्वस्थ शरीरमें हृत्पिडकी क्रिया सम-भावसे हुआ करती है। इससे विपरीत होनेपर समझना चाहिये कि कोई रोग हुआ है। स्नायविक दुर्बलता, रक्त प्रधान धातु, बहुत ज्यादा मानसिक चिन्ता, ज्यादा शारीरिक परिश्रम या कसरत, गुल्मवायु, ज्यादा परिमाणमें शरीरसे स्राव निकलना, भय, शोक, रजःस्रावकी गड़बड़ी, ज्यादा स्त्री-संग, ज्यादा

चाय, तम्बाकू या नशीली चीजें खाना, तेज अम्ल-रोग वगैरह कारणोंसे कलेजा धड़क सकता है।

चिकित्सा—कलेजेमें धड़कन (हृत्स्पन्दन) आरम्भ होनेपर किसी दूसरी दवाको देनेसे पहले कैटिगस θ की मात्रा पाँच बुन्द, रोज दिनमें दो-तीन बार सेवन करना चाहिये। खासकर हृत्पिण्डकी तेज गति या धड़कना, साँसमें कष्ट, नाडीकी गति अनियमित, अंगुलियाँ ठंडी, खूनकी कमी, मानसिक विपन्नता वगैरह लक्षणोंमें यह दवा ज्यादा फायदा करती है। यदि कैटिगससे फायदा न हो, तो आइबेरिस θ दो-तीन बुन्द की मात्रा दिनमें दो तीन बार सेवन करना चाहिये। इससे लाभ होता है (खासकर थोड़े परिश्रमसे या खाँसने या हँसनेपर यदि बहुत तेज स्पन्दन होता हो या जब यकृतका दोष रहता है)। चेहरा गर्म और लाल रंगका, हाथ-पैरोंकी अवशता, जल्दी-जल्दी साँस लेना और छोड़ना ; थोड़ा उत्तेजना होनेपर ही कलेजा धड़कने लगता है और ऐसा मालूम होता हो, मानो हृत्पिण्डमें क्रिया बन्द हो रही है वगैरह लक्षणोंमें ऐकोनाइट ६। हृत्पिण्डमें दर्दके कारण छातीमें तकलीफ ; चेहरा लाल और सरके दर्दमें, बेलेडोना ३। हृत्पिंडकी क्रिया कभी तेज, कभी धीमी, हिलने या सोनेसे ऐसा मालूम हो, मानो हृत्पिण्डकी क्रिया बन्द हो जायगी ; बहुत बेचैनी ; ज्यादा मेहनत और बहुत मानसिक उत्तेजनाके कारण हृत्स्पन्दनमें डिजिटेलिस ३, ३०। ऐसा मालूम हो, मानो हृत्पिण्ड कोई हिला देता है या दबाये हुए है या ज्यादा जोरसे उछल रहा है ; हमेशा ही धक् धक् होना और हिलते रहना, बाईं करवट सोने या घूमनेसे, रातके समय, ऋतुके समय अथवा थोड़े परिश्रमसे वृद्धि, पेट गड़गड़ाने बाद कलेजेकी धड़कन आरम्भ होती है ; बहुत पुराना रोग, रोगीको मृत्यु-भय रहता है ; विपन्न भाव ; थोड़ेसेमें ही डर जाना इत्यादि लक्षणोंमें कैक्टस १x। हृत्स्पन्दनकी वजहसे रोगीकी नींद खुल जाती है ; तेज तकलीफ, नाडीकी गति धीमी प्रभृति लक्षणोंमें

कैनाविस इण्डिका ३x देना चाहिये। कभी-कभी साँस बन्द होकर, वेहोशी-सी आ जाना, क्षीण और दुर्वल नाड़ी ; वाईं ओर सुई वेधनेकी तरह दर्द ; वार-वार जोरसे साँस लेना ; हृत्पिण्डकी क्रिया हमेशा एक भावसे न होना (कभी तेज, कभी मन्द) वगैरह लक्षणोंमें लैकेसिस ३० । ज्यादा खुशीके वाद हृत्स्पन्दनमें काफिया ६ । क्रोधके कारण कलेजा धड़कनेमें कैमोमिला ६ । डरके कारण हृत्कम्पमें ओपियम ६ । कलेजा न पचनेके कारण कलेजेकी धड़कनमें नक्स-वोम ६ (मर्दोंके लिये) और पल्सेटिला ६ (औरतोंके लिये) । कमजोरीके कारण कलेजा धड़कनेपर (खासकर बूढ़ोंके लिये)—आरम-मेटालिकम ६x—२०० । स्नायविक दुर्वलताके कारण हृत्पिडका रोग और साथ ही वार-वार पेशाव होना लक्षणमें लैकेसिस ६ या ३० । हृत्पिण्डमें दर्द, हृत्पिण्डमें वात ; हृत्पिण्डसे हाथ और मेरुदण्डतक दर्द ; हृत्कम्पनके लक्षणमें स्पाइजिलिया ३ । वात-व्याधि या वीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू वगैरह धुआँ पीनेके कारण हृत्पिण्डकी तकलीफमें कैलमिया लैटिफोलिया ३ । कड़ी मेहनत करनेके कारण कलेजा धड़कनेपर, आर्निका ३ । उद्वेग और दुर्वलताके साथ हृत्स्पन्दन, रक्त संचालनकी क्रिया अनियमित, श्वास लेनेके समय हृत्पिण्डमें वहुत दर्द वगैरह लक्षणोंमें कैल्केरिया-फास १२x चूर्ण । जरायु या डिम्बकोषकी वीमारीकी वजहसे हृत्स्पन्दनमें सिमिसिफ्यूगा ३० ।

आनुसंगिक चिकित्सा—अधिक परिश्रम (शारीरिक या मानसिक), वहुत ज्यादा भोजन, उत्तेजक खाना या पीना मना है । अजीर्ण रोगके कारण या वीमारी होनेपर, इस वातपर पहले ध्यान देना चाहिये कि पेटकी गड़वड़ी मिटे ("अजीर्ण" रोग देखिये) । रोगके आक्रमणके समय (खासकर हिस्टीरियाके कारण या जननेन्द्रियकी गड़वड़ीसे पैदा होनेपर), गर्म जलसे रोगीके पैर धोनेपर ज्यादा फायदा होता है । हल्की और पुष्ट भोजन, खुली हवाका सेवन, वँधे समयपर खाना, सोना और (सहन होनेपर) रोज नहाना चाहिये ।

स्नायविक हृदकम्पन

(Nervous Palpitation)

शरीर स्वस्थ रहनेपर मनुष्यको हृत्पिण्डका रहना या उसकी क्रिया मालूम नहीं होती। केवल हृत्पिण्ड ही नहीं, बल्कि बाहरी-भीतरी किसी भी अंगकी कोई अनुभूति नहीं होती। किसी खास अंगकी ही बीमारी होनेपर जीव उसी अंगको लेकर घबड़ाया करता है। इस तरह स्वस्थ शरीरमें बराबर स्वाभाविक नियमसे हृत्पिण्डकी क्रिया चला करती है, पर इन यंत्रोंकी कुछ भी अनुभूति नहीं होती; परन्तु हृत्पिण्डकी बीमारीमें हृत्पिण्डको भारी मालूम होना, बेचैनी मालूम होना और नाना प्रकारकी तकलीफें हृत्पिण्डमें मालूम हुआ करती है।

प्रबल मानसिक आवेग, भय, दुःखदायी स्वप्न देखना, बहुत ज्यादा चाय, काफी, शराब पानी, तम्बाकू खाना, अग्निमान्द्य, बहुत ज्यादा मैथुन, बहुत ज्यादा परिश्रम, दौड़ना, उछलना, कूदना इत्यादिकी वजहसे हृत्पिण्डकी और-और बीमारियोंके साथ हृत्कम्पन होते दिखाई देता है।

हृद्क्रियाका अनुभव होना, कभी-कभी ऐसा भय होना कि दुरारोग्य हृदयकी बीमारी हुई है। भय मानसिक अस्थिरता, सीनेमें अस्थिरता और धड़कन प्रभृति इसके लक्षण हैं।

पहले बताये हुए जिन सब कारणोंसे यह बीमारी हुई है, समझमें आनेपर उन सब कारणोंको दूरकर शय्यामें सम्पूर्ण विश्रामकी व्यवस्था करना उचित है। पुष्ट, परन्तु हल्का पथ्य खिलाना चाहिये और रोगीको खूब उत्साह देते रहना चाहिये। इस तरह कितने ही समय दवाकी सहायताके बिना ही रोगी आरोग्य हो जाता है।

औषध-व्यवस्था—पेक्रोनाइट ३, ३०—भय और बेचैनीकी वजहसे होनेवाली बीमारीमें।

आर्निका ६, ३०—चोट आदिकी वजहसे वीमारी होनेपर।

कैक्टस θ, ३—हृत्पिण्डको कड़ी चीजसे मानो कस रखा है, इस तरह अनुभव होना ; बाईं करवट सोनेपर बढ़ना।

क्रैटिगस ६, ३०—स्नायविक उत्तेजनाकी वजहसे वीमारी होनेपर।

जेलसिमियम ३, २००—पाकाशयमें वायु-संचय, हाथ-पैर ठण्डे और सुन्न, बुरे स्वप्न देखना, सर-दर्द और कम्पन।

चायना ३०, २००—कमजोरी या किसी बीमारीके बादकी कमजोरीके कारण कलेजा काँपनेपर इसका प्रयोग होता है।

धीमा हृद्स्पन्दन
(Bradicardia)

हृत्स्पन्दनके सम्बन्धमें पहले ही बताया जा चुका है कि स्वस्थ शरीरमें प्रति मिनट ७२—८० बार हृद्स्पन्दन होता है और ७० से कम या ८० से अधिक होनेपर यह समझकर कि रोग होनेकी सम्भावना है, तुरन्त चिकित्साका प्रबन्ध करना चाहिये।

धीमा हृद्स्पन्दन और तेज हृद्स्पंदन—ये दोनों ही कोई खास वीमारी नहीं है। दूसरी बीमारीके लक्षणभर हैं। बुढ़ापा, धमनियोंमें कड़ापन, प्रसव और नयी संक्रामक बीमारीके बाद इस तरहका धीमा हृद्स्पन्दन होता दिखाई देता है।

पुष्ट और सहजमें पचनेवाला भोजन और मानसिक तथा शारीरिक परिश्रम लाभदायक है। वृद्ध मनुष्योंकी वीमारीकी "जेलसिमियम" वढ़िया दवा है।

एसिड-आक्जैलिक—हृत्पिण्डमें दर्द (सुई गड़नेकी तरह), सुन्न होना।

ऐसाफिटिडा—हृत्पिण्डमें दबाव मालूम होना, डकार आनेपर दर्दका घटना।

एसिड-फास—हस्तमैथुनके कारण हृत्स्पन्दन होनेपर।

केलि-कार्ब—कमजोर, अनियमित या ठहर-ठहरकर होनेवाला स्पन्दन, छातीसे कन्धेतक सुई गड़नेकी तरह दर्द।

कैक्टस या कैनाबिस इण्डिका—हृत्पिण्डसे पतला पदार्थ गिरता मालूम होनेपर।

कैक्टस—हृत्पिण्डका रुकना (लोहेकी बेड़ी मानो हृत्पिण्डको जकड़कर पकड़े हुई और उसकी स्वाभाविक गतिको रोक रही है—ऐसा मालूम होना)।

कैफेइन—(चौथाई ग्रेन (Caffein ¼ gr.)—हृत्पिण्डकी क्रिया बहुत जल्द बन्द होनेकी आशंका होनेपर) कैफेइन हृत्पिण्डके लिये प्रत्यक्ष उत्तेजक दवा है।

कैल्मिया—डर पैदा करनेवाली धड़कन (सामनेकी ओर झुकनेपर बढ़ना), साँसमें कष्ट; हृत्पिण्डसे वक्षोस्थितक दर्दका बढ़ जाना।

ग्लोनोइन—हृत्पिण्डकी तेज धड़कन या टपक; कष्टसाध्य श्वास क्रिया।

ग्रिण्डेलिया—हृत्पिण्डकी कमजोरी; नींदके समय साँसकी क्रियाका बन्द होना, इसीसे रोगी यह सोचकर कि दम बन्द हुआ जाता है, जाग उठता है और सोनेसे डरता है।

चायना या एसिड-फास—दस्त या शरीरका रस-रक्त क्षय होनेके कारण धड़कन।

टैबेकम—धूम्रपानके कारण धड़कन, साँस लेनेपर धड़कनका बढ़ना। ऐसा मालूम हो, मानो कलेजा चिपक गया है।

डिजिटेलिस—हृदयके अगले भाग (ptæcordia) में असह्य या सुई वेधनेकी तरह दर्द, ऐसा मालूम हो, मानो हृत्पिण्डकी चाल बन्द हो गई है, बहुत श्वासकष्ट।

नेट्रम-म्यूर—हृत्पिण्ड या नाड़ीकी चाल रुक-रुककर या अनियमित (खासकर बाईं करवट सोनेपर)।

बेलेडोना—रोगी हृत्पिंडमें बुलबुले जैसा शब्द अनुभव करता हो।

मस्कस—स्नायविक हृत्स्पन्दन, नाड़ी क्षीण।

लोरोसिरेसस—हृत्पिण्डकी क्रिया अनियमित; मृदु नाड़ी; बच्चेका नील रोग; चेहरा नीला; मुँह फाड़े रहनेका भाव।

लिलियम—हृत्पिण्डकी क्रिया तेज (मानो साँस रुक जायगी), रोगीको ऐसा मालूम हो मानो उसके दोनों हृत्पिण्ड दो पत्थर या चिमटेसे पकड़े गये हैं, मानो हृत्पिण्ड फट जायगा; हृत्पिण्ड मानो एकदम कसकर पकड़ा जाता है और लक्षणभर बाद ही ढील कर दिया जाता है।

स्पाइजिलिया—सवेरे शय्यासे उठनेपर या बैठे रहनेपर हृत्स्पन्दन। यह धड़कन रोगी सुनता है और दूसरे देख सकते हैं; हृत्पिंडमें फर-फर शब्द और सुई भोंकनेकी तरह दर्द।

मूर्च्छा (बेहोशी)
(Syncope or Fainting)

स्नायविक दुर्वलताके कारण कोई मनुष्य एकदम या थोड़ा बहुत बेहोश हो जाता है; साधारणतः इसीका नाम "मूर्च्छा" है। बहुत कमजोरी, रस-रक्त आदि धातुका क्षय, भय, मानसिक विकार, एकाएक आनन्द या विषाद अर्थात् शोक वगैरह कारणोंसे बेहोशी हो सकती है।

हृत्पिंडकी बीमारीके कारण *मूर्च्छा आनेपर—डिजि, मस्कस या* विरे-विर फायदा करता है।

चिकित्सा—बेहोशी होते ही रोगीको चित्त सुलाकर कपालमें ठंडे पानीका छींटा देना या "स्मेलिंग साल्ट" या कपूर अथवा मृग-नाभी (कस्तूरी) रोगीको कानपर रखना चाहिये और मस्कस ३ बार-बार (*रोगकी तेजीके अनुसार ५ मिनटसे लेकर आधे घण्टेका अन्तर देकर*) सेवन कराना चाहिये। यदि रोगीमें निगलनेकी ताकत हो, तो खास-खास लक्षणके अनुसार नीचे लिखी दवाएँ प्रयोग करनेपर, दुबारा रोगके आक्रमण होनेकी आशंका न रहेगी और जल्द ही बेहोशी दूर हो जायगी।

एकाएक मानसिक विकार या डरके कारण बेहोशी होनेपर ऐकोनाइट ३x और *आपियम ३०*; रोगी निश्चेष्ट भावसे पड़ा रहे, तो नक्स वोमिका ३० या ऐमान-कार्ब ६; रक्त-रस आदि धातु क्षयसे रोग हो, तो चायना ६; शारीरिक दुर्बलता और बेचैनीमें आर्सेनिक ३x; सामान्य प्रकारकी मूर्च्छामें, मस्कस ३; हिस्टीरियाकी वजहसे या मानसिक उद्वेगसे पैदा हुए मूर्च्छामें, इग्नेशिया ३x; *सब शरीर ठण्डा*, हाथ-पैरोंमें पसीना आनेके साथ, कमजोरीके कारण मूर्च्छा आनेपर, विरेट्रम-विर ३x; स्नायु-प्रधान दुर्बल मनुष्योंके लिये नक्स-मस ३x और हृत्पिण्डकी क्रियामें विकारके कारण मूर्च्छा रोग हो, तो डिजिटेलिस ६।

"आकस्मिक दुर्घटना" अध्यायमें "मूर्च्छा या मुर्दे-जैसा पड़े रहना" देखिये।

रक्तका दबाव बढ़ना

(Blood Pressure)

ब्लड-प्रेशर कहनेसे रक्तका किसी तरहका दबाव होना मालूम होता है; इससे रक्तका दबाव घटा हुआ भी मालूम हो सकता है, पर साधारणतः चिकित्सक और जनसाधारण रक्तका दबाव बढ़नेकी ही

ब्लड-प्रेशर (blood pressure) कहा करते हैं। यह कोई नयी बीमारी नहीं है। कितने ही दूसरे शारीरिक विकार या बीमारीका परिणामस्वरूप ही यह दिखाई देती है और साधारणतः यह बीमारी आरोग्य होते ही ब्लड-प्रेशर आप-ही-आप आरोग्य हो जाता है।

रक्तके इस दवावको बढ़नेके Hypertension of the Artery और रक्तका दवाव घटनेको Hypotension of theArtery कहते हैं।

मानव-शरीरकी धमनियाँ रवरकी तरह फैलनेवाली हैं और ये क्रमशः विभक्त होकर कैशिकाओं (capillaries) द्वारा सारे शरीरमें फैलकर रक्तका संचालन करती हैं। इधर हृत्पिण्ड मिनटमें ७०—८० वार विशुद्ध रक्त महाधमनीमें भेजता है। यह रक्तका दवाव धमनियोंमें लगकर धमनी फैलती है—यह धमनीका प्रसारण हमलोग हाथकी धमनीमें अनुभव कर सकते हैं, इसीको "नाड़ी" कहते हैं। एक वरावर क्रमसे छोटे सूक्ष्म मुखकी नलीको इस तरह लगातार जलीय पदार्थसे भरकर देखनेपर इस तरह फैलनेका लक्षण हमलोग देख सकते हैं।

ब्लड-प्रेशरको मापनेके यंत्रका नाम Sphygmomanometer (स्फिगमामेनोमीटर) है। हृद्संकोचन (systole) के समय रक्तके दवावकी वजहसे ब्लड-प्रेशरकी वृद्धि होती है और हृद्-प्रसारण (diastole) के समय घट जाता है। स्वस्थ शरीरमें हृदयके संकोचनके समय यह दवाव १६० और फैलनेके समय ४०—५० कम अर्थात् ११०—१२० रहता है। यह संकोचनशील दवाव स्वाभाविकसे अधिक अर्थात् १६० से अधिक होनेपर ही समझना चाहिये कि कोई बीमारी हुई है।

हृत्पिण्डके वायें क्षेपक-कोष्ट (ventricle) की संकोचन-शक्ति, महाधमनीमें गये हुए रक्तका परिमाण, धमनियोंके गात्र-प्राचीरकी नमनीयता, फेफड़ेके धमनियोंके स्नायुकी क्रिया, रक्तका जलीय भाग—इन्हीं कई विषयोंके ह्रास-वृद्धिके तारतम्यके अनुसार रक्तका दवाव घटा-

बढ़ा करता है। इसके अलावा, विभिन्न स्थानोंकी ऊँचाई, अलग-अलग उमर, भिन्न भिन्न प्रकारके खाद्य और मानसिक अवस्थाके भेदसे भी रक्तका दवाव घटा बढा करता है। इसीलिये ठीक एक ही समय, एक ही अवस्थामें, एक हाथोंसे और एक ही प्रकारका आहार करना और मानसिक अवस्था ठीक रखकर रक्तका दवाव मापना पड़ता है।

शरीरमें यथोचित रीतिसे खूनका दौरान करनेके लिये ऊपरके अनुसार ही रक्तका दवाव एक साधारण मापके अनुसार होना आवश्यक है। इस मापसे गड़बड़ी होनेसे ही समझना होगा कि बीमारी पैदा हो गई है और ठीक-ठीक पथ्य, विश्राम और दवाओंकी सहायतासे चिकित्सा करनेका प्रबन्ध करना चाहिये।

दाँतमें पीव होना, दूषित गलग्रन्थि, पुरानी पित्तनलीकी बीमारी, बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम और उसीके अनुसार शारीरिक परिश्रमका न होना, पाचनमें गड़बड़ी, यकृत-दोष, कब्जियत, बहुत खाना, बहुत ज्यादा शराब पीना और धूम्रपान, सुजाक, बहुत स्त्री-सहवास, उम्र अधिक हो जानेके कारण शिराओंका कड़ापन तथा उनकी फैलनेकी शक्तिका घटना, मूत्र-ग्रन्थिकी बीमारी, हृत्पिंडकी बीमारी प्रभृति कारणोंसे रक्तका दबाव बढ़ जाया करता है। स्त्रियोंको वयःसन्धि-कालमें अर्थात ४० से ५० वर्षकी उम्रके समय जब ऋतु-स्राव होना बन्द हो जाता है, उस समय यह बीमारी हो सकती है।

शरीरके भीतरकी कितनी ही "स्रावहीन ग्रन्थियों" (endocrine glands) की क्रियामें गड़बड़ी होनेपर भी रक्त-स्रावका घटना-बढ़ना बहुत कुछ निर्भर करता है।

साधारणतः धनी, बहुत मानसिक परिश्रम करनेवाले और बहुत थोड़ा शारीरिक परिश्रम करनेवाले तथा वृद्ध मनुष्योंको तथा स्त्रियोंमें वयः-कालमें यह बीमारी अधिक होती है।

सर-दर्द, सरमें चक्कर आना, माथेमें भार मालूम होना, माथेमें खूनका दौरान—इसका साधारणतः लक्षण है। रोगी रोगकी तकलीफकी अपेक्षा रोगकी चिन्तासे अधिक कातर हो पड़ता है। कितनी ही बार देखा जाता है कि जो रोगी इस रोगके भयसे शय्यापर सम्पूर्ण विश्राम कर रहा था, मृत्युका दिन गिन रहा था, एक कदम भी चल नहीं सकता था, हमेशा सुस्त और एकदम हताश रहता था—ऐसे मनुष्यको किसी प्रतिष्ठित और व्यक्तित्वपूर्ण चिकित्सकने पहले ही यह कह दिया कि उसे यह रोग नहीं हुआ है और बिना चिकित्साके ही सांसारिक काम-काजको यथा-रीति करनेका उपदेश दिया। बस उसी समय रोगी सम्पूर्ण आरोग्य होकर नये उद्यमसे काम करने लगा, मानो वह कोई नया ही मनुष्य हो गया हो। सिर्फ स्नायु-प्रधान मनुष्योंके लिये ही यह व्यवस्था लाभदायक होती है, अन्य प्रकारके व्यक्तियोंके लिये चिकित्साकी जरूरत रहती है।

चिकित्सा—सबसे पहले रोगके उत्तेजक कारणोंको दूर कर देना चाहिये। रोगीको रक्तका दवाव वढ़नेकी वात वताकर डरा देना उचित नहीं है। उपदेश द्वारा चिकित्सकको उचित है, कि रोगीको नियमसे रहनेको वाध्य करें। शय्यामें सम्पूर्ण विश्राम करना और सांसारिक या दूसरी-दूसरी चिन्ताओंको दूर रखना या यथासम्भव घटा देना वहुत ही आवश्यक है। खाद्यका परिमाण जहाँतक वने घटा देना और वीच-वीचमें उपवास करना उचित है। जिसमें पाखाना-पेशाव साफ हो, इसपर नजर रखनी चाहिये और पुष्ट, परन्तु सहजमें पचनेवाली चीजें खानी चाहियें। शराव पीना, भारी चीजें खाना मना है, नमक भी वहुत थोड़ा खाना चाहिये।

साधारणतः ऐसे स्थानमें रहना उचित है, जहाँ न तो वहुत गर्मी हो और न वहुत ठण्ड रहे।

वैसी दवाएँ सेवन करनी चाहियें, जिनके सेवनसे धमनियाँ सब फैलें। साधारणतः ऐसी ही दवाएँ इस रोगमें लाभदायक होती हैं।

औषध व्यवस्था—वैराइटा-कार्ब ६, २००—सरमें चक्कर, हृद प्रदेशमें दर्द, असमयमें ही वृद्धि, ग्रन्थियोंका बढ़ना और कड़ापनके लक्षणोंमें लाभदायक है।

कोनायम-मेकु ३०, २००—सरमें चक्कर आना, सर हिलानेपर बढ़ना, स्मरण-शक्तिकी दुर्बलता, मानसिक परिश्रम करनेकी शक्तिका न रहना, कलेजा धड़कना, पैर काँपना, इस तरह खड़े न रह सकना, ग्रन्थियोंका फूलना और कड़ापन, एकदम कौमार्य या मैथुन न होना इत्यादि लक्षणोंमें विशेष लाभदायक है।

बेलेडोना—सर-दर्द, सरमें चक्कर, ऊपरी अंग गर्म, चेहरा लाल। माथेमें रक्तकी झलक, आँख लाल, कनपटीमें टनक, शरीरकी त्वचा गर्म और चमकीली, नाड़ी मोटी, कड़ी प्रभृति लक्षणोंकी एक उत्कृष्ट दवा है।

ग्लोनोइन—प्रबल सर दर्द, मानसिक उत्तेजना, मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकता, मस्तिष्क बड़ा मालूम होना, मानो माथेकी खोलमें नहीं अँटता, कनपटीमें टपकका दर्द, वयःसन्धि-कालमें बीमारीका अधिक जोर—लक्षणोंमें यह लाभदायक है।

सैंगुइनेरिया—सूर्योदयके समय सर-दर्दका आरम्भ होना, दोपहरमें बढ़ना और सूर्यास्तके समय घटना, अन्धकारपूर्ण स्थानमें सर-दर्दका घट जाना, गाल लाल आभा लिये, वयःसन्धिकालमें रोगका बढ़ना।

जेलसिमियम—मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकता, सर दर्द, माथेमें भार मालूम होना, सुन्नकी तरह मालूम होना और तन्द्राभाव, कम्पन, जीभका काँपना, जीभ सूखी इत्यादि लक्षणोंमें इससे विशेष लाभकी आशा की जाती है।

लैकेसिस, क्रोटेलस, पाइरोजेन, ओपियम, नाइट्रिक-एसिड, लैक-डिफ्लोरेटम, हेलिवोरस, हैमामेलिस, फेरम-फास, आर्निका प्रभृति दवाओंकी भी समय-सममपर जरूरत पड़ सकती है।

हृद्-शूल
(Angina Pectoris)

हृद्-शूल तीव्र यन्त्रणादायक वीमारी है। कोरोनरी आर्टरी (हृद्पेशी पोषक धमनी) का रुकना, हृद्पेशीका अपकर्ष या विकृत हो जाना (degeneration) वगैरह कारणोंसे हृद्-शूल हुआ करता है। मध्य-उमरके वाद ही यह वीमारी अधिक होती दिखाई देती है। स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषोंको ही यह वीमारी ज्यादा हुआ करती है और अधिकांश स्थानोंमें ही रोगीकी धमनीमें कड़ापन (arterio sclerosis) हो जाया करता है। वात, उपदंश, वहुत ज्यादा धूम्रपान या शराब पानी, वहुत दिनोंका मानसिक उद्वेग इत्यादि इस रोगके उत्तेजक कारण हैं। कभी-कभी वंशपरम्परागत रूपमें भी यह वीमारी होती दिखाई देती है।

यह वहुत तकलीफ देनेवाली वीमारी है। हृत्पिण्डमें एकाएक तेज दर्द आरम्भ होकर वायें कन्धेतक फैल जाता है और वहाँसे समूची वाँह, यहाँतक कि नाखूनके अगले भागतक फैल जाता है। यह साधारणतः रातके समय होता है, दिनमें शायद ही कभी होता है। इसमें जल्दी-जल्दी साँस चलती है ; उत्कण्ठा, ठण्डा पसीना, चेहरा ठण्डा और रक्तहीन, मूर्च्छा प्रभृति उपसर्ग दिखाई देते हैं। कितनी ही वार आक्रमण-कालमें जो मूर्च्छा आती है, वही मृत्युमें परिणत होती है। वायु निकलना, वहुत ज्यादा पेशाव या वमन होनेपर तकलीफ घट जाती है। स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषोंको यह वीमारी ज्यादा होती है।

बहुत अधिक शारीरिक परिश्रम, बहुत अधिक चिन्ता, अग्निमान्द्य, आवेश, बहुत ज्यादा तम्बाकू पानी, कब्ज इत्यादि कारणोंसे एकाएक यह बीमारी पैदा हो जाती है। एकाएक इतना तेज दर्द होने लगता है कि रोगी अपने जीवनकी आशा त्याग देता है तथा शरीरकी रंग राखकी तरह बदरंग हो जाता है। रोगी दर्दकी असह्य तकलीफसे छटपटाने लगता है। कभी-कभी दर्द घटानेके लिये साँस भी रोक लेनी पड़ती है। सारे शरीरमें पसीना हुआ करता है, दर्द बाँया कन्धा और बायें बाँहमें फैल जाता है। नाड़ी तेज और अनियमित हो जाती है।

रोगका आक्रमण आध सेकेण्डसे आध घण्टा या उससे भी अधिक समयतक स्थायी हो सकता है। पहले ही आक्रमणने रोगीकी मृत्यु हो सकती है, जीनेपर प्रायः बहुत ज्यादा साफ पेशाब और खाली डकार आती दिखाई देती है। ऐसी अवस्थामें रोगी प्रायः तकलीफसे छटपटाया करता है।

इस बीमारीमें रोगीको एकान्त और उत्तेजना-रहित स्थानमें रखना चाहिये। छातीपर बरफ देना और पेटमें गरम सेंक विशेष लाभ करता है। रोग होते ही एक रूमाल या किसी साफ कपड़ेके टुकड़ेमें दो-एक बून्द एमिल-नाइट्रेट (amyl-nitrate) डालकर उस रूमालको सूँघनेसे तुरन्त दर्द आरोग्य हो जाता है। इसी तरह क्लोरोफार्म (chloroform) या ईथर (ether) के व्यवहारसे भी लाभ हो सकता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) रोगी दशामें—आर्स, डिजि, आरम। (२) रोगावेश कालमें—एसिड-हाइड्रो, ऐकोन, कैक्टस, स्पाइजि, सेम्बु, एमिल नाइट्रेट θ सूँघना।

ऐकोनाइट ३, ३०—सर्दी लगकर बीमारी, बेचैनी, मृत्यु-भय एकाएक रोगका आक्रमण प्रभृति लक्षण रहनेपर और रक्त-प्रधान

व्यक्तियोंको नये हृद्-शूलमें श्वास-रोधकी सम्भावना होनेपर इसका प्रयोग होता है।

ग्लोनोइन ३, ३०—सारे शरीरकी शिराओंमें टपकका अनुभव होना, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट, तेज दर्द, सर दर्द लक्षणमें।

आर्सेनिक ३०, २००—नाड़ी क्षीण और विषम ; कमजोरीके साथ बहुत कष्ट, बेचैनी, मृत्यु-भय, चेहरा मलिन, गड़हेमें धँसी आँखें, जलन करनेवाला दर्द और बहुत सुस्तीके लक्षणमें।

सिमिसिफ्यूगा ३०—समूचे शरीरमें दर्दका फैल जाना, बायें अंग और बायें बाँहमें असह्य दर्द, कमजोर और अनियमित नाड़ी, काँपती हुई रहती है ; हृद्यंत्रकी क्रिया मानो बन्द हो जाना चाहती है।

बेलेडोना ३—कलेजा धड़कना (गलेमें अधिक अनुभव होता है), नाड़ी पूर्ण, रातमें अनिद्रा और अस्थिरता प्रभृति लक्षण रहनेपर इसका प्रयोग करना चाहिये।

क्रैटिगस θ—असह्य दर्द, बायें हाथ और बाँहमें दर्दका फैलना, नाड़ी तेज, कलेजा धड़कना और श्वास-कष्टके लक्षणोंमें क्रैटिगस मूल अर्क पानीके साथ देना चाहिये। (मात्रा ५ से १० बुन्द)।

कैल्मिया ३, ६—पीठकी फलकास्थिमें तेज दर्द होनेपर।

मैग्नेशिया-फास ३x—पाँच ग्रेनकी मात्रामें बार-बार गर्म पानीके साथ सेवन करनेपर तुरन्त लाभ होता है।

आरम ६—मृत्यु-भय और वक्षमें दबाव मालूम होनेके साथ दर्दके लक्षणमें लाभदायक है।

स्पाइजिलिया—अनियमित नाड़ी, कलेजा धड़कना, कोमल और महीन नाड़ी या कड़ी मोटी नाड़ी और मूर्च्छाका भाव।

नक्स-वोमिका ३x, ३०—पाकाशयकी क्रियाकी गड़बड़ीसे हृद्-शूल होनेपर।

कैक्टस १x—हृत्पिण्डकी अकड़न, ऐसा मालूम होता है, मानो चिमटेसे हृत्पिण्ड जकडकर कस रखा है, लक्षणमें।

आर्निका—हृत्प्रदेशमें जख्मको तरह दर्द मालूम होना और असह्य दर्द।

आर्स-आयोड ३x—हृत्पिण्डकी दुर्बलताके साथ पाकाशयकी गड़बड़ीके लक्षणमें भोजनके बाद २ ग्रेन (पानी न मिलाना चाहिये) सेवन करना चाहिये।

एसिड-हाइड्रो ३—बहुत ज्यादा और बार-बार कलेजा धड़कना मूर्च्छावेश, बहुत व्याकुलता और क्षीण नाड़ी रहनेके लक्षणमें यह लाभदायक है।

धमनीकी बीमारियाँ
(Diseases of the Arteries)

धमनी-प्रदाह (Arteritis)—किसी धमनीकी दीवार (प्राचीर में प्रदाह हो जाये, तो उसका नाम "धमनी-प्रदाह" है। यह धमनीका प्रदाह, नयी अवस्थामें रोगीको अक्सर अनुभव नहीं होता। इसलिये इलाजके वास्ते डाक्टर बुलाया नहीं जाता। नये प्रदाहमें डाक्टर ह्यूज ऐकोनाइट निम्नक्रम जल्दी-जल्दी देनेकी सलाह देते हैं।

प्रदाहकी पुरानी अवस्थामें धमनी-प्राचीरके सभी स्तर उपास्थि (cartilage) की तरह कड़े और मोटे हो जाते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि कभी "धमनी-प्राचीरका मेदापजनन" (atherome) और कभी "धमनीका प्रसारण" (या अर्बुद होना) हो जाता है।

(क) **धमनी-प्राचीरका मेदापजनन** (Atheroma)—रोगवाली धमनी कड़ी, टेढ़ी, स्थूल और टूटने-जैसी होना ही इस रोगका प्रधान लक्षण है। यह रोग बुढ़ापेमें होता है और रोगके कारण नाड़ी

क्षीण होकर हृत्शूल, संन्यास, मूत्रग्रन्थि-प्रदाह, सड़ना वगैरह उपसर्ग पैदा हो सकते हैं।

चिकित्सा—बीमारी होनेका सन्देह होते ही फास्फोरस ३ देना चाहिये। फास्फोरससे फायदा न हो, तो वेनाड़ियम ६—१२ देना उचित है। श्वासकष्ट रहनेपर सड़नेकी अवस्थामें सिकेलि ३, फेरम-फास २x या लैकेसिस ६, प्लम्बम ६ की भी परीक्षा करनी चाहिये।

(ख) **धमनीका अर्बुद** (Aneurism)—धमनीके फैलनेके कारण धमनीमें (विशेषकर उरुकी धमनीमें खून-भरे अर्बुद पैदा होते हैं। पहले अर्बुदका खून पतला रहता है और फड़का करता है। पीछे यह खून जमकर किताबके पन्नेकी तरह वहुतसे सूक्ष्म-सूक्ष्म स्तरोंमें वहीं रह जाता है। पहली अवस्थामें अर्बुदके ऊपरकी धमनीपर दबाव डाला जाये, तो स्पन्दन बन्द हो जाता है और नीचेकी ओर दबानेसे स्पन्दन बढ़ा करता है। गर्मी रोग, शराब पीना, ग्रन्थि-वात, बहुत ज्यादा शारीरिक परिश्रम वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है। ३० से ५० वर्षकी उमरके भीतर ही यह बीमारी हुआ करती है। औरतोंकी अपेक्षा मर्दोंको ही यह बीमारी ज्यादा होती देखी जाती है। यह रोग दो तरहका होता है:—(१) "स्वयम्भूत" (आप-ही-आप पैदा हुआ)—फास ३, बैराइटा ६, क्यूप्रम ६, ऐड्रिनेलिन लाइको १२ इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। (२) "चोटसे पैदा हुआ" (अर्थात् धमनीमें चोट लगनेके कारणसे पैदा हुआ)—आर्निका ३, ऐकोनाइट ३x इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। बैराइटा-कार्ब ३x (फी मात्रा ५ ग्रेन) इसकी उत्कृष्ट दवा है। अर्बुदके साथ हृत्पिण्डकी कमजोरी होनेपर—क्रैटिगस θ (फी मात्रा ५ बून्द) या आर्स-आयोड ३x (भोजनके बाद) खाना चाहिये। कैल्के-फास २x, कैलि-आयोड θ की बीच-बीचमें जरूरत पड़ सकती है। शय्यापर चित्त सोये रहना चाहिये, उत्तेजक खान-पान और सब तरहका शारीरिक और मानसिक परिश्रम त्याग देना

चाहिये। नित्य पावभर तरल पानीय और छः छटाक ठोस आहार करना नितान्त आवश्यक है।

कहना वृथा है कि "धमनी-प्रदाह" बहुत ही जबर्दस्त रोग है। अनजान चिकित्सकके भरोसे रोगीको न सौंपना चाहिये।

धमनीका कड़ापन
(Arteriosclerosis)

यह बुढ़ापेमें होनेवाली बीमारी है। किसी-किसीका मत है कि धमनियोंमें रक्तका दबाव बढ़ना (हाई ब्लड प्रेशर) इस बीमारीका कारण है ; परन्तु इस विषयमें भी मतभेद है। धमनियोंका रक्तका दबाव बढ़कर यह बीमारी हो जाती है, तो धमनियोंके कड़ापनकी वजहसे रक्तका दबाव बढ़ जाता है, यह विषय अबतक भी स्थिर न हो सका। बहुत दिनोंतक स्थायी मानसिक उद्वेग और शारीरिक परिश्रम, बहुत खाना, बहुत ज्यादा शराब पीनेका अभ्यास, सीसक दोष, गठिया वात, उपदंश और पुराना मूत्राशय-प्रदाह तथा यक्ष्मा दोष इस बीमारीके कारण हैं।

इसमें धमनियाँ मोटी और कड़ी हो जाती हैं, धमनियोंके फैलनेका भाव घट जाता है और इसी वजहसे हृत्पिण्डको बहुत काम करना पड़ता है, अतएव हृत्पिण्डका प्रसारण हो जाता है। परिणाम यह होता है कि कोरोनरी आर्टरी (हृद्पेशी-पोषक धमनी) के कड़ापनकी वजहसे हृत्पिण्डमें बहुतसे रोग पैदा हो जाते हैं। सारे शरीरकी धमनियाँ कड़ी हो जाती हैं, उठ जाती हैं, कोई-कोई धमनी हाथसे भी जानी जा सकती है। मस्तककी धमनियोंपर रोगका आक्रमण होनेपर सर-दर्द, सरमें चक्कर आना, अनिद्रा, पक्षाघात प्रभृति उपसर्ग पैदा हो जाते हैं। मसानेकी धमनीपर रोगका आक्रमण होकर मसानेका प्रदाह भी पैदा

हो जा सकता है और खूनके दौरानमें व्याघात पैदा होकर हाथ-पैरोंमें सड़न या ग्रैंग्रीन पैदा हो जा सकता है।

इस रोगमें भरपूर विश्राम करना, सबसे पहला काम है। काफी और शराब एकदम त्याग देनी चाहिये। पाखाना-पेशाब साफ हो, इसपर नजर रखनी चाहिये। बहुत ज्यादा पानी पिना और खानेके पदार्थमें प्रोटीनकी मात्रा घटा देनी चाहिये।

औषध-व्यवस्था—प्रबल सर-दर्द और मूत्रग्रन्थि-प्रदाहके लक्षणमें ग्लोनोइन ६, ३० ; वार्द्धक्यकी वजहसे बीमारीमें बैराइटा-कार्ब ३, १२ और कोनायम ३, २०० ; उपदंशकी वजहसे बीमारीमें कैलि-आयोड ६x, ३० लाभदायक है।

शिराओंकी बीमारियाँ

(Diseases of the Veins)

१। **शिरा-प्रदाह** (Phlebitis)—हृत्पिण्ड और फेफड़े वगैरह शारीरिक यंत्रोंका प्रदाह होनेपर, उन-उन यंत्रोंकी शिराओंमें भी प्रदाह होता है (अर्थात् शिराएँ फूल उठती हैं, लाल हो जाती हैं और दर्द हुआ करता है)। चोट लगना, विषैला घाव, विसर्प, पीव, अस्थि-प्रदाह वगैरह कारणोंसे शिराका प्रदाह होता है। नये प्रदाहमें, हैमामेलिस θ (अठगुने पानीके साथ) जलपट्टीके रूपमें लगाना चाहिये। अगर प्रसवके वाद शिरा-प्रदाह हो, तो पल्सेटिला ३ सेवन और हैमामेलिस θ की इसी तरह जलपट्टी देनी चाहिये। मासिक रजःस्रावमें गड़बड़ीसे शिरा-प्रदाह हो, तो पल्स ३x—३० । भ्रमण या आघातके कारण शिरा-प्रदाहमें आर्निका ३ सेवन और आर्निका θ (बीसगुने पानीके साथ) जलपट्टी देनी चाहिये। खून खराब होकर शिरा-प्रदाह होनेपर, आर्स ६ या लैकेसिस ३० या पाइरोजेन ६ सेवन और लैकेसिस ६

(चोगुने पानीके साथ मिलाकर) जलपट्टीका बाहरी प्रयोग करना चाहिये। पूरी तरह विश्राम, गर्म पानीका सेंक और हल्का पथ्य लाभदायक है।

२। **वर्द्धित शिरा** Varicose veins, Vericocele etc — हाथ, पैर, मलद्वार, अडकोष वगैरहकी शिराओंमें रक्त-सचालन रुकनेके कारण ये फूल जाती हैं और मोटी हो जाती हैं। अगुलीसे दबानेपर ये बढ़ी हुई शिराएँ ढेर लगी हुई कोड़ी-जैसी टेढ़ी और बैठे हुए साँपकी तरह मालूम होती हैं। नये रोगमें हैमामेलिस ३ सेवन और हैमामेलिस θ (अठगुने पानीके साथ जलपट्टीका प्रयोग करना चाहिये)। बीमारी पुरानी होनेपर फ्लुओरिक एसिड ३। बहुत दर्द होनेपर पल्स ३। फेरम फास ६x चूर्ण, प्रम्बम ६, आर्निका ३, आर्स ६, लैकेसिस ३०, वेल ३, फार्मिका ३x, सल्फर ३० भी कभी-कभी आवश्यक हो सकता है। बढ़ी हुई शिराके ऊपर क्लिमेटिस-धावन (क्लिमेटिस एक भाग+पानी छ गुना) का प्रयोग फायदा पहुँचाता है। कभी-कभी मोजे या रबरके बैण्डेजके व्यवहारकी भी जरूरत पड़ जाती है।

समवरोधन
(Embolism and Thrombosis)

जमे हुए खूनका एक थक्का (clot of blood) या कोई दूसरा पदार्थ (जैसे—तन्तु-कण, अस्थि-मज्जाके मेदाणु "सडन" रोगका अश, धमनी-अर्बुदका अलग हुआ टुकडा), शरीरके खूनके बहावमें, किसी धमनी या कोई दूसरी रक्त वहन करनेवाली नाडीमें घुसकर, वहाँ रुक जाता है, इससे खूनके दौरानके काममें अडचन या रुकावट पड जाती है। इसी रूकावटका नाम रक्तवहा नाडीका समवरोधन (embolism) है और यदि किसी जमे हुए खूनका टुकड़ा हृत्पिण्ड, मस्तिष्क, शिरा या

शरीरके किसी दूसरे "रक्त-वहन" करनेवाले स्थानमें रुक जाता है, तो इस अवरोधको "उस-उस स्थानका समवरोधन" (thrombosis) कहते हैं। यह दोनों तरहके समवरोधन ही बड़ी बुरी बीमारी हैं। हैजा, सान्निपातिक विकार वगैरह बीमारियोंमें "समवरोधन" होकर रोगी मर जाता है। दोनों रोगोंका परिणाम एक जैसा ही है।

जिस धमनीमें यह समवरोधन होता है, उसके चारों ओरकी कैशिका-नाड़ियों (capillaries) में खून जमकर केलेके फूलके अगले भागकी तरह हो जाता है। मस्तिष्कके समवरोधनमें संन्यास आदि रोग पैदा होते हैं। कैशिका-नाड़ियोंके बीचमें खूनका दबाव रुक जानेपर नर्त्तन या तांडव रोग (st. vitus's dance) हो सकता है। हृत्पिण्डमें समवरोधन होनेपर, शरीर सफेद और मूर्च्छाके साथ बहुत ज्यादा श्वास-कष्ट पैदा होकर, रोगीकी एकाएक मौत भी हो सकती है।

चिकित्सा—कैल्के-आर्स ६x विचूर्ण, इन दोनों रोगोंकी प्रधान दवा मालूम होती है। एपिस ३, ओपियम ३x—३०, कैलि-म्यूर ३ वगैरह दवाएँ भी जरूरतपर सकती हैं।

श्वासयंत्रके रोग

(Disease of the Respiratory Organs)

सूचना—डाक्टर हेवार्ड कहते हैं कि सिर्फ सर्दी लगना ही मनुष्यकी आधी बीमारियोंका कारण है। उसके मतसे सर-दर्द, सर्दी इफ्लुएञ्जा, ज्वर, यक्ष्मा, पक्षाघात (लकवा), अतिसार, रक्तामाशय, कामला, शिशु-कालरा, बहरापन, वायुनली-प्रदाह, न्युमोनिया, दमा, गलेका जखम, नाकका जखम, कानमें पीब, शोथ, यंत्रणादायक स्वल्परजः, गर्भ-स्राव, काली खाँसी, प्लुरिसी (वक्षावरक-झिल्ली-प्रदाह), वात, विसर्प रोग, स्नायु शूल या पित्तकी वजहसे पैदा हुए रोग, आँखें उठना मसाने या यकृतका प्रदाह, इच्छा न रहनेपर भी मांस-पेशियोंका फड़कना,

बहुमूत्र, चक्षु प्रदाह, कफिजयर, स्वरभंग, दाँतका दर्द, घण्टीका बढ़ना वगैरह रोगोंका सर्दी लग जाना ही "पहला या उत्तेजक कारण" है। इसलिये सर्दी न लगने पाये---इस विषयमें सतर्क रहना चाहिये।

प्राचीन विद्वान प्लिनिने लिखा है कि खच्चरका मुँह तीन बार चूम लेना, सर्दी लगनेके कारण पैदा होनेवाले रोगोंको आराम करनेका उत्तम उपाय है। आजकल भी कोई-कोई चिकित्सक कहते हैं कि इस सजह-साध्य चिकित्सा-प्रणालीकी परीक्षा करनी चाहिये (I. D News, 16th Decr, 1621 देखिये)।

नयी सर्दी

(Coryza or Catarrh)

श्वासनलीका कुछ अंश प्रदाहयुक्त होकर "सर्दी" हुआ करती है। सिर्फ नाककी श्लैष्मिक-झिल्लियोंमें प्रदाह होकर सर्दी होती है और नाक तथा गलेकी झिल्लियोंका जब प्रदाह होता है, तब सर्दीका बुखार पैदा होता है। रोगके आरम्भमें शरीरमें सुस्ती, बदनमें अगराई, जम्हाई आना, सरमें दर्द, सरमें चक्कर, आँखें लाल, प्रश्वास गर्म, नाक सुरसुराना, बार-बार छींक और इसके साथ ही नाक तथा आँखोंसे पानी गिरना वगैरह उपसर्ग होते हैं। इसके बाद सिहरावन, तेज और चंचल नाड़ी, सूखी खाँसी, स्वरभंग, गाढ़ा और पीला बलगम निकलना, भूख घट जाना, समूची देहमें दर्द वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। "माइक्रो-काकस केटारलिस" वगैरह जीवाणु "सर्दी" के प्रधान कारण हैं। बहुत देरतक गीला कपड़ा पहनना, बरसाती पानीमें भीगना, ओस या सर्दी लगना, एकाएक पसीना बन्द करना वगैरह "नयी सर्दी" के कारण हैं।

चिकित्सा---स्पिरिट कैम्फर (रोगकी पहली अवस्थामें) जब थोड़ा-थोड़ा जाड़ा लगता हो, बदनमें अगड़ाई होती हो, नाकसे पानी निकलता हो ; परन्तु ज्वर नहीं रहता।

ऐकोनाइट ३x—(रोगकी पहली अवस्थामें) थोड़े जाड़ेके साथ बुखारका भाव ; जम्हाई आना ; बदनका टूटना ; आँखोमें जलन, पानी-भरी आँखें, गर्म श्वास-प्रश्वास ; बार-बार छींक ; सर भारी ; पतला श्लेष्मा निकलना और बहुत सुस्ती ; बदन रुखड़ा ; तेज प्यास ; जाड़ेके दिनोंकी ओस और ठण्डी हवा लगकर सर्दी होना ।

डल्कामारा ३—तर हवा या बर्सातकी हवा लगकर सर्दी ।

ब्रायोनिया ३x, ६, ३०—श्वासनलीकी श्लैष्मिक-झिल्लीमें जलन करनेवाला प्रदाह, तकलीफ देनेवाली सूखी खाँसी ; बहुत खाँसनेपर थोड़ा बलगम निकलना ; बलगमसे नाक बन्द हो जाना ; खाँसनेके समय छातीमें दर्द ; आँखोंसे पानी गिरना ; पाकस्थलीकी क्रियाकी गड़बड़ी ; वक्षके बगलमें सुई बेधनेकी तरह दर्द । खुली जगहसे गर्म घरमें आनेपर खाँसीका बढ़ना ; खाने-पीनेपर खाँसीका बढ़ना । मिचली होकर खाँसी खाँसनेपर वमन होना लक्षणमें ।

नक्स वोमिका ३—एक नाक बन्द हो जाना ; दिनमें दोनों नाकोंका खुला रहना ; परन्तु रातमें बन्द हो जाना । सर्दी दिनमें पतली, रातमें सूखी रहती है । बच्चोंकी नाक बन्द हो जाती है (ऐमोन-कार्ब; सैम्बुकस), खुली हवामें अच्छा रहता है, बन्द गर्म कमरेमें उपसर्ग बढ़ते हैं ।

जेलसिमियम ३x— पीठमें जाड़ा लगकर बुखार आना ; बुखार आनेके पहले माथा गर्म ; प्यास, सर भारी, चेहरा लाल, पानी-भरे आँखें ; सर्दीसे पैदा हुआ चक्षु-प्रदाह ; नाड़ी कोमल या धीर गति ; गलेमें दर्द ; खाँसी और स्वरभंग ; गर्मीके दिनोंमें ठण्ड लगनेके कारण सर्दी रोग ।

आर्सेनिक ३x, ६— नाकके छेदसे बहुत ज्यादा परिमाणमें पतला, गर्म और जलन करनेवाला श्लेष्माका स्राव ; बार-बार छींक ; आँखोंसे

पानी गिरना, बहुत ग्लानि और तन्द्रा, सुस्ती, नाक, आँखें, स्वरनली और कठनलीका अस्वस्थ रहना।

पल्सेटिला ३, ६, ३०—(पकी हुई सर्दीकी बढ़िया दवा है) नाकसे बदबूदार श्लेष्मा बहना, कान और माथेके बगलमें तेज दर्द, सर भारी, किसी चीजका स्वाद और गन्ध न मिलना, "गर्म कमरेमें या शामके वक्त रोगका बढ़ना"।

मर्क्यूरियस ६—*गलेमें दर्द और जखम, नाकमें दर्द और जखम*, बारम्बार छींक, पीबकी तरह पीले रंगका गाढ़ा श्लेष्मा निकलना, एक बार जाड़ा और फिर गर्मी मालूम होना, इसी तरह पर्यायक्रमसे होते रहना, चक्षु-प्रदाह (आँख उठना), शामके वक्त रोगका बढ़ना, गला या गलेकी गाँठका फूलना, बहुत पसीना, गलेका घाव, नाकसे बदबूदार हरा पीब निकलना।

मर्क-कार ३०, २००—बहुत छींक, जलन और जखम कर देनेवाली पतली सर्दी, *नाकमें जलन होती है और नाकमें घाव हो जाता है*। नीबूकी तरह बलगम निकलता है, बदबूदार पीली आभा लिये हरा स्राव, गलेमें घाव।

पेट्रम ट्राइफाइलम ६—शरीरके किसी भी अगमें सर्दी लगनेपर उस जगहकी खाल उधड़ जाना, गलेमें घाव।

पेमान कार्ब ३—रातके अन्तिम पहरमें खाँसीका बढ़ना, रातके समय छोटे बच्चोंकी नाक बन्द हो जाती है, इसीलिये साँस लेने या *छोड़नेमें तकलीफ होती है*।

इपिकाक ३X, ६—बार बार छींक और बहुत बलगम निकलना और इसके साथ ही मिचली और श्लेष्माका वमन, सर्दीसे गलेका घरघराना।

येलियम-सिपा १X, ६—बार-बार जोरकी छींक, जलभरी आँखें; नाकसे ज्यादा परिमाणमें खाल उधेड़नेवाला पानी गिरना (बराबर

आप-से-आप नाकके अगले भागसे बून्द-बून्द पानी टपकना); खाल उधड़ जानेकी तरह ओंठमें जलन पैदा करनेवाला दर्द ; खुली हवामें अच्छा रहता है ; आक्षेपिक खाँसी ।

कैलि-बाइक्रोम ६—पकी लसदार सर्दी, स्वरभंग, "सूत या डोरीकी तरह" कड़ा बलगम निकलना और गलेमें दर्द वगैरह लक्षणोंमें लाभ करता है ।

नेट्रम-म्यूर ३०—सर्दी ; नाकसे कच्चा पानी गिरना ; रस-भरी फुन्सियाँ ।

कैल्के-कार्ब ३०—नाकमें जखम और नाकसे श्लेष्मा बहना । बहुत ज्यादा तरल स्राव, इसके साथ ही सर-दर्द । सूखी खाँसी, बार-बार छींकें, रातमें नाक सूखना या बन्द हो जाना, दिनमें यह स्राव नहीं रहता ।

साधारण नियम—बुखार रहनेपर सागू, बार्ली, आरारूट वगैरह हल्का पथ्य ; इसके बाद रोटीका शोरबा । नहाना, ओस या सर्दी लगाना एकदम मना है । रातमें सोनेके पहले गर्म पानीसे पैर धो डालनेपर या गर्म सरसोंका तेल मालिश करनेसे किसी-किसीको फायदा होता है । गर्म कपड़े पहनकर शरीरसे पसीना निकाल देना अच्छा है ।

"नासिका-प्रदाह", "नाककी सर्दी" और "नाकमें घाव" वाला अध्याय देखिये ।

पुरानी सर्दी

(Chronic Catarrh)

बार-बार सर्दी होना, नाककी राहसे धूलके कण या उग्र पदार्थका घुसना, गर्मी रोग आदिसे धातु बिगड़ जानेके कारण सर्दी पुराना रूप धारण करती है ।

पुरानी सर्दी दो तरहकी है :—(१) नाककी सर्दीकी बढ़ी हुई अवस्था और (२) नाककी सर्दीकी शीर्ण अवस्था ।

(१) नाककी श्लैष्मिक-झिल्लीके पुराने प्रदाहसे नासा-रन्ध्र और झिल्लियोंके 'बढ़ने' के साथ साँसकी तकलीफ मौजूद रहे, तो पुरानी सर्दीकी बढ़ी हुई अवस्था समझना चाहिये। नाकसे बहुत ज्यादा पतला स्राव, एक या दोनों नाक बन्द ; पीछे गाढ़ा डोरीकी तरह श्लेष्मा निकलना, गले और नाकसे सर्दी निकालनेके लिये लगातार खखारना "Hawk", सरमें दर्द, सुननेकी ताकतका घटना, स्नायुशूल वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

(२) नाककी श्लैष्मिक-झिल्लीके पुराने प्रदाहसे नासा-रन्ध्र और झिल्लियोंकी 'शीर्णता' के साथ नाकके छेदसे बदबुदार स्राव निकलते रहनेपर, पुरानी सर्दीकी "शीर्ण" अवस्था समझनी चाहिये। उपरोक्त कही हुई "वृद्धिकी अवस्था" के बाद अक्सर यह अवस्था आती है। नाक सूखकर पपड़ी जम जाती है, श्लेष्माके साथ खूनके छींटे रह जाते हैं। नाकसे बदबू निकलती है और घ्राण-शक्ति कम या लोप हो जाती है। ये ही इस अवस्थाके विशेष लक्षण हैं।

चिकित्सा—पल्सेटिला ६, ३०—बार-बार नयी सर्दीके बाद पुरानी सर्दी। गाढ़ा, हरे या पीले रंगका स्राव, स्वाद या सूँघनेकी ताकतका कम होना, श्लेष्मामें कभी-कभी बदबू रहना "गर्म कमरेमें या सन्ध्याके समय उपसर्गोंका बढ़ना और खुली जगहमें कम होना।"

कैलि-सल्फ ३, १२—पल्सेटिलाके सेवनसे बीमारी कुछ घटनेपर या सर्दीकी घरघराहट रह जानेपर इसका प्रयोग होता है। पल्सेटिलासे फायदा न होनेपर भी इसे देना चाहिये।

लाइकोपोडियम ३०—(द्वितिया या शीर्ण अवस्थाकी एक उत्तम दवा है) "रातमें नाक बन्द हो जाती है" और इसी कारणसे मुँहसे ही साँसका काम लेना पड़ता है।

स्टिक्टा १x, ३—नाक बन्द हो जाना, नाकके ऊपर कपालमें दर्द, नाक सूखी या पपड़ीयुक्त, सूखी खाँसी (साँस लेनेपर बढ़ना),

बार-बार नाक छिड़कना, परन्तु सर्दीका न निकलना (शीर्ण अवस्थाकी दवा देखिये)।

कैलि-बाइक्रोम ३x, ६—(इसकी क्रिया स्टिक्टासे गम्भीर होती है) नाकसे गाढ़ा, कड़ा, डोरीकी तरह स्राव होता है। नाककी ताड़में दबाव मालूम होता है, पपड़ी जमती है या नाकमें जखम हो जाता है, नाकसे बदबू निकलती है (उपदंश विषका प्रभाव हो या न हो)।

कैलि-आयोड θ, ३०—(कैलि-बाइक्रोमकी तरह लक्षणोंमें उपदंशके कारण फैले हुए रोगमें) कड़ा या हरी आभा लिये, काले रंगका या पीला बदबूदार बलगम और जखम। पारे (मर्करी) के अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्गोंमें।

एण्टिम-टार्ट ६, ३०—पतली घरघर करनेवाली खाँसी। परन्तु खाँसनेपर भी बलगम नहीं निकलता; खाँसते-खाँसते रोगी हाँफने लगता है; मिचली और कभी-कभी वमन, स्वरभंग।

आरम-मेट ६x, २००—(उपदंशके कारण सर्दीमें नाकका धीरे-धीरे क्षय होनेपर) नाकमें पपड़ी जमती है, नाक जखमसे भरी हमेशा बन्द रहती है, गाढ़ा बदबूदार स्राव, नाककी हड्डी क्षय होती जाती है, रोगी हमेशा दुःखित रहता है या आत्महत्या करनेकी इच्छा करता है। पारा या कैलि-आयोडका अपव्यवहार होनेपर, यह ज्यादा फायदा करता है।

हिपर-सल्फर ३०—(ठण्डे पानीके स्पर्शसे नाक बन्द हो जाती है, कच्छु, प्रमेह या उपदंश धातुग्रस्त रोगियोंकी खाँसी), कैल्के-कार्ब ३०, सल्फर ३०, सोरिनम ३०, आर्स आयोड ६x, हाइड्रैस्टिस ६, नाइट्रिक एसिड ३०, फास्फोरस ६, सिपिया ३०, नक्स-वोमिका ३०, मर्क-प्रोटो ६x विचूर्ण, सिलिका ३० वगैरह दवाएँ बीच-बीचमें आवश्यक हो सकती हैं (पहले कही हुई "नयी सर्दी" की दवाएँ देखिये)।

आनुसंगिक चिकित्सा—खुली हवामें घूमना और ठण्डे पानीमें सवेरे धीरे-धीरे नहानेका अभ्यास करना, इस तरह शरीर सर्दी सहने लायक बन जाता है। सर्दी लगनेपर सहजमें शरीरको कोई खराबी नहीं पहुँचती।

तरुण स्वरयन्त्र-प्रदाह
(Acute Laryngitis)

स्वरयन्त्रकी श्लैष्मिक-झिल्लीका फूलना और लसदार श्लेष्मा निकलनेका नाम "स्वरयन्त्र-प्रदाह" या "लैरिंजाइटिस" है। गला कुटकुटाना और जलन मालूम होना, कड़ा श्लेष्मा निकलना, कुत्तेकी आवाज-जैसी सूखी हुई खाँसी (बहुत कुछ काली खाँसीकी तरह); स्वरभंग, बुखार, प्यास, भूख न लगना, श्वासकष्ट वगैरह इस रोगके 'प्रधान लक्षण' हैं। सर्दी लग जाना, पानीमें भीगना, गलेमें धूलके कण या धुएँका जाना, भीड़-भरी जगहमें रहना, जोरसे गाना या व्याख्यान देना, जिसमें स्वरयन्त्रका ज्यादा व्यवहार होता हो, एकाएक हवाकी गति बदल जाना — इन कारणोंसे यह बीमारी पैदा होती है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) रोगके आरम्भमें—ऐकोन, स्पंजिया, ऐण्टिम-टार्ट।

(२) पूर्ण विकसित अवस्थामें—ब्रोमिन, आयोड, स्पंजिया, कैलि बाई, हिपर-सल्फर।

(३) रोगकी घटा-बढ़ीके अनुसार— पन्द्रह मिनटसे लेकर तीन घण्टेका अन्तर देकर दवाएँ दी जा सकती हैं।

एकोनाइट ३x—खाँक-खाँककर तकलीफ देनेवाली खाँसी (ठंडी सूखी हवा लगनेके करण पैदा हुई), ज्वर, उत्कंठा, बेचैनी, गलेमें दर्द, दम अटक जाना प्रभृति लक्षणोंमें इसका प्रयोग करनेसे लाभ होता है।

बेलेडोना ३—तेज बुखार (रोगीके शरीरपर हाथ रखनेसे मानो हाथ जला जाता हो), कुत्ता भूकनेकी तरह खाँसी, औंघाई, नर्त्तन (twitching), चेहरा तमतमाया और लाल, आँखकी पुतली फैली या सिकुड़ी हुई, शरीरके ढँके हुए हिस्सेमें पसीना होना, गलेमें दर्द, प्रलाप।

ब्रोमियम १x—(ताजा तैयारकर सेवन करना चाहिये)। वायु-नालियोंके ऊपरी अंशपर रोगका हमला होनेपर बच्चा अपना गला दबाकर पकड़ लेता है।

स्पंजिया ३x या **आयोडिन** ३— सूखी, कड़ी और कुत्ता भूकनेकी आवाजकी तरह खाँसी, स्वरभंग, गलेमें मानो कुछ अड़ा हुआ है, ऐसा मालूम होना ; श्वास लेनेमें कष्ट ; आधी रातके पहले बीमारीका बढ़ना। कमजोर बच्चोंको स्पंजियाके बदले आयोडिन देना चाहिये।

कैलि-बाइक्रोम ३x, ६ विचूर्ण—गाढ़ा लसदार डोरीकी तरह कड़ा पीले रंगका श्लेष्मा निकलना।

हिपर-सल्फर ६—खाँसी ढीली होती जाती हो, लेकिन गलेकी आवाज बिगड़ी हुई रहे ; खाँसीमें घरघराहट ; सूखी ठंडी हवा लगनेपर रोग बढ़ता हो और गर्मी लगनेपर कम होता हो।

फास्फोरस ३—स्वरभंगकी उत्तम दवा है।

कास्टिकम ६—स्वरभंग और सीनेमें दर्द होनेपर।

आर्सेनिक ३x, ६—बहुत कमजोरी ; सान्निपातिक ज्वरके लक्षणमें वह लाभदायक है।

आनुसंगिक चिकित्सा—बहुत गर्म पानीमें कपड़ा भिगोकर उसे अच्छी तरह निचोड़, गलेपर प्रयोग करनेसे फायदा होता है। गर्म कपड़ेसे बदन ढँके रखना चाहिये। बीड़ी, सिगरेट आदि धूम्रपान, शराब या बिछावनसे उठना मना है। गर्म पानी या गर्म दूध पीना लाभदायक

है। खाँसी दबानेके लिये, ऐलोपैथ डाक्टर कोडीन (codein—अफीमका एक उपक्षार) चार-चार घंटेपर देते हैं। हमारे मतसे यह ठीक नहीं है।

पुराना स्वरयन्त्र-प्रदाह
(Chronic Laryngitis)

स्वरयंत्रपर बार-बार रोगका हमला होना, जोरसे गाना या व्याख्यान देना, स्वरयन्त्रसे बहुत काम लेना, गलेमें धुआँ, धूलके कण आदिका जाना वगैरह कारणोंसे "स्वरयंत्रका पुराना प्रदाह" पैदा होता है। गला साफ करनेके लिये रोगीको बराबर खाँक-खाँककर खाँसना या श्लेष्मा निकलना, "स्वर-भंग" या स्वर लोप, स्वरयन्त्रके सिकुड़नेकी वजहसे श्वासकष्ट वगैरह इसके "प्रधान लक्षण" हैं।

चिकित्सा—कास्टिकम ३, ६—स्वरभंग, सूखी खाँसी, खाँसते-खाँसते रोगीको पेशाब हो जाता है; व्याख्यान देनेवालोंका स्वरयन्त्र-प्रदाह।

आर्जेण्टम-मेट ६x विचूर्ण, ६—गानेवालोंकी बीमारीमें यह खासकर ज्यादा फायदा करता है।

आर्निका ३—स्वरयंत्रके बहुत ज्यादा व्यवहारसे (जैसे—व्याख्यान देना) पैदा हुई बीमारीमें लाभ करता है।

पल्युमेन ६—बूढ़ोंके पुराने स्वरयन्त्र-प्रदाहमें।

सेलेनियम ६—वृद्ध पुरुषोंको स्वरभंग होनेपर।

ड्रोसेरा २x, ६—बहुत देरतक सूखी खाँसी, खाँसते-खाँसते दम रुक जानेकी तरह हो जाना, गलेको किसीने छील दिया है, ऐसा मालूम होना। आवाज गम्भीर और अस्वाभाविक; बोलनेसे ही रोगीके गलेमें तकलीफ होती है।

कैलि-आयोड θ (५—१० ग्रेन), ३०—गर्मी रोगकी तीसरी अवस्थामें स्वरयंत्र-प्रदाह होनेपर।

"नया स्वरयन्त्र-प्रदाह" रोगकी "दवाएँ" और "आनुसंगिक चिकित्सा" देखिये।

वायुनलीभुज-प्रदाह

(Bronchitis—ब्राङ्काइटिस)

नये वायुनलीभुज-प्रदाहमें—बड़ी और छोटी-छोटी साँसकी नालियोंकी श्लैष्मिक झिल्लीपर रोगका हमला होता है। बहुत बच्चे और बूढ़ोंको यह बीमारी होनेपर खराबी हो सकती है। बहुत देरतक गीले वस्त्र पहनना; बरसाती पानीमें भींगना, ओस या सर्दी लगना, एकाएक पसीना रुक जाना वगैरह "कारणों" से यह रोग पैदा होता है।

लक्षण—पहले सरमें दर्द, आलस्य, इसके बाद धीमे बुखारका भाव, वक्षमें गर्मी मालूम होना, स्वरभंग, स्वासकष्ट (कलेजा जकड़ जानेकी तरह मालूम होना)। "पहली अवस्थामें"—सूखी खाँसी, फिर फेनकी तरह, अन्तमें गाढ़ा पीले रंगका बलगम निकलना; जीभ मैल-भरी और पेशाब परिमाणमें कम होना। "दूसरी अवस्था"—बहुत श्वासकष्ट. गलेका घरघराना (बदनका ताप १०४ डिग्रीतक), ठण्डा, लसदार पसीना, दोनों गाल पीले या नीले; सूखी और रुखड़ी जीभ, पेशाब परिमाणमें कम और हाथ-पैर ठण्डे। चार-पाँच दिनोंमें रोगका घट जाना अच्छा है, नहीं तो बीमारी बढ़ जाती है। वृद्धोंको यह रोग पुराने रूपमें ही अक्सर होता है।

अशुभ लक्षण—ठण्डे पसीनेसे समूचा बदन तर रहना, गाल, ओंठ बदरंग या नीले होना, हाथ-पैर ठण्डे, गला घरघराना, साँस रुकना, सुस्ती और अन्तमें एकदम बेहोश होकर मृत्यु होती है।

पुराना वायुनलीभुज प्रदाह वह कुछ एक दूसरी ही बीमारी है, यह बुढ़ापेमें ही होती है। बराबर खाँसी आती है और इसी वजहसे ज्यादा हवा या भाव इकट्ठो होकर तन्तु फैल जाते हैं, वायुनली फैलती है, श्वास-प्रश्वास छोटा होता आता है, बहुत कफ निकलता है, बुखार नहीं रहता वगैरह इसके 'प्रधान उपसर्ग' हैं।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) नये वायुनलीभुज-प्रदाहमें—ऐकोन, एण्टिम-टार्ट, इपि, ब्रायो, फास, कैलि-बाई।

(२) पुराने वायुनलीभुज-प्रदाहमें—ऐण्टिम-टार्ट (ज्यादा ढीला श्लेष्मा); कैलि-बाई (कड़ा डोरीकी तरह बलगम); मर्क (पीबकी तरह बलगम) ऐमोन-कार्ब (बराबर खाँसी और स्वरयन्त्रमें केश अड़ा रहनेकी तरह मालूम होना); कार्बो-वेज या आर्स (बेहद कमजोरी; सिलिका, फास, सल्फर, एसिड-नाइट्रिक, कैक्टस। ज्यादा बलगम निकलनेपर क्रियोजोटकी भाफकी (थोड़े खौलते हुए पानीमें तीन-चार बून्द क्रियोजोट डालकर) गन्ध लेनेसे बलगम निकलना बन्द होता है और उसके साथ ही बदबू भी बन्द हो जाती है।

(३) बच्चोंके वायुनलीभुज-प्रदाहमें—ऐण्टिम-टार्ट (ज्यादा बलगम रहनेपर); इपिका (आक्षेपिक खाँसी); पल्सेटिला (ढीली खाँसी); ऐकोन, ब्रायो, फास्फोरस।

ऐकोनाइट ३x—सीने और गलेमें सुरसुरी होकर तकलीफ देनेवाली खाँसी और इसी वजहसे कपाल और कनपटीमें दर्द होता है। रोगके आरम्भमें यह दवा दी जाती है, तो प्रायः फायदा ही होता है।

बेलेडोना ६—(ऐकोनाइटके प्रयोगमें ज्यादा फायदा न होनेपर) सूखी खाँसी; बुखार; सरमें दर्द; आँखें और चेहरा लाल; रोशनी या आवाज रोगी सहन नहीं कर सकता।

ऐण्टिम-टार्ट ६, ३०—खाँसते खाँसते साँस बन्द होनेकी आशंका; टुकड़े-टुकड़े श्लेष्मा निकलना; साँय-साँय शब्द; कमर, पीठ और

माथेमें दर्द और कलेजा धड़कना (बूढ़ों और बच्चोंका वायुनली-प्रदाह), गला घरघर करता है ; परन्तु थोड़ा वलगम निकलता है ।

ब्रायोनिया ३x, ३०—गलेकी नली और बड़ी-बड़ी साँसकी नलियोंपर रोगका हमला होकर, बहुत ही कष्ट देनेवाली खाँसी आती है ; सूखी खाँसी, खाँसनेपर सीनेमें दर्द होता है, हिलने-डुलनेपर दर्द बढ़ता है, पीले रंगका गाढ़ा और खून-मिला श्लेष्मा निकलता है ; खाँसते-खाँसते दर्दके कारण हाथसे कलेजा दवा रखता है । "बाहरसे गर्म कमरेमें घुसते ही खाँसी आने लगती है ;" कष्टकर खाँसी ; खाँसीके कारण सो नहीं सकता ; "उठ बैठना पड़ता है ।"

कैलि-बाइक्रोम ६, १२—स्वरनली और वक्षस्थलका प्रदाह ; छोटी-छोटी स्वरनलियोंपर हमला होकर कष्ट देनेवाली खाँसी ; बहुत देरतक खाँसते-खाँसते गोंदकी तरह सादा या गन्दा वलगम निकलता है । पीले रंगकी मैली जीभ, भूख न लगना ।

आर्सेनिक ३, १२, ३०—थोड़ा श्लेष्मा निकलता है ; सोनेपर दमा जैसा साँस लेने, छोड़नेमें कष्ट होता है ; खाँसते-खाँसते रातमें नींद खुल जाती है ; कभी-कभी खाँसते-खाँसते पतला श्लेष्मा निकलता है । (बूढ़े और कमजोर मनुष्यके पुराने वायुनलीभुज-प्रदाहमें) ।

पल्सेटिला ३—बहुत ज्यादा वलगम निकलता है ; सोये रहनेपर या गर्म कमरेमें या बिछावनकी गर्मीसे खाँसी बढ़ जाती है ; खुली हवामें बहुत कुछ अच्छा रहता है ; रातमें सूखी खाँसी, दिनमें पतला वलगम ।

कार्बो-वेज ६, १२, ३०—रोगकी पुरानी या चरम अवस्थामें रोगीके हाथ और पैरके तलवे ठण्डे ; बहुत कमजोरी ; हाथ-पैरोंके नख नीले ; स्वरभंग ; बहुत ज्यादा श्लेष्मा निकलना ।

फास्फोरस ३—बच्चोंके ब्रांको न्युमोनिया रोगमें । सूखी खाँसी ; बोलने, हँसने, गाने, पढ़ने और कमरेके भीतरसे ठण्डमें बाहर आनेपर

खाँसी आने लगती है ; सीनेमें भरा रहता है, मानो एक बोझ लदा हुआ है। बलगमका स्वाद मीठा।

चायना ६, १२, ३०—बहुत ज्यादा परिमाणमें श्लेष्मा निकलना और इसी वजहसे रोगीका कमजोर हो जाना ; सीनेपर बोझसे दबा रहनेकी तरह मालूम होना ; बलगम मीठा।

इपिकाक ३—कंठनलीसे श्लेष्माका घरघराना ; हमेशा मिचली बनी रहना।

कास्टिकम ३०—स्वरभंग ; खाँसते-खाँसते बलगमका ढेला छिटक पड़ता है।

मर्क-सोल ६—ढीली सर्दी और पसीना रहनेपर। रातके समय बीमारी बढ़ जाती है।

आर्स-आयोड ३x—ज्वर, रातमें पसीना, श्वास-कष्ट, पीबकी तरह बलगम निकलना, बहुत कमजोरी, क्षयकासके लक्षण रहनेपर।

सैंगुइनेरिया ३—आक्षेपयुक्त सूखी खाँसी या ज्यादा परिमाणमें बलगम निकलना, छातीमें खोंचा मारनेकी तरह दर्द या जलनका दर्द, नाकमें सर्दी वगैरह लक्षणोंमें।

ऐमोन-कार्ब ३—*श्लेष्मा या बलगम निकलनेमें तकलीफ।*

हिपर-सल्फर ६—ज्यादा परिमाणमें पीला बलगम निकलना और स्वरभंग। सर्दीमें जाने या सर्द चीजें खानेसे ही खाँसी आने लगती है।

सल्फर ३०, नाइट्रिक एसिड ६, स्पन्जिया ३x, ऐमोन-कार्ब ३x, सेनेगा θ, कोनायम ३, हायोसायमस ३ वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

साधारण नियम—सोनेके समय सरके नीचे मोटी तकिया लगाना उचित है। छातीपर सरसोंकी पुल्टिस लगानेसे कभी-कभी फायदा होती है। रोगीके कमजोर हो जानेपर मांसका शोरबा दिया जा सकता

है। ओस या सर्दी लगने देना मना है। "पुरानी सर्दी" की 'आनुसंगिक चिकित्सा' देखिये।

"न्युमोनिया" या "फेफड़ेका प्रदाह" देखिये।

वक्षावरक-झिल्ली या फुसफुसवेष्ट-प्रदाह
(Pleurisy—प्लुरिसी)

इस रोगमें फेफड़ेके ऊपरी भागकी या वक्षके प्राचीरके चारों ओरकी झिल्लियोंमें प्रदाहके साथ बुखार, कम्प, सूखी खाँसी और (खाँसनेके समय) पसलियोंका जोरका दर्द वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। एक तरहके जीवाणु ही इस रोगके "मुख्य कारण" हैं। सर्दी लगना, ऋतु-परिवर्त्तन, एकाएक पसीना रुकना, स्वास्थ्य-भंग, यक्ष्मा रोग भोगना, नश्तर लगवाने या गिरने या वक्षमें चोट वगैरह कारणोंसे यह रोग हो सकता है।

चिकित्सा—ऐकोनाइट ३x—गर्मी, प्यास, कँपकँपी और वातसे पैदा हुआ वक्षस्थलका दर्द। रोगकी पहली अवस्थामें ऐकोनाइट ३० तीन चार मात्रा खानेसे, अकसर वहुत पसीना निकलकर यह वीमारी कम पड़ जाती है। ऐकोनाइटके वाद अक्सर व्रायोनियाकी जरूरत पड़ा करती है।

व्रायोनिया ३, ३०—छातीमें जलन, डंक मारने या चिलक मारनेकी तरह दर्द, जरा हिलने-डुलनेसे ही या साँस लेनेके समय दर्द वढ़ता है ; सूखी खाँसी, पीली जीभ, तीता स्वाद और कब्जियत वगैरह लक्षणोंमें इसका प्रयोग होता है।

एपिस ६, ३०—श्वासमें कष्ट ; रोगी समझता है कि वह अव साँस न ले सकेगा। जल्दी-जल्दी और कष्टकर श्वास-प्रश्वासकी क्रिया होती है ; वायीं करवट सोनेपर वढ़ जाता है। वक्षमें वाईं तरफ सुई

गड़नेकी तरह दर्द होता है। समूचे सीनेमें (सामनेवाले भागमें) जलन और काँटा गड़नेकी तरह दर्द, ज्वर, सूखी खाँसी रहनेपर।

कैन्थरिस ६, ३०—श्वासयन्त्र सूखे और कमजोर मालूम होते हैं। लम्बी साँस छोड़ने या बोलनेसे रोगी डरता है। फुस्फुसवेष्ट (प्लुरा) में रस-सञ्चय, सूखी खाँसी, श्वासकष्ट, कलेजा धड़कना, आवाज क्षीण।

कार्बो-वेज ६, ३०—फुस्फुसवेष्टके भीतर निकला हुआ रस बदलकर पीब हो जानेकी आशंका, रोगी कमजोर और सुस्त रहता है। पुरानी ब्रांकाइटिसके साथ यह बीमारी ; पुरानी प्लुरिसीके साथ दमा। सीनेमें आगसे जल जानेकी तरह जलन, केवल हवा करनेके लिये कहता है। बलगम खट्टा या नमकीन रहता है और उसकी गन्ध भी खराब रहती है।

कैलि-बाइक्रोम ६, ३०—लसदार बलगम, थूकनेके समय वह लम्बा होकर मुँहके बाहर झूलता रहता है, ऐसा मालूम होता है मानो खींचनेपर और भी सूतकी तरह लम्बा हो जायगा। सीना चपक जाता है, बलगम निकालनेके बाद हाँफा करता है और खाँसता है। गलेमें सुरसुरी होकर खाँसी आती है, कलेजा धड़कता है, श्वासमें तकलीफ होती है, लेटनेपर ऐसा अनुभव होता है, मानो साँस रुक जायगी। नाड़ी असम, तेज और कमजोर।

कैलि-म्यूर ६x, २००—लसदार बलगम, सहजमें निकाला नहीं जा सकता, मुँहमें चिपका रहता है, पसलियोंमें दर्द, श्वासमें तकलीफ। रोगकी द्वितीय अवस्थामें इसका प्रयोग होता है।

सिमिसिफ्यूगा ६—वक्षस्थलके दर्दमें। बोलनेसे ही खाँसी आने लगती है।

आर्सेनिक ३x, ६—बहुत दिनोंतक यह रोग भोगते रहनेपर ; साँस लेने और छोड़नेके समय सीनेमें दबाव मालूम होना, रह रहकर दम अटक जाना ; शरीर ठण्डा, बहुत सुस्ती वगैरह लक्षणोंमें यह फायदा करता है।

आयोडिन ३—रोगी बहुत कमजोर हो जाये या बहुत दुबला हो पड़े, बहुत दिनोंतक बीमारी भोगते रहनेपर श्वास-प्रश्वासमें कष्ट, चित्त होकर लेटने और गर्मीसे खाँसी बढ़नेपर आर्सेनिकके बदले आयोड देना चाहिये।

हिपर ६, ३०, २००—बहुत दिनोंतक अगर रोग भोगता हो, रोगकी गति हल्की ; ऐसा मालूम हो कि जल्दी अच्छा न होगा।

फास्फोरस ६, ३०—फेफड़ेपर हमला होना, बलगमका रंग मोर्चा लगनेकी तरह ; सुस्ती, खासकर कमजोर धातु और यक्ष्माकी धातुवालोंके लिये यह ज्यादा उपयोगी है।

ऐण्टिम-टार्ट ३x विचूर्ण, ३०—खाँसी, गलेमें श्लेष्मा घरघराना, सीनेमें दबाव मालूम होना, मिचली, ज्यादा बलगम निकलना, कलेजा धड़कना, दम अटक जाना।

मर्क-सोल या वाइवस ६, ३०—रातके समय पसीना, पसीना होनेपर भी आराम नहीं मिलता है। "रातमें ही सब उपसर्ग बढ़ते हैं।" ज्वर घटनेपर भी तकलीफें नहीं घटतीं।

आर्निका ३x, २००—चोट लगने या बहुत देरतक कसरत करनेके बाद यह बीमारी होनेपर।

सल्फर ३, ३०—(पुराने रोगमें) वक्षके दर्दकी तेजी घटनेके बाद, श्वास-प्रश्वासमें या बलगममें बदबू रहनेपर यह दवा बीच-बीचमें सेवन करनी चाहिये।

टैनिक एसिड—ज्यादा परिमाणमें आप-ही-आप पीब निकलते रहनेपर।

सेनेगा ६x, ३० और बैसिलिनम २०० प्रभृति इस रोगकी उत्तम दवाएँ हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको स्थिर भावसे लेटे रहना जरूरी है। गर्म सेंक या पुल्टिस देना और आरारूट, शोरवा, ठण्डा पानी वगैरह हलकी चीजें देनी चाहिये। खून निकलवाना आदि त्याग देना चाहिये। ("फेफड़ेका प्रदाह" रोगकी "आनुसंगिक चिकित्सा" देखनी चाहिये)।

दमा (Asthma)

वक्षकी बीमारीकी वजहसे श्वासमें तकलीफ होनेपर ही दमा होता है, ऐसी कोई बँधी बात नहीं है, फेफडेकी हवाको वहन करनेवाली नलियाँ छोटी-छोटी पेशियोंसे घिरी हैं ; इन पेशियोंमें आक्षेप या अकड़न होनेकी वजहसे ही साँसमें कष्ट हो जाता है और गला साँय-साँय करने लगता है, इसीको "दमा" कहते हैं। दमासे तुरन्त जान नहीं जाती, पर तकलीफ बहुत होती है। इस रोगमें साँसमें बहुत तकलीफ होती है, गला साँय-साँय करता है, सीनेपर दबाव-सा मालूम होता है, शय्यापर लेटने या बैठे रहनेकी शक्ति नहीं रहती, हवा मिलनेकी आशासे रोगी दोनों कन्धे उठाये रहता है, इस रोगके ये ही लक्षण हैं। यह बीमारी अक्सर रातके आखिरी भागमें बढ़ती है। खाँसते-खाँसते बहुत तकलीफसे बलगम निकल जानेपर दमाका खिंचाव कुछ कम हो जाता है। इस खिंचावके साथ किसी-किसीको पेट फूलना, सर-दर्द, मिचली वगैरह उपसर्ग भी दिखाई देते हैं। दमाके साथ अक्सर अजीर्ण या वात रोग मौजूद रहता है। नाककी कोई बीमारी रहनेपर भी साँसमें तकलीफ हो जाती है। माता-पिताको यह बीमारी रहना, रातमें ज्यादा भोजन, खराब रक्त, हृदयकी कोई बीमारी रहना, स्नायविक या मानसिक उत्तेजना, हवाके साथ धूलके कण या कोई तेज गन्ध साँसके साथ देहमें घुस जाना वगैरह कारणोंसे यह बीमारी होती है। दमावाले रोगी बहुत दिनोंतक जिया करते हैं।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) रोगके आक्रमणके समय—ऐकोन या ऐकोन रेडिक्स θ, इपिका, क्यूप्रम, लोबेलिया, हाइड्रो-एसिड, सेनेगा θ (फी मात्रा ५ बुन्द), नेट्रम-सल्फ, ऐमिल-नाइट्रेट θ (सुंघना)।

(२) चर्म-रोगके उद्भेद आदि बैठ जानेके बाद दमा होनेपर—जिकम, सल्फर, ग्रैफाइटिस।

(३) पुराने दमा रोगमें—आर्स, कैलि-हाइड्रो, नक्स-वोम, सल्फ, *आर्ज-नाई, प्लम्बम, काक्युलस।*

(४) बच्चोंके दमामें—इपि, सैम्बुकस, जेल्स।

कई दवाओंके लक्षण—किसी दूसरी दवाकी काममें लानेके पहले "ब्लैटा ओरियेण्टेलिस" θ—३x सेवन करना चाहिये। श्रीयुत ईश्वर-चन्द्र विद्यासागरने इसी दवाको खिलाकर बहुतोंको अच्छा किया था। मैलेरियावाले रोगीके दमामें यह ज्यादा काम करता है, इससे फायदा न होनेपर दूसरी दवाएँ लक्षणके अनुसार दी जा सकती हैं।

कार्बो-वेज ६, २००—दमामें श्लेष्मा पतला और ढीला रहनेपर "कार्बो" खूब फायदा करता है। पहले बहुत ज्यादा बलगम निकलता है, धीरे-धीरे गाढ़ा, लसदार और पीवकी तरह हो जाता है। श्वास-प्रश्वासमें प्रायः हिस-हिस या साँय-साँय शब्द नहीं रहता, पर अगर नयी सर्दी हो जाती है, तो साँय-साँय आवाज बढ़ जाती है। जल्दी-जल्दी श्वास-प्रश्वास। कुछ दिनोंतक दमाका दौरा बन्द रहता है, फिर होता है। नींदमें एकाएक आक्रमण हो जाता है। रोगी उठ बैठता है और हाँफा करता है। साँस रुकती है, बहुत हवा चाहता है। वृद्धोंका दवा दमा।

हाइड्रोसियानिक एसिड ३x—नये दमामें यह फायदा करता है। श्वास-प्रश्वासमें साँय-साँय शब्द, मानो काँप-काँपकर श्वास चलता है। सूखी, आक्षेपिक, श्वासरोधक खाँसी, दमामें ऐसा मालूम होता है कि स्वरनली संकुचित हो गया है।

इपिकाक १x, ६—वक्षस्थलमें दबाव मालूम होना, जल्दी-जल्दी श्वास प्रश्वास, घरघर या साँय-साँय शब्द, सब शरीरमें ठडक, सब शरीर (खासकर चेहरा) पीला, बेचैनी, मिचली, जल्दी जल्दी तकलीफ देनेवाली खाँसी (अवस्था-विशेषमें पाँच मिनटसे ३० मिनटका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये)।

कास्टिकम ३०, १००—सवेरे (विशेषकर बरसात या कुहरा न रहनेपर सवेरे) स्वरभग और दमाका बढना, ठडा पानी पीनेके बाद खाँसीका वेग कम होना, सीनेके बीचकी हड्डीके नीचे मानो श्लेष्मा जमा हुआ है, ऐसा मालूम होना, कमरमें दर्द ।

आर्सेनिक ३x, ६, १२, ३०—फेफडेमें खून इकट्ठा होनेके कारण साँसमें कष्ट ; गलेका साँय-साँय करना ; लेटे रहना या हिलने-डुलनेसे बढना ; वक्षस्थलमें जलन और ठडा पसीना ; रातके बारह बजनेके बादसे दम फूलना बढता है, बुढे या कमजोर मनुष्योंके दमामें ज्यादा उपयोगी है। दमाके साथ कोई हृद्रोग या श्वासयन्त्रकी कोई बीमारी इपिकाकसे फायदा न होनेपर या इपिकाकके सेवनसे रोग कुछ कम होनेपर आर्स दिया जाता है।

लोबेलिय θ, ६—(रोग आरम्भ होते ही खिला देनेपर साँसकी तकलीफ बढने नही पाती)। "पेटके वक्षतक कमजोरी मालूम होना, मिचली या कै, पाकस्थलीमें कोई कडी चीज अडी हुई है"—ऐसा मालूम होना, आक्षेपके साथ दमा ; दम रुकनेका भाव लक्षणोंमें उपयोगी है।

ऐरालिया रेसिमोसा θ, ३—रोगी लेटा नही रह सकता ; रातमें सोनेपर आक्षेपिक खाँसी आने लगती है ; पहली नींदके बाद ही सूखी खाँसी शुरु हो जाती है और गलेमें सुरसुरी होकर दमाकी वृद्धि हो जाती है ; वक्षस्थलमें दबाव मालूम होता है ; ऐसा मालूम होता है, मानो गलेमें कुछ पडा है।

कैलि-कार्ब ३०, २००—दमाका खिचाव, उठ बैठने, सामनेकी तरफ झुकने या हिलनेसे कम हो जाता है। प्रबल खाँसीके बाद कष्टकर श्वास-प्रश्वास ; रातके दो बजेसे सबेरे ४ बजेके बीचमें दमा बढ़ता है।

कैलि-म्यूर ३x, ३०—पाचन-क्रियाकी गड़बड़ीके साथ दमा, यकृतकी क्रिया ठीक-ठीक नहीं होती, जीभ सफेद मैलसे ढँकी रहती है, कब्ज रहती है, बलगम सफेद रहता है, खाँसकर निकाला नहीं जा सकता। हृत्पिड और फेफड़ोंके भीतर कसावटका भाव।

कैलि-फास ३x, ६x—कुछ थोड़ा-सा खा लेनेसे ही दमा बढ़ जाता है, स्वरभंग और खाँसी आती है ; बलगम पीला, नमकीन और बदबूदार रहता है ; कमजोर रहती है। श्वासकष्टके समय प्रति आध घंटेके अन्तरसे ५ ग्रेन कैलि-फास गर्म पानीके साथ सेवन करनेपर फायदा हो सकता है।

सेनेगा θ—इपिकाक, आर्सेनिक और लोबेलियासे फायदा न होनेपर डा० नैशने यही दवा θ की मात्रा ५-६ बून्द देकर बहुत ही तेज दमाके रोगियोंको अच्छा कर दिया है। शक्तिकृत सेनेगा सेवनसे कोई फायदा नहीं होता (Nash's *Leaders in Respiratory Organs* देखिये)। हमलोगोंने नीचे लिखे लक्षणोंमें इसे बहुत लाभदायक समझा है:—खाँसी पहले सूखी और इसके बाद बहुत बलगम भरी और उसके साथ साँय-साँय शब्द और सीनेमें दबाव मालूम होना या अकड़ जाना ; "बहुत-सा बलगम जमा रहनेके कारण लगातार कष्टकर खाँसी और श्वासकष्ट पैदा हो जाता है।" "छातीमें घरघर शब्द" होता है ; स्वरभंग रहता है ; विश्राम करने या घूमनेसे उपसर्ग बढ़ते हैं और पसीना होने तथा सर झुकानेपर उपसर्ग घट जाते हैं।

एकोनाइट θ, ३,—दमाका खिचाव आरम्भ होते ही घबड़ाहट ; साँस लेनेमें कष्ट, हृत्पिडकी क्रिया मृदु ; आक्षेपिक दमा, सीनेमें दबाव

मालूम होना, कलेजा धड़कना, साँसमें कष्ट आदि लक्षणोंमें ऐकोन θ बहुत जगह जादूके मन्त्रकी तरह काम करता है।

क्यूप्रम-मेट ६—(स्नायविक दमा रोगमें) आक्षेप या बेहोशी ज्यादा होनेपर ; खिचावके बाद ही वमन।

कैलि-हाइड्रो θ, ३०—साबुनके फेनकी तरह बलगम निकलना, बार बार छींक, नाकसे पतला श्लेष्मा निकलना और साँसमें तकलीफ (पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुआ दमा या बात अथवा गर्मी रोगके बीमारोंके लिये ज्यादा फायदेमन्द है)।

नक्स-वोमिका १x, ३०—पाकाशयकी गड़बड़ीसे पैदा हुए वायुनलीभुज आक्षेपवाले दमा रोगकी शायद यह सबसे अच्छी दवा है। जीभ गहरे पीले रंगके मैलसे भरी, अजीर्ण, कब्जियत, पेट फूलना, मिचली, ओकाई, खाने-पीनेमें मनमानी करनेके कारण बीमारी ; ज्यादा उत्कंठा ; वक्षके बीचकी हड्डीके नीचे दर्द। बहुत ज्यादा बलगम निकलकर दमाका खिचाव कम हो जाता है।

विरेट्रम-विरिडि ३—चेहरेपर ठण्डा पसीना, आक्षेप-भरा श्वास-प्रश्वास, कै या मिचली, नाक, कान और पैर ठंडे, ऐंठन और सुस्ती।

सल्फर ६, ३०—ग्रन्थिवात, चर्म-रोग और दूसरे-दूसरे धातु-विकारसे पैदा हुए पुराने दमामें (दूसरी दवाओंके साथ बीच-बीचमें एक-एक खुराक सल्फर देनेसे उन दवाओंकी क्रिया अच्छी तरह प्रकट होती है)।

नेट्रम-सल्फ ६x विचूर्ण—प्रमेह या मैलेरिया धातुग्रस्त मनुष्योंके दमामें ; जलाशयके पास या तर स्थानमें रहनेकी वजहसे दमा और कफ प्रकृतिवाले मनुष्योंके लिये यह ज्यादा फायदेमन्द है।

बैसिलिनम या टियुबर्क्युलिनम ३०, २००—हफ्तेमें एक-एक मात्रा सेवनसे टियुबर्क्युलिनम धातुवालोंको बहुत बार उपकार हुआ करता है (खासकर वायुनलीभुजके दमा रोगमें)।

कैलि-कार्व ६, बेलेडोना θ—३x*, ऐम्ब्राग्रिसिया ३x, ड्रोसेरा ३x, हिपर ६, लैकेसिस ६, ऐण्टिम-टार्ट ६x, सैम्बुकस १x, लाइकोपोडियम १२, स्पंजिया ३ वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

साधारण नियम—भारी और देरमें पचनेवाली चीजें खाना मना है। शामके पहले ही दूसरी बेलाका भोजन, धारामें नहाना, घूमना, खुली साफ हवाका सेवन, गर्म पानी पीना और कफनाशक चीजोंका खाना हितकर है। Royal Society of Medicine नामक सभामें हालतमें ही एक डाक्टरने कहा है कि एक रोगीका चमड़ा आलू छूनेसे ही उत्तेजित हो उठता था ; आलू खाना छोड़ते ही वह अच्छा हो गया। ओस लगना या खूब तड़के खाटसे उठ बैठना अच्छा नहीं। फिटके समय अर्थात् जब दमाका जोर हो, उस समय धतूरेका चुरूट (stramonium cigarettes) का धुआँ पीनेसे फायदा होता है अथवा "ऐजमा रिलीफ" का धुआँ सूँघनेसे सामयिक लाभ हो सकता है ; परन्तु बहुत दिनोंतक यह सब न करना चाहिये, नहीं तो इससे नुकसान होगा। इपिकाक θ रूईमें १०-१५ बून्द डालकर उसे सूँघना अच्छा है। फिटकिरी (alum) का चूर १० या १५ ग्रेन जीभपर रख देनेसे शायद दमाका वेग बन्द हो जाता है। परीक्षा करनी चाहिये। ऐकोन या तार्पीनका तेल या गन्धक या थोड़ा नमक खूब गर्म पानीमें डालकर उसकी सुगन्ध लेनेसे फायदा होता है। एक तश्तरीमें कई ब्लाटिङ्ग कागज बिछाकर उसपर थोड़ा शोरा रखकर ब्लाटिङ्ग जलाकर उसके धुएँकी गन्ध लेनेसे रोगीको बहुत फायदा मालूम होता है ; परन्तु सावधान ! कमरेके दरवाजे, खिड़कियाँ खुली रहनी

---

* Dr. Lian कहते हैं कि बेलेडोना θ कुछ ज्यादा मात्रामें देनेसे दमाकी खिंचावट कम हो जाती है। बेलेडोनासे फायदा न होनेपर ऐड्रिनेलिनकी परीक्षा करनी चाहिये।

चाहियें, जिससे हवाका आवागमन बन्द न हो। रोगी अगर अपनी साँस, शक्तिके अनुसार रोक रखे, तो दमाका खिंचाव कम हो जाता है। दमाके रोगीको छोटा नागपुरमें रहना अच्छा है; परन्तु यकृतका दोष रहनेपर समुद्रके किनारेकी जगहमें रहना अच्छा है। कोई-कोई तर जगह (जैसे—चेरापुञ्जी) या कोई सूखी जमीन (जैसे- मधुपुर, वैद्यनाथ, गिरिडीह, गुजरात) में रहकर लाभ उठाते हैं, इसलिये, जिसके लिये जो जगह लाभदायक हो, उसके लिये उसी स्थानमें रहना अच्छा है।

फेफड़ेका प्रदाह
(Pneumonia)

फुस्फुस या फेफड़ेके 'विधान-तन्तु' में प्रदाह हो जाये या वह आक्रान्त हो पड़े, तो उसे "फेफड़ेका प्रदाह" या "न्युमोनिया" कहते हैं। फेफड़ेकी 'वायुनली' पर रोगका आक्रमण अथवा प्रदाह होनेको "ब्रोंकाइटिस" या "वायुनलीभुज-प्रदाह" और फेफड़ावेष्ट प्रदाहित या आक्रान्त होनेका नाम 'प्लुरिसी" या वक्षको ढँकनेवाली झिल्लीका प्रदाह' है। कभी-कभी "फेफड़ेके प्रदाह" के साथ "फुस्फुसवेष्ट-प्रदाह" होता है, उस समय उसका नाम एक साथ ही "फुस्फुस और फुस्फुसवेष्ट-प्रदाह" या प्लुरो न्युमोनियर होता है।

इस रोगमें एक ओरका या दोनों ओरका फेफड़ा प्रदाहित हो सकता है। एक ओरका (बराबर दाहिनी ओरका) फेफड़ा आक्रान्त होनेका नाम "एक ओरका (single) न्युमोनिया" और दोनों ओरके फेफड़े प्रदाहित होनेका नाम "डबल (double) न्युमोनिया" या दोनो ही फेफड़ाका प्रदाह है। सामान्य बुखार या बेचैनीके सिवा रोगी पहले किसी तरहकी तकलीफ नहीं मालूम करता है। इसके बाद, कन्धे और सीनेके हाड़के नीचे दर्द, तेज बुखार, सूखी खाँसी, तेज श्वास-प्रश्वास,

कमजोर या सूतकी तरह नाड़ी ; नाक और आँखें सूखी या श्लेष्माहीन, थोड़ा और लाल पेशाब वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। साँसमें बेहद बदबू होनेपर (खासकर बूढ़े और कमजोर मनुष्योंको) समझना चाहिये कि फेफड़ेका "सड़ना" (gangrene) हुआ है। इस रोगमें क्रमशः तीन अवस्थाएँ दिखाई देती हैं। जैसे—(१) सूजन या रक्तका रुक जाना (engorgement) अवस्था ; (२) निःसरण (exudation) अवस्था ; (३) उपशम या शोषण (resolution) अवस्था।

पहली या सूजनकी अवस्थामें—फेफड़ेमें खून इकट्ठा होकर जाड़ा लगकर बुखार आता है। शरीरका ताप १०३° से १०७ डिगरीतक, साँस लेने-छोड़नेकी गति फी मिनट ३०—३५ वार और नाड़ीका स्पन्दन १२०—१३० वार हो सकता है। पहले बुखार (उसके साथ कभी ऐंठन या अकड़न) पैदा होकर थोड़ी-थोड़ी साँसके साथ थोड़ा-थोड़ा लसदार बलगम निकलता है ; इसके बाद दूसरी अवस्था आरम्भ होती है। दूसरी अवस्था आरम्भ होनेके पहले लोहेके जंगकी भाँति या सुरखीकी तरहके रंगका या पीला, कड़ा, गाढ़ा-गाढ़ा श्लेष्मा निकलता है। खाँसनेके समय वक्षस्थलमें संकोचन, सरमें दर्द, अरुचि, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट होता है और नाड़ी पूर्ण और उछलती हुई रहती है। ऊपर कही हुई पहली अवस्थाका स्थितिकाल कई घंटेसे लेकर दो-तीन दिनोंतक रहता है।

इसके बाद **दूसरी अवस्था** शुरू होनेपर फेफड़ा कड़ा होकर दर्द कम हो जाया करता है। खाँसनेमें उतनी तकलीफ नहीं होती और बलगम पतला होकर निकलने लगता है।

इस तरह दोसे लेकर चार दिनोंतक दूसरी अवस्था मौजूद रहनेके बाद **तीसरी अवस्था** आरम्भ होती है। रोग आराम होनेकी ओर बढ़ता है, तो बुखार और फेफड़ेका दर्द कम हो जाता है ; खाँसी और बलगम निकलना भी बन्द हो जाता है ; परन्तु यदि बीमारी कड़ा

आकार धारण करती है, तो दूसरी अवस्थाको बाद ही फेफड़ेमें पीव पैदा हो जाता है और खाँसीके साथ बहुत-सा पीव निकलने लगता है। इसके बाद नाड़ी क्षीण, द्रुत और साँसका वेग बढ़कर रोगीकी ताकत बिलकुल घट जाती है और वह मर जाता है। कभी-कभी कमजोरीके कारण रोगी मुँहसे पीव निकाल नहीं सकता ; इसीलिये साँस बन्द होकर वह मर जा सकता है।

इस रोगकी परीक्षा करनेके लिये वक्ष-परीक्षा-यंत्र (स्टैथास्कोप) की मददकी जरूरत है। वक्षकी परीक्षा करनेपर मालूम होता है कि रोगकी आक्रमण अवस्थामें पहले कड़ी आवाज सुन पड़ती है, पीछे सरके केश घसने जैसी आवाज होती है। दूसरी अवस्थामें जब फेफड़ा कड़ा हो जाता है, तब कोई आवाज नहीं सुन पड़ती। तीसरी अवस्थामें जब फेफड़ेमें पीव पैदा होता है, तब केवल टप-टप शब्द सुन पड़ता है। दोनों ओरके फेफड़े आक्रान्त होनेपर समझना चाहिये कि रोग कड़ा हो गया है।

कारण—न्युमोकाकस नामक एक तरहका जीवाणु खासकर इस बीमारीके "मुख्य कारण" है। ऋतुका बदलना, पसीना रुकना, शरीरकी कमजोरी, बुखार आदि बीमारियोंमें फेफड़ेका कमजोर हो जाना, ओस या सर्दी लगना वगैरह इसके "गौण कारण" हैं।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) रोगके आरम्भमें—पहले **एकोन** और इसके बाद **फास्फारस** सेवन करनेपर, सहज साध्य रोगमें अक्सर किसी दूसरी दवाकी जरूरत नहीं पड़ती।

(२) इस रोगके साथ फुस्फुसवेष्टपर रोगका हमला होनेपर—ब्रायोनिया, फास्फोरस।

(३) इस रोगके साथ वायुनलीभुजपर रोगका आक्रमण हो, तो—ऐण्टिम-टार्ट, फास।

(४) इस वीमारीके साथके अन्यान्य उपसर्गोंमें—चेलिडोनियम (यकृत दोषमें); आर्स या नाइट्रिक एसिड (वूढ़े या क्षीण शरीर-वालोंके लिये); फेरम-फास (हल्का बुखार, खासकर बच्चोंको होनेपर); आयोड (गंडमालाग्रस्त रोगियोंके लिये); सल्फर (बहुत दिनोंतक रोग भोगनेपर); रस-टक्स, आर्सेनिक या बैप्टीशिया (सान्निपातिक लक्षणोंमें) कार्वो-वेज, आर्स या लैके (बदबूदार श्वास-प्रश्वास या सड़नेके लक्षणमें); कैक्टस (वक्षमें खून जमा होनेपर); विरे-विर (मस्तिष्क-कशेरुका उपदाहमें); आर्निका (चोट या वहुत परिश्रमसे पैदा हुई वीमारीमें); लाइको (जोरका दर्द रहनेपर या न्युमोनियाके वाद वायुनलीभुज उपदाहमें)।

एकोनाइट ३x ६—रोगकी पहली अवस्थामें, ज्वर-भाव ; सर्दी, वहुत सुस्ती, वेचैनी, दोनों कन्धोंके बीचमें अथवा वक्षस्थलमें दर्द, थोड़ी खाँसी ; तीसरे पहर वीमारीका वढ़ना ।

फास्फोरस ६, ३०—वरावर कष्टकर खाँसी ; वक्षस्थलमें तेज दर्द ; पीला या हरे रंगका या खून-मिला श्लेष्माका स्राव ; नाड़ी द्रुत ; केश घसनेपर जैसी आवाज होती है, फेफड़ेसे वैसी ही आवाज वक्ष-परीक्षाके समय आती है । वच्चोंके व्रांको न्युमोनियामें लाभदायक है ।

हिपर-सल्फर ६—श्लेष्मा या पीव होनेपर (पुराने न्युमो-नियामें)। साधारण-सर्दीमें और सवेरे खाँसी वढ़ती है, सीनेपर स्पर्श सहन नहीं होता ।

व्रायोनिया ६, ३०—वार-वार सूखी और खुसखुसी खाँसी, परन्तु वलगम थोड़ा निकलता है ; वक्षस्थलमें सुई गड़ने या कसकर पकड़नेकी तरह दर्द ; साँस लेनेके वाद दर्दका वढ़ना ; समूची देहमें दर्द, तेज प्यास और कब्जके लक्षणमें ।

हायोसायमस ३—खाँसी और तकलीफ देनेवाला स्वप्न, प्रलाप, कामुकता और अंतिमावस्थामें विछावनकी चादर नोंचना लक्षण रहनेपर।

क्यूप्रम ३—पक्षाघात होनेका डर रहनेपर।

कार्बो-वेज ३०—रोगीका रंग हरा और हाथ-पैर, अंग-प्रत्यंग ठ
तथा समूचे शरीरमें ठण्डा पसीना, मुँहके पास जोरसे हवा करनेक
कहता है और हवासे बीमारी घटती है।

आयोड ३—फी घण्टे सेवन करनेसे फेफड़ेकी, यकृतकी आकृति
धारण (hepatization) में बाधा पहुँचती है।

एमोन-कार्ब ३—ऊँघानेका भाव अधिक बढ़ा दिखाई देनेपर यह
लाभदायक है।

वैसिलिनम ३०—(चुनी हुई दवाके साथ हफ्तेमें एक बार सेवन
करना चाहिये)। क्षयकासकी तरह फेफड़ेका प्रदाह, खून जाना लक्षण
रहनेपर।

एकालिफा इण्डिका ३—चमकीला लाल रंगका खून निकलना;
तेज खाँसी।

हैमामेलिस १x—कालिमा लिये खून जाना, थक्का-थक्का रक्त
निकलता है।

चायना ३ या **एसिड-फास** १—रस-रक्त क्षय होनेके कारण पैदा
हुई कमजोरी।

मिलिफोलियम १x—लाल फेन-भरा खून निकलना।

विरेट्रम-विर १x—(पहली अवस्थामें जब फेफड़ेमें रक्त-संचय
होता है) सीनेमें गर्मी, तकलीफ और भार मालूम होना; जाड़ा
लगना; जल्दी-जल्दी और कष्ट देनेवाला जोरका श्वास-प्रश्वास और
सूखी खाँसी; नाड़ी पूर्ण, कठिन और उछलती हुई (यहाँतक कि
अंगुलीसे दवा रखनेपर भी बन्द नहीं होती); कपालमें ठण्डा पसीना।

एण्टिम-टार्ट १२—श्वासनलीमें प्रदाह, गलेमें घुरघुरीके साथ
खाँसी और साँय-साँय शब्द; बिना तकलीफके बहुत-सा बलगम
निकलना; नाड़ीका वेग बढ़ जाना, परन्तु शरीरका ताप कम; ज्यादा

मात्रामें ठण्डा पसीना होना ; बहुत उत्कंठा और बेचैनी ; चेहरा काला या पीला ; माथेमें खून जमा होना ।

जेलसिमियम ३x, ६—दाहिनी ओरके फेफड़ेमें प्रदाह और उसके साथ ही यकृत-प्रदेशमें दर्द ; पीले रंगके लसदार पतले दस्त और साँसमें तकलीफ। चेहरा लाल आभा लिये, सर-दर्द, निर्जिव-भाव, तन्द्रा-भाव और हतबुद्धि-भाव तथा कम्पन ।

सल्फर ६, ३०—फेफड़ेके प्रदाहकी पहली अवस्थामें या पीव पैदा होनेके पहले चुनी हुई दवासे आशाके अनुसार फायदा न होनेपर इसकी २-३ मात्रा देनी चाहिये ।

लाइकोपोडियम १२, ३०—रोगकी तीसरी अवस्थामें पीव पैदा होनेपर। दाहिनी तरफका न्युमोनिया और उसके साथ ही यकृतकी गड़बड़ी ; एक-एक बार बहुत-सा बलगम निकलता है। बलगम पीला या भूरे रंगका पीला ; कुछ जंग लगे रहनेकी तरह, बलगम बदबूदार और पीवकी तरह अथवा खून-मिला। टाइफायडके साथ न्युमोनिया ; श्वास-प्रश्वासके साथ दोनों नासा-फलकोंका चढ़ना-उतरना ।

आयोडियम ६, कैलि-म्यूर १२x, चेलिडोनियम ३, फेरम-फास १२x चूर्ण, आर्सेनिक ३, सैंगुइनेरिया १, सेनेगा १x—३०, ये दवाएँ भी कभी-कभी आवश्यक हो सकती है ।

सान्निपातिक-बिकार लक्षण-भरे फेफड़ेके प्रदाहमें—लाइको-पोडियम १२ (तर खाँसी या बराबर खुसखुसी खाँसी), आर्सेनिक ३x (बुखार, सुस्ती, प्रलाप. ; तन्द्रा या मोह ; जीभ सूखी), रस-टक्स (बहुत बेचैनी, खाँसते-खाँसते मानो रोगीका कलेजा फट जायगा—ऐसा मालूम होना, जीभका अगला भाग नीला, बहुत औंघना ।

साधारण नियम—छाती और पीठको रूईमें ढँक रखना अच्छा है। खिड़की, दरवाजे बन्दकर या कोठरीमें आग जलाकर, कोठरीकी गर्मी बेफायदा न बढ़ाई जाय, इससे नुक्सानीका भय रहता है। घरमें

हवा आती-जाती रहे, पर रोगीके बदनमें ठण्डी हवा न लग जाये (परन्तु ज्यादा कपड़ेका भार भी रोगीपर न डाल दिया जाय); रोगीको स्थिर भावसे रखना आवश्यक है। साबू, वार्ली, आरारूट, दूध, मूँग या मसूरकी दालका शोरवा वगैरह पथ्य अवस्थाके अनुसार देना चाहिये।

खाँसी (Cough)

"खाँसी" दूसरी बीमारीका लक्षणभर है। गलेकी नलीका बिगड़ना, पाकस्थलीकी क्रियाका विकार, फेफड़का प्रदाह, यकृतकी बीमारी, सर्दी वगैरह रोगोंके साथ खाँसी अक्सर मौजूद रहती है। खाँसी खासकर दो तरहकी है—तरल (ढीली) और कठिन (सूखी)। यक्ष्मा रोगमें, बुखार और वक्षस्थलमें दर्दके साथ शरीरको क्षय करनेवाली खाँसी मौजूद रहती है। दमा रोगके साथ जो खाँसी रहती है, वह रातमें बढ़ती है और साथ ही साँसकी तकलीफ भी मौजूद रहती है। न्युमोनिया रोगमें ईंटके चूरकी तरहके रंगके थोड़े थूकके साथ खाँसी रहती है। रक्तोत्कासमें चमकीले रक्तके साथ खाँसी और क्रुप खाँसीमें घ-घ शब्द करनेवाली खाँसी आती है। यद्यपि खाँसी दूसरे रोगका एक उपसर्गभर है, तथापि बहुत दिनोंतक खाँसी बनी रहनेपर या नीचे लिखी दवाएँ खा लेनेपर भी एकदम आराम न होनेपर, समझना चाहिये कि रोगी धातु-विकृति हुई है। इसके निवारणके लिये उपयुक्त होमियोपैथिक डाक्टरकी सहायता लेनी जरूरी है।

चिकित्सा—एकोनाइट ३x, ६—सूखी, कड़ी और नयी खाँसी, उसके साथ ही बेचैनी, सरमें दर्द, चेहरेका रंग लाल, प्यास, गला सूखा और उसमें जलन, थोड़ा पेशाब, कब्जियत वगैरह लक्षणोंमें; चित्त होकर सोनेपर खाँसी घट जाती है, करवट सोनेपर और पानी पीने या धूम्रपान करनेपर बढ़ जाती है। खाँसनेके वक्त छातीमें खोंचा मारनेकी

तरह दर्द ; सूखी ठण्डी हवा लगनेकी वजहसे खाँसी। रातमें, खासकर आधी रातके समय खाँसी बढ़ती है।

इपिकाक ३x—लगातार छींक, सीनेमें बलगम खूब, परन्तु खाँसनेपर निकलता नहीं ; आक्षेपिक या साँस रोकनेवाली खाँसी, स्वरनलीमें सुरसुराहट या जखमके साथ साँय-साँय शब्द या बहुत ज्यादा बलगम इकट्ठा होकर घरघर शब्द, खाँसनेके वक्त नाभीमें दर्द ; मिचली या कै ; हूपिंग खाँसी (कुकुर खाँसी) की पहली अवस्था ; स्वरभंग।

सिना ३x—सूखी खाँसी, कभी-कभी निकलती है ; नाकमें जलन होती है, खाँसीके कारण सो नहीं सकता, उठ बैठना पड़ता है। प्रचंड खाँसी रातमें ही ज्यादा होती है, क्रिमिकी धातुके बच्चोंके लिये उपयोगी है।

स्पिंजिया ३०—दिन-रात लगातार पसीना होता है, बलगम निकाल न सकनेके कारण निगल जाता है, सीनेमें कफ जमा होनेकी वजहसे खाँसी।

कैल्के-कार्ब ६—रातमें सूखी खाँसी, पहली नींदके बाद ही खाँसी ; सोनेके समय सूखी खाँसी और दिनमें पतला बलगम निकलता है और खाँसी आती है। सीनेके भीतर घरघराहट रहती है और गलेमें सुरसुरी होती है। बलगमका स्वाद कुछ मीठा रहता है, कभी-कभी बदबूदार बलगम निकलता है। पीबकी तरह बलगम रहता है और पानीमें डूब जाता है।

लैकेसिस ६—नींद खुल जानेपर खाँसी बढ़ जाती है। बहुत देरतक खाँसनेपर थोड़ा-सा बलगम निकलता है। गलेमें सुरसुरी होकर लगातार श्वास-रोधक खाँसी ; खाँसते-खाँसते खूब थोड़ी डोरीकी तरह श्लेष्मा निकलता है।

सैंगुइनेरिया-नाइट्रिकम ६—नाकमें सुरसुरी होकर लगातार खाँसी होनेपर।

जेलसिमियम ३—स्वरभंग या स्वरबद्धताके साथ तेज खाँसी और उसके साथ ही कष्ट तथा सोनेमें दर्द (प्रदाहकी पहली अवस्थामें)।

बेलेडोना ३x, ६—सूखी खाँसी, खाँसनेके समय आक्षेप, खाँसते-खाँसते दम अटक जाना, खूब अधिक खाँसी, खाँसनेके अन्तमें छींक। सर्दी लगनेपर कास रोगीकी पुरानी खाँसी कुछ वर हो जाती है और कफके टुकडे दिखाई देने लगते हैं; गलेमें सुरसुरी; स्वरनली और कठनलीमें प्रदाह; पूर्ण और कठिन नाडी, चमकीली आँखें, चेहरा लाल, सर-दर्द, मस्तिष्कमें खूनकी अधिकता; कभी स्वस्थ, कभी खुसखुसी खाँसी, रातमें खाँसीका बढना; ठण्डी हवामें आराम मालूम होना, वक्षस्थलमें दर्द; श्वास-प्रश्वास धीमा।

एसिड-नाइट्रिक ३, ३०—थोडी देर ठहरनेवाली, सूखी, तग करनेवाली बहुत दिनोंकी पुरानी खाँसी, बलगम न निकलना, वक्षकी हड्डीके नीचे दर्द, कब्जियत, पुरानी खाँसी।

एण्टिम-टार्ट ३, ३०—क्षीण-स्वर, स्वरभंग, बोलनेपर बढता है। खाँसने या साँस लेने और छोडनेके समय गलेमें बलगम घरघराया करता है। यह घरघराहट दूर सुन पड़ती है। बलगम घरघराता है, पर खाँसनेपर निकलता नही; कभी-कभी फेनभरा बलगम निकलता है। खाँसते-खाँसते हाँफता है। स्वर-भग मिली रूखी खाँसी, गला घरघरानेवाली तर खाँसी, बलगम बडे कष्टसे निकलता है। खानेके समय खाँसते-खाँसते खाये हुए पदार्थका वमन; खाँसनेके समय जम्हाई आना।

ब्रायोनिया ३x, ३०—सूखी खाँसी (दिनमें बढना), हल्की खाँसी, सफेद या पीला बलगम निकलना, के या मिचली. खाँसनेके समय माथेमें, वक्षस्थलमें और बगलमें नोंच फेंकनेकी तरह या सुई वेधनेकी तरह "दर्द"; खाँसते समय सम्पूर्ण बदनका काँपना, सवेरे, शामको और ठण्डी हवामें खाँसीका बढना, सूखी खाँसी (खाँसते-खाँसते कभी-कभी खाँसी पतली

हो जाती है और खूनके छींटोंके साथ थोड़ा-सा बलगम भी निकलता है) खाने-पीनेसे खाँसीका बढ़ना, गर्म जगहसे ठण्डी जगहमें जानेपर खाँसीका बढ़ना, इस रोगका एक खास लक्षण है।

सल्फर ३, ३०—पुरानी खाँसी ; आराम न होनेवाली सूखी खाँसीके साथ छातीका जकड़ जाना या मिचली ; "ढीली खाँसी" के साथ दिनमें सफेद आभा लिये बलगम निकलना और रातमें सूखी खाँसी और उसके साथ सर-दर्द या खूनका कै होना।

रियुमेक्स ६—लगातार सूखी खाँसी, खाँसनेके समय आक्षेप ; सोनेपर, ठण्डी हवामें या रातमें रोगका बढ़ना ; दिनमें दस-बारह बजनेके समय रोगका बढ़ना ; सरसे पैरतक ढँक लेनेसे आराम मालूम होना।

स्टिक्टा ६, १२—बराबर सूखी खाँसी (साधारणतः खाँसनेके समय किसी तरहकी तकलीफ न रहना); हूपिंग (कुकुर) खाँसीकी तरह आक्षेप (हूपिंग खाँसीकी भी यह एक अच्छी दवा है); रातमें या रोगीके क्लान्त होनेपर रोगका बढ़ना।

मैगेनम एसेटिकम ६, ३०—सोनेसे ही खाँसना कम हो जाना, स्वरभंग (पुराने रोगमें)। सन्ध्याके समय और तर हवामें रोग बढ़ जाता है।

ड्रोसेरा ३x—स्नायविक सहानुभूतिसे पैदा हुई या आक्षेपिक खाँसी, रातमें या सोनेपर, हँसने, रोने, गाने, धूम्रपान करने या पानी पीनेपर खाँसीका बढ़ना ; कै या मिचली, बलगममें खूनके दाग ; बलगम पीला, पीबकी तरह, बदबूदार, तीता ; श्वासकष्ट। नींद खुलने बाद पसीना होना (हूप-खाँसी रोगमें ऐकोनाइटके बाद इसका सेवन करना चाहिये)।

एलियम सेटाइवा ३—पुरानी खाँसी, बहुत श्लेष्मा निकलता है ; सवेरे सोनेके कमरेसे निकलते ही जोरकी खाँसी आने लगती है।

कक्कस कैक्टाई ६—साफ सूतकी तरह श्लेष्मा-भरी तेज खाँसी ; उपजिह्वा बड़ी, इसीलिये लगातार खाँसी आया करती है ; सवेरे आक्षेपिक खाँसी, श्वास रोकनेवाली खाँसी ; नींद खुलते ही खाँसी आना।

मर्क-चाइवस ३ विचूर्ण—रूखी या तंग करनेवाली खाँसी, ऐसा मालूम होता है कि खाँसते-खाँसते गला दब गया है घाव हो गया है ; नाकमें घाव ; पसीना।

मर्क-सोल ६—पुरानी ढीली खाँसी ; रातमें बढ़ जाती है ; चिकना और क्लेदमय या क्लेद-रससे भरा बलगम निकलता है।

मेन्था पिपरटा ३—सूखी खाँसी, धूप या ठण्डी हवा लगने या बात करने या गिरनेपर खाँसी बढ़ जाती है।

नाइट्रिक एसिड ३—कब्जियतके साथ तेज खाँसी।

कोरैलियम ३, ३०—स्नायविक या गुल्मवायुग्रस्त रोगियोंकी खाँसीमें उपयोगी है।

मैग्नेशिया-फास ६x चूर्ण (गर्म पानीके साथ)—आक्षेपिक खाँसीके साथ तेज दर्द।

कैलि-सल्फ ६—पीले रंगका श्लेष्मा निकलना।

नेट्रम-म्यूर १०—साफ पानीकी तरह या सादे फेनकी तरह बलगम निकलता है।

नेट्रम-फास ६—अम्ल-रोगके उपसर्गके साथ खाँसी।

नेट्रम-सल्फ ६—पित्त-रोगके उपसर्ग साथ खाँसी ; बरसात या तर जल-मिश्रित हवाके कारण खाँसी।

कार्बो वेज ६—साधारण सर्दी लगते ही खाँसी आने लगती है ; स्वरभंग, स्वर लोप।

आर्निका ३—थोड़ी देरतक ठहरनेवाली खुसखुसी खाँसी ; खाँसते-खाँसते समूचा शरीर काँप उठता है ; खाँसीके साथ थक्का-थक्का खून निकलता है ; वक्षके बगलमें सुई गड़नेकी तरह दर्द ।

आर्सेनिक ३x, ३०—साँस रोकनेवाली खाँसी ; छातीका सिकुड़ना, बेचैनी, प्यास, आक्षेपिक खाँसी रातमें आरम्भ होकर खाँसीके रोगीकी नींद खोल देती है और अन्तमें बहुत थोड़ा बलगम निकलता है ।

कास्टिकम ३, ३०—सूखी, घं-घं खाँसी ; खाँसते-खाँसते पेशाब हो जाता है ; स्वरभंग ; रातमें शय्याकी गर्मीसे खाँसी बढ़ जाती है ; ठण्डा पानी पीनेपर खाँसी घट जाती है ; खाँसते-खाँसते गलेतक बलगम आता है, परन्तु रोगीमें बलगम निकालनेकी ताकत नहीं रहती ।

कोनायम ६, ३०—गलेमें सुरसुरी होकर सूखी खाँसी ; सोने, बैठने, हँसनेपर या रातके समय खाँसी बढ़ जाती है ; दिनमें खाँसी कम आती है ।

स्पंजिया २x, ६—सूखी कुत्तेकी आवाज जैसी या सीटी देनेकी तरह खाँसी ; कण्ठनलीकी सूखी खाँसी ; खाँसनेके समय दम बन्द हो जाना, गला सुरसुराना, स्वरभंग ।

हिपर-सल्फर ६, ३०—अजीर्णके साथ बहुत दिनोंकी खाँसी ; स्वरभंगके साथ तंग कर डालनेवाली श्वास-रोधक खाँसी, सर्दी लगनेपर या ठण्डी चीजें खाने-पीनेपर या ठण्डी हवा लगनेपर खाँसी बढ़ जाती है, ऐसा मालूम होता है, मानो गलेमें कुछ अटका है और इसी कारणसे घूंट लेनेमें तकलीफ होती है । सोने, बोलने, रोने, पानी पीनेपर खाँसीका बढ़ना ; खाँसीके बाद छींक ।

हायोसायमस ६—स्नायविक आक्षेपसे पैदा हुई सूखी खाँसी ; "रातमें या सोनेपर खाँसीका बढ़ना और उठ बैठनेपर खाँसीका कम हो जाना ।" बच्चे, बूढ़े या हिस्टीरिया रोगवाली औरतोंके लिये फायदे-

मन्द है। गला कुटकुटाकर खाँसी, ऐसा मालूम होता है कि उपजिह्वा खूब बड़ी हो गई है।

इग्नेशिया ६— सूखी, आक्षेपिक खाँसी, खूब जल्दी-जल्दी आती है ; खाँसते-खाँसते खाँसनेकी इच्छा बढ़ती जाती है ; जल्दी-जल्दी लम्बी साँस लेती है। हिस्टीरिया या गुल्मवायुग्रस्त रोगिणीको खाँसी ; खाँसीकी वजहसे नींद नहीं आती ; कण्ठकी नली हिलती है ; खाँसनेपर गलेकी खुसखुसी बढ़ जाती है ; बलगम बहुत कम निकलता है।

कैमोमिला ६—बच्चोंको दाँत निकलते समयकी खाँसी, गला घरघर करना ; बच्चेका चिड़चिड़ा मिजाज।

कैलि-बाइक्रोम ६—खाँसी ; कड़ी या डोरीकी तरह (कभी-कभी रक्त-मिला) बलगम निकलना ; छातीमें साँय-साँय या फस-फस शब्द ; साँसमें कष्ट ; खाँसीके बाद सरमें चक्कर ; नींद खुलनेपर या भोजनके बाद खाँसी बढ़ जाती है।

नक्स-वोमिका ६, ३०—खाँसनेके समय पाकस्थलीमें दर्द और सरमें दर्द ; गलेकी नलीमें जलन करनेवाले प्रदाह ; लसदार बलगम निकलना ; बहुत सवेरे, भोजनके बाद, हिलने या जोरसे साँस छोड़नेपर खाँसी बढ़ जाती है ; खाँसनेके कारण नींदमें गड़बड़ी (खासकर आधी रातमें खाँसी आरम्भ होती है।

फास्फोरस ६—गला खुसखुसाकर सूखा यक्ष्माकास ; सूखी खाँसी, स्वरभंग ; वक्षस्थलमें दर्द ; फेन-भरा और लसदार, पीव-भरा, नमकीन बलगम निकलना ; लोहेके जंग या सुरखीकी तरहके रंगका श्लेष्मा निकलना ; लेटने, बोलने, हँसने, हिलने-डुलने या गर्म जगहसे ठण्डी जगहमें जानेपर खाँसी बढ़ जाती है।

पल्सेटिला ६, ३०—श्लेष्मा इकट्ठा होनेके कारण श्वासकष्ट, गलेमें घरघर शब्द ; दिनमें पीले रंगका तीते स्वादवाला श्लेष्मा निकलना

रातमें और सोनेके समय सुखी खाँसी ; बाहरी खुली हवामें खाँसी दब जाती है ।

"सर्दी", "ब्राकाइटिस", "दमा", "न्युमोनिया", वगैरह रोग देखना चाहिये। कोरालियम-रूब्र ६, ब्रोम ६, ऐमोन-कार्ब ६x, ऐलियम-सिपा ६, आयोडियम ३x, लाइको ३०, लोबेलिया θ, सेनेगा θ (फी मात्रा ५ बुन्द), स्टैनम ६ वगैरह दवाएँ बीच-बीचमें आवश्यक हो सकती है ।

आनुसंगिक चिकित्सा—बार्ली या गोंदका पानी या कभी-कभी थोड़ा ठण्डा पानी पीना चाहिये । ऋतुके अनुसार कपड़े पहनना चाहिये । बन्द, तर और भीड़-भाड़के स्थानकी हवा त्याग देनी चाहिये ।

प्रतिषेधक चिकित्सा—खुली हवामें घूमना और कसरत करना, सवेरे हवा खाना और ठण्डे पानीमें नहाना, पुरानी खाँसी रोकनेके लिये ये ही तीन उत्तम उपाय हैं ।

स्वरभंग या स्वरवद्धता
(Hoarseness and Aphonia)

स्वर-तंत्री (vocal cords) के पासकी पेशियोंकी मददसे हमलोग स्वर निकाल सकते हैं । साधारणतः इनका थोड़ी देरका या स्थायी (बराबर) पक्षाधातका नाम "स्वरभंग" है । "स्वर-यंत्र-प्रदाह", "गुटिका दोष", "कर्कट-रोग", "गर्मी-रोग" वगैरहकी वजहसे "स्वरभंग" होता है ।

ठण्ड लग जाना, सर्दी वगैरह कारणोंसे स्वर-यंत्रमें जो कमजोरी पैदा होती है, उसका नाम "आवाज बैठना" है । इसके अलावा हिस्टीरिया, ऊँचे स्वरसे बोलना, गाना या व्याख्यान देना वगैरह कारणोंसे कुछ-न-कुछ आवाज बिगड़ती या स्वरभंग रोग होता है ।

अस्फुट-ध्वनि, रुका या कर्कश स्वर, गलेमे सुरसुरी और सूख जाना-(कभी-कभी गलेमे जख्म), सूखी खुसखुसी खाँसी, श्वासकष्ट वगैरह इस रोगके प्रधान उपसर्ग है ।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) सिर्फ स्वरभंग रोगमे—फाइटो (एकदम गला बैठ जानेपर या पुराने स्वरभंगमे) ; हिपर-सल्फर (गला साँय-साँय या घरघर करना) , फास्फोरस (स्वर-तन्त्रियोंका पक्षाघात) ; कार्बो-वेज (पुरानी बीमारीमे) ।

(२) स्वरभगके साथ सरमे या छातीमे सर्दी—ऐकोनाइट, ब्रायो, मर्क, कास्टि, स्पंजिया, एल्का, फास्फो ।

(३) वक्ता या गानेवालाका स्वरभग, बहुत ज्यादा स्वर-यंत्रसे काम लेनेके कारण स्वरभग होनेपर—आर्नि, कास्टि, फाइटो, बेल, कैलि-बाई, बेराइटा-कार्ब ।

सर्दीकी वजहसे गला बैठ जानेपर—'कास्टिकम' ६ बहुत अच्छी दवा है । स्वरयंत्रकी मास-पेशीके 'पक्षाघात' से पैदा हुए स्वरभंगमे—आक्जैलिक एसिड ३ फास्फोरस ३, या साइलि ६ ।

गला बैठ जाना और सामान्य स्वरभगमे—"कास्टिकम" ६ (गला सूखा), गलेमे दर्द, तकलीफसे श्लेष्मा निकलना (गानेवालो और व्याख्यान देनेवालोकी आवाज बिगडनेपर) ; मेगेनम ६ (पुराना स्वरभंग, श्लेष्मा ढीला नही होता) , कार्बो-वेज ६ (खाँसी, छातीमे जलन, बदबूदार श्लेष्मा निकलना, फेफडेसे खून आना, बोलने अथवा सन्ध्याके समय या भोजनके बाद स्वरभंग बढ़ता है) , कैलि-बाई ६x विचूर्ण, ३० (जल्दी जल्दी खाँसी, बहुत ज्यादा पीला, लसदार, कड़ा या डोरीकी तरह बलगम निकलता है, शामके वक्त या बदनका कपड़ा उतारनेपर स्वरभग बढ़ता है) ; हिपर सल्फर ६ (स्वरयंत्रमे बहुत ज्यादा श्लेष्मा रहनेके साथ स्वरभंग, कभी ढीली और कभी साँस रोकनेवाली खाँसी, साँसमे कष्ट, सवेरे या ठण्डी हवा लगनेपर खाँसीका

बढ़ना) ; सर्दीके साथ स्वरभंगमें यदि बच्चा बलगम न निकाल सकता हो और इसी कारणसे निर्जीव-सा पड़ जाता हो, तो बून्द-बून्द ठण्डा पानी पिलानेसे उसकी बदहवासी दूर हो सकती है। ऐण्टिम-क्रूड ६ (धूप या ताप लगनेके कारण आवाज बिगड़नेपर) ; आर्निका ३ (स्वरयंत्रसे बहुत काम लेना, जैसे—जोरसे गाना, व्याख्यान देना या बातें करनेके कारण गला बैठ जानेपर) ; आयोडियम ६ या फास्फोरस ६ (कमजोरीकी वजहसे गला बैठ जाने पर) ; जेल्स ३x (औरतोंके ऋतुकालमें गला बैठ जानेपर) ; "इग्नेशिया" ३x, नक्स-मस्केटा २x या प्लैटिना ६ (हिस्टे ... भंगमें) ; बेलेडोना ३ (माथेमें ... स्वरभंगमें) ; ऐरम-ट्राइफाइ ... थ स्वरभंग) ।

आ ... घुमना या कसरत करना, ... ने बदन पोंछ डालना, हल्का-प ... राबर सोहागा मुँहमें रख देना ... ड़ा रखना चाहिये। एक घण्टे ... अच्छा हो जाता है।

बोली ... को "स्वरलोप" या "वाक्रोध" ... रोग या चोट (cortical ... ।

चीनाप ... ६—स्वरलोपकी उत्कृष्ट दवा ... को ३०। बहुत देरतक कोि ... मो ३०। जेल्स ३०, कैलि- ... कभी-कभी जरूरत

पड़ती है। पारेके अपव्यवहारकी वजहसे स्वरलोपमें आरम ६ या नाइट्रिक एसिड ६ का प्रयोग करना चाहिये।

परिपाक-यन्त्रके रोग

मुँहके छाले (Stomatitis)

इस रोगमें मुँहको ढँकनेवाली झिल्ली लाल, फूली और दर्द या जख्म-भरी होकर कभी-कभी पीव बहने लगता है। साँसमें बदबू, जीभ लाल और फूली, दाँतके मसूढ़े और तालुका फूलना—इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

पाकाशयकी क्रियाकी गड़बड़ी, सड़ा या स्फोटक ज्वरके बाद या मुँहमें खूब जलती हुई गर्म चीज घुसनेके 'कारण' यह रोग पैदा हो जाता है। दाँत साफ न रखना, पारेका अपव्यवहार, ज्यादा मात्रामें चूना या चीनी खाना, पुष्ट करनेवाली भोजनकी कमी, अस्वास्थ्यकर जगहमें रहना, खूनका बिगड़ जाना वगैरह कारणोंसे यह रोग हो सकता है।

चिकित्सा—बोरैक्स ३x या ६x विचूर्ण, ३c—मुँहमें घाव, गालके भीतरकी तरफ घाव, सहजमें ही रक्त निकलता है। मुँहके भीतर सूखापन और गर्मी रहती है। जीभमें घाव, लाल छालोंकी तरह, जीभ हिलाने अथवा नमक और तीता खानेपर तकलीफ। मुँहके स्वाद कड़वा।

मर्क्यूरियस ६—मसूढ़ोंसे खून गिरता है, मुँह का भीतर घाव होना, बहुत लार बहना।

कैलि-क्लोर १x विचूर्ण—बदबूदार श्वास-प्रश्वास, मुँह, गाल तथा जीभमें जख्म।

कार्बो-वेज ६—नमक या पारेका अपव्यवहार, मसूढ़ोंमें बदबू, मसूढ़ोंसे खून गिरना।

आर्सेनिक ३—घावमें जलन होना, बहुत कमजोरी मालूम होना, ज्वर-भाव।

नाइट्रिक-एसिड ६ या हिपर-सल्फर ६—पारेसे पैदा हुआ मुँहका घाव। बोरैक्स ६x, सल्फर ३०, सोरिनम २००, हेलिबोरस ६, क्रियोजोट ६, नैट्रम-म्यूर ६, मर्क-कोर ६ वग़ैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार देनी पड़ती हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—नमक, मिर्च, खटाई, घीमें पकी, तेल-भरी चीजें या ज्यादा मिठाई खाना मना है। नींबू इस रोगमें बहुत फायदा करता है। खानेके बाद अच्छी तरह मुँह धो डालना चाहिये। कैलि-क्लोर १x विचूर्ण या सोहागा गर्म पानीमें घोलकर कुल्ला करनेसे बहुत कुछ फायदा होता है।

श्वास-प्रश्वासमें बदबू

(Foetid Breath)

पाकाशयकी गड़बड़ी, अच्छी तरह पोषण न होनेके कारण धूमल रोग, प्लेग, आंत्रिक ज्वर, खसरा, चेचक, फुस्फुसका सड़ना, मसूढ़ोंका घाव, दाँतके गड़होंमें या उसके पास पीव होना, सन्धियोंकी पुरानी बीमारी, भोजनके बाद अच्छी तरह मुँह न धो डालना वग़ैरह कारणोंसे "श्वास-प्रश्वासमें बदबू" हो जाती है।

चिकित्सा—आर्निका ३—इसकी उत्तम दवा है (खासकर जब यह पता लगे, कि बदबू किस कारण हुई है)।

कार्बो-वेज ६x चूर्ण—क्षय हुए दाँत, मसुढ़ोंकी बीमारी या ज्यादा मात्रामें पारा सेवन करनेके कारण बदबू। यह रोज तीन बार कर दो हफ्तोंतक सेवन करना चाहिये। इसके बाद हिपर-सल्फर ६ या नाइट्रिक एसिड ३ प्रयोगसे रोग प्रायः जड़से आराम हो जाता है।

नक्स-वोमिका ६ या पल्सेटिला ३—अजीर्णसे पैदा हुई बदबूमें इससे फायदा होता है।

पेट्रोलियम ६—साँसमें प्याज्की तरह बदबू रहनेपर।

मर्क-वाइवस ६x चूर्ण, आरम ६, स्पाइजिलिया ३, सल्फर ३० वगैरह दवाएँ भी कभी-कभी आवश्यक होती हैं।

मसूढ़ो पीव पैदा होनेकी वजहसे बदबू होनेपर सिलिका ६ या फास्फोरस ३ सेवन और सिम्फाइटम θ (एक ड्राम+चार औंस पानी का धावन मसूढ़ामें लगाना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—थोड़ा खानेके बाद ही मुँह धो डालना, निर्मल जल पीना, खुली हवाका सेवन, विधिपूर्वक नहाना, सुगन्धित (perfumed) कार्बोलिक एसिड पानीके साथ मिलाकर उससे मुँह धो डालनेसे बदबू आना अक्सर बन्द हो जाता है।

मसूढ़ोंका घाव (Gumboil)

यह छोटा फोडा दाँतके गड्ढे (socket) में शुरू होता है, फिर इसके क्रमशः बढ़ जानेपर मसूढ़े या गाल फूल उठते हैं। अक्सर मसूढ़ा फटकर पीव निकल जाता है। कभी-कभी गालका चमड़ा फटकर भी पीव निकलता है। क्षय हुए दाँतकी तकलीफ (irritation) या ठण्ड लगनेकी वजहसे पायोरिया होकर यह बीमारी पैदा होती है। दाँतमें दर्द, गर्मी, टपक, फूल उठना और पीव पैदा होना, फोड़ेका फट जाना, सामान्य ज्वर वगैरह इस रोगके लक्षण हैं। दाँतका मसूढ़ा फूल जानेपर या पीव निकल जानेपर यह तकलीफ कम हो जाती है।

चिकित्सा—मर्क वाइवस ३x, ६x चूर्ण—(कम-से-कम दो हफ्ते सेवन करना चाहिये)—यह इसकी उत्तम दवा है। बराबर दर्द

ज्यादा थूक निकलना, मसूढ़े फूल उठना और टपकका दर्द होना लक्षणमें ।

वेलेडोना ३x—(दो-तीन मात्रा) माथेमें टपककी तरह दर्द, मुँह मानो फूला-फूला, आवाज और रोशनीका सहन न होना ।

फास्फोरस ३—नीचेंवाले जबड़ेके दाँतोंका क्षय होना, इसी कारणसे मसूढ़ोंमें घाव ।

सल्फर ३०—पुराना मसूढ़ोंका घाव ।

हिपर-सल्फ ६—पीव पैदा होनेके समय (अर्थात् जब सूजन मुलायम रहती है और टपक होती है) ।

साइलिसिया ६—फोड़ा फटजानेके बाद ।

गूलर खूब गर्मकर, गर्म अवस्थामें ही (अर्थात् जितना रोगी सहन कर सके) तकलीफवाले मसूढ़ोंमें लगा रखनेसे दर्द कम हो जाता है । जरूरत मालूम होनेपर पुल्टिस देना या दाँत चिरवा देना अथवा दाँत उखड़वा डालना भी उचित है ।

मुँहका घाव
(Aphthæ or Thrush)

मुँह साफ न रखना, अनपच, कब्जियत, पारेका सेवन, गर्मीरोग वगैरह कारणोंसे यह बीमारी होती है ।

बोरैक्स ६ और **मर्क्यूरियस** ६—इस रोगीकी प्रधान दवाएँ हैं ।

कार्बो-वेज ६—पारा आदिके अव्यवहारके कारण मुँहमें घाव होनेपर ।

नाइट्रिक एसिड ६—गर्मी रोगसे पैदा होनेपर ।

नेट्रम-म्यूर ६, आर्सेनिक ६, एण्टिम-टार्ट ६, आरम ६, सल्फर ३० वगैरह दवाएँ कभी-कभी जरूरी हो पड़ती हैं ।

"मुख-गह्वर-प्रदाह" और "जिह्वा-रोग" देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—बढ़िया शहदमें थोड़ा-सा बोरिक-एसिड या सोहागाका लावा मिलाकर अथवा पतली ईखका गुड़ अंगुलीमें लगाकर, बच्चेके मुँहके घावमें लगा देना चाहिये, इससे खूब फायदा होता है।

अन्नवहानलीका पुराना प्रदाह
(Sprue)

यह एक क्रानिक या पुराना बीमारी है। भारतवर्ष, सिहलद्वीप, उपद्वीप, चीन, जापान वगैरह देशोंमें यह बीमारी फैलती है। मुख-विवरसे लेकर मलद्वारतक समूची अन्ननली-प्रदाह, जीभ और गलेके कोषमें दर्द, जीभ और मसूढ़ोंमें जख्म, उदरामय और यकृतका क्रमश क्षीण होना—इन लक्षनोंके रहनेपर "अन्नवहानलीका प्रदाह" माना जाता है। मर्दोंकी अपेक्षा औरतोंको और देशी लोगोंकी बनिस्वत युरोपियनोंको यह बीमारी ज्यादा हुआ करती है।

जीभ और मसूढ़ोंमें घाव, अजीर्ण, पतले दस्त (दिनके पहले भागमें बार-बार पानीकी तरह पीली आभा लिये या कीचकी तरह या फेन-भरे दस्त आते हैं—दस्तमें अक्सर खट्टी गन्ध रहती है)। यकृतका आकार धीरे-धीरे छोटा होता जाता है। जीभ लाल और दर्द-भरी हो जाती है। स्वाद लेने या सूँघनेकी ताकत चली जाती है; कभी-कभी शरीरकी गर्मी बढ़ जाती है वगैरह इस रोगके "प्राथमिक लक्षण" हैं। इसके बाद रक्त-स्वल्पता, बहुत पसीना होना और सुस्ती वगैरह उपसर्ग पैदा होकर रोगी मर जाता है। कभी-कभी कई वर्षतक यह बीमारी चला करती है।

चिकित्सा—सल्फर, आर्स, बोरैक्स और फास्फोरस वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार देनी चाहिये। रोगीकी पहली अवस्थामें रोगीको

शय्यासे उठने न देना चाहिये। उसका पेट ढँका रखना आवश्यक है। मुँहके जख्मके लिये फिटकिरीका चूर्ण या बोरिक-एसिडका धावन व्यवहार किया जा सकता है। ऐलोपैथ चिकित्सकगण सेण्टोनाइन और ताजा बेल खिलानेकी राय देते हैं।

रोगकी पहली अवस्थामें रोगीको सिर्फ दूध पथ्य देना चाहिये; यदि दूध सहन न हो, तो कच्चे मांसका जूस (raw-meat juice) देनेका भी कोई-कोई राय देते हैं।

मुख-गह्वरका गला घाव

(Canker of the Mouth)

गुटिका-धातुग्रस्त, थोड़ी उम्रके बच्चोंको या जो मनुष्य उपयुक्त भोजन नहीं पाते, उनके मुँहमें सड़ा या गला घाव होता है। मसूढ़े सफेद छेदोंसे भरे या दाँतसे अलग हो जाते हैं, दाँत गिर जाना चाहते हैं; साँसमें बदबू, ओंठ, लाल जीभ, थूकमें बदबू, रोगवाली जगहसे रस निकलना, इस रोगका प्रधान लक्षण है।

चिकित्सा—मर्क-कोर ६, ३x, ६x विचूर्ण—घंटे-घंटेपर सेवन और एसिड-म्यूर (२x+४ ड्राम ग्लिसरिन मिलाकर) द्वारा दो घण्टेके अन्तरसे मुँह धो डालना, इसकी उत्कृष्ट दवा है। यदि मर्क-कोरसे फायदा न हो, तो आर्सेनिक ३x सेवन करना चाहिये। पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुआ सड़ा घाव होनेपर, एसिड-नाट्रिक ३ या कार्बो-वेज ६ देना पड़ता है। कैलि-क्लोरका धावन भी फायदा करता है। काडलिवर आयल भी कभी-कभी दिया जा सकता है ("मुँहका घाव" देखिये)।

दाँतका दर्द (Toothache)

ऋतु-परिवर्त्तन, अजीर्ण, गर्भावस्था, सर्दी लगना, वातका दर्द, स्वास्थ्य खराब होना—इन सब कारणोंसे दाँतमें दर्द होता है।

चिकित्सा—अक्सर सब तरहके दन्त-शूलमें ही पहले प्लैण्टेगो ३ सेवन और प्लैण्टेगो θ मसूढ़ोंमें लगानेसे फायदा होता है। ठण्डी हवामें दाँतका दर्द—एकोनाइट ३x। श्वास-प्रश्वासमें बदबू, कब्जियत और दाँतोंके क्षयसे पैदा हुए दाँतोंके दर्दमें—क्रियोजोट ३, गर्भवाली अवस्था दाँतोंमें दर्द होनेपर, क्रियोजोट ६x फायदा करता है। दाँतोंके मसूढ़ोंमें खोंचा मारने जैसा दर्द या टपकके साथ कई दाँत आक्रान्त होनेपर और इस दर्दके इधर-उधर हटनेपर, बेलेडोना ३x। सर्दीसे पैदा हुए दन्तशूल (दन्तमूल नहीं सड़ता), मुँहमें कोई पदार्थ घुसनेपर दवा रखनेकी तरह दर्द और बहुत जल्द यह दर्द कम हो जाता है। बिछावनकी गर्मी या कोई गर्म चीज खानेपर और तीसरे पहर यह रोग बढ़ जानेके लक्षणमें पल्सेटिला ३०। ठीक सन्ध्याके समय दाँतोंमें दर्द और जीभ गाढ़ी सादी, मैल-चढ़ी, लक्षणमें, एण्टिम क्रूड ६। "ऐसा मालूम होना कि दाँत लम्बा हो गया है," दाँत-पर-दाँत रखने या ठण्डा पानी लगनेसे कनकनी होना, रातमें कपालके बगलतक दर्दका बढ़ना और गर्म प्रयोगसे घटनेके लक्षणमें—आर्सेनिक ६। स्नायविक दन्तशूलमें दाँत बड़ा और उठा हुआ मालूम होना, दाँतोंकी जड़ और गला फूल उठना, गर्म पदार्थ पीने या खाने अथवा बिछावनकी गर्मीसे दर्द बढ़नेके लक्षणमें—कैमोमिला ६ फायदा करता है। दाँतकी जड़में दर्द और खून बहना, मुँह सूखा, परन्तु प्यास नहीं रहती, चबानेके समय दर्द मालूम होनेके लक्षणमें—कार्बो-वेज १२। क्रिमिके कारण पैदा हुए दन्त शूल और गर्भावस्थाके दन्त-शूलमें तथा दूसरे-दूसरे दाँतके दर्दमें—मर्क्युरियस ६। चेहरेके चारों ओर नोच फेंकने या खोंचा मारनेकी तरह दर्द हो, यह

दर्द कानतक फैल जाये, बहुत लार बहती हो और रातमें दर्द बढ़ जानेके लक्षणमें—मर्क्युरियस ३x विचूर्ण ३० सेवन करना चाहिये। दाँतमें हवा लगनेसे ही दर्द बढ़ जाये, दाँत बड़ा मालूम हो, बायें पार्श्वमें दर्द हो और भोजनके समय दाँत ठण्डे मालूम होनेके लक्षणमें—सल्फर ६। पारा सेवनसे पैदा हुए दन्त-शूलमें—बहुत ज्यादा लार बहनेके साथ मसूढ़ेसे खून बहनेपर, नाट्रिक-एसिड ६। क्षय हुए दाँतमें बहुत दर्द और उनके साथ ही दूसरे-दूसरे दाँतोंमें दर्द हो, ठण्डा पानी छूनेसे दर्द बढ़े प्रभृति लक्षणोंमें—स्पाइजिलिया ३। ठण्डे पानीसे कुल्ला करनेसे दर्द कम होनेपर, काफिया ३x। दाँत काले और काली रेखा पड़े और टेढ़े; दाँतकी जड़में नासूर या सूजन; ऋतुकालके दन्त-शूलमे; नींच फ़ेंकने या चबानेकी तरह दाँतमें दर्द होनेपर, कोई चीज वेधनेकी तरह दर्द हो (दर्द कानतक मालूम होता हो); गालोंमें भी टपककी तरह दर्द हो; दाँतकी जड़ सूजी और सफेद; ठण्डी चीज खाने-पीनेसे दर्द बढता हो, तो—स्टैफिसेग्रिया ३। दाँतका आवरक (enamel) मैलसे भरा होनेपर—कैल्केरिया-फ्लुओर १२x चूर्ण। दाँत उखाड़नेके बाद नकली दाँत बैठानेके कारण दाँतमें दर्द होनेपर—आर्निका ३x या सिम्फाइटम θ अथवा कैलेण्डुला θ। ठण्डा पानी या हवा लगनेके बाद दर्दमें—कैल्केरिया-कार्ब ६। दाँतोंमें जखम और दाँत बढे हुए मालूम होनेपर—रस-टक्स ३। काफी या शराब पीनेके कारण दाँतमें दर्द होनेपर—नक्स-वोमिका ३x। बहुत जोरके दर्दमें (या स्वास्थ्य-भंगके कारण दन्त-शूल)—चायना ३। दाँत लम्बे और ऊपर उठे मालूम होनेपर और धूम्रपानके बाद दर्द बढनेपर—ब्रायोनिया ३। चुप बैठे होनेपर दर्द बढता हो, तो—मैग्नेशिया-कार्ब ६। नक्स-मस्केटा १x, इग्नेशिया ६, हायोसायमस ६, हिपर-सल्फर ३, मैग्नेशिया फास ३x विचूर्ण (गर्म पानीके साथ), फास्फोरस ६, लैकेसिस ६, सिलिका ३०, डल्कामारा ३ प्रभृति दवाओंको बीच-बीचमें जरूरत पड़ सकती है।

जाड़ेके दिनोंमें ठंडी हवा लगकर दांतमें दर्द होनेपर—ऐकोनाइट ३x, बेलेडोना ३, कैमोमिला ६।

बरसाती तर हवा लगकर दांतमें दर्द होनेपर—डल्कामारा ६, मर्क ३, नक्स-मस २x, नेट्रम-सल्फर ३x, ६x।

वातसे पैदा हुए दांतके दर्दमें—ब्रायोनिया ३, ऐकोनाइट ३x, कैमोमिला ६, सिमिसिफ्यूगा ६।

अजीर्ण-दोषके कारण दांतके दर्दमें—नक्स-वोम ६, पल्सेटिला ६, ब्रायोनिया ३, मर्क्यूरियस ३, आर्सेनिक ६।

दांतमें गड्ढा पड़ जाने या दांत नष्ट होनेके कारण दांतमें दर्द होनेपर—क्रिओज़ोट ६, मर्क ३, ऐण्टिम-क्रूड ६, साइलिसिया ३०, कैमोमिना ६, युफोर्बिया ३x।

स्नायविक दांतका दर्दमें—कैमो ६, आर्स ३०, प्लैण्टे θ।

सर्दी लगकर दांतका दर्द बढ़नेपर—ऐकोनाइट ३x, आर्सेनिक ३०, रोडोडेण्ड्रम ३x।

गर्म चीजें खाने-पीनेसे दर्द बढ़नेपर—कैमोमिला ६, ब्रायोनिया ३, ऐण्टिम-क्रूड ६।

गर्म प्रयोगसे घट जानेपर—मैगनेशिया-फास ३x, विचूर्ण प्रयोग करना चाहिये।

साधारण नियम—दांतको ठीक रखनेके ख्यालसे बहुतसे मनुष्य बहुत तरहके दांतके मंजन, तम्बाकूका चूर, जर्दा और चुरूटका व्यवहार किया करते हैं; परन्तु इससे नुकसान ही ज्यादा होता है। चाय, खड़िया, पान या फिटकिरीको चूरकर दांत मांजनेसे बहुत बार लाभ होता है। दांत अगर ऊपर उठ आये, तो उखड़वा डालना ही अच्छा है। काफी, मिठाई या तम्बाकू खाना छोड़ देना चाहिये। हिलते हुए दांतमें खाया हुआ पदार्थ अड़ जानेपर सींकमें रूई लगाकर उसे निकाल डालना चाहिये। दर्दवाले दांतमें रूईके फाहेमें क्लोरोफार्म या

क्रियोजोट लगानें अथवा स्पिरिट कैम्फर या क्षीण गुग्गुल (dilute myrrh) मसूढ़ेमें मलनेसे, थोड़ी देरके लिये फायदा हो सकता है। दाँतके नये दर्दमें—अमरूदका पत्ता गर्म पानीमें सिझाकर उस पानीसे कुल्ला करनेसे दर्द कम हो जाता है। खूब सर्द और खूब गर्म चीज खाना, दाँतके लिये हानिकारक है। डाक्टर फ्रिल जेराल्ड कहते हैं कि पैरका अंगूठा चटकानेसे दाँतका दर्द उसी समय अच्छा हो जाता है (इण्डियन मेडिकल रेकार्ड, एप्रिल १९२२ ई० देखिये)।

जीभकी बीमारियाँ
(Diseases of the Tongue)

साधारणतः पाचन-क्रिया अवस्था प्रकट करनेवाली होनेपर भी जीभ एक अलग इन्द्रिय ही है। इसलिये, पाचनकी क्रियामें गड़बड़ी न होनेपर भी इसमें बहुत तरहकी बीमारियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। जैसे—

जीभका प्रदाह (Glossitis)

जीभका रंग लाल, जीभ फूली और उसमें दर्द होनेको ही "जीभका प्रदाह" कहते हैं। इसमें जीभ मुँह के बाहर निकल आती है और बहुत ज्यादा लार बहती है। खाने, निगलने और बोलनेमें तकलीफ और साँस बन्द होनेकी तैयारी भी हो सकती है। जीवाणु ही इस बीमारीके "खास कारण" हैं। सर्दी लगना, कमजोरी, जीभमें घाव होना या छिल जाना या चोट आ जाना, ज्यादा पारा खाना प्रभृति इस बीमारीके गौंण कारण हैं।

चिकित्सा—मर्क-वाइवस ३x, ६x विचूर्ण, इस रोगकी उत्कृष्ट दवा है (यदि पारेका अपव्यवहार न हुआ हो); एपिस ३x—३० (जीभ ज्यादा फूलनेपर)। पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुए जीभके

रोगमें—नाइट्रिक-एसिड ३—६, आरम ६, हिपर-सल्फर ६ या कोबाल्-वेज ६। आर्निका ३x (जीभ छिल जाने या उसमें चोट लगनेपर)।

जीभका जख्म (Ulcers)

जीभपर छोटी-छोटी फुन्सियाँ होनेपर वह लाल हो जाती है, कुछ फूल जाती है और दर्द होता है तथा कभी-कभी फटी हुई दिखाई देती है।

चिकित्सा—"मर्क-बिन" २x विचूर्ण, इस रोगकी बढ़िया दवा है (यदि पारेका अपव्यवहार न हुआ हो)। "आर्सेनिकम्" ६ या "हाइड्रेस्टिस" ३x की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। ज्यादा मात्रामें पारा सेवन करनेपर जीभमें घाव हो जायें, तो "नाइट्रिक-एसिड" ३ या "हिपर-सल्फर" ६—३० देना चाहिये। जीभपर लाल-लाल फुन्सियाँ, जीभ हिलानेपर तकलीफ होना, नमक और मसालेदार चीजें खानेमें कष्ट होता है, तकलीफ बढ़ती है प्रभृति लक्षणोंमें—"बोरेक्स" ३०।

बड़े काँचके गिलासमें पानी भरकर उसमें ५-६ बून्द डाइल्यूट नाइट्रिक-एसिड या हाइड्रेस्टिस θ ५-६ बून्द डालकर उससे रोज तीन-चार बार कुल्ला करना चाहिये।

जीभकी दूसरी कई बीमारियाँ

जीभके दूषित फोड़ेमें कैलि-सायेनेटस ३x, जीभमें जलन या जीभ कटी या सूखी मालूम होनेपर ऐल्यूमेन ३०। जीभ गहरी लाल होनेपर और जीभपर दाँतका दाग दिखाई देनेपर हाइड्रेस्टिस १x—३०। जीभ खूब सूखी रहने और फट जानेपर रस-वेन ३। जीभमें प्रदाह और सूजनमें तथा बहुत गर्म चीज खाने और पीनेके कारण जीभका प्रदाह होनेपर, कैन्थरिस ३। जीभमें छाले पड़ने और जलन होनेपर नैट्रम-

म्यूर ६। जीभमें पक्षाघात होनेपर कास्टिकम ६ जीभका फूल उठना या कड़ा होना या हिला न सकना वगैरह लक्षणोंमें डल्कामारा ६। जीभ मोटी मालूम होने और बोल न सकनेपर, जेलसिमियम ३। गर्मी रोगके कारण जीभकी बीमारीमें, फ्लुओरिक-एसिड ३। जीभपर छोटे सफेद गड़हेकी तरह दिखाई देनेपर आर्ज-नाई ६। जीभके निचे फुन्सियाँ होनेपर लाइको १२—३०। पीव होने या सड़ना आरम्भ होनेपर—हिपर-सल्फर ६, ऐन्थ्रोसिनम ६, नाइट्रिक एसिड ६ व्यवहार करना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—घी और पानका रस गर्मकर जीभपर मालिश करनेसे, जीभका घाव अच्छा हो जाता है। कलकत्ता मेडिकल कालेजके भूतपूर्व अध्यापक डा० गुडिव चक्रवर्ती इसी उपायसे बहुतोंको अच्छा करते थे। उन्हें बरूई जातिकी एक स्त्रीसे यह उपाय पहले-पहले मालूम हुआ था। खानेमें तकलीफ होनेपर दूध, सूजीकी खीर, हलवा, खिचड़ी वगैरह दी जा सकती हैं; परन्तु बुखार रहनेपर सागू, बार्ली वगैरह हल्की चीजें देनी चाहिये।

गलक्षत

(Quinsy and Sore-throat)

सर्दीकी वजहसे गलेमें दर्द होना, ऊँची आवाजसे बोलना, गाना, व्याख्यान देना, स्वरभंगकी अवस्थामें चिल्लाना, उपदंशका घाव रहना वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है। पहले मुख-गह्वरका प्रदाह, उपजिह्वा बढ जाती है और तालुमूल फूल जाता है, इसके बाद गलेके भीतर श्लैष्मिक झिल्लीमें घांव हो जाता और गला सुरसुराता है। रोगी बार-बार बलगम निकलनेकी कोशिश करता है, कोई चीज निगल नहीं सकता, साँस लेने और छोड़नेमें तकलीफ होती है।

चिकित्सा—गलेके नये दर्दमे बहुत गर्मी, निगलनेमे दर्द, गलेके भीतर लाली और चमकीलापन, अस्वाभाविक चमकीली आँखे; चेहरा लाल, स्वरमे दर्द वगैरह लक्षणोमे, वेलेडोना ३x—३० । प्रदाहके साथ घाव साँस रुक जानेकी सम्भावनाका लक्षण होनेपर, मर्क-कोर ३—६ । गलेमे साधारण दर्द और सूजन, कुछ नीली आभा लिये लाल रंगका घाव, लार निकलना, श्वास-प्रश्वासमे बदबू वगैरह लक्षणामे, मर्क-शोल ६ । तेज बुखारके साथ गलेमे घाव ऐकोनाइट ३x । नींद खुलनेके वक्त गला सूखा मालूम होना, घुँट निगलनेके समय गलेमे गोली-जैसी चीज अटकी मालूम होना, गलेके भीतर देखनेपर लाल या बैंगनी रंग दिखाई देना ; गलेकी गन्ध असह्य ; गलेके बाहर थोड़ी सूजन रहनेके लक्षणमे, लैकेसिस ६ । उपजिह्वा लम्बी होनेपर, कैल्के-फास ६x चूर्ण, ३० और कैलि-म्यूर ३ चूर्ण, ३० । घूँट निगलनेके समय गलेमें दर्द, तालु-प्रदाह, घावमे पीव निकलनेके लक्षणमे (पुरानी अवस्थामे), वैराइटा-कार्ब ६ । ऊँचे स्वरसे व्याख्यान देने या गानेके कारण गलेमे घाव होनेपर, आर्निका ३ । पुराने गलेके घावमे, कैल्केरि-फास १२x चूर्ण । कभी-कभी आर्स ६, ऐल्यूमिना ६, फाइटोलैक्का θ—३ (गलेके भीतर नीली आभा और सूजन), डल्कामारा ६, कास्टिकम ६, हिपर-सल्फर ६ (गलेका घाव पकनेके लक्षणमे), नाइट्रिक-एसिड ६ (गलेमे प्रेक बेधनेकी तरह दर्द होनेपर), सल्फर ३०, रस-टक्स ६, मर्क-आयोड ६x विचूर्ण, हाइड्रेस्टिस ३x, आर्जेण्टम नाइट्रिकम ३ भी दिये जा सकते हैं ।

सर्दी लगना या फ्लानेन आदि गर्म कपड़ेसे हमेशा गला जकडे रखना या ज्यादा बोलना मना है । हल्की चीजोके पथ्यकी व्यवस्था करनी चाहिये । मछली, मांस न खाना ही अच्छा है । दाढ़ी, मूँछ गड़ाये रहना (न बनवाना) लाभदायक है ।

तालुमूल-प्रदाह
(Tonsilitis)

तालुमूल (अर्थात् तालुकी दोनों या एक ओरकी बादामकी तरहकी ग्रन्थियाँ) लाल, गर्म और फूली रहनेको "तालुमूल-प्रदाह" कहते हैं। प्रदाहित अवस्थामें बुखार, सरमें दर्द, साँसमें तकलीफ, निगलनेमें कष्ट, मुँहमें ज्यादा थूक निकलना, शरीरमें दर्द, स्वरभंग वगैरह लक्षण मौजूद रहते हैं। अच्छी तरह इलाज न होनेपर, प्रदाहित स्थानमें जख्म हो जाता है। इसके बाद यह घाव फटकर पीव निकलनेपर यह बीमारी पुराना रूप धारण करती है (पुरानी अवस्थामें), जीभकी जड़वाली गांठ इतनी बढ़ जाती है कि निकलनेकी ताकत नहीं रह जाती और उपजिह्वा एक ओरको टेढ़ी हो जाती है।

चिकित्सा—(नयी अवस्थामें) दाहिनी ओरका जिह्वामूल लाल और फूला, बेलेडोना ३x; इससे लाभ न तो, तो मर्क ३। गले, मसूढ़े और जीभका फूलना, लार निकलना, निगलनेमें तकलीफ, बदबूदार श्वास-प्रश्वास, मुँहमें छाले, ज्यादा पसीना होनेके लक्षणमें—मर्क-बिन-आयोड ३x। पीव होनेका तैयारी होनेपर, हिपर-सल्फर ६। बायीं तरफका जिह्वामूल लाल और फूला; बायीं तरफसे प्रदाह आरम्भ होकर दाहिनी ओर फैल जानेपर, लाइकोपोडियम १२—३०। "घण्टी बढ़नेपर" कैल्के-आयोड ३ विचूर्ण ("गलक्षत" रोगकी दवाएँ देखिये)।

पुरानी अवस्थामें—बराइट-कार्ब ६—एक प्रधान दवा है, खासकर सूजन ज्यादा रहनेपर।

बराइटा-म्यूर ६ या **मर्क-आयोड** ६—निगलनेमें कष्ट, निगलनेके समय ऐसा मालूम होना, मानो गलेमें कुछ अड़ा हुआ है, पीव होनेकी तैयारी या सड़ना आरम्भ होनेपर।

कैल्के फास ३ विचूर्ण—ज्यादा सूजन, पेशाबमें बदबू और रंग काला, "तालुमूलका बढ़ जाना।"

कैल्के कार्ब ६—रातके समय पसीना, हाथ-पैर ठण्डे और लसदार पसीना होनेपर।

एसिड ३, फाइटोलैक्का ३x, सिलिका ६, हिपर-सल्फर ३०, इग्नेशिया ६, कैलि-आयोड ३x, थूजा ३० (*टीका लगवानेके बादके उपसर्गोंमें*), वैसिलिनम ३० (वंशमें यक्ष्माकी बीमारी रहनेपर), मर्क-वाई ३ (फोड़ेमें पीव होनेपर वह जल्दी-जल्दी निकल जानेके लिये), सल्फर ३० (रोगका बार-बार हमला होनेपर), बैराइटा-आयोड ३० (ग्रन्थियाँ बढ़ी), लैकेसिस २०० और सोरिनम ३० लक्षणके अनुसार देना चाहिये।

कभी-कभी तालुमूल-प्रदाह किसी भी तरह अच्छा नहीं होना चाहता। ऐसे स्थानपर नीचे लिखी दवाएँ क्रमके अनुसार (हरएक दवा दो महीनेतक) सेवन करनेसे रोग एकदम अच्छा हो जा सकता है। सल्फर ३०, कैल्केरिया-कार्ब ३०, थूजा ३०, कैल्के-फास ३x विचूर्ण, मर्क-बिन-आयोड ६x विचूर्ण, कैल्के-आयोड ३x विचूर्ण और सिलिनम २०० (हफ्तेमें केवल एक मात्रा) और टियुबरक्युलिनम २०० (हफ्तेमें एक मात्रा देना चाहिये)।

गर्म दूध या गर्म पानीका कुल्ला करना अच्छा है।

पाकाशय-प्रदाह
(Gastritis)

नया पाकस्थली-प्रदाह—खानेसे बढ़नेवाला और जलन होनेवाला पेटका दर्द, बराबर ठण्डा पानी पीनेकी इच्छा रहती है, परन्तु पेटमें पानी नहीं ठहरता, हर वक्त पेट भारी मालूम होता है और मुँह बिगड़ा, बेस्वाद रहता है, श्वास-प्रश्वासमें कष्ट जीभपर सफेद या पीला लेप चढ़ा

और सुस्ती आदि लक्षण इस रोगमें रहते हैं। नया पाकाशय-प्रदाह रोग बहुत कम होता है।

पुराना पाकस्थली-प्रदाह—पाकाशयमें जलन, अम्ल या श्लेष्मा की कै होना, जीभका बिचला भाग लेप चढ़ा हुआ, परन्तु किनारेका भाग लाल, वक्षस्थलका प्रदाह, पेट फूलना, प्यास, हाथ-पैरोंमें जलन, अग्निमान्द्य, कब्जियत, पेशाब लाल और वजनमें थोड़ा होना वगैरह लक्षण मौजूद रहते हैं।

प्लीहा, यकृत या मूत्रयंत्रकी बीमारीके कारण पाकाशयका प्रदाह पैदा हो सकता है। बहुत खाने-पीने, अग्निमान्द्य रहने या विषैली चीजें पेटमें जानेसे यह बीमारी होती है।

चिकित्सा—(नये या पुराने पाकाशय-प्रदाहमें) :—

आर्सेनिक २x चूर्ण, ३x, ३०—बहुत जलन करनेवाला दर्द (मानो आगमें जला जाता हो)। प्यास, भूख न लगना, कै या मिचली, खाने-पीनेके बाद ही कै, नाड़ी तेज वगैरह उपसर्गोंमें। पानीके साथ आर्सेनिक सेवन करनेके बाद यदि कै हो जाये, तो आर्सेनिक २x या ३x विचूर्ण (विशुद्ध, बिना पानीका) सेवन करनेपर तुरन्त आश्चर्य-जनक फल होता है। (डा० ह्यूज, बेयर, फैरिङ्गटन वगैरह विख्यात चिकित्सक इस रोगकी एकमात्र दवा समझते हैं)।

हाइड्रैस्टिस २x, ३०—यह इसकी एक उत्तम दवा है।

कै या पतले दस्त होनेपर—इपिकाक ३x ; इपिकाकके प्रयोगसे कै बन्द होकर पतले दस्त होते रहें, तो पल्सेटिला ३ देना चाहिये। बराबर डकार आती रहे, तो कार्बो-वेज ३x चूर्ण या नक्स-वोमिका २x देना चाहिये। एकाएक बीमारीका प्रचण्ड आक्रमण होनेपर कैम्फर θ।

जीभ मैल-भरी, कै या खायी हुई चीजका स्वाद डकारमें आना, ऐण्टिम-क्रूड ६। पाकाशयकी सूजनके कारण बराबर तकलीफ मालूम होनेपर, मर्क-कोर ६। पानीके अलावा, सब चीजोंका स्वाद तीता,

प्यास, पाकाशयमे दर्द और शीत रहनेपर, ऐकोनाइट ३। चाय पीनेके कारण पैदा हुए रोगमे, थूजा ३-३०। पाकस्थलीमे कमजोरी और खालीपन मालूम होना, पित्त, रक्त और श्लेष्माके साथ खाये हुए पदार्थकी डकार आना वगैरह लक्षणोमे—फास्फोरस ६। बेलेडोना ६, कैथरिस ६, कैम्फर 0, हायोसायमस ६, आर्ज-नाई ६, आर्सेनिक ३x—३०। विस्मथ ६, मिल्लिफोलियम १x, मर्क-सोल ६, ब्रायोनिया ३x, सल्फ ३०, पुरानी बीमारीमे लक्षणके अनुसार देनी चाहियें। पाकस्थलीमे घाव होनेपर, आर्सेनिक ३०, कैलि-बाई ६, क्रियोजोट १२, हाइड्रेस्टिस २x, ६। "अजीर्ण" रोग देखिये।

कोई विषैली चीज खानेपर यदि पाकाशय-प्रदाह हो जाये, तो उस विषैली पदार्थका "प्रतिविष" (antidote) सेवन करनेसे रोग जड़से अच्छा हो जाता है। पुरानी बीमारीमे सवेरे ठण्डा पानी पीना लाभदायक है।

पाकाशयका पुराना घाव

पीठके बीचमे और पाकाशयमे तेज दर्द और जलन मालूम होना (खाने-पीनेके बाद ही दर्दका बढ़ना), मुँहमे हमेशा पानी भर आना, खायी हुई चीजकी कै करना (देखनेमे काफीकी बुकनीकी तरह), नाडी क्षीण, रक्त-स्वल्पता और (स्त्रियोकी) ऋतुकी गड़बड़ी वगैरह "पाकाशयक घावकी पुरानी अवस्था" के प्रधान लक्षण है। इनके साथ ही "आंतोको ढकनेवाली झिल्लीका प्रदाह" या "रक्त-वमन" उपसर्ग रहनेपर, रोग आशंकाजनक समझना चाहिये। रोगीको उपयुक्त होमियापैथिक चिकित्सकके हाथोमे सौंपना चाहिये।

चिकित्सा—क्रियोजोट, आर्स, हाइड्रेस्टिस, कैलि-बाई और आर्ज-नाई (लक्षणके अनुसार) इस रोगकी खास दवाएँ हैं। "रक्त-वमन" होनेपर आगे लिखा "रक्त-वमन" रोग देखना चाहिये।

बराबर बरफका टुकड़ा चूसने या बरफका पानी पीनेसे दर्द और कै बन्द हो सकती है। जल्दी पचनेवाली चीजें खाना, सोडा-वाटरके साथ दूध, आरारूट वगैरह हल्के पथ्य (और जरूरत होनेपर, उपवास) की व्यवस्था करनी चाहिये। तम्बाकू खाना नुकसान करता है।

रक्त-वमन (Hæmatemesis)

धूपमें घूमना, बहुत कसरत, बहुत शोक होना, ज्यादा मैथून और अनुकल्प रजः प्रभृतिके कारण रक्त वमन होता है। क्षार, नमक, अन्न और खट्टी चीजें और मिर्चा वगैरह तीक्ष्ण-वीर्य चीजें खाने वगैरह कारणोंसे और खून दूषित होनेपर वही पित्त दुष्ट खून, आँख, कान, नाक या मुँहसे अर्थात् उर्ध मार्गसे अथवा लिंग, योनि या गुह्यद्वार आदि अधोमार्गसे या ऊपरी और निचले दोनों रास्तोंसे निकला करता है। साधारणतः कैके साथ मुँहसे ही खून ज्यादा निकलता देखा जाता है। खूनकी कै होनेके पहले पाकस्थलीमें दर्द और भार मालूम होना, अजीर्ण, मिचली, मुँहका स्वाद नमकीन, नाड़ी कमजोर, लम्बी साँस, सुस्ती सरमें झुनझुनी वगैरह लक्षण पैदा हो जाते हैं। कै द्वारा पाकस्थलीसे जो स्राव होता है, उसका परिमाण या रंग सब समय एक समान नहीं होता।

फेफड़ेसे खून बहना और पाकस्थलीसे खून निकलनेमें भेद हैं :— पाकस्थलीके खूनमें—खूनका रंग कुछ काला और विना फेनका, खाया पदार्थ (कभी रक्त) मलके साथ निर्गत होता है और कैके पहले अमाशयमें दर्द या मिचली रहती है। फेफड़ेसे खून निकलनेपर—खून चमकीला लाल और फेन-भरा हुआ एवं श्लेष्मा-मिला रहता है, मलके साथ ख़ून नहीं रहता, ख़ून निकलनेके पहले साँसका कष्ट और छातीका दर्द मौजूद रहता है।

चिकित्सा—ऐकोनाइट ३x—रक्त-प्रधान मनुष्योंका मुँह लाल पूर्ण नाड़ी, कलेजा धड़कना, घबड़ाहट, बुखार, एकाएक पाकाशयमे दर्द उठकर खूनकी कै होना।

मिलिफोलियम θ, १x—सहजमे ही चमकीले लाल रंगके खूनकी कै होना।

इपिकाक ३x, ६—मिचली या कैके साथ "चमकीला लाल" रंगका खून निकलना, थोड़ी देर ठहरनेवाली बार-बार खाँसी, मुँहका स्वाद नमकीन, जीभ तर।

हैमामेलिस १—तेज काँपती हुई और ठण्डी नाड़ी, "काले रंगका" खून कै होना, पेटमे गड़गड़, कलकल शब्द, बिना कष्टके रक्त-स्राव, कमजोरी। बहुतोंका मत है कि यही इस रोगकी अव्यर्थ दवा है। पन्द्रह मिनटके अन्तरसे दवा सेवन करनी चाहिये।

आर्निका ३x, ३०—थक्के बँधे खूनकी कै होना और खाने-पीनेसे बढ़ना। ज्यादा परिश्रम या आघातके कारण खून बहना।

आर्सेनिक ३x—साँस लेने-छोड़नेमे कष्ट, चेहरा मलिन, कलेजा धड़कना, शरीरमे दाह, दुर्निवार प्यास, नाड़ी क्षुद्र और चंचल होनेपर।

चायना ३, ३०—बहुत ज्यादा परिमाणमे खूनकी कै होकर रोगीके कमजोर हो पड़नेपर और हाथ पैर ठण्डे और नाड़ी क्षीण होनेपर या मूर्च्छाके लक्षणमे।

फास्फोरस ६, सिकेलि २x—३, क्रोकस २x, बेलेडोना ६, फेरम ६ (खाँसी या थूकके साथ खून आना, कलेजा धड़कना और बेहोशीके लक्षणमें), कार्बो-वेज ६—३० (हिमाग अवस्थामे पित या खूनकी कै होनेपर) और नक्स-वोमिका ६ की भी कभी-कभी आवश्यकता हो सकती है।

नियम—सम्पूर्ण विश्राम, देहके कपड़े ढीलेकर देना, दोनो पैर कुछ ऊँचे रखकर खाटपर सोना, बरफके टुकड़े चूसना या बरफका पानी

पीना और पेटपर बरफ रखना या बरफकी पोटली बनाकर पेटपर घसना उचित है। खुनकी कै बन्द न होनेतक सागू, बर्ली, आरारूट या थोड़ा दूध पिलाना चाहिये। यदि बेहोशी आ जाये, तो डरकी कोई बात नहीं है; क्योंकि बहुत बार बेहोश हो जानेपर खुनकी कै होना बन्द हो जाता है; परन्तु बेहोशी बहुत देरतक रहनेपर शैम्पेन शराबके साथ बरफ मिलाकर उसे ठंडाकर रोगीको पिलानेसे रोगीके शरीरमें बल आ जाता है और कै होना बन्द हो जाता है।

अजीर्ण या अग्निमान्द्य

(Dyspepsia or Indigestion)

पचनेकी क्रियाकी गड़बड़ी ही अजीर्ण या अग्निमान्द्य है। "क्षुधामान्द्य (भूख न लगना), पेट फूलना", कब्जियत या पतले दस्त आना, डकार आना, मिचली या कै, छातीमें जलन या जला जलना, पेटमें भार, मुँहमें पानी भर आना, भोजनके बाद पेटमें, साँसमें दुर्गन्ध, कलेजा धड़कना, सरमें दर्द वग़ैरह इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। इस रोगके कारण वात, बहुमूत्र आदि बहुत-सी जटील बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं। पाकाशयको ठीक रखनेके लिये खाने-पीने, विश्राम आदिकी ओर ज्यादा ध्यान रखना चाहिये।

कारण—बहुत-सा तेल या घीका पकाया हुआ पदार्थ असमयमें खाना, खानेकी चीजें अच्छी तरह चबाये बिना निगल आना, बहुत दिनोंतक कितनी ही तरहकी दवाएँ सेवन करना, बहुत तम्बाकू, चाय या शराब पीना, बहुत ज्यादा शारीरिक या मानसिक परिश्रम या एकदम परिश्रम ही न करना, अस्वास्थ्यकर मकानमें रहना, ठण्डी हवा लगना, सदा खटाई, अँचार और दूसरी खट्टी चीजें खाना, कमरमें कपड़े खुब कसकर पहनना, शरीरमें खुन भरपूर मात्रामें न रहना, मन हमेशा मुर्झाया

रहना, स्नायु-रोग या वात-रोगका रहना। सोरा (psora) धातुग्रस्त मनुष्योंको अक्सर अग्निमान्द्य भोगना पड़ता है। इन्हें जब कोई चर्म रोग होता है, तब यह अजीर्ण रोग कम हो जाता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) नये अजीर्ण रोगमें—नक्स-वोम, आर्स, ब्रायो, विस्मथ (रातमें बराबर ज्यादा तकलीफ, आक्षेप); पल्स (भारी चीजें या चर्बी-मिली चीजें खानेके बाद अजीर्ण); आइरिस (कै या पतले दस्तके साथ सरमें दर्द), कोलोसिन्थ (खट्टे फल-मूल खानेके कारण अग्निमान्द्य)।

(२) पुराने अजीर्ण रोगमें—नक्स-वोमिका, आर्स, ब्रायो, कार्बो-वेज, पल्स, सल्फ, कैल्के-कार्ब, हिपर-सल्फर, मर्क, कैलि-बाई, आर्निका, थूजा (खासकर चाय पीनेके कारण अजीर्ण होनेपर—थिया), ऐण्टिम-क्रूड, लाइको।

(३) सर्दी लगनेके कारण अजीर्ण—ऐकोन, डल्का, मर्क।

(४) मानसिक भावोंकी अधिकताके कारण अजीर्णमें—नक्स-वाम, काम-काजकी चिन्ता और रातमें जागरणके कारण अजीर्णमें, इग्ने (शोक-दुःखादिजनित रोगमें)।

(५) कमजोरी (जैसे—रस-रक्तका क्षय होना, पतले दस्त) से पैदा हुए अजीर्णमें—चायना, एसिड-फास, फेरम।

नक्स-वोमिका ३x, ३०—भोजनके कुछ देर बाद पाकस्थलीमें भार और दर्द मालूम होना, कलेजेमें जलन; पेट फूलना; खट्टी डकारें आना, बार-बार खाई हुई चीज या पित्तका कै करना; मुँहका स्वाद तीता या खट्टा; भोजनके बाद तन्द्रा आना और आलस्य; सवेरे सर भारी होना या सरमें चक्कर, बार-बार पाखाना लगना, परन्तु पाखाना न होना, चेहरेपर पीलापन, खासकर तम्बाकू खाने, शराब पीने या बहुत तरहकी "गर्म" दवाएँ सेवनसे पैदा हुए अजीर्ण रोगमें, नक्स-वोमिका १x फायदा करता है।

नेट्रम-म्यूर—१२x चूर्ण, ३०—आलू, मैदा वगैरह श्वेतसार-भरी चीजें ज्यादा खानेके कारण अजीर्ण। नीचें लिखे उपसर्गोंमें यह खूब फायदा करता है। मुँहसे पानी निकलना, मुँहका स्वाद तीता, कलेजेमें जलन, सर्दीका भाव, भोजनके बाद कलेजेमें धड़कन, रक्तहीनता, "नमक खानेकी प्रबल इच्छा", कब्जियत, युवक-युवतियोंके बराबर विषय सम्भोगके कुफलजनित उपसर्ग वग़ैरह लक्षणोंमें लाभदायक है।

पल्सेटिला ३x, ३०—छातीमें जलन, मिचली, सरमें चक्कर, जीभ सूखी और रुखड़ी, जल्दी-जल्दी पतले या आँव-भरे दस्त, मुँहका स्वाद नमकीन, तीता या खट्टा; जाड़ा लगना, खासकर घीमें पकाई हुई चीजें खानेके कारण अजीर्ण; फल, आँटा, आइसक्रीम या कुल्फी बरफ खानेके कारण अजीर्ण। कोमल प्रकृतिकी औरतों या जिन्हें ऋतुकी गड़बड़ी रहती है, उन्हें 'पल्स' ज्यादा फायदा करता है।

एबिस-नाइग्रा ३x—खानेके बाद ही पाकाशयमें तेज दर्द, कब्जियत; बूढ़ोंके अजीर्ण रोगमें।

ऐनाकार्डियम ३—भोजनके बाद तुरन्त ही रोगीकी सब तकलीफें घट जाती हैं, परन्तु थोड़ी देर बाद ही दर्द पैदा हो जाता है।

हाइड्रैस्टिस ३x—पीली लसदार जीभ, चेहरा मलिन (sodden) दिखाई देता है, पेट पचका रहता है, छाती और पेट बराबर रहते हैं, मानो मिल गये हैं।

नेट्रम-फास ३x, १२x चूर्ण—"अम्ल-रोग"; खट्टी डकार और कैके लक्षणमें। क्रिमि रहनेपर विशेष उपयोगी है।

आर्सेनिक ३x, ६—पाकस्थलीमें बहुत जलन मालूम होना; बहुत गर्म पानीमें पीनेपर घट जाना; बरफ खानेके कारण अजीर्ण रोग होनेपर।

ब्रायोनिया ६—भोजनके बाद पाकस्थलीमें भार मालूम होना, ऐसा मालूम होता है, मानो पाकस्थलीमें एक पत्थर बँधा हुआ है; कब्जियत, पाखाना कड़ा, सूखा और जला हुआ-सा (जली हुई ईंट—

भमेकी तरह), स्रम चक्कर, सर भारी, पाकाशयमें खाया मारनेकी तरह दर्द, मुँहका स्वाद तीता और पित्तकी कै होना या मिचली, गर्मीके दिनोंके उदरामयमें, खासकर आर्सेनिकके अपव्यवहारमें पैदा हुए अग्निमान्द्यमें। रोगी चिड़चिड़ा या क्रोधी मिजाजका रहता है।

लाइकोपोडियम ६, ३०, २००—"नीचेकी ओरसे वायु निकलना" (अधोवायु), निर्वीर्य रोगीयोंका अग्निमान्द्य, खानेकी चीजें पचनेके समय बहुत तन्द्रा और नींद खुलने बाद ही सुस्ती, पेटमें वायु, जमा होनेके कारण पेट फूलना, कब्जियत, पेट गड़गड़ाना, खट्टी डकारें या बायीं ओरकी आँतका काँपना। कमजोरी या पढ़ने-लिखनेका ज्यादतीके कारण अनपच, पेशियोंकी ताकत कम होकर या परिपाक-रसकी कमीके कारण अजीर्ण रोग होनेपर।

कार्बो-वेज ३x चूर्ण, ६०—"ऊपरकी ओरसे वायु निकलना" (डकार), पेट फूलना, छातीमें जलन, पतले दस्त, सर भारी और कमजोरी, पुराने अग्निमान्द्य या बूढ़ोंके अग्निमान्द्य रोगमें ज्यादा फायदा करता है।

मुँहसे बार-बार स्वादहीन पानी निकलना या कड़वा, तीता या खट्टा अथवा सड़ी बदबू लिये डकार आना या कभी कब्जियत और कभी पतले दस्त होना उपसर्गमें "कार्बो-वेज" २x विचूर्ण दवा सेवन और केवल "मठा" पीकर रहने (या उपवास) से लाभ होता है।

हाइड्रैस्टिस १x, ३०—पाकस्थली भरी और भारी मालूम होना, कब्जियत, सरमें दर्द (खासकर कपालमें), खट्टी डकारें, श्वासकष्ट, कलेजा धड़कना।

सिपिया ६—पुराना अजीर्ण रोग (खासकर जरायुका दोष रहनेपर), मलद्वारमें भार, खट्टा या तीता स्वाद, खटाई, अचार आदि खानेकी इच्छा, शरीर मलिन और पीला।

ऐण्टिम-क्रूड ६—परिपाक-शक्तिकी कमी या अरूचि ; पाकस्थलीमें भार मालूम होना, मिचली अथवा पित्त या श्लेष्माका कै करना ; गुदा-मार्गसे बदबूदार वायु निकलना ; खायी हुई चीजकी गन्ध डकारमें आना ; कब्जियत या पतले दस्त आना (पर्यायक्रमसे), चेहरेपर फुन्सियाँ या नाकके छेदमें और ओंठोंमें जखम ; जीभ सादे और गहरे मैलेसे छिपी ; खाने के बाद पेट फूलना लक्षणोंमें यह फलदायक है ।

फास्फोरस ३०—पुराने अजीर्ण रोगमें खट्टी डकारें या खट्टी कै ; बहुत भूख ; पेट फूलना ; जीभ मैल-चढ़ी ; पेटमें जलन मालूम होना, जो पानी पीनेपर घट जाती है ; परन्तु पानी भी कै हो जानेके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है ।

चायना ३x, २००—बहुत दिनोंतक शराब पीनेके कारण पैदा हुए पुराने अग्निमान्द्यमें, जब शोथ, यकृत-प्रदाह वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं । मैलेरियासे पैदा हुआ अजीर्ण ।

सर्क-सोल ३x चूर्ण या ऐक्टिया रेसिमोसा ६ और थिया ३०—बहुत दिनोंतक चाय पीनेकी वजहसे पैदा हुए अजीर्णमें उपयोगी है ।

प्लम्बम ६, २००—सर्दी लगनेके कारण अग्निमान्द्य ; पेटमें दबाव मालूम होना, कड़ो चीजें खा नहीं सकता ; पेटमें दर्द और कब्ज रहनेपर इससे फायदा होता है ।

आर्जेण्ट-नाई ६, २००—रक्तहीनता वगैरह कारणोंसे बदहजमी होनेपर ; पाकाशयके दर्दके साथ अम्ल-रोग ; डकार आया करता है ।

थूजा ६, ३०—ज्यादा मात्रामें चाय पीनेसे पैदा हुए उपसर्ग रहनेपर । भूख न लगना ; खानेके बाद ही पेटमें दर्द ; पेटमें वायु होना ; ऊपरी पेटमें दर्द ; प्यास, आलू, मांस और प्याजसे अरुचिमें यह फलप्रद है ।

कैलि-वाई ६—ज्यादा "बियर" नामक शराब पीनेके कारण पैदा हुए उपसर्गमें । पानी अच्छा नहीं लगता ; खट्टी चीजें खाना चाहता

है। "खानेके बाद ही पेटके उपसर्ग घट जाते हैं।" (एनाकार्ड), पीला पानीकी तरह वमन, मांस सहन नहीं होता, खानेके बाद ही पेटमें भार।

नक्स-मस्केटा २x, ६—बाहरी प्रयोगसे चर्म-रोग बैठकर अजीर्ण होनेपर। "भोजनके बाद ही पेटमें दर्द", पेटमें मरोड़, पेटमें जलन और पेट गर्म, पेट भरा, इसीलिये श्वासमें कष्ट, वृद्धोंका अजीर्ण रोग।

हिपर-सल्फर ६ या १२—पुराने अग्निमान्द्यमें, जब कोई भी चीज नहीं पचती, खटाई या अँचार खानेकी इच्छा, पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुए अग्निमान्द्यमें।

सल्फर ३०—खट्टी डकार आना, पाकशयमें भार मालूम होना, भोजनके बाद तन्द्रा, मुँहके किनारे और ओठोंपर जखम या सूजन, बार-बार अजीर्ण, कब्जियत, बवासीर। सवेरे सल्फर ३० और सन्ध्याके समय नक्स-वोमिका ३०। पुराने अजीर्ण रोगीको खिलाकर बहुतसे विद्वान डाक्टर बहुत कुछ फायदा देख चुके हैं।

कैल्के-कार्ब ६, १२ या ३०—कड़वी खट्टी डकारें आती हों, ऐसे पुराने अग्निमान्द्यमें, खाँसी, धीरे-धीरे शरीर कमजोर और दुबला होते जाना, बहुत ज्यादा ऋतु स्राव। भोजनके बाद ही खाये हुए पदार्थका अम्ल हो जाना, खट्टी डकार या खट्टा वमन। पल्स सेवनके बाद यह ज्यादा फायदा करता है।

आयोडियम ६, पेट्रोलियम ६, बीच-बीचमें आवश्यक होता है।

"अम्ल रोग" की दवाएँ देखिये।

मुँहसे पानी निकलना—कार्बो-वेज ३x चूर्ण, ब्रायो ६, नक्स-वोमिका ३०, लाइकोपोडियम ३०।

क्षुधा मंद होनेपर—कैल्के-कार्ब, चायना, फेरम।

राक्षसी भूख—चायना, साइना।

पेट फूलना—लाइको (कब्जियतके साथ पेट फूलना), कार्बो-वेज (उदरामयके साथ पेट फूलना)।

सीनेमें जलन—कैल्के-कार्ब ६, कार्बो-वेज ६, कैप्सिकम ६, नक्स-वोमिका ३०, पल्सेटिला ६।

बदबूदार डकार आना—कार्बो-वेज ६, सल्फर ३०।

अम्ल रोग—एसिड-सल्फ २x—३०, रियुम ३०, कैल्के-कार्ब ६—३०, नेट्रम-फास २x—१२x चूर्ण, फास्फो ३, रोबिनिया ३। कैरिका पेपया θ, ५—१० बून्द भोजनके बाद सेवन करना चाहिये। "अम्ल-रोग" देखिये।

हिचकी—एसिड-सल्फ (अम्ल रोगके साथ हिचकी); नक्स-वोमिका, आर्सेनिक, कालोफाइलम, जेलसिमियम।

छाती दबनेके सपने—नक्स-वोमिका १x—३० (नशा खाने या अजीर्णके कारण); चाइना (स्वप्नमें सीनेपर ज्यादा दबाव मालूम होना); सल्फ (स्वप्नमें कलेजा ज्यादा धड़कना)।

खाने-पीनेके दोषसे अजीर्ण रोगमें—पीठी, चर्बी-मिली, तेल-भरी या घीमें पकी चीजें (जैसे—पूरी, कचौड़ी, खिचड़ी, पोलाव, वगैरह) भोजन या ठण्डी पतली चीजें ज्यादा पीनेसे अजीर्ण रोग होनेपर—पल्सेटिला ३, ६।

काफी, शराब, खासकर "ह्विस्की" शराब पीना, रातमें जागरण, अफीम खाना, चिंगड़ी मछली या अंडेका सफेद भाग खानेके कारण अजीर्ण रोगमें—**नक्स-वोमिका** ३x, ३०।

दूध सहन न हो, दूध पीनेके बाद अजीर्ण और पेटमें काटनेकी तरह दर्दके लक्षणमें—**इथ्यूजा** ६।

खट्टी या अम्ल चीजें खानेके कारण पैदा हुए अजीर्ण रोगमें—**एण्टिम-क्रूड** ६।

सडी मछली या मास अथवा मक्खन खानेके कारण अजीर्ण रोगमे—**कार्बो-वेज ६।**

वरफका पानी, कुल्फी वरफ या ज्यादा पानी पीनेके कारण अजीर्ण रोगमे—**आर्सेनिक ६।**

तरकारी खानेके बाद अजीर्णमे—**सिपिया ६।**

नमकके अपव्यवहारके कारण अजीर्णमे—**फास्फोरस ६** या **नेट्रम म्यूर ३०।**

फूट, तरबूज खाने या दूषित पानी पीनेके कारण अजीर्ण रोग होनेपर—**जिंजिबार ३x, ६।**

ज्यादा फल खानेके कारण अजीर्ण होनेपर—**चायना ३** या **आर्सेनिक ६।** (फल न पचकर अजीर्ण अवस्थामें निकलनेपर और पेटमे जलन मालूम होनेपर **चायना** ज्यादा फायदा करता है)।

साधारण नियम—अजीर्ण रोगमे यदि पथ्यापथ्यके नियमका पालन न किया जाये, तो केवल दवा खानेसे ही कोई फल नही होता। रोज वँधे समयपर नहाना, खाना उचित है। खानेके पदार्थ धीरे-धीरे चवाने चाहियें, शारीरिक और मानसिक परिश्रमके कुछ ही पहले या बाद खाना मना है। भारी चीजे (जैसे—मिर्च, लाल मिर्चा या ज्यादा गर्म मसाला, तेल और घीमे पकी चीजे) एकदम न खानी चाहियें। दिनमे सोना, ज्यादा मैथुन, रातमें जागरण, ज्यादा रातमे खाना, रातमे खाते ही सो जाना—छोड़ देना चाहिये। पानके रसके साथ नीबूका रस मिलाकर खानेसे अरुचि दूर होती है। भात (ज्यादा भूख न रहने), मठा और अनारसका रस सुपथ्य है। सेव, अगूर, अनार, पपीता वगैरह सहजमे पचनेवाले फल खानेमे हर्ज नही है। कोई-कोई कहते हैं कि कच्चे नारियलका पानी या नारियलका नरम गरी इस बीमारीमे ज्यादा फायदा करती है। पुराने चावलकी भात या

चिवड़ा गर्म पानीमें भिंगोकर दही या मठेके साथ खिलानेसे बहुत बार खासा फायदा हो जाता है। दूध, दही और कच्चे पपीतेकी तरकारी इस रोगमें सुपथ्य है। भूनी हुई चीज और चाय, काफी और कोका वगैरह व्यवहार न करना ही अच्छा है। भोजनके बीस-पचीस मिनट पहले एक पावके अन्दाज बहुत गर्म पानी पीनेसे भी कभी-कभी अजीर्ण रोग अच्छा हो जाता है। भोजनके समय ज्यादा पानी पीना मना है। भोजनके दो-तीन घण्टे बाद पानी पिया जा सकता है। अन्नकी चीजें अच्छी तरह सीझनी चाहियें। ज्यादा बाई-कार्बोनेट आव सोडा या चूनेका पानी या ज्यादा मात्रामें सोडा-वाटर व्यवहार करना एकदम उचित नहीं है। बरफ, आइसक्रीम ज्यादा नुकसान करता है। एक फ्रेञ्च डाक्टरका कथन है, कि भोजनके बाद ही बच्चोंकी तरह कुछ देर खेलते रहनेसे भोजन किया पदार्थ सहजमें ही पच जाता है।

१९२१ ई० में यह प्रमाणित हुआ है कि कच्चा प्याज खानेसे पाचक-रस (gastric juice) का अम्लत्व बढ़ जाता है। इसलिये जिन्हें पाचक-रस बहुत निकलता हो, उनके लिये भोजनके कम-से-कम आध घन्टा पहले कुछ कच्चे प्याजका रस खानेसे फायदा हो सकता है।

रानीगंज, छोटा नागपुर, सन्थाल परगना वगैरह जिन-जिन स्थानोंकी मिट्टीमें लोहा (iron) ज्यादा हो, उन-उन स्थानोंमें यकृतके दोषवाले अजीर्ण रोगीके लिये रहना बड़ा ही हानिकर है। ऐसे रोगियोंके लिये काशी, गया या समुद्रके किनारेकी जगहोंमें रहना अच्छा है।

अजीर्णके कारण सरमें चक्कर आना
(Vettigo)

अजीर्ण या पाकाशयकी गडबडीके कारण सरमे थोडा-थोडा चक्कर आया करता है। सरमे "तेज" चक्कर आनेपर समझना होगा कि मस्तिष्क, हृद्पिण्ड या मूत्र-ग्रन्थि आदिका कोई बीमारी इसमे मिली हुई है। मस्तिष्कके गठन-परिवर्तनादिके कारणसे भी "सरमे चक्कर" आ सकता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—अजीर्णसे पैदा हुए सरके चक्करमें—नक्स-वोन, पल्सेटिला, ब्रायोनिया वगैरह अजीर्ण रोगकी दवाएँ (अजीर्ण रोग" की दवाएँ देखिये)।

बहुत मानसिक परिश्रम करनेके कारण मस्तिष्ककी दुर्वलताकी वजहसे सरमे चक्कर आनेपर—फास्फोरिक-एसिड, चायना, फास्फोरस, जिकम।

मस्तिष्कमें खून जमा होनेकी वजहसे सरमे चक्कर आनपर—बेल, जेल्स, ग्लोनोइन, काक्यु वगैरह दवाएँ फायदा करती हैं। (स्नायु-मण्डलके रोगध्यायमे "शिरोघूर्णन" देखिये)।

मुहमें पानी भर आना
(Pyrosis)

अजीर्ण, यकृत, पाकाशयकी सर्दी वगैरह रोगोके कारण खट्टी या स्वाद-रहित डकार आती है और मुँहमें ज्यादा पानी भर आता है। बरावर भारी या अपुष्टिकर भोजन खानेके कारण गरीबोको यह बीमारी ज्यादा हुआ करती है।

चिकित्सा—कार्बो-वेज ३x विचूर्ण (खट्टी या तीखी डकार, पेट फूलना, दस्त या कब्जियत), लाइकोपोडियम ६—३० (पुरानी

बीमारीमें); नक्स-वोम १x—६, एसिड सल्फ ३x, ब्रायो ३, पल्सेटिला ३ वगैरह अजीर्ण रोगकी दवाएँ इस रोगमें भी फायदा करती हैं। रोग तेज होनेपर भूख-प्यास निवारणके लिये सिर्फ मठा ही पथ्यके रूपमें देना चाहिये। ताजा दूध पीना नुकसान करता है।

भूख न लगना
(Loss of Appetite)

यक्ष्मा और अम्ल रोगमें (या किसी पुराने रोगके साथ) कभी-कभी भूख एकदम गायब हो जाती है। ऐसी जगह जेण्टियाना लुटियाना θ आधा बून्द (भोजनके आध घंटा पहले) सेवन कराकर आशातीत लाभ हुआ है; जेण्टियानासे अगर फायदा न हो, तो हाइड्रैस्टिस, ऐण्टिम-क्रूड, नक्स-वोम, प्रूनस-स्पाई, इग्नेशिया या रस-टक्सकी परीक्षा करनी चाहिये। हल्की चीजें खानेको देनी चाहिये।

पाकाशय प्रसारण
(Dilatation of the Stomach)

बहुत दिनोंतक पाकस्थली-गह्वरका बेकायदे बढ़ते जाने या फैलनेका नाम "पाकाशय-प्रसारण" है। ज्यादा खाने-पीनेके कारण पाकस्थलीके नीचेका मुँह बन्द हो जाता है और इसी तरह पेट बढ़ जाता है। ज्यादा "कब्जियत" और "खट्टी कै" (कै किया हुआ पदार्थ देखनेमें रबरके रंगका और गदला) इस बीमारीके प्रधान उपसर्ग हैं। रोग बहुत पुराना हो जानेपर शरीरके दूसरे-दूसरे यंत्र भी खराब हो सकते हैं। गत १३३१ सालके ज्येष्ठ महीनेमें कलकत्ता हाइकोर्टके भूतपूर्व विचारक और युनिवर्सिटी वाइस चान्सलर विख्यात सर आशुतोष मुखोपाध्याय महाशय इसी रोगसे परलोक सिधारे थे।

चिकित्सा—नक्स-वोम ३x—३०, सिपिया ३० और हाइड्रेस्टिस θ—३ इसकी प्रधान दवाएँ हैं। भोजनकी गड़बड़ी या पाकस्थलीके प्राचीरोंके कमजोर हो जानेपर "नक्स" का प्रयोग किया जाता है, तो कमजोर मांस-पेशियाँ मजबूत होती है (ऐसे मौकेपर कोई-कोई चिकित्सक नक्स-वोमिकाके बदले स्ट्रिकनिया ३ विचूर्ण देकर भी फायदा होना बताते हैं)। रोगी कमजोर, पेला, दुबला, यकृत-दोष, खट्टी चीजें खानेकी इच्छा, मुँह तीता या नमकीन, अजीर्ण खाद्य या पित्त अथवा श्लेष्माका वमन, बहुत स्राव या पीब-भरा श्वेत-प्रदर या जरायुका बाहर निकल जाना, बदरंग पेशाब, पाकस्थलीका निचला भाग बड़ा और भारी मालूम होना प्रभृति लक्षणोंमे "सिपिया" फायदा करता है। पाकस्थली प्राचीर मोटी या जख्म-भारी, खट्टी डकार आना खाई हुई चीजें के करना, जीभ तर या लेप-चढ़ी, आँव-भरा थक्का-थक्का पाखाना, रक्त-स्वल्पता, पाकस्थलीमे खालीपन मालूम होना, कलेजा धड़कना, तलपेटमे दर्द, सामने कपालमे दर्द वगैरह लक्षणोंमे "हाइड्रेस्टिस" फायदा करता है।

आर्सेनिक ३x—६, क्रियोजोट १२, आर्ज-नाई ३०, ब्रायो ६x, कार्बो-वेज ३० और सल्फर ३० बीच-बीचमें (लक्षणके अनुसार) आवश्यक हो सकते हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—अंगूरका रस, बहुत थोड़ा दूध और हल्का पथ्य देना चाहिये। श्वेतसार या चीनीकी जातिकी चीजें खाना और भोजनके बाद ही पानी पीना मना है। जो उत्तेजक पदार्थ पाकस्थलीमे पचनेमें गड़बड़ी मचाते है, उन सबको पाकाशयसे निकाल डालना पडेगा। भोजनके आध घण्टा पहले हाइड्रेस्टिस θ दस बून्द एक औंस पानीके साथ मिलाकर उससे पाकस्थली अच्छी तरह धो डालना इसका बढ़िया उपाय है। कुछ गर्म पानीमे थोड़ा नमक या बाई-कार्बोनेट आव सोडा) घोलकर रबरके टेढे नल (siphon) की

सहायतासे रोगी स्वयं अपनी पाकस्थली अच्छी तरह धो सकता है। कभी-कभी नश्तर लगवानेकी जरूरत भी पड़ती है।

पाकाशयकी क्षीणता
(Atrophy of the Stomach)

पाकस्थलीकी क्रिया बिगड़ जानेपर अर्थात् पचानेवाली रसकी कमी होनेपर यह बीमारी पैदा होती है। रक्त-स्वल्पता या बहुमूत्र रोगके साथ यह बीमारी भी लगी रह सकती है। पेटमें दर्द, भार मालूम होना और वायु-संचय, डकार आना और वमन इत्यादि इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा—नक्स-वोमिका १x—३ इसकी उत्कृष्ट दवा है। भोजनके बाद ही दस-पन्द्रह बून्द डाइल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड थोड़े पानीमें मिलाकर पीना चाहिये। पुष्टिकर खाद्य अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिये, जिससे उसमें बहुत-सी लार मिल जाये।

पाकाशयका घाव
(Ulceration of the Stomach)

बहुत दिनोंतक अजीर्ण रोग भोगनेपर अक्सर उसके साथ पाकाशयका घाव हो जाया करता है। पुरुषोंकी अपेक्षा औरतोंको (जैसे—दाई, दर्जी या जो औरतें कड़ी मेहनत करती हैं और अच्छा भोजन नहीं पातीं, उन्हें) यह बीमारी ज्यादा हुआ करता है। ज्यादा गर्म चाय पीना, यक्ष्मा, रक्त-स्वल्पता, अर्श, रजो-रोध, गर्भावस्था वगैरह कारणोंसे पाकाशयमें घाव पैदा होकर तकलीफ देता है। भोजनके कुछ बाद ही पेटमें जलन या चबानेकी तरह दर्द, गर्म चीज खाने-पीनेके बाद या

पेटको दबानेके बाद तकलीफका बढ़ना, खाये हुए पदार्थकी कै होना (कभी खून या श्लेष्मा कै करना) वगैरह इस बीमारीके "प्रधान लक्षण" है।

हाइड्रेस्टिस ३x—३, आर्स ३x, मर्क-कोर ३, एसिड-सल्फ ३x, फास्फोरस ६, और बैप्टीशिया ३x इसकी उत्कृष्ट दवाएँ है ("अजीर्ण रोग" की दवाएँ देखिये)।

पाकाशयका दूषित जखम

(Cancer in the Stomach)

पाकाशयमे अर्बुद हुआ है, इतना सन्देह होनेपर ही हाइड्रेस्टिस ३x, कान्डुरेङ्गो θ—३, या आर्स ३x देना चाहिये। यह निश्चित हो जानेपर कि अर्बुद हुआ है, इस ग्रन्थके "अर्बुद" और "दूषित अर्बुद" अनुच्छेदकी दवाओंसे चुनकर दवा देनी चाहिये।

अम्ल-रोग (Acidity)

यह ऊपर लिखा एक विशेष प्रकारका अजीर्ण रोग है। पाकस्थलीमें बहुत-सा लवणकाम्ल-जल (hydrochloric acid) निकलनेपर, हमलोग कहते है कि इसे "अम्ल-रोग" हुआ है। पेटमे गर्म मालूम होना भोजनके दो-एक घण्टे बाद ही पेटमे दर्द, मुँहमें पानी भर आना या खट्टी डकार आना, मुँहका स्वाद खट्टा, ताकत घटना, कलेजेमे जलन, कै कब्जियत या पतले दस्त, सरमे दर्द, प्यास वगैरह इसके "प्रधान लक्षण" है।

पाकाशयके जखम या हरित् रोगवाले मनुष्यको या जो ज्यादा काफी या तम्बाकू खाते है या जो शोक-दुखमें डूबे रहते हैं, उन्हें ही बराबर यह बीमारी होती है।

चिकित्सा—डा० ह्यज कहते हैं कि "कैल्के-कार्ब" ६—३० इसकी सबसे अच्छी दवा है।

सल्फ्यूरिक-एसिड ३x, ३०—कलेजेमें जलन, खट्टी डकारें, खट्टा वमन, बदनसे खट्टी गन्ध, बदबू, काले रंगके दस्त, हिचकी (हैनिमैन अम्ल-रोगमें इसे व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं)।

रोबिनिया ३—(बहुत दिनोंतक सेवन करना पड़ता है) यह अम्ल रोगीकी एक बहुत अच्छी दवा है। दस्त, कै, डकार या पसीना खट्टा ; कै सब्ज आभा लिये ; डकारका स्वाद कड़वा, कसैला, पेटमें जलन, खासकर रातमें बार-बार पाखाना लगना, परन्तु लगनेपर भी कब्जियत ; पेट फूलना ; सामने कपालमें दर्द।

नेट्रम-फास ३x, १२x चूर्ण—खटो डकारें, खटी कै, पाकाशयका दर्द और ऊपरकी ओरसे वायु निकलना ; (डकार आनेपर आराम मालूम होना लक्षणमें) आर्ज़-नाई ६, पुराने अम्ल-रोगमें (खासकर डकार और राक्षसी भूख रहनेपर) फास्फोरस ३०। खट्टी डकार या मुँहमें पानी भर आना लक्षणमें (खासकर बूढ़ोंके अम्ल-रोगमें) कलि-कार्ब ६। पेट फूलनेपर—कार्बा-वेज ६। भोजनके बाद ही (खासकर तेल, चर्बी या चीनी खानेके बाद) खाया हुआ पदार्थ खट्टा हो जाये, तो कैल्के कार्ब ६। पेटमें वायु-संचय, कब्जियत, पेशाबमें लाल तलछट वगैरह लक्षणोंमें लाइको ३०। पेटमें कुछ न मालूम होनेपर मैंगेनम ६ या मैग्नेशिया-फास ६। पुराने रोगमें, खासकर सवेरेके समय पतले दस्त या कब्जियत, सरमें जलन वगैरह लक्षणोंमें सल्फर ३०।

आनुसंगिक चिकित्सा—नयी बीमारीकी प्रबल अवस्थामें कुछ भी खाना उचित नहीं है। मीठा, खट्टा, तेलका या श्वेत-सारयुक्त पदार्थ, हमेशा त्याग देना चाहिये। भोजनके दो घण्टे बाद नींबूका रस खाना अच्छा है। चूनेका पानी या सोडा बाई-कार्बनेट रोज ज्यादा

मात्रामें (५—१० ग्रेन) खानेसे रोग अक्सर दुरारोग्य हो जाता है। 'अजीर्ण-रोग' और 'अम्ल-शूल' देखिये।

वमन और मिचली
(Vomiting, Nausea)

कई कारणोंसे कै हो सकती है। अग्निमान्द्य, ज्यादा भोजन, शारीरिक दुर्बलता, स्नायुमण्डलके रोग, यकृत और जरायुके रोग, क्रिमि-दोष, गर्भावस्था, ज्यादा पानी पीना या नाव, गाड़ी आदिमें घूमनेसे कै हो जाया करती है। मस्तिष्क रोग (जैसे—मृगी) में कै या मिचली होना अच्छा लक्षण नहीं है। हिस्टीरिया या गर्भावस्थामें कै होना आशंकाजनक है।

चिकित्सा—इपिकाक ३—आमाशयिक वमन, बराबर मिचली, पानीकी तरह लार बहना, पाकस्थलीमें खालीपन मालूम होना, हरा या काला अथवा श्लेष्मा-मिला वमन; खट्टी कै, खाया हुआ पदार्थ वमन।

रोबिनिया ३ ६—मिचली, ज्यादा खट्टी और पतली चीजें कै करना।

आर्सेनिक ३x, ३०—आमाशयमें घावके कारण मिचली या कै और उसके साथ-ही-साथ पाकस्थली और पेटमें गर्मी या जलन मालूम होना। अजीर्णके कारण छातीमें जलनके साथ (भोजनके बाद) कै पतले दस्त, रह-रहकर कै करनेकी इच्छा और इसी कारणसे कमजोरी, जीभ लाल।

ऐण्टिम-क्रूड ६—पाकस्थलीमें भार मालूम होना, मलिन सफेद मैल-भरी जीभ, अरुचि या मिचली।

ऐपोमार्फिया ३—वमनोद्वेगके अलावा एकाएक कै होते रहनेपर। शराबी और अफीमचियोंकी कैमें यह ज्यादा फायदा करता है।

आइरिस-वार्स ६—अम्ल या तीती कै या खायी हुई चीज कै
रना ; सरमें दर्द और डकार आनेके लक्षणके साथ अम्ल और पित्तकी
ै होना ।

क्रियोजोट ६—क्षय-कास ; यकृतके रोग या मूत्र-कोषकी बीमारीसे
दा हुए वमनमें ; गर्भावस्थामें कै ; केवल ओकाई आना, सवेरे
चलो, हिस्टीरियाके कारण कै ; बहुत देरतक कै जारी रहनेपर यह
भदायक है ।

सिकेलि ३ (पुराने वमन रोगमें ; खट्टा श्लेष्मा वमन होनेके साथ
बदबूदार डकार), फास्फोरस ३—६ (ठण्डी अवस्थामें भोजन पेटमें
हता है, परन्तु पेटमें गर्म होते ही कै हो जाती है)। जिंकम ६
मिचलीके बिना ही एकाएक कै होने लगना और शरीरका कमजोर
ोते जाना)।

माथेकी चोटके कारण कै होनेपर—आर्निका ६ ; गाड़ी, पालकी,
ाव, जहाजमें घूमनेके कारण कैमें—काक्युलस ६, पेट्रोलियम ६, कैलि-
ास १२x चूर्ण या नेट्रम-फास १२x चूर्ण । चमकीले लाल खूनकी
ै—इपिकाक ३x या मिलिफोलियम १x । काले रक्तकी कै—हैमा-
लिस १x । पित्तके वमनमें—आइरिस-बार्स ३, पोडोफाइलम ६,
ायोनिया ३ या मर्क-सोल ६ । शराबियोंकी कै, मिचली ; कै होनेके
ाद ही मिचली बन्द हो जाना—एण्टिम-टार्ट ६ । दूध पीनेके बाद
ी कै या बच्चोंके दुध कै करनेपर—इथ्यूजा ३—६ । ठण्डा पानी
ीनेके बाद वह पेटमें जाकर गर्म होते ही कै होना—फास्फोरस ३—६ ।

पथ्य—पुराने चावलका भात, धानके लावाका मांड़, सागु, बार्ली
ा आरारुट, मूंग, जव, नारियल, पका कैथा, किशमिश ।

साधारण नियम—कोई विषैली चीज पेटमें जाकर कै होने लगे,
ो तुरन्त यह विष, जिस तरह भी पाकस्थलीसे बाहर निकल जाये, वैसा
उपाय करना चाहिये । पाकस्थली या किसी दूसरे यंत्रकी उत्तेजनाके

कारण कै होनेपर गर्म पानी पीनेसे ख़ासा फायदा होता है। छोटे-छोटे बरफ के टुकड़े चूसनेको देनेसे फायदा होता है। सोडा-वाटरके साथ बराबर परिमाणमें दूध हरएक बार अच्छी तरह मिलाकर खानेसे कै होना बन्द हो जाता है। कभी-कभी पाकस्थलीको विश्राम देनेपर या थोड़ा भोजन करनेपर कै बन्द हो जाती है। अग्निमान्द्यके वमनमें, कच्चे नारियलका पानी फायदा करता है।

"अजीर्ण-रोग", "अम्ल-रोग", "रक्त-वमन", "यक्ष्मा" और "सूतिका ज्वर" वगैरह रोगोंकी दवाएँ देखिये।

सामुद्रिक रोग
(Sea-Sickness)

जिस समय समुद्रमें गड़बड़ी रहती है, उस समय समुद्रमें भ्रमण करनेपर किसी-किसीको जोरकी मिचली और वमन होता है। रोगी सर ऊँचा नहीं कर सकता। बैठने या उठनेपर कै होना आरम्भ हो जाता है और बिछावनपर लेटते ही वमन होना बन्द हो जाता है। इसे ही "सामुद्रिक रोग" कहते हैं। यह बीमारी सबको नहीं होती। स्नायुप्रधान मनुष्योंको ही यह बीमारी अधिक होती है और किसी-किसीको नावमें—ऊँची-नीची तरंगोंमें चलती हुई नावमें घूमने के समय या किसी तरहकी भी गाड़ीमें चढ़कर घूमनेके समय इसी तरहका वमन हुआ करता है। साधारणतः इस तरहके वमनके साथ सरमें चक्कर आना, मिचली और ओकाई, प्रबल शारीरिक अवसाद, पेट खाली मालूम होना, सर-दर्द आदि भी होते देखा जाता है। जिन मनुष्योंका हृत्पिण्ड कमजोर है, नाड़ी चंचल रहती है, सहजमें ही कलेजा धड़कने लगता है, उन मनुष्योंको ही यह बीमारी होनेकी सम्भावना अधिक रहती है। इस बीमारीसे रोगीको तकलीफ तो होती है, पर प्रायः यह प्राणघातक नहीं होती।

इस बीमारीके रोगीको भ्रमण करनेके समय शय्यापर सुलाकर रखना चाहिये और सहजमें पचनेवाले, पर तरल पथ्य देनेका प्रबन्ध करना चाहिये। बहुत खानेपर बीमारी बढ़ जाती है। इसके बाद धीरे-धीरे रोग घटनेपर परिमित और बँधा हुआ नित्यका भोजन दिया जा सकता है।

चिकित्सा—काक्युलस ६, ३०—शय्यासे सर उठाते ही मिचली और वमन। सरमें चक्कर आना, पेटमें ऐंठन मालूम होना लक्षणमें।

ऐण्टिम-टार्ट ६, ३०—एकाएक पेटमें दबाव मालूम होना, वमन, सुस्ती और मिचलीके लक्षणमें।

एपोमार्फस ६—कानमें धड़फर आवाज, एकाएक बहुत अधिक वमन, मिचली, सरमें चक्करकी वजहसे वमन।

नक्स-वोम ६—पित्तकी प्रधानता, खट्टी कै, पाकाशयमें दबाव मालूम होना और कानमें गुनगुन आवाजके लक्षणमें।

स्टैफिसेग्रिया ६—सरमें चक्कर, तम्बाकू और बलकारक पदार्थोंसे अनिच्छा, ऐसा मालूम होना कि पाकाशय झूल पड़ा है और किसी चीजको यदि पकड़ न लेगा, तो गीर जायगा।

थेरिडियम ३, ६—पानी पीनेपर, भ्रमणके समय पानीकी ओर देखनेपर, आँख बन्द कर लेनेपर और वमन होनेके लक्षणमें इससे लाभ होता है।

सेनिक्युला ३, ६—पानी पीने या भ्रमण करनेके समय और ठण्डा पानी पीनेपर घटना और गर्म घरमें बढ़ना—इसीलिये जहाजके डेकपर रहनेकी इच्छा, ऊपरकी ओर देखनेपर मिचलीका बढ़ना, ठण्डी चीज खानेकी इच्छा लक्षणमें।

इनके अलावा, सल्फर, सिलिका, पेट्रोलियम, हायोसायमस, आर्सेनिक, बोविस्टा, इग्ने, सेलिनियम, सिपिया इत्यादि दवाएँ भी लक्षणके अनुसार लाभ करती हैं।

सामुद्रिक रोगमे गर्म फ्लानेलका एक टुकड़ा पेटपर लपेट रखनेपर (जिसमे उदरके यन्त्रोमे झटका न लगे) बहुत आराम मिलता है और रोग घट जाती है।

पाकाशयका आक्षेप या दर्द

(Gastrodynia or Pain in the Stomach)

भोजनके बाद, पाकस्थलीमे नखसे खराब डालनेकी तरह या कसकर पकड़नेकी तरह या खरोचनेकी तरह दर्द होता है, खानेकी चीज पेटमे जाते ही दर्दका बढ़ना, खट्टा या तीता स्वाद-मिली डकारे, वमन होकर खायी हुई चीज निकल जानेपर दर्द कम होना वगैरह उपसर्ग इस रोगमे दिखाई देते हैं। अजीर्ण रोगमे बराबर ये उपसर्ग दिखाई देते है।

चिकित्सा—नक्स-वोमिका ३x—३० (बहुत आक्षेप-भरा दर्द); आर्निका ३ (अकड़न), बिस्मथ ३x (पेटमे दबावके साथ सरमे दर्द), आर्स ६x—३० (खाने-पीनेके बाद ही दर्द और कै); ब्रायोनिया ३ (वात रोगीके पेटमे दर्द), फेरम ६ (रक्तहीनता), चैलिडो २x या रोबिनिया ३ (खाने-पीनेके वाद दर्दका बन्द हो जाना), आर्ज-नाई ६ (भोजनके बाद ही दर्दका बन्द होना और उसके साथ पाकाशयका घाव रहनेपर), परन्तु भोजनके बाद ही दर्द घट जाये, तो ऐनाकार्डियम ३० और कैलि-बाइक्रोम ३० प्रयोग करना चाहिये।

बार्बेरिस θ—३, डायस्कोरिया θ, कार्बो-वेज ६ और ग्रैफाइटिस ६—२०० की कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

बहुत गर्म पानीमें फ्लानेल निचोड़कर उसके द्वारा पेट सेंक देनेसे लाभ होता है।

पित्तसे पैदा हुआ सर-दर्द
(Bilious Headache)

अजीर्ण रोगके कारण सरमें दर्द होनेका नाम "पित्तसे पैदा हुआ सर-दर्द" है। जीभ मैली, साँसमें दुर्गन्ध, पाकाशयमें दर्द, मिचली, पेटमें गड़बड़ी वगैरह इस रोगके "प्रधान लक्षण" हैं।

चिकित्सा—ब्रायोनिया ३ (पित्त-वमनके साथ सर-दर्द) ; नक्स-मस्केटा २x (सर-दर्द और मुँहका स्वाद नमकीन)।

कैमोमिला ; नक्स-वोम, इपिका, पल्सेटिला, मर्क, एण्टिम-क्रूड वगैरह दवाएँ बीच-बीचमें आवश्यक होती हैं।

खाद्य-विषाक्तता
(Food Poisoning)

खाद्य-विषाक्तता (अर्थात् भोजनके पदार्थोंका विष फैल जाना) बहुत तरहका हो सकता है। विषैले उद्भिद, जानवरोंका दूध इत्यादि खानेकी वजहसे या ताँबेके और एेल्युमीनियमके बर्त्तन आदिमें रसोई बनाना और इन धातुओंमें सिझाये पदार्थ आदि खाना वगैरह बहुतसे कारणोंसे यह विष फैल सकता है। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि भोजन करनेके साथ-ही-साथ मृत्यु हो जाती है और किसी-किसी स्थानपर वमन, पतले दस्त इत्यादि होकर मृत्यु हो सकती है और किसी-किसी जगह यह विष धीरे-धीरे पैदा होकर ज़ीवनका अन्त हो जाता है।

भोजनके साथ साधारणतः छिपे भावसे क्षय-रोग, टाइफायड, क्रिमि वगैरहके जीवाणु शरीरमें प्रवेशकर रोगको फैला सकते हैं। कितने ही समय बड़ी-बड़ी बैरकें, होस्टल या छात्र-निवास और उत्सव आदिमें भोजनके पदार्थोंमें इस विषके फैलजानेके कारण, जो खाता, वही रोगी

हो जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि रसोई बनानेके समय, रसोइयाकी असावधानीसे या उसे दिखाई न देनेके कारण कोई विषैली चीज या प्राणी खाद्य-सामग्रीके साथ मिलकर भोजनको विषैला बना देते हैं। ऐसी जगह प्राय बहुतसे आदमी मर जाया करते हैं। एक बात यह भी है कि सभीपर एक तरहका विष एक समान ही प्रभाव नहीं जमाता, इसके सिवा यदि वह विष एकदम मारात्मक मात्रामें न हुआ, तो कोई प्रभाव नहीं होता। साथ ही ऐसा भी होता है कि एक मनुष्यके लिये जो साधातिक है, दूसरा उसे सहजमें ही पचा जाता है। उसपर उस विषकी कोई भी क्रिया नहीं होती। ताँबेके बर्तनमें रसोई बनाने या खट्टी चीज रखनेपर या गर्म तर पदार्थ ताँबे या पितलके बर्तनमें रखनेपर, तांबेका विष या गुण उस पदार्थमें मिल जाता है, इससे वमन, पतले दस्त, अकड़न इत्यादि ताँबेके विषके लक्षण प्रकट हो जाते हैं। इस समय एल्युमानियमके बर्तन बाजारमें सस्ते दामाम बिक रहे हैं, किन्तु इससे भी कभी-कभी विष-क्रिया उत्पन्न होता है। लोग नहीं जानते कि इसमें कौन-सा विष है। जिससे इसका परिणाम यह होता है कि अजीर्ण, अम्ल, पित्तशूल, पाकाशयका जखम, स्नायविकता इत्यादि बीमारियाँ हो जाया करती है।

यदि खाद्य-विषाक्तताके लक्षण आदि प्रकट हो, तो तुरन्त पासके किसी अच्छे चिकित्सकको बुलाना चाहिये। चिकित्सकके आनेके पहले ही रोगीको शय्यामें सुला देना चाहिये और जलीय पदार्थ (थोड़े परिमाणमें) खिलाना तथा सोडा-वाटर आदि पिलाना चाहिये। रोगी यदि निर्जिव हो पड़े, तो शरीरपर गर्म सेंकका प्रयोग तथा त्वचा और गुह्यद्वारकी राहसे नमक मिले पानीकी पिचकारी या डूश और उत्तेजक दवाएँ आदिका सेवन कराया जा सकता है। यदि यह मालूम हो कि पाकाशयमें विषैला पदार्थ है, तो तुरन्त वमन लानेवाली दवाका प्रयोग करना चाहिये।

जिस विषसे विषाक्त हुआ हो, उसकी प्रतिषेधक दवाका भी प्रयोग करना चाहिये। पाइरोजेन, कार्बो-वेज, कार्बो-ऐनिमेलिस, नक्स-वोमिका, ऐल्यूमिना प्रभृति होमियोपैथिक दवाएँ लक्षणके अनुसार प्रयोग करनेपर विशेष लाभ दिखाई देता है।

अंत्र-प्रदाह (Enteritis)

पाकस्थलीके नीचे "अंत्र" (आँतें या नाड़ी) है (दूसरा चित्र देखिये)। आँतोंके दो अंश हैं :—(क) छोटी आँत—Small intestine (प्रायः चौदह हाथ लम्बी); (ख) बड़ी आँत—Large intestine (प्रायः चार हाथ लम्बी)। छोटी आँतकी अपेक्षा बड़ी आँत ज्यादा मोटी और छोटी आँतको प्रायः घेरे हुई है (ज्यादा हालके लिये, हमारा प्रकाशित "नरदेह परिचय" और इस पुस्तकका आरम्भिक अंश "मानव-शरीरकी रचना" देखिये); बड़ो और छोटी दोनों ही आँतोंमें प्रदाह हो सकता है।

(क) बृहदन्त्र-प्रदाह
(Mucous Colitis)

बड़ी आँत वहुत समयतक प्रदाहित रह जाये, तो उससे आम या श्लेष्मा निकलता है। यह रोग सहजमें ही अच्छा नहीं होना चाहता। हाइड्रैस्टिक १x (पाकाशयमें दर्द या टटाना ; पेटमें खालीपन मालूम होना, तीता स्वाद), मर्क, आर्सेनिक, कोलचिकम वगैरह इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

बड़ी आँत प्रदाहित हो जाये, तो उसे "रक्तामाशय" कहते हैं ("रक्तामाशय" देखिये)।

(ख) क्षुद्रांत्र-प्रदाह
(Inflammation of the small Intestine)

छोटी आँत प्रदाहित होनेपर—पहले कम्पके साथ बुखार ; पेटमें (खासकर नाभीके चारो ओर) लगातार तेज दर्द होता है और दबाव पड़नेसे यह दर्द बढ़ता है , धीरे-धीरे दर्द इतना बढ़ जाता है कि रोगी हिल नही सकता और दर्दके कारण रोगी चित होकर पड़ा रहता है और व्याकुल होकर घुटने समेटकर पेटके ऊपर रख लेता है । अरुचि, कब्जियत, मिचली, पेट फूलना, पेटमें शब्द होना, गड़गड़ाहट, कभी-कभी पतले दस्त आना वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं ।

यह रोग छोटे बच्चोको ही ज्यादा होता है । इसमे तेज बुखार प्रभृति मारात्मक उपसर्गके साथ अतिसार होकर मृत्यु हो जाती है । गर्मीके दिनोमे यह ज्यादा होता है ।

चिकित्सा—बुखार और प्रदाह घटानेके लिये "एकोनाइट" ३x । बुखार प्रदाह, शीत, चेहरा लाल, सरमें दर्द और पतले दस्तके लक्षणमे "बेलेडोना" ३ । नाभीके चारो ओर जलन-जैसा तेज दर्द, बहुत कमजोरी और सुस्ती, खाने-पीनेके बाद ही कै, दस्त पानी जैसा या खून-भरा, लगातार तेज प्यास, तुरन्त थोड़ा पानी पीनेसे ही थोड़ी देरके लिये तृप्ति मालूम होना लक्षणमे "आर्सेनिक" ३x—६ । बहुत खाँसनेपर खून-मिले श्लेश्माका दस्त होनेपर "मर्क-कोर" ६ । छोटी आँतिमे दर्दके साथ बुखार, पाखानेका वेग, बहुत पेट फूलना, नाभीके चारो ओर सिकुड़नेकी तरह दर्द, सारे पेटमे दर्द और मिचलीके लक्षणमें "कोलो-सिन्थ" ६ । छोटी आँतमे सामान्य प्रदाहके साथ (या विभिन्न प्रकृति और अनेक रंगोके दस्तके साथ) अतिसार, सवेरे रोग बढ़ना, सम्पूर्ण शरीरका रंग पीला, पेट फूलना प्रभृति लक्षणोमे "पोडोफाइलम" ६ । बार-बार पाखाना लगना, पाखाना होनेके बाद दर्दका घटना, पेटमे

वायु-संचय, हर बारका दस्त दूसरी तरहका ; गर्मीके दिनोंके पतले दस्त वगैरह लक्षणोंमें "पल्सेटिला" ३। पतले दस्तोंके साथ कै या मिचलीके लक्षणमें "इपिकाक" ३x—६ (पल्सेटिलाके पहले बाद सेवन करना चाहिये)। बार-बार वेगसे दस्त, पेटमें दर्द, सर्दी मालूम होना, कपालमें पसीनेके लक्षणमें "विरेट्रम-ऐल्ब" ६। पतला श्लेष्मा-भरा दस्त और बहुत शीतमें "कैल्के-कार्ब" ६ (खासकर बच्चोंकी बीमारीमें)। बहुत तेज दर्दमें "पाइरोजेन" ३० का परीक्षा करनी चाहिये। "मैग्ने-शिया-फास" २x चूर्ण (गर्म पानीके साथ) देनेपर दर्द कम हो सकता है। "अतिसार" और "पाकाशयके दर्द" अध्यायकी दवाएँ देखिये।

"गलित या विषाक्त पदार्थ" खाने-पीनेकी वजहसे पैदा हुए उपसर्गोंके साथ इस रोगका भ्रम पैदा हो सकता है। भेद जाननेके लिये, हमारी "हैजा-चिकित्सा" पुस्तक देखिये।

साधारण नियम—गर्म पानीका सेंक। रोगकी प्रबल अवस्थामें साबूदाना, बार्ली और आरारूट वगैरह हल्की चीजें देनी चाहिये।

अंत्रावरक-झिल्ली-प्रदाह

(Peritonitis)

निचले पेट और आँतके भीतरी भाग झिल्लीके द्वारा ढँके हुए हैं, उस झिल्लीको "अंत्रावरक-झिल्ली" (peritoneum) कहते ह। इस झिल्लीके प्रदाहको "अंत्रावरक-झिल्लीका प्रदाह" कहते हैं। बच्चेकी नामी प्रदाहित हो जाती है, तो "अंत्रावरक-झिल्लीका प्रदाह" भी हो जाया करता है। इसके अलावा, सर्दी लगना, नश्तर लगाना (surgical operation), चोट लगना, खूनकी विषैली क्रिया (pyæmia, septicæmia etc.), पाकाशयकी आँतोंका छिद्र

नक्स-वोमिका ६, ३०—पेट फूलनेके साथ तेज आक्षेप और इसी वजहसे शूल, साथ ही मूत्राशयमे कतरनेकी तरह दर्द और कब्जियत रहनेपर।

कैमोमिला θ, १२—नाभीके चारो ओर मरोड़ और सोचा मारनेकी तरह दर्द, कब्जियत या पतले दस्त आना, पेट फूलना ; रातमे और गर्मीमें दर्दका बढ़ना।

आर्सेनिक-वार्स ३—बहुत पेट फूलना ; पेटके ऊपरी भागमें जलन और पित्तकी कै, मरोड़की तरह दर्द। ऊपर कही हुई तीनो दवाओसे अगर फायदा न हो, तो इसके प्रयोगसे अक्सर फायदा होता है।

मैग्नेशिया-फास २x चूर्ण—गरम पानीके साथ सेवन (यदि कैमोमिलाके प्रयोगसे फायदा न हो)।

डायस्कोरिया १x—पहले नाभीके बीचमे दर्द शुरू होकर धीरे-धीरे समूचे पेटमे (पीछे सब बदनमे, यहाँतक कि अंगुलीतकमे फैल जाता है), इस दर्दके साथ पेट फूल जाना, जीभ मैल-चढ़ी, सोते रहनेपर दर्दका बढ़ना, सीधे खड़े रहनेपर और "पीछेकी ओर टेढ़े होनेपर" दर्दका घटना ; खाई हुई चीज वमन करनेके साथ एकाएक शूलका दर्द और गर्भावस्थामे पित्तसे पैदा हुए शूलमे यह लाभ करता है।

विरेट्रम-ऐल्बम ६—रातमे और भोजनके बाद पेट फूलकर दर्द, पेट गड़गड़ाना और आवाज होना ; समूचे तलपेटमें दर्द ; मुँहमे पानी भर आना ; मुँह और हाथ-पैर ठण्डे ऐंठन।

ओपियम ६, ऐकोनाइट θ, प्लम्बम ६ (बहुत कब्जियतमे), बार्बेरिस-वल्गेरिस θ—६ कभी-कभी व्यवहार किया जाता है।

स्त्रियोकी गर्भावस्थामें पेट फूलनेके साथ शूल-वेदनामे काक्युलस ६; भारी चीजें खानेके बाद शूल-वेदनामे पल्सैटिला ६ या कोलोसिन्थ ६, इसके साथ कब्जियत और पेट फूलनेका लक्षण रहनेपर—पल्सैटिला ६

या लाइकोपोडियम ३० ; हिस्टीरियासे पैदा हुई शूल-वेदनामें इग्नेशिया ६ ; क्रिमिसे पैदा हुए शूलमें "क्रिमि" देखिये।

पथ्यापथ्य—हल्का पथ्य (जैसे—सागू, बार्ली, गर्म दूध) रोग दबनेपर, पुराने चावलका भात, छोटी मछलीका शोरबा, परबल, मोचा ओल और कच्चू। पेट गर्म कपड़ेसे ढँक रखना और दोनों पैरोंमें सर्दी न लगे, इस बातपर नजर रखनी चाहिये। जरूरत पड़नेपर, गर्म पानीकी पिचकारी देनेसे पाखाना हो जाता है।

सीसक-शूल (Lead-Colic)

किसी तरह सीसा शरीरमें घुसनेपर दातोंमें बहुत दर्द होता है, इसीका नाम "सीसक-शूल" है। जो सीसेका काम करते हैं या बहुत दिनोंतक सीसेके बर्त्तनमें खाते-पीते हैं या छापेखानेमें जो कम्पोजिंग करते हैं (अक्षर जोड़ते हैं), उनके दाँतोंकी जड़ स्लेटके रंगकी हो जाती है, कब्जियत, कै और पेटमें तेज दर्द वगैरह लक्षण प्रकट होते है। टीन (या रांगा) से बने बर्त्तनमें सूँघनी या शराब रखकर उसे व्यवहार करना, सीस-पेन्सिल, सीसेकी कंघी या कलके पानीके सीसेका नल वगैरह व्यवहार करनेसे भी कुछ-न-कुछ सीसक-शूल हुआ करता हैं।

चिकित्सा—ओपियम २x, पन्द्रह-पन्द्रह मिनटके अन्तरपर देनेसे दर्द बन्द होता है। इससे फायदा न हो, तो ऐल्यूमेन ३—३० या ऐल्यूमिना ६—३० घण्टे-घण्टेपर देना चाहिये। यदि इससे भी फायदा न हो, तो प्लैटिना ६। बेलेडोना १x, पोडोफाइलम ३ और एसिड-सल्फ २x, प्लम्बम ३० बीच-बीचमें दिया जा सकता है। ज्यादा दूध पीना और गर्म पानीकी पिचकारी लेना फायदेमन्द है।

प्रतिषेधक—कलकत्ता या दुसरे बड़े शहरोंमें जहाँ रोज कलका पानी व्यवहार होता है, उनके परिवारमें किसीको रक्त-स्वल्पता, स्नायु-

शूल, हाथमे कमजोरी या मसूढ़ेमे नीली रेखा वगैरह लक्षण दिखाई देनेपर समझना होगा कि सीसेके अपव्यवहारसे (अर्थात् पानीकी कलके सीसेके दोषसे) यह रोग हुआ है। ऐसे मौकेपर घरके अन्य सगे आदमियोको उसे दूर करनेका पूरा-पूरा उपाय करना चाहिये।

पित्त-पथरी

(Gall-Stone or Biliary Calculus)

पित्त-कोष (gall bladder) या पित्तवाहीनली (biliary ducts) मे अगर पित्त-रस (bile) खाने-पीनेके दोषसे पैदा होकर, पत्थरके कण (gravel or stone) के रूपमे हो जाये, तो उसे "पित्त-पथरी कहते हैं। बालूका कण (gravel) कबूतरके अण्डे या मटरके बराबर छोटा बडा, मझोला, गोल, सादा, काला, खाकी या हरा, एक या बहुत पथरी-रोगके रोगी पैदा हो जाता है। सैकडे दस आदमियोको ही यह बीमारी होती है, उनमे भी औरतोकी सख्या ही अधिक है। इस रोगका प्रधान लक्षण है—पेटमें थोड़ा-बहुत दर्द। इसके अलावा, जिन्दगीभर पित्त-कोषमे पथरी रहनेपर भी किसी-किसीको बिलकुल ही तकलीफ नही होती।

पथरी जबतक पित्त-कोषमे रुकी रहती है, तबतक तो रोगीको किसी तरहकी तकलीफ नहीं मालूम होती, कभी-कभी पेटमें दर्द मालूम होता है, परन्तु जब यह पथरी पित्तकोषसे निकलकर पित्तवाही-नलीमें जा पहुँचती है, तब धीरे-धीरे या जोरसे पेटमे एक तरहका दु'सह दर्द पैदा होकर रोगीको एकदम व्याकुल कर देता है। इस भयानक दर्दका नाम "पित्त-शूल" (biliary colic) है। यह शूलका दर्द दाहिनी कोखसे शुरू होकर चारो ओर (खासकर दाहिने कन्धे और पीठतक) फैल जाता है और दर्दके साथ अक्सर कै, ठण्डा पसीना, नाड़ी कमजोर,

हिमांग (collapse), कामला, साँसमें कष्ट, मूर्च्छा वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। यह दर्द कई घण्टेसे लेकर कई सप्ताहतक ठहर सकता है और फिर एकाएक बन्द हो जाता है (अर्थात् पथरी आँतके अन्दर duodenum मे आ जानेपर सब तकलीफ दूर हो जाती है), उस समय मलको धोनेपर पत्थरके कण हाथमें लगनेसे ही समझना होगा कि पथरी निकल गयी है।

पित्त-पथरी शूल और मूत्र-पथरी शूलका भेद

पित्त-पथरीके शूलमें कै नहीं होती ; परन्तु मूत्र-शूलमें पेशाबकी नलीसे लेकर अण्डकोषतक यह दर्द फैल जाता है और इसके साथ ही बराबर पेशाब करनेकी इच्छा, पेशाबके साथ खून और पथरी मौजूद रहती है, कामला नहीं रहता। पित्त-पथरी रोगमें शूल का दर्द पैदा होते ही आक्रान्त अंगमें खूब गर्म सेंक देनेपर और गर्म जायतूनका तेल (olive oil) सेवन करनेपर दर्द बन्द हो जाता है।

चिकित्सा—(१) शूलका दर्द जल्दी दूर हो ; (२) मलके साथ पथरी शरीरके बाहर निकल जाये और फिर पित्त-कोषमें पथरी न जमने पाये—इन दोनों बातोंपर ध्यान रखकर दवा और पथ्यका प्रबन्ध करना चाहिये।

शूल-वेदनाके समय—पित्त-पथरीके इलाजमें सिद्धहस्त डाक्टर सेण्डस मिल्स और इंगलैण्डके विख्यात डाक्टर ह्यूज पित्त-पथरीकी तकलीफ दूर करनेके लिये "कैल्के-कार्ब" देकर कभी विफल मनोरथ नहीं हुए। कैल्के-कार्ब ३०—२०० पित्तसे पैदा हुए शूलको बन्द करनेकी बहुत ही बढ़िया दवा है ; पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर यह दवा देनी चाहिये। तीन घण्टे सेवनके बाद भी इससे यदि दर्द बन्द न हो, तो "बार्बेरिस" θ की खुराक बीस मिनटके अन्तरसे देना चाहिये। कार्डुयस मेरियेनस θ (५—१० बून्द रोज तीन घण्टेका अन्तर देकर

सेवन करना चाहिये) यकृतमें, खासकर उसके बायें उद्गत अंश (left lobe) में दर्द रहनेपर। आर्निका ३x—६ नयी हालतमें उपसर्ग कुछ घट जायें और धीमा दर्द मौजूद हो, तो। चायना θ बीमारीके जोरके समय शूल-वेदना पैदा होने और बन्द होनेतक। बियोनैन्थस θ, हाइड्रैस्टिस θ (फी मात्रा एक बून्दसे दस बून्दतक) डायस्कोरिया θ, चेलिडोनियम २x, जेलसिमियम १x, बेलेडोना ३x और आर्सेनिक ३x—३०, डिजिटेलिस ३०, लोरोसिरेसस ३ वगैरह दवायें, दर्द बन्द करनेके लिये प्रयोग की जाती हैं। मैग्नेशिया-फास ३x (गर्म पानीमें) खाना और लगाना—इस ढंगका प्रयोगकर सैण्डस मिल्स वगैरह डाक्टरोंने इन्द्रजालकी तरह फल पाया है और इसकी बड़ी प्रशंसा की है।

अमेरिकाके डाक्टर स्वानने "कोलेस्टेरिनम" २ का, पित-पथरी-जनित वेदनामें प्रयोगकर, जो अद्भुत फल पाया है, उसे देखकर वे मुग्ध हो गये हैं (vide Allen's Nosodes, edition 1910) २x क्रमकी सुविधा न हो, तो नीची शक्तिका भी व्यवहार किया जा सकता है। इङ्गलैण्डके डाक्टर बार्नेट पित-पथरी रोगकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओंमें ३x—३ विचूर्ण सेवन करा, बहुतसे रोगियोंको आराम कर चुके हैं।

ऐकोन, मर्क, चायना (मैलेरिया बुखारके साथ), नक्स-वोन, फास्फो वगैरह दवायें मौकेपर काम देती हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—हल्की, जल्द पचनेवाली चीजें खिलाना; पावरोटी आगमें सेंककर, खूब गर्म पानीमें डुबोकर चीनीके साथ खाना चाहिये। भुना हुआ सेब (roasted), इच्छापूर्ण ठण्डा पानी, रोज खुली हवामें घूमना (खासकर घोड़ेपर) वगैरह फायदा करता है। दर्दसे बहुत कातर हो जानेपर, रोगीको खूब गर्म पानी पिलाना, गर्म पानीके टबमें बैठाना और सरल आँतमें यन्त्रके द्वारा बून्द-बून्दकर गर्म जलकी धारा देकर बराबर भिगोते रहना (rectal

irrigation) और दाहिनी कोखमें गर्म पुल्टिस लगाना वगैरह उपायोंसे दर्द बहुत कुछ कम हो जाता है।

ऐसे उपायोंसे दर्द एकदम अच्छी तरह आराम हो जानेपर और पथरी पूरी तरह निकल जानेके बाद, जिससे फिर पित्त-कोषमें पथरी न पैदा हो, उसका उपाय करना चाहिये। नीचे लिखी व्यवस्थाके अनुसार चलनेपर फिर पथरी नहीं होती।

दुबारा आक्रमण बन्द करनेके लिये—**चायना** θ बहुत अच्छी दवा है। पित्त-पथरीके इलाजमें सिद्धहस्त डक्टर थेयरने नीचे लिखी व्यवस्थासे बीस वर्षसे भी अधिक दिनोंमें जितने रोगियोंका इलाज किया है, सभी अच्छे हो गये हैं। चायना ६x की मात्रामें छः गोलियाँ रोज दो बार कर देनी होगी, जबतक दस मात्रा दवा पेटमें न चली जाये। इसके बाद एक दिन नागा देकर एक मात्रा (छः बटिकाएँ) कर दवा देनी चाहिये, जबतक दस मात्रा न खतम हो। इसके बाद क्रमसे तीन दिनका नागा देकर और चार दिनों तथा पाँच दिनोंका अन्तर देकर दवा देनी होगी। यह तबतक, जबतक इसी तरह एक महीनेका अन्तर देकर एक मात्रा (अर्थात् छः बटिकाएँ) न हो जाये। बहुतसे मशहूर डाक्टरोंने देखा है कि ऊपर लिखे उपायसे चलनेपर, पहले रोगीको पथरी जल्दी निकल जाती है और इसके बाद पित्त-कोषमें पथरी पैदा नहीं होती (अर्थात् रोग जड़से आराम हो जाता है)। डा० ऐम्बर्स "चेलिडोनियम" और डा० बौर्जोस्की "कार्डुयस मेरियानस" का प्रयोग करना बताते हैं। इससे भी रोगीको दुबारा पथरी नहीं होती।

पथ्यादि—समयपर खाना-पीना, पाखाना, पेशाब और नहाना-धोना, बँधा हुआ भोजन, उपयुक्त शारीरिक परिश्रम, वायु-सेवन और क्षार-पानी (alkaline water) बहुत ज्यादा पानी वगैरह स्वास्थ्यके नियम पालन और यथाविधि होमियोपैथिक दवाएँ सेवन करनेपर रोग

जल्दी जडसे आराम हो जाता है। जिन खानेकी चीजोमे ज्यादा शक्कर (sugar), चर्बी (fat) या श्वेतसार (starch) और चूना (lime) हो, उन चीजोको जितना ही न खाया जाये, उतना ही अच्छा है और मास, तेलकी चीजें, मछली और सोडा (bicarbonate of soda) रोगीको नुक्सान पहुँचानेवाले है। गर्म भरनेका पानी व्यवहार करनेसे ज्यादा फायदा होता है।

यह तो बताना ही बृथा है कि बहुत दिनोतक शूल-वेदनासे तकलीफ पानेपर यदि रोगीके पित्त-कोषमे पीव हो जाये, फोड़ा (abscess), कर्कटिका (cancer) वगैरह भयानक लक्षण दिखाई दे, तो अच्छे डक्टरोसे तुरन्त नश्तर लगवा देना चाहिये। "मूत्र-पथरी" देखिये।

कब्ज (Constipation)

कब्जियत बहुत कारणोसे हो सकती है। यह बहुतसे रोगोका लक्षण भी समझी जाती है। किसी तरहका शारीरिक परिश्रम न कर घरमे बैठ रहना, रातमे जागरण, तेज काफी या चाय और दूसरी नशीली चीजें खाना, शोक, दुःख या भय होना, गिर जाना, यकृतका रोग, बुढ़ापा, नुक्सान पहुँचानेवाली चीजे खाना वगैरह बहुतसे 'कारणा' से कब्जियत होती है। कब्जियत होनेपर जमा हुआ मल आँतोमे रुड़ा करता है और सड़े हुए मलका सूक्ष्म अंश खून और मांसमे मिलकर रक्त-मासको पुष्ट किया करता है। इस तरह शरीरको बहुत कुछ नुकसान पहुँचता है। भोजनके सार भागसे जिस तरह रक्त-मास बनता है, सडे मलसे भी उसी तरह रक्त-मास पुष्ट होता है, परन्तु वास्तवमे वह रक्त-मांस बहुतसे रोगोका कारण बन जाता है। कब्जियत होनेपर अक्सर सरमे दर्द, बुखारका भाव, अरुचि, अस्वच्छन्दता वगैरह लक्षण

दिखाई देते हैं। बहुत दिनोंतक कब्जियत रहनेपर, फिर बवासीर, गृध्रसी वात वगैरह बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं।

चिकित्सा—डा० सैण्डस मिल्सके मतसे ब्रायोनिया, ग्रैफाइटिस, ओपियम, प्लम्बम और नक्स-वोमिका इसकी उत्तम दवाएँ हैं। हमलोग भी उनके इस मतका अनुमोदन करते हैं।

ग्रैफाइटिस ६—(दिनमें दो बार कई महीनोंतक सेवन करना चाहिये)—मल बड़ा और निकलनेमें कष्ट। "प्लम्बम" ६—कब्जियतके साथ शूल-वेदना। "नेट्रम-म्यूर" १२x चूर्ण २०० इसकी एक उत्तम दवा है। "लगातार पाखाना लगना, पर कोठा साफ न होना।" बड़ा लेंड़ बड़ी तकलीफसे निकलता है, थोड़ा-सा पतला पाखाना होता है, सर भारी, तलपेटमें दबाव और अरुचिके लक्षणमें। "नक्स-वोमिका" ३० (जिन्हें ज्यादा पढ़ना पड़ता है, जो खिन्न रहते हैं, जिन्हें घरमें आलसी की तरह बैठे-बैठे दिन बिताना पड़ता है, जो थोड़ी-सी बातमें ही चिढ़ जाते हैं और जिन्हें कब्जियत और पेटमें गड़बड़ी रहती है, उनके लिये नक्स-वोमिका लाभदायक है)। सिहरावन मालूम होना, सर-दर्द, यकृतमें दर्द, "सूखा, बड़ा और कड़ा लेंड़; वातसे पैदा हुई कब्जियत; गर्भावस्थामें और गर्मीके दिनोंकी कब्जियतमें तथा बच्चोंकी कब्जमें "ब्रायोनिया" ६—३०। ("नक्स-वोमिका और ब्रायोनियाके लक्षणमें यह भेद है कि बराबर पाखानेकी हाजतके साथ कब्जमें नक्स-वोमिका और बिना पाखानेकी हाजतकी कब्जमें ब्रायोनिया फायदा करता है")। सर भारी, सरमें चक्कर, कुछ दिनोंतक लगातार कोठा साफ न होना, कड़ा लेंड़, सदा तन्द्रा आती रहना, चेहरा लाल, पेशाब थोड़ा, इन लक्षणोंमें "ओपियम" ३० (बूढ़े, शान्त प्रकृति तथा रक्त-प्रधान धातुवाले मनुष्योंके लिये ओपियम ३० ज्यादा लाभप्रद है)। कब्जियत या बड़ी तकलीफसे सूखा, कड़ा मल थोड़ा-सा निकलना, पेट फूल जाना, पेटमें आवाज होना, भोजनके बाद ही तलपेटका फूलना; पेटमें गर्मी मालूम

होना ; पाखाना लगना, पर न होना ; मुँहमें पानी भर जाना लक्षणमें "लाइकोपोडियम" ३० देना चाहिये। बहुत तेज कब्जियत, "गांठके रूपमें दस्त" ; बहुत दिनोंतक पाखाना न लगनेके लक्षणमें "ऐलूमेन" ३० लाभदायक है। पाखानेकी हाजत, परन्तु पाखाना निकालनेकी चेष्टा करते ही उसका बन्द हो जाना लक्षणमें "रेनाकार्डियम" ३—६ दें। लम्बा और खूब सँकरा लेंड़ निकलनेपर "फास्फोरस" ३—३०। प्रबल सूखी खाँसीके साथ कब्जियत रहनेपर "नाइट्रिक-एसिड" ३। कब्जियतके साथ जहाँ रोगमें "कालिन्सोनिया" ३। सीसक शूल या भ्रमणकी वजहसे कब्जियत होनेपर ; ढीला मल भी बड़ी कठिनतासे निकलनेके लक्षणमें "प्लैटिना" ६—३०। औरतोंकी बहुत दिनोंकी कब्जियतमें "टैवेकम" ३० (रोज एक बार) ; मलद्वारमें दर्द ; जरायु रोगवाली या गर्भवती औरतोंकी कब्जियतके लक्षणमें "सिपिया" ३०। ऋतुमती स्त्रियोंकी कब्जियतमें, मल थोड़ा निकलकर फिर सरलांत्र (rectum) में घुस जाता है, इस लक्षणमें "सिपिया" ३०। तलपेट और गुह्यद्वारमें भार और गर्मी मालूम होना, गुह्यद्वार कुट-कुट करना और ज्लन, मल त्यागनेके कुछ ही पहले और बाद मलद्वारमें अस्वच्छन्दता मालूम होना, पुरानी कब्जियतमें, बार-बार पाखानेकी हाजत, परन्तु उसका पूरा न होना, बवासीर रहना—"सल्फर" ३०—२००। बार-बार दस्तावर दवाएँ खानेसे पैदा हुई कब्जियतमें 'हाइड्रेस्टिस' ३ खासकर कमजोर दुबले मनुष्योंके लिये)। 'सिलिका-मेरिना' ३—३० (२x—३x विचूर्ण) बहुत दिनोंतक सेवनसे कब्जियत दूर हो जाती है। बारह बायोकेमिक दवाएँ भी लक्षणके अनुसार फायदा करती है।

पुरानी कब्ज—सल्फर ३०, ऐसिड-नाइट्रिक ३—६, नेट्रम-म्यूर ३०, पोडो, सिपिया, विरे-ऐल्ब, कार्बो-वेज, हाइड्रेस्टिस (साधारण कब्जियतमें) ; ऐलोज (बवासीरके साथ कब्जियतमें) ; ऐलूमिना

(सूखा, कड़ा मल, पाखाना लगता ही नहीं, कोमल मल भी बड़े कष्टसे निकलता है) ; लाइको (फूलनेके साथ कब्जियतमें) ; ब्रायोनिया (माथेमें टनकके साथ एकदम पाखाना न लगना) ; नक्स-वोमिका (पाखाना लगनेपर भी बिलकुल ही दस्त न होना) ; प्लम्बम (कब्जि-यतके साथ पेटमें शूलका दर्द) ; ओपियम (कब्जियतके साथ औंघाई) ।

आनुसंगिक चिकित्सा—कब्जियत होनेपर बार-बार जुलाब लेना अच्छा नहीं है ; क्योंकि उससे आदत पड़ जाती है और फिर बिना जुलाब लिये दस्त नहीं होता । होमियोपैथिक दवा खानेसे यदि दस्त न हो, तो १२ औंस गर्म पानीमें १ ड्राम ग्लिसरिन मिलाकर मलको आँतमें पिचकारी देनेसे गांठ-गांठ मल निकल जाता है । रोज खाटसे उठते ही ठण्डा पानी पीना और रोज ठण्डे पानीसे नहाना फायदेमन्द है । बंधे समयपर खाना, पाखाने जाना, दिनमें ज्यादा ठण्डा पानी पीना और पेटपर हाथ फेरना अच्छा है । अंगूर, सेव, किसमिश, मुनक्का, सन्तरा, पका केला, पपीता, बेल, आँतेका पीसा आँटा, शहद, दूध, मक्खन, पाती या कागजी नीबू, 'कच्चा गूलर' और सूरन फायदेमन्द है । बँधे समयपर खाना, सोना और कसरत करना फायदा करता है । हड़, इस्फगोल, हींग, डाबका पानी, सोडा वाटर वगैरह रोज काममें न लाकर, कभी-कभी पीनेसे फायदा करता है । ओलिव आयल (जैतूनका तेल) स्वास्थ्कर खाद्य और हल्का विरेचक है । इसके सेवनसे पित्त निकलनेमें मदद मिलती है और दस्तावर दवाओंके बराबर सेवनसे जो शरीरकी हानि पहुँचती है, इससे वह नहीं होती । जुलाब लेनेके बाद ही रोगीकी कब्जियत अधिक वढ़ जाती है । डाक्टर हेरिंगने कहा है कि कब्जियतवाले रोगी ज्यादा दिन जीते हैं (यदि वे दस्तावर दवा खाकर आत्महत्या न करें), सूखी गोली या दस्तावर दवामें तरी नहीं है इसलिये जवर्दस्ती पाखाना, लानेसे रोगीके शरीरसे रस निकल जाती है ।

बार-बार या बहुत दिनोंतक इसी तरह जुलाब लेनेपर कब्जियत बढ़कर रोगीके शरीरमें अच्छी तरह घर बना लेती है। "अजीर्ण रोग" देखिये।

ऐपेण्डिसाइटिस
(Appendicitis)

पाकस्थलीकी उपाग-नली दूसरी ओर बन्द रहती है (अर्थात् एक ओरकी नलीसे खानेकी चीजें या कोई दूसरा पदार्थ उसमें घुस जानेपर, उसके निकलनेकी कोई दूसरी राह नहीं है)। कब्जियत, ज्यादा मांसाहार, उपागमें मल, मछलीका कांटा, छोटी हड्डीका टुकड़ा इत्यादि कोई चीज घुस जानेपर एक तरहका प्रदाह पैदा हो जाता है। इसी प्रदाहका नाम "उपाग-प्रदाह" (appendicitis) है। बच्चे और वृद्धोंकी अपेक्षा युवकोंको, स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषोंको और मांसाहारियोंको यह बीमारी ज्यादा होती देखी जाती है। प्रदाह होनेपर, रोगी दर्दसे घबड़ा उठता है, यहाँतक कि इस तकलीफसे मौततक हो सकती है। इसलिये, नश्तर लगानेवाले डाक्टर प्रदाहके समय उपागको चीर डालते हैं। ज्यादा खानेसे ही यह बीमारी होती है, डाक्टर नोयाकका ऐसा ही मत है।

वर्तमान शताब्दीके आरम्भसे ही इसका यह नया नाम रखा गया है, परन्तु वास्तवमें यही रोग इतने दिनोंसे "टिफ्लाइटिज" या "पेरिटिफ्लाइटिज" कहलाता था। खायी हुई चीज सहजमें न पचनेपर (खासकर गठिया या सन्धि-वातवाले रोगियोंको) बहुत बार यह बीमारी हुआ करती है। पेटकी दाहिनी ओर दर्द (कभी-कभी रोगीको कई हफ्तेतक यह दर्द मालूम नहीं होता), इसके बाद इस दर्दका धीरे-धीरे बढ़ना और साथ-ही-साथ बुखार और पाकाशय-यन्त्रकी क्रियाकी गड़बड़ीसे पैदा हुई तकलीफ इस रोगका "प्रथम लक्षण है"। इस अवस्थामें

यदि प्रदाह अच्छा न हुआ, तो शरीरके दूसरे-दुसरे यंत्र भी आक्रान्त होकर, रोगीकी मृत्युतक हो सकती है। इस रोगका नाम सुनते ही लोग हताश हो, नश्तर लगवानेका उद्योग करते हैं ; परन्तु पहलेसे ही होमियोपैथिक मतसे अच्छी तरह इलाज होनेपर, नश्तर लगवानेका जरूरत नहीं पड़ती। एकाएक तलपेटमें नाभीके दाहिनी तरफ असह्य दर्द होता है, स्पर्श सहन नहीं होता, वमन, ऊँचा बुखार प्रभृति उपांग-प्रदाहके लक्षण प्रकट होनेपर तुरन्त किसी उत्तम अस्त्र-चिकित्सककी सहायता लें। यह बीमारी अक्सर दुहराती है, परन्तु नश्तर लगवाकर उपांग निकलवा देनेपर फिर नहीं होती।

लक्षण—सरमें जोरका दर्द, आँखोंमें रोशनीका बिलकुल ही सहन न होना, कै (कभी-कभी लगातार), जीभ मैली, कभी-कभी कब्जियत रहती है, कभी नहीं भी रहती है। हवा न छूटना, पैर मोड़े रहना, उदरके नीचेवाले भागमें नाभीकी दाहिनी तरफ तेज दर्द, शरीरका ताप १०० से १०३ डिगरी हो जाता है और कभी-कभी यकृत और प्लीहा भी बढ़ी रहती है।

चिकित्सा—ऐकोन ३x (बुखार ज्यादा रहनेपर) ; बेलेडोना ३x—६ (सरमें दर्द, चेहरा लाल, टपक-जैसा दद वगैरह माथेकी गड़बड़ीके लक्षणमें) ; ब्रायो (कांटा गड़नेकी तरह और जलनकी तरह दर्द, हिलने-डुलनेसे दर्दका बढ़ना ; कब्जियत) ; रस-टक्स ६ (हिलने-डुलनेसे दर्दका कम हो जाना) ; मर्क-कोर ६ (बदन पीला, जीभ पीली, पेट फूलना, घाव)।

लैकेसिस ३०—इसकी एक बहुत बढ़िया दवा है (खासकर पेटमें दाहिनी ओर काटनेकी तरह दर्द और कमरमें कपड़ेका सहन न होना, सामान्य बुखारके साथ, कैके लक्षणमें) ; परन्तु दर्द सुई बेधनेकी तरह या जलन पैदा करनेवाला हो, तो (खासकर टीका लगवाने बाद या औरतोंको ऐपेण्डिक्स-प्रदाह होनेपर) "लैकेसिस" की अपेक्षा "एपिस"

३० ज्यादा फायदा करता है ; परन्तु यदि लैकेसिस या एपिसके प्रयोगसे फायदा न हो, तो "आइरिस" ३० देना पड़ेगा। मृत्युका भय, उत्कंठा, जीभ लाल, बराबर पानी पीनेकी इच्छा, परन्तु थोड़ा पानी पीनेसे ही प्यास बुझ जाना, बिछावनपर छटपटाना और बहुत सुस्तीके लक्षणमें "आर्सेनिक" ३x—३०। "मैगनेशिया-फास" २x गर्म पानीके साथ १०-१५ मिनटका अन्तर देकर सेवन करनेपर दर्द बन्द हो जाता है। पीब होनेका लक्षण होनेपर "हिपर-सल्फर" ६ देना चाहिये।

डाक्टर हेल और सैण्डस मिल्स बेलेडोना ३x और मर्क-सोल ३x आधे-आधे घण्टेके अन्तरपर पर्यायक्रमसे देकर कई घण्टोंमे ही बहुत फायदा होता देख चुके हैं।

विरेट्रम ३ कोलोसिन्थ ६, सल्फर ३०, वगैरह दवाओंको लक्षणके अनुसार कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। डाक्टर ग्रुनन रोगीकी बिगड़ी हालतमें, सल्फर २०० के प्रयोगसे आश्चर्यजनक लाभ होता देख चुके हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—बोतलमें खूब गर्म पानी भरकर पेटको सेंकना, बहुत गर्म पानी बार-बार पीना, जरूरत पड़नेपर गर्म पानीकी पिचकारी लेना, रोगकी नयी हालतमें सिर्फ बार्लीका पानी खिलाना चाहिये। एलोपैथिक डा० इस रोगको जितना भयानक समझते हैं, 'होमियोपैथिक' डा० उतना भयानक नहीं समझते। कभी-कभी नश्तर लगवानेकी जरूरत पड़ती है।

पेट-फूलना (Tympanitis)

यह हमेशा बुखार, हैजा, सान्निपातिक ज्वर वगैरह रोगके उपसर्ग-रूपमें होता है।

चिकित्सा—ऐसाफिटिडा ३—हिस्टीरिया रोगमें पेट फूलनेपर घण्टे-घण्टेपर एक खुराक देनी चाहिये।

टेरिबिन्थिना ३—ज्वर या प्रदाहके कारण पेट फूलना (खूब गर्म पानीमें फ्लानेल भिंगाकर, निचोड़नेके बाद उसमें कई बून्द तारपीनका तेल डालकर पेटपर लगाना चाहिये), यह घण्टे-घण्टेभरपर लगाना चाहिये। पेट फूलनेकी यह एक उत्कृष्ट दवा है।

रैफेनस ६—पेट कड़ा और फूला हुआ ; उर्ध या अधोभागसे वायु न निकल पाना (Dunham)।

कोलोसिन्थ०६, चायना ३, हायोस ३, आइरिस ६, आर्स ३, लाइको ६, कार्बो-वेज ६—३०, नक्स-वोम ६ की कभी-कभी जरूरत पड़ती है। पेटमें मल इकट्ठा होनेकी वजहसे पेट फूलता हो, तो गर्म पानी या जैतूनके तेलकी पिचकारी लेनी चाहिये।

"सान्निपातिक ज्वर", "हैजा", "पेटमें वायु-संचय" और "अतिसार" वगैरह रोगोंकी दवाएँ देखिये।

उदरमें वायु-संचय ; अफारा
(Flatulence)

यह दूसरे रोगका उपसर्गभर है। कलेजेमें जलन, श्वासकष्ट, कलेजा धड़कना, पेट फूलना, डकार आना, पेटमें भड़भड़ शब्द होना, हवा छूटना, बार-बार पेशाब या मूत्रकृच्छ्रता, इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा— **कार्बो-वेज** ३x चूर्ण, ६—पेटमें (खासकर ऊपरी पेटमें) वायु जमा होना, साँसमें तकलीफ या कलेजेमें जलन, पतले दस्त।

लाइकोपोडियम ६—तलपेटमें वायु जमा होना और कब्जियत रहनेपर।

कार्बोलिक-एसिड ३—पेट फूलनेके साथ डकार आना।

लैकेसिस ६—डकार आनेपर आराम मालूम होना।

कैमोमिला १२—वायु-संचय, डकार आनेसे आराम मालूम होना ; नाभीके चारो ओर मरोड़की तरह दर्द ।

नक्स-वोमिका ३—तीती या खट्टी डकारे आना, क्लेजेपर भार मालूम होना, कब्जियत ।

सल्फर ३०, नक्स-मस्केटा ३०, रैफेनस ६, टेरिबिन्थिना ६, आर्ज-नाई ६, कैल्के-आयोड ६x विचूर्ण, सिलिका ६, साइना ३x, ब्रायोनिया ६, आर्सेनिक ३, कालिन्सो ३x वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक हो सकती हैं ("पेट फूलना" देखिये) ।

ऊपरी पेटमें आफारा—नक्स-वोम, पल्स, कार्बो-वेज ।

तलपेटमें आफारा—लाइको, ऐसाफिटिडा, चायना ।

अतिसार या दस्त आना

(Diarrhœa)

बिना काँखे बार-बार जो पतले दस्त आते हैं, उसे अतिसार कहते है । साधारणत. चार तरहका अतिसार दिखाई देता है :—(१) देरसे पचनेवाली चीजे खाना, गदला पानी पीना और उत्तेजक दवाएँ खानेसे पैदा हुए उपदाहकी वजहसे पतले दस्त ; (२) "पचनेकी क्रियामे गड़बड़ीके कारण न पची हुई चीजे निकलती है"—इस ढंगका अतिसार ; (३) गर्म शरीरमें ठण्डा पानी पीना या बरफ वगैरह पीना या ठण्डी हवामे जाकर एकदम पसीना रोक देना और इस वजहसे प्रदाह होनेके कारण पैदा हुआ अतिसार ; (४) गर्मीके दिनोका अतिसार ।

अतिसार और हैजेका भेद "हैजा" के इलाजमे लिखा है । अतिसारमें पेटमे मरोड़ और कूथन नही रहती ; परन्तु आमाशयमे ये दोनों लक्षण मौजूद रहते हैं ।

मिचली, पेट फूलना, पेटमें दर्द ; श्लेष्मा, पित्त या कई रंगोंके और बदबूदार पतले दस्त ; मैल चढ़ी जीभ, साँस लेने छोड़नेमें बदबू, कड़वी डकार, सुस्ती वगैरह अतिसारके प्रधान लक्षण हैं। बहुत खाना-पीना, सड़ो शाक-सब्जी या मांस खाना, गदला पानी पीना, वायु या ऋतुका बदलना, मानसिक भावोंकी अधिकता (जैसे—क्रोध, भय, दुर्भावना, शोक आदि), यक्ष्मा रोग आदि भोगनेके कारणोंसे यह रोग हुआ करता है।

चिकित्सा—पल्स, इपिका, एकोन, जेल्स, आर्स, कैल्के-कार्ब, मर्क-सोल, मर्क-कोर और विरेट्रम-एल्बम अतिसारकी प्रधान दवाएँ हैं।

पानीकी तरह दस्त—एलो, आर्स, चायना, फेरम-मेट, पोडो।

पीव-भरे दस्त—"आर्स", "मर्क", नाइट्रिक-एसिड, फास, कैल्के-फास, कैन्थिरिस, लैकेसिस।

खून-मिले दस्त—"मर्क", "आर्स", आर्निका, कैन्थरिस, इपि, नाइट्रिक-एसिड, बैप्टी, क्रोटेलस, लैके, रस-टक्स, फास-एसिड।

स्पिरिट कैम्फर—जाड़ा, कम्प, पाकस्थलीमें दर्द हाथ-पैर और मुँह ठण्डे ; गर्मीके दिनोंके पतले दस्त और सर्दीसे पैदा हुए अतिसारमें। नया अतिसार एकाएक शुरू हो जानेपर।

किनिनम-आर्स ६x—साधारणतः जो अतिसार दिखाई देता है, वह इसी दवासे अच्छा हो जाता है।

रियूम ३—रोगीके मलमें खट्टी गन्ध, रोगीके समूचे शरीरसे खट्टी गन्ध निकलना (खासकर बच्चोंके दाँत निकलते समयके उदरामयमें), पेटमें शूल, पाखाना लगना, पर न होना।

क्रोटन टिग्लियम ६—पीले रंगका पानीकी तरह दस्त बहुत ज्यादा परिमाणमें होना।

एपिस ३x, ३०—दर्दके समय सब्ज आभा लिये पीले रंगका दस्त ; रोज सवेरे पतले दस्त।

रियुमेक्स ३—सवेरेके समय पतले दस्त, भूरे रगके पतले दस्त, दस्तका वेग ज्यादा, सवेरे रोगीकी नीद खुल जाती है और तुरन्त लोटा लेकर पाखाने दौड जाता है (ऐलो, सल्फर)।

ऐकोनाइट ३x—जाडेके दिनोकी ठण्ड (अर्थात् सूखी ठडी हवा लगना) लगनेके कारण पतले दस्त आना, पहाड़ी जगहोके अतिसार, सिहरादन मालूम होना, बुखार और प्यासका लक्षण रहनेपर यह लाभदायक है।

जेल्सिमियम १x—ऐकोनाइटके लक्षण मिले अतिसारके साथ सरम दर्द होनेपर।

कैमोमिला—हरे रगके, पानीकी तरह, गर्म या वदबू-भरे दस्त, पितकी कै, पैटमे ऐंठन, सर-दर्द, बच्चोको दाँत निकलनेके समय पतले दस्त, बच्चा हमेशा रोता रहता है और हमेशा गोदमें चढ़कर घूमना चाहता है। दस्त गाठ-गांठ या पानीकी तरह, हरा या भूरे रगका दस्त, सडे अडेकी तरह गन्ध आनेवाले दस्त।

पल्सेटिला ३, ३०—एक-एक वार एक-एक तरहका दस्त, मुँहका स्वाद तीता; कै या मिचली, डकार आना; तेल, घी या चर्बीसे बनी देरमें पचनेवाली चीजें खानेके कारण पतले दस्त, पैटमें वायु-सचय, खानेके बाद खाई हुई चीजोका स्वाद, गर्मीके दिनोका अतिसार आम मिले या श्लेष्मा भरे-दस्त, रातमें रोगका वढ़ना।

ऐण्टिम-क्रूड ६—'सफेद क्लेद-भरी' जीभ, डकार आना, मिचली, अरुचि, पानीकी तरह पतले दस्त, पित्त-मिला दलगम।

इपिकाक ३x, ६—कै या मिचली, वदबूदार मल, खुन-मिला पेशाब, पैटमें दर्दके साथ गर्मीके दिनोका अतिसार, बच्चोको पीला या पीलापन मिले हरे रगके दस्त होनेवाला अतिसार, कैके साथ पतले दस्त (पल्सेटिलाके पहले या बाद यह फायदा करता है)।

ओलियेण्डर ३, ३०—(पुराने अतिसारमें) अनपचका मल रहनेपर यह फायदा करता है।

जिंजिबार ६—दूषित पानी पीनेके कारण पतले दस्त आनेपर यह उपयोगी है।

नक्स-वोमिका १x, ३०—ज्यादा भोजन या रातमें जागरण अथवा मद्यपान आदि अत्याचारोंके कारण पैदा हुआ अतिसारमें लाभदायक है।

थूजा ६, ३०—पतले पीले पानीकी तरह दस्त, रक्त-भरे, चिकने दस्त ; गड़गड़ाकर जोरसे दस्त आते हैं ; टीका लगवानेके कुफल रुपमें दस्त ; धातुमें प्रमेह विष रहनेकी वजहसे अतिसार ; पुराना अतिसार ; दाँतकी जड़ खोखली, पर ऊपरी भाग ठीक रहता है ; रोगी जल्दी-जल्दी दुबला होता है।

चायना ६, १२ या ३०—भोजनके बाद, रातमें या सवेरे दर्दके साथ या बिना तकलीफका, कुछ लाल रंग लिये दस्त ; खाये हुए अजीर्ण पदार्थ दस्तमें निकलना और इसके साथ ही कमजोरी, अरुचि और प्यास ; गर्मीके दिनोंका अतिसार ; बार-बार पानीकी तरह पतले दस्त और इसके साथ ही पेटमें ऐंठन, बहुत ज्यादा परिमाणमें पतले दस्त "बड़े वेगसे निकलता हैं।" फल खानेके कारण पतले दस्त।

कोलचिकम ३x,—नये अतिसारमें तेज मिचली और सुस्ती ; खानेकी गन्धसे ही कै होने लगना। शरद्-ऋतुका अतिसार ; मलमें सफेद खंड-खंड कण दिखाई देते हैं।

आर्सेनिक ३x, ३०—पाखाना होनेके पहले बेचैनी ; पेटमें या तलपेटमें दर्द ; पाखानेके समय मिचली और ओकाई ; काँखना ; पाखानेके वक्त मलद्वारमें जलन ; कलेजा धड़कना ; बदबू-भरा, मटमैला, थोड़ी मात्रामें दस्त ; पाखाना होने केबाद सुस्त बना देनेवाली कमजोरी ; तेज प्यास ; खाने-पीनेके बाद वमन ; बार-बार खून-भरे या पतले

दस्त ; बहुत ज्यादा पसीना ; सुस्ती ; बेचैनी ; पुराना अतिसार । फल, खटाई, बरफ, आईस-क्रीम, सड़ी मास-मछली, बासी तरकारी, बासी खीर वगैरह खानेकी वजहसे अतिसार ।

इल्कामारा ६—ओस या ठण्डी तर हवा लगाकर या सर्दीसे पैदा हुआ उदरामय ; रातमें पित्तका दस्त होना ; पेट फूलनेके साथ तीसरे पहर दस्त, कई रंगोके दस्त ; पतले दस्तके साथ टुकड़ा-टुकड़ा मल ; दस्त, कै एक साथ ; मलद्वारमें जलन होना ; बरसातके दिनोंका अतिसार ।

आइरिस-वार्स ६—हैजाका लक्षण रहनेवाला अतिसार ; पेटमें बहुत दर्द ; मलद्वारमें जलन ; कै या मिचली ; शरद्-ऋतुके पित्त-मिले दस्त ; सरमें दर्द ; अनजानमें मल निकल जाना वगैरह लक्षण मिले गर्मी और शरद्-ऋतुके दस्तोमें यह उपयोगी है । शिशु अतिसार ।

मर्क कोर ३—खून मिले या पित्त-मिले दस्त ; पेटमें दर्द ; आम-भरे दस्तके साथ कूथन ; पाखाना होनेके बाद ही कूथन बन्द नहीं हो जाती ; मिट्टीकी तरह या पीले रंगके दस्त , सुस्ती ।

मर्क वाइवस ६—कूथन और दर्द ; रोगी पाखाना छोड़ना ही नहीं चाहता, समझता है कि अभी और भी पाखाना होगा, खुलासा नहीं हुआ । खून-मिले या खूनके पित्त-मिले दस्त ।

मर्क सोल ६, ३०—पित-मिले, आम-भरे या खून भरे दस्त ; पाखाना होनेके पहले, पेटमें दर्द और पाखाना होनेके बाद इस दर्दका बन्द होना ; काचकी तरह या पीले रंगका मल ; बार-बार पतले दस्त ; दोहरा जानेपर पेटका दर्द बन्द हो जाना ; पेट खाली मालूम होनेपर भी रोगीका ज्यादा भोजन न कर सकना वगैरह लक्षणोंमें ।

म्रायोनिया ६, ३०—गर्मीके दिनोंका अतिसार, ठण्डे जलीय द्रव्य पीनेके कारण अतिसार, बैठनेपर मिचली या बेहोशी आ जाना ; ज्यादा

गर्मीके बाद एकाएक सर्द हवा लगकर पतले दस्त आने लगना ; ज्यादा मात्रामें पानी पीनेकी इच्छा ; दस्तमें बदबू और दस्तका रंग मटमैला

विरेट्रम-ऐल्बम ६, ३०—पानी या चावलके धोवनकी तरह ज्यादा परिमाणमें दस्त ; आवाजके साथ या बड़ी तेजीसे मल निकलना ; अनजानमें मल निकल जाना ; पेटमें मरोड़, पैरोंमें ऐंठन ; नाड़ी लुप्त-प्राय ; ठण्डा पसीना (खासकर कपालमें) ; तेज प्यास, कै, सब शरीर ठण्डा, तेजीसे अवसन्न हो जाना ।

पोडोफाइलम ६—बच्चोंको दाँत निकलनेके समय अतिसार, कई रंगोंका ज्यादा परिमाणमें दस्त ; खून मिला या खूनी पेचिसकी तरह दस्त होना ; खाने या पीनेके बाद ही पाखाना लग आना और तलपेट खाली मालूम होना ; बिना दर्दके पतले दस्त, सवेरे रोगका बढ़ना । पित्त-प्रधान रोगियोंके लिये यह ज्यादा लाभदायक है ।

फास्फोरस ६, ३०—पेट फूलना और खट्टी डकारोंके साथ (पुराना अतिसार) कमजोरी ; हैजेके बादका अतिसार ; पतले दस्तोंके साथ चर्बीके टुकड़े या 'साबूदाने' की तरह दाना-दाना मल निकलना ; यक्ष्मा रोग-प्रवणता ।

कैल्के-कार्ब ६, ३०—कमजोर और शीर्णता ; चेहरा रक्तहीन ; कभी अरुचि या कभी ज्यादा भूख ; अम्लसे पैदा हुए पुराने उदरामयमें पतला लसदार दस्त ; बच्चोंका अतिसार (खासकर जिन शिशुओंके माथेमें पसिना ज्यादा होता है), बच्चेका वदन ठण्डा ; गण्डमालाग्रस्त रोगियोंका अतिसार ।

ऐलो ३x, ३०—पीले रंगके बदबूदार दस्त ; वेग आते ही मल निकल जाता है । (पाखाना होनेके पहले और पीछे) वस्ति-गह्वरमें दर्द, सवेरेके समय पतले दस्त, मलके साथ वायु निकलना ; पाखाना होनेके समय रोगी समझता है कि पेटकी सब चीजें बाहर निकल पड़ेंगी, मानो मलको धारण करनेका सामर्थ्य उसमें बिलकुल नहीं है ।

वोविस्टा ३—औरतोंको ऋतुके पहले या पीछे पतले दस्त आना लक्षण रहनेपर।

वैप्टीशिया १x, ३ या पाइरोजेन ३०—नाली वगैरहकी भाफसे कारण पतले दस्त आने लगना।

एसिड-फास ३x, ६—बिना दर्दके पतला सफेद दस्त; अनजानमें निकल जानेवाले तथा सुस्ती लानेवाले दस्त; दस्तके बाद कमजोरी नहीं मालूम होना।

ट्राम्बिडियम ३०—खाने-पीनेके बाद ही पेटमें दर्द और कूथन; बदबूदार दस्त, कभी-कभी खून-मिले दस्त, रक्तामाशय; मलद्वारमें जलन।

सोरिनम २००—बहुत बदबूदार दस्त, रोगीके शरीर और श्वास प्रश्वाससे भी बदबू निकलती है। जहाँ चुनी हुई दवासे कोई लाभ नहीं होता, वहाँ एक मात्रा सोरिनमके प्रयोगसे आश्चर्यजनक लाभ दिखाई देता है।

पेट्रोलियम ३—बाँधा-कोबीकी तरकारी खानेकी वजहसे पैदा हुआ उदरामय। "सिर्फ दिनमें पतले दस्त।" रातमें दस्त नहीं आते।

मैग्नेशिया-कार्ब ६—खट्टी गन्ध-भरे, गदली सेवारकी तरह हरे दस्त।

नूफर लुटिया ३x—सवेरे (४ से ७ बजेतक) अतिसार, खट्टी गन्ध-भरे पीले रंगके पानीकी तरह पतले दस्त, उदरमें वायु-सञ्चय; पाखाना होनेके बाद मलद्वारमें जलन।

कोलोसिन्थ ३—उदरमें या नाभीके चारों तरफ काटने या सिकुरनेकी तरह दर्द; दर्दसे रोगी 'दोहरा' हो जाता है। भोजन करनेपर दर्द बढ़ जाता है और दस्त भी ज्यादा आने लगते हैं; ज्यादा मात्रामें पाखाना होनेपर थोड़ी देरके लिये दर्द घट जाता है, फिर दर्द पहलेकी तरह ही होने लगता है; पहले पानीकी तरह, फिर पित्त-मिले

और कभी-कभी खून मिले दस्त आते हैं ; दबाने या झुकनेसे दर्द कम हो जाता है।

फेरम-मेट ६, ३०—बहुत दिनोंतक अतिसार भोजनके कारण रोगीके बहुत कमजोर हो जानेपर और बहुत कूथन रहनेके साथ अनपचके दस्त हुआ करते हैं ; रक्त-स्वल्पता।

सल्फर १२ या ३०—पीले रंगके या मैले सफेद रंगके दस्त ; बिना दर्दके दस्त होना ; अजीर्णके दस्त ; सवेरे रोगका बढ़ना ; पुराना अतिसार (पुराने उदरामयमें) ; मलद्वारमें जखम ; मलके वेगसे रोगीकी नींद खुल जाती है और उसी समय दौड़कर पाखाने जाना पड़ता है।

कैफेइन (मात्रा चौथाई ग्रेन Caffein $\frac{1}{4}$ grain a dose)—बार-बार दस्त होनेके कारण रोगीके हृत्पिण्डकी क्रिया तुरन्त बन्द होनेकी सम्भावना होनेपर इसका प्रयोग होता है (वास्तमें "कैफेइन" हृत्पिण्डको उत्तेजना देनेवाली और पेशाब लानेवाली एक बढ़िया दवा है)।

मैगनेशिया-फास १२x विचूर्ण, रिसिनस ६, इथूजा ६, कैल्के-कार्ब ६, लैकेसिस ६, एपिस-मेल ६, कार्बो-वेज ३० और साइना ३x—२०० की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है।

देरमें पचनेवाली चीजें खानेके कारण अतिसारमें—पल्सेटिला ६, नक्स-वोम ३०, ऐण्टिम क्रूड ६, इपिकाक ६।

दूषित पानी पीने या कटहल खानेके कारण अतिसारमें—कैमो १२, आर्स १२, बैप्टी ६x।

बरफ, बरफका पानी या आइसक्रीम खानेके बाद पचनेमें गड़बड़ी (अर्थात् पेट फूलना, कै वगैरह लक्षणोंमें) होनेपर—आर्सेनिक ३ या कार्बो-वेज ६।

अशुद्ध वायु सेवनसे पैदा हुए अतिसारमें—बैप्टीशिया ३x या आर्सेनिक ६ लक्षणके अनुसार।

ओस या जाड़ेमें सर्दी लगकर अतिसार होनेपर—स्पिरिट-कैम्फर, ऐकोनाइट ३x या ब्रायोनिया ३।

दिनमें गर्मी और रातमें सर्दी होनेकी वजहसे अतिसारमें—ब्रायोनिया ३x—३०।

बरसातमें सर्दी लगकर पतले दस्त होनेपर—डल्कामारा ६ या रस-टक्स ६।

बाँधा कोबी खानेके कारण पतले दस्तोंमें—पेट्रोलियम ३।

मानसिक उत्तेजनासे पैदा हुए पतले दस्तोंमें—इग्नेशिया ६, कैमोमिला १२ या विरेट्रम ६।

दूध पीनेसे पैदा हुए अतिसारमें—इथ्यूजा ६, कैल्केरिया कार्बोनिका ६।

घी या तेलमें पका भोजन खानेके कारण पैदा हुए अतिसारमें—पल्सेटिला ६।

दाँत निकलनेके समयके अतिसारमें—कैमोमिला १२, कैल्के-कार्ब ६, मर्क ३०, कोलोसिन्थ ६x, पोडोफाइलम ६, बेलेडोना ६, सल्फर ३०, आर्सेनिक ६।

भय या प्रसन्नतासे पैदा हुए अतिसारमें—काफिया ६, ओपियम ३०।

शोकजनित अतिसारमें—इग्नेशिया ६।

गर्भावस्थामें या प्रसवके बादके अतिसारमें—ऐण्टिम-क्रूड ६, चायना।

फल या खट्टे पदार्थ खानेसे पैदा हुए अतिसारमें—आर्सेनिक ३०, कोलोसिन्थ ६, चायना ६।

वायु-परिवर्त्तन आदि कारणोंसे—कैम्फर θ (बहुत जाड़ा), ऐकोन ३ (जाड़ेके दिनोंकी सूखी हवा लगनेके कारण), ब्रायो ३

(गर्मीके बाद सर्दी लगनेके कारण); डल्कामारा १२ (बरसाती हवा या तरीकी वजहसे); कोलोसिन्थ ६ (शूलके दर्दके साथ)।

गर्मीकी ऋतुके अतिसारमें—चायना ६ (सामान्य अतिसारमें); विरेट्रम एल्बम ६ (अतिसारके साथ ऐंठन); आइरिस ६ (कैके साथ सरमें दर्द; आर्स ६ (गहरी सुस्ती); एसिड-फास ६ (गर्मी या शरत ऋतुका अतिसार अगर व्यापक रूपमें दिखाई दे); कोलचि ६, पोडो ६, पल्स ६, ब्रायो ६ ।

दुर्बल या वृद्ध मनुष्योंके अतिसारमें—फास्फोरस ६, एसिड-फास ३०, एसिड-नाइट्रिक ३०, एण्टिम-क्रूड ३० ।

पुराने अतिसारमें—सल्फर ३०, कैल्के-कार्ब ६०, लाइको ३०, एलो ३०, एसिड-फास ६, चायना ३x, आर्सेनिक ३x, ६, फास ३, आयोड ६, एसिड-नाइट्रिक ३, फेरम आयोड ३x ।

हैजेका आक्रमण और पूर्ण विकासावस्थाकी दवाएँ और "रक्तामाशय" रोगकी दवाएँ देखिये। काँच बाहर निकलनेपर "काँच निकलना" देखिये। आजकल शिशु अतिसारमें कुउण्टन प्रवर्तित आइसोटानिक (isotonic) समुद्र जलके इन्जेक्सन प्रयोगने शायद बहुत कुछ उपकार होता है ।

नियम—ओस या सर्दी न लगे, ऐसे कमरेमें रोगीको रखना चाहिये। गर्म पानीमें कपड़ा भिगोकर, अच्छी तरह निचोड़, रोगीका शरीर अच्छी तरह पोंछ डालना चाहिये। रोगीका पेट हमेशा गर्म कपड़ेसे ढँका रहना चाहिये।

पथ्य—आरारूट, गन्दभादुलियाका शोरबा, बार्ली, मठा, नेबू, सिंगी या मांगुर मछलीका शोरबा; इसके बाद खूब पुराने चावलका भात। पतली चीजें ज्यादा परिमाणमें खाना हानिकारक है। ज्यादा भोजन, गुरुपाक द्रव्य खाना, बार-बार भोजन, असमयमें भोजन और ज्यादा परिमाणमें खट्टे पदार्थ खाना मना है ।

पेचिश (Dysentery)

बड़ी आँतोंमें घावके साथ प्रदाहको "पेचिश" या आमाशय कहते हैं। पेटमें दर्द, पाखानेके वक्त कूथन, सफेद आँव या आँवके साथ दस्तमें खून आना इसका प्रधान लक्षण है। दस्तमें आँवका भाग कम और खून ज्यादा रहनेपर "रक्तातिसार" कहते हैं। 'रोगके आरम्भमें' भूख न लगना, कै या मिचली, नाभीके चारों ओर तेज दर्द, पानीकी तरह पतले दस्त, कूथनके साथ बार-बार दस्त होना और सामान्य ज्वर-भाव होना, धीरे-धीरे समूचे पेटमें दर्द, काँखनेके साथ बार-बार पाखाना लगना, खून-मिला श्लेष्मा-स्राव या सिर्फ खून या मछलीके धोए हुए पानीकी तरह दस्त होते हैं। "रोग बढ़ जानेपर"—रोगीके शरीरसे एक तरहकी बदबू आने लगती है; चेहरा लाल, द्रुत और क्षीण नाड़ी, हिचकी, अनजानमें पाखाना हो जाना, हाथ-पैर ठण्ड, शरीरका ताप १०२ से १०३ डिगरी, जीभ लाल और चमकीली, यकृतमें फोड़ा, सान्निपातिक बुखारके उपसर्ग, आँतोंके आवरणका प्रदाह, प्रलाप वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। यदि बीमारी बहुत कड़ी या साघातिक न हुई, तो दस्त, पेटमें दर्द और कूथन धीरे-धीरे कम होने लगती है, दस्तोंमें मल दिखाई देता है और रोग आराम होने लगता है। यही रोग पुराना या ग्रहणीका आकार जब धारण कर लेता है, तो रोगी बहुत दुबला हो जाता है और दिनमें तीन-चार बार दस्त हुआ करता है। आमाशयके साथ मैलेरिया रोग रहनेपर या यकृतमें फोड़ा हो जानेपर समझना चाहिये कि अवस्था नाजुक हो गयी है।

जीवाणु ही इस बीमारीकी पैदाइशके खास कारण हैं। खाने-पीनेका अनियम, खूब गर्मी या सर्दी लगना, दूषित पानी पीना वगैरह कारणोंसे जब शरीर कमजोर हो जाता है, तभी जीवाणु सहजमें ही शरीरपर आक्रमण कर सकते हैं। रोगीके शरीर या पाखाने-पेशाबसे जो भाफ निकलती

है, उससे ही शायद इस तरहके जीवाणु आकर यह बीमारी पैदा कर देते हैं। मक्खियोंके द्वारा यह बीमारी फैलती है।

शीगा (Shiga), ओस्लर (Osler) वगैरह आजकलके निदान जाननेवालोंने भारतवर्ष और दूसरे-दूसरे गर्म देशोंके आमाशयको दो तरहका बताया है :—(क) अमीबा (amæba) से पैदा हुआ आमाशय ; (ख) बैसिलिस (bacillus) से पैदा हुआ आमाशय।

(क) अमीबा जीवाणुसे पैदा हुआ रक्तातिसार (Amæboid dysentety)—'दस्त' में "अमीबा" नामके छोटे जीवाणु दिखाई दें और इसी वजहसे बड़ी आँतोंमें प्रदाह और बहुत ज्यादा घाव हो जाये, तो उसे "अमीबासे पैदा हुआ रक्तातिसार रोग" हुआ है, यह निश्चय हो जाता है। दर्द और कूथनके साथ एकाएक रोगका आक्रमण, बार-बार श्लेष्मा-मिता या थोड़ा खून-मिला दस्त होना, हल्का बुखार या बिलकुल ही बुखार न रहना, शीर्णता और गहरी सुस्तका बहुत जल्द बढ़ जाना, जीभ लाल और चमकीली दिखाई देना, बहुत ज्यादा रक्त-स्राव, यकृतमें दर्द, कभी बुखार और पसीनेके साथ यकृतमें फोड़ा हो जाना, इस तरहके आमरक्तका यह प्रधान लक्षण है। गहरी सुस्ती या ज्यादा खून जाना या बहुत बलगम निकलना या आँतोंके आवरणका प्रदाह वगैरह कारणोंसे रोगी मर जा सकता है।

चिकित्सा—खाटसे न उठना, पतली और हल्की चीजें खाना (जैसे—आरारूट, बकरीका दूध, बेदनाका रस), बहुत गर्म पानीमें (दो-एक बून्द तारपिनका तेल डालकर) फ्लानेल निचोड़कर पेटको सेंकनेसे बहुत फायदा होता है। इंगलैण्डके ह्वोलर, मैकगावेन और अमेरिकाके मिल्स वगैरह सुप्रसिद्ध होमियोपैथिक डाक्टर इस रोगमें इन्जेक्शन देते हैं। चमड़ेके भीतर पिचकारीसे एक ग्रेन मात्रा एमिटिन (emetine) का प्रयोग करना इस बीमारीकी अमोघ दवा है। (यकृत प्रदेशमें फोड़ा रहे या न रहे, जरूरत पड़नेपर) पाँच-छः बार

इस तरह इन्जेक्शन लेनेसे यह रोग अच्छा हो सकता है। कभी-कभी नस्तर लगवानेकी जरूरत पड़ती है।

(ख) वेसिलस (शलाकाकी तरह जीवाणु) से पैदा हुए आमाशय (Bacillary dysentery)—'खून' में एक तरहके जीवाणु रहने, बड़ी आँतका प्रदाह होने और उसमें बहुत गहरा जख्म होनेपर समझना चाहिये कि "वेसिलस-जात आमाशय रोग" हुआ है। जीवाणु प्रवेश करनेके ४८ घण्टेके बाद भी कोई उपसर्ग न दिखाई देना, पेटमें दर्द, बुखार, बार-बार (२० से ४० या और ज्यादा) श्लेष्मा या खून-भरा दस्त, फिर शरीरकी गर्मी और पेटके दर्दका बढ़ना, जीभ मैल चढ़ी रहना, बहुत शीर्णता; प्रलाप, जी मिचलाना वगैरह उपसर्ग पैदा होकर, तीन-चार दिनोंमें ही रोगी मर जा सकता है। कभी-कभी रोग तीन-चार हफ्तेतक बना रहता है। इस जातिके आमाशयमें आँतोंके आवरणका प्रदाह या यकृतमें फोड़ा होते देखा जाता है।

चिकित्सा—मर्क-कोर ३x, ६x—इस जातिके आमाशय रोगकी प्रधान दवा है। पेटमें हमेशा काटनेकी तरह दर्द, बहुत कूथन या वेग होना, बार-बार आँवके साथ खूनके दस्त, दस्त होनेके बाद भी तकलीफका कम न होना, रोगीको पाखानेमें बैठे रहनेकी इच्छा, पेशाब थोड़ा होना, आधी रातके बाद मलाशयके सब यंत्रोंकी तकलीफका बढ़ जाना वगैरह इस दवाके लक्षण हैं।

नयी बीमारीमें नीचे लिखी दवाएँ भी दी जा सकती हैं। जैसे—"आर्सेनिक" ३x, ६x (दस्त ज्यादा, पानीकी तरह और बदबूदार, जलनका दर्द), "बैप्टीशिया" θ, ३x (बुखारके साथ गहरी सुस्ती), कार्बो-वेज ३—३० (हिमाग या पतनावस्था); डायस्कोरिया θ—३x (तेज दर्द और कूथन), फास्फो ३x—६ (बिना तकलीफके दस्त) और लैकेसिस ६ (नींद खुलनेके बाद ही रोगी तकलीफसे अधिर हो जाता है)।

इन दोनों तरहोंके आमाशयके अलावा एक तरहका आमाशय और भी है, जिसे "उपझिल्लीक (diphtheritic) आमाशय" कहते हैं ।

सामान्य आक्रमणमें (जैसे—ज्यादा परिमाणमें हरे रंगका आँव निकलना)—मर्क्यूरियस डलसिस ६x, १२x ।

उष्ण-प्रधान देशोंके आमशयमें (खासकर ज्यादा कूथनके साथ बहुत अधिक रक्त दिखाई देनेपर)—मर्क-कोर ३x, ३० प्रधान दवा है । कैन्थरिस ३x या आर्सेनिक ३x की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है ।

कूथनमें—बेलेडोना ६x, ऐलो ६ या नक्स-वोमिका ३० ।

पेटमें असह्य दर्द—इपिकाक ३x—३, कैन्थ ६, मैग्ने-फास १x—६x चूर्ण (गर्म पानीके साथ) या क्यूप्रम-आर्स ६x चूर्ण ।

रक्त-स्रावमें—आर्निका ३x, इपिकाक ३x, हैमामेलिस १x या हाइड्रैस्टिस ३x ।

मैलेरिया ज्वरके साथ आमाशयमें—सिड्रन θ या किनिनम-सल्फ ३x—३x चूर्ण, ऐलस्टोनिया θ ।

मैलेरिया ज्वरके साथ आमाशय और रक्त-स्वल्पताके साथ अजीर्ण रोगग्रस्ता (जिसके पेटमें दूध भी न पचता था) एक प्रौढ़ा स्त्रीको ऐलस्टोनिया θ खिलाकर तीन हफ्तोंमें आराम किया गया है ।

रोगका पुराना आकार धारण करनेपर—सल्फर ३० या नाइट्रिक एसिड ६ और फी खुराक दो-तीन बून्द काडलिवर आयल रोगीको देना चाहिये । रोगका कुछ पुराना होनेपर, "वैक्सिनिनम-मार्टिलस" θ ज्यादा फायदा करता है ।

चिकित्सा—ऐकोनाइट ३x, ३०—बुखार, पेटमें दर्द, खून-भार आँव, प्यास, मृत्यु-भय और बेचैनी ।

कार्बो-वेज ६, ३०—वायु निकलनेमें बहुत बदबू ; पेट फूलना ; ज्यादा डकार ; गर्मीसे आकर बरफ पी लेनेके कारण आमाशय ; पैर ठण्डे हो जाना ; पेशाबमें दुर्गन्ध या पेशाब बन्द ; सड़े मुर्देकी तरह

वदबूदार दस्त, नाड़ी बहुत क्षीण, यहाँतक कि कलाईमे नाड़ीका पता ही नही लगता (नये रोगमे साधारणतः यह दवा नही दी जाती)।

हैमामेलिस १x—गाढ़े या कालिमा लिये खूनके साथ ज्यादा मल निकलनेके लक्षणमे।

मर्क्यूरियस—यह आमाशयकी एक बढ़िया दवा है। भिन्न-भिन्न प्रकारके मर्क्यूरियस इस रोगकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओमे ज्यादा फायदा करते हैं। खुनके साथ आँवके दस्त होना, कूथन रहना, पाखाना हो जानेके बाद भी रोगी समझता है कि और भी पाखाना होगा, मुँहमे थूक भरना—मर्क्यूरियसके ये कई विशेष लक्षण हैं। बहुत ज्यादा परिमाणमें उपसर्ग मौजूद रहनेपर "मर्क-कोर" ३x, ३०, ये लक्षण थोडे रहनेपर "मर्क-वाइवस" ६x विचूर्ण या "मर्क-सोल" ६ और बहुत थोडी मात्रामे इन सब लक्षणोके रहनेपर मर्क-डलसिस ६x विचूर्ण देना चाहिये।

आमाशय रोगमें मर्क-कोर (३x, ६, ३०) बहुतसे मौकोपर महौषध-सा काम करता है। सिर्फ खून या खून-मिला आँव ; बहुत कूथनके साथ बार-बार पाखानेकी इच्छा ; पाखाना होनेके पहले और बाद, पेटमे तेज दर्द ; मूत्राशयमे जलनके साथ बड़े कष्टसे थोड़ा पेशाब (कभी-कभी एकदम पेशाब होता ही नही) ; इसके साथ ही रोगी निस्तेज हो पडे, तो यह दवा देनी चाहिये। पाखाना होनेके बाद "और पाखाना होगा" समझकर बैठे रहना और उसके साथ ही बराबर कूथनके लक्षणमें 'मर्क-कोर' ख़ूब फायदा करता है। पाखानेमें खूनका भाग जितना ज्यादा रहेगा, यह दवा भी उतनी ही ज्यादा फायदा करेगी। यदि मलमें खूनका भाग कम होकर श्लेष्माका भाग ज्यादा हो या अंग-प्रदेशके निचले भागपर रोग हुआ हो, तो "मर्क-वाइवस" ६x विचूर्ण या "मर्क-सोल" ६ देना चाहिये और हरे रंगका आँव या

लाली लिये पतले दस्त होते हों या अंत्र-प्रदेशके ऊपरका अंश रोगग्रस्त हुआ हो, तो "मर्क-डलसिस" ६x सेवन करना चाहिये ।

ट्राम्बिडियम ६, ३०—खाने-पीनेके बाद ही पेटमें जोरका दर्द और काँखनेसे उपसर्गका बढ़ना ; यकृतमें रक्त-संचय ; भूरे रंगका पतला खून-मिला दस्त और उसके साथ ही कूथन । मर्क सेवनके बाद यह फायदा करता है ।

नक्स-वोमिकाका ३x, ३०—पाखानेके वक्त या उसके पहले बहुत कूथन ; "परन्तु पाखाना हो जानेके बाद कुथन वगैरह तकलीफोंका बन्द हो जाना ।" खुनके साथ थक्का-थक्का आँव निकलना, कई बार होनेपर भी परिमाणमें कम होना । पाखाना होनेके बाद ऐसा मालूम होना, कि अभी पेटमें मल मौजूद है ।

मर्क्यूरियस और नक्स-वोमिकाका प्रभेद—नक्स-वोमिकामें, पाखाना होने बाद कुछ देरके लिये कुथनकी तकलीफ बन्द हो जाती है ; परन्तु मर्क्यूरियसमें पाखाना होनेके बाद कुथनकी तकलीफ मौजूद रहती है ।

मैग्नेशिया-फास १x, ६x चूर्ण—(गर्म पानीके साथ सेवन) पेटमें बहुत दर्द ; मलनालीमें बेहद तकलीफ ।

ऐलस्टोनिया θ, ३x—मैलेरिया बुखारके साथ आमाशय ; खुनकी कमी ।

बेलेडोना ६x—पेट फूलना ; लगातार कुथनके साथ थोड़ा दस्त ; मलनालीमें प्रदाह ; ऐसा मालूम होना कि मूत्राशय और मलनाली ठेलकर नीचेकी ओर उतर जाती है । तेज बुखार, आँखें चमकीली ; चेहरा लाल और प्रलाप ; पाखाना हो जानेके बाद ज्यादा काँखनेकी इच्छा (बच्चोंके आमाशयमें यह ज्यादा फायदेमन्द है) ।

पोडोफाइलम ६, ३०—ताजे खुनका दस्त ; खूनकी लकीर पड़ी हुई आँव-भरा दस्त ; बहुत कुथन ; शूल-वेदना (पेटमें) ; काँच

दाहर निकल आना ; मिचली ; हरा आँव या खून-मिले दस्त ; वच्चोंके अतिसारमें ।

कोलोसिन्थ ३ या ६—पेट फूलना ; खींच रखने या मरोड़की तरह दर्द ; दबाकर पकड़नेसे (झुककर दोहरा जानेकी तरह हो जानेसे) दर्दका कम होना ; जीभ सफेद मैल चढ़ी, खुन-भरी, चिकना आँव निकलना और मिचली, परन्तु कै न होना ।

ऐलो ६—मलिन और गर्म रक्तस्राव ; बहुत कूथन, कमरमें दर्द, उरु-देशमें भार , नाभीके चारो ओर काटनेकी तरह दर्द ; मुँह सूखते रहना ; प्यास ; तलपेटका फूलना और कभी-कभी पाखाना होते वक्त वेहोशी । पुराने आमाशयकी यह एक बढ़िया दवा है ।

कैल्केरिया-कार्ब ६, ३०—हरा दस्त या सफेद अथवा पीली आभा लिये दस्त ; माथेमें पसीना ; पैरके तलवे बरफकी तरह ठण्डे ; पैरकी पीठलीमें ऐंठन ; मलद्वारमें तक्लीफ ।

कैल्केरिया-फास ६, ३०—आँव और रक्त-मिला मल, बारमें अधिक, परन्तु परिमाणमें कम । पाखाना होनेके समय खुब तकलीफ, गहरी कमजोरी, पेट धँस जाता है ; रोगीको खानेकी इच्छा नहीं रहती ; छोटी उमरके बालक-बालिकाओंके लिये उपयोगी है ।

इपिकाक ३x, ६—घासकी तरह हरे रंगका या पुराने गुड़की तरह काली आभा लिये फेन-भरा दस्त ; पेटमें दर्द और कूथनके साथ-ही-साथ पहले फेन-भरा वदबूदार खुनका दस्त, पीछे खून-मिला आँव निकलना, लगातार कै या मिचली, बहुत ग्लानि । कच्चे फल या खट्टी चीजें खानेके कारण आमाशय होनेपर ।

कास्टिकम ६—बहुत कूथनके साथ टुकड़ा-टुकड़ा रक्त-मिला श्लेष्मा मिकलना ; मलद्वार हिला करता है और बहुत तकलीफ होती है, पेट फूला रहता है ।

पल्सेटिला ३, ३०—"सादा श्लेष्मा-भरे" दस्त ; तलपेटमें दर्द ; घीसे पकी चीज खानेके कारण आमाशय रोग ; रातमें बीमारीका बढ़ना।

आर्सेनिक ६—शरीरमें जलन, तेज प्यास, निश्तेज हो जाना ; बदबूके साथ खून-मिला काला दस्त, तेज प्यास ; थोड़ा-थोड़ा पानी कई बार पीना। बेचैनी ; मृत्यु-भय।

गैम्बोजिया ६—बदबूदार पतले दस्त ; खाने-पीनेके बाद रोग बढ़ता है ; पेट दबा रखनेपर दर्द घटता है। पेटमें ऐंठनके साथ एकाएक दस्तका वेग पैदा हो जाता है।

फास्फोरस ६—हरे रंगका लसदार या खुन मिला दस्त ; किसी तरहका दर्द नहीं रहता ; सवेरे या बाईं करवट सोनेपर रोग बढ़ता है ; ठण्डी पतली चीजें पीनेकी तेज इच्छा ; साबूदानेकी तरह पदार्थ दस्तपर तैरता रहता है।

लाइकोपोडियम ३०—आमाशयमें पेट फूलनेका लक्षण रहनेपर।

बैप्टीशिया १x—विकारके लक्षण-मिले रक्तामाशयमें ; रोगी बिलकुल ही सुस्त हो पड़े। बहुत बदबूदार मल, पतला, काला, खून-मिला। वृद्धोंका रक्तामाशय।

कैन्थरिस ३x—रोग संकटापन्न होनेपर तथा बहुव्यापक आमाशयमें ; तकलीफ़से पेशाब निकलना ; पेशाब करनेके बाद बहुत जलन ; मांस धोए पानीकी तरह दस्त ; पेटमें तेज दर्द ; पेट फूलना, प्यास, परन्तु पानी पीनेकी इच्छा न होना ; हिमांग।

कैप्सिकम ३x—बार-बार काले खूनके साथ श्लेष्मा भरा पाखाना होना ; बहुत कुथन और पेशाब करनेके समय जलन ; पेट फूलना।

कोल्चिकम ३x—भाद्र या आश्विन महीनेके आमाशयमें ; काँखना, पेटमें मरोड़, पैरकी पोटलीमें ऐंठन, उदरी, निस्तेज-भाव रहनेपर।

आर्निका ३x, ६—उन्द कम नूम ति ना और कुदन।

रस टक्स ३—रातके समय देरतरीब मल निकल जाना, तलपेटमें काटने-को दर्द बराबर पखाना लगा ही रहना, पुराने आमाशयमे "(खासकर विकारके इलाज रनेपर)", रस-टक्स ३० महौषध है।

सल्फर ६, ३०—पाखाना होनेके बाद कुथन बढ हो जाये और खुन-मिले ऑव स न होकर ऑव ऊपर सूतकी तरह खुनकी रखा दिखाई दे। रोग दुर्दम्य होने या किसी दवासे उपकार न होनेपर "सल्फर ३०" देना चाहिये। पुराने आमाशयकी यह एक उत्कृष्ट दवा है।

नाइट्रिक एसिड ६—पाखाना अमरुदा शाम (खासकर पटके भीतर जखम और पीब निकलनेपर) हर या खुन और ऑव-मिले दस्त, दरती कड़ी ऐंठ, पाखाना होनेके समय काँखना और पाखाना हो जानेके बाद कमजोरी मालूम होना। उपदंशके रोगीके लिये आ रिह ने पहले बहुत ज्यादा पारदसे बनी दवाएँ खायी हैं, उनके लिये नाइट्रिक एसिड बहुत फायदमन्द है।

वेक्सिनिनम माटिलस θ (५ मात्रा ८ से १२ बुन्द सवेरे-शाम)—नये और बहुत पुराने आमाशय—दोनो तरहकी बीमारियोंमें फायदा करता है। यह दवा प्रयोग कर-पर आतें न सड़नवाली (aseptic) अवस्थाम रहती हैं और शोषण-क्रिया (absorption) जोर रोग फौरन बन्द होता है।

एपिस ३, जेल्सूमेन ६, चायना ६, प्रायोनिया ३, हाइड्रैस्टिस १x, लैकेसिस ६, पल्सम ६, विरट्रम-ऐल्ब ६, ६, जिंक ६ प्रभृति दवाएँ बीच-बीचमें काममे लायी जा सकती हैं। "अतिसार" रोगीकी दवाएँ देखिये। काँच बाहर होनेपर "काँच निकलना" अध्याय देखिये।

पथ्यादि—रोगीका कमरा और बिछावन हमेशा साफ-सुथरा रखना चाहिये और दस्त, कै वगैरह दूर फेंकना चाहिये। इस रोगमें रोगी बहुत कमजोर हो जाता है, इसलिये, लघुपाक और बलकारक पथ्य देना उचित है। रक्तातिसारके साथ मलेरिया और रक्त-स्वल्पताका उपसर्ग रहनेपर, कुलेकाँटा नामक सागका शोरबा बहुत फायदेमन्द है। इसे खानेसे खूनके लाल कण बढ़ जाते हैं और आमाशय तथा मैलेरिया बुखार बन्द हो जाया करता है।

कसेरू, मैंगोस्टीन, कच्चा सिंघाड़ा, आरारूट, मठा, धनके लावेका माँड़, सिंगी या माँगुर मछली या गन्दभादुलियाका शोरबा, बार्ली, कच्चे बेलका सिझाया हुआ अंश, थोड़ा बेदनाका रस, बकरीका दूध और (बुखार कम रहनेपर) भातका माँड़ देना चाहिये। नींबू, अनारस, खट्टा अंगूर, दही वगैरह खट्टी (acid) चीजें, नये आमाशयमें मना है; परन्तु रोग बहुत दिनोंतक भोगनेपर, खूब पुरानी इमली एक पोर और मिश्री एक टुकड़ा रातमें पानीके साथ, भिगोकर दूसरे दिन सवेरे (कई हफ्तेतक) सेवन करनेसे फायदा होता है। समूचा पेट फलानेलसे ढँके रखना चाहिये। जबतक रोग अच्छी तरह आराम न हो जाये, तबतक खाटसे न उठना चाहिये। गिरीडीह, छोटा नागपुर, जिन स्थानोंकी मिट्टीमें लोहा (iron) या अबरख ज्यादा हों, उन जगहोंमें आमाशयके रोगीको न रखना चाहिये (पुरानी बीमारीमें) भोजनके तुरन्त बाद ही दो-एक बून्द काड-लिवर आयल सेवन करना अच्छा है और रोगीके दुबले हो जानेपर, यह तेल पेटपर मलना उत्तम है। यदि कहीं होमियोपैथिक दवा मिलनेकी सुविधा न हो और रोगीका मलान्त्र बाहर निकल पड़े, पाखानेके साथ बहुत-सा खून निकलता हो, तो एक ड्राम पानीके साथ कन्दुरीके पत्तेका रस सेवन करना चाहिये।

आमाशयका जख्म
(Ulcer of the Stomach)

पाकस्थली और छातीकी हड्डीके ठीक नीचे जलनकी तरह दर्द और खानेके बाद दर्दका बढ़ना, कै हो जानेके बाद दर्दका बन्द होना, इस रोगका प्रधान लक्षण है। यदि चित सोनेसे दर्द कम होता हो, तो समझना चाहिये कि आमाशयके ठीक सामनेवाले हिस्सेमें जख्म हुआ है। यदि पट सोनेसे दर्द कम हो जाता हो, तो समझना चाहिये कि "पीछेकी ओर" जख्म हुआ है। मल जमा होना, अजीर्ण, रजकी गड़बड़ी, रक्त-स्वल्पता, खूनकी कै वगैरह उपसर्गोंके साथ यह बीमारी हमेशा दिखाई देती है। ज्यादातर औरतोंको ही यह बीमारी हुआ करती है। आजकल इस रोगका सच्चा कारण-तत्व मालूम न हो सका।

चिकित्सा—युरेनियम नाइट्रिकम ३x विचूर्ण (छः घण्टेका अन्तर देकर, दो ग्रेनकी मात्राके हिसाब) इसकी प्रधान दवा है (खासकर पाकाशयके निचले भागके जख्म होनेपर) कैलि-बाई ३x विचूर्ण (मात्रा दो ग्रेन, छः घण्टेका अन्तर देकर), फल खानेके बाद जख्म होनेपर या पाकाशयके सामनेवाले भागमें जख्म होनेपर। आर्ज-नाइट्रिक ६, आर्स ३, क्रियोजोट ६, हाइड्रैस्टिस २x, लैकेसिस ६, आर्निथोगैलम ऐम्बेलेटम (एक ही बार, एक बुन्द खाना चाहिये) बीच-बीचमें आवश्यक हो सकते हैं।

पथ्यादि—दूध, मठा, बहुत थोड़ा बरफ और सोडा-वाटर, कभी-कभी बीच-बीचमें ऐट्रोपाइनम-सल्फ ४x दो ग्रेनकी मात्राके हिसाबसे सेवन करना चाहिये। तम्बाकूका सेवन एकदम छोड़ देना और पूरी तरह विश्राम लेना चाहिये।

हिचकी (Hiccough)

पेट और कलेजेकी व्यंवधायक-पेशी (उदर-वक्ष-व्यवधायक-पेशी diaphragm) के और साँस-नलीके दरवाजे (glottis) में क्षणिक आक्षेपके साथ साँस लेनेमें कर्कश शब्द होनेका नाम "हिचकी" है। यह हमेशा किसी तेज बीमारीका भयावह लक्षण है। पाकाशयकी बीमारी या किसी दूसरे कारणसे एकाएक छाती और पेटकी व्यवधायक-पेशी सिकुड़ जाती है। इस तरह सिकुड़नेके कारण हवा जोरसे फेफड़ेके भीतर घुसती है। इस कारणसे स्वरयंत्रके मुँहपर हिचकी पैदा होती है। पाचन-यंत्रके गड़बड़ीके कारण हिचकी, हिस्टीरियाकी हिचकी या बच्चोंकी हिचकी, इतनी चिन्ताकी बात नहीं है ; परन्तु किसी कड़ी बीमारीमें बराबर हिचकी आनेपर नाड़ी लोप हो जाती है और रोगी मर जा सकता है।

चिकित्सा—सब तरहकी हिचकियोंमें "जिन्सेङ्ग" θ का प्रयोग किया जा सकता है। इससे अगर फायदा न हो, तो "नक्स-वोमिका" ३ (खासकर भोजनके पहले अगर हिचकी आती हो) या "साइक्लामेन" ३ भी व्यवहार किया जा सकता है। क्यूप्रम ६ या "क्यूप्रम-आर्स" ६ हिचकीकी बहुत बढ़िया दवा है (खासकर साँसमें कष्ट, कै, डकार आना, पानी पीनेके बाद हिचकीका बन्द होना लक्षणमें)। "काक्युलस" ६, हिचकी या डकार आना और खोंचा मारनेकी तरह दर्द होना। खाने-पीने या बीड़ी, सिगरेट वगैरह पीनेके बाद हिचकी आती हो, तो इग्नेशिया ३। लगातार तेज हिचकी (खासकर मैलेरियाके बीमारीकी), नेट्रम-म्यूर ६। आक्षेप और जोरकी आवाजके साथ हिचकी आनेपर साइक्यूटा ३। जीभ एकदम बाहर निकल जाये और फिर सिकुड़कर भीतर चली जाये, तो समझना चाहिये कि शारीरिक यंत्र पर्यायक्रमसे

सिकुड़ते और शिथिल होते हैं। ऐसी अवस्थामें डाक्टर साल्जर "लाइकोपोडियम" ३० व्यवहारकर, बहुत कुछ फायदा देख चुके हैं।

डाक्टर सरकार हैजेकी हिचकीमें इन कई दवाओंसे बहुत कुछ फायदा देख चुके हैं :—बेलेडोना, साइक्यूटा, हायोसायमस, कार्बो-वेज, ग्लोनस, पल्स, स्टैफि, फास्फो, इग्ने, स्ल्फर।

डाक्टर साल्जर लाइको, कुप्रम-ऐसेट, साइक्यूटा, बेलेडोना, नक्स वोमिका, लक्षणके मुताबिक काममें लानेकी सलाह देते हैं। ये सभी दवाएँ ६—३० शक्तिकी व्यवहार की जा सकती हैं। ज्यादा हाल जाननेके लिये, हमारी प्रकाशित "हैजा-चिकित्सा" पुस्तक देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—टोटकेकी दवासे भी कभी-कभी फायदा होता है। ताम्बेके बकरा गुदा या कच्चे डाबका पानी और ताजे पोपाके भीतरका पका गुदा वगैरह चीजारी भी कभी-कभी तुरन्त फायदा होता है। रोगीको हल्का पथ्य देना चाहिये।

अगर पाकाशयकी गड़बड़ीकी वजहसे कभी-कभी बहुत दिन (कई हफ्ते या महीने) तक हिचकी जाती रहे और उस समय पेटमें दर्द मालूम होता हो, तो ऐसी अवस्थामें ऊपरसे एक मजबूत बन्धन (बैण्डेज) बाँध देनेसे बहुत कुछ फायदा हो जाता है। थोड़ा पानी या दूध पिला देनेसे बच्चोंकी हिचकी सहजमें ही बन्द हो जाता है।

बवासीर (अर्श)

(Piles or Hæmorrhoids)

इस रोगमें मलद्वारकी शिराएँ फूलती और बढ़ जाती हैं। इन बढ़ी हुई शिराओंको "बलि या मसा" कहते हैं। "बलि" (मसा) देखनेमें मटर-जैसी होती है। कभी सिर्फ एक मसा दिखाई देता है, तो कभी कई मसे, गुच्छे, साथ एक जुड़े अंगूरके गुच्छेका आकार जैसे मालूम होते

हैं। यदि यह बलि मलद्वारके बाहर रहे, तो इसे "बाहिर्बलि" कहते हैं और भीतरकी ओर रहे, तो वह "अन्तर्बलि" कहलाता है। ये सभी बलियां या मसे फटकर इनसे खून बहता है (खूनी बवासीर) ; एक तरहकी बलि और भी होती है, जिनसे खून नहीं बहता है, इसे "अन्धबलि" (बादी बवासीर) कहते हैं। मलद्वारके पास कुटकुटाना, जलन होना, काँटा गड़नेकी तरह दर्द, कब्जियत, बार-बार पाखाना होनेकी इच्छा वगैरह इस बीमारीके लक्षण हैं। बार-बार जुलाब लेना, घुड़सवारी करना, उत्तेजक पदार्थ खाना या पीना, शराब पीना, रातमें जागना, घी और मसालेदार चीजें खाना या बिना मेहनतके दिन काटना, पेटमें ज्यादा वायु जमा होना, गर्भावस्थामें कसकर कमर बांधना या कपड़ा पहनना, कब्जियत, यकृतके रोग, पाखाना-पेशाबके समय कांखना, ठण्डे पत्थर, भींगी घास या खूब मुलायम चीजपर बराबर बैठे रहना आदि कारणोंसे यह बीमारी होती है। वसन्त और बरसातमें यह बीमारी ज्यादा बढ़ती है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) मेहनत न करने या ज्यादा भोग-विलाससे पैदा हुई बवासीरमें—नक्स-वोम, सल्फ, पोडो।

(२) कब्जियतके कारण अर्शमें—इस्क्युलस, नक्स-वोम, सल्फ, कालिन्सो, कार्बो-वेज।

(३) गर्भावस्थाके अर्शमें—कालिन्सो, नक्स-वोम, ऐलो।

(४) खूनी मसावाले बवासीरमें—ऐकोन (ज्यादा खून जानेपर), सल्फर, हैमा (काला खून), इस्क्यूलस, ऐलो, चायना (बहुत खून जानेपर सेवन करना चाहिये)।

(५) बादी बवासीर (अन्धबलि) में—ऐकोन (ज्यादा दर्द), कोलिन्स (जलन और खुजली), नक्स-वोम, सल्फ।

(६) सफेद (आँव निकलनेवाले) बवासीरमें—मर्क (पानी लगनेकी तरह खाल उधड़नेके लक्षणमें); ऐकोन (सफेद आँव निकलने- वाली बवासीरमें)।

(७) बवासीर रुक जानेपर—सल्फर, नक्स।

(८) पुरानी बवासीरमें—सल्फर, आर्स (दुबले रोगियोंके लिये), फेरम (धातु-विकार होनेपर); नाइट्रिक-एसिड, हिपर- सल्फर।

कुछ प्रधान दवाओंके लक्षण

नक्स-वोमिका १x, ३०—कभी-कभी पतले दस्त, पाखाना होते वक्त मसा बाहर निकल आना; कमरमें दर्द, पेशाब होते वक्त तकलीफ; ज्यादा देरतक सोचने और भोजनके बाद रोगका बढ़ना; जो किसी तरहकी मेहनत नहीं करते, बल्कि ज्यादा घी और मसालेदार चीजें खाते हैं या ज्यादा शराब पीते हैं, उनके लिये नक्स-वोम ज्यादा फायदे- मन्द है। कब्जियत; पाखाना लगता है, पर बहुत कुछ कोशिश करनेपर भी पाखाना बिलकुल ही नहीं होता।

सल्फर ३०—बवासीरकी (खासकर पुरानी बवासीरकी) एक उत्कृष्ट दवा है। बहुत कब्जियत, छोटी-छोटी गाठोंमें खून लिपटा हुआ मल (खून रहे या नाभी रहे); मलद्वारमें जलन और कुटकुटा- हट; बार-बार पाखाना जानेकी इच्छा, पर बिलकुल ही पाखाना न होना, अनुबलि, खून मिले पतले दस्त।

शामको—सूर्यास्तके समय "नक्स-वोमिका ३०" और सवेरे "सल्फर ३०" प्रयोगकर बहुतसे अच्छे डाक्टर अर्श रोग आराम हुआ बताते हैं।

लैकेसिस ६, ३० या सिपिया ३०—मसा देखनेमें प्याजकी तरह या मसा निकलकर मलद्वारमें ठेपी जैसा बैठ जाना।

इस्क्युलस ३—सेवन (और इस्क्युलसका मलहम लगाना)—थोड़ा खुन निकलना ; गुदा-स्थान, पीठ और कमरमें दर्द ; कब्जियत ; रोगीको ऐसा मालूम होता है, मानो गुदा-स्थानमें धारदार कांटी अटकी हुई है ।

ऐकोन् ३x—सेवन (और ऐकोनका ही धावन लगाना) ; बुखारके साथ बेचैनी ; तेज दर्द ; गर्मी मालूम होना, श्लेष्मा या खून निकलना ।

आर्स ३x, ६—गर्मी मालूम होना ; ऐसा मालूम होना, मानो अशके भीतरसे गर्म सुई गड़ रही है ; पीठमें जोड़का दर्द ; मसेका बाहर निकलना ; कमजोरी या सुस्ती ।

कालिन्सोनिया २x—कब्जियतके साथ ववासीर, पुराना दुरारोग्य रोग ; मलद्वार खुजलाता है ; खूनी या बादी मसा । मलद्वारमें भार मालूम होना ।

अगर कालिन्सोनियासे फायदा न हो, तो "ऐलुमिनियम" का प्रयोग करनेसे अकसर लाभ होता है ।

ऐण्टिम-क्रूड ६—अण्डेके सफेद अंशकी तरह श्लेष्मा निकलना । पाखाना होनेके समय बहुत तकलीफ ; ऐसा मालूम होता है, मानो मलद्वारमें जखम हो गया है, कड़ा मल, रक्त-स्राव ।

रैटानहिया ३—बहुत खुजली । पाखाना होनेके बाद मलद्वारमें बहुत देरतक जलन और दर्द हुआ करता है ; ऐसा मालूम होता है, मानो मलद्वार आगमें जल गया है या कोई छुरीसे खरोंचता है ; ठण्डा पानी लगानेपर कुछ देरतक जलन घटी रहती है ; बहुत चेष्टा करनेपर पाखाना होता है । मसा बाहर निकल आता है ; मलद्वारमें फटा घाव, ऐसा मालूम होता है, कि मलद्वारमें काँचके टुकड़े भरे हैं ।

ग्रैफाइटिस ६—गांठ-गांठ बहुत बड़ा लेंड़ (बाहर निकलते समय तकलीफ) । मसा बहुत बड़ा बतौड़ेकी तरह, दबाकर बैठनेपर दर्द होता है । लम्बे-लम्बे डेगोंसे चलनेपर ऐसा मालूम होता है, मानो

कालिन्सानिया—इन चार दवाओंका मदर टिंचर एक साथ मिलाकर, एक वत्तीमें डालकर गुह्यद्वारमें प्रवेश कराना चाहिये, इससे बहुत फायदा होता है। छोटा नागपुर, गिरीडीह वगैरह जिन जगहोंकी मिट्टीमें लोहा ज्यादा है, वह इस रोगियोंके लिये फायदेकी जगह नहीं है। पुरी, वालेश्वर, वल्टेयर वगैरह समुद्रके किनारेकी जगहें फायदेकी हैं।

काँच निकलना

(Prolapsus Recti and Prolapsus Ani)

बड़ी आँतके निचले भागका नाम "सरलांत्र (rectum) है और सरलांत्रके सबसे निचले अंशका "गुह्यद्वार" या "मलद्वार" (anus) कहते हैं। इसी मलद्वारसे सरलांत्र (काँच) के बाहर निकल आनेका नाम "काँच निकलना" है। हमेशा एकसे लेकर ६ इञ्चतक काँच बाहर निकलती है। यदि समूची श्लैष्मिक-झिल्ली बाहर निकल आये, तो उसे "गुह्यद्वार निकलना" (prolapsus ani) कहते हैं और मलद्वारका चहार-दीवारके सब अंशके बाहर निकलनेका नाम "सरलांत्र-निर्गमन" (prolapsus recti) है। क्रिमि, बवासीर, मलद्वारकी सुजली, उदभेदका बैठ जाना, पेटमें मल जमा होना, अफीम खाना, आमाशय, उदरामय, कब्जियत, पाखानेके समय काँखना वगैरह कारणोंसे यह रोग होता है (खासकर बच्चा, बूढ़ों और गर्भिणियोंको होता है), मूत्राशयकी पथरी, मुष्काशयी-ग्रन्थिका बढ़ना वगैरह कारणोंसे शरीर खराब हो जानेपर काँच बाहर निकल आती है। बवासीरके साथ कभी कभी गुह्यद्वार निकलता है और बच्चोंके रक्तामाशय वगैरह रोगमें साधारणतः काँच बाहर निकल आया करती है।

चिकित्सा—एलो 0, ३०—खूनके साथ पतले दस्त, सवेरे सोकर उठनेपर और भोजनके बाद पाखाना लग जाना।

इग्नेशिया ३—पाखानेका वेग होता है, परन्तु कोशिश करनेपर भी पाखाना नहीं होता ; कूथन, बहुत तकलीफसे पाखाना होता है, खुजली रहती है।

पोडोफाइलम ६—पतले दस्त (खासकर सवेरे), पाखाना होनेके बाद ही काँच निकलना, कूथन, बदबूदार दस्त, दाँत निकलनेके समय काँच बाहर निकलना।

नक्स-वोमिका ३—कब्जियतके साथ काँच निकलना, काँखना लक्षण रहनेपर।

मर्क-वाइवस ३—काँच निकलनेके साथ खुजली और पीले रंगका श्लेष्मा निकलना। अतिसार, पेट कड़ा और फूला।

लाइको ६, ३० या सल्फर ३०—सभी दवाओंसे अगर फायदा न हो।

गैम्बोजिया—पतले दस्त, मलका रंग हरा या पीला, जलन-जैसा दर्द, वेग ज्यादा रहनेपर भी थोड़े अंशमें कड़ा पाखाना होना।

फेरम-फास—बच्चोंके लिये।

एसिड-म्यूर, रैटानहिया, आर्निका θ, फास्फोरस ६ (खासकर बच्चोंके काँच बहार निकलनेपर)। कैल्के, सिपिया, आर्स, ब्रायो, इस्क्युलस वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। "सेफालेण्ड्रा इण्डिका" इसकी बढ़िया दवा है।

आनुसंगिक चिकित्सा—काँखना मना है। बच्चे खड़े होकर बिना काँखे ही मल त्याग करें ; हल्का, पर पुष्टिकर भोजन देना चाहिये। आँत बाहर निकल आनेपर, उसे खूब ठण्डे पानीसे तरकर, भीतर डाल देना चाहिये। काँच अपनी जगह घुस जानेपर, एक कपड़ेकी गोली बना, गुह्यद्वारपर रख, दूसरे कपड़ेसे उसे कस देना चाहिये। तीन हिस्सा तेलकूचा पत्तेका रस, एक भाग सुरासारके साथ मिलाकर कभी-कभी रोगीको खिला देनेसे फायदा होता है।

खास-खास लक्षणोंमें कास्टिकम ६, चायना ३०, कैल्केरिया-कार्ब ३०, नक्स-वोमिका ३०, नाइट्रिक-एसिड ६, ग्रैफाइटिस ६, इस्क्युलस ३, रैटानहिया ३ की जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—प्रदाहित अंगपर खूब गर्म सेंक देना फायदेमन्द है। मछली या मास खाना है ("अर्श या बवासीर" रोगके "पथ्य" देखिये)। पौष्टिक भोजन देना चाहिये।

मलद्वारका फट जाना
(Fissure In Ano)

कब्जियतके कारण पाखाना होते वक्त काँखने या जोर देनेके कारण मलद्वारका मास पेशी या उसके चारों ओरकी श्लैष्मिक झिल्ली फट जाती है। इसी वजहसे पाखानाके समय या पीछे बहुत जलन मालूम होती है और पाखानेमें खूनकी लकीर-सी पड़ी दिखाई देती है। इस तरह फटनेके वक्त रोगीको बहुत ज्यादा तकलीफ होती, यहाँतक कि बेहोशी भी आ जाती है। ऐसी तकलीफ तीन-चार घण्टोंतक रह सकती है।

चिकित्सा—ग्रैफाइटिस ६—फटने-जैसा दर्द, श्लेष्माके साथ थोड़ा, कड़ा पाखाना होना। बवासीरके साथ मलद्वारका फटना या फटा घाव।

नाइट्रिक एसिड ६, ३०—पाखाना होते समय और पीछे काटनेकी तरह तेज दर्द, कड़ा मल निकलना।

इस्क्युलस ३—मलद्वारमें जलन करनेवाला जख्म, सूखा और कड़ा गाँठें-मिला दस्त होना, पीठमें दर्द।

रैटानहिया ३—पाखाना होनेके बाद बहुत जलन मालूम होना (पहले ज्यादा), काटनेकी तरह दर्द होना, पतले दस्त या कब्जियत।

हैमामेलिस १ (रक्त-स्रावके लक्षणमें) और आर्स ३ (रक्त-स्राव या दर्द रहनेके लक्षणमें) की भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—पाखाना जानेके कुछ ही पहले मलद्वारमें तेल या घी लगानेसे, मल सहजमें ही निकल सकता है। कब्जियतमें खूब गर्म पानीकी पिचकारी लेना; जरूरत पड़नेपर कैलेण्डुला या हैमामेलिस अथवा इस्क्युलसका मलहम लगाना, कब्जियत दूर करनेवाले फल-मूल (जैसे—पक्का पपीता, पक्का केला, अंगूर, अनारस, नींबू, किशमिश) वगैरह खाना चाहिये। "अर्श" रोगीकी दवाएँ और पथ्य आदि देखिये।

मलद्वार और बाहरी जननेन्द्रियमें खुजली

(Pruritus-Ani and Pruritus-Pudendi)

बवासीर, क्रिमि, रजोरोध, एकाएक किसी चर्म रोग या स्राव का रुक जाना, मल-संचय, अफीम या क्लोरलका बराबर सेवन करना, यकृतका दोष वगैरह कारणोंसे मलद्वार कुटकुटाता सुरसुराता है और खुजली होती है।

चिकित्सा—रेडियम ब्रोमेटम ३० प्रति सप्ताह एक मात्रा सेवन करना चाहिये। अगर इससे फायदा न हो, तो मूल रोग (जैसे—क्रिमिसे पैदा हुई खुजलीमें साइना या टियुक्रियम) निश्चयकर उसका प्रतिकार करना चाहिये। सल्फर ३०, लाइको ३०, पेट्रोलियम ३०, आर्स ३० और नेट्रम-म्यूर १२x विचूर्ण मलद्वारकी खुजलीकी उत्तम दवाएँ हैं। कैडमियम, एम्ब्रा, कार्बो-वेज, कालिन्सोनिया, लाइको कोनायम—बाहरी संगमेन्द्रियकी खुजलीकी प्रधान दवाएँ हैं।

ओपियम, नक्स-वोम, मर्क, इग्नेशिया, एसिड-नाइट्रिक, एल्यूमिना, एण्टिम-क्रूड, डलिकस वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी आवश्यक होती

है। बोरेक्स, कार्बोलिक-एसिड, मर्क्यूरियस, कैलेण्डुला, इस्क्युलस, हैमामेलिस या कार्बस्कम प्रभृति दवाओंका मलहम या धावनके बाहरी प्रयोगसे भी कभी-कभी फायदा होता है।

क्रिमि (Worms)

क्रिमि या परागपुष्ट कड़े शरीरके भीतर मिलते हैं। तीन तरहकी क्रिमि हमेशा मनुष्य-शरीरकी आँतें या पाकाशयमें दिखाई देती है" —
(१) "छोटी-छोटी सूतकी तरह किमि" (small thead worms),
(२) "गोल लम्बी केंचुएकी तरह किमि" (long round worms),
(३) "खूब लम्बे फीतेकी तरह किमि" (tape worms)। कभी-कभी नाक या कानके छेदमें भी किमि मौजूद रहती है।

सूतकी तरह क्रिमि—ये किमियाँ दल बाँधकर मलद्वारके पास रहती हैं। कभी मूत्रनली या योनि-द्वारमें भी चली जाती है। इसी कारणसे इन स्थानोंमें खुजली होती है, जलन होती है और धातु निकलता है। छोटी किमिका 'साधारण लक्षण' है—नाकका अगला भाग या गुह्यद्वारमें खुजली, श्वास-प्रश्वासमें दुर्गन्ध, पाखाना होते वक्त बेहद तकलीफ, गुह्यद्वारमें बराबर खुजली रहनेके कारण नींद न होना, नींदमें दाँत कड़मड़ाना। छोटी किमिकी लम्बाई चौथाई इञ्चसे एक इञ्चतक होती है।

कचुएकी तरह लम्बे क्रिमि—यह छोटी आँतमें रहती है, देखनेमें सफेद, कभी पाकस्थलीकी राहसे मुँहमें आकर कैके साथ निकलती है; कभी पाखानेके साथ बाहर निकलती है। "साधारण लक्षण" —पेट फूलना और पेटमें बहुत दर्द, दाँत कड़मड़ाना, नींदमें एकाएक चीख उठना, नाकके अगले भाग और गुदामें खुजली, पेट कड़ा और गर्म, शरीर दुबला, चेहरा पीला, आँखोंकी पुतली फैली, आँव-

मिला मल, कभी बहुत भूख, कभी अरूचि, साँसमें बदबू, बेहोशी, कभी मिचली, मुँहमें बराबर पानी भर आना। इसकी लम्बाई ४ से १२ इञ्चतक होती है।

फीतेकी तरह लम्बी क्रिमी—सफेद, चिप्टी, गांठ-गांठ। लम्बाई १० फीटसे २०० फीटतक। यह भी छोटी आँतमें रहती है। मनुष्यके शरीरमें एकसे ज्यादा नहीं रहती। मलके साथ उसका कुछ अंश टुकड़े-टुकड़े होकर निकलता है।

कच्चे फल-मूल, ज्यादा पके केले, सड़ी मछली, ज्यादा मिठा खाना, गन्दी हालतमें रहना वगैरह कारणोंसे पेटमें किमि पैदा होती है। इनके अलावा कान या नाकसे स्राव वगैरह होनेकी वजहसे, नींदमें उसमें मक्खी घुसकर अण्डा दे देती है। यही अंडा फूटकर नाक या कानमें कीड़ा पैदा कर देती है। इस किमिका कीड़ा नाक या कानके छेदका क्षय किया करता है और रोज दो या इससे ज्यादा निकला करता है। कीड़े निकलते ही समझना चाहिये, कि वहाँ किमि पैदा हो गयी है। बच्चोंके दूसरे रोगोंके अकसर किमि मौंजूद रहती है।

चिकित्सा—सिना २x, २००—आँखकी पुतली फैली, नींदमें एकाएक चौंक उठना; बेहोशी; कै या मिचल; हिचकी; नाकका अगला भाग खुजलाना; मलद्वारमें सुरसुरी; पेटमें ऐंठन; पेशाब थोड़ा और दूधकी तरह; "राक्षसी भूख"। सिना सब तरहकी किमिकी बढ़िया दवा है। इससे फायदा न हो, तो—

स्टैनम ६, ३०—व्यवहार करना चाहिये। इस दवाके खानेसे शरीरमें किमि नहीं रहती।

टियुक्रियम १x—गुह्यद्वारमें तेज जलन; स्नायवीय उत्तेजनाके कारण सरमें चक्कर और नींद न आना। यदि "सूतकी तरह किमि" हो, तो टियुक्रियम फायदा करता है।

सैण्टोनाइन १x विचूर्ण—सब तरहकी क्रिमिमें यह फायदा करता है। पेटके दर्दके लक्षणमें।

स्पाइजिलिया ३—छोटी क्रिमिकी अच्छी दवा है। मलद्वारमें खुजली होती है। मलके साथ क्रिमि निकलती हैं, मल कड़ा, भेंड़के मलकी तरह।

सल्फर ३०—क्रिमिसे उत्पन्न शूल-वेदनामें अथवा दूसरी दवा खानेके कारण बीमारी कुछ घट जानेपर।

फीतेकी तरह लम्बे क्रिमिमें—फिलिक्स-मास θ, मर्क-कोर ३x क्यूप्रम-एसेटिकम ३ या स्टैनम ३ क्रमका विचूर्ण, "फीतेकी" तरह लम्बी क्रिमि और "केंचुए" की तरह क्रिमिको नष्ट करता है।

केंचुएकी तरह क्रिमिके लिये—सिना २x, २००, सैण्टोनाइन २x विचूर्ण।

सूतकी तरह महीन क्रिमिके लिये—सैण्टोनाइन १x विचूर्ण, टियुक्रियम १x।

कान और नाककी क्रिमिके लिये—थोड़े पानीमें बहुत थोड़ा चूर्ण मिलाकर उससे नाक या कानमें पिचकारी देनी चाहिये।

गोल क्रिमि (Round worms) के लिये—चेनोपोडियम तेल, फी मात्रा १० बून्द दो घण्टेके अन्तरसे तीन मात्राएँ देनी चाहिये। इतनेमें ही फायदा मालूम होने लगता है।

डाक्टर ह्यू ज और टेस्टका कहना है, कि लाइकोपोडियम ३०, दो दिनोंतक, विरेट्रम १२, चार दिन और इपिकाक ६, सात दिनोंतक सेवन करानेसे क्रिमि नष्ट हो जाती है। क्रिमि-धातुवाले बच्चोंके लिये कैल्केरिया ३०।

डाक्टर शेड कहते हैं, कि अन्न खानेके पहले वायोला-ओडोरेटा ६ और सोनेके पूर्व रातमें स्टैनम ३० सेवन करनेसे "पिच्छिल या आँव-भरा दस्तवाला क्रिमि-धातु-दोष" अच्छा हो जाता है।

नियम—एक काँचके बर्त्तनमें या पथरीमें कच्चे पपीतेकी लसी एक चम्मच और शुद्ध शहद एक चम्मच, अच्छी तरह मिलाकर, उसमें पाँच चम्मच खूब गर्म पानी मिला देना चाहिये। दो घण्टे बाद शुद्ध रेंड़ीका तेल (refined castor oil) और नींबूके रसके साथ तीन दिनोंतक सेवन करनेसे क्रिमि नष्ट हो जाती है। सहजनेकी तरकारी रोज दोनों शाम खाना बहुत फायदेमन्द है।

एक बोतल पानीमें थोड़ा-सा नमक मिलाकर रोज ३-४ बार सरलांत्रमें पिचकारी देनेसे फायदा होता है। ताकत देनेवाली हल्की चीजें खिलानी चाहियें। मीठे पदार्थ, कच्चे फल-मूल, गदला पानी, सड़ी मछली या मांस खाना मना है ; हमेशा साफ-सुथरे रहना चाहिये। तीती, नमकीन और तेलसे पकी चीजें फायदेमन्द हैं। सेंधा नमकके साथ कागजी नींबूके १०-१२ पत्ते पीसकर खिलाना फायदेमन्द है।

कुछ दूसरे क्रिमि रोग

पहले अध्यायमें बतायी क्रिमिके अलावे और भी कई परांगपुष्ट क्रिमियाँ हैं। जैसे—"शोणित क्रिमि" वगैरह। शोणित क्रिमि भी बहुत तरहकी होती है :—(१) शोणित क्रिमि रोग, (२) श्लीपद, (३) तन्तु-खननकारी क्रिमि रोग, (४) वक-कीट रोग, (५) चिटका क्रिमि रोग और (६) दंश-मक्षिका-जनित रोग।

शोणित क्रिमि (Filariasis)

Fileria bancroft नामकी क्रिमि ही इस रोगकी खास वजह है। यह दुसरेके अंगमें पुष्ट तथा देखनेमें लम्बी, पतले सूतकी तरह रहती है। सूतकी तरह पतली यह क्रिमि चार हाथतक लम्बी और १/२० इञ्चतक

मोटी हो सकती है। रोगीके खून या लसिका-प्रवाहमे यह मौजूद रहती है।

इस क्रिमिके जीवाणु मच्छर द्वारा अच्छे-भले शरीरमें पहुँचते हैं अर्थात् जिन्हें यह रोग होता है, उनका खून चूसकर मच्छरके काटनेसे इसके अण्डे स्वस्थ शरीरमे पहुँचते और अपना वंश बढ़ाते हैं।

इस रोगमें कोई खास उपद्रव नही दिखाई देता, किसीकी ग्रन्थियाँ बढ़ी हुई (खासकर दोनो पैरोकी, जैसे—फीलपाया होना), किसीका पेशाव दूधको तरह और किसीके अण्डकोषमे रोग पैदा हो जाता है।

चिकित्सा—दवा खानेसे ज्यादा फायदा नही होता। जरूरत पड़नेपर नश्तर लगवाना पड़ता है। मच्छर न काटने पाये, इसका प्रवन्ध करना और जहाँ यह बीमारी फैलती दिखाई दे, वहाँ पानी गर्मकर पीना चाहिये।

श्लीपद या फीलपाया

(Elephantiasis)

ऊपरवाले अध्यायमे वताई हुई शोणित क्रिमि ही गर्म देशोमे श्लीपद रोग पैदा करनेका खास कारण है। जो ऐसे प्रदेश हैं, जहाँ न ज्यादा सर्दी, न गर्मी होती है, वहाँ दूसरे कारण (जैसे—प्रदाह, विसर्प, श्वेतपद, अकौता, लसिका-प्रणालीका रुकना) से भी यह बीमारी पैदा हो सकती है। "शोणित-क्रिमि" रोगकी दूसरी अवस्थामें हमेशा यह बिमारी होती देखी जाती है। रोगी अगके (जैसे—अण्डकोष आदिके) तन्तु बेढंगे तौरसे बढ़ जाते हैं; रक्तवहा-नाड़ी, पेशी, स्नायु या अस्थियोका आयतन बढ़ जाता है, जलवटिका पैदा हो जाती है और

उससे दूध या पानी की तरह रस निकलता है। अकौता, चमड़ेपर पीव-भरे घाव होना और बुखार वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा—हाइड्रोकोटाइल θ—१x का सेवन करना इसको सबसे बढ़िया दवा है। हाइड्रोकोटाइलसे फायदा न हो, तो एनाकार्डियम १x—३ सेवन करना चाहिये। एनोकार्डियमसे भी फायदा न हो, तो नश्तर लगवा देना आवश्यक हो सकता है। घाव, अकौता और ज्वर आदिको दबानेके लिये उन रोगोंकी दवाओंसे दवा चुन लेनी चाहिये।

तन्तु-खननकारी क्रिमि रोग
(Dracontiasis)

Dracunculus medinensis नामक एक जातिकी शोणित-क्रिमिसे यह बीमारी पैदा होती है। भारतीय द्वीपपुञ्ज और अफ्रिकामें इस रोगका प्रादुर्भाव हुआ था।

सम्भवतः पुरुष और स्त्री दोनों जातिकी क्रिमि किसी तरह पेटमें पहुँच जानेपर; स्त्री-क्रिमि गर्भवती होती है और पुरुष-क्रिमि मर जाती है तथा मनुष्यके शरीरसे बाहर निकल जाती है; परन्तु वह स्त्री-कीट-आँतोंको छेदकर, चमड़ा खोदती-खोदती घुटने और पैरके तलवेकी ओर बढ़ती है। यहाँतक कि छोटा-सा जख़म होता है और उसी जखमसे उसके भ्रूण निकला करते हैं। जब भ्रूण निकल जाते हैं, तब वह स्त्री-कीट भी आप-से-आप निकल जाता है।

चिकित्सा—टियुक्रियम और हींग खानेसे फायदा हो सकता है। जखमपर पानी ढालनेसे भी क्रिमि निकल जाती है। कभी-कभी वह आप ही निकलती है, उस समय एक महीन कांटीसे इसे इस तरह घुमाकर निकाल डालना चाहिये कि उसका कुछ अंश टूटकर शरीरमें न रह जाये।

वक्र-कीट (Hook worm)

भारतवर्ष या दूसरे-दूसरे उष्ण-प्रधान देशोंके अधिवासियोंकी छोटी आँतमें सूतकी तरह एक प्रकारकी छोटी कृमि होती है और उसके कोमल चमड़ेकी भीतर-ही-भीतर खाया करती है। इस परागपुष्ट कीटकी लम्बाई आध इञ्चसे ज्यादा नहीं होती और मोटाई केशके बराबर। इनके मांथेमें हुकके आकारके "टेढ़े" दो दाँत होते हैं, इसलिये इन्हें "हुक-वर्मस" कहते हैं। त्वचा, खासकर पैरोंके तलवे और पैरोंकी अंगुलियोंका चमड़ा छेदकर या खाये हुए पदार्थके संयोगसे किसी तरह यह कीड़ा शरीरमें घुसकर दाँतोंसे छोटी आँतका ऊपरी अंश पकड़ रखता है और पिशाचकी तरह मनुष्यका रक्त चूसता हुआ बढ़ता है। इसीलिये इस रोगको सभी मनुष्योंको "वक्र-कीट या हुक-वर्मजनित रोग" हुआ करते हैं। १०० में ८० आदमियोंको यही रोग होता है। खूनकी कमीका बराबर बढ़ते जाना (जैसे—दुबलापन, चेहरा पीला, पचनेकी शक्तिका कम होना, थकावट मालूम होना, आँखोंकी ज्योतिहीन होना, कलेजा धड़कना, पैर और पेटका फूलना, प्लीहा और यकृतका बढ़ना, हाथ-पैरोंमें फोड़े और खुजली होना, बच्चोंकी देह उचित परिमाणमें न बढ़ना) इस रोगका प्रधान लक्षण है। वक्र-कीटोंके अण्डे दिखाई देते हैं, इसीसे मालूम होता है कि यह रोग हो गया है।

चिकित्सा—फिलिक्स-मास, चेनोपोडियम, ऐन्थेलमेंटिकम तेल θ दस बूंदकर दो घण्टेका अन्तर देकर तीन मात्रा, एक दिन सिर्फ सेवन करनेपर कभी-कभी आशासे अधिक लाभ होता है।

इस उपायसे शरीरसे हुक-वर्म बाहर निकल जानेपर "रक्त-स्वल्पता" और कृमि रोगकी दवाएँ (जैसे—चायना, फेरम, एसिड-फास, स्टैनम, सिना, स्पाइजिलिया, टियुक्रियम वगैरह) लक्षणके अनुसार कुछ दिनोंतक प्रयोग करनी होगी।

चिपटी क्रिमि रोग (Bilharziasis)

Biharzia Hematobia नामके एक प्रकारके शोणित-कीटके कारण यह बीमारी पैदा होती है। अरब, फारस, पश्चिम भारत और मिश्र वगैरह देश इस रोगकी लीला-भूमि हैं। चर्म, मुख-विवर, पेशाबकी नली या किसी दूसरे उपायसे यह मनुष्यके शरीरमें घुस जाता है।

शायद पीनेके साथ इनके अण्डे रोगीके शरीरमें घुस जाते हैं, तो मूत्राशय, मलांत्र वगैरहपर रोगका हमला होता है।

मूत्राशयपर रोगका आक्रमण होनेपर—मूत्राशयमें उपदाह या दर्द, रक्त-स्राव, मूत्राशय-प्रदाह, मूत्र-पथरी (सरलांत्रपर रोग होनेपर), कूथन आम-रक्त निकलना, मलद्वार प्रदाह, जलन वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण है।

चिकित्सा—सरलांत्रमें रोग होनेपर—हाइड्रैस्टिस १x, रूटा २x, एसिड-नाई ३ फायदा करते है। मूत्राशयमें रोग होनेपर—कैनाबिस-सैट θ, हैमामेलिस θ, कैन्थरिस ३, टेरिबिन्थ ३x, ओसिमम ६, बेंओयिक-एसिड ३ वगैरहकी परीक्षा करनी चाहिये (बहुतसे स्थानोंमें नश्तर लगवानेकी भी जरूरत पड़ती है।

दंश-मक्षिका-जनित रोग (Jigger)

Pulex Penetrans नामकी मक्खी काटनेसे यह रोग पैदा होता है। इस रोगमें खासकर दोनों पैरोंपर रोगका आक्रमण होता है। मक्खी यदि चमड़ेको छेद दे या गड़हा कर दे, तो वहाँ जल-भरी फुन्सी या पीव-भरी फुन्सी और जलन होती है।

चिकित्सा—सुईसे कीड़े बाहर निकाल डालना और यह कीड़ा फिर शरीरमें प्रवेश न करे, इसलिये सुगन्धित उद्भिदका तेल (essential oils) व्यवहार करना चाहिये।

उड़नेवाले क्रिमि
(Flying worms)

लड़के-लड़कियोंके पतले दस्तके साथ कभी-कभी एक तरहका उड़नेवाला कीड़ा निकलता है। इसीका नाम "उड्डीन-कीट" है। किसी-किसी आमको काटनेके साथ ही जिस तरह उसमेंसे एक तरहका कीड़ा उड़ जाता है, ठीक उसी तरहका कीड़ा किसी-किसी लड़केको पाखाना होते ही उसमेंसे उड़ जाता है। फरीदपुर जिलेके वरम्भगज, कलमरिधा वगैरह स्थानोंमें आमकी फसलके समय (अर्थात् जेठ, आषाढ़ महीनेसे) दस्तके साथ एक तरहका कीड़ा दिखाई देता है। होमियोपैथिक चिकित्सक आर्सेनिक, चायना, कैल्के-कार्ब, नक्स-वोम, सल्फर, पोडो फाइलम, फास्फोरस वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार देकर फायदा उठाते हैं। विभिन्न जातिय "क्रिमि" और "वक्र-कीट" रोगकी दवाएँ देखिये।

यकृत-प्रदाह (Hepatitis)

पुराना मैलेरिया बुखार, पारा या क्विनाइनका अपव्यवहार, ज्यादा शराब पीना, गर्म जगहमें रहना वगैरह कारणोंसे यकृतसे खून जमा होकर प्रदाह होता है। यह प्रदाह पुराना हो जानेपर, यकृत बढ़ जाता है और कड़ा हो जाता है तथा धीरे-धीरे पेटकी दाहिनी ओर फैल जाता है। रोगकी नयी अवस्थामें पहले जाड़ा और कँपकँपीके साथ बुखार आता है; इसके बाद यकृतके ऊपर दर्द, सरमें दर्द, मुँहका स्वाद बिगड़ा, मैल-चढ़ी जीभ, भूख न लगना, कीचड़की तरह मैला या सफेद दस्त, दाहिने कन्धेमें थोड़ा-थोड़ा दर्द, दाहिने कोखमें भार मालूम होना, वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। पहली अवस्थामें रक्त-सचय बन्द हो जाता है, तो दूसरे लक्षण भी कम हो जाते हैं। यदि रक्त-सचय न दूर हो सके,

तो लक्षण सब धीरे-धीरे तेज हो जाते हैं। जैसे—दाहिने कन्धेमें तेज दर्द, जोरसे साँस छोड़ने या बाईं करवट सोने या खाँसनेसे दर्दका बढ़ना ; कै या मिचली ; पेशाब पीला ; कब्जियत या पतले दस्त आना वगैरह लक्षण प्रकट होकर यकृत और भी बढ़ जाता है। रोग जब आराम होनेकी ओर पलटता है, तब ये सब लक्षण कम हो जाते हैं ; न हो, तो धीरे-धीरे सर्दी और कँपकँपी (कम्प) के साथ रातमें तेज बुखार होकर, यकृतमें एक प्रकारका फोड़ा पककर रोगी मर जाता है। इसके अलावा, कभी-कभी यकृतका आकार छोटा हो जाता है और ऊपर शरीरमें शोथ होकर रोगी मर जाता है। यकृतमें रक्त-संचयके साथ कभी-कभी उसके कियामें विकार और स्राव रुक जाता है। भारतमें जगह-जगह क्रिमि-दोषके कारण भी यकृतमें स्थूल-कोष (hydatid disease) होते देखा है।

बहुतसे स्थानोंके अच्छे डाक्टरोंके मतसे "चेलिडोनियम" θ (मात्रा एकसे पाँच बून्द, दिनमें दो बार सेवन) सब तरहके यकृत रोगको बहुत अच्छी दवा है। यकृत और प्लीहाके बढ़ने और दर्दमें, कार्डुयस-मेरियानस" θ पाँच बून्दकर रोज सवेरे और सन्ध्याके समय सेवन करना लाभदायक है। यकृतमें कर्कट या कैन्सर होनेपर, "कालेस्टेरिनम" ३ विचूर्ण फायदा करता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—यकृत बढ़ जानेपर—मर्क, नाइट्रि-एसिड, ऐगरिकस, फास्फोरस, आर्स, चायना (मैलेरिया ज्वर आदिके बाद यकृत बढ़नेपर)।

यकृत-प्रदेशमें दर्द—ऐकोन (ठंण्डी सूखी हवा लगनेके कारण यकृत कड़ा हो जाये या उसमें दर्द होनेपर), ब्रायो (जलन या खींच रखने या डंक मारनेकी तरह या वात-रोगकी तरह दर्द), मर्क, सैबाडि।

पित्तकी अधिकताके उपसर्गमें—ब्रायो (पित्त या श्लेष्माकी कै करना), नक्स (उत्तेजक या ज्यादा मात्रामें खाने-पीनेके कारण या अर्श

नेट्रम-सल्फ ३०—छूने, हिलने-डुलने या लम्बी साँस लेनेपर यकृतमे दर्द मालूम होना ; पेट खाली रहनेपर नाभीके चारो ओर दर्द मालूम होना, भोजन करनेपर यह दर्द घट जाता है। डाक्टर सुसलरके मतसे सब तरहके यकृत रोगमे बहुत फायदा करता है।

पोडोफाइलम ३, ३०—(*यकृतके नये प्रदाहमें अगर कब्जियत रहे, तो ३य क्रम ; पुराने प्रदाहमे ३० क्रम*) यकृत बड़ा और उसके साथ ही पित्तकी कै होना ; पित्त-मिले पतले दस्त ; पाखाना होनेके समय काँच बाहर निकल जाना ; मुँहका स्वाद तीता , पेशाब काला ; चेहरा मलिन ; सरमे दर्द (खासकर सामने कपालमें बहुत दर्द)।

फास्फोरस ३, ३०—*पहले यकृत बड़ा और कड़ा हो जाता है, फिर धीरे-धीरे घटकर छोटा होता जाये और अतमें उदरी रोग हो जाये और कामला रोगमे भी इसका प्रयोग होता है।*

वार्बेरिस १x या १—यकृतमें रक्त-संचय होकर मूत्रनाली, उरु, कमर और पुट्ठे में दर्द होनेपर।

ब्रायोनिया ३x, ६, ३०—यकृत बड़ा और कड़ा ; सुई गड़नेकी तरह या जलनकी तरह दर्द, कसकर पकड़नेपर यह दर्द बढ़ जाता है ; कब्जियत (*पाखानेकी हाजत नहीं होती*) ; सरमें चक्कर, दाहिने कन्धेमें दर्द , आँखे और शरीरका चमड़ा कुछ पीला ; यकृतका नया प्रदाह। मर्क्यूरियसके साथ पर्यायक्रमसे इसका प्रयोगकर किसी-किसी चिकित्सकको फायदा होता दिखाई दिया है।

लाइकोपोडियम १२, ३०—वायुके कारण पेट फूला और *कब्जियत ; सदा दबावकी तरह दर्द ; दबाने और जोरसे साँस लेनेपर* दर्द बढ़ जाता है, दाहिनी बगल और पीठमें दर्द होता है।

लेप्टेण्ड्रा १x, ६—*जीभ पीली, पित्तकी कै, बहुत-सा, काला और सड़ी बदबूसे भरा दस्त ; मलका रग अलकतरेकी तरह काला, यकृतमे*

असह्य वेदना (यह दर्द पीठकी रीढ़तक फैल जाता है) ; कामलाके साथ कीचकी तरह दस्त; आमाशय रोग, बुखार, उदरी या शोथ ।

आर्सेनिक ३x, ३०—यकृत बड़ा ; शोथ, पेशाब थोड़ा ; जीवनी-शक्तिका घटना ; प्यास, नया या पुराना यकृत रोग ; जलन करनेवाला दर्द ; कै और पाखाना होनेके बाद ही सुस्त हो जाना ।

सिपिया ३०—जरायु और मूत्राशयके क्रियाके विकारके साथ यकृतका पुराना प्रदाह ; कमजोरी, अग्नमान्द्य और ग्रन्थि-वात ; शोथ ।

हिपर सल्फर ३x विचूर्ण, ३०—साँस लेने, खाँसने या हिलनेसे दर्दका बढ़ना (यह दर्द बढ़कर पुट्ठेतक जाता है); बवासीरकी बीमारीके साथ यकृतमें रक्त-संचयसे पैदा हुआ पुराना प्रदाह ; पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुआ यकृत रोग होनेपर ।

कार्डुयस मेरियानस θ (फी मात्रा एकसे पाँच बून्द)—यकृतके साथ प्लीहाका रोग ; कै या मिचली ; कभी-कभी मूत्र-ग्रन्थिमें कष्ट या शिरा फूली रहती है ।

आरम, नाइट्रिक-एसिड, हाइड्रैस्टिस, लोबेलिया-एरिनस, आर्निथोगेलम वगैरह दवाएँ भी कभी-कभी आवश्यक होती हैं ।

नियम—यकृतपर छोटे गायके बच्चेका कंडा गर्मकर सेंकना चाहिये । बुखार रहनेपर सागू, बार्ली, आरारूट इत्यादि लघु पथ्य देना चाहिये । रोगीका भोजन अच्छी तरह पकाया हुआ होना चाहिये । मांस, मछली, घीमें बनी चीजें खाना मना है । यकृत रोगमें विश्राम करना और पुरी, बालेश्वर आदि समुद्रके किनारेकी जगहोंमें रहना बहुत फायदेमन्द है ।

पांडु या कामला
(Jaundice)

यकृतकी क्रिया बिगड़ जानेकी वजहसे पित्तका शोषण अच्छी तरह न होनेके कारण रक्तमे मिल जाता है, इसीसे "पांडु-रोग" पैदा होता है। ऐयाशी, परिश्रम न करना, मानसिक उद्वेग या पित्त-पथरी रोग होना, अधिक मात्रामें क्विनाइन, कैलोमेल या रूबर्ब वगैरह सेवन करनेकी वजहसे भी यह बीमारी होती है। इस रोगमें रोगीके शरीरका चमड़ा, आँखका सफेद अंश, नखकी जड़ और जिस चीजको देखता है, वही उसे पीली दिखाई देती है और बिछावनपर जहाँ पसीना लगता है वहाँ भी पीला दाग पड़ जाता है। कब्जियत या पतले दस्त, पेटमे दर्द, मुँहका स्वाद तीता, कीचकी तरह या सफेद रंगका दस्त, नाड़ी तेज या धीरे और दुर्बल होना, कै, हिचकी सुस्त वगैरह लक्षण इस बीमारीमे दिखाई देते हैं।

संक्षिप्त चिकित्सा—नये पाण्डु रोगमे—ऐकोन, कैमो, मर्क, नक्स-वोम, हाइड्रेस्टिस θ (की मात्रा ५ बून्द)।

पुराने पाण्डु रोगमे—चेलिडो, चायना, पोडो, फास्फो, डिजि, एसिड-नाइट्रिक।

पित्त पथरीसे पदा हुए पाण्डु रोगमे—ऐकोन, कैल्के-कार्ब ३०, बार्बेरिस θ, बेलेडोना वगैरह पित्त-पथरी रोगकी दवाएँ सेवन और पथरी निकलते समय पेटमें जिस जगह दर्द हो, वहाँ बहुत गर्म पानीकी पट्टीका प्रयोग करना चाहिये।

कुछ प्रधान दवाओंके लक्षण

पाडु रोगके साथ प्रदाह अवस्थाके लक्षणोमे और यकृत-प्रदेशमें तेज दर्द रहनेपर—"ऐकोन" ३x। कब्जियत, वर्णहीन या पीला पेशाब,

बिछावनमें पीला दाग लगना, नाड़ी क्षीण और कोमल, समूचा शरीर पीला, लक्षणमें—"मर्क-वा" ६x (ऐकोन सेवनके बाद मर्क फायदा करता है)। मैलेरियासे पैदा हुए पांडु रोगमें; पित्त-मिले पतले दस्त सविराम पांडु, पित्त-पथरी, मलिन और पीला चेहरा, यकृतमें सुई गड़नेकी तरह दर्द, मुँहका स्वाद तीता, अरुचि, बहुत कमजोरी प्रभृति लक्षणमें—"चायना" ३x, ६। भरपूर मात्रामें पांडु रोग, नींद न आना, कन्धेकी दोनों हड्डियोंमें दर्द, वायु छूटना, पेशियोंमें दर्द वगैरह लक्षणोंमें—"आइरिका" θ, ३। कामलाके साथ कब्जियत, यकृत-प्रदेशमें दर्द, उत्तेजक खान-पान या परिश्रम न करनेके कारण पांडु रोग होनेपर "नक्स-वोमिका" १x, ३०। दाहिनी ओर दबाकर सोनेपर यकृतकी जगहपर तेज दर्द हो, तो "ब्रांयोनिया" ३। कामलाके साथ यकृत-प्रदेशमें और दाहिने कन्धेमें दर्द और जकड़न; साफ या गहरे लाल रंगकी जीभ; मुँहका स्वाद तीता, पीले रंगके दस्तके लक्षणमें, "चेलि-डोनियम" θ, २x। शरीरका चमड़ा और आँखें भूरी पीले रंगकी, बार-बार बहुत ज्यादा धुमैले रंगके दस्त; काली आभा लिये, भूरा पेशाब, स्वरभंग, खाँसी और निराशा वगैरह तेज लक्षणोंमें "फास्फोरस" ३, ६। सान्निपातिक या उत्कट उपसर्गोंमें दुबलापन; नये पांडु रोगके बाद अजीर्ण रोग होनेपर, पारेके अपव्यवहारके कारण पांडु रोग होनेपर कमजोरी, दुबलापन और बुखारके बाद दुरारोग्य पांडु रोग होनेपर "आर्सेनिक" ३x, ३० [डाक्टर बार्नेटने 'कार्डुयस' θ प्रयोगकर (खासकर पुरानी अवस्थामें) बहुत फायदा होते देखा है]। डर या क्रोधके कारण कामला या तुरन्तके पैदा हुए बच्चेको कामला होनेपर "कैमोमिला" ६। खून खराब होकर कामला रोग होनेपर—"क्रोटेलस" ३। पुराने कामला रोगमें—"आयोड" ३, ६ देना चाहिये।

डिजिटेलिस ३, पोडोफाइलम १x, हाइड्रेस्टिस θ, लेप्टैण्ड्रा ६, एसिड-फास ३०, डलिकस ३x वगैरह दवाएँ लक्षणके अनुसार बीच-बीचमें

प्रयोग की जा सकती है। डाक्टर सुसलर और उनका मत माननेवाले सभी तरहके पाडु रोगमे "नेट्रम-सल्फ" १२x चूर्ण व्यवहारकर फायदा हुआ बताते हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—हल्का पथ्य, पाव रोटी सेंकी हुई, सेव भुना हुआ (roasted), भरपूर ठण्डा पानी पीना; छेनेका पानी; खूब गर्म पानीमे फ्लानेल भिगो, निचोड़कर दर्दवाली जगहपर सेंक देना। आबहवा बदलना, नित्य घुड़सवारी करना फायदेमन्द है।

पथ्यपर पूरी नजर रखनी चाहिये। बुखार रहनेपर सागू, बार्ली, आरारूट; बुखार न रहनेपर पुराने चावलका भात, शोरबा, बिना मासका शोरबा देनी चाहिये। मछली, दूध, घी और मिठाई खाना मना है। पके फल-मुल थोड़ी मात्रामें खाना फायदेमन्द हैं।

बढ़ी हुई प्लीहा
(Enlarged Spleen)

शरीरमे मैलेरियाका विष प्रवेश करनेके कारण प्लीहा बढ़ती है। बुखारमें शीत अवस्थामें प्लीहामें रक्त-संचय होनेपर वह बढ़ जाया करती है। इसके अलावा, हृत्पिण्डकी बीमारियाँ, रजोलोप, काला ज्वर या बवासीरका खून रुक जानेपर प्लीहा बढ़ जाती है। प्लीहा बढ़नेपर समुचा शरीर रक्त-शून्य और पीले रंगका हो जाता है तथा अग्निमाद्य, कब्जियत या पतले दस्त और कमजोरी वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। प्लीहा धीरे-धीरे बड़ी होकर, पेटकी बायी ओर फैल जाती है और इतनी कड़ी हो जाती है कि मालूम होता है—पत्थरका एक टुकड़ा रखा है। रोग कठिन होनेपर—पतले दस्त या रक्तामाशय होता है, भूख नही रहती, दाँतकी जड़ या मसूढ़े फूलकर खुन निकलता है और अन्तमें उदरी या शोथ होकर रोगी मरता हैं।

चिकित्सा—मैलेरिया ज्वरके साथ प्लीहाका नया प्रदाह अगर हो जाये, तो पहले बुखारका ही इलाज करना चाहिये। सब तरहके प्लीहा रोगमें ही डा० बार्नेट "सियानोथस" व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं और इससे फायदा भी हुआ है। अतएव कोई दूसरी दवा काममें लानेके पहले सियानोथस θ पाँच बून्दके हिसाबसे सेवन करायें। यदि इससे कोई फायदा न हो, तो लक्षणके अनुसार दूसरी दवाएँ देनी चाहियें।

नये प्लीहा-प्रदाहमें "एकोनाइट" 3^x। प्लीहाके ऊपर सुई गड़नेकी तरह दर्द हो या ऐंठन हो, दबानेसे यह दर्द बढ़ता हो और खूनकी कै होती हो, तो इन लक्षणोंमें—"आर्निका" ६ सेवन करना चाहिये। पेटके बायें भागमें दबा रखने या सुई गड़नेकी तरह तेज दर्द, प्लीहा बड़ी और कड़ी, बायीं करवट सो न सकना, कमजोरी और चेहरा मलिन तथा शरीर हमेशा गर्म रहनेके लक्षणमें—"आर्सेनिक" ३, ३०। बहुत दिनोंतक काला-ज्वर या विषम-ज्वर भोगनेके कारण प्लीहा धीरे-धीरे बड़ी हो जाये और इसके साथ ही रोगी बहुत कमजोर हो पड़े, तो "चायना" ६ या ३०। कभी-कभी प्लीहामें चिलक मारनेकी तरह दर्द होनेपर—"कार्बो-बेज 3^x या नेट्रम-म्यूर" ३०। यकृत और प्लीहाकी वृद्धि और दर्दमें—"कार्डुयस-मेरियानस" θ पाँच बून्दकी मात्रामें नित्य सवेरे और सन्ध्याके समय सेवन करना फायदा करता है।

इनके अलावा नक्स-वोमिका ३०, पोडोफाइलम ६, मर्क्यूरियस-बिन-आयोडेटम 3^x विचूर्ण, फास्फरस ६, एसिड-नाइट्रिक ६, लेप्टेण्ड्रा 3^x, फेरम ६, एगरिकस ३, कैलि-ब्रोम 3^x विचूर्णकी भी समय-समयपर जरूरत पड़ा करती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—अगर प्लीहा बड़ी और कड़ी मालूम हो, तो (जब बुखार न रहे या बुखार कम हो जाये, उस समय) कच्चे पपीतेकी जो लसी निकलती है, वह दो-एक बुन्द उस रोगीको चीनी (या दूधकी चीनी) के साथ खिलानेसे खासा फायदा होता है।

प्लीहा और यकृतकी वृद्धिके साथ रक्त-स्वल्पता
(Speno-Megaly)

यह प्लीहा रोगका पहला उपसर्ग—इसके बाद प्लीहाका बढ़ना, खूनकी कमी, खूनका स्राव होना और अन्तमें यकृतका बढ़ना, कामला या उदरी रोग हो जाता है। इसका कारण अभी जाना नहीं गया है; परन्तु मैलेरिया या उपदंशके कारण धातु-विकार हो जानेपर यह रोग सहजमें ही पैदा हो सकता है।

यह रोग हमेशा पुराने आकारमें ही दिखाई देता है। बढ़ी हुई प्लीहा ही इसका पहला लक्षण है; किसी तरहका दर्द नहीं मालूम होता; कोई ग्रन्थि नहीं फूलती; परन्तु बादमें शरीरमें खून कम हो जाता है; खूनकी के होती है और इसी कारणसे यकृत बड़ा हो जाता है, पाण्डु और उदर-शोथ पैदा हो जाता है।

चिकित्सा—कार्डुयस-मेरिएनस θ और सियानोथस २x इस रोगकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। रक्त-स्राव होनेपर "फास्फोरस" ३, ६ या "कोटेलस" ३, ६ देना चाहिये। जरूरत होनेपर नश्तर लगवाकर प्लीहा कटवा देनी चाहिये।

मूत्रयंत्रकी बीमारियाँ

नया मूत्रग्रन्थि-प्रदाह
(Acute Nephritis or Acute Bright's Disease)

खूनसे पेशाब निकालनेके लिये गुर्देमें कितनी ही बहुत पतली-पतली नलियाँ हैं। किसी कारणसे भी एकाएक सर्दी लग जाना, डिफ्थीरिया, चेचक, पीत ज्वर आदि कितनी ही नयी बीमारियाँ और तारपीन,

आर्सेनिक, कार्बोलिक-एसिड, कैन्थरिस, कोपेवा प्रभृति कितनी ही दवाओंके व्यवहारसे अथवा बहुत शराब पीने या आगसे जल जानेपर मसानेकी इन सूक्ष्म नालियोंमें प्रदाह पैदा हो जाता है। जिन्हें पहले-पहल लड़का होनेवाला हो, उन स्त्रीयोंको सातवें या आठवें महीनेमें यह प्रदाह होता दिखाई देता है। नये प्रदाहको नया मूत्रग्रन्थि-प्रदाह कहते हैं। इस प्रदाहके कारण मसाना या मूत्रग्रन्थी फूल जाती है, कोमल हो जाती है और लाल रंग धारण करती है।

पहले ज्वर, कमरमें कुचलनेकी तरह दर्द, मिचली और वमन होने लगता है। शरीरकी त्वचा सूखी कड़ी हो जाती है। इसके बाद गुर्देमें दर्द होता है और दर्द नीचेकी ओर फैलता है। बार-बार पेशाबका वेग होता है, पर हर बार पेशाब थोड़ा और लाल रंगका होता है। चेहरेपर शोथ या सूजन पैदा हो जाती हे और फिर धीरे-धीरे वह सारे शरीरमें फैल जाती है। इसके बाद श्वासकष्ट और फिर रक्तमें युरिया अधिक हो जानेके कारण प्रलाप, आक्षेप और युरेमिया (हैजामें पेशाब रुक जानेके कारण जैसा होता है) होकर रोगीकी मृत्यु हो जाती है। पेशाबकी परीक्षा करनेपर पेशाबमें युरिमिया (मूत्रक्षार) की अधिकता और एेल्बुमेन (अंडलाल) की कमी, प्रदाहका लक्षण, स्वरूप, रक्तकणकी अधिकता आदि लक्षण पाये जाते हैं। इस रोगका भोगकाल साधारणतः एक सप्ताहसे तीन मासतक है। ठीक-ठीक इलाज होनेपर रोगी आरोग्य हो जा सकता है।

इस रोगमें शय्यापर एकदम पड़े रहना ; तरल पतली चीजें, जैसे—दूध, बार्ली, सागु इत्यादि खाना, बहुत ज्यादा परिमाणमें पानी पीना और बीचमें स्पंजके द्वारा त्वचाको पोंछ डालना आवश्यक है।

पुराना कोरंड-घटित मूत्रग्रन्थि-प्रदाह

(Chronic Paranchymatous Nephritis)
or
(Chronic Bright's Disease)

इस रोगका यदार्थ कारण अबतक नही जाना जा सका। साधारणतः पुरुष और खासकर जवानोको ही यह बीमारी अधिक होती है। बहुत ज्यादा शराब पीना, उपदंश, यक्ष्मा, सीसेका विष और पाराका दोष इस बीमारीके उत्तेजक कारण हैं।

रोगकी प्रथम अवस्थामें—मूत्रग्रन्थि या गुर्दा फूल जाता है, रक्त-शून्य हो जाता है और उसका रंग सफेद हो जाता है। इस अवस्थाको वृहत् श्वेत मूत्रग्रन्थि कहते हैं।

द्वितीय अवस्थामें—मूत्रग्रन्थि सकुचित हो जाती है, इसलिये, इसको क्षुद्र श्वेत मूत्रग्रन्थि कहते हैं।

रोगका पहला आक्रमण बहुत हल्का होता है। पहले भूख न लगना, अग्निमान्द्य, पतले दस्त वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं, इसके बाद शक्ति, सामर्थ्य और वजन घटने लगता है। शरीर दुबला हो जाता है। शरीर की त्वचा सूखी कड़ी तथा चेहरा मलिन और उजला हो जाता है। पहले आँखकी निचली पलकपर शोथ दिखाई देता है और वह क्रमसे सारे शरीरमे फैल जाता है। हृत्पिण्ड बढ़ना भी अक्सर देखा जाता है। कितनी ही बार यह रोग कुछ दिनोंतक दबा रह सकता है, पर कुछ शोथ और पेशाबमें अंडलालकी अधिकता रहती है। पेशाबका परिमाण बहुत घट जाता है, पर कभी-कभी पेशाबके रंग और परिमाणमें किसी तरहका हेर-फेर नहीं होता दिखाई देता। पेशाबमें ऐल्बुमेन (अंडलाल), दूसरे-दूसरे बाहरी पदार्थ पाये जाते हैं। इस रोगके कारण न्युमोनिया, अन्त्रावरण-प्रदाह, मस्तिष्कावरण-

प्रदाह, छोटी आँतका सूजना प्रभृति उपसर्ग दिखाई देते हैं। इस बीमारीका नतीजा अच्छा नहीं होता; परन्तु अच्छी तरह इलाज होनेपर आराम होना असम्भव नहीं है।

सम्पूर्ण मानसिक और शारीरिक विश्राम, शरीर गर्म रखनेके लिये गर्म ऊनी कपड़े पहनना, रोज ठण्डे पानीसे नहाना और बहुत पतला दूध और मठा पीना चाहिये।

कुछ प्रधान दवाओंके विशेष लक्षण

ओस या सर्दी लगकर ज्वर और प्रदाहके लक्षणोंके साथ रोगकी पहली अवस्थामें—"एकोनाइट" ३ x। बून्द-बून्द पेशाब (कभी-कभी खून मिला), अंडकोष लाल, तलपेटमें जलन करनेवाला दर्द, पेशाब करनेके समय जलन या पेशाब न होना लक्षणमें "कैन्थरिस" ३x, ६। मैला और खुन-मिला पेशाब, अंडकोष लाल, पेशाब रुका और शरीरमें जगह-जगह शोथके लक्षणमें, "टेरिबिन्थिना" ६। बार-बार पेशाब लगना, मूत्रकोषमें कुछ गड़नेकी तरह दर्द, आँख और चेहरा लाल कभी-कभी प्रलापके लक्षणमें—"बेलेडोना" ६। मसानेकी जगहपर दर्द (खासकर दबानेपर), बहुत कष्टसे और थोड़ी मात्रामें या लाल रंगका पेशाब, पैरमें काँटा गड़नेकी तरह असह्य दर्द, शोथ प्रभृति लक्षणोंमें—"एपिस" ३, ३०। रक्त-स्वल्पताके साथ मुत्र-ग्रन्थिका प्रदाह होनेपर—"आर्सेनिक" ३x। पानीमें भींगकर रोग होनेपर—"डल्कामारा" ३ या "रस-टक्स" ६। शराब पीनेके कारण या अजीर्णके कारण हो, तो "नक्स-वोम" १x, ३x। गर्भावस्थामें यह बीमारी होनेपर—"मर्क-कोर" ६। कैनाबिस-सैट ६, लाइको ३०, सिपिया ६, सल्फर ३० की समय-समयपर जरूरत होती में।

रोग 'पुराना' होनेपर—एपिस, आर्जे-नाई, आर्स, कैन्थरिस, डिजिटेलिस, हेलोनियस, मर्क-कोर, टेरिबिन्थिना, फास्फोरस,

स्ट्रिकनियम, कैम्फर (हृत्पिण्डकी क्रिया स्थगित होनेकी आशङ्का होनेपर स्पिरिट-कैम्फर ५ बून्दकी मात्रामें, ५ मिनटके अन्तरसे देना चाहिये)। "कैफीन" (चायके वृक्षका सूखा पत्ता या काफीके सूखे बीजसे प्रस्तुत ३x, ६ सेवनसे हृत्पिण्डकी क्रिया बलवती होती है ; पेशाबका परिमाण बढ़ जाता है और स्नायविक दौर्बल्य घट जाता है ,

सान्तर मूत्रग्रन्थि-प्रदाह
(Interstitial Nephritis)

मूत्रग्रन्थिका एक तरहका पुराना प्रदाह है और उसके साथ तन्तुका प्रदाह और इस तन्तुका संकोचन होकर गुर्दा सकुचित और आकारमें छोटा हो जाता है। इसका दूसरा नाम—Cirrhodiotic Bright's disease है।

साधारणतः मध्य उम्रमें ही इस रोगका आक्रमण हुआ करता है। वात, गठिया वात, बहुत अधिक शराब पीनेका अभ्यास और उपदंश इस रोगका प्रधान कारण है। इस रोगका आक्रमण एकाएक होता है, परन्तु रोग बहुत धीरे-धीरे प्रकट होता है। दिनोदिन बलक्षय रक्तकी कमी, उदर और आँतमें दर्द, हृत्पिण्डकी सूजन, नाड़ी कड़ी, सरमें चक्कर और अनिद्राकी बीमारी पैदा हो जाती है। शोथ कभी रहता है, कभी नहीं रहता। आँखकी प्रतिच्छाया पर्देके प्रदाहके कारण दृष्टिहीनता भी पैदा हो जाती है। सफेद, पीला, बहुत पेशाब, पेशाबका आपेक्षिक गुरुत्व घटना, पेशाबमें अंडलालकी अधिकता।

हृत्पिण्ड बीमारी, आँखके चित्रपत्रका प्रदाह, संन्यास, मूत्रक्षार-विकार, न्युमोनिया, ब्राकाइटिस वगैरह बीमारियाँ इस रोगके उपसर्ग रूपमें पैदा हो सकती हैं।

विश्राम (मानसिक या शारीरिक), दूध या मठा पीना, गर्म जलसे नहाना और ऊनी वस्त्र पहनना लाभदायक है।

चिकित्सा—एपिस ६, ३०—सारे शरीरमें शोथ, यह शोथ चेहरेमें, विशेषकर आँखकी ऊपरी पलकमें, बार-बार थोड़ा-थोड़ा पेशाब होना, "प्यास न रहना" उदरमें शोथ और 'पसीना न होना', उदरमें थोड़ा भी स्पर्श सहन न होना, पेशाबमें नाना प्रकारका श्वेतसार, रक्तके कण और मूत्रपिंडके तन्तुओंका अस्तित्व मौजूद रहता है। मुत्राशय प्रदाहके प्रायः सभी रोगीयोंकी शरीरकी त्वचा सूखी रहती है। इसीलिये एपिस इस रोगकी एक उत्कृष्ट दवा है।

आर्सेनिक ३०, २००—"रोगकी नयी अवस्थामें" यह दवा अधिक व्यवहृत होती। पहले हाथ-पैर और पलकें, इसके बाद सारे शरीरमें सूजन दिखाई देती है, श्वास-प्रश्वासमें तकलीफ होती है, रातके समय और शयामें सोनेपर ऐसा हो जाता है, मानो साँस रुक जायगी। शरीरकी त्वचा ठण्डी और लसदार पसीनेसे तर, पर "भीतर जलन, बेचैनी, तेज प्यास", सुस्ती प्रभृति आर्सेनिकके प्रकृतिगत लक्षण वर्त्तमान रहनेपर इससे बहुत फायदा होनेकी आशा की जाती है। पेशाबमें "बहुत ज्यादा परिमाणमें श्वेतसार और चर्बी-मिले तन्तु" निकलते हैं। आर्सेनिकके बहुतसे लक्षण एपिसके विपरीत हैं।

आरम-मेकु ३०, २०० "मुत्रग्रन्थि सिकुड़ी हुई", हृतपिण्डकी क्रियामें गड़बड़ीकी बजहसे पेशाबकी बीमारी हृतपिण्डका फैलना, उपदंश और पाराके दोषकी वजहसे बीमारियाँ, यकृतका बढ़ना, आरम्भमें अधिक पेशाब होना, अन्तमें थोड़ा और अंडलाल-मिला पेशाब होना, श्वासकष्ट, कलेजा धड़कना, मृत्यु-भय" प्रभृति लक्षणोंमें लाभदायक है।

ब्रैकि-रिपेन्स १x, ६x—बहुत ज्यादा परिश्रम करनेकी वजहसे बीमारी होनेपर इसके निम्न-क्रमसे बहुत लाभ होता है।

बार्बेरिस ३०—वात-प्रधान धातु और शराबियोंकी बीमारी, थोड़ा पेशाब, बार-बार पेशाब होना, पेशाब होनेके समय जलन और

दर्द, पेशाबमें बहुत अधिक श्वेतसार और रक्तके कण निकलना; मिचली, कमरमें दर्द अकड़न।

कैल्के-आर्स ३०—सुस्ती, निस्तेजता, चेहरा मलिन, प्यास, बार-बार पेशाब, बेचैनी, दुश्चिन्ता, हाथ-पैरोंमें शोथ, ज्वर, पेशाबमें बहुत ज्यादा अण्डलाल निकलना, तन्द्रालुता, वगैरह लक्षणोंकी यह एक बहुत बढ़िया दवा है।

कैल्के-कार्ब ३०, २००—गोटियोंवाली बीमारी, विशेषकर चेचकके बाद पेशाबमें बहुत अधिक अण्डलाल निकलना, कमर और मसानेमें दर्द, दर्द दबा रखनेकी तरह; जरा भी हिलने-डुलनेपर कलेजा धड़कना और छातीमें शून्य मालूम होना; यकृत और प्लीहाका बढ़ना तथा कड़ापन; बार-बार पेशाब होना।

कैन्थरिस—रोगकी नयी अवस्थामें, एकाएक आबहवाके बदलने या कोखकी जगहपर चोटकी वजहसे बीमारी, मुत्राशयमें दर्द, अकड़न, पेशाब थोड़ा जलनकी तरह दर्द, पेशाबमें खून जाना, तेज ज्वर, प्यास, बार-बार पेशाब करनेकी इच्छा, परन्तु बुन्द-बुन्द पेशाब निकलना।

कक्स कैक्टाई १x, १२—उदरके शोथसे उत्पन्न श्वासकष्ट और खाँसी, इसके द्वारा अच्छी हो जाती है। इसके साथ ही बलगमका स्वाद मीठा, बार-बार पेशाब लगना, सारे शरीरमें सुस्ती, सर-दर्द रहने-पर इससे विशेष लाभ होता है।

डिजिटेलिस θ, ३०—हृतपिण्डकी कमजोरी, धीमी सविराम नाड़ी त्वचाका रंग नीला, सारे शरीरका, विशेशकर तलपेटका शोथ, थोड़ा पेशाब, पेशाबमें श्वेतसार, मुत्र-ग्रन्थि सिकुड़ी और औंघाईके लक्षणमें लाभदायक है।

कोलचिकम ६, ३०—रोगकी पहली अवस्थामें पेशाब थोड़ा बु्न्द-बुन्दकर होता है। पेशावमें सफेद तलो, स्याहीकी तरहका काला

पेशाब, पेशाबमें रक्त या श्वेतसार; सीधे होकर खड़े होनेपर या सोनेपर मूत्रपिंडमें दर्द ।

हेलिबोरस ६, ३०—पेशाबमें बहुत ज्यादा काला धमनीका रक्त निकलना; पात्रके नीचे काली गाढ़ी तली जमती है; हृद-प्रदेशमें बेचैनी; डिफ्थीरियाके बादकी बीमारी ।

कैलि-बाई ३०, २००—उपदंशकी वजहसे बीमारी; हृतपिण्ड-प्रदेशमें ठण्डक अनुभव होना; हृत्प्रदेशमें दबाव मालूम होता है। सोनेपर बढ़ना और बैठनेपर घटना, दृष्टिके सामने हरा दिखाई देना, पेशाबके साथ बहुत अधिक श्वेतसार निकलना ।

कैलिमया ३०—हृत्पिण्डकी बीमारीसे उत्पन्न उपसर्ग, सर्दी लगकर रोगका आक्रमण, इसके साथ वात । पेशाब थोड़ा, पेशाबमें श्वेतसार, श्वासकष्ट ।

लैकेसिस ३०, २००—बहुत अधिक शराब पीनेका अभ्यास। डिफ्थीरियाके बादकी बीमारी। पेशाब गाढ़ा, गदला काले रंगका । मुँहमें पानी भर आना या फीका उजला भाव। बहुत अधिक श्वेतसार निकलना, हृतपिण्डकी बीमारीकी वजहसे वक्षमें दोष और हृदवेस्टमें जल-संचय ।

फास्फोरस ३, ३०—हृतपिण्डकी क्रिया बिगड़कर दूषित रक्तके दौरानमें व्याघात होकर मुत्रपिण्डमें नाना प्रकारके यान्त्रिक विकार हो जाते हैं। पेशाबमें बहुत श्वेतसार आदि दिखाई देता है ।

प्लम्बम ३०—मसाना या मुत्रपिण्डमें दाना-दाना पदार्थ संचय, बदबूदार पेशाब, पेशाबका आक्षेपिक गुरुत्व घट आता है और श्वेतसार निकलता है। रक्तके कण, पीव आदि निकलना। "प्रायः शोथ हो जाता है।"

सार्सापेरिया ३०, २००—उपदंशकी वजहसे बीमारी, पेशाबमें ईंटके चूरकी तरह तली, पेशाब हो जाने बाद जलन, थोड़ा पेशाब, मुँहमें छाले, बार-बार पेशाबका वेग ।

मूत्र-शूल (Nephralgia)

मुत्र-ग्रन्थि या गुर्देमें जोरोका दर्द होनेको "मुत्र-शूल" कहते हैं। गुर्देमें पैदा हुई पथरी जब पेशाबकी नलीकी राहसे मुत्राशयमें आने लगती है, उस समय यह तेज दर्द पैदा होता है। कैन्थरिस २x—६ और कैनाबिस-सैट १x सेवन करानेसे और गर्म पानी बोतलमे भरकर पेटपर सेंक देनेसे फायदा दिखाई है। बहुतसे लक्षण और इलाजके लिये इस ग्रन्थके "मुत्र-पथरी" के उपसर्ग देखिये।

मूत्रनलीका संकोचन

(Stricture)

पहले थोड़ा-थोड़ा पेशाब निकलना और पिछे बिलकुल ही पेशाब न होनेको "मुत्रनाली (urethra) का संकोचन" कहते हैं। यह संकोचन दो तरहका है :—आक्षेपिक (spasmodic) और यांत्रिक (organic) संकोचन। मुत्रनाली पेशियाँ (muscles) आप-से-आप सिकुड़ने लगें, तो उसका नाम 'आक्षेपिक संकोचन' है और यांत्रिक सकोचनमें श्लैष्मिक-झिल्लीयाँ (mucous membranes) तक इतनी पतली, कड़ी और सूतकी तरह सकरी हो जाती हैं कि उनसे पेशाब निकल नही सकता।

आक्षेपिक संकोचनमें—पहले स्पिरिट कैम्फर θ दो बुन्दके हिसाबसे पाँच-सात मिनटके अन्तरसे सेवन करना चाहिये। बुखारके साथ आक्षेपमे ऐकोनाइट ३x—३। रोग पुराना हो जानेपर नक्स-वोमिका ३x, ६।

गर्म पानीमें नहाना फायदेमन्द है और यदि पेशाब करानेके लिये कैथिटरके प्रयोगकी जरूरत हो, तो कैथिटर देनेके आध घण्टा पहले

एकोन ३x एक मात्रा सेवन करना और कैथिटर देनेके बाद आर्निका ३x—३ सेवन करना और मुलाधारमें (perinæum अर्थात् मलद्वार और जननेद्रियके बीचके स्थानमें) गर्म पानीका सेंक देना फायदे-मन्द है ।

यांत्रिक संकोचन—रोगके आरम्भमें, क्लिमेटिज θ—३, इसके बाद फास्फो ३, डल्का ६, कैन्थि ३, साइलि ६, थियोसिनामिनम ३x, प्रूनस-स्पाई ३, एपिस ३, ऐकोन ३x, स्पिरिट कैम्फर, बेलेडोना ६, टेरिबिन्थ, एसिड-फास, आयोड, आर्स, चिमाफिला वगैरह दवाओंकी जरूरत पड़ सकती है । "मुत्रकृच्छ्रता" और 'प्रकृति प्रमेह रोग' में "मुत्रनालीका सङ्कोचन" देखना चाहिये ।

खूनका पेशाब
(Hæmaturia)

गिर जाना, चोट लगना, सर्दी लगना, प्रमेह, पथरी या किसी दूसरी कड़ी बीमारीमें "खुनका पेशाब" होता है ।

चिकित्सा—टेरिबिन्थ ३, खुन-मिले पेशाबकी बहुत अच्छी दवा है । गिर जाने या चोट लगनेके कारण खुनका पेशाब होनेपर, आर्निका ३x—३ । मुत्रग्रन्थिमें दर्दके साथ खुनका पेशाब होनेपर, हैमामेलिस २x । सर्दी लगकर खुन-मिला पेशाब होनेपर ऐकोनाइट १x—३x । खूनके पेशाबके साथ अगर लाल रंगका कोई चीज नीचे जम जाती हो, तो ओसिमम-कैनम ३—३० ; अगर खूनका पेशाब होनेका ठीक-ठीक कारण समझमें न आये या किसी दवासे खूनका पेशाब बन्द न हो, तो कैन्थरिस θ या थ्लैस्पि-बार्सा θ या सिनेसिओ θ या मिलिफोलियम १x या आर्सेनिक हाइड्रोजेनिसेटम ३ देना चाहिये । बेलेडोना खूनके पेशाबकी एक बढ़िया दवा है । कितनी ही बार सार्सापेरिला ६—३० से भी फायदा होता देखा गया है ।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीका चलन-फिरना एकदम बन्द कर देना चाहिये। उत्तेजक खान-पान मना है। कुछ गर्म पानीसे बदन पोछ डालना चाहिये। दूध वगैरह हल्की चीजें खानेको देनी चाहियें।

मूत्र-रोग और मूत्र-नाश

(Retention and Suppression of Urine)

मूत्राशय (मसाना—bladder) में पेशाब जमा होकर किसी रुकावटकी वजहसे निकल नहीं सकता—इसीको 'मूत्र-स्तम्भ या मूत्र-रोध' (retention of urine) कहते हैं और मूत्रपिंड (गुर्दा—kidneys) में अगर पेशाब पैदा ही नहीं होता, तो उसे "मूत्राभाव या मूत्र-नाश" (suppression of urine) कहते हैं। मूत्र-स्तम्भमें तलपेट फूल उठता है और मूत्र-नाशमें तलपेट नहीं फूलता। पेशाबके विषैले उपादान खूनके साथ मिलनेपर "मूत्र-नाश" रोग पैदा होता है। इस बीमारीमें सुस्ती, तन्द्रा, मोह, बेहोशी वगैरह कितने ही लक्षण प्रकाशित होते हैं; ज्वर-विकार, हैजा वगैरह कई भयानक रोगोंके साथ अक्सर मूत्र-नाशके उपसर्ग दिखाई देता है। सुजाकमें अगर एकाएक पीब बहना बन्द हो जाता है और मूत्रग्रन्थिका प्रदाह या मूत्रस्थलीका पक्षाघात या किसी तरहकी चोटकी वजहसे "मूत्र-नाश" रोग होता है।

मूत्र-नाश रोगकी चिकित्सा—मूत्राशयमें प्रदाह मौजूद रहनेपर (रोगकी पहली अवस्थामें), ऐकोन १x—३ या टेरिबिन्थ ३। सर्दी लगकर पेशाब रुकनेपर—ऐकोनाइट ३x। मोह और आँखें ऊपर उलटी रहनेके साथ पेशाब रुकनेपर, ओपियम ६—३०। हिस्टोरियासे पैदा हुए मूत्र-रोगमें—इग्नेशिया ३ या ओपियम ६। हैजेकी बीमारीमें पेशाब रुकनेपर—टेरिबिन्थिना ३ या कैन्थरिस ३ या कैलि-बाई ६।

मूत्र-रोध रोगकी चिकित्सा—जलन और तकलीफके साथ एकाएक पेशाब रुक जानेपर, स्पिरिट-कैम्फर θ। तुरन्तके जन्मे बच्चेको मूत्र-स्तम्भ होनेपर, १०-१५ मिनटका अन्तर देकर स्पिरिट-कैम्फर की शीशी उसकी नाकके पास रखनी चाहिये। मूत्रस्थलीमें पक्षाघातके कारण अनजानमें बून्द-बून्द पेशाब होता हो, तो नक्स-वोमिका ३ या कास्टिकम ६। हिस्टीरिया या गुल्मवायुग्रस्ता रोगिणीका पेशाव रुकनेपर नक्स-मस्केटा ३x या इग्नेशिया ३ या जेलसिमियम ३। मूत्राशयकी मुखशायी-ग्रन्थिके बढ़नेकी वजहसे मूत्र-स्तम्भ पैदा होनेपर, पल्सैटिला ३ या बैराइटा-कार्ब ६। रोगकी पहली अवस्थामें, कोई-कोई (पर्यायक्रमसे) ऐकोनाइट १x—३ और जेलसिमियम ३x (अथवा ऐकोनाइट ३x और कैन्थरिस ६) देकर फायदा होता बताते हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—एक भाग दूधमें चार भाग पानी मिलाकर या आरारूट पानीमें खूब पतला बनाकर, उसमें कागजी नींबूके रसके साथ नमक या मिश्री देकर, खिलानेसे वहुत बार सहजमें ही पेशाब हो जाता है। कच्चे नारियलका पानी भी फायदेका है। गर्म जलके टबमें रोगीको कमरतक डुबाकर बैठाना फायदेमन्द है। पानीमें कलमी शोरा घोलकर एक कपड़ेकी पट्टी उसमें भिगोकर पेटके ऊपर लगानेसे कभी-कभी पेशाब हो जाता है। आमरूल शाकको पीसकर और जरा गर्मकर, नाभीके चारों ओर लेप चढ़ा देनेसे थोड़ी ही देरमें पेशाब हो जाता है।

मूत्र-रोध विकार

(Uræmia)

मूत्र-ग्रन्थिके द्वारा जो सब दूषित पदार्थ अच्छी अवस्थामें शरीरसे अलग होकर निकला करते हैं, वे बाहर न निकलकर खूनमें ही रह जाते हैं, तो "मूत्र-रोध" और उसके साथ ही "रक्त-दोष" के वहुतसे उपसर्ग हो

जाते हैं, इसीका नाम "मुत्र-रोध-विकार" या "युरिमिया" (uræmia) है। ये उपसर्ग धीरे-धीरे या एकाएक पैदा हो जाते हैं, जैसे—पेशावकी कमी, शोथ, कै और "मिचली, सरमें जोरोंका दर्द", सरमें चक्कर, कभी-कभी प्रबल "आक्षेप" (spasm); किसी-किसीको प्रलापके साथ आच्छन्न भाव (stupor) और "बेहोशी जैसी नींद" (coma) रहती है। रोगीके शरीर और बिछावनसे एक तरहकी पेशावकी बदबू आती है। पेशाब या तो खूब थोड़ा होता है या एकदम बन्द हो जाता है। चेहरा मलिन या मोमकी तरह दिखाई देता है; नाड़ीकी चाल तेज; शरीरकी गर्मी पहले बढ़ जाती है; परन्तु शीघ्र ही स्वाभाविक गर्मी (९८'४०) से भी कम हो जाती है; "मुत्र-रोध और मुत्र-नाश" अनुच्छेद देखिये।

चिकित्सा—आयोडिन θ—मुत्र-रोध विकारसे पैदा हुए वमनमें आयोडिन θ की मात्रा आधा बून्द सेवन करना चाहिये। (Dr. Laidlaw)।

टेरिबिन्थिना २x—मुत्र-रोधकी प्रधान दवा है (एक रोगीको चार दिनोंतक पेशाब नहीं हुआ था, पर Dr. Yeldham ने टेरिबिन्थिना १ की व्यवस्था की और पेशाब हुआ), अगर टेरिबिन्थिनासे फायदा न हो, तो मर्क-कोर, आर्सेनिक, कैन्थरिस या कैलि-बाईकी परीक्षा करनी चाहिये।

क्युप्रम-ऐसेटिकम २—बेहोशी जैसे नींद (coma) की एक उत्कृष्ट दवा है। फी पन्द्रह मिनटके अन्तरसे सेवन कराने बाद यदि तीन-चार घण्टोंतक रोगीको कोई फायदा न हो, तो "ओपियम" ३x पन्द्रह मिनटके अन्तरसे देना चाहिये। ओपियमसे लाभ न हो तो, "आर्निका युरेन्स" θ (फी मात्रा पाँच बून्द) चार घण्टेके अन्तरसे सेवन कराना चाहिये।

ऐमोन-कार्ब (नीचा क्रम), हाइड्रोसियानिक-एसिड ३, क्रियोजोट ३। प्रम्बम ६ वगैरह दवाओंकी कभी-कभी जरूरत पड़ती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—भाफसे नहाना (vapour bath) या बफारा लेना फायदेमन्द है। रोगके आक्रमणके बाद कुछ दिनोंतक सिर्फ पतले पदार्थ (खासकर दूध) पीना चाथिये।

अधिक विवरण और चिकित्साके लिये, हमारी प्रकाशित "हैजा-चिकित्सा" ग्रन्थका "मुत्र-विकार" देखिये।

मूत्राशय-प्रदाह

(Csytitis)

मुत्राशय-प्रदेशमें महान दर्द, अकड़न या भार मालूम होना, सब अंगमें सर्दी मालूम होना या कँपकँपी, मुत्राशयमें पेशाब इकट्ठा होनेके साथ ही बहुत काँखनेपर बहुत कष्टसे पेशाब निकलना, पेशाबमें श्लेष्मा या रक्त आनेपर दर्द कम हो जाता है। पेशाबका परिमाण और उसके साथ श्लेष्माका परिमाण और उसका गाढ़ापन बढ़ जाता है। इस रोगमें, दर्द "ऊपरकी ओर" कमरतक फैल जाता है और मुत्र-ग्रन्थि-प्रदाहमें दर्द "नीचेकी ओर" कमरसे मुत्राशयतक फैल जाता है।

सर्दी लगना, तरी, चोट लगना, मुत्रनलीका सिकुड़ना, सूजाक या पथरी अथवा मुखशायी-ग्रन्थिकी बीमारी, पेशाब उतारनेकी सलाई (catheter) आदि यंत्रोंका मुत्राशयमें डालना वगैरह कारणोंसे मुत्राशयमें प्रदाह पैदा हो जाता है।

चिकित्सा—नयी और पुरानी दोनों अवस्थाओंमें ही कैन्थरिस ३x इसकी एक उत्कृष्ट दवा है। सूखी ठण्डी हवा लगकर प्रदाह होनेपर ऐकोनाइट १x, ३x। सर्दीके कारण होनेपर डल्कामारा ३। स्नायविक

उत्तेजनाकी अधिकतामें, बेलेडोना ३x, ६। पथरी या मुत्रग्रन्थिका रोग होनेके कारण बहुत श्लेष्मा निकलनेपर पेरेरा-बेवा θ (फी मात्रा १५-२० बून्द) देना चाहिये।

रोगकी पुरानी अवस्थामें "चिमाफिला" θ (फी मात्रा ५-६ बून्द)। कैन्थरिस ३ इस अवस्थाकी भी एक उत्कृष्ट दवा है। पेशाबका वेग धारण करनेमें असमर्थ होनेके कारण रातमें बिछावनमें ही पेशाब हो जानेपर पल्सेटिला ३x—३, क्रियोजोट १२ अथवा कास्टिकम २००। पेशाबमें घोड़ेके मुत्र-जैसी बदबू रहनेपर "बेंजोयिक-एसिड ३x या नाइट्रिक-एसिड" ६। बेलेडोना ३, कैनाबिस-सैट १x, कॉलिआयोड θ—३०, एपिस ३, सैबाल-सेरूलेटा θ प्रभृति दवाएँ भी कभी-कभी आवश्यक होती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—गर्म पानीमें नहाना या गर्म पानीमे फ्लानेल भिगोकर पतपेटपर सेंक देना अच्छा है। रोगीको चित होकर सोना चाहिये। कमरतक गर्म पानी डुबो रखनेसे फायदा होता है। थोड़ेसे सुसुम पानीमे बोरिक-एसिड (१०-१५ ग्रेन) मिलाकर धीरे-धीरे धो डालना भी फायदा करता है। मछली, मांस, शराब आदि मना है। चीनी या मिश्रीका शर्बत पीनेसे पेशाब साफ होता है। हल्की चीजें खानेको देनी चाहियें।

मूत्राधिक्य या मूत्रमेह

(Polyuria or Diuresis or Diabetes Insipidus)

अगर पेशाब परिमाणमें ज्यादा आने लगे, तो उसे "मुत्राधिक्य" या "मुत्र-मेह" कहते हैं। "मुत्र-मेह" रोगमे मुत्राधिक्यके साथ पेशाबमें चीना मौजूद रहती है। यहाँ मुत्रमेहका इलाज लिखा जाता है।

ज्यादा पतली चीजें खाना, बरसात, बुढ़ापा, कमजोरी, क्रिमि-दोष, गुल्मवायु, पाकाशयकी गड़बड़ी वगैरह कारणोंसे पेशाबमें पानीका भाग बढ़ जाता है और बार-बार पेशाब होता है ।

चिकित्सा—स्कुइला २x—दिन-रातमें बहुत ज्यादा परिमाणमें बिना शक्करका पानीकी तरह पेशाब होना । बार-बार पानीकी तरह पेशाब होना ("मुत्राधिक्य" रोगीकी यह प्रधान दवा है) ।

कैलि-कार्ब ६—रातमें बार-बार पेशाब करनेके लिये उठना, पेशाब जोरसे लगता है, परन्तु बहुत देरतक पेशाब करनेके लिये बैठे रहनेपर पेशाब होता है ।

कार्लसबाड ६—पानी पीनेके बाद ही पेशाब ।

इग्नेशिया ३—काफी पीनेके बाद ही पेशाब लग आना । हिस्टीरिया या गुल्म-वायुग्रस्ता स्त्रियोंको पानीकी तरह बहुत पेशाब होना ।

कास्टिकम ६—बूढ़ोंको ज्यादा पेशाब होने और बार-बार पेशाब लगनेपर (ख़ासकर रातके समय) ।

एसिड-फास २x, ३—बार-बार बहुत ज्यादा परिमाणमें पानीकी तरह पेशाब ; रातमें बार-बार पेशाव करना पड़ता है ।

ऐसेटिक-एसिड ३, नक्स-वोम ३, साइना ३x, युपेट-पर्फ २x वगैरह दवाएँ और "मधुमेह" रोगकी दवाएँ भी कभी-कभी आवश्यक होती हैं ।

आनुसंगिक चिकित्सा—ज्यादा पतली या कफ पैदा करनेवाली चीजें या ज्यादा भात खाना मना है । साधारण स्वास्थ्यके नियम पालन करने चाहियें ।

आप-ही-आप पेशाब निकल जाना

(Enuresis)

मुत्रस्थलोंके पक्षाघातकी वजहसे पेशाब रोकनेकी ताकत एकदम या आंशिक रूपमें कम हो जाती है। पेशाब लगनेपर फिर वह किसी तरह रोका नहीं जा सकता। इसके बाद बुन्द-बुन्द पेशाब हुआ करता है; मुत्राशयमें पेशाब जमा रहता है, परन्तु वह होता है बुन्द-ही-बुन्द। इसीका नाम "आप-ही-आप पेशाब होना" है। चोट, प्रसवकी तकलीफ, पथरी, प्रमेह या क्रिमिकी वजहसे यह बीमारी पैदा होती है। बच्चे सोते-सोते बिछावनपर अनजानमें ही पेशाब कर देते हैं।

चिकित्सा—पेशाबका वेग एकदम न रोक सकनेपर फेरम-फास १२×। संकोचक पेशीकी कमजोरीसे पैदा हुआ, इच्छा न रहनेपर भी पेशाब हो जाना, बेल ६ (डा० सैण्डर्स मिलसके मतसे इस रोगमें यही बराबर व्यवहार किया जाता है), नींदके पहले भागमें ही बिछावनपर पेशाब होनेपर कास्टिकम ६। बूढ़ोंकी बीमारीमें, कोनायम ३। बदबूदार पेशाब होनेपर, सिपिया १२। बच्चे और बूढ़ोंकी बीमारीमें कैन्थरिस ६। मुत्राशयकी मुखशायी-ग्रन्थिके बढ़ने अथवा मुत्राशयमें पथरी होनेकी वजहसे बालक और बूढ़ोंको आप-ही-आप पेशाब निकल जाना, जेलसिमियम ६x। जिन औरतोंको गुल्मवायु होता है, उन्हें बदहवासीके समय आप-ही-आप पेशाब निकल जानेपर, इग्नेशिया ६। क्रिमिकी वजहसे यह बीमारी होनेपर (खासकर बच्चोंको, सिना ३x या स्पाइजिलिया ६ या रस-ऐरोमैटिका θ (फी मात्रा पाँच बुन्द)। शुक्रक्षय रोगकी वजहसे आप-ही-आप पेशाब हो जाता हो, तो एसिड-फास ३—३०। इरिजिरन ३, बेलेडोना ६, नक्स-वोमिका ३, मर्क-सोल ६ भी कभी-कभी काम देते हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको भोजन पुष्टिकर होना चाहिये ; पतले पदार्थ खूब ज्यादा या खूब कम खाना हानिकर है। सोनेके कम-से-कम तीन घण्टे पहले पानी न पीना चाहिये। इस बातपर नजर रखनी चाहिये कि मुत्र-यंत्रमें उत्तेजना न हो। खट्टी और नमकीन चीजें खाना मना हैं। रातमें बीच बीचमें उठकर पेशाब करना अच्छा है। दिनके जबतक पेशाब रोका जा सके, तबतक नहीं करना चाहिये। गद्दीपर सोना या बहुत ज्यादा कपड़ा पहनना उचित नहीं है। इस रोगमें चित्त होकर सोना अच्छा नहीं है। ठण्डे पानीसे नहलाना फायदा करता है।

मूत्रकृच्छ्रता
(Strangury)

यह रोग बहुत ही तकलीफ देनेवाला है। बार-बार पेशाब लगता है, परन्तु बड़े कष्टमें बून्द-बून्द पेशाब होता है अथवा एकदम ही पेशाब नहीं होता और पेशाबके समय, मुत्राशय-प्रदेशमें बहुत जलनकी तकलीफ इसके लक्षण हैं। पहले पथरी ; जरायुका अपने स्थानसे हटना, मुत्रग्रन्थि-प्रदाह, मुत्राशय-प्रदाह, गठिया वात, हिस्टिरिया, कृमि वगैरहके साथ "मुत्रकृच्छ्रता" पैदा होती है। नयी बीमारीमें पेशाब स्वाभाविक या अस्वाभाविक हो सकता है ; पर बीमारी पुरनी होनेपर पेशाबके साथ पीब या श्लेष्मा निकला करता है। बच्चोंके क्रिमिके कारण भी कभी-कभी मुत्राशयमें उपदाह होता है।

चिकित्सा—जलन और तकलीफके साथ एकाएक मूत्रकृच्छ्रता होनेपर, २-४ बून्द स्पिरिट-कैम्फर चीनी या बताशेके साथ १०-१५ मिनटके अन्तरसे देना चाहिये। ज्यादा 'कैन्थरिस' दवा सेवन करनेके कारण पेशाबमें कष्ट होनेपर स्पिरिट-कैम्फर। तकलीफसे पेशाब होनेपर बेलेडोना २x (बच्चे या वायुग्रस्ता स्त्रियोंके रोगमें), बार-बार पेशाब

करनेकी इच्छा, कतरनेकी तरह असह्य दर्द, पेशाब करते वक्त जलन और तलपेटमें दर्द—कैथरिस ३—६। स्त्रियोंकी पेशाबकी नक्लीफमें—कोपेवा ३। कटि-वातकी तरह दर्दके साथ मुत्रकृच्छ्रतामें —टेरिबि थ ३। आक्षेपयुक्त मुत्रकृच्छ्रतामें—नक्स-वोम २x—६। दिनमें रोग बढ़नेपर—फेरम ६। गुर्देमें, जननेन्द्रियमें अथवा हाथ-पैरोंमें सूजन होनेपर और उसके साथ ही पेशाब होते समय बहुत जलन होनेपर, एपिस-मेल ६। ओस या ठण्डी सूखी हवा लगकर मुत्रकृच्छ्रता होनेपर, ऐकोनाइट ३x। तर जगहमें रहनेके कारण या बरसातमें मुत्रकृच्छ्रता होनेपर, डल्कामारा ३x—३०।

प्रादाहिक मूत्रकृच्छ्रतामें—कैंथरिस ३ (मर्दोंके लिये), कोपेवा और युपट-पर्फ ३x। (स्त्रियोंके लिये)।

स्नायविक मूत्रकृच्छ्रतामें—बेल १x, एपिस ३, कौस्टिकम ६, पट्रासेलिनम १। गर्म पानीसे सेंक देना और कम परिमाणमें दूधके साथ पानी मिलाकर पिलाना फायदा करता है।

मूत्र-पथरी
(Urinary Calculus)

शरीरकी स्वस्थ दशामें हमारे शरीरसे वैसे पदार्थ बाहर निकला करते हैं, जिनकी शरीरके पोषणके लिये जरूरत नहीं रहती, परन्तु परिपाक या परिपोषण कार्यमें जब गड़बड़ी पैदा हो जाती है, तब उसका उलटा हुआ करता है। उस समय एक साफ शीशीमें थोड़ी देरतक पेशाब रखनेपर यदि ईंटके चूर या बालूके कणकी तरह, उसके नीचे कुछ जम जाये, तो समझना चाहिये कि "मुत्र-पथरी" रोग हो गया है। इस समय बहुत ही छोटे बालूके कण (sand) के समान या सरसोंके दानेकी तरह, पत्थरके कण (gravel) की तरह या सेमके बीच-जैसे

पत्थरके टूकड़े (stone) तरहकी छोटी, बड़ी, मझोली ; बहुत तरहकी पथरी मुत्रपिण्ड (गुर्दा—kidneys) या मुत्राशय (bladder) में दिखाई देती है। औरतोंकी अपेक्षा मर्दोमें और बंगालकी अपेक्षा पश्चिम देशोंके मनुष्योंमें यह बीमारी ज्यादा दिखाई देती है।

मूत्र-पिण्डकी पथरी (Stone in kidneys or Renal Calculus) और "मुत्र-शूल"—मुत्र-पिण्ड-कोष (Palvis of the kidneys) में पथरी पैदा होकर वहाँ बहुत दिनोंतक रुकी रह सकती है। ऐसी दशामें रोगीको अकसर काई तकलीफ नहीं मालूम होती, शायद कभी कमरमें धीमा दर्द (dull pain) या पेशाबके साथ कभी-कभी पीब, खून दिखाई देता है ; परन्तु यही पथरी मुत्रपिण्डसे जब मुत्रनाली (ureter) में आ जाती है, तब कमरसे अण्डकोषतक एक प्रकारका असह्य दर्द पैदा होकर रोगीको घबरा देता है। इसी दर्दको "मुत्र-शूल" (दर्द-गुर्दा—renal colic) कहते हैं। कभी-कभी यह दर्द नीचेकी ओर (पैरकी एड़ीतक) और ऊपर (पीठ या छाती) तक फैल जाता है और इसके साथ कँपकँपी, कै, पसीना, हिमांग (collapse), अण्डकोष फूला, सिकुड़ा या ऊपरकी ओर उठा हुआ हो जाता है ; पेशाबमें तकलीफ, बुन्द-बुन्द गिरता है या एकदम बन्द हो जाता है अथवा मुत्र-विकार, आक्षेप वगैरह उपसर्ग मौजूद रह सकते हैं। (इस ग्रन्थका 'मुत्र-शूल' अध्याय देखिये)। आप-से-आप या अस्त्रके सहारे पथरी निकल जानेपर, रोगीको आराम मालूम होने लगता है। इस दर्दका विशेष लक्षण यह है, कि "एकाएक ही दर्द पैदा होता है और एकाएक बन्द हो जाता है।" यह रोग होनेपर एपेण्डिक्स-प्रदाह और पित्त-शूल वेदनाके साथ इस दर्दका भ्रम पैदा हो जाता है ; परन्तु स्मरण रखना चाहिये, कि एपेण्डिक्स-प्रदाहमें ज्वर दिखाई देता है, पित्तशूलमें कामला मौजूद रहता है ; पर "मुत्र-शूलमें बुखार" या-पांडुरोग नहीं रहता है।

मूत्राशयमें पथरी (Cystic Calculus or Culculi vesical or Stone in the bladder)—मुत्राशय (bladder) में पथरी आप-से-आप पैदा होती है, कभी-कभी मूत्रपिण्डमे पथरी पैदा होकर मूत्राशयमें चली जाती है। मूत्राशयमें भार मालूम होना, मुत्राशय-ग्रीवामे, मुत्रमार्ग (urethra), गुह्यद्वार, लिंगेन्द्रिय, योनिदेश वगैरहमें दर्द, पेशाब बन्द या कष्टसे पेशाब और पेशाबमें खून आना, चित्त होकर सोने और चूतड़ ऊँची कर रखनेसे, पथरी इधर-उधर हटती है—ऐसा मालूम होना और उसके साथ पेशाब होना वगैरह इस रोगके लक्षण हैं।

मूत्र-शूल-वेदनाकी (या पथरी निकलते समयकी) चिकित्सा— कमर और तलपेटपर गर्म जलका सेंक (hot fomentation) और गर्म पानी पाना और "बार्बेरिस" θ (की मात्रा पाँच बून्द) पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर सेवन करनेसे अकसर सब तकलीफ दूर हो जाती है। अगर आठ-दस बार दवा खा लेनेपर भी कोई फायदा न हो, तो उसी दवाकी छठी शक्ति काममें लानी चाहिये। कैल्केरिया कार्बोनिका ३० को पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर सेवन करानेसे आश्चर्यजनक लाभ होता है (Vide Dr Sands Mills Essay in the Paris Congress Transaction 1900)। इसलिये ऊँचे क्रमका कैल्क-कार्ब "पित्त शूल" और मुत्र-शूल" दोनो ही "शूल-वेदना" की उत्तम दवा है। बेहद तकलीफसे रोगी पेंच (स्क्रू प) की तरह घुमता है या दोनों हाथ मलता हुआ कातर-स्वरसे चिल्लाता और गो-गो करता है, पेशाबका रंग लाल रहता है और उसे कुछ देरतक रख छोड़नेसे, ईंटके चूर-जैसा उसके नीचे जम जाता है—"ओसिमम-कैनम" ३x—२०० (न मिले तो तुलसीके पत्तेका रस) की पन्द्रह मिनटके अन्तरसे देना चाहिये। "स्टिगमाटा-मेड्डिस" θ की मात्रा २० बुन्द, छोटी पथरी निकलनेके समय सेवन करानेसे डाक्टर हैन्सेन वगैरहको बहुत फायदा

दिखाई दिया है। मैग्नेशिया-फास ३x विचूर्ण खूब गर्म पानीके साथ सेवन और बाहरी प्रयोग करनेसे ज्यादा फायदा होता है। पेशाबके बाद ही दर्द बढ़ जानेपर "सार्सा" ३० को पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये। ऐंठनकी भाँति दर्दसे शरीर ऐंठनेपर, बहुत तकलीफसे क्षणभर भी स्थिर न रह सकने और छटपटानेके लक्षणमें—"डायस्कोरिया" θ को पन्द्रह मिनटके अन्तरसे सेवन करना चाहिये। यदि इन दवाओंसे फायदा न हो, तो फी खुराक ३० बुन्द "पेरेरा-ब्रेवा" दो औंस गर्म चुआये हुए पानीके साथ फी आध घण्टेके अन्तरसे देना चाहिये। नीचे लिखे उपसर्गोंमें पेरेरा-ब्रेवा ज्यादा फायदेमन्द है :—पेशाबका वेग रहनेपर भी बड़े कष्टसे पेशाब निकलना, रोगीको ऐसा मालूम हो, कि मानों मुत्रस्थली भरी हुई है; मुत्रस्थलीमें और कभी पोंडमें तेज दर्द; तकलीफसे रोगीका चिल्लाकर रोने लगना; मुत्रकृच्छ्रता, पेशाबमें बालूके कण या ईंटके चूरकी तरह बालू दिखाई देना। "थ्लैस्पिवार्सा पैक्टोरिस" θ, दस-पन्द्रह बून्द की मात्रा कई बार सेवन करनेसे ज्यादा लाभ होता है। इससे भी यदि दर्द कम न हो और अच्छे इलाजके अभावसे रोगीको अवस्था धीरे-धीरे खराब होती जाती हो, तो क्लोरोफार्म सूँघाना या मार्फिया (एक मात्रा, घंटे-घंटेपर चौथाई ग्रेन) सेवन करना चाहिये।

मूत्रपिंडकी पथरीकी चिकित्सा—यह सन्देह होनेपर कि मुत्र-पथरी हुई है (या मूत्र-शूलका दर्द कम हो जानेके बाद ही) नीचे लिखी दवाओंके सेवनसे खूब फायदा होता है।

"लाइको" ६, २०० पेशाबमें अगर लाल बालूके कणकी तरह तलछट पड़े; अगर इससे फायदा न हो, तो "आर्टिका-युरेन्स" θ की मात्रा ५ बुन्द या "कक्कस-कैक्टाई" θ की मात्रा ५ बुन्द देना चाहिये। "एसिड-फास" २x, यदि पेशाबमें सफेद रंगका तलछट जमता हो (फास्फेट-मिला)। "ग्रेफाइटिस" ६—३०, पेशाव कुछ देरतक रख

छोड़नेके बाद यदि सफेद और खट्टी गन्ध-भरी कोई चीज नीचे बैठ जाये। "किनिनम-सल्फ" ३x, यदि ईंटके चूरकी तरह लाल या भूरे रंगकी तरह पीले दानेकी भाँति नीचे तलछट जमे। 'बार्बेरिस-वलगेरिस θ मूत्रनालीमें दर्द और पेशाबमें पहले सफेद और पीछे लाल माड़की तरह तलछट जमनेपर। "सिपिया" ६—३०, पेशाबका तलछट लसदार सफेद रंगका या कुछ लाल जैसा जमता हो। "सार्सापेरिला" ३—३०, पेशाब करते ही वह गदले पानीकी तरह मैला हो जाये। "नाइट्रो-म्यूर-एसिड" २x या "आक्जेलिक-एसिड" ३—१२, पेशाबके तलछटमें कैलसियम आक्जेलेट इकट्ठा (oxalate of lime deposit) होनेपर।

ऊपर कही हुई दवाएँ रोज कम-से-कम चार बार सेवन करानी चाहिये। बेलेडोना ३x—३०, ओपियम ३—३०, नक्स-वोमिका १x—३० और साइलिसिया ६—३० की भी कभी-कभी आवश्यकता होती है।

मूत्राशयकी पथरीकी चिकित्सा—"लिथियम-कार्ब" ३x चूर्ण ३०, रोज चार बार सेवन करनेसे छोटी पथरी गल जाती हैं। उपरोक्त दोनों "चिकित्सा" पैरेके अन्तर्गत दवाएँ लक्षणके अनुसार व्यवहार करनेसे बहुत बार फायदा होता है; परन्तु लिथोट्राइट (lithotrite) वगैरह यन्त्रोंकी सहायतासे अच्छे डाक्टरोंके द्वारा बड़ी पथरी निकलवा डालना ही अच्छा है। एक्सरे (x-ray) की सहायतासे शरीरमें पथरी दिखाई दे सकती है।"*

* गत जगद्व्यापी युद्धके समय एक बंगाली युवक मेसोपोटेमियामें रहते थे। एक बार उनके कमरमें तेज दर्द हुआ। वहाँके डाक्टर साहब (civil surgeon) ने कहा कि प्लुरिसी हो गई है। इसके बाद पेशाबमें oxalate crystal पाया गया। वे काम छोड़कर कलकत्ते चले आये और एक प्रसिद्ध ऐलोपैथिक

मूत्ररेणु (Gravel) की कई प्रधान दवाएँ :—ऐपिजिया-रिपेन्स (epigea repens), (दस बून्दकर दिनमें ६ बार सेवन कराना चाहिये), युवा-उर्सी (uva-ursi), लाइको, फास, रूटा, सार्सा, चायना, जिंक।

मूत्र-पथरी (Stones) की कई उत्कृष्ट दवाएँ :—ऐपोसाइनम, ऐग्ड्रा, युवा-उर्सी, शिपिया, आर्निका, किनिन-सल्फ, आइपोमिया, लाइको।

डाक्टरके चिकित्साधीन रहे; लेकिन कई महीने चिकित्साके बाद डाक्टर साहबने कहा "अस्त्र चिकित्साके सिवाय और कोई उपाय नहीं है। अन्तमें वे होमियोपैथिक चिकित्साके लिये बाध्य हुऐ। हमलोगोंने उनके रोगका विवरण सुनकर "मूत्र-पथरी हो गई है"—यह निर्देशक कर निम्नलिखित दवाओंकी (अवस्थानुसार) व्यवस्था की थी।

एसिड-नाइट्रि-म्यूरियेटिकम २x (दो बून्दकर तीन बार रोज) और शूलके दर्दके समय वार्वेरिस वलगेरिस θ (१०-१५ बून्द दर्दकी अवस्थाके अनुसार १०-१५ मिनटके अन्तरसे) सेवन और बहुत ज्यादा परिमाणमें साफ चुआया हुआ पानी पीनेके लिये। इस व्यवस्थाके अनुसार तीन महीनेतक सेवनके बाद—कैल्के-कार्व २०० (रोज दो बार) और एसिड नाइट्रो-म्यूरियेटिकम २x (१०-१५ बून्द खानेके पहले) सेवनके लिये दी गई। ऊपर लिखी दवाओंका २-३ महीनोंतक सेवन करनेके बाद पेरेरा-ब्रूवा θ (पेशावका वेग रहते हुए भी बहुत तकलीफसे बून्द-बून्द पेशाब होनेके कुछ दिन बाद बेरकी गुठलीकी तरह पथरी निकली। पथरी निकलनेके बाद ही कुछ दिनोंतक कैल्के-कार्वका सेवन कराया गया। वे आज पाँच वर्षसे एकदम स्वस्थ हैं और ऊपर लिखी उपायोंके नावलम्बनसे उन्होंने दत्तपुर निवासी एक रोगीको आरोग्य किया है।

मूत्राशयकी पथरीकी प्रधान दवाएँ—सिपिया, सार्सापेरिला, कैल्केरिया-कार्ब।

नश्तर लगवानेके बाद—(बुखार और दर्द बन्द होनेके लिये) आर्निका, कैलेण्डुला, लीरो, बेल, नक्स-वोमिका, कैमो, चायना, क्युप्रम, विरे।

नीचे लिखी दवाएँ अवस्थाके अनुसार बराबर इस रोगमें व्यवहार की जाती हैं :—ऐकोन, एसिड, आक्जेलिक एसिड, फास, बार्बेरिस नक्स-वोम, लाइको, कैनाबिस, कैन्थ, नेट्रम-कार्ब, पोडो, मर्क और ओसिमम।

रोकनेवाली चिकित्सा—मूत्रपिण्डमें पथरी न पैदा होनेके लिये या पैदा हुई पथरी गला देनेके लिये नीचे लिखे उपाय काममें लाने चाहिये :—कभी-कभी लाइकोपोडियम २०० सेवन करनेसे बहुत जगह फायदा होता है। पेशाबके साथ पत्थरके कण (gravel) निकलनेपर और पीठ तथा कमरमें दर्द होनेपर, बार्बेरिस-वलगेरिस १x रोज चार बार सेवन करना चाहिये ; परन्तु जिन्हें गठिया वात (gout) हो या जिनके तन्तुओंमें युरिक-एसिड ज्यादा जमा हो, उनके लिये आर्टिका-युरेन्स θ (आठ घण्टेके अन्तरसे की मात्रा ५ बुन्द) देना चाहिये। चुआया हुआ पानी पीना बहुत फायदेमन्द है।

"चुना" और "पत्थर" एक ही चीज है। इसलिये पानके साथ चूना खाना मना है। युक्त-प्रदेशमें बहुतसे स्थानोंमें चावल वगैरहके साथ बहुतसे पत्थरके कण रहते हैं। ये रोगीके लिये हानिकर हैं ; इसलिये उसे भी त्याग देना चाहिये। कुएँका पानी, जिस कुएँमें चूने (lime) का भाग अधिक रहता है, उसे छोड़ देना चाहिये। मछली, मांस खाना या नशीली चीजें सेवन करना नुकसान करता है। सोडा (bicarbonate of soda) रोज व्यवहार करना भी मना है। कोई-कोई ताजा गायका दूध सेवन करनेकी सलाह देते हैं। यदि

परिश्रुत पानी (distilled water) न मिल सकता हो, तो साफ ठण्डा पानी ज्यादा मिकदारमें उसके बदले पीना चाहिये। "खाली पेट रहना अच्छा नहीं है।" जिससे पेटमें वायु इकट्ठी न हो, इस बातपर ध्यान रखना चाहिये। "पित्त-पथरी" रोगका पथ्य आदि देखिये।

जननेन्द्रियके रोग*

वीर्यपात और रेतस्खलन

(Emissions)

खूब कमजोरी या ज्यादा वीर्यपात रहनेपर, जो लोग संयमसे रहनेवाले हैं, उन्हें भी कभी-कभी रेतस्खलन हो जाता है।

चिकित्सा—कमजोरीके कारण रेतस्खलन होनेपर एसिड-फास १—६, चायना ३ या कैलि-फास ६x चूर्ण सेवन करना चाहिये। वीर्यकी अधिकताके कारण वीर्यपात होनेपर कैलि-ब्रोम ६x, पिकरिक-एसिड ३x चूर्ण या कोनायम ६ देना चाहिये। थियेटर जाना, बुरी संगत, नाटक नावेल पढ़ना और उत्तेजक खान-पान मना है।

स्वप्नदोष या धातु-दौर्बल्य

(Spermatorrhœa)

इच्छा न होनेपर भी वीर्यपात हो जानेको "धातु-दौर्बल्य" कहते हैं। सपनेमें (काम की उत्तेजना हुए बिना ही) धातु निकल जानेपर समझना चाहिये कि धातु-दौर्बल्य हो गया है। साधारणतः हस्तमैथुन,

*जननेन्द्रियके रोगोंका पूरा हाल जाननेके लिये हमारी प्रकाशित जननेन्द्रियके रोग" पुस्तक देखिये।

मूत्राशयकी पथरीकी प्रधान दवाएँ—सिपिया, सार्सापैरिला, कैल्केरिया-कार्ब।

नश्तर लगवानेके बाद—(बुखार और दर्द बन्द होनेके लिये) आर्निका, कैलेण्डुला, लोरो, बेल, नक्स-वोमिका, कैमो, चायना, क्यूप्रम, विरे।

नीचे लिखी दवाएँ अवस्थाके अनुसार बराबर इस रोगमें व्यवहार की जाती हैं —ऐकोन, एसिड, आक्जेलिक एसिड, फास, बार्बेरिस नक्स-वोम, लाइको, कैनाबिस, कैथ, नेट्रम-कार्ब, पोडो, मर्क और ओसिमम।

रोकनेवाली चिकित्सा—मुत्रपिण्डमे पथरी न पैदा होनेके लिये या पैदा हुई पथरी गला देनेके लिये नीचे लिखे उपाय काममे लाने चाहिये —कभी-कभी लाइकोपोडियम २०० सेवन करनेसे बहुत जगह फायदा होता है। पेशाबके साथ पत्थरके कण (gravel) निकलनेपर और पीठ तथा कमरमें दर्द होनेपर, बार्बेरिस-वलगेरिस १x रोज चार बार सेवन करना चाहिये, परन्तु जि हे गठिया वात (gout) हो या जिनके तन्तुओंमे युरिक-एसिड ज्यादा जमा हो, उनके लिये आर्टिका-युरेन्स θ (आठ घण्टेके अन्तरसे फी मात्रा ५ बुन्द) देना चाहिये। चुआया हुआ पानी पीना बहुत फायदेमन्द है।

"चूना" और "पत्थर" एक ही चीज है। इसलिये पानके साथ चूना खाना मना है। युक्त-प्रदेशमें बहुतसे स्थानोमें चावल वगैरहके साथ बहुतसे पत्थरके कण रहते हैं। ये रोगीके लिये हानिकर है, इसलिये उसे भी त्याग देना चाहिये। कुएँका पानी, जिस कुएँमे चूने (lime) का भाग अधिक रहता है, उसे छोड़ देना चाहिये। मछली, मांस खाना या नशीली चीजें सेवन करना नुकसान करता है। सोडा (bicarbonate of soda) रोज व्यवहार करना भी मना है। कोई-कोई ताजा गायका दूध सेवन करनेकी सलाह देते हैं। यदि

परिश्रुत पानी (distilled water) न मिल सकता हो, तो साफ ठण्डा पानी ज्यादा मिकदारमें उसके बदले पीना चाहिये। "खाली पेट रहना अच्छा नहीं है।" जिससे पेटमें वायु इकट्ठी न हो, इस बातपर ध्यान रखना चाहिये। "पित्त-पथरी" रोगका पथ्य आदि देखिये।

जननेन्द्रियके रोग*

वीर्यपात और रेतस्खलन

(Emissions)

खूब कमजोरी या ज्यादा वीर्यपान रहनेपर, जो लोग संयमसे रहनेवाले हैं, उन्हें भी कभी-कभी रेतस्खलन हो जाता है।

चिकित्सा—कमजोरीके कारण रेतस्खलन होनेपर एसिड-फास १—६, चायना ३ या कैलि-फास ६x चूर्ण सेवन करना चाहिये। वीर्यकी अधिकताके कारण वीर्यपात होनेपर कैलि-ब्रोम ६x, पिकरिक-एसिड ३x चूर्ण या कोनायम ६ देना चाहिये। थियेटर जाना, बुरी संगत, नाटक नावेल पढ़ना और उत्तेजक खान-पान मना है।

स्वप्नदोष या धातु-दौर्बल्य

(Spermatorrhœa)

इच्छा न होनेपर भी वीर्यपात हो जानेको "धातु-दौर्बल्य" कहते हैं। सपनेमें (काम की उत्तेजना हुए बिना ही) धातु निकल जानेपर समझना चाहिये कि धातु-दौर्बल्य हो गया है। साधारणतः हस्तमैथुन,

---

*जननेन्द्रियके रोगोंका पूरा हाल जाननेके लिये हमारी प्रकाशित जननेन्द्रियके रोग" पुस्तक देखिये।

ज्यादा स्त्री-सहवास या सूजाक वगैरहसे यह राग पैदा होता है। क्रिमि अर्श, बराबर घुड़सवारी करना, इन कारणोंसे भी यह बीमारी पैदा हो सकती है। स्मरण-शक्तिकी कमी, शरीर और मनकी सुस्ती, सलज्ज भाव, अग्निमान्द्य, कलेजेमें धड़कन, सरमें दर्द, सरमें चक्कर, खूनकी कमी वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। इसीसे ध्वजभग आदि बीमारियाँ भी पैदा होती हैं।

चिकित्सा—ऐगनस-केक्टस ६—शरीर और मनकी सुस्ती, अनमना भाव, कमजोरी, जननेन्द्रिकी कमजोरी और कामकी प्रवृत्ति प्रवल रहनेपर।

वेलिस-पेरेनिस θ—(पाँच बुन्द मात्रा कर रोज दो बार सेवन करना चाहिये) खासकर हस्तमैथुनसे पैदा हुए उपसर्गकी यह बहुत बढ़िया दवा है।

वैराइटा-कार्ब ६—रातके समय होनेवाले स्वप्नदोषकी यह सबसे बढ़िया दवा है।

थूजा θ—(की मात्रा ५ बुन्द) ज्यादा शुक्र-क्षय होनेकी यह सबसे बढ़िया दवा है।

एसिड-फास ३x, ३०—ज्यादा स्त्री-सहवास या हस्तमैथुनके कारण याददाश्तका कम हो जाना।

चायना ६, ३०—अक्सर जननेन्द्रियमें अस्वाभाविक उत्तेजना, कानमें भों-भों आवाज, चेहरा लाल, सरमें चक्कर।

फास्फोरस ६, ३०—सगमके समय बहुत जल्दी वीर्यपात और कमजोरी; रति-शक्तिकी कमी, कलेजा धड़कना, ज्यादा शुक्र-क्षय होना और हस्तमैथुनकी वजहसे लिंगमें कड़ापन एकदम हो न आना।

कैन्थरिस—सूजाककी वजहसे शुक्र-स्राव, पेशाबके साथ बुन्द-बुन्द धातु आना और जलन होना, सगम की प्रबल इच्छा।

कैल्के-कार्ब ६—मैथुन करनेकी बहुत इच्छा, परन्तु लिंगमें कड़ापन हुए बिना ही जल्दी-जल्दी वीर्य निकल जाना ; समूचे शरीरमें दर्द ; कमजोरी ।

लाइकोपोडियम २००—बहुत ही कमजोर करनेवाला स्वप्नदोष, बहुत ज्यादा वीर्य-स्राव, जननेन्द्रिय छोटी, शिथिल और ठंडी ; ध्वजभंग, कब्ज, अजीर्ण, पेट फूलना, कलेजा धड़कना ।

हस्तमैथुनसे पैदा हुए शुक्र-क्षयमें—"कैन्थरिस" ६ (मर्दोंके लिये) और 'प्लाटिना' ६ (स्त्रियोंके लिये) । "क्रिमिसे पैदा हुए शुक्र-क्षयमें", साइना ३x, २०० ।

प्लाटिना ६, नक्स-वोम ६, ३०, आरम-मेट ३x विचूर्ण, २००, ग्रैफाइटिस ३०, सल्फर ३०—२००, स्टैफिसाइग्रिया ६, जेल्स ३०, बैराइटा-कार्ब ६, इग्नेशिया ६, आर्जेण्टिम ६, ब्यूफो २००, सैलिनियम ३०, कैलेडियम ३०, पिक्रिक-एसिड ३०, कैल्के-फास १२x चूर्ण, लैकेसिस २००, लाइको २००, कोनायम ३०, नेट्रम ३० की कभी-कभी जरूरत पड़ती है । "जननेन्द्रियकी दूसरी बीमारीयों" की दवाएँ देखिये ।

नियम—सिर्फ दवा खानेसे ही यह बीमारी दूर नहीं होती । अच्छा साथ, उत्तम दवाका सेवन, सवेरे और तीसरे पहर घूमना, उत्तेजना न देनेवाली चीजें खाना-पीना, अच्छी बातें करना, हमेशा धर्म-ग्रन्थ पढ़ना, पेशाब करनेके बाद जननेन्द्रियको धो डालना चाहिये और रोज अवगाहन स्नान करना चाहिये । उत्तेजक चीजोंका खान-पान, खराब संगीत, अकेले रहना, थियेटर जाना, नाटक, नावेल पढ़ना, हस्तमैथून वगैरह हमेशा त्यागे रहना चाहिये । समयपर विवाह कर लेनेसे भी बहुतसे मौकोंपर फायदा होता है ।

एकशिरा या कोष-वृद्धि

(Hydrocele)

अंडकोष में सूजन होना या पानी (तीन पावसे डेढ़ सेरतक) जमा होनेको "एकशिरा" या आवमजूल कहते हैं। चोट लगाना, अंडकोषका झूल पड़ना, अंडकोषकी नसोंका सूजना, स्वास्थ्य खराब होना या शोथ आदिकि वजहसे "कोष-वृद्धि" होती है। कभी दर्द होना, कभी बिलकुल ही दर्द न होना ; खासकर एकादशीसे पूर्निमातक यह रोग बढ़ता है। एकशिरा खूब बढ़ जानेपर गोल तरबूजकी तरह दिखाई देता है। एकशिराके साथ कभी "कोरन्द"* रोग भी मौजूद रहता है।

चिकित्सा—स्पंजिया ३x, ६—अंडकोष फूला, रंग लाल और टपककी तरह दर्द।

रोडोडेण्ड्रन ३x, ६—नयी बीमारीमे फायदा करता है (खासकर "दाहिना अण्डकोष" आक्रात हो और उसमें दर्द हो या अन्धड़-पानीके पहले उसमें दर्द बढ़ता हो)। इससे फायदा न हो, तो "रस-टक्स" ६, ३० (खासकर सर्दी लगकर रोग बढ़नेपर)।

पल्सेटिला ३, ३०—बायाँ अण्डकोष आक्रान्त होनेपर (खासकर जब दर्द रहे और धीरे-धीरे अण्डकोष बढ़ता जाता हो)।

प्र फाइटिस ६, ३०—मुष्क-त्वजा और जननेन्द्रियका शोथ, बायीं ओर जल-सञ्चय ; मुष्क-त्वचापर फुन्सियाँ, कितनी ही बार इसके साथ ही स्वप्न-दोष भी होता है।

साइलिसिया ६ (यदि पूर्णिमा और अमावस्याको हमेशा रोग बढ़ता हो), हैमामेलिस १x (अण्डकोषके साथ शुक्ररज्जुकी शिरायें

---

* अंडकोषका बढना और उसके नीचेके हिस्सेके तन्तुका मोटापन "कोरन्द" कहलाता है।

बढ़नेपर), आर्निका ३ (चोट पैदा हुई बीमारीमें), कैल्के-कार्ब ६ (बच्चोंका एकशिरा), ब्रायोनिया ३ (खासकर जन्मके एकशिरामें)। एपिस ६, आयोड ६, रस-टक्स ६ और सल्फर ३० की बीच-बीचमें जरूरत होती है। सुई या बेलको काँटे द्वारा अंडकोषको दो तीन जगह छेदकर पानी बाहर निकाल देनेसे और लंगोट पहननेसे फायदा होता है। जरूरत पड़नेपर नश्तर लगवाना चाहिये।

मूत्राशय-मुखशायी-ग्रन्थिका बढ़ना

(Enlargement of the Prostate Gland)

बूढ़ापेमें मुखशायी-ग्रन्थि बढ़कर पुराना आकार धारण करती है, उस समय बहुत कष्ट होता है। बहुतोंका कहना है, कि इसकी दवा ही नहीं; परन्तु नयी बीमारीमें फेरम-पिक्रिक २x—३x व्यवहार करनेसे, बढ़ना रुक जाता है। पुरानी बीमारीमें, सोलिडेगो ३x या आर्ज-नाई ३x फायदा करता है। अस्त्र-चिकित्सककी भी कभी-कभी सहायता लेनेकी जरूरत पड़ती है। अगले अध्यायमें बताया हुआ—"मुखशायी-ग्रन्थि-प्रदाह" रोगमें सैबाल-सैरूलेटा दवा देखना चाहिये।

मुखशायी-ग्रन्थि-प्रदाह

(Prostatitis)

पुरुषके मुत्राशयके मुँहके चारों ओर (या मुत्राशय-ग्रीवामें) जो एक कड़ी गाँठ हैं, उसीका नाम "मुखशायी-ग्रन्थि या प्रास्टेट" (prostate) हैं। प्रमेह रोगकी वजहसे इस ग्रन्थिमें प्रदाह पैदा हो जाता हैं, तो उसे मुत्राशयका मुखशायी-ग्रन्थि-प्रदाह"* कहते हैं।

---

* मलान्त्रमें अंगुली डालनेपर यदि मुखशायी-ग्रन्थि फूली, गर्म और दर्द-भरी मालूम हो, तो समझना चाहिये कि "प्रदाह" हुआ है।

मुत्राधारमे (perinæum), मुत्र-मार्गमें और इन्द्रियकी जड़मे बहुत दर्द मालूम होना पाखाना-पेशाब बंध हो जाना, कभी-कभी पीव पैदा हो जाना, इस रोगका प्रधान लक्षण है।

चिकित्सा—प्रदाहकी नयी हालतमें, पल्सेटिला ३ और मर्क्यूरियस-सोल्युबिलिस ६ फायदेमन्द हैं। पुराने प्रदाहमें, कैलि-आयोड A. एक ग्रेन मात्रामें कुछ समयतक सेवन करना चाहिये। रोग बहुत पुराना होनेपर पल्सेटिला ६, नाईट्रिक-एसिड ३०, थूजा ६—३० या "सेबालसेरूलेटा" θ (रुलाई डाले बिना जिसे पेशाब ही नहीं होता, उनके लिये) की मात्रा पाँच बून्द देना चाहिये। चिमाफिला आम्बेलाटा ३x—२०० इसकी बहुत बढ़िया दवा है।

पीव पैदा हो जानेपर (तरुण अवस्थामें)—मर्क-सोल ६ या सल्फर θ और (पुरानी अवस्थामें)—सल्फर ३० या नाइट्रिक-एसिड ३०।

आर्निका ३x (चोटसे पैदा हुए प्रदाहमें), टैरेण्डुला ६ (हस्तमैथुन-जनित प्रदाहमें), एसिड-फास ३x (संगमके बाद प्रदाहमें)।

गर्म सेंक देना और रोगीको सुलाये रखना उचित है।

मुष्कत्वक-प्रदाह

(Scrotitis)

जिस चमड़ेकी थैलीसे पुरुषके दोनों अंड ढँके हैं, उसीका नाम मुष्कत्वक (scrotum)" है। प्रदाह होनेपर यह मुष्कत्वक फूला, काला और बाहरसे जख्म-भरा दिखाई देता है। कभी-कभी रोगीको जाड़ा लगकर जोरका बुखार होता है; जीभ सूखी और काली आभा लिये, प्रलाप, सड़न (mortification) वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—मुष्कत्वक फूला, अकड़ा और डंक मारनेकी तरह दर्दमें या गरमी सहन न होनेपर एपिस-मैल ३x—६। सड़नेकी तैयारी

या सड़नेकी अवस्थामें, आर्स-ऐल्ब ३x (एक महीनेके लगभग) सेवन करना चाहिये। कितनी बार साइलिसियाका प्रयोगकर भी फायदा होते देखा गया है।

अंडकोषका प्रदाह और वृद्धि
(Orchitis)

प्रमेह, गर्मी रोग (उपदंश) आदिके कारण अंडकोष और उसे ढँकनेवाली झिल्लीमें प्रदाह हो जाता है। प्रदाहके समय जल (या लसीकी तरह पदार्थ) निकलता है। धीरे-धीरे अण्डकोष सूज जाता है और खूब बड़ा और कड़ा हो जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी तरहकी तकलीफ नहीं मालुम होती और अण्डकोष पक जाता है (अर्थात् उसमें पीब और रक्त पैदा हो जाता है)।

चिकित्सा—नये प्रदाहमें—पल्सेटिला ३x, एकोन ६ (बुखार रहनेपर); बेल ६ (सूजन और लाल होना, गर्म मालूम होना); हैमामेलिस २x (हल्का बुखार बहुत जकड़न और विमर्ष-भाव) सेवन करना और हैमामेलिस θ (पन्द्रहगुने पानीके साथ) का धावन (lotion) बनाकर लगाना चाहिये।

पुराने प्रदाहमें—स्पंजिया २x (सूजन और सुई वेधनेकी तरह दर्द); क्लिमेटिस ३—६ (प्रमेहसे पैदा हुआ प्रदाह); मर्क-बिन २x (उपदंशसे पैदा हुआ प्रदाह); कोनायम ३ (पुरुषत्वहीनता), आरम-मेट ४x विचूर्ण, २०० (स्नायुशूलकी तरह दर्द)। आर्निका ६, सिपिया ३०, सल्फर ३०, सिलिका ६, हिपर ३०, मर्क ३ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है।

इसका बन्दोवस्त रखना चाहिये कि अण्डकोष न झूल पड़े। इसलिये लँगोटेका व्यवहार करना चाहिये। अण्डकोषको ऊपर उठाये रखनेसे प्रदाह कम हो जा सकता है।

ध्वजभंग (Impotence)

पुरुषोंकी रति-शक्ति आंशिक रूपसे घटना या एकदम न रहनेको 'ध्वजभंग" कहते हैं। इस रोगमें सन्तान पैदा करनेकी ताकत भी नहीं रहती। हस्तमैथुन, बहुत ज्यादा स्त्री-संगम वगैरह कारणोंसे यह बीमारी पैदा होती है।

चिकित्सा—सेबाल सेरुलेटा θ—(की मात्रा पाँचसे दस बून्दतक) कमजोरीके कारण संगम करनेकी ताकत न रहनेपर। हस्तमैथुन, बहुत ज्यादा संगम प्रभृति कारणोंसे ध्वजभंग इसका निर्देशक लक्षण है।

टेरेना-सैटाइवा θ—बहुत ज्यादा मानसिक परिश्रम, अस्वाभाविक मैथुन, अनियमित इन्द्रिय-परिचालन प्रभृति कारणोंसे ध्वजभंग हो जानेकी एक बढ़िया दवा है। पाँच बून्दकी मात्रामें दिनमें दो बार सेवन करना चाहिये।

नये रोगमें ऐग्नस-कैक्टस २x—३। रोग पुराना होनेपर, लाइको ३०—२००, एसिड-फास २x, (बहुत ज्यादा स्त्री-संगम होनेके कारण), ऐनाकार्डियम ६ (हस्तमैथुन या वेश्या-सहवासकी वजहसे स्वास्थ्य-भंग होनेके कारण "ध्वजभंग" रोग पैदा हुआ है, ऐसी भ्रान्त धारणा हो जानेपर)।

ऐग्नस-कैक्टस २x, ३—रोग हल्का होनेपर (खासकर रोगकी पहली अवस्थामें)।

फास्फोरिक एसिड १, ३—बहुत ज्यादा स्त्री-संगम करनेके कारण बीमारी पैदा होनेपर।

लाइकोपोडियम ३०, २००—रोग पुराना होनेपर।

ऐनाकार्डियम ६, २००—जो युवक हस्तमैथुन या वेश्या-सहवासके कारण स्वास्थ्य-भंग हुआ समझकर यह मान लेते हैं, कि उन्हें ध्वजभंग

हुआ है, इस शंकासे वे विवाह नहीं करना चाहते, उनके लिये यह बहुत बढ़िया दवा है।

स्टैफिसेग्रिया ३, ३०—अवैध या अनियमित इन्द्रिय-परिचालन हमेशा उसी विषयको सोचते रहना, शरीर दुबला, लज्जासे झुकी दृष्टि, पीठमें दर्द, सारे शरीरमें कमजोरी मालूम होना प्रभृति लक्षणोंकी स्टैफिसेग्रिया बढ़िया दवा है।

आर्निका ३ या हाइपेरिकम १x (चोट वगैरह लगनेसे बीमारी होनेपर); नक्स-वोम ३०, कोनायम ३, क्यूप्रम-एसेटिकम ६x चूर्ण, एसिड-नाइट्रिक ३—३०, सेलिनियम ६, जेल्स १x, ३०, कैल्के-कार्ब ३०, फास्फो २००, सल्फर ६—१०० वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक होती है। यदि सभी दवाएँ बेकार साबित हों तो "ब्यूफो" ३० की परीक्षा करनी चाहिये।

जननेन्द्रियके "दूसरे-रोग" और (स्त्री-रोग अध्यायमें) "बन्ध्यत्व" देखिये।

नियम—सात्विक भावसे रहना, दूध, घी, मक्खन, मटर वगैरह पुष्ट भोजन खाना चाहिये। कामोद्दीपक दवाएँ (aphrodisiacs) खाना बहुत नुकसान करता है। समाचार पत्रोंके विज्ञापनके फेरमें पड़कर बहुतसे लोग अपना स्वास्थ्य हमेशाके लिये खो बैठते हैं।

जननेन्द्रियकी कई दूसरी बीमारिया

छुछड़ा (Phimosis) या लिंग-मुण्ड (सुपारी) को ढँकनेवाला चमड़ा न खोल सकना। मर्क-कोर (छुछड़ा फट जानेपर fissures होनेपर); रस-टक्स ६ (त्वचा खुजलाने या प्रदाहित होनेपर); कैनाबिस ३x (सूजन, लाल रंगकी और गर्म होनेपर)। प्रकृत प्रमेह-रोगमें "छुछड़ा" देखिये।

उलटा छुछड़ा (Paraphimosis) या लिंग-मुण्डको छिपानेवाले चमड़े से लिंग-मुण्डको छिपा न सकना—कोलोसिन्थ ६। प्रकृत-प्रमेह रोगमें "उलटा छुछड़ा" देखिये।

मन्यौष (Balanitis) या सुपारी (लिंग-मुण्ड) की श्लैष्मिक-झिल्लीका प्रदाह और पीव निकलना—नाइट्रिक-एसिड ६। लिंगका चमड़ा खुजलानेपर, जलन होनेपर या उसपर फुन्सियाँ होनेपर या पपड़ी पड़ जानेपर); पल्सेटिला ३ (चमड़े के नीचे पीले रंगका रस या पीव निकलनेपर); थूजा ३० (मसा या श्लेष्माकी फुन्सियाँ होनेपर)। गर्म पानी और साबुनसे प्रदाहित स्थानको हमेशा धोकर साफ रखना चाहिये। प्रकृत-प्रमेह रोगमें "मन्यौष" देखिये।

हस्तमैथुन (Masturbation) अर्थात् हाथसे (या किसी दूसरे अस्वाभाविक उपायसे) रति-क्रिया पूरी करना। कैन्थरिस ३x, ६ (पुरुषोंके लिये), प्लाटिना ६ (औरतोंके लिये)। "ओरिगेनम मेजोरेना" ३ भोजनके कुछ ही पहले सेवन करनेसे यह बुरी आदत छूट जाती है। बालक-बालिकायें यह पाप-कार्य न करें, इसपर उनके अभिभावकोंको हमेशा नजर रखनी चाहिये। साफ-सुथरे रहना, मन और शरीरको शुद्ध रखना, बराबर परिश्रम करना, ठण्डे कमरेमें खाटपर सोना, शुद्ध कड़ी हवाका सेवन करना वगैरह स्वास्थ्यके नियम पालन करने चाहियें। हस्तमैथुनका अभ्यास छोड़नेके बाद स्वप्न-दोष हो सकता है।

हस्तमैथुनसे पैदा हुए रोगमें—फस्फोरस ६—२००, सल्फर १२, एसिड-फास १—३० दवायें फायदेमन्द हैं।

अपूर्णाङ्ग मैथुन (Conjugal Onanism) सन्तान होना रोकनेकी इच्छासे, रमणके समय संगम-इन्द्रियपर आवरण (protector) पहनना या रमणके समय वीर्यस्खलनके कुछ पहले हट जाना वगैरहको "अपूर्णाङ्ग-संगम" कहते हैं। इससे स्वास्थ्य और मनकी प्रसन्नता एकदम

नष्ट हो जाती है। एक चिकित्सकका कहना है कि इसका परिणाम हस्तमैथुनसे भी बुरा होता है। फास्फोरस ३—३०, उपयुक्त आहार आबहवा बदलना और बहुत समय, कम-से-कम एक हफ्तेका समय देकर अच्छी तरह रति-क्रिया सम्पन्न करना उचित है।

ज्यादा हाल और चिकित्साके लिये हमारी प्रकाशित "जननेन्द्रियके रोग" (सचित्र) पुस्तकके "हस्तमैथुन" अध्याय देखिये।

अधिक संगमेच्छा या कामोन्माद—प्लाटिना ६, २०० (औरतोके लिये) ओर पिकरिक-एसिड ६ (पुरुषोंके लिये)।

जननेन्द्रियकी कमजोरी और संगमसे वितृष्णा—एसिड-फास १—६ और जेलसोमियम १x—३ (लिंगेन्द्रियकी दुर्बलतामें) और ऐमोन-कार्ब ३x या ग्रैफाइटिस ६ (औरतोंकी संगमकी इच्छा न होनेपर)। स्वाभाविक दुर्बलता या ज्यादा इन्द्रिय परिचालनकी वजहसे पुरुषोंकी संगम-इन्द्रिय एकदम कमजोर या बेकार हो जानेपर सैबाल-सेरुलेटा θ (फी मात्रा ५ से ७ बुन्दतक) रोज दो बार सेवन करनेसे, अक्सर बहुत फायदा होता है।

आंशिक असमर्थतामें—कैल्के-कार्ब ६। एकदम असमर्थ होनेपर जेल्स θ (खासकर संगमेन्द्रिय शिथिल या उत्तेजनाहीन होनेपर)। दूसरी दवाओंके लिये हमारी प्रकाशित "जननेन्द्रिय रोग" देखना चाहिये। ज्यादा संगमकी वजहसे असमर्थ होनेपर लाइको ३० या एसिड-नाइट्रिक ६—३० देना चाहिये (लाइकोसे फायदा न होनेपर ऐजनस-कैस्टस १)। "ध्वजभंग" देखिये।

"गर्मी, सूजाक" वगैरह रोगोंका हाल और इलाजके लिये आगे लिखा "रतिज-रोग" अध्याय देखिये।

रतिज रोग

(Venereal Diseases)

"गर्मी" और "सूजाक" इन्द्रिय-दोषसे पैदा हुई बीमारियाँ हैं, इसीसे इन्हें "रतिज-रोग" कहते हैं। रतिज-रोग भी संक्रामक है। रतिज-रोगके सम्बन्धमें सर्वसाधारणके जानने योग्य बातें और इलाज नीचे लिखा जाता है। ज्यादा विवरणके लिये 'परिशिष्ट' (ख)— 'धातु दोष और उसका निराकरण' देखिये।

उपदंश

(गर्मी—Syphilis)

गर्मीकी बीमारी जिसे हो, उसके साथ सहवास करनेके बाद अच्छे-चंगे मनुष्योंकी जननेन्द्रियमें 'घाव' (chancre सैंकर या घाव) पैदा हो जाता है—यही बीमारिका प्रधान लक्षण है। जख्म यदि बढ़ा हुआ दिखाई दे, तो उसे "कठिन क्षत" (hard chancre) उपदंश कहते हैं। जख्म कोमल होनेपर "कोमल क्षत" (soft chancre) उपदंश कहा जाता है। कठिन क्षतवाले गर्मी रोगमें रक्त-दोष हो जाता है (अर्थात् समूचा शरीर दूषित हो जाना) और "कोमल क्षत उपदंश" रोगमें शरीर दूषित नहीं होता। पहले डाक्टर लोग समझते थे कि "कोमल" और "कठिन क्षत" एक ही बीमारीके दो रूप हैं ; परन्तु अब निःसंशय रूपसे प्रमाणित हो गया है कि यह दूसरा ही रोग है ; पर दोनों ही भिन्न-भिन्न प्रकारके संक्रामक विष (virus) या जीवाणु (bacillus) से पैदा होते हैं। पहले उपदंश रोग इस देशमें न था। शायद युरोपियनोंने यह बीमारी इस देशमें फैलायी है। इसीसे इसका दूसरा नाम "फरंग" रोग है।

कठिन-क्षत उपदंश

ट्रेपोनिमा-पैलाइडम या स्पाइरोकिटा-पैलाइटा (Treponema Pallidum or Spirocnœta pallida) नामक जीवाणु "कठिन-क्षत उपदंश" रोगका मुख्य कारण है। यह "जीवाणु" या "संक्रामक-विष", किसी तरह अच्छे शरीरमें प्रवेश कर जानेपर यह रोग पैदा होता है। कठिन-क्षत उपदंश जिसे हुआ हो, उसके साथ संगम, दूषित जख्मका छू जाना या रस लगना; रोगीके कपड़े, गमछा, कागज, गिलास, हुक्का, छुरा वगैरह चीजें काममे लाना, असावधानतासे रोगीकी सेवा-सुश्रूषा या इलाज आदि करना वगैरह कितने ही उपायोंसे, यह विष अच्छे-भले शरीरके किसी पतले या कटे हुए चमड़ेसे या श्लैष्मिक-झिल्लीकी राहसे शरीरमें चला जाता है। सहवासके पहले यदि पिता-मातामें यह रोग हो, तो लड़कोंमें भी आ सकता है। अच्छे चमड़ेके किसी पतले या कटे हुए अंश या श्लैष्मिक झिल्लीमें यह जहर लगकर, जब खूनमें मिल जाता है, तब वहाँ जख्म या घाव हो जाता है। यह घाव हमेशासे पहले जननेन्द्रियमें ही होता है; परन्तु कभी-कभी ओंठ, हाथकी अंगुल वगैरह दूसरे अंगोंमें भी यह जख्म पहले दिखाई देता है। साधारणतः औरत, मर्द—दोनोंसे किसी एकको भी जख्म या सैंकर रहनेपर सहवासके बाद (लगभग तीन हफ्तोंमें) या विष मर्दसे औरत और औरतसे मर्दकी संगमेन्द्रियमें आता है। पहले "एक लाल कड़ी," दर्द-हीन फुन्सी पैदा होती है। इसके बाद संगम-इन्द्रियसे वह शरीरके दूसरे-दूसरे अंशोंमें (जैसे—ओठ, जीभ, स्तनका बोंटा, अंगुली नाभी, उरु, मलद्वार वगैरहमें) फैल जा सकता है। यह भयानक रोग इस तरह सब अंगको दूषित कर डालता है, इसीसे उसे "सर्वाङ्गीन उपदंश भी कहा जाता है। इसीका दूसरा नाम गर्मी, फिरंग रोग, प्रकृत उपदंश या सिफिलिस है। प्रकृत उपदंश रोगमें सबसे पहले

"विष लगे स्थानमें, फिर खूनमे" और अन्तमें शरीरके "तन्तुओमे" बीमारी पैदा हो जाती है। प्रकृत उपदंशका जहर फैल जानेपर, बहुत दिनोंतक या सारी जिन्दगी उसका बुरा फल भोगना पड़ता है। अतएव, इसका इलाज अत्यन्त सावधानीसे करना चाहिये।

उपदंशका जहर शरीरमे लगनेसे लेकर जबतक जख्म न दिखाई दे, तबतक उसे उपदंश रोगकी "अप्रकाश अवस्था (incubation stage)" कहते हैं। इस अवस्थामे स्थितिकाल १० से ६० दिन (हमेशा २१ दिन)। इस अवस्थामे रोगीके शरीरपर कोई उपसर्ग नही दिखाई देता। अप्रकाश अवस्थाके अन्तमें, इस बीमारीको एकके बाद दूसरी इस तरह तीन अवस्थाएँ दिखाई देती हैं :—

प्राथमिक अवस्था (Primary Stage)—विष फैलनेके प्रायः तीन हफ्तेके बाद, जहर लगी हुई जगह खुजलाने लगती है ; फट जानेकी तरह (कभी-कभी कुछ कड़ी) दिखाई देने लगती है। इसके बाद *वहाँ मटर-जैसा कड़ा, बिना पीबका एक गोल जख्म हो जाता है।* इस जख्मके चारो ओरकी धार ऊँची और कड़ी, बिचला भाग गहरा होता है और जख्मसे पासके पट्टे की गाठें धीरे-धीरे बढ़ने और कड़ी होने लगती है (अर्थात् बाघी पैदा हो जाती है)। महीने, डेढ़ महीनेके बाद घाव धीरे-धीरे आराम होने लगता है, बाघी भी कुछ-कुछ बैठ जाती है ; परन्तु कुछ बढ़नेका भाव मौजूद रहता है। ठीकसे इलाज न होनेकी वजहसे अगर *संगमेन्द्रिय कुछ गलकर गिर जाये, तो समझना* चाहिये कि अवस्था बिगड़ी हुई है। जबतक पहलेका घाव और बाघी मौजूद रहे, तबतक रोगकी "प्राथमिक अवस्था" है। इस प्राथमिक अवस्थाका स्थिति-काल दो हफ्तोसे छः महीनेतक है।

द्वितीय या गौण अवस्था (Secondary Stage)—ऊपर कही हुई पहली, घाव पैदा होनेवाली अवस्थामे, घाव पैदा होनेके तीन-चार महीने बाद, रोगीको बुखारका भाव, कमजोरी, सर-दर्द, हक्त-

स्वल्पता, गलेमें घाव, श्लैष्मिक-झिल्लीमें घाव, चर्म-रोग, उपतारा-प्रदाह, केश उड़ जाना, सन्धि और हड्डियोंमें दर्द वगैरह उपसर्ग उपस्थित हो सकते हैं। दूसरी अवस्थामें रोगीके सम्पूर्ण शरीरका खून दूषित और जहरीला हो जाता है। दूसरी अवस्थाका स्थितिकाल १ से ५० वर्षतक है।

तीसरी अवस्था (Tertiary Stage)—दो-तीन वर्षके भीतर दूसरी अवस्थाके उपसर्ग अच्छी तरह अच्छे न हो जानेपर अथवा रोगी कुछ दिन अच्छा रहनेके बाद धीरे-धीरे तीसरी अवस्थामें अथवा इस अवस्थामें शरीरके तन्तु रस-रक्त, हाड़-मांस, भीतरी यंत्रोंके उपादान सब—आक्रान्त होकर नष्ट होने लगते हैं। मुख-गह्वर, गलकोष चमड़े आदिका जखमका फैल जाना और पीव जमा होना, पेशी, हड्डियाँ हृतपिण्ड आदिका विशेष रूपसे आक्रान्त होना और अस्थि-वेष्ट", अंडकोष, मस्तिष्क, यकृत आदिमें "अर्बुद" (gummrta) उत्पन्न होना, इस "तीसरी" अवस्थाके प्रधान लक्षण हैं। इस अवस्थाका स्थितिकाल—अनिर्दिष्ट है।

दूसरी या तीसरी अवस्थामें कितने ही उपसर्ग, कितने ही ढँगसे दिखाई देते हैं। उनका इस छोटेसे ग्रन्थमें पूरा-पूरा वर्णन करना असम्भव है। पूरे विवरण और चिकित्साके लिये, हमारी प्रकाशित "जननेन्द्रियके रोग" (सचित्र) ग्रन्थ देखिये। उपदंश रोगीकी 'तकलीफ' शाम (सूर्यास्त) से सूर्योदयतकके बीच (अर्थात् रातके समय) बढ़ जाती है।

चिकित्सा—यदि यह कहा जाये कि जरूरतके मुताबिक पारा या मर्करी ही इस रोगकी एकमात्र दवा है, तो असंगत न होगा। हल्के उपदंश रोगको "पहली और दूसरी" अवस्थामें एकमात्र मर्क-सोल ६ नियमके अनुसार सेवन करनेसे रोग कम होने लगता है ; पहले उपदंशके

घाव और गौण अवस्थाके गले हुए घाव और पीव-भरे फोड़ोंमें यह ज्यादा फायदा करता है। जख्म दिखाई देते ही मर्क-सोलका सेवन आरम्भ कर देनेसे बाघी अकसर नही पकती। यदि उपदंश कठिन रूपका हो, तो मर्क-सोलके बदले रोगीको (पहली और दूसरी अवस्थामें) "मर्क-प्रोटो-आयोड 2^x सेवन करना चाहिये। रोगकी 'तीसरी अवस्थामें केलि-आयोड' मूल विचूर्ण ३० (मात्रा ५ ग्रेन) प्रधान दवा है। कम-से-कम दो वर्षतक इलाज होनेपर रोग आराम हो जाता है। रोगकी पहली, दूसरी और तीसरी सभी अवस्थाओंमें बीच-बीचमें (अर्थात् दो-तीन महीनेके बाद) "सिफिलिनम" ३० एक-एक मात्रभर सेवना करना बहुत अच्छा है। सिफिलिनम सेवनके दो दिन पहले और दो दिन बाद, कोई दूसरी दवा न खानी चाहिये।

ऊपर लिखी दवाओंको सहायता पहुचानेके लिये नीचे लिखे दवाएँ (मौके-मौकेपर आवश्यक होनेपर) सेवन कराई जाती हैं :— बाघी बढ़ती रहनेपर, फाइटोलैका ३। पीव-भरी फुन्सियाँ या चकत्तेमें ग्रैफाइटिस ६। तांबेके रंगके चकत्तेमें, सल्फर ६। बहुत पीव जमा हो जानेपर, सिलिका ६। जख्म पैदा करनेवाला स्राव या जलन करनेवाले दर्दमें आर्सेनिक ६। गांठें आक्रान्त होने या नाकमें जख्म होनेपर या नाक गलना आरम्भ हो जानेपर, "आराम-मेट" ६। रोगकी पुरानी अवस्थामें क्षय करनेवाला घाव या बहुत ज्यादा पारेका अपव्यवहार करनेपर, "एसिड-नाइट्रिक" ६। मसे और फूलगोभीकी तरह बतौड़ी होनेपर थूजा ६। बहुत ज्यादा मात्रामें मर्करी (पारा) सेवन और गर्मीका ज़हर, इन दोनोके ही मिल जानेके कारण पैदा हुए रोगीके शरीरके उपसर्गमें (जैसे—हड्डियों, मसूढ़ा आदि आक्रान्त होनेपर), तो "हिपर-सल्फर" ६, ३०। रातमें हाड़ोंमें ज्यादा दर्द होता हो, तो "मेलेरियम" ६। आँखोकी बीमारीमें 'सिनाबैरिस' 3^x विचूर्ण वात-रोगमे "केलि-आयोड" θ—३०।

आनुसंगिक चिकित्सा—नीमके पत्तेको उबालकर, गर्म पानीसे घाव धोना और उसपर गेन्देके पत्तेका रस या कैलेण्डुला θ का प्रयोग करना चाहिये। यदि बाघी पक जाय, तो तीन-चार घण्टेका अन्तर देकर उसपर तीसीकी पुल्टीस लगानी चाहिये। मछली, मांस, दही या मिठाई खाना या शराब पीना अथवा कोई दूसरा नशा करना, तम्बाकू खाना, रातमें जागरण, वगैरह मना है। भोजन पुष्ट, पर हल्का होना चाहिये। बुखार न रहे, तो रोज बदन पोछकर गर्म पानीसे नहा डालना चाहिये। रोगीको अपने दाँत हमेशा साफ रखना चाहिये।

मनुष्योंको जीवनमें कभी किसी दशामें एक से अधिक बार "प्रकृत उपदंश" रोग नहीं होता। परिशिष्ट "ख" देखिये।

जन्मगत उपदंश

नये पैदा हुए उपदंशकी अपेक्षा माँ-बापसे पाया हुआ उपदंश खतरनाक होता है। लड़का पैदा होनेके महीना, डेढ़ महीना बाद या इसके बीचमें ही, शिशुके चूतड़, पेट, तलहत्थी और पैरोंमें (उपदंश रोगकी दूसरी अवस्थामें) चर्म रोग दिखाई देता है। नाक बैठ जाती है और शरीर धीरे-धीरे कमजोर होने लगता है।

चिकित्सा—गर्भावस्थामें माताके लिये मर्क-सोल ६ और पैदा होते ही बच्चेके लिये भी मर्क-सोल ६ फायदेमन्द है। जख्म रोज गर्म पानी से धो डालना चाहिये और उसे कपड़े ढके रखना चाहिये।

प्रकृत उपदंश और जन्मगत उपदंशके सम्बन्धकी जानने योग्य बातें और चिकित्साके लिये "परिशिष्ट (ख) धातु-दोष और उसका निराकरण" देखिये।

कोमल-क्षत उपदंश
(Chancroid)

डुक्रे-जीवाणु (ducrey's bacillus) "कोमल-क्षत उपदंश" रोगका मुख्य कारण है। कोमल घाववाली गर्मी रोगवाले मनुष्यके संगम या छूनेकी वजहसे यह रोग निरोग मनुष्यके शरीरमें घुस जाता है और उसे "कोमल-क्षत उपदंश" रोग हो जाता है। इस रोगका विष शरीरमें फैल नहीं जाता, सिर्फ लिङ्गकी पीठपर कोमल क्षत पैदा करता है, सब अङ्ग दूषित नहीं बना देता है। इसलिये कठिन-क्षत उपदंश" की भाँति यह भयानक नहीं है और जल्दी ही अच्छा हो जाता है।

इसमें हमेशा संगमके बाद, तीन दिनके भीतर ही संगम-इन्द्रियपर जख्म दिखाई देता है। घाव एकसे ज्यादा भी हो जाता है, देखनेमें साधारण घाव-जैसा रहता है—कोमल, दर्द-भरा और उससे पीब भी बहता है। कभी-कभी सड़ने भी लगता है। घावका किनारा ऊँचा रहता है। बीचका भाग छिछला और नीचेका भाग स्पंजकी तरह छेददार। यह कोमल-क्षत होनेके लगभग तीन सप्ताह बाद बाघी होती है। यह बाघी एक बड़े आकारकी और इसमें पीब पैदा होता है; परन्तु कठिन-क्षतवाले उपदंशमें बाघी की कई गाँठें होती हैं, छोटी होती है और उनमें पीब नहीं पैदा होता। साधारणतः कोमल-क्षतवाली गर्मी दो महीनेमें ही अच्छी हो जाती है; परन्तु अच्छी तरह इलाज न होनेपर यदि संगम-इन्द्रिय सड़ने लगे और गलकर गिर जाये, तो रोगी मर जा सकता है। इसलिये बड़ी होशियारीसे इलाज करना चाहिये।

चिकित्सा—मर्क-सोल २x विचूर्ण—६ के सेवनसे इस रोगका जख्म और बाघी अच्छी हो जाती है। यदि मर्क-सोलसे फायदा न

हो, तो नाइट्रिक-एसिड ३—६ देना चाहिये। घाव अगर सड़ने लगे, तो आर्सेनिक ३ लाभदायक है।

आनुसंगिक चिकित्सा—"कठिन-क्षत उपदंश" रोगकी आनुसंगिक चिकित्सा और "परिशिष्ट (ख)" देखिये। इस रोगके तीन तरहके घाव, मसे सिकुड़े हुए, घावका चिह्न वगैरहका विवरण और इलाजके लिये, हमारी प्रकाशित "जननेन्द्रिके रोग" (सचित्र) पुस्तक देखिये।

प्रमेह (सूजाक)
(Gonorrhœa)

सूजाकवाले रोगीके साथ संगम करनेके बाद, स्वस्थ आदमीके मूत्र-मार्ग या पेशाब जलन होना और वहाँसे पीवके जैसा मवाद आना सूजाकका प्रधान लक्षण है। कई हफ्ते बाद अगर रोगीको मसे, रक्त-स्वल्पता वगैरह समूचा शरीर दूषित कर देनेवाले उपसर्ग दिखाई दें, तो उसे "सर्वाङ्गीन प्रमेह" या "यकृत-प्रमेह" कहते हैं और यदि मसे, रक्त-स्वल्पता वगैरह सब अंगको दूषित करनेवाले उपसर्ग न पैदा हों, तो उसे "एकाङ्गीन प्रमेह" कहते हैं। दोनों प्रकारके ही प्रमेह संक्रामक हैं और दोनों ही अलग-अलग तरहके विषसे उत्पन्न होते हैं। प्रमेह रोगको "मेह" या "सूजाक" भी कहते हैं।

प्रकृत-प्रमेह या सर्वाङ्गीन-प्रमेह

गोनोकोकस (gonococcus) नामक जीवाणु "प्रकृत-प्रमेह" का मुख्य कारण है। यह जीवाणु या संक्रामक विष (virus) किसी तरह निरोग मनुष्यके शरीरमें फैल जानेपर उसे यह बीमारी हो जाती है। "प्रकृत-प्रमेह" रोगवाले मनुष्यके साथ संगम, दूषित स्रावका संस्पर्श या

स लगना, रोगीकी सेवा-सुश्रूषा, चिकित्सा आदि करना वगैरह कितने ी कारणोंसे यह विष अच्छे शरीरमें जा सकता है। गर्भके पहले पिता या माताको यह रोग होनेपर, उनके बच्चोंमें भी यह जहर फैल सकता है। हमेशा प्रमेह विषसे दूषित मनुष्योंका सग करनेपर यह जहर अच्छे-भले मनुष्योंके मूत्र-मार्गसे भीतर जाता है और पहले वहाँकी श्लैष्मिक झिल्ली प्रदाहित होती है, इसके बाद वहाँसे मवाद निकलने लगता है। जैसे—प्रमेह रोगवाली स्त्रीके साथ सगम करते समय वीमारी मर्दकी मूत्रनलीपर हमला करती है। इसके वाद वह मूत्रनलीसे सरलान्त्र, मुख-गह्वर, आँखें वगैरह दूसरे अगोंपर भी फैल जाती है और जिस मर्दको प्रमेह हो, उसके साथ ससर्गके समय, औरतके पेशाबकी नली और जननेन्द्रियपर भी वीमारीका हमला हो सकता है। पुरुषोंके मूत्र मार्गकी बनिस्बत, स्त्रीका मूत्र मार्ग छोटा होता है। इसलिये, स्त्री प्रमेह रोग उतनी तकलीफ देनेवाला नहीं होता।

प्रमेहका जहर मर्दोंके स्वस्थ शरीरमें प्रवेश करनेके दो एक दिन बाद मूत्र मार्गका वाहरी मुँह (meatus urinarius) खुजलाया करता है, लाल हो जाता है और वहाँसे सफेद "पतला स्राव" निकला करता है और भी दो तीन दिन वाद सगमेन्द्रिय फूल जाती है, पेशाबके वक्त तेज जलन और दर्द पैदा होता है और बहुत-सा पीला या हरा या दूधकी तरह या खून भरा गाढ़ा स्राव या पीव निकला करता है। पुट्ठे, उरु, अडकोष आदि अकड़ने लगते हैं या दर्द होता है और लिंगेन्द्रिय कुछ कड़ी हो जाती है और दूसरे दूसरे अग भी आक्रान्त हो सकते हैं तथा अन्तमें (अर्थात् दो-तीन हफ्ते बाद) "मवाद क्रमसे पतला, श्लेष्मा और पीव-मिला" या पतला हरी आभा लिये हुआ करता है और जलन कम हो जाती है। जबतक 'सफेद आभा लिये पतला स्राव' मौजूद रहता है, तबतक प्रमेह रोगकी प्रथम या आक्रमण अवस्था (स्थितिकाल हमेशा दो-तीन दिन) जबतक गाढ़ा पीव निकलता हो, तबतक रोगकी दूसरी

या 'तरुण-प्रदाह अवस्था' (स्थितिकाल लगभग दो-तीन सप्ताह) और जबतक स्राव 'पतला श्लेष्मा पीव-भरा' रहता है, तबतक रोगकी तीसरी या 'ह्रास अवस्था' (स्थितिकाल कुछ ठीक नहीं, हमेशासे तीन-चार सप्ताह) है। तीसरी अवस्थाका दूसरा नाम "लालामेह" (gleet—ग्लीट) अवस्था है।

नीरोग स्त्रीकी देहमें प्रमेहका जहर फैलनेपर, योनिदेश फूला, लाल और दर्दसे भरा रहता है और उससे स्राव बहता है, पेशाबमें जलन होती है और फिर समूची जननेन्द्रियपर हमला होता है। इसके बाद जलन और तकलीफ कम हो जाती है और बीमारी आराम होनेकी ओर पलटती है। उचित होमियोपैथिक दवा सेवन करनेके सिवा प्रकृत प्रमेहका जहर शरीरसे पूरी तरह नहीं निकल पाता ; यदि चिकित्सा उलटी-पलटी न हो, तो स्राव हमेशा सात-आठ हफ्तोंमें बन्द हो जाता है और मालूम होने लगता है कि बीमारी आराम हो रही है ; परन्तु थोड़ी ही गड़बड़ी होनेसे प्रमेह रोगके परिणामस्वरूप बहुतसे उपसर्ग दिखाई देने लगते हैं। जैसे—लिंगेन्द्रियका कड़ा होना, टेढ़ा होना, मन्योष, चमड़ी, उल्टी चमड़ी रोग, अंडकोष-प्रदाह, योनि-प्रदाह, खूनका पेशाब, बदनपर, मसे, आँखोंका प्रदाह, बाघी, वात, बहुत दिनतक ठहरनेवाला लालमेह और उससे पैदा हुआ मूत्रनलीका सिकुड़ना, मूत्र-रोध वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। प्रमेह रोगकी और उसके बादके उपसर्गोंकी चिकित्साके योग्य उपयोगी दवाएँ क्रमसे नीचे लिखी जाती हैं। अधिक विवरण और चिकित्साके लिये, हमारी प्रकाशित "जननेन्द्रियके रोग" (सचित्र) पुस्तक देखिये।

प्रमेहके रोगीकी 'तकलीफ' सूर्योदयसे सूर्यास्त अर्थात् "दिनमें बढ़ती है।"

चिकित्सा—आक्रमणावस्थामें—सिपिया ३०। प्रदाहावस्थामें—ऐकोनाइट ३x (प्रदाहकी पहली अवस्थामें बुखारका लक्षण रहनेपर)

और कैनाबिस. सैटाइवा θ (ऐकोनाइट खानेसे प्रदाह क्रम होता जाता हो, बार-बार पेशाब, मवाद जाना, खूनका पेशाब, तेज जलन इत्यादि लक्षणोंमें)। ह्रास अवस्थामें—पहले थूजा ६—३०, इसके बाद नाइट्रिक एसिड ३—३० (खासकर अगर पहले ज्यादा मर्करी या पारा सेवन कराया जाये)। स्त्रीके सूजाकमें—'कोपेवा' ३x और 'सिपिया' ३० उपयोगी है।

Dr. E Jones कहते हैं कि शरीरसे प्रमेहका जहर पूरी तरह निकाल देनेके लिये, बहुत दिनोंतक थूजा सेवन करना बहुत जरूरी है। वे कहते हैं कि बीमारीकी हालतके मुताबिक चाहे कोई भी दवा क्यों न खायी जाये, लेकिन रोज, रातमें 'सोनेके पहले थूजा' ३०, दस बुन्द व्यवहार करना चाहिये (Hom. Recorder Feb. 1923 देखिये)। इस तरहकी व्यवस्थासे प्रमेहका जहर शरीरसे एकदम निकल जाता है।

ऊपर कही हुई दवाओंकी सहायतासे हमेशा बीमारी आराम होने लगती है। बादके उपसर्गों के लिये, दूसरी-दूसरी दवाओंको जरूरत पड़ सकती है। जैसे—

मन्यौष—उपसर्ग (अर्थात् लिंगमुण्डपर बीमारी होकर, उसकी श्लैष्मिक-झिल्लीमें प्रदाह पैदा होनेपर और ज्यादा पीव निकलनेपर)—मर्क-सोल ६ सेवन और लिंगमुण्डको साफकर, कैलेण्डुला θ (१० बुन्द १ औंस पानीमें) धावनसे सुपारीको भिगोये रखना चाहिये।

चमड़ी रोग होने अर्थात् लिंगके अगले भागकी चमडी (छुछड़ी) न खुल सकनेपर मर्क-सोल ६ या गुयेकम २x का सेवन और हैमामेलिस (θ दो बुन्द×एक औंस पानी) के धावन द्वारा लिंगका मुँह भिगोये रखना आवश्यक है।

उल्टी चमड़ी होनेपर (अर्थात् लिंगके अगले भागकी चमडी सुपारीको न ढँक सकनेपर)—मर्क-सोल ६ सेवन और हाइपेरिकम θ

दो बून्द×एक औंस पानीके धावन द्वारा सुपारीको भिगोये रखना चाहिये ।

मुखशायी-ग्रन्थि-प्रदाह—देखिये ।

अंडकोष-प्रदाहमें—फाइटोलेक्का ३, क्लिमेटिस ३ ।

योनिके प्रदाहमें—कार्बो-वेज ६, पल्स ।

खूनके पेशावमें—कैन्थरिस ३x (इस ग्रन्थिकी मूत्र-यंत्रकी बीमारी-वाला अध्याय "खूनका पेशाव" देखिये)।

वात—थूजा ३० और फाइटोलेक्का ३ (प्रमेहसे पैदा हुए वातकी उत्तम दवा है), पल्सेटिला ६ (स्राव रुक जानेके कारण पैदा हुए वातमें), ब्रयोनिया ३, आर्जेण्टम नाइट्रिकम ६, नाइट्रिक-एसिड ६—३० ।

लालामेह (अर्थात् तीसरी अवस्थाका स्राव)—"बहुत दिनोंतक स्थायी रहनेपर"—थूजा ३० और नाइट्रिक-एसिड ६ । हाइड्रैस्टिस θ दसगुने पानीमें मिलाकर उससे पिचकारी लेनेपर फायदा होता है। स्रावकी दूसरी-दूसरी दवाएँ ; आगे लिखे "एकांगीन प्रमेह" में देखिये ।

मूत्रनलीके संकोचनमें (अर्थात् मूत्रनालीकी संकुचित अवस्थामें, पेशाव होते वक्त पहले तो पेशाव खुलासा नहीं होता और इसके बाद बिलकुल ही नहीं होता)—कैन्थिरिस ३x—३ सेवन और गर्म पानीसे नहाना चाहिये । जरूरत होनेपर मूत्र-शलाका (catheter) से पेशाव कराना पड़ता है। इसके बाद आर्निका ३ सेवन करना चाहिये। "मूत्रनालीका संकोचन" देखिये ।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको आधी लेटी (उढङ्गो) हुई अवस्थामें साफ-सुथरा रखना चाहिये। मांस, मछली, खट्टा और उत्तेजक पदार्थ भोजन, धूम्रपान, सोडावाटर पीना, घोड़े या साइकिलकी सवारी अथवा ज्यादा परिश्रम करना मना है। इच्छापूर्ण पानी पीना,

दूध और मिसरीका शर्बत और नींबूका रस फायदा करता है। जरूरत पड़नेपर कौपीन (suspensary bandage) व्यवहार करना चाहिये।

"प्रकृत प्रमेह विष" या प्रकृत-उपदश विष" एक बार शरीरमें फैल जानेपर (होमियोपैथिक मतसे निर्वाचित सच्ची दवाके सेवन किये बिना) वह सहजमें नहीं निकलता। इसलिये जीवनमें कभी किसीको दूसरी बार गर्मी या सूजाक नहीं होता।

प्रकृत-प्रमेह रोगके सम्बन्धमें "कुछ ज्यादा जानना हो" और उसका विवरण और चिकित्सा जाननी हो, तो इस ग्रन्थका "परिशिष्ट (ख)— धातु-दोष और उसका निराकरण" देखिये।

एकांगीन प्रमेह या स्थानिक प्रमेह

एक तरहका फैलनेवाला जहर (सक्रामक-विष—virus) इस बीमारीका खास कारण है। यह जहर अच्छे शरीरमें घुस जानेपर वह शरीरकी "एक जगह" (अर्थात् मूत्र-यंत्र) पर आक्रमण करता है, सारे शरीरको दूषित या विषैला नहीं कर पाता। इसीसे उसे "एकांगीन प्रमेह या स्थानिक-प्रमेह" कहते हैं। प्रकृत और स्थानिक दोनों ही तरहके प्रमेह रोगमें सक्रमण, आक्रमणावस्था, प्रदाह और "श्लेष्मा-भरा पीब स्राव" * एक ही तरहका होता है। इसलिये, पहले दोनो रोगोंका अलगाव या प्रभेद स्थिर करना सहज नहीं है; परन्तु कई हफ्ते हो जानेपर, यदि सगम-इन्द्रियकी चारों ओर "फूलगोभीके फूलकी तरह

---

* दोनों तरहके प्रमेह रोगमें और मूत्र-मार्ग-प्रदाहमें एक ही तरहका श्लेष्मा-पीबका स्राव दिखाई देता है। इसके अलावा, क्रिमि, हस्तमैथुन, ज्यादा सङ्गम वगैरहके कारणसे भी यह स्राव हुआ करता है। इस तरह एक तरहका स्राव देखते ही, यह न समझ लेना चाहिये, कि "प्रमेह रोग" हुआ है।

वतौड़ी या मसा हो जाये" और खूनकी कमीसे सर्वाङ्ग दूषित होनेका कोई उपसर्ग न दिखाई दे, तो समझना चाहिये कि रोगीको "एकांगीन प्रमेह" या "स्थानिक प्रमेह" हो गया है। अच्छी तरह इलाज होनेपर, कई महीनोंमें ही एकांगीन प्रमेहका जहर शरीरसे निकल जाता है। इस देशमें सूजाकके जो रोगी दिखाई देते हैं, उनमें ज्यादातर इस "एकांगीन प्रमेह" रोगवाले ही होते हैं।

चिकित्सा—पेट्रोसेलिनम θ रोज (पाँच-छः बून्दकी मात्रामें) कई दिनोंतक सेवन करनेपर बीमारी एकदम अच्छी हो जाती है। यदि इससे अच्छी न हो, तो "स्रावकी प्रकृति" की ओर ध्यान रखकर इलाज करना चाहिये। जैसे—खून-भरे स्रावमें—कैन्थरिस ३x ; दूधकी तरह स्रावमें—कोपेवा ३x। पानीकी तरह लसदार स्रावमें—कैनाबिस सैट १x ; श्लेष्मामय स्रावमें—कैप्सिकम ३ ; पीव-भरे स्रावमें—नेट्रम-म्यूर ३० ; पीली आभा लिये स्रावमें—'हिपर-सल्फर' ३० ; हरे रंगके स्रावमें—'थूजा' ३० ; खूनके सफेद कण या गुलाबी रंगके स्रावमें—पेट्रो-सेलिनम ३x ; बदबूदार स्रावमें—'कार्बो-वेज' ६।

ऐलोपैथिक दवाओंके अपव्यवहारसे स्वास्थ्य खराब हो जानेपर "जायुज-व्याधि" की दवाओंमेंसे चुनकर रोगीको दवा देनी चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—"प्रकृत प्रमेह" रोगकी 'आनुसंगिक चिकित्सा' देखिये।

वाघी (Bubo)

सूजाक या गर्मी रोगसे पैदा हुई पुट्ठेकी गांठ (या गांठें) प्रदाहित (अर्थात् सूजी, दर्द-भरी, लाल रंगकी, गर्म और कड़ी) होनेको "वाघी" कहते हैं। इसके बाद, वाघीमें पीव जमा होकर वह पक जाती है। इस समय प्रायः ठण्ड लग करके बुखार होता है।

चिकित्सा—हल्के दगकी वाघी या सूजाकके जहर या गर्मीके जहरसे पैदा हुई वाघीके लिये मर्क-सोल ३—६ बहुत उत्कृष्ट दवा है (पर रोगी यदि बहुत दिनोंतक मर्करी या पारा व्यवहार कर चुका हो, तो नाइट्रिक-एसिड ६ देना चाहिये)। ऐसी चिकित्सासे यदि ६० घण्टोंमें कोई फायदा न दिखाई दे, तो कार्बो ऐनिमेलिस ६ या बैडियेगा ३ सेवन करानेपर अक्सर पीव नहीं पैदा होता या पुल्टीस नहीं लगानी पड़ती , परन्तु पीव पैदा हो जानेपर, वाघीको बैठानेकी कोशीश न कर उसमें पुल्टीस देकर पका डालना और चिरवा देना चाहिये। पीव भरना आरम्भ हो जानेपर भी कार्बो-ऐनिमेलिस ६ या बैडियेगा ६ सेवन करना चाहिये और कैलेण्डुला θ (एक भाग×पानी आठ भाग) का वाहरी प्रयोग करना (लगाना) चाहिये। उपदशके साथ सूजाकसे पैदा हुई वाघीमें मर्क-सोल ३ देना चाहिये। वाघीमें यदि गलनेवाला घाव हो जाय, तो "कैलि-आयोड" θ (की मात्रा ५ ग्रेन, रोज तीन बार) सेवन और जखम गर्म पानीसे अच्छी तरह साफकर उसपर कैलेण्डुलाका मलहम लगाना चाहिये। नीचे लिखी दो दवाओंके सेवनकी अकसर जरूरत पडती है।

हिपर सल्फर ६, २००—वाघीका पक जाना या उसमें खूब पीव भरना (जिन्होंने ज्यादा पारा सेवन किया है, उनके लिये यह ज्यादा फ़ायदेमन्द है)।

सिलिका ३x, ३—नाली घाव या नासूर होनेका लक्षण होनेपर, यहाँतक कि नासूर होनेपर भी यह बहुत लाभ करता है।

अलग-अलग प्रकारकी "वाघी" और ज्यादा विवरण तथा चिकित्साके लिये हमारी प्रकाशित "जननेन्द्रिके रोग" (सचित्र) पुस्तक देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—जवतक वाघीका घाव न सूख जाये, तबतक खाटसे न उठाना चाहिये। घाव रहते हुए घूमनेसे नासूर हो

सकता है। नासूर जल्दी अच्छा नहीं होता और बहुत तकलीफ देता है। बाघीको सेंकना या उसपर पुल्टीस देना अच्छा है। बाघी पकनेपर नश्तर लगवाना चाहिये। शोरबा, दूध सुपथ्य है; भात या मछली न खाना ही अच्छा है।

रतिज रोगके कई दूसरे उपसर्ग

उपदंशके "जखम आदि" (खासकर आँखें और गलेका मध्य आक्रान्त होना) उपसर्ग बढ़े हुए होनेपर "जैकारैण्डा गुयालैण्डाई θ रोज दो बार, पाँच-पाँच बून्दके हिसाबसे सेवन करना चाहिये।

मूत्र-शलाका (Catheter) को काममें लाये विना जिन्हें पेशाव नहीं होता (खासकर मूत्रपिण्डका दर्द, तकलीफसे थोड़ा-थोड़ा पेशाव होना ; पेशावमें काले रंगको कोई चीज नीचे जम जाना वगैरह लक्षणोंमें), उनके लिये "सोलिडेगो-वर्गा" θ—३x (फी मात्रा ३—५ बून्द) रोज तीन-चार बार सेवन करना चाहिये।

मुखशायी-ग्रन्थिका बढ़ना (Enlarged prostate) के कारण जिन पुरुषोंको (खासकर वृद्धोंको) मूत्रशलाका (catheter) डाले विना "पेशाव नहीं उतरता", उन्हें "लैवाल-सेरुलेटा" θ (फी मात्रा ५ से १० बून्द) दो बार सेवन करना चाहिये।

प्रमेह रोगसे पैदा हुए "सन्धिवात या ग्रन्थिवात" (खासकर औरतोंके) उपसर्गमें, बिस्कम एल्बम θ, ३x देना चाहिये।

नींद न आना—जेलसिमियम θ फी मात्रा ३ बून्द (बहुत ज्यादा सुस्ती या निस्तेज भाव) ; काफिया ३ (नींद न आनेकी एक बढ़िया दवा है); सिमिफ्यूगा ३x—३० (अकड़न या दर्दके कारण नींद न आना) ; पल्स ६ (रातके पहले भागमें नींद न आना); नक्स-वोम ६ (रातके अन्तिम भागमें नींद न आना)।

वहिर्वाहिनी नालीशून्य ग्रन्थियोंके रोग

(Diseases of the Ductless Glands)

शरीरके जो पुर्जे (यंत्र) किसी चीजको निकाल या सिकोड़ सकते हैं, उन्हें "निःस्राव-निःसरणशील ग्रन्थि" कहते हैं। शरीरमें सभी जगह ग्रन्थियाँ मौजूद हैं, जैसे—पसीना निकालनेवाली नलियाँ, यकृत आदि (हमारी प्रकाशित "नरदेह परिचय" और इस ग्रन्थका "मानव-शरीरकी रचना" अध्याय देखिये)। इन सब ग्रन्थियोंके अलावा शरीरके भीतर और भी कितनी ही ऐसी ग्रन्थियाँ मौजूद हैं, जिनका स्राव या रस उन स्राव निकालनेवाली नलियों, शिराओं या धमनीके साथ न मिलकर, एकदम खूनके सोतेसे मिल गया है; इसलिये इन्हें भीतरी (अभ्यन्तरिक—internal) स्राव-वाही-ग्रन्थि कहा जा सकता है। जैसे—गलग्रंथि (thyroid), मूत्राशयके उपरवाली ग्रन्थि (adrenal) श्लेष्मा-स्रावी (pituitary) वगैरह ग्रन्थियोंकी इनमें गणना की जा सकती है और यकृत, क्लोम, दोनों डिम्बकोष और मुष्क-ग्रन्थियाँ भीतरी और वाहरी दोनों काम करनेवाली हैं (अर्थात् आभ्यन्तरिक और वाह्यिक स्रावको वहन करती हैं)।

मनुष्यके जीवनपर इन उपर कही हुई ग्रन्थियोंके भीतर रस या स्रावका बड़ा भारी प्रभाव है। अकसर सभी बीमारियाँ एक या अधिक ग्रन्थियोंकी क्रियाकी अधिकता या क्रियाकी गड़बड़ीसे पैदा होती हैं। आगे क्रमसे इनका विवरण लिखा जाता है :—

गलगण्ड या घेघा

(Goitre)

गलेकी गांठ बहुत दिनोंसे बढ़ी हो, पुराना रोग हो जाये, तो उसे "गलगण्ड" रोग कहते हैं। इसमें बुखार या प्रदाह—कोई उपसर्ग नहीं दिखाई देता। गाँठ ज्यादा बढ़ जानेपर निगलनेमें या साँस लेने

तथा छोड़नेमें तकलीफ होती है। यह रोग मर्दोंकी बनिस्वत औरतोंको खासकर जवानी आनेके समय ज्यादा हुआ करता है, इसका कारणतत्व आजतक अन्धेरेमें ही छिपा हुआ है; परन्तु इतना कहा जा सकता है कि पीनेके पदार्थमें किसी खनिज पदार्थकी कमी या कोई बहुत ही छोटे सूक्ष्म जीवाणुका रहना या चूनेका हिस्सा ज्यादा रहना—इन वजहोंसे यह बीमारी पैदा होती है। अगले अध्यायमें कहा हुआ—"बाहर निकला हुआ आँखका गोला मिला गलगण्ड" रोगकी भाँति इसमें गलेकी ग्रन्थिको क्रियाकी ज्यादती नहीं दिखाई देती। गलेकी गांठ (गलग्रंथि) का बढ़ना और उससे निकलनेवाले स्रावकी कमी, खाँसी, श्वास-कष्ट, फुन्सियाँ वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा—बहुत बार बिना किसी दवाके खाये ही यह बीमारी आराम हो जाती है। नये और कोमल गलगण्डमें, आयोडियम ३x—६x, आर्स-आयोड ३०—२००, कैल्के आयोड ३०, बैराइटा-आयोड ३० का सेवन और आयोडियन लगानेसे फायदा होता है। लेपिस-ऐल्बम, कैलि-आयोड, स्पंजिया ३ (खासकर बहुत पुराने गलगण्डमें), लाइको १२—२०० वगैरह दवाएँ लाभ करती हैं।

वहिरागत चक्षु-गोलक संयुक्त गलगण्ड
(Exophthalmic Goitre)

इस बीमारीमें गलेकी गांठकी क्रियाकी अधिकता दिखाई देती है। परिवारके किसी भी मनुष्यके शरीरमें इस नये रोगके बीज फैल जानेपर उसमें चिड़चिड़ापन, शरीर-यंत्रकी गड़बड़ी, स्नायु-मण्डलकी गड़बड़ी वगैरह उपसर्ग होकर, वह वंशगत भी हो जा सकता है। इसका आरंभ सहजमें निर्णय नहीं किया जा सकता, धीरे-धीरे नीचे लिखे लक्षण प्रकट होने लगते। जैसे—नाड़ीकी चाल १२०—१६०, कलेजा धड़कना, चेहरेकी लाल आभा, अरुणिमा (erythema) गलेकी गांठका बढ़ना

(सूजन कड़ी और स्थिति-स्थापक रहती है), आँखोंका गोला मानो बाहर निकल पड़ता है और आँखोंकी पलकें मानो भीतरकी ओर खिंचती जाती हैं, हाथ आदिका काँपना, दुबलापन, रक्त-स्वल्पता, मिचली, *कभी कभी बुखार या पतले दस्त और कभी "श्लेष्मावत् शोथ" हो जाता* है। (अगला अध्याय देखिये)।

चिकित्सा कई महीनेतक जब रोगी यह बीमारी भोग लेता है, तब बिना किसी दवाके भी यह कभी-कभी दूर हो जाती है। नयी बीमारीमें—बेल, ग्लोनोइन, विरे-विर, लाइकोपस-वर्जि और पुरानी बीमारीमें—स्पंजिया, स्पाइजिलिया (कलेजेमें दर्द और कलेजा धड़कनेके लक्षणमें), नेट्रम-म्यूर ३—२००, सल्फर ३०, थिरिया ३० वगैरह दवाओंका सेवन करना फायदेमन्द है। यदि कोई दवा फायदा न करे, तो गांठका थोड़ा भाग हटा देना या X-Ray का प्रयोग उचित है। उत्तेजक खान-पान मना है। लघुपाक पदार्थका भोजन, शांत—बिना किसी झंझटके जिंदगी बिताना आदि शरीर-रक्षाके नियम पालन करने चाहियें।

(क) गलगण्डके साथ जड़बुद्धि और शरीर-विकृति (Cretenism) और (ख) श्लेष्मावत् शोथ (Myxedema)

आजतक इस बातका कोई कारण नहीं मालूम हुआ कि कभी-कभी गल-ग्रंथि अपना काम ठीक-ठीक क्यों नहीं कर सकती। थोड़ी उमरमें *अगर गल-ग्रंथिकी क्रिया रुक जाये, तो हमलोग उसे "गलगण्डके साथ* जड़बुद्धि और शरीर-विकृति" कहते है और बड़ी उमरमें उसकी क्रिया रुक जानेको "श्लेष्मावत् शोथ" कहा जाता है।

(क) **गलगण्डके साथ जड़बुद्धि और शरीर-विकृति**—अगर यह बीमारी जन्मकी हो, तो यह वह ग्रंथि बिलकुल रहती ही नहीं या होती भी है, तो बुखार वगैरह बीमारियोंकी वजहसे क्षय हो जाती है। किसी देशमें अगर गलगण्ड रोग फैल जाता है, तो वहाँके रहनेवाले इस रोगमें मुब्तिला हो जाते हैं, ऐसी जगह केवल गांठ बढ़ जाती है; परन्तु उसकी क्रिया बिलकुल ही नहीं होती। यदि बीमारी जन्मकी हुई, तो बच्चेकी मानसिक वृत्तियाँ अच्छी तरह विकसित नहीं होती; उसके तन्तु क्षीण रहते हैं, बदनका चमड़ा सूखा, चेहरा बदरंग, पलकें फूलीं, सारे वदनमें सूजन, ब्रह्मरन्ध्र खुला हुआ, पेशियाँ पतली, मानसिक जड़भाव वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। बुखार या गलगण्डके बाद यह रोग पैदा होनेपर हृष्ट-पुष्ट बच्चेका भी शरीर और मन धीरे-धीरे बहुत कमजोर, फुर्ती-रहित और जड़बुद्धि-जैसा हो जाता है।

(ख) **श्लेष्मावत् शोथ**—पहले ही कहा गया है कि बड़ी उम्रमें ही यह बीमारी हुआ करती है। पुरुषोंकी बनिस्बत औरतोंको ही यह बीमारी ज्यादा होती है, लेकिन याद रखना चाहिये कि औरतोंकी ऋतु या गर्भावस्थाकी किसी बीमारीके साथ इस बीमारीका कोई सम्बन्ध नहीं है। हमेशा गलगण्ड रोगकी अन्तिम अवस्थामें यह बीमारी पैदा होती है। सारा शरीर फूल जाना (परन्तु अंगुलीसे दबानेसे फूली हुई जगह बैठ न जाये), बदनका चमड़ा सूखा और पसीनेका न रहना, केश झड़ जाना, स्थिरता, शरीरकी गर्मी स्वाभाविक (९८·४°) से भी कम होना, बहुत सर्दी मालूम होना, याददाश्तका कम हो जाना, बुद्धि बिगड़ जाना, भ्रान्त-विश्वास इत्यादि दिमागकी वृत्तियाँ कमजोर पड़ जाती हैं; यक्ष्मा-रोग-प्रवणता, गल ग्रंथिशीलता वगैरह क्षय करनेवाले रोगोंके उपसर्ग धीरे-धीरे पैदा होते रहते हैं और अच्छी तरह इलाज नहीं होता, तो बहुत दिनोंतक भोगनेके बाद रोगी मौतके मुँहमें चला जाता

है। पहले अनुच्छेदमें लिखा हुआ "गलगंडके साथ बाहर निकला चक्षु-गोलक" रोगकी अन्तिम अवस्थामें यह बीमारी होती है।

चिकित्सा—गलेकी ग्रन्थिसे जो स्राव या रस निकलता है, उसका रुकना ही इन दोनों बीमारियोंका कारण है, इसलिये स्रावको जारी रखनेके लिये, थाइरायडिन ३x (फी मात्रा ५ ग्रेन, रोज तीन बार) सेवन करना बहुत जरूरी है। दोनों बीमारियोंको इस प्रधान दवाके साथ आर्सेनिक (बहुत जाड़ा लगना, बेचैनी, बदनका चमड़ा खुश्कीभर होनेके लक्षणमें), केल्के-कार्ब, टियुबरक्युलिनम (यक्ष्मा रोगका लक्षण प्रकट होनेपर) वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक हो सकती हैं। बदन मलना और गर्म कपड़े पहनना रोगीके लिये फायदेमन्द है।

चेहरा और दोनों शाखाओंके तन्तुओंकी अनैसर्गिक विवृद्धि
(Acromegaly)

खोपड़ीमें ("नरदेह परिचय" देखिये) माथेके नीचले भागमें "श्लेष्मास्रावी-ग्रन्थि" (pituitary gland) है। यह गांठ दो भागोंमें बँटी हुई है :—भीतरी और बाहरी भाग। भीतरी भागसे जो स्राव निकलता है, वह शरीर-गठन-कार्य और विकासमें सहायता पहुँचाता है। इसलिये जीवन-धारणके लिये यह बहुत जरूरी है और पिछली ग्रन्थिका स्राव मनुष्य-शरीरमें मक्खन-जातीय और शर्करा-जातीय उपादान जुटाते हैं। इस ग्रन्थिका निर्यास सेवनसे शरीरके खूनका दबाव बहुत तेजीसे बढ़ता है।

इस ग्रन्थिका स्राव बहुत ज्यादा परिमाणमें बढ़ जाता है, तो पूरी उमरवाले मनुष्योंकी बड़ी हड्डियोंमें अस्वाभाविक बाढ़ आ जाती है। इसीको यह रोग होना कहते हैं। चेहरा तथा हाथ-पैरोंके हाड़ बहुत

बड़े दिखाई देते हैं, सरमें दर्द (खासकर सामने कपालमें), चर्बीका बढ़ना, शरीरका ताप स्वाभाविक (९८'४°) से भी कम, नाड़ी मृदु, मानसिक उपसर्गोंको ज्यादती, मिठाई खानेकी इच्छा (कभी-कभी) गलगण्ड वगैरह रोग इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

[याद रखना चाहिये कि गांठके पिछले हिस्सेका स्राव "मस्तिष्क-मज्जाका तरल उपादान" (cerebro-spinal fluid) के साथ मिला करता है, इसलिये किसी कारणसे इसका स्राव निकलनेमें गड़बड़ी होनेपर श्लेष्मा-स्रावी उपसर्ग पैदा हो जाते हैं।]

चिकित्सा—इस गांठका सत इस रोगमें व्यवहारकर कोई फायदा नहीं होता। इसलिये थाइरायडिन सेवन करना आवश्यक है। हेक्ला लावा (निम्न-क्रममें), फास्फोरस ३—२०० वगैरह दवाएँ लाभदायक हो सकती हैं।

मौलिक प्लीहा विवृद्धि

(Primary Spleno-Megaly)

यह प्लीहा रोग आप-ही-आप पैदा होकर पुराना हो जाता है—मैलेरिया वगैरह किसी दूसरी बीमारीके बादका उपसर्ग नहीं है। पहले प्लीहा बढ़ जाती है, इसके बाद खूनका घटना, खूनका स्राव या खूनकी कै वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं और अन्तमें यकृतकी वृद्धि, पांडु, उदर शोथ होकर रोगी "बहुत दिनोंतक" बीमार पड़ा रहता है।

इसका कोई कारण अबतक मालूम नहीं हुआ, परन्तु मैलेरिया या गर्मी रोगवाले मनुष्योंको सहजमें ही यह बीमारी हो जाती है। इसमें न तो कोई गांठ सूजती है और किसी तरहका दर्द ही होता है।

चिकित्सा—'कार्डयस मेरियानस' और 'सियानोथस' २x का सेवन इसकी प्रधान दवाएँ हैं। फास्फोरस ३, क्रोटेलस ३, रक्त-स्राव

थादि लक्षणोंमें फायदा करता है। यदि खानेकी दवासे कोई फायदा न दिखाई दे, तो इङ्गलेण्डके विद्वान डा० ह्वीलर और डा० मेक्गावेनकी राय है, कि अनुभवी अस्त्र-चिकित्सकसे प्लीहा कटवा डालनी चाहिये।

उर्द्ध-वृक्क-कोष व्याधि
(Addison's Disease)

हरएक मूत्र-ग्रन्थिके ऊपरी अंशमें एक-एक ग्रन्थि मौजूद है। इनका विध्वस हो जाये या गुटिका रोगका हमला हो जाये, तब यह बीमारी होती है, यह रोग बहुत कम होता है। ये बहुत कमजोरी, हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण, के, चमड़ा काला अथवा ताम्बेके रंगका दिखाई देता है, भूख न लगना, पतले दस्त आना वगैरह प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा—एड्रिनेलिन २x—३ और नेट्रम-म्यूर ३० पहले सेवन करना चाहिये। इससे फायदा न हो, तो आर्सेनिक ३०, आर्ज-नाई ३०, साइलिसिया ३० वगैरह दवाओंकी परीक्षा करनी चाहिये। यक्ष्मा रोगका लक्षण प्रकट होनेपर, बैसिलिनम २०० या टियुबरक्युलिनम बोविन २०० देना चाहिये।

वुकास्थि सन्निहित ग्रन्थि-रोग
(Diseases of the Thymus Gland)

वुकास्थिके पासकी गांठको अंगरेजीमें "Thymus gland" कहते हैं। यह लड़कपनमें मौजूद रहती है, पर जवानी आ जानेपर गायब हो जाती है। इसकी क्रियाका पूरा-पूरा हाल जाना नहीं गया है; परन्तु जननेन्द्रियकी ग्रन्थियोंके विकासके साथ इसका सम्बन्ध है। इस रोगसे एकाएक मौत हो जाती है। यह बचपनकी ही बीमारी है।

यह बीमारी होनेपर बच्चे पहले मोटे हुआ करते हैं और उनके तालुमें बगलकी ओर गलकोषकी गाँठें बढ़ जाती हैं। इसके बाद चमड़ा कोमल पड़ जाता है, बालकगण, बालिका-भावसे भर जाते हैं, केश और जननेन्द्रियकी गाँठें जैसी चाहियें, वैसी नहीं बिकसित होतीं।

चिकित्सा—कैल्के-कार्ब, फास्फोरस और टियुबरक्युलिनम-बोविन (बच्चोंके लिये) इस रोगकी बढ़िया दवा है। इन दवाओंसे फायदा न हो, तो X-Ray परीक्षा करनी चाहिये। ताजी साग-सब्जी और फल सुपथ्य हैं। चीनी वगैरह मीठे पदार्थ और आलू, मैदा, सूजी वगैरह श्वेतसार जातिके पदार्थका खाना त्याग देना चाहिये।

दोनों शाखाओंका आक्षेप या टंकार

(Tetany)

गलेकी गांठके अलावा, छोटी गांठोंके दो जोड़े और भी हैं, इन्हें "अति गल-ग्रन्थि" (parathyroids) कहा जा सकता है। ये शरीर चूनेके भागकी समता रक्षाकर शरीरकी क्रिया नियंत्रण करती हैं। इन गांठोंके जोड़ोंकी यह क्रिया घट जानेपर या लोप होनेपर स्नायु-पेशीमंडल (nerve-muscular-system) बहुत अधिक मात्रामें उत्तेजित होकर दोनों शाखाओंमें (हाथ-पैरोंमें) अकड़न और टङ्कार पैदा हो जाता है।

रोगका बीज शरीरमें फैलनेकी वजहसे यह रोग व्यापक-रूपसे भी प्रकट होता है। जवान आदमियोंको यह बीमारी होनेपर पाकाशय और आँतोंमें गड़बड़ी मच जाती है ; बच्चे जब इस बीमारीसे आक्रान्त होते हैं, तब उनको "बालास्थि-विकृत" रोग होता है (बाल-रोगकी "बालास्थि-विकृत" देखिये) या अच्छी तरहसे पोषण न होनेके उपसर्ग (स्वरयन्त्र-प्रदाह, घुण्डी वगैरह रोगोंका अध्याय देखिये) के साथ यह बीमारी जुड़ी हुई रहती है।

लक्षण—अंगोंका अकड़न, छातीपर बाँहें टेढ़ी कर रखी रहती हैं, अंगूठा तलहत्थीमें लगा रहता है और हाथकी दूसरी अंगुलियाँ, अंगुलियोंकी सन्धिकी ओर झुक जाती है और ऊपरकी सन्धियाँ तथा दोनों पैर फैल जाते हैं। तलहत्थी, तलवे और पैरोंकी अंगुलियाँ टेढ़ीं, मुखमण्डल, स्वरयंत्र आदिके साथ दर्दका न रहना प्रभृति उपसर्ग दिखाई देते हैं। ये उपसर्ग २-५ दिनोंसे लेकर कई हफ्तेतक दिखाई देते रहते हैं। इस रोगमें बहुत दिनोंतक मुबतिला रहनेपर आँखोंमें मोतियाबिन्द हो जा सकता है। बच्चोंको यह बीमारी होनेपर, वे अकसर अच्छे हो जाया करते हैं।

चिकित्सा—रोगके आक्रमणके समय ठण्डा पानी डालना अथवा ठण्डे या बहुत गर्म पानीसे स्पंज (sponge) द्वारा बदन पोंछना और वेगके समय बेलेडोना या नक्स-वोम सेवन करना चाहिये। अकड़न कुछ कम हो जानेपर (या दुबारा हमला होनेके अन्तवाले समयमें) कैल्के-कार्ब ६—२०० सेवन करना चाहिये।

चर्म-रोग
(Skin-Diseases)

साधारणतः मनुष्योंकी (यहाँतक कि इलाज करनेवालोंकी भी) यह धारणा है—"त्वक्" या "चर्म" शरीरका आवरणभर है ; परन्तु यह अनुमान भ्रम-भरा है ; क्योंकि "त्वक" शरीरका शारीरिक-यन्त्रोंका आवरण (ढकना) भर नहीं है। हृत्पिण्ड और पाकाशय आदिकी तरह यह भी प्राणियोंके शरीरका एक अलग जीवन्त यन्त्र है। इसलिये चमड़ेकी कोई बीमारी होनेपर, उसे मलहम वगैरह बाहरी प्रयोगसे अच्छा करनेकी कोशिश न करनी चाहिये। वास्तवमें ये चर्म-रोग किसी भीतरी यन्त्रकी बीमारीको बताते हैं। इसलिये इन्हें आराम करनेके लिये

"भीतरी दवा खाना" ही उत्तम उपाय है। हाँ, चमड़ेकी २-१ ऐसी बीमारियाँ हैं, जो शरीरपर मैला वगैरह जमनेके कारण पैदा होती हैं, उन्हे साबुन वगैरह लगाकर हटा देना आच्छा है ; परन्तु हमेशा जिंक-आयण्टमेण्ट, सल्फर-सोप, गुलार्डज्-साल्यूशन, कैलेण्डुला-सिरेट, वेसेलिन वगैरहके साथ तैयार की हुई दवाएँ लगानेपर यद्यपि चमड़ेका ऊपरी भाग आराम हुआ-सा दिखाई देता है, परन्तु वास्तवमें बीमारी अच्छी नहीं होती—बाहरी बीमारी एकदम शरीरमें घुस जाती है। इस तरह बाहरी बीमारी शरीरके भीतर प्रवेश कर जानेपर वह हृत्पिण्डपर हमला कर सकती है। बाहरी प्रयोगके चर्म-रोग इस तरह शरीरमें प्रवेश करा देनेपर, बहुत जगह बहुत ही हानि हो गई है ; कभी-कभी मौततक हो जाती है।

खास-खास मौकेका इलाज

थूजा ३०—टीका लगवानेके बाद अगर कोई चर्म-रोग दिखाई दे, तो यह बहुत उत्तम दवा है।

बैसिलिनम २००—यक्ष्मा या गंडमाला धातुवाले लोगोंके चर्म-रोगमें लाभदायक है।

बेलिस पेरेनिस ३x—पानी-भरी हवा लगने या एकाएक गर्मीके बाद सर्दी लगनेके कारण चर्म-रोग होनेपर।

डल्कामारा ६—सर्द जगहमें रहनेके कारण (या बरसातमें) चर्म-रोग होनेपर।

आर्निका ३, ३०—चोट लगनेकी वजहसे (या गिर जानेके बाद) चर्म-रोगमें।

हाइपेरिकम θ, ३०—स्नायु-तन्तुपर चोट लगनेके बाद चर्म-रोग होनेपर।

डलिकस ६—सारा शरीर खुजलाता हो, परन्तु शरीरपर कोई फोड़ा-फुन्सी न दिखाई दे।

कार्बोलिक-एसिड ६—सारे शरीरपर जल भरी फुन्सियाँ, बहुत खुजली (शरीर घसनेपर खुजली तो कम हो जाये, पर जलन मौजूद रहे), तो यह लाभदायक है।

मेजेरियम ३० (रोज एक मात्रा)—एकजिमा (eczema) वगैरह चर्म-रोगमें, जो सिर्फ शीत ऋतुमें मौजूद रहते हैं, परन्तु गर्मीके मौसममें गायब हो जाते हैं।

स्पंजिया θ—Dr. Peacy कहते हैं, कि रोज (दो बून्द मात्रा) तीन बार सेवन करनेपर चाहे जो चर्म-रोग हो, अवश्य ही अच्छा हो जाता है।

किसी-किसी चिकित्सकका कथन है, कि प्याज खानेपर पीला और अस्वस्थ चमड़ा हट जाता है। ऊबड़-खाबड़ या रुखड़े चमड़ेपर विनिगर घसनेसे चमड़ा मुलायम होता है। अच्छी तरह हाथ धोकर ताजे नींबूका रस मलनेसे हाथ कोमल और सफेद हो जाता है और नख खूबसूरत मालूम होते हैं। Dr. Lutze कहते हैं कि कार्नेस θ (cornus alternifolia) पाँच बून्दकर रोज सेवन करनेसे फटा चमड़ा (उससे रस निकलना) अच्छा हो जाता है। टामस-काम्युनिस θ सेवन और इसीको लगानेपर शरीरका चमड़ा फटनेकी बीमारीमें बहुत लाभ होता है।

"रोग-लक्षण' अध्यायमें "तरुण और चिर-रोग" अनुच्छेद देखिये।

व्रण, स्फोटक और क्षत

"फोड़ा स्फोटक (abscess)" त्वक या चमड़ेके "निचले" उपादानमें और "व्रण (boils) या "क्षत (ulcer)" त्वक्के ऊपर

पैदा होते हैं। "व्रण" छोटी आकृतिका और "स्फोटक" बड़ी आकृतिका होता है।

स्फोटक या फोड़ा

(Abscess)

किसी खास जगह, घिरावके भीतर, चमड़ेके नीचे, किसी उपादानमें पीव पैदा होनेका नाम "स्फोटक" या "फोड़ा" है। हड्डीके ऊपर, मांस-पेशीके भीतर और स्तन, यकृत आदि शारीरिक यंत्रोंमें यह हमेशा दिखाई देता है। सर्दी लगने या चोट वगैरहकी वजहसे यह पैदा होता है; अस्थि-प्रदाहके बाद भी कभी-कभी स्फोटक (पुराने आकारमें) दिखाई पड़ता है। पहले बीमारीकी जगहपर प्रदाह (अर्थात् दर्द, फूलना, लाल होना और गर्म होना) और बुखार, पीछे इस प्रदाहित स्थानमें पीव होता है। ऐसा भी होता है कि पीव नहीं होता (अर्थात् वह सोख लिया जाता है) या वह कष्टसाध्य नासूरमें बदल जाता है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) पीव पैदा होनेके पहले—ऐकोन, बेल, मर्क। (२) पीव पैदा होनेके समय—हिपर-सल्फर, साइलि, आर्स। (३) पीव पैदा होनेके बाद—सल्फ, कैल्के-कार्ब, चायना, एसिड-फास। (४) स्तनमें फोड़ा होनेपर—स्त्री-रोग अध्यायमें "स्तनका फोड़ा" देखिये।

पीव पैदा होनेके पहलेः—बहुत-दर्द, साधारण सूजन, लाल और गर्म होना लक्षणमें—बेल २x, परन्तु बेशी फूल जानेपर और डंक मारनेकी तरह दर्द होनेपर, एपिस ३; परन्तु बेलेडोना या एपिस किसीसे भी प्रदाह कम न होनेपर, मर्क-सोल ६ देना चाहिये। पुल्टीसके बदले खूब गर्म कैलेण्डुला θ (दसगुने गर्म जलके साथ) धावनका बाहरी प्रयोग करना चाहिये।

पीब पैदा होनेके बाद :—हिपर-सल्फर ६ ; परन्तु पतला और पानीकी तरह पीव हमेशा बहता रहता हो तथा घाव जल्दी न अच्छा हो, तो साइलि ६—३०। ऊपर कहे हुए ढंगसे कैलेण्डुला θ गर्म पानीके साथ लगानेपर फोड़ा अकसर पक जाता है और फूट जाता है। फोड़ा फट जानेपर या नश्तर लगवानेके बाद कैल्के-सल्फर ६x विचूर्ण की मात्रा ५ ग्रेन सेवन करना चाहिये और कैलेण्डुलाका मलहम लगाना चाहिये। पुराने फोड़ेसे बहुत दिनोंतक पीव निकला करता हो, तो सिलिका ३०—२००। नासूर होनेपर फ्लोरिक-एसिड ६। दाँतकी जड़में फोड़ा होनेपर, मर्क-बाई ३० और मलद्वारमें होनेपर, साइलिसिया ३०। खून खराब होनेके लक्षणमें पाइरोजेन ३०। आर्सेनिक, आर्निका और चायनाकी भी कभी जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—पहले हल्का पथ्य, इसके बाद पुष्टिकर, परन्तु सहजमें पचने योग्य भोजन देना चाहिये। पीव पैदा होनेके पहले और बाद गर्म कैलेण्डुलाके धावनसे धोनेकी बात ऊपर ही कही जा चुकी है। फोड़ा घुल जानेके बाद, महीन पतला कपड़ा उस धावनमें भिगोकर फोड़ेके छेदमें जितना जा सके, उतना डाल देना चाहिये। इसके बाद धावनमें कपड़ेका दूसरा टुकड़ा भिगोकर बैण्डेजकी तरह बाँध देना चाहिये। कैलेण्डुला न मिले तो गुलमारी (तृणमलगा) या नीमकी पुल्टीस काममें लायी जा सकती है। कभी-कभी नश्तर लगवानेकी भी जरूरत पड़ती है।

व्रण या विद्रधि (Boils)

त्वक या चमड़ेपर सूजन (swelling) के साथ अगर वहाँ दर्द और गर्मी मालूम हो, तो उसे "व्रण" कहते हैं। इसमें हमेशा नोक निकला करती है। फोड़ेकी तरह इसमें पहले प्रदाह पैदा होता है, फिर पीब पैदा होता है। उसमें मुँह हो जाता है। व्रणके भीतरी

अंशको, जो बीचमें रहता है, उसे "खील" (core) कहते हैं। खील पीवके साथ निकल जानेपर जलन और तकलीफ कम हो जाती है।

खून खराब हो जाने या देह दुवली हो जानेपर, छोटे या बड़े फोड़े होते हैं। कोई-कोई व्रण बिना पके ही बैठ जाता है। जो व्रण पैदा होते ही टपक पैदा कर देता है और कड़ा हो जाता है, वह अकसर पक जाता है।

चिकित्सा—पीव पैदा होनेके पहले, रोगवाली जगह सूजती है, लाल होती है और उसमें टपककी तरह दर्द होता है और गर्मी तथा जलन मालूम होती है, बेल १x। फोड़ेमें पीव पैदा होनेके समय, मर्क्यूरियस-सोल ६। फोड़ा सड़नेकी तैयारी होनेपर, आक्रान्त स्थानमें जलन हो, साथ ही कमजोरी मालूम होती हो, तो आर्सेनिक ३x—३०। व्रण या फोड़ा वैठा देनेकी जरूरत होनेपर हिपर-सल्फर ६—२०० ; मगर पकाना हो, तो हिपर-सल्फर २x विचूर्ण (पारेका दोष रहनेपर यह ज्यादा फायदा करता है), पीव ज्यादा निकलता हो तो फोड़ा पुराना हो जाये, तो साइलिसिया ३०। छोटे-छोटे फोड़े होते रहनेपर, आर्निका ३। वार-वार फोड़ा हो, तो सल्फर ३०। तकलीफ देनेवाला फोड़ा होता हो और कोई दवा फायदा न करती हो, तो "एकिनेशिया" θ पाँच बून्द (दिनभरमें दो या एक मात्रा), फोड़ा सड़कर उससे वदबू निकलती हो, तो दस भाग गर्म पानीके साथ एक भाग कैलेण्डुला θ मिलाकर, जखमवाली जगह धो डालना चाहिये।

किसी तरहका जहरीला या और कोई फोड़ा होनेपर पहले हाइपेरिकम २०० सेवन करना चाहिये और गर्म-गर्म सेंक देना चाहिये। इससे अक्सर सब तरहके फोड़े बहुत जल्द अच्छे हो जाते हैं। गत युरोपीय महायुद्धके समय-लड़ाईके मैदानमें जहाँ कप्तान गार्डनका खीमा था, वहाँ १९१८ ईस्वीके अगस्त महीनेमें सिपाहियोंको फोड़ा होना आरम्भ हो गया था। वहाँ पहले ऐलोपैथिक मतसे इलाज किया गया, इसके

बाद हाइपेरिकम २०० सेवन करा और फोड़ेपर गर्म सेंक देकर इलाज किया गया। 'सभी अच्छे' हो गये। कभी कभी किसी रोगीके फोड़े अच्छे हो जानेपर एक फोड़ा पैदा हो जाता, परन्तु वह आप ही अच्छा हो जाता था, किसी दवाके खिलानेकी जरूरत नहीं पड़ती थी। परीक्षा करनी चाहिये (ज्यादा हाल जाननेके लिये, The Homœopathic world for January 1919 देखिये)।

यदि इन दवाओंसे फायदा न हो, तो जहरीला फोड़ा या "सड़े बुखार" की दवाओंमेंसे दवा चुन लेनी चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—पहले कहे हुए "स्फोटक" की आनुसंगिक चिकित्सा देखिये।

क्षत या घाव (Ulcer)

उजडे हुए चमडे या कोमल चमड़ेके ऊपर पीव पैदा होना या वहाँसे पीव निकलनेका नाम "जखम" या "घाव" है। चोट लगना, कुचल जाना, जल जाना वगैरह बाहरी कारणोंसे चमड़ा फट जानेपर या उपदंश वगैरह धातु-दोष होनेकी वजहसे (परिशिष्ट "ख" देखिये) या ज्यादा मात्रामें पारा वगैरह खानेसे, शरीरका रस और खून बिगड़ जाता है और जखम पैदा हो जाता है। इस जखमसे कभी पानीकी तरह, कभी गाढा बदबूदार पीव निकलता है ; कभी कभी घाव सूखा और बिना दर्दका होता है। कभी कभी जखममें नासूर हो जाता है या चारों ओर फैलकर बड़ी ही तकलीफ देता है और दुरारोग्य हो जाता है ; कभी कभी जखमसे खून निकलता है और उसका मांस निकल जाता है।

चिकित्सा—जखमसे खून गिरना, आगमें जलनेकी तरह जलन, जखमके अगल बगलकी जगह कड़ी हो जाना, गर्म होना और थोड़ा-थोड़ा खून-मिला पीव या काले रंगका पीव निकलना आदि लक्षणोंमें—

"आर्सेनिक" ६, ३० । पाकस्थलीकी श्लैष्मिक-झिल्लीमें जखम होनेपर, शुद्ध जायतूनका तेल फी मात्रा ४ ड्राम दिनमें तीन बार सेवन करना चाहिये। गंडमाला पैदा हुए जखममें, सल्फर ३० या कैल्केरिया-कार्ब ३० । जलन होनेवाले लाल रंगके जखममें, बेलेडोना ३x, सामान्य जखममें धीरे-धीरे पीव पैदा होते रहनेपर, साइलिसिया ३० । पीव बन्द करनेके लिये, "हिपर-सल्फर" ३० (पारेका दोष रहनेपर यह और भी ज्यादा फायदा करता है)। गर्मी-रोगसे पैदा हुए जखममें मर्क्युरियस ६ या एसिड-नाइट्रिक ६ । स्राव होनेवाले जखममें "मर्क-सोल" ६ । पुराने जखममें, किसी दूसरी दवाके प्रयोगसे फायदा न होनेपर—सल्फर ३० ('पुराना जखम' देखिये) अगर जखम सड़ना शुरू हो गया हो, तो कैलेण्डुला θ—१ औंस आधा सेर पानी मिलाकर, उस पानीमें एक साफ कपड़ा भिगोकर जखमके ऊपर पट्टी देनेसे सड़ना बन्द हो जाता है ।

पुराने जखम या नासूरकी चिकित्सा

पहले सल्फर ३० प्रयोग करनेके बाद पुराने नासूरका इलाज शुरू करना चाहिये। जखमसे सहजमें खून गिरना ; आगमें जलनेकी तरह जलन, बहुत दर्द जखमकी चारों ओरका चमड़ा कड़ा पड़ जानेके लक्षणमें, आर्सेनिक ३० । बदबूदार गाढ़ा पीव बहना, जखममें खुजली या डंक मारनेकी तरह दर्द, मांस बढ़नेवाले सूजे घावमें, ग्रैफाइटिस ६ । शरीरमें कई जगह सड़ा घाव और उसके चारों ओर छोटी-छोटी फुन्सियाँ और जखमसे बदबूदार पीव बहनेके लक्षणमें—लैकेसिस ६ । जखम अकड़नसे भरा और सहजमें ही खून फेंकनेवाला, रातमें तकलीफ बढ़ना ; पीव जमकर पपड़ी जम जाती है और उसके नीचे बहुत-सा पीव इकट्ठा हो जाता है, इस लक्षणमें 'मेजेरियम' ३, ३० । पेशियोंकी कमजोरीकी वजहसे पैदा हुए पैरके जखममें, हाइड्रैस्टिस २x । खुजली,

चबानेकी तरह, टपक या काटनेकी तरह दर्द, जखमकी चारों ओर हाथ लगानेसे सहजमें ही खून जाने लगना और उस खूनसे खट्टी बदबू आना, लक्षणमें "एसिड-सल्फ" ३ (यहाँतक-कि सड़नेवाला घाव यदि हड्डीतक पहुँच गया हो, तो उसमें भी यह फायदा करता है)। पारेके अपव्यवहारकी वजहसे पुराने नासूरवाले घावमें, लाइकोपोडियम १२ या एसिड-नाइट्रिक ६। गहरा घाव, उसका किनारा ऊँचा, रंग लाल, जरा छू देनेसे ही दर्दका बढ़ जाना और अक्सर घावसे खूनका गिरना, लक्षणमें "मर्क-सोल" ६। फास्फो ३०, केलि-बाई, पियोनिया ३, हैमा ३, केलि-आयोड θ, कार्बो-वेज ३०, क्रोटेलस ३०, केल्के-फ्लुओर १२x विचूर्ण, साइलिसिया ३० और हिपर-सल्फर ३० की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—मछली, मांस, खटाई, मीठे पदार्थ खाना मना है। सूजीकी रोटी, दूध, हलवा, दाल, शोरवा इत्यादि फायदेमन्द है। जखमको हमेशा ढँके रखना चाहिये। जखमकी पट्टी जरा गर्म पानीसे भिगोकर उठानी और सूखे कपड़ेसे पोंछ देना चाहिये। जखम धो डालनेके बाद दस बून्द कैलेण्डुला छः ड्राम या दो तोले पानीमें मिलाकर, उस पानीमें कपड़ा भिगो रोगवाली जगहपर पट्टी लगानेसे फायदा होता है। हाइड्रेस्टिस θ के घावनसे जखम धोनेसे जल्दी अच्छा होता है।

घनवटी या फुन्सी

(Pimple)

कड़ा, नोकदार, अलग-अलग, लाल और बहुत ऊँचा न हों ऐसे उद्भेदको "फुन्सी" कहते हैं; परन्तु यह रक्त-स्रावी-ग्रन्थि और केशोंके भीतरी भागका पुराना प्रदाह है।

नयी बीमारीमें—कार्बो-वेज ६। पुरानी बीमारीमें—रेडियम-ब्रोम ३० (हफ्तेमें एक बार एक मात्रा) या कैलि-ब्रोम ३x या सल्फर ३० फुन्सी चमकीली लाल रंगकी दिखाई दे, तो कार्बो-ऐनिमेलिस ६ या हाइड्रोकोटाइल ३x (औरतोंके जरायुकी गड़बड़ीसे उत्पन्न), रस-टक्स ३ या रेडियम-ब्रोम ३० (हफ्तेमें एक मात्रा) अथवा आर्स-आयोड ३x (दुरारोग्य बीमारीमें भोजनके बाद सेव्य)। फुन्सीवाली जगहपर सल्फर θ (एक भाग+पानी आठ भाग) धावन बनाकर लगाना फायदेमन्द है।

पीली फुन्सियाँ (Impetigo)

आधे चन्द्रमाकी तरह (कुछ पीली पीव-भरी फुन्सियाँ, पहले अलग-अलग निकलते हैं और पीछे जड़ जाती हैं) नाक, कान, माथा चेहरा या दूसरे-दूसरे अंगोंमें निकलती हैं, इन्हें "पीली फुन्सियाँ कहते हैं। गाढ़ा, पीला, बदबूदार पीव निकलना और पपड़ी जम जाना, फुन्सि-वाली जगहके नीचेका चमड़ा कोमल और लाल होना वगैरह इस रोगके प्रधान उपसर्ग हैं। यह एक लरछुत बीमारी है। जैसा चाहिये, वैसा भोजन न मिलने और चमड़ेका उपदाह, इस रोगका गौण कारण है।

चिकित्सा—नयी बीमारी—वायोला-ट्राइ ३ सेवन और परिश्रुत पानीसे धोना फायदेमन्द है। पुरानी बीमारीमें ऐण्टिम-टार्ट ३ सेवन और काडलिवर आयल तथा पुष्ट करनेवाला आहार फायदा पहुँचाता है। साइक्यूटा ३ (बहुत जलन), क्रोटोन-टिग ६ (डंक मारनेकी तरह खुजली), कैल्के-म्यूर १x (माथेमें पपड़ीदार फुन्सियाँ); आर्स ३०, ऐण्टिम-क्रूड ३०, कैलि-बाई ३०, मेजेरियम ३० वगैरह दवाएँ सेवन और कार्बोलिक-एसिडका मलहम लगाना फायदा करता है ("अकौता देखिये)।

कीड़े काटनेकी वजहसे उपदाह

(Irrilation)

शरीरमें बिछुआ लगने या चींटी, मच्छर, च्यूटे, खटमल, मधुमक्खी वगैरहके काटनेसे उपदाह पैदा होता है। लिडम θ दस-बीस बून्द थोड़े पानीमें मिलाकर लगाना लाभदायक है। हैमामेलिस θ या स्पिरिट-कैम्फर या ऐपिस ३x लगानेसे भी फायदा होता है। यदि दवा न मिल सके, तो चूनेका पानी या प्याज पीसकर उस जगह घसनेसे जलन कम हो सकती है। सोनेके पहले हाथमें साबुन लगाकर सोनेसे मच्छरोंके उपद्रवसे नुकसान नहीं होता।

गांठें-भी पेशी-बन्धनी

(Ganglion)

इस रोगमें एक या ज्यादा पेशियोंको बांधनेवाली नसोंकी हल्की सूजनके साथ कमजोरी मालूम होती है; परन्तु कोई दर्द नहीं रहता। रूटा २x या बेंजोइक-एसिड θ (पन्द्रह ग्रेन+रेक्टिफायड स्पिरिट ३ ड्राम+वरिश्रुत पानी आठ औंस) का धावन सवेरे और शाम रोगवाली जगहपर लगाना चाहिये।

जहरीला घाव

(Anthrax or Malignant Pustule)

यह नया और लाइलाज बीमारी है। एक तरहके कीटाणु (bacillus anthracis) या विष इस रोगके मुख्य कारण हैं। कई हजार वर्ष पहलेसे इस रोगका प्रादुर्भाव हुआ है। बकरी, गाय, भैंस इत्यादि जानवरोंके शरीरमें यह बीमारी पहले-पहल होती है। जब यह जहर

मनुष्यके शरीरमें घुस जाता है, तब बदन खुजलाने लगता है और पच्चीस घण्टेके भीतर वह जहरीली जगह, कीड़े काटनेकी तरह लाल हो जाती है और फूल जाती है। इसके बाद यह बड़ी पानी-भरी फुन्सियोंकी तरह देखाई देती है। जब यह फुन्सी गल जाती है, तब जखम पैदा हो जाता है। रोग यदि कड़ा हुआ, तो बुखार, पतले दस्त, कै, पसीना वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं। रोग भीषण हो जानेपर, हिमांग होकर रोगी मर जाता है।

चिकित्सा—सिकेलि ३—रोगवाले स्थानका सड़ना (gangrene) शुरू होनेपर। सर्द प्रयोगसे घटना और गर्मीसे बढ़ना लक्षणमें लाभदायक है।

हाइपेरिकम २००—इस दवाके सेवन और फोड़ेपर गर्म सेंक देनेसे, जखम अक्सर आराम होने लगता है। पहले यही दवा खाना अच्छा है। दो-एक दिन खानेपर भी अगर फायदा न मालूम हो, तो लक्षणके मुताबिक दूसरी दवा देनी चाहिये।

एन्थ्रासिन ३०—खून खराब होकर बदनमें बहुत जलन मालूम होनेपर यह उपकारी है।

लैकेसिस ६—फुन्सियाँ नीली या काली आभा लिये होनेपर इसे प्रयोग करना चाहिये।

टैरेण्टुला ३०, २००—बैंगनी रंगका दूषित जखम, भयानक जलन, डंक मारनेकी तरह यंत्रणा, बहुत कमजोरी रहनेपर।

भेलाण्डिनम ३०—पतले दस्त, काली आभा लिये पतले दस्त। फुन्सियाँ देखनेमें चेचककी गोटियाँ-जैसी।

बेलेडोना ३, आर्सेनिक ३ (सान्निपातिक—typhoid ज्वरके लक्षणमें), एपिस ३x, कार्बो-वेज ६, हिपर-सल्फर ६ वगैरह दवाओंकी बीच-बीचमें जरूरत पड़ सकती है ("सड़े बुखार" की दवाएँ देखिये)।

जापान वगैरह विदेशोंसे आया हुआ, केश झाड़ने, दाँत माँजने वगैरहके ब्रशोंको पहले गर्म पानीके साथ साबुन या कपड़े धोनेवाला सोडा (या फर्मालिन २ औंस+आधा पाइण्ट पानी) से धोना चाहिये। आजकल कलकत्ता और भारतवर्षके बहुतसे स्थानोंमें जापानी ब्रशोंका व्यवहारकर, बहुतसे मूर्ख नाई, इस रोगको फैलाकर, बहुतोंके प्राण ले चुके हैं। (भारत सरकारके "Director of Information" प्रचारित विज्ञापन, अगस्त सन् १६२० ईस्वी देखिये)।

मुँहासा (Puberty Boils)

जवानीके उठानके समय स्वास्थ्य खराब होने और रक्तकी गड़बड़ी होनेकी वजहसे, युवक-युवतियोंके शरीरकी गाँठें फूलकर, ज्यादातर चेहरा, कपाल, नाक और गलेमें फुन्सियाँ या छोटे-छोटे कीलदार फोड़े पैदा हो जाते हैं। इनका नाम ही "मुँहासा" है। बोरैक्स ३x विचूर्ण खाना और सोहागेकी लावा चूरकर जायतूनके तेलमें मिलाकर फोड़ेपर लगाना चाहिये ; नाक या दोनों ओठोंके फोड़ेमें यह ज्यादा फायदा करता है। कैल्के-कार्ब ६, एसिड-नाई ६ (खासकर औरतोंके लिये), ग्रैफाइटिस ६, सल्फ्यूरिक-एसिड ३ वगैह दवाएँ रोगकी हालतके मुताबिक फायदा दिखाती हैं। "व्रण", "जखम" और "फोड़ा" वगैरहकी दवाएँ देखिये।

अदीठ फोड़ा या पृष्ठ-व्रण
(कार्बङ्कल—Carbuncle)

यह एक तरहका बड़ा, चपटा, गोल, जहरीला फोड़ा होता है। इसका रंग कुछ कालिमा लिये लाल होता है। एक तरहके जीवाणु इस रोगके मुख्य कारण हैं। यह व्रण खासकर गर्दन और पीठमें हुआ

करता है। पीठपर होनेपर "पृष्ठ-व्रण या पृष्ठाघात" कहलाता है। अगर अण्डलाल मिला पेशाब या बहुमूत्रवाले रोगीको यह फोड़ा हो जाता है, तो जानेकी उम्मीद बहुत ही कम रहती है। गर्दनके पिछले हिस्सेके नीचे या कमरपर भी यह फोड़ा हुआ करता है। इसमें साधारण फोड़े या व्रणकी तरह बीचमें एक मुँह न होकर चलनीकी तरह कितने ही छोटे-छोटे छेद हो जाया करते हैं और इन सब छेदोंसे पतले फेनकी तरह मवाद निकला करता है। पहले यह थोड़ी जगह घेरता है, परन्तु धीरे-धीरे यह फैलता जाता है। यह व्रण पहले लाल, इसके बाद काली आभा लिये मालूम होता है, हमेशा दो तीन हफ्ते बाद जहाँ व्रण होता है, वह और उनके नीचेके गहरे अंशतक सड़ने लगता है। बुखार, सरमें दर्द, जलन, अरुचि, कमजोरी, नींद न आना वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। साधारणतः चालीस या इससे ज्यादा उमरवालोंको ही यह बीमारी हुआ करता है।

प्रतिषेधक—प्रदाहवाली अवस्थामें (अर्थात् पीव होनेके पहले) बेलेडोना १x या साइलिसिया ३x विचूर्ण खाना (या पहले स्पिरिट-कैम्फर और इसके बाद जायतूनका तेल लगा रहनेसे) व्रण जोर नहीं पकड़ पाता है।

चिकित्सा—रोगके शुरूसे ही "ऐन्थ्रासिनम" ३०, तीन घण्टेका अन्तर देकर खिलानेसे रोग बढ़ नहीं सकता और दूसरी दवा देनेकी जरूरत ही नहीं पड़ती। अगर इससे फायदा न हो, तो आगे लिखी दवाएँ लक्षणके अनुसार देनी चाहिये। फोड़ेवाली जगह फूली हुई, चौड़ी, लाल और जलन या डंक मारनेकी तरह दर्दके लक्षणमें "एपिस-मेल" ३। व्रण अगर बढ़ने और सड़ने लगे, "आर्सेनिक" ३x, ३०। फोड़ेवाली जगह चमकीली लाल, खोंचा मारनेकी दर्द, ऐंठने या चिलक मारनेकी तरह दर्द, अच्छी तरह नींद न आना लक्षणमें, बेलेडोना ३x (पीव पैदा होनेके पहले प्रदाहवाली अवस्थामें, बार-बार

बेलेडोना देना अच्छा है)। जलनवाले दर्दके साथ खून बहता हो या बदबूदार पीव निकलते ही कमजोरी बढ़ती जाती हो, तो कार्बो-वेज ६—३०। तेज दर्द और जलनके साथ बदबूदार पीव बहना और निचले विधान-तन्तुओंका सड़ने लगना लक्षणमें, साइलिशिया ३० या लैकेसिस ६। टैरेण्टुला क्युबेन्सिस ३० तकलीफ हटानेकी एक बहुत बढ़िया दवा है।

आनुसंगिक चिकित्सा—गर्म पानीमें फ्लानेल भिगोकर सेंक देनेसे बहुत फायदा होता है। मैदे या तीसीकी पुल्टीस देनेसे फोड़ेका टटाना कम पड़ जाता है। कैलेण्डुलाके मलहम या बोरासिक एसिडके मलहमसे (एक ड्राम बोरासिक एसिड चूर्ण और एक औंस ओलिव आयल या लार्डके साथ) फोड़ा बांध रखना और नीमकी पुल्टीस इस बीमारीमें ज्यादा फायदा करती है। पीव निकालना हो, तो छोटे हंसपगीके कच्चे पत्तेकी पुल्टीस देना अच्छा है। पुल्टीसपर थोड़ी कोयलेकी बुकनी छिड़क देनेसे सड़ना और बदबूका आना बन्द हो जाता है। कांडिज लोशनसे घाव धोनेसे सड़न और बदबू बन्द होती है। रोगीका बिछावन और कपड़े लत्ते साफ़ सुथरे रखना उचित है। सागू, दूध, बार्ली, मांसका शोरबा, काडलिवर आयल वगैरह हल्का, परन्तु पुष्ट पथ्य देना चाहिये।

अरुणिमा (Erythema)

इसमें बदनका चमड़ा लालभर होता है ; फोड़े या पीव वगैरह नहीं पैदा होते, बदनमें खुजली नहीं होती।

बेलेडोना ३x—६ इसकी बढ़िया दवा है। बुढ़ोंकी बीमारीमें, मेजेरियम २x फायदा करता है। भोजनके बाद चेहरा लाल हो जानेपर नक्स वोमिका ३x—३० सेवन करना चाहिये। अगर बात रोगके

साथ अरुणिमा हो, तो एपिस ३x—३०, रस-टक्स ६ या कैलि-वाई ६ फायदा करता है।

खुली हवामें घूमना, हल्का पथ्य, भोजनके समय किसी तरहकी चिन्ता न करना, इच्छापूर्ण पानी पीना और नहाते वक्त वदन मलना वगैरह फायदेमन्द हैं।

खाल उधड़ जाना
(Intertrigo)

वदनका चमड़ा आपसमें रगड़ खाकर, छिलकर लाल रंगका हो जाता है—पुट्ठे, वगल, मलद्वार वगैरह इस तरह हो जानेको खाल उधड़ना कहते हैं।

चिकित्सा—वच्चोंको वीमारीकी कैमोमिला ६ वढ़िया दवा है। वार-वार वीमारीका हमला होनेपर लाइको ६ देना चाहिये। तकलीफ-वाली जगहमें दर्द होनेपर, मर्क सोल ६। ज्यादा घूमनेकी वजहसे जांघें छिल जानेपर, इथ्यूजा ३।

आनुसंगिक चिकित्सा—कुछ गर्म पानीसे आक्रान्त अंगको रोज दो तीन वार धो डालना और अच्छी तरह पोंछकर, सज्जी मिट्टीकी बुकनी उसपर छिड़क देनी चाहिये। हाइड्रैस्टिस θ एक भाग+दस भाग ग्लिसरिनके साथ मिलाकर, वीमारीवाली जगहपर लगा देनेसे फायदा होता है।

आमवात या जुलपित्ती
(Urticaria)

वरहंटा छू जाने या वर काटनेसे वदनमें जिस तरह लाल-लाल और सादे चकत्ते हो जाते हैं या शरीर खुजलाने लगता है; आमवातमें भी ठीक उसी तरह दाग पड़ता है। इसीको जुलपित्ती निकलना भी कहते

है। यह बीमारी एकाएक पैदा होकर कई घंटोंमें ही या कई दिन ही रहकर अच्छी हो जाती है। रोग पुराना होनेपर रोगी तकलीफ पाता है। शरीरकी कितनी ही जगहें फूल उठती हैं और खुजलाने लगती हैं, फूली जगह गर्म रहती है, यही आमवातके खास लक्षण हैं। चिगड़ी (चिंगट) मछली, केंकड़ा या भारी चीजें खाना, कब्जियत या सर्दी लगनेकी वजहसे यह बीमारी हो सकती है।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) नये आमवातमें—एपिस, आर्टिका-युरेन्स, क्लोरेलम २x विचूर्ण।

(२) पुरानी बीमारीमें—किनिन-सल्फ (बार-बार बीमारी होनेपर), आर्स, एपिस, सल्फ, क्लोरेलम २x विचूर्ण।

(३) पाकाशयकी गड़बड़ीसे पैदा हुई बीमारीमें—ऐण्टिम-क्रूड, नक्स-वोम, पल्स।

(४) सर्दी लगनेके कारण पैदा हुई बीमारीमें—ऐकोनाइट (सर्दीके दिनोंकी हवा या सूखी सर्दी लगनेकी वजहसे); डल्का (गीली या बरसाती हवा लगनेके कारण)।

(५) दूसरे-दूसरे उपसर्गोंके साथ—ऐकोन (बुखारके लक्षणमें); क्लोरेलम २x विचूर्ण (बिछावनकी गर्मीसे होनेपर); ब्रायोनिया (एकाएक आमवात दब जानेपर) इग्नेशिया या ऐनाका (मानसिक अवसन्नतासे पैदा हुई बीमारीमें); काफिया (नींद न आनेके साथकी बीमारीमें); ब्रायो या रस-टक्स अथवा चिमिसिफ्यूगा (वात रोगियोंके लिये ; कोलचि (गठिया वात रोगवाले रोगियोंके लिये); इपिका या आर्स (दमावाले रोगियोंके लिये); पल्स या हाइड्रैस्टिस (जरायुकी गड़बड़ीसे पैदा हुई बीमारीमें)।

दाह, बुखार, प्यास और लाल रंगके दाने होनेपर, ऐकोनाइट ३x। फुन्सियोंका निचला हिस्सा लाल और बीचका हिस्सा सफेद, जलन या डंक मारनेकी तरह दर्द या बहुत कुटकुटाना या सुरसुराना, फूल उठना

वगैरह लक्षणोंमें आर्टिका युरेन्स ३x या एपिस ३x। आर्टिका-युरेन्स और एपिसमें फर्क यह है कि—चकत्ते एकाएक बैठ जाने के, अतिसार और प्रलापका लक्षण हो, तो आर्टिका और फुन्सियाँ बहुत फूलीं और डंक मारनेकी तरह तेज दर्द रहनेपर, एपिस-मेल ; अगर आर्टिका या एपिसके प्रयोगसे फायदा न हो तो क्लारैल-हाइड्रेट ३x। पाकाशय यंत्रकी गड़बड़ीकी वजहसे बीमारी पैदा होनेपर—ऐण्टिम-क्रूड, नक्स-वांम या पल्सेटिला। केंकड़ा, चिंगड़ी मछली खानेकी वजहसे या पानी भींगनेके कारण यह बीमारी होनेपर रस-टक्स ३—३०। यकृतके दोषके साथ आमवातमें, ऐस्केकस-फ्लुवियेटिलिस ३ ; सर्दी लगकर (खासकर बरसातमें) होनेपर, डल्कामारा ६। बीमारीकी पुरानी हालतमें—"एपिस, आर्सेनिक, सल्फर, किनिन-आर्स, ऐस्टेकस-फ्लूवियेटिलिस ३—३० या नेट्रम-म्यूरियेटिकम" देना चाहिये ; इन सभी दवाओंके ६ठें क्रमसे काम हो जाता है। अगर ये सभी दवाएँ वेफायदा सावित हो जायें, तो "स्कूकम-चक ३x विचूर्ण" सेवन करना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—पानीमें भींगना, ओस या सर्दी या सर्द हवा लगना, चिंगड़ी मछली या केंकड़ा खाना अथवा पेटकी बीमारी पैदा हो जाये, ऐसी भारी चीजें न खानी चाहिये। सुसुम पानीमें नहाना, हल्की चीजें खाना फायदेमन्द है। नींबू काटकर उससे उस जगहको घसना चाहिये, जहाँ चकत्ते हुए हों, इससे फायदा होता है।

खुजली (Prurigo)

यह चमड़ेकी एक पुरानी बीमारी है। इसमें बदन खुजलाता है और चमड़ेका रंग बदलकर एक तरहकी फुन्सियाँ पैदा हो जाती हैं। सारा शरीर (खासकर मलद्वार और जननेन्द्रिय) में बहुत खुजलाहट यहाँतक कि खुजलाते-खुजलाते खून निकलने लगता है। नींद न आना

वगैरह इस बीमारीके विशेष लक्षण हैं। बुढ़ापा, पुरानी बीमारी भोगना जीवनी-शक्तिकी कमी, साफ सुथरा न रहना या भारी चीजें खाना, बहुत गर्मी या सर्दी लगना वगैरह कारणोंसे यह बीमारी हो सकती है।

चिकित्सा—रेडियम-ब्रोमेटम ३० (हफ्तेमें सिर्फ १ मात्रा) इसकी बहुत बढ़िया दवा है।

नयी बीमारीमें—ऐकोन ३x (बुखारके साथ खुजली) और सल्फर ३० (बहुत खुजली, चमड़ा सूखा, शामके वक्त और खाटपर सोनेपर बीमारीका बढ़ना)।

पुरानी बीमारीमें—आर्स ३x—३० (जलन पैदा करनेवाला स्राव, कमजोरी और पानीकी तरह रस निकलना)। इग्नेशिया ३ (शरीर खुजलानेके बाद मच्छर काटनेकी तरह शरीरका चमड़ा फूल उठना)। डलिकस, फैगोपाइरम, कास्टि, लाइको (मलद्वार खुजलाना), मर्क, रस टक्स, मेजेरियम, एपीसाई, कार्बो वेज वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक होती हैं।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोज ठण्ड या कुछ गर्म जलमें नहाना या बदन धोना, स्वास्थ्यकर भोजन खाना पीना, खुली हवामें घूमना, पीठी या अँचार वगैरह खाना और मलहम वगैरह न लगाना अच्छा है। जरूरत पड़नेपर मेजेरियम (एक भाग+पानी दस भाग) का धावन लगाया जा सकता है। शरीर जितना ही कम खुजलाया जाये, उतना ही अच्छा है।

लाल या सफेद दाने

(Strophulus)

बच्चोंके सारे बदनमें (खासकर चेहरे और मसूढ़े, गर्दन तथा दोनों बाँहोंमें), आलपीनकी नाककी तरह लाल या सफेद फुन्सियाँ होती हैं। ये देखनेमें आमवात-जैसी ही होती हैं।

कैमोमिला ६ इसकी बढ़िया दवा है। एपिस ३x, ऐण्टिम-क्रूड ६ (अजीर्णके साथ जीभपर सफेद लेप चढ़ो); कैल्के-कार्ब (पुराने अम्ल-रोगके साथ); सल्फर ३०, रस-टक्स ३ वगैरह दवाओंकी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। उपयुक्त भोजन करना और कपड़े पहनना; रोज ठण्डे या थोड़े गर्म पानीसे नहाना, खुली हवामें घूमना और फुन्सियोंपर सज्जी मिट्टीकी बुकनी भुरभुरा देना फायदा करता है।

खाज या खुजली

(Scabies and Itching of the Skin)

जीवाणुसे एक तरहकी खुजली होती है। कलाई, अंगुली वगैरह जगहोंमें, पतले और कोमल चमड़ेके नीचे, ये सब जीवाणु रहते हैं। इसीलिये पहले अंगुलियोंके गासेमें तर खुजली हुआ करता है। गन्दे रहना ही इस बीमारीका गौण कारण है।

चिकित्सा—फैगोपाइरम २, ३—सारे शरीरमें इतनी खुजली होती है, कि रोगी पागल हो उठता है।

मेजेरियम— ३ या ३०—शरीरकी किसी खास जगहमें ज्यादा खुजली होनेकी वजहसे उस स्थानको खुजलाता-खुजलाता रोगी खून निकाल डालता है। ऐसी अवस्थामें इस दवाके सेवनसे रोगीको अक्सर विफल मनोरथ नहीं होना पड़ता।

डलिकस ३—शरीरका कोई हिस्सा (खासकर पीठ) दीवार या कोई दूसरी कड़ी चीजमें जोरसे घसनेसे रोगीको आराम मालूम होनेपर इसका प्रयोग होता है।

सिपिया, कैल्केरिया-कार्ब, आर्सेनिक, हिपर-सल्फर, नक्स-वोमिका, मर्क-कोर, सोरिनम, लाइकोपोडियम, क्रोटन-टिग, कास्टिकम, स्टैफिसेग्रिया वगैरह दवाएँ (३० शक्तिकी) खुजलीमें फायदा करती हैं।

लक्षणके अनुसार सल्फर व्यवहार करनेपर रोग एकदम अच्छा हो जा सकता है। गर्म पानीमें थोड़ा बढ़िया गन्धक डालकर उसी पानीसे नहाना और पहननेका कपड़ा और बिछावनको चादर उससे धो डालनेसे खसरा जल्दी अच्छा हो जाता है। कभी-कभी बीमारी अच्छी होने लगनेके बाद ही शरीरमें छोटी-छोटी फुन्सियाँ खसरेकी तरह निकल आती है—इससे डरनेकी कोई बात नहीं है; क्योंकि वह खसरा नहीं है। आप ही-आप अच्छा हो जाता है।

जमड़ा

यह अक्सर पैरमें ही होती है। यह भी एक तरहकी खुजली या एकजिमा ही है। रस-टक्स ६, सिलिका ३०, सिपिया ३०, ऐन्थ्रासिनम ३०, पल्सेटिला ६, नेट्रम-म्यूर ३०, मर्क्यूरियस ३, लैकेसिस ६, ग्रैफाइटिस ३० वगैरह इस रोगकी खास दवाएँ हैं। कदमके पत्तेसे जखमवाली जगहको बाँध रखना अच्छा है।

"खसरा", "अकौता" बाल-रोगाध्यायमें "अकौता" वगैरह देखिये।

अकौता (Eczema)

चमड़ेके प्रदाहके साथ मवाद या रस निकलता हो, तो-उसे 'अकौता' रोग कहते हैं। पहले जलन पैदा करनेवाली लाल-लाल फुन्सियाँ दिखाई देती हैं, इसके बाद ये सभी फुन्सियाँ खुजलाते खुजलाते "घाव" में परिणत हो जाती है। जखमसे साफ पानीकी तरह या पीले पीवकी तरह रस निकलता है। ज्यादा खुजलानेपर कभी-कभी खून निकलने लगता है। यह रोग शरीरमें सब जगहों हो सकता है; पर अधिकतर यह कानमें, बगलमें और सरमें ही हुआ करता है। "सोरा" (psora) ग्रस्त मनुष्य या जिनके शरीरका खून दूषित हो गया है,

उन्हें ही अक्सर यह बीमारी हुआ करती है। सोडा, साबुन, चूना वगैरह हमेशा काममें लाना, पहननेके कपड़ेसे बदनको घसना, अनुचित खान-पान या माँके दूधमें खराबी आ जाना, स्वास्थ्यके नियमोंका पालन नहीं कर सकना, ज्यादा परिश्रम करना वगैरह कारणोंसे यह बीमारी हो सकती है। इसलिये रोगीकी धातुको अच्छी तरह समझे विना, बाहरी दवाएँ लगाकर, बीमारी अच्छी करनेसे बहुत कुछ नुकसान हो सकता है।

चिकित्सा—हल्की और नयी या एक जगहके या समूचे बदनके अकौता रोगमें, रस-वेन ३ (न मिले तो रस-टक्स ३) देना चाहिये। रस-टक्स देनेपर कभी-कभी बीमारी बढ़ जाती है, ऐसी जगह दूसरी दवा न देकर रस-टक्स ३०—२०० या रस-वेन ६—३० देना चाहिये। चेहरे या जननेन्द्रियमें खुजलीसे भरे अकौतामें, क्रोटोन ३। माथेकी खोलमें तर और पपड़ी-भरा अकौता होनेपर, ओलियेण्डर ६ या कैलि-म्यूर ६। अण्डकोषके अकौतामें, हिपर-सल्फर ६। पुरुषोंको दाढ़ीमें होनेपर, साइक्यूटा विरोजा ३। तलहत्थीमें, कानके पीछे, हाथकी अंगुलियोंमें अथवा सन्धियोंमें अथवा कोहनी, घुटने वगैरहमें अकौता होनेपर, ग्रैफाइटिस ६। हाथके पिछले भागमें होनेपर बोविष्टा ६। चेहरा, जननेन्द्रिय या गुह्यद्वारमें बराबर खुजली या दर्दभरा अकौता होनेपर, ऐण्टिम-क्रूड ६। सूखे गर्म या लाल रंगके अकौतामें ऐल्यूमिना ६ या आर्सेनिक ६। जलनभरे, डङ्क मारनेकी तरह दर्द-भरे और खुजलाहटभरे अकौतामें, आर्टिका-युरेन्स ३x। पीले रंगकी पपड़ी जमनेवाले अकौतामें, सल्फर ३०। खड़ियाकी तरह पपड़ी जमनेवाले अकौतामें, कैल्के-कार्ब ३०।

पुराने अकौता रोगमें—सूखे, गर्म और लाल रंगके गठिया वात मिले अकौता रोगमें, ऐल्यूमिना ३०। मवाद बहनेवाले अकौतामें, मर्क-कोर ३। फटे लाल रंगके अकौतामें, थोड़ा-थोड़ा मवाद जानेके लक्षणमें, पेट्रोलियम ६। लसदार मवादवाले अकौतामें ग्रैफाइटिस ६,

३०। जो अकौता रोग किसी तरह अच्छा नहीं होना चाहता, उसमें हिपर-सल्फर ३० या स्कूकम-चक ३X सेवन करना चाहिये। कार्बो-वेज ६, सिपिया ६, वायोला-ट्राइ १, विंका माइनर १, लाइको ३०, रेडियम-ब्रोम ३०, क्रिसोफेनिक-एसिड २ की कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

हमलोगोंने 'ट्यूबरक्युलिनम' १००० देकर एक ज्यादा उमरवाले मनुष्यका सूखा अकौता आरोग्य होते देखा है। ये भद्र महोदय ऐलोपैथी, आयुर्वेदिक, अवधौतिक प्रभृति नाना प्रकारकी चिकित्साएँ, कर हताश हो पड़े थे और अन्तमें होमियोपैथिक मतसे चिकित्सा करानेको बाध्य हुए थे। उनके पैरकी गांठके पासका चमड़ा मोटा, कड़ा और काला हो गया था।

एक बच्चेको हर वर्ष, जाड़ेमें घुटनेसे नीचे पैरकी गांठतक रस बहनेवाला अकौता होता था। उसका घाव देखकर ऐसा मालूम हुआ, मानो सड़ गया है। पहले खूब खुजली होती थी, खुजलानेपर पानी और रस बहता था। बच्चा कष्टसे अधिर हो पड़ता था। उसके उपसर्ग शामके वक्त बढ़ते थे। लक्षणके अनुसार किसी भी दवासे फायदा न हुआ, तब "सोरिनम" १००० दिया गया। भगवानकी कृपासे बच्चा आरोग्य हो गया।

आनुसंगिक चिकित्सा—ज्यादा खुजलाना बुरा है। इसलिये जखमवाली जगह हमेशा कपड़ेसे बांध रखनी चाहिये। दूध और ताजी सागकी तरकारी खाना चाहिये। मिठाई, मछली, मांस और जल्दी न पचनेवाली चीजें खाना मना है। जखमवाली जगह हमेशा साफ-सुथरी रखना चाहिये। जखमवाली जगहपर विशुद्ध "ओलिब आयल" लगाना अच्छा है। बाल रोगाध्यायमें "अकौवा" देखिये।

कैन्सर (Cancer)

वर्तमान शताब्दीमें कर्कट रोग बहुत बढ़ा हुआ दिखाई देता है। गुवाक खानेकी वजहसे भारतवर्ष और सिंहलद्वीपकी औरतोंके मुँहमें यह कैन्सर (कर्कटिका) रोग हो जाया करता है। डाक्टर सर ए० पी० गुहका कथन है आजकल सैकड़े दस आदमियोंको इस रोगसे मरना पड़ता है।

अर्बुद रोगवाले अध्यायमें "हल्का" (banign) और "भीषण" (malingant)—इन दो किस्मोंका अर्बुद बताया गया है। इस आखिरी तरहके अर्बुदका नाम ही "कर्कट" या "कैन्सर" रोग है अर्थात् बहुतेरे प्रादाहिक परिवर्त्तन (chronic inflammatory changes) की वजहसे शरीरके किसी भी तन्तुमें यह बीमारी हो सकती है। कर्कट रोग या भीषण प्रकृतिका अर्बुद कभी-कभी धीरे-धीरे अथवा कभी-कभी एकाएक तेजीसे प्रकट हो जाता है। इस बीमारीमें कभी न सहन होनेवाला दर्द मालूम होता है और कभी-कभी दर्द बिलकुल ही नहीं होता।

कैन्सर रोग दो तरहका होता है :—(१) "उपत्वक" (अर्थात् ओंठ, स्तनका बोंटा और श्लैष्मिक और स्नैहिक-झिल्लीके ऊपरवाले पतले चमड़ेमें)। (२ "संयोजक तन्तुओंका कैन्सर" या "सर्कोमा" (अर्थात् मांसार्बुद) होता है। जल जाना या हाड़ टूटना वगैरह चोटोंकी वजहसे कर्कटिका होनेपर उसे मांसार्बुद (sarcoma) कहा जाता है। यह मांसार्बुद देखनेमें भ्रूणावस्था-संयोजक तन्तुकी तरह (a tumor made up of a substance like the embryonic connective tissue) होता है। मांसार्बुद अक्सर सांघातिक हो जाता है।

३०। जो अकौता रोग किसी तरह अच्छा नहीं होना चाहता, उसमें हिपर-सल्फर ३० या स्कूकम-चक ३x सेवन करना चाहिये। कार्बो-वेज ६, सिपिया ६, वायोला-ट्राइ १, विंका माइनर १, लाइको ३०, रेडियम-ब्रोम ३०, क्रिसोफेनिक-एसिड २ की कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

हमलोगोंने 'ट्यूबरक्युलिनम' १००० देकर एक ज्यादा उमरवाले मनुष्यका सूखा अकौता आरोग्य होते देखा है। ये भद्र महोदय ऐलोपैथी, आयुर्वेदिक, अवधौतिक प्रभृति नाना प्रकारकी चिकित्साएँ, कर हताश हो पड़े थे और अन्तमें होमियोपैथिक मतसे चिकित्सा करानेको बाध्य हुए थे। उनके पैरकी गाँठके पासका चमड़ा मोटा, कड़ा और काला हो गया था।

एक बच्चेको हर वर्ष, जाड़ेमें घुटनेसे नीचे पैरकी गाँठतक रस बहनेवाला अकौता होता था। उसका घाव देखकर ऐसा मालूम हुआ, मानो सड़ गया है। पहले खूब खुजली होती थी, खुजलानेपर पानी और रस बहता था। बच्चा कष्टसे अधिर हो पड़ता था। उसके उपसर्ग शामके वक्त बढ़ते थे। लक्षणके अनुसार किसी भी दवासे फायदा न हुआ, तब "सोरिनम" १००० दिया गया। भगवानकी कृपासे बच्चा आरोग्य हो गया।

आनुसंगिक चिकित्सा—ज्यादा खुजलाना बुरा है। इसलिये जखमवाली जगह हमेशा कपड़ेसे बाँध रखनी चाहिये। दूध और ताजी सागकी तरकारी खाना चाहिये। मिठाई, मछली, मांस और जल्दी न पचनेवाली चीजें खाना मना है। जखमवाली जगह हमेशा साफ-सुथरी रखना चाहिये। जखमवाली जगहपर विशुद्ध "ओलिव आयल" लगाना अच्छा है। बाल रोगाध्यायमें "अकौता" देखिये।

कैन्सर (Cancer)

वर्त्तमान शताब्दीमें कर्कट रोग बहुत बढ़ा हुआ दिखाई देता है। गुवाक खानेकी वजहसे भारतवर्ष और सिंहलद्वीपकी औरतोंके मुँहमें यह कैन्सर (कर्कटिका) रोग हो जाया करता है। डाक्टर सर ए० पी० गुहका कथन है आजकल सैकड़े दस आदमियोंको इस रोगसे मरना पड़ता है।

अर्बुद रोगवाले अध्यायमें "हल्का" (banign) और "भीषण" (malingant)—इन दो किस्मोंका अर्बुद बताया गया है। इस आखिरी तरहके अर्बुदका नाम ही "कर्कट" या "कैन्सर" रोग है अर्थात् बहुतेरे प्रादाहिक परिवर्त्तन (chronic inflammatory changes) की वजहसे शरीरके किसी भी तन्तुमें यह बीमारी हो सकती है। कर्कट रोग या भीषण प्रकृतिका अर्बुद कभी-कभी धीरे-धीरे अथवा कभी-कभी एकाएक तेजीसे प्रकट हो जाता है। इस बीमारीमें कभी न सहन होनेवाला दर्द मालूम होता है और कभी-कभी दर्द बिलकुल ही नही होता।

कैन्सर रोग दो तरहका होता है :—(१) "उपत्वक" (अर्थात् ओंठ, स्तनका वोंटा और श्लैष्मिक और स्नैहिक-झिल्लीके ऊपरवाले पतले चमड़ेमें)। (२ "संयोजक तन्तुओंका कैन्सर" या "सर्कोमा" (अर्थात् मांसार्बुद) होता है। जल जाना या हाड़ टूटना वगैरह चोटोंकी वजहसे कर्कटिका होनेपर उसे मांसार्बुद (sarcoma) कहा जाता है। यह मांसार्बुद देखनेमें भ्रूणावस्था-संयोजक तन्तुकी तरह (a tumor made up of a substance like the embryonic connective tissue) होता है। मांसार्बुद अक्सर सांघातिक हो जाता है।

मानसिक उत्तेजना (जैसे—शोक, काम काजमें नुकसान, चिन्ता वगैरह) या **शारीरिक उत्तेजना** (जैसे—तम्बाकू पीनेके लिये मिट्टीका नल (चिलम) व्यवहार करना, दाँतका अगला भाग जीभमें बराबर लगकर वहाँ जख्म पैदा होना, X-Yay या रेडियमकी किरण या किरासन तेल वगैरहका बराबर शरीरपर व्यवहार करना, स्त्रियोंका स्तन बहुत देरतक "काग" की तरह रहना, रज बन्द रहनेके वक्त या उसके बाद, 'एकाएक' किसी भीतरी यन्त्रसे 'खून जाना' वगैरह कारणोंसे शरीरके उन सब अंगोंमें कर्कट रोग होता है। आमाशयमें पुराना घाव, अन्नकी नलीमें या बड़ी आँतमें रोग पैदा करनेवाले जीवाणुका मौजूद रहना, गहरी चोटके कारण शरीरका खराब हो जाना, सरका पुराना दर्द, स्नायुशूल, चर्म रोग या वात रोग बहुत दिनोंतक भोगते रहना वगैरह कारणोंसे खूनमें दोष पैदा होकर, कर्कट रोग हुआ करता है। कभी-कभी तो यह बीमारी पुश्त दर-पुश्त चला करती है; इसीलिये, इस रोगका अच्छी तरह इलाज न होनेपर, नश्तर लगवानेके बाद या रोग बैठ जानेपर, रुका हुआ दूषित अर्बुद बीमार अंग या शरीरके किसी दूसरी जगहपर दुबारा हमला करता है।

बिना दवा खाये आपह ही आप (अर्थात् शरीरको रक्षा करनेवाली ताकतके गुणसे) कभी कभी कर्कट रोग एकदम अच्छा हो जाता है। जो हो, यह सन्देह होते ही कि कर्कट रोग हुआ है, तुरन्त उसको रोकनेका उपाय करना चाहिये। समयपर होमियोपैथिक दवा खाने से फायदा हो सकता है; दवासे फायदा न होनेपर X-Ray या रेडियमकी किरणका प्रयोग करना या नश्तर लगवा देना चाहिये।

चिकित्सा—"आर्स" (निम्न-क्रम) खासकर जलनवाले कर्कटमें "हाइड्रैस्टिस" θ—३x (बाहरी प्रयोग और सेवन); गाठ या जरायुमें कर्कट होनेपर "कार्बो-ऐनि" १x, विचूर्ण; कर्कटसे स्राव होनेपर "आरम-मेट" ३x विचूर्ण ६; हड्डीके कर्कटमें 'एकोन-रेडिक्स' θ (फी

मात्रा आधे बुन्दसे तीन बून्दतक सेवन करना, जबतक बीमारीको नींद न आ जाये), कर्कटसे पैदा हुई बेहद तकलीफकी यह एक अचूक दवा है। 'लेपिस-ऐल्बम' २x बहुत जलनके साथ ज्यादा स्राव (खासकर जरायुके कर्कटमें); "कार्सिनोसिन" ३०—२०० (हफ्तेमें सिर्फ एक बार खाना चाहिये); "एक्स-रे" ३०—२०० (कठिन तकलीफमें, सप्ताहमें एक बार सेवन)। "रेडियम-ब्रोम" ३०—२०० (हफ्तेमें सिर्फ एक बार सेवन) और "सेलिनियम" ३०—२०० (सप्ताहमें सिर्फ एक बार सेवन) और "हाइड्रैस्टिनम" ३x—ये सब कर्कट रोगकी बहुत बढ़िया दवाएँ हैं।

नीचे लीखी दवाओंकी भी समय-समयपर जरूरत पड़ सकती हैं :— बेल, फास्फो, कांडियुरेङ्गो १x, एसिड-कार्ब, रूटा θ, फाइटो २x आयोड ६x, कैलि-ब्रोम ३०, गेलियम ऐपाराइना θ (दूधके साथ ३०—६० बून्द रोज तीन बार सेवन); सिकेलि ३०, क्रियोजोट ३०, हाइड्रोकोटाइल-ऐसेट ३x, सल्फर ३०, सैंगुनेरिया १x, आर्स-आयोड ३x (पानीके साथ न खाया जागे), आरम-आयोड ३x, कैल्के-आयोड ३, सिम्फाइटम θ, युफोर्बियम ६, एकिनेशिया θ (मात्रा ५—२० बून्द), "लैकेसिस" ६ (गहरा लाल या नीला या खाकी रंगका कैंसर), कोनायम ६—३० (आघातके कारण पैदा हुए कर्कट रोगमें या छातीमें कर्कट रोग होनेपर), कैलि-सायानेटस ३ (जीभके कैंसरमें), हेक्ला-लावा, हेलोनियस, प्लैटिना, सिफिलिनम। स्क्रोफुलिया θ, आर्निथो-गेलम θ, भी कभी-कभी खूब लाभ करता है।

कैंसर रोगके इलाजमें सिद्धहस्त डा० एलउड Ellwood ने नीचे लिखे अंगोंके ११ कैंसर रोगोंको एकदम अच्छा किया है :—

(१) उपजिह्वाका कैंसर—फेरम-पिक ३x, हाइड्रैस्टिस θ।

(२) जरायु-ग्रीवाका कैंसर—आर्स-आयोड ३x, पल्स ३x (स्त्री-रोगाध्यायमें "जरायुका अर्बुद, जरायुका कैन्सर" देखिये)।

(३) गलकोष और गलनलीका कर्कट—फेरम-पिकरिक ३x, थूजा १x।

(४) बड़ी आँतके आखिरी अंश (rectum) का कर्कट—हाइड्रैस्टिस १x, सैलविया θ हफ्तेके अन्तमें सेवन।

(५) स्थूलान्त्र (colon) का कर्कट—हाइड्रैस्टिस ६x, क्रोकस θ सप्ताहके आखिरमें एक बार खाना चाहिये और नासूरके लिये सिलिका ६।

(६) दाहिने स्तनका कार्सिनोमा—आर्स-आयोड ३x और हाइड्रैस्टिस ३x (पर्यायक्रमसे)।

(७) यकृतमें कर्कटके साथ उदरी—आर्स आयोड ३x और हाइड्रैटिस θ।

(८) उरूके हाड़में सर्कोमा—साइलिसिया २००।

(९) बायें उरूकी हड्डीके सर्कोमामें—सिलिका ६।

(१०) नाकके सर्कोमामें—नेट्रम-म्यूर २०० समयपर सेवन।

(११) बगलकी बढ़ी हुई ग्रन्थिके कर्कटमें—चार बार नश्तर लगवानेके बाद रोगी हताश होकर होमियो चिकित्सा कराने आया, उस समय साइलिसिया २०० सेवनकर वह एकदम आरोग्य हो गया।

आनुसंगिक चिकित्सा—जखमवाले कर्कटमें बदबू कम करनेके लिये, कार्बोलिक एसिडकी बुकनी या आयोडोफार्मकी बुकनी लगाना या कोयलेकी पुल्टीस व्यवहार करना चाहिये। डा० कूपर रूटाका मलहम व्हवहार करनेकी सलाह देते हैं। दूध, नमक, मिर्चा, चाय, काफी, शराब, मांस, मछली, अंडा, उड़द, सेम, मसूरकी दाल वगैरह खाना मना है। मासके बदले पनीर खाया जा सकता है। ज्यादा परिमाणमें ताजे फल खाये जा सकते हैं। खुली हवामें थोड़ा घूमना अच्छा है। स्तनमें कर्कट होनेपर हाथको ज्यादा हिलाना-डुलाना

नहीं चाहिये। इस बातपर ख्याल रखना चाहिये कि रोगीको अजीर्ण न हो जाये। भोजनके पहले और बाद थोड़ा विश्राम करना चाहिये।

शैवालिका (Lichen)

किसी चर्म प्रदाहका घनी फुन्सियोंकी तरह प्रकाशित होनेका नाम "शैवालिका" है। घमौरीकी तरह लाल-लाल फुन्सियाँ सारे शरीरमें (हाथ, पैर, मुँह और गर्दनमें) निकलना, खुजलाना, चमड़ेका सूखा और मोटा होना और अन्तमें फुन्सियाँ सूखकर पतला चमड़ा सफेद हो जाना, इस रोगका प्रधान लक्षण है। चूरन, बर्फ, पावरोटी बेचनेवाले, राज-मजदूर या जो सोडा और साबुनका काम हमेशा करते हैं या जो हमेशा ठीक समयपर खाना-पीना नहीं करते या जो उष्ण-प्रधान देशमें रहते हैं या गर्मीके दिनोंमें भी जो ज्यादा मेहनत करते हैं, हमेशा उन्हें ही यह बीमारी हुआ करती है।

चिकित्सा—सल्फर ३० (नयी बीमारीमें); ऐण्टिम-क्रूड (पाकाशयकी गड़बड़ीके साथ रोगमें); एपिस ३ या लिडम ६ (घमौरीकी फुन्सियोंमें काँटा चुभने-जैसा दर्द); आर्स. ३x—३० (पुरानी बीमारीमें); मेजेरि, रस, फाइटो, ग्रैफा, नेट्रम-म्यूर, सल्फ। रोज सुसुम या ठण्डे पानीमें नहाना और बदन पोंछ डालना चाहिये, उत्तेजक खान-पान मना है। स्वास्थ्यके साधारण नियम पालन करने चाहियें।

अंगुलबेढ़ा (Whitlow)

नख खूब छोटा कटवाने, चोट लगने या जल जाने अथवा कोई विषैली चीज खूनमें जानेसे, अंगुलीके आगे जलन और सूजन होती है और फिर वह पक जाता है। इसीका नाम "अंगुलबेढ़ा" या "अंगुलीका घाव" है। रोग बढ़ जानेपर मौततक हो सकती है।

चिकित्सा—अगुलबेढ़ा होनेका लक्षण दिखाई देते ही नमक-मिले गर्म पानीमें बार-बार अगुली डुबा रखनी चाहिये और साइलिसिया ३x का सेवन करना चाहिये। रोगकी पहली अवस्थामें या जब दर्द हड्डीतक फैल जाये, तब साइलिसिया ३x—३० सेवन और गर्म पानीका सेंक देना चाहिये। बुखार रहनेपर साइलिसियाके साथ बेलेडोना ६ (पर्यायक्रमसे) कोई कोई दिया करते हैं। अगुलीका अगला हिस्सा बहुत फूलकर कुछ काला हो जाये और जलन तथा दर्द रह, तो आर्सेनिक ६ ; परन्तु नीला होनेपर लैकेसिस ६। (बीमारीकी पहली अवस्थामें) तेज दर्द पैदा हो जानेपर मर्क सोल ६, हिपर-सल्फर ६, स्ट्रैमोनियम ६, ऐमोन-कार्ब ५०० या बोरिक एसिड ६ सेवन करना चाहिये। ऐन्थ्रासिन ३०, एपिस ३, ग्रेफाइटिस ६, सैंगुनेरिया १x, ब्रायोनिया ६, कास्टिकम ६, लिडम ३ वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। नाइट्रिक-एसिड θ, डायस्कोरिया θ या फास्फोरस θ, रोगवाले स्थानपर लगा देनेपर दर्द कम पड़ जाता है। छोटे बैंगनमें या कागजी नींबूमें छेदकर अगुलीपर टोपीकी तरह पहना देनेसे भी तकलीफ कम हो सकती है। इससे भी आराम न हो, तो नीमकी गर्म पुल्टीस देनी चाहिये। हाथ इस तरह बांध रखना उचित है कि जिससे हिलाने-डुलानेपर नीचेकी ओर न झुक जाये। पीब पैदा हो जानेपर अस्त्र-चिकित्सककी सहायता लेनी चाहिये और जबतक घाव अच्छा न हो, तबतक कैलेण्डुलाके धावनसे धोना चाहिये।

कुष्ठ-रोग (Leprosy)

यह एक पुरानी लरक्षुत बीमारी है। खासकर Bacillus Lepræ नामका एक तरहका जीवाणु चमडा उतरे हुए स्थानसे या श्लैश्मिक-झिल्लीकी राहसे जब आदमीके शरीरमें घुस जाता है, तब या तो वहाँ गाँठ पैदा करता है या स्नायुओंमें उलट-फेर कर देता है। शरीरकी

अवस्थामें जब इस तरह गड़बड़ी हो, तब समझ लेना चाहिये कि उस स्थानपर अब कोढ़ पैदा हो गया है। रोगीके खुले हुए घावमें, गलदेशमें और नाकके पासमें ये जीवाणु रहते हैं तथा खटमल और रोगी द्वारा व्यवहृत दूषित कपड़ों द्वारा (कभी-कभी धोबियों द्वारा) ये जीवाणु एक जगहसे दूसरी जगह जा पहुँचती हैं। १८७१ ईस्वीमें डा० हैन्सनने इस जीवाणुका पता लगाया था। बहुत-सी प्राचीन जातिके मनुष्योंको यह बीमारी हो जाया करती थी। माँ-बापको यह बीमारी रहनेपर उनके बाल-बच्चोंमें भी यह बीमारी फैल जाती है या नहीं, यह आजतक निश्चित नहीं हो सका है।

आजकलके निदान करनेवाले, कोढ़ दो तरहका बताते हैं :—(१) गुटिल कुष्ठ-व्याधि ; (२) स्पर्शहर कुष्ठ-व्याधि।

गुटिल कुष्ठ-व्याधि (Tubercular Leprosy)—इस जातिके कुष्ठ रोगमें पहले बदनमें जगह-जगह लाल रंगकी जुलपित्ती, जिसमें बहुत दर्द रहता है या लाल रंगकी फुन्सियाँ दिखाई देती हैं। इसके बाद उन गांठोंका मुँह खुल जाता है और वहाँ गहरा जखम हो जाता है। पलकें, भौंहें वगैरहके केश और हाथ-पैर आदिकी अंगुलियाँ, नाककी श्लैष्मिक-झिल्ली वगैरह अंग सड़कर गिरने लगते हैं और कभी-कभी फेफड़ेमें जलन और प्रदाह होकर रोगी मर जाता है।

स्पर्शहर कुष्ठ-व्याधि(Anasthetic Leprosy)—इस रोगमें सब स्नायुओंपर हमला होता है और शरीरमें जगह-जगह अधिक संवेदना होती है। इसके बाद वहाँका चमड़ा मुर्दा हो जाता है, अनुभवकी ताकत चली जाती हैं, बड़े-बड़े फफोले पैदा हो जाते हैं और पेशियाँ पतली पड़कर पक्षाघात हो जाता है। कुष्ठ रोगका भावी-फल खराब होता है। यह आठसे पन्द्रह वर्षतक स्थायी रहता है।

चिकित्सा—कुष्ठ रोगज-जायु (आटो-वैक्सिन) के व्यवहारकी बहुत-सी आशाभरी बातें सुनी जाती हैं (rots)। हाइड्रोकोटाइल

θ पाँच बुन्द—६ (चमड़ा मोटा, छाती, तलहत्थी और तलवेमें बेहद खुजली); आर्स-आयोड ३x विचूर्ण (गांठें फूलीं, हाथ-पैरकी अंगुलियोंका गल-गलकर गिरना, टेढ़ी गुटिकाएं, कांटा गड़नेकी तरह दर्द मालूम होना); बेलेडोना ३x (नये बुखारके साथ लाल रंगका चमड़ा); सिपिया ६ (चमड़ा भूरा या पीले रंगका); आर्स-ऐल्ब ३x (जखम, दर्द हो या दर्द न हो); लैकेसिस ६—३० (गहरे घावके लक्षणमें); सल्फर ३०—२०० (बैहुत दिनोंका अन्तर देकर एक मात्रा सेवन); कोमोक्लेडिया २x (चमड़ा सफेद रंगका होनेपर)।

क्रोटैलस ३ बहुत दिनोंतक सेवन करनेसे फायदा मालूम हो सकता है। अस्टिलेगो θ, १x खिलाकर भी फायदा मिलता है। पिरारा (pyrara) ६—३०।

आनुसंगिक चिकित्सा—रोगीको हमेशा साफ-सुथरा और अलग रखना चाहिये। मांस-मछली खाना एकदम मना है। पौष्टिक भोजन देना जरूरी है। जखमवाली जगहपर गर्जन तेलकी (wood oil) मालिश करनेसे फायदा हो सकता है।

अपरस (Psoriasis)

इस रोगमें बदनके किसी-किसी जगहका चमड़ा लाल होकर फूल उठता है और सादो, सूखी और कड़ा छाल निकल जाती है। रेडियम-ब्रोम ३० (हफ्तेमें एक बार सेवन करना चाहिये)। सल्फर ३० या आर्सेनिक ३० इसकी प्रधान दवा है। बीमारी पुरानी होनेपर, टियुबरक्युलिनम २०० सेवन करना चाहिये। फास्फोरस ६, कैल्केरिया ६, सिपिया ३०, नाइट्रिक-एसिड ६, साइक्यूटा ३, येफाइटिस ६ थूजा ३, कार्बोलिक-एसिड और "रूसी" रोगकी दवा वगैरह भी लक्षणके अनुसार व्यवहार की जा सकती है।

फील-पाँव (Elephantiasis)

हाइड्रोकोटाइल १x—६ और ऐनाकार्डियम ओरिएँटैलिस १x—६ इसकी प्रधान दवाएँ हैं ("श्लीपद" देखिये)।

मरा मांस या खुश्की (रूसी)
(Pityriasis)

माथे या शरीरके चमड़ेकी पतली भूसी-जैसी छालको "मरा मांस या रूसी" कहते हैं। चमड़ेके ऊपरसे यह मरा मांस सादी भूसीकी तरह निकलता है। यह रूसी निकल जानेके समय बीमारीवाली जगह खुजलाती है, कभी-कभी लाल या गर्म हो जाती है।

आर्स ३x—३० का सेवन इसकी सबसे बढ़िया दवा है। अगर आर्ससे फायदा न हो, तो ग्रैफाइटिस ६ या लाइको १२ या सिपिया ३० अथवा रेडियम-ब्रोम (हफ्तेमें एक मात्रा सेवन) फायदा करता है। बैसिलिनम २०० (हफ्तेमें एक मात्रा सेवन), क्राइसोफैनिक-एसिड ३x—३, टेल्यूरियम ३०, फ्लोरिक-एसिड ३, मेजेरियम ३ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—बीमारीवाली जगह बेसन या खली लगाकर गर्म पानीसे रोज धो डालना चाहिये अथवा क्राइसोफैनिक-एसिड ४x अर्क (या सोहागेका लावा ग्लिसरिनके साथ मिलाकर) लगाना चाहिये। रोज नहाना फायदा करता है।

घट्ठा (Corns)

कड़े जूतेका दवाव (या धातु-दोषकी वजहसे) पैरकी अंगुलीमें घट्ठा पड़ जाता है। नये और तकलीफ देनेवाले घट्ठेमें फेरम-पिक्रिक ३; जलन या जखम-भरे घट्ठेमें नाइट्रिक एसिड ३x सेवन करना चाहिये।

हाइड्रैस्टिस तेल (हाइड्रैस्टिस θ, १ भाग, ओलिव आयल आठ भागके साथ मिलाकर) सोनेके पहले तीन-चार दिन रातमें घट्ठेमें लगा देना चाहिये। इससे फायदा होता है। धातुगत दोषमें, बार-बार घट्ठा पड़नेपर सल्फर ३० कैल्के-कार्ब ३, लाइको १२, सिपिया ६, ऐण्टिम-क्रूड ६, फास्फोरस ३, साइलिसिया ६ सेवन करना चाहिये। चौड़े मुँहका जूता पहनना और कैलेण्डुला रकस रूईमें लगाकर घट्ठेमें लगा रखना अच्छा है। विरे-वि θ घट्ठेमें लगानेसे फायदा होता है।

कोई-कोई डाक्टर सलाह देते हैं, कि घट्ठे होते ही उसे गर्म पानीमें भिगो रखने बाद कुछ कोमल हो जानेपर आर्निका (θ दस बून्द+एक औंस ग्लिसरिन+एक औंस पानी) का धावन तैयारकर रातमें उससे तर कर रखना लाभदायक होता है।

सरमें दाद

यह भी एक खुजहर बीमारी है। आक्रान्त माथेके चारों ओरके केश मुड़वाकर साबुन लगा गर्म पानीसे धो डालना चाहिये। इसके बाद तारपीनका तेल लगाकर धो डालना चाहिये। दाद सूखी होने बाद उसमें रोज सवेरे आयोडिन θ लेपकर संध्याके समय उसे धो डालना पड़ेगा। इस तरह इलाज करनेपर अगर जलन बढ़ जाय, तो इस इलाजको कुछ दिनोंके लिये बन्द कर रखना चाहिये। सल्फर ३०, कैल्के-कार्ब ६ या १२ का सेवन करना भी फायदेमन्द है।

गात्र-दाह

बदनमें जलन या दाह, साधारणतः बुखार वगैरह रोगोंका लक्षणभर है। किसी बीमारीमें गात्र-दाह मौजूद रहनेपर इस पुस्तकमें कही हुई उन बीमारियोंकी दवाएँ देखनी चाहियें।

बाहरी दाह या शरीरमें ऊपरकी जलन रहनेपर—आर्सेनिक, ब्रायोनिया, कार्बो-वेज, कास्टिकम, नक्स-वोमिका, फास्फोरस, फास्फोरिक-एसिड, रस-टक्स, स्टेनम, सल्फर :

भीतरकी दाह या शरीरके भीतरकी जलन रहनेपर—ऐकोनाइट, आर्सेनिक, बेलेडोना, ब्रायोनिया केन्थरिस, मर्क, नक्स-वोमिका, फास्फो, सैबाडिला; सेनेगा, सिपि, सल्फर।

ऊपर लिखी हुई दवाएँ ३ से ३० शक्तितक व्यवहार की जा सकती है।

जलन बन्द करनेवाली कुछ प्रधान दवाओंके लक्षण नीचे लिखे जाते हैं :—

सल्फर ३०, २००—सारे शरीरमें (हाथ, पैर, माथा, मुँह, नाक, जीभ, आँख वगैरहमें) मानो आग जल रही है और दग्ध हो रहा है। कोई भी बीमारी "पुरानी" अवस्थामें होनेपर और ऐसी जलन मालूम होनेपर यह खूब लाभ करता है।

आर्सेनिक ३x, ३०—किसी भी नयी बीमारीमें सारे शरीरमें जलन होनेकी यह प्रधान दवा है। इस जलनका एक प्रधान लक्षण यह भी है, कि शरीरमें चाहे कैसी भी जलन हो, पर रोगी कपड़े नहीं उतारना चाहता है या आगके सामने अथवा धूपमें बैठना चाहता है। जखम, फोड़ा या बुखार वगैरहमें जब रोगी एकदम सुस्त हो जाता है, तब उसे इसी ढंगकी जलन मालूम होती है।

सिकेलि ३x, ३०—आगकी चिनगारीसे मानो सारा बदन जला जाता है। रोगीको ऐसा ही मालूम होता है (परन्तु दूसरे आदमी जब उसके शरीरपर हाथ रखते हैं, तब ठंडा मालूम होता है ; इतनेपर भी रोगी शरीरसे कपड़े नहीं उतारना चाहता) और वह हमेशा पंखा झलनेके लिये कहता है। हैजा और सड़नेवाली बीमारीमें यह लक्षण हमेशा दिखाई देता है।

फास्फोरस ६—सल्फरके लक्षणकी तरह शरीरमें जलन (खासकर यक्ष्मा रोगमें) मालूम होना।

एकोनाइट १x, ६—नये प्रदाहिक ज्वर वगैरहकी पहली अवस्थामें जब बेचैनीके साथ मालूम हो।

एपिस-मेल ३x, २००—डंक मारनेकी तरह दर्दके साथ किसी अंग या प्रत्यंगमें जलन और उसके साथ ही लाली और सूजन मौजूद रहनेपर।

एगरिकस ३, ३०—शरीरके विभिन्न अंशोंमें खुजली और लालीके साथ जलन।

बेलेडोना १x, ३०—शरीरमें दाहके साथ किसी अंगमें प्रदाह (सूजन, लाली), प्रदाहवाली जगह छूनेपर ऐसा मालूम होता है, मानो आग निकल रही है।

कैन्थरिस ३x, ६—गला, पेट, गुह्यद्वार और मूत्र-यन्त्रमें जलन (खासकर पेशाबके समय)।

कैप्सिकम ३, ६—शरीरमें तेज जलन, मानो किसीने समूची देहमें मिर्चे पीसकर लगा दी हो।

ब्रायोनिया ३, ३०—पित्त-प्रधान मनुष्योंके हाथ-पैर; वगैरहमें जलन मालूम होना।

कई दूसरे चर्म-रोगोंकी संक्षिप्त चिकित्सा

घमौरी—ऐण्टिम-क्रूड, सल्फ, आर्स, एपिस, लिडम, ऐकोन, रस-टक्स। कुछ गर्म पानीमें सोडा घोलकर या चन्दन शरीरपर लेप देनेसे तकलीफ दूर हो जाती है। (("शैवालिका" देखिये)।

शरीर फटना—स.ीके दिनोंमें देह फटनेपर, ऐगरिकस ६—३० बढ़िया दवा है। टैमास θ बराबर मात्रामें ग्लिसरिनके साथ मिलाकर

फटी जगहपर लगाना चाहिये। पल्सेटिला, रस-टक्स, सल्फर वगैरह लक्षणके अनुसार काममें लाये जा सकते हैं।

मूछोंकी दाद—लाइकोपोडियम, मर्क-आयोड, ग्रैफाइटिस, ऐण्टिम क्रूड, सल्फर।

मसे—थूजा १x—३०, ऐण्टिम-क्रूड ६, डल्कामारा ६ कास्टिकम ६ फायदा करता है। थूजा θ का लगाना भी फायदेमन्द है। चूना लगानेपर भी कभी-कभी खूब फायदा होता है।

सेंहुआ—कैलि-कार्ब, एसिड-नाइट्रिक, नेट्रम-म्यूर, कैन्थिरिस ग्रैफाइटिस, सल्फर, सोरिनम।

कु-नख (अर्थात् नाखूनका आखिरी भाग बढ़कर मांसमें घुस जाना या घाव हो जाना)—मर्क, आर्सेनिक ३x—३०, ऐण्टिम-क्रूड साइलिसिया या सल्फरका सेवन करना चाहिये तथा गर्म जलका सेंक या फेरि-क्लोराइडका धावन या विचूर्ण लगाना चाहिये। नारियलका तेल, कच्चे नारियलका पानी और सफेद धूना एक साथ मिलाकर, उसे अच्छी तरह फेंटकर घावपर लेपनेसे फायदा होता।

खाल उधड़ना (Excoriation)—कैमो ६ सब तरहके पानी लगने या खाल उधड़नेकी अच्छी दवा है। अगर बार-बार पानी लगता हो, तो लाइको ६—२०० । बीमारीवाली जगहपर अगर तेज दर्द हो तो, मर्क-सोल ६—३०। ज्यादा चलनेकी वजहसे अगर जांघका चमड़ा छिल गया हो, तो इथ्यूजा ३x—६। बच्चोंकी जांघ छिल जानेपर कैमो ६—३०।

उपमांस या गूमड़ (Excrescences)—जखममें बालू होनेपर, साइलिसिया ६—२०० सेवन करना और तूतियेका चूर उपमांसपर छिड़क देना चाहिये। ("मसे" देखिये)।

मुख-व्रण (मुँहासा)—ऐण्टिम क्रूड, ऐण्टिम टार्ट, कार्बो ऐनिमेलिस, आर्सेनिक, पल्स, कैलि-वाई, पेट्रोल, एसिड फास, सल्फर (मुँहासा" देखिये)।

पैरकी अंगुलीमें घट्ठे—फेरम पिकरिक ३ (नये घट्ठेमें), जलन या पीव होनेपर नाइट्रिक-एसिड १ ; हाइड्रैस्टिस ∅ एक ड्राम जैतूनका तेल एक औंसमें मिलाकर रातमें सोनेके समय लगानेसे फायदा होता है।

दाद—हफ्तेमें एक बार वैसिलिनम ३०—२०० सेवन करना चाहिये। माथेकी खोलकी दाद या घने केशोंसे ढँके दूसरे अंगोंकी दादके ऊपर, क्राइसोफेनिक-एसिड ४ ग्रेन (१ औंस जैतूनके तेलके साथ मिलाकर) लगानेसे फिर कोई दूसरी दवाकी जरूरत नहीं पड़ती। टेल्यूरियम ६ का सेवन भी इसकी बहुत बढ़िया दवा है। इससे भी फायदा न हो, तो "नेट्रम सल्फ" २००—५०० महीनेमें एक बार सेवन करना चाहिये। हिपर-सल्फर, फास्फोरस, एसिड-नाइट्रिक, रस टक्स, सिपिया, ग्रैफाइटिस, सल्फर, मर्क-कोर, कैलेडियम सैंगुइनम (खासकर औरतोंके लिये) वगैरह दवाएँ भी फायदा करती हैं। ऊपर लिखी दवाएँ ६ से ३० क्रमतक प्रयोग करनी चाहिये। "भूसी निकलना" देखिये।

चर्म या त्वक इन्द्रियके उपसर्ग और दवाएँ

तेज खुजली—धीरे धीरे खुजलानेसे खुजली बन्द हो, जोरसे रगड़नेसे खुजली बढ़ती हो ; दूध पिलानेवाली स्तनकी घुंडीमें जखम—"क्राटन"।

बहुत खुजलाहट-भरी फुन्सियाँ—"ऐनाकार्डियम"।

न पके हुए, पर जलन करनेवाले उद्भेद ; आमवात ; अकौता—"नेट्रम म्यूर"।

न उभरे हुए लाल रंगके उद्भेद—"ऐरम-ट्राई"।

अस्वस्थ चमड़ा, जलभरी फुन्सियाँ, फोड़े, स्पर्शातिशय्य—"हिपर"।

गर्मी, खुजली और ऐंठनके साथ आमवात—"कोपेवा"।

ऊपरी अंगोंमें जगह-जगह असंयुक्त या अलग-अलग रसभरी फुन्सियाँ; खुजलाती हैं, खुजलानेसे जलन होती है—'सिपि'।

कानके पीछे तर फुन्सियाँ, सारे शरीरमें घनी फुन्सियाँ, रसभरी फुन्सियाँ या सींगकी तरह नोकदार फुन्सियाँ; कड़ी पपड़ी जमना और छूनेसे खून निकलना—"ऐण्टिम-क्रूड"।

तलहत्थी फटी और मोटी हरी पपड़ी जमी फुन्सियाँ; जिस चर्म-रोगकी फुण्सियाँ आगकी तरह लाल और अलग-अलग निकलती हैं; न पकनेवाली तर अकौता "शीत ऋतुमें बढ़ना" (सोरिनम)। जरा खुजलानेसे ही पक जाता है (हिपर)—"पेट्रोलियम"।

पीव-भरा निस्तेज जहरीला जखम; पीठका घाव—"कार्बो-वेज"।

बैगनी रंगके काले दाग-भरे उद्भेद—"आइलैन्थस"।

सिकुड़ा हुआ, फुन्सी भरा चमड़ा, पुराना, फैलनेवाला और बदबूदार घाव—"चेलिडोनियन"।

अंगुलीकी सन्धियाँ कुटकुटातीं और खुजलाती हैं; थोरी भी चोट या छिल जानेपर पक जाता है—"हिपर"।

केश रूखे और (कंघीसे झाड़नेसे मुलायम न होते हों) एकके साथ एक जुड़े हों या अलग रहें, कटवानेपर जटाकी तरह निकलते हैं—"वोरैक्स"।

गहरा चर्म-प्रदाह, खुजली; पीव पैदा होना—"रस-टक्स"।

चमड़ा अस्वस्थ, सहजमें ही पीव पैदा हो जाता है; ब्रह्मतालु सरेसकी तरह लसदार—"ग्रैफाइटिस"।

केश झाड़नेपर दर्द होता है। जलन करनेवाला उद्भेद; चमड़ा खुजलाता है और वहाँ पीव पैदा हो जाता है, वहाँसे खून निकलने

लगता है ; सन्ध्याके समय खुजलीसे बेचैनी हो पड़ता है—"क्रियोजोट"।

चमड़ा रूखा, मलिन ; रोगी शरीर धोना नहीं चाहता ; लोम-कूप काले-काले, काले मस्तके साथ कोई चर्म-रोग—'सल्फर' ६।

चमड़ा काला सिकुड़ा चित्र-विचित्र, छूनेसे ठण्डा ; बैंगनी रंगकी छोटी-छोटी फुन्सियाँ ; छोटे-छोटे तकलीफ देनेवाले फोड़े ; उसमें धीरे-धीरे पीव पैदा होता है ; जखमवाली जगह खुली रहनेकी वजहसे चमड़ेमें जलन होती है—"सिकेलि"।

चमड़ा काला, चित्र-विचित्र, पुराने, तकलीफ देनेवाले, जखम फटकर खून निकलता है—"लैकेसिस"।

चमड़ा चर्बी-भरा, मक्खनकी तरह—"नेट्रम-म्यूर"।

चमड़ चितकबरा, नीले रंगका या नीली आभा लिये—'क्यूप्रम'।

चमड़ा खुजलाता है, जलन होती है ; छोटी फुन्सियाँ और दाने निकलते हैं, खुजलानेसे बढ़ता है—वार्बेरिस"।

चमड़ासे किसी कारणसे भी ज्यादा पीव बहता हो, तो—"साइलि" ३०।

चमड़ा लाल रंगका ; खुजलाता है—'ऐगरिकस" ३।

चमड़ा ठण्डा, पीला या पाण्डुवर्ण, फोड़ा और पीठका घाव, कुछ बैंगनी रंग, इधर उधर दाग भरा चमड़ा—"क्रोटेलस" ६।

चमड़ा सूखा, रूसी-भरा (रूसी भूँसीकी तरह)—'आर्सेनिक' ३।

चमड़ा सूखा, उत्तप्त और उसके साथ बुखार—"ऐकोन" ३x।

चमड़ा सूखा, गर्म, खुजलाता है, जलन होती है और खाल उधड़ जाती है। साधारण चोटसे भी जल-भरी फुन्सियाँ निकलती हैं ; हाथकी अंगुलीकी नसोंको जड़का चमड़ा झूल जानेसे प्रदाह होता है, स्तनोंमें जलन होती है और फटे फटे दिखाई देते हैं—"सल्फ"।

चमड़ा सफेद और स्वच्छकी तरह होनेपर—"एपिस"।

चमड़ा मसे भरा—"थूजा" ३०।

चमड़ा आमवात भरा, जल-वसन्तकी तरह उद्भेद, बेधनेकी तरह जलन मालूम होना—"आर्टिका-युरेन्स" १x।

चमड़ा बराबर एक-पर-एक मसे हुआ करते हैं—"फेरम-पिक" ३x।

„ भूरे रंगका दाग-भरा, तर सर-भरी फुन्सियाँ, नाकपर चकत्ते-चकत्ते पीले रंगका दाग—"सिपिया" ३।

„ कांटा बेधनेकी तरह दर्द होनेपर—"ब्रायोनिया"।

„ लसदार स्राव-भरी फुन्सियाँ, अकौता, दर्द-भरा जखमका दाग—"ग्रैफाइटिस"।

चमड़ेपर जलन पैदा करनेवाली, खुजली मिली लाल फुन्सियाँ और आँखोंके नीचे चकत्ते-चकत्ते सूजन—"एपिस" ३।

चमड़ेपर जलन और खुजली-भरे उद्भेद या रसवटी या अकौता—"रस-टक्स"।

चमड़ेपर फुन्सियाँ या साथ-साथ सटी घमौरिया—"बावेंरिस्"।

„ मांस फैला, जखम, कांटी या सींक घुसनेकी तरह दर्द—"नाइट्रिक-एसिड" ६।

„ लाल उद्भेद, वहुत खुजली—"मेजेरियम" २।

„ चमड़ेके निचले भागमें सुरसुरी होनेपर—'सिकेलि'।

„ खुजली-भरी फुन्सियाँ और वैंगनी रंगके दाने—"एसिड-म्यूर।"

खुजलानेवाली और जलन पैदा करनेवाली छोटी-छोटी फुन्सियाँ और फोड़े, शरीरपर काली और नीली फुन्सियाँ—आर्निका।

जलन करनेवाले दर्दके साथ फोड़ा और पृष्ठव्रण—'फाइटोलैका'।

जलनकी तरह दर्दके साथ चेचककी गोटियोंकी तरह पीव-भरे दाने; गहरा घाव और किनारा छेद-भरा—"कैलि बाई"।

बदबूदार उद्भेदके साथ गहरी कड़ी पीव-भरी पपड़ी जमना; अकौता, तर, वहुत खुजलाते हैं; मोटी पीले रंगकी पपड़ी जमा जखम; धोनेके समय उसमेंसे खून निकलता है—"मेजेरियम"।

पतला स्राव बहनेवाला हड्डीके पासका जखम और उसके साथ पतला पीव निकलना—"ऐसाफिटिडा"।

बड़ी ककड़ीकी दरारकी तरह सहजमें रक्त निकलनेवाला मसा, मलद्वार, पुट्ठे, बगल इत्यादि जगहोंकी खाल उघड़ जाना—"कास्टिकम"।

बड़े जखमकी चारों ओर छोटे-छोटे जखम होनेपर—'फास्फोरस'।

व्रण, फोड़ा, अंगुलवेढ़ा या और किसी तरहकी सूजनके साथ तन्तु नीले हों या जलन और दर्द हो—'टैरेण्टुला क्यूबेन्सिस'।

मार खाने बाद काले दाग मिटानेके लिये—'लिडम'।

चेहरेपर फुन्सियाँ, पीव-भरे दाने, छूनेसे सुई बेधनेकी तरह दर्द, तर, पूरे नहीं निकले हुए उद्भेद ; खुजलानेसे बढ़ना, जल-भरी फुन्सियाँ ; मोटी, भूरे और पीले रंगकी पपड़ी जमती है ; खुजलानेसे खून निकल जाता है—'डल्कामारा'।

रस भरी फुन्सियोंसे भरा चमड़ा, नीली, काली या खून-भरी फुन्सियाँ, बहुत जलन और खुजली—'रेनानक्यूलस'।

शरीर नीला और बरफकी तरह ठण्डा—'कार्बो-वेज'।

नींबूके रंगवाली, कड़ी, सफेदी लिये, तर, बाहरी आवरणवाला अकौता ; ऊपरी ओठ और ठुड्डीमें रूखी—'साइक्यूटा'।

शिरके चमड़ेमें खुजली ; माथेके पिछले भागमें और हाथमें अकौता—'क्लिमेटिस'।

शीतल लसदार पसीना, पीव-भरी फुन्सियोंमें धीरे-धीरे पीव भरना ; नीली आभा लिये लाल—'ऐण्टिम-टार्ट'।

सूखी, गर्म और लाल त्वचा—'बेलेडोना'।

सूखी, फुन्सी, बेहद खुजली, यहाँतक कि खुजलाते-खुजलाते खून निकल आता है—'ऐल्यूमिना'।

सब बदन खुजलाता हो, रातमें बिछावनकी गर्मीसे रोगका बढ़ना—"मर्क"।

सब देहमें तेज खुजली, पांडु-रोग; सफेद पाखाना होता है—"डलिकस"।

सब शरीरपर भूरे रंगके दाने; सींक या कांटी गड़नेकी तरह दर्दके साथ जखम और मसा; जरा छूनेसे ही जखमसे खून निकलने लगना; चमड़ा सूखा और गन्दा; छोटी-छोटी फुन्सियाँ; खुली हवामें खुजलाती है; शरीर फटा-फटा; दूषित जखम; पारद-दोषका जखम या उद्भेद—'एसिड-नाई'।

सारे शरीरमें काले दाग—'बैप्टीशिया'।

सब बदनमें घनी लाल फुन्सियाँ—'ऐमोन-कार्ब'।

स्पष्ट सूखा चमड़ा—'कोलच्चिकम'।

डंक मारनेकी तरह दर्दके साथ फोड़ा या सूजन; प्यास-रहित शोथ—"एपिस"।

हाथ और जननेन्द्रियमें मसेकी तरह बतौड़ियाँ; रतिज रोगकी वजहसे मसे; छत्तेकी तरह बतौड़ियाँ या उद्भेद; जरा छूनेसे ही खून बहने लगना—"थूजा"।

नखकी बीमारियाँ

(Diseases of the Nails)

नख कटवानेके समय एकाएक टूट जाने या मुड़ जानेपर—साइलिसिया ६। नख क्षय होता जाये या उसका रंग बदरंग होता जाये, तो थूजा ६ या ऐल्यूमिना ३। नख फट जाते हों, तो आर्सेनिक ६। नख मोटा हो जाये, तो ग्रैफाइटिस ६ या ऐण्टिम-क्रूड ६। नखके चारों ओर घाव होनेपर फास्फोरस ३। नख-कोष-प्रदाहमें साइलिसिया ६ सेवन और कैलेण्डुला θ बारह बून्द, साठ बुन्द पानीमें मिलाकर लगाना चाहिये। झटका खा जाने या गिर जानेकी वजहसे नखमें तकलीफ हो जानेपर आर्निका ३ सेवन और आर्निका θ दसगुने पानीमें

मिलाकर करना चाहिये। जूता पहननेकी वजहसे, पैरके नख अंगुलीके कोनेमें घुस जायें और नखकी बगलका कोमल अंश फूल उठे या दर्द हो या उसमें पीव पैदा हो जाये, तो नाइट्रिक-एसिड ६ या मैग्नेटिस आस्ट्रेलिस २०० सेवन और हाइड्रैस्टिस θ (एक भाग, आठ भाग जैतूनके तेलमें मिलाकर बीमारीवाली जगहपर लगाना) या विरेट्रम-विरिडि θ लेप करना चाहिये। इससे भी अगर फायदा न हो, तो नश्तर लगवानेका बन्दोबस्त करना चाहिये।

नख-कोष-प्रदाह (Onychia)

इसमें नखके भीतरी भागवाले पदार्थमें प्रदाह पैदा हो जाता है। सिलिका ६ सेवन और कैलेण्डा θ (या बोरिक-एसिड) थोड़े पानीमें मिलाकर लगाना चाहिये।

अन्तर्वृद्धि नख
(Ingrowing of Nail)

इस बीमारीमें नखकी जड़के पास मांसमें घुसकर या फैलकर प्रदाह और तकलीफ पैदा कर देती है। नाइट्रिक-एसिड ६ सेवन और हाइड्रैस्टिस θ (एक भाग+वैसेलिन आठगुना)—मलहमका बाहरी प्रयोग करना चाहिये। नश्तर लगवानेकी जरूरत पड़नेपर, नखमें दो-तीन दिनोंतक ग्लिसरिन लगा रखना चाहिये।

मेद-वृद्धि रोग
(Obesity or Corpulence)

त्वचाके नीचे और समूचे शरीरमें ज्यादा परिमाणमें चर्बी बढ़ जानेको "मेद-वृद्धि" रोग या स्थूलकाय कहते हैं। साँसमें तकलीफ, थोड़ी मेहनतमें ही हाँफ उठना, रक्तका ठीक-ठीक संचालन न होना

वगैरह उवसर्गोंकी वजहसे रोगीका शरीर और मन हमेशा ही खराब रहता है।

जवानी और प्रौढ़ावस्थामें ही हमेशा यह मेद रोग दिखाई देता है। मर्दोंकी बनिस्बत औरतोंको यह बीमारी ज्यादा हुआ करती है। माँ-बापको यह बीमारी रहनेपर उनकी औलादको भी हो जाती है। ज्यादा परिमाणमें मक्खन जातीय पदार्थ खाना, बहुत ज्यादा खाना-पीना, बिना किसी चिन्ताके गृहस्थीका चलाना, कोई शारीरिक या मानसिक परिश्रम न करना वगैरह कारणोंसे यह बीमारी हो सकती है।

चिकित्सा—ग्रेफाइटिस ३x, दो सप्ताहसे भी कुछ ज्यादा दिनोंतक खानेसे बहुत कुछ फायदा दिखाई देता है। औरतोंकी बीमारीमें यह ज्यादा फायदा करता है।

फाइटोलैक्का फल (Phytolacca Berry) एक ग्रेनकी टिकिया (या एक बुन्दकी टिकिया) एक महीनेतक रोज दो बार सेवन कराकर बहुतसे डाक्टरोंको फायदा होता दिखाई दिया है। फ्यूकस वेसिक्युलोसस θ, ५-६ बुन्द नित्य दो बार भोजनके पहले सेवन करना लाभदायक होता है। इससे फायदा न हो, तो डाक्टर क्लार्क क्रमसे (क) ऐमोन-ब्रोम ३x, (ख) कैल्केरिया-कार्ब ३—६, (ग) कैल्के-आर्स, फी मात्रामें २ ग्रेन, ८ घण्टेका अन्तर देकर खिलानेकी सलाह देते हैं।

डा० काउपरथायेटको किसी दवासे फायदा न मालूम हुआ, तब उन्होंने लक्षणके अनुसार नीचे लिखी दवाएँ देनेकी सलाह दी है :—ऐगरिकस ३x, ऐण्टिम-क्रूड ६x, आर्सेनिक ३x, बैराइटा-कार्ब ६x, ग्रेफाइटिस ६x, लाइकोपोडियम ६x, मर्क-सोल ३x और सल्फर ६x।

आनुसंगिक चिकित्सा—निशास्ता (starch) और शर्करा जातीय खाद्य, जैसे—गोल आलू, शकरकन्द, मक्खन, चीनी, मलाई, घी और मधुर रस मिला भोजन, बियर पोर्ट वगैरह शराब, उड़द, रोटी वगैरह चर्बी बढ़ानेवाले पदार्थोंका खाना छोड़ देना चाहिये। मक्खन

निकाला हुआ दूध, आगमें सेंकी गेहूँकी रोटी, कड़ा बिस्कुट, मछली (तेलमें तली नहीं), मांस (चर्बी न हो), ताजे फल (शर्करा-विहिन), अंडे, "नेबूका रस", चाय, काफी, सेव, केला, कमला नेबू वगैरह चीजें खायी जा सकती है। भोजन करनेके कम-से-कम दो घण्टे बाद पानी पीना चाहिये। थोड़ी मेहनत, घूमना, साइकिलपर चढ़ना, सीढ़ीसे चढ़ना-उतरना, पहाड़पर चढ़ना वगैरह थोड़ी मेहनतवाली कसरतें करनी चाहिये। यह फायदा करती है।

बुढ़ापा और उसके पहलेकी दोनों अवस्थाएँ

मनुष्यकी जिन्दगी तीन हिस्सोंमें बाँटी जा सकती है:—(१) विकास अवस्था, (२) मध्य जीवन और (३) क्षयावस्था।

(१) जन्मसे २५ वर्षकी उमरतकको "विकासावस्था" कहते हैं। इसी समय खासकर शरीरके सब यन्त्रोंकी और जिन्दगीकी दूसरी प्रवृत्तियोंकी वृद्धि होती रहती है। बेल, जेल्स, कैल्के कार्ब, सिलिका, कैमो, सल्फर, कैल्के-फास, ऐण्टिम क्रूड, नेट्रम फास, स्पजिया, ओपियम, मर्क वगैरह दवाएँ इस अवस्थाकी प्रधान ओषधियाँ हैं।

(२) २५ से ४५ वर्षतक जीवनकी "बिचली या मध्य अवस्था" है। इस अवस्थामें साधारणतः बिचली श्रेणीके और गरीब आदमी अपने और अपने परिवारके भरण-पोषणके लिये बहुत मेहनत किया करते हैं। धनी और आलसी मनुष्य विलास और रंग-रस आदिमें अपनी जिन्दगी बिताते हैं और औरतें सन्तान प्रसव करना और घर-गृहस्थीके काम धन्धे किया करती हैं। नक्स-वोम, पल्स, सिपि, फास, मेडो, लैके, हायो, सिकेलि, रस-टक्स, इग्नेशिया, नाइट्रिक एसिड, ग्रैफाइटिस, एसिड-फास सिफिलिनम, प्लम्बम वगैरह इस अवस्थाकी दवाएँ हैं और ये लाभ करती हैं।

(३) कुछ कमोवेश ४५ वर्षकी उमरसे ही शारीरिक क्षयके लक्षण दिखाई देते हैं। जैसे—दृष्टि-शक्ति और सुननेकी शक्तिका कम होना, हड्डियोंमें गड़बड़ी, पेशियोंका झुकना, शिथिलता और कमजोरी, हृत्पिण्डकी कमजोरीकी वजहसे शारीरिक तापका कम होते जाना और हाथ-पैर वगैरह ठण्डे मालूम होना, नारियोंमें चूनेका भाग अधिक परिमाणमें जमा होना वगैरह कारणोंसे खूनके दौरानमें और पाचन-क्रियामें गड़बड़ी, रीढ़की हड्डियोंका टेढ़ा होना, मानसिक विचारोंका निस्तेज होना वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं। लाइको (खासकर औरतोंके लिये), आर्ज नाई, कार्बो-वेज, नेट्रम-म्यूर, आरम, ऐमोन-कार्ब, बोरिक-एसिड, नक्स-मस्केटा (अजीर्ण रोगमें), कोनायम, फ्लोरिक-एसिड, ओपियम, सार्सापैरिला (बच्चोंकी तरह चेहरा), साइ-क्यूटा, नाइट्रिक-एसिड, सलफ्यूरिक-एसिड (खासकर औरतोंके लिये), गैम्बोज (बहुत ज्यादा पानी-जैसा दस्त होनेपर), सल्फर, ऐलो, सिकेलि (बुढ़ापेसे एकदम कमजोर) मर्क-आयोड, कैल्के-कार्ब, सैवा-डिला वगैरह दवाएँ इस अवस्थामें बहुत फायदा करती हैं (उन्माद रोगवाले अध्यायमें "बुद्धि-वैकल्य" देखिये)।

वार्द्धक्यकी आनुसंगिक चिकित्सा

भोजन :—बुढ़ापेमें दाँत गिर जानेपर चबाकर खाया नहीं जा सकता। इसलिये पके फल या दूध आदि सहजमें पचनेवाली चीजें खानी चाहियें।

विश्राम :—बुढ़ापेमें आराम लेना बहुत जरूरी है। कसरत या ज्यादा मेहनत करनेसे हड्डी टूट जा सकती है।

ताप :—जाड़ेके दिनोंमें शरीरकी गर्मी बनाये रखनेके लिये, भरपूर कपड़े पहनना उचित है। (जरूरत पड़नेपर) कमरेके एक कोनेमें

थोड़ी आग रखना उचित है। जाड़ा ज्यादा हो तो धूप निकलनेके घण्टेभर बाद बिछावनसे उठना चाहिये।

अन्तिम काल

दो तरहके मृत्यु होती है :—(क) हृत्पिण्डकी क्रिया बन्द होकर (synocope)। (ख) श्वासयन्त्रकी क्रिया रुककर (asphyxia)।

(क) एकाएक रक्तस्राव, बेक़ायदे खाना-पीना या उचित रूपसे शरीरका पोषण न होना वगैरह कारणोंसे हृत्पिण्डकी क्रिया रुक जाती है। लक्षण—धुँधला देखना, आँखोंकी पुतलीका फैल जाना, सरमें चक्कर, बेचैनी, कमज़ोर नाड़ी, चेहरा और दोनों ओठ नीले, हाथ-पैर ठण्डे, ठण्डा पसीना, साँसमें तकलीफ, खींचन-भरी या बिना खींचनवाली बेहोशीकी हालत। जहर खाने या हृत्पिण्डको किसी बीमारीकी वजहसे हृत्पिण्डकी क्रिया रुक जा सकती है। तेज और कमजोर नाड़ी, हाथ-पैर ठण्डे, सब शरीरमें लसदार पसीना, परन्तु ज्ञान रहना, इसका प्रधान लक्षण है।

(ख) तेज, तकलीफ देनेवाला श्वासकष्ट, आँखका सफेद अंश मानो बाहर निकल पड़ता है। चेहरा फूला और नीला होना, गर्दनके पीछेकी नसें फूलीं और अकसर अकड़नके साथ बेहोशी आ जाना या अचेतन नींद (coma)—अर्थात् साँसकी तकलीफ पैदा होनेके पहले ही बेहोश हो जाना या श्वसरोधन वगैरह श्वासयन्त्रोंका काम बन्द हो जाना इसका प्रधान लक्षण है।

प्राण निकला है या नहीं, यह जाननेका तरीका—मुँहके छेदके पास आइना रखनेसे अगर उस आइनेमें तरी (या आभा) मालूम हो तो समझना चाहिये, कि अभी मृत्यु नहीं हुई है। मांसमें आलपीन या सुई भोंक देनेपर यदि सुराखवाली जगह भर जाये, तो समझना

चाहिये कि जीवित है; परन्तु अगर वह बन्द न हो, तो अवश्य ही मौत हो गयी है।

यह तो कहना ही वृथा है, कि कोई दवा मौतको नहीं रोक सकती; परन्तु अन्तिम अवस्थामें इन दोनों दवाओंके सेवनसे फायदा हो सकता है :—

पल्स ३०—मृत्युके समयकी "घरघराहट" रोकनेके लिये पल्सेटिला ३० बहुत फायदा करता है।

हेलोडर्मा ३०—मुर्देके जैसा सब शरीर ठण्डा होता जाता हो या हाथ-पैर बहुत ठण्डे, कलेजा सिर्फ थोड़ा गर्म मालूम होता हो, तो हेलोडर्मा होराइडस ३० ज्यादा फायदा करता है। हेलोडर्माके लक्षणोंमें "अन्तिमकालकी सब शरीरकी शीतलता" उपसर्ग प्रायः दिखाई देता है—यह हिमांग अवस्था सर्दीसे पैदा हुई शीतलता नहीं है; परन्तु अन्त-कालकी ठण्डक है। (ठण्डक शरीरसे ऊपरसे नीचे उतरती हो या नीचेसे ऊपर जाती हो—बात एक ही है Anshutz's Therapeutic By-ways देखिये।

मानसिक रोग
(Mental Diseases)

हमारे सभी पाठ्य-पाठिकाएँ जानती हैं कि शरीर और मनका एकदम घना सम्बन्ध है। शरीरमें कोई बीमारी होनेपर मन भी एकदम खराब हो जाता है। जैसे—बुखारकी तेजीमें रोगीको प्रलाप हो जाता है, हँसना, रोना और बेहोशी वगैरह लक्षण पैदा हो जाते हैं; गिरनेकी वजहसे माथेमें चोट लगनेपर लड़कोंकी बुद्धि खराब हो जाती है या जड़ता पैदा हो जाती है। इसके विपरीत, मन खराब होनेपर शरीर भी खराब हो जाता है। जैसे—जिस माताका लड़का मर जाता है, वह पागल और व्यापारमें यथासर्वस्व खोया हुआ व्यापारी मौतको

सेजपर सोया मालूम होता है। किसी इच्छित पदार्थके न मिलने या प्रेममें निराश होनेपर चित्त चंचल हो जाता है और हमेशाके लिये शरीर खराब हो जाता है।

हैनिमैन मेडिकल कालेजके निदानशास्त्रके अध्यापक डाक्टर Raue का कथन है कि मानसिक वृत्तियोंकी अधिकता (exaggeration या निस्तेज-भाव (depression) अथवा विकृत (या भ्रष्ट perverted अवस्था) की वजहसे ही मानसिक रोग हुआ करते हैं।

सन् १९२३ ईस्वी अन्तमें Eugence Del Mar साहबने कहा है, कि हरएक शारीरिक बीमारीमें उसीके जैसी मानसिक गड़बड़ी भी हुआ करती है। जैसे—हिंसापरायण या स्वार्थी मनुष्यको ही "स्नायु-शूल" रोग हुआ करता है, उद्वेग या कलह-प्रिय मनुष्योंको "अजीर्ण" रोग होता है, ईर्षालु या प्रेममें निराश मर्द-औरतोंको "कैन्सर" रोग हुआ करता है, दूसरोंको दोष देखनेवालोंको 'गठिया' रोग होता है, क्रोधियोंको "सन्यास" रोग होता है; दूसरोंको भर्त्सना करनेवालोंको "दमा" होता है; दूसरोंको ठग करनेवालोंको "सर्दी" हुआ करती है अथवा जो दूसरोंकी बातें नहीं सुनना चाहते हैं, वे "बहरे" ही जाया करते हैं।

स्नायुमडलके रोगोंका मानसिक रोगोंसे एकदम घना सम्बन्ध है "स्नायुमडल रोग" देखिये।

उन्माद रोग (Insanity)

दिमागमें चोट या जखम वगैर होनेकी वजहसे मनकी स्वाभाविक अवस्थामें गड़बड़ी हो जाती है। इसीका नाम 'उन्माद रोग' या "पागलपन" है। नींद न आना, माथेमें दर्द, बिना इच्छाके हाथ पैरोंका चलाना या बोलना या कुछ बोलना ही नहीं, चेहरा तथा आँखोंकी भावभंगी बदली हुई, गलत देखना, गलत सुनना या अट-सट बकना या बड़बड़ाना, याददाश्तकी कमी, बुद्धिका बिगड़ना, किसी काममें जी न

लगना, क्रोध, भय, प्रसन्नता, शोक रोना वगैरह मानसिक भावोंकी ज्यादती, अपनी इच्छा-शक्तिको काबूमें न रख सकना, आत्महत्या करनेकी इच्छा, प्रियजनोंका अनादर वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

उन्माद रोगीके कार्य-कलापमें और विचार-शक्तिमें प्रधानतः तीन प्रकारकी भ्रान्तियाँ दिखाई देती है। जैसे—(१) "भ्रान्त देखना"* (illusion), (२), "अवास्तव देखना" † (hallucination) और (३) "बद्धमूल भ्रान्त विश्वास" ‡ (delusion)।

---

* भ्रान्त देखना अथवा प्रकृत या वाहरी चीजोंके सम्बन्धमें भ्रम धारणा (an illusion i.e. a mistaken perception of external objects) जैसे—डोरीमें साँपका भ्रम होना, परछाईं देखकर भूत समझ लेना, रेगिस्तानमें पानी मालूम होना, रेलके शब्दको बादलकी गरज समझना। नक्स-मस्केटा, रोडियम (rhodium) २००, मार्फिनम ३ विचूर्ण, धतूरा आइबेरियम (datura arbarium), हाइड्रोफोविनम, वैलेरियाना वगैरह भ्रान्त देखनेकी प्रधान दवाएं हैं।

† अवास्तव देखना अर्थात् जो चीज या विषय नहीं है, वही मालूम होना (an hallucination i. e. the perception of object ; which have no reality, or of sensation which have no corresponding external cause), जैसे—नृसिंहकी मूर्त्ति देखना, मरे मनुष्योंको देखना या बातें कहना, देवताओंकी बातें सुनना। आर्जा-नाई, कैनाइबिस इण्डिका काक्युलस, हायोस, इग्ने, लैके, पेट्रो, एनहेलोनियम, क्यूप्रम-ऐसेट, एगरिकस, ऐनाकार्डियम, बेलेडोना, ओपियम, स्ट्रैमो, कैलि-ब्रोम, ऐब्सिन्थ, सल्फर, जिंक-म्यूर, ऐन्थूस, विरेट्रम, नक्स, पल्स, एसिड-फास्, वैलेरियाना वगैरह दवाएं इस बीमारीमें फायदा करती हैं।

‡ बद्धमूल भ्रान्त विश्वास—अर्थात् बहुत दिनोंतक भ्रम देखना या अवास्तव देखना आदिका मनपर अधिकार हो जानेपर चित्तपर उसकी जड़ जम जाती है। (a delusion i.e. when an illusion or hallucination getting

बहुत ज्यादा परिश्रम या उद्वेग, ज्यादा खाना-पीना या इन्द्रिय-परिचालन, ज्यादा शराब या गाँजा पीना, स्वास्थ्यभंग, निराशा, मृगी वगैरह इस बीमारीके खास कारण हैं। पूर्वपुरुषोंको उन्माद रोग रहना, गर्मी रोग, दिमाग या मेरुदण्डकी यांत्रिक बीमारियाँ, शरीरमें गहरी चोट लगना, अनुचित शिक्षा, हमेशा भयानक घटनाओंवाले उपन्यास आदि पढ़ना, इस रोगके गौण कारण हैं। यौवनसे लेकर प्रौढ़ावस्था (उम्र २५ से ४०) तक यह बीमारी ज्यादा होती है।

बीमारीका एकाएक हमला, जवानीकी उमर और सबल शरीर जने हुए भ्रान्त विश्वासका बदलते रहना, खाने-सोनेमें रुचि, आँखोंकी पुतली चंचल, साफ-सुथरे रहना, सदा हँसी-खुशी, शरीरमें फोड़े-फुन्सियाँ होना, अकड़न या पक्षाघात न रहना, मेदके बढ़नेके साथ मनमें फुर्ती रहना प्रभृति "अच्छे लक्षण" हैं।

रोगका धीरे-धीरे हमला, ५० या इससे ज्यादा उमरमें यह बीमारी होना, एक ही विषयमें भ्रान्त विश्वास (रोगीको खासकर ऐसा मालूम

---

a strong possession of the mind tends to a persistent belief in the carresponding object. It is called 'delusion' (A. C. Mitra's Psychology page 374 देखिये)। जैसे—गलेमें डोरी बांधे हुआ भूत रोगीके मनमें मौजूद रहकर उसे आत्महत्या करनेको उसकाया करता है, क्षितिज (horizon) जमीन और आसमानका मिला हुआ स्थान मालूम होता। कैनाइनिस इण्डिका (कोई चीज वास्तविक आकारसे बड़ी मालूम होना, एक मिनटका समय कई वर्ष मालूम होता हो, एक हाथ दूरकी चीज बहुत दूर मालूम होती हो) प्लाटिना (कोई चीज जितनी बड़ी है, उससे छोटी मालूम होना), स्ट्रूजा, कैल्के-कार्ब, स्टैफिसेग्रिया, आरम, आर्सेनिकम, रस-टक्स, सिकेलि, सिलिका और ऊपर कहे हुए भ्रान्त देखनेको और अवास्तव देखनेकी दवाएँ भी इस बीमारीमें दी जा सकती हैं।

हो, मानो कोई सदा ही उसे तंग कर रहा है)। भोजनमें अरुचि (रोगीको जबर्दस्ती खिलाना पड़ता है), आँखोंकी पुतली सिकुड़ी हुई या निश्चल रहना (या हिला न सकना), गन्दगी, सदा हस्तमैथुन किया करना, कोमल स्वभाव, मेद बढ़नेके साथ-ही-साथ हमेशा खिन्न रहना, अपने केश नोचना या शरीरपर चोट करना, अकड़न या लकवा रहना वगैरह अशुभ लक्षण हैं।

पहलेके डाक्टर उन्माद रोगका इलाज करते समय रोगीको बहुत तंग करते और उससे कठोर व्यवहार करते थे। महामति हैनिमैनने ही सबसे पहले उससे दयापूर्ण व्यवहार और रोगियोंके साथ निष्ठुरता करनेका प्रतिवाद किया था। वास्तवमें महाप्राण हैनिमैन, फरासी डाक्टर पाइनेल (Pinel) और टियूक (Tuke) और कोनोली (Conolly)—इन तीनों अंगरेज-डाक्टरोंने बकवादी उन्माद रोगके इलाजमें प्राणपणसे सुधारकी चेष्टा की है। उन्माद रोगकी चिकित्सामें होमियोपैथिक ढंग दूसरे मतोंसे कहीं अच्छा है। D Selden Talcott लिखित "Mental diseases and their treatmant" देखिये।

उन्माद रोग चार प्रकारके हैं :—(क) प्रचण्ड उन्माद रोग या पागलपन (mania), (ख) विषाद-वायू (melancholia), (ग) बुद्धि-वैकल्य या मानसिक शक्तिका घटना (dementia), (घ) बकवादके साथ पक्षाघात (paresis)।

पागलपन (Mania)

जिस उन्माद रोगमें मानसिक वृत्तियोंकी ज्यादती और शारीरिक उत्तेजना पूरी तरह दिखाई दे, उसे प्रचण्ड उन्माद रोग कहते हैं। यह एकाएक न होकर धीरे-धीरे होता है। बदन कड़मड़ाना, भूख न लगना, मुँहसे बदबू, जीभ लेपचढ़ी, अग्निमान्द्य, कब्जियत, सर भारी मेहनत करनेसे जी चुराना, किसी काममें जी न लगना वगैरह लक्षण पहले तीन

महीनोंतक दिखाई देते हैं। इसके बाद मानसिक भावोंमें उलट-फेर हो जाता है, कभी हँसी, कभी रुलाई, जरा सी बातपर रंज हो जाना, अपनेको बड़ा समझना, प्रलाप, स्त्री सगकी बहुत इच्छा, कपड़े या केश नोचना वगैरह उपसर्ग पैदा होकर रोगी धीरे धीरे एकदम पागल हो जाता है। अच्छी तरह समझानेके लिये प्रचण्ड उन्माद रोगकी अलग अलग अवस्थाओंके उपसर्ग नीचे लिखे जाते हैं —

(१) तरुण (acute) उन्मादमें—मानसिक और शारीरिक बेचैनी और चञ्चलता रहती है, भ्रान्त विश्वास और काल्पनिक वस्तुओंका अनुभव, सच्ची बाहरी चीजोंके सम्बन्धमें भ्रमपूर्ण धारणा। बुरी या अश्लील बातोंका कहना और आचरण करना, प्रचण्ड भाव, काटने या मारने जाना, नींद न आना वगैरह तरुण (नये) उन्माद रोगके प्रधान लक्षण है। इस श्रेणीके रोगी अक्सर अच्छे हो जाते हैं।

(२) तरुण प्रलाप-प्रधान (acute delirious) उन्माद—बहुत ज्यादा शारीरिक और मानसिक बेचैनी, भ्रान्त विश्वास या काल्पनिक वस्तु अनुभव करना, हमेशा बदलती रहनेवाली कल्पना, जोरसे बोलना या चिल्लाना, प्रचण्ड भाव, परिवारवालोंपर ममता न रहना, नींद न आना, चेहरा लाल, बुखार, नाड़ी तेज, सूखी जीभ, सान्निपातिक विकारकी तरह लक्षण वगैरह इस रोगमें दिखाई देते हैं। यह बीमारी होनेपर बहुतसे रोगी मर जाते हैं।

(३) इच्छा वृतिका बिगड़ना और जिद्द (paranoia) के साथ उन्माद रोग —रोगी हमेशा जो भाव या आशा अपने मनमें पालता रहता है, उसीको बार बार कहता है या कुछ बढ़ाकर कहता है, अपनेको बहुत बड़ा समझता है (यहाँतक कि अपनेको देवता समझने लगता है), रोगी कभी चुप या कभी क्रोधमें भर जाता है, "एक ही विषयमें भ्रान्त विश्वास (खासकर रोगीको मानो हमेशा कोई तकलीफ देता रहता है, ऐसा ख्याल करना, हमेशा ऐसा देखते देखते रोगी नर-

हत्यातक कर डालता है)। दूसरेकी इच्छापर संदेह (जैसे—स्त्री-पुरुष एक दूसरेके चरित्रपर सन्देह करते हों) वगैरह इस जातिके उन्माद रोगके खास लक्षण हैं। यह एक स्वतन्त्र बीमारी है ; परन्तु कभी-कभी नये पागलपनके आक्रमणके बाद भी दिखाई देती है।

(४) पुराना (chronic) पागलपन रोग—यह कोई स्वतन्त्र बीमारी नहीं है। ऊपर कही हुई नये उन्माद रोगकी गौण दशा है। किसी तरहका भ्रम-विश्वास (जैसे—अपनेको राजा समझना) या रोगीके मनमें ऐसी साधारण बैठ जाती है कि वही अपनी जिन्दगीके सब काम चला रहा है। इसका परिणाम बुरा है।

इन चार तरहके पागलपनके अलावा प्रसव करनेके बाद एक उन्माद रोग ("सौरी-वाई" देखिये) या जरायुज-मुर्च्छा या हिस्टीरिया, गुल्म रोग, रजः बन्द होनेके समय वकना वगैरह उन्माद रोग हो सकते हैं। "स्त्री-रोग" अध्यायमें ऊपर कहे नये रोग देखिये।

चिकित्सा—बेल, हायोस, स्ट्रैमो, फास्फो, कैन्थरिस, विरे-ऐल्ब, कैनाबिस-इण्डिका और सल्फर—ये आठ दवाएँ प्रचण्ड उन्माद रोग (mania) में फायदा करती हैं। मानसिक बीमारियोंके इलाजमें सिद्धहस्त डा० टैलकुटकी चुनी हुई दवाएँ लक्षणके अनुसार कम-से-कम तीन या छः महीनेतक नियमसे सेवन करनी चाहियें ; परन्तु पुराने उन्माद रोगमें डा० ह्यूजेज और डाक्टर लसनकी चुनी हुई दवाएँ रोगीको देनी चाहियें। शरीरमें जायु-विचारणकी तरह लक्षण प्रकट हों, इस तरह एक वार पूरी मात्रामें (जैसे—हायोसेमिन १ ग्रेन) देनेकी व्यवस्था करते हैं।

स्ट्रैमोनियम ३x—बहुत ही क्रोधका भाव या डर-भरे डरानेवाले उन्माद रोगके लक्षणमें फायदा करता है। डरानेवाली अवास्तव चीजें देखना (जैसे—साँप या चूहे देखना, भूतकी बातें सुनना) ; काल्पनिक विपत्तिसे बचनेके लिये इधर-उधर दौड़-धूप करना ; बहुत ज्यादा क्रोध :

रोशनी और साथी पानेकी लालसा ('वेलेडोना' के लक्षणके विपरीत) आत्मगरिमापूर्ण भाव।

वेलेडोना १x, ३०—तेज प्रलापवाले लक्षण-मिली बीमारीमें इसका प्रयोग करना चाहिये। आँखकी पुतली फैली, निश्चल और भयावनी दृष्टि, वीच वीचमें क्रोध प्रकट करना। (नये उन्माद रोगमें—जैसे, तेज प्रलाप, बेचैनी, हिंसा, मानसिक अवस्थाओंका जल्दी-जल्दी बदलना, पासके आदमियोंको मारना या काटनेको दौड़ना ; गाना, सीट 'बजाना, उछलकर चलना, नाचना ; चेहरा लाल, नाड़ी पूर्ण और उछलती हुई)। डाक्टर टैलकट कहते हैं कि माथा भारी और सरमें धीरे-धीरे दर्द मालूम होनेपर, बेल १x या २x देना चाहिये और धातु-दोषकी वजहसे उत्तेजनामें बेल ३—३० देना होगा।

हायोसायमस १, २००—(वेलेडोनाके प्रलापकी बनिस्बत हल्के प्रलापके लक्षणमें यह फायदा करता है, खासकर नयी बीमारीमें)—हल्के ढङ्गका उन्माद रोग, हँसने या गानेकी तेज इच्छा, हँसी-खेलके साथ थोड़ा प्रलाप, वोलनेकी बहुत इच्छा, कभी-कभी मौन-भाव, निर्लज्जता, नंगे हो जाना या लिंग दिखाना, कामोन्माद, पेशियोंकी सिकुड़नके साथ बेचैनी, ईर्षा, देवताओंकी भक्ति-भावसे प्रार्थना करना, गाना इत्यादि धर्मोन्मत्तता (दूसरी दवाओंकी अपेक्षा नये उन्माद रोगमें यह ज्यादा फायदा करती है), एक ही विषयमें पागलपन (monomania) उसी विषयको बराबर कहना, कोई दूसरी बात नहीं।*

* अगर हायोसके प्रयोगसे लिंग दिखाना वगैरह निर्लज्जता दूर नहीं हो या कामोन्मादका उपसर्ग मौजूद रहे या सन्ध्या—गोधूलिके उस समय अवास्तव मूर्तियाँ दिखाई दें, तो पहले ऊँची शक्तिमें, फास्फोरस देना चाहिये और फास्फोरससे फायदा न हो, तो कैन्थरिस ३x का प्रयोग करना चाहिये। तेज प्रलापके साथ ऋतु बंद होनेके लक्षणमें क्यूप्रम ३०; उन्माद रोगके साथ रोगिणीके कामोन्माद

ऊपर कहे विषयोंमें अगर बेलेडोनासे फायदा न हो, तो "डियुबोइ-सिया ३ की परीक्षा करनी चाहिये।

कैनाबिस इण्डिका १x—भ्रमपूर्ण विश्वास और आवास्तव या काल्पनिक चीजें देखना—यह दोनों ख्याल बराबरकी प्रकृति होनेपर भी हमेशा बदला करते हों, सब कामोंमें ज्यादती, देश—काल (time and space) का ज्यादा मालूम होना (जैसे—एक मिनटका समय एक वर्ष मालूम होता हो या पासकी चीज दूर रखी मालूम होती हो), शान्त प्रकृतिवाले आदमियोंके उन्माद रोगमें।

सल्फर ३०—यह पुराने उन्माद रोगमें फायदा करता है। माथा गर्म, पर ठण्डे, कलह-प्रियता, एक ही विषमें भ्रांत-विश्वास (पुराना फटा कपड़ा रेशम मालूम हो); धर्मोन्मत्तता, अहंकार, सब पदार्थोंमें बदबू आना, गन्दा रहना।

लक्षणमें प्लैटिना ३०। बहुत मानसिक यातनाके साथ शारीरिक अवसन्नता होनेपर विरे-ऐल्ब ६। प्रचण्ड उन्माद रोगके साथ बेचैनी, तेज प्रलाप, कोई उसे जहर खिलाकर मार डालेगा, ऐसा समझना, मौजूद रहनेपर विरे-विर १x फायदा करता है। चौर्य उन्माद रोगमें (अर्थात् छिपाकर दूसरोंकी चीज ले लेने या चुरा लेनेकी प्रबल इच्छा—Kleptomania में—टैरेण्डुला ६ या ऐबसिन्थियम ३x फायदा करता है। ऐसा उन्माद सभ्य युरोपियन स्त्रियोंको ही हुआ करता है) योनि रोगके कारण उन्माद रोग होनेपर और उसके साथ ईर्षा मौजूद रहनेपर—एपिस ३। एक ही विषयमें उन्माद (अर्थात् एक ही काममें पागलपन—monomania) को—ऐबसिन्थयम, हायोस, साइक्यूटा, प्लाटिना, टैरेण्टूला बड़ी अच्छी दवाएं हैं।

विषाद-वायु रोग
(Melancholia)

मानसिक अवसन्नता और दुःख, इस रोगके विशेष लक्षण हैं। इसके साथ हमेशा यकृत-दोष या डिम्बकोषकी बीमारी अथवा Oxaluria (अर्थात् पेशाबमें आक्जेलिक एसिड या calcium oxalate मौजूद रहता है) वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं।

सहज-साध्य (Simple) विषाद-वायु रोग—जिस विषाद-वायु रोगमें मानसिक अवसन्नताके साथ जमा हुआ भ्रांत विश्वास (delusion) या शारीरिक उपद्रव नहीं रहता, उसे सहज-साध्य (simple) विषाद वायु रोग कहते हैं। इसमें मानसिक दुःखके आलावा कोई दूसरा उपसर्ग नहीं मालूम होता। इसका परिणाम अच्छा है।

नया (Acute)—विषाद-वायु रोग—बहुत दिनोंतक ठहरनेवाली मानसिक अवसन्नता ; भ्रान्त-विश्वास (जैसे—रोगी समझता है कि उसका अपराध बहुत बड़ा है) ; अवास्तव चीजोंकी कल्पना, चित्त-विभ्रम, रोना, नींद न आना, बेचैनी, भय, उत्कंठा, "आत्महत्या करनेकी प्रबल इच्छा", आँखोंका तारा सिकुड़ा हुआ, भूख न लगना और कब्जियत इसके प्रधान लक्षण हैं। इसका भी मावीफल अच्छा है।

पुराना (Chronic) विषाद-वायु रोग—(नये रोगके बादवाली अवस्था)—हमेशा मानसिक अवसन्नताका मौजूद रहना, भ्रान्त विश्वास पक्का और जमा हुआ ; अपनेको हेय समझना ; अग्निमान्द्य, कब्जियत, कोई तकलीफ न मालूम होना, आत्महत्या करनेकी तेज इच्छा इसके प्रधान लक्षण हैं। इसका भावी परिणाम बुरा है।

"विषाद-वायुके साथ अचेतन अवस्था" (Stupor)—गहरी मानसिक अवसन्नताके साथ सब विषयोंमें उदासीनता ; तंग न किया जाय, तो रोगी अपनी जगहसे हिलना नहीं चाहता, अपने शरीरका कोई यत्न न

करना ; हमेशा गन्दे रहना ; मुँहसे लार टपकना, नाकसे श्लेष्मा बहना, आत्महत्या करनेकी इच्छा, खूनका दौरान कम, शरीरकी गर्मी जितनी चाहिये उससे कम होना इसके प्रधान लक्षण हैं। ये सभी उपसर्ग आशंकाजनक हैं।

चिकित्सा—विषाद वायुके साथ यकृत-दोषमें—नक्स-वोम, पल्स, मर्क, काडुयस मेरियानस फायदा करता है।

विषाद-वायुके साथ जरायु-डिम्बकोषकी बीमारीमें—ऐक्टिया-रेसिमोसा (या सिमिसिफ्यूगा), लिलिरम-टिग, प्लाटिना, लैकेसिस फायदा करते हैं।

विषाद-वायुके साथ Oxaluria उपसर्गमें, आक्जैलिक-एसिड, नाइट्रो-म्यूरियेटिक-एसिड फायदा करता है।

नये विषाद वायु रोगमें—इग्ने, नेट्रम-म्यूर फायदेमन्द हैं।

आत्महत्या करनेकी इच्छामें—आरम और आत्मनिग्रहकी चेष्टामें आर्सेनिकके व्यवहारसे फायदा होता है।

विषाद-वायुके साथ वेहोशीमें—हेलिवोरस, ओपियम, विरेट्रम, वैप्टीशिया देना चाहिये।

परन्तु अगर रोगिणी बहुत रोती हो या उसका शरीर एकदम दुबला-पतला अथवा रक्त-शून्य हो गया हो, भोजनके वाद अथवा रातमें सोनेके समय उसका कलेजा धड़कता हो, तो इग्नेशियाके वदले नेट्रम-म्यूर ३० देना चाहिये। स्नायविक दुर्वलता ; वेचैनी ; नींद न आना ; गहरी चिन्तामें भरा खिन्न भाव ; संदेह ; ब्रह्मतालुमें दर्द या भार मालूम होना ; जरायुकी गड़बड़ीके साथ उन्माद रोगके लक्षणमें—सिमिसिफ्यूगा २x। शरीर और मनकी उदासीनता ; मानसिक यन्त्रणा ; जीवनी-शक्तिका घटना ; शरीर (खासकर हाथ-पैर) ठण्डे, कपालमें ठण्डा पसीना ; निराशाके साथ जोर-जोरसे रोना, लक्षणमें—विरे-ऐल्ब ३ फायदा करता है। तेज बुखारके साथ अचेतन भाव, विषाद-वायु रोगमें,

बैप्टीशिया १x। आँधाई और कब्जियतके साथ विषाद-वायु रोगमें—ओपियम ६—३० फायदा करता है; परन्तु अगर ज्यादा कब्जियत हो तो ओपियमकी जगह ब्रम्यम-ट्रेटेटिकम फायदा करता है। संगमेन्द्रियकी बीमारी (जैसे—बाध्य होकर बहुत दिन बाद मैथुन करना) से पैदा हुए खिन्न भाव, मौनभाव, किसीके पास न बैठनेकी इच्छा लक्षणमें, कोनायम ३०। तेज बुखार होनेके बाद या जवानीके आरम्भमें विषाद रोग होनेपर, हेलिबोरस ३। विपन्नताके साथ चिड़चिड़ा मिजाजके लक्षणमें, मर्क सोल ६। मानसिक अवसन्नताके रहनेपर भी शरीरमें बेचैनी, एक अंग या सब शरीरमें कँपकँपी या अकड़नके लक्षणमें टैरेण्टुला ६, ३०। अग्निमान्द्य, अवसन्नता, रोगीका जरा-सी बातमें रो पड़ना, धर्मोन्माद; देवताकी प्रार्थना करता रहे या रोता रहे और मनमें समझता रहे कि उसने जो पाप किया है, वह क्षमा योग्य नहीं है; भविष्य सोचकर व्याकुल रहना; डरपोकपन; खट्टी डकार वगैरह उपसर्ग विपन्नताके साथ रहे, तो पल्सेटिला ६, ३०। चिड़चिड़ा मिजाज; विषाद-वायु रोगवाले मनुष्यको वास्तवमें कोई बीमारी न रहना; इतनेपर भी उसका अपनेको बीमार ही समझना और चंगे होनेकी दिन-रात चिन्ता करना, कोई चीज ज्यादा मालूम होना (जैसे—थोड़ी भी रोशनी या शब्द रोगीको सहन न होना); यदि रोगीसे कोई बोलना चाहता है तो वह रंज या दुःखित होता है; अजीर्णके लक्षणमें, नक्स-वोम ६, ३०। बहुत उदासीके उपसर्गमें एसिड-फास २x—२०० और सिपिया ३०। फायदा करता है। रोगी समझता हो कि उसका सब तरहका इन्द्रिय-ज्ञान तुरन्त लुप्त हो जायगा, कैल्के-कार्ब ३०। दुबला-पतला, पर राक्षसी भूख, निरुत्साह, मनकी सुस्ती, याददाश्तकी कमी, लोगोंसे अलग रहनेकी इच्छा, आयोड ६।

इग्नेशिया ३, ३०—(डर जाना, दुःख अथवा निराशासे पैदा हुआ) नये विषाद-वायु रोगकी सबसे बढ़िया दवा है। रोनेकी

सामर्थ्य नहीं है, पर दुःखसे कलेजा फटा जाता है। रजःस्राव बन्द होनेके समयका विषाद-वायु रोग, गहरी सुस्ती, अकेले रहनेकी इच्छा करना, रोगीका सहज हीमें क्रोधित होना ; मनके दुःखको दूर करनेके लिये रोगिणी आत्महत्या करना चाहती है।

आरम ६, २००—आत्महत्या करनेका भारी झोंक या इच्छा (खासकर पुरुषोंको विषाद-वायुके साथ यकृत-दोष या अण्डकोषकी बीमारी मौजूद रहनेपर), मुँहसे लार चूना, सूर्यास्तसे सूर्योदयतक (अर्थात् रातमें) रोगका बढ़ना।

आर्सेनिक ३x, ३०—देह दुबली-पतली, यदि भूख बिलकुल ही नहीं—यह भी कहा जाये, तो अत्युक्ति नहीं ; बेचैनी, भी सूखी, लाल और काँपती हुई ; अपनी अंगुली चबाना, पलकोंका नोचना, चेहरे और सरकी खोपड़ीका चमड़ा, हाथ और नखोंसे नोच डालना और वहाँ जखम बना डालना वगैरह उपायोंसे अपनेको नुक्सान पहुँचाना ; रोगी समझता हो कि उसकी बीमारी अच्छी न होगी ; घबड़ाहट, रोगी समझता हो कि उसने कोई ऐसा बहुत ही बुरा काम किया है, जिससे सभी उसकी निन्दा कर रहे हैं।

प्लैटिना ६—(औरतोंके विषाद-वायुकी बीमारीमें यह ज्यादो फायदा करता है)। आत्महत्या करनेकी इच्छा, उद्दंडता, आत्मगरिमा, सभी चीजें या मनुष्य छोटे मालूम होना, कामोन्माद, प्रसवके बाद विमर्ष-भाव। (स्त्री-रोग अध्यायमें "विषाद-वायु" रोगकी दवाएँ देखिये)।

बुद्धि-वैकल्य (Dementia)

ज़िस उन्माद रोगमें बुद्धिका काम कुछ कम हो जाये या एकदम नष्ट हो जाये, उसे बुद्धि-वैकल्य कहते हैं। यह छः प्रकारका है—(१) नया, (२) शरावसे पैदा हुआ, (३) हस्तमैथुनकी वजहसे (४) बुढ़ापाके कारण, (५) यान्त्रिक और (६) गौण।

बुद्धि-वैकल्यकी नयी या पहली अवस्था (Acute)—[विषाद-वायु रोगकी "अचेतन अवस्था" (stupor) और बुद्धि वैकल्यकी "नयी" अवस्थाका प्रभेद निर्णय करना बहुत ही कठिन है] १५ से ३० वर्षकी उमरतक इसका हमला ज्यादातर होता देखा जाता है। पुरुषोंको अपेक्षा यह बीमारी औरतोंको ज्यादा होती है। एकाएक हमला ; मूर्खपन ; गन्दे रहना ; मौन रहना ; भूल सुनना ; कलके पुतलेकी तरह चाल ढाल , चेहरा फूला और घबरा हुआ वगैरह इस बीमारीके लक्षण हैं। मानसिक शक्ति एकदम कमजोर हो जाने या मानसिक चिन्ता अथवा भावका सोता एक ही तरह (monotonons) का होनेपर यह बीमारी पैदा होती है। जैसे—बहुत दिनोंतक कल-कारखानेमें या जहाजके मल्लाह बनकर, जो एक ही ढगके काममें अपनी समूची जिन्दगी बिताते हैं, उन्हें ही खासकर यह बीमारी होती है। फास्फोरिक एसिड और ऐनाकार्डियम इसकी खास दवाएँ हैं।

शराब पीनेसे पैदा हुआ (Alcoholic) बुद्धि वैकल्य (अर्थात् बहुत दिनोंतक जो बेअन्दाज शराब पिया करते हैं, उन्हें ही यह बीमारी हुआ करती है) :—याददाश्तका तेजीसे कम हो जाना (यहाँतक कि अपना नामतक भूल जाना) ; इच्छा-शक्तिमें कमजोरी ; रोगीका अपने शरीर ये वेश-भूषापर बिलकुल ही ख्याल न रखना ; क्रोध करना ; शरीरकी गर्मी स्वाभाविक (६८·४°) से भी कम, पाकाशयका प्रदाह वगैरह इस रोगके विशेष लक्षण हैं।

हस्तमैथुनसे पैदा हुआ (Masturbatic) बुद्धि-वैकल्य (नवजवान मर्द-औरतोंको ही यह बीमारी ज्यादा होती है)—याददाश्त बिलकुल न रहना ; मानसिक दुर्बलता, हृददर्जेकी उदासीनता ; टकटकी बाँधकर देखना ; सर झुकाकर बैठना ; हाथ-पैर ठण्डे और तर ; चरित्र-दोष वगैरह इस रोगके लक्षण हैं। फास्फोरिक एसिड, ऐनाकार्डियम और कोनायम वगैरह दवाएँ इस बीमारीमें फायदा करता है।

बुढ़ापेसे पैदा हुआ (Senile) बुद्धि-वैकल्य—(साधारणतः ६० वर्षकी उमरके बाद यह बीमारी होती है) :—धीरे-धीरे रोगका हमला ; याददाश्तका नष्ट होना (खासकर हालकी घटनाएँ), क्रोधी स्वभाव बेचैनी, अव्यवस्थित मति, बहुत ज्यादा आत्मगरिमा ; भ्रान्त-विश्वास (delusion) ; अवास्तव मूर्त्ति या वस्तुकी अनुभूति या कल्पना (hallucination) ; ऐसी चाल-चलन, जिससे मालूम हो, कि बुद्धि-खराब हो गयी हैं—यही उपसर्ग इस रोगमें दिखाई देते हैं। इसका भावी-फल अच्छा नहीं है। वैराइटा-कार्ब, कोनायम, क्रोटेलस, एसिड-फास, कैल्के-कार्ब और ऐनाकार्डियम इसकी खास दवाएँ हैं।

यांत्रिक (Organic) बुद्धि-वैकल्य (संन्यास रोग और मस्तिष्कके अर्बुद रोगके बाद यह बीमारी घट जाती है)—डरा हुआ भाव या सन्देही चित्त, याददाश्त गायब, देखने और सुननेमें भ्रम होना, अर्द्धांगकी अकड़न या लकवा, खींचन (convulsion) इसके प्रधान लक्षण हैं।

गौण (Secondary) बुद्धि-वैकल्य किसी भी उन्माद रोगकी यह बादवाली अवस्था है) मानसिक दुर्बलता थोड़ी या बहुत, इच्छा-शक्तिकी और स्मृति-शक्तिकी कमी या कमजोरी या बहुत, मानसिक वृत्तियोंका एकाएक नाश हो जाना, इस रोगके प्रधान उपसर्ग हैं। हेलिबोरस और जिंकम इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

चिकित्सा—एसिड-फास २x, ६—रोगकी आस-पासकी चीजें या मनुष्य वगैरहके सम्बन्धमें उदासीनता, याददाश्तकी कमजोरी ; तुरन्त रो देना, कमजोरी और दुबलापन ; हस्तमैथुनसे पैदा हुए बुद्धि-वैकल्यमें बहुत ज्यादा पेशाब होना ; मानसिक चिन्ता और भाव एक ढंगके।

ऐनाकार्डियम ६—याददाश्तकी कमी ; हमेशा कसम खाना ; दृढ़ भ्रान्त विश्वासके साथ बुद्धि-वैकल्य।

कोनायम ६—विषाद रोगके साथ हस्तमैथुन ; याददाश्तकी कमजोरी ; परिवार या कामके सम्बन्धमें उदासीनता ; लेटनेपर सरमें चक्कर आना।

हेलिबोरस ३x—उन्माद या विषाद वायु रोगके बाद ही बुद्धि बिगड़ जानेकी सूचना (हेलिबोरससे फायदा न हो, तो जिंकम ६ देना चाहिये)।

फ्रोटेलस ३—रोगी शकल ; इन्द्रिय ज्ञान और याददाश्त बहुत कम, सहनेकी शक्ति नदारत, भागनेकी कोशिश, बकवाद और खिन्न रहना।

लिलियम टिग ६—गरहरी मानसिक सुस्ती ; बराबर रोनेकी इच्छा, समझाने-बुझानेसे बीमारीका बढ़ना ; शाप देने, मारने और अश्लील बातोंको सोचनेकी तेज इच्छा, लक्षहीनता ; सब कामोंमें जल्दबाजी ; सोचता रहे कि उसकी मुक्ति नहीं है। रोगी समझता हो, कि उसे कोई यान्त्रिक बीमारी हो गयी है, जो अच्छी न होगी।

फैल्के-कार्ब ६, २००—बुद्धि-वैकल्य इतना ज्यादा हो, कि उसकी किसी विषयमें धारणा ही न जमे ; सोच न सके, सहजमें ही रो दे, सरमें चक्कर और सर भारी।

फैल्के-फास ६x विचूर्ण—चिड़चिड़ा मिजाज, वर्त्तमानकी घटनाएँ भी याद न रहें, आस-पासके मनुष्यको पहचान न सके या घटनाएँ न समझ सके ; घरमें हो, पर कहे, कि घर जायेंगे। थोड़ी उमरके आदमी या दुबले पतले शिशुके लिये यह दवा बहुत फायदेमन्द है।

ऐगरिकस ६—साधारण या छिपा हुआ बुद्धि-वैकल्य।

उन्माद रोगीका पक्षाघात

(General paralysis of the Insane)

यह पागलपनके रोगीके मस्तिष्क और मस्तिष्कको ढँकनेवाली झिल्लीका पुराना रोग है। इससे मानसिक वृत्तियाँ धीरे-धीरे कम होती हैं और धीरे-धीरे पक्षाघात (लकवा) होता जाता है। स्त्रियोंकी बनिस्बत पुरुषों को यह बीमारी ज्यादा होती है। ३० से ५० वर्षकी उम्रमें ही यह वीमारी हमेशासे होती देखी जाती है। गिरना या चोट आदि लगना, बहुत थकन, सर्दी-गर्मी वगैरह इस रोगके पहलेके कारण हैं। पक्षाघातके लक्षण पीछे दिखाई देते हैं।

पहली अवस्थाके लक्षण—जीभकी पेशियोंका काँपना या बोली न निकलना, अपना काम-काज या परिवारवालोंके प्रति उदासीनता ; अपने किये हुए काम या भविष्यकी आशाके सफल होनेके सम्बन्धमें या असम्भव काम करनेका गर्व करना ; भ्रान्त-विश्वास (खासकर बहुत ज्यादा धन-दौलत मिलनेके सम्बन्धमें) ; मानसिक वृत्तियों (जैसे—अनुभव, कल्पना-शक्ति और भाव आदि) की ज्यादती ; चाल बिगड़ी ; गन्दे रहना ; आँखोंकी पुतली निश्चल या अनियमित, हिलती रहना।

दूसरी अवस्थाके लक्षण—पक्षाघातके साथ मानसिक कमजोरी ; मृगी रोगकी तरह लक्षण दिखाई देना या सामयिक पक्षाघात ; ओष्ठवर्ण (प, फ, व, भ) उच्चारण करनेमें या अनुप्रास (जैसे—"नमो नित्य निरामय निखिल पावन") बोलनेमें असमर्थ रहना ; कभी-कभी बोली न निकलना।

तीसरी या शेष अवस्थाके लक्षण—चलनेकी ताकत न रहना ; बुदबुदाना या साफ न बोलना, मानसिक शक्तिका नाश, शरीरके एक बगल या कई पेशियोंका सुन्न हो जाना, पर बेहोश न होना ; देखनेमें भ्रम होना और मैले कपड़े आदि पहनना।

किसी-किसी रोगीको जबान बन्द और पक्षाघात (एक अंगका या आधे अंगका) हुआ करता है, इसके अलावा किसी-किसीको सरमें चक्कर अथवा मृगी या सन्यास रोग हो जाया करता है।

चिकित्सा - डाक्टर ह्यूज पहली अवस्थामें बहुत दिनोंतक बेलेडोना सेवनकी सलाह देते हैं। रोग कुछ आगे बढ़ जानेपर जब मानसिक वृत्तियोंकी ज्यादती दिखाई दे, तब वे कैनाबिस इण्डिका सेवनकी सलाह देते हैं। Minnaesota विश्वविद्यालयके होमियोपैथिक कालेजके मानसिक रोगोंके अध्यापक A. P. Williamson M. D. साहबने नीचे लिखी दवाएं लाभदायक बताई हैं :—

एगरिकस ३x, ३०—बहुत बोलना ; गाना ; जबानी पद्य रचना करना ; भ्रांत विश्वासमें इतना गर्क हो जाना कि कोई बात पूछनेपर जवाब देनेतककी फुर्सत न रहना, सब विषयोंमें उदासीनता ; पेशियाँ (खासकर चेहरेकी पेशी) सिकुड़ना ; नींद न आना।

आर्निका ३x—जड़बुद्धि ; अनमना भाव ; भ्रांत विश्वासमें इस कदर लग जाना कि कही हुई बात खतम नहीं की जाती ; सन्देही और डरपोक ; कमजोरीसे कँपकँपी।

सिमिसिफ्यूगा θ—खिन्न रहना ; अकेले रहनेकी इच्छा ; हटानेकी इच्छासे सवालका जवाब जल्दी देना ; आँखें और मुँहकी पेशियोंका काँपना।

कैनाबिस इण्डिका ३x—अण्ट-सण्ट बातें कहना, तेज मानसिक ज्यादती, बकवाद, अवास्तव देखनेके सम्बन्धमें रोगी हमेशा कहता रहे, रोगीका स्वभाव अच्छा हो, देश कालके सम्बन्धमें ज्यादा बातें करना हो ; आवाज या रोशनी बिलकुल सहन न कर सकता हो।

विरेट्रम-विर १x—खिन्न और सन्देही, चकचौंधी लगता या हतबुद्धि हो जाना, कई तरहकी अवास्तव चीजें देखना ; रोगी समझता है, कि

कोई उसे विष खिलाकर मार डालेगा ; माथेमें अत्यधिक खून इकट्ठा होना ; कभी-कभी पक्षाघातका आक्रमण।

सब तरहके उन्माद रोगकी आनुसंगिक चिकित्सा :— रोगीको जहाँतक वन पड़े अच्छी अवस्थामें रखना चाहिये। काम काज बन्द रखना ; शारीरिक और मानसिक विश्राम, नहाना, शरीर मलना, बिजली लगवाना वगैरह फायदा करते हैं। रोगी यदि कर्कश बोलता हो, तो सेवा करनेवालोंको उसे सहन करना चाहिये और रोगीसे सदा दयापूर्ण व्यवहार करना चाहिये। साधारण स्वास्थ्यके नियम पालन करने चाहियें। हल्का जल्द पचनेवाला भोजन, दूध (उसमें कुछ नमक मिलाकर), शोरबा, कच्चा अंडा वगैरह सुपथ्य है। थोड़ी मेहनत करनी चाहिये।

कुक्षि-रोग या व्याधिकल्पना
(Hypochondriasis)

सचमुच कोई शारीरिक बीमारीके मौजूद न रहनेपर भी ऐसी धारणा हो जाना कि हमें कोई भयानक बीमारी हुई है और इसी चिन्तामें बराबर उद्विग्न रहनेका नाम ही "व्याधिकल्पना" है। वास्तवमें यह एक मानसिक रोग है, शारीरिक रोग नहीं है। रोगी अपने स्वास्थ्यके सम्बन्धमें हमेशा चिन्तित रहता है। इस चिन्ता और खिन्नताके साथ अजीर्ण रोग या पेटकी बीमारी लगी रहती है। पहलेके चिकित्सक इसे "कोंखसे पैदा हुआ रोग" (hypochondriasis) कहा करते थे। बहुत दिनोंतक इस व्याधिकल्पना रोगको भोगनेके बाद कोई-कोई पूर्व वर्णित "व्याधिकल्पना रोग" के भीतर आया हुआ समझते हैं। पिता-माताके वशमें यह रोग रहना, रति-क्रियासे अलग रहना या रति-क्रियाकी ज्यादतीके कारण ध्वजभंग या धातु-दौर्बल्य होना, विलासिता, आलसीकी तरह दिन काटना, कल्पना-शक्तिको बहुत चलाना वगैरह

कारणोंसे यह बीमारी हुआ करती है (Jousset)। चढ़ती जवानी या रज-स्राव और सोनेके समय या काम-काज छोड़ देने या विधवा होनेके बाद *साधारणतः धीरे-धीरे यह बीमारी पैदा हो जाती है* और इसके उपसर्ग आदि कुछ दिन बन्द रहनेके बाद एकाएक शुरू होकर फिर बन्द हो जाते हैं। हृद्‌रोग न रहनेपर भी कलेजा धड़कना, बेहोश हो जाना, विमर्षता, पेटकी गड़बड़ी, अपने शरीरके सम्बन्धमें बहुत चिन्ता, आत्महत्या या नर हत्या करनेकी इच्छा, सरमें दर्द, सरमें चक्कर, नींद न आना, जमा हुआ भ्रान्त विश्वास, पेट फूलना, भूख न लगना, डकार आना, कब्जियत, शीर्णता, खूनकी कमी वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं। इसके बाद शोथ, रक्त-स्राव, उदरामय वगैरह लक्षण पैदा होकर मृत्यु हो जाती है।

ऊपर लिखे उपसर्ग किसीको धीरे-धीरे प्रकट होकर जिन्दगीभर रोगीके शरीरमें मौजूद रहते हैं। किसीको यह लक्षण धीरे धीरे आरम्भ होते हैं और बन्द हो जाते हैं, फिर पैदा होते हैं (Dr. Tessier)।

चिकित्सा—डा॰ ह्यूज, हार्टमैन और बेर निम्नलिखित नौ दवाओंको इस रोगके लिये लाभदायक समझते हैं :—नक्स-वोमिका, सल्फर, स्टैफिसेग्रिया, नेट्रम-म्यूर, कोनायम, स्टैनम, आर्सेनिक, इग्नेशिया और मर्क। नक्स और सल्फर अजीर्ण उपसर्गमें ; स्टैफिसेग्रिया—बहुत दिनोंतक हृदयमें विषन्न भाव पोषण करना ; नेट्रम म्यूर—धातु-विकृति और कब्जियत होनेपर ; कोनायम—बहुत दिनोंतक स्त्री-सङ्ग न करनेके कारण यह रोग होनेपर ; स्टैनम—पेटमें बहुत दर्द (हिलने डुलनेसे पेटके दर्दका बढ़ना) ; इग्नेशिया—मानसिक कष्टकी प्रकोप वाली अवस्थामें थोड़ा प्रलाप रहनेके लक्षणमें ; आर्सेनिक और मर्क—बहुत जलनके लक्षणमें देना चाहिये।

नक्स-वोमिका ३x, ६—कब्जियतके साथ पाकाशयकी गड़बड़ी, काम करनेकी इच्छा न होना, कभी-कभी मानसिक अवस्थामें विमर्ष,

कभी-कभी तेज, नींद न आना, सरमें चक्कर, श्वासकष्ट, शारीरिक दुर्बलता (पक्षाघातकी तरह)।

आरम स्यूर २x विचूर्ण ३०—विषन्न भाव, सब कामोंमें जल्दबाजी, निराशा, विलाप, चिल्लाना, आत्महत्या करनेकी इच्छा, सर-दर्दमें, रोगी वेहोश हो जाता है। नींद न आना (उपदंशवाले रोगीके व्याधिकल्पना रोगमें यह ज्यादा फायदा करता है)।

सिमिसिफ्यूगा १x—धातु-दौर्बल्यसे पैदा हुई बीमारीमें।

हायोसायमस ३—व्याधि-कल्पनासे पैदा हुए एक ही विषयका उन्माद (जैसे—रोगीको वास्तविक उपदंशको बीमारी न रहनेपर भी वह मनमें समझता है कि वह यह बीमारी भोग रहा है और इसके लिये दिन-रात चिन्तित रहता है)।

कैल्के-कार्ब ३०, २००—(सवेरे १ मात्रा और शामको एक मात्रा सेवन करना चाहिये) रोगी मनमें समझता है कि उसका इन्द्रिय-ज्ञान लोप हो गया ; डरते रहना ; मानसिक शान्तिकी कमी ; थकावट मालूम होना ; वेहोश कर देनेवाला सर-दर्द ; खट्टा पानी कै करना ; कलेजेमें वास्तवमें दर्द न रहनेपर भी रोगी समझता हो, कि उसके कलेजेमें दर्द है।

स्टैनम ६—सर-दर्दके साथ माथा गर्म, पर नीचेके अंग ठंडे, हमेशा कै, पेटमें दर्द और खींचन, असह्य अस्वच्छन्दता, चलनेसे पेटका दर्द कम होना, पर थोड़ी देर चलनेसे ही रोगी थक जाता है और विश्राम करना चाहता है, परन्तु वैठते ही फिर दर्द होने लगता है।

स्टैफिसेग्रिया ६—(डा० जूँसे कहते हैं कि इस वीमारीके सभी लक्षण इस दवामें मिलते हैं और इसीसे अच्छे हो सकते हैं) सब विषयोंमें उदासीनता, धातु निकलना, ध्वजभंग।

सल्फर—बहुत मानसिक उत्कंठा, अपने काम-काज, स्वास्थ्य या मुक्तिके सम्बन्धमें हमेशा चिन्ता, अनमना भाव, संकल्पहीन, अपनेको हमेशा बीमारी ही समझता रहे।

ऐनाकार्डियम और **वैलेरियाना**—उत्तेजना और स्नायविक दुर्बलतामें यह उपकारी है।

नेट्रम-फास, चायना, ऐनाकार्डियम, ग्रैटियोला, लैकेसिस, मस्कस, सिपिया, फास्फोरस, प्लैटिना, टैरेण्टुला, पल्स, आर्जे-नाई, मर्कको भी बीच बीचमें जरूरत पड़ सकती है।

आनुसंगिक चिकित्सा—घूमना, देश भ्रमण, (जरूरत पड़नेपर) रोगीको अकेलेमें या अलग रखना, नहाना, नहानेके पहले थोड़ा परिश्रम कसरत (खासकर छोटी उम्रवाले मनुष्योंके लिये), रोगीको बीच बीचमें समझाते रहना चाहिये कि उसकी बीमारी असली नहीं, बल्कि कल्पित है। हिप्नाटिज्म (नकली उपायोंसे रोगीको सुलानेकी चेष्टा करना) वगैरह सहायक उपाय काममें लाने चाहियें। स्नायुमंडल रोगवाले अध्यायमें "व्याधि-कल्पना रोग" देखिये।

शराबियोंका प्रलाप ; मदात्यय

(Delirium Tremens)

जिस मानसिक रोगमें बहुत दिनोंतक शराब पीनेकी वजहसे, प्रलाप, नींद न आना और भ्रान्त विश्वास, खासकर दिखाई दे, उसीका नाम "प्रलाप कम्पन" है। खासकर दिमागमें शराबका जहर फैल जानेसे ही यह बीमारी पैदा होती है। शराबीको शराब एकाएक रोक देना, शरीरका ठीक-ठीक पुष्टि साधन न होना, मानसिक आवेग बढ़ा हुआ, शरीरमें कोई तेज बीमारी (जैसे फेफड़ेका प्रदाह, पतले दस्त, पीब होना, खूनका क्षय होना) रातमें घूमना, चोट (जैसे—हाड़ टूटना) वगैरह इसके उत्तेजक कारण हैं।

इस बीमारीके लक्षण धीरे-धीरे प्रकाशित होते हैं :—पाकाशयकी गड़बड़ी (कै, मिचली, भूखकी कमी), अनिद्रा (नींद न आना), भ्रम देखना, औंघाईके साथ उत्कण्ठा-भरे स्वप्न देखना, नींदसे चौंक उठना, पेशाब वन्द होना, सोचनेकी ताकतका कमजोर पड़ जाना या विशृङ्खला, सुस्ती, सूखी जीभ, मोह या अकड़न ; प्रलाप, सब शरीरका काँपना या खींचन ; कभी-कभी हृत्पिण्डकी क्रिया रुककर भी मौत हो जाती है।

चिकित्सा—डा० ह्यूजका कथन है कि इस रोगमें इलाज करनेके समय, डाक्टर लोग बीमारी आराम करनेके बदले अधिकांश रोगियोंका प्राण ले लेते हैं। पहले प्रदाहको घटानेवाली दवाएँ, फिर अफीम वगैरह नींद लानेवाले औषध और इसके बाद पौष्टिक भोजन वगैरह देकर, ऐलोपैथिक चिकित्सक इस बीमारीका इलाज किया करते हैं, इसलिये होमियोपैथिकवालोंको बहुत समझ-बूझकर इसका इलाज करना चाहिये—(१) मस्तिष्ककी गड़बड़ी, (२) पाकाशयकी गड़बड़ी—इन दोनों ही विषयोंकी ओर ध्यान रखकर हमें दवा देनी पड़ेगी। हायोस १x (मृदु प्रलाप), बेलेडोना (हायोसकी बनिस्वत तेज प्रलाप) और स्ट्रैमोनियम (बहुत तेज प्रलाप)—ये तीनों दवाएँ पहले कहे हुए उपसर्गको दबानेके लिये व्यवहार की जाती हैं। ऐण्टिम-टार्ट (बहुत ठण्डा पसीना, फेफड़ेका प्रदाह, श्लैष्मिक और पाकाशयिक गड़बड़ी) और आर्सेनिक (पाकाशयका प्रदाह, अवसन्नता, कम्पन)—यह दो दवाएँ ऊपर कहे हुए उपसर्गको दबानेके लिये फायदेमन्द हैं। पहली श्रेणीकी चुनी हुई दवाएँ रातमें और दूसरी श्रेणीकी दवाएँ दिनमें खानेसे ज्यादा फायदा होता है।

अमेरिकन डा० विलियमसन और स्पेनिश डा० ओलिवे कहते हैं कि हायोस, वेल और स्ट्रैमोकी अपेक्षा कैनाबिस इण्डिका ज्यादातर फायदेमन्द है। रोगके शुरूमें पाकाशयकी गड़बड़ीवाले लक्षणमें,

नक्स-वोमिका १x और उसके बाद जिंकम तथा फास्फोरस फायदा करता है।

हायोसिन हाइड्रोब्रोमेट ३x, ४x विचूर्ण—(फी चार घंटेके अन्तरसे) बिलकुल ही नींद न आना।

स्ट्रिकनिन नाइट्रेट २x—हृत्पिण्डकी क्रिया कमजोर ; स्पन्दन-शक्ति बहुत क्षीण।

हाइड्रैस्टिस θ (फी मात्रा ३ बून्द)—पाकाशयके प्रदाहकी पुरानी अवस्था।

कैलि-आयोड θ, ३०—गर्मी रोगका जहर बीमारके बदनमें मौजूद रहनेपर।

ओपियम ३x, ६— पुराने शराबियोंकी बीमारीकी यह बढ़िया दवा है)—प्रदाहके साथ आँखें खुली और डरी हुई दृष्टि अथवा जड़वत बेहोश अवस्था, नाकसे गहरी आवाजके साथ साँस निकलना, मृगी रोगकी तरह लक्षण।

सल्फ्यूरिक एसिड θ—पाकाशयकी गड़बड़ी और यकृतकी बीमारीकी पुरानी अवस्था, पाकस्थली ठण्डी और कमजोर होना ; शराब पीनेकी प्रबल इच्छा ; रोज ही अम्ल रोगका लगे रहना ; खट्टी साँस, खट्टी कै, दुबलापन और सर्दी (नक्स-वोम सेवनके बहुत दिन बाद यह फायदा करता है)।

आर्सेनिक ३x—खिन्न रहना, पाकाशयकी गड़बड़ी ; पेशाबका बन्द होना।

हायोसायमस θ—हल्का प्रलाप ; बकवादीपन ; बिना मतलबके बड़बड़ाते रहना।

पक्षाघातके लिये, हृत्पिण्ड, लाडलाल मूत्रकी वजहसे मूत्रग्रन्थि और फेफड़ेके प्रदाहके लिये बीच-बीचमें फेफड़ेकी परीक्षा करवा लेनी चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—मार्फिया क्लोरल ब्रोमाइड, कभी रोगीको न सेवन कराया जाये। यदि उत्तेजक दवाकी बहुत ही जरूरत हो, तो लाइकर-ऐमोन २०—३० बून्द थोड़े मीठे पानीके साथ या एक प्याला तेज काली काफी पिलायी जा सकती है। शराब पीना एकदम रोक देना चाहिये। रोगीको ऐसे कमरेमें रखना चाहिये, जहाँ आवाज ही न पहुँचती हो। पुष्ट चीजें (लाल या काली मिर्च मिला), जैसे—दूध, अंडा तीन-चार घण्टेका अन्तर देकर खिलाना चाहिये। नहलाना उचित है। पाकाशयके उपदाहके लिये खूब गर्म पानी या सोडा-वाटरके साथ बर्फके टुकड़े देकर पिलाना चाहिये। पेशाब बन्द होनेपर, कमरमें खूब गर्म पानीका सेंक देना चाहिये।

कुछ मानसिक उपसर्ग और उनकी दवाएँ

अंगावसाद और उदासीनता—जेल्स

बहुत उद्विग्नता और मृत्यु-भय—सिकेलि।

बहुत कराहना—बेल, साइक्यूटा।

ज्यादा अनुभूति—बोरैक्स, काफिया, इग्नेशिया।

अन्यमनस्क भाव – कैनाबिस-इण्डिका।

अवसाद या क्लान्ति मालूम होना या निस्पन्द-वायु रोग (अर्थात् शारीरिक और मानसिक क्रियाओंका कुछ देरतक बन्द रहना)—ऐनाकार्डियम, ओपि. एसिड-पिक्रिक, कैल्के-फास।

अव्यवस्थित चित्त—आरम, बैराइटा-कार्ब।

अभव्य और अनाड़ी—नेट्रम-म्यूर।

अभव्य—प्लेटिनम, कैमोमिला।

आत्महत्या करनेकी इच्छामें—आरम-मेट, आरम-म्यूर, आर्ज नाई, कैल्के, नक्स-वोम।

शृङ्गार-रसके विषयकी बहुत समयतक चर्चा करनेके बादके उपसर्गमें—स्टैफिसाइग्रिया ।

ईर्षा—हायोस, लैके, एपिस ।

उत्कण्ठा—ऐकोन, आरम, फास्फो, सल्फर ।

उदासीन भाव—लिलियम, एसिड-फास, सिपिया, कार्बो-वेज ।

उन्मत्तता—आर्स, बेल, हायोस, स्ट्रैमो, लाइको, विरे, जिङ्कम ।

" (एकाएक उन्माद रोग होनेपर)—विरे-ऐल्ब, कैनाबिस-इण्डिका, हायोसायमस ।

" सौरी-बाई—बेल, कैनाबिस इण्डिका, सिमिसिफ्यूगा, हायोसायमस, स्ट्रैमोनियम ।

एक ही विषयमें उन्माद—कैनाबिस-इण्डिका, हायोस, साइक्यूटा ।

कामोन्मत्तता—कैन्थरिस, प्लाटिना, हायोसायमस, एसिड-पिक्रिक, फास्फोरस ।

धर्मोन्मत्तता—हायोस, सल्फर, विरे ऐल्ब, लैके, आर्सेनिक ।

उन्माद रोग होनेका डर रहनेपर—ऐकोन, सिमिसिफ्यूगा, लिलियम ।

औद्धत्य—प्लैटिना, सल्फर, लाइको, विरे-ऐल्ब ।

बात न करना (मौन रहना)—एसिड-फास, सल्फर, पल्स, विरे ऐल्ब ।

क्रोधसे पैदा हुई बीमारीमें (यहाँतक कि पाण्डु या कामला होनेपर)—कैमोमिला ।

खामखयाली मिजाज—कैमोमिला, स्टैफि ।

चिड़चिड़ा मिजाज—आरम, साइना, सल्फर, ऐल्यूमिना, स्टैफि ।

बदला लेनेकी प्रवृत्ति—आर्ज नाई, नक्स, मर्क, हायोस, लैके ।

झगड़ालू या अश्लील व्यवहारमें—हायोस ।

झगड़ालू स्वभाव—सल्फर, नक्स वोम, इग्नेशिया ।

दुःखके साथ आँसूभरी आँखें—पल्स, लिलियम, सिपिया, थूजा (संगीत या बाजेसे), इण्डिगो (रातभर होनेपर)।

धारणा-शक्तिकी कमी—ऐनाकार्डि, हेलिबोरस, एसिड-फास।

अपनी जिन्दगीको धिक्कारना—आरम, ऐण्टिम-क्रूड, चायना, फास, थूजा।

निराश—आर्ज-नाई, आरम, सोरिनम।

" रोग आराम होनेके सम्बन्धमें—रस, सोरिनम, कैल्के।

प्रलाप—बेलेडोना (तेज प्रलाप, जैसे—काटने दौड़ना, बदनपर थूक देना, गरज उठना), हायोसायमस (हल्के ढंगका या शृङ्गार-सम्बन्धी या बकवाद-भरा); लैकेसिस (बड़बड़ाना या प्रलाप बकना); स्ट्रैमो (बहुत तेज या गुस्सा-भरा-प्रलाप); विरे-ऐल्ब, बैप्टीशिया, जिङ्कम।

जल्दबाज, जल्दी-जल्दी काम करना, तितिक्षाहीनता—एसिड-फास।

बकवादीपन—बेल, स्ट्रैमो, लैके।

विद्वेषी—क्यूप्रम।

विमर्षता—ऐकोन, आर्ज, विरे, रस, सल्फर, लैके, लिलियम, लाइको, नेट्रम-म्यूर, प्लैटिना, आरम, कैल्के।

याददाश्तकी कमी—बैराइटा-कार्ब, एसिड फास।

विषन्नता, समझनेकी ज्यादती, मति आवेग-भरी, पागल या उन्मत्त-जैसे लक्षण—इग्नेशिया।

भय—ऐकोन, आर्ज-नाई, इग्ने, सोरिनम।

" अन्धेरेमें जानेमें डर—स्ट्रैमो, विरे-ऐल्ब।

" उन्माद रोग होनेका डर होनेपर—ऐको, सिमिसि, लिलि-टिग।

" अकेले जानेमें डर—आर्ज, लाइको, फास्फो।

" मृत्यु भय—ऐकोन, आर्स, प्लैटिनम।

" भीड़में जानेमें डर लगना—ऐकोन, प्लैटिना।

" ओले गिरनेसे पहले डर लगना—इलैप्स।

" सहजमें डरना, भीरु स्वभाव—आर्ज-नाई, बोरैक्स।

भयकी वजहसे कोई बीमारी होनेपर—ऐकोन, ओपि ; पर यदि डरकी वजहसे कोई स्नायु रोग हो, तो (जैसे—मृगी या नर्त्तन रोग) इग्नेशिया देना चाहिये ।

भ्रान्त-विश्वास, असम्भव या हँसने योग्य—कैनाबिस-इण्डिका ।
- " कोई चीज मानो छोटी होती जा रही है—ऐकोन, कार्बो-वेज, टेरेण्टुला ।
- " चूहे, पतग वगैरहके सम्बन्धमें—इथ्यू, सिमिसि, मेडोरिनम ।
- " कुत्तेके सम्बन्धमें—कैल्के, स्ट्रैमो, बेलेडोना (काला कुत्ता) ।
- " पतगादिके विषयमें—आर्ज, वेल, हायोस ।
- " तेज प्रकृतिका—स्ट्रैमो, वेल, हायोस ।
- " प्राणीके सम्बन्धमें—वेल, हायोस, स्ट्रैमो, ओपियम, थूजा ।
- " रूप आदिके सम्बन्धमें (जैसे—कोई कपड़ेका टुकड़ा सुन्दर दिखाई दे)—सल्फर ।
- " बिछावनपर मानो रोगीके साथ कोई सोया है—वैप्टीशिया, पल्सेटिला ।
- " काली बिल्लीके सम्बन्धमें—कैल्के, पल्स ।
- " काम काजकी जल्दबाजीके सम्बन्धमें—फास्फो ।
- " भूत-प्रेतके सम्बन्धमें—वेल, स्ट्रैमो, आर्स, ओपि, कार्बो-वेज ।
- " मानो पागल हो जायगा—लिलियम-टिग और सिमिसि ।
- " मानो सब तरहकी बीमारियाँ हो गयी हैं—आरम-म्यूर ।
- " मानो रोग सब अच्छा न होगा—आर्ज-नाई ।
- " रोगीका शरीर मानो टुकडे टुकड़े हो गया है—वैप्टी, पल्स ।
- " रोगी मानो आँखें बन्द रखनेपर भी चेहरा देख रहा है—कैल्के ।
- " रोगीका कोई दूसरा अपमान कर रहा है—आर्ज-नाई ।
- " रोगीको कोई कष्ट दे रहा है—चायना ।
- " रोगी मानो मर गया है—स्ट्रैमो ।

भ्रान्त विश्वास, रोगीका शरीर मानो काँचका बना है—थूजा।

शराब पीनेसे पैदा हुए मानसिक उपसर्ग—नक्स, स्ट्रैमो, वेल (प्रलापके साथ बिछावन नोचना)।

मन छटपटाना—ऐकोन, आर्ज, मर्क, स्टैनम।

मर्माहत होना—ऐकोन, इग्ने, एसिड-फास।

मानसिक बेचैनी—ऐकोन, आर्ज, कैमो, काफिया, हायोस, सिमि, इग्ने, फास्फो, स्ट्रैमो।

मोह या मोह निद्रा—आइलैन्थस, एपिस, हेलिबोरस, हायोस, ओपि, एसिड-फास, जिंक-म्यूर, रस।

ऐसा मालूम होना कि उन्मत्तता हो रहा है—लिलियम, प्लैटिना, कैंथरिस, (प्रचण्ड या काम विषयक उन्मत्तता)।

रोगीमें मानो दो इच्छाएँ हैं (जैसे—सुमति और कुमति, दोनों उसपर अधिकार जमाये हैं, एक कहती है, "यह काम करो", दूसरी कहती है "न करो" इस लक्षणमें)—ऐनाकार्डियम।

लोगोंका साथ करनेकी इच्छा—लाइको।

लोगोंका साथ छोड़नेकी इच्छा—नेट्रम-म्यूर।

शोकजनित (खासकर मानसिक दुःख दबा रखनेके बाद) कोई मानसिक रोग होनेपर—इग्नेशिया ; परन्तु बहुत दिनोंतक शोकादिमें मग्न रहनेपर और इसी वजहसे शरीर रोगी होनेपर—एसिड-फास।

बेहोश होनेपर—कैनाबिस-इण्डिका, हायोस, जिंक म्यूर, हेलिबोर।

मानसिक भाव हमेशा बदलते रहनेपर (ऐसा मालूम होना कि कोई जीव हमेशा पेटमें घूम रहा है)—क्रोकस, डिजिटेलिस (दुःखित और डरसे व्याकुल होनेपर।

संदेही—सल्फर, स्ट्रैमो, सिकेलि, कैनाबिस-इंडिका, हायो, लैकेसिस।

सलज्ज भाव—बेराइटा, इग्ने, स्टैफिसेग्रिया।

थोड़ेमें ही चौंक उठना—ऐकोन, बेल, कैमो, बोरैक्स, इग्नेशिया, नक्स-स्ट्रैमो, फास्फो।
एकाएक ईर्षासे पैदा हुए उपसर्गमें—काफिया, ओपियम।
एकाएक जोरसे चिल्ला उठना (जागते रहनेपर या नींदमें)—एपिस।
याददास्तकी कमी—ऐनाकार्डियम, हायोस, एसिड-फास, इथ्यूजा।
हतबुद्धि (भौंचक हो जाना)—ऐनाकार्डियम, कैनाबिस-इण्डिका, आर्स-नाई, नक्स-वोम।

औषधजनित व्याधि
(Drug-Diseases)

पारा, क्विनाइन, आर्सेनिक आदि तेज दवाएँ ज्यादा मात्रामें, बहुत दिनोंतक सेवन करनेपर, जिन रोगोंका लक्षण प्रकट होता है, उन्हें "जायज-व्याधि" (Drug diseases) (प्रधान लक्षणादि "हैनिमैनके बतलाये हुए पुराने और नये रोग" के अनुच्छेदमें देखिये) कहते हैं। कुछ प्रधान दवाएँ ऐलोपैथिक मात्रामें (और कोई-कोई जहरकी मात्रामें) सेवनसे पैदा हुआ कुफल और उसका इलाज नीचे लिखा जाता है :—

पारा (Mercury)

ज्यादा परिमाणमें रस-कपूर या पारा (mercury) खा लेनेके बाद ही अगर जहरके लक्षण पैदा हो जायें, तो अंडेका सफेद भाग, चीनीका शरबत और दूधमें पानी मिलाकर सेवन करनेसे बहुत फायदा होता है।

पाराके अपव्यवहारकी "गौण क्रिया" का नतीजा :—रातमें सरमें दर्द, केशोंका झड़ जाना, माथेमें दर्द-भरे फोड़े, प्रदाहके कारण लाल-लाल आँखें, नाकको छूनेपर स्पर्श अधिक अनुभव होना, मुँहके चारों

और सूखापन, मसूड़ेमें जखम और मुँह हमेशा थूकसे भरा रहना; तालुमूल या गलेकी गांठका सूजना, पुट्ठे या बगलकी गांठमें जखम हो जाना, कूथनके साथ पतले दस्त आना, बदनपर जखम या प्रदाह, दाँतकी जड़ अलग हो जाना, शरीरपर सहजमें ही फोड़ा पैदा होना, इन सब लक्षणोंमें पहले हिपर-सल्फर ६ देना चाहिये। हिपरके बाद वेलेडोना ६ या नाइट्रिक-एसिड ६ देना उचित है। इससे भी अगर कोई फायदा न हो, तो दो-एक सप्ताहके लिये एक मात्रा सल्फर ३० देना चाहिये। सल्फरके बाद कैल्केरिया-कार्ब ६ ज्यादा फायदा करता है।

यदि सल्फर और मर्करी दोनोंका अपव्यवहार हुआ हो, तो बेलेडोना ६, पल्सेटिला ६, यहाँतक कि कभी-कभी ऊँचे क्रममें मर्क्यूरियस भी दिया जा सकता है।

पारा सेवनसे "रक्त-दोष" होकर सब शरीर अगर बिगड़ गया हो, तो ऐसाफिटिडा, आरम-मेट, चायना, चियोनैन्थस, हिपर, आयोड, कैलि-आयोड या मेजेरियम दिया जाता है।

मुँहका भीतरी हिस्सा या "दाँतके मसुढ़ोंपर" रोगका हमला हुआ हो या बहुत ज्यादा लार गिरती हो, तो कार्बो-वेज, डल्कामारा, हिपर-सल्फर, नाइट्रिक-एसिड, स्टैफिसेग्रिया, सल्फ, चायना, आयोड, नेट्रम-म्यूर प्रभृति देना चाहिये।

पारा सेवनके कारणसे "गलेमें घाव" हो, तो वेलेडोना, कार्बो-वेज, हिपर-सल्फर, लैकेसिस, स्ट्रैफिसेग्रिया, सल्फर, आर्जे-मेट, लाइको-पोडियम, नाइट्रिक-एसिड और थूजा।

स्नायविक उत्तेजनामें—कार्बो-वेज, कैमोमिला, हिपर, नाइट्रिक-एसिड, पल्सेटिला।

स्नायविक दुर्बलतामें—चायना, हिपर-सल्फर, लैकेसिस, कार्बो-वेज नाइट्रिक-एसिड।

ठण्डा लगकर या ऋतु-परिवर्त्तन आदिमें ऊपर लिखे लक्षण मालूम होनेपर—कार्बो वेज, चायना।

पारा सेवनकी वजहसे "वात रोग" होनेपर—कार्बो वेज, चायना, डल्कामारा, गुयेकम, हिपर सल्फर, लैकेसिस, फास्फोरिक एसिड, पल्स, *सार्सा, सल्फर, आर्निका, वेलेडोना, कैमोमिला, कैल्केरिया, लाइको।*

पारा सेवनकी वजहसे हाड़के भीतर दर्द या "हड्डीमें घाव" वगैरह लक्षणोंमें—आरम, फास्फोरिक एसिड, ऐसाफि, कैल्के, डल्कामारा, लैकेसिस, लाइकोपोडियम, नाइट्रिक एसिड, सिलिका, सल्फर।

शारीरिक "ग्रन्थि" या पुट्ठे (वक्षण) के उपसर्ग होनेपर आरम-मेट, कार्बो वेज, डल्कामारा, ग्रेफाइ, नाइट्रिक-एसिड, साइलिसिया।

पारा सेवनसे पैदा हुए "जखममें—आरम, वेलेडोना, कार्बो वेज, ग्रेफाइटिस, हिपर सल्फर, लैकेसिस, नाइट्रिक-एसिड, सार्सा, सिलिका, सल्फर, थूजा।

पारा सेवनसे पैदा हुए "शोथादि" लक्षणमें—चायना, डल्कामारा हेलिवोरस, सल्फर।

यह सभी दवाएँ ६—३० शक्तिकी देनी चाहियें।

क्विनाइन

जिस तरह पारा खानेसे शरीरसे उसका विष जल्दी नहीं निकल जाता, वही दशा क्विनाइनके व्यवहारसे भी हुआ करती है।

आर्निका आर्सेनिक, वेलेडोना, कैल्केरिया, फेरम, इपिकाक, लैके, मर्क्यूरियस, पल्सेटिला, विरेट्रम, कैप्सिकम, कार्बो-वज, सिना, नेट्रम-म्यूर, सिपिया, सल्फर वगैरहके सेवनसे शरीरसे क्विनाइनका विष निकल सकता है।

इपिकाक—क्विनाइनका खराब परिणाम दूर करनेकी यह प्रधान दवा है। इसके बाद पल्सेटिला खाना चाहिये (खासकर नीचे लिखे

लक्षणोंमें)। क्विनाइनसे बुखार या मैलेरिया बुखार दब जानेके बाद कान या दाँतमें दर्द, सर भारी और अंग-प्रत्यंगमें दर्द हो।

आर्निका—वात, हाथ-पैरमें भार मालूम होना और दर्द, हिलने डुलने, बात करने या कानमें आवाज जानेपर दर्दका बढ़ना।

आर्सेनिक—हाथ-पैरोंमें जखम, पैरमें सूजन, सूखी खाँसी और साँसमें तकलीफ।

बेलेडोना—माथेमें अस्वाभाविक ढंगसे खून जमा होना और चेहरा गर्म; माथा, चेहरा और दाँतमें दर्द। मर्करीके खिलानेपर यदि कामला न अच्छा हो, तो बेलेडोना देनेसे फायदा होता है।

कैल्केरिया—सरमें दर्द, कानमें दर्द, दाँतमें दर्द। सब शरीरमें दर्द, बुखार दब जाने या पल्सेटिलासे फायदा न होनेपर।

सिड्रन—क्विनाइन या चायनाके अपव्यवहारके कारण कानमें भों-भों शब्द होना।

इयुकेलिप्टस—क्विनाइनके अपव्यवहारसे सरमें दर्द, कानमें भों-भों शब्द होना और इन्फ्लुएंजा या सर्दी होनेके पहले, शरीर जैसा खराब रहता है, वैसा ही रहना।

फेरम—पैरमें सूजन।

पल्सेटिला—कानमें दर्द, दाँतमें दर्द, सरमें दर्द, क्विनाइनसे बुखार बन्द होने बाद अंग-प्रत्यंगमें दर्द होनेपर।

लैकेसिस—क्विनाइनसे बुखार दबा देने बाद और पल्सेटिलासे फायदा न होनेपर।

मर्क्यूरियस—यकृत (खासकर कामला) या प्लीहा रोगमें।

नेट्रम-म्यूर—क्विनाइनके अपव्यवहारकी वजहसे बराबर हिचकी आती हो, क्विनाइनसे बुखार या मैलेरिया दबा देनेपर।

विरेट्रम—शरीरमें पसीना होता हो और ठण्डा हो; कब्जियत या अतिसार।

क्विनाइनसे बुखार एकदम दब जानेपर :—आर्निका, आर्सेनिक, बेलेडोना, केल्केरिया, कार्बो वेज, सिना, फेरम, इपिकाक, लैकेसिस, मर्क, पल्सेटिला, सल्फर। जब क्विनाइन देनेके बाद भी बुखार रहे, तो पहले इपिकाक; पीछे आर्सेनिक, कार्बो-वेज, लैकेसिस, पल्सेटिला, आर्निका, सिना या विरेट्रम और अन्तमें—केल्केरिया, मर्क्यूरियस, बेलेडोना और सल्फर देना चाहिये।

ये सब दवाएँ ६—३० शक्तिकी प्रयोगकी चाहियें।

संखिया (Arsenic)

सखिया सेवनसे जहर फैलनेपर पहले Stomach pump द्वारा या सरसों पीसकर या थोड़ा रेड़ीका तेल या कोई दूसरी कै करानेवाली दवा खिलाकर पाकाशयको खाली कर देना चाहिये। इसके बाद अंडेका सफेद हिस्सा या ब्रांडी अथवा कोई दूसरी उत्तेजक दवा खिलानी चाहिये। भयदायक लक्षण दब जानेपर इपिकाक ३, इसके बाद चायना ३x या नक्स-वोमिका १x देना चाहिये ("जहर खाना" देखिये)।

आर्सेनिकके अपव्यवहारसे पैदा हुई बीमारीमें—इपिकाक ३, चायन ३, नक्स-वोमिका १x—३, विरेट्रम ६ देना चाहिये।

अफीम (OPIUM) या मार्फिया
(Lodanum)

ज्यादा मात्रामें अफीम खानेपर अगर उसके जहर फैल जाये, तो स्टामक पम्प (stomach pump) द्वारा या सरसोंकी बुकनी खिलाकर कै करा देनी चाहिये। इसके बाद बेहोशी दूर होनेपर, इपिका १x जल्दी जल्दी देना चाहिये। यदि इपिकाक खिलानेपर भी कुछ उपकार न हो, तो नक्स वोमिका १x—३, मर्क ३ या बेलेडोना ३ या ऐसेटिक-

एसिड ३ देना चाहिये। 'आपोमार्फिया नामक दवा कभी न खिलाई जाये। आकस्मिक दुर्घटना अध्यायमें "जहरकी मात्रामें अफीम" देखिये।

रोज अफीम खानेवाले अगर अफीम छोड़ दें और इस वजहसे शरीरमें सुस्ती मालूम हो, तो ऐवेना सैटाइवा ॰ पाँच बून्द दिनमें तीन बारके हिसावसे सेवन करना चाहिये। यदि इससे भी फायदा न हो, तो कैमोमिला ६, काफिया ६, ३० या कैनाबिस इण्डिका १x—३० देना चाहिये।

अफीम या मार्फिया खानेकी अगर आदत हो तो, उसे छोड़नेके लिये भी ऐवेना बढ़िया दवा है। रोज अफीम खानेवालेको आधा छटाक गर्म पानीमें दस बुन्द ऐवेना दिनमें दो वार खिलाने और अफीमकी मात्रा धीरे-धीरे घटाते रहनेपर तकलीफ नहीं होती। अफीम छोड़ने वाद भी कुछ दिनोंतक ऐवेना खिलाते रहना चाहिये। खूब गर्म या ठण्डे पानीसे नहाना फायदेमन्द है।

कोकेन (Cocainism)

यह दक्षिण अमेरिकाके कोको नामक पेड़के पत्तेसे वना हुआ एक तरहका क्षार है। आजकल इस देशमें कोकेन खूब चल रही है। शराबकी तरह यह भी उत्तेजक है। इससे शरीरकी थकन तो मिटती है; परन्तु धीरे-धीरे मात्रा न बढ़ाते रहनेपर कोकेन खानेवालोंको तृप्ति नहीं होती। वहुत दिनोंतक इसे खानेपर भूख न लगना, चेहरा पीला, आँखें गड़हेमें घँसी, नींद न आना, याददाश्तकी कमी, ऐसा मालूम होना कि शरीरपर कीड़ा रेंग रहा है, मानसिक शक्तिका घटना, नीतिहीन, भ्रान्त या अवास्तव चीजें देखना, वरावर कोकेन खाना, पागलपन और अन्तमें मृत्युतक हो जाती है।

चिकित्सा—एकदम (धीरे-धीरे नहीं) कोकेन खाना छोड़ देना पड़ेगा। कोकेन छोड़नेके बाद सुस्तीको दूर करनेके लिये काफी, अलकोहल, एमोनिया, आक्सीजन वगैरह उत्तेजक दवाएँ लाभ करती है। यदि खींचन हो, तो क्लोरोफार्म देना चाहिये। स्ट्रिकनिया या डिजिटेलिसकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। डा० वोरिकका कहना है, कि जेलसिमियम इसका जहर दूर करनेकी उत्तम दवा है। जेलसिमियम १x—३० कुछ दिनोंतक सेवन करनेसे इसकी बुराई दूर हो सकती है। Pelley का कथन है कि दस्तावर (purgative) दवा खानेसे इसका जहर शरीरसे निकल जाता है। पुष्ट और जल्दी पचनेवाली हल्की चीजें खानेको देनी चाहियें।

शराब (Alcohol)

रोज शराब पीनेवालोंको शराब छोड़ देनेके बाद अगर शराब पीनेकी बहुत इच्छा हो, तो उसे दबानेके लिये चायना θ या ऐवेना θ या स्ट्रोफैन्थस θ दिनमें तीन बारके हिसाबसे फी मात्रा पाँच बन्द या काली काफी पिलाना चाहिये, इसके बाद नक्स-वोमिका १x—३ अथवा सल्फर देना चाहिये।

ब्राण्डी पानीकी प्रबल इच्छा होती हो, तो सल्फ्युरिक-एसिड ३। कोएरकस ग्लेण्ड ३x कुछ अधिक दिनोंतक व्यवहार करनेपर शराब पीनेकी इच्छा बन्द हो जाती है।

किशमिश, मुनक्का, संतरे वगैरह खाना फायदेमन्द है। बहुत दिनोंतक शराब पीनेके कारण अगर "उन्माद" रोग हो जाये, तो "प्रलाप-कम्पन उन्माद रोग" देखिये।

मधु (Honey)

शहद ज्यादा खानेमें आया हो, तो पहले स्पिरिट कैम्फर या कपूरकी गन्ध लेनी चाहिये ; पीछे गर्म चाय या काली काफी पिलाना चाहिये ।

तम्बाकू (Tobacco)

ज्यादा तम्बाकू खानेसे आँखें, स्नायु, पाकाशय या गलेके बिचला भाग यदि आक्रान्त हुआ हो, तो तम्बाकू छोड़ देनी चाहिये और रोग नक्स-वोमिका १x—३ या स्पिरिट कैम्फर सेवन करना चाहिये ।

तम्बाकू खानेसे यदि अच्छी तरह दिखाई न दे (या रातमें रोशनी धुँधली मालूम हो), तो इस लक्षणमें फास्फोरस ३ । तम्बाकू खानेके कारण अजीर्ण रोग होनेपर, नक्स-वोमिका ३x । तम्बाकू खानेके कलेजा धड़कता हो, तो स्पाइजिलिया ३ । धूम्रपानके कारण गलेमें घाव होनेपर, केल्केरिया फास क्विूर्ण ३ । धूम्रपानकी इच्छा बन्द करनेके लिये, चायना ३ का प्रयोग करना चाहिये ।

काफी (Coffee)

काफी-पीनेकी वजहसे पुरानी बीमारी अगर हो जाये, तो कैमोमिला ६, नक्स वोमिका ३, इग्नेशिया ३, मर्क्यूरियस ३ या सल्फर ६ देना चाहिये ।

चाय (Tea)

बहुत अधिक मात्रामें चाय पीना या बहुत दिनोंतक चाय पीते रहनेपर साधारणतः नीचे लिखे उपसर्ग दिखाई देते हैं :—बहुत बेचैनी, स्नायविक दौर्बल्य, मानसिक अवसन्नता, नींद न आना, कभी-कभी अजीर्ण, हाथ काँपना, सरमें दर्द, सरमें चक्कर, कलेजा धड़कना वगैरह ।

चायके अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्गोंको फेरम ६ एक बढ़िया दवा है। पुराने चाय पीनेवालोंको अगर अनिद्रा, हृद् रोग, कलेजा धड़कना, अजीर्ण वगैरह हो जाये, तो "थिया" ३x। पेटमें ऐंठन; थोड़ा भोजन भी सहन न होना, लक्षणमें चायना ३। ज्यादा परिमाणमें चाय पीनेकी वजहसे पेट फूलता हो और स्नायविक दुर्बलता हो, तो थूजा ६। ज्यादा मात्रामें चाय पीनेकी वजहसे पैदा हुए उपसर्गोंको दूर करनेके लिये थूजा ३०—२०० हफ्तेमें सिर्फ एक बार सेवन करना चाहिये। दूसरी दवाएँ—सेलिनी ६, काफिया ६, लैकेसिस ६, विरेट्रम ६ की भी कभी-कभी जरूरत हो सकती है।

बरफ, कुलफी या आइस-क्रीम

इनके अपव्यवहारसे पचनेकी क्रियामें बाधा पड़ती है और पेट फूलता है तथा कै होती है। बरफ या बरफका पानी पीनेके बादवाली बीमारीमें कार्बो-वेज ६। आइस-क्रीम खानेके बादवाली बीमारीमें आर्सेनिक ६। धूपमें-घूमने, आगके सामने रहने (या किसी दूसरे कारणसे) शरीर खूब गर्म मालूम होनेपर, बहुत लोग बरफ या बरफका पानी पिया करते हैं। उससे शरीरपर (खासकर चेहरेपर) दाने (eruptions) निकल आते हैं। बेलिस पेरेनिस ३x इसकी बढ़िया दवा है।

कुछ दूसरी दवाओंका अपव्यवहार

ब्रोमाइड आफ पोटासके अपव्यवहारमें—हेलोनियम θ सेवन।
कैम्फरके अपव्यवहारमें—कैन्थरिस ६, काफिया ३, ओपियम ३।
क्लोरेलके अपव्यवहारमें—कैनाबिन θ।
क्लोरेलके अपव्यवहारमें—हाइड्रैस्टिस θ।

काड-लिवर आयलके अपव्यवहारमें—हिपर ६ ।

अँचार चटनीके अपव्यवहारमें—नक्स-वोम १x—३ ।

डिजिटेलिसके अपव्यवहारमें—नाइट्रिक-एसिड ६ ।

"सभी गर्म" दवाओंके अपव्यवहारमें—नक्स-वोम १x—३ ।

आगटके अपव्यवहारमें—चायना १, नक्स १, सोलेनम-नाई ३ ।

आयोडाइडके अपव्यवहारमें—हिपर ६, पल्स ३ ।

लोहेसे बनी दवाके अपव्यवहारमें—हिपर ६, पल्स ३ ।

सीसा (प्लम्बम) के अपव्यवहारमें—ओपियम १x, ऐल्यूमेन ६, कैलि-आयोड θ, एसिड-सल्फ ३x, लेमोनेड ("सीसक-शूल" रोग देखिये)।

आर्जेण्टम-मेटके अपव्यवहारमें—"नेट्रम-म्यूर" ३० ।

आर्जेण्टम-नाइट्रेडके अपव्यवहारमें—"नेट्रम-म्यूर" ३०, आर्स ३, आयोड ६, मर्क ६, दूध, नमक ।

फास्फोरसके अपव्यवहारमें—लैकेसिस ६ ।

नमकके अपव्यवहारमें—नाइट्रिक-स्पिरिट-डलसिस θ; आर्स ३ ।

स्ट्रैमोनियम (धतुरा) के अपव्यवहारमें—टैबेकम ३ ।

स्टिकनाइनके अपव्यवहारमें—युकेलिप्टस θ, कैलि-ब्रोम θ ।

चीनीके अपव्यव्यवहारमें—नेट्रम-फास ६x चूर्ण ।

छोटी उम्रमें धूम्रपानके उपसर्गमें—आर्ज-नाई ३, आर्सेनिक ६, विरेट्रम-ऐल्ब ६ ("तम्बाकू" देखिये) ।

तारपीनके अपव्यवहारमें—नक्स-मस्केटा २x ।

उद्भिद औषध (vegetable drugs) मात्राके अपव्यवहारमें—कैम्फर θ, नक्स-वोम १x, ३ ।

विरेट्रमके अपव्यवहारमें—कैम्फर θ, काफिया ३ ।

कैलि-आयोड (iodide of potash) के अपव्यवहारमें—हिपर-सल्फर ६, २०० ।

चैतन्य-नाशक (anæsthetic) धुआँ साँसके साथ शरीरमें जानेपर—ऐसेटिक एसिड ३, हिपर ६, फास्फोरस ३ सेवन और ऐमिल-नाई θ सूँघना चाहिये।

गैस, काठका कोयला वगैरह धुएँकी खराबीमें—ऐमोन-कार्ब ३, आर्निका ३x, बोविस्टा ३।

जो नशीली (narcotic) दवा सेवनसे नींद आकर दर्द कम होता हो—ऐसेटिक-एसिड ३, ऐपोमार्फिया ३, कैनाबिस-इण्डिका θ, कैमोमिला ३।

ताँबे या पीतलके वर्त्तनमें भोजन बनाकर खानेके बाद बदन गर्म मालूम हो या जहरीला हो जाय—हिपर ३०।

रसांजन (antimony) के अपव्यवहारमें—हिपर ३०, मर्क २००, कैल्के-कार्ब ३०।

क्लोरोफार्म (chloroform) के अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्गमें—ऐमिल-नाइट्रेट सूँघना ;

ईथरके अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्गमें—रोगीको सुलाये रखना और ऐमिन-नाइट्रेट सुँघाना, क्विनाइन, बेल, स्ट्रिकनिन।

विशेष विवरणके लिये "परिशिष्ट ख" देखिये।

आकस्मिक दुर्घटना
(Accidents)

आगमें जलना—आगमें जलनेपर छाले पड़ जाते हैं, जखम हो जाता है, इससे मौततक हो सकती है।

पहननेके कपड़ेमें आग लगते ही, जमीनपर लेटनेसे और तुरन्त जलते हुए कपड़ेपर शतरंजी, तकिया, गद्दी, गलीचा वगैरहसे दबा देनेसे

आग बुझ जाती है। दौड़ने या पानीसे बुझानेकी कोशिश करनेपर भारी विपत्तिका डर है; क्योंकि हवा लगकर आग और भी बढ़ जाती है।
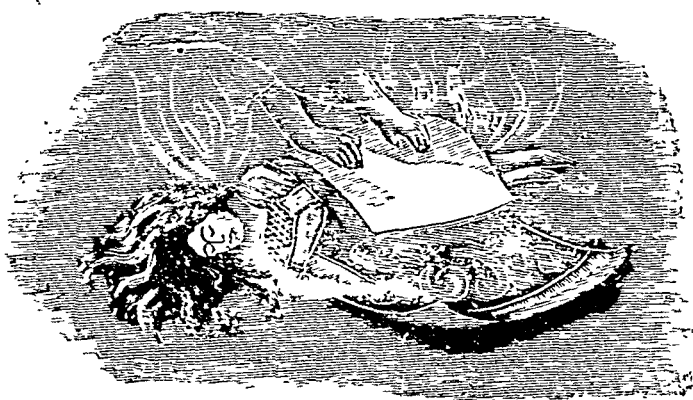
आग बुझाना—शतरञ्जी, गद्दी वगैरहसे दबाना

जले हुए स्थानका चमड़ा उजाड़ना न चाहिये। जले हुए स्थानपर हवा न लगने पाये, इसलिये, जलते ही (और इलाज करनेवालेके न आनेतक), थोड़ा सरसों या नारियलका तेल और चूना मिलाकर जले हुए स्थानपर लगाना चाहिये। यदि तेल या चूना न मिले, तो सिर्फ मैदा (या आँटा) या आरारूट जली हुई जगहपर छिड़क देना चाहिये।

थोड़ा या बहुत स्थान जलनेपर या छाले हो जानेपर, जली हुई जगह सोडासे ढँक रखने और उसपर गीला कपड़ा भिगोकर रखनेसे बहुतसे चिकित्सकोंने बहुत-कुछ फायदा होते देखा है; परन्तु डाक्टर डन (G. W. Dunn) के मतसे कैन्थरिस १x—६x लगाना और १२x—३० सेवन करना, सोडासे भी अच्छी दवा है। उनका कहना है, कि इसी अर्कसे जला हुआ स्थान हमेशा तर रखनेसे फफोला या जखम कुछ भी नहीं होता (The Hom. Recorder. Dec. 1912 देखिये।

चिकित्सा—थोड़ा-सा जलकर फफोला होनेपर, केन्थरिस (या यार्टिका युरेन्स) θ मूल अरिष्ट एक ड्राम, एक औंस पानी मिलाकर उसमें कपड़ेका एक टुकड़ा भिगोकर जले हुए स्थानपर पट्टी लगानी चाहिये। दवाकी सुविधा अगर न हो तो जले हुए स्थानपर सरसों या नारियलके तेलसे भिगोकर उसपर मैदा या आरारूट छिड़ककर अथवा नारियलके तेलमें चूनेका पानी मिलाकर जले हुए स्थानपर लगानेसे फायदा होता है। आलू या पोईको सागका पत्ता पीसकर या पका केला छील और मलकर या नारियलका तेल और चूनेमें फेन पैदाकर अथवा गुड़, शहद या ताजा गोबर जले हुए स्थानपर लगा देनेसे, जलन बन्द हो जाती है और फोला भी नहीं पड़ता। जली हुई जगह गर्म, फूली, बुखार, प्यास, बदनका चमड़ा सूखा, भय और मनमें उद्वेग वगैरह लक्षणोंमें ऐकोनाइट ३x सेवन कराना चाहिये। आगमें जलकर काले रंगका छाला, जली हुई जगहपर जलन, बुखार, तेज प्यास, बहुत कमजोरी, मृत्युका भय वगैरह लक्षणोंमें आर्सेनिक ६। जखमवाली जगहमें पीव हो जानेपर हिपर ६ सेवन और एक भाग कैलेण्डुला θ दस भाग जैतूनका तेल (olive oil) के साथ मिलाकर लगाना चाहिये। जखम रोज हुक्केके पानीसे धोना चाहिये। जखममें सड़ना आरम्भ होनेपर, साइलिसिया ३०। जली हुई जगह ढँक रखना चाहिये, जिसमें हवा न लगने पाये। जबतक रूई खूब गन्दी न हो जाये, तबतक उसे बदलना न चाहिये (क्योंकि बार-बार रूई बदलनेसे जली हुई जगहपर नया चमड़ा जल्दी पैदा नहीं होता। हल्का भोजन देना चाहिये, उत्तेजक चीजें मना है।

मांस-पेशीका अवसाद—कसरत उछल-कूद, फुटबाल वगैरह खेलनेकी वजहसे मांस-पेशियाँ सुस्त पड़ जायें, शरीरमें दर्द और छाले हो तो आर्निका ३x बढ़िया दवा है। जरूरत पड़नेपर थोड़े गर्म पानीसे बदन पोंछ डालना चाहिये।

कटी जगहसे खून गिरना—हाथ, पैर, अंगुलियाँ वगैरह कटकर वहाँसे खून निकलनेपर, एक साफ कपड़े (या वस्त्रखंड) को गर्म पानीमें भिगोकर उस कटी जगहपरकी धूल साफ करना चाहिये। इसके बाद एक टुकड़ा कपड़ेकी गद्दी जैसा बनाकर उसे तरकर उस स्थानपर रख देनेसे खून गिरना बन्द हो जाता है। अन्तमें १५ बून्द केलेण्डुला θ आध छटाक पानीमें मिलाकर उस कटी हुई जगहके जखमपर पट्टी लगा देनी चाहिये। सावधान, कटी जगहपर धूल, बालू वगैरह न गिरने पाये।

शिरा या धमनी कटकर खून गिरना—एकाएक कोई शिरा या धमनी कट जानेपर उस कटी शिरा या धमनीसे शरीरका सब खून निकल जा सकता है। इस अवस्थामें अवश्य मौत हो जाती है। इसलिये, तुरन्त इसे बन्द करनेकी चेष्टा होनी चाहिये।

यह खून बहना बन्द करनेके पहले, यह स्थिर करना चाहिये, कि "यह खून धमनीसे निकल रहा है या शिरासे।" हृत्पिण्ड और रक्त-वहा नाड़ी" शीर्शक प्रबन्धमें बताया गया है, कि (१) धमनीका खून हृत्पिण्डसे शरीरकी सब जगहोंमें जा पहुँचता है और धमनी कट जानेपर "लाल खून झोंकसे" वहाँसे निकलता है और (२) शिराका खून सब जगहोंसे हृत्पिण्डकी ओर दौड़ता है और शिराके कट जानेसे "काला या बैंगनी खून धीरे-धीरे समान भावसे निकलता है।"

इसलिये एकदम "लाल खून" बन्द करनेके लिये धमनीका जो कटा मुँह हृत्पिण्डकी ओर है (अर्थात ऊपरकी ओरके कटा मुँह), उसे दवाकर पकड़ रखना चाहिये या वांध देना चाहिये और धुमैला खून बन्द करनेके लिये कटी नसका नीचेका मुँह दवाकर पकड़ रखना चाहिये या वांध रखना चाहिये। हाथ या हाथकी अंगुलीसे कटी शिरा जोरसे तवतक पकड़ रखनी होगी, जबतक खून बहना बन्द न हो जाये या चिकित्सक आकर बैण्डेज न वाँध जाये।

जहाँ डाकर न मिल सकता हो, वहाँ नीचे लिखी सहज तरकीबसे बेण्डेज बाँध देना चाहिये :—

(१) अगर कटी धमनी या शिरा त्वकके खूब पास हो, तो मोटे डोरे, फीता या डोरी या रूमालसे धमनीके "ऊपरकी तरफ" या शिराके नीचे कसकर बाँध देना चाहिये। इसी बन्धनका नाम "बेण्डेज" है।

(२) परन्तु अगर कटा गहरा हो, तो नीचे लिखी तरकीबसे खूब कसकर बेण्डेज बाँधना चाहिये :—एक लम्बा चीथड़ा डोरीकी तरह बटकर कटी जगहको बाँधना चाहिये ; इसके बाद उस बँधी हुई रस्सीकी तरह कपड़ेको और शरीरके नीचे (अथवा बेण्डेजमें गाँठ लगानेके छिद्रमें) एक पेन्सिल, कलम या कैंची घुमाकर, जबतक खून गिरना बन्द न हो जाये, वह कैंची, पेन्सिल या कलम चारों ओर घुमना या ऐंठना चाहिये, खून निकलना बन्द होनेपर कुछ देरतक वह कटे हुए अंगपर बँधो रहे।

कटी धमनीसे खून निकलना बन्द होनेपर, आर्निका ३x सेवन और कैलेण्डुला θ (अठगुने पानीके साथ मिलाकर) पट्टी लगाना या धोना चाहिये। कटी शिराका खून गिरना बन्द होनेपर, हैमामेलिस ३x सेवन और हैमामेलिस θ (अठगुने पानीमें मिलाकर) पट्टी लगाना, धोना चाहिये। सावधान, कटे जखमपर आर्निकाका वाहरी प्रयोग कभी न करना चाहिये। यह सेलुलाइटिस पैदाकर बहुत खराबी ला सकता है। जिन सब कुचल जानेकी चोटमें खून नहीं निकलता, उनमें आर्निकाका वाहरी प्रयोग हो सकता है।

नाकसे खून गिरना—इस ग्रन्थकी नाककी बीमारी अध्यायमें "नाकसे खून गिरना" देखिये।

दाँतकी जड़से खून निकलना—दाँत उखाड़ने वगैरह कारणोंसे कभी-कभी खून निकलता है और इससे रोगी कमजोर भी हो जाता है।

चिकित्सा—लाल खून निकलनेपर, आर्निका θ एक भाग (दसगुने पानी में मिलाकर) उसमें थोड़ा कपड़ा भिगो उसकी तही बना, दाँतके मसूढ़ेके घावकी जगह जोरसे दबा रखनी चाहिये। इसके बाद, उतना ही बड़ा एक काग (cork) उसके ऊपर रखकर मसूढ़ेपर दबानेसे खून बहना हो जाता है। यदि खून सब लाल निकलता हो, तो आर्निका θ के बदले हैमामेलिस θ देना चाहिये।

आघात—कटा, बिंधा, चिरा, कुचला हुआ या मोच खाना वगैरह कितनी ही तरहसे आघात प्राप्त होता है। चोटकी वजहसे चमड़ा छिलकर घाव या जखम होता है।

चिकित्सा—चोटवाली जगहसे खून निकलना बन्द करना उचित है। जखमका मुँह ऊपरकी ओर रखकर ठण्डे पानीकी या बरफकी जलपट्टी देनेसे फायदा होता है। कटी जगहपर दूब चबाकर या पीसकर लगा देने या ताजा गोबर या चीनी देकर* बाँध देनेसे खून गिरना बन्द हो सकता है। अगर चोटकी वजहसे जखम हो जाये (अथवा गिर

---

* जखमपर चीनी लगाना—जर्मनीमें डाक्टरोंने गत युरोपीय महायुद्धमें घायल सिपाहियोंके जखममें चीनी देकर उसे अच्छा किया था। इससे आश्चर्यजनक फल होता है। लगानेका ढङ्ग भी बहुत सहज है। दानेदार चीनीसे जखमको ड्रेसकर बांध दिया जाता है। चीनी किसी फैलनेवाली बीमारीको नहीं रोक सकती और जबतक खून निकलना बन्द न हो जाये, तबतक चीनी लगानी भी न चाहिये। साफ किये हुए जखमपर चीनीका प्रयोग करनेसे जखम बहुत जल्द अच्छा हो जाता है, फिर ड्रेस करनेके समय जखमको धोना नहीं पड़ता; दो या तीन दिनका अन्तर देकर चीनी देना भी अच्छा है। जिस जखममें मांस जोड़नेकी जरूरत नहीं रहती, उसमें भी चीनीसे फायदा होता है। (सम्मिलिनी)—डाक्टर श्रीकार्त्तिकचन्द्र वसु, एम० बी० महाशय द्वारा सम्पादित "स्वास्थ्य-समाचार" जेठ १३२३ फसली।

आर्निका ३x—६। चोट लगकर बहुत ज्यादा खून निकलनेकी वजहसे कमजोर हो जानेपर, चायना ६ या आर्सेनिक ३। चीनी या गन्धककी बुकनो चोटवाली जगहपर बाँध देनेसे खून बन्द होता है और कटनेका जखम भर जाता है। हल्की चीजें खानेको देनी चाहियें।

बन्दूक या पिस्तौलकी गोली वगैरह लड़ाईके अस्त्र द्वारा घायल होनेपर—प्रदाहकी हालतमें फेरम-फास १x या ऐकोनाइट ३x सेवन करना चाहिये। खून खराब होकर सड़ना आरम्भ होनेतक लेकेसिस ६ या एकिनेशिया θ सेवन कराना और कैलेण्डुलाकी जलपट्टी देनेसे पीव पैदा नहीं होता। बारूद ३x विचूर्ण (gun-powder ३x) सेवन करनेके विषयमें पहले ही कहा जा चुका है ("आघात" देखिये): चमड़ा छिलकर बहुत कष्ट, धनुष्टंकार, निगल न सकना, लक्षणमें—हाइपेरिकम ३०—१००० बहुत फायदा करता है।

सरमें चोट—यदि चमड़ा न छिला हो, तो ऊपर कही हुई रीतिसे आर्निकाकी पट्टी लगा देनी चाहिये ; परन्तु अगर चमड़ा कटा हो, तो कैलेण्डुला θ (६० बून्द) एक छटाक पानीमें मिलाकर पट्टी बाँधनी चाहियें। बुखार और समूचे शरीरमें दर्द रहनेपर आर्निका ६ और ऐकोनाइट ६ (पर्यायक्रमसे) खिलानेकी भी कोई-कोई राय देते हैं।

अगर सरमें गहरी चोट आनेकी वजहसे रोगी बेहोश हो जाये, तो आर्निका ३ जीभमें लगा देना चाहिये। जबतक रोगी होशमें न आ जाये, तबतक उसे पुकारकर होशमें लगाना उचित नहीं है। होशमें आनेके बाद अगर रोगीको दर्द हो, तो आर्निका ३ ; बुखार होनेपर ऐकोनाइट ३ देना चाहिये।

मस्तिष्कका विकम्पन (Concussion of the brain)—सरमें ज्यादा चोट लगने, गिर जाने वगैरह कारणोंसे दिमागके काममें गड़बड़ी हो या बन्द हो जाये, तो उसे "मस्तिष्कका विकम्पन" कहते हैं। एकदम या थोड़ी बेहोशी, चेहरा मलिन, द्रुत, अनियमित, क्षुद्र या

लुप्तप्राय नाड़ी, कमजोर और अनियमित साँस, हाथ पैर ठण्डे, पुकारनेपर जागता या जवाब देता हो, पर तुरन्त ही बेहोश हो जाता हो वगैरह इस रोगकी पहली अवस्था है। इसके बाद प्रतिक्रिया आरम्भ होती है अर्थात् रोगी होशमें आता है, शरीरकी गर्मी बढ़ती है (१०१°—१०२°), बेचैनी, वमन आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

चिकित्सा—पहले आर्निका ३x सेवन करना चाहिये। बुखार होनेपर ऐकोनाइट ३x। सरमें दर्द, चेहरा तमतमाया, फूला वगैरह लक्षणोंमें बेलेडोना ३। साँसमें घरघराहट होनेपर ओपियम ३ फायदा करता है।

रोगीको गर्म बिछावनपर सुलाया जाये और उसकी बगलमें और हाथ-पैरोंमें सेंक दिया जाये। पहले सर नीचा रखकर सुलाना पड़ता है, इसके (बाद अर्थात् प्रतिक्रिया आरम्भ होनेपर) सर और कन्धेको कुछ ऊँचा कर दिया जाता है। रोगीको किसी हालतमें कुछ खिलाया या पिलाया न जाये।

काला दाग पड़ना—कभी-कभी चोटवाली जगहसे खून नहीं निकलता और वह जगह नीली पड़ जाती है। इसीका नाम "काला दाग पड़ना" है। ऐसी अवस्थामें यद्यपि खून बाहर नहीं निकलता ; पर रक्तवहा नाड़ियाँ (blood-vessels) कटकर खून निकलता है और वह खून भीतर ही रह जाता है, उसी वजहसे इस तरहका काला दाग पड़ जाता है। चोट लगते ही आर्निकाकी जलपट्टी देनेपर अक्सर वह काला दाग नहीं पड़ता। यदि आर्निकाके प्रयोग करनेपर काला दाग न अच्छा हो, तो हैमामेलिसकी जलपट्टी देनी चाहिये। अगर कोई दवा न मिले, तो ऐसे काले दागवाली जगहको ठण्डे पानीसे धोकर सेंकनेसे दर्द और सूजन कम हो जाती है।

मोच खाना—रबर जैसी रस्सीसे पैरकी ऐंड़ी, कलाई वगैरहमें गांठ पड़ी रहती है ; चोट लगनेपर वह रस्सी टूट जाती है या अपनी

जगहसे हट जाती है। इसीको 'मोच खा जाना' कहते हैं चोटवाली जगहमें दर्द होता है और वह फूल जाता है। खास-खास हालतमें आर्निका, सिम्फाइटम (हड्डी टूटनेपर), हाइपेरिकम, रूटा वगैरह दवाएँ खिलायी और लगायी जा सकती है (θ—६)। एक हिस्सा मदर टिंचर, दसगुने पानीके साथ मिलाकर आर्निका आदि दवाओंका वाहरी प्रयोग किया जा सकता है।

मोच खाये हुए अंगको जहाँतक बने, हिलाया-डूलाया न जाये। दवा न मिल सके तो हल्दी और चूना (अर्थात् पीसी हल्दीमें थोड़ा चूना और नमक या सोरा मिलाकर, गर्मकर लगाना चाहिये) मोच खायी हुई जगहपर गर्म-गर्म लगाकर बैण्डेज बाँध देना चाहिये। इस तरह दो-तीन बार गर्म-गर्म "हल्दी चूना" बाँधनेसे सूजन और दर्द कम हो जाता है।

कुचल जाना—शरीरका कोई हिस्सा ; कड़ी चीजकी सामान्य या गहरी चोटसे कट न जाये (उससे खून न निकले), तो उसे "कुचल जाना" कहते हैं। इस दशामें चोटवाली जगहके भीतरकी खून बहानेवाली छोटी-छोटी नाड़ियाँ कटकर खून जम जाता है, इसी वजहसे वह नीली या काली मालूम होने लगती है। भीतर गहरे अंशमें चोट होनेपर उसमें पीव पैदा हो जा सकता है।

चिकित्सा—एक भाग आर्निका θ दस भाग पानीके साथ मिलाकर चोटवाली जगहपर पट्टी लगानेसे फायदा होता है। पट्टीके ऊपर केलेका पत्ता और कपड़ा बाँधना चाहिये। वुखार या शरीरके दूसरे-दूसरे हिस्सोंमें दर्द मालूम होनेपर, आर्निका ३x सेवन करना उचित है। चोटवाली जगहके चारों ओर छोटी-छोटी फुन्सियाँ निकल आयें और वह जगह काली पड़ जाये तो, हैमामेलिस θ एक भाग, छः भाग पानोंमें मिलाकर, आर्निकाकी तरह पट्टी लगानी चाहिये। हड्डीमें चोट लगनेपर रूटा १x। स्तन या कोई गांठमें चोट होनेपर कोनायम ३x। पीव

होनेकी सम्भावना होनेपर—हिपर-सल्फर ३० । सड़ना आरम्भ होनेपर आर्सेनिक ३० या सिलिका ३० देना पड़ता है।

प्रबल उपघात (Shock) तेज आघात या मानसिक उत्तेजनासे जीवनी-शक्तिके सुस्त पड़ जानेका नाम "प्रबल उपघात" है। शिकागो अस्र चिकित्सक Dr Howard Crutcher कहते हैं, कि प्रबल उपघातकी तीन प्रधान दवाएँ हैं—कैम्फर, कार्बो-वेजिटेबिलिस और विरेट्रम-ऐल्बम । बदन ठण्डा होनेपर—कैम्फर ; शरीर नीला होनेपर—कार्बो-वेज और कपालपर ठण्डा पसीना होनेपर—विरेट्रम-ऐल्बम फायदा करता है। मिचले साहबका कथन है, कि हृत्पिण्ड अगर अवसन्न हो जाये, तो वेरेट्रम-ऐल्ब ३ का प्रयोग करनेसे बहुत फायदा होता है। डा० ह्यूजेज कहते हैं, कि उपघातमें अगर स्नायविक उपदाहकी अस्वाभाविक उत्तेजना मालूम हो,तो ऐसी अवस्थामें वेरेट्रम-ऐल्बकी जगह आर्सेनिक ज्यादा फायदा करता है।

सवारीपर घूमनेके समय कै—गाड़ी, पालकी, रेल, स्टीमर, नाव वगैरह सवारियोंपर चढ़नेसे किसी-किसीका जैतरह कै होने लगती है। काक्युलस् ३—२०० इसकी बढ़िया दवा है।

पागल कुत्ता और साँप काटना—कटी हुई जगहका ऊपरी भाग रस्सीसे बाँध देना चाहिये। इसके बाद जिसके दाँतोंमें कोई बीमारी न हो, उसे यह स्थान चूस लेना चाहिये और उसी समय कास्टिक या गर्म लोहेसे उस स्थानको जला देना चाहिये या तेज छुरीसे उसके अगल-बगलकी जगह काट देनी चाहिये। (ज्यादा इलाजके लिये इसी अध्यायमें बताया "सर्पाघात" देखिये)।

पागल कुत्ता काटनेपर सात दिनोंके भीतर मासवाले डिस्ट्रिक्ट या सबडिविजनल गवर्नमेण्ट डिस्पेन्सरीमें जाकर दो सप्ताहतक रोजाना दो इञ्जेक्सनके हिसाबसे २८ इञ्जेक्सन लेनेपर फिर मृत्यु-भय नहीं रहता।

पागल कुत्ता, सियार, बन्दर आदि काट लेनेपर सातसे दस दिनोंके भीतर यदि मृत्यु न हो जाये, तो समझ लेना चाहिये कि वह जानवर पागल नहीं था।

कीड़े काटना—भौंरा, बर्रे, बिच्छू, कनखजूरा वगैरह काटनेपर, कटी हुई जगहसे पहले उसका डंक छुरीसे निकाल देना चाहिये। इसके बाद स्पिरिट कैम्फर, सरसोंका तेल या केरोसिन तेल या तम्बाकू या हुक्केका पानी या सुंघनी या नमक मिला हुआ पानी या एक प्याज पीसकर लगा देना चाहिये।* ज्यादा फूलनेपर एपिस ६ सेवन कराना चाहिये। बिच्छू काटनेपर सूरनका चूर या अरुईके पेड़की बुकनी लगानी चाहिये। मच्छर, खटमल या कोई विषैला कीड़ा काटनेपर या बर्हण्टी लग जानेपर अगर कोई अंग ज्यादा फूल जाये और वहाँ दर्द रहे, तो उस जगहपर पहले स्पिरिट कैम्फर या नेबूका रस लगाकर घसना चाहियें, इसके बाद चूना गर्मकर लगाना चाहिये और एपिस ६ सेवन कराना चाहिये। मछलीका काँटा गड़कर दर्द होनेपर गर्म पानीमें सोरा या नमक मिलाकर चोटवाले स्थानको उसमें डुबो रखनेसे फायदा होता है। मधुमक्खी काटनेकी वजहसे यदि खराबी हो, तो कार्बोलिक एसिड ३x—६ सेवन करनेसे तुरन्त फायदा होता है ; मकड़ी अगर काट ले, तो घीमें नमक मिलाकर लगानेसे फायदा होता है। चूहा काट ले, तो लेडम ६ अच्छी दवा है। साधारण कुत्तेके काटते ही काटी हुई जगह गर्म पानीसे अच्छी तरह धोकर उस जगहको कास्टिकसे जलना या पर्माङ्गनेट आफ पोटासकी बुकनी छिड़क देनी चाहिये। कुत्ता, सियार वगैरहके काटनेपर लोहेकी किसी चीजको आगमें लालकर दागना और स्ट्रैमोनियम ३x कई वार सेवन करना चाहिये और एक

---

* कैलेण्डुला और लिडमके प्रयोगसे भी लाभ होता है (डाक्टर Anshutz in Hom. Recorder of Aug. 1916 देखिये)।

इफ्वेतक थोड़ा भेली गुड़ दिनमें तीन बार खिलाना चाहिये। पागल कुत्ता या सियार काटनेपर "जलातंक" देखिये।

केकड़ा या बिच्छू काटनेपर—यदि कहीं बिच्छूने काटा हो, तो उसके विपरीत अंगके कानके छेदमें (अर्थात् किसीको दाहिने अंगमें काटा हो, तो बाएँ कानके छेदमें, बाएँमें काटा हो, तो दाहिने कानके छेदमें) थोड़े गर्म पानीमें कुछ नमक मिलाकर, उसे ४-५ बार देनेसे फायदा होता है। यदि ४-५ बार इस तरह नमकका पानी डालनेपर भी कोई फायदा न होता हो, तो थोड़े गर्म पानीमें साबुनका फेन पैदा कर उसमें थोड़ी चीनी मिला ४-५ बार उसे कानमें डाल देनेपर सब जलन और तकलीफ तुरन्त दूर होती है।

नाक, आँख या कानमें कीड़ा घुसना—आँखमें राख या धूल पड़नेपर मुलायम कागजकी बत्ती जैसी बनाकर, उसे गर्म पानीमें डुबो, उससे धूल या राख निकाल लेनी चाहिये। दूसरी आँख रगड़ते रहें। अकड़, कीड़ा या केश आँखमें गिरनेपर पलकको उलटकर, साफ कपड़ेकी नोकसे उसे बाहर निकाल लेना चाहिये। आँखोंको भूलकर भी रगड़ना न चाहिये। आँखोंमें चूना, कोयला या तम्बकूकी राख गिरनेपर तुरन्त आँखोंमें दही या ३० बुन्द विनिगर आधा औंस गर्म पानीमें मिलाकर आँखें धो डालनी चाहिये। चूना धुल जानेपर, कैलेण्डुला १० बुन्द (न हो तो नेबूका रस) एक छटांक पानीमें मिलाकर, आँखोंपर पट्टी देनी चाहिये। (खाली पानीसे आँखें न धोयी जायें, आँखें खराब हो जा सकती हैं) बालू या किसी धातुके कण आँखोंमें गिरनेपर अण्डेका सफेद अंश लगाना पड़ता है। कानमें लकड़ी या चूर जानेपर, थोड़े गर्म पानीकी पिचकारी देनेसे वह निकल जाता है।

कानमें कीड़ा जानेपर गर्म तेल कानमें डालनेसे कीड़ा मर जाता है। बीया या कोई दूसरी छोटी चीज नाक या कानमें जानेपर, बड़ी सावधानतासे चिमटीसे उसे बाहर निकाल लेना चाहिये। ("नाकके

छेदमें कीड़ा आदिका घुसना” अनुच्छेद देखिये)। नाक, कान या आँखसे केश वगैरह निकनेके बाद यदि आँखें ऐंठती हो, तो आर्निका ३ सेवन करना चाहिये।

श्वास-रोध—पानीसें डूबने, फाँसी लगाने या जहरीली **भाफ** शरीरमें घुसनेपर और पासकी जगहपर वज्रपात होनेसे एकाएक साँस रुक जाती है।

चिकित्सा—(क) **पानीमें डूबने या फाँसी लगानेकी वजहसे** साँस रुकनेपर :—

मुँह फाड़कर जीभ खींचकर वाहर निकाल देना अत्यन्त आवश्यक है ; इसके बाद मुँहके भीतर और नाकके छेदसे लार, श्लेष्मा प्रभृति निकालना होगा।

(१) पहने हुए कपड़ोंको उतारकर हाथ-पैरोंमें गर्म-गर्म सेंक देना चाहिये।
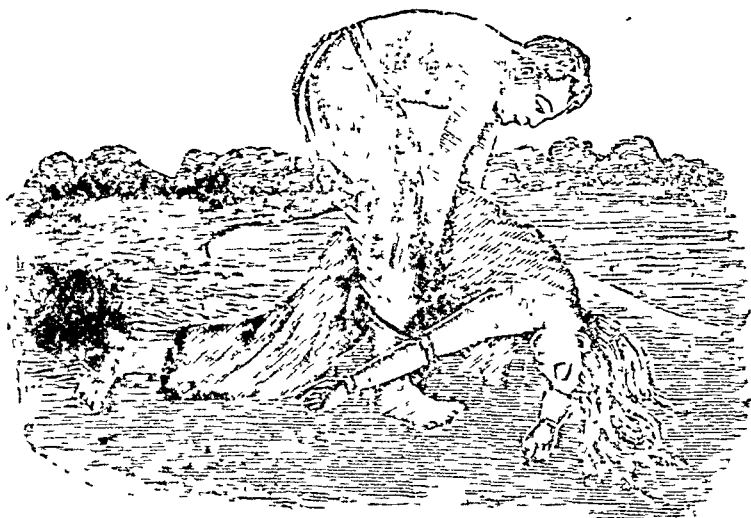
(२) फेफड़ेसे पानी निकालनेके लिये, रोगीको पट सुलाकर शरीरका निचला भाग इस तरह ऊँचा कर रखना चाहिये, कि सर

नीचेकी ओर झूल पड़े। पेट और छातीको हाथसे दबाना चाहिये। इसके बाद—
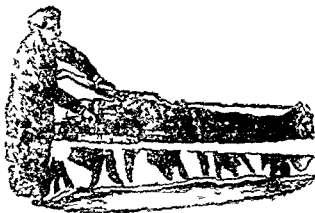
रोगीको चित्त सुलाकर, दोनों हाथोंसे उनकी दोनों केहुनी ऊपरकी ओर अच्छी तरह पकड़कर, एक बार ऊपर झोंका देकर उठाना चाहिये।
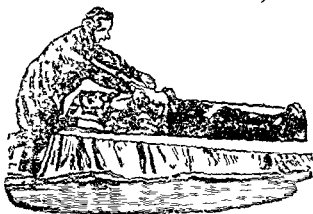
इसके बाद दोनों केहुनी मोड़कर छातीपर धीरे-धीरे, परन्तु कसकर दबा रखनी चाहिये।

कुछ देर तक यह प्रक्रिया करनेपर वह श्वास-क्रिया फिरसे जारी हो सकती है।

३। जीभ खींचकर बाहर निकालनेके बाद, रोगीके दोनों नाकोंका छेद बन्दकर, उसके मुँहमें कई बार जोरसे फूँकना चाहिये। प्रति मिनट १५-२० बार इस तरह करनेसे साँसकी क्रिया शुरू हो सकती है। ऐसी अवस्थामें ओपियम ३० देना चाहिये (अगर ओपियमसे फायदा न हो, तो ऐण्टिम टार्ट ३० या लैकेसिस २० देना चाहिये)।

राय :—सुश्रूषा करनेवालोंको किसी तरह हताश न होना चाहिये। देखा गया है, कि कई घण्टेतक धीरताके साथ रोगीकी इस तरह सेवा करनेपर उसकी साँस चलने लगी है।

४। साँस चलने लगे तो रोगीको गर्म बिछावनपर सुलाकर गर्म पानीके साथ दो एक बून्द शराब पिलाना चाहिये।

(ख) **वज्रपतन**से साँस रुक जानेपर—हवादार जगहमें बेहोश आदमीको अध-सोयी हालतमें अकड़न लगाकर बैठाना चाहिये और चेहरा, छाती और कन्धोंपर ठण्डे पानीका छींटा देना चाहिये। इसके बाद सूर्यकी ओर उसका मुँह रखकर नयी मिट्टी खोदकर, उस मिट्टीसे (अर्द्धशायी हालतमें ठेस देकर) सर और चेहरेको छोड़कर समूचा शरीर ढँक देना चाहिये। इस तरह कुछ देर रखनेपर वह होशमें आ सकता है; परन्तु इतना करनेकी भी यदि सुविधा न हो, तो बदनपर ठण्डे पानीका छींटा देनेसे ही काम चल सकता है; परन्तु सावधान! लोगोंकी भीड़से हवा बन्द होकर उसके साँस लेने या छोड़नेमें बाधा न पड़ जाये। रोगीमें निगलनेकी ताकत जब आ जाये, तो उसे नक्स वोमिका ३० सेवन कराना चाहिये। यदि बिजलीकी चमकसे देखनेकी ताकत जाती रहे, तो फास्फोरस ३० देना चाहिये।

(ग) सड़ा पाखाना, मोरी वगैरहकी "विषैली भाफ" की वजहसे साँस बन्द होनेपर, रोगीको तुरन्त खुली हवामें लाकर "पानीमें

डूबे हुए मनुष्यकी श्वासरोधवाली रीति" काममें लानी चाहिये। इस प्रक्रियासे यदि फायदा न हो, तो "वज्रपतन श्वासरोध चिकित्सा प्रणाली अवलम्बन करनी चाहिये। होशमें आ जानेपर, गाढ़ी काफी पिलाना और माथ तथा छातीपर सिर्का (vinegar) देना चाहिये।

सर्दी गर्मी—रोगीके कपड़े-लत्ते ढीलेकर रोगी को छाया रखना चाहिये। इसके बाद बरफ मिला ठण्डा पानी उसके सरपर डालना चाहिये (ज्यादा चिकित्साके लिये "सर्दी गर्मी" देखिये)।

बहोश या मुर्दे-जैसा पड़ जाना—इच्छा-शक्तिकी और मांस-पेशियोंकी सामर्थ्यकी कमीके साथ एकदम या थोड़ी बहुत बेहोशी हो जानेका नाम मूर्च्छा है। शरीरके रस रक्त आदिका क्षय या स्नायविक दुर्बलताकी वजहसे मानसिक वृत्तियों (जैसे—हर्ष शोक, भय आदि) की ज्यादाती, हिस्टीरिया वगैरह कारणोंसे "मूर्च्छा' हुआ करती है। ऐसे भी डरपोक मनुष्य हैं जो खून गिरने या किसीको गहरी चोट लगते या नश्तर लगते देखते ही बेहोश हो जाते हैं।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) बेहोशके समय—रुबिनीका स्पिरिट कैम्फर (न हो तो खाली कपूर) या मस्कस १x (कस्तूरी) सुँघाना और एकोनाइट १x सेवन कराना, (२) कमजोरीकी वजहसे होनेपर—चायना ३x ६, आर्स २x, आयोड ६, विरे विर १x, (३) हृत्पिण्डकी बीमारीकी वजहसे बहोशीमें—मस्कस ३, डिजि ३, विरे विर २x (रक्त सञ्चालन यन्त्रकी बीमारीके अध्यायमें "मूर्च्छा' देखिये), (४) हिस्टीरियाकी वजहसे बेहोशीमें 'हिस्टीरिया रोगकी" दवाएँ देखिये।

बेहोश होते ही, पासवाले मनुष्य भी घबड़ाकर नयी आफत पैदा कर देते हैं। यदि बेहोशीका कारण न मालूम हो, तो रोगीके बेहोश होते ही उसके गले, छाती और पेटका कपड़ा ढीला कर देना चाहिये और उसी समय उसे इस ढगसे सुला रखना चाहिये कि जिसमें उसका माथा उसके सब बदनसे नीचे झुका रहे (अथवा उसे चित्त सुलाकर)

उसके मुँह, माथे, गर्दनसे पीछे और पेटके ऊपर ठण्डा पानीका छींटा देना और हवा करना चाहिये। यदि वेहोशीकी वजह मालूम हो जाये, तो नीचे लिखी दवाएँ लक्षणके अनुसार देना चाहिये।

गहरे मनःकष्टकी वजहसे अगर वेहोशी हो, तो कैमोमिला ६। दुःखको दवा रखनेकी वजहसे वेहोशी होनेपर इग्नेशिया ६। ज्यादा क्रोधकी वजहने वेहोश होनेपर, ऐकोनाइट ३। भयकी वजहसे वेहोश होनेपर, ऐकोनाइट ३ या ओपियम ३०। रक्त-क्षयकी वजहसे वेहोश होनेपर, चायना ६। प्रेममें निराशाकी वजहसे मनके आवेगमें मुर्दा जैसा पड़ा रहना, लैकेसिस ६। नींद न आनेकी वजहसे वेहोशी होनेपर, काक्युलस ६। दर्दकी वजहसे वेहोशी होनेपर ऐकोषाइट ६, कैमोमिला ६, काफिया ६ या विरे-ऐल्व ६, शराब पीने या उग्र दवाएँ सेवन करनेकी वजहसे वेहोशी होनेपर, नक्स वोमिका १x, ३x। बहुत पारा (mercury) सेवनकी वजहसे वेहोश होनेपर, कार्बो-वेज ३०। वदनमें कुछ दर्द होकर वेहोशी होनेपर इपिकाक ३। सरमें चक्कर आकर वेहोशी होनेपर, कैमोमिला ६ या हिपर ६। गिरनेकी वजहसे वेहोशी होनेपर, आर्निका ३; परन्तु गिरनेके वाद रक्त-स्रावकी वजहसे वेहोशी होनेपर, चायना ६। न खानेकी वजहसे वेहोशी होनेपर, पहले वुन्द-वून्द गरम दूध, इसके बाद होशमें आनेपर शोरवा वगैरह दिया जा सकता है। सर्दी या वरफ लगनेकी वजहसे शरीर जकड़ गया हो, तो रोगीको खुली ठण्डी जगहमें लाकर खूब ठण्डा पानी या वरफ देकर घसना चाहिये (सावधान, आगसे सेंका न जाये, गर्म करनेसे मृत्यु हो जा सकती है)। वदनके सव अंग-प्रत्यंग नर्म और लाल होनेपर उसे सूखी शय्यापर सुलाकर, डण्डे फ्लानेल या पुराने साफ कपड़ोंसे वरावर घसना चाहिये और दस-पन्द्रह मिनट वाद दो-एक वुन्द स्पिरिट कैम्फर सेवन करना चाहिये। होशमें आनेपर, कार्वो-वेज ३०, आर्स ३० या ऐकोन ३x सेवन कराना चाहिये। मनकी किसी तेज वृत्तिके आवेगकी

वजहसे एकाएक वेहोशी हो जानेपर, यदि चेहरा पीला दिखाई दे, तो एपिस ६ या ग्लोनोइन ६ सेवन कराना होगा। बच्चोंकी क्रिमिकी वजहसे पैदा हुई बेहोशीमें, साइना २x—२०० वगैरह दवा देनी चाहिये।

सावधान, अगर बेहोशी दूर होनेके बाद के आरम्भ हो, तो उसे रोकनेके लिये कोई दवा न दी जाये या रोगीको नींद आ जानेपर उसे जगाया न जाये। "स्नायुमण्डलके रोग" और "मूर्च्छा" (fainting) देखिये।

जहर खाना—यह मालूम होते ही, कि जहर खाया है, तुरन्त डाक्टरको दिखाना चाहिये। इस बीचमें, रोगीको के कराकर पेटसे जहर निकाल देनेकी कोशिश करनी चाहिये। नीचे लिखी पाँच दवाओंमेंसे कोई भी एक दवा खिलाकर के करायी जा सकती है:—

(१) गलेमें अंगुली या पर द्वारा।

(२) पावभर गर्म पानीमें दो चम्मच नमक (या एक चम्मच सरसोंका चूर) मिलाकर उसे पिलाना।

(३) थोयटे धोये पानीको पिलाना।

(४) अण्डेका सफेद अंश गर्म दूधके साथ पिलाना।

(५) पाँच-सात ग्रेन तूतिया (या ३० ग्रेन चूर्ण इपिकाक या ३० ग्रेन सल्फेट आफ जिंक) गुनगुने पानीमें घोलकर पिलाना चाहिये।

केके साथ जहर निकल जानेपर उस विषका प्रतिविष (उल्टा जहर) कुछ दिनोंतक सेवन करना चाहिये। प्रचलित बारह तरहके विषका प्रतिविष नीचे लिखा जाता है:—

विष	प्रतिविष
एसिड (नाइट्रिक वगैरह)	चूर्ण चायखड़ी गर्म पानीके साथ
सुरा (अलकोहल)	दूध काली काफी
संखिया (आर्सेनिक)	इपिकाक, वेरेट्रम

विष	प्रतिविष
तूतिया वगैरह ताँबा मिली दवा, सेंदुर, रस कपूर पारा वगैरहसे बनी दवा	दूध, चीनीका शरबत, अंडेका सफेद अंश
तारपीनका तेल (turpentine) जमालगोटेका तेल (croton oil)	वार्ली, आरारूट वगैरह पतली चीजें

सीसा (lead)—ओपियम, दूध, अंडेका सफेद अंश अथवा साबुनका फेन।

अफीम…… …वेल θ, गाढ़ी काफी या पानी मिला सिरका।

धतूरा…… …काफी, सिरका या लेमनेड।

तम्बाकू………इपिकाक या सिरका।

कपूर…… …काली काफी या ओपियम ३x।

जहरकी मात्रामें अफीम—आजकल इस देशमें अफीम आत्म-हत्याके काममें आती है, इसलिये, यह विषय अलग लिखना पड़ा है। पहले "जहर खाना" प्रकरणमें लिखी हुई रीतिसे कै कराकर पेटसे जहर निकाल देना चाहिये। जहर निकल जानेपर दस बून्द वेलेडोना θ आध घण्टेका अन्तर देकर सेवन कराना चाहिये। इसके बाद गाढ़ी काफी या पानीके साथ सिकरका (vinegar) पिलाना उचित है। इतनी देरतक रोगीको कभी सोने न देना चाहिये। पीठपर मारकर उसे घरभर दौड़ाना चाहिये। जरूरत पड़नेपर "पानीमें डूबकर श्वास-रोध" वाला इलाज करनेका ढंग काममें लाना चाहिये।

गलेमें मछलीका काँटा वगैरह अटकना—मछलीका धारदार काँटा या लकड़ीकी सींक गलेमें अड़ जानेपर रोटी, भात, केला वगैरह कड़ी चीज निगलनेके साथ वह भी नीचे उतर जा सकती है। मांसका

टुकड़ा या कोई दूसरी बड़ी, पर नर्म चीज गलेमें अटकनेपर, गलेमें अगुली डालकर ठेल देनेसे, वह पेटमें उतर जाती है, खुरखुरी या कड़ी चीज गलेमें अटनेपर, गलेमें अंगुली डालकर के करनेसे वह मुँहकी राहसे बाहर निकल जाती है। छोटी चिमटीसे भी निकाली जा सकती है। जरूरत पड़नेपर नश्तर लगवानेवालेकी मदद लेनी चाहिये।

मछलीका जहर (Fish poison)—किसी-किसी मछलीको खानेपर, शरीरमें जहरको हरकत मालूम होती है। थोड़े हल्के जहरके लक्षणमें—लकडीका कोयला पीसकर भेली गुड़के साथ खाना या चीनीका गाढ़ा शरबत पीना या काली काफी अथवा बराबरके मिकदारमें पानीके साथ विनिगर पीना फायदा करता है ; परन्तु शरीर लाल, चेहरा और दोनों हाथ फूले, गलेमें जखम वगैरह तेज लक्षणोंमें बेलेडोना २x या कैम्फिकम ३x देना चाहिये।

बीमारी लानेवाली मक्खी या मच्छड़का उपद्रव बन्द करना—कमरेमें टटका ताजा पइरेथ्रम चूर्ण (pyrethrum powder) जलानेपर या जिस दूधमें सैंकड़े पन्द्रह भाग फार्मोलिन (formalin) है, उसके साथ क्रेसोल (cressol) मिलाकर घरमें धुआँ देनेपर, घरमें मच्छर और मक्खी नहीं रहते।

झींगुर या तेलचट्टा वगैरह उपद्रव रोकना—Dr. Paul (Australian Qurantine officer) ने अभी हालमें घोषणा की है कि पेटारा, सन्दूक, दराज प्रभृति ढँकनेदार चीजोंमें एप्सम साल्ट (epsom salts) का पानी सींचने अर्थात् छिड़कनेपर झींगुर प्रभृति तथा अन्यान्य अनिष्ट करनेवाले कीड़ोंका उपद्रव दूर हो जाता है। जिस कोठरीमें तेलचट्टे या झींगुरोंका उपद्रव अधिक हो, वहाँ सोहागाकी बुकनी छिड़क देनेपर, दो-तीन दिनोंमें वह कोठरी तेलचट्टासे रहित हो जाती है।

दीमक प्रभृति कीड़ोंका उपद्रव रोकना—विनिगर १ पाइण्ट, क्रियोजोट ८ औंस, एक साथ मिलाकर उसमें ४ गैलन पानी मिलाकर जिसमें लगा दिया जाता है, वहाँ दीमक, कीड़े वगैरह पास नहीं फटकते।

सर्पदंश—साँप काटते ही काटी हुई जगहके कुछ ऊपर तुरन्त खूब कसकर एकके ऊपर एक तीन जगह बांध देना चाहिये। बन्धन इतना कसा होना चाहिये कि खूनका दौरान बन्द हो जाये (अर्थात् बन्धनके नीचे नाड़ीकी चाल मालूम न हो, इसके वाद छुरी या किसी तेज शस्त्रसे जहाँ-जहाँ दाँतका दाग पड़ा हो, वहाँ दो इञ्च लम्बा और आध इञ्च गहरा नश्तर लगाकर अंगुलीसे उसे चीरकर फाँक कर देना चाहिये। अगर वहाँ जहर होगा, तो लाल पानीकी तरह एक पतली चीज निकलेगी। ज्यादा खून निकलनेपर दोनों ओर धीरे-धीरे दवानेसे खून वन्द हो जायगा)। इसके वाद १ ग्रेन पर्माङ्गनेट आफ पोटास थोड़े पानी या थूकमें घोलकर उस काटी हुई जगहपर अच्छी तरह घसना चाहिये। इस तरह कुछ देर घसनेसे वह जगह काली हो जायगी। इसके वाद काटी हुई जगहपर अच्छी तरह कपड़ेकी तही रखकर बांध देना चाहिये और ऊपरके तीनों बन्धन खोल देने चाहिये। रोगीको इस तरह ठेस देकर बैठाना चाहिये कि वह सो न जाय। साँप काटनेके वाद इस ढङ्गसे काम करनेपर जान वच जा सकती है। थोड़ा पर्माङ्गनेट आफ पोटास घर-घरमें रखना चाहिये।

नीचे लिखी चार तरकीवोंकी परीक्षा भी करनी चाहिये :—

१। जखमवाली जगहके ऊपर नमककी पोटलीसे सेंकना या गरम पानीसे सींचनेसे खून निकलता रहेगा। जवतक साफ लाल खून न निकले, तवतक यह क्रिया वन्द न करनी चाहिये।

२। जैतूनका तेल खिलाने और लगानेसे भी फायदा हो सकता है।

३। मेदनीपुर जिलेके भीतर हिजली कांथी महकमेके बंगोपसागरके पासकी बलुही जमीनमें एक तरहका बदाम पैदा होता है। इसके पके फलके बीजका सार अंश सर्वसाधारणके काममें आता है और उसके छिलकेका रस रेड़ीके तेलकी तरह जलानेके काममें आता है। इसके अलावा यह फल साँप काटनेकी एक बढ़िया दवा मानी जाती है। इस फलका सारा आध पावके अन्दाज किसी साँप काटे हुए आदमीको खिला देनेसे वह तुरन्त अच्छा हो जा सकता है।

४। केलेके पेड़ या तुलसीके पत्तेका रस पिलाना।

माल वैद्यके मतसे चिकित्सा—शरीरमें जहर घुस जानेपर, एक तरहकी लार पैदा होती है और मुँहसे फेन आने लगता है। जब इस लार या फेनसे साँस बन्द होती है, तभी मौत होती है। लार पैदा होते ही चीथड़ा या हाथ डालकर उसे निकाल देना चाहिये। थोड़ा-थोड़ा गर्म पानी पिलाने या गलेमें गरम पानीका सेंक देने या मुँहसे गरम पानीकी भाफ खींचते रहनेसे गलेकी नली साफ रहती है। इससे भी यदि लार रह जाये, तो इमली, तूतिया या चोयटेका पानी पिलाकर कै करना चाहिये। माल वैद्योंका कहना है, कि इमली, अमलतास या नेबू वगैरह सेवन करानेपर, विषकी मारनेवाली ताकत कम हो जाती है।

रोगीके जीनेकी उम्मीद न रहनेपर "जलसार" से फ़ायदा हो सकता है पानी थोड़ा गर्मकर रोगीको बैठाकर चार-पाँच हाथ ऊँचाईसे ४०-५० घड़ा पानी शरीरपर (जबतक कँपकँपी न पैदा हो जाये, लगातार ढालते रहनेका नाम जलसार है) जबतक रोगीका शरीर एकदम निर्दोष न हो जाये, तबतक पानी ढालना बन्द न करना चाहिये।

रोगी "सोने न पाये", इसपर खूब सावधानतासे नजर रखनी चाहिये।

६। किसी घोड़ेको विषैले साँपसे कटवाकर उसका खून किसी साँपके काटे हुए मनुष्यके (काटनेके बाद एक घण्टेके समयके भीतर)

शरीरमें खूनके साथ मिला देनेपर साँपका जहर नष्ट हो जाता है। आजकलके नये चिकित्सकोंके मतसे साँप काटनेकी यही अचूक दवा है। (The Indian and Eastern Druggists For Dec. 1922 पृष्ठ २६६ देखिये)।

अस्थि-भंग या स्थानच्युति

(Fractures and Dislocations)

कुछ आवश्यक जानने योग्य बातें—चोट आदिकी वजहसे रोगी कुछ देरतक बेहोश मुर्देकी तरह अवस्थामें पड़ा रह सकता है। इस अवस्थामें यदि उसकी उपयुक्त सेवा-सुश्रूषा होती है, तो ज्ञान लौट आता है। इसीलिये ऐसी आकस्मिक विपत्तिके अवसरपर यह जाननेके लिये समय नष्ट करना, जिसे चोट लगी है, वह मृत है या जीवित—यह बिलकुल ही वृथा है। ऐसा करना कदापि उचित नहीं है; क्योंकि बहुत बार निपुण चिकित्सकोंको भी रोगी जीता है या मर गया, यह निर्णय करना कठिन हो जाता है।

एकाएक चोट लगनेपर खून निकलनेकी ही अधिक सम्भावना रहती है। बहुत ज्यादा खून निकल जानेके कारण सहजमें ही मृत्यु हो जाती है, इसलिये सबसे पहले रक्त-स्राव रोकनेकी ही चेष्टा करनी चाहिये, इसके बाद अन्य कार्योंपर ध्यान देना चाहिये। जिस स्थानपर जखम हो गया हो, सबसे पहले उस जगहको साफ कपड़ा या बोरिक काटन या पट्टीसे ढँक देना चाहिये, जिससे उसमें दूषित जीवाणु प्रवेश न कर जायँ।

इसके बाद पासके किसी निपुण चिकित्सकको सहायताके लिये बुला भेजना चाहिये। यदि चिकित्सककी सहायता मिलनेमें विलम्ब हो, तो स्वयं ही रोगीकी सेवा करनी चाहिये।

यदि रोगी बेहोश न हो जाये, तो उसे यथेष्ट उत्साहित करते रहना चाहिये और तुरन्त ही पासके किसी सुविधाजनक तथा आराम मिलने-

वाले स्थानमें ले जाना चाहिये। यदि एक हाथ टूट गया हो, तो सहायता करनेवालेको उसके स्वस्थ हाथकी ओर खडे होकर उसके अच्छे हाथको अपने कन्धेपर रख और दूसरे हाथसे रोगीकी कमर पकड़कर रोगीको लकडीपर भार देकर चलनेका उपदेश दिया जा सकता है।

पैरमें चोट लगनेपर रोगीको चलने देना उचित नहीं है, इससे नुकसान पहुँच सकता है। ऐसी अवस्थामें दो आदमियोंको आमने-सामने खड़े होकर एकका दाहिना हाथ दूसरेके बायें हाथमें देकर—कसकर पकड़, इसी स्थानपर रोगीको बैठना चाहिये और रोगीके दोनों हाथ दोनों सहायता करनेवालोंके कांधेपर रख, अनायास ही उसको उठाकर दूसरे स्थानमें ले जाया जा सकता है। घुटना या उरुके नीचेकी जगहपर चोट लगनेपर, एक सहायक रोगीके दोनों उरुके बीचमें हाथ दे, रोगीके पीछे खड़ा हो जाये और दूसरा सहायक रोगीकी पीठ अपनी छातीपर रखकर एक स्थानसे दूसरे स्थानमें ले जा सकता है।

बेहोश रोगीको या जिन रोगियोंके कमर और उरुके ऊपरी प्रदेश माथेमें चोट आ गई हो, उसे यदि एक स्थानसे दूसरी जगह हटाना ।, तो ४ ५ हाथ लम्बे कडे बाँस या तख्तेमें १ से २ हाथतक चौडे कई बाँस बाँध, एक सीढीकी तरह बनाकर या पासके किसी मकानसे एक सीढ़ी मांग, उसपर एक तोशक बिछाकर, उसपर रोगीको लम्बे-लम्ब सुला देना चाहिये। इस तरह उसे बिना तकलीफके इच्छित स्थानपर ले जाया जा सकता है। यदि गद्दी न मिले, तो केवल सीढ़ीपर या यदि सीढ़ी न मिले, तो एक तख्तेपर सुलाकर उसे ले जाया जा सकता है। यदि यह सब कोई प्रबन्ध न हो सके और न सम्भव हो तथा रोगीका कोई अनिष्ट होता न दिखाई दे या सुश्रूषा करनेवाला अकेला हो, तो रोगीको अपनी पीठपर लाद, उसके दोनों हाथ कन्धेके ऊपरसे सामनेकी ओर ला, जरा ऊँचा होकर, चलता हुआ, रोगीको दूसरी जगहपर ले जा सकता है। यदि सेवा करनेवाले हों, तो एक-एक

दोनों बगलमें बैठ, दोनोंको बायाँ हाथ रोगीकी कमरके नीचे लगाकर, दोनों हाथसे मुट्ठी बाँधकर पकड़ लेना होगा और एकका दाहिना हाथ रोगीके पैरकी ओर तथा दूसरेका दाहिना हाथ माथेकी ओर रखकर रोगीको स्थानान्तरित किया जा सकता है।

यदि रोगीके सारे शरीरमें वहुत अधिक चोट लग गयी हो तथा सीढ़ी, झूला या चौकी न मिले, तो पासकी किसी जगहसे दो ६ हाथ लम्वे बाँस या काठ, यह भी मिलना सम्भव न हो, तो एक ही बाँस या लकड़ी संग्रहकर, रोगीको इस बाँस या लकड़ीसे वस्त्र द्वारा बाँधकर हटाया जा सकता है। वस्त्रकी कमी हो, तो सुश्रूषाकारीकी धोती या कपड़ा फाड़कर भी यह काम हो सकता है।

आकस्मिक चोट आदिके समय सुश्रूषाकारीका प्रधान कर्त्तव्य है, तेजीसे काम करना और घवड़ा न उठना। यदि सुश्रूषा करनेवाला स्वयं ही घवड़ा उठेगा, तो कोई भी काम न हो सकेगा। अंट-संट काम या हो-हल्ला करनेसे रोगीकी नुकसानके सिवा लाभ न होगा। इससे रोगीका वहुत अनिष्ट होता है।

यदि रोगी वेहोश न हो जाये, तो उसे धीरे-धीरे एक प्याला गर्म चाय या गर्म दूध या थोड़ा सुरासार पानीमें मिलाकर सेवन करा देना चाहिये। इससे रोगीकी तकलीफ घट जाती है और प्रतिरोध करनेकी शक्ति वढ़ती है।

अज्ञान हो जानेपर आँख, मुँहपर पानीका छींटा, सरपर पंखेकी हवा और सम्भव हो, स्मेलिंग साल्ट या ऐमोनिया सुँघाकर होशमें लानेकी चेष्टा करनी चाहिये। अज्ञान या सज्ञान किसी भी अवस्थामें रोगीके चारों ओर निरर्थक भीड़ न लगने देनी चाहिये। भीड़ हो जानेपर आदमियोंसे सहायता तो मिलती नहीं, बल्कि उसके वदले नाना प्रकारकी राय देकर लोग रोगी और सुश्रूषा करनेवालेको नाना प्रकारका उपदेश देते और घवड़ा देते हैं।

अंग-भंग (Fractures)

यदि चोट लगनेकी वजहसे हाथ-पैरकी अंगुलियाँ टूट जायें अथवा उस स्थानका चमड़ा कटकर खून निकलने लगे, तो पहले थोड़ा गर्म पानी, वह न मिलनेपर ठण्डे पानीके साथ कैलेण्डुलाका अर्क मिलाकर, एक टुकड़ा साफ कपड़ा या रुई रखकर यह स्थान धीरे-धीरे धो डालना चाहिये। इसके बाद उस व्यक्तिके अनुरूप अंगके साथ या दूसरे व्यक्तिके अनुरूप अंगके साथ तुलनाकर देखना होगा, कि इस स्थानकी हड्डी टूटी है या नहीं अथवा दूसरे अंगके साथ असामंजस्य, उत्ताप, हिलाने डुलानेमें दर्द इत्यादिके द्वारा अस्थि-भंगका अनुमान लगाना पड़ता है। बरफ या ठण्डे पानीकी पट्टी देनेपर रक्तस्राव होना शीघ्र ही बन्द हो जाता है और प्रदाह भी बन्द हो जाता है। घावको साफकर, छोटी अंगुली होनेपर, उसपर थोड़ी रुई लगाकर आध इञ्चसे १ इञ्चतक चौड़ा साफ कपड़ा लपेटकर बैण्डेज बाँध देना चाहिये। यदि अंगुली बड़ी हो, तो जरूरतके मुताबिक २ इञ्चसे ४ इञ्चतक लम्बा और आधा इञ्च चौड़ा दो बाँस या काठके चिपटे टुकड़े अंगुलीके ऊपर और नीचे देकर, थोड़ी रुई लगाकर १ से ३ इञ्च चौड़े कपड़ेसे बाँध देना चाहिये। इस काठ या बाँसको कुछ रुई रखकर बाँधना चाहिये। यदि बाँस या काठका टुकड़ा न मिले, तो जरूरतके अनुसार कलमका हैण्डल काटकर भी लगाया जा सकता है।

इसी तरह हाथ या पैरकी लम्बी हड्डी टूट जानेपर ऊपर लिखे नियमसे धोकर उसी तरह काठ या बाँसका उसी मापका टुकड़ा ऊपर-नीचे या दोनों बगलमें कुछ रुई रख, उसपर काठकी पट्टी रखकर २ से ४ इञ्चतक चौड़े और ८-१० हाथ लम्बे कपड़ेसे लपेटकर बाँध देना चाहिये। रुई देनेका यही उद्देश्य है कि उसके दबावसे रोगी अंगमें कष्ट न पहुँचे।

यदि चोटवाली जगहसे बहुत अधिक खून बहता हो, तो उस स्थानके ऊपरी भागमें तुरन्त एक डोरी या जूतेका फीता या धोती अथवा साड़ीकी किनारा लेकर कसकर बाँध देना चाहिये। यदि डोरी वगैरह मिलनेमें देर हो, तो उस स्थानसे कुछ ऊपर दोनों हाथोंसे जोरसे कसकर दबा रखना चाहिये। इससे धमनीमें दबाव पड़कर रक्त-स्राव बन्द हो जाता है।

यदि हड्डी टूटकर बाहर निकल पड़े, तो जरा बुद्धि लगाकर, टूटे स्थानको दोनों ओरसे खींचकर, इन दोनों टूटे स्थानोंको मिला देनेकी चेष्टा करनी चाहिये। यदि इस कामके सम्बन्धमें जानकारी न रहे, तो वृथा खींच तानकर रोगीको तकलीफ न देनी चाहिये। हड्डियोंको, खासकर टूटी हड्डियोंको मिलाते समय इस बातपर ख्याल रखना चाहिये कि उनके बीचमें मांसका अंश न रह जाये, नहीं तो जोड़ न मिलेगा। इस तरह दोनों हड्डियोंको मिला देनेके बाद काठकी पट्टी रखकर ऊपरसे बाँध देना चाहिये। बाँधनेका नियम ऊपर बताया जा चुका है।

यदि मेरुदण्डमें चोट लगे और वह टूट जाये, तो इसी तरह काठकी पट्टी रखकर बाँध देना चाहिये। पजरे या पसलीकी हड्डी टूटनेपर इस तरह काठकी पट्टी रखकर बाँधा नहीं जाता है, बल्कि प्लैस्टर आफ पेरिस (plaster of paris—फीतेमें एक ओर गोंद लगा हुआ) लगाकर बाँधा जाता है। यह प्लैस्टर आफ पेरिस दवाखानोंमें मिलता है।

माथेमें चोट लगनेपर मस्तककी हड्डी यदि टूट जाये, तो तुरन्त माथेमें बरफ रखकर रक्त आना रोक देना चाहिये। यदि बरफ न मिले, तो कपड़ेकी तही बना उसको कैलेण्डुला लोशनसे तर कर, टूटी जगहपर रख, उसपर रूई दे, लम्बी पट्टीसे बाँध देना चाहिये।

इस तरहकी चोटमें रोगीको हानि हो सकती है। शिक्षित चिकित्सकोंको भी अभ्यास न रहनेपर इस कार्यमें बहुत सोच-विचारकर काम करना पड़ता है। इसलिये रोगीकी चिकित्साका भार ग्रहणकर

रोगीके जीवनको अधिकतर खतरेमें डालना उचित नहीं है ; परन्तु यदि सुचिकित्सक न मिले तो बाध्य होकर करना ही पड़ता है, पर जहाँतक सम्भव हो, तुरन्त निकटवर्त्ती किसी सुचिकित्सककी सहायता न मिले तबतक ऊपर बतलाये ढगसे रोगीकी सहायता करनी चाहिये।

हाथ पैर टूटकर यदि रक्त स्राव हो, तो रक्त-स्रावको रोकनेका एक उपाय है :—भग्न स्थानपर एक रूमाल ढीलाकर बाँध देना और उसके भीतर एक पतली लकड़ी या बाँसका टुकड़ा घुसाकर घुमाना। इससे रूमालका घेरा छोटा होता जायगा और उस टूटे अशपर दबाव पडेगा। इस तरह वहाँकी धमनीपर दबाव पडकर रक्त-स्राव बन्द हो जाता है।

हड्डी खिसकना (Dislocation)

वयोवृद्धोंकी अपेक्षा बालक और शिशुओंकी हड्डी ही विशेषकर अपने स्थानसे खिसकती है। इसके अलावा, निम्नांगकी अपेक्षा उर्द्धांगकी हड्डी ही विशेष हटती है। जवानोंकी तथा निम्नांगकी हड्डी जल्दी अपनी जगह नहीं छोडती , पर यदि ऐसा हो जाता है अर्थात् जवानोंकी और निम्नागकी हड्डीकी स्थान च्युति हो जाती है, तो विशेष तकलीफ होती है। शिशु और उर्द्धांगकी हड्डी जल्दी बैठ जाती है। अस्थि-च्युति या हड्डी खिसक जानेपर वह अग टेढा हो जाता है और हिलानेपर असुविधा होती है।

जबडे अटकना—जोरसे गाते, चबाते-चबाते, उछल-कूदके समय या जोरसे चिल्लानेपर ऐसा हो जाता है कि जबडे अटक जाते हैं, टेढे हो जाते हैं, रोगी मुँह फाडे रह जाता है। हाथमें तौलिया या कपड़ा लपेटकर (नहीं तो दाँत लग जानेका भय रहता है), मुँहमें हाथ घुसा, निचला जबड़ा नीचेकी ओर और पीछेकी ओर ठेल देनेपर वह ठीक हो जाता।

गलेकी हड्डी खिसकना—एक हाथसे हड्डीके ऊपर हल्का दबाव देने और दूसरे हाथसे, उस पार्श्ववाले हड्डीपरके हाथको पीछेकी ओर ठेलनेसे गलेकी हड्डी बैठ जाती है। उछलना, एकाएक हाथ ऊँचे उठाना इत्यादि कारणोंसे ऐसा होता है।

भुजाकी हड्डी (humerus) यदि स्कन्ध सन्धिसे हट जाये, तो हसली या कंधास्थि एक हाथसे अपनी जगहपर दबा रखकर बाहु माथेसे उठानेसे यह हाड़ स्कन्ध-सन्धिमें बैठ जाता है। दूसरी ओरकी हड्डीसे तुलना करनेपर ही मालूम हो जायगा कि ठीक-ठीक बैठा या नहीं।

कोहनीकी हड्डी खिसक जाना—ऐसा अक्सर ही हुआ करता है। युवकोंको अधिक होता है और बाँहकी हड्डी कोहनीके पीछेकी ओरसे बाहर निकलना चाहती है। अन्य हड्डियोंसे तुलना करनेपर इसका सहजमें ही निर्वाचन हो सकता है। रोगीको एक कुर्सीपर बैठाकर सुश्रूषाकारी या चिकित्सको रोगीकी कुर्सीपर पैर रखकर खड़े रहना पड़ता है। चिकित्सकका घुटना रोगीकी जाँघपर रखकर बाँहको पकड़कर खींचनेसे वह खिसकी हड्डी अपनी जगहपर बैठ जाती है।

यदि अंगुलीकी हड्डी खिसक जाये, तो कलाईको एक हाथसे पकड़कर दूसरे हाथसे अंगुलीको पकड़कर खींचना पड़ता है। इस तरह करनेपर हड्डी अपनी जगहपर आ बैठती है। इसके बाद जब अंगुली अपनी जगहपर बैठ जाये, तब एक लकड़ीकी पट्टी-सी देकर बाँध देना चाहिये।

उरुकी अस्थि (femer) यदि अपनी जगहसे हट जाये, तो रोगी अपना पैर जमीनपर नहीं रख सकता। टेढ़ा बना रहता है और वह पैर कुछ छोटा हो जाता है। इस अवस्थामें रोगीको जमीन या बिछावनपर सुलाये रखना पड़ता है। यदि हड्डी खिसककर सामनेकी ओर आ जाये, तो पैरको पहले बाहरकी ओर घुमाकर पीछे खींचना चाहिये। इसके बाद भीतरकी ओर घुमाकर पैर सीधा करना पड़ता है। हड्डी खिसककर पीछेकी ओर हट जानेपर, पहले पैर भीतरकी

रोगीके जीवनको अधिकतर खतरेमें डालना उचित नहीं है ; परन्तु यदि सुचिकित्सक न मिले तो बाध्य होकर करना ही पड़ता है, पर जहाँतक सम्भव हो, तुरन्त निकटवर्त्ती किसी सुचिकित्सककी सहायता न मिले तबतक ऊपर बतलाये ढंगसे रोगीकी सहायता करनी चाहिये।

हाथ-पैर टूटकर यदि रक्त-स्राव हो, तो रक्त-स्रावको रोकनेका एक उपाय है :—भग्न स्थानपर एक रूमाल ढीलाकर बाँध देना और उसके भीतर एक पतली लकड़ी या बाँसका टुकड़ा घुसाकर घुमाना। इससे रूमालका घेरा छोटा होता जायगा और उस टूटे अशपर दबाव पड़ेगा। इस तरह वहाँकी धमनीपर दबाव पड़कर रक्त-स्राव बन्द हो जाता है।

हड्डी खिसकना (Dislocation)

वयोवृद्धोंकी अपेक्षा बालक और शिशुओंकी हड्डी ही विशेषकर अपने स्थानसे खिसकती है। इसके अलावा, निम्नांगकी अपेक्षा उर्द्धांगकी हड्डी ही विशेष हटती है। जवानोंकी तथा निम्नांगकी हड्डी जल्दी अपनी जगह नहीं छोड़ती ; पर यदि ऐसा हो जाता है अर्थात् जवानोंकी और निम्नागकी हड्डीकी स्थान-च्युति हो जाती है, तो विशेष तकलीफ होती है। शिशु और उर्द्धांगकी हड्डी जल्दी बैठ जाती है। अस्थि-च्युति या हड्डी खिसक जानेपर वह अग टेढ़ा हो जाता है और हिलानेपर असुविधा होती है।

जबड़े अटकना—जोरसे गाते, चबाते-चबाते, उछल-कूदके समय या जोरसे चिल्लानेपर ऐसा हो जाता है कि जबड़े अटक जाते हैं, टेढ़े हो जाते हैं, रोगी मुँह फाड़े रह जाता है। हाथमें तौलिया या कपड़ा लपेटकर (नहीं तो दाँत लग जानेका भय रहता है); मुँहमें हाथ घुसा, निचला जबड़ा नीचेकी ओर और पीछेकी ओर ठेल देनेपर यह ठीक हो जाता।

गलेकी हड्डी खिसकना—एक हाथसे हड्डीके ऊपर हल्का दबाव देने और दूसरे हाथसे, उस पार्श्ववाले हड्डीपरके हाथको पीछेकी ओर ठेलनेसे गलेकी हड्डी बैठ जाती है। उछलना, एकाएक हाथ ऊँचे उठाना इत्यादि कारणोंसे ऐसा होता है।

भुजाकी हड्डी (humerus) यदि स्कन्ध सन्धिसे हट जाये, तो हसली या कंधास्थि एक हाथसे अपनी जगहपर दबा रखकर बाहु माथेसे उठानेसे यह हाड़ स्कन्ध-सन्धिमें बैठ जाता है। दूसरी ओरकी हड्डीसे तुलना करनेपर ही मालूम हो जायगा कि ठीक-ठीक बैठा या नहीं।

कोहनीकी हड्डी खिसक जाना—ऐसा अक्सर ही हुआ करता है। युवकोंको अधिक होता है और बाँहको हड्डी कोहनीके पीछेकी ओरसे बाहर निकलना चाहती है। अन्य हड्डियोंसे तुलना करनेपर इसका सहजमें ही निर्वाचन हो सकता है। रोगीको एक कुर्सीपर बैठाकर सुश्रूषाकारी या चिकित्सको रोगीकी कुर्सीपर पैर रखकर खड़े रहना पड़ता है। चिकित्सकका घुटना रोगीकी जाँघपर रखकर बाँहको पकड़कर खींचनेसे वह खिसकी हड्डी अपनी जगहपर बैठ जाती है।

यदि अंगुलीकी हड्डी खिसक जाये, तो कलाईको एक हाथसे पकड़कर दूसरे हाथसे अंगुलीको पकड़कर खींचना पड़ता है। इस तरह करनेपर हड्डी अपनी जगहपर आ बैठती है। इसके बाद जब अंगुली अपनी जगहपर बैठ जाये, तब एक लकड़ीकी पट्टी-सी देकर बाँध देना चाहिये।

उरुकी अस्थि (femer) यदि अपनी जगहसे हट जाये, तो रोगी अपना पैर जमीनपर नहीं रख सकता। टेढ़ा बना रहता है और वह पैर कुछ छोटा हो जाता है। इस अवस्थामें रोगीको जमीन या बिछावनपर सुलाये रखना पड़ता है। यदि हड्डी खिसककर सामनेकी ओर आ जाये, तो पैरको पहले बाहरकी ओर घुमाकर पीछे खींचना चाहिये। इसके बाद भीतरकी ओर घुमाकर पैर सीधा करना पड़ता है। हड्डी खिसककर पीछेकी ओर हट जानेपर, पहले पैर भीतरकी

ओर घुमना और खींचना पड़ता है, इसके बाद बाहरकी ओर घुमाकर सीधा करना पड़ता है।

घुटना हट जाना—रोगीको सुलाकर एक आदमीको उसे कसकर पकड़ रखना चाहिये। इसके बाद दूसरा आदमी उस विकृत अंगको पकड़कर खींचे, इससे हड्डी अपनी जगहपर बैठ जायगी।

तृतीय अध्याय

स्त्री-रोग

औरतोंकी बीमारीका इलाज करनेके पहले पाठकोंको औरतोंकी जननेन्द्रियके सम्बन्धमें नीचे लिखी बातें याद रखनी चाहियें :—

(१) औरतोंके तलपेटमें मूत्राधार और मल भांडके बीचकी जगहको "जरायु" (uterus) कहते हैं। जरायुका दूसरा नाम नाड़ी है। इसे गर्भाशय भी कहते हैं। यह एक खाली थैली-जैसी चीज है। शकल अमरूद या नाशपातीकी तरह समझनी चाहिये। इसी जरायुके गह्वरमें भ्रूण नौ महीनेतक रहता है। यह रबरकी तरह बढ़ और सिकुड़ सकता है। इसलिये गर्भावस्थामें इसके भीतर लड़का जब बढ़ता है, तब यह बड़ा होता जाता है और लड़का पैदा हो जानेपर सिकुड़कर यह पहले जैसी शकलमें ही हो जाता है। इसके ऊपरी भागको "जरायु मूल" (fundus) कहते हैं। निचला भाग बहुत कुछ पतला होता है, इसे "जरायु-ग्रीवा" (cervix) कहते हैं। जरायु-ग्रीवामें एक छेद है, उसका नाम "जरायु मुख" (os) है। लगभग तीन इञ्च लम्बी एक टेढ़ी सुरंग जरायु ग्रीवाकी चारों ओर जुड़ी हुई है, इसे

"योनि-पथ" (vagina) कहते हैं। (आरम्भिक भाग—"मानव-शरीरकी रचना" देखिये)।

(२) जरायुके दोनों बगलमें एक इञ्च लम्बे बादामकी शकलके दो यंत्र हैं, उन्हें "डिम्बकोष" (ovaries) कहते हैं। हरएक डिम्ब-कोषमें सरसोंकी तरहके बहुत छोटे-छोटे दस-बीस "डिम्ब" (ovum) रहते हैं।

(३) जरायुकी जड़में दोनों ओर दो नल (तीन इञ्च लम्बे) लगे हैं, जो फैलकर जरायुके साथ डिम्बकोषको मिला देते हैं, इसको "काल्ल-नल" (fallopian tubes) या "स्त्री-वीर्य-वाही-नल" अथवा "डिम्ब प्रणाली" कहते हैं। (ज्यादा हालके लिये हमारा प्रकाशित "नरदेह परिचय" देखिये)।

ऋतु—औरतोंकी जवानीमें जब सब इन्द्रियाँ पुष्ट हो जाया करती हैं, उस समय डिम्बकोषसे डिम्ब निकला करता है। उस समय डिम्ब-कोष, काल्ल-नल और जरायुमें ज्यादा खून पैदा होकर उससे रज निकलता है। इसीको "ऋतु" कहते हैं। इसीका दूसरा नाम "स्त्री-धर्म" या "मासिक ऋतु-स्राव" है। चौदह वर्षसे पैतालिस वर्षकी उम्रतक औरतोंको चान्द्र मासके अन्तमें (अर्थात् २८ दिनका अन्तर देकर) ऋतु हुआ करता है। हमारे मुँहमें जिस तरह लाल कोमल चमड़ा है, ठीक उसी तरहका लाल रंगका चमड़ा जरायुके भीतर भी मौजूद रहता है। लगभग २८ दिनोंमें जरायुके इस चमड़ेकी खाल बदल जाया करती है। हर वार यह खाल बदलनेके बाद साधारणतः चार दिनोंतक जरायुसे आर्त्तव या खून निकला करता है। इसे ही "ऋतु" (menstruation) या "महीना होना" कहते हैं। "ऋतुकालमें (या ऋतुमती होनेके कुछ पहले) होमियोपैथिक दवाका सेवन करना मना है।" ऋतुकालमें "नहाना" और "स्वामी-संग" भी मना है।

गर्भ-संचार—आजकलके नये पश्चात्य शरीर-विधानके जानकर कहते हैं कि खूनका "सार-भाग" ही 'वीर्य' की शकलमें बदल जाया करता है। स्त्री-वीर्य (डिम्ब) जब डिम्बकोषमें रहता है, पुरुष-वीर्य ("रेतः—semen") उसी तरह मुष्क (testes) में रहता है। पुरुषोंके वीर्यमें खूब पतला और लम्बा, एक तरहका कीड़ा रहता है, उसे 'शुक्र-कीट" (spermatozoa) कहते हैं। औरतोंका "पका हुआ डिम्ब" और पुरुषोंका "सतेज शुक्र-कीट" इन दोनोंके संयोगसे ही गर्भ रहता है; परन्तु कभी-कभी ऋतुके दस-पन्द्रह दिन बाद भी गर्भ रह जाया करता है। स्त्री और पुरुषके संगमकी अन्तिम अवस्थामें पुरुषके मुष्कसे पुरुष-इन्द्रियकी राह द्वारा जो वीर्य निकलता है, उस वीर्यका कीड़ा औरतोंके योनि-पथसे जरायुके भीतर घुसकर धीरे-धीरे काललनलमें जाकर अगर डिम्बकोषके पके हुए डिम्बसे मिल गया, तो उसी समय औरत गर्भवती हो जाती है।

इस संयोगसे किस तरह नये जीवकी उत्पत्ति होती है, 'वृन्दभर' से किस तरह भ्रूमें प्राण पैदा हो जाता है—यह शुक्र-कीट और डिम्ब दोनों मिलकर, 'प्रकृति' की ओटमें छिपे रह, किस महीयसी 'शक्ति' के प्रभावसे अर्जुन और नेपोलियन, शंकराचार्य और प्लेटो, अर्यभट्ट और न्यूटन, कपिल और डार्विन अथवा अहिल्या बाई और कुमारी नाईटिंगेलकी रचना कर सके—क्या तेज-से-तेज बुद्धिवाले मनुष्य भी कभी इस जटिल प्रश्नको हल करनेमें समर्थ हो सकेंगे? जयकी खुशीसे फूला हुआ इस बीसवीं सदीका विज्ञान और मानव-प्रतिभा—यह तथ्य खोज निकालने या रासायनिक परीक्षासे जीव उत्पन्न करनेकी खोजमें लगा रहे; पर हम उस निखिल ब्रह्मांडको पैदा करनेवाली युग-युगान्तरमें फैली हुई "आद्या-शक्ति" को दूसरे ही भीति, विस्मय और आनन्द-भरे प्रेम-कम्पित हृदयसे कोटि-कोटि प्रणामकर प्रकृति विषयपर आते हैं अर्थात् औरतोंकी बीमारी और आराम करनेका उपाय लिखते हैं।

औरतोंके रोग नीचे लिखी नौ श्रेणियोंमें बाँटकर हरएकका लक्षण और इलाज नीचे लिखा जाता है :—

(१) आर्त्तव-व्याधि। (२) जरायु व्याधि। (३) डिम्बकोषके रोग। (४) योनिकी बीमारी। (५) बन्ध्यत्व। (६) स्तनकी बीमारी। (७) मेरुदंडकी बीमारी। (८) पिक-चंचु-अस्थि वेदना। (९) गर्भिणी रोग।

आर्त्तव-व्याधि

(Disorders of Menstruation)

ऋतु-सम्बन्धी रोगमें नीचे लिखे प्रधान रोगोका हाल क्रमसे लिखा जायगा :—(क) प्रथम रजःस्रावमें विलम्ब, (ख) रजोरोध, (ग) अनियमित ऋतु, (घ) अनुकल्प रजः, (ङ) स्वल्परजः, (च) अतिरजः, (छ) बाधक-वेदना, (ज) श्वेत-प्रदर, (झ) रजो-निवृत्ति, (ञ) हरित रोग।

ऋतु-सम्बन्धी बीमारीमें "ऋतुके तुरन्त बाद ही" होमियोपैथिक दवा सेवन करनेका मुख्य काल है। खास मौकेपर परवर्त्ती ऋतुके बाद भी दवा खानेकी जरूरत पड़ती है।

यहाँ यह कह देना बेजा नहीं होगा, कि सब तरहके आर्त्तव-व्याधिकी दवा "पल्स" और "सिपिया" है। "पल्स" साधारणतः शान्त प्रकृतिकी, कोमल स्वभाववाली और सहजमें ही रो देनेवाली स्त्रियोंके लिये उपयोगी है और "सिपिया" सब विषयोंमें, यहाँतक कि अपने प्रिय परिवारवालोंके प्रति भी उदासीन रहनेवाली रमणियोंके लिये लाभदायक होता है। रजःस्रावकी गड़बड़ीसे पैदा हुए उपसर्गमें ऋतुके समय दवा खाना मना है। ऋतु हो जानेके बाद ही दवा खानेका खास वक्त है। जरूरत पड़नेपर दूसरी बार जबतक महीना न हो, तबतक दवा देनी चाहिये।

पहली बारके रजःस्रावमें विलम्ब

(Delayed Menstruation)

इस देशकी निरोग औरतोंको १२ १३ वर्षकी उम्रमें रजःस्रावः आरम्भ होकर ४०-५० वर्षकी उम्रतक हर महीने नियमित रूपसे हुआ करता है। किसी-किसी लड़कीके जवान हो जानेपर भी ऋतु होनेमें देर होती है या सिर्फ एक बार होकर वह फिर बन्द हो जाता है। स्नायविक दुर्बलता, बहुत दिनोंतक कोई बीमारी भोगनेकी वजहसे शरीरका कमजोर पड़ जाना और खूनकी कमीकी वजहसे अथवा योनिके मुहपरकी आवरक झिल्ली न फटनेकी वजहसे पहले रजोदर्शनमें देर होती है।

लक्षण—सर भारी और दर्द, नाकसे (कभी-कभी मलद्वारसे) खून गिरना, छाती धड़कना, साँस लेने या छोड़नेमें कष्ट मालूम होना, कमर और उरुमें भार मालूम होना और तलपेटमें दर्द प्रभृति लक्षण रहते हैं।

चिकित्सा—पल्स और सल्फर इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

सिनिसियो θ—पहली बारके रजःस्रावमें देर या एक-दो बार ऋतु होकर बन्द हो जाना ; तकलीफ देनेवाला थोड़ा या अनियमित ऋतु।

पल्सेटिला ३x, ३०—पेट और पीठमें दर्द, सरमें दर्द, अरुचि, हमेशा जाड़ा मालूम होना, आलस्य, मिचली, छाती धड़कना, खूनकी कमी। ऊपर लिखे लक्षणोंके साथ अगर श्वेत-प्रदर हो, तो सिपिया ६ देना चाहिये।

एकोनाइट ३x—एक बार रजःस्राव होकर एकाएक सर्दी लगकर या डरसे ऋतु बन्द हो जानेपर इसका प्रयोग होता है।

ब्रायोनिया ३, ३०—रजःस्रावके बदले नाक या मुँहसे खून निकलता ; सूखी खाँसी ; सीनेमें सुई गड़नेकी तरह दर्द कब्जियत।

वेरेट्रम-ऐल्बम—स्नायविक सर-दर्द, कमजोरीके साथ वेहोशी या हिस्टीरिया, कै या मिचली ; पतले दस्त ; चेहरा बदरंग ; हाथ, पैर और नाक ठण्डी होनेके लक्षणमें।

नेट्रम-म्यूर १२x चूर्ण—दुबली-पतली, नींद न आती हो, ऐसी औरतोंके लिये, जाड़ा लगना, पैर ठण्डे, कब्जियत।

सल्फर ३०—कमरमें दर्द, सरमें टनक या सरमें चक्कर, अजीर्ण, बवासीरके साथ कब्जियत ; चिड़चिड़ा स्वभाव या मौन भाव।

सिमिसिफ्यूगा ६x—डिम्बकोषकी स्नायु-शक्तिकी क्षीणताके कारण रजःस्राव न होना। सरमें दर्द, खूनकी कमी, बाएँ अंगमें (खासकर बाएँ स्तनमें) दर्द।

धातु-दोषकी वजहसे रजोरोधमें—साइक्लामेन ६, सल्फर ३०, कैल्के-फास ६, फेरम ६, लाइको १२, सिपिया ३०। यक्ष्मा वगैरह क्षय-रोगकी वजहसे—वैसिलिनम २००, कैल्के-फास १२x चूर्ण, आयोड ६। कमजोरी या खूनकी कमीकी वजहसे—नेट्रम-म्यूर ३०, चायना ६, फेरम ६। अजीर्णकी वजहसे—सल्फर ३०, नक्स ६, पल्स ६, लाइको १२। "रजोरोध", "अनियमित ऋतु", "अनुकल्प रजः", "स्वल्प-रजः" वगैरह देखिये। हल्का भोजन देना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—सर्दी लगाना या ठण्डे पानीमें नहाना, ज्यादा पढ़ना-लिखना और आलस्य मना है। गर्म मसाला या उत्तेजक खाना-पीना त्याग देना चाहिये। गर्म पानीके टबमें कमरतक डुबो रखना, पेटमें फ्लानेल या कपड़ा बाँध रखना और साधारण स्वास्थ्यके नियम पालन करना उचित है।

रजोरोध

(Amenorrhœa)

रजःस्राव आरम्भ होकर भी कभी-कभी बन्द हो जाया करता है। आलस्य, खूनकी कमी, संगम-दोष, ऋतुके समय बरफ ज्यादा खाना, सर्दी लगना, पानीमें भींगना, ज्यादा घूमना, एकाएक शोक, क्रोध, दुःख या भय वगैरह कारणोंसे रजोरोध हो जाता है।

चिकित्सा—किसी-किसी चिकित्सकका मत है, कि पल्सेटिलाके साथ फेरम पर्यायक्रमसे देना रजोरोध या देरसे ऋतु होनेकी बढ़िया दवा है। जवानीके आरम्भमें, जवान औरतोंको (खासकर रोगी स्त्रियोंको) अगर रजःस्राव न होता हो, तो पल्स ३—६ (एक महीना अर्थात् जबतक स्राव न आरम्भ हो) देना चाहिये। सरमें खूनकी अधिकताकी वजहसे सरमें चक्कर, आँखोंके आगे अन्धेरा छा जाना, आँखोंके गढ़हेमें दर्द, गर्भाशय और डिम्बाशयमें तेज दर्द, प्रलापके लक्षणमें, बेलेडोना ३। नाकसे खून गिरना, सरमें चक्कर, छाती और पंजरेमें सुई वेधने-जैसा दर्द, सूखी खाँसी और पाकस्थलीके दर्दमें, ब्रायोनिया ६। तलपेटमें तेज दर्द, (मेहनतसे बढ़ना), विमर्ष चित्त, अकेलेमें रहनेकी इच्छा लक्षणमें, सिपिया ६। सर्दी लगकर रजोरोध होनेपर ऐकोनाइट ६। फायदा न हो, तो पल्सेटिला ३। नियमित समय (अर्थात् ३८ दिनोंपर) अगर ऋतु न दिखाई दे, तो सल्फर ३०। मानसिक कष्टसे पैदा हुई बीमारीमें इग्नेशिया ६। पानी घांटने या शरीरमें खूनकी कमीकी वजहसे रजोरोध होनेपर कैल्के-कार्ब ३० या नेट्रम-म्यूर। रक्त-स्वल्पता और पतले दस्तोंके साथ रजोरोध रहनेपर, फेरम ६। ऋतु बन्द होकर यदि रोगिणी पेटके दर्दसे छटपटाती हो, तो जेलसिमियम ६, कैमोमिला ३, मैग्नेशिया फास २x—१२x विचूर्ण (गर्म पानीके साथ सेवन), सिमिसिफ्यूगा ३x साइक्लामेल ६, थार्स ६, नेट्रम-म्यूर ३०, हेलोनियस

१x, बेल ३ वगैरह दवाओंकी समय-समयपर जरूरत पड़ सकती है। "रक्त-स्वल्पता" या यक्ष्मा-कासकी वजहसे रज बन्द होनेपर उन बीमारियोंको देखकर दवा चुनकर देनी चाहिये। यदि बीमारी आराम न होती हो, तो मैङ्गानिज डाइआक्साइड θ की मात्रा एक ग्रेनके हिसाबसे रोज चार बार सेवनसे खूब फायदा हो सकता है। बैठा स्नान (अर्थात् गर्म पानीमें कमरतक डुबाकर अर्द्ध-स्नान), दूधमें पानी मिलाकर पीना, गर्म पानीमें फ्लैनेल भिगोकर कमरपर सेंक देना—इन सबसे भी फायदा होता है। "प्रथम रजः-स्रावमें विलम्ब" देखिये।

अनियमित ऋतु

(Irregular Menstruation)

ऋतुका भी एक बँधा समय है। औरतोंको हर २८ दिनोंमें जरायुकी राहसे कुल काली आभा लिये लाल रंगका पतला स्रावका होता है। साधारणतः तीनसे लेकर पाँच दिनोंतक स्राव होता है। स्रावका परिमाण एक पावसे डेढ़ पावतक रहता है। इस नियममें गड़बड़ी होनेपर इलाज कराना चाहिये। अनियमित रजःस्रावका लक्षणः—दो तीन महीने रजः-स्राव होकर एकाएक बन्द हो जाना, कभी-कभी दो-तीन महीनेतक बन्द रहकर एकाएक ज्यादा परिमाणमें स्राव होना; किसी किसीको १०—१५ दिनोंतक थोड़ा-थोड़ा स्राव होते रहना।

चिकित्सा—कोनायम १—३० इस रोगकी बढ़िया दवा है। बन्द होनेपर सिनिसियो θ दो बून्द रोज तीन बारके हिसाबसे सेवन करानेपर ऋतुका अनियमित होना बन्द होकर नियमित रूपसे ऋतु होता है। पल्सेटिला ६ या चायना ६ पर्यायक्रमसे खिलाकर किसी-किसीको खासा फायदा हुआ है। जल्दी-जल्दी ऋतु होनेपर, इग्नेशिया (पन्द्रह ही दिनोंमें हो जानेपर), बेल, कैल्के-कार्ब, नेट्रम-म्यूर, इपिकाक।

बहुत देरसे ऋतु-स्राव होनेपर—कैलि-कार्ब, लैके, पल्स, सल्फ। यदि ऋतु कई दिनोंतक जारी रहे, तो ऐकोन, इग्ने, नक्स-वोम, प्लाटिना, सल्फ। "रजः रोध" और अतिरजः रोगकी दवाएँ लक्षणके अनुसार इस रोगमें भी सेवन की जा सकती हैं।

अनुकल्प रजः

(Vicarious Menstruation)

रजोलोप (या थोड़ा रज निकलना) के कारण नाक या मलद्वार वगैरहसे खून निकलता है। श्लेष्माके साथ खून निकलनेपर वह फेफड़ेसे और सिर्फ खून निकलनेपर उसे पाकस्थलीसे निकलता समझना चाहिये।

चिकित्सा—नाक, मलद्वार या शरीरके किसी दूसरे दरवाजेसे खून निकलना, खूनकी कै करना, पेट टटाना, सीनेमें दर्द, खाँसी, (श्वेत प्रदर रहे या न रहे) लक्षणमें, हैमामेलिस १। नाकसे खून निकलनेपर, फेरम-फास ६x या ब्रायोनिया ६। चमकीले लाल रंगका खून निकलने पर, इपिकाक ३x—६। खाँसते-खाँसते रक्त-स्राव, कमजोरी, चेहरेमें खूनकी कमी दिखाई देना, इसके साथ-ही साथ यक्ष्मा रोगके और-और लक्षण प्रकट होनेपर सिनिसियो ३x। नाक और कानसे खून बहना, स्तनमें दर्द, बदन गर्म मालूम होना, लक्षणमें पल्सेटिला ६। बहुत कमजोरी और खूनकी कमीके साथ खून जानेके लक्षणमें, फेरम ६। मलद्वारसे रक्त-स्राव होनेपर, कालिन्सो ६। ऋतु-स्रावके बदले श्वेत-प्रदर दिखाई देनेपर—कैल्के-कार्ब, फेरम, चायना, बोरैक्स, मैग्ने-सल्फ, फास।

स्वल्प-रजः

(Scanty Menstruation)

कितने ही रोग भोगनेके बाद रक्त स्वल्पताकी वजहसे थोड़ा रजः-स्राव होने लगे, तो वास्तविक रोगकी चिकित्सा करनी चाहिये। जैसे—धातु-दोषकी वजहसे रजःस्राव थोड़ा होनेपर—कैल्के-फास, साइक्लो, कोनायम, आयोड, नेट्रम-म्यूर, मर्क, फास, पल्सेटिला, सिनिसियो, सिपिया, सल्फ। खूनकी कमीकी वजहसे थोड़ा रजःस्राव होनेपर—आर्जेण्टम-नाई, हेलिबोरस, फेरम, नेट्रम-म्यूर। कब्जियत या चर्म रोगके साथ स्वल्पतरजः होनेपर—कालिन्सनिया, ग्रैफाइटिस, नक्स-वोमिका और जरायु-दोषके कारण स्वल्प-रजःस्राव होनेपर नीचे लिखी हुई दवाएँ दी जा सकती हैं :—

चिकित्सा—थकावट, शारीरिक और मानसिक अवसाद पीला चमड़ा, ठण्डी हवा असह्य, वमन, सरमें दर्द और खूनकी कमीमें सिपिया ३०। (दुबली-पतली, वायु-प्रधान स्त्रियोंके लिये यह ज्यादा फायदेमन्द है)। थोड़ा-सा पानीकी तरह स्राव, सब शरीर पीला, जाड़ा मालूम होना, रजःस्रावके पहले और उसी समय कमरके दर्दमें पल्सेटिला ६। भोजन और वायु सेवनकी कमीकी वजहसे अथवा किसी तरहका क्षय रोग हो जानेके कारण थोड़ा रजःस्राव होनेपर फेरम ६। समयपर ऋतुका न होना, कब्जियत, सब शरीरमें खुजली, हल्का ताप (या रह-रहकर बदन गर्म हो जाना) लक्षणमें, सल्फर ३०। बहुत देरसे ऋतु होना और ऋतुके पहले योनिके खुजलानेपर, ग्रैफाइटिस ६। कब्जियतके साथ थोड़ा रक्त-स्राव और रोगिणीके शरीरका रग मटमैला हो जानेपर, नेट्रम-म्यूर १२x विचूर्ण। ज्यादा देरसे, बहुत थोड़ा काले रंगका ऋतु, मैग्ने-कार्ब ६। कब्जियत और उसके साथ ही शरीरमें पसीना होनेपर, फास्फोरस ६। प्लाटिना ६, कार्बो-वेज ६ या सल्फर

६—३• का भी कभी-कभी प्रयोग किया जा सकता है। पहले रज स्रावमें "विलम्ब" रोग देखिये। लघु बलकारक पथ्य देना चाहिये।

अतिरजः (Menorrhagia)

(१) मानसिक ऋतुके समय बहुत-सा खून निकल जाये या (२) ऋतु-स्राव बंधे हुए कई दिनोंकी बनिस्बत ज्यादा दिनोंतक स्थायी रहे अथवा (३) चार हफ्तोंमें दो या उससे भी ज्यादा बार ऋतु स्राव हो, तो उसे "अतिरजः" कहते हैं। इसलिये यह नियमित समयके कुछ पहले या बाद भी हो सकता है और थोड़े या ज्यादा दिनोंतक मौजूद रह सकता है। रजोनिवृत्तिके समय किसी-किसी रमणीको अतिरजः हुआ करता है। कितने ही कारणोंसे ज्यादा रज आता है। उनमें जरायु ग्रीवामें या डिम्बकोषमें रक्त-सञ्चय वगैरह कारणोंसे यह बीमारी हो सकती है। ज्यादा सगम, ज्यादा मात्रामें पुष्टिकर खाद्य खाना, ज्यादा मानसिक चिन्ता या बार बार गर्भ धारण करना भी इसके कारणोंमें माना जा सकता है। आलसी भाव, शरीर टूटना, जम्हाई आना, शरीरमें दर्द होना, सर भारी और सरमें दर्द, पीठ और कमरमें दर्द, अरुचि, पैरके तलवे ठडे और जाड़ा मालूम होना वगैरह लक्षण इस रोगमें दिखाई देते हैं। बहुत ज्यादा खून निकल जानेकी वजहसे चेहरा पीला, आँखें गड्ढेमें धँसी, हाथ पैर ठण्डे, कान बन्द, दृष्टि और नाड़ी क्षीण तथा मूर्च्छा वगैरह लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—हाइड्रैस्टिस १x और हाइड्रैस्टिनाइन θ—३x सम्भवतः ज्यादा रजःस्रावकी सबसे बढ़ियाँ दवा है। डाक्टर वाफोड हाइड्रैस्टिनाइन १x ज्यादा रज-स्रावके समय और ३x रजोनिवृत्तिके समय खिलाकर बहुत ज्यादा फायदा उठा चुके हैं। हैमामेलिसके साथ चायना पर्यायक्रमसे सेवन करनेपर भी शायद "अतिरजः" जल्दी अच्छा

हो जाता है। जल्दी-जल्दी ऋतु होना, ज्यादा परिमाणमें स्राव और उसके साथ पेटमें दर्द और मिचलीमें, बोरैक्स ६। रातमें अपर्याप्त स्राव, मैग्नेशिया-कार्ब ६। ज्वाला पैदा करनेवाले प्रदरके साथ पुरानी बीमारीमें आर्स ३—२००। शारीरिक दुर्बलता और गर्भाशयकी क्रियाके विकारकी वजहसे बहुत ज्यादा दिनोंतक ठहरनेवाला ज्यादा रक्त-स्राव होनेपर, आर्सेनिक ६। रजोनिवृत्तिके समय, गर्भावस्थामें या प्रसवके अन्तमें—पीठ और तलपेटमें दर्द हो तो पल्सेटिला ६। मूत्रयन्त्रका प्रदाह, क्षीण दृष्टि, डिम्बाशयमें दर्द, लाल रंगका अधिक रजःस्राव, सैबाइना ६। (मोटी-ताजी स्त्रियोंके लिये सैबाइना ज्यादा फायदा करता है) हमेशा ज्यादा परिमाणमें बिना दर्दका पतला रजःस्राव ; कभी-कभी काले रंगका, कभी थक्का-थक्का, कभी बदबूदार रक्त-स्राव ; थोड़े हिलने-डुलनेसे ही स्रावका बढ़ जाना ; सब शरीर ठण्डा, परन्तु भीतर गर्म मालूम होना, जरायुके मुँहपर चींटी चलने-जैसी सुरसुराहट ; उदरमें दर्द और योनिकी ओर दबावके साथ काला-काला थक्के-भरा अलकतरेकी तरह स्राव होनेपर, क्रोकस-सैटाइवा ३ (स्राव बन्द रहनेके समय चायना ६ और बीमारीवाली अवस्थामें क्रोकसका प्रयोग करनेपर ज्यादा लाभ होता है)। गाढ़े अलकतरेकी तरह ज्यादा परिमाणमें स्राव (थक्का नहीं), पुट्ठे और योनिमें दर्द, ऐसा मालूम होता हो, मानो सभी नस-नाड़ियाँ योनिकी राहसे बाहर निकल जायँगी संगमकी इच्छा अधिक, जरायुमें प्रदाह और हमेशा तन्द्रावेश लक्षणमें, प्लैटिना ६। किसी-किसीका कहना है, कि इसके साथ क्रोकस पर्यायक्रमसे प्रयोग करनेपर फायदा होता है, खासकर पुरानी अवस्थामें ये दोनों दवाएँ फायदा करती हैं। ऋतुके पहले प्रसव-वेदनाकी तरह तेज दर्दके साथ दाने भरा, रक्त-स्राव और रह-रहकर दर्द होनेके लक्षणमें कैमोमिला १२ ; विना दर्दके ज्यादा परिमाणमें पतला या कभी गाढ़ा काले रंगका रजःस्राव, रजःस्रावकी वजहसे कमजोरी ; कानमें भों-भों

आवाज, जरायुके मुँहपर जलन, हर तीसरे दिन रोग बढ़नेके लक्षणमें, चायना ६। नाभि प्रदेशमें दर्द और उस दर्दका जरायुतक फैल जाना अविरत वमनेच्छा, सरमें चक्कर सरमें दर्द, चेहरा उजला और ठंडा, चमकीला लाल रंगका रक्त स्राव होनेपर, इपिकाक ३x—६। ऊपर लिखे लक्षणोंमें प्रसवके बादवाले आकस्मिक रज स्रावमें भी यह ज्यादा फायदा करता है। मूत्रनालीमें और गुह्यद्वारमें प्रदाह, रह-रहकर ज्यादा परिमाणमें चमकीला लाल रंगका रक्त स्राव (खासकर गर्भ-स्रावके बाद) होनेपर, इरिजिन ३x। चोट लग जानेके कारण जरायुके ज्यादा परिमाणमें रज स्राव होनेपर आर्निका २x या हैमामेलिस ३x फायदा करता है। ऋतु समयके बहुत पहले योनि द्वारमें खुजली और जलनके साथ श्वेत-प्रदरकी बीमारीवाली रोगिणियोंको ज्यादा स्राव होनेपर और वक्षस्थलमें दर्द रहनेपर, कैल्केरिया-कार्ब ६ (खासकर स्थूलांगियोंके लिये)। धमनीसे गहरा लाल रक्त-स्राव होनेपर और जांघोंमें दर्द रहनेपर (खासकर रक्त स्रावी प्रकृतिवाली रोगिणियोंके लिये) ट्रिलियम ६। विषम रक्त स्रावमें (जब किसी तरह रोग दबना न चाहे), तो दालचीनीका तेल (oil of cinnamon) पाँच बुन्द एक ड्राम दुधके साथ फी मात्रा सेवन करना चाहिये। कैल्के कार्ब ६, ऐलो ३x फेरम ६, फ्लेम्रि θ (फी मात्रा ५ बुन्द), सिकेलि ६, बेल ३, नाइट्रिक एसिड १—, ऐम्ब्रा ३, हेलोनियस १, आस्टिलेगो ३, हाइड्रैस्टिस θ और पीपलके पत्तेका रस (ficus religiosa १x) वगैरह दवाएँ बीच-बीचमें आवश्यक हो सकती हैं।

अशोक θ—बहुत ज्यादा रज स्राव, पेशावमें कष्ट, प्रदर। यह दवा नियमित रूपसे सेवन करनेपर धातु सम्बन्धी समस्त गड़बड़ियाँ दूर हो जाती हैं।

विरामकालकी चिकित्सा—ज्यादा रज स्रावकी वजहसे रोगिणीके बहुत कमजोर हो जानेपर—पल्सेटिला, फेरम, चायना या आर्सेनिक।

खूनके दौरानमें गड़बड़ी और बुखार रहनेपर, ऐकोनाइट। वात होनेपर, सिमिसिफ्यूगा। पतले दस्त, स्वरभंग और खाँसी या यक्ष्माका पूर्व लक्षण दिखाई देनेपर, कैल्केरिया-कार्ब। मानसिक उत्तेजना और मैथुन प्रवृत्तिकी अधिकतामें, फास्फोरस। बीच-बीचमें ज्यादा रज निकलना, पर दुर्बलताके सिवा रोगिणीके शरीरमें कोई दूसरी गड़बड़ी न दिखाई देनेपर, टिलियम। ये सभी दवाएँ ६ शक्तिकी प्रयोग करनी चाहियें।

साधारण नियम—बहुत ज्यादा शारीरिक और मानसिक परिश्रम मना है। यदि कोई कमजोर करनेवाली बीमारी या कोई धातुगत दोष हो और रोगिणी सबल रहे, तो रोगिणीको गर्म पानीके टबमें कमरतक डुबोकर १०-१५ मिनट रखने बाद, सूखे कपड़ेसे बदन पोंछ देनेपर फायदा होता है। हैमामेलिस θ, दसगुने साफ पानीमें मिलाकर उसमें पतले कपड़ेके टुकड़ेको या स्पंज भिगोकर योनिमें डाल रखनेसे भी फायदा होता है।

"जरायुसे रजःस्राव" देखिये।

बाधक-वेदना या ऋतु-शूल

(Dysmenorrhœa)

रजःस्रावकी गड़बड़ीके कारण तलपेटमें और कमरमें एक तरहका तकलीफ देनेवाला दर्द पैदा होता है, इसे "बाधक-वेदना" (कष्टरजः, रजःकृच्छ्रता या ऋतु-शूल) कहते हैं। बायें डिम्बाशयमें तेज दर्दके साथ थोड़ा रजःस्राव ; (ऋतुकालमें) तलपेटमें, मेरुदण्डमें, कमरमें या सब शरीरमें तेज दर्द, कमजोरी, सरमें दर्द, सरमें चक्कर, आलस्य, अग्निमान्द्य, मिचली या कै वगैरह लक्षण बाधक-वेदनामें मौजूद रहते हैं। अति मैथुन, जरायुकी स्थानच्युति, रक्त-संचयकी वजहसे जरायु-प्रदाह और श्वेत प्रदर वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है। जिन

औरतोंको वात या हिस्टीरिया या स्नायु-शूल रहता है, उनको अक्सर ऋतुमें तकलीफ होती है। जैन्थक्जाइलम और वाइबर्नम ओप्युलस बाधक वेदना उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

संक्षिप्त चिकित्सा—(१) प्रदाहिक या रक्त सचय जनित स्नायु-शूलमें—ऐकान, आर्स, आर्नि, बेल, ब्रायो, कोनायम, हिपर-सल्फर, लाइकोपोडियम, मर्क-कोर, मर्क-सोल, पल्सेटिला, सेबा, शिपिया।

(२) स्नायुविक ऋतु-शूलमें—कोलसि, कैमोमिला, सिमिसि, काफिया, जेल्स, हैमा, सिकेलि, जैन्थक्स।

(३) आक्षेपिक स्नायु शूलमें—वाइबर्नम-ओप्यु, आर्निका, आर्स, कैमो, केल्के, इग्ने, नक्स वोम, पल्स।

(४) प्रतिरोधक या जन्मगत ऋतु-शूलमें—बोरैक्स, कैल्के-कार्ब, कोनायम, हैमा, थूजा।

सिमिसिफ्यूगा ३ ६—ऋतुके पहले सरमें दर्द, (ऋतु-कालमें) प्रसव वेदनाकी तरह उदरमें दर्द, तलपेट और पुट्ठेमें दर्द, पीठमें दर्द और पाकस्थलीके ऊपर तेज दर्द, मैले रंगका थोड़ा रजःस्राव या थक्का-थक्का अधिक परिमाणमें रजःस्राव होनेके लक्षणमें यह लाभदायक है।

पल्सेटिला ३, ३०—कमर, तलपेट और पीठमें काटनेकी तरह या तोड़नेकी तरह दर्द, अग्निमान्द्य, अरुचि, सरमें चक्कर, जाड़ा लगना, अनियमित स्राव, ऋतुकालमें, पतले दस्त, देरसे ऋतु होना ; थोड़ा रजः-स्राव और कभी-कभी थोड़े परिमाणमें थक्का-थक्का काले या लाल रंगका स्राव वगैरह लक्षण रहनेपर, शान्त स्वभावकी औरतोंके बाधक-वेदनाकी यह बढ़िया दवा है।

बेलेडोना ६, ३०—जरायुमें और डिम्बाशयमें रक्त-संचयकी वजहसे पैदा हुए बाधकके दिनमें वस्ति गह्वरमें ज्यादा दर्द, दर्दके समय ऐसा मालूम हो, मानो पीछेसे पेटकी नस-नाड़ियाँ जोरसे धक्का देकर बाहर

निकलना चाहता है। रजःस्रावके एक दिन पहलेसे ही दर्द पैदा हो जाना ; ऋतुके समय पाखाना होनेके समय बहुत तकलीफ ; उदरमें काटनेकी तरह दर्द, मस्तिष्कमें बहुत रक्त-संचयके साथ ऋतु-शूल ; आँखें और मुँह लाल, कनपटीमें टपक वगैरह लक्षण होनेपर रक्त-प्रधान औरतोंके लिये यह बहुत ज्यादा फायदेमन्द है।

जेलसिमियम ३x—जरायुमें रक्त-संचयकी वजहसे खींचन, योनिद्वार और उरुमें अकड़नकी तरह दर्द, पहले पेटसे दर्द शुरू होकर धीरे-धीरे वह कमर और पीठके ऊपरी अंशतक फैल जाता है और गर्दनके पीछे ऐंठनकी तरह दर्द होता है ; कभी-कभी दर्द बन्द हो जाता है, इस समय रोगिणीको तन्द्रा और आलस्य होता है। बुखार रहनेपर यह और भी ज्यादा फायदा करता है। किसी-किसीके मतसे इसके साथ कालोफाइलम १x, पर्यायक्रमसे देनेपर और भी ज्यादा फायदा होता है।

कैमोमिला ६, १२—मैला या काले रंगका थक्का-थक्का खूनका स्राव प्रसवके दर्दकी तरह दर्द, बार बार पेशाब करनेकी इच्छा, उदरमें दर्द, कमरसे सामनेकी ओर ठेलनेकी तरह दर्द। वायु और पित्त-प्रधाना उग्र-प्रकृतिकी औरतोंकी ऋतु-शूलकी यह उत्तम दवा है।

काक्युलस ६—पेटमें ऐंठनकी तरह दर्द मालूम होना ; सीनेमें भार और साँसमें तकलीफ ; जरायुका आक्षेप ; बहुत कम मात्रामें काला खून निकलना या श्वेत-प्रदर ; सरमें तेज दर्द और सरमें चक्कर ; पेट-फूलना ; कभी-कभी बेहोशी और मिचलीमें यह उपकारी है।

जैन्थक्जाइलम १, ३x—काक्युलस वगैरह दवाओंसे थोड़ा फायदा होने या बिलकुल ही फायदा न होनेपर खासकर तलपेटसे लेकर पुट्ठे तक तेज दर्द और उसके साथ ज्यादा स्राव और बुखार मौजूद रहनेपर, "बाधक-वेदनाकी यह एक बहुत बढ़ियाँ दवा है।" सैकड़े अस्सी रोगिणियोंको इससे फायदा होता है।

कालोफाइलम १x—सुई गड़नेकी तरह दर्द; तलपेटका दर्द, शरीरके दूसरे दूसर अंगतक फैल जाता है, आक्षेप-मिला बाधक, उदरके निचले भागमें प्रसवकी तरह दर्द, हिस्टीरियावाली औरतोंको स्राव और प्रदर, ज्यादा परिमाणमें स्राव होनेके लक्षणमें इसका प्रयोग होता है।

विरट्रम-एल्बम ३, ६—पेटमें शूल-वेदनाके साथ मिचली और सरमें दर्द, हाथ, पैर, नाक आदि ठण्डे और कपालमें ठण्डा पसीना, गहरी सुस्ती, बेहोशी।

कैक्टस—तेज दर्दमें रोगिणी जोर-जोरकी रोने लगती है; गहरी सुस्ती।

बोरैक्स ३x विचूर्ण पेटमें दाहिनी ओरकी अपेक्षा बायीं ओर ज्यादा दर्द यह दर्द कन्धेतक उठकर डिम्बाशयतक उतर जाता है; जरायुसे झिल्ली निकलना।

सिपिया ६, ३०—आँखोंके चारों ओर काले चकत्तेकी तरह दाग पड़ना बदन पीला, मवरे रोगका बढ़ना, पित्त प्रधाना औरतोंकी बाधक वेदनामें यह ज्यादा फायदा करता है।

कालिन्सोनिया १x, ३—स्रावके साथ टुकड़े टुकड़े झिलीकी तरह कोई चीज निकलना और उसके साथ जोरका दर्द और कब्जियत।

हेलानियस ३—जरायुमें बहुत दर्द, जांघ और पीठमें लगातार दर्द, कच्चे सूतकी तरह स्राव।

नक्स-वामिका ६, ३०—असमयमें थोड़ा-सा रक्त-स्राव; जाड़ा मालूम होना, अग्निमान्द्य, सवेरके वक्त कै या मिचली।

सिकेलि-कोर ६—नियमित समयके बहुत पहले दाने दाने, मैला और बदबूदार स्राव, तलपेटमें बहुत दर्द (ऐसा मालूम होता है; मानो पेटकी सब चीजें योनिकी राहसे बाहर निकल पड़ेंगी); सब शरीरमें (खासकर हाथ पैरमें) ठण्डा पसीना; नाड़ी क्षीण; मूत्राशय

और मलाशयमें काटनेकी तरह दर्द ; स्राव न निकलना ; तेज दर्द और कमजोरी मालूम होनेके लक्षणमें ।

मैग्नेशिया-फास ३x, ६x चूर्ण—(गर्म पानीके साथ दस मिनटका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये)। पाकस्थली और जरायुमें ऐंठन पैदा करनेवाला दर्द ; स्रायु-शूलकी तरह दर्द ; गर्म प्रयोगसे घटता है (दर्द दूर करनेकी यह बढ़िया दवा है)। झिल्ली निकलनेवाला वाधक ।

एपिस ६—डिम्बकोषमें डंक मारनेकी तरह दर्द होनेके कारण रोगिणी छटपटाती हो, प्रसवके दर्दकी तरह दर्द ।

वाइबर्नम-ओप्युलस θ, ३x—ऋतु-कालमें दर्द एकाएक पैदा होकर आठ-दस घण्टोंतक रहता है, "जरायुमें तेज दर्द ;" इसके बाद समूचे पेटमें दर्दका फैल जाना । आक्षेपयुक्त वाधक (यह भी वाधकके दर्दकी वहुत अच्छी दवा है)।

नीचे लिखी (छठी शक्तिमें) दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है :—क्रोकस, मस्कस, लिलियम, प्लाटिना, ब्रायोनिया, क्यूप्रम, कोनायम, हैमामेलिस ३x, नाइट्रिक-एसिड, फास्फोरस, फाइटोलैक्का, सैवाइना, सिकेलि, सिनिसियो १x, सल्फर ३०, ग्रैफाइटिस, फेरम, ऐकोनाइट ३० ।

नियम—थोड़ा रजः-स्राव होनेकी वजहसे दर्द होनेपर गर्म पानीका सेंक देने या गर्म पोटलीसे सेंकनेसे भी फायदा हो सकता है । विजली

स्त्री-धर्मके कई उपसर्ग और दवाएँ

वहुत ज्यादा अनियमित स्राव, शीतल या तर पैर, रक्तहीनता, अस्वाभाविक चीजें खानेकी रुचि, दूधकी तरह श्वेत-प्रदर, खाँसी—कैल्के-कार्ब ३० ।

बहुत ज्यादा रजःस्राव, कमजोरी, काला ढेला-ढेला स्राव—चायना १।

अनियमित, काले रंगका स्राव, प्रसवके दर्दकी तरह दर्द, पाखाना लगना—नक्स-वोमिका।

अनियमित, बहुत ज्यादा मात्रामें स्राव ; प्रसवके दर्दके समान दर्द (खासकर सवेरे)—नेट्रम-म्यूर।

लगातार चमकीला खूनका स्राव, सहजमें जम जाता है, उसके साथ ही बहुत मिचली—इपिकाक।

चमकीले लाल खूनका ऋतुस्राव, टपककी तरह दर्द, साधारण आघातसे भी दर्द—बेल ३।

ऋतुके कुछ पहले और ऋतुकालमें कब्जियत, दोनों पैर ठण्डे—सिलिका।

ऋतु आरम्भके समय हैजाकी तरह लक्षण दिखाई देनेपर—ऐमोन-कार्ब।

ऋतु आरम्भ होते ही रोगिणीकी दूसरी तकलीफें घट जाती हैं, परन्तु ऋतु बन्द होते ही वे तकलीफें फिर मौजूद हो जाती हैं—जिंकम।

ऋतुकालमें अपनेको बहुत स्वस्थ समझती है—जिंकम।

ऋतु खूब ज्यादा, जल्दी-जल्दी होता है, काला थका-थका ; सूखी ; सर्दी लगना—ऐमोन कार्ब।

ऋतु खूब जल्दी-जल्दी होता है, स्राव ज्यादा और गर्म—बेल।

ऋतुकी वजहसे रोगिणी इतनी कमजोर हो जाती है, कि उसमें बोलनेकी ताकत नहीं रहती—कार्बो-ऐनिमेलिस।

ऋतुका रंग और प्रकृति :—"अण्डलालकी तरह लसदार श्लेष्मा-भरा"—ऐलम, ऐम्ब्रा, बोरैक्स, कैल्के-कार्ब, पल्स थूजा, कैलि-सल्फ।

ऋतुका रंग और प्रकृति :—ऋतुके साथ जननेन्द्रिय खुजलाती है—ऐम्ब्रा, कैल्के-आयोड, कैल्के-कार्ब, चायना, क्रियोजोट, मर्क, सिपिया।

ऋतुका रंग भूरा—लिलियम-टिग, सिपिया, क्रियोजोट, नाइट्रिक-एसिड।

ऋतुका रंग, काली आभा लिये—चायना, थ्लैस्पि ।

ऋतुका रंग, गाढ़ा—थूजा, सिपि, पल्स, आयोड, नाइट्रिक-एसिड, हाइड्रैस्टिस ।

ऋतुका रंग, पानीकी तरह पतला—सिफिलिनम, सिपिया, सल्फ, नाइट्रिक-एसिड, मर्क-कोर, ग्रैफा, ऐमोन-कार्व, आर्सेनिक ।

ऋतुका रंग और प्रकृति—तीखा जखम और जलन करनेवाला—ऐलम, कैल्के-कार्व, वोरैक्स, कैमोमिला, कोनायम, क्रियोजोट, लिलियम-टिग, मर्क, नेट्रम-म्यूर, आयोड, नाइट्रिक-एसिड, सिपिया, सिलिका, सल्फर ।

ऋतुका रंग और प्रकृति ढेला-ढेला— वेलेडोना, ऐण्टिम-क्रूड, सोरिनम, हाइड्रैस्टिस ।

ऋतुका रंग, दूधकी तरह सफेद—कैल्के-कार्व, वोरैक्स, पल्सेटिला सिपिया, कैलि-म्यूर, कैल्के-आयोड, ग्रैफा, कोनायम, सल्फर ।

ऋतुका रंग और प्रकृति, वदबू—सिपिया, सिकेलि, सोरिनम, मर्क, हिपर, क्रियोजोट, हेलोनियस, थ्लैस्पि ।

ऋतुका रंग और प्रकृति, वहुत ज्यादा—ऐलटेलस, थूजा, सिपिया, पल्स, स्टैनम, नेट्रम-म्यूर, मर्क, लैके, हाइड्रैस्टि, ग्रैफाइटिस, कैल्के-कार्व, आर्सेनिक, आर्ज-नाई ।

ऋतुका रंग और प्रकृति, पीव-भरा—कपड़ेमें पीला दाग लगता हो—स्टैनम, सिपिया, पल्स, मर्क, क्रियोजोट, कैलि-वाई, हाइड्रैस्टिस, कैलि-सल्फ, चायना, कैनाविन-सैट, ऐग्नस, वोविस्टा, आर्सेनिक ।

ऋतुका रंग और प्रकृति, जोरसे निकलना—सिपिया, ग्रैफाइटिस, (वहुत" देखिये) ।

ऋतुका रंग और प्रकृति—मांसके धोवनकी तरह, परन्तु वदबू नदारद—नाइट्रिक-एसिड ।

ऋतुका रंग और प्रकृति, यंत्रणादायक—सिलिका, सल्फर ।

ऋतुका रंग और प्रकृति, यंत्रणाहीन—ऐमोन-म्यूर, पल्स।
" " " रक्ताक्त—चायना, क्रियोजोट, मर्क कोर, मर्क-वाइवस, सिपि, थ्लेस्पि, नाइट्रिक-एसिड, कैल्के-कार्ब, कार्बो-वेज।
ऋतुका रंग और प्रकृति, डोरीकी तरह कड़ा, लसदार—केलि म्यूर, केलि-बाई, हाइड्रेस्टिस, ऐलम, इस्क्युलस, एसिड-नाइट्रिक ग्रैफाइटिस।
ऋतुका रंग और प्रकृति, हरी आभा लिये—वोविस्टा, मर्क, पल्स, सिपिया, थूजा, कार्बो-वेज फास्फोरस।
ऋतुका रंग और प्रकृति, सविराम (अर्थात ठहर ठहरकर ऋतु हो)—सल्फर, कोनायम।
ऋतुका रंग और प्रकृति, स्निग्ध या अनुत्तेजक—फ्रैक्सिन-अमेरिकाना, कैल्के फास, वोरैक्स पल्स, स्टैनम।
ऋतु देरसे होने या बन्द रहनेपर, थोड़ा स्राव, तीखा—कैलि कार्ब।
ऋतु जितना जल्द होनेकी आशा की जाती है, उससे भी जल्दी होनेपर—कैल्के कार्ब।
" रुका, हिस्टीरिया, स्नायु दौर्बल्य—सिनिसियो-ओर १x।
" रुका रहनेकी वजहसे नाकसे खून गिरना—ब्रायोनिया।
" जल्दी-जल्दी होता है और रज-स्राव बहुत दिनोंतक जारी रहनेपर भी पेटमें ऐंठन—नक्स-वोमिका ३x।
ऋतु जल्दी-जल्दी हो, बहुत ज्यादा मात्रामें, ऋतुके पहले शरीरके निचले भागमें भार मालूम होना—मस्कस।
ऋतु स्राव, सिर्फ दिनके समय—कास्टिकम, हैमामेलिस।
" केवल सवेरे हो—सिपिया।
" सिर्फ रातमें हो—वोविस्टा।
" सवेरे और सन्ध्याके समय—फैलाण्ड्रियम।
" सवेरे बहुत झोंकसे ज्यादा हो—वोविस्टा।

ऋतु स्राव, तीसरे पहर बन्द हो जाये—मैग्ने-कार्ब ।
   " लेटनेपर रुक जाता है—कैक्टस, कास्टि, लिलि-टिग ।
   " खूब ज्यादा और जल्दी-जल्दी हो, काला, थक्का-थक्का, पैरमें, दर्द, रातमें बढ़ना—ऐमोन-म्यूर ।
ऋतु होनेके कुछ ही पहले दोनों स्तनोंमें दर्द और सूजन—कोना ।
ऋतुके पहले और बाद बहुत ज्यादा रक्तस्राव (इस स्रावका रंग ऋतु-स्रावकी तरह नहीं रहता)—आस्टिलेगो ।
कष्टरजः, तलपेटका टटाना, प्रसव-वेदनाकी तरह तकलीफ, पेटमें शूलका दर्द—कैमोमिला ।
कष्टरजः, शान्त और डरपोक स्वभाववाली औरतोंका स्राव, काले रंगका और थक्का-थक्का—पल्स ३ ।
जखम, भार, पेटमें दर्द, योनि-प्रदाह—हेलोनियस θ (पानीके साथ फी मात्रा ५ बून्द सेवन करना चाहिये)। जरायुमें ताकत लानेवाली दवाओंमें यह सबसे अच्छी है ।
काला रंग, खूब जल्दी-जल्दी होता है, झिल्ली-जैसा, उसके साथ डिम्बाशयका दर्द—मैग्नेशिया-फास ।
काला थक्का-थक्का, उसके साथ ही कामोन्माद—प्लाटिनम ।
काला रक्त-स्राव, डोरीकी तरह, मानो उदरमें कोई जीवित पदार्थ घूम रहा है—क्रोकस ।
काला, परिमाणमें बहुत थोड़ा और बदबू, सिर्फ हिलने-डुलनेसे ही ऋतु-स्राव होता है—लिलियम ।
सिर्फ रातमें (या सवेरे ही) ऋतु-स्राव होनेपर—बोविस्टा ।
शरीरमें फुन्सियाँ होनेके बाद ही ऋतु होना—डल्कामारा ।
शरीरका रंग पीला, नाककी ठोरपर पीला दाग (देखनेमें घोड़ेकी जीनकी तरह), आँखोंके पास काले चकत्तेकी तरह दाग ; पेटमें शूल-वेदनाकी तरह दर्द, रजःस्राव थोड़ा या ज्यादा ; श्वेत-प्रदर ;

प्रसव वेदनाकी तरह निचले उदरमें दर्द ; काली या साँवले रंगकी औरतोंकी इस बीमारीमें—सिपिया ६ ।

चमड़ा मैला और चर्बी लगा रहनेकी तरह—नेट्रम म्यूर।

योनिकी बीमारीकी वजहसे स्नायुओंमें सुस्ती—जिंकम, वेल ६ ।

जरायुका बढ़ना—फ्रैंक्सिनस-अमेरिकाना θ (पाँच बून्दके हिसाबसे रोज तीन बार) प्रयोगसे बहुत जगह नश्तर लगवानेकी जरूरत मिट गई है। Aurnett's "Organ Diseases of women" पृष्ठ ४१, ४८, ४६ देखिये ।

जरायु-भ्रंश, योनि प्रदाह और जखममें—निम्फिया-आडोरेटा बत्तीके (nymphæa odorata-suppository) रूपमें काममें लानेपर बहुत फायदा होता है ।

सर्दी लगकर रजःस्राव रुक जानेपर—पल्स ।

सिर्फ दिनमें ऋतु हो, पर सोनेपर रुक जाये—कास्टिकम, ग्लिलियम, कैक्टस ।

दिनमें ऋतु होता रहता है, पर रातमें नहीं होता, लेकिन रातमें प्रदरका स्राव होता है और दिनमें नहीं होता—कास्टि ।

ऋतु दो तीन दिन बन्द रहकर फिर हो ; खून मैला पानीकी तरह या थक्का-थक्का—फेरम ।

दो सप्ताहके अन्तरसे ऋतु ; स्राव ज्यादा ; रजःस्राव एक सप्ताह या ज्यादा दिनोंतक स्थायी हो—टिलियम ।

हिलने-डुलनेसे ऋतु-स्राव हो अथवा चलनेपर ऋतु बन्द हो जाये—लिलियम-टिग ।

ज्यादा, तीखा—रस-टक्स ।

ज्यादा परिणाममें काला थक्का-थक्का रक्त-स्राव और इसके साथ दृष्टि-क्षीणता या बेहोशी—साइक्लामेन ।

बहुत ज्यादा स्राव, श्वेत-प्रदर, कपड़ा भींग जाता है और पैरतक टपक पड़ता है—सिफिलिनम ।

बहुत ज्यादा स्राव, काला तीखा, कुछ देर बन्द रहता है, फिर होता है—क्रियोजोट ।

ज्यादा स्राव, काला, थक्का-थक्का, प्रसव वेदनाकी तरह दर्द—कैमोमिला ।

ज्यादा स्राव, काला, मानसिक विषन्नता, पीठमें दर्द, दोनों स्तनोंमें काँटा बेधनेकी तरह दर्द—सिमिसिफ्यूगा ।

हर वार ऋतुकालमें पेटसे खून गिरनेपर—ऐमोन-कार्ब ।

हर वार पाखानेके साथ जरायुसे रक्त-स्राव, इसके साथ ही तलपेटमें, कमरमें और पीठमें दर्द—आयोड ।

प्रदर, सड़ा, दुर्गन्ध-भरा, तीखा, जखम और कमजोर करनेवाला—क्रियोजोट ।

प्रसव-वेदनाकी तरह दर्द और काले रंगके श्लेष्माके साथ थोड़ा रजःस्राव होनेपर—एपिस ।

वातके साथ ऋतुमें गड़बड़ी रहनेपर—सिमिसिफ्यूगा ३ ।

देरसे ऋतु होना, पर स्राव थोड़ा, एकाएक बन्द हो जाता है, कुटकुटाता है, तकलीफ होती है—सल्फर ।

दस्त, कै और ठण्डे पसीनेके साथ ऋतु-शूल और हिमांग—विरेट्रम-ऐल्बम ।

समयपर ऋतु होता है; पर स्राव थोड़ी देर रहता है और धीमा रहता है—लैकेसिस ।

रज बन्द होनेके समय शरीरमें ताप (या रह-रहकर बदन-गर्म हो जाये)—लैकेसिस ।

रक्त ज्यादा हो, चमकीला लाल रङ्गका स्राव—इपिकाक ३ ।

रातके समय या सोये रहनेपर ऋतु-स्राव हो, पर चलनेमें स्राव बन्द हो जाये—मैगनेशिया-कार्ब ।

जल्दी-जल्दी मूत्र होता है, मूत्रका परिमाण ज्यादा ; बहुत समयतक होता रहता है ; औधाई और हाथ पैर ठण्डे—कैल्के कार्ब ।

सोनेपर मूत्र-स्राव हो, बैठने या चलनेपर रुक जाये—क्रियोजोट ।

रुक-रुककर बहुत ज्यादा स्राव, मैला पानीकी तरह या काला थक्का-थक्का—फेरम ।

हमेशा खुली और ठण्डी हवामें आराम मालूम हो—पल्स ३ ।

सरलान्त्र और उदरतक ऐंठनकी तरह दर्द, मूत्र-शूल—कालोफाइलम १x ।

थोड़ा, देरसे हो, रजोरोध ; मूत्रमें पसीना वगैरह शरीरका सब रस स्निग्ध या अनुत्तेजक—पल्सेटिला ।

थोड़ा रजःस्राव, श्वेत-प्रदर, खासकर गोरी औरतोंका हरित् रोग ; खुली और ठण्डी हवामें उपशम—पल्स ३ ।

पानी घाटने या नहानेकी वजहसे मूत्र बन्द होनेपर—ऐण्टिम-क्रूड ।

स्राव अलकतरेकी तरह लाल ; सोनेके समय नहीं होता । संरुद्ध-भाव (constriction) या डिम्बाशय और जरायुमें दबाव मालूम हो, टपककी तरह दर्द—कैक्टस ।

स्राव रुकने या देरसे होनेपर (खासकर सर्दी लगकर होनेपर)—पल्सेटिला ३ ।

हृत्पिण्डके चारों ओर शूलके साथ बाधकका दर्द—कोनायम ।

प्रदर और श्वेत-प्रदर
(Leucorrhœa)

जरायुकी आवरक-झिल्लीसे, जरायुके भीतरसे और जरायुके मुँहसे, कई रङ्गोंका (जैसे—सफेद, पीला, नीला, दुधकी तरह, मांसके धोवनकी तरह या काला अलकतरेकी तरह) स्राव होता है, इसीको "प्रदर" कहते हैं। स्राव साधारणतः सफेद ही हुआ करता है, इसलिये इसका

साधारण नाम "श्वेत-प्रदर" हो गया है। गण्डमाला धातुग्रस्ता थोड़ी उम्रको बालिकाओंको भी कभी-कभी यह बीमारी हुआ करती है। समयपर इलाज न होनेसे धीरे-धीरे जरायुसे ज्यादा परिमाणमें पीवकी तरह स्राव होने लगता है और इसी कारणसे योनिके भीतर और मुँहपर जखम हो जाता है। कब्जियत, सरमें दर्द, पेट फूलना, पचनेकी क्रियामें गड़बड़ी और चेहरेपर रक्तकी कमी वगैरह लक्षण इस रोगमें मौजूद रहते हैं।

सर्दी लगना, क्रिमि, गन्दे रहना, उत्तेजक पदार्थ खाना-पीना, स्वास्थ्य बिगड़ना, ज्यादा संगम, बीच-बीचमें ज्यादा रक्त-स्राव, जरायुमें कोई उत्तेजक पदार्थ रहना, कर्कटिका होकर योनिमें प्रदाह, बार-बार गर्भपात वगैरह कारणोंसे श्वेत-प्रदर होता है। श्लेष्मा-प्रधान और गण्डमाला धातुग्रस्ता औरतोंको ही यह बीमारी ज्यादा हुआ करती है।

चिकित्सा—कैल्के-कार्ब ३०, २००—(दूधकी तरह सफेद प्रदर) जरायुमें जलन, खुजली, दर्द। "लड़कियों" और गण्डमाला धातु-ग्रस्ता औरतोंके प्रदरमें यह ज्यादा लाभ करता है।

पल्सेटिला ६—सब तरहके प्रदरोंमें यह फायदा करता है। सफेद रंगका गाढ़ा स्राव, ऋतुके बाद यह स्राव बढ़ जाता है (इसमें दर्द कभी रहता है और कभी नहीं भी रहता)।

सिपिया ६, २००—प्रसव-वेदनाकी तरह दर्द ; कब्जियत ; थोड़ा पीले या हरे रंगका बदबूदार स्राव या बदबूदार पानीकी तरह स्राव। क्षीणांगी और वायु-प्रधान स्त्रियोंके लिये यह ज्यादा फायदेमन्द है।

एसिड-नाइट्रिक ६—कितने ही रोग भोगने या गर्मी रोगके बाद (या बहुत ज्यादा पारा खानेके बाद) श्वेत प्रदर होनेपर यह दवा बहुत फायदा करती है। पहले धुमैला या गाढ़ा स्राव होकर पाँच छः दिन बाद, पतले पानीकी तरह या मांसके धोवनकी तरह बदबूदार स्राव होता है।

क्रियोजोट ६—दो ऋतुओंके बीचके समयमें या ऋतुके चार-पाँच दिन बाद पीले रंगका कच्चे धानकी तरह गन्ध-भरा पीले रंगका स्राव ; स्राव कपड़ेमें लगनेपर पीला दाग पड़ता है और सूखनेपर कड़कड़ करता है, स्रावमें बदबू ; जरायुके बाहर सूजन ; डंक मारनेकी तरह जलन और खुजली ; ऊरुमें स्राव लगकर खाल उधड़ जाती है और पीठमें दर्द होता है।

बोविस्टा १२—अण्डेके सफेद अंशके रंगका पुराना श्वेत-प्रदर और उसके साथ ही रोगिणी अपना माथा बढ़ा हुआ समझती है। ऋतुके दो-एक दिन पहले और बाद स्राव ; स्राव पीला या हरा, जलन या जखम बना देनेवाला। स्राव लगनेपर कपड़ेमें पीला दाग पड़ता है गाढ़ा लसदार स्राव ; कामेच्छा प्रबल ; चलनेके समय स्राव।

बोरैक्स ६—अण्डलालकी तरह प्रदर, अस्वाभाविक उत्तप्त प्रदर। ऐसा मालूम होता है, मानो उरुदेश होकर गर्म पानी गिर रहा है ; प्रदरके साथ वन्ध्यत्व। दो ऋतुओंके बीचमें प्रदरका स्राव होना।

ग्रैफाइटिस २० २००—सफेद, पतला, सवेरे बिछावनसे उठनेपर बहुत "ज्यादा श्वेत-प्रदर," पेशाबमें जलन, पीठमें बहुत कमजोरी मालूम होना। बैठे रहने या चलनेपर पीठमें कमजोरी अनुभव होना ; ऋतुके पहले या बाद दिन या रातमें प्रबल स्राव।

पेल्यूमिना ३०—जलन और जखम कर देनेपर स्राव, बहुत जलन करनेवाला स्राव, ठण्ड पानीसे धोनेपर कुछ आराम मिलता है। दिनमें स्वच्छ, पर प्रचुर स्राव। किसी भी दवासे जब फायदा न हो, तो इसे देना चाहिये।

सल्फर ३०—पुराना श्वेत प्रदर। बहुत दिनोंतक भोगनेपर दो एक मात्रा सल्फर देना चाहिये।

सफेद हरे रङ्गका स्राव होनेपर—मर्क सोल, सिपिया, कैल्के-कार्ब, चायना और नेट्रम-म्यूर। कृमिकी वजहसे पैदा हुए प्रदरमें—

साइना २x, २०० । पानीकी तरह पतले स्रावमें—सैबाइना, फेरम और पल्स । तेज और जलन पैदा करनेवाले स्रावमें—एसिड-नाइट्रिक, पल्सेटिला, क्रियोजोट और आर्सेनिक । गरम स्रावमें—ग्रैफ़ाइटिस ३x या हाइड्रैस्टिस ३x । दूधकी तरह स्रावमें—सिलिका, कैल्केरिया-कार्ब पल्सेटिला, लाइकोपोडियम और फेरम । खून मिले स्रावमें—क्रियोजोट, लाइकोपोडियम और चायना । हरे रंगके स्रावमें—कार्बो-वेज, सल्फर ३०, मर्क क्रियो । पीले रंगके स्रावमें—कैलि-बाई । स्रावमें बदबू—कार्बो-वेज, कैलि-कार्ब, सिपिया, पल्स । गाढ़े स्रावमें—सिपि, मेजेरियम, जिकम । सिर्फ रातके समय स्राव होनेपर—ऐम्ब्राग्रिसिया ३ या कास्टिकम ३० । केवल दिनके समय स्राव होनेपर—ऐल्यूमिना । सवेरे बिछावनसे उठते ही स्राव होनेपर—कार्बो-वेज । ये सभी दवाएँ ६ शक्तिकी देनी चाहियें । बीच-बीचमें दवा वन्द कर देनी चाहिये ।

मशहूर नश्तर लगानेवाले और प्रदरके इलाजमें सिद्धहस्त डा० एच० आई० आस्ट्रम एम० डी० साहवने प्रदरके सम्ब्रन्धमें जो कुछ कहा है, उसका सारांश नीचे लिखा जाता है :—श्लेष्म-मिला पीव-स्राव साधारणतः पीला आभा लिये होता है और उसमें पीवका हिस्सा ज्यादा रहता है, इस वजहसे वह गाढ़ी मलाई जैसा मालूम होता है ; जरायु-ग्रीवानाली-पथ (cervical canal) आक्रांत होनेपर साफ़-सुथरा श्लेष्मा गदले पदार्थ (कभी-कभी थोड़ा खून) के साथ मिलकर सूतकी तरह या डोरीकी शकलमें निकलता है । पल्स, सिपिया, ऐलट्रिस, कैलि-वाई, कैलि-क्लोर, हाइड्रैस्टिस, आयोडिन, क्रियोजोट प्रभृति दवाएँ इसमें फायदा करती हैं । आगे लिखी वायोकेमिक दवाएँ भी लाभदायक हैं:—कैल्के-फास (वहुत सन्तानवाली औरतको लाभ करता है) ; कैल्के-सल्फ (प्रदरजनित स्नायविक उपसर्ग मौजूद रहनेपर) ; पीवभरे-स्रावकी अमर प्रधानता हो, तो कैलि-फास भोजनके पहले गर्म पानीके साथ सेवन । (Ostrom's Leucorrœa या Cushing's Leucorrhœa देखिये) ।

नियम—रोज नहाना, जननेन्द्रियको दिनमें तीन-चार बार धोना और खुली हवाका सेवन उचित है। पिचकारी (female syringe) से ठण्डे पानीसे धो डालनेसे योनिमें बदबू नहीं पैदा हो सकती, परन्तु *गर्भावस्थामें* पिचकारीका व्यवहार न करना चाहिये। नाटक, नावेल पढ़ना, थियेटर वगैरहमें जाना और स्वामी-सहवास त्याग देना चाहिये। हल्की और पुष्ट चीजें खानी चाहियें।

प्रदरकी प्रकृतिवाले कई उपसर्ग और दवाएँ

प्रदर, तेज गन्धभरा, दुर्बलताके साथ खुजली, किसी अगमें लगनेसे लाल उधड़ जाती—क्रियोजोट ६।

,, अनुत्तेजक या स्निग्ध, गाढा ; देखनेमें दूध या मलाईकी तरह—पल्सेटिला।

,, अनुत्तेजक या स्निग्ध, गहरा भूरा रग, गाढ़ा, काला, जखम पैदा करनेवाला, श्वेतसारकी तरह ; कपडेमें पीला दाग पड़ता है ; कच्चे सरसोंकी तरह गन्ध—क्रियोजोट।

,, जखम-भरा चमडा और कपडेमे दाग पडता है—आयोड।

,, काला और बदबूदार—सिकेलि।

,, स्राव होनेके पहले गहरी हरी आभा—कार्बो वेज।

,, गहरा और गाढा—पल्स।

,, लसदार—कैलि-बाई, हाइड्रैस्टिस, ऐलूम, कैलि-म्यूर।

,, खुजली भरा—कैल्के-कार्ब।

,, पानीकी तरह—ऐमोन-कार्ब ग्रैफाइटिस, मर्क-कोर, सिपिया, सिफिलिनम।

,, पानीकी तरह, जलन, तीव्र—ऐमोन-कार्ब।

,, तेज गन्धभरा, पानीकी तरह, कुटकुटाता हो—नेट्रम-म्यूर।

प्रदर, तेज गन्ध, पतला पानी जैसा, पीला, किसी अंगमें लगनेपर वहाँकी खाल उधड़ जाती है। लिलियम-टिग, ऐल्यूमिना फेरम, फास्फो, मर्क-सोल।

,, अण्डेके सफेद भागकी तरह, नाभिकी चारों ओर शूल वेदना, पेशाबके बाद योनि-मार्गसे भूरा चिकना स्राव निकलना—ऐमोन-म्यूर।

,, अण्डेकी सफेद भागकी तरह—मानो गर्म पानी निकल रहा है, रोगिणी ऐसा समझती है—बोरैक्स।

,, दूधकी तरह, तेज गन्ध, पेशाब करनेके समय प्रदर-स्राव होता है—सिलिका, पल्स, कैल्के-कार्ब।

,, दूधकी तरह खुजली (खुजलाता हो) छोटी बालिकाओंके (खासकर कौलिक गण्डमालाग्रस्ता रोगणीके लिये) श्वेत-प्रदरमें—कैलि-कार्ब।

,, निष्कासित। ताजे मांसकी तरह, हरी आभा, बहुत बदबू—नाइट्रिक-एसिड।

,, ज्यादा, तेज, कपड़ेमें लगनेपर कड़ा और दाग हो जाता है—लैकेसिस।

,, बद्धमूल (अर्थात् कोई दवा खानेसे फायदा न हो)—ऐल्यूमिना ३०—३००।

,, बदरंग, प्रदरका स्राव, किसी अंगमें लगनेसे खाल उधड़ जाती है, स्तनोंमें अकड़न, संगमसे घृणा—ग्रैफाइटिस।

,, लाल रंग—काक्युलस, चायना।

,, रक्त-संचय, नयी बीमारीमें—बेल ३।

,, खूनकी तरह लाल (रह-रहकर पैदा हो), पारी बाँधकर होता है, काटनेकी तरह दर्द, दाहिनी ओरसे लेकर बायीं ओरतक फैल जाता है—लाइको।

प्रदर, श्वेतसारकी तरह सफेद, स्निग्ध, यंत्रणाहीन—बोरैक्स ३।
,, श्लेष्मामय—बोरैक्स, मैग्ने-कार्ब।
,, मलाईकी तरह, तेज गन्ध, काली औरतोंके लिये—सिपिया ३।
प्रदरके साथ जरायु निकलना, कमजोरी—हेलोनियस θ फी मात्रा ५ बून्द (प्रदरकी एक बढ़िया दवा है)।
प्रदरके साथ पीठ और कमरमें विकलता, चलना कठिन और कष्टकर—इस्क्युलस।
प्रदरके साथ बहुत कमजोरी और हमेशा थकन मालूम होना—एलिट्रिस-फेरिनोसा १।

रजोनिवृत्ति (Menopause)

पहले ही कहा जा चुका है, कि औरतोंको ऋतु ३०—३२ वर्षतक होता रहता है (जैसे—अगर चौदहमें वर्षमें किसी औरतको ऋतुका होना शुरू हुआ, तो प्रायः ४४ वर्षकी उम्रतक उसको ऋतु होता रहेगा)। साधारणतः ४० वर्षकी उम्रमें स्त्री-जननेन्द्रियमें खून कम इकट्ठा होने लगता है और ४५-५० वर्षकी उम्रमें ताकतवर औरतोंका भी ऋतु एकदम बन्द हो जाता है। इस अवस्थामें जरायुका आकार छोटा हो जाता है। योनि सिकुड़ जाती है और कमजोरीके लक्षण दिखाई देने लगते हैं। इस तरह आप-ही-आप ऋतु बन्द हो जानेपर फिर कोई दवा देनेकी जरूरत नहीं रहती।

परन्तु यदि सहजमें यह हालत न पैदा होकर स्नायुकी उग्रता (जैसे—शरीरमें तापकी झलक या बार-बार गर्म मालूम होना ; सरमें दर्द, कलेजा धड़कना, हिस्टीरिया), मिचली, कब्जियत, पेटमें वायु जमा होना, ज्यादा पसीना होना, बहुत पेशाब होना वगैरह लक्षण दिखाई दें, तो दवा देनी चाहिये। रज बन्द होनेके कुछ पहले कोई-कोई स्त्री खूब स्वस्थ और बलवान हो जाती है।

चिकित्सा—लैकेसिस ६—(इस रोगकी प्रधान दवा है) रह-रहकर तापकी झलक ; बार-बार गर्मी मालूम होना, पसीना, सरमें जलन, "नींदके बाद रोगके उपसर्गोंका बढ़ना ।"

सैंगुइनेरिया ३x या **एसिड-नाइट्रिक** ३—(स्नायविक लक्षणमें) यदि लैकेसिससे फायदा न हो ।

ज्यादा पसीना या लार निकलनेपर "जैबोरैण्डी २x ;" ज्यादा सर-दर्दमें "ग्लोनोइन ३ ;" माथेमें ज्यादा जलन मालूम हो, "चायना ६ या फेरम ६ ;" पाकस्थलीमें खालीपन मालूम हो "हाइड्रोसियानिक एसिड ६ ;" (रोगिणी अगर बलवान हो, तो डाक्टर लेडम हाइड्रो-एसिडके बदले "ऐकोनाइट ३" देनेकी राय देते हैं)। कैलि-कार्ब ६ (पित्त अधिक हो ; भूखकी कमीके साथ तापकी झलक हो), सल्फर ३०, इग्नेशिया ३, सिमिसिफ्यूगा ३, वैलेरियाना ३ (विषाद, अनिद्रा, गलेमें गोला उठता हो, ऐसा मालूम होना) ; सिपिया ३०, कैल्केरिया ३० वगैरह दवाओंको भी बहुधा जरूरी पड़ती है ।

रजोनिवृत्तिके समय किसी-किसी औरतको उन्माद रोग हो जाता है, साइक्लामेन ३ (खासकर अवसन्नता, रोना और अकेली रहनेकी इच्छाके लक्षणमें), हिप्पोमेनिस ६, ३० (विषन्नता, बेचैनी, रोगिणीको हमेशा जगह बदले बिना चैन न पड़ती हो), इस रोगकी बढ़िया दवाएँ हैं । "उन्माद" रोग देखिये ।

नियम—थोड़े गर्म पानीसे नहाना, जल्दी पचनेवाली चीजें खाना, समयपर सोना, थोड़ा परिश्रम, खुली हवाका सेवन उचित है । रोग घटानेके लिये बहुत-सी स्त्रियाँ उत्तेजक या नींद लानेवाली दवाएँ खाती हैं । ये बहुत नुकसान करती हैं ।

हरित्-रोग (Chlorosis)

इस बीमारीमें खूनके लाल-कणका भाग कम पड़ जाता है; इसी वजहसे शरीरका चमड़ा खड़ियाकी तरह सूखा, पीला या हल्का गन्धकी रंगका हो जाता है। नियमित समयपर अकसर ऋतु नहीं होता, शरीरका गर्मी कम हो जाती है, हमेशा जाड़ा मालूम होता है, सरमें दर्द, पलकें फूली, आँखोंके चारों ओर काला दाग, कलेजा धड़कना, नाड़ी क्षीण, ओठोंमें खूनका चिह्न न रहना, अजीर्ण, कब्जियत, चिड़चिड़ा स्वभाव, अरुचि वगैरह लक्षण पैदा हो जाते हैं। रक्त-स्राव हस्तमैथुन, ऋतुकी गड़बड़ी, नियमित शारीरिक परिश्रम न करना, दुश्चिन्ता वगैरह कारणोंसे यह रोग होता है।

चिकित्सा—फेरम-रेडैक्टम २x विचूर्ण—यह इस रोगकी प्रधान दवा है। एक ग्रेनके हिसाबसे दो वार सेवन करना चाहिये। ह्यू ज, वेयर, जूर्गो, ब्लेकी वगैरह सभी सुचिकित्सक इस दवाके पक्षपाती हैं।

डाक्टर गैचेल कहते हैं कि "फेरम-रेडेक्टम २x इस रोगकी सबसे अच्छी दवा है और इसके सेवनसे कितनी ही वार रोग आराम हो जाता है। शरीरका चमड़ा पीला, अजीर्ण, हमेशा जाड़ा लगना (कभी-कभी गर्मी मालूम होना या एकाएक मानो शरीरसे तापकी झलक निकलती है, ऐसा मालूम होना); सरमें दर्द, बहुत रजःस्राव या रजोरोध, इस दवाके प्रयोगके प्रधान लक्षण हैं।"

ग्रेफाइटिस ३x—स्वल्प-रजः सूखा, या रुखड़ा चमड़ा, कब्जियत, गर्भ-स्राव, शरीर मोटा हो जाना।

कल्के-कार्ब ३, ३०—बालिकावस्थामें रोग आरम्भ; १२ से १६ वर्षकी बालिकाओंको यह बीमारी होनेपर, स्नायु-शूल, सरमें चारों ओर पसीना, पैर ठण्डे, अस्थि-गुल्म (nodes) बढ़ जाना प्रभृति लक्षणोंमें। पुरानी सर्दी या अतिसार; पीठकी रीढ़ कमजोर या टेढ़े हो जानेकी

तैयारी ; रोगिणी यदि धीरे-धीरे मोटी होती जाती हो, तो इस लक्षणमें विशेष फायदा करता है ।

क्यूप्रम ६—लोहेसे बनी (या फेरम) दवाओंका अपव्यवहार ; गर्म पानीसे रोगका बढ़ना ।

फेरम-मेट—बहुत कमजोरी, मुँह और ओंठ पीले या खाकी रंगके अथवा हरी आभा लिये, सरमें चक्कर, कान भों-भों करना, कलेजा धड़कना, श्वासकष्ट, बहुत जाड़ा मालूम होना, रजोरोध ।

सिपिया १२—तेज सर-दर्द ; जरायु-प्रदेशमें दर्द ; हमेशा पेट खूब चिपका रहना ; स्वल्परजः या रजोरोध या बहुत दिनोंके बाद ऋतु होना ; पीला या हरे रंगका प्रदर कब्जियत, बकरीकी मींगीकी तरह मल ; जोर लगानेपर भी पाखाना न होना, सिर्फ वायु निकल जाना या श्लेष्मा निकलना, अधकपारीका सर-दर्द ।

वैलेरियाना θ—स्नायविक उपसर्ग या हिस्टीरियाके साथ हरित् रोग रहनेपर ।

आर्जेण्टम नाइट्रिकम ६—वमन, पेटमें दर्द, कलेजा धड़कना ; मूर्च्छा ।

हेलोनियस २x या **पिक्रिक एसिड** ६—पेशावमें फास्फेट (phosphates) की अधिकता ।

आर्सेनिक ३०—ज्यादा परिमाणमें रक्त-स्राव या शोथ होनेपर अथवा लोहेसे बनी दवाओंके अपव्यवहारसे पैदा हुआ रोग या रोगी कमजोर हो जानेपर इसका प्रयोग होता है ।

पल्सेटिला ३x, ६—ऋतु एकदम बन्द या परिमाणमें बहुत कम होना । सर्दी लगनेके कारण ऋतु बन्द होकर रोगिणी अगर धीरे-धीरे कमजोर हो पड़े । हमेशा सर्दी मालूम होना ; हाथ-पैर ठण्डे, कलेजा धड़कना, प्रदर देखनेमें दूध जैसा । रोना, गर्म घरमें रोगिणी एकदम न

रह सकती हो, खुली हवामें रहनेकी इच्छा (डा० Jahr इस रोगमें सबसे पहले पल्स देते थे)।

सल्फर ३०—ब्रह्मतालु तथा हाथ पैरकी तलहत्थीमें गर्मी मालूम होना ; कब्जियत ; रातमें बेचैनी ; प्रदर बहुत दिनोंतक रोग भोगनेपर।

नेट्रम-म्यूर १२x विचूर्ण, ३०—उदरदेशकी सन्धिमें सर्दी मालूम होना, तलपेटमें भार, शोथ, कब्जियत, मूत्र बन्द, परन्तु बीच-बीचमें कपडेमें दाग पड़ना, उत्कठा वगैरह लक्षणोंमें। पुराने दुर्दमनीय रोगमें यह फायदा करता है। प्लाटिना ६, फास एसिड ६, प्लम्बम ६, पेट्रोलियम ३०, कैल्के-फास ६x—३० और "रक्त स्वल्पता" तथा "यक्ष्मा कास" रोगीकी दवाएँ बीच बीचमें आवश्यक हो सकती हैं।

नियम—ठण्डे पानीमें (खासकर समुद्रके पानीमें) नहाना, साफ हवाका सेवन, दूध पीना, दलिया (pran) या जाँतके पीसे आँटेकी हाथसे बनाई रोटी खाना या सूर्यकी रोशनीमें इधर-उधर घूमना चाहिये। रोगिणीको कभी आलसीनकी तरह वक्त न बिताना चाहिये। कच्चा अण्डा या अण्डेका पीला अंश, छोटी मछली, तरकारी, ताजे पके फल, दूध, दही, मठा और ज्यादा परिमाणमें पानी पीना और कपडे उतारकर समूचे शरीरमें धूप लगने देना अच्छा है। "रक्त-स्वल्पता" अनुच्छेदमें "हरित् रोग" देखिये।

जरायुकी बीमारियाँ

(Diseases of the Uterus)

जरायुकी बीमारियोंमें नीचे लिखी कई प्रधान बीमारियोंका विषय क्रमसे लिखा जाता है :—(क) जरायुकी उग्रता, (ख) जरायुज मूर्च्छा, (ग) जरायु-प्रदाह, (घ) जरायुसे रक्तस्राव, (ङ) जरायुमें

वायु या पानी इकट्ठा होना, (च) जरायुका अर्वुद, (छ) जरायुकी स्थान-च्युति और (ज) जरायुकी दूसरी कई बीमारीयाँ।

जरायुकी उग्रता (Hysteralgia)

जरायुमें दर्द मालूम होना, समूचे वस्ति-देशमें टपककी तरह दर्द (यह दर्द स्नायविक, ऋतुके समय और हिलानेसे बढ़ता हो)। भूख न लगना, वेचैनी, मिचली, नींद न आना, पाकाशयकी गड़बड़ी, इस रोगके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा—सिमिसिफ्यूगा ३x, ३०—इस बीमारीकी प्रधान दवा है।

आर्निका ६—ऋतुकी हालतमें ज्यादा परिश्रम या प्रसवके बाद ही चलने-फिरनेके कारण यह वीमारी होनेपर।

इस बीमारीमें आमाशयकी गड़बड़ी और पाकस्थलीमें दर्द रहनेपर—"कैमोमिला ६, नक्स-वोमिका ३०, मर्क्यूरियस ६ या पल्सेटिला" ६ देना चाहिये।

हिस्टीरिया (Hysteria)

स्नायु सव (खासकर जरायुके स्नायु-समूह) की उग्रताकी वजहसे यह मूर्च्छा रोग पैदा होता है।

चिकित्सा—"गुल्म" रोगकी चिकित्सा देखिये।

मूर्च्छाकी हालतमें रोगिणीका मुँह और नाकका छेद "वहुत थोड़ी देरतक" अच्छी तरह वन्द रखने, कुछ ऊँची जगहसे उसके मुँहपर पानीकी धार इस तरहसे देनेसे कि उसका श्वास "कुछ देरके लिये" वन्द हो जाये, इस वजहसे वह एक वार जोरसे लम्वी साँस लेनेके लिये वाध्य होगी और तुरन्त ही वेहोशी दूर हो जायगी।

जरायु-प्रदाह (Metritis)

यह दो प्रकारका :—नया और पुराना।

नये जरायु प्रदाहमें—प्रसव या गर्भ-स्रावका खून दूषित हो जानेपर हमेशा यह तरुण प्रदाह हुआ करता है। इस बीमारीमें हमेशा जरायुकी गर्दनपर हमला होता है। बहुत जाड़ा लगना, तेज बुखार, तलपेटमें दर्द, इसके प्रधान लक्षण हैं। ये सब लक्षण दिखाई देते ही 'विरेट्रम-विरिडि' ३x देना चाहिये। इसके बाद 'नक्स-वोमिका' ३० की जरूरत पड सकती है। 'पाइरोजेन' ३०, बेलेडोना ६, कोलोसिंथ ६, रस-टक्स ६, लैकेसिस ६ भी बीच-बीचमें लाभ करते हैं। यह रोग कडा है, इसलिये उपयुक्त चिकित्सकपर निर्भर करना उचित है। खून दूषित न होनेपर, डरकी कोई बात नहीं है। सर्दी लगनेकी वजहसे होनेपर दो-तीन मात्रा ऐकोनाइट ३ देनेसे ही बीमारी आराम हो सकती है।

पुराना जरायु-प्रदाह—प्रसवके बाद जरायु संकुचित न हो, नकली उपायोंसे गर्भ होना रोका जाये या बहुत दिनोंतक हरित रोग भोगनेके कारण क्रमशः दर्द-भरा, कडा और बडा हो जाता है। इसे ही "पुराना जरायु प्रदाह" कहते हैं। पेट भारी मालूम होना, बाधकका दर्द, स्तन और कमरमें दर्द, ऋतुमें गडबडी, स्वामी सहवासमें दर्द और मलद्वारमें वेग, हिस्टीरिया वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

चिकित्सा सेबाइना ३x—साफ, लाल, थक्का-थक्का या ज्यादा पतला, बेशी मात्रामें खून निकलना।

बेलेडोना ३x—प्रकृत जरायु-प्रदाहमें डा० मैथसिन सिर्फ बेलेडोना पर भरोसा करनेकी सलाह देते हैं। "जरायु-प्रदेशमें जलन और दबाव मालूम हो, मानो उदरके भीतरवाले यंत्र आदि सब बाहर निकल पड़ेंगे।" ऐसे लक्षणमें बेलेडोना ज्यादा फायदा करता है।

सिपिया १२—प्रसवके दर्दकी तरह दर्द ; खून वहुत थोड़ा निकलना ; प्रसव-द्वारमें खुजली ।

हाइड्रैस्टिस ३x, ३०—जरायु-ग्रीवा या जरायुके मुँहपर और लड़का होनेकी राहमें जखम ; गाढ़ा और पीले रंगका प्रदर होनेके लक्षणमें ।

आरम-मेट ३०, आरम-म्यूर-नेट ३ विचूर्ण, पल्सेटिला ६, म्यूरेक्स ६, लैकेसिस ६, सिमिसिफ्यूगा ६, सल्फर ३० की भी लक्षणके अनुसार कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है ।

नियम—योनिको रोज दो-तीन बार अच्छी तरह धोना चाहिये । जरायुके मुँहपर जखम रहनेपर, दस भाग पानीके साथ एक भाग हाइड्रैस्टिस θ मिलाकर धो डालना अच्छा है । जबतक बीमारी अच्छी न हो जाये, तबतक सहवास करना या खूब कमर कसकर कपड़े पहनना उचित नहीं है । रोज समयपर नहाना, पुष्टिकर चीजें खाना और नियमित परिश्रम करना उचित है ।

जरायुसे रजःस्राव
(Metrorrhagia)

ऋतुके समयके अलावा, दूसरे समय अगर थोड़ा या अधिक खून जाता हो, तो उसे "जरायुका रजःस्राव" कहते हैं । ऋतुके खून जानेके साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं है ; इसीलिये ऋतुके साथ या उसके पहले या बाद भी यह रजःस्राव होता रह सकता है । इसमें अतिरजःकी तरह ज्यादा या थोड़ा खून भी जा सकता है । जरायुमें अर्बुद, प्रसवके बाद फूलका न निकलना, चोट लगना वगैरह कितने ही कारणोंसे ऐसा होता है । सुस्ती, भूख न लगना, बैठ जानेपर उठ न सकना वगैरह इसके प्रधान लक्षण हैं ।

निकला हुआ खून गहरा लाल या काला भी हो सकता है। लाल रंगका होनेपर "धमनीका रक्त-स्राव" (arterial or active hæmorrhage) और काला या बैंगनी होनेपर उसे "सिरका रक्त-स्राव" (venous or passive hæmorrhage) समझना चाहिये।

चिकित्सा—ठहर ठहरकर दर्दके साथ चमकीले रक्त-स्रावमें, सैवाइना ३x। बिना दर्दके काले रक्त-स्रावमें, हैमामेलिस ३x। चोटकी वजहसे बीमारी होनेपर, आर्निका ३x। गर्भ स्राव या प्रसवके बाद सिकेलि ३। अतिरजः, चमकीला लाल खून, तलपेटमें प्रसवके दर्दकी तरह दर्द, फिकस-रिलिजियोसा १x। काला-काला, ढेला-ढेला, खून गिरनेके साथ प्रचण्ड दर्द होनेपर—क्रैमो। रजोनिवृत्ति होनेके बाद भी बहुत दिनोंतक ज्यादा खून जाते रहनेपर—विंका-माइनर ३। बीमारी दुःसाध्य होनेपर, जब किसी दवासे फायदा न हो—थ्लेस्पि-बार्सा-पैस्टारिस θ—३x। पुरानी बीमारीमें—सल्फर ३० या सिपिया ३०। आर्ज-नाइट्रिक ६, हायोसायमस ३, लैकेसिस ६ और "अतिरजः", "बाधक" वगैरह बीमारियोंकी दवाएं लक्षके अनुसार इस रोगमें भी दी जाती है।

जरायुमें वायु या पानी जमा होना अथवा रक्त-संचय

प्रदाह वगैरह कारणोंसे जरायुमें वायु पैदा होता है और जरायुपर दबाव पड़नेसे वही हवा फसफस शब्दके साथ बाहर निकल जाती है; इसे ही "जरायुमें वायु सञ्चय" (physometra) कहते हैं। ब्रोमाइन ३—६, बेलेडोना ३x, एसिड-फास ३ या "लाइकोपोडियम" १२ इस रोगकी दवाएँ हैं।

प्रदाह या जखम सूखकर किसी-किसी स्त्रीके जरायुका मुँह बन्द हो जाता है, किसी-किसीके जरायुका मुँह जन्मसे ही बन्द रहता है।

जरायुका मुँह बन्द हो जानेपर जरायु धीरे-धीरे बड़ा होता है ; उसको ढँकनेवाली झिल्लीसे जल या खून निकला करता है। इसी वजहसे जरायुमें "जल-संचय" (hydrometra) या "रक्त-संचय" (hematometra) हुआ करता है। सिपिया ६—३० "जल-संचय" की और कैल्के-कार्ब ६, कार्बो-वेज ३० "रक्त-संचय" की उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

जरायुका अर्बुद
(Uterin Tumours)

कभी-कभी जरायु-गात्रपर या जरायु गह्वरमें कितने ही तरहकी फुन्सियाँ होती हैं। इनका आकार मटर या उड़दसे लेकर आध मनतक हो सकता है और ये गिनतीमें एकसे लेकर पचासतक हो सकती हैं। किसी फुन्सिसे खून और पीव निकलता है, किसीसे खून नहीं भी निकलता। कभी-कभी श्वेत-प्रदर भी मौजूद रहता है। इस बीमारीकी वजहसे खूनकी कमी होकर बाँझपनतक हो जा सकता है।

कैल्केरिया-आयोड ३x, विचूर्ण—(एक ग्रेनकी मात्रामें दिनमें चार बार सेवन करना चाहिये) सब तरहके अर्बुदकी यह बढ़िया दवा है। इससे फायदा न होनेपर—लैकेसिस ३०, कार्षिनोसिन २००, सिलिका ६x चूर्ण, सिकेलि २x, थ्लैस्पि २x, हाइड्रैस्टिननिम २x विचूर्ण वगैरह दवाएँ समय-समयपर आवश्यक होती हैं।

जरायुका दूषित अर्बुद
(Uterine Cancer)

यह सन्देह होनेपर कि जरायुमें अर्बुद हुआ है, थूजा ३—६ देना चाहिये ; परन्तु निश्चय हो जानेपर, हाइड्रैस्टिस θ सेवन और हाइड्रैस्टिस धावनका बाहरी प्रयोग करना चाहिये और आरम-म्यूरेट ३x सप्ताह या पक्षमें एक बार, कार्षिनोसिनम ३०—२०० सेवन करना

चाहिये। बहुत ज्यादा रक्त-स्राव होता हो, तो हैमामेलिसका बाहरी प्रयोग करना चाहिये।

आर्स-आयोड ६—जरायुमें दूषित अर्बुद रोग (cancer) की पहली अवस्थामें।

थूजा ३०—यदि दूषित अर्बुदकी अकुरवाली अवस्था बीत गई हो और आर्सेनिक आयोडसे फायदा न होता हो, उपदंशसे पैदा हुए अर्बुदमें भी यह फायदा करता है।

रूटा θ दूधकी चीनीके साथ एक मात्रा सिर्फ एक पक्षके अन्तमें सेवन करना चाहिये। एपिहिस्टेरिनम ३० (ज्यादा रक्त-स्रावमें) वगैरह दवाओंकी समय-समयपर जरूरत हो सकती है। "कर्कट रोग" देखिये।

जरायुकी स्थान-च्युति

(Displacement of the Uterus)

बहुत ज्यादा मेहनत, भारी चीजें उठाना, बहुत देरतक उकड़ू होकर बैठना, पाखाना होते समय काँखना, प्रसवके बाद जल्दी-जल्दी उठ बैठना, कब्जियत, हमेशा जुलाव लेना, बहुत सगम, बवासीर, कै, कसकर कपड़े पहनना, उछल-कूद करना और चोट वगैरह कारणोंसे जरायु कभी कभी अपनी जगहसे हट जाता है। इसे ही "नल्ला हटना" या "नाभि हटना" कहते हैं। यह साधारणतः दो तरहका होता है :— (१) अपनी जगहसे हटकर वस्ति गह्वरमें ही रहना ; (२) योनिके बाहर निकलना। इन दोनों तरहके नल्ला हटनेकी बीमारीमें जरायु या तो सामनेकी ओर झूल पड़ता है (या झुक जाता है) अथवा पीछेकी ओर हट जाता है (या उतर जाता है)। तलपेटमें दर्द (जरायुकी जगहमें), पाखाना-पेशाबमें तकलीफ, श्वेत प्रदर, रक्त स्राव या रक्त-स्खलता, बाधक, वन्ध्यत्व वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं।

सिपिया १२—इस बीमारीकी बहुत बढ़िया दवा है।

आरम-म्यूर-नेट ३x विचूर्ण, कैल्केरिया-फास १२x विचूर्ण, वेलेडोना ३x, सिमिसिफ्यूगा १x, फेरम-आयोड ३x विचूर्ण, सिकेलि ६, कास्टिकम ३०, स्टैनम ६, फ्रैकुसिनम θ लक्षणके अनुसार समय-समयपर आवश्यक होते हैं।

वहुत चढ़ना-उतरना, घूमना मना है। ऐसा उपाय करना चाहिये, जिसमें कब्जियत दूर होकर, सहजमें ही पाखाना हो जाये। जिन कारणोंसे यह बीमारी होती है, उन्हें त्याग देना चाहिये। होमियोपैथिक दवासे ही बीमारी आराम हो जाती है।

जरायुके कई दूसरे उपसर्ग

जरायुमें दर्द—सिमिसिफ्यूगा ३x और मैग्नेशिया-म्यूरियेटिका ६।

जरायुका फूल उठना—बहुतसे बच्चोंवाली (खासकर बूढ़ी)। औरतोंका जरायु फूल उठता है; "आरम-म्यूर ६x" विचूर्ण या सिपिया ६।

जरायुमें प्रबल रक्त संचय—वेलेडोना ३, सैबाइना ३x, विरेट्रम-विर २x, लिलियम-टिग ६—३०।

जरायु निकलना—सिपिया (थोड़ा रजःस्रावके साथ); म्यूरेक्स पर्प्युरिया ६ (ज्यादा रज); कैल्के-कार्ब ६—३० (पुरानी बीमारीमें ज्यादा स्राव); आरम-मेट [पुराने रोगमें जरायु कड़ा (indurated) पड़ जानेपर]; हेलोनियस ६ (कमजोरीके साथ वन्ध्यत्व और प्रदर); मर्क सोल ६, आयोड, हाइड्रोकोटाइल १x।

जरायुका सड़ना (gangrne)—आर्स ६, कार्बो वेज ६, ३०, सिकेलि ३, ३० या क्रियोजोट ६।

जरायुसे रक्त स्राव—"जरायुका रजःस्राव" देखिये।

डिम्बकोपकी बीमारियाँ

(Diseases of the Ovaries)

डिम्बकोपकी बीमारियोंमें नीचे लिखी चार प्रधान बीमारियोंका विवरण क्रमसे लिखा जाता है :—(क) डिम्बकोप-प्रदाह ; (ख) डिम्बकोपका सूजन ; (ग) डिम्बकोपका स्नायु-शूल ; (घ) डिम्ब-कोपका अर्बुद ; (ङ) डिम्बकोपके कई दूसरे उपसर्ग ।

डिम्बकोप-प्रदाह (Ovaritis)

यह रोग दो तरहका होता है—नया और पुराना । चोट लगना, तेज मिचली, ऋतुके समय सर्दी लगना या संगमके कारण रज बन्द हो जाना वगैरह कारणोंसे **डिम्बकोपका नया प्रदाह** पैदा होता है। बीमारी सहजमें अच्छी न होनेपर **डिम्बकोपका पुराना प्रदाह** पैदा हो जाता है। उस सन्धिके कुछ ऊपर (पेटके खूब भीतर) दर्द और कनकनाहट, दबाने या हिलाने-डुलानेसे दर्द बढ़ना, बुखार, कै, संगमेच्छा वगैरह इस रोगके प्रधान लक्षण हैं ।

नये प्रदाहकी चिकित्सा

एकोनाइट ३x—सर्दी लगनेके कारण ऋतु बन्द होकर प्रदाह, पेशाबमें तकलीफ ।

एपिस ६—दाहिने डिम्बकोपका प्रदाह, डंक मारनेकी तरह दर्द, थोड़ा पेशाब, प्यास न रहनेके लक्षणमें ।

लैकेसिस ६—बायीं ओरके डिम्बकोपका प्रदाह, पीब, जरायुके स्थानपर दबाव सहन न हो, यहाँतक कि कपड़ा लगनेसे भी तकलीफ होती हो ।

दूसरी-दूसरी दवाएँ—वेलेडोना ३x (खासकर सुई गड़नेकी तरह दर्द होनेपर), मर्क-कोर ६, पल्सेटिला ६, हैमामेलिस ६, कोलोसिन्थ ६, फेरम-फास १२x विचूर्ण लक्षणके अनुसार वीच-वीचमें प्रयोग करना चाहिये ।

पुराने प्रदाहकी चिकित्सा

कोनायम ६—डिम्बकोष "कड़ा" (अर्थात् पीव न पैदा होनेतक); थोड़ा रज निकलना और वन्ध्यत्व, डिम्बकोषका "कड़ापन" यदि कोनायमसे अच्छा न हो, तो प्लाटिना ६, ग्रैफा ३०, थूजा ६ (खासकर वायीं ओरका डिम्बकोष कड़ा रहनेपर); "आरम-म्यूर-नेट ३" विचूर्ण, लिलियम ६, कैल्के-फास ६x या सिमिसिफ्यूगा ३० देना चाहिये ।

लैकेसिस ६—डिम्बकोषकी पीव भरी अवस्था । पीव-भरे स्फोटकमें डा० हेरिंग एकमात्र लैकेसिसपर ही भरोसा करनेकी राय देते हैं, परन्तु ह्यूजका कहना है कि पीव पैदा होनेकी आशंका होनेपर मर्क-कोर; पीव पैदा होनेपर हिपर और सिलिका और पीव निकलनेके कारण रोगिणी बहुत क्षीण हो गई हो, तो चायना या फास्फोरिक-एसिड देना अच्छा है । ये दवाएँ ६ठी शक्तिकी व्यवहार की जा सकती हैं ।

प्रमेहके साथ डिम्बकोष-प्रदाह—नाइट्रिक-एसिड ६—३०, आरम-मेट ३—२००, पल्स ३—३०, मर्क ६ (यदि पहले पारा काममें न लाया गया हो), थूजा ३०—२०० ।

नियम—विश्राम और हल्का पथ्य देना उचित है । स्वामी सहवास मना है । सूखा सेंक (dry fomentation) देनेसे दर्दकी तकलीफ घट सकती है ।

डिम्बकोषका शोथ

(Ovarian Dropsy)

पानीकी तरह पीब-भरा शोथ कभी-कभी डिम्बकोषमें पैदा हो जाता है। इसे ही "डिम्बकोषका शोथ" कहते हैं। रोगिणीके अगमें भार मालूम होना, पेटमें सूजन (ठीक मानो गर्भ है); पाखाना, पेशाव और माँसमें तकलीफ, स्तनोंमें दूध जमा होना वगैरह गर्भके लक्षणोंकी तरह बहुतसे लक्षण दिखाई देते हैं।

चिकित्सा—एपिस ३ और आयोड ६ इस बीमारीकी प्रधान दवाएँ हैं।

एपिस ३—डिम्बकोषमें डक मारनेकी तरह दर्द, उद-देशतक अनुभव होता है—दाहिनी ओर ज्यादा होता है। दाहिना कोष बड़ा हो जाता है, उदरमें सूजन (ठीक मानो गर्भ है), पाखाना, पेशाव और श्वासमें कष्ट, वमन, स्तनमें दूध फोड़ा होना प्रभृति गर्भ लक्षणके सदृश लक्षण दिखाई देते हैं

आयाडियम ३—डिम्बकोषक जरायुतक गोदनेकी तरह दर्द, ऐसा मालूम होता है, मानो योनिकी राहसे सब बाहर निकल जायगा; जखम पैदा करनेवाला प्रदर, डिम्बकोष और दोनों स्तन सूखे।

आरम म्यूर-नेट्रानेटम ३x, प्लाटिना ३०, कैलि ब्रोम १x विचूर्ण, आस ६, ग्रैफाइटिस ६, लैक ६, मिकेलि ३, लाइको ६—३०, जिंकम ६ को कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

डिम्बकोषका स्नायुशूल

Ovaralgia)

यह स्नायविक दर्द है, इसका कारण डिम्बकोषका प्रदाह वगैरह नहीं है। दर्द एकाएक पैदा होकर चारों ओर फैल जाता है। कै, पेट फूलना, कलेजा धड़कना, पेशाव कम आना, इस रोगके विशेष लक्षण हैं।

नैजा ६—इस बीमारीकी उत्कृष्ट दवा है। सिर्फ इसीपर भरोसा कर कितनी ही रोगिणियाँ अच्छी हो गई हैं।

शूल-वेदनाकी आक्रमणवाली अवस्थामें 'ऐट्रोपिया' ३x विचूर्ण और विराम अवस्थामें "जिकम-वेलेरियाना" ३x विचूर्ण देकर डा० लडलामने बहुत-सी रोगिणियोंको फायदा होते देखा है। "स्टैफिसेग्रिया" ६, मानसिक उत्तेजनासे पैदा हुई बीमारीमें बहुत फायदा करता है। कालोफाइलम, सिमिसि, कोनायम, लैकेसिस, मैग-फास, आस्टिलेगो प्रभृति लक्षणके अनुसार व्यवहृत होते हैं।

यदि ठीक-ठीक न मालूम हो कि दर्द स्नायविक है या प्रदाहसे पैदा हुआ है, तो "हैमामेलिस २x, कोलोसिन्थ ६ या मैग्नेशिया-फास ३x १२x" विचूर्ण (गर्म पानीके साथ) सेवन करना चाहिये।

स्वामी-सहवास और मानसिक उत्तेजना मना है।

डिम्बकोषका अर्बुद
(Ovarian Tumours)

डिम्बकोषमें कभी-कभी अर्बुद होता है। इसमें डिम्बाशयमें बेहद तकलीफ, प्रदर, बुखार वगैरह लक्षण मौजूद रहते हैं। पेट बड़ा हो जाता है। कभी-कभी उदरी और जरायुका स्थानसे हटना भी हो जाता है; रोग धीरे-धीरे बढ़ता है। यथा समय इलाज न होनेपर रोगिणी मर जाती है।

बेलेडोना ३, आयोड १, एपिस ३, कैलि-ब्रोम १x, सिकेलि १, कोलोसिन्थ ३, "लैकेसिस ३०, आरम-म्यूर-नेट ३x" वगैरह लक्षणके अनुसार देना चाहिये।

डिम्बकोषके कई दूसरे उपसर्ग

डिम्बकोषकी स्थान च्युति—ब्यूफो ६, कोनायम ६।

डिम्बकोषमें कर्कट (Cancer)—आर्सेनिक ३x—६, क्रियोजोट ६ लैकेसिस ३०।

डिम्बकोषका कड़ापन (पुरानी अवस्थामें)—आरम म्यूर-नेट ३x" विचूर्ण, प्लैटिनम ६—३०, ग्रैफाइटिस ६—३० (स्वल्परजःके साथ डिम्बकोषका कड़ा रहना)।

डिम्बकोषका स्थूलकोष (Hydatid)—मर्क ३, कैन्थ ६।

डिम्बकोषमें दर्द—सिमिसिफ्यूगा ३ (जवानी आरम्भ होनेपर डिम्बकोषमें दर्द), नैजा ३ (खोंचा मारनेकी तरह तेज दर्द); हैमामेलिस ३x (डिम्बाशयमें दर्द, सूजन, अकड़न, ऋतुकालमें वेदना; अतिरज, गर्भावस्था या प्रमेह); कैन्थ ६ (ज्वालाकर वेदना); लिलियम टिग ३० (खासकर बाएं डिम्बकोषमें दर्द, जरायुदेशमें प्रसवकी पीड़ाकी तरह दर्द, जननेन्द्रियकी उत्तेजना); पल्स ३ (स्वल्प-रज के साथ डिम्बकोषमें दर्द और प्रदाह); पैलेडियम ६ (दाहिने डिम्बकोषमें दर्द, दबानेसे कम होना), लैकेसिस ६ (डिम्बकोषमें दर्द, जरायुमें प्रसवके दर्दकी तरह दर्द, जरायुका मुँह खुला मालूम होना); एपिस ३ (डंक मारनेकी तरह दर्द), कोलोसिन्थ ३—६ (डिम्बाशयको शूल-वेदना) हिपर ६ (डिम्बाशयमें दर्द और स्पर्श सहन न होना)।

दाहिने डिम्बकोषके रोगमें—बेलेडोना ३, कैल्के ६, सिपिया ६, लाइको १२, एपिस ३ आयोड ३०।

बाएं डिम्बकोषकी बीमारीमें—लैकेसिस ६, लिलियम-टिग ३०, कैलि-काब ६, स्टैनोनियम ६, नैजा ६x।

डिम्बकोषकी पुरानी बीमारीमें—कोनायम ३—६ (स्वल्परजः या विलम्बसे गर्भ धारण करनेपर) ; प्लैटिनम ६—३० (पुराने रोगमें उपदाहिका या उत्तेजनाके साथ अतिरजः वर्त्तमान रहनेपर) ; आरम-म्यूर-नेट्रो ३x (पुराने रोगमें डिम्बकोष कड़ा रहनेपर) ।

योनिकी बीमारियाँ

(Diseases of the Vagina)

योनि-देशकी बीमारीमें नीचे लिखी बीमारियोंका उल्लेख किया जायगाः—(क) योनिका प्रदाह ; (ख) योनिका आक्षेप ; (ग) अवरुद्ध योनि ; (घ) योनि भ्रंश ; (ङ) योनिमें खाज ; (च) योनिके दूसरे कई रोग ।

योनि-प्रदाह (Vaginitis)

योनिका रंग लाल, गर्म, सूजन और दर्द होकर पीव निकलता हो और उसके साथ ही यदि पेशाब होनेके वक्त तकलीफ रहती हो और योनिमें खुजली हो, तो "योनिका प्रदाह" हुआ है, यह समझना चाहिये। प्रमेह रोगका पीव लगना, ज्यादा संगम, बलात्कार, प्रसव-कालमें चोट, खून दूषित होना, योनिमें क्रिमिका घुसना, सर्दी लगना वगैरह कारणोंसे योनिका प्रदाह होता है। इस रोगमें अकसर रजोरोध नहीं होता। यह रोग दो प्रकारका होता है:—नया योनि-प्रदाह और पुराना योनि-प्रदाह ।

नया योनि-प्रदाह—जाड़ेके साथ बुखार, कमर, उरु और चूतड़में भार मालूम होना और दर्द ; योनिसे श्लेष्मा (सर्दी) निकलना, मूत्र कृच्छ्रता वगैरह "तरुण-प्रदाह" के लक्षण हैं ।

चिकित्सा—सर्दी लगकर प्रदाह होनेपर पहले ऐकोनाइट ३x, इसके बाद मर्क ३ फायदा करता है। प्रमेहके कारण होनेपर सिपिया १२ और चोटसे पैदा होनेपर आर्निका ३ सेवन करना चाहिये। पेशावकी तकलीफ अगर ज्यादा हो, तो कैन्थरिस ३x—६ देना चाहिये।

रोगिणीको किसी भी हालतमें चार-पाँच दिनोंतक शय्यासे न उठना चाहिये।

पुराना योनि-प्रदाह—योनिके भीतरकी श्लेष्मा निकालनेवाली झिल्लीमें नीली आभा लिये लाल रंगकी खुजलीके दाने पैदा होते हैं। योनिका शिथिल पड़ जाना और योनिसे सफेद, पीला वगैरह कई रंगोंका पीव ज्यादा मात्रामें निकलना "पुराने प्रदाह" के लक्षण हैं।

चिकित्सा—**मर्क** ३ और **सिपिया** २x विचूर्ण—डा० जूसोके मतसे पुराने प्रदाहकी ये दोनों प्रधान दवाएँ हैं।

बोरैक्स २x विचूर्ण—बहुत ज्यादा पीव निकलना।

नाइट्रिक-एसिड ६—पीव जलन और जखम होनेपर या फुन्सियाँ रहनेपर या पारेका दोष रहनेपर।

कैल्केरिया ६, पल्सेटिला ६, क्रियोजोट ६, इग्नेशिया २x (प्रदाहके साथ हिस्टीरिया) और सल्फर ३० बीच बीचमें आवश्यक होता है।

योनिका आक्षेप (Vaginismus)

किसी-किसी युवती स्त्रीका योनिद्वार तंग रहनेकी वजहसे और उसको ढँकनेवाली (hymen) झिल्लीमें अनुभव-शक्तिकी ज्यादती (hyperæsthesia) होनेपर योनिके चारों ओरकी पेशियाँ एकाएक सिकुड़ जाती हैं, इसे ही "योनिका आक्षेप" कहते हैं। संगमके समय पुरुषकी लिंगेन्द्रिय योनिमें घुस नहीं सकती और पेशियोंमें "आक्षेप" पैदा होकर बहुत दर्द होता है, यहाँतक कि रोगिणी बहुत बार बेहोशतक हो जाती हैं।

विवाहके बाद कितनी ही बहुएँ इसीलिये ससुराल नहीं जाना चाहतीं। उनके अविभावकोंको इसके कारणका पता लगाना चाहिये।

चिकित्सा—सिलिका ६, नक्स-वोमिका ६, वेलेडोना ६ और इग्नेशिया ६ इसकी प्रधान दवाएँ हैं। अगर शरीरमें किसी तरह सीसाका जहर (lead poison) घुस गयी हो, तो प्लम्बम ६ देना चाहिये।

एक बड़े टबमें गर्म पानी भरकर रोगिणीको कमरतक कुछ देरतक डूबा रखनेसे फायदा होता है। रोग जबतक एकदम अच्छा न हो जाये, तबतक स्वामी-सहवास मना है।

अवरुद्ध योनि
(Imperforate Hymen)

योनिका मुँह बन्द रहना या कुमारी झिल्ली (hymen) कड़ी रहना या उसमें छेद न रहनेका नाम "अवरुद्ध योनि" है।

(१) योनिके मुँहका भीतरी भाग बन्द रहनेपर या कुमारी झिल्ली कड़ी रहनेपर भी; रज निकलनेमें किसी तरहकी बाधा नहीं पैदा होती, सिर्फ योनिमें पुरुष लिंगेन्द्रिय प्रवेश नहीं कर पाती, इसीलिये जबतक पुरुषका साथ नहीं होता, तबतक औरतोंकी इस बीमारीका हाल कुछ भी मालूम नहीं होता। न उन्हें किसी तरहकी तकलीफ ही मालूम पड़ती है।

चिकित्सा—अंगुली या पुरुष-जननेन्द्रियके दबावसे यह झिल्ली सहजमें ही फट जाती है, यदि सहजसे न फटे, तो नश्तर लगवानेकी जरूरत पड़ सकती है।

(२) अगर कुमारी झिल्लीमें छेद न रहे, तो रज निकलनेमें रुकावट होती है। समयपर इलाज कराना उचित है।

चिकित्सा—(Probe) सलाईसे छेद कर देनेपर रज निकलने लगता है ; पर सगमकी जरूरत होनेपर ऊपर कहा हुआ उपाय काममें लाना चाहिये ।

योनि-भ्रंश

(Prolapsus Vaginae)

जरायुकी स्थान-च्युतिके साथ कभी-कभी योनि भी निकल पड़ता है, इसे ही "योनि-भ्रंश" कहते हैं । मलभाण्डमें कड़ा मल जमा होना या मूत्राधारका सूज जाना या तकलीफ देनेवाले प्रदरके दर्दके बाद, योनि बाहर निकल पड़ती है । तलपेटमें भार मालूम होना, इस बीमारीका प्रधान लक्षण है ।

चिकित्सा—स्टैनम ६ और क्रियोजोट ६ इस बीमारीको प्रधान दवाएँ हैं । सिपिया ३० (मलद्वारमें भार मालूम होना और ऐसा मालूम होना कि पेटकी सब चीजें बाहर निकल पड़ेंगी) ; आर्निका ३x (आघात या सगमकी वजहसे रोग) ; मर्क ६, वेल ६, लैकेसिस ६, सल्फर ३० और एपिस ६ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है ।

कुछ देर ठेस लगाकर सोना चाहिये ; दस-पन्द्रह मिनटके बाद, थोड़ी देरतक पानीमें बैठनेपर योनि सहजमें ही भीतर घुस जाती है ।

योनिकी खुजली

(Pruritus Vulvae)

शरीर कमजोर पड़ जानेपर, योनिके बाहरी भागमें कितनी ही तरहकी फुन्सियाँ पैदा होकर बहुत तकलीफ देनेवाली खुजली पैदा होती है, इसे ही "योनिकी खुजली" कहते हैं ।

चिकित्सा—सल्फर ३०—जलन पैदा करनेवाली असह्य खुजली और फुन्सियाँ, गर्म मालूम होना बवासीर ।

डलिकस ६—असह्य सूजन, 'खुजली', फुन्सी नहीं रहती, परन्तु रातमें बढ़ जाती है। कामला, सफेद दस्त, कब्ज और बवासीर रहनेपर।

आर्सेनिक ३०—जलभरी फुन्सियाँ, सड़ना आरम्भ होनेपर यह फायदा करता है।

कैलेडियम ६, मर्क ६, नाइट्रिक-एसिड ३०, लाइको १२, कार्बो-वेज ३०, नेट्रम-म्यूर ३०, नक्स-वोमिका ६, सिपिया १२, पेट्रोलियम ६, बोरैक्सकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

सहकारी उपाय—रोगवाली जगह हमेशा साफ रखनी चाहिये। कैलेण्डुला θ एक भाग, दस भाग पानी मिलाकर रोज दो तीन बार योनिको धो डालना चाहिये। इसके बाद कैलेण्डुला θ घीके साथ मिलाकर साफ रूईमें भिगोंकर योनिमें रख देना अच्छा है। योनिमें कांटेकी तरह केश होनेपर उन्हें पहले निकालकर तब दवा देनी चाहिये।

योनिके कई दूसरे रोग

योनिका अर्बुद—कार्बो ऐनि ३—३०, कार्बो-वेज ६—३०, आर्सेनिक ६, क्रियोजोट ६।

योनिसे वायु निकलना—ब्रोमियम ३—३०, लाइकोपोडियम ३०—२००, एसिड-फास ६—३०, बेल, नक्स।

योनिमें कोषाच्छादित अर्बुद होनेपर—बैराइटा-कार्ब ६, साइलिसिया ३०, सिपिया ६, सल्फर ३० या कैल्के-कार्ब ६ या कैल्के-फ्लोर १२x, आरम-आयोड, कैल्के-आयोड लैके, हाइड्रो।

योनिके अर्बुदसे खून जानेपर—कक्कस कैक्टाई ३x (असह्य दर्द); आर्निका ३ (चोट या संगमकी वजहसे स्राव); पल्स ३ (स्राव हमेशा बदलता रहनेवाला); फास्फोरस ६, लैकेसिस ६, क्रियोजोट ६।

योनिका सड़ना—आर्स ६, बेलेडोना ३, लैकेसिस ६।

योनिका कड़ा होना—बेल ३, कोनायम ६।

योनिका नासूर—सल्फर ३०, कैल्के-कार्ब ६, लाइको ३०, सिलिका ६, हिपर ६, आरम ६, थूजा ३०, सिपिया ३०, लैके ६।

योनिदेशमें भार या दवाव मालूम होना और उसके साथ बहुत दर्द और टटाना—स्राइलिसिया ६—३०।

संगमके समय योनिदेशमें बहुत कष्ट—स्टैफिसेग्रिया ३—३०।

योनिमें स्पर्शकातरता—ऐल्यूमेन ३०, २०० (योनिदेशमें बहुत अकड़न और बहुत तरहकी सूजनकी वजहसे उसका सिकुड़ा रहना) सेवन और हैमामेलिस θ (एक ड्राम एक औंस पानीके साथ) धावन बनाकर मुलायम कपडेके टुकड़ोंको भिगाकर, रातमें सोनेके समय योनिमें रख देना, सवेरे निकालकर फेंक देना उचित है। सिपिया इसकी बढ़िया दवा है। प्रदर, जरायु प्रभृतिका अपनी जगहसे हटना इत्यादिके कारण यह रोग होनेपर सिपियाके प्रयोगसे आशातीत लाभ होता है। ऐकोन, बेल, कोलो, सिमिसि, इग्ने, थूजा प्रभृति दवाओंकी समय-समयपर आवश्यकता हो सकती है।

वन्ध्यत्व (Sterility)

औरतोंमें लड़का पैदा करनेकी ताकतका न रहना ही "वन्ध्यत्व या बाँझपन" कहलाता है। औरतोंकी जननेन्द्रियमें (अर्थात् जरायु, डिम्बकोष या योनिमें) ऊपर लिखी हुई कोई बीमारी रहनेपर लड़का नहीं पैदा होता। यदि अच्छी तरह इलाज किया जाय तो यह बीमारी अच्छी होनेपर लड़का हो सकता है। कभी कभी पुरुषके दोषसे या औरतकी जननेन्द्रिय खूब पुष्ट न रहनेकी वजहसे वे बन्ध्या हो जाती हैं। ऐसे स्थलोंपर औरतोंको दवा खिलानेसे कोई फायदा नहीं होता।

परन्तु ये ऊपर लिखे कारण न होनेपर भी अगर किसी औरतको लड़का न होता हो, तो नीचे लिखी दवाएँ सेवन करनी चाहियें :—

कोनायम ३—बाँझपन दूर करनेकी एक बढ़िया दवा है (खासकर डिम्बकोषकी कमजोरी या क्षीणताकी वजहसे वन्ध्यत्व रहनेपर); थोड़ा रज निकलना और दोनों स्तनोंमें दर्द।

बोरैक्स ६—तेज श्वेत-प्रदर मिले वन्ध्यत्वमें।

आयोडिन ६ (स्तन संकुचित रहनेपर); सिपिया ३०, फास्फोरस ३०, आरम ३०, नेट्रम-म्यूर ३० की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है।

नियम—बहुत दिनोंका अन्तर देकर संगम करना चाहिये। यदि पुरुषके दोषसे लड़का न हो, तो पुरुषको भी कोनायम ३ या आयोडियम ६ सेवन करना चाहिये। "ध्वजभंग" रोग देखिये।

स्तनोंकी बीमारियाँ

(Diseases of the Breast)

स्तन-वेदना (Pain)

गर्भावस्था या प्रदरके अलावा भी बहुत बार दोनों स्तनोंमें दर्द पैदा हो जाता है। यह दर्द वातसे या स्नायुओंके दोषसे पैदा होता है।

कोनायम ३—ऋतुके पहले दोनों स्तनोंमें दर्द ; स्वल्परजः।

सैंगुइनेरिया ३x—दाहिने स्तनमें इतना दर्द कि हाथ न उठाया जाये और न साँस ली जाये।

अविवाहिता बालिकाओंके स्तनोंमें (खासकर बाएँ स्तनमें) बहुत दर्द होनेपर, सिमिसिफ्यूगा ३x। ऋतु होनेके एक हफ्ता पहलेसे ही स्तनोंमें दर्द और ज्यादा रज होनेपर, कैल्के-कार्ब ६, २०० ; स्तनमें दर्दके साथ स्वल्परजःके लक्षणमें, पल्स ३ ; स्तनोंमें दर्दके साथ प्रदरमें,

सियानोथस १x, २x ; स्तनमें जखम होनेकी तैयारी होनेपर, आर्निका ३x ; जखम होनेपर, सल्फर ३० ; वातसे पैदा हुई बीमारीमें, रैनानक्युलस २x ।

प्रसवके बाद स्तनोंकी बीमारी—"स्तनमें तकलीफ" देखिये ।

स्तनमें फोड़ा (Abscess)

बेलेडोना ३x—(फोड़ा होनेके लक्षणमें) स्तन कड़े, लाल, फूले और दर्द-भरे ।

ब्रायोनिया ३x—बेलेडोनाके लक्षणकी अपेक्षा स्तन ज्यादा कड़े ; स्तनमें बहुत तकलीफ ।

फाइटोलैक्का—यदि दो दिनोंतक ब्रायोनियाके सेवनसे फायदा न दिखाई दे, तो फाइटोलैक्का θ (दसगुने गर्म पानीके साथ) धावनका बाहरी प्रयोग करना चाहिये ।

हिपर-सल्फर ६x—पीब पैदा होनेपर । तीसीकी पोल्टीस या गर्म कैलेण्डुला θ (दस बुन्द एक औंस गर्म पानीके साथ) धावनका बाहरी प्रयोग करना चाहिये ।

साइलिसिया ३०—फोड़ेके बाद नासूर (sinus) कितनी ही बार साइलिसियाका असम्पूर्ण कार्य कैल्केरिया-सल्फ पूरा कर देता है ।

"स्तन प्रदाह" और "स्तनके बोटेमें जखम" रोग देखिये ।

स्तनमें अर्बुद (Tumour)

फाइटोलैक्का ३०—पुराने अर्बुदकी उत्कृष्ट दवा है ।

बाह्य-प्रयोग—फाइटोलैक्का θ एक भाग ; दस भाग पानीके साथ मिलाकर, स्तनपर जलपट्टी देनी चाहिये ।

लक्षणके अनुसार ब्रायोनिया, कार्बो-एनिमेलिस, कोनायम, सिमिसिफ्यूगा, थूजा वगैरहका प्रयोग होता है ।

स्तनमें कैंसर (Cancer)

हाइड्रैस्टिस १x—यह दूषित अर्बुदकी एक बढ़िया दवा है। दर्द बहुत ज्यादा रहे, तो हाइड्रैस्टिस बहुत फायदा करता है। हाइड्रैस्टिस θ (एक ड्राम चार औंस पानीमें मिलाकर) धावनका बाहरी प्रयोग करना चाहिये।

आर्सेनिक ३—असह्य जलन, बहुत बेचैनी और सुस्ती।

आर्सेनिक-आयोड ३x—स्तनके अर्बुदमें अगर जख्म हो जाये, तो आर्स-आयोड ज्यादा फायदा करता है।

कोनायम ३—अर्बुद कड़ा और दर्द-भरा, स्पर्श सहन नहीं होता लक्षणमें यह लाभदायक है।

सिमिसिफ्यूगा ३०—साधारणतः बायें स्तनकी बीमारीमें यह ज्यादा उपयोगी है। स्तन फूला और लाल, गर्म तथा दर्द-भरा। स्तनके भीतर गोल, चिपटा, कड़ा अर्बुद। जिन स्त्रियोंके जरायु या डिम्बकोषमें गड़बड़ी रहती है, उनके रोगमें ज्यादा उपयोगी है।

"स्तन-प्रदाह", "अर्बुद" और "कर्कट रोग" देखिये।

मेरुदण्डका उपदाह

(Spinal Irritation)

शरीर बहुत क्षीण होकर मेरुदण्डके स्थान विशेषमें रुका हुआ दर्द पैदा होता है। इसीका नाम "मेरुदण्डका उपदाह" है। इस रोगका प्रधान लक्षण यह है, कि दर्दवाली जगहको दबानेसे दर्द और भी बढ़ जाता है।

आर्निका ३—चोटकी वजहसे उपदाह।

सिमिसिफ्यूगा ६—जरायुकी किसी बीमारीके साथ उपदाह रहनेपर।

रस टक्स ६—आमवातके साथ उपदाह ।

आर्सेनिक ६—स्नायु शूलके साथ उपदाह ।

टेल्यूरियम ६, चिकेलि ६, पिकरिक एसिड २००, ऐगरिकस ६, आर्ज-नाई ६, थूजा ३०, सल्फर ३०, साइलिसिया ३० वगैरह दवाएँ भी कभी कभी जरूरी हो सकती हैं ।

नियम—थोड़े गर्म पानीसे पीठ धो डालना और खुली हवा सेवन करना फायदा करता है । "मेरुमज्जाकी उत्तेजना" देखिये ।

पिक-चंचु-अस्थि-प्रदेशमें दर्द
(Coccygodynia)

पिक-चचु अस्थिकी पेशी और विधान तन्तुओंमें कभी कभी स्नायु-शूल (neuralgia) की तरह तेज दर्द होता है । इसीको "पिक-चचु अस्थि-वेदना" कहते हैं । उठने, बैठने और पाखाना जानेमें दर्द होना इस रोगका खास लक्षण है । चोट वगैरह कारणोंसे यह रोग पैदा होता है ।

चिकित्सा—आघातकी वजहसे, "आर्निका ३x—६ या रूटा ३x" फायदा करता है ।

यदि चोटकी वजहसे दर्द न हो "फास्फारस" ६ या "लैकेसिस" व प्रयोग करना चाहिये । बैठे रहनेके बाद खड़े होनेपर अगर दर्द पैदा हो, तो लैकेसिस ६—१० ज्यादा फायदा करता है ।

"मेरुमज्जाकी बीमारी" रोग अध्यायमें "पिक चचु-अस्थि-प्रदाह" देखना चाहिये ।

औरतोंके 'गर्मी रोग", "प्रमेह" वगैरह बीमारियोंके लिये, हमारी प्रकाशित 'जननेन्द्रियके रोग" पुस्तक देखिये ।

गर्भ-धारण और प्रसव

(Pregnancy ; Labor)

स्त्री-पुरुषके यौन सम्मिलनके कारण स्त्री-गर्भमें सन्तानकी उत्पत्ति होती है। इसके बाद इस सन्तानको नौ महीने, दस दिनोंतक गर्भमें धारणकर माता प्रसव करती है। चिकित्सकके सिवा अन्य जनसाधारण इतना ही जानते हैं, कि इस तरह दस महीने गर्भमें रहकर सन्तान प्रसव हुआ करती है, इससे अधिक वे कुछ नहीं जानते। बहुत-सी सन्तानोंके पिता माताको भी पूछनेपर भी यही मालूम होता है, कि यद्यपि उन्होंने इतनी सन्तानोंका जन्म दिया है; पर सर्वनियन्ताके इस जनन-नियंत्रण कौशलके सम्बन्धमें उन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं है; इसमें कोई सन्देह नहीं, कि इसका ज्ञान न रहनेपर भी सन्तान-जननमें कोई गड़बड़ी नहीं होती, परन्तु यह अवश्य होता है, कि इस सम्बन्धमें ज्ञान न रहनेपर भगवानके सृष्टि-कौशलका एक बहुत बड़ा रहस्य उन्हें ज्ञात नहीं होता। इस अपरूप कौशलके सम्बन्धमें ज्ञान होनेपर, उससे सृष्टि कौशलका गूढ़ रहस्य समझमें आ जाता है और आप-ही-आप उस सर्वशक्तिमानके श्रीचरणोंमें माथा झुक जाता है। "गर्भ-विज्ञान" पृष्ठ संख्या १७३ से १९१ तक और पृष्ठ १३६४ देखिये।

स्त्री-डिम्ब और पुरुष वीर्य—इन दोनोंके सम्मिलनसे जीवकी उत्पत्ति होती है। इसीलिये यह जीव—जनक जननी दोनोंकी आकृति, मानसिक गति, रोग, स्वास्थ्य इत्यादिका भी अधिकारी होता है। यह भी ख्याल रखनेकी बात है, कि प्रत्येक सन्तानके जन्मके समय जनक-जननी इन दोनोंमें जिसकी प्रधानता जितनी ही अधिक रहती है, उतना ही दोष, गुणका अधिक भाग सन्तानमें आता दिखाई देता है; इस स्थानपर इस विषयकी विशेष आलोचना नहीं की जा सकती, अप्रासंगिक हो जाती है। अतएव, इस विषयमें जिसे अधिक जानकारी प्राप्त करनी हो, उन्हें

विद्वान डार्विनका क्रम-विवर्त्तनवाद(Darwins Dvolution theory) पढ़नी चाहिये। उसमें इस विषयपर बहुत विचार किया गया है।

स्त्री-डिम्ब और पुरुष-शुक्रकीट ये दोनों ही खुर्दबीनकी सहायता लिये बिना देखे नहीं जा सकते। इन दोनों अतिसूक्ष्म बीजमें जीवका भविष्य, मानसिक शक्ति, स्वास्थ्य, रोग, दोष, गुण तथा सूक्ष्म अंग-प्रत्यङ्गका बनना सभी छिपे हुए हैं। ये दोनों बीज ही जीवके सब कुछ हैं। यदि मनुष्य जरा सोचकर देखे, तो उसको मालूम होगा कि कितनी सूक्ष्म दो चीजोंसे उसकी यह सुरूप तथा शक्तिशाली देह प्रकट हुई है। इन दोनों बीजोंका स्रष्टा कौन है और वे किस तरह, कितने अपरूप कौशलसे इस सम्मिलित दोनों जीवोंकी वृद्धिके लिये अनुरूप क्षेत्र तैयार करते हैं, आदि बातोंपर विचार करनेसे ही उस अनन्त शक्तिशालीके पादपद्मोंमें आप-से-आप ही माथा झुक जाता है। यह पहले बताया जा चुका है कि कालल-नलमें स्त्री और पुरुष-बीज सम्मिलित होनेके बाद शुक्र-कीटकी पूँछ टूट जाती है और कालल नलके सूक्ष्म रोओंकी लहरके सहारे वह जरायुमें जा पहुँचता है। इस मिलनके बाद ही यह सम्मिलित बीज एक अदृश्य और अभावनीय शक्तिके बलसे सूक्ष्म-से-सूक्ष्मतर अशमें विभाजित होता रहता है। इस विभाजनको ही सेगमेण्टेशन कहते हैं। इस विभाजनके द्वारा ही विभिन्न अंग और शरीरके सूक्ष्म-सूक्ष्म अश-समूहोंकी पुष्टि होती है और समय पाकर उसका एक रूप तैयार हो जाता है।

जरायुमें जानेके बाद ही यह सम्मिलित बीज जरायुकी श्लैष्मिक-झिल्लीमें चिपक जाता है। इसी वजहसे उस समय जरायुमें बहुत ही कोमल नवीन आवरक झिल्लियाँ तैयार होती हैं। इन्हीं झिल्लियोंके सहारे पोषण प्राप्तकर और खाद्य संग्रहकर जीव क्रमशः बढ़ता रहता है। इसके बाद क्रमसे उसके चारों ओर एक थैली-जैसा आवरण तैयार हो जाता है। इस आवरणमें एक तरहका जलीय पदार्थ रहता है और इसी

जलीय पदार्थके बीचमें भ्रूण रहा करता है। भ्रूणकी नाभिसे डोरीकी तरह नाभि-रज्जु निकलकर जरायुके भीतरके फूल या प्लासेण्टा (कमल) में चला जाता है। यह कमल भी जरायुकी आवरक-झिल्लीसे मिला रहता है। यह कमल जरायुसे रक्तके साथ बच्चेके लिये पोषण खाद्य ग्रहणकर नाभि-रज्जु या नालकी राहसे भ्रूणकी देहमें फैला देता है और भ्रूणके शरीरसे अशुद्ध रक्त इसी नालकी राहसे कमलमें और कमलसे माताकी देहमें चला जाता है और माताके शरीरकी राहसे निकल जाता है। इसी वजहसे सन्तानका पोषण करनेके लिये गर्भवती माताको पुष्टिकर खाद्यकी जरूरत पड़ती है। इस देशमें अपूर्ण सन्तान जन्म, शिशु-मृत्यु और प्रसूति-मृत्युकी संख्या बहुत है। इसका कारण है, अपूर्ण पुरुष-वीर्य, अपूर्ण स्त्री-डिम्ब तथा गर्भवतीके लिये पुष्टिकर भोजनका अभाव। जो हो, इस देशकी शिशु मृत्यु-संख्या वास्तवमें हृदय-विदारक है। भ्रूण भ्रूणावरक थैलीके पानी (liquor aminii) में ही पेशाब करता है। साधारणतः भ्रूणको जरायुमें पाखाना नहीं होता ; क्योंकि भ्रूण खाद्यका सार रक्त ही माताके कमल संग्रह करता है। बाहरी खाद्य ग्रहणकर उसका पोषण नहीं होता, इसीलिये उसे पाखाना नहीं होता।

गर्भके विभिन्न मासोंमें भ्रूणके आकारका तारतम्य—प्रथम मासके अन्तमें—भ्रूणका आकार एक कबूतरके अण्डेके बराबर रहता है। दूसरे महीनेमें—मुर्गीके अण्डे या छोटे हंसके अण्डेकी तरह। तीसरे महीनेके अन्तमें—राजहंसके अण्डेकी भाँति और साधारण अंग-प्रत्यंग आदि भी हो जाते हैं। चतुर्थ मासमें—यह ५ इञ्च लम्बा हो जाता है। पाँचवें महीनेमें—८ इञ्च लम्बा। चेहरा बहुत कुछ वृद्धोंकी तरह, आँखोंके चिह्न हो जाते हैं। इस समय हृत्पिण्डकी क्रिया मालूम होने लगती है। इस समय यदि बच्चा पैदा हो जाये, तो तुरन्त मृत्यु हो जाती है या कई घण्टे ही जीवित रह सकता है। छठे मासमें—भ्रूण १२ इञ्च

लम्बा होता है और वजनमें तीन पावके लगभग रहता है। माथेमें केश भी आ जाते हैं, भौं और पलकोंका निर्माण भी हो जाता है। पुरुष होनेपर दोनों अण्ड बाहर निकलनेका उपक्रम होता है; इस समय जन्म होनेपर बच्चा १५-२० दिनोंतक जीवित रह सकता है। कोई-कोई ज्यादा दिन भी जी जाता है। सातवें महीनेमें—लम्बाई १४॥ इञ्च, वजन प्रायः सवा सेर। इस समय जन्म होनेपर बहुत यत्न किया जाये, तो बच्चे जी सकते हैं। आठवें महीनेमें—लम्बाई प्रायः १६ इञ्च, वजन पौने दो सेर। माथेके केश घने, पुरुष होनेपर बायाँ अण्डकोष निकल आता है, अंगुलियोंमें नख हो जाते हैं। इस महीनेमें पैदा हुआ बच्चा यदि खूब यत्न किया जाये तो जी सकता है। नवें महीनेके अन्तमें—लम्बाई प्रायः १८ इञ्च, वजन पौने तीन सेरके लगभग। दसवें महीनेमें या ४० सप्ताहमें—लम्बाई प्रायः २० इञ्च, वजन ३॥ सेर; नख, चर्म, अस्थि इत्यादि पूर्ण, आँखें भरपूर खुलीं। इस समय पूर्ण अवयवका होनेके कारण बच्चेके जीवित रहनेकी ही विशेष सम्भावना रहती है।

गर्भ संचारके बादसे मातृ-देहमें परिवर्त्तन

भगोष्ठ—तीसरे महीनेके बादसे भगोष्ठोंका आयतन और नमनीयता बढ़ जाती है। रक्तकी अधिकता होती है और रक्त-स्रावी ग्रन्थियोंकी भी क्रिया बढ़ जाती है। प्रसव-कालके कुछ समय पहलेसे ही इस परिवर्त्तनकी मात्रा बढ़ जाती है और इनके द्वारा ही प्रसवमें सहायता प्राप्त होती है।

योनि—रक्तकी अधिकता, नमनीयता और ग्रन्थियोंसे स्रावकी अधिकता पैदा हो जाती है। प्रसवके समय ही ये परिवर्त्तन अधिक होकर प्रसव मदद पहुँचाते हैं।

जरायु-मुख—इसका कड़ापन धीरे-धीरे घटता जाता है और वह कोमल तथा नमनीय होता है। रक्तकी अधिकता भी हो जाती है।

जरायु-मुखकी वृद्धिके साथ-ही-साथ वह बढ़ता जाता है। पहले तीन महीनोंमें जरायु-मुख अपेक्षाकृत नीचे, इसके वाद अपेक्षाकृत ऊपर और प्रसवके १० दिन पहलेसे ही अपेक्षाकृत नीचे उतर आता है। साधारण अवस्थामें तो जरायु-मुखकी राहसे एक सुईका घुसा देना भी कठिन होता है, पर गर्भ रह जानेके वाद, यह राह क्रमशः कोमल होती जाती है और गर्भके अन्तिम कई महीनोंमें क्रमशः छोटा-वड़ा हो-होकर प्रसव होनेमें सहायता करता है। जिन स्त्रियोंके एक वार भी प्रसव नहीं हुआ रहता है, उनका जरायु-मुखका छेद गोल, वहुत छोटा रहता है, पर जिन्हें सन्तान हो चुकी होती है, उनका जरायु-मुख बड़ा, छिद्र चिपटा और किसी-किसीका टूटा-फूटा होनेके चिह्न सव दिखाई देते हैं।

गर्भके लक्षण

ऋतुका न होना—सवसे पहला लक्षण है; परन्तु इस लक्षणपर विशेष भरोसा नहीं किया जा सकता; जरायु और डिम्वकोषकी वहुत-सी वीमारियोंमें तथा रक्ताल्पता और अर्वुद वगैरह रोगोंमें भी ऐसा हो जाता है।

मिचली और वमन—गर्भके प्रथम दो-तीन महीनोंमें यह लक्षण दिखाई देता है। जरायुका भ्रूणका रहना, जरायुका परिपोषण और परिवर्त्तनके कारण जरायु और वस्ति-गह्वरमें रक्त-संचय अधिक हो जाया करता है। इसी वजहसे जरायुमें और वस्ति-गह्वरमें अधिक रक्त आता है। इन कारणोंसे जरायुकी जो प्रतिक्रिया (reflex action) होती है, उसीसे वमन और मिचली पैदा हो जाती है। यह मिचली और वमन विशेषकर सवेरे ही होता है; सभी गर्भवतियोंको होता भी नहीं है। किसी-किसीको दो-तीन महीनोंतक लगातार हुआ करता है और कितनी ही गर्भवतियोंको समूचे गर्भ-कालमें होता रहता है। यह भी कोई निर्भर योग्य लक्षण नहीं है। उदर जरायु और डिम्वकोषका अर्वुद,

अन्त्रावरण-प्रदाह, अर्बुद प्रभृतिके कारण भी इस तरहकी मिचली और वमन हुआ करता है।

हृत्पिण्ड और श्वासयंत्र—अपना शरीर और भ्रूण, इन दोनोंके लिये, खूनका दौरान और रक्तका शोधन—करनेके कारण हृत्पिण्डको अतएव क्रिया अधिक करनी पड़ती है। इसीलिये उसमें सामान्य परिवर्त्तन हो जाया करता है; परन्तु यह कोई उल्लेख योग्य लक्षण नहीं है। अन्यान्य जरायु रोगमें भी ऐसी परिवर्त्तन हो सकते हैं।

मानसिक परिवर्त्तन—कोमल स्वभाववाली गर्भवती होनेपर वह कुछ चिड़चिड़ी और बदमिजाज हो जाती है, उसे क्रोध आ जाया करता है।

मूत्र—पेशाबमें अण्डलालकी अधिकता हो जाती है और पेशाबका परिमाण भी पहलेकी अपेक्षा बढ़ जाता है; परन्तु आपेक्षिक गुरुत्व घट जाता है।

रक्त—रक्तका परिमाण और रक्तके सफेद कण बढ़ जाते हैं।

त्वचा—चेहरेके रंगमें परिवर्त्तन हो जाता है। स्तनकी घुण्डी क्रमशः अधिक काली होती है, स्तन और नलपेटका चमड़ा फटा-फटा दिखाई देता है। [illegible] काले हो जाते हैं और नाभि ऊपर चढ़ जाती है।

जरायु—गर्भवती होनेके बाद जरायु क्रमशः बढ़ा करता है। यद्यपि यह स्वाभाविक रूपसे ही होता है, पर यह कोई निश्चित लक्षण नहीं है, क्योंकि प्रदाह अर्बुद इत्यादिके कारण भी जरायुका आकार बढ़ सकता है।

योनि—योनि और भगोष्ठके रंगमें गाढ़ापन और स्रावकी अधिकता दिखाई देता है।

नलपेट—क्रमशः बढ़ जाता है; साधारणतः चतुर्थ माससे ही यह लक्षण दिखाई पड़ने लगता है। पहले बताया जा चुका है कि

यह निर्भर योग्य लक्षण नहीं है। तलपेटका रंग क्रमशः गहरा होता जाता है। तलपेटपर फटे-फटे दागसे होते हैं। तलपेटकी दोनों पार्श्वकी अपेक्षाकृत ढीली पेशीमें दो हाथ रखकर, एक हाथसे दबाव डालनेपर, दूसरे हाथमें एक अपेक्षाकृत कड़ी चीज अनुभूति होती है। यह सन्तान भी हो सकती है और ट्यूमर भी हो सकता है।

स्तन—स्तनका आकार क्रमशः बड़ा होता जाता है, शिराएँ दिखाई देने लगती हैं, स्तनकी घुण्डीके चारों ओर काला दाग, दबानेसे स्तनसे दूधकी तरह पतला पदार्थ निकलना। यह एक विशेष निर्भर योग्य लक्षण है।

भ्रूण—पाँचवें महीनेके बादसे जरायु या तलपेटमें सन्तानका हिलना-डुलना अनुभव होता है। यह विशेष निर्भर योग्य लक्षण है; पर सभी गर्भिणियोंमें यह लक्षण स्पष्ट नहीं रहता। गर्भके अन्तिम कई महीनोंमें धात्री या चिकित्सक यदि स्वयं यह भ्रूण-संचालन गर्भिणीके उदरपर हाथ रखकर अनुभव कर सकें या देख सकें (कभी-कभी ध्यानसे देखनेपर भ्रूणका यह संचालन दिखाई दे जाता है), तो गर्भ रहनेका निश्चित मत दिया जा सकता है। पाँचवें महीनेसे भ्रूणके हृत्पिण्डकी आवाज सुन पड़ने लगती है। यदि चिकित्सक गर्भिणीके तलपेटपर स्टेथास्कोप रखकर परीक्षा करे और यह शब्द सुन पड़े, तो कह सकता है कि गर्भ निश्चित रूपसे रह गया है। एक घड़ीपर पतला तकिया रखकर उसपर स्टेथास्कोप लगाकर सुननेसे जिस तरहकी आवाज आती है, तलपेटपर स्टेथास्कोप लगाकर सुननेपर भी वैसी ही आवाज आती है, उस समय भ्रूणके हृत्पिण्डकी गतिकी आवाज प्रति मिनट १३० से १५० तक सुनी जा सकती है। यदि इस भ्रूणका धुक-धुक शब्द प्रति मिनट १२५ से १३५ बार हो, तो पुत्र होगा और यदि १४५ या उससे अधिक हो, तो कन्या होगी। ऐसी आशा की जाती है।

वेल्टमेण्ट—गर्भवती होनेके १४वें सप्ताहसे ३२वें सप्ताहतक यह लक्षण प्राप्त होता है। गर्भिणीको बिछावनपर तकियेके सहारे ठेस लगाकर बैठनेके बाद योनिमें दो अगुलियाँ प्रवेशकर, एकाएक ऊपरकी ओर ठेल देने बाद जरायुके भीतर पानीमें तैरता हुआ भ्रूण एकाएक ऊपरकी ओर चढ़ जाता है और फिर क्षणभर बाद ही नीचे उतरकर अंगुलामें दबाव डालता है। यह चिह्न एक खास निर्भर योग्य लक्षण है।

गर्भके अन्तिम कई महीनोंमें जरायुपर दबाव पड़नेके कारण बार-बार पेशाबका वेग होता है। जरायुके दबावके कारण मूत्राशयमें अधिक पेशाब सञ्चित नहीं हो सकता, इसी कारणसे ऐसा होता है।

गर्भका स्थितिकाल—अन्तिम ऋतु स्रावके बाद २७५ दिनसे २८२ दिनके भीतर प्रसव हो सकता है, परन्तु इसका कोई बँधा निश्चित नियम नहीं है। व्यक्तिगत विशेषता, नित्य नैमित्तिक जीवन व्यतीत करनेका तारतम्य, ऋतु स्रावका तारतम्य इत्यादिके अनुसार इन प्रसवके दिनोंमें भी घटा-बढ़ा हुआ करती है। "प्रसव दिन निर्द्धारण तालिका" देखिये।

गर्भावस्थामें पालनीय कितने ही नियम—यह मालूम होते ही कि गर्भ रह गया है खासकर पाँचवें महीनेके बाद स्वामी-सहवास एकदम मना है। इस बातपर विशेष नजर रखनी चाहिये कि दस्त साफ आये और किसी तरहका चर्म रोग न हो जाये। गर्भवतीको अपने पोषणके अतिरिक्त भ्रूण रूप एक अधिक प्राणीके भरण पोषणके लिये और प्रसवावस्थामें रक्त स्राव आदिसे जो क्षय होता है, उससे कमजोरी न आने पाये इसके लिये सहजमें पचनेवाले और पुष्ट भोजन करने चाहियें। इस बातपर नजर रखनी चाहिये कि कब्जियत न हो और पतले दस्त भी न आने लगें। गर्भवतीको किसी तरह आलसी जीवन न बिताकर थोड़ी मेहनतवाले गृहस्थीके काम-काज करते रहना चाहिये। सवेरे-शाम भ्रमण करना चाहिये, नहीं तो प्रसवके समय बहुत तकलीफ भोगनी

पड़ती है। जो गर्भके समय गृहस्थीका काम-काज, जिनमें ज्यादा परिश्रम नहीं होता, किया करती हैं, उन्हें प्रसवके समय बहुत थोड़ी तकलीफ होती है। घरवालोंको भी इस बातपर ध्यान रखना चाहिये कि वे ऐसे कार्य करें, जिससे गर्भवतीका मन हमेशा प्रसन्न रहे। गर्भवतीको अच्छी बातें कहना, सद्चिन्ता, सदालाप, सद्ग्रन्थ-पाठ, अच्छी स्त्रियोंसे मिलना-जुलना आदि कार्य करने चाहियें। डरावनी चीजें या जीव-जन्तु गर्भवस्थामें देखना उचित नहीं है। हमेशा अच्छी चीजें देखना ही कर्त्तव्य है। ऐसी जगहमें रहना उचित है, जहाँ रोशनी और हवा अच्छी मिलती हो। प्रसवका काम स्वाभाविक तथा ठीक प्रकृतिके नियमानुसार ही हुआ करता है। सैकड़े दोसे अधिक अस्वाभाविक प्रसव नहीं होता। यह ध्यानमें रखकर प्रसवके भयसे भयभीत न हो जाना चाहिये। पेशावमें अण्डलाल न रहे तथा इस बातपर भी नजर रखनी चाहिये कि निम्नांगमें शोथ न हो जाये। ये दोनों ही बहुत बुरे लक्षण हैं। गर्भके अन्तवाले कई महीनोंमें घोड़ा गाड़ी या पालकीपर चढ़ना, भारी चीज उठाना, पानी खींचना आदि उचित नहीं है। इससे गर्भपात हो जानेकी सम्भावना रहती है। यदि गर्भवतीका मन प्रसन्न नहीं रहता, तो सन्तान भी बदमिजाज होती है, दुश्चिन्ता करनेपर सन्तानका स्वभाव विगड़ जाता है, शरीर रोगी रहनेपर सन्तान स्वल्पजीवी होती है और जीवनभर रोगी बनी रहती है। हमेशा सुन्दर चीजें दर्शन करनेपर सन्तान सुन्दर और सुखी रहती है और भयावनी कदाकार चीजें देखनेपर सन्तान भी कुरुप और विकलांग होती है तथा गर्भपात हो जानेकी आशंका बनी रहती है। शरीरसे खूब चिपका या सटा हुआ वस्त्र अथवा खूब कसकर साड़ी न पहननी चाहिये। इससे पेटपर दवाव पड़नेके कारण सन्तानको बहुत हानि पहुँचती है। ऊँचो जगहपर चढ़ना उतरना, जोर-जोरसे चलना या एक हाथ ऊँचाकर ऊँचेपरकी चीज उतारना आदि कार्य छोड़ देना चाहिये।

प्रसवका कार्य

अब संक्षेपमें प्रसवके सम्बन्धमें बताया जायगा और अन्तमें प्रसवमें सहायता करनेवाली दवाएँ तथा कष्टकर प्रसवको नियंत्रण करनेवाली दवाएँ बतायी जायगी। प्रसूति-परिचर्या चिकित्सा-शास्त्रका एक खास अंग है। अतएव, संक्षेपमें उसका बता देना तो बहुत ही कठिन है; फिर भी यहाँ सुधी पाठकोंकी इस विषयपर रुचि पैदा करने और मुफस्सिलमें रहनेवाली गर्भिणी माता तथा भगिनियोंके लाभके लिये, इस आशासे लिख दिया जाता है, कि कुछ-न-कुछ लाभ इससे अवश्य ही पहुँचेगा। इस उपदेशको ठीक-ठीक जानते हुए यदि कार्य किया जायगा, तो प्राकृतिक नियमसे स्वाभाविक प्रसव होनेकी ही सम्भावना रहेगी। यदि दैवात् कहीं कुछ गड़बड़ी हो जाये, तो स्थानीय अभिज्ञ चिकित्सककी सहायता लेनी चाहिये।

स्वाभाविक प्रसव—पहले ही कहा जा चुका है, कि किसी रमणीके गर्भवती होनेपर भ्रूण माताके उदरमें जरायु नामक नमनीय तन्तुमय आधारमें क्रमशः बढ़ा करता है और गर्भवती होनेके २८० दिन बाद या साधारण गणनाके अनुसार ६ महीने १० दिनके बाद योनि पथसे बाहर निकलता है। जरायुको नाड़ी भी कहते हैं। जितना ही भ्रूण बढ़ता है, जरायु भी उतना ही बढ़ता जाता है। गर्भमें भ्रूणका माथा नीचेकी ओर, पैर आसन लगाकर बैठे रहनेकी तरह, छाती सिकुड़ी और दोनों हाथ छातीपर रखे हुए—इसी भावसे रहता है। जरायुमें एक स्वच्छ पर्देकी थैलीके बीचमें पानीकी तरह पदार्थके भीतर भ्रूण तैरता हुआ रहता है। इस पर्देकी थैलीको ऐमोनियेक सैक (amoniac sac) और उसके भीतरके जलीय पदार्थको ऐमोनियेक-फ्लुइड (amoniac fluid) कहते हैं। प्रसवके समय जिसे 'पानी निकलना' कहते हैं, वह भ्रूणके माथेके पासवाले पर्देकी थैली फटकर ही निकला करता है। इस जलको

उपयोगिता विचारकर देखनेपर मालूम होता है, कि एक तो यह जरायुके भीतरकी भ्रूण देहके दवावकी समताकी रक्षा करता है। प्रसवके समय यह समता-रक्षा वहुत ही आवश्यक होती है। दूसरे इस जलीय-पदार्थमें चिकनापन रहनेके कारण यह प्रसवके समय प्रसव-द्वारको चिकना और फिसलहन-भरा वना देता है। इस तरह प्रसव होनेमें वहुत कुछ सुविधा हो जाती है।

प्रसवके कुछ दिन पहले गर्भवतीका पेट झूल पड़ता है। इस झूल पड़नेका मतलव है, सामने और नीचेकी ओरके घेरेका बड़ा हो जाना। इसका कारण यह है कि इस समय भ्रूणका गात्र अस्थिमय वस्ति-गह्वरसे आ लगता है और ऊपरी पेट वहुत कुछ खाली हो जाता है तथा नीचेकी ओर वहुत कुछ अंश फैल जाता है। इससे गर्भवतीको आराम मिलता है और वह विना प्रयास श्वास-प्रश्वासकी क्रिया सम्पादन कर सकती है।

इस समय जरायु-मुख लगातार फैलता जाता है और इसी कारणसे जरायु-मुखके वहिर्द्वार (योनि) की और अन्तर्द्वार (जरायु-मुख) की दूरी क्रमशः घटती जाती है।

प्रसवके कुछ दिन पहलेसे ही धीमा-धीमा दर्द हुआ करता है। इसे "नकली या अप्रकृत प्रसव-वेदना" (false pain) कहते हैं। इस नकली दर्दके कारण जरायुकी वृद्धि, आँतोंमें दबाव और सामान्य वदहजमी-सी हो जाती है। यह वदहजमी हल्का जुलाव लेनेसे ही दूर हो जाती है और साथ-ही-साथ दर्द भी दूर हो जाता है। स्थायी और प्रसव-वेदनाके साथ इसका यही प्रभेद है, कि यह नकली प्रसवका दर्द उदरके ऊपरी भागमें होता है, दर्द अस्थायी और अनियमित होता है। असली प्रसवका दर्द प्रायः कमरके पीछेकी ओर चतुर्थ कटि-कशेरुका अस्थिके स्थानपर होता है और दर्द भी नियमित भावसे और स्थायी होता है।

प्रथम अवस्था—प्रकृत प्रसव-वेदनासे आरम्भकर जरायु-मुखके प्रसारण या फैलनेतक जो कुछ परिवर्त्तन होता है, उसको प्रथम अवस्था कहते हैं। यह कई घण्टोंसे लेकर कई दिनोंतक स्थायी हो सकती है। इसी समय असली प्रसवका दर्द होना आरम्भ होता है। गर्भवती बेचैनीसे टहलती रहती है। साधारणतः आधे घण्टेका अन्तर देकर इस तरहके दर्दकी लहर आती है। कमरकी हड्डीपर दबाव पड़ रहा है—ऐसा ही इस दर्दमें अनुभव होता है। गर्भवतीको बार-बार पेशाबका वेग होता है। किसीको वमन और कम्प भी होता है। जरायु-मुख क्रमशः फैलकर योनि-पथके साथ मिल जाता है, पानीकी थैली धक्का देकर बाहर निकलना चाहती है और इसके बाद फटकर भ्रूणके माथेसे केश दिखाई देते हैं।

इस समय योनि-मुख और योनि पथके श्लैष्मिक-स्रावकी वृद्धि हो जाती है। यह स्राव और थैली फटकर जो जलीय पदार्थ निकलता है, उसके प्रभावसे द्वार इतना चिकना हो जाता है, कि शीघ्र ही प्रसव हो जाता है। इस समय फूलका भी कुछ अंश जरायुसे अलग हो जाता है। इसलिये थोड़ा सा रक्त भी इस स्रावके साथ दिखाई देता है। यह अच्छा लक्षण है।

भ्रूण मस्तक अपेक्षाकृत कठिन अस्थिमय वस्ति गह्वर (bony pelvis) में पड़नेके कारण और थैलीके भीतरके जलमें जरायुको सिकोड़नेके प्राकृतिक नियमके अनुसार भ्रूणके ऊपर कुछ दबाव पड़ता है तथा केवल भ्रूणके माथेपर जरायु पेशीके सकोचनका दबाव न पड़नेके कारण, दबाव नीचेकी ओर अर्थात् भ्रूणके माथेकी ओर ही जाता है। इससे भी जरायुका मुह फैलता है और प्रसव-कार्यमें सहायता मिलती है।

द्वितीय अवस्था या निर्गमनावस्था—जरायु-मुखके सम्पूर्ण फैल जानेके बादसे भ्रूण सम्पूर्ण निकल जानेतककी अवस्थाको प्रसवकी दूसरी

अवस्था कहते हैं। यह अवस्था कई मिनटोंसे लेकर छः-सात घण्टेतक स्थायी रहती है।

इस समय लगातार तेज दर्द हुआ करता है। यह दर्द इस ढंगका होता है, मानो कुछ ठेलकर वाहर निकलना चाहता है (bearing down pain)। गर्भिणी स्वयं भी जोरसे साँसका दवाव डालकर उदरकी पेशियोंकी सहायतासे पेटमें दवाव डालती है या काँखा करती है, कभी-कभी तो पासकी किसी चीजको पकड़कर जोरसे काँखती है, रोती है या चिल्ला उठती है। काँखने और जरायुकी संकोचन क्रियाके दवावसे भ्रूणका माथा धीरे-धीरे वाहर निकलता जाता है। इस दवावसे मलद्वार और योनि-पथके बीचका स्थान, जिसे मणिपुर या पेरिनियम (perineum) कहते हैं, वह भी धक्का देकर वाहर निकल आता है। भ्रूणके दवावकी वजहसे बार-बार पाखाना और पेशाव होता है। इसके वाद एक बार जोरसे दर्द होकर माथा वाहर निकल आता है और फिर देह वाहर निकलती है।

तृतीय अवस्था—भ्रूणके वाहर निकलनेके वादसे, फूल या कमल (placenta) वाहर निकलनेतकको तृतीय अवस्था कहते हैं। इस समय प्रायः एक घण्टेका समय लगता है।

इस समय फिर जरायुका संकोचन हुआ करता है। इस संकोचनका उद्देश्य है, धमनियोंका मुख संकुचितकर रक्त-स्रावको रोकना और फूलको वाहर निकाल देना।

साधारणतः प्रसवके समय सैकड़े ९६ प्रसवमें भ्रूणका माथा ही पहले निकलता है और मस्तक शिखर (vertex) पहले जरायु-मुखपर दिखाई देता है या वस्ति-गह्वरमें प्रवेश करता है। किसी-किसीको मुख, भौं, हाथ, पैर, वस्ति इत्यादि अंग ही प्रसवके पहले निकलता है। यह अशुभ लक्षण है। अधिकांश स्थानोंमें ही इस समय वच्चेकी मृत्यु हो जाती है; परन्तु सौभाग्यवश ऐसा बहुत कम होता है। ऐसे प्रसवके समय चिकित्सा

करना बहुत कठिन होता है, यहाँतक कि सुशिक्षित धात्रियाँ भी सहजमें ऐसा प्रसव कार्य सम्पन्न नहीं कर सकतीं। इसीलिये स्वाभाविक प्रसवके विषयमें ही यहाँ वर्णन किया गया है, यदि कोई जटिल अवस्था आ पहुँचे, तो तुरन्त किसी निपुण धात्रीको सहायता लेनी चाहिये।

प्रसव-कौशल—इस कार्यके लिये तीन विषय उल्लेख योग्य हैं। जैसे—"प्रसव-पथ, भ्रूण और प्रसव-शक्ति"।

पहले बताया जा चुका है कि वस्ति-गह्वर आड़ा-आड़ी भावसे (transversely) कुछ चौड़ा और सामने-पीछे (anterio-posteriorly) कुछ दबा हुआ है। अतएव आड़ा-आड़ी भावका व्यास (transverse diameter), सामने पीछेके व्यास (anterio-posterior diameter) से कुछ बड़ा है और भी जान रखने योग्य एक विषय यह है, कि वस्तिगह्वरका कोना-कोनी व्यास (oblique diameter) सबसे बड़ा है। इसलिये, साधारण बुद्धिमें भी यह बात समझमें आ-जा सकती है कि चौड़ी राहसे ही कोई चीज बाहर निकलना सहज है। प्राकृतिक नियमके अनुसार होता भी ऐसा ही है।

भ्रूणके माथेका व्यास मापनेपर देखा जाता है, कि उसके सामने-पीछेका व्यास जितना बड़ा है, चौथाई अर्थात् आड़ा-आड़ीका व्यास उतना नहीं है। इधर गर्भिणीके वस्तिगह्वरका कोना कोनी व्यास भी सामने पीछेकी ओरसे अधिक प्रशस्त है। इससे यह सहजमें ही समझमें आ सकता है, कि भ्रूणके माथेका दीर्घ व्यास अर्थात् सामनेसे पीछेका व्यास आदि वस्ति-गह्वर कोना-कोनी व्यासके साथ संयोजित हो, खासकर यदि भ्रूणका माथा पीछेकी ओर वस्तिगह्वरके सामनेकी ओर रहे, तभी यह राह सुगम हो सकती है। ईश्वरके अनुग्रह और प्रकृतिके नियमके अनुसार ऐसा ही होता है।

भ्रूणका माथा वस्ति-गह्वरमें ठीकसे बैठकर एक बार घूमनेके बाद माथा पीछेकी ओर गर्भिणीके सामनेकी ओर और मुँह गर्भिणीके पीछेकी

ोर आ जाता है। इस अवस्थामें ही क्रमशः मस्तक बाहर निकलता है।

इस समस्याके समाधानके बाद और भी एक समस्या रह जाती है अधिकांश स्थानोंमें ही भ्रूणके माथेकी परिधि (circumference) वस्ति गह्वरकी परिधिसे कुछ छोटी रहती है, इस समस्याके समाधानके लिये भ्रूणका माथा और गर्भिणीके वस्ति-गह्वरके ऊपरी भागमें परिवर्त्तन हो जाता है। भ्रूणका माथा जरायुके बहिर्मुखी दबावसे वस्ति-गह्वरके स्थानके अनुसार ही ढीला रहता है। इसे ढालना (moulding) कहते हैं। इसके बाद प्रसवके उपरान्त धीरे-धीरे माथा अपने पूर्वके आकारमें आ जाता है। गर्भिणीके वस्ति-गह्वरकी सामनेवाले भागकी अस्थि (os pubes) सन्धिमें दरार होकर वस्ति-गह्वरकी परिधि बढ़ जाती है।

इसके बाद जरायुकी संकोचनकी वजहसे भ्रूणका माथा क्रमशः बाहर निकल आता है। यहाँ फिर एक नवीन समस्या उत्पन्न हो जाती है। भ्रूणके माथेका दीर्घ-व्यास वस्ति-गह्वरके दीर्घ व्यासके अनुयायी बाहर निकलनेपर भी भ्रूणका कन्धा आकर सम्पूर्ण निकल आनेमें बाधा प्रदान करता है; क्योंकि कन्धेका व्यास माथेके व्याससे उलटी ओर रहता है और माथेका वृहत्तर व्याससे कहीं अधिक बड़ा होता है। इसीलिये भ्रूणकी देह इस समय घूमकर कन्धेका वृहत्तर व्यास वस्ति-गह्वरके वृहत्तर व्यासमें लग जाता है। भ्रूणकी देह घूमनेपर उसका मुँह गर्भवतीके दाहिने या बायें उरुकी ओर रहता है और माथेके पीछेका भाग दूसरे उरुकी तरफ रहता है। इस समय भ्रूणके कन्धेका वृहत्तर व्यास मस्तकके व्यास तथा वस्ति-गह्वरके व्याससे बड़ा होनेका कारण वह टेढ़ा होकर पहले ऊपरकी ओरका अंश बाहर निकलता है, फिर नीचेकी ओरका अंश निकलता है। कन्धा बाहर निकल जानेपर बड़े सहजमें समूचा अंश बाहर निकल आता है।

प्रसवके समयकी सावधानता—पहले तो प्रसवका दर्द आरम्भ होनेके अनुमानिक कालके कुछ पहलेसे ही इस बातपर खयाल रखना चाहिये, कि गर्भवतीका कोठा साफ रहे। हलका जुलाब (coal tar preparation preferably) और फल, दूध, मीठा इत्यादि खिलाकर साफ कर देना चाहिये। गर्भिणीको नित्य कुछ गर्म पानीसे स्नान करना चाहिये, इससे त्वचा साफ रहती है। गर्भिणीको हमेशा साहस देते रहना चाहिये, घरमें जो कमरा सबसे अच्छा हो, उसे ही प्रसवके लिये ठीक करना चाहिये। यह कमरा हवादार, शुद्ध और रोशनीसे भरा होना चाहिये। सामाजिक रीतिके अनुसार यदि अलग कमरा रखनेका नियम हो, तो वह भी उत्तम और हवा, रोशनीसे भरा होना चाहिये। इस देशमें प्रसव गृह या सौरी घर सबसे गन्दा चुना जाता है। शिशु-मृत्यु गर्भिणी मृत्युका यह भी एक अन्यतम कारण है। संसारके भविष्य वंशधरोंके लिये इस तरह ताच्छिल्य भाव क्यों इस देशमें प्रचलित हो गया है, इसका कोई कारण नहीं मालूम होता। प्रसव-गृहमें बहुत चीज-वस्तु न रखनी चाहिये। प्रसवके समय बहुत मनुष्योंका रहना और झाँककर देखना, खासकर उस स्थानपर पुरुषका जाना किसी अवस्थामें भी उचित नहीं है, क्योंकि उससे गर्भवतीमें संकोच पैदा हो जाता है। प्रसव-गृह प्रशस्त, खुलासा होना आवश्यक है। इस घरमें अलग-अलग भावसे साफ कपड़े, साफ तौलिया, दो-तीन गमले पानी, जायतून या तिलका तेल, साबुन, साफ बिछावन, आयल क्लाथ, एक शोधित कैंची, शोधित सूता भी रख देना चाहिये। थोड़ा गर्म दूध रह-रहकर गर्भिणीको पिलाते रहना चाहिये। जो धात्री गर्भिणीके प्रसव-द्वारकी परीक्षा करें, वे गर्म पानी या साबुनसे हाथ साफ किये बिना, योनि-मार्गमें कभी हाथ न डालें। धात्रीके हाथका नख भी कटा होना चाहिये। यदि हाथमें किसी तरहका चर्म-रोग रहे, तो उस धात्रीसे काम न लेना चाहिये। दर्द यदि भरपूर तेज न हो, तो

थोड़ा-थोड़ा गर्म दूध या चाय पिलानी चाहिये। उपयुक्त होमियोपैथिक औषध सेवन करानेपर नियमित स्वाभाविक प्रसव-क्रियामें सहायता मिलती है। माथा निकल जानेके समय मणिपुर या पेरिनियम फट जा सकता है। इसलिये उस स्थानको बाहरसे इस तरह दबा रखना चाहिये, कि वह फट न जाये। माथा प्रसव हो जानेपर एक तौलिया या साफ कपड़ा भिगाकर आँख साफ कर देनी चाहिये। यदि किसी बच्चेके गलेमें नाल लिपटा हो, तो उपयुक्त धात्री या चिकित्सककी सहायतासे गलेसे नालका घेरा सावधानीसे निकाल देना चाहिये, नहीं तो प्रसवमें निरर्थक विलम्ब होता है और गलेमें फाँस लगकर सन्तानकी मृत्यु भी हो जाती है।

माताके गर्भ और पृथ्वीके ताप अलग-अलग रहता है। इसलिये, बच्चेको जन्म ग्रहणके बाद ही सर्दी लग जा सकती है। इस विषयमें भी बहुत कुछ सावधान रहना चाहिये। इसी समयसे बच्चेकी बोध-शक्ति काम करना आरम्भ कर देती है, इसीलिये, प्रसव होनेके बाद ही बच्चा रोने लगता है। श्वास-प्रश्वासका कार्य भी आरम्भ हो जाता है। माथेमें रक्त-शून्यता न पैदा हो जाय, इसपर भी ख्याल रखना चाहिये। माताके गर्भमें बच्चेको सर नीचेकी ओर रखनेका अभ्यास रहता है, इसलिये बच्चेका माथा जरा ढालवें स्थानकी ओर रखकर शय्यामें करवट सुलाना चाहिये। दाहिनी करवट सुलानेपर उसके खूनके दौरानमें सहायता मिलती है।

यदि बच्चा न रोये या उसकी आवाज न मिले तो उसकी कमरको जोरसे (पर ऐसा नहीं, कि तकलीफ हो) थपथपाना चाहिये या आँख-मुँहपर ठण्डे पानीका छींटा देना चाहिये। इससे बच्चेकी ज्ञान-शक्ति क्रिया करने लगती है। जीभपर थोड़ा-सा गोलमिर्चका चूर्ण रखने या शरीरपर धीमे-धीमे चिकोटी काटनेकी प्रथा भी प्रचलित है। यदि इतनेपर भी बच्चा होशमें न आये, तो तुरन्त पासके किसी चिकित्सककी सहायता लेना उचित है।

इसी समय शिशुका श्वास प्रश्वास आरम्भ होता है। बच्चेका श्वास प्रश्वास आरम्भ होनेपर भी कुछ देरतक राह देखनी पड़ती है। बच्चेकी नाल (मातृ गर्भके कमलके साथ मिली रहती है) की परीक्षा कर, नालकी नाड़ीकी गति बन्द होनेपर नाभिसे कम-से-कम डेढ़ इञ्चकी दूरीपर और फिर वहाँसे तीन इञ्च हटकर दो गाँठें देनी चाहियें। जिस सूतसे वह गांठ दी जाये, उसे खौलाते पानीमें अच्छी तरह खौला लेना चाहिये। इसके बाद बाहरकी ओर अर्थात् माताकी ओरके बन्धनको पकड़कर इन दोनों गाठोंके बीचमें काटना चाहिये। इसके लिये एक छुरी या कैंची पहलेसे ही खौलाते पानीमें खौला रखनी चाहिये। हमारे देशमें कहीसे एक छुरी लाकर नाल काटी जाती है। इस मारात्मक कार्यके कारण भी बहुत सी गर्भिणी और नवजात शिशुओंको टिटनेस या धनुष्टकार रोग हो जाया करता है। इसी धनुष्टकारको ही पूतना लगना या भूत लगना कहते हैं और अपने अपराधको भूतके सर डालकर मनको सन्तोष दिया जाता है। नाल काटनेके बाद नालको फिर घुमाकर बाँधना अच्छा है। जैसा फुटबालका ब्लाडर बाँधा जाता है, उसी तरह। इसके बाद प्रसवके समय गर्भिणीका मणिपुर अर्थात् मलद्वार और योनि द्वारके बीचके स्थानमें जख्म हुआ है या फट तो नहीं गया है, इसकी परीक्षा करना उचित है। जख्म होने या फट जानेपर उपयुक्त चिकित्सककी सहायतासे इसकी सिलाई कर देना उचित है।

इसके बाद नवजात शिशुकी ओर ध्यान देना चाहिये। बच्चेको कुछ गर्म पानीमें नहलाकर कोमल बिछावनपर सुला देना चाहिये। अगुली लगाकर थोड़ा शहद चटा देना अच्छा है। नाभि जबतक सूख न जाये, तबतक परिष्कार कपड़ेकी पट्टी बाँधकर उदरके साथ बाँध रखना अच्छा है। पीब न पैदा हो, इस बातपर ध्यान रखना चाहिये, सब प्रसूताका स्तनका दूध कुछ निकाल देनेके बाद बच्चेको पिलाना चाहिये।

माताका पिलाया स्तनका दूध ही बच्चेका सर्वश्रेष्ठ खाद्य है ; परन्तु स्तन पिलानेवाली माता यदि बीमार हो जाये, तो संतानको भी बीमारी हो जाती है। मातृ स्तनका दूध न मिलनेपर या दूहा दूध या बाहरका दूध सेवन करनेपर भी सन्तान सदाके लिये रोगिणी तथा स्वल्पजीवी हो जाती है। इसीलिये माताके स्तनमें यथेष्ट दूध ईश्वरकी ओरसे दिया जाता है। अतएव, इस बातपर भी ख्याल रखना चाहिये कि वह दूध विशुद्ध रहे और माताको किसी प्रकारकी बीमारी न हो। बच्चेका यकृत ठीक न रहनेकी वजहमें यदि माताका दूध सहन न हो, तो सुदक्ष होमियोपैथिक चिकित्सककी सहायतासे चिकित्साकर उसको निरोग करना होगा और इस समय चिकित्सकके आदेशानुसार कोई एक विलायती दूधका सेवन करना होगा।

प्रसवके समय तीन आवश्यक कर्त्तव्य

१। **संक्रमण** (Sepsis)—प्रसवके समय इसपर नजर रखनी होगी कि जीवाणुका संक्रमण न हो जाये। इस समय कितने ही भीतरी यंत्र खुली अवस्थामें रहते हैं, इसलिये जीवाणुके संक्रामणका भय हमेशा ही बना रहता है ; प्रसवके कुछ पहलेसे ही साफ-सुथरा रहना चाहिये। धात्रीको भी इसी तरह खूब साफ रहना उचित है। बिना गर्म पानी और साबुनसे हाथ धोये किसी भी धात्रीको प्रसूताकी परीक्षा करना उचित नहीं है। इस समय जितना ही साफ रहा जाये, उतना ही अच्छा है।

२। **रक्त-स्राव** (Hemorrhage)—बहुत ज्यादा रक्त-स्राव न हो, इसपर भी लक्ष्य रखना चाहिये। यदि किसी अनिवार्य कारणवश बहुत ज्यादा रक्त-स्राव हो, तो प्रसूताको बलकारक और रक्तवर्द्धक पथ्य, सम्पूर्ण विश्राम इत्यादिकी सहायतासे तुरन्त ताकत लानेका प्रबन्ध करना चाहिये।

३। **मणिपुर या योनि तथा मलद्वारके मध्यवर्ती स्थानका फटना** (Laceration of the Perineum)—धात्रीकी असावधानता, योनिद्वारका छोटापन या भ्रूणकी वृहत् आकृतिके कारण ऐसा हो जाता है। ऐसा होनेपर तुरन्त उपयुक्त चिकित्सककी सहायतासे उस फटी जगहको सिलवा देनी चाहिये।

उदर काटकर प्रसव (Cesarean Section)—योनिद्वार, वस्ति-गह्वर प्रभृतिका बहुत छोटा रहना, वस्ति-गह्वरकी आकृतिमें गड़बड़ी, भ्रूणके शरीर और माथेका बहुत बड़ा होना इत्यादि कारणोंसे किसी-किसी स्त्रीका पेट काटकर प्रसव कराना पड़ता है और सन्तानको बाहर निकाल लेना पड़ता है। यह बहुत सुशिक्षित धात्री ही कर सकती है। ऊपर लिखे कारणोंसे उदर काटकर सन्तान आदि निकाल लेनेकी जरूरत आ पड़े, तो ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये कि फिर दुबारा गर्भ न रह जाये।

यंत्रकी सहायतासे प्रसव (Forceps delivery)—यदि संतान जरायुमें मर जाये, प्रसवकी उपयुक्त व्यवस्था न हो तथा अन्यान्य कितने ही कारणोंसे यंत्रकी सहायतासे प्रसव करना पड़ता है। यह भी सुशिक्षित धात्री द्वारा ही होता है।

काटकर या मारकर सन्तानका प्रसव—यदि सन्तानका माथा बहुत बड़ा हो या योनिद्वार अथवा वस्ति-गह्वर छोटा हो, प्रसूति यदि दुर्बल हो, तो सुशिक्षित धात्री यदि उचित समझे, तो प्रसूति और शिशु दोनोंकी ही जान न चली जाये तथा प्रसूतिकी जीवन-रक्षाके लिये, शिशुकी देह काटकर या माथा तोड़कर प्रसव करा सकती है।

संक्षेपमें "प्रसव" अध्यायका वर्णन यहाँ समाप्त होता है। स्थानाभावके कारण इस पुस्तकमें समस्त धात्री विद्याका वर्णन नहीं किया जा सकता। पाठकोंकी साधारण जानकारीके लिये यहाँ संक्षेपमें ही उपयुक्त

वर्णन दिया गया है। विशेष जानकारी प्राप्त करनेके लिये, धात्री विद्या-सम्बन्धी पुस्तकें पढ़नी चाहियें।

गर्भमें कन्या या पुत्र उत्पन्न होनेका कारण

गर्भका भ्रूण बालक या बालिकामें किस तरह परिणत हो जाता है, यह रहस्य अबतक अन्धेरामें ही छिपा है। महर्षि सुश्रूत कहते हैं कि पुरुषका शुक्र ज्यादा रहनेसे नारीके गर्भाशयमें पुत्र और औरतका आर्त्तव ज्यादा रहनेसे कन्या पैदा होती है। इसी तरह शुक्र और आर्त्तव बराबर हो, तो नपुन्संक सन्तान पैदा होती है। ऋतुकालमें जोड़े दिनोंमें स्त्री-पुरुषका संसर्ग होनेसे पुत्र और फुट दिनोंमें संसर्ग होनेसे लड़की पैदा होती है। इसका तात्पर्य यह है कि इन जोड़े दिनोंमें औरतोंको आर्त्तव कम रहता है और फुट दिनोंमें ज्यादा रहता है; इससे जोड़े दिनोंमें लड़का और फुट दिनोंमें लड़की पैदा होती है। अतएव, लड़का चाहनेवाले मनुष्योंको ऋतुकालमें पवित्र भावसे स्त्रीका संसर्ग करना चाहिये; परन्तु आजकलमें बहुतमें जीव-तत्वके जानकार, बेंगची, मधुमक्खीका अंडा, भूंआ या रेशमका कीड़ा वगैरह कई निकृष्ट प्राणियोंको अच्छी तरह पुष्टिकर भोजन खिलाकर उस श्रेणीकी "स्त्री-जाति" और उन्हें ही अपुष्टिकर भोजन खिलाकर या उपवास कराकर उनसे "पुरुष-जाति" के बेंग, मधुमक्खी या भँवरा पैदा कर चुके हैं। [Besides the works of Gedde's Evolution of Sex (P. 193). Thompson and of Rold, consult Young's Evolution of Sex (pp.41—46) & Havelock Ellis's Man & Women p. 2] क्या उत्कृष्ट जीवोंके लिये भी

यही नियम है, कि पौष्टिक भोजनके तारतम्यके अनुसार ही नर-भ्रूण जरायुमें बाल या बाला* बन जाता है? क्या भ्रूणके पोषणके उपयुक्त भरपूरव्यवस्था कर देनेसे गर्भिणी स्त्री कन्या पैदा करती है और अभावमें ही पुत्र होता है? †

---

* 'In actual practice in has been found possible, in the case of certain organisms, to produce either maleness of femaleness by simply varying their nutrition femaleness being an accompaniment of abundant food, maleness of. the reverse."—Ascent of man, cheap edition (pp. 114—115 देखिये), by H. DRUMMOND.

† और एक जापानी विशेषज्ञके मतसे गर्भवती रमणी अपने मनके बलसे अपने गर्भके भ्रूणको पुत्र या कन्यामें परिणत कर सकती है, जैसे—गर्भ-धारणके दो महीनेके बीचमें कम-से-कम एक पलतक "हमें लड़का होगा, हमें लड़का होगा" यह बात नींद न आनेतक बराबर सोचती रहे, तो वह गर्भिणी यथासमय अवश्य ही पुत्रका जन्म देगी। इस तरहकी प्रक्रियासे जापानकी २००० औरतोंमें प्रायः साढ़े उन्नीस सौ—१९५० के लड़के ही पैदा हुए थे।

प्रसवके समय नीचे लिखी बुराइयोंसे बचना चाहिये

१। अशिक्षिता दाईसे बारम्बार प्रसव-द्वारकी परीक्षा कराना उचित नहीं है। इससे दाईके आशोधित हाथोंके जीवाणु सक्रमणकर कितनी ही प्राणघातक बीमारियाँ हो जाती हैं।

२। प्रसवके समय या बाद मैले कपड़े पहनना बच्चा-जच्चा दोनोंको विपत्तिमें डालता है। इससे जीवाणुका संक्रमण होकर एक या दोनोंको प्राणनाशक बीमारी हो सकती है और प्राण भी जा सकता है।

३। प्रसवकालमें योनि-द्वारमें तेल आदि लगाना उचित नहीं है।

४। प्रसव-गृहके दरवाजे बन्दकर कोयला या लकड़ी जलाकर बच्चेको सेंकना उचित नहीं है, इससे साँस रुककर मृत्यु या दूरारोग्य रोग हो सकते हैं।

५। साधारणतः प्रसव-गृह, प्रसूता, बच्चा और सौरी-घरके समान अशुद्ध माने जाते हैं; पर यह भूल है। इन्हें अशुद्ध न समझकर सफाईपर ध्यान रखना चाहिये।

६। साधारणतः इस देशकी स्त्रियाँ सन्तान-प्रसवके १०-१२ दिन बाद ही काम-काज करने लगती हैं, यह जच्चा-बच्चा दोनोंके लिये हानिकर है। पोषणमें बाधा पड़ती है; कम-से-कम २-३ महीने विश्राम करना चाहिये।

७। फेंक जानेके ख्यालसे प्रसूताको सासाणतः अच्छा बिछावन नहीं दिया जाता। यह गहरा अन्याय है। घरका सबसे साफ और अच्छा बिछावन प्रसूताके लिये देना उचित है।

८। कच्ची नाड़ियाँ न सूखेंगी—इस डरसे प्रसूताको भरपूर पानी नहीं पीने दिया जाता—यह अन्याय और भूल है—खूब ज्यादा पानी पिलानेसे हानि नहीं पहुँचती; बल्कि पेशाब भरपूर होकर शरीरके सब दूषित पदार्थ निकल जाते हैं और प्रसूता सहजमें ही स्वस्थ हो जाती है।

वैशाख	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
माघ	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
ज्येष्ठ	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
फाल्गुन	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
आषाढ़	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
चैत्र	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
श्रावण	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
वैशाख	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
भाद्र	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
ज्येष्ठ	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
आश्विन	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
आषाढ	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
कार्त्तिक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
श्रावण	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
अग्रहण	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
भाद्र	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
पौष	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
आश्विन	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
माघ	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
कार्त्तिक	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	९	२०	२१	२२	२३
फाल्गुन	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
अग्रहण	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
चैत्र	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
पौष	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२

* हमने १८४ पृष्ठमें यह उल्लेख किया है, कि गर्भके दिनसे गणना करनेपर स्तम्भके प्रथम पङ्क्तिमें गर्भ-सचार (या ऋतु बन्द) की मिती और दूसरी पङ्क्तिमें · वैशाखको गर्भ-सचार हुआ, अन्दाजन ८ माघको उसे प्रसव-वेदना प्रारम्भ होगी;

तालिका (सौर मास)*

१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	बैशाख ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४	५	६	७	फाल्गुन ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८				ज्येष्ठ ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	१	२	३	४	५				चैत्र ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	आषाढ़ ।
२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४	५	बैशाख ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०		श्रावण ।
२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४		ज्येष्ठ ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	भाद्र ।
२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	१	२	३	४	५	६	७	आषाढ़ ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०		आश्विन ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४	५	६		श्रावण ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	कार्तिक ।
२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	१	२	३	४	५	६	७	भाद्र ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	अग्रहण ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४	५	६	७	आश्विन ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०		पौष ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	१	२	३	४	५	६	७		कार्त्तिक ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	माघ ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४	५	६	७	अग्रहण ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०		फाल्गुन ।
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	१	२	३	४	५	६		पौष ।
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	चैत्र ।
२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	१	२	३	४	५	६	७	माघ ।

न्यूनाधिक ४० सप्ताह या २८० दिनके वाद प्रसव-वेदना प्रारम्भ होती है। प्रत्येक अनुमानिक प्रसव दिन दिया गया है। यथाः—मान लिजिये किसी स्त्रीको १ला ३ कार्त्तिकको गर्भ-संचार होनेसे ९ श्रावणको सम्भवतः प्रसव-वेदना होगी।

प्रसवकी किस अवस्थामें डाक्टर बुलाना चाहिये

हमारे देशमें साधारणतः धाय द्वारा ही प्रसव-कार्य कराया जाता है। कहीं-कहीं जानकार गृहणियाँ भी सहायता किया करती है। अकसर डाक्टर नहीं बुलाया जाता, बुलाया भी जाता है, तो देरसे, जब डाक्टरके हाथमें परिताप करनेके सिवा और कुछ नहीं रह जाता। इसलिये, **किस अवस्थामें डाक्टर बुलाना चाहिये**, इसका संक्षिप्त आभास नीचे दिया जाता है :—

१। **गर्भावस्थामें**—अपेक्षाकृत टेढ़ा-मेढ़ा प्रसव-पथ। हाथ-पैर फूले, उपदंश, प्रमेह आदि रोग ; गर्भवतीकी अस्वाभाविक खर्वता, रक्त-स्राव, बहुत वमन प्रभृति लक्षणोंमें।

२। **प्रसवके समय**—रक्त-स्राव हो ; प्रसव पथ या (मलद्वारका मध्यवर्ती स्थान) पेरिनियम फट जाय ; यदि प्रसव-पथसे एक हाथ या एक पैर बाहर निकले ; दर्द यदि रुक जाता है ; बच्चेके गलेमें यदि नाल लिपट जाये ; यदि प्रसवके दर्दसे जच्चा सुस्त हो पड़े ; पानी निकलनेके एक घण्टा बादतक यदि प्रसव न हो ; यदि प्रसव पथमें भ्रूण ठीक मात्रसे न आये ; प्रसव कार्यमें अस्वाभाविक विलम्ब हो ; प्रसूतिकी बार-बार मूर्च्छा या अकड़न हो।

३। **प्रसवके बाद**—सन्तान होनेके बाद यदि एक घण्टेके भीतर फूल न निकल पड़े ; यदि प्रबल ज्वर, कम्प, दुर्गन्ध-स्राव, पैर फूले, स्तन फूले बहुत ज्यादा रक्त-स्राव या कोई दूसरी बीमारी हो जाये।

४। **तुरन्तका जनमा बच्चा**—श्वास-प्रश्वास बन्द, नीलापन, आँखोंका प्रदाह, मलद्वार, मूत्र-द्वार ; मुख या किसी दूसरे अंगकी बीमारी दिखाई दे, तो तुरन्त पासके सुयोग्य चिकित्सककी सहायता लेनी चाहिये।

गर्भावस्थाके उपसर्ग

गर्भावस्थामें गर्भिणीको बहुत सावधानीसे रखना चाहिये। गर्भ होनेसे लेकर प्रसवके समयतक साधारणतः कितने ही तरहके रोग पैदा होते हैं, इस कारणसे गर्भिणीको बहुत तकलीफ होती है। नीचे प्रधान-प्रधान उपसर्ग और उन्हें दूर करनेके उपाय लिखे जाते हैं :—

मूर्छा—वेहोशी होते ही मुँहपर ठण्डे पानीका छींटा देना और मस्कस या स्पिरिट कैम्फर सूँघाना उचित है। वेहोशी दूर होनेपर नीचे लिखी दवाएँ देनी चाहिये।

रस-रक्त आदि निकलनेकी वजहसे वेहोशी होनेपर—चायना—६—३० ; डरकर वेहोश होनेपर—ओपियम ६ ; शोक, दुःख वगैरहसे वेहोश होनेपर—इग्नेशिया ६ ; हृत्पिण्डकी क्रिया क्षीण होनेके कारण वेहोश होनेपर—डिजिटेलिस ६ ; स्नायविक दुर्बलताकी वजहसे वेहोश होनेपर—एसिड फास ६ ; सोये रहनेके वाद वेहोश होनेपर—लाइको ६ ; शय्यासे उठनेके बाद वेहोश होनेपर—ऐकोन ३x ; रक्त-स्रावकी वजहसे वेहोशी होनेपर—चायना ३ ; चोटकी वजहसे वेहोश होनेपर—आर्निका ३x ; हिस्टिरियाकी वजहसे वेहोशीमें—मस्कस ३x।

सरमें दर्द—रक्त-क्षंचयकी वजहसे सरमें दर्द होनेपर—ऐकोन, वेल, ओपि ; पित्तके साथ खूनकी ज्यादातीसे दर्द होनेपर—मर्क सोल, पोडो, वातसे सरमें दर्द होनेपर—ब्रायो ; अजीर्णकी वजहसे सरमें दर्द होनेपर—नक्स, पल्स, इपि, सल्फर, सर्दीकी वजहसे सरमें दर्द होनेपर—ऐकोन, डल्का, इग्ने, वेलेरियाना ; सविराम सर दर्दमें—चायना, क्विनाइन। खूनकी ज्यादतीकी वजहसे सरमें चक्कर और आँखोंके सामने काले-काले दाग पड़ना लक्षणमें—ऐकोनाइट ३। टपककी तरह सर दर्द और आँखें तथा मुँह लाल और कानमें भों-भों आवाजके लक्षणमें—वेलेडोना ६।

माथेमें चिलक उठनेकी तरह दर्दमें—नक्स-वोमिका ३० । जरूरत होनेपर "सर-दर्द"की चिकित्सासे दवाएँ चुनकर देनी चाहिये ।

पीठ और कमरमें दर्द—ब्रायो ३, रस-टक्स ६ और सिपिया ३०, इसकी प्रधान दवाएँ हैं। तलपेटमें प्रसवके दर्दकी तरह दर्द हो, तो सिकेलि ३ । बहुत मेहनत करनेकी वजहसे दर्दमें आर्निका ३ । पीठके दर्दमें—कैल्के कार्ब और कास्टिकम ६ । दर्द दाहिनी या बायीं तरफ होता हो, तो—कैमोमिला ६, पल्स ३, फास्फो ३, ऐकोन ३x । कमरमें फ्लैनेल या कोई गर्म कपडा बाँध रखना उचित है ।

पेट एँठना—गर्भमें बच्चा बढता रहता है, इस वजहसे शिराएँ और धमनियाँ, स्नायु वगैरह भी बढा करते हैं और इसी वजहसे "पेटमें खोंचा मारता है ।" पेटमें खून इकट्ठा हुआ मालूम होनेके साथ बुखारके लक्षणमें ऐकोन , पेटमें चबानेकी तरह दर्द होनेपर गर्भवती पीछेकी ओर झुक जाती है—बेल ३x , पेटमें खोंचा मारना (खानेके बाद बढ जाये) और मिचली, वायु निकलना और कब्जियत रहनेपर—नक्स वो ३x , खोंचा मारना या सुई वेधनेकी तरह दर्द और उसके साथ मिचली या खाई हुई चीज कै करना लक्षणमें—पल्स ६ , कभी कभी विरे-ऐल्बकी भी जरूरत पडती है ।

दाँतमें दर्द—बुखारके साथ दाँतमें दर्द रहनेपर, ऐकोनाइट ३x । स्नायविक उत्तेजना या अजीर्ण दोषकी वजहसे दाँतमें दर्द होनेपर—नक्स-वोम, कैल्केरिया फ्लोरेटा ६, मर्क ६, कैमोमिला १२, ऐण्टिम-क्रूड ६ या क्रियोजोट १२, लक्षणके अनुसार प्रयोग किये जा सकते हैं। स्पाइजिलिया और स्टैफिसाइग्रियाकी भी बीच-बीचमें जरूरत पडती है। "दन्त-शूल" देखिये ।

शोथ—गर्भवाली अवस्थामें खूनके दौरानमें रुकावटके कारण पैर, उरु और योनिमें सूजन हुआ करती है। आर्सेनिक ३०, चायना ६,

कैन्थ ३, सल्फर ३० ब्रायोनिया ३, डिजि ३X, एपिस ३ या फेरम ३०, लक्षणके अनुसार देना चाहिये। "शोथ" देखिये।

हिस्टीरिया—वायु-प्रधान धातुवाली गर्भिणी औरतोंको हमेशा यह बीमारी हुआ करती है। हिस्टिरियाकी वजहसे अकड़न बहुत ज्यादा होनेपर, गर्भपात भी हो जा सकता है। इस अकड़नके पहले ऐसा मालूम होता है, मानो गलेमें कोई चीज अटकी हुई है। फूट-फूटकर रोना, वृथा ही निगलनेकी कोशिश करना, दृढ़ मुट्ठीसे कसकर अपना गला पकड़ रखना, चेहरा मलिन, होश रहनेपर भी बोल न सकना वगैरह लक्षण पहले दिखाई देते हैं; इसके बाद डकार आना या स्वच्छ पेशाब होना और अन्तमें बार-बार चिल्लाना, आँसू बहाना, यह कम होकर रोग हट जाता है। इग्ने, मस्कस, नक्स-वो, प्लैटिना और वैलेरियाना इसकी प्रधान दवाएँ हैं। "हिस्टीरिया" देखिये।

मृगी—माथेमें दर्द, आलस्य सरमें चक्कर, मानसिक गड़बड़ी, बेचैन नींद, कलेजा धड़कना, मिचली, कै, चेहरा लाल हो जाना वगैरह इस रोगके पूर्व लक्षण हैं। ऐगरिकस, बेल, कास्टि, साइक्यू, क्यूप्रम, हायोस वगैरह इस रोगकी प्रधान दवाएँ हैं। "अपस्मार या मृगी" देखिये।

संन्यास रोग—सरमें तेज दर्द, वमनोद्वेग और मूर्च्छाके साथ रोगिणीका जमीनमें गिर जाना, नाकसे गहरी आवाज, चेहरा लाल और आँखें स्थिर हो जाना वगैरह उपसर्ग इस बीमारीमें मौजूद रहते हैं। ऐकोन, बेल, काक्युलस, लैकेसिस, नक्स-वोम या ओपि वगैरह इस रोगकी बढ़िया दवाएँ हैं।

मानसिक अवस्थाकी गड़बड़ी—गर्भिणीको कभीं-कभी क्रोध जरा-सी बातमें रो पड़ना, भावी प्रसवकी तकलीफसे व्याकुल रहना वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं। सिमिसिफ्यूगा ३ और पल्सेटिला ३, इस अवस्थाकी बढ़िया दवाएँ हैं। चिड़चिड़ा मिज़ाजके लिये कैमोमिला

६ देना चाहिये। अगर प्रसवकी तकलीफका बहुत डर हो, तो ऐकोनाइट ३ देना चाहिये।

वमन या वमनेच्छा—गर्भावस्थामें कै, मिचली और मुँहमें पानी भर आना—ये तीनों उपसर्ग अकसर सवेरे ही बढ़ जाते हैं। थोड़े दिनोंतक रहकर आप-से-आप ये उपसर्ग घट जाते हैं; परन्तु सहजमें ही न घट जानेपर लक्षणके अनुसार नीचे लिखी दवाएँ देनी चाहिये।

सिम्फारिकार्पस-रेसिमोसा—३x, ३, २००—इस रोगकी प्रधान दवा है, खासकर निम्नलिखित उपसर्गोंमें—गर्भ रहनेपर बराबर कै या मिचली, परिपाक यन्त्रकी गड़बड़ी, भोजनमें कभी रुचि, कभी अरुचि, मुँहमें तीता पानी भर आना, मुँहका स्वाद भी तीता, "कब्जियत, सब तरहके भोजनमें अरुचि," चित्त होकर सोनेमें आराम मालूम होना। लगातार वमन, मिचलीके साथ पित्त या श्लेष्माको कै होना और अतिसार होनेका डर, कब्जियत, डकार आना, मुँहमें पानी भर आना, हिचकी सवेरे भोजनके समय या भोजनके बाद वमनके लक्षणमें—नक्स-वोमिका ३०, क्रियोजोट ६, सिपिया ३०, ऐलेट्रिस फेरिनोसा θ—२ की भी कभी-कभी जरूरत होती है।

मुँहसे पानी गिरना—बहुत खानेकी वजहसे मुँहमें पानी भर आता है या खाये हुए पदार्थकी गन्ध आती है। पारा मिली चीजें या दवाएँ खानेपर भी मुँहमें लगातार थूक भर आता है। मर्क-वाई ६ विचूर्ण इसकी प्रधान दवा है; परन्तु यदि रोगिणीने मर्करी—पारेसे बनी दवाएँ ज्यादा खायी हों और इस वजहसे मुँहमें पानी भर आता हो, तो मर्क-वाईके बदले नाइट्रिक-एसिड ३—३० देना चाहिये; कार्बो-वेज ६ या हिपर ६ भी दिया जाता है। खट्टी डकार एकाएक डकार आकर कुछ तीता तरल पदार्थ गलेतक आ जाना, अरुचि, कलेजेमें जलन, कब्जियत, लगातार मुँहमें पानी भर आना, साइलि। कलेजेमें जलन; कब्ज, लगातार मुँहमें पानी भर आना, नक्स वोमिका ३०। पेट

फूलना या पेट कस आना और पाकस्थलीमें जलन और थोड़ी डकारके साथ ही मुँहमें पानी भर आना, कार्वो-वेज ३x चूर्ण, ३०। लगातार खट्टी डकारके साथ मुँहमें पानी भर आनेपर, कैल्केरिया-कार्व ३०। पुरानी बीमारीमें लाइको १२—३०। विरेट्रिम-ऐल्व ३, ब्रायो ३, एसिड-सल्फ ३ की भी समय-समयपर आवश्यकता होती है।

शिराओंका फूलना—गर्भावस्थामें जरायु बढ़ता है और उसके दबावसे उरु और योनि तथा दूसरे-दूसरे अंगोंकी शिराएँ कभी-कभी फूल उठती हैं और गांठ (knot) पड़ जाती है। हैमामेलिस ३ सेवन, हैमामेलिस θ (अठगुने पानीके साथ) पट्टीका बाहरी प्रयोग करना चाहिये। शिराओंमें दर्द होनेपर, पल्स ३। कमजोरीके लक्षणमें, फार्मिका ३x। "पुरानी बीमारीमें" फ्लोरिक एसिड ६। शिराएँ फटकर खून निकलनेपर हैमामेलिस θ की गद्दी (pad) बनाकर खून जिस जगहसे निकलता हो, उसे कसकर बाँध देना चाहिये। फेरम-फास ३ और प्लम्बम ६ की भी बीच-बीचमें जरूरत पड़ती है। पल्सेटिला ३, शिरा फूलनेकी बीमारीको रोक देता है। "प्रतिषेधक" है। रोग बढ़ जानेपर रोगिणीको खाटसे न उठना चाहिये। पैरकी शिराएँ फूलनेपर स्थिति-स्थापक मोजा (elestic-stocking) पहनना और ठेस या अकड़न देकर सोना फायदेमन्द है। "शिराके रोग" देखिये।

ऐंठन—गर्भ जब ४-५ महीनेका हो जाता है, तब रोगिणीके उरु पीठ और कमरमें ऐंठन या अकड़न-जैसा दर्द हो जाता है। जरूरत पड़नेपर नीचे लिखी दवाएँ ६ शक्ति की व्यवहार करनी चाहिये। पैरों और उरुमें ऐंठन होनेपर कैमोमिला; अकड़नके साथ सर-दर्द होनेपर और अग्निमान्द्य या मिचली रहनेपर, नक्स-वोमिका, ब्रायोनिया या सिपिया; पतले दस्त आनेपर आइरिस या विरेट्रम-ऐल्व; कमर और पेटमें ऐंठन होनेपर—कोलोसिन्थ, क्यूप्रम, नक्स-वोमिका; उसके साथ पेट फूलनेपर—लाइकोपोडियम।

कामला—गर्भावस्थामें जरायु बढ़कर, पित्त वहन करनेवाली नाड़ीपर दवाव पड़नेकी वजहसे हमेशा "कामला" हो जाया करता है। कैमो ६, मर्क-सोल, चेलिडोनियम ३x इसकी बढ़िया दवाएँ है। दिनके समय बायीं करवट दवाकर सोनेसे फायदा होता है।

आप-ही-आप पेशाब निकल जाना—कैनाबिस-सैट १x, कैन्थरिस ३, साइना ३, बेल ३। गर्म चीजें, नमक और खट्टी चीजें खाना मना है। ठण्डी चीजें और दूध आदि सुपथ्य है। "अनजानमें पेशाब" देखिये।

थाड़ा पेशाब या पेशाब रुकना—गर्भमें बच्चा जितना ही बढ़ेगा, पेशावके यन्त्रोंपर उतना ही अधिक दवाव पड़ेगा। इसीसे पेशाव कम होता है या बन्द हो जाता है। कच्चा दूध और पानी बराबर-बराबर मिलाकर सवेरे-शाम थोड़ा-थोड़ा पानीसे पेशाव सहजमें ही हो जा सकता है। पेशाव रुक जानेपर—कैम्फर θ, कैन्थरिस ६, बेल ३, और गर्म पानीसे नहाना फायदेमन्द है। "मूत्ररोध और मूत्रनाश" देखिये।

कब्जियत—नाड़ी वगैरहपर लड़केका दवाव पड़नेसे कब्जियत होती है। पका पपीता खूब फायदा करता है। कालिन्सोनिया ३x प्रधान दवा है।

दूसरी दवाएँ—नक्स-वोमिका ३०, ब्रायोनिया ६, सल्फर ३०, ओपियम १०, प्लम्बम ६, ऐल्यूमिना ६, पोडोफाइलम ६। "कब्जियत" देखिये।

अतिसार—मर्क-सोल ६, चायना ६, एसिड-फास ६, कैमो ६, फास ६, सल्फर ३० और पोडो ६। "अतिसार" देखिये।

कलेजेमें जलन—"पल्सेटिला" ६ या "कैप्सिकम" ६, तकलीफ देनेवाली इस बीमारीकी प्रधान दवाएँ। अम्ल-रोगकी वजहसे कलेजेमें जलन होनेपर, कैल्केरिया-कार्ब ६, आर्स ३x, कार्बो-वेज ३x—६, नक्स वोम ३, पल्स ६, फास ३, नाइट्रिक-एसिड ६ आदि दवाओंकी

समय-समयपर आवश्यक हो जाती हैं। "अजीर्ण-रोग" और "अम्ल-रोग" देखिये।

अनिद्रा—"काफिया" ६ प्रधान दवा है। रातके पहले पहर नींद आये, पर रातके अन्तमें नहीं, सल्फर ३०। नींद न आनेके साथ बुखार रहे, ऐकोनाइट ३। पैरमें अकड़न या दर्दके साथ नींद न आती हो, "कैमोमिला ६ या विरेट्रम" ६। सोनेके पहले, कुछ गर्म पानीमें थोड़ा नमक मिलाकर उससे बदन पोंछने बाद तौलियेसे पोंछ डाला जाये, तो अच्छी नींद आती है। "अनिद्रा" देखिये।

रुचि-विकार—जली मिट्टी, खड़िया, नमक वगैरह खानेकी इच्छा होनेपर, कार्बो-वेज ६, काक्यूलस ६ और साक्यूटा ३०। खड़िया खानेका मन चलनेपर, कैल्केरिया-कार्ब ६ या नाइट्रिक-एसिड ३।

लार बहना—गर्भावस्थामें किसी-किसीको बहुत ज्यादा गाढ़ी लार बहती है। यह प्रायः गर्भकी पहली अवस्थामें ही होता है। बहुत बार दो-एक मात्रा मर्क्यूरियस देनेसे ही लार बहना बन्द हो जाता है। न हो, तो आर्स, पल्स, नेट्रम, विरेट्रम प्रभृति दवाएँ आवश्यकतानुसार दी जा सकती हैं।

लार बहनेके साथ खानेकी चीजोंपर रुचि न रहना और मिचली—पल्स ३०; गहरी सुस्ती, म्लान मुख मण्डल, मिचली और खायी हुई चीजका वमन, पैर फूलना प्रभृति लक्षणोंमें—आर्स ६। जीभ, ओंठ और मुँहमें घाव, पतला दबा हुआ चेहरा, बहुत ज्यादा लार बहना—नेट्रम ३०; लार रक्त मिली, जीभमें जलन, ऐसा मालूम हो कि घाव हो गया है, कब्ज और बवासीर—सल्फर ३०।

श्वास-कष्ट—ज्यादा घूमने या खाँसी, अजीर्ण, स्नायविक दुर्बलता वगैरह कारणोंसे गर्भावस्थामें श्वास-कष्ट होता है; ऐमोन, आर्स, इपि, मस्कस, फास, नक्स, ब्रायो वगैरह इसकी प्रधान दवाएँ हैं।

कलेजा धड़कना—"डिजिटेलिस" ३ प्रधान दवा है ; अजीर्णकी वजहसे कलेजा धड़कता हो, तो नक्स-वोमिका ६ । स्ट्रोफैन्थस १x, मस्कस ३x, ऐकोन ३x, आर्स ३, बेल ३, पल्स ६, सल्फर ३० की कभी-कभी जरूरत पड़ जाती है ।

बवासीर—किसी-किसी गर्भिणीको बवासीरकी बीमारी हो जाती है। नक्स-वोमिका ६ इसकी बढ़िया दवा है। बवासीरके साथ कब्जियत रहनेपर, कालिन्सोनिया ३x । कार्बो-वेज, पोडो, नाइट्रिक-एसिड वगैरह दवाएं कभी-कभी आवश्यक हो जाती हैं ।

खाँसी—कभी-कभी सूखी खाँसीकी वजहसे तकलीफ होती है। ऐकोनाइट ३ और नक्स-वोमिका ६ इस बीमारीकी प्रधान दवाएँ हैं। "श्वास-यन्त्रकी बीमारी" देखिये ।

पेशाबकी तकलीफ—स्पिरिट कैम्फर इसकी प्रधान दवा है। ऐकोनाइट ३, बेलेडोना ६, एपिस ६, आर्सेनिक ६ या कैन्थ ६ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। "मूत्र-यंत्रकी बीमारी" देखिये ।

मूत्रनलीका आक्षेप—मूत्रनलीमें अकड़न होनेकी वजहसे गर्भिणीको बहुत तकलीफ हो जाती है ; कभी-कभी दिन-रात लगातार पेशाब टपकता रहता है। कास्टिकम ६ या एसिड-फास ३x सेवन और एक ग्रेन क्लोराइड आफ जिंक एक औंस पानीके साथ मिलाकर उससे योनिको धो डालना चाहिये। स्पाइजिलिया और स्टेफिसाइग्रिया भी लाभदायक है।

रज निकलना—गर्भावस्थामें भी कभी-कभी ऋतु दिखाई देता है। काक्यूलस ६ या फास्फोरस ६ बढ़िया दवाएँ हैं।

दर्द—गर्भावस्थामें शरीरकी किसी जगहमें अकड़न होनेपर, वाइबर्नम-ओपि ३ या कोलोसिन्थ ६ । हृत्पिण्डमें टपककी तरह दर्द होनेपर—आर्निका ३, सिपिया ६, थूजा ३०, कोनायम ६ ।

पेटमें कनकनी होना—कैमोमिला १२ या नक्स-वोमिका ६ एक मात्रा देनेसे ही फायदा होता है। केल्के-कार्ब ६ भी अच्छी दवा है। "शूल-वेदना" देखिये।

बुखार—गर्भावस्थामें पहले कई महीने अगर थोड़ा-थोड़ा बुखार हो, तो कोई दवा देनेकी जरूरत नहीं है। यदि बुखार किसी तरह अच्छा न होता हो, तो ऐकोनाइट ६।

मरोड़—पैर या पैरके तलवेमें एकाएक खींचन या मरोड़की तरहकी दर्द होनेपर, क्यूप्रम ६ और जेलसिमियम ३ फायदा करते हैं।

वाह्य जननेन्द्रियमें खुजली—वोरैक्स ३ और ऐम्ब्राग्रिसिया ६, इसकी बढ़िया दवाएँ हैं। पानीमें सोहागा घोलकर उससे दिनमें दो-तीन वार योनिको धो डालना चाहिये।

पेटका झूल पड़ना—जिनके पेटका चमड़ा ढीला रहता है, उन्हें गर्भ रहनेपर अकसर पेट झूल पड़ता है और तकलीफ होती है। कपड़ेसे पेट कसकर बाँध देनेसे ही यह तकलीफ जाती रहती है।

पेट बड़ा हो जानेकी वजहसे तकलीफ—पेट बढ़ जानेकी वजहसे यदि पेटका चमड़ा चरचराये और स्तनमें दर्द हो, तो थोड़ा नारियलका तेल पेट और स्तनपर मालिश करना चाहिये। इससे तकलीफ घट जाती है। यदि तकलीफ न घटे, तो बेलेडोना ६ या नक्स-वोमिका ६ देना चाहिये।

पेटमें लड़केके हिलने-डुलनेसे कष्ट—ओपियम ६, आर्निका ३।

धातुकी बीमारी—दूधकी तरह धातु निकलना, केल्केरिया ६, पीला या जलकी तरह धातु निकलनेपर सिपिया १२। धातुकी बीमारीसे एकदम कमजोर हो जानेपर, चायना ६ या एसिड-फास ३x। यदि धातुकी बीमारीके साथ योनिके भीतर सुरसुरी हो और खूब संगमकी इच्छा हो, तो प्लैटिना ६। "श्वेत-प्रदर" देखिये।

स्तनमें दर्द—स्तन सख्त लाल, भारी, दर्द भरे हो जानेपर बेलेडोना ३x। स्तन फूला, भारी, पर लाल न हो, ऐसे लक्षणमें—ब्रायोनिया ३। ठण्डे पानीकी पट्टी स्तनोंपर लगाना फायदेमन्द है; परन्तु आक्षेपवाली तकलीफमें, गर्म पानीकी पट्टी देनी चाहिये।

स्तनकी घुण्डीमें प्रदाह या घाव—चोट लगकर प्रदाह होनेपर, आर्निका ३ सेवन और आर्निका θ पानीके साथ मिलाकर स्तनोंपर प्रयोग करना चाहिये। घुण्डीमें घाव होनेपर या सड जानेपर हाइड्रैस्टिस ३ सेवन और हाइड्रैस्टिस θ (अठगुने पानीमें मिलाकर) पट्टी लगानी चाहिये।

स्तन बड़े होनेकी वजहसे तकलीफ—शूल-वेदनाकी तरह तकलीफमें, कोनायम ३। प्रदाहकी वजहसे तकलीफ होनेपर, बेलेडोना ३x या ब्रायोनिया ३।

मानसिक कष्ट—गर्भिणी हमेशा विपन्न रहती हो, तो सिमिसिफ्यूगा ६; शोकसे अधीर होनेपर, इग्नेशिया ६; डरनेपर ऐकोनाइट ३; क्रोधी स्वभाव होनेपर, कैमोमिला १२।

नकली प्रसवका दर्द—गर्भावस्थाके अन्तमें बराबर प्रसवके दर्दकी तरह मालूम हुआ करता है ("अप्रकृत लक्षण" देखिये); कैमोमिला ६ इसकी बढिया दवा है। पल्सेटिला ३०, सिमिसिफ्यूगा ३ या कालोफाइलम ३ की कभी-कभी जरूरत पड सकती है।

गर्भावस्थामें रक्त-स्राव—(१) गर्भिणीके हँसने, रोने, खाँसने या गिर जानेपर, जरायुमें, धक्का लगकर फूल (placenta) जरायुसे अलग कुछ दूर जा गिरता है, इसीसे खून गिरता है। आर्निका ३० इसकी बढ़िया दवा है।

(२) ऊपर कहे हुए कारणोंके अलावा, अगर फूल जरायुके मुँहपर टँकनेकी तरह रहे और इसी वजहसे खून गिरता हो, तो रोग कड़ा समझकर, धात्री-विद्या जाननेवाले चिकित्सकको बुलाकर दिखाना

चाहिये। यह रोग गर्भावस्थाके अन्तिम भाग या ठीक प्रसवके समय होता है। इस समय रक्त-स्राव ही इसका विशेष लक्षण है (स्वाभाविक प्रसव-वेदनामें श्लेष्माकी तरह एक पदार्थभर निकलता है, कभी "खून नहीं निकलता"—"प्रसवकी अवस्थाएँ" देखिये)। ट्रिलियम θ इस रक्तस्रावको वन्द करनेकी एक अच्छी दवा है।

रक्तहीनता—मैलेरिया भोगना, क्रिमि या वक्रकीट रहना वगैरह कारणोंसे रक्त-स्वल्पता होनेपर, उन रोगोंका इलाज करना चाहिये।

धातु-दोष (Diathesis)—माता या पिताको रोग रहनेपर, सन्तानको भी वही रोग होता है। गर्भावस्थामें गर्भवतीको नीचे लिखी दवाएँ महीने-महीने एक वार सेवन करानेपर, भावी सन्तान अच्छी और बलिष्ठ हो सकती है :—

कैल्केरिया-कार्ब ३०—पिता या माता गण्डमाला (scrofula) धातुग्रस्त रहनेपर।

बैसिलिनम २००—वंशमें यक्ष्मा और क्षय रोग होनेपर।

सोरिनम ३०—माँ-बापको वदबूदार चर्म-रोगादि होनेपर।

सिलिका ३०—पिता या माताको अस्थि-विकृति रोग रहनेपर यह फायदा करता है।

वेराइटा-कार्ब ३०, आयोडियम ३०, थूजा ३०, मर्क्यूरियस ३०, कास्टिकम ३०, सिपिया ३० या सल्फर ३० लक्षणके अनुसार प्रयोग करना पड़ता है। बाल-रोगमें "धातु-दोष या कौलिक रोग" देखिये।

गर्भकालके कुछ उपसर्गोंकी दवाएँ

एसेटिक-एसिड ६, ३०—गर्भके समय खट्टी डकार और वमन ; दिन-रात मुँहमें पानी भर आना और लार बहना। बहुत ज्यादा पेशाब होना।

एलिट्रिस-फेरिनोसा ३x, १२—गर्भके समय तंग करनेवाल मिचली ; मिचली किसी तरह भी बन्द नहीं होती, भोजन पचता नहीं खाने-पीनेसे अनिच्छा, खाद्य पदार्थ देखते ही पेटमें गड़बड़ी पैदा हो जाना। सरमें चक्कर, मूर्च्छा और तन्द्रा।

ऐनाकार्ड ३०—उदर खाली मालूम होना और सवेरेके समयकी मिचली। वमन हो जानेपर मिचलीका घटना, भोजनके पहले और बाद वमन। भोजनके समय और वमन हो जानेपर घटना।

ऐण्टिम-क्रूड—वमन और अकड़न ; जीभपर मोटी सफेद मैलकी तही (कैलि-म्यूर)।

आर्सेनिक ३०—सारे शरीरमें जलन, प्यास, बेचैनी, कमजोरी और बदहजमी।

ऐसाराम-इयु ३x, ६—गर्भके पहले कई महीनोंमें गर्भवती जो कुछ खाती है, वही कै कर डालती है।

बोविस्टा ३—सवेरेके समयकी मिचली ; केवल पानीकी कै होना। कुछ खानेपर घटना।

कैडमियम-सल्फ ६—पाकाशयमें बेचैनी मालूम होना, वमन और मिचली।

काक्युलस ६, ३०—सवेरे सोकर उठनेके समय वमन और मिचली, नाव या गाड़ीपर चढ़नेके समय या कोई चलती हुई चीज देखनेसे ही मिचली और वमन।

काफिया ६—मिचली, अनिद्रा और दर्द।

कोलचिकम ६, ३०—भोजनके पदार्थकी गन्ध सहन नहीं होती, बैठते ही मिचली और वमन और नाभिस्थानमें दर्द। पेशाबमें अण्ड-लाल, हाथ-पैर फैलाकर सो नहीं सकना ; ऐसा करते ही वमन होने लगना, हाथ-पैर समेटकर सोनेपर घटना।

कोनायम ३०—केवल सोये रहनेकी अवस्थामें मिचली, स्तनमें अकड़न।

कानवैलेरिया ६—तकियेसे सर उठाते ही मिचली और वमन होनेपर।

क्यूप्रम-मेट ६, ३०—मिचली, वमन, हाथ-पैरमें ऐंठन।

साइक्लामेन ६—वमन, मिचली और सरमें चक्कर, ऐसा मालूम हो कि गिर जायगा।

फेरम-फास—वमन, रक्त-वमन। भोजनके समय एकाएक थोड़ा-सा वमन हो जाता है। इसी वजहसे जी भरकर भोजन नहीं कर सकती।

इग्नेशिया ६, ३०—हिचकी, वमन, भोजनके वाद घटना, पेट फूलना, विषन्नता।

इपिकाक ६, ३०—पित्त वमन, लगातार मिचली और वमन, इसके साथ ही अतिसार और उदरशूल।

आइरिस ६—लगातार मोतीकी तरह लसदार श्लेष्मा-भरा थूक निकलना।

जैबोरैण्डी ६—दिनके समय लगातार गर्भवती थूका करती है, इसी वजहसे रातमें भी सो नहीं सकती।

कैलि-कार्ब ३०—मिचली, पर कै नहीं होती। चलना आरम्भ करते ही मिचली बढ़ जाती है।

लैक्टिक एसिड ३०—मुँहमें थूक भर आता है, मिचली, भोजनके बाद घटती है; खट्टी कै।

लिलि-टिग ३०—यदि भ्रूणकी अवस्थितिमें गड़बड़ी होनेकी वजहसे वमन हो।

नेट्रम-म्युर ३०—सवेरेके समय मिचली और वमन, सर-दर्द, रातमें चोर-डाकुओंके सपने।

नाइट्रिक एसिड ३०—मिचली, गला और पाकाशयमें जलन, घूमने फिरने या सवारीपर चढ़नेसे मिचलीका घटना।

नक्स वोमिका ६, ३०—सवेरे और भोजनके बाद मिचली और वमन। ऐसा सोचती है, कि वमन हो जाये, तो अच्छा हो। कब्जियत। बलकारक दवा सेवनकी अदम्य इच्छा।

पेट्रोलियम ३०—गर्भवतीके पाकाशयकी सब तरहकी गड़बड़ीमें लाभदायक है। गाड़ीमें चढ़नेसे ही मिचली, लगातार वमनोद्वेग और मुँहमें थूक भर आना।

पल्स ६, ३०—तलपेट और जरायुमें ऐंठन, सन्ध्याके समय और रातमें वमन, पतले दस्त, एक एक बार एक एक तरहका पाखाना होना। वमनके बाद मिचली और वमन।

सैबाडि ६, ३०—भोजन करनेकी इच्छा नहीं रहती, पर कुछ खाना आरम्भ करते ही मजेमें खाने लगती है।

सिपिया ३०—गर्भ-स्राव-प्रवणता, मिचली, जरायुका मुँह कड़ा।

स्टैफिसेग्रिया ३०—पेट भरा रहनेपर भी अदम्य भूख, मुँहमें हमेशा पानी भर आता है।

सल्फर ३०, २००—मिचली और वमन। इसके साथ ही सारे शरीरमें जलन और शराब पीनेकी इच्छा।

सिम्फारि-कार्पस ६—भोजन देखनेपर ही, खाद्य-पदार्थकी गन्धसे, यहाँतक कि खानेकी बात सोचते ही बेचैनी मालूम होने लगना; मिचली और वमन।

प्रसवके समयकी उपयोगी दवाएँ

पेकोन ३०, २००—गर्भिणी वेचैन, समझती है, कि इस वार वह न जियेगी। लगातार कराहती है, थोड़ी-थोड़ी देरपर तेज दर्द पैदा हो जाता है। दर्दके कारण साँस नहीं ले सकती। समझती है, कि वह दर्द सहन न कर सकेगी। चेहरेपर भयके लक्षण दिखाई देने लगते हैं, योनि-द्वार और जरायु द्वार सूखा, कड़ा और दर्द-भरा।

आर्निका ३०, २००—भ्रूण जरायुमें आड़ा हो जानेके कारण कमरमें असह्य दर्दकी यह एक अमोघ दवा है। गर्भिणी पल-पलभरपर जगह बदलती है। प्रत्येक वारके दर्दके साथ-साथ ही चेहरा लाल हो उठता है। प्रसवके समय वहुत अधिक कष्ट, यंत्रकी सहायतासे प्रसव वहुत अधिक रक्त-स्राव, प्रसवके वादका स्राव थोड़ा होना प्रभृति कारणोंसे यदि ज्वर, कमरमें दर्द, हमें घाव प्रभृति रक्त-दोषके लक्षण दिखाई दें, तो आर्निका मंत्र-शक्ति तरह कार्य करता ।

आरम-मेट—इतन ज दर्द कि गर्भिणी उसे सहन नहीं कर सकती, इसीलिये मृत्युको उत्तम समझकर मृत्यु-कामना करती है और आत्महत्या करना चाहती है।

बेलेडोना ३०, २००—दर्द एकाएक आता है, ऐसा मालूम होता है, मानो उदरकी सभी चीजें वाहर निकल पड़ेंगी, दर्द वहुत थोड़ी देरतक ठहरता है और एकाएक गायव हो जाता है। जरायु-मुख लाल, गर्म, तर (सूखा—ऐकोन) पतला और कड़ा (भारी और कड़ा—जेल्स), जरायु-मुखका आक्षेपिक संकोचन। अधिक उमरवाली गर्भवतियोंके प्रसव कष्टकी यह एक उत्कृष्ट दवा है। कभी-कभी शरीर गर्म, तेज, सवल और मोटी नाड़ीका लक्षण भी दिखाई देता है।

कालोफाइलम ६, ३०—जरायु-मुखका कड़ापन। जरायुके संकोचनकी वजहसे रह-रहकर प्रसवका दर्द होता है, पर जरायु-मुखके

कड़ापनकी वजहसे प्रसव देरसे होता है। ऐसे स्थानपर यह लाभ करता है।

कैमोमिला ६, ३०—असह्य आक्षेपिक दर्द, तोड़नेकी तरह दर्द, यह दर्द कमरसे आरम्भ होकर पैरको ओर फैल जाता है। प्रत्येक वार दर्दके साथ वहुत सफेद पेशाव होता है। दर्दसे गर्भवती रोती है, जरायु-द्वार अकडा।

क्लोरोफार्म ३०, २००—समस्त उदरमें दर्द, परन्तु पीठमें दर्द अधिक। गर्भिणी कहती है, कि उसकी कमर टूट जायगी। जरायु-मुख कडा, इसलिये दर्दका जोर नहीं घटता।

सिमिसिफ्यूगा—प्रसवके कुछ देर पहलेसे ही नकली प्रसवका दर्द आरम्भ हो जाता है। जरायु-मुखका आक्षेपिक संकोचन, दर्द आडा-आडी भावसे घूमता-फिरता है, प्रसवकी प्रथम अवस्थामें स्नायविक शीत मालूम होना, प्रसवका दर्द कुछ देरतक होकर और प्रसव-कार्य थोडा-सा अग्रसरकर एकदम यदि वन्द हो जाये, तो यह वहुत लाभ करता है।

काफिया ६, ३०—प्रसवका दर्द तो होता है, पर प्रसव कार्य अग्रसर नहीं होता ; गर्भिणी प्रसव-वेदनासे वेचैन हो पड़ती है, पर प्रसव नहो होता।

जेल्स ३०, २००—नकली प्रसवका दर्द ऊपर या पीठकी ओर फैल जाता है। जरायु-मुख कड़ा (पतला और खोचन भाव—वेल), दर्द ऊपरकी ओर फैल जाता है, इसीलिये ऐसा मालूम होता है, मानो भ्रूण भी नीचेकी ओर न जाकर ऊपरकी ओर धक्का देता हुआ चढ़ता है। जरायुकी जड़ताकी वजहसे भरपूर दर्द नहो होता। गर्भिणीको बीच-बीचमें जाड़ा मालूम होता है—यह स्नायविक शीत है। चेहरा और आँखें तमतमाती हुई मालूम होती है, गर्भिणी अज्ञान और तन्द्राभिभूत-जैसी पड़ो रहती है। कम्प होता भी दिखाई देता है। जिस

गर्भवतीमें ऊपर लिखे लक्षणोंके साथ यह मालूम हो, कि गर्भवतीकी पेशियोंपर स्नायुकी कोई शक्ति नहीं है, इसी वजहसे प्रसव-कार्यमें व्याघात पड़ता है, ऐसे क्षेत्रकी जेलसीमियम एक अव्यर्थ दवा है।

कैलि-कार्ब ३०—अपर्याप्त प्रसव-वेदना, कमरमें तेज दर्द, केवल कमर दवा देनेके लिये कहती है। मोटी-ताजी और थुलथुली रमणियोंके लिये अधिक उपयोगी है।

कैलि-फास ६x, २००—दुर्बलताकी वजहसे प्रसवमें विलम्ब, अपर्याप्त प्रसव-वेदना। किसी किसीका मत है, कि प्रसवके कई महीने पहलेसे रोज एक मात्रा कैलि-फास ६x सेवन करनेपर गर्भिणी तथा भ्रूण दोनों ही पुष्ट होते हैं और प्रसवमें तकलीफ नहीं होती।

लाइको ३०, २००—प्रसवका दर्द ऊपरकी ओर या दाहिनेसे बायीं ओर फैलता है। गर्भिणी लगातार चलती रहना चाहती है; कभी-कभी किसी चीजपर पैर रखकर जोरसे काँखती है।

मैग-फास ६x, ३०—आक्षेपिक प्रसव-वेदना, इसके साथ ही दोनों पैरोंमें अकड़न।

नक्स-मस्केटा ६, ३०—अपर्याप्त और अप्रकृत प्रसव-वेदना, आक्षेपिक और अनियमित वेदना।

नक्स-वोमिका ६, २००—प्रत्येक वारके सर्दके साथ-ही-साथ गर्भवतीका बेहोश हो जाना और अज्ञानावस्थामें ही पाखाना, पेशाब कर देना। कमरमें दर्द।

ओपियम ३०, २००—डरसे प्रसव-वेदनाको दवा रखती है। चेहरा तमतमाया दिखाई देता है। आँखें चढ़ीं, गर्भवती तन्द्राभिभूत हो पड़ती है। शय्या कड़ी मालूम होती है।

प्लैटिना ३०—जरायु-मुख और योनि-द्वारके दर्दके कारण प्रसवका दर्द रुक जाता है। बायीं ओर ही दर्द बना रहता है।

सल्फ ३०, २००—जरायुकी जड़ताकी वजहसे या भ्रूणकी अस्वाभाविक स्थितिकी वजहसे प्रसवमें विलम्ब होनेपर पल्सके प्रयोगसे दर्द बढ़ जाता है और भ्रूणकी अस्वाभाविक स्थितिको स्वाभाविक बना देता है। साथ ही प्रसव-कार्य भी शीघ्र हो जाता है। इसके प्रयोगसे अधिकांश स्थानोंमें यंत्रके व्यवहारकी आवश्यकता घट जाती है। इसीलिये इसे होमियोपैथिक "फार्सेप" कहते हैं।

सिकेलि ६, ३०—गर्भिणी समझती है कि उदरकी सभी चीजें बाहर निकल पड़ेंगी, पर प्रसव नहीं होता। बहुत दिन पहलेसे ही अनियमित वेदना आरम्भ होती है। जरायुकी कमजोरीके कारण प्रसवमें विलम्ब।

गर्भपात या गर्भ-स्राव
(Abortion)

गर्भ संचारके समयसे लेकर ६ महीनेतक गर्भका बालक निकल जानेका नाम "गभ-स्राव" या "पेट गिरना" है। इस अवस्थामें सन्तान तो जीवित रहती ही नहीं ; सात महीनेके बाद और नौ महीनेके पहले सन्तान पैदा होनेपर उसे "अकाल प्रसव" कहते हैं। अच्छी तरह यदि उपचार न किया जाये, तो जिसका गर्भ गिरता है, उस प्रसूताकी भी बुरी दशा हो जाती है और उसकी जान जानेका भय रहता है। गर्भपातका पहला लक्षण :—कमर और तलपेटमें दर्द, ऐसा मालूम होना, मानो लड़का पेटके नीचे खसका आता है ; खून या श्लेष्मा निकलता है। गर्भकी हालतमें कसकर कपड़े पहनना, ज्यादा मेहनत करना, गाड़ी, पालकी, नाव, रेलगाड़ी वगैरहपर चढ़ना (खासकर गर्भके पहले चार महीने), दौड़-धूप करना, गिर जाना, भारी चीज उठाना, जोरसे उबटन पीसना, मैदा पीसना या रोटी बेलना, उछलकर चलना (अंगुलीपर भार देकर खड़े होना), तस्वीर या मसहरी टांगना, चेचकका बुखार, पतले दस्त वगैरह होना, स्वामी-सहवास, तेज दवाओंका सेवन, योनिमें दर्द, ज्यादा

डर, चिन्ता, शोक आदि कारणोंसे गर्भ-स्राव होता है। अतएव, गर्भावस्थामें इन विषयोंमें खूब सावधान रहना चाहिये। जिसे एक वार गर्भपात हो जाता है, उसे दूसरी बार भी होनेकी सम्भावना रहती है। इसलिये गर्भ रहते ही सावधान रहना चाहिये।

गर्भपात रोकनेकी चिकित्सा

सैबाइना ३x—गर्भावस्थाके पहले तीन महीनोंमें गर्भ-स्रावकी आशंका रहनेपर (अर्थात् दर्द होना या खून दिखाई देते ही) लाभदायक है।

सिकेलि ३—गर्भावस्थाके चौथे या उसके बादवाले महीनोंमें गर्भपात होनेका डर रहे (अर्थात् दर्द हो और खून दिखाई दे), तो यह उपकारी है।

आर्निका ३—गिर पड़ना, भारी चीजें उठाना, मार खाने चोट वगैरह कारणोंसे अगर गर्भ गिरनेकी सम्भावना हो।

कैमोमिला ६—क्रोध वगैरह मानसिक उत्तेजनाकी वजहसे गर्भ गिरनेकी सम्भावना होनेपर।

वाइवर्नम-ओपि ३x—खोंचा मारने या शूल-वेदनाकी तरह दर्द होनेपर यह लाभदायक है।

गर्भ-स्राव होनेके बादका इलाज—इन ऊपर लिखी बातोंमें सावधान रहनेपर भी अगर गर्भपात हो जाये, तो ऐसा उपाय करना चाहिये कि गर्भसे भ्रूण या फूल अच्छी तरह निकल जाये। अच्छी धात्रीको बुलाकर इसका प्रबन्ध करना चाहिये, नहीं तो सूतिका वगैरह रोग पैदा होकर प्रसूताके प्राण जानेका डर रहता है। फूल गिरनेमें देर होनेपर पल्सेटिला ३० या सिकेलि ३०—२०० देना चाहिये। कई हफ्तोंतक खून निकलनेकी वजहसे प्रसूता बहुत कमजोर हो जाये, तो चायना ६—२०० देना चाहिये।

बार-बार गर्भपात निवारण करनेकी चिकित्सा—जिस समय पहले गर्भपात हुआ है, उसके कम-से-कम एक महीना पहलेसे ही फी सप्ताह, लक्षणके अनुसार नीचे लिखी दवाएँ सेवन करनी चाहियें :— जरायुको गड़बड़ीको वजहसे गर्भपात होनेपर, एपिस ६, सैबाइना ६ या सिकेलि ६। फूल (placenta) के दोषकी वजहसे होनेपर, फास्फोरस ६। भ्रूणके दोषसे या माताके उपदंशकी वजहसे गर्भपात होनेपर, मर्क-कोर ६। पिता या माताको यक्ष्मा रोग रहनेपर, बैसिलिनम ३० (महीनेमें एक मात्रा) देना चाहिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—गर्भ-कालके समय कमरमें खिंचावकी तरह दर्द और जरायुमें दबावके साथ अगर श्लेष्मा या खून निकलना शुरू हो जाये, तो इस अवस्थामें उस समय प्रसूताके माथेके नीचे तकिया न देकर, चित्त सुला देना चाहिये और खून बन्द करनेके लिये उसके पेटपर और योनिमें बरफके टुकड़े या ठण्डे पानीकी जलपट्टी बराबर देनी चाहिये। खयाल रखना चाहिये कि प्रसूताके शरीर और मनपर किसी तरहकी तकलीफ न पहुँचे। जिस घरमें वह सोये, वह ठण्डा और साफ रहना चाहिये और वहाँ आदमियोंकी भीड़ न हो ; बहुत देरतक चित्त सोनेकी वजहसे तकलीफ होनेपर एक बड़ी तकियाके अकड़न लगातार प्रसूताको बैठाया जा सकता है। भूख लगनेपर हल्का पथ्य देना चाहिये।

प्रसवकी अवस्थाके उपसर्ग

प्रसवकाल—पहले ही कहा जा चुका है कि गर्भ रहनेके दिनसे लेकर लगभग २८० दिनोंके भीतर (अर्थात् दसवें महीने) सन्तान पैदा होती है। नौ महीनेतक गर्भिणीका तलपेट बढ़ता है ; इसके बाद अर्थात् प्रसव होनेके ६-१० दिन पहले), तलपेट झूलना शुरू होता है, कमर पतली होती है, बहुत बार पेशाब होता है कंकालके नीचे दर्द पैदा

होता है। ऐसा लक्षण दिखाई देते ही सौरी-घरका प्रवंन्ध करना चाहिये। प्रसवका दिन निर्द्धारण करनेके लिये "प्रसवका दिन निर्णयकी सूची" देखना चाहिये।

सूतिकागार—घरमें जो अच्छा कमरा हो (अर्थात् जो कमड़ा बड़ा, साफ-सुथरा और बदबूसे हीन हो, जिसमें हवा खूब आती-जाती हो और सर्दी न घुस सके या धुआँ न इकट्ठा रहे, ऐसे कमरेमें) उसे सौरी घर बनाना चाहिये। सौरी घरके दोषसे माँ और सन्तानके प्राण जानेकी तैयारी हो जाती है। बरसात या शीतके समयकी सर्दीसे बचानेके लिये आवश्यकताके अनुसार, सौर घरमें एक कोनेमें कोयला या थोड़ी आग जला रखनी चाहिये; परन्तु ख्याल रखना चाहिये, कि धुआँ न इकट्ठा हो।

प्रसवका दर्द—जरायुके भीतर बच्चेके बढ़ते रहनेपर पूरी गर्भावस्थामें, समयपर प्रसवका दर्द उठता है। जरायुकी पेशियोंका सिकुड़ना ही प्रसव-क्रियाका उपाय है। इसीसे जीता हुआ बच्चा जिस तरह सहजमें ही बाहर निकलता है, मरा हुआ भी उसी तरह निकलता है। बाहर निकलनेके लिये गभके बालकको न तो कोई चेष्टा करनी पड़ती है, न जोर ही लगाना पड़ता है—गर्भकी किसी छिपी हुई शक्तिके द्वारा ही यह प्रसवका काम हो जाता है। जंगलसे भरी कोई पतली पगडण्डीसे आनेके लिये; राहकी अवस्था समझकर, हमलोग जिस तरह बचकर चलते हैं, उसी तरह प्रसवके समय वही छिपी हुई शक्ति माताके गर्भमें मरे या जीवित बच्चेको आगे बढ़ाती है। प्रसवकी राहमें जो जगह जैसी बनी है, माताके गर्भमें उसी छिपी हुई शक्तिकी सहायतासे बच्चा उसी तरह वहाँ रहता है, नहीं तो प्रसवका काम एक तरहसे असम्भव हो जाता। प्रसवको राहकी खास जगहोंमें, जहाँ कहीं बच्चेका कंधा रुकता है, उस समय गर्भका उसी रहस्यमयी शक्तिके हाथोंसे उसके करवट लेनेकी क्रिया (rotation) सम्पन्न होती है और बच्चा सहजमें ही जाननेवाली

राहसे आगे बढ़ता रहता है, इस छिपी हुई अदृश्य "महाशक्तिकी" कौशल क्रियाको सोचकर स्तम्भित हो जाना पड़ता है।

जरायुका आकार बदलना, बाहरी जननेन्द्रियका तर रहना, घन पेशियोंकी शिथिलता और मानसिक चिन्ता—ये सभी प्रसव-वेदनाके कुछ पहलेके लक्षण हैं। इसके बाद जब बार बार पाखाना-पेशाब त्यागनेकी इच्छा, बदन कुछ दर्द करना और कै आना, बदन कॉंपना, पानी निकलना (अर्थात योनिसे फेनकी तरह श्लेष्मा निकलना) और कमरकी ओरसे दर्द शुरू होकर पेटकी ओर आकर ठहर जाना प्रसव-वेदनाका लक्षण है। बहुत बार प्रसव-वेदना निर्णय करना कठिन हो जाता है। इसीसे "प्रकृत" और "अप्रकृत" प्रसव-वेदनाका भेद नीचे लिखा जाता है।

प्रकृत लक्षण—(१) पीठ कमरमें (कभी कभी उरुतक) दर्द मालूम होना।

(२) हर बार दर्द *"नियमित रूपसे"* (*जैसे हर पन्द्रह, बीस, तीस मिनटके बाद पर्यायक्रमसे*) *आता है और छोड़ जाता है।*

(३) हर बार दर्दके साथ जरायुका मुँह थोड़ा खुल जाता है और पानी निकलने लगता है।

अप्रकृत लक्षण—(१) सिर्फ पेटमें ही दर्द (खोंचा मारना या कन्-कन् करना) एकत्र रहना।

(२) दर्द होनेका कोई नियम नहीं है, जैसे—कभी दस मिनटके अन्तरसे, तो कभी पाँच मिनटके अन्तरसे दर्द होता है; कभी दर्द बराबर होता रहता है।

(३) वेदनामें जरायुका मुँह बिलकुल नहीं खुलता और पानी नहीं निकलता।

प्रसवका दर्द जितना ही जल्दी-जल्दी होगा, प्रसवका समय भी उतना ही पास आया समझना चाहिये और दाईको बुलाना चाहिये।

चिकित्सा—कालोफाइलम १x, ३ अप्रकृत वेदनाकी बढ़िया दवा है। अजीर्णसे पैदा हुए दर्दमें पल्स ३, ३०। डर या कष्टसे जो सहजमें ही उत्तेजित हो जाते हैं, उनके लिये ऐक्टिया-रेसि ३ अच्छी दवा है। तेज, परन्तु क्षणस्थायी दर्दमें वेल ३ देना चाहिये। दूसरी-दूसरी दवाओंके लिये, "प्रसवके समयके उपसर्ग" देखिये।

प्रसवकी तीन अवस्थाएँ—अगर दर्द पैदा होनेके छः घण्टेके भीतर लड़का पैदा हो जाये और लड़केका सर आगे निकले तो उसे "स्वाभाविक प्रसव" कहना चाहिये। स्वाभाविक प्रसवकी तीन अवस्थाएँ (stages) हैं। जैसे :—

पहली अवस्था—प्रसवका दर्द शुरू होते ही जरायुका मुँह फैलने लगता है और पानी निकलनेके समयतक (अर्थात् दर्द शुरू होनेसे लेकर पानी निकलने या थैली फटनेतक)।

दूसरी अवस्था—जरायुका मुँह खुलनेपर, दरार होकर पानी निकलनेके समयसे लेकर बच्चा निकलनेकी अवस्थातक। इस अवस्थामें जरायुका मुँह और बाहरी जननेन्द्रियमें कोई फर्क नहीं रहता। एक सुरंगकी तरह हो जाता है।

तीसरी अवस्था—सन्तान पैदा हो जानेसे लेकर जरायुका फूल बाहर निकलनेतक।

स्वाभाविक प्रसवमें अवश्य पालने योग्य कुछ विधियाँ

पहली अवस्था—प्रसवकी पहली अवस्थामें प्रसूता जिस तरह रहना या जो काम करना चाहे, उसमें अड़चन या रुकावट डालनेकी जरूरत नहीं है। इस अवस्थामें उसे सौर घरमें ले जाने या ज्यादा काँखनेको कहनेकी जरूरत नहीं पड़ती। बीच-बीचमें गर्म दूध या गर्म पानी

पिलाना चाहिये। इससे कमजोरी हो सकती है। ठण्डी चीज खिलाना या पिलाना मना है, ऐसी चीजें खिलानेसे दर्द वन्द हो जा सकता है। पहली अवस्थामें कोई दवा देना उचित नहीं है, परन्तु यदि ऐसा मालूम हो, कि बच्चेका माथा आगे न निकलकर कोई दूसरा अंग निकल रहा है, तो पल्सेटिला ३० दो-तीन मात्रा खिलानी पड़ेगी—इन दवाके गुणसे बच्चेका मस्तक घूमकर नीचे चला आ सकता है। "प्रसव कालके उपसर्ग" आदि देखिये।

दूसरी अवस्था—इस समय बहुत सतर्कतासे काम करना चाहिये। "पानी निकलना" शुरू होनेपर प्रसूताको सौरी घरमें ले जाना चाहिये और पहले ही की तरह बीच बीचमें गर्म दूध पिलाना चाहिये। यदि दर्द रह-रहकर वन्द हो जाये, तो गलेमें अंगुली या पर देकर अथवा नाकमें सींक दे या कटा हुआ केश खिलाकर या कोई साधारण कौशलसे कै करानेसे दर्द सहजमें ही पैदा हो जाता है। इस समय प्रसूताको एक ही जगहमें स्थिर होकर रहना चाहिये; ज्यादा छटपटानेसे दर्द जोरसे पैदा नहीं हो सकता। प्रसवके समय जच्चाको वायी करवट सोकर दोनों हाथ माथेकी ओर फैला रहना चाहिये जिनसे दोनों घुटने छातीकी ओर उठाकर पैर फैला देना चाहिये, जिससे दोनों पैरोंके बीचमें एक गोल तकिये दिया जा सके; इस तरह रहनेसे ही प्रसव हो जाता है। प्रसवके पहले कम से-कम एक बार पाखाना और पेशाब करा देना चाहिये। रक्त-स्राव होनेपर "गर्भावस्थामें रक्त-स्राव" देखिये।

बच्चेका सर जननेन्द्रियके भीतर आ जानेपर दाईको प्रसव-द्वारकी रक्षा करनी चाहिये; नहीं तो बच्चेका कन्धा निकलनेके समय गुह्य-देश फटकर प्रसव-द्वार और मलद्वार एक हो जा सकता है।

बच्चेका सर बाहर निकलते ही उसके चेहरेपरकी लार, श्लेष्मा आदि साफ कर देना चाहिये, नहीं तो श्लेष्मा वगैरह मुँहके गड्ढे और

नाकके छेदमें घुसकर साँस बन्द हो जा सकती है और बच्चेका सर बाहर निकलनेपर अगर यह मालूम हो, कि उसकी नाल मालाकी तरह उसके गलेको बाँधे हुई है, तो नाड़ीमें अंगुली डालकर उसे इस तरह ढीली कर देना चाहिये, कि उसके बीचसे बच्चेका कन्धा सहजमें ही बाहर निकल जा सके। बच्चेका माथा निकलते ही जोरसे उसका शरीर बाहरकी ओर न खींच लेना चाहिये। इससे माँ और बच्चे दोनोंके प्राण जानेकी सम्भावना है। प्रकृतिपर निर्भर करनेसे बाकी शरीर भी आप-से-आप ही बाहर निकल जाता है।

बच्चेका बाहर निकल आनेपर उसे प्रसूताके "खूब पास" धीरे-धीरे रखना चाहिये। दूर रखनेसे नाभिकी नाड़ी टूटकर रक्त-स्राव हो सकता है। इससे प्रसूता और बच्चा, दोनोंकी ही मौत हो सकती है।

नाल काटना—बच्चे पैदा होनेके बाद ही रोया करते हैं, उसी समयसे उनकी श्वास-क्रिया आरम्भ हो जाती है, यह समझ लेनी चाहिये। स्वाभाविक प्रसवमें बच्चा जमीनपर आते ही जोरसे रो उठता है। यह रोना बढ़िया लक्षण है। जबतक बच्चा न रोये, तबतक नाल न काटनी चाहिये। धात्री अथवा जो नाड़ी काटे, उसके हाथका नख बढ़ा न रहे या हाथमें किसी तरहका घाव न रहे। लम्बे नखके भीतर कितने ही तरहका विष रहता है और घावमें जो सब रोग-बीज रहते हैं, उससे प्रसूताको बुखार आदि बीमारियाँ हो सकती हैं। इसीलिये नख कटवाकर प्रसव करना चाहिये। (नाड़ीके जिस ओर बच्चेकी नाभि लगी हो, उसी ओर) बच्चेकी नालके ऊपर तीन अंगुल नल रखकर नर्म रेशमसे खूब कसकर दो गाँठें देनी चाहिये और उनके ऊपरकी ओर एक अंगुल नाल छोड़कर और भी दो गाँठें देनी चाहियें। इस तरह बच्चा और प्रसूताकी ओर नाड़ी बाँध देनेपर दोनों बन्धनोंके बीचकी नाड़ी धारदार कैंची या छुरीसे काटनी होगी। बन्धन खूब कड़ा न होनेपर बहुत रक्त निकलनेसे कच्चेको भी जान जा सकती है। सावधान, लड़केके

हिलने-डुलनेकी वजहसे काटनेके समय उसके हाथमें छुरी लगकर कट न जाये। **यदि पैदा होनेपर बच्चेका मुँह नीला हो जाये, तो पहले जल्दीसे नाल काटकर थोड़ा-सा खून निकाल देनेके बाद नाड़ी बाँधनी चाहिये।**

नाल कट जानेपर बच्चेकी नालके ऊपर तेलकी पट्टी बैठाकर बाँध देनी चाहिये। इसके बाद अंगुलीके आगे शहद लगाकर बच्चोंके मुँहके भीतरका श्लेष्मा साफ कर देना चाहिये। अन्तमें थोड़े गर्म पानीसे उसे नहलाकर साफ नर्म कपड़ेसे उसे ढँक देना चाहिये। नहानेके बाद ही उसे गर्म कपड़ा न ओढ़ा देनेसे सर्दी खाँसी हो जानेकी सम्भावना है। *मातृ-गर्भमें हवासे बन्द जगहमें रहनेकी वजहसे भ्रूण हमेशा गर्म रहता है,* इसलिये जन्म होनेके बाद भी उसे उसी तरह गर्म अवस्थामें रखना कर्त्तव्य है और जोरसे बदन पोंछ देने या घसनेसे बच्चेका मुलायम चमड़ा छिल जा सकता है। सर्दी या खूब ठण्डी हवा बहनेपर नहाना बन्दकर शुद्ध सरसोंका तेल गर्मकर, बच्चेके माथे और समूचे शरीरमें मालिशकर खूब पतले कपड़ेसे बदन धीरे-धीरे पोंछ डालना अच्छा है।*

बच्चा पैदा होनेपर न रोये या मुर्देकी तरह पड़ा रहे, तो "मृतवत् भूमिष्ठ शिशु" देखिये।

तीसरी अवस्था—जबतक फूल न गिर जाये, तबतक प्रसूताकी अवस्था निरापद न समझनी चाहिये। स्वाभाविक प्रसवमें आध घन्टेमें

---

* गर्म पानीमें नहलानेसे बच्चेको "ब्रांको-न्यूमोनिया" रोग हो सकता है, इसीसे बच्चोंको चिकित्सामें सिद्धहस्त डाक्टर फिशर (नाली काटनेके तीन दिनोंतक) गर्म जलके बदले कुछ गर्म शुद्ध जैतूनका तेल (Pure olive or Sweet oil) व्यवहार करनेकी सलाह देते हैं। vide Fishers's *Diseases of Children pp. 34—35*)।

फूल आप-से-आप ही गिर जाता है। खींचा-तानीसे आफत आ जानेकी सम्भावना है। "फूलका न गिरना" देखिये।

फूल गिरनेके बाद प्रसूताके कपड़े और बिछावन साफकर उसकी जननेन्द्रिय मुँहमें एक पाँच अंगुल लम्बे कपड़ेकी कई तही कर डाल देना चाहिये और बीच-बीचमें यह कपड़ा बदल देना चाहिये।

तीन हाथ लम्बा और आधा हाथ चौड़ा एक कपड़ा प्रसूताके पेटपर पट्टीकी भाँति दस दिनोंतक बाँध रखना अच्छा है; परन्तु प्रसवके बाद ही यदि दो घण्टेतक दोनों हाथोंसे प्रसूताका जरायु, तलपेट पैरसे दवा रखा जाये, तो फिर पेट बाँधनेवाले बैण्डेजकी जरूरत नहीं पड़ती।

प्रसवके बाद तीन घण्टेतक प्रसूताको चित्त सुलाये रखना चाहिये। कपड़ा उतारना या पाखाना, पेशाब सोये-सोये ही करना चाहिये। हिलने डुलनेसे बहुत ज्यादा खून निकल जानेका डर रहता है। तीन घण्टेतक स्थिर भावसे रहनेपर आप ही-आप नींद आकर प्रसूताको बहुत कुछ आराम मिल सकता है। प्रसवके आठ-दस घण्टा बाद प्रसूताको यदि कुछ आराम मालूम हो, तो बच्चेको दूध पीने देना चाहिये। दूध खींचने देनेसे स्तनमें जल्दी-जल्दी दूध आता है और जरायु सिकुड़कर रक्त बहना बन्द हो सकता है।

यदि प्रसवके बाद कोई ज्यादा उपसर्ग न दिखाई दे, तो "आर्निका" ३x चार घण्टेका अन्तर देकर तीन दिनोंतक प्रसूताको सेवन करना अच्छा है। आर्निका सेवन करानेसे सौरीका बुखार वगैरह प्रसवके बहुतसे रोग नहीं हो सकते हैं।

प्रसवके बाद ज्यादा खून जानेपर "प्रसवके बादके उपसर्ग" देखना चाहिये।

सौरी घरमें प्रसूताकी सुश्रूषा

नीचे लिखे नियमोंपर ज्यादा ध्यान देना चाहिये :—

(१) एक महीना (कम-से-कम एक सप्ताह) प्रसूताको सौरी घरमें ही रहना चाहिये। पहले चार-पाँच दिन स्थिर भावसे सोयी रहे, पाखाना पेशाबके लिये भी उठने न देना चाहिये। हिलने-डुलनेसे खून ज्यादा आकर मृत्युतक हो सकती है।

(२) प्रसूति कभी बायीं और कभी दाहिनी करवट सो सकती है, क्योंकि लगतार एक करवट सोनेसे तकलीफ होती है। सौरी घरमें प्रसूताके सोनेके लिये दो साफ बिछावन रखना जरूरी है ; क्योंकि बहुत देरतक एक बिछावनपर सोनेसे (खासकर गर्मीके दिनोंमें) बिछावन गर्म हो जाता है।

(३) इस बातका प्रबन्ध रखना चाहिये कि प्रसूता और बच्चेको ठण्डी हवा न लगने पाये। दोपहरमें दरवाजे, खिड़कियाँ खोलकर सौरी घरमें हवा जाने-आनेका प्रबन्ध रखना चाहिये ; परन्तु इस बातका ख्याल रखना चाहिये कि हवाका झोंका प्रसूता या लड़केको न लगने पाये।

(४) सवेरे या जाड़ेके दिनोंमें ठण्डी हवा बहती है। इसलिये उस समय सौरी घरमें अच्छी तरह आग रखनी चाहिये। दूसरे वक्त थोड़ी आग रखनेसे भी काम चल सकता है, जिसमें प्रसूता और बच्चेको कोई तकलीफ न हो। "ज्यादा धुआँ होनेसे बच्चेको आँखें नष्ट हो जाती हैं।"

अच्छे-अच्छे चन्दन आदि सुगन्धित पदार्थ आगमें डालकर सौरी घरको खुशबूदार रखना अच्छा है। कमरा ज्यादा गर्म, ठण्डा या धुआँ-भरा न हो।

शीतला, इन्फ्लुएञ्जा वगैरह लरछुत रोगियोंके पाससे आकर कोई सौरी घरमें न जाये।

(५) इस वातपर ध्यान रखना चाहिये कि बच्चा नाकसे साँस ले। बच्चा बहुत बार मुँह फाड़कर सोता है और मुँहसे साँस लेता है। ऐसी अवस्थामें मुँह बन्द कर देनेपर नाकसे यह काम अनायास ही हो जाता है। उस समय इस वातपर ध्यान न रखनेके कारण हमलोग वड़ी अवस्थामें भी बालक-बालिकाओंको मुँहसे साँस लेते देखते हैं। इससे कितने ही तरहके रोगके बीज मुँहकी राहसे शरीरमें घुस जानेकी आशंका रहती है। (vide Dr. Mc. Conkey's Lectures on How and When is Tuberculosis Contrected).अतएव, बचपनसे ही इसको रोक देना जरूरी है। कोई-कोई चिकित्सक कहते हैं कि मुँहसे साँस लेनेकी क्रिया होनेपर किसी-किसी बच्चेका मुँह टेढ़ा हो जाता है। कानसे कम सुनता है और उसका बोलना कठिन हो जाता है। यदि तालुकी शिराएँ वढ़नेके कारण बच्चा इस तरह साँस लेता हो, तो नश्तर लगवाकर इसे रोक देना चाहिये।

(६) प्रसूताके पेटको सेंकने और कपड़ा आगमें सेंककर योनिकी जड़में रखनेसे और बच्चेकी नाभिको सेंक देनेसे दर्द कम हो जाता है। इस समयके कोई-कोई चिकित्सक इस तरह सेंकनेका विरोध करते हैं।

जिस प्रसूताके सौरी घरमें आग न रखी जाये, जो सेंक तापको न सहे या गर्म चीजें न खायें—उसे और उसके बच्चेके लिये गर्म कपड़े और ओढ़ना रखना जरूरी है; परन्तु बहुत ज्यादा खाना-पीना या ज्यादा घी खिलाना मना है।

प्रसवके पहले दो-तीन दिन दूध और बार्ली, इसके वाद दो दिन चूड़ा घीमें तलकर उसमें गोलमिर्चकी बुकनी और खूब थोड़ा घी और पाँचवें दिन दूध-भात देना जरूरी है। दाल या कोई गुरुपाक चीज या तरकारी पहले सप्ताहमें न देनी चाहिये।

(७) प्रसवके समयसे कम से-कम नौ महीनेतक "स्वामी-सहवास" मना है। इस नियमपर ध्यान न देनेकी वजहसे आज इस देशकी प्रसूता और बच्चोंका शरीर खराब हो गया है और शायद बच्चोंको यकृतकी बीमारी और अकाल मृत्यु भी हो रही है।

प्रसवके समयके उपसर्ग

प्रसवके दो महीने पहलेसे "ऐक्टिया रेसि" ३ रोज दो बार सेवन करनेसे अकसर बिना किसी तकलीफके प्रसवकी क्रिया सम्पन्न होती है, परन्तु अगर यह भय हो कि प्रसवमें कष्ट होगा, तो "ऐक्टिया रेसिमोसा" के बदले "आर्निका" ३ या "कैल्के-फ्लुआर" ६x विचूर्ण दो महीनेतक दिनमें दो बारके हिसाबसे सेवन करना चाहिये। इसके अलावा, प्रसवके आखिरी कई महीनोंमें जिन गर्भवतियोंको कब्जियतकी वजहसे तकलीफ हुआ करती हो, उनके लिये "कालिन्सोनिया" ३ सेवन करना अच्छा है। "कैलि-फास" १२x के सेवनसे सुखपूर्वक प्रसव हो सकता है।

अगर लड़का होनेका दर्द आरम्भ होकर पाँच छः घण्टेके भीतर ही लड़का हो जाये तो किसी दवाको देनेकी जरूरत नहीं है ; परन्तु इससे ज्यादा देर होनेपर इलाज कराना चाहिये। लक्षणके अनुसार नीचे लिखी दवाएँ देनेसे थोड़े ही वक्तके भी बिना किसी तकलीफके लड़का हो सकता है :—

जरायुका मुँह सिकुड़ा रहनेकी वजहसे प्रसवमें तकलीफ होनेपर जेलसिमियम ३x। अनियमित हल्का या मीठा दर्द हो और पहले पानीकी तरह स्राव होनेके बाद भी अगर दर्द नहीं बढ़े और मिचलाता हो, तो पल्सेटिला ३०। ऊपर लिखे उपसर्गोंके बाद उसमें ऐंठन हो (खासकर उस औरतको अगर पहले तीन चार सन्तानें हो

चुकी हों, तो), सिकेलि-कोर ३० । सरमें दर्द, वेचैनी, आँखें और मुँह लाल, बहुत ज्यादा बेचैनी, बकना-झकना, हाथ-पैर पटकना लक्षणमें—बेलेडोना ३० । बहुत ज्यादा असह्य दर्द रहनेपर—कैमोमिला ६, काफिया ६ या जेलसिमियम ६ । बहुत ज्यादा प्रयवके दर्दके वाद एकाएक दर्द बन्द होकर आँखें और मुँह लाल हो जायें, जल्दी-जल्दी साँस चलने लगे, घरघर शब्द हो वेहोशी या मूर्च्छा पैदा हो जाये, तो ओपियम ६, ३० । बहुत खींचनकी वजहसे गर्भवती व्याकुल होकर चिल्लाकर रोती हो, तो हायोसायमस ६ और प्रसवके समय जरायुका मुँह फैला रहनेपर बहुत गर्म कैलेण्डुलाके धवानमें (कैलेण्डुला θ दो ड्राम और गर्म पानी डेढ़ पाव) नये स्पंजको निचोड़कर जननेन्द्रियके बाहर लगाना चाहिये । प्रसव बाद भी यह प्रयोग किया जाये, तो फायदा होता है । बहुत देरतक दर्द होनेके कारण प्रसूता कमजोर हो पड़े और जरायु-मुख कड़ा हो—कोलोफाइलम ३x ।

अगर यह खयाल हो, कि गर्भके लड़केका सर पहले बाहर न निकलेगा, तो पल्सेटिला ३० । जरायुका मुँह कड़ा रहनेपर और न फैलानेपर बेलेडोना ३० । बहुत कष्टकर प्रसवके दर्दमें, आर्निका ३ । कष्टकर प्रसवका दर्द, "हमेशा चिली बनी रहना" और प्रत्येक बाहरी प्रसव-वेदनाके साथ नाभिके चारों ओर काटनेकी तरह तेज दर्द रहनेपर और यह दर्द जरायुतक फैल जानेपर, इपिकाक ३x* देना चाहिये । प्रसवके सभय या बाद वेहोशी और उसके साथ ही सब शरीर बरफकी तरह ठण्डा और नाड़ी क्षीण रहनेपर कैम्फर θ ।

---

* धात्री-विद्या-विशारद स्वर्गीय डाक्टर यदुनाथ मुखोपाध्यायने अपनी "धात्री-शिक्षा" नामक पुस्तक (पाँचवाँ संस्करण पृष्ठ ८५—६५) में लिखा है, कि इपिकाककी बुकनी (pulv. Ipecac) दो ग्रेनकी मात्रामें खिलानेसे :— (१) अगर जरायुका मुँह कड़ा रहता है, तो नर्म हो जाता है ; खुला न हो,

फूल न गिरना—बच्चा पैदा हो जानेसे थोडी ही देर बाद जरायुसे फूल निकल पड़ता है, पर प्रसवके बाद अगर एक घण्टेमें फूल बाहर न निकल पडे, तो पल्सेटिला ३० या सिकेलि ३० पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर खिलाना चाहिये। दवा देनेके बाद आधे घण्टेमें अगर कोई फायदा न हो, तो एक हाथसे जरायुको दवाकर दूसरे हाथसे फूलको "धीरे-धीरे" खींच लेना पड़ेगा। जोरसे खींचनेपर फूल टूटकर उसका कुछ अंश भीतर रह जा सकता है, इससे खून इतना ज्यादा निकलता है, कि प्रसूताके प्राण जानेका डर रहता है।

प्रसवके बाद उपसर्ग

फूल गिर जानेके बाद यद्यपि कोई उपसर्ग नहीं रहता, तब भी प्रसूताको आर्निका ३x रोज चार बार तीन दिनोंतक सेवन कराना चाहिये। आर्निका खिलानेसे सौरी घरकी कड़ी बीमारियोंसे छुटकारा मिल सकता है।

प्रसवके बाद हमेशा जो उपसर्ग दिखाई देते हैं, आगे उनका वर्णन किया जाता है :—

योनिका मुँह और गुह्य-स्थानका फट जाना—योनिका मुँह प्रसवके समय प्रायः कुछ न-कुछ फट जाता है। यदि प्रसवके समय प्रसूताके गुह्य-द्वारकी रक्षा न की गई, तो वह भी फट जाता है।

तो खुल जाता है; (२) दर्दका जोर न हो, तो जोर हो जाता है, पर तकलीफ घटती है; (३) सहजमें ही प्रसव हो जाता है, फूल निकल पड़ता है और ज्यादा रक्त-स्राव नहीं होता; (४) प्रसवकी सभी अवस्थाओंमें और गर्भवतीके एकदम कमजोर या काहिल हो जानेपर भी यह दवा खिलाई जा सकती है। दवा खानेके दो घण्टेके भीतर अगर प्रसव न हो, तो दूसरी मात्रा देनी चाहिये।

कैलेण्डुला θ दस बून्द एक छटाक पानीमें मिलाकर उसमें कपड़ा भिगो, फटी हुई जगहपर लगानेसे जल्दी-जल्दी आराम हो आता है।

प्रसवके बादका दर्द—फूल गिर जानेके बाद (जरायुके सिकुड़नेके समय) कई बार दर्द उठता है। इसे "प्रसवके बादका दर्द" कहते हैं। प्रसवके बाद जरायुमें खून वगैरह जो कुछ इकट्ठा रहता है, इस दर्दकी वजहसे वह बाहर निकल आता है। अगर ४८ घण्टोंके भीतर यह दर्द बन्द न हो जाये, तो आर्निका ३X देना चाहिये। जिन औरतोंका तेज स्वभाव हो, उन्हें कैमोमिला ६ देना चाहिये। आर्निकासे आराम न हो, तो जेलसिमियम ३X या काफिया ६ या सिकेलि ३० देना चाहिये। बीच-बीचमें पल्सेटिला ३० या नक्स-वोमिका ६ या क्यूप्रम ३० की भी जरूरत पड़ सकती है।

प्रसवके बादका स्राव (Lochin)

खून गिरनेके बाद बीस दिनोंतक जरायुसे थोड़ा-थोड़ा खून निकला करता है। पहले दो दिन जो खून निकलता है, वह गहरा लाल, बादको पीला आभा लिये और अन्तमें पानी तरह या पतले पीवकी तरह निकला करता है। इसके बाद बन्द हो जाता है। अगर आप-ही-आप इस तरह बन्द होता चले, तो किसी दवाकी जरूरत नहीं पड़ती; परन्तु नीचे लिखे उपसर्गोंमें दवा देनी चाहियेः—स्राव बहुत दिनोंतक जारी रहे, तो सिकेलि ३। बहुत दिनोंतक गहरा लाल रंगका खून निकलता रहे, तो सैबाइना ३X; एकाएक बन्द हो जाये, तो ऐकोनाइट ३X; बदबू भरा हो, तो क्रियोजोट ३ या कार्बो-वेज ६ सेवन करना चाहिये और कैलेण्डुला θ बीसगुने पानीमें मिलाकर रोज तीन बार योनिको धो डालना चाहिये।

रक्त-स्राव (Hæmorrhage)

प्रसवके बाद ज्यादा खून निकलनेपर प्रसूताके लिये जीवनमें सशय पैदा हो जाता है। प्रसवके समय खून कम निकले, इस बातपर हमेशा ध्यान रखना चाहिये। खूब ज्यादा खून या एकदम लाल खून म'तेकी तरह लगातार निकलता रहे, तो नीचे लिखे उपायोंसे उसे तुरन्त बन्द करना पड़ेगा।

प्रसूताको सुलाकर उसका सर नीचे और दोनों उरु ऊपरको ओर उठाने होंगे। इसके बाद उसी समय उसके पेटपर हाथ रख जरायु इस तरह मुट्ठीमें पकड़ लेना होगा, कि वह सिकुर सके और गर्म पानी (१२० डिगरी) उसकी जननेन्द्रियमें डालना पड़ेगा। अगर सुविधा हो, तो बरफके टुकड़े प्रसूताके पेटपर और योनिमें रखना और वही उसे चूसने देना अच्छा है। बरफमें खून बन्द करनेकी ताकत है।

रक्त स्रावके समय सैबाइना ३x या हैमामेलिस ३x और स्रावकी वजहसे एकदम काहिल हो जानेपर चायना ६ और स्रावका वजहसे माथेमें दर्द रहनेपर फेरम ६ देना चाहिये।

मूर्च्छा—प्रसवके समय या प्रसवके बाद कोई-कोई प्रसूता बेहोश होकर अपना जीवन भी खो बैठती है। इसलिये बड़ी सावधान से इलाज करना चाहिये। अगर बेहोशीके साथ सब शरीर बरफका तरह ठण्डा पड़ जाये, तो रुबिनी कैम्फर θ, जरा हिलने डुलनेसे हो बेहोश हो जाये या बेहोशीके साथ कपालमें ठण्डा पसीना हो, तो वेरेट्रम-ऐल्ब ६; रक्त-स्रावकी वजहसे मूर्च्छामें, चायना ६ या कार्बो-वे । ३०, यदि बार-बार बेहोशी आ जाये या बेहोशी ज्यादा देरतक ठहरती हो तो "स्ट्रैमोनियम" ३x; चोटकी वजहसे बेहोशीमें, आर्निका ३x १; भयकी वजहसे बेहोशीमें ऐकोनाइट ३x या काफिया फायदा करता है। यदि दवा निगलनेकी ताकत न हो, तो चुनी हुई दवा सूंघा दनो

चाहिये। पहले गर्म दूध, बार्ली वगैरह हल्की चीजें, इसके बाद पुष्ट भोजन देना चाहिये।

आक्षेप (Convulsions)

प्रसवके बाद या पहले (अथवा प्रसवके समय) सब शरीरमें आक्षेप होना, बहुत खराब है। सरमें ज्यादा दर्द, उत्कण्ठा, दृष्टि-शक्तिका कम पड़ जाना, मुँहसे बात न निकलना, हाथ-पैरोंमें अकड़न, तन्द्राका भाव वगैरह उपसर्ग "आक्षेप" के पूर्व लक्षण हैं। इसके बाद आँखोंकी पुतली घूमने लगती है, मुँह कभी इस कन्धे और कभी उस कन्धेकी ओर रहता है, जीभ बाहर निकल आती है, धनुष्टंकारकी तरह सब शरीरमें अकड़न होने लगती है और प्रसूता बेहोश हो जाती है। दो-चार मिनट बाद ज्ञान होता है। इसके बाद फिर खोंचन पैदा होकर प्रसूता बेहोश हो जाती है। इस तरह बार-बार आक्षेप और बेहोशी होनेपर मृत्युतक हो जाती है। यकृतके ऊपरी भागमें छोटा-छोटा अनगिनती रक्त-स्राव या मस्तिष्कमें खूनकी कमी (anæmia) या पेशाबमें अण्डलाल (alhumen) जमा होनेकी वजहसे ही शायद ऐसा आक्षेप होता है।

हमेशा सर भारी, अंग-प्रत्यंगका हिलना, पेशाबकी मात्राका घट जाना, बदनमें कुछ दर्द, पैर और मुँह फूले या आँखोंके आगे अन्धेरा वगैरह बुरे लक्षण दिखाई देने लगें, तो उसी समय गर्भिणीको सुला देना चाहिये और कड़ी तथा नमकीन चीजोंका भोजन बन्दकर दूध, पानी और फलोंका रस पिलाना चाहिये। इसके बाद आगे लिखी होमियोपैथिक दवाओंमेंसे चुनकर दवा देनी चाहिये :—

आक्षेप होनेके पूर्व लक्षणमें हायोसायमस ३x ; आक्षेपके समय बेलेडोना ६ या हाइड्रोसियानिक-एसिड ३ ; आक्षेप बन्द होनेके बाद (खासकर दिमागमें किसी तरहकी गड़बड़ी रहनेपर) ओपियम ३० देना चाहिये। किसी-किसी प्रसूताको आक्षेप होनेके पहले बुखारके

साथ तेज प्यास रहती है। ऐसी अवस्थामें ऐकोनाइट ३x देना चाहिये और अगर (प्रसवके समय, पहले या बाद) खींचनके साथ लसदार ठण्डा पसीना, नाड़ी पूर्ण और द्रुत तथा प्रलाप वगैरह लक्षण हों, तो विरेट्रम विरिडि ३x देना होगा ("सूतिका ज्वर" की दवाएं देखिये)।

गर्म दूध, बार्ली वगैरह हल्की चीजें पथ्यके रूपमें देनी चाहियें।

पसीना बन्द हो जाना

प्रसवके बाद एकाएक पसीना बन्द होनेपर, डल्कामारा ६ या कैमोमिला ६ देना चाहिये।

सुस्ती मालूम होना

प्रसवके बाद बहुत कमजोरी और सुस्ती आ जायें, तो चायना ६ या फास्फोरिक-ऐसिड ६ देना चाहिये।

नींद न आना

कोई खास बीमारी नहीं है ; लेकिन प्रसवके बाद अगर रातमें नींद न आये, तो काफिया ६ देना चाहिये।

पेशाब बन्द

प्रसवके बाद अकसर छः घण्टोंतक पेशाब नहीं होता। अगर बारह घण्टोंतक पेशाब हो, तो ऐकोनाइट ३x पन्द्रह पन्द्रह मिनटपर देना चाहिये। अगर चार बार ऐकोनाइट खिला चुकनेपर भी पेशाब न हो, तो बेलेडोना ६ आध-आध घण्टेका अन्तर देकर देना चाहिये। तीन बार बेलेडोना देनेपर भी पेशाब न हो, तो इक्विसेटम १x देना चाहिये।

कब्जियत

प्रसवके बाद जरायु वगैरह यंत्रोंको आराम लेनेकी जरूरत रहती है। इसीसे तीन-चार दिनोंतक प्रसूताको पाखाना नहीं होता। इस अवस्थामें दवा लिखनेसे नुक्सान होता है, परन्तु पाँच-छः दिनोंतक पाखाना न होनेकी वजहसे अगर पेटमें दर्द हो, तो कालिन्सोनिया ३x या विरेट्रम-ऐल्बम ६ देना चाहिये।

उदरामय—पतले दस्त

प्रसवके बाद पतले दस्त आनेपर, हायोसायमस या पल्सेटिला ६ देना चाहिये।

अर्श (बवासीर)

प्रसवके बाद कभी-कभी बवासीर हो जाता है। पल्सेटिला ६ सेवन और हैमामेलिस θ बीसगुने पानीके साथ मिलाकर धावनका प्रयोग करना चाहिये।

सूतिका ज्वर

(Puerperal Fever)

सूतिका ज्वर (सौरीका बुखार—प्रसूत) भी शोणित रोगके भीतर ही है ; परन्तु औरतोंकी बीमारी करनेकी वजहसे इस स्थानपर लिखा जाता है। सूतिका ज्वर बहुत ही खराब और भयानक बीमारी है। इस रोगके पैदा होनेका कारण एक तरहके जीवाणु या जहर हैं। प्रसवके बाद कई कारणोंसे जरायुका दूषित हो जाना, प्रसवके बाद फूलका कुछ अंश जरायुमें रहकर उसका सड़ जाना, इस बीमारीके पूर्ववर्त्ती कारण हैं। प्रसवके तीन-चार दिन बाद ही सौरीकी बुखार होता है। पहले

थोड़ा बुखार होकर फिर वह बढ़ जाता है। उस समय जाड़ा, गर्मी या कँपकँपी पैदा हो जाती है। सरमें दर्द, नाड़ीमें वेग, पेटमें दर्द बदनका ताप १०६° डिग्रीतक होता है। एकाएक प्रसवके बादवाला स्राव, पसीना और अकसर स्तनोंसे दूध निकलना बन्द हो जाता है और सात-आठ दिनोंमें मृत्यु हो जाती है। जरायुसे पीवकी तरह बदबूदार स्राव निकलना बहुत ही अशुभ लक्षण है। "यह बीमारी कभी पुराना आकार धारण नहीं करती" ("पुराना सूतिका रोग") देखिये।

चिकित्सा—एकोनाइट ३x—रोगकी पहली अवस्थामें (जब बहुत बुखार) शीत, कँपकँपी, नाड़ी द्रुत और कठिन, गात्र शुष्क, पेट फूला और दर्द-भरा, बहुत प्यास और जरायुमें दर्द हो। डा० लड्नामने इस अवस्थामें **वेरट्रम-विरिडि** १ का प्रयोगकर बहुतोंको बचाया है।

वेरट्रम-विरिडि १—बहुत कँपकँपी, खोंचन या अकड़नकी वजहसे रोगिणीकी जान जानेकी आशंका हो, तो यह दवा चार-पाँच मिनटके अन्तरसे देनी चाहिये (जबतक कँपकँपी या खींचन कुछ कम न हो जाये); इसके बाद जब खोंचन या कँपकँपी कम हो जाये, तब पन्द्रह, बीस या तीस मिनटोंका अन्तर देकर यह दवा देनी चाहिये।

बेलेडोना ३०—उदरमें बहुत दर्द, बेचैनी, स्तनमें दूधकी कमी, सरमें टपककी तरह दर्द, आँखें और चेहरा लाल।

नक्स-वोमिका ३०—जरायु विशेष रूपसे आक्रान्त होनेपर।

कोलोसिन्थ ६—पेट ज्यादा फूलनेपर।

कैलि-सायानेटम ३०—एकाएक छिलक मारनेकी तरह दर्दकी वजहसे रोगिणी रोती-रोती बेचैन हो जाये। पिछली रातमें रोगका बढ़ना।

मर्क-कोर ६—तलपेटमें काटनेकी तरह दर्द, इसी वजहसे रोगिणी पेटपर हाथ नहीं रखने देती। बहुत ज्यादा प्यास, खून या आँव-मिले दस्तमें फलप्रद है।

लैकेसिस ६—पेटमें वहुत दर्द (नींदके बाद दर्द बढ़ जाता है)।

रस-टक्स ६—जरायुमें प्रदाह (खासकर निचले अंगमें अवसन्न करनेवाला दर्द); वहुत देरतक ठहरनेवाला वदबूदार स्राव और सान्निपातिक ज्वरके लक्षणमें ।

कैलि-फास ३x चूर्ण—इस रोगकी वढ़िया दवा है। हालमें डा० सैंडसने यह दवा सेवन कराकर एक रोगिणीकी जान वचायी है ।

पाइरोजेन ६, २००—पीव होनेकी वजहसे खून खराब होनेपर (pyæmic condition)। वेचैनी, "वहुत वदबूदार स्राव" होनेपर यह लाभदायक है ।

बुखार जोरसे आकर यदि जीवनी-शक्तिका जल्दी-जल्दी नष्ट कर रहा हो, तो आर्सेनिक ३० (लैकेसिस ६ या हायोसियामस ६ के साथ कोई-कोई पर्यायक्रमसे देनेकी सलाह देते हैं)।

दूसरी दवाएँ—ब्रायोनिया ६, पल्सेटिला ६, हैमामेलिस १, चायना ६, एपिस ६ । पेटका दर्द तेज होनेपर खूब गर्म फ्लानेल पेटपर रखना चाहिये ।

सूतिका ज्वरके साथ "अंत्रावरक-झिल्ली-प्रदाह" होनेपर वैप्टीशिया θ, हायोसायमस ३x, कैमोमिला ३ और अंत्रावरक-झिल्ली-प्रदाहकी दवाएँ सेवन करनी चाहिये ।

आनुसंगिक चिकित्सा—दूषित कपड़े वगैरह दूर फेंक देने चाहियें। खूब गर्म फ्लैनेल पेटपर रखनेसे पेटका दर्द अच्छा हो जाता है। दालचीनीका काढ़ा गर्म पानीमें मिलाकर गर्म अवस्थामें ही रोगिणीके वदनपर छिड़क देना चाहिये। इससे होशमें आ जायगी ("आक्षेप" देखिये)।

(पुराना) सूतिका रोग

किसी एक सुप्रसिद्ध चिकित्सा-ग्रंथमें "सूतिका ज्वर" और (पुराना) "सूतिका रोग"—एक ही रोगके दो रूप बताकर सीखनेवालोंको उपदेश दिया गया है ; पर वास्तवमें ऐसी बात नहीं है—ये दोनों ही अलग-अलग बीमारियाँ हैं। सूतिका ज्वर लरछुत (एक तरहका विष या जीवाणु) है, खूनमें घुस जानेपर यह बीमारी पैदा होती है ; पर "पुराना सूतिका रोग" छूनेसे नहीं फैलता या किसी तरहका दूषित विष (या जीवाणु) इसमें पैदा नहीं होता, इसलिये यह सूतिका ज्वरको पुरानी अवस्था या रूप नहीं है। प्रसवके बाद अगर प्रसूताका अच्छी तरह यत्न नहीं होता, तो स्वास्थ्य बिगड़कर शरीर धीरे-धीरे रक्त-हीन हो जाता है और पुराना बुखार, अतिसार, शोथ वगैरह उपसर्ग पैदा हो जाते हैं। इसीको प्रसूताकी बीमारी या पुराना सूतिका रोग कहते हैं। यह असलमें एक "बढ़ती हुई तेज रक्त-स्वल्पता" रोग है।

चिकित्सा—इस कड़ी बीमारीमें नेट्रम-म्यूर ३०, आर्सेनिक ३०, चायना ६, फेरम-मेट ३०, ऐल्यूमिना ६, सिपिया ३०, ग्रैफाइटिस ३०, पल्सेटिला ३०, नक्स वोमिका ३० देना चाहिये ; परन्तु "कैल्के-फाॅस ३ और फेरम-आर्स ३०" इस बीमारीकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। मांगुर मछलीका शोरवा खाना और डाक-पक्षीका तेल लगाना खूब फायदा करता है। इस पुस्तकमें "बढ़ती हुई तेज रक्त-स्वल्पता" रोगकी चिकित्सा देखनी चाहिये।

सूतिकावस्थाका उन्माद

(Puerperal Insanity)

प्रसवके बाद या पहले बलक्षय वगैरह कारणोंसे किसी-किसी औरतको पागलपन हो जाता है। यह वायु रोग दो तरहका होता है :—(१) उन्माद (mania) और (२) विषाद वायु (melancholia)।

उन्माद रोगमें—बुद्धिका भ्रम, निरर्थक बकना, अपने आदमियोंको मारने, काटने दौड़ना वगैरह "उन्माद रोग" के प्रधान लक्षण पाये जाते हैं। साधारण पागलपन या हँसने-खेलनेके भाववाले लक्षणमें 'हायोसायमस' ३। गहरे पागलपन (जैसे—तेज प्रलाप, क्रोध, काटने दौड़ना, अकेली या चुप रहनेकी इच्छा न होना, निर्लज भाव वगैरह लक्षणोंमें) 'स्ट्रैमोनियम' ३। उच्च भावपूर्ण प्रलाप (ठीक मानो देवताकी आज्ञा है) या अकेली और अन्धेरेमें रहनेकी इच्छा या रह-रहकर रोगिणीकी शारीरिक, मानसिक क्रियाका निस्तब्ध भाव (catalepsy) लक्षणमें—'कैनाबिस इण्डिका' ६ देना चाहिये।

विषाद-वायु रोग—हमेशा दुःखित या जड़भाव, हृदयमें शून्यता अनुभव करना या आत्महत्याकी इच्छा वगैरह "विषाद-वायु रोग" के प्रधान लक्षण हैं। सिमिसिफ्यूगा ३ इसकी बढ़िया दवा है। अगर आत्महत्या करनेकी इच्छा ज्यादा होती हो, तो आरम-मेट ६ देना चाहिये। प्लैटिना ६, पल्सेटिला ६ या ऐग्नस कैक्टस ३ की कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। "विषाद-वायु रोग" देखिये।

आनुसंगिक चिकित्सा—ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये कि वायुग्रस्त औरतोंका मन किसी तरह जरा भी उत्तेजित न होने पाये। दूध वगैरह हल्की पुष्ट चीजें खानेको देनी चाहियें। कोई-कोई सोना बेंगका शोरबा फायदेमन्द बताते हैं।

श्वेत-प्रदर

(Phlegmasia Alba Dolens)

प्रसवके बाद किसी-किसी औरतका पैर फूल जाता है और सफेद हो जाता है। तलपेटसे पैरतक दर्द, बुखार, रक्त निकलना (lochia) और स्तनके दूधका कम हो जाना वगैरह इस तकलीफ देनेवाली बीमारीके प्रधान उपसर्ग हैं। पल्सेटिला ६ या हैमामेलिस ३x इसकी उत्कृष्ट

दवाएँ हैं। एपिस ६ या रस-टक्स ६ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। रूईसे पैर बाँधना और हल्की, पर पुष्ट चीजें खानेको देनी चाहियें।

प्रसवके समय बार-बार अस्त्र-प्रयोगका दुष्परिणाम

(Repeated Artificial Delivery)

भ्रूणके निकलनेकी राह अगर भ्रूणके शरीरसे छोटी हो, तो नश्तरके सहारे बार-बार प्रसव कराना पड़ता है; परन्तु इससे प्रसूताका शरीर खराब हो जाता है। इस अवस्थामें फेरम-फास २००, कैलि-फास २०० और मैग्नेशिया-फास २०० बीच-बीचमें, पर बहुत दिनोंतक खिलाते रहनेसे रोगिणीका स्वास्थ्य खराब होनेके कारण पैदा हुई तकलीफ दूर हो जाती है और धीरे-धीरे वह एकदम अच्छी हो जाती है।

यदि वह दुबारा गर्भवती हो, तो प्रसवके तीन-चार मास पहले उसे कैल्केरिया-फ्लोरेटा १२x विचूर्ण और कैल्के-फास ६x बीच-बीचमें खिलाना चाहिये। इससे बिना चीर-फाड़के सहजमें ही बच्चेका जन्म हो सकेगा।

बस्ति-गह्वरकी कौषिक झिल्लीका प्रदाह

(Pelvic Cellulitis)

नश्तर लगवाने या चोट वगैरहसे यह प्रदाह पैदा हो जाता है। तलपेटमें दर्द, बुखार या जननेन्द्रियका फूल उठना, इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। एपिस ३ और रस-टक्स ६ इस रोगकी दवाएं हैं। बुखार तेज रहनेपर, विरेट्रम-विरिडि १x देना होगा।

वस्ति-गह्वरका पीव-भरा फोड़ा

(Pelvic Abscess)

अगर "वस्ति-गह्वरका कौषिक-झिल्ली-प्रदाह" ऊपर कही हुई दवाके प्रयोगसे अच्छा न होकर, धीरे-धीरे फोड़ा हो जाये (अर्थात् पीव पैदा होने लगे), तो पकानेके लिये हिपर-सल्फर २x—३x विचूर्ण देना चाहिये और पीव निकलता रहनेपर सिलिका ६ या ३० देना चाहिये।

पेटका झूल पड़ना

प्रसवके बाद किसी-किसीका पेट नीचेकी ओर झूल पड़ता है। यह देखनेमें बुरा मालूम होता है, किन्तु वास्तवमें यह कोई बीमारी नहीं है। कैल्केरिया ३० या सिलिका ३० महीनेमें एक बार देना चाहिये।

सिरके केश उड़ जाना

प्रसवके बाद कमजोरी वगैरह कारणोंसे किसी-किसी औरतके केश झड़ जाते हैं। फास्फोरिक एसिड ६, चायना ६ या आर्सेनिक ६ इसकी दवाएँ हैं। बाल-रोग अध्यायमें "टाक पड़ना" देखिये।

स्तनका रोग, स्तनके दूधका रोग

"प्रसवके बाद स्तनकी बीमारीवाला" अनुच्छेद देखिये।

प्रसवके बाद स्तनकी बीमारी

(Diseases of the breast following delivery)

स्तनके सम्बन्धमें प्रसूताको नीचे लिखी बातें याद रखनी चाहियें:—

(१) तीन-चार महीनोंका गर्भ होते ही स्तन बढ़ने लगते हैं। इस समयसे ही स्तनके बाटेकी ओर ध्यान रखना चाहिये। आजकलकी

सभ्यताकी रक्षाके लिये इतना कसा कपड़ा न पहनना चाहिये, जिससे स्तनके बाटपर दबाव पड़कर उसके बढ़नेमें रुकावट पैदा हो जाये।

(२) पहले ही कहा जा चुका है, कि प्रसवके आठ-दस घण्टेके बाद लड़केको दूध पिलाना चाहिये। इससे नये पैदा हुए बच्चेको सहजमें ही दस्त होता है और प्रसूताको दूधका बुखार आदि नहीं होता।

(३) हर बार लड़कको दूध पिलानेके पहले थोड़ा दूध दूहकर फेंक देना चाहिये। इसके बाद स्तनका बोटा लड़केके मुँहमें देना चाहिये।

(४) प्रसूताके भोजनके दोषसे स्तनका दूध खराब हो जा सकता है। उस दूधको पीनेसे लड़केका पेट ऐंठता है और अजीर्ण वगैरह बीमारियाँ हो जाती हैं। इसलिये खाने-पीनेके विषयमें प्रसूताको खूब सावधान रहना चाहिये।

(५) स्तनके बोटेमें जखम होनेपर या माँके पेटमें बीमारी रहने या बुखार वगैरह होनेपर बच्चेको दूध न पिलाना चाहिये।

(६) कड़ी मेहनत करने बाद या क्रोध वगैरह मानसिक उत्तेजनाके समय या स्वामी-सहवासके बाद ही स्तनका दूध खराब हो जाता है। ऐसी अवस्थामें बच्चेको दूध पिलानेपर उसी समय बच्चेको कोइ तेज बीमारी (यहाँतक कि मौत भी) हो सकती है।

दुग्ध-ज्वर (Milk fever)—प्रसवके कुछ बाद दूध पैदा हो जानेकी वजहसे किसी किसी प्रसूताके स्तनमें काँटा गड़नेकी तरह दर्द होता है और एक-दो दिनोंमें ही स्तनका दूध जमकर बुखार आ जाता है इसे ही दूधका बुखार कहते हैं। इसमें कोई दवा देनेकी जरूरत नहीं पड़ती, सिर्फ बुखारकी मौजूदगीमें लड़केको दूध न पिलाना चाहिये और स्तनोंमें सर्दी न लगने पाये।

परन्तु यह दूधका बुखार अगर तेज हो और बीस घण्टेसे ज्यादा देरतक रहे, तो ऐकोनाइट ३x देना होगा और बुखार छोड़ जानेपर

भी अगर स्तन नरम न हो जाये, तो (स्तनका कड़ा रहनेतक) ब्रायोनिया ६ देना चाहिये।

स्तन-प्रदाह (Mastitis)—प्रसवके बाद (किसी भी समय) स्तनका दाह और उसके साथ ही बुखार हो सकता है। उस समय प्रसूताके स्तनकी घुण्डीमें या समूचे स्तनमें दर्द पैदा हो जाता है और उसे बहुत तकलीफ होती है। इसी वजहसे बच्चेको स्तन नहीं पिला सकती और उसे बहुत ही कष्ट होता है।

समूचा स्तन लाल होकर उसमें जलन हो जानेपर, ब्रायोनिया ३। किसी-किसीका कहना है, कि बीमारीकी पहली अवस्थामें बेलेडोना और ब्रायोनियाका पर्यायक्रमसे व्यवहार करना चाहिये। इससे दर्द जल्दी-जल्दी घट सकता है और बढ़ नहीं सकता। इसके साथ ही तेज बुखार रहनेपर ऐकोनाइट और ब्रायोनिया (पर्यायक्रमसे) देनेकी सलाह देते हैं। जल्दी न घटकर अगर स्तन फूलता ही जाये या पीब पैदा हो जानेका डर रहनेपर, मर्क्युरियस-सोल ६। पीब होनेपर हिपर-सल्फर ३x—३०; फोड़ा जल्द आराम करनेके लिये, फास्फोरस ६। स्तन खब कड़ा हो जाये, तो फाइटोलैका ३x सेवन (और फाइटोलैका θ तीस बून्द आध औंस गर्म पानीमें मिलाकर स्तनके ऊपर पट्टी लगानी चाहिये)। "स्तन कड़े होना" देखिये।

स्तनकी घूंडीमें जलन (Sore-nipples)—स्तनकी घुण्डीमें जखम होनेपर, प्रसूताको बहुत तकलीफ होती है। साठ बून्द कैलेण्डुला θ एक छटाँक पानीमें मिलाकर स्तनको धो डालना और पट्टी लगाना उचित है। यदि बोटेपर छोटी फुन्सियाँ होकर, उससे रस निकलता हो, तो ग्रैफाइटिस ६ सेवन करना होगा।

स्तनमें दर्द (Painful nipples)—जब बच्चा स्तनसे दूध खींचे तभी उसमें दर्द हो, तो फेलानड्रिनम ३x सेवन करना चाहिये। कभी-कभी घुण्डीके आगेसे प्रसूताके कन्धेतक शूल-वेदनाकी तरह दर्द पैदा हो

जाता है। ऐसे अवसरपर क्रोटन टिग्लियम ३ देना चाहिये। स्तन खाली मालूम होनेपर और बच्चेके स्तन पीनेके समय बहुत तकलीफ होनेपर, बोरैक्स ६—३० देना चाहिये।

दूध पिलाते समय सुस्ती मालूम होना—बच्चेको दूध पिलानेके बाद प्रसूताको अगर कमजोरी मालूम हो, तो चायना ६ या एसिड-फास ३ देना चाहिये।

स्तनमें ज्यादा दूध होना—एकाएक स्तनोंमें दूध ज्यादा बढ़ जाये, तो उसे घटानेके लिये, नेट्रम सल्फ १२x विचूर्ण या पल्सेटिला ३ देना चाहिये। मसूरकी दाल पीसकर स्तनपर लेपकी तरह लगानेसे दूध खूब सूख जाता है।

स्तनमें दूध न होना या कम होना—प्रसवके बीस घण्टेके भीतर स्तनोंमें दूध न हो, तो ऐग्नस कैक्टस ३x देना चाहिये। एकाएक दूध घट जाये या एकदम बन्द हो जाये, तो ऐसाफिटिडा ३ देना चाहिये। करेंवु कल्मी साग खानेपर और रेड़ीकी पत्ता पानीमें सिझाकर उससे स्तन धो डालनेपर, दूध खूब बढ़ जाता है।

मानसिक उत्तेजनाकी वजहसे कभी-कभी दूध सूख जाता है। क्रोधकी वजहसे एकाएक दूध सूख जानेपर, कैमोमिला ६; डर जानेपर ऐकोनाइट ३; ईर्षाकी वजहसे; हायोसायमस ३ और शोककी वजहसे कम हो जानेपर, इग्नेशिया ६ देना चाहिये।

स्तनसे आप-ही आप दूध निकलना—बोरैक्स ३ विचूर्ण, कैल्के-कार्ब ३, चायना ६। रोज तीन-चार बार ठण्डे पानीसे स्तन धो डालना चाहिये।

स्तन कड़े होना—कभी-कभी दूध जमकर स्तन कड़े हो जाते हैं और तकलीफ हो जाती है। ब्रायोनिया ६ इसकी उत्कृष्ट दवा है। ("स्तन-प्रदाह" देखिये)।

स्तनमें फोड़ा होनेकी तैयारी होनेपर—फोड़ा होनेकी तैयारी होनेपर अर्थात् स्तन कड़े और दर्द भरे होनेपर, ब्रायोनिया ३ घण्टे-घंटेपर सेवन कराना चाहिये, इससे अक्सर फोड़ा बैठ जाता है। यदि ३६ घण्टेमें कोई फायदा न हो तो फाइटोलैक्का २x नित्य तीन घण्टेका अन्तर देकर सेवन कराना चाहिये और फाइटोलैक्का θ (५ बून्द ३ औंस खूब गर्म पानीमें मिलाकर) स्तनके ऊपर बीच-बीचमें छिड़क देना चाहिये। चूल्हेकी जली मिट्टी स्तनपर लेप देनेसे फायदा होता है। फाइटोलैक्कासे फायदा न हो, तो (अर्थात् पीव पैदा हो जानेपर) हिपर ६—३० सेवन और तीसीकी गर्म पुल्टीस लगानी चाहिये। शोथ या नासूर होनेपर सिलिका ६—३० सेवन करना चाहिये।

चौथा अध्याय

बाल-रोग

शिशु-पालन—जन्म लेनेके समयसे लेकर दाँत निकलनेके समयतक बच्चेकी जो अवस्था रहती है, उसे "शैशवावस्था" कहते हैं। शिशुकी नाल काटने और नहलानेके कुछ बाद ही बच्चेको थोड़ा गर्म दूध (बराबर हिस्से पानीके साथ कुछ गरमकर) पिला देना चाहिये। इसके बाद बच्चेको पाखाना-पेशाब हो जानेके बाद और प्रसूताके कुछ स्वस्थ होनेपर, बच्चेको उसकी माँका स्तन पीने देना चाहिये। यदि बारह घण्टेके भीतर बच्चेको पाखाना, पेशाब न हो, तो नक्स-वोमिका ३० देना चाहिये। ("नाल काटना और प्रसवके बाद स्तनकी बीमारी" अध्याय देखना चाहिये)। डा० फियर कहते हैं, कि जन्म लेनेसे इक्कीस दिनोंतक बच्चेको कभी "चित्त सुलाकर न रखनी चाहिये।" वे तुरन्तके

जनमे लड़केको पहले दो-तीन सप्ताह अधिकांश समय बायीं करवटकी अपेक्षा दाहिनी करवट सुलानेकी सलाह देते हैं, नहीं तो उसे धनुष्टंकार आदि रोग पैदा हो सकते हैं।

बच्चेकी कोमल देहको बढ़ानेके लिये नींदकी जरूरत है, इसीलिये जन्म होनेके बाद कुछ दिनोंतक बच्चा ज्यादा सोता है। इस अवस्थामें उसके बदनको कपड़ेसे ढँककर सुला रखना होगा; शुद्ध सरसोंका तेल मालिशकर धूपमें सुला रखना अच्छा है,* पर सावधान रहना चाहिये, कि उसे ठण्डी हवाका झोंका न लगने पाये। पहले-पहल कुछ गर्म पानीसे और इसके बाद (बच्चेके कुछ ताकतवर हो जानेपर), "ठण्डे" पानीमें उसे नहलानेका अभ्यास करना पड़ेगा। ऐसा करनेसे सर्दी खाँसी कम हो जानेकी सम्भावना है। नहानेके समय पहले सरपर थोडा ठण्डा पानी देनेके बाद, शरीरको भिगाना चाहिये। यही इस देशकी पुरानी प्रथा थी। डा० फियर भी इसका अनुमोदन करते हैं।

जबतक बच्चा दूध पीता है, तबतक प्रसूताको रातमें जागना, देरसे खाना, ज्यादा खट्टा या तीता पदार्थ खाना या मनमें ज्यादा क्रोध, शोक आदिका लाना उचित नहीं है; क्योंकि इससे बच्चेको कितनी ही तरहकी बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं; बच्चेको कोई बीमारी होनेपर माँको खूब सावधान रहना चाहिये, नहीं तो बच्चेकी बीमारी भी बढ़

---

* १९१३ ईस्वीमें लण्डन नगरीमें कई देशोंके डाक्टरोंकी महासभा (congress) हुई। वहाँ एक विख्यात चिकित्सकने कहा, कि रोज बच्चेको कुछ देरतक खाली बदन सुला देनेसे, उसके मेरुदण्डकी कमजोरी वगैरह बहुतसे रोग अच्छे हो जाते हैं।

पहले भारतकी स्त्रियाँ बच्चेको तेल लगाकर धूपमें सुला देती थीं, दुर्भाग्यका विषय है, कि यह उत्तम प्रथा धीरे-धीरे बन्द होती जा रही है।

जायगी। इस अभागे देशमें जितने बच्चे पैदा होते हैं, उनमें एक चतुर्थांश "एक वर्ष भी पूरा होते-न-होते" कालके गालमें जा पड़ते हैं। इस बातको भारतीय रमणियोंको अच्छी तरह हृदयङ्गम करनेके बाद शिशु पालनका भार अपने ऊपर लेना चाहिये।

माताको बीमारी होनेपर या उसके स्तनोंमें यथेष्ट दूध न रहनेपर, घरकी किसी दूसरी औरत, अगर अच्छा दूध होता हो, तो वह बच्चेको पिला सकती है। उसके अभावमें गधी या गायका दूध पिलाना चाहिये। गायका दूध खूब गाढ़ा हो तो उसके साथ बराबर भागमें पानी और थोड़ी दूधकी चीनी (sugar of milk) मिलाकर, गर्मकर बच्चेको पिलाना चाहिये। ज्यादा दूध पिलाना या ज्यादा रातमें दूध पिलाना या सोयी हुई अवस्थामें अथवा नींदसे जाकर दूध पिलाना नुक्सान करता है। लड़केके रोते ही इस देशकी स्त्रियाँ उसे दूध पिलाकर शान्त करनेकी कोशिश करती हैं, परन्तु ऐसा करना उनकी भूल है। जबतक लड़का शान्त न हो, तबतक किसी तरह भी उसे दूध न पिलाना चाहिये। रोते समय दूध पिलानेसे उसे अजीर्ण रोग हो जानेकी सम्भावना रहती है। भूख लगे बिना बच्चेको कभी कुछ खिलाना न चाहिये। साधारणतः बच्चोंका ऊपरी पेट नर्म रहनेके कारण मालूम होता है, कि उसे भूख लगी है। अगर स्तनका दूध पिलानेवालीको कोई बीमारी न हो, तो एक वर्षतक बच्चेको पिला सकती है।

बच्चा पाँच-सात महीनेके बाद बदनको कुछ ऊँचा उठा सकता है। आठ-दस महीनेमें उलटने लगता है और एक वर्षकी उमरमें चलना सीखता है। अगर पन्द्रह महीनेका हो जानेपर भी बच्चा चल न सके, तो उचित भोजन और इलाजका बन्दोबस्त करना चाहिये। दो-तीन वर्षकी उमर होनेतक वे उछलने, कूदने, चीजें फाड़ने, फेंकने या किसी चीजके ऊपर चढ़ना सीख सकते हैं। तीन-चार वर्षकी उमरमें उनकी स्मृति-शक्तिका विकास हो सकता है। बच्चेके सब दाँत निकल आनेपर

पुराने चावलका खूब मुलायम भात खानेका उसे धीरे-धीरे अभ्यास कराना चाहिये। सावधान! जब बच्चा रोता हो, उस समय कोई चीज उसके मुँहमें न डाली जाये; क्योंकि नाकमें चढ जानेसे बहुत तकलीफ, यहाँतक कि मौततक हो सकती है। दो वर्षकी उमर होनेपर भी यदि वह बोल न सकता हो, तो इलाज कराना बहुत जरूरी है। पाँच वर्षके पहले लडकेको पढने-लिखनेके लिये तङ्ग करना बुरा है; साथ ही सात वर्षकी उमर हुए बिना लडके-लडकियोंके विद्यालय भेजना बुरा है।

बच्चे के हाथकी अगुलीके नखके नीचे मैल न जमे और दाँतमें कीड़ा न लगने पाये, इस बातपर अभिभावकोंको ज्यादा ध्यान रखना चाहिये। बच्चोंको दवा पानीमें न मिलाकर अनुवटिका (globules) में डालकर देनी चाहिये। इससे खानेमें सुविधा होती है।

बच्चोंकी बीमारी और इलाज

सद्यजात (या भूमिष्ठ) मुर्दे-जैसा बच्चा—बच्चा पैदा होते ही अगर मुर्देकी तरह हो, तो तुरन्त उसके मुँह-में-मुँह लगाकर फूँक देनेसे या किसी दूसरी तरकीबसे उसके फेफड़ेमें हवा प्रवेश करा देनेपर, वह जी सकता है। बहुत देरतक प्रसवका दर्द होनेके बाद या प्रसूताको जरायुकी बीमारी रहनेपर, बच्चा मुर्दे-जैसा पैदा होता है। रक्त-संचालन यन्त्रकी क्रिया रुकनेसे साँसमें रुकावट पहुँचती है और लड़का रोता नहीं। इस अवस्थामें नीचे लिखे उपाय करने चाहियें। बच्चेके गलेमें यदि नाल लिपटी हुई हो, तो उसे तुरन्त अलग कर देना चाहिये। बच्चा पैदा होते ही अगर नाभिकी नाडी चलती हो, तो उसे न काटकर, मुँह और गलेमें जो बलगम अटका हो, उसे फुर्तीसे साफ कर देना चाहिये; परन्तु अगर नाड़ीमें स्पन्दन न हो, तो तुरन्त नाल बाँध देना चाहिये। इसके बाद अगुलीसे बच्चेकी नाक दबाकर उसके मुँहमें इस तरह फूँकना

चाहिये, कि उसकी छातीमें हवा घुस जाये और उसका पंजरा इस तरह दबाना चाहिये, कि यह हवा फिर बाहर निकल जाये। फी मिनट इस तरह चौदह-पन्द्रह बार हवा डालने और निकालनेपर दस मिनटमें बच्चेकी साँस लेनेकी क्रिया आरम्भ हो सकती है। अगर दस मिनटमें कोई फायदा न हो बच्चेके मुँह और छातीपर एक बार गर्म पानीकी और दूसरी बार ठण्डे पानीका छींटा बार-बार मारना चाहिये और सूखे हाथोंसे उसके हाथ, पैर और पीठको मलना चाहिये। ध्यान रहे, कि लड़केके मुँहपर हवा लगनेमें किसी तरहकी रुकावट न पहुँचे। यह काम बड़ी सावधानी और सहिष्णुताके साथ करना होगा। इस उपायसे बहुतसे मुर्देकी तरह पैदा हुए लड़के तीन घण्टे बाद भी साँस ले सकते हैं।

तुरन्तके पैदा हुए मुर्देकी तरह लड़केका माथा गर्म रहनेपर, उसके ब्रह्माण्डपर गर्म मैदा या नमकका सेंक देनेसे धीरे-धीरे उसकी साँस चलने लगती है—परीक्षा करनी चाहिये।

जीवनका कोई लक्षण न मालूम होनेपर ओपियम ३० या ऐण्टिम-टार्ट ३० जीभके अगले भागमें २ १ मात्रा लगा देना चाहिये और यदि अस्त्रका प्रयोग होनेकी वजहसे पैदा हुआ मुर्दे-जैसा मालूम हो, तो आर्निका ३ या ३० उसकी जीभके अगले हिस्सेमें २-३ मात्रा लगा देना चाहिये।

स्तनपान न करना—अगर कमजोरीकी वजहसे तुरन्तके जनमे बच्चेमें स्तनसे दूध खींचनेकी ताकत न हो, तो स्तनका बहुत थोड़ा दूध एक चम्मचमें निचोड़कर, उसे बच्चेको पिलानेसे बच्चा आप-ही-आप दूध खींचने लगेगा। इसके बाद भी अगर मुँहमें स्तन देनेपर बच्चा दूध न खींचे, तो चायना ६ की एक छोटी गोली उसके मुँहमें डाल देनी चाहिये।

बच्चेका कामला—पैदा होनेके दो-एक दिन बाद कभी-कभी बच्चेका वदन और आँखोंका कोना पीला पड़ जाता है। कैमोमिला ६

बन्द हो जाता है। ऐसा ही रक्त-स्राव वार-वार होनेपर, आर्सेनिक ६ सेवन करना चाहिये।

फूली नाभि—घाव सूख जानेके बाद भी अगर नाभि ऊँची रह जाये, तो उसपर रूईकी मोटी गद्दी (pad) की तरह तही बनाकर रखना और कपड़ेका घेरा देकर उसे पेटके सहारे बाँध देना चाहिये और नक्स वोम ६ सेवन कराना चाहिये।

नील रोग—वच्चेके ओंठ और गाल सफेद और नाखून तथा समूचे शरीरकी गर्मी कम होती जाती है। हृत्पिण्डके टेढ़े होने या उसकी क्रियामें गड़वड़ीकी वजहसे खासकर यह बीमारी होती है।

डिजिटेलिस ३ इसकी बढ़िया दवा है। समूचा शरीर वरफकी तरह ठण्डा हो जानेपर, आर्सेनिक ६ देना चाहिये। श्वासकष्टके साथ् पैर फूले रहनेपर, फास्फोरस ३ सेवन कराना चाहिये। रस-टक्स ३, हाइड्रोसियानिक-एसिड ३x, लैकेसिस ६, फास्फोरस ६, सल्फर ३० की समय-समयपर जरूरत पड़ती है। अच्छी तरह शरीरको ढँककर वच्चेको दाहिनी करवट सुलाना पड़ता है और इस वातका वन्दोबस्त रखना पड़ता है कि सौरी घरमें अच्छी तरह हवा जाये-आये और धुआँ न पैदा हो और आहारकी कमीकी वजहसे वच्चा ज्यादा कमजोर न हो जाये।

टीका लगवाना—"चेचक" रोगवाले अध्यायमें कहा जा चुका है, कि टीका लेना या वैक्सिनिनम ६x चूर्ण (सिर्फ एक मात्रा सेवन) करना चेचक रोकनेका बढ़िया उपाय है। वच्चा पैदा होनेके वाद छः महीनेके भीतर गो बीजका टीका लगवा देना इस देशका सरकारी कायदा है। जहाँ अच्छा गो-वीज न मिलनेकी वजहसे टीका न लग सके, वहाँ एक हफ्तेतक वैक्सिनिनम ६—३० एक मात्रा रोज सेवन करना चाहिये। गो-वीजका टीका लेनेपर कभी-कभी नुक्सान भी होता है; परन्तु वैक्सिनिनमके सेवनसे नुक्सान होनेका डर कभी नहीं रहता। चारों ओर चेचक रोग फैला रहनेपर वैरियोलिनम ६—२०० (जवतक

चेचक रोग फैला रहे, तवतक) हर सप्ताह बच्चेको एक वार खिला देना चाहिये। "चेचकको" रोगके "प्रतिषेधक" और "पाद टीका" देखिये।

गो बीजका टीका देनेके तीन दिन बाद साधारणतः टीका देनेवाली जगह प्रदाहयुक्त (अर्थात् लाल और फूली) हो जाती है और कई दिनोंमें ही गोटी सूख जाती है। यदि उसके सूखनेमें देर हो, तो उसपर केलेण्डुला तेल (calendula oil) लगाना होगा। सावधान! बच्चा उस टीकावाली जगहको खुजलाकर वही अंगुली आँखोंमें न लगा दे, इससे आँखें नष्ट हो जा सकती हैं।

गो-बीजका टीका लगवानेकी वजहसे यदि कोई चर्म रोग पैदा हो जाये, तो शरीर खराब होता है, ऐसा होनेपर थूजा ६—२०० सेवन करना चाहिये।

बच्चेके काँच बाहर निकलना—"गुह्य और सरलान्त्र निकलना" (या 'काँच निकलना') देखिये। ऐलो ३x काँच निकलनेकी अव्यर्थ दवा है। काँच निकलनेके लिये, पोडोफाइलम १२ फायदा करता है; परन्तु बालास्थि-विकृतिके साथ बीमारी होनेपर फास्फोरस ३x—६ फायदा करता है। पेशाव करनेके समय काँच निकल आये, तो एसिड-म्यूर ६ देना चाहिये।

बच्चेकी आँत बढ़ना—काँखने, ज्यादा हँसने या रोने, पेट ऐंठने वगैरह कारणोंसे नाभिपर ज्यादा दवाव पड़नेके कारण यदि नाभिकी आँत (umbilical hernia) निकल आती है, ऐसी अवस्थामें आर्निका ३ सेवन या सल्फ्यूरिक-एसिड ६ का सेवन और रूईकी एक छोटी गद्दीसे नाभिका इस तरह दवा रखना होगा, कि आँत बाहर न निकल सके। बच्चोंका आँत उतरने या आँत उतरनेके साथ आवमजूल (hydrocele) रहनेपर कैल्के-कार्ब ६ देना चाहिये। "अन्त्र-वृद्धि" रोगकी दवाएँ देखिये।

बच्चेका एकशिरा—अण्डकोषके निचले चमड़ेके भीतर पानी इकट्ठा होनेकी वजहसे वह बढ़ जाये और चमकीला दिखाई दे, तो उसे एकशिरा या आबमजूल कहते हैं। कष्टकर प्रसवमें चोट लगनेकी वजहसे या धातु-दोषसे यह बीमारी पैदा हो सकती है। "अन्त्र-वृद्धिके" साथ बहुतसे बच्चोंको एकशिरा मौजूद रहता है। आधातकी वजहसे हो, तो आर्निका ३। जन्मगत रोगमें—ब्रायोनिया ३। आँत उतरनेके साथ एकशिरा हो, तो कैल्के-कार्ब ६। जिस बच्चेको चर्म-रोग हो और बच्चेका चमड़ा ढीला पड़ जाये, तो ग्रैफाइटिस ६। गुटिका-मिले धातुवालेको, बैसिलिनम २०० या आर्स-आयोड ६; गण्डमाला धातुके लिये, कैल्के-कार्ब ६ या कैल्के-फ्लुओर १२x चूर्ण और सोरा (psora) धातुग्रस्त बच्चेके लिये, सल्फर २०० देना चाहिये। ऐब्रोटेनम ६, हेलिबोरस ६, स्पंजिया ६, हैमामेलिस ३ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है (बाल-रोग अध्यायमें "धातुदोष या कौलिक पीड़ा" और "एकशिरा" रोगकी दवाएँ देखिये)।

तुरन्तके जनमे बच्चेको पाखाना, पेशाब न होना—तुरन्तके पैदा हुए बच्चेको पाखाना, पेशाबमें बहुत ज्यादा देर होनेपर, बेलेडोना ६ या ओपियम ६ देना चाहिये और हाथ गर्मकर उसके पेटपर फेरना चाहिये और अगर मलद्वार या पेशाब निकलनेवाला छेद बन्द रहे, तो अच्छे डाक्टरको बुलाकर तुरन्त इसका उपाय करना चाहिये।

पैदा होनेके बाद किसी-किसी बच्चेको पाखाना होता है, परन्तु पेशाब नहीं होता। छत्तीस घण्टोंमें पेशाब न हो, तो पहले ऐकोनाइट ३ देना होगा। ऐकोनाइटसे फायदा न होनेपर बेलेडोना ६ या कैन्थरिस ६ देना चाहिये।

सर बड़ा होना—बच्चा जनमके बाद उसका माथा कुछ-न-कुछ बड़ा रहता ही है। ज्यादा दिनोंतक खूब बड़ा रहनेपर आर्निका ३x—३ सेवन कराना चाहिये। "बच्चेके मस्तिष्कमें जल-संचय" देखिये।

ब्रह्मतालु न भरना—पैदा होनेके बाद यदि ब्रह्मतालु जल्दी (अर्थात् ८ महीनेके भीतर) न भर जाये, तो सल्फर ३० सिर्फ एक मात्रा सेवन कराना चाहिये। यदि एक सप्ताहमें कोई फायदा न हो, तो कैल्के-कार्ब ३० देना चाहिये। कैल्के-फास १२x चूर्ण और सिलिका ३० को भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है।

बदनपर दाने निकलना—सौरी घरकी गर्मी वगैरह कारणोंसे बच्चेके बदनपर अमौरीकी तरह नोक निकले हुए दाने निकल आते हैं। ब्रायोनिया ३—६ सेवन और (जरूरत होनेपर) नहला देना चाहिये।

बच्चेका स्तन फूल उठना—नये पैदा हुए बच्चेका स्तन फूल उठे और कड़ा हो जाये, तो बेल ३। पीव होनेपर, हिपर ६ और इसके बाद साइलिसिया ६ देना चाहिये। सावधान, यह समझकर कि बच्चेके स्तनमें दूध पैदा हो गया है, उसे दबाना या निचोड़ना न चाहिये। ऐसा करनेपर उसमें प्रदाह पैदा होकर पीव-भरा फोड़ा हो जा सकता है। जन्म लेनेके बाद बच्चेके स्तनसे दूधकी तरह एक पतला पदार्थ निकलता है। इसमें कोई दवा देनेकी जरूरत नहीं है, आप-ही-आप अच्छा हो जाता है; परन्तु अच्छा होनेके लिये धाय या बच्चेकी माँ उसे दबाकर पीव भरा फोड़ा पैदा कर देती है, उस समय प्रदाहित स्थान कुछ लाल हो जाये, तो आर्निका ३; परन्तु बहुत लाल होनेपर बेलेडोना ३ और पीव पैदा होनेपर, हिपर-सल्फर ६ देना चाहिये।

अंडकोष फूलना या ग्रन्थि-प्रदाह—फटने, चोट लगने या सर्दी लगने या प्रमेह वगैरह बीमारियोंकी वजहसे अंडकोषकी गांठ फूल उठती है या शरीरमें ग्रन्थि-प्रदाह हो जाता है। सर्दी लगनेकी वजहसे गाठ फूलने और बुखार होनेपर, ऐकोनाइट ३x; चोट लगने या गिर जानेकी वजहसे अडकोष फूलनेपर, आर्निका ३x; कान या बगलकी गांठ फूलनेपर, मर्क-आयोड ३x—३ विचूर्ण। अण्डकोषकी गुठली फूलनेपर, पल्सेटिला ३; कोखके प्रदाहमें, मर्क-वाइवस ६x विचूर्ण; प्रमेह या

उपदंशकी वजहसे गांठ निकलनेपर, कोनायम ३। स्पंजिया ३x, वेडियागा ६x, थूजा ६ वगैरहकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है ("मुष्कत्वक-प्रदाह", "अण्डकोष-प्रदाह", "प्लेग", "कर्णमूल-प्रदाह", वगैरह देखना चाहिये)।

अर्बुद—पैदा होने बाद किसी-किसी बच्चेके माथेमें अर्बुद दिखाई देता है। शुद्ध सरसोंका तेल गर्मकर उसपर लगा देने और आर्निका ३ खिलानेसे फायदा होता है। इससे अगर कोई फायदा न हो, तो कैल्केरिया-कार्ब ६ कुछ दिनोंतक खिलाना चाहिये।

मसा—थूजा १x—३० इसकी बढ़िया दवा है। डाक्टर टंक चार-पाँच बून्द थूजा θ एक ढेला चीनीके साथ खिलाकर आदमीके शरीरका ही नहीं, बल्कि घोड़ा, कुत्ता वगैरह पशुओंका भी मसा अच्छा कर चुके हैं।

मसा वगैरह अच्छा करना—होनेवाले बच्चेका मसा, तिल वगैरह न होने पाये, इसके लिये माताको पहले सल्फर ३०, इसके बाद थूजा ३० और अन्तमें मर्क-सोल ३० सेवन करना होगा। हरएक दवा कम-से-कम एक महीना (हफ्तेमें एक बार) खानी चाहिये।

तिल या जड़ुल—पैदा होनेके बाद किसी-किसी बच्चेकी शिराएँ कभी-कभी चमड़ेके किसी एक जगहपर इकट्ठा हो जाती हैं, वहाँ एक दाग पड़ता है (कभी-कभी वह मसेकी तरह मालूम होता है), इसीका नाम "तिल या जड़ुल" है। थूजा ३० का सेवन और थूजा θ जड़ुलपर लगानेसे फायदा होता है। रेडियम ब्रोमाइड ३० (हफ्तेमें सिर्फ एक बार), कैल्के-कार्ब ६, फास्फो ६ और लाइको १२ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। "अर्बुद, मसा" देखिये।

बच्चेके शरीरपर घाव—बच्चेको गन्दा रखनेकी वजहसे या उसका चमड़ा खराब होनेके कारण, बच्चेकी बगलमें और कानके पीछे ग्रन्थि वगैरहमें घाव हो जाते हैं। खाज या पीव भरी फुन्सियाँ होनेपर,

सल्फर ३०। चमड़ा अस्वस्थ रहनेके कारण घाव होनेपर, कैल्के-कार्ब ६ (खासकर मोटे और मेद-भरे लड़केके लिये); घावसे हमेशा खून बहता रहे, तो लाइको १२। घावसे लसदार गोंदकी तरह रस निकलता हो, तो ग्रैफाइटिस ६ (खासकर कानके पीछेवाले घावमें) देना चाहिये। जलनवाले जखमके लिये कार्बो वेज ३०। बदनपर लाल फुन्सियाँ होनेपर, कैमोमिला १२। कुछ गर्म पानीमें कई नीमकी पत्तियाँ (या दो बून्द कैलेण्डुला θ) डालकर उससे रोज सवेरे शाम जखम धो डालने बाद मैदा छिड़क देनेसे घावका रस शरीरको अच्छी जगहपर लगने नहीं पाता। "मुँहका घाव" देखिये।

खाल उधड़ जाना—किसी अगकी खाल उधड़ जानेपर, मर्क-सोल ६ या आर्निका ३ सेवन और वहाँ आर्निका (पाँच बून्द) दूधकी मलाई या जैतूनका तेल (olive oil) के साथ लगाना चाहिये। यदि खाल उधड़नेके साथ बच्चेको अम्ल-रोग रहे, तो कैमोमिला १२; दूध पिलानेवालीको हिस्टीरिया या चाय पीनेकी आदत हो, तो इग्ने ६। धातुगत दोषसे खाल उधड़ी हो, तो सल्फर ३०, कैल्के-कार्ब ३०, लाइको ३०, सिपिया ३० या रस-टक्स ६ आदिकी भी जरूरत हो सकती है। साफ सुथरा रखनेकी ओर ध्यान रखना चाहिये।

घमौरी—गर्मी लगनेकी वजहसे या हमेशा कपड़े-लत्ते पहने रहनेकी वजहसे घमौरी होनेपर, कैमोमिला १२। सर्दी लगकर घमौरी होनेपर, डल्कामारा ६, घमौरी रस-भरी रहनेपर रस टक्स ६, घमौरी बहुत खुजलाने या बैठ जानेपर बच्चेको तकलीफ हो, तो सल्फर ३०। कैल्के-कार्ब ३०, लाइको ३० या सिपिया ३० की कभी-कभी जरूरत पड़ती है। घमौरीपर सफेद चन्दन लगाना चाहिये।

खुजली—सल्फर ३०—२०० इसकी बढ़िया दवा है। बिछावनपर सोते ही सब बदनमें खुजली होनेपर, इग्नेशिया ६। बदनका कपड़ा उतारते ही बदन खुजलाने लगता हो, तो आस ६ या नक्स-वोमिका ६।

सोनेके बाद- शरीर गर्म होते ही खुजलानेपर—पल्स ६ या मर्क ६। खुजलानेके बाद जलन होनेपर—रस-टक्स ६, एपिस ६, हिपर ३०। खुजलाते-खुजलाते खून निकल आनेपर—मर्क ६ या सल्फर ३। सोनेके पहले मैदेसे बच्चेका बदन घस देनेपर रातमें खुजली कम होती है।

छाले उठना—बच्चा पैदा होनेके कई दिन बाद कभी-कभी बच्चेको पीठ, कानके पीछे, गलेके पीछे, हाथ, पैर, बगल वगैरहमें एक तरहके छाले दिखाई देते हैं। इसके भीतरका रस पहले पीला, फिर लाल होकर यह सूख जाता है या फट जाता है। कभी-कभी रसपर पपड़ी भी जम जाती है। रस-टक्स ३ इसकी प्रधान दवा है। रोग पुराना होनेपर, आर्सेनिक ३; उपदंशसे पैदा हुए छालोंमें मर्क-कोर ३। अगले अनुच्छेदमें "नारङ्गा और खसरा" देखिये।

विसर्प (Erysipelas)—सर्दी लगना वगैरह कारणोंसे बच्चेके बदनके चमड़ेका कोई-कोई अंश पहले थोड़ा लाल होता है; पीछे सब शरीर लाल हो जाता है, बुखार होता है, प्रदाहवाली जगह सूख जाती है और जखम होकर रस निकलता है; यह एक कड़ी बीमारी है।

बेल ३x, एपिस ३, रस-टक्स ६ इसकी बढ़िया दवा है। "विसर्प" देखिये।

अकौता (Eczema)—बहुत बच्चोंको यह बीमारी हुआ करती है। यह एक तरहकी खुजली ही है। देखनेमें खुजलीकी तरह, सब बिखरी न रहकर कई फुन्सियाँ एक ही जगह रहती हैं। उतना छुतिहर भी नहीं है। "सोरा" (psora) धातु-ग्रस्त, बच्चोंको खासकर यह बीमारी हुआ करती है। इससे पीव निकलकर अगर कपड़ेमें लगकर सूख जाये, तो वह कड़ा हो जाता है। जलभरे छालोंमें मर्क्यूरियस ६ और रस-हीन (अर्थात् सूखे) छालोंमें लाइको १२ फायदा करता है। रस-वेन ३ इसकी बढ़िया दवा है। (कभी-कभी दो-एक दिन इस दवाके सेवनसे बुखारके साथ बीमारी बढ़ जा सकती है। इस समय दवा

बन्द कर देनेसे बीमारी आप-से-आप अच्छी हो जाती है)। जरूरत पडनेपर रस बन २०० एक मात्रा खिला देना चाहिये। ऐल्यूमिना ६, ओलियेण्डर ६, क्रोटन-टिग ६, ऐण्टिम-क्रूड ६ की भी बीच बीचमें जरूरत होती है। बीमारी पुरानी पड जानेपर ग्रेफाइटिस ३० देना चाहिये। कभी-कभी पेट्रोलियम ६, मर्क कोर ६, हिपर सल्फर ६, आर्सेनिक ६ की जरूरत पड़ सकती है। जायतूनका तेल (olive oil) लगाना चाहिये।

बच्चेके बदनका चमडा उधडकर जखम होना (Intertrigo)—बच्चेका चमडा खूब नर्म होता है। इसलिये, सामान्य कारणोसे भी चमडा छिलकर जखम हो जाता है। मैल जमना, जोरसे बदन घसना वगैरह कारणोसे चमडा छिल जानेपर बच्चेके कानका पिछला भाग या गर्दनके पीछेका जोड़, बगल पुट्ठे वगैरहका चमडा फूल जाता है, लाल हो जाता है, जलन होती है और उससे रस निकलता है। कैमोमिला ६ इसकी बढिया दवा है। तकलीफ देनेवाला जखम होनेपर और उससे खून निकलनेपर मर्क्यूरियस-सोल ६ देना चाहिये। बार-बार बीमारीका हमला होनेपर लाइकोपोडियम १२ देना उचित है।

बच्चेके मुँहमें घाव—बच्चेके मुँहमें छोटी-छोटी सफेद फुन्सियाँ होते अक्सर देखा जाता है। पहले गालमें, फिर कपाल और कभी-कभी समूचे शरीरपर ऐसी फुन्सियाँ होती है। कुछ दिन बाद ही इन फुन्सियोंका रग काला पड जाता है और ये फट जाती है। फट जाने बाद पीली पपडी जम जाती है। वायोला ट्राइकलर ३ इसकी सबसे बढिया दवा है। वायोलासे फायदा न होनेपर, रस-टक्स ६ देना चाहिये। रस-टक्स देनेपर कभी-कभी प्रदाह बढ जाता है। ऐसी अवस्थामें रस-टक्स बन्द कर देना चाहिये। मुँहके भीतर फुन्सियाँ या घाव होनेपर बोरैक्स १ विचूर्ण सेवन करना चाहिये और सुहागेका

लावा (सुहागा भूननेसे ही लावा बन जाता है) शहदमें मिलाकर घावमें लगा देना चाहिये। ओंठ और मुँहमें फुन्सियाँ ; जीभका पिचला भाग लेपसे ढँका ; बीचका भाग लाल रेखा-भरा ; मुँहमें बदबू ; बहुत बेचैनी ; हरे रंगका पतला दस्त, लक्षणमें आर्सेनिकम ६। दाँत निकलनेके समयके मुँहके घावमें, मुँह और माथेपर पसीना ; खाई हुई चीजोंके कण मिला कड़ा पाखाना ; पैरके तलवे ठण्डे, इन लक्षणोंमें कैल्केरिया-कार्ब ३०। जीभ फूली और प्रदाहित ; दाँतकी जड़में घाव और इसी वजहसे खून निकलना ; मुँहसे सड़ी बदबू। मुँहसे अधिक परिमाणमें लार चूना ; आमाशयकी भाँति श्लेष्मा-भरा पतला दस्त लक्षणमें, मर्क-सोल ६। समूचे चेहरेपर फुन्सियाँ और सड़ी वदबू, मुँहसे जखम पैदा करनेवाली लार चूना लक्षणमें, एसिड-नाई ६ (अगर बाप-माँके खूनमें पाराका दोष रहनेकी वजहसे ऐसी फुन्सियाँ निकलें, तो यह ज्यादा फायदा करता है) ; सफेद लेप चढ़ी जीभ, चेहरेपर बड़ी-बड़ी फुन्सियाँ ; मुँहसे खून मिली लार चूना ; भींगे गोंदकी तरह लसदार दस्त ; गुह्यद्वारके चारों ओर फुन्सियाँ, पीबमें रुकावट लक्षणमें, सल्फर ३०। कब्जियत रहनेपर लाइको ३०। चेहरेका पसीना काला और ठण्डा होकर सड़ना आरम्भ हो जाये तो सिकेलि २ विचूर्ण सेवन करनेकी डा० हार्टमैन सलाह देते हैं। अच्छा शहद अंगुलीमें लगाकर बच्चेके मुँहके भीतरवाले घावमें लगा देनेसे फायदा होता है।

बच्चेका फोड़ा—कभी-कभी बच्चोंके माथे, गले, कानके पीछे, बगलमें, बाहुओंकी सन्धिमें, पुंट्ठे वगैरह स्थानोंमें फोड़ा हुआ करता है। यदि गोलगाल शरीरवाले मोटे-ताजे बच्चोंको फोड़ा हो, तो कैल्केरिया-कार्ब ३०। अक्सर (खासकर गर्मीमें) घाव हो जानेपर, कार्बो-वेज ३०। जखमके चारों ओर छोटी फुन्सियाँ दिखाई दें और उसकी वजहसे बच्चा हमेशा रोता रहे, तो कैमो ६। कानके पिछले भागमें

लाल रंगका जखम और उस जखमसे लसदार गांठ-गांठ-सा पीव निकलनेपर, ग्रैफाइटिस ६। बदबूदार जखमसे खून निकलनेपर और उसके साथ कब्जियत मौजूद रहनेपर लाइकोपोडियम ३०। पहले सरमें दो-एक फोड़ा होकर उसकी रसी लगानेकी वजहसे और-और हिस्सोंमें भी फोड़ा हो जानेपर सल्फर ३०, हिपर-सल्फर ३० या कैल्के-कार्ब ३०। कितने ही मौकेपर आर्निका ३ ज्यादा फायदा करता है।

बच्चेका ओष्ठ-व्रण—यह एक खास दूषित* फोड़ा है। ओंठपर पहले एक छोटी फुन्सी होकर यह बड़ी और कड़ी हो जाती है और उसमें अंगारे-जैसी जलनके साथ ज्वर बेचैनी, नींद न आना वगैरह उपसर्ग होते हैं। यह फोड़ा अक्सर नहीं पकता (अर्थात् पीव कभी ही पैदा होता है) और एक हफ्तेके अन्तमें ही सड़ने लगता है और अच्छी तरह इलाज न होनेपर रोगी कमजोर होकर तुरन्त मर जाता है। ऐन्थ्रासिनम ३० इसकी एक बढ़िया दवा है (खासकर जलन ज्यादा होनेपर); एपिस ३०, डङ्क मारनेकी तरह जलनके लक्षणमें ; परन्तु ज्यादा पीव निकलनेपर, हिपर-सल्फर ६।

आर्सेनिक, लैकेसिस, आर्निका, सिलिका, कार्बो-वेज, बेलेडोना वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक हो सकती है ("दुष्ट-व्रण" की दवाएँ) देखिये।

---

* फोड़ेकी अपेक्षा "दुष्ट-व्रण" अधिक गहरा और बड़ा (२ से ३ इञ्चतक) होता है। इस रोगमें ओंठ, पीठ, गर्दन, जांघा, माथा, मुखमण्डल, कन्धे प्रभृति अंग पहले प्रदाहित होते हैं ; फिर धीरे-धीरे प्रदाहित स्थानमें तेज जलन और कुछ काला रङ्ग दिखाई देता है। बादको इसका अग्र भाग चिपटा होता है और उसके चारों ओर मुँह होकर पीव निकलने लगता है (चर्म-रोगाध्यायमें "दुष्ट-व्रण" देखिये)।

हल्की जल्दी पचनेवाली चीजें खाना आवश्यक है। कभी कभी नश्तर लगवानेकी जरूरत पड़ती है।

बिवाई फटना—जाड़ेके दिनोंमें बच्चोंके हाथ, पैर, ओंठ वगैरह शरीरका कोई-कोई अंश फट जाया करता है। आर्स ६, हिपर ६, कैलि-कार्ब ३०, नेट्रम-म्यूर १२x चूर्ण—२००, नाइट्रिक-एसिड ६, सल्फर ३०, इसकी प्रधान दवाएँ हैं। फटे अंगमें मलाई, मक्खन, घी, तिलका तेल या जैतूनका तेल लगाना चाहिये।

सरमें रूसी—सर साफ न रखना, धातुगत कारणोंसे सरके चमड़े-पर मैली, पीली या रंगीन मुर्दा-मांसकी तरह फुन्सियाँ होती हैं, इसे ही रूसी कहते हैं। सल्फर ३० हफ्तेमें दो बार सेवन करना चाहिये; रोज रातमें जैतूनका तेल (olive oil) सरमें लगाना और सवेरे पानीमें सोडा घोलकर सर धो डालना अच्छा है। बच्चेका सर बीच-बीचमें बेसनसे अच्छी तरह घसकर साफ पानीसे उसे धो डालना चाहिये। इससे बहुत फायदा होता है।

टाक पड़ना या केश झड़ना—खासकर बचपन और बाल्या-वस्थामें ही सरमें टाक पड़ जाता है। सोलह वर्षकी उम्रके बाद यह बीमारी ऐसे ही कभी होती दिखाई देती है। यह सरके केश झड़ते जाते हों, तो एसिड-फ्लुओर एक बढ़िया दवा है। (डा० ह्यूज कहते हैं कि उपदंशवाले धातुमें यह ज्यादा फायदा करती है)। डा० हण्टके मतसे गंज रोगकी आर्सेनिक एक बढ़िया दवा है। यदि गञ्ज रोग होनेपर सर बहुत खुजलाता हो, तो विंका-माइनर देना चाहिये। थैलियम भी कभी-कभी बहुत फायदा करता है। केश सूखा या रूखड़ा होकर झड़नेपर कैलि-कार्ब ६। किसी कड़ी बीमारीके बाद अथवा (एक अंगकी या सब अंगोंकी) कमजोरी या दिमागी सुस्तीकी वजहसे केश झड़नेपर एसिड-फास २x—२ सेवन करना चाहिये। सिपिया ३—३० सेवन और धोबीका व्यवहार किया हुआ पाट (या ऐना-

कार्डियम ओरि θ) "शहदमें मिलाकर लेप लगानेसे" गंजापन दूर होता है। सल्फर ३०, केल्के-कार्ब ३० या कैन्थरिस ३—६ सेवन और पोकेटमके साथ कैन्थरिस θ मिलाकर लगानेसे फायदा होता है। X-Ray का प्रयोग करनेसे भी बहुतोंको फायदा हुआ है। मांस खाना छोड़ देना चाहिये और बढ़िया ब्रशसे सरके केश झाड़ना चाहिये।

कभी-कभी दादकी वजहसे केश पतन (alopecia areata) होता है। ऐसे मौकेपर नीचे लिखी दवाएँ (हरएक ३ महीनेतक) सेवन करनेसे गंजापन एकदम अच्छा हो जा सकता है:—वैसिलिनम २००, थूजा ३०, सल्फर ३०, हाइड्रैस्टिस θ, आर्निका युरेन्स θ।

माथेमें जूँ—बच्चेके केशोंमें जूँ पर जानेपर, रोज केशोंको धो डालना चाहिये और धो डालने बाद सैबाडिला (θ एक भाग बीसगुने पानीके साथ मिलाकर) धावन तैयार कर बच्चेको नहलाना चाहिये। नेट्रम-म्यूर १२x चूर्ण सेवन करना चाहिये।

कभी-कभी बच्चेको जूँ किसी तरह जाना नहीं चाहती। नहलाने-धुलाने और साफ सुथरा रखनेपर भी किसी तरह अच्छा नहीं होता। ऐसे मौकेपर Von Villar का कहना है कि स्टैफिसेग्रिया ३० सेवन करनेसे कुछ ही दिनोंमें आश्चर्यजनक फल मिलता है।

भूत लगना, हवा लगना या बच्चोंका धनुष्टंकार—पैदा होनेके बाद कभी-कभी बच्चेको यह भयंकर बीमारी हुआ करती है। पहले बच्चा दूध नहीं खींच सकता है, गर्दन कड़ी हो जाती है, जबड़े बैठ जाते हैं और इसके बाद बेहोशी या अकड़न होनेपर, मुँह और देह लाल, ओठ नीले, हाथकी मुट्ठी बन्द और कभी-कभी बुखार १०५—१०६ डिगरीतक होता है और हाथ-पैर खिंचकर जकड़ा टेढ़ा हो जाता है, मुँहसे फेन निकलने लगता है और अन्तमें मर जाता है। कोई-कोई इसे भूत बाधा ऊपरी बाधा कहते हैं; पर चोट लगाने, नाल काटनेके दोषसे या

नाभिमें घाव होनेकी वजहसे बच्चेकी देहमें धनुष्टंकार बीज घुस जाते हैं और इसी वजहसे यह बीमारी पैदा होती हैं।

सर्दी लगकर धनुष्टंकार होनेपर (बच्चेको बुखार, बराबर रोना और बेचैनी लक्षणोंमें), ऐकोनाइट ३ ; अकड़न काँपना और जबड़े इधर-उधर हिलना लक्षणमें—जेलसिमियम ३। बेलेडोना ६ इसकी बढ़िया दवा है (खासकर नाभिके प्रदाहकी वजहसे बीमारी पैदा हुई हो)। नाभिके प्रदाहकी वजहसे धनुष्टंकारमें कैलेण्डुला तेलकी पट्टी नाभिपर रख देना जरूरी है। चोटकी वजहसे धनुष्टंकारमें आर्निका ३x चूर्ण या हाइपेरिकम ३x। नक्स-वोम ३x—३०, स्ट्रिकनिया ६x चूर्ण, साइक्यूटा ६, एसिड हाइड्रो ३ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। माताके ज्यादा क्रोध या शोकादिसे स्तनका दूध बिगड़ जानेपर और उसी दूधको पीनेकी वजहसे बच्चेको बीमारी होनेपर बच्चा और जच्चा दोनोंको ही इग्नेशिया ६ देना चाहिये। बच्चेके गलेकी रीढ़में सेंक देना फायदा करता है।

बच्चेकी आँख उठना—पैदा होनेके कई दिन बाद किसी-किसी बच्चेकी आँखें उठ जाती हैं। आँखें फूल जाती हैं, लाल होती हैं, पीव बहता है, बन्द हो जाती हैं, यहाँतक कि कभी-कभी आँखोंमें घाव हो जाता है। इस तरह ज्यादा दिनोंतक पीव बहनेसे आँखोंमें नष्ट हो जानेका डर रहता है, इसलिये पहलेसे ही इलाज कराना उचित है। तर घरमें रहना या ठण्डी हवा या ओस लगना, आँखोंमें ज्यादा रोशनी धूप या धूआँ पड़ना अथवा सौरी घरमें आगकी गर्मी ज्यादा लगना अथवा माता-पिताको कोई धातुगत रोग रहनेपर यह बीमारी हो सकती है।

आर्ज-नाई ३ बच्चोंके चक्षु-प्रदाहकी एक बहुत बढ़िया दवा है। सर्दी, ओस या ज्यादा रोशनी लगकर अगर आँखोंमें प्रदाह पैदा हो गया हो, बुखार, बेचैनी, नींद न आना, आँखोंसे बहुत पानी गिरना, आँखोंकी

पुतलियोका लाल होना वगैरह लक्षणमें एकोनाइट ३x लाभदायक है। चेचक वगैरहके बाद यह बीमारी होनेपर एपिस ३' और चोटकी वजहसे चक्षु प्रदाहमें आर्निका ३ फायदा करता है।

पलकें फूलीं, लाल और कभी-कभी रक्तस्राव होनेपर बेलेडोना ६। पलकें फूलीं और उनके जडवाले भागमें फुन्सी और ज्यादा पीब इकट्ठा हो जानेके लक्षणमें मर्क-सोल ६। आर्ज-नाई ३, कैल्के-कार्ब ६ की भी कभी-कभी जरूरत पडती है। सुसुम पानीमें साफ कपडेका एक टुकड़ा भिगोकर अच्छी तरह निचोड, धीरे-धीरे बहुत सावधानीसे आँखोंसे कीच वगैरह निकाल डालना चाहिये। पलक सट जानेपर जब वह खीचनेसे न खुजली हो, तो उसे खींचकर न खोलना चाहिये। पलकोंपर थोडी देर पानी देनेसे ही वह आप-ही-आप खुल जायगी। पानी खूब साफ हो और उसमें साबुन या दूध न मिलाया जाये। आँख साफ कर लेनेके बाद एक बुन्द आर्जेण्टम नाइट्रस 'तरल-क्रम' २x—३x* (weak solution) दोनों आँखोंमें डाल देनेसे बहुत बार फायदा हो जाता है। दूसरी दवाएँ और आनुसंगिक चिकित्साके लिये इसी यत्रका "चक्षु-प्रदाह" देखना चाहिये।

पिता-माताओंमें धातु-दोष रहनेकी वजहसे 'चक्षु प्रदाह' होनेपर थूजा ३०, मर्क-सोल ६, सल्फर ३०, आरम-म्यूर २००, एसिड-नाइट्रिक ६,

---

* आजकल आर्जेण्ट-नाइट्रो साल्यूशन व्यवहारके सम्बन्धमें चिकित्सकोंमें आपसमें मतभेद हो रहा है। बहुत कुछ तर्क-वितर्कके बाद डा० वाकरकी जानकारी समीने सर झुकाकर मान ली है। वे बोरैसिक-एसिड दो ग्रेन कैलेण्डुलाके साथ मिलाकर तुरन्तके जन्मे हुए बच्चोंका चक्षु-रोगमें व्यवहारकर आर्जेण्ट नाइट्रो साल्यूशनसे बहुत ज्यादा फायदा होता देख चुके हैं। आर्जेण्ट-नाइट्रिस साल्यूशनका व्यवहार करनेपर जो हानि होनेका डर रहता है, वह इसमें नहीं होता (Vide The Home. Recorder for Jan. 1912)

२०० वगैरह दवाओंकी जरूरत पड़ सकती है। इन सब दवाओंका ज्यादा हाल जाननेके लिये इसी बाल-रोग अध्यायकी "कौलिक पीड़ा" और परिशिष्ट "ख" देखना चाहिये।

अंजनी (गुहौरी)—पलकोंके किनारे-किनारे छोटी-छोटी फुन्सियाँ, फोड़े होनेपर उसे 'अंजनी या गुहौरी' कहते हैं। कभी-कभी इसमें पीव पैदा हो जाता है।। पल्स ३, हिपर ३ और स्टैफिसेग्रिया ३ इसकी बढ़िया दवाएँ हैं। किसी-किसी विशेष धातुवाले बच्चेकी गुहौरी किसी तरह अच्छी नहीं होती। उन्हें सल्फर ३ या थूजा ३० फायदा करता है। "अंजनी" देखिये।

कानमें मैल—बहुत दिनोंतक कान पका रहनेपर कभी-कभी कानमें मैल पैदा हो जाता है। स्टैफिसेग्रिया ३ इसकी प्रधान दवा है। कभी-कभी कैल्के-कार्बकी भी जरूरत पड़ती हैं।

कानमें मैल, कर्णमूल-प्रदाह, कानमें खुजली श्रवण-शक्तिकी कमी, बहरापन वगैरहके इलाजके लिये इस ग्रन्थका "कर्ण-रोगाध्याय" देखना चाहिये।

बच्चेके कानमें दर्द—ठण्ड लगनेपर, सर्दी या चेचक होनेपर अथवा कानमें पानी जानेपर या दाँत निकलनेके समय कभी-कभी बच्चेके कानमें दर्द होता है। बच्चेके कानपर हाथ लगते ही वह चिल्ला उठता हो, तो समझना चाहिये कि उसके कानमें दर्द हुआ है। सर्दी लगकर दर्द होनेपर ऐकोन ३। कान फूलकर लाल और गर्म होनेपर बेल ३। दाँत निकलते समय कानमें दर्द होनेपर कैमोमिला १२। दर्द असह्य होनेपर मैग्नेशिया-फास १२X विचूर्ण (खूब गर्म पानीके साथ) सेवन कराना चाहिये। कानपर गर्मागर्म सूखा सेंक देनेसे कानका दर्द घटता है।

कर्णशूल और कर्ण-प्रदाह—ओस लगना, बरसाती तर हवा, सर्दी दिनोंकी ठण्डी हवा लगना; कानमें चर्म-रोगके दाने एकाएक

वैठ जाना वगैरह कारणोंसे "कर्णशूल या कर्ण-प्रदाह" हुआ करता है। कानमें जलन, टपकको तरह दर्द, वहुत टटाना, कानके भीतर और वाहर गर्म, सूजा हुआ और लाल होना, उसके साथ अक्सर बुखार मौजूद रहना, इसका प्रधान लक्षण है। कर्णशूलका कारण और लक्षण भी ऐसा ही है। फर्क इतना ही है कि कर्ण-प्रदाहमें टपककी तरह दर्द रहता है, परन्तु कर्ण-शूलमें एकदम शूल बेधनेको तरह तकलीफ होती है। पल्सेटिला ३ का सेवन और पल्सेटिला θ कई बून्द कानमें डाल देनेसे दोनों ही बीमारियोंमें फायदा होता है। यदि जाडेके दिनोंकी ठण्डी हवा लगनेकी वजहसे बीमारी हो, तो ऐकोनाइट ६x ; चोट लगकर होनेपर आर्निका ३। कानमें भीतर और बाहर प्रदाह होकर कानके भीतर दर्द और बाहर जलन, गाल और दाँततक फट पड़नेकी तरह दर्द फैला रहनेपर मर्क-वा ३x विचूर्ण फायदा करता है। हल्का पथ्य देना चाहिये ; तकलीफ ज्यादा होनेपर मर्क सेंक देना चाहिये। दूसरी दवाएँ और आनुसंगिक चिकित्साके लिये इस ग्रन्थका "कर्ण-प्रदाह" और "कर्ण-शूल" रोग देखिये।

कान पकना, पीव होना—चेचक, बुखार वगैरह बीमारियोंके बाद या चमडेकी कोई बीमारी बैठ जानेपर (खासकर गण्डमालाग्रस्त) बालक-बालिकाओंके कान पककर पीव बहने लगता है ; छोटी माता या चेचकके बाद कान पकनेपर (या कानका पीव गिरना बन्द होकर कन्धेकी गाँठका सूजन), पहले पल्सेटिला ३ और बादमें सल्फर ३० देना चाहिये। कानसे पीव बहनेके साथ सरके दर्दमें, बेलेडोना ३, बेलेडोनाके बाद मर्क ६ (खासकर पीव गाढा और बहुत देरतक मौजूद रहनेवाली बदबू तथा बिछावनकी गर्मीसे तकलीफ बढ़ जानेपर), परन्तु पारा या मर्करीका ज्यादा सेवन किया गया हो, तो हिपर-सल्फर ६ देना चाहिये। सुसुम पानीमें सोहागा मिलाकर उससे धीरे-धीरे कान धो डालना चाहिये। इसके बाद ब्लाटिंग कागजसे कान अच्छी तरह

पोंछकर धुनी हुई रूईकी गांठ-सी बनाकर कानका छेद बन्द करना चाहिये ।

सावधान, यदि बचपनमें बच्चेके कानसे पीव गिरता हो तो एकाएक किसी दवाका बाहरी प्रयोगकर स्रावको बन्द कर देना उचित नहीं है। स्राव बन्द न हो जानेपर भयानक बीमारी हो जा सकती है। ("कान पकना" देखिये)।

टङ्कार या खींचन—बचपनमें स्नायुमण्डलकी क्रिया थोड़ेसेमें उत्तेजित हो जाया करती है, इसी वजहसे यह बीमारी पैदा होती है। इस बीमारीके लक्षण मृगी और हिस्टीरियाके समान होते हैं। दाँत निकलनेके वक्त या चेचक अथवा खसरा अच्छी तरह ऊपर न आनेपर या क्रिमि-रोग रहनेपर अथवा पाकाशयकी गड़बड़ीकी वजहसे यह बीमारी होती है। आँखें तथा चेहरा लाल, आँखोंकी पुतली फैली हुई ; माथा गर्म, चौंक उठना या उछल पड़ना लक्षणमें बेलेडोना ६ । चेहरा मलिन, गर्म और सूजा हुआ, समूचे शरीरमें कँपकँपी, गों-गों या घरघर शब्द, ऊपरकी ओर टकटकी बाँधे चुपचाप पड़े रहना और कब्जियतके लक्षणमें, ओपियम ३० ; दाँत निकलनेके समय ऐंठन होनेपर, कैमोमिला ६ । हाम या चेचक अच्छी तरह न निकलनेकी वजहसे होनेपर जिंकम ६ या स्ट्रैमो ६ देना अच्छा है। भारी चीजें खानेकी वजहसे अकड़न होनेपर पहले नक्स-वोमिका ६ देना चाहिये। यदि तीन-चार बार नक्स-वोमिका खिलानेपर कोई फायदा न हो, तो गर्म पानीकी पीचकारीसे पाखाना निकाल देना या कै करानेवाली दवा खिलाकर कै करा देना उचित है। क्रिमिकी वजहसे अकड़नमें साइना ३x—२००, तेज बुखारके साथ शरीर पीछेकी ओर अकड़ जानेपर विरेट्रम-विरिडि ३x ; चर्म-रोगके दाने बैठ जानेपर अकड़न हो, तो सल्फर ३०, क्यूप्रम ६, एपिस ६, ऐण्टिम-टार्ट ६, जिंकम या आर्स ६ की कभी-कभी जरूरत पड़ती है (स्नायुमंडल रोगवाले अध्यायमें "अकड़न" रोगकी दवाएँ देखिये)।

खूब गर्म पानीमें बच्चेका पैर डुबोकर उसे सूखे कपडेसे पोंछ देने और साथ-ही-साथ सरपर ठण्डा पानी देनेसे बहुत बार फायदा हो जाता है। लाजवन्ती लताकी डाल बच्चेके गलेमें बाँध देनेसे अकडन तुरन्त अच्छी हो जाती है, परीक्षा करनी चाहिये।

बच्चेकी सर्दी-गर्मी – बच्चेके समूचे शरीरमें (खासकर सरमें) धूप लगना, गर्मीके दिनोंमें अधिक देरतक सवारी आदिमें घूमना वगैरह कारणोंसे सर्दी-गर्मी हो सकती है। पहले गर्मी मालूम होती है, प्यास लगती है, इसके बाद जाड़ा लगता है, बदनका चमड़ा शुष्क हो जाता है, सरमें दर्द, आँखें लाल, मिचली या कै बार-बार पेशाब होता है और इसके बाद शरीरकी गर्मी कम होने लगती है और धीरे-धीरे (एकाएक) बेहोशी पैदा हो सकती है। कभी-कभी इसी तरह रोगी मर भी जाता है।

एकाएक बहोश हो जाना, समूचा शरीर खासकर सर और चेहरा गर्म और लाल होना, नाड़ी बहुत तेज मालूम होना, बच्चेका दम अटक जाना, दस्त, कै वगैरह लक्षणमें ग्लोनोइन ३ (५ मिनटके अन्तरसे) सेवन कराना पड़ता है। कार्बो-वेज ३० वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। "सर्दी-गर्मी" देखिये।

मस्तिष्क-झिल्ली-प्रदाह (Meningitis)—इस बीमारीमें पहले भूख नहीं रहती, सर भारी रहता है और कै होती है। नाडी क्षीण, श्वास प्रश्वास अनियमित और दृष्टि टेढी हो जाती है। इसके बाद धीरे धीरे खींचन, तन्द्रालु भाव, तेज नाडी, शरीरका ताप बढ़ना (१०३ डिगरीतक) वगैरह होकर दो-तीन हफ्तोंके भीतर ही बच्चा मर जाता है। एपिस ३ इसकी बढ़िया दवा है। खासकर नींदकी हालतमें अगर बच्चा चिल्ला उठता हो ; किसी चोटकी वजहसे हो, तो आर्निका ३, ज्यादा प्रलाप रहनेपर बेलेडोना ३।

सरके पिछले भागमें और गर्दनके पीछे बहुत दर्द रहनेपर हेलिबोरस ३। बैसिलिनम २०० (सिर्फ एक मात्रा), फास्फोरस ६, जिंकम ६, ब्रायोनिया ६, सल्फर ६, जेलसिमियम ३x, स्ट्रैमोनियम ३ की भी कभी-कभी जुरूरत पड़ती है। बच्चेकी कौलिक पीड़ा—"गुटिकायुक्त धातु" देखिये।

मस्तिष्कमें जल-संचय (Hydrocephalus)—पैदा होनेसे लेकर एक वर्षके भीतर मस्तिष्कमें शोथ हो सकता है। यह बीमारी आठ-दस वर्षकी उम्रतक रह सकती है; बच्चा माँका दूध मजेमें पीता है, परन्तु दुबला होता जाता है; धीरे-धीरे सर बड़ा होता है। बच्चा बूढ़े-जैसा दिखाई देने लगता है और हमेशा पड़ा रहना चाहता है। उसकी इन्द्रियाँ अवश हो सकती हैं और अन्तमें वह मर जाता है।

कैल्केरिया ३०, साइलिसिया ३०, सल्फर ३० इसकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं। यदि अज्ञान अवस्थामें बच्चेका पेशाब बन्द हो जाये और वह पानीके सिवा और कुछ खाना न चाहें, तो इस अवस्थामें हेलिबोरस ३ अच्छी दवा है।

बच्चेके दिमागमें रक्त-संचय—बच्चेका ब्रह्मतालु कुछ फूल जाता है और वह एकदम निस्तेज हो जाता है। सर कुछ गर्म होना, नाड़ीकी गति कभी तेज और कभी मन्द हो जाना, कब्जियत के, गलत देखना या बकना, गों-गों करना, टकटकी लगाकर देखना, आँखोंकी पुतलीका बड़ा होना, जीभ और आँखोंका लाल होना, चेहरा और आँखें तमतमायीं, कपाल और गर्दनके पीछेकी शिराओंका फूल उठना, साँस जल्दी-जल्दी और कष्टकर होना, गहरी नींदमें भी एकाएक चिल्ला उठना वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं। चोट लगना, दाँत निकलना, हूप खाँसीकी वजहसे सरमें चूनका वेग बढ़ जाना, शिराओंपर ज्यादा दबाव पड़ना और खसरा, चेचक या किसी दूसरी चमड़ेकी बीमारीका बैठ जाना वगैरह कारणोंसे यह बीमारी पैदा होती है। एपिस ३ इस

बीमारीकी बहुत बढ़िया दवा है। सर भारी, आँखें बन्द किये पड़े रहना, शरीरकी गर्मी १०३° तक होना, लक्षणोंमें जेल्स १x देना चाहिये। चेहरा और आँखें लाल और चमकीली, आँखोंकी पुतली फैली, तन्द्रालु भाव, पर नींद न आना, बीच-बीचमें चौंक उठना, ब्रह्म-तालुका फूल उठना वगैरह लक्षणोंमें बेल ३x। अगर ये उपसर्ग बढ़े हुए हों, तो ग्लोनोइन ३ देना चाहिये। हल्की और पुष्ट चीजें खानेको देना चाहिये। (मस्तिष्क और मस्तिष्क-आवरक झिल्ली और मस्तिष्क-आवरक-झिल्ली प्रदाह" देखिये)।

बच्चेके मस्तिष्कमें खूनकी कमीसे पैदा हुआ विकार (Hydrocephaloid brain)—हैजा, अतिसार, न्युमोनिया वगैरह बहुतसी भयकर बीमारियोंके कारण खून कम पड जानेपर बच्चेके पोषण-कार्यमें बाधा पड जाती है। इस अपोषण क्रियाका नाम "मस्तिष्कमें खूनकी कमीके कारण विकार" है। शिशुका ब्रह्मरंध्र बैठ जाना, सर हमेशा इस करवट, उस करवट करते रहना और मोह पैदा हो जाना, ये सभी बहुत खराब लक्षण हैं। ध्यान रखना चाहिये, ऊपर कहा हुआ "मस्तिष्कमें जल-सञ्चय और विकार" एक ही बीमारी नहीं है। ये दोनों ही अलग-अलग बीमारियाँ हैं। फास्फोरस ६, सल्फर ३०, कैल्के कार्ब ३०, इथ्यूजा ६, कैल्के-फास १२x विचूर्ण, कैडमियम सल्फ ३, हेडिरा हेलिक्स θ, हेलिबोरस ३x वगैरह इस बीमारीकी बढ़िया दवाएँ हैं। (ज्यादा हाल और इलाजके लिये हमारी प्रकाशित "हैजा चिकित्सा" ग्रन्थ देखिये)।

बच्चेके मेरुमज्जामें जल-संचयसे पैदा हुआ विभाजित मेरु (Spinal Bifida)—गर्भावस्थामें मेरु-प्रणाली (spinal canal) में पानी इकट्ठा होनेपर तुरन्तके पैदा हुए बच्चेका यह बीमारीवाला स्थान अर्बुद (tumour) की तरह फूल उठता है और रीढ़की रोगी हड्डी अपूर्णताकी वजहसे "अलग" दिखाई देती है। इसीका नाम 'विभाजित

मेरु" है। कैल्के-फास ६x विचूर्णके प्रयोगसे हड्डीका दोष हट जाती है और एपिस ३ के सेवन और वाहरी प्रयोगसे अर्बुद अच्छा हो जाता है। वैसिलिनम २००, ब्रायो ३, सल्फर ३०, सिलिका ३०, आर्स ६, लाइको ३०, कैल्के-कार्ब ६ की भी कभी-कभी जरूरत पड़ती है। अगर अर्बुद वढ़ता जाता हो, तो नश्तर लगवा देना चाहिये।

बच्चेका पक्षाघात—बुखार या अकड़नके साथ यह बीमारी साधारणतः दिखाई दिया करती है। लकवा मारी हुई जगह पन्द्रह-बीस दिनोंमें सुख जाती है और पतली पड़ जाती हैं; बीमारीवाली जगह फिर बढ़ नहीं सकती, यहाँतक कि हाड़ भी पतला पड़ जाता है। सिकेलि ३, ऐकोनाइट ३,बेलेडोना ३, प्लम्बम ६, थूजा ३० जेलसिमियम ३०, सल्फर ३०, वगैरह इस बीमारीकी प्रधान दवाएँ हैं। "पक्षाघात" रोग देखिये।

बच्चेकी रीढ़में पक्षाघात (Infantile spinal paralysis)—बीमारीवाली जगहकी पेशियाँ पतली पड़ जानेपर बच्चेके "मेरुदण्डमें लकवा मार गया है"—यह समझना चाहिये। एक तरहका जगह शायद इसका मुख्य कारण है। अस्तबलकी मक्खियाँ इस जहरको एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचाती हैं। सर्दी लगना या एकाएक पसीना बन्द करना इसका गौण कारण है। गर्मीके दिनोंमें हमेशा एक वर्षसे चार वर्षतकके बालक बालिकाओंको बुखारके साथ इस बीमारीका एकाएक हमला हुआ करता है और देखते-देखते लकवा मारा हुआ अंग तेजीसे बहुत पतला पड़ जाता है। बुखार, बेचैनी, स्नायुमें दर्द वगैरह लक्षणोंमें—ऐकोन ३x (रोग मालूम होनेके समयसे ही कुछ दिनोंतक इसका व्यवहार करना पड़ेगा)। परन्तु यह मालूम होते ही, कि पक्षाघात आरम्भ हो गया है, तो ऐकोन बन्दकर जेल्स १x देना पड़ेगा (बुखारके साथ उदासीनता रहे, तो जेल्सके प्रयोगसे ज्यादा फायदा होता है)। तेज बुखार, चेहरेपर रक्त-संचय, चमड़ा सूखा वगैरह लक्षणोंमें बेल ३ देना

चाहिये। थुलथुल, मोटे (या दुवले) बच्चोंके लिये कैल्के-कार्ब ६। गर्म पानीमें नहाना और बीमारी होनेके छः हफ्ते बाद बिजली लगवाना और बदनमें मालिश कराना (कम-से-कम एक वर्षतक) फायदा करता है।

बच्चे का मृगी रोग—("अपस्मार" देखिये) बहुतसे बच्चोंको यह बीमारी हुआ करती है। कैल्केरिया कार्ब ३०, इसकी बढ़िया दवा है। रोग पुराना होनेपर सल्फर ३०, वयूप्रम ६, ब्यूफो ६, सिलिका ३०, हाइड्रोसियानिक-एसिड ३, कैल्के-फास ६x विचूर्ण, जिंकम फास ३x—३, बेलेडोना ६, कैमोमिला ६, साइना ३x—२००, इग्नेशिया ३, नक्स-वोमिका ३०, और स्ट्रैमोनियम ६ कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है।

एक ज्वर—कभी-कभी बच्चोंको बुखार छोड़ना ही नहीं चाहता। फेरम-फास १२x या जेलसिमियम ३x इसकी बढ़िया दवा है। पाकाशयकी गड़बड़ी रहनेपर, पल्सेटिला ३० ; जीभपर सफेद लेप चढ़ा हो, तो ऐण्टिम-क्रूड ३० ; क्रिमिकी वजहसे हो, तो साइना ३x या स्पाइजिलिया ६, बदन खूब गर्म, चौंक उठना या अकड़नके लक्षणमें बेलेडोना ३ फायदा करता है। कभी-कभी रोगीको बुखार किसी तरह छूटता ही नहीं। कब्जियत रहती है, नाभिके चारों ओर दर्द (क्रिमि रहे या न रहे), नाकको खूँटते रहना वगैरह लक्षणमें, साइना २x—३० ; साइनासे कोई लाभ न होनेपर, स्पाइजिलिया ३x देना चाहिये। विकारके लक्षण दिखाई देते ही पहले कैप्सिकम ६ देना चाहिये। पानीमें पकी बार्ली वगैरह हलकी चीजें खानेको देनी चाहिये। बुखारके समय दूध देना मना है; प्रसूताके नहाने और भोजनपर भी नजर रखनी चाहिये। "एक-ज्वर", मैलेरियासे पैदा हुआ पारीका बुखार" और "सान्निपातिक विकार" देखिये।

प्लीहा—बहुत दिनोंतक मैलेरिया ज्वर भोगनेपर पिलही बढ़ जाती है, फूल उठती है, कड़ी हो जाती है, टटाती है और उसमें फोड़ेकी तरह दर्द होता है; क्विनाइनके अपव्यवहारकी या आर्सेनिकके अपव्यवहारकी वजहसे भी प्लीहा इस तरह बढ़ती और कड़ी हो जाती है। मर्क-बिन आयोड ३x—६x विचूर्ण बढ़िया दवा है। सियेनोथस θ प्लीहापर लगाने और सियेनोथस १x खानेसे फायदा होता है। आर्सेनिक ३०, नक्स ६, चायना ३०, लाइकोपोडियम ३०, कैल्के-कार्ब ३०, आर्निका ६, सल्फर ३०, नेट्रम-म्यूर ३० की भी कभी-कभी जरूरत हो सकती है ("बढ़ी हुई प्लीहा", "सविराम ज्वर", "मैलेरिया ज्वर" वगैरह देखिये)।

बच्चेको नींद न आना—माथेमें खूनकी ज्यादती या खून इकट्ठा होनेपर, या प्रसूता अथवा बच्चेका अनुचित खान-पान या क्रिमिकी वजहसे नींद नहीं आती है। किस कारणसे नींद नहीं आती, यह निर्णय करनेके बाद इलाज करना चाहिये।

माथा गर्म, बिना कारणके ही बराबर रोना, नींदमें भी एकाएक चिल्लाकर रोना लक्षणमें बेलेडोना ६। रह-रहकर शरीरका फड़कना, बदन गर्म, चिड़चिड़ा स्वभाव और हमेशा गोदीमें रहनेकी इच्छा होनेपर—कैमोमिला ६। बच्चा हँसता, खेलता हो, पर हमेशा बदन गर्म रहे और बीच-बीचमें कॉखनेके लक्षणमें—काफिया ६। बुखार होकर बीच-बीचमें डरकर चिल्ला उठता हो, तो ऐकोनाइट ३। क्रिमिकी वजहसे नींद न आनेपर साइना ३x। कब्जियतकी वजहसे नींद न आती हो, तो नक्स-वोमिका ६। बहुत खान-पानकी वजहसे नींद न आती हो, तो पल्सेटिला ६।

दूधकी कै करना—स्नायविक उत्तेजना या पाकस्थलीके दोष आदिकी वजहसे बच्चा जो दूध पीता है, वह कै कर देता है। बच्चेकी दूध न पीनेकी इच्छा, खट्टी या बदबूदार कै या पित्त मिली हरे रंगकी

के, कब्जियत वगैरहके लक्षणमें नक्स-वोम ६। प्रसूताके बहुत भारी जल्दी न पचनेवाली चीजें खानेकी वजहसे बच्चेकी पाचन-कियामें बाधा पड़कर जमे हुए दही-जैसी के होती हो, तो पल्सेटिला ६। अम्लकी वजहसे दूधकी के करनेपर कैल्के-कार्ब ३०। समुद्रकी एक छोटी सीप बच्चेके गलेमें यन्त्रकी तरह लटका रखनेसे कभी-कभी फायदा होता है। दूध पीते ही तुरन्त आवाजके साथ जोरसे के; जमे हुए थक्के दहीकी तरह के, के करनेके बाद बच्चेको सुस्ती आ जाना और कुछ देर बाद उसी तरह दूध पीलानेसे फिर के, इथ्यूजा ६। ऊपर लिखे लक्षणोंके साथ अगर जभी सफेद हो, तो ऐण्टिम-क्रूड ६। इसीके साथ बदबूदार दस्त आता हो, तो कैल्के-कार्ब ३०। दूधके साथ पित्त या लारकी तरह श्लेष्माकी के होनेपर, इपिकाक ६। दूध के करनेकी बीमारी अगर पुरानी हो, तो क्रियोजोट ६, नक्स-वोम ६, पल्सेटिला ६। विरेट्रम ऐल्ब ६ वगैरह दवाओंकी जरूरत पड़ सकती है।

वमन और मिचली—कभी-कभी बच्चेको मिचली होती है, जो खाता है, वही के कर देता है, बार-बार के करनेकी वजहसे बहुत गर्म होकर खूनतककी के हो सकती है। बराबर मिचली और ओकाईके लक्षणमें ऐण्टिम-टार्ट ६, मिचली या के होनेपर इपिकाक ३x; घोर लाल खूनकी के करने पर फास्फोरस ६; काले खूनकी के होनेपर हैमामेलिस ३x; चोटकी वजहसे के होनेपर, आर्निका ३x; क्रिमिकी वजहसे होनेपर साइना ३x—२००।

बच्चेको खूनकी के या रक्त-पित्त—पैदा होनेके कुछ दिन बाद किसी-किसी बच्चेको खूनकी के होती है। इसके अलावा, बच्चेके नाक या मुँहमें घाव रहनेपर या माताके स्तनमें किसी तरहका घाव रहनेपर वह खून पेटमें जाकर कभी-कभी खूनकी के हो सकती है, कभी-कभी जोरसे के होनेपर "गर्म" होकर खूनकी के हो सकती है।

चमकीले लाल रंगके खूनको के होनेपर मिलिफोलियम θ—१x, मिचली या केके साथ चमकीला लाल खून आता हो और थोड़ी देरतक रहनेवाली तेज खाँसी मौजूद रहनेके लक्षणमें—इपिकाक ३x ; बराबर खूनकी कै—मर्क-कोर ६ ; किसी तरहकी चोट लगकर खूनकी साथ होनेपर—आर्निका ३x। थूकके साथ खून आना और उसके साथ कलेजेका काँपना और बेहोशीके लक्षणमें, फेरम ३x। "रक्त-वमन या रक्त-पित्त" देखिये।

नाव आदि सवारीमें घूमनेपर कै—नाव, जहाज, रेल वगैरहमें घूमनेके समय किस-किसी बच्चेको कै होती है या मिचली पैदा हो जाती है। काक्युलस-इण्डिका ६ इसकी बढ़िया दवा है।

रोगीको सुलाये रखना अच्छा है और जरूरत पड़नेपर बरफका टुकड़ा चूसनेको देना चाहिये।

बच्चेकी हिचकी—कभी-कभी सर्दी लगनेकी वजहसे बच्चोंको हिचकी आने लगती है। कई बुन्द मिश्री मिला पानी या नक्स-वोमिका ३० खिला देनेसे ही फायदा होता है। बच्चेके बदनपर हमेशा गर्म कपड़ा रखना चाहिये।

दाँत निकलना—बच्चेको छः से लेकर दस महीनेके भीतर ही दाँत निकला करते हैं। पहले निचले मसूढ़ेमें दो, फिर ऊपरवाले मसूढ़ेमें दो, इसी तरह तीन वर्षमें सब दाँत आ जाते हैं। बुखार, कब्जियत, आक्षेप, अनिद्रा वगैरह उपसर्ग दाँत निकलते वक्त दिखाई देते हैं। इन सभी उपसर्गोंकी कैमोमिला १२ बढ़िया दवा है। बुखार, रहनेपर ऐकोनाइट ३। ज्यादा पतले दस्त आनेपर—कैमोमिला ६। आँव रहनेपर मर्क-कोर ६। कब्जियत रहनेपर नक्स-वोमिका ३०। अकड़न रहनेपर—बेलेडोना ६। दाँत निकलनेमें देर होनेपर कैल्केरिया-कार्ब ३०, इग्नेशिया ६, साइना ३x—२००, इपिकाक ६, सल्फर ६, वगैरहकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। मसूढ़ेकी छेदकर दाँत

बाहर न निकल सकता हो, ऐसे मौकेपर मसूढेको थोडा चीर देनेसे ही दाँत बाहर निकल आते हैं।

कीडे लगे दाँत—(Carious teeth)—सटे हुए दाँत निकलना खायी हुई चीजका चूर दाँतमें इधर-उधर लगा रहना, ज्यादा परिमाणमें खट्टी या मीठी चीजें खाना या अजीर्णकी वजहसे दाँतोंका क्षय होता है। इसीका नाम "कीडे लगे दाँत" है। अतएव जिनको यह धारणा है कि दाँतमें बाहरके कोडे लगकर उसे क्षय कर देते हैं, वे भूल करते है (कीडे पडे दाँतोंकी पाद टीका देखिये)। क्रियोजोट ६—१२, स्टैफिसेग्रिया ६, मर्क-सोल ६ या साइलिसिया ६ इसकी उत्तम दवाएँ हैं। क्रियोजोट θ कई बून्द एक रुईके फाहमें लगाकर कीड़ा पडे दाँतकी जड़में लगा देनेसे दाँतका दर्द कम हो जाता है। भोजनके बाद दाँत अच्छी तरह साफ कर डालना चाहिये अर्थात् भात, रोटी, तरकारी वगैरहके चूर उसमें अटके न रह जाये, इस तरह साफ कर मुँह धोना चाहिये। बच्चोंको चीनी, मिश्री, मिठाई इत्यादि मीठी चीजें ज्यादा खिलाना मना है। गत युरोपीय महायुद्धके समय चीनीकी कमीकी वजहसे इङ्गलैण्डके बहुतसे बालक-बालिकाओंके दाँत बहुत ही बढ़िया थे।

बच्चोंको दाँती लगना—चोट, धूप, ओस या बुरी हवा लगना, दूषित चीजोंका खाना पीना, रक्त-स्राव वगैरह कारणोंसे बच्चोंको दाँती लग जाती है। इस अवस्थामें ज्यादा देरतक रहना आशंकाजनक है। इसीलिये, इसको छुड़ानेका उपाय तुरन्त करना चाहिये।

चिकित्सा—चोटकी वजहसे दाँती लगनेपर आर्निका ३x। स्नायुमें चोट थ कर या शरीरका कोई स्थान कटकर दाँती लगनेपर हाइपेरिकम १x—२००। सर्दीके दिनोंकी सूखी ठण्ढी हवा लगनेकी वजहसे दाँती लगनेपर, ऐकोनाइट ३। माथा पीछेकी ओर झुक पड़ने या शरीर एक ओर झुक जानेपर, साइक्यूटा ६। जबडेके इधर-उधर हिलते

रहनेपर, जेलसिमियम ३। स्नायविक दौर्बल्य या अजीर्णकी वजहसे दाँती लगनेपर, नक्स-वोमिका ३। रक्त-स्रावकी वजहसे दाँती लगनेपर हैमामेलिस १x। यदि बच्चा निगल न सकता हो, तो उसे दवा सुँघा देनी चाहिये।

बच्चेकी नाक लाल होना—भोजनके बाद नाक लाल होनेपर, एपिस ३x ; गहरा या काला लाल रंग होनेपर, कर्बो-वेज ६ या बोरैक्स ३ देना चाहिये।

बच्चेकी नाक फूल उठना—बार-बार सर्दी लगनेकी वजहसे नाक फूल जाती है। गण्डमालाग्रस्त बच्चोंकी नाक अक्सर फूला करती है। नाक फूल जानेपर पहले मर्क-सोल ६ (खासकर पतली सर्दी बहने या नाककी हड्डियोंमें दर्द रहनेपर) देना चाहिये। यदि मर्क-सोलके प्रयोगसे फायदा न हो या रोग कुछ कम पड़ जाये, तो हिपर-सल्फर ६ देना चाहिये।

बच्चेकी नाकमें घाव—सरमें सर्दी लगनेकी वजहसे ही हमेशा नाकमें घाव हुआ करता है, नाकका घाव बहुत तकलीफ देता है, सहजमें अच्छा नहीं होता। ग्रैफाइटिस ६ सेवन और रातमें सोनेके समय नाकमें ओलिव आयल रखना पड़ता है। नासारंध्रमें घाव या पीव-भरी फुन्सि या सड़ना आरम्भ होनेपर, कैलि-बाई ६ देना पड़ता है। नासारंध्रकी चारों ओर छोटे-छोटे घाव होनेपर या पपड़ी जम जानेपर, नाइट्रिक-एसिड ६—३० देना चाहिये।

बच्चेका नाकपर पीव-भरी फुन्सियाँ—नाकपर फोड़ा, छोटा फोड़ा पीब-भरी फुन्सियाँ होनेपर, पेट्रोलियम ३ सेवन कराना चाहिये।

बच्चेका नासिका-प्रदाह—नाकका बाहिरी भाग प्रदाहित होनेपर (नयी हालतमें), बेल २x देना चाहिये। बीमारी पुरानी होनेपर, आरम-म्यूर ३x। इस ग्रन्थका "नासिका-प्रदाह" देखिये।

बच्चेकी नाककी जड़में दबाव मालूम होना—नाककी जड़में दबाव मालूम होनेपर, केलि-बाइक्रोम ३ ; नाककी जड़में दबाव मालूम होनेके साथ-ही-साथ दर्द रहनेपर कैम्फिकम ३ सेवनसे फायदा होता है।

बच्चेकी नाकके अगले भागके उपसर्ग—नाककी ठोर लाल हो और खुजलानेपर, साइलिसिया ६ ; नाकके अगले भागमें खिंचाव मालूम होनेके साथ खुजलाहट होनेपर कार्बो-ऐनिमेलिस ६ ; नाकके अगले भागमें जलन करनेवाला दर्द पैदा हो जानेपर, एसिड-आक्जैलिक ३। नाककी ठोरपर छोटी-छोटी फुन्सियाँ पैदा होनेपर ऐमोन-कार्ब ३ ; पीव भरी फुन्सियाँ होनेपर, केलि-ब्रोम ३x ; फोड़ा और खिंचाव होनेपर, बोरैक्स ३ ; नाकका अगला भाग लाल और उसके साथ बुखार मौजूद रहनेपर (खासकर सन्ध्याके समय), कैम्फिकम ३ देना चाहिये।

बच्चेकी नाकसे खून गिरना—बच्चेकी नाकसे खून गिरनेपर 'मिलिफोलियम' θ इस रोगकी बढ़िया दवा है। घूंसेकी मार या और किसी तरहकी चोट लगनेकी वजहसे खून निकलनेपर—आर्निका ३ ; रोगीके एकदम कमजोर हो पड़नेकी वजहसे नाकसे खून गिरनेपर, चायना ६ ; सवेरे खून गिरनेपर ब्रायो ३ ; रातके समय खून गिरनेपर मर्क-वाई ६x विचूर्ण।

किसी बड़ी बीमारीमें (जैसे—सान्निपातिक ज्वरमें) बीच-बीचमें नाकसे खून गिरता है। इस तरह खून निकलनेसे फायदा होता है। ऐसी अवस्थामें दवा खिलाकर इसे रोकना किसी अवस्थामें भी उचित नहीं है। दवा खिलानेसे बहुत बार नुक्सान हो जाता है।

इस ग्रन्थका "नाकसे रक्त-स्राव" परिच्छेद देखिये।

नाक बन्द होना या सट जाना—सर्दी सूख जानेपर कभी-कभी बच्चेकी नाक बन्द हो जाती है। इससे साँस लेने और छोड़नेमें तकलीफ

होती है। दूध खींचने और नींदमें रूकावट पैदा हो जाती है। कभी सॉय-सॉय शब्द होता है और कभी बलगम निकलता है। नाक सूखी मालूम होनेपर, डल्कामारा ३ या सैम्बुकस ३ या नक्स-वोमिका ६। नाक बन्द होकर कलेजेमें घरघर आवाज होनेपर, ऐण्टिम-टार्ट ६; पतली सर्दी निकलनेकी वजहसे नाक बन्द रहनेपर कैमोमिला १२। सर्दी एकदम सूख जाये, तो नाकके भीतर और ऊपरी भागमें शुद्ध सरसोंका तेल गर्मकर डाल देनेसे श्लेष्मा पतला हो जा सकता है। उस समय अंगुली या कूँचीसे पपड़ी बाहर निकाल लेनेसे ही बच्चेको आराम मिलने लगता है।

सर्दी खाँसी—सर्दी लग जाना वगैरह कारणोंसे बच्चेकी नाककी राहसे सर्दी निकला करती है। कभी-कभी खाँसी और बुखार भी हो जाता है। नाक बन्द हो जाती है, लड़का हाँफने लगता है और दूध नहीं खींच सकता है। सीनेमें सर्दीका बैठ जाना डरकी बात है। सर्दी लगनेकी वजहसे सर्दी खाँसी या उसके साथ बुखार होनेपर कोई दूसरी दवा देनेके पहले, एकोनाइट ३x जल्दी-जल्दी सेवन कराना चाहिये। सूखी खाँसी सीनेमें दर्द, पीला बलगम निकलना वगैरह लक्षणोंमें ब्रायोनिया ३। खूब कमजोर हो जाना, कै होना या बलगम-भरी, घरघराहट-मिली खाँसीमें, ऐण्टिम-टार्ट ६। अकड़न मिली खाँसीमें और उसके साथ ज्यादा श्लेष्मा निकलना, कै या मिचली वगैरह लक्षणोंमें—इपिकाक ६; सर्दी निकलती रहनेपर, पल्सेटिला ६ और नाक बन्द होनेकी वजहसे दूध न खींच सकनेपर नक्स-वोम ६। नक्ससे अगर फायदा न हो, तो सैम्बुकस १x—३x देनेसे फायदा होता है। ठण्ड लगकर हुई सर्दी यदि किसी तरह अच्छी न होती हो, तो मर्क्यूरियस ६; सर्दी गिरनेकी वजहसे नाक और ओंठमें घाव होनेपर आर्सेनिकम ६; "श्वास-यन्त्रके रोग" और "हूप-कास" देखिये।

बच्चे का दमा—बहुत दिनोंतक सर्दी खाँसी भोगनेपर दमाके लक्षण दिखाई देने लगते हैं। इपिकाक ३x—६, लोबेलिया १x, आर्सेनिक ३x—३०, सेनेगा θ इसकी बढ़िया दवा है। "दमा" देखिये।

बच्चे का श्वास कष्ट—कभी-कभी बच्चे को एकाएक दमा या खाँसीकी तरह साँस लेने और छोड़नेमें तकलीफ होती है। सैम्बुकस १x क्युप्रम-मेट ६, लैकेसिस ६ और स्पजिया ३ इसकी बढ़िया दवाएँ हैं। "घुंड़ी खाँसी", "दमा" वगैरहकी दवाएँ देखिये।

बच्चे का ब्रांकाइटिस—बुखार, खाँसी, छातीमें दर्द, गलेका साँय-साँय करना इस रोगके प्रधान लक्षण हैं। यदि छोटी-छोटी श्वासनलियोंकी श्लैष्मिक झिल्ली आक्रान्त हो, तो उसे "कैशिक-वायु-नली-प्रदाह" (capillary bronchitis) कहते हैं। यह बहुत कड़ी बीमारी है। फेरम १२x चूर्ण और ब्रायोनिया ३ नयीबीमारीमें फायदा करता है। बीमारी पुरानी हो जानेपर—हिपर-सल्फर ६, लाइको-पोडियम १२ और एण्टिम-टार्ट ६ फायदा करता है। "वायुनली-प्रदाह" की दवाएँ देखिये।

बच्चे का न्युमोनिया—फेफड़ेके प्रदाहके साथ कभी-कभी वायुनली प्रदाह भी मौजूद रहता है। इस तरह मौकेपर इसे "ब्रांको न्युमोनिया" कहते हैं। नयी बीमारीमें फेरम-फास ६x, फास्फोरस ६, उत्कृष्ट दवाएँ हैं। कुछ दिनोंतक बीमारी भोगने बाद यक्ष्माकास होनेका उपक्रम हो तो वैसिलिनम ३०—२०० (सप्ताहमें एक बार एक मात्रा) देना चाहिये। "फेफड़ेका प्रदाह" की दवाएँ देखिये।

बच्चे की प्लुरिसी—"वक्षावरक-झिल्ली-प्रदाह" देखिये।

घुंड़ी खाँसी—(Croup)—स्वर-यन्त्र (अर्थात् लैरिन्स या श्वास यन्त्रका ऊपरी भाग) और श्वास यन्त्र (trachea) के प्रदाहके साथ साँसमें तकलीफ, साँस रोकनेवाली खाँसी वगैरह उपसर्ग पैदा हो जाना और कभी-कभी उस प्रदेशमें नकली झिल्ली पैदा हो जानेका नाम "घुंड़ी

खाँसी” है। घुंड़ी खाँसी दो तरहकी होती है :—(१) नकली और (२) प्रकृत। नकली घुंड़ी बच्चोंको एकाएक हो जा सकती है। बच्चा सोया हुआ है, एकाएक गलेमें सुरसुराहट पैदा होकर नींद खुल गयी और साँसमें एक तरहका साँय-साँय शब्द होकर, फिर गला घरघराने लगता है। यह घुंड़ी बहुत ही भयानक होती है। प्रकृत घुंड़ीमें पहले सूखी खाँसी और पीछे आक्षेपिक सूखी खाँसी होती है। इस अवस्थामें बार-बार खाँसनेके कारण गला फट जाता है, गलेमें दर्द होता है, बदन एकदम गर्म होकर रोगकी पूरी-पूरी हालत पैदा हो जाती है। इस खाँसीका शब्द कुत्तेके बच्चेकी बोली-जैसा होता है। यह रोग बहुत ही भयानक है।

(नकली या प्रकृत घुंड़ीमें) स्वर-भंगके साथ खाँसी, खाँसते-खाँसते दम अटक जाना ; बदनका चमड़ा सूखा, बेचैनी, बुखार, तेज प्यास वगैरह लक्षणोंमें ऐकोनाइट ३x, दस मिनटके अन्तरसे सेवन कराना चाहिये। ऐकोनाइटके प्रयोगके बाद ऊपर कहे लक्षणोंमें अगर कुछ कमी हो, तो स्पंजिया ३ नीचे लिखे लक्षणोंमें दस-पन्द्रह मिनटके अन्तरसे देना चाहिये :—खाँसते-खाँसते दम अटक जानेकी वजहसे बिचली रातमें बच्चेकी नींद खुल जाये, खाँसनेके समय साँय-साँय शब्द हो, स्वर लोप वगैरह लक्षण दिखाई दें, तो नकली घुंड़ीमें यह ज्यादा फायदा करता है। ऐकोनाइट और स्पंजियाके सेवनसे बीमारी कुछ घट जानेपर (अर्थात् बुखार छुट जाने और खाँसी कुछ सरल होनेपर) हिपर सल्फर ६। आक्षेपिक खाँसीके लिये सैम्बुकस २x अच्छी दवा है (खासकर रातके समय बच्चेकी नींद खुलकर एकाएक साँस रुकनेका भाव दिखाई देता हो) ; साँस लेनेकी राहकी नकली झिल्ली मोटी होकर बच्चेको साँस लेनेमें तकलीफ हो, तो ब्रोमिन ३x फी पन्द्रह मिनटका अन्तर देकर सेवन करना चाहिये। बच्चेका गला फैला हुआ और माथा पीछेकी ओर टेढ़ा हो पड़ना लक्षणमें, ऐण्टिम-टार्ट ६ देना चाहिये।

वेल ३ (सूखी कर्कश खाँसी, चेहरा तमतमाया, आँखें लाल, नाड़ी पूर्ण और कठिन); फास्फोरस ६ (स्वरलोप, दर्द, रोगका हमला होनेके बहुत देर बाद बलगम निकलना); कास्टिकम ६ (खाँसी, छातीमें दर्द या टटाना, स्वरभग या स्वर-लोप होना), आयोडिन ६ (स्वरयन्त्र-प्रदेशमें दर्द, विरक्त करनेवाली सूखी खाँसी, खाँसते वक्त बच्चा गलेको कसकर पकड लेता हो, साँसमें तकलीफ, गलेका साँय साँय करना) वगैरह दवाएँ कभी-कभी आवश्यक हो जाती है।

कभी-कभी झिल्लीमें प्रदाह पैदा हो जाता है, उस समय 'डिफ्थीरिया (झिल्लीका-प्रदाह) रोगकी दवाओमेसे दवा चुननी पडेगी ।

डा० सडर कहते हैं कि केल्के-फास (१२x—३०) केलि सल्फ (१२x—३०) और फेरम-फास (१२x—३०) पर्यायक्रमसे आधे घण्टेका अन्तर देकर सेवन करानेपर "प्रकृत घुड़ी खाँसी" आराम हो जाती है। उनके मतसे फेरम-फास १२x विचूर्ण ३० और केलि-म्यूर १२x चूर्ण, ३० (पर्यायक्रमसे प्रयोग) नकली घुड़ी खाँसी रोगकी प्रधान दवा है। (Vide C S Saunder's Biochemic Medicines, pp 41)।

आक्रमणवाली अवस्थामें सिर्फ गर्म पानी, इसके बाद पानीमें बना आरारूट, पानीकी, वार्ली दूध वगैरह हल्का पथ्य देना चाहिये। बच्चेको कभी उठाकर बैठा देनेकी चेष्टा न करनी चाहिये। प्रसूताके खान-पानकी ओर भी नजर रखनी पडेगी।

और-और दवाएँ तथा विवरण आदिके लिये स्नायुमडलके रोगवाले अध्यायमें "कठनलीका आक्षेप या घुड़ी खाँसी" देखना चाहिये।

बच्चे का ग्रन्थिक ज्वर—भी देखिये।

बच्चे का यक्ष्मा—आजकल निदान जाननेवालोंके मतसे बाप-माँसे बच्चेमें यह बीमारी नहीं आती है, परन्तु यह निःसशय रूपसे निश्चित हो गया है कि यक्ष्मा रोगका होना वशगत है। कभी-कभी न्युमोनिय

भी यक्ष्मामें परिणत हो जाता है। "शिशु-न्युमोनिया" और "यक्ष्मा-कास" देखिये।

हूप खाँसी (Whooping cough)—यह बच्चेकी एक तरहकी लरछुत खाँसी है। इस खाँसीके जोरके समय लम्बी साँस लेनेमें "हूप" शब्द होता है; रोग तीन-चार हफ्तेसे लेकर छः महीनेतक रह सकता है। बहुत दिनोंतक भोगने बाद, बच्चेको क्षय-कासतक हो जानेकी सम्भावना रहती है। कोई दूसरी दवा देनेके पहले पार्टुसिन ३० (pertussin), दिनमें तीन-चार बार करके खिलाना चाहिये। यदि एक हफ्तेतक यह दवा खिलानेपर कोई फायदा न हो, तो मिफाइटिस ३x फी दो घण्टेके अन्तरसे सेवन करानेपर अक्सर फायदा हो जाता है। जल्दी-जल्दी आक्रमण और साथ ही कै,पीला,बलगम निकलना, तकलीफ देनेवाली खाँसी स्वरभंग, रातमें (खासकर आधी रातके बाद) रोग बढ़नेके लक्षणमें, ड्रोसेरा ३x। ज्यादा खिंचाव होनेपर क्यूप्रम ६, इपिकाक ६, मैफ्थैलिन ३x विचूर्ण बेलेडोना ३, हाइड्रोसियानिक-एसिड ३x या ऐण्टिम-टार्ट ६ की भी बीच-बीचमें जरूरत पड़ जाती है। अच्छी तरह इलाज न होनेकी वजहसे अगर हूप कास न्युमोनिया या दमा, यक्ष्मा वगैरहमें बदल जाये, तो वह रोग और "श्वासयंत्रकी बीमारी" देखिये।

बच्चेकी डिफ्थीरिया—गलेके भीतर घाव, तालुके बगलकी गांठ (tonsil) सूजना और उसपर सफेद पर्दा पड़ जाना; निगलने और साँस लेनेमें तकलीफ, तेज बुखार वगैरह लक्षण प्रकट होनेपर, उसी समय अनुभवी चिकित्सककी सलाह लेनी चाहिये। जबतक डाक्टर न आ जाये, तबतक मर्क-सायानेटस ६ दो-दो घण्टेके अन्तरपर सेवन कराना चाहिये। "डिफ्थीरिया" (झिल्ली-प्रदाह) देखिये।

भूख न लगना—बहुत ज्यादा भारी चीजें खाना, खानेके बाद ही सो जाना, ज्यादा दवा सेवन करना, मेहनत बिलकुल न करना,

आलसीकी तरह दिन काटना, हमेशा रातमें जागना, अस्वास्थ्यकर स्थानमें रहना वगैरह कितने ही कारणोंसे बालक बालिकाओंको अग्नि मान्द्यकी बीमारी हो जाती है। नक्स वोम ६—३० इसकी बढ़िया दवा है। पल्सेटिला ३, कार्बो-वज ३x विचूर्ण, कैमोमिला १२, ऐण्टिम क्रूड ६, सल्फर ३०, जेण्टियाना लुटिया ३x वगैरहकी समय-समयपर जरूरत हो सकती है।

राक्षसी भूख—पेटमें कृमि रहना, पाचन यन्त्रकी गड़बड़ी वगैरह कारणोंसे बच्चेको बेतरह भूख लगा करती है। क्रिमिकी वजहसे ज्यादा भूख लगती हो, तो साइना २x—२००, पेट भरा रहनेपर भी राक्षसी भूख रह, तो स्टैफिसेग्रिया ६, भोजनके बाद भूख लगती हो, तो लाइको ३०, साइक्यूटा ६ या चायना ३।

बच्चेकी कब्जियत—गर्भावस्थामें माताको कब्जियत खाने पीनेका दोष, माताका दूध न पीकर गायका दूध पीने या यकृतकी क्रिया बिगड़ने की वजहसे बच्चेको कब्जियत हो सकती है। ब्रायोनिया ३—३० या ऐल्यूमिना ६ इसकी बढ़िया दवा है। (खानेके बाद ही कै हो जानेपर, ब्रायोनिया खूब काम करता है) खायी हुई चीजोंका कण मिला हुआ सफेद रंगका कड़ा मल, कब्जियत की वजहसे बच्चा दिनोंदिन दुबलाया जाता हो, तो कैल्के कार्ब ६। कड़ा मल बहुत तकलीफसे थोड़ा सा निकलता है और पेट वायुके कारण गड़गड़ाता हो, तो लाइको पोडियम ३०; पेटमें ऐंठन या पेट फूला रहना, मोटा लम्बा लेंड़ बहुत तकलीफसे निकलना लक्षणमें नक्स-वोमिका ३०। पतले दस्तके बाद या जुलाब लेनेके बाद कब्जियत और उसी कारणसे गांठ गांठ मल निकलना—ओपियम ३। कब्जियतकी ही धातु हो, तो बीच बीचमें सल्फर ३०। किसी दवा से भी फायदा न हो, पेट फूलता हो मल कड़ा और लाल रंगका रहे, इन लक्षणोंमें प्लम्बम ६। पाकाशयके यन्त्रोंकी गड़बड़ी और जीभपर सफेद दाग होनेपर, ऐण्टिम क्रूड ३०, दूध

पिलानेवालीको हल्की चीजें खानी चाहियें। जरूरत पड़नेपर ग्लिसरिनके साथ गर्म पानीकी वत्ती भी बच्चेके मलद्वारमें घुसा देनेपर सहजमें ही पाखाना हो जाता है। पेट फूलनेकी वजहसे बहुत तकलीफ होती हो, तो पाँच-छः बून्द तारपीनका तेल बच्चेके पेटपर छिड़ककर अंगुलीसे रगड़ देना चाहिये या मुक्ताझुरीका पत्ता पीसकर मलद्वारपर लेप कर देनेसे सहजमें ही पाखाना हो जाता है।

बच्चेकी पेटकी पेंठन—माँके खाने-पीनेकी गड़बड़ीसे अथवा बच्चेका ज्यादा गायका दूध पीना, सर्दी लगना या क्रिमिकी वजहसे पेटमें ऐंठन होनेपर बच्चा रह रहकर रो उठता है। पेट फूला और कड़ा रहता है, इसी वजहसे बच्चा बेचैन रहता है और घुटने पेटमें गड़ाकर रखना चाहता है, हमेशा गोदीमें चढ़कर घूमना चाहता है, सब्ज रंगका पतला दस्त और हाथ-पैर ठण्डे रहनेके लक्षणमें, कैमोमिला १२। शिशु हगनेकी चेष्टा करता हो, पर मल न निकलकर वायु निकलता हो (या मल खूब कम निकलनेपर) तथा क्रिमि रहनेपर, साइना ३x फायदा करता है। रोज ठीक एक ही वक्तपर ऐंठन होनेपर चायना ६। सड़ी खट्टी बदबूसे भरा हरे रंगका पतला दस्त या भाँगकी गोलीकी तरह दस्त, नाभिके चारों ओर ऐंठन, कै या मिचलीके लक्षणमें, इपिकाक ३। मल रुकनेकी वजहसे ऐंठन या नाभिके ऊपरी भागमें ऐंठनके लक्षणमें, नक्स-वोमिका ३०। दाँत निकलनेके समय हैजेकी तरह दस्त और साथ ही अकड़न रहनेपर, कैम्फर ब्रोमाइड ३x विचूर्ण भी फायदा करता है। भारी चीजें खानेकी वजहसे पेटमें ऐंठन हो जाये, तो गायका दूध पिलाना उचित नहीं है। थोड़ी अजवायन, कपड़ेमें बाँध, गर्मकर, नाभिके चारों ओर सेंक देनेसे फायदा होता है।

बच्चेकी शूल-वेदना—बच्चेकी नाभिके चारों ओर रह-रहकर बहुत ही तकलीफ देनेवाली ऐंठन या खींचन हो जाती है, इसीको "शूल-वेदना" कहते हैं। खटाई, कभी-कभी दाल, खीरा, ककड़ी, बरफ,

खराब दूध, ज्यादा गुड़ या तीता खाना, क्रिमि रहना वगैरह कारणोंसे बच्चोंको यह तेज शूल वेदना हुआ करती है। शूल-वेदना बहुत तरहकी होती है। जैसे—अम्ल-शूल, वायु-शूल, पित्त-शूल, सीसक शूल वगैरह।

(१) भोजनके तीन-चार घण्टे बाद—खाया हुआ पदार्थ खट्टा होकर के हो जाना, उसके साथ सीनेमें जलन, पेटमें भयानक दर्द वगैरहका नाम "अम्ल-शूल" है। बीमारी पुरानी पड जानेपर खट्टी के नहीं होती, सिर्फ पेटमें तेज दद होता है। पल्सेटिला ६, नक्स वोमिका ३, कोलोसिन्थ ६, एसिड सल्फ ३x, अम्ल-शूलकी उत्कृष्ट दवाएँ हैं।

(२) पेटमें ज्यादा वायु सचित होकर वहीं रुकी रहनेकी वजहसे पेटमें बहुत दर्द हुआ करता है। इसे "वायु-शूल" कहते हैं। बेलेडोना ३, कैमोमिला ६, कोलोसिन्थ ६, नक्स-वोम ३ और चायना ६ इसकी प्रधान दवाएं हैं।

(३) यकृतसे छोटे-छोटे पित्तके टुकडे आँतोंमें उतरनेसे यकृतमें बहुत दर्द होता है और पित्तकी कै होती है, इसीको "पित्त-शूल" कहते हैं। ब्रायोनिया ३, नक्स-वोम ३, चायना ६ इपिकाक ३x वगैरह "पित्त-शूलमें" फायदा करते हैं।

(४) बहुत दिनोंतक सीसा (lead) का काम करनेपर पेट, छाती और दोनों हाथोंमें दर्द पैदा होकर बेचैन कर देता है। इसीका नाम "सीसक-शूल" है। ओपियम १x—३x का सेवन और पेटपर गर्म पानीका सेंक देनेसे यह अच्छा होता है।

(५) क्रिमिकी वजहसे पेटमें तकलीफ देनेवाला दर्द होता हो, तो साइना २x या सेण्टोनाइन २x विचूर्णका प्रयोग करनेपर फायदा करता है (इस ग्रन्थका "शूल-वेदना" "सीसक-शूल", 'क्रिमि' और "वक्रकीट" रोगकी दवाएँ देखिये)।

बच्चेका उपांग प्रदाह—"ऐपेण्डिक्स प्रदाह" देखिये आजकल अमेरिकाके बहुतसे बच्चोंका उपाग काट डाला जाता है; परन्तु होमियो-

पैथिकके मतसे अच्छी तरह इलाज होनेपर उतने डरकी बात नहीं रहती। लैकेसिस ६ दो घण्टेके अन्तरपर सेवन करानेसे आशातीत फल पाया जाता है।

बच्चेका अतिसार—भारी चीजें खाना, क्रिमि होना या दाँत निकलना वगैरह कारणोंसे पतले दस्त आते हैं। यदि सर्दी लगकर पतले दस्त आयें और उसके साथ ही बुखार रहे, तो ऐकोनाइट ३x देना चाहिये। भारी चीजें खानेके कारण अतिसार होनेपर—पल्सेटिला ६। दाँत निकलनेके समय सर्दी लगकर अतिसार होनेपर (खासकर बच्चेका चिड़चिड़ा स्वभाव होनेपर), कैमोमिला ६। पतले दस्तके साथ ही कै या मिचली रहनेपर, इपिकाक ३x। पेट फूलनेकी वजहसे तकलीफ ; नाभिके चारों ओर पेड़ूमें ऐंठन, चेहरा उतरा हुआ और कँपकँपीके लक्षणमें, पल्सेटिला ३०। पेटमें ऐंठनकी वजहसे सामनेकी ओर झुक पड़ना कोलोसिन्थ ६। पेटके दर्दसे बच्चा बेचैन हो पड़े और इसका कारण समझमें न आये, तो मैग्ने-फास १२x विचूर्ण गर्म पानीके साथ सेवन करना चाहिये। खट्टी गन्ध मिला हुआ गांठ या फेन-भरा ज्यादा परिमाणमें मल निकलनेके साथ ही-साथ पेटमें ऐंठन रहनेपर, रियुम ३ (खासकर दाँत निकलनेके समय)। कीचकी तरह दस्त और प्यास रहनेपर मर्क्युरियस-डलसिस ६। आँव मिला दस्त और उसके साथ ही खून दिखाई देनेपर, मर्क-कोर ६। चावलके धोवनकी तरह दस्त होनेपर, विरेट्रम-ऐल्बम ६। कैल्के-कार्ब ३० और कार्बो-वेज ३० की भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। पुराने अतिसारमें—आर्सेनिक ३०, सल्फर ३०। "अतिसार" और "आमाशय" रोग देखिये।

गर्मीके दिनोंमें बच्चेका अतिसार एक बड़ा ही संकटजनक रोग है। बड़ी होशियारीसे इसका इलाज करना चाहिये। एक तरहके उद्भिदाणु शायद इस बीमारीके मुख्य कारण हैं। रोगीके दस्तमें ये दिखाई देते हैं। मक्खियोंसे यह बीमारी फैलती है। जिससे बच्चेके बदनपर

(खासकर हाथ और मुँहपर) मक्खियाँ न बैठने पायें, इसका बन्दोवस्त करना उचित है।

बच्चेका अजीर्ण—भोजनके कुछ बाद ही पेटमें सर्दी मालूम होना, पेटमें हूदका लगना, हिचकी आना, हिचकी बन्द होनेपर पेटमें ऐंठन गड़गड़ाहट, बिलकुल ही हजम न होना, मल कभी खूब पतला, कभी कड़ा, इसके अलावा खूब भूख और प्यास, रोगीका धीरे-धीरे दुबला, कमजोर और विमर्ष रहना और पाखाना होना वगैरह इस बीमारीके प्रधान लक्षण है। जल्द न पचनेवाली चीजें खाना, ज्यादा दवा सेवन करना, तर जगहोंमें रहना वगैरह कारणोंसे बीमारी होती है। आर्सेनिक ६ या चायना ६ इस रोगकी महौषधि है। ओलियेण्डर ३, नक्स ३० और सल्फर ३० की भी बीच बीचमें जरूरत पड़ सकती है।

मुँहमें पानी भर आना—खूब गरिष्ठ चीजें खाना, बहुत गर्म या बहुत ठण्डा पानी पीना, उपवास करना, पेटमें क्रिमि रहना वगैरह कारणोंसे बच्चोंके मुँहमें पानी भर आया करता है। नक्स-वोम ३, पल्स ३, कैल्के-कार्ब ६, आर्सेनिक ३, कार्बो वेज ३x विचूर्ण, इग्नेशिया ६, सल्फर ३० इसकी प्रधान दवाएं है। क्रिमिकी वजहसे मुँहमें बराबर पानी भर आता हो, तो साइना २x—२००। "मुँहमें पानी भरना" रोग देखिये।

अंत्र-प्रदाह (Enteritis)—कम्प होकर बुखार, तारकी तरह तेज नाड़ी, प्यास, कै या ओकाई, पेटमें (खासकर नाभिके चारों ओर) तेज दर्द, घुटने हमेशा ऊँचे कर रखना और कब्जियत तथा पतले दस्त आनेपर समझना चाहिये, कि बच्चेको अंत्र प्रदाह हुआ है। सर्दी लगना, भोजनके दोष, विरेचक दवाओंका सेवन, क्रिमि-दोष वगैरह इस बीमारीके पैदा होनेके खास कारण हैं। रोग शुरू होते ही (खासकर सर्दी लगकर बुखार वगैरह होनेपर), ऐकोनाइट ३x। नाभिके चारों ओर जलन करनेवाला दर्द, तेज कै, गहरी अवसन्नता वगैरह लक्षणोंमें, आर्सेनिक

३x—३० । पित्तकी के, पेट ढोलकी तरह फूलना, पेटमें तेज दर्द वगैरह लक्षणोंमें—कोलोसिन्थ ३ । पेट कड़ा, फूला और दर्द, काँखना, आँव मिला खूनी दस्त वगैरह लक्षणमें, मर्क-कोर ६ । अतिसार और कामला रोग होनेके लक्षणमें, पोडोफाइलम ६ । पुरानी बीमारीमें, आर्जनाई ६ पेटपर गर्म पानीका सेंक देना और हल्का पथ्य देना उचित है। "अंत्र-प्रदाह" देखिये ।

बच्चेका हैजा—एकाएक पानीकी तरह पतला, हरा या पीला (कभी-कभी लसदार या खून-मिला या अनपचका) दस्त, दूध आदि के, सुस्ती, शरीर गर्म, परन्तु हाथ-पैर ठण्डे होना वगैरह बच्चेके हैजेके प्रधान लक्षण हैं। यह बहुत बड़ी बीमारी है। इथ्यूजा ६—३० इसकी बढ़िया दवा है। ज्यादा बदबूदार दस्त और सवेरेके वक्त बीमारीका बढ़ना—पोडोफालम ६ । शरीर नीला, हिमांग, सर हिलाना, खींचन या अकड़न, हिचकी हाथ या हाथकी अंगुलीका आप-ही-आप हिलते रहना, सुस्ती वगैरह माथेमें खूनकी कमीसे पैदा हुए विकारके लक्षणमें "कैलि-ब्रोमेटम ३x" विचूर्ण देना चाहिये । ऐकोनाइट ३, क्रोटन ३, कैमोमिला ६, आर्सेनिक ३ या कैल्केरिया ऐसेटिका ३ विचूर्ण कार्बो-वेज ३०, इपिकाक ६, फास्फो ६, चायना ३, विरेट्रम ६, क्यूप्रम ६, क्यूप्रम-आर्स ३x विचूर्ण, सिकेलि ६, सल्फर ३० रुबिनीका स्पिरिट-कैम्फर वगैरहकी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। दूध पिलानेवालीको आरारूट वगैरह हल्की चीजें देनी चाहिये । पथ्य और दूसरी-दूसरी दवाओंके लिये "हैजा" और "बच्चेका अतिसार" देखना चाहिये । इस भयानक बीमारीकी पूरी-पूरी जानकारीके लिये हमारा "हैजा और उसकी चिकित्सा" का तीसरा परिच्छेद देखिये ।

बच्चेका कृमि-दोष—बच्चेके लिये क्रिमि बहुत ही नुकसान पहुँचानेवाली चीज है। पानीमें नमक मिलाकर पिचकारी देनेसे बच्चोंकी छोटी क्रिमि अक्सर पेटसे निकल जाती है। अगर इस

उपायसे बीमारी अच्छी न हो, तो "क्रिमि" अध्यायसे दवा चुनकर बच्चेको सेवन कराना होगा। क्रिमिका दोष रहनेपर बच्चेको बुखार, हैजा वगैरह बीमारियाँ और रक्तामाशय बहुत बार कठिन और दुरारोग्य हो जाता है। इस बातको बच्चे के पालनेवालोंको याद रखनी चाहिये।

बच्चेकी पेशाबकी बीमारी—किसी-किसी बच्चेको पेशाब वजन और बादमें इतना ज्यादा होता है, कि एक-एक बार सेर-दो-सेरतक हो जाता है और फी घण्टे एक बार या दो बार पेशाब होता है। इसलिये उन्हें पूरी तरहसे नींद नहीं आने पाती और शरीर एकदम रक्तसे शून्य और पीला पड़ जाता है। एसिड फास ३x—६ और यूरेनियम नाइट्रिक ३ विचूर्ण इस बीमारीकी महौषधि है।

नींदमें पेशाब—स्नायविक उत्तेजना, क्रिमि-दोष वगैरह कारणोंसे मूत्राशयकी धारण शक्ति घट जाती है और बच्चे नींदकी हालतमें अनजानमें ही पेशाब कर देते हैं। क्रिमिकी वजहसे होनेपर, साइना २x—२०० (खासकर यदि कुछ देरतक रखनेपर पेशाब दूधकी तरह हो जाये)। गहरी नींदमें होनेपर, बेलेडोना ६। दिनमें या रातमें पेशाब रोकनेमें अशक्त या पेशाब करनेके सपने देखनेपर, इक्विसिटम θ—६। दिनमें या रातमें पेशाब रोकनेमें अशक्त होनेपर, जेलसिमियम ३x। पेशाबमें ज्यादा बदबू रहनेपर, बेंजोयिक-एसिड ३x पेशाबमें युरिक-एसिड रहनेपर—लाइकोपोडियम ६। "मूलेन-आयल" इसकी मशहूर दवा है। रातमें बच्चेको बीच-बीचमें जगाकर पेशाब करानेसे बिना किसी दवाके ही यह बीमारी अच्छी हो जाती है।

पेशाब बन्द—तुरन्तके जनमे हुए बच्चेको अगर २४ घण्टेमें पेशाब न हो जाये, तो घबड़ाकर कोई दवा दे देनेकी जरूरत नहीं है; पर अगर छत्तीस घण्टेतक पेशाब न हो और बच्चा छटपट करता हो, तो एकोनाइट ३ दो-एक मात्रा देना होगा। बेलेडोना ६, कैन्थरिस ६ या आपियम ३० की भी बीच-बीचमें जरूरत पड़ जाती ।

कुछ ज्यादा उम्रके बच्चोंको भी कभी-कभी पेशाब न होकर उनकी पेशाववाली जगह फूल उठती है या गर्म हो जाती है और वह तकलीफसे छटपटाने लगता है। तलपेट (पेड़ू) गर्म पानीका सेंक देनेसे पेशाव हो सकता है। इससे फायदा न हो, तो "मूत्र-स्तम्भ" और "मूत्र-नाश" तथा "मूत्र-कृच्छ्रता" रोग देखना चाहिये।

खूनका पेशाब—खसरा, चेचक, ववासीर, पथरी वगैरह बीमारियोंमें कभी-कभी खूनका पेशाब हुआ करता है। कैम्फर θ, कैंथरिस ३x और मिलिफोलियम १x इसकी बढ़िया दवाएँ हैं। गिर जाने या चोट लगनेकी वजहसे खूनका पेशाव होनेपर, आर्निका ३x। काले खूनका पेशाव होनेपर हैमामेलिस १x सेवन करना चाहिये।

बिगड़ा हुआ पेशाब—(क) पेशावका रंग बिगड़ना—पेशावका रंग काला होनेपर, कोलचिकम ६। पेशाव गहरा काला होनेपर, एपिस ६ या टेरिबिन्थ ६। पेशाब गहरा काला होनेपर, एपिस ६ या टेरिबिन्थ ६ या कैन्थरिस ६। पेशाब खूब गदला होनेपर, बेलेडोना ६, किनिन-सल्फ ६, साइना ३—२००, लाइको १२, एसिड-फास ६ या टेरिबिन्थ ६। पेशावका रंग पीला होनेपर, सियानोथस ३x। क्रिमिकी वजहसे सफेद रंगका पेशाब होनेपर, सायना ३x—२०० । पेशाबका रंग खड़िया घोला जैसा या दूधकी तरह होनेपर, साइना ३x—२००, एसिड-फास ६ या बायोला ओडो ३x। पेशाब काले रंगका होनेपर, ऐकोनाइट ३, एपिस ६, बेलेडोना ६, ब्रायो ६, कैन्थरिस ६ या टेरिबिन्थ ६। पीले रंगके पेशावमें, सियोनोथस ३x, कैमोमिला ६ या कैलि-फास १२x विचूर्ण। पेशाव धुमैला होनेपर, टेरिबिन्थ ६ या बेञ्जोयिक-एसिड ६। पेशाव गाढ़ा होनेपर, बेञ्जोयिक एसिड ६, कैम्फर ३०, हिपर-सल्फर ६, मर्क-कोर ६ या फास्फोरस ३। कालो आभा लिये या भूरे रंगका बहुत ज्यादा पेशाब और उसमें सफेद तलछटके लक्षणमें कार्बो-वेज ३०।

(ख) पेशाबमें बदबू—पेशाब सड़ी गन्ध-भरा होनेपर—बेञ्जोयिक एसिड ६, लाइको १२, नाइट्रिक-एसिड ३० या सिपिया ६। मछलीके धोवनकी तरह गन्ध होनेपर, युरेन्स नाइट्रिक ३। लहसुनकी बदबू होनेपर, क्युप्रम-आर्स ६। तेज गन्ध होनेपर, नाइट्रिक एसिड ३०। बेञ्जोयिक एसिड ६, बोरैक्स ६, किनिनम-सल्फ ६, सल्फर ३०। बिल्लीके पेशाबको तरह बदबू होनेपर, नाइट्रिक-एसिड ३० या बेंजोयिक एसिड ६। खट्टी गन्ध होनेपर, कैल्के-कार्ब ३० या ग्रैफाइटिस ३०। मीठी गन्ध होनेपर, टेरिबिन्थस ६।

(ग) पेशाबकी तलछट—पित्त-मिले पेशाबमें, चेलिडोनियम ३० या नेट्रम-सल्फ १२ विचूर्ण ("यकृतकी बीमारी" देखिये)। पेशाबके नीचे लाल तलछट जमता हो—बार्बे-वल्गे ३X, मर्क-कोर ६, फास ६, प्लम्ब ६, टेरिब ६, कैन्थरिस ६ या लाइको १२ ("लाल रंगका पेशाब" देखिये)। पेशाबमें काफीके चूरकी तरह कुछ जमनेपर, टेरिबिन्थ ६, या हेलिबोर ३X। पेशाब गोंदकी तरह होनेपर, एसिड-फास ६, कैन्थरिस ६, पल्स ३० या सर्सा ३०। पेशाबमें लीथक-एसिड या ईंटकी चूरकी तरह तलछट जमनेपर, लाइको ३०, नाइट्रिक-एसिड ३० या नक्स-वोमिका ३० ("मूत्र-पथरी" देखिये)) सफेद तलछट जमनेपर और उसके साथ पीठमें दर्द रहनेपर आक्जैलिक-एसिड ६ या ग्रैफाइटिस ३०।

बच्चेका यकृत—बार-बार बुखार (खासकर रातके अन्तिम भागमें बुखार) होकर अगर बच्चा दुबला होता जाये और उसमें यकृतकी गड़बड़ी दिखाई दे और देखते-देखते यकृत बढ़ उठे और कड़ा हो जाये, इसके बाद भोजनमें अरुचि, पेट बढ़ा हुआ, कब्जियत या पतले दस्त (मलका रंग सफेद या काला अथवा आँव या खून मिला), कामला, सब शरीर पीला हो जाना वगैरह कुलक्षण पैदा हो जाये, तो समझना चाहिये कि उसका यकृत खराब हो गया है। अगर दो वर्षसे भी कम

उम्रके लड़केको यह बीमारी हो जाये, तो बड़े डरकी बात है और बड़ी सावधानीसे उसका इलाज कराना चाहिये। "कैल्के-आर्स" ३० इस बीमारीकी प्रधान दवा है। कब्जियत—सल्फर ३० या कैल्के-कार्ब ६। पतले दस्त आनेपर—पोडोफाइलम ६। यकृत कड़ा रहनेपर—मर्क-आयोड ३ या कैल्के-कार्ब ६। कामलामें—मर्क ६; मुँहमें घाव होनेपर—नाइट्रिक-एसिड ६। कष्टकर खाँसीमें—फास्फोरस ६। बच्चा बहुत दुबला हो जानेपर—आर्जेण्ट-नाई ६। सूजन (शोथ) होनेपर आर्स ६ एपिस ३ देना चाहिये। सल्फर ३०, नक्स-वोमिका ६, ब्रायोनिया ६ वगैरह दवाओंकी भी कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। पथ्यकी तरफ ज्यादा नजर रखनी चाहिये। दूध पीना एकदम मना है। पानीकी बार्ली देना चाहिये। दूध पीलानेवालीको अगर अम्लकी बीमारी न हो या स्तनका दूध बिगड़ गया हो, तो बीच-बीचमें उसको थोड़ा-थोड़ा दूध पीने देना चाहिये। गायके छोटे बच्चेका गोबर या पेशाब गर्मकर यकृतपर सेंक देना अच्छा है। "यकृत-प्रदाह", "कामला" "शोथ" और "बच्चेका कामला" देखना चाहिये। अगर पूर्णिमा और आमावस्याको बीमारी बराबर बढ़ती रहे, तो साइलिसिया ६—२०० देना चाहिये।

बच्चेको या उसकी दूध पीलानेवालीको "चूनेका पानी न पिलाया जाये और दूध पिलानेवालीको भी पानीके साथ "चना" न खाना चाहिये।

बच्चेका रोना—बच्चा रोता हो, तो समझ लेना चाहिये कि उसे कोई बीमारी या किसी तरहकी तकलीफ है। इसको जाँचना उचित है कि बच्चा किस वजहसे रो रहा है। रोते वक्त अगर कानपर हाथ लगाये तो कानकी बीमारी, मुँहमें अंगुली डालकर रोता हो, तो दाँत निकलनेकी तकलीफ, घुटने सिकोड़कर पेटपर रखता हो, तो पेटका ऐंठना, कर्कश स्वरसे रोता हो, तो बोलनेवाले यंत्रकी तकलीफ; खाँसते-

बच्चेकी बेकायदा बाढ़—बच्चा कभी बेतरह लम्बा होता है या सिर्फ उसकी छातीकी लम्बाई बढ़ती है। सदा सोनेकी प्रबल इच्छा रहती है, पचनेकी और याददाश्तकी ताकत घट जाती है, चल नहीं सकता, दुबलापन, साँसमें कष्ट, कलेजेका धड़कना वगैरह उपसर्ग दिखाई देते हैं। पाइनस सिलवेस्ट्रीस θ—३ (खासकर नीचेका अंग दुबला और घुटने कमजोर होनेपर, ग्रंथिवात खुजलाहट वगैरह लक्षणमें) सल्फर ३० (हाथ-पैर लिक-लिक, पतले और खेलने या चलनेमें असमर्थ होनेपर), कैल्के-फास १२ विचूर्ण कैल्के कार्ब ३० और एबिस कैन ३x इस रोगकी बढ़िया दवाएँ हैं।

बच्चेका दुबलापन—बच्चा दिनोंदिन सूखता जाता हो—सल्फर ३०—२००, कैल्के-फास ६x—३० विचूर्ण, एसिड-नाई ६, कैल्के-कार्ब ३०, ऐब्रोटेनम ३—२००, नेट्रम-म्यूर ३०, साइलिसिया ६—३० वगैरह दवाएँ फायदेमन्द हैं। साधारण स्वास्थ्यके नियम पालन करने चाहिये। थोड़ा और हल्की चीजें खानेको देनी चाहिये।

सुखंडी (Marasmus) अच्छी तरह न पचनेकी वजहसे बच्चेका शरीर पुष्ट न होकर सूखता जाये और शरीरको स्वाभाविक गर्मी (९८°४) से घटी रहे, तो समझना चाहिये कि सुखण्डीकी बीमारी हो गयी है। पहले सल्फर ३०, इसके बाद कैल्के-कार्ब ३०, इसकी उत्कृष्ट दवा हैं। बच्चा खाता भरपूर हो पर दुबला होता जाता हो, तो ऐब्रोटेनम ३० अच्छा है। 'धातु-दोषकी दवाओंमेंसे दवाएँ चुनकर कभी-कभी प्रयोग करनी चाहिये। पुष्ट भोजन, शुद्ध हवाका सेवन शुद्ध सरसोंका तेल बदनमें कुछ गर्मकर मालिश करना, अच्छे मकानमें रहना वगैरह स्वास्थ्यके नियम करने चाहिये।

धवल रोग (Leucoderma)—इसे बहुतसे 'श्वेत-कुष्ठ' भी कहा करते हैं; परन्तु वास्तवमें यह कुष्ठ या किसी तरहका चर्म-रोग नहीं हैं। इसलिये रोगीको अलग रखने या घृणा करनेकी कोई जरूरत नहीं

है। वास्तवमें स्वाभाविक रञ्जक (pigment) की कमीकी वजहसे किसी-किसीका चमड़ेका रंग बिगड़ दूधकी तरह जब सादा दिखाई देने लगता है, तब हमलोग कहते हैं, कि इसे 'धवल' रोग या सफेद कुष्ठ हो गया है। यद्यपि इसके निदान-तत्त्वका अभीतक पता ही नहीं लगा है, तथापि बच्चेकी सब बदनकी (या सिर्फ स्नायुओंकी कमजोरी ही इसका असली कारण है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। अक्सर आठ वर्षसे कम उम्रवाले बच्चेको यह बीमारी होती देखी जाती है। हाथ गलेके पीछे, चेहरा और छातीके ऊपर पहले छोटे-छोटे सादे दाग होते दिखाई देते हैं। इसके बाद ये दाग सादे चकत्तेके रूपमें हो जाते हैं। अन्तमें ये चकत्ते आपसमें मिलकर एक बड़े आकारके छालेकी तरह दिखाई देते हैं। पहले ही कहा गया है कि यह कोई-चर्म-रोग नहीं है। बच्चेके सब शरीरका स्वास्थ्य खराब होने या स्नायुमंडलकी क्रियामें रुकावट पड़नेकी वजहसे उसका चमड़ा दूधकी तरह सफेद हो जाता है। इसलिये जो दवाएँ बच्चोंके सब बदनके स्वास्थ्य और स्नायुमंडलके ऊपर काम करती हैं, वे ही सब दवाएँ इस रोगमें भी फायदा करती हैं। चर्म-रोगकी दवाएँ देकर कोई फायदा नहीं हो सकता है। आर्सेनिक-ऐल्बम ३० या आर्सेनिक-आयोड ६x विचूर्ण कई सप्ताह व्यवहार करनेपर बीमारी धीरे-धीरे अच्छी होने लगती है, परन्तु हमें मालूम होता है कि "आर्स सल्फ-फ्लेवम" ६x विचूर्णके सेवनसे ज्यादा फायदा हो सकता है। यदि बहुत दिनोंतक आर्सेनिक देनेपर भी कोई फायदा न हो (खासकर छातीका धड़कना साँस लेने और छोड़नेमें रुकावट वगैरह सुस्तीके लक्षणोंमें) तो फास्फोरस ६ के प्रयोगसे बहुतसे मौकेपर आशाके अनुसार फायदा होता है। सोये रहनेपर आराम मालूम होना, नींद न आना (खासकर रातमें तीन बजेके बाद), मानसिक अवसन्नता स्मरण शक्तिका गायब हो जाना वगैरह लक्षणोंमें जिंक-फास १x—३x विचूर्ण। हिस्टीरिया रोगवाली औरतोंके धवल रोगकी इग्नेशिया ६

अच्छी दवा है। सल्फर ३०, थूजा ६ कैल्के-कार्ब ३० कैल्के-फास ६ विचूर्ण ऐण्टिम-टार्ट ६, नाइट्रिक एसिड ६, X-Ray 30, जिकम ६ और रस-टक्स ६ भी कभी-कभी फायदा करते हैं। किसी चीजके बाहरी प्रयोगकी जरूरत नहीं है (परन्तु अखरोटका गुदा धवलपर घसनेसे फायदा हो सकता है) हमलोग बुचकी दाना और पीपलकी जड़ गायके छोटे बच्चेके पेशावके साथ पीसकर लेप लगाकर एक बच्चेको आराम कर चुके हैं ; पर आठ वर्ष बाद उसे फिर धवल रोग हो गया था, जो उपयुक्त होमियोपैथिक दवाओंके सेवनसे आराम हो गया।

बच्चेको अच्छी तरह भूख लगे और पचानेकी ताकत बढ़ती रहे, इसका बन्दोवस्त करना चाहिये। दूध, काडलिवर आयल पेट्रोलियम-इमलशन, पके हुए पुष्ट करनेवाले फल और दूसरी-दूसरी पुष्टकर चीजें (जो स्नायु और खून पैदा करती हों) खाना और बढ़िया आवहवावाले पहाड़ी स्थान या समुद्रके किनारेकी जगहमें कुछ दिनोंतक रहना अच्छा है। रोगवाले समूचे शरीरमें गंगाकी मिट्टी लगाना और गंगाका नहाना भी फायदा करता है। मिठाई अँचार वगैरह खट्टी चीजें और जो पदार्थ पचनेकी क्रियामें बाधा पहुँचाते हों, उन्हें छोड़ देना चाहिये (Dr. Fisher's Diseases of Children देखिये)।

कटे ओंठ—किसी-किसी परिवारमें लगातार छिन्नोष्ठ या कटे ओंठ (hare lip) पैदा होता है। आगे होनेवाले बच्चोंको इससे बचानेके लिये गर्भावस्थामें तीनसे सात महीनेतक गर्भिणीको कैल्के-सल्फ १२x विचूर्ण रोज सवेरे और शामको एक-एक ग्रेन खिला देना चाहिये।

ऐसे ओंठ पैदा होनेपर कोई-कोई अभिभावक नश्तर लगवा देते हैं। ऐसे मौकेपर (नश्तरका जखम सुखानेके लिये) कैलेण्डुला तेल लगानसे खूब फायदा होता है।

तुतलाना (Stammering)—स्ट्रैमोनियम ३ या हायोसायमस ३ कुछ दिनोंतक व्यवहार करनेपर फायदा हो सकता है। गुड़, मिठाई

खाना और हमेशा क्रोधी बने रहना मना है। सवेरे, शामको जीभ धोना और बोलनेके वक्त मार्बल गोली या छोटे पत्थरका टुकड़ा जीभपर रख देना फायदेमन्द है।

लंगड़ाकर चलना (Limping)—गिर जाने या चोट लगनेकी वजहसे लँगड़ाकर चलनेपर, आर्निका ३। कमजोरी धातुगत दोषसे लँगड़ानेपर—सल्फर ३० या कैल्के-कार्ब ३० देना चाहिये।

बालास्थि-विकृति (Rickets)—बच्चेकी हड्डीमें चूनेका भाग कम रहनेपर हड्डियाँ कायदेसे न गठित होकर धीरे-धीरे कोमल, बढ़ी हुई, टेढ़ी और कमजोर हुआ करती हैं। पतला दस्त "माथेपर पसीना", समयपर दाँत न निकलना, हाथ-पैरकी गाँठें मोटी और दर्द-भरी, शिरकी हड्डी फूलकर बड़ी होना, छातीके पंजरेकी सन्धियाँ ऊँची होना, मांस पेशियाँ कोमल, हड्डियाँ अपुष्ट, परिश्रम न कर सकना और पीठकी रीढ़ टेढ़ी हो जाना—इस बीमारीके प्रधान लक्षण हैं। कैल्के-फास १२x विचूर्ण इस रोगकी प्रधान दवा है (खासकर "दुबले और रक्त हीन" बच्चोंके लिये)। "मोटे ताजे" बच्चोंके लिये कैल्के-कार्ब ६—३०। दुबले बच्चोंके लिये आर्सेनिक ६ या आर्सेनिक आयोड ६x और अच्छी तरह पोषण न होनेकी वजहसे घुमल रोगके साथ रिकेट होनेपर, फास्फोरस ३—३० खूब फायदा करता है। साइलिशिया ६, एसिड-फास ६ या सल्फर ३० भी कभी-कभी फायदा करते। जिस जगहकी मिट्टी दूषिया हो, वहाँ बच्चेको वायु परिवर्त्तनके लिये भेजना अच्छा है। अच्छे दूध और तरकारीका भी प्रबन्ध रखना जरूरी है।

धातु या कौलिक पीड़ा—नीचे लिखी तीन बीमारियाँ बहुधा मौकोंपर बाप माँसे ही बच्चेमें आती हैं :—(क) गुटिका रोग। (ख) गण्डमाला। (ग) उपदंश।

(क) गुटिकायुक्त-धातु (Tuberculosis)—फेफड़ा, मस्तिष्क, आँत आदि बच्चेका कोई भी शारीरिक यन्त्र या तन्तुमें "गुटिकाएँ",

(tubercules) पैदा हो जाती हैं। ये गुटिकाएँ धुमैली या पीले रंगके पनीरके टुकड़े जैसी दिखाई देती हैं और उनमें जीवाणु (tuberculous bacilli) पाये जाते हैं। फेफड़ेमें गुटिका होनेपर "क्षयकास" (phthisis) रोग पैदा होता है। मस्तिष्कमें होनेपर "मस्तिष्क-झिल्ली-प्रदाह (tubercular meningitis)" रोग होता है इत्यादि।

फास्फोरस ६—इस रोगकी प्रधान दवा है। बच्चा एकदम सुस्त या रक्त-हीन हो, तो कैल्केरिया-फास ६x चूर्ण देना चाहिये। मुँहसे खून आये या नाकसे खून निकले, ज्वर, ऋतु-कालमें रजःस्राव न हो वगैरह लक्षणोंमें—फेरम-फास ६x उपयोगी हैं। बुखार, पसीना, पतले दस्त, खाँसी (शामको और सवेरे बढ़ना), फेफड़ेमें तेज दर्द (हिलने-डुलनेसे बढ़ना) वगैरह लक्षणोंमें आर्सेनिक ६ सेवन कराना चाहिये। हिपर-सल्फर ६, साइलिसिया ३०, सल्फर ३०, लाइकोपोडियम १२ और आयोडियम ६ की कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। वैसिलिनम और पाइरोजेनके प्रयोगसे डाक्टर फियरको कोई लाभ नहीं मालूम हुआ।

पुष्ट चीज़ें खाना, खुली शुद्ध हवाका सेवन साफ-सुथरे प्रशस्त घरमें रहना वगैरह स्वास्थ्यके नियम पालन करने चाहियें।

(ख) **गंडमाला** (Scrofula)—यह ऊपर कहे हुए गुटिका रोगकी एक खास अवस्था है। इस बीमारीमें शरीरकी गाँठें (खासकर गर्दनकी ग्रन्थियाँ) फूलकर दर्द पैदा होता है। अक्सर पेटकी बीमारी या सर्दी हुआ करती है और आँख तथा कानसे भी पीव बहता है। कैल्केरिया-कार्ब ३०, आयोडियम ३० या नेट्रम-सल्फ १२x विचूर्ण—१०० इसकी प्रधान दवा है। "गुटिका" रोगकी दवाओंमेंसे दवाएँ चुनकर सेवन और पथ्य आदि नियम पालन करने चाहियें। "गंडमाला" देखिये।

(ग) शिशु-उपदंश (Infantile Syphilis)—पिता या माताके वशमें उपदशकी बीमारी ("उपदश" देखिये) रहनेपर, सन्तान पैदा होते ही या कई दिन बाद इस बीमारीमें नीचे लिखे लक्षण प्रकट होते है :—बच्चा कमजोर होता जाता है और बराबर रोता है, साँस अच्छी तरह नहीं लेता और शरीरपर खुजली वगैरह हो जाती है। बच्चेके शरीरसे इस उपदशका जहर अगर किसी तरह दूसरेके शरीरमें घुस जाता है, तो उसे भी बीमारी हो जाती है। मर्क-सोल ३० इसकी सबसे बढ़िया दवा है। खुजली और जखम ज्यादा होनेपर, नाइट्रिक-एसिड ३०। आरम-मेटालिकम ३०, थूजा ३०, सिफिलिनम ३०, बैडियेगा ३, सल्फर ३० की भी बीच बीचमें जरूरत पड सकती है ("जन्मगत उपदश") देखिये।

धातुगत उपसर्ग और दवाएँ

जिनके शरीरसे सहजमें ही रस-रक्त आदि निकल पड़ता हो, उनके लिये—"फास्फोरस"।

जिनकी आँखें, नाक या शरीरके किसी छेदसे सहजमें खूनका स्राव होता हो, उनके लिये—"क्रोटेलस"।

किसी बीमारीकी वजहसे रोगी एकदम सूखा और दुबला होनेपर—"आर्ज नाई"।

कुबड़े होकर बैठना, झुककर चलना वगैरह लक्षणोंमें—"सल्फ"।

सुस्त करनेवाली किसी बीमारीके बहुत दिनोंतक भोगनेके कारण जीवनी-शक्ति बहुत कम पड जानेपर—"कार्बो-वेज"।

सूखे, दुबले-पतले बालकोंके लिये—"ऐल्यूमिना"।

सूखी, दुबली-पतली बालिकाओंके लिये—"सिकेलि"।

पुरानी बीमारी भोगनेपर जिसे सर्दी लगती हो या पतले दस्त आने लगते हों, उनके लिये—"एसिड-नाई"।

कच्छु (psora) धातुग्रस्त बच्चोंके लिये—"सल्फर" प्रधान दवा है।

उपदंश धातुग्रस्त बच्चोंके लिये—"मर्क" प्रधान दवा है।

प्रमेह धातुग्रस्त बच्चोंके लिये—"थूजा" प्रधान दवा है।

उपदंश और मर्करी (पारा) के अपव्यवहारसे पैदा हुई बीमारीवाले मनुष्योंके लिये—"कैलि आयोड या आरम"।

ऋतु परिवर्त्तनके समय बच्चोंकी बीमारीका बढ़ना—आंधी-पानीके पहले बच्चेकी कोई बीमारी बढ़नेपर—रोडोडेण्ड्रन ३। सर्द तर हवामें रोग बढ़नेपर, रस टक्स ६। रोगी ऋतु-परिवर्त्तन बिल्कुल ही पसन्द न करता हो या अन्धर-पानीमें रोग बढ़नेके लक्षणमें रैनन-क्यूलस-ब्लब ३। तर हवा या बरसातमें बीमारी बढ़नेपर—डल्कामारा ६। गर्मीके दिनोंके अतिसारमें—आइरिस ६; कुहासा या अन्धर-तूफानवाले दिनोंमें रोग बढ़नेपर—जेलसिमियम ३। वज्रपातके पहले बीमारी बढ़नेके लक्षणमें—एगरिकस ३।

'अकौता', 'दमा', 'क्रिमि', 'खसरा', 'चेचक' वगैरह रोगोंके लिये इस ग्रन्थमें उन-उन स्थानोंपर लिखी हुई ये बीमारियाँ देखनी चाहियें।

बच्चेकी प्रकृति और उपसर्गके अनुसार दवाएँ

(बाल-रोगमें—कैल्के-कार्ब, जेल्स, विरे-ऐल्ब, थूजा, टियुक्रियम, नक्स-मस्केटा, साइना, स्ट्रैमो, एसिड-सल्फ, स्पंजिया, साइक्यूटा, कैलि-ब्रोम, मर्क, पल्स, सैबाडिला, इपिकाक, सिलिका, लाइको वगैरह दवाएँ खासकर प्रयोग होते हैं)।

अचेतन अवस्था, इच्छा न रहनेपर भी एक हाथ और एक पैर हमेशा हिलाते रहता है—ऐपोसाइनम।

„ „ केवल अगोंके इशारेसे बच्चा अपनी जरूरत बताये—स्ट्रैमो।

„ „ आँखें निश्चल—ओपि।

„ „ प्रलाप, बेचैनीसे लोटना, शरीर फड़कना—क्यूप्रम।

„ „ जब ऊँचे स्वरसे पुकारा जाये, तब आँख खोले, बेवकूफकी तरह देखा करे और धीरे-धीरे जवाब देता हो—फास्फोरिक एसिड।

„ „ टकटकी लगा, मुँह फाड़े देखता हो, औंघाई, किसी सवालका जवाब न देना—हायोस।

„ „ के साथ मस्तिष्क आक्रान्त होना—क्यूप्रम।

अर्बुद और रक्त बच्चेके मस्तिष्कके पार्श्व-कपालकी हड्डीपर—कैल्के-फ्लुओर।

आँसू, चार महीनेके बच्चेकी आँखोंमें पानी एक बार भी न दिखाई देनेपर समझना चाहिये, कि इसे कोई गहरी बीमारी हुई है।

आक्षेप (अकड़न), बहुत हँसने या खेलने बाद—काफिया।

„ अमावस्या और पूर्णिमाको—*सिलिका*।

„ ग्यारह बजेके समय दूध पीने बाद पैदा होनेपर—कैलेण्डुला।

„ ठीक हर दस दिनके अन्तरपर—लैके।

„ माथेका दर्द, दाँत निकलने या पेटकी गड़बड़ीसे—स्कूटेलेरिया।

„ के समय या पहले चिल्लाना—ओपियम।

„ के साथ रोना या हँसना—इग्नेशिया।

चोट देना (आरामके लिये), चेहरा या माथेपर हाथकी मुट्ठीसे—आर्सेनिक।

चोट देना, दीवाल या सहनपर सर पटकना—रस-टक्स।

उत्साहहीन, सब विषयोंमें उदासीन—फास-एसिड ।

कड़ा सूखा मल और संगमेन्द्रियकी चारों ओर फुन्सियाँ—मेडोरिनम ।

कानमें हमेशा अंगुली डालना—किनिन-सल्फ ।

काँपना रोने और चिल्लानेके साथ सम्पूर्ण बदन काँपना—इग्ने ।

रोनेके समय (क्रोध होनेपर भी) बच्चेकी साँस बन्द होनेपर—क्यूप्रम ।

बदबूदार रस-रक्त पीव निकलनेके साथ बच्चेकी आँखोंमें जखम—कैलि-सल्फ ।

काटना और दाँत कड़मड़ाना (मस्तिष्क-झिल्ली-प्रदाह रोगमें)—बेल ।

खाँसीका प्रकोप, क्रोध आनेपर—ऐण्टिम-टार्ट ।

खाँसनेके समय या खाँसनेके कुछ ही पहले बच्चा चिल्लाता हो—आर्नि ।

खाँसना और जम्हाई लेना, क्रमसे—ऐण्टिम-टार्ट ।

काममें तैयार न हो, फुर्त्ती नदारद, सुस्त—लाइको ।

किसी कड़ी चीजको काटनेकी इच्छा—फाइटो ।

कोनेमें छिपता है, चोट समझे और हरएक विषयमें भूल करे—कैम्फर ।

चिड़चिड़ा, जिन चीजोंको तोड़-फोड़कर फेंक दिया है, उनके लिये रोना—स्टैफिसेग्रिया ।

चूमनेपर बच्चेका प्रेम दिखानेके लक्षणमें—पल्स ।

चूनेके पानीके अपव्यवहारसे अर्थात् ज्यादा दिनोंतक उसके पीनेकी वजहसे पैदा हुई पाचन-क्रियाकी गड़बड़ी होनेपर—कैल्के-कार्ब २००—१००० ।

जननेन्द्रिय धो डालनेपर भी खट्टी गंध मालूम होना—सैनिक्युलस ।

जीभ और मुँहमें बहुत छाले, चेहरेपर बहुत ही लाल फुन्सियाँ—युपेटोरियम, ऐरोमेटिका ।

झूलेसे उठाने, स्तनका दूध पिलाने या रोनेके बाद बच्चेको साँसकी तकलीफ पैदा होनेपर—कैल्के-फास ।

तलपेट वायु-भरा—सेन्ना ।

तेज दर्दके साथ अजीर्ण, एकाएक चिल्लाना, पीछेकी ओर सर झुकाना—बेलेडोना।
दाँत पीसता और काटता हो—वेल।
देरसे वातें करना सीखनेपर—नेट्रम म्यूर।
नहाना, ठण्डे पानीसे नहाना चाहता हो, परन्तु गर्म पानीमें कोई उज्र नहीं करता हो—ऐण्टिम क्रूड।
,, या धुलाना न चाहता हो, माथेमें फोड़ा होनेकी वजहसे चिल्लाता हो और हाथ-पैर पटकता हो—हिपर।
,, या धोना बिल्कुल ही पसन्द न करे—ऐमोन-कार्ब, ऐण्टिम-टार्ट, सल्फर।
नाक बन्द होकर दूध न पी सकता हो—कैलि-वाई, नक्स-वोमिका।
,, , ,, मुँहसे साँस ले और विचित्र आवाज होती हो—लाइको।
नाकसे लाल श्लेष्मा निकलना—कैल्के कार्ब, सल्फ (नयी अवस्थामें), सिलिका (पुरानी अवस्थामें)।
नाक और आँखें, नींदसे उठते ही रगड़ता हो—सैनिक्युलस।
नाभिसे पानीकी तरह और लाल आभा लिये स्राव निकलना—ऐब्रोटेनम, कैल्के-फास।
नाभिसे वाहर निकलना, लाल और जखम-भरी होना, बहुत रोना—थूजा।
नाभिसे रस, पीव आदि निकलना, नाल काटने बाद—कैल्के-फास, दूध-चोनी।
निजी हाथको मुट्ठी काटता हो, मल कड़ा और सहजमें ही वाहर न निकलता हो—रेकोन।
नींद—आध मिनटके वाद ही जाग उठना, चौंक उठना या चिल्लाना—इपिकाक।
नींदकी हालतमें लोटना और रोना—कैलि-कार्ब।

नींदके समय रोना (क्रोधी और चिड़चिड़ा होने बाद) और जागनेपर भयसे व्याकुल होनेके लक्षण दिखाई दें—जिंक।

नींदके समय रोना, चौंक उठना, उछल पड़ना, करवट बदलना—जिंक।

नींदके समय रोना, अक्सर चबाता हो, घूंट लेता हो और थूक निगले—कैल्के-कार्ब (ब्रायोनिया)।

,, ,, चिल्ला उठे—साइना।

,, ,, (खासकर रातमें), जोरसे चिल्लाना, क्या तकलीफ होती है ? पूछनेपर कुछ न बोले—एपिस।

नींद, दिन-रात न सोये, पर नींदके झोंक लेता रहे, चिड़चिड़ाये, रोता हो—सोरिनम।

नींद, झुलानेपर आती हो, झुलाये बिना नींद न आये—साइना।

नींदमें अस्पष्ट बोलना, रोना और बुदबुदाकर चौंक उठना और उछल पड़ना—सल्फर।

नींदसे चिड़चिड़ाकर उठ बैठना—आर्स, कैलि-कार्ब, लैके, लाइको।

निद्राहीन और अनस्थिर, इसके बाद नींद न लगना—काफिया, ओपि।

नींद, दिन-रात नींद न आये—सोरिनम।

,, चिड़चिड़ाता हो—काफिया।

,, नींदके समय शरीर फड़कता हो, चिल्लाता, काँपता हो और डरकर जाग उठता हो—हायोस।

प्रति बार वायु निकलते समय, मल निकलता हो—ओलियेण्डर।

पतली चीज पीनेके समय साँस रुकती हो, परन्तु कड़ी चीज सहजमें ही निगल जाये—कैलि-ब्रोम।

पानी पीना, उत्सुक और जल्दी—ब्रायोनिया।

पानी या दूध पीनेके समय बच्चा वह बर्त्तन दाँतसे पकड़ लेता हो—क्यूप्रम।

पिता या माताके वंशमें उपदंश या प्रमेह रहनेकी वजहसे बच्चेका स्वास्थ्य भंग होनेपर—स्टैफिसेग्रिया।

पेटमें शूल-वेदना, बराबर जारी रहना—जेल्स ।
,, ,, कब्जियतके साथ—सिलिका ।
,, ,, खानेके बाद ही—ग्रैफाइटिस ।
,, ,, पेटके दर्दके साथ वायु पैदा होना—सेन्ना ।
,, ,, पेशाबके वक्त—कैमो ।
,, ,, रातमें, पर दिनभर न हो—जैलापा ।
,, ,, जभी खानेकी चेष्टा करे और दूध पीनेके समय रोता हो—कैल्के-फास ।
,, ,, की वजहसे रोना, धायके कन्धेपर अपना पेट रखकर थोड़ा दबा रखने या धायके कन्धेपर चढ़कर घूमनेपर आराम मालूम होना—स्टैनम ।
,, ,, के साथ पेडूमें बेंगकी बोलीकी तरह आवाजके लक्षणमें—थूजा ।
,, ,, दिनभर अच्छा रहकर ५ बजे शुरू हो, तलपेट कड़ा—कैलि-ब्रोम ।

पेटमें शूल-वेदना, बदूना, हाथ-पैर खुले रहनेपर—रियुम ।
पेशाब आक्षेपिक, थोड़ी उत्तेजना, पर बुन्द-बुन्द पेशाब होना—स्ट्रैमो ।
,, करनेके पहले रोना, बार-बार पेशाब होना, गर्म और कड़वी गन्ध—बोरैक्स ।
,, करनेके पहले डरना—ऐलम ।
,, करनेके पहले चिल्लाये और रोये—पेशाब हो जानेके बाद आराम मालूम होना—लाइको ।
,, करनेके पहले या पीछे चिल्लाना—बोरैक्स, लैके, सार्सा ।
पेशाब मूत्राशयमें भरा हो, पर न होता हो ; माताके क्रोधित होने बाद दूध पिलानेकी वजहसे—ओपियम ।
,, बन्द या तकलीफसे होना—ऐकोन, एपिस ।

पेशाबके समय गों-गों शब्द, मानो पाखाना हो रहा है, परन्तु सिर्फ वायु निकलना—कैलेण्डुला ।

बच्चा, रातमें गहरी नींदमें जाग उठता है और डरकर चिल्ला उठता है—कैलि-ब्रोम, कैलि-फास ।

बच्चेको रातमें डर मालूम होना—कैलि ब्रोम ।

बच्चेका गन्दा रहना ; कानके पीछे और पुट्ठेमें लसदार तर खुजली—ग्रैफाइटिस ।

बच्चा बेचैन—नींद न आना, गर्मी और बदनका कपड़ा हटा दे—सिके ।

बच्चा बेचैन, इस करवट, उस करवट छटपटाता हो, बहुत कमजोर, रातको दो पहरके बाद बेचैनी बढ़ती हो—आर्सेनिक ।

बच्चा बेचैन, शामके ६ बजेसे सवेरे ३ बजेतक ; शरीर मलने, दबाने या खाटपर लेटनेसे थोड़ी तन्द्रा होती हो—क्रियोजोट ।

,, ,, रातभर इधर-उधर लोटना ; थोड़ा-थोड़ाकर बार-बार पानी पीना—सैनिक्युलस ।

बच्चेका आमवात—फास ।

,, उदास भावसे पड़े रहना और कभी लम्बी साँस लेना, कभी काँपते हुए हाथोंसे सर छूना—हेलिबोरस ।

,, किसी तरह क्षणभर भी सन्तुष्ट न रहना—साइना ।

,, किसी तरह दूध पिलानेवालीको न छोड़ना, अलग होनेके डरसे उससे चिपट रहना—क्यूप्रम ।

,, क्रोधी, जबतक न खाये, तबतक उत्कंठित रहता हो, खानेके बाद; कुछ देर शान्त रहे, अच्छा भोजन मिलनेपर भी बच्चा दुबला होता जाये—आयोड ।

बच्चा गोदमें सोना चाहे, बिछावनपर न सोता हो—क्यूप्रम ।

,, चिड़चिड़ा मिजाज, पागल-जैसा—मेरम-बेरम ।

बच्चा, चिड़चिड़ा मिजाज, किसीका अपनी ओर देखना या छूना पसन्द न करता हो—ऐण्टिम-क्रूड।

,, चिड़चिड़ा मिजाज, किसी तरह सन्तुष्ट न हो—एपिस।

,, चिड़चिड़ा, कुछ बोलनेसे ही रंज हो—आर्सेनिक, कैमो, जेल्स, आयोड, नेट्रम-म्यूर, नेट्रम-सल्फ, नक्स-वोम, रस-टक्स।

,, ,, कोई उसे छूता हो, तो पसन्द न करे—साइना।

,, ,, दाँत निकलनेके समय या गर्मीसे और बुखार होनेपर—ऐकोन या काफिया सेवन करना चाहिये; इससे फायदा न हो, तो—हाइड्रोब्रोमिक एसिड।

,, ,, अनेक तरहकी चीजें चाहता हो, परन्तु उन्हें पानेपर फाड़-फाड़कर फेंक देता हो—क्रियोजोट, स्टैफिसेग्रिया।

,, ,, डरनेपर रोये और हाथ पटके—सैम्बुकस।

,, ,, रंज, क्रोधित रहता, मूर्ख—कैल्के फास।

बच्चा चिल्लाता हो, नींदके समय और मानो सपनेमें डरता हो, इसलिये दूध पिलानेवालीसे चिपट जाये और जाग उठे—बोरैक्स।

,, ,, हाथसे अपना गला पकड़ रखता हो—कैल्के-फास।

,, ,, कानके दर्दसे—आरम।

,, ,, रह-रहकर रोज तीसरे पहर ५ बजे—कैल्के-कार्ब।

,, ,, दिन-रात (हूप खाँसीकी वजहसे)—स्ट्रैमो।

,, ,, बिना कारण, रह-रहकर—बेल।

,, ,, जोर-जोरसे किसी साधारण चीजको भी माँगनेसे न मिलनेपर या प्यार करनेपर—बेल।

,, ,, पेशाब करनेके पहले—बोरैक्स।

बच्चा चिल्लाता हो, शान्त करनेकी चेष्टा करनेपर बढ़े—कैल्के-फास।

,, ,, एकाएक—ऐनाकार्डियम, कार्बो-वेज, ह्यायोस।

बच्चा जाग उठे, बहुत दुर्विनीत भावसे—लैके, लाइको।

,, ,, ,, अस्वच्छन्दता-सूचक रुलाईके साथ (या रोगके कुछ ही बाद)—ऐकोन और अपने बदनका ओढ़ना या वस्त्र लात मारकर फेंक दे या रंज प्रकट करे—कैलि-कार्ब, लाइको।

,, ,, ,, रोता हो और बिछावनपर लोटता हो—बेल।

,, ,, ,, चिल्लाता हुआ और यह सोचे कि कोई मानो उसे मारने जा रहा है—कैलि-ब्रोम।

,, ,, ,, तेज रुलाई और सब बदनमें कँपकँपीके साथ—इग्नेशिया।

,, ,, ,, भयसे (मस्तिष्ककी बीमारीमें)—जिंक।

,, ,, ,, डरसे घबड़ाया हुआ; चारों ओर घबड़ाकर देखने बाद फिर सो जाये; कुछ देर बाद बार-बार ऐसा ही करनेपर—लाइको।

,, ,, ,, डरसे व्याकुल और हतबुद्धि होना—इस्क्युलस।

,, ,, ,, सर खुजलाये—कैल्के-कर्ब।

,, ,, ,, रातमें सोनेके दो घण्टे बाद हाथ-पैर पटकता हो, रोये, किसी सवालका जवाब न देता हो, पेशाब करनेको कहनेपर, नहीं करता हो, परन्तु पेशाब करनेको बैठानेपर उसी समय सो जाये—थूजा।

,, ,, ,, रातके समय, हँसता हुआ खेले और बिलकुल ही सोना न चाहे—साइप्रिपिडियम।

,, ,, ,, रातमें एकाएक डरना और काँपना, ठण्डे पसीनेके साथ—ऐक्टिया रेसिमोसा।

बच्चा जाग उठे, साँसमें रुकावट, तकलीफके साथ साँस खींच सके, पर छोड़ न सके—सैम्बुकस।

बच्चा जाग उठे, एकाएक और चिल्लाये तथा बिना कारण, पालना पकड़ रखता हो—बोरैक्स।

„ अपने केश खींचता हो (माथे दर्द होनेपर)—बेल, डिजि।

„ तेजीसे और रुलाईके साथ बहुत तरहकी चीजें माँगें—रियुम।

„ कै करता हो, कुछ खाने बाद दस मिनटमें हो—फास।

„ कै करता हो, खाने-पीनेके बाद और इसके पीछे खाता या पीता बिलकुल न हो, पर नींद अच्छी तरह आती हो—आर्सेनिक।

„ कै करता हो, दूध पीनेके कुछ ही बाद सब खायी हुई चीजें बड़े वेगसे कै कर दे और गहरी नींदमें सो जाये—ईथूसा (सेनिस्यूला)।

„ देरमें चलना सीखे—कैल्के-कार्ब, सिलिका।

„ शान्त न रहे, जितना ही दुलार किया जाये, उतना ही रंज होता जाये—साइना।

„ लिंग खींचकर लम्बा करे—मर्क-वाई।

„ सब विषयोंमें उदासीन रहे ; श्रवणेन्द्रियके सिवा सब इन्द्रियाँ निस्तेज हो जायें—कैल्के-कार्ब।

„ हमेशा अकेला रहना चाहे ; चिड़चिड़ा—ऐण्टिम-क्रूड, आर्ज, कैमो, साइना। तुरन्त हँसे, तुरन्त रोये—काफिया।

„ समयपर न हँसता हो, न खेलता हो ; सहजमें रोता भी न हो और नींदमें हँसता हो ; मस्तिष्ककी उत्तेजना—साइप्रिपिड।

„ हँसता न हो, खेलता न हो या कूद-फाँद न करना चाहता हो—हिपर-सल्फर।

बच्चेको गोदमें लेकर घूमनेपर, करुण स्वरसे रोनेके लक्षणमें—साइना।

„ „ „ „ रोता हो, पर धीरे-धीरे घूमनेपर रोना बन्द हो जाये—कैमो।

बच्चा गोदीमें चढ़कर तेजीसे घूमनेके लिये लालायित हो—आर्सेनिक, ब्रोमेटम।

बच्चा धायके कन्धेपर चढ़कर घूमनेसे शान्त रहता हो, किसी दूसरी अवस्थामें शान्त न रहता हो—स्टैनम।

बच्चा, गोदमें चढ़कर धीरे-धीरे टहलनेसे शान्त रहता हो, नहीं तो रोता हो और जोरसे झूलानेसे शान्त रहता हो—साइना।

" गोदमें लेकर घूमनेपर, उसके सरमें चक्कर आता हो और गिर पड़नेके भयसे धायसे चिपक जाता हो—जेल्स।

" गोदमें चढ़कर घूमनेके लिये लालायित—पल्स।

बच्चा गोदमें, माँकी गोदके सिवा किसी दूसरेकी गोदमें चढ़कर घूमना न चाहता हो। अगर कोई दूसरा बच्चेको छुए, तो वड़े जोरसे चिल्ला उठता हो—ऐण्टिम-टार्ट।

बच्चेको गोदमें लेकर घूमनेसे और सीधी तरहसे पकड़ रखनेसे उपसर्ग कम हो जाते हों—ऐण्टिम-टार्ट।

बच्चा देखनेमें बूढ़ेकी तरह, दुबला, मैला, तेलहा और पीला—सैनिक्यू।

" देखनेमें गोलगाल (chubby)—कैलि-बाइक्रोम, सेनेगा।

बच्चेको अधिक मिठाई या दूध खाकर बीमारी हो—नेट्रम-फास।

बच्चेकी आँत बढ़ी हुई, नाभिमें या वक्षदेशमें—नक्स-वोमिका।

बच्चेकी आँत बढ़नेपर बहुत रोता हो और बायीं पसलीका चक्रदेश दवा न रखनेपर अथवा जंघा न सिकोड़नेपर शान्त न रहता हो—थूजा।

बच्चेकी अनिद्रा आक्षेपके वशमें हो—सैम्बुकस।

" सुस्ती लानेवाली या कमजोर करनेवाली बीमारीके बाद—कार्बो-वेज।

बच्चेको अम्ल रोग होनेपर—नेट्रम-फास।

बच्चेके कपालका चमड़ा झूलता हो और बीच-बीचमें चिल्ला उठता हो—हेलि।

" रोता हो, प्यार करनेसे, एकदम—सिलिका।

बच्चेका रोना तेज, अगर बच्चेको हाथ पकड़कर घूमानेकी चेष्टा की जाये—साइना।

बच्चेका रोना और बदन मरोड़ना ; दूध पीनेके एक घण्टा बादतक—
" " नक्स-वोमिका ।
इस चीज और उस चीजके लिये जिद्द करना और उसे
" " मिलनेपर चुप होना—कैमो ।
" " बुखारके समय चलनेपर—ब्रायोनिया ।
" " रातभर और दिनमें सोना—जेलापा ।
" " घिघियाता हो और साँस लेनेमें डरता हो—बेल ।
झूलेमें सुलाते ही और गिर जानेके भयसे पासकी चीज
" " पकड़ रखता हो—बोरैक्स ।
विना कारण वदनपर हाथ फेरने या ठण्डी हवामें ले
" " जानेपर—सल्फ ।
" " पैदा होते ही, ज्यादा मात्रामें—मेडोरि ।
मानो कोई भयानक चीज देखकर डर गया है, ऐसा
" " मालूम होना—स्ट्रैमो ।
" " शूलका दर्द या सामान्य पेटके दर्दमें—क्यूप्रम ।
दिनभर (खासकर ४ बजेसे रात ६ बजेतक), पेड़ूमें पैर
गड़ाकर रखता हो ; रातमें अच्छी नींद आती
हो ; काँखकर पाखाना फिरता हो, मल कड़ा
" " और खूब कम हो—कोलोसिन्थ ।
" " दिन-रात बराबर—सोरिनम ।
सब पेट वायुसे रुका मालूम हो, सब बदन नीला हो
" जानेके उपसर्गमें—सेन्ना ।
"—रातभर उषाके समय सोकर दो पहरतक सोता रहे—
". " कैल्के-कार्ब ।
के साथ माथेके पिछले भागमें हाथ रखता हो, तकियेमें
सर घसता हो—ब्रायोनिया ।

बच्चेका रोना, एकाएक शुरू हो और एकाएक ही बन्द हो—बेल।
" " माँका दूध पीनेके समय—कैल्के-फास।
" " सामान्य वजहसे—कास्टिकम।
" " सारा दिन और सारी रात सोये—लाइको।
" क्रिमि, पेट लम्बा और उसके साथ पेटमें दर्द—स्टैफि।
" अंग कोमल—ब्रोमेटम।
" क्रोधसे पैदा हुआ उपसर्गमें—ऐकोन।

बच्चेका आकृति खर्व (बच्चेकी देह न बढ़ती हो)—इरिञ्जियम, मैग्ने-कार्ब, मैग्ने-म्यूर, लाइको।

" खिलौना मांगना—दूधकी चीनी।
" खिनखिनहा स्वभाव—हिपर, लाइको।

बच्चेकी गति, ऊपरसे नीचे उतरनेमें डर—बोरैक्स।
" गति, दिन-रात हमेशा घूमना चाहे—सैनिक्युला (रस-टक्स)।
" गति, अक्सर हमेशा गोदमें चढ़कर घूमना चाहे और हिलना चाहे—साइना (रस-टक्स)।
" गति, टेढ़ी गति न सहन कर सकता हो—काफिया।
" गांठें कड़ी और बढ़ी हुई होनेपर—कैल्के-कार्ब।
" गांठें सूजी—मर्क डलसिस।
" शरीरकी बू, धोने बाद खट्टी—हिपर, मैग्नेशिया-कार्ब।
" शरीरकी गन्ध हमेशा सड़े पनीरकी तरह—सैनिक्यूला, सोरिनम।

बच्चेका गोंगियाना, अधखुली आँखें, सर झूल पड़ना—पोडो।
" " और सुस्त रहना—बेल।
" " रात ३ बजे—कैलि-कार्ब।
" " अन्त रातमें—रस-टक्स।

बच्चेकी जीभपर सफेद लेप चढ़ा—ऐण्टिम-क्रूड।

बच्चेका तलपेट और उसका चमडा जगह-जगह कडा हो, तुरन्तके पैदा हुए बच्चेका, वह तेजीसे बढता हो और ज्यादा कडा होता जाये ; कभी-कभी लाल रग चमडेपर आ जाये; धनुष्टकारकी तरह अकड़न, माथा पीछेकी ओर झूल जाये—कैम्फर।

बच्चेका जोरसे चिल्लाना, रह रहकर बहुत जोरसे—एपिस।

" " " नींदके समय—साइना।

" " " हृदय विदारक—क्यूप्रम।

" थुलथुला शरीर—मैग्नेशिया।

दाँत निकलनेके समय—इथूजा, मैग्ने फास, नेट्रम-म्यूर।

बच्चेको दूध पीना एकदम सहन न होता हो—काडलिवर-आयल।

" शरीर दुर्बल, माथा पुष्ट और बुद्धि तेज—लाइको।

बच्चेकी नाकसे खून गिरता हो—टेरिबिन्थना।

" और देखनेसे वह चिल्लाये और रोता रहे, नींद खुलनेके बाद चिड़चिडा—ऐण्टिम-टार्ट।

बच्चेका प्रलाप और अण्ट सण्ट चीजें देखना (कुत्ता, बिल्ली वगैरह)—इथूजा।

" प्रलाप, प्रचण्ड, अद्भुत दृष्टि, चेहरा लाल, बुदबुदाना, खाटके कपडे खींचना (मस्तिष्क रोग)—हायोस।

" बाप माँके सामने मौजूद रहनेपर भी उन्हें पुकारना—स्ट्रैमो।

" प्रलाप, खाटपर इधर-उधर करवट बदलना और बेचैनी (मस्तिष्कावरक-झिल्ली-प्रदाह)—आर्सेनिक।

" प्रलापके साथ झोंकसे उठना, गोंगियाना और पेशियोंको खींचना—बेल।

" प्रलापके साथ रातभर उष्ण-प्रधान ज्वर—बेल।

" प्रलापके साथ हँसने-खेलनेका भाव (मस्तिष्क आकान्त होनेपर)—स्ट्रैमो।

बच्चेका प्रलापके साथ आरक्त ज्वर—ऐइलैन्थस।

बच्चेको दुर्दमनीय बीमारी होनेपर—लाइको।

” सुखण्डी—कोका θ-३।

” पीठ और अंग-प्रत्यङ्गमें दर्द (मानो मार खायी है)—एसिड-फास।

” पेट बड़ा होनेपर—कैल्के-कार्ब, सल्फर, सार्सापेरिला, सैनिक्युला, सिलिका।

” पेटमें दर्द मालूम होनेपर—मैग्नेशिया-कार्ब।

” तालु न भरनेपर—कैल्के-फास, सिलिका।

” बालास्थि टेढ़ी रहनेकी वजहसे अतिसार वगैरह—मेडोरियम।

” पाखाना-पेशाबकी हाजत बराबर बनी रहना—कैलि-आयोड।

” मलिन चेहरा, फीका रंग—सोरिनम, कैल्के, मर्क-वाइवस।

” माथेपर जरासेमें पसीना आ जाये—कैल्के।

” माथा बड़ा, जबड़ा छोटा—कैलि-आयोड।

” सर बड़ा होनेपर—कैलि-आयोड, कैल्के-कार्ब, सिलिका।

” मुँहकी चारों ओर नीली आभा लिये सफेद रंग—साइना, सैवा।

” स्तन पीनेके कारण मुँहके घाव—बेरोनिका।

बच्चेका चेहरा बूढ़े-जैसा हो—ऐब्रोटेनम, इथ्यूजा, एसिड-हाइड्रो, क्रियोजोट (बच्चा बूढ़ेकी तरह मालूम होनेपर)।

” के चेहरेसे उत्कंठा मालूम होती हो—इथ्यूजा, बेल, क्यूप्रम।

” चेहरा हतबुद्धिकी तरह दिखाई दे—प्लम्ब, स्ट्रैमो, जिकम।

” उपयुक्त परिपोषण न होना, देरसे चलना सीखना, पेट लम्बा, सर बड़ा, पर दाँत न निकलता हो—कैल्के-कार्ब या कैल्के-आयोड।

” रोग प्रबल, तर—सोरिनम।

बच्चा दुबला—कैलि-आयोड, सल्फर।

बच्चा, दुबला और बूढ़े जैसा दिखाई दे अथवा बीचन रहे और शूल-वेदनायें—आर्जे नाई।

" दुबला (या सुखड़ी), बहुत सुस्त, चमड़ा सूख जाना, चेहरा बूढ़ेकी तरह, पेट बड़ा, मल मुलायम मांडकी तरह, चमड़ा रस-भरा, छोटी-छोटी फुन्सियाँ, मुँहका घाव—सार्सापैरिला।

बच्चेका दुबलापन, ऊपरके अगसे नीचेकी ओर—सैनक्लि।

" दुबलापन, गांठोंका बढ़ना, पर शरीर क्षीण होता जाये—आयोड।

" " छोटे बच्चोंका—मैरम वेरम।

" " नीचेको अगसे ऊपरको अगकी ओर बढ़े—ऐब्रो।

" " खासकर गर्दनके पीछेकी पेशी—कैल्क फास, नेट्रम-म्यूर, सैनिक्यूला।

" " (खासकर गर्दनके पीछे और उरुका); अतिसार रोगके बाद—सैनिक्युला।

" " विषण्णता, माथेका पिछला भाग बैठ जाना—मैग्ने-कार्ब।

" " मुँहमें जखम, बदनपर पीला दाग—एसिड-सल्फ।

" " उचित भोजन मिलनेपर भी—मास क्षय—आयोड, नेट्रम-म्यूर।

" " एकाएक पतले दस्त रुक जाने बाद—ऐब्रोटेनम।

" " सहजमें ही उत्तेजना—ऐस्त्राधीशिया, लाइको, हायो।

" " चौंक उठना—कैल्के-कार्ब।

बच्चेसे बात करनेसे रो पड़े—मेडो, नेट्रम, सिलिका, टियुबर।

बच्चेका हमेशा गोदमें चढ़कर घूमनेकी इच्छा करना लक्षणमें—ऐण्टिम-टाट, कैमो, चायना, स्टैनम, कैलि-कार्ब।

" हमेशा डरावना सपने देखना और सोनेकी इच्छा न करना—नक्स-वोमिका।

बच्चा स्तनकी घुण्डी एकाएक छोड़ दे और मानो साँस रुक जाती है, इस तरह रोये, सीधी तरह उठकर घूमनेसे अच्छा रहे—ऐण्टिम-टार्ट ।

,, स्तन पीने बाद तुरन्त ही पानी पीनेके लिये रोये, परन्तु पानी योंही फेंक दे—आर्निका ।

,, स्तन पीनेके समय और पानी पीनेके बाद रोता हो—आर्सेनिक ।

स्तन पीना चाहे, चिल्लाता हो, पर स्तनके दूधसे उसके दोनों ओठ तर होते ही वह जोरसे स्तन टानता हो—ब्रायोनिया ।

,, हमेशा स्तनका दूध पीता हो, पर उसके शरीरपर मांस न चढ़ता हो—सैनिक ।

बच्चेके स्तन पीने बाद हिचकी या झटका आता हो ; खाली डकार—मेरम-वेरम ।

बच्चा, स्तन पीनेवाले बच्चेको दूध बिलकुल सहन न हो—सिलिका ।

बच्चेकी स्नायविक दुर्बलता इतनी ज्यादा हो, कि कागज मोड़नेकी थोड़ी सी खड़खड़ाहट या दूरकी जोरकी आवाजसे भी घबड़ाकर उठ बैठे और डरे—बोरैक्स ।

बच्चा दुर्बलताकी वजहसे बच्चेका पेट फूला, पेटमें घरघर शब्द—पैसिफ्लो ।

बच्चा, छूते ही डरसे एकाएक चौंक उठे, पर न चिल्लाये—कैलि-कार्ब ।

बच्चा छूना सहन न कर सकता हो, छूनेसे ही रोता हो—ऐण्टिम-क्रूड, साइना, कैलि आयोड ।

बच्चा, अच्छी तरह सुखसे सोता न हो, इधर-उधर करे—लाइको ।

,, जम्हाई ले, हमेशा चिल्लाये और काँपकर जाग उठे—इग्ने ।

,, चलना और बोलना देरसे सीखे—ऐगरिकस ।

,, चलने, बोलनेमें असमर्थ (एक-दो वर्षका बच्चा इसी दवासे अच्छा हुआ है)—नक्स-मस्केटा ।

,, माथा बायें कन्धेपर रख दे—सल्फर ।

बच्चा, पैदा होनेके वक्त कड़ा और कसकर लगा, कोई जोर न रहे—
सैनिक्युलस ।

माता या धायके क्रोधके समय दूध पीनेपर, बच्चेका अनिष्ट होनेसे—
ऐकोन, कोषि ।

माथेकी चाँदीपर गांठ और ज्यादा मांसकी गोटी उठनेपर—कैल्के-फ्लुओर

गृहस्थी हमेशा जो बीमारियाँ दिखाई देती है, उनका इलाज इन तरह ऊपर लिखा गया है। सदृश-विधानके मतसे इलाजकर फायदा होनेपर गृहस्थ-मात्राको श्रद्धा पूर्ण हृदयसे आचार्य हैनिमैनको धन्यवाद देना चाहिये, कि बच्चोंको कड़वी और कष्टकर दवाओंसे उन्होंने बचाया है।

इस सम्बन्धमें सबकी परिचित विदुषी धर्मपरायण कुमारी कोब (Miss. Cobbe) ने निरपेक्ष भावसे जो कुछ कहा है, उसे बताकर हम "बाल-रोग" की चिकित्साका उपसंहार करते हैं।

"Children, noticing the busts of Hahnemann in the shop-windows, may be properly taught to bless that great Deliverer who banished from the nursery those huge and hateful mags of misery—black founts of so many infantine tears—mugs of sobs and sighs and gasps and stuggles nutterable, from one of which Madame Rolond drew the first inspiration of that martyr-spirit which led her onward to the guillotine when the suffered herself to be whipped six time- running, secur then swallow the abdominable "contents"—Sacuficial Medicine T. P. cobb's the Peak in Darien (pp. 196)

पाँचवाँ अध्याय

भेषज-तत्व

उपक्रमणिकावाले अध्यायमें "दवाओंकी तैयारी" (औषध-प्रस्तुत) और "दवाओंका प्रयोग" प्रकरण लिख दिया गया है। अब इस परिच्छेदमें होमियोपैथिक दवाओंका खास लक्षण, क्रम, सम्बन्ध निरूपण आदि बातोंकी आलोचना की जायगी। यह परिच्छेद नीचे लिखे पाँच अंध्यायोंमें विभक्त है :—

(१) **भेषज-लक्षण-संग्रह**—इस अध्यायमें ४२ प्रधान दवाओंका खास-खास लक्षण (peculiar symptoms) दिया गया है।

(२) ग्रन्थमें जिन दवाओंके नाम आये हैं, उनकी **फिहरिस्त,** हमेशासे व्यवहार होता हुआ, उनका **क्रम** (डाल्यूशन) और उनकी क्रियाका **स्थितिकाल** इस अध्यायमें लिखा गया है।

(३) सभी प्रधान होमियोपैथिक दवाओंका **सम्बन्ध तथ्य**—इस अध्यायमें लिखा गया है।

(४) **रेपर्टरी**—इस अध्यायमें रेपर्टरी क्या है और रेपर्टरीकी सहायतासे कैसे दवाका चुनाव होता है यह संक्षेपमें बताया गया है।

(५) **खाद्य-प्राण** (विटामिन)—किस खाद्यमें कौन-कौन विटामिन कितनी है और मानव-शरीरके ऊपर उनकी क्रिया बतायी गयी है।

भेषज-लक्षण-संग्रह
(Materia-Medica)
अर्थात्
कई प्रधान दवाओंके खास लक्षण

आर्निका—रक्त, मांस, पेशी और केशिकाके ऊपर इसकी क्रिया होती है। चोट लगने, कुचल जाने अथवा घाव होनेपर जैसा दर्द होता है, समूचे शरीरमें वैसा ही दर्द मालूम हो ; "शय्या कड़ी मालूम होना"; मस्तिष्कमें जलन या अर्द्धाङ्ग, माथा और चेहरा गर्म, पर शरीरके दूसरे अंश (खासकर हाथ पैर) ठण्डे ; "काले दाग पड़ना" ; डकार, दस्त या जीभसे सड़ अण्डेकी बू आना, चाट वगैरहसे खून बहना ; बेहोशी या मोह ; बुखारसे छटपटाता हो, पर पूछनेपर रोगी कहे कि "अच्छा हूँ," (बुखारमें जवाब देनेमें रोगीको मोह पैदा होना) ; सड़नेकी क्रिया ; चोटकी वजहसे या शारीरिक परिश्रमसे पैदा हुई बीमारियाँ, प्रसवके बाद पक्षाघात ; सान्निपातिक ज्वर, पेशियोंका शूल ; गिरने या चोटकी वजहसे धनुष्टकार, वात, शय्याक्षत (bed-sore) पुराना मेलेरिया बुखार, नाक या मुँहसे खून गिरना, खूनका स्राव और अनजानमें पेशाब हो जाना वगैरह लक्षणोंमें यह फायदा करता है। चोट, गिरना, चमड़ा छिल जाना, काला दाग पड़ना वगैरहमें इसका "बाहरी प्रयोग" हो सकता है।

आर्सेनिक—शरीरके सब यंत्र और निःस्रावपर इसकी प्रधान क्रिया दिखाई देती है। शरीर या मनको "बहुत तकलीफ", रोगी बहुत बेचैन जरा भी स्थिर नहीं रहता, पर कमजोरीकी वजहसे हिल डुल नहीं सकता, छटपटाया करता है, एकाएक सुस्त हो पड़ता है और जीवन-शक्तिका ह्रास हो जाता है। "बदनमें दाह, पर कपड़ेसे बदन ढँकनेसे जलन कर

होती है, बहुत प्यास", बार-बार थोड़ा पानी पीनेकी इच्छा, उठने-बैठने या सीढ़ी चढ़नेसे बहुत थकावट मालूम होती है और श्वासकष्ट होता है ; "दस्त और कै" ; खाने या पीने बाद ही दस्त-कै बढ़ता है ; ठण्डी चीज खाने-पीनेके बाद ही दस्त, कै बढ़ जाता है ; फल खानेके कारण पतले दस्त ; हैजा, आमाशय प्रभृति रोग। रातमें बारह बजेके बादसे लेकर तीन बजेतक कोई भी "रोग बढ़ता है।" ठण्डी हवा, ठण्डी कोठरी या ठण्ड लगने या हिलने-डुलनेसे "रोग बढ़ता है।" गर्म हवा, गर्म कोठरी या गर्मी लगनेपर "रोगमें कमी मालूम होती है।" सूखा मोमकी तरह चमड़ा। सर्दी लगकर मस्तिष्ककी श्लैष्मिक-झिल्ली और नाककी श्लैष्मिक-झिल्ली आक्रान्त होकर जलन और जखम पैदा करनेवाला दस्त निकला करता है ; नाकका छेद रुक जाता है। हृत्पिण्डकी बीमारियाँ ; पानीकी तरह दस्त या हरा और काले रंगका जलन करनेवाला दस्त ; बीच-बीचमें कै ; अतिसार या हैजा ; सूतिका ज्वर ; पाकस्थलीमें बेहद जलनका दर्द ; पाकस्थलीमें जखम ; चमरेपर जलन होनेवाली फुन्सियाँ और उसके साथ ही खुजलीसे चमड़ेकी छाल निकलना ; मुँहके चारों ओर जलन पैदा करनेवाली खुजली, इस खुजलीसे सफेद रस निकलता है ; पुराने सविराम ज्वरमें क्विनाइनसे फायदा न होने या क्विनाइनका अपव्यवहार होनेपर ; जलन और दर्दसे भरी आँख उठना, "शोथ" पुराना "सड़ा घाव ;" नींद न आना, खूनकी कमी, स्नायु-शूल, शरीरका क्षय करनेवाली सब बीमारियाँ।

"मृत्यु-भय, मानसिक अस्थिरता, शारीरिक दुर्बलता, जलन, प्यास, उत्तापसे आराम मिलना, बिचली रातमें और दो पहरके समय रोग-वृद्धि" ये कई आर्सेनिकके विशेष लक्षण हैं।

एकोनाइट—माथे और पीठके सब स्नायुमण्डलपर इसकी प्रधान क्रिया है। भीड़में जोरसे भय, "मृत्यु-भय" या कहता है, कि मैं अब न जिऊँगा, "अमुक दिन मरूँगा।" शारीरिक या मानसिक उद्वेग,

तकलीफसे बेचैन हो जाना। किसी "नयी बीमारीका एकाएक झोंकसे हमला" (खासकर मोटे-ताजे आदमियोंको); (जाड़ेके दिनोंमें) सूखी ठण्डी हवा लगने (या पसीना बन्द होनेकी वजहसे) कोई बीमारी पैदा होनेपर ; "प्रदाहसे पैदा हुई बीमारीकी पहली अवस्थामें" जैसे— बुखार, पनवाहा माता, सर्दी, खसरा, सूखी खाँसी, घुंडी खाँसी, ब्रांकाइटिस, न्युमोनिया, वात, सन्धिवात वगैरह बीमारियोंकी पहली अवस्थामें। कपड़ा उतारने / या खुली हवामें जानेपर बीमारीका 'कम हो जाना' गर्म कोठरीमें या बायीं करवट सोनेपर बीमारीका 'बढ़ना'; तेज प्यास, "बदन सूखा और गर्म", पसीना एकदम नदारद। नाड़ी कठिन द्रुत और पूर्ण; चेहरा लाल साँसमें कष्ट, पेशाव लाल, कलेजा धड़कना, रजोरोध।

ऐण्टिमोनियम टार्टरिकम—यकृत, फेफड़े और पाकाशयकी श्लैष्मिक-झिल्लीके ऊपर इसकी प्रधान क्रिया है। बालक और वृद्धोंकी बीमारियाँ, सर्दी लगकर रोग, श्वास-रोगकी जिन बीमारियोंमें हवा निकलनेकी राहमें बहुत श्लेष्मा इकट्ठा होता है या घरघर शब्द होता है, रोगी बलगम निकालनेमें असमर्थ रहता है। गलेमें घरघर शब्द होता है, ऐसा मालूम होता है कि बहुत श्लेष्मा निकलेगा, पर कुछ नहीं निकलता। श्वास यन्त्रकी बीमारीमें रोगी नीला हो जाता है, गलेमें श्लेष्माकी आवाज होती है, ऐसा मालूम होता है कि अभी रोगीकी साँस रुक जायगी। कठिन रोगमें ऐण्टिमका रोगी गहरी तन्द्रामें बिछावनपर पड़ा रहता है; बहुत औंघाई या तन्द्राभाव। पसीना, कमजोरी, मिचली या कै, भोजनमें अरुचि रहती है; हमेशा कै करनेकी कोशिश, पर कै नहीं होती; देह ठण्डी, ठण्डा पसीना, चेहरा उदास या नीले रंगका; सब शरीरमें (खासकर हाथ और माथेमें) कम्प; दूधसे अरुचि, खट्टी चीजोंमें रुचि; जीभपर सफेद लेप, प्यास नदारद; हैजा; डकार या बलगम निकल जानेपर

बीमारीकी कमी ; शिवनेत्र ; फेफड़ोंमें लकवा मार जाने या सूजन हो जानेकी आशंका ; चमड़ेपर पीव-भरी खुजली ; असली चेचक ; बच्चोंका वायुनली-प्रदाह ; श्लेष्माकी कै होना ; दमा ; श्वासकष्ट और कटि-वात। ऐण्टिमका बच्चा रोगी हमेशा गोदमें चढ़ना घूमना चाहता है, चिड़चिड़ा रहता है, कोई छूता या प्यार करता है, तो विरक्त होता है।

एसिड-नाइट्रिक—खून, श्लैष्मिक-झिल्ली, ग्रन्थियाँ और हड्डी, चमड़ा, गुर्दा और स्त्री-जननेन्द्रिय वगैरहपर इस दवाकी क्रिया दिखाई देती है। ज्यादा परिमाणमें पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुई बीमारियाँ। गर्मीकी बीमारी, गलेके भीतरका घाव, यकृतकी पुरानी बीमारी, गुदा-स्थानका नासूर, खूनी बवासीर ; पाखाना होनेके समय और बाद गुदामें तेज़ दर्द, पसीना या पेशाबमें घोड़ेके पेशाबकी तरह बदबू, पुराना श्वेत-प्रदर, सर्दी, रक्तामाशय, अनिद्रा प्रभृति। जवानीमें जिन्हें उपदंश या सूजाक हुआ है या बहुत पारा सेवन किया है, उनको सहजमें सर्दी लगना, अतिसार, बवासीर, मलद्वारमें, मुँहमें या मूत्रनली-मुखमें आँखोंमें, नाकमें या योनिमें रक्त-स्रावी टेढ़े-मेढ़े किनारेवाले जखममें नाइट्रिक-एसिड खूब फायदा करता है।

एसिड फास्फोरिक—स्नायुमण्डल, मूत्राशय और लिंगेन्द्रियकी हड्डी और चमड़ेपर इसकी प्रधान क्रिया है। तन्द्रालुता, उदासीन भाव, सामने जो कुछ हो रहा है, रोगी वह जान नहीं सकता ; परन्तु जगा देनेपर ज्ञान लौट आता है। शोक, शारीरिक और मानसिक परिश्रम या ज्यादा विषय-भोगकी वज़हसे पैदा हुई बीमारियाँ (जैसा—सफेद केश, उतरा हुआ चेहरा) ; पेशाबका रंग दूध या पानीकी तरह ; जल्दी-जल्दी बढ़नेवाली देहकी गठन; पढ़ने वगैरहके कारण बालिकाओंका सर-दर्द ; स्नायुमण्डल और जननेन्द्रियकी बीमारी ; सफेद रंगका या पानीकी तरह अतिसार ; ज्यादा पसीनेकी वजहसे शारीरिक दुर्बलता ;

खूनका स्राव ; बहुत दिनोंका बिना कष्टका अतिसार ; शुक्रमेह ; हस्तमैथुनका बुरा नतीजा ; गण्डमालासे पैदा हुआ हड्डीका जखम। केश झड़ जाना (खासकर कमजोरीकी वजहसे) ; ध्वजभंग ; श्वेत-प्रदर ; रातमें ज्यादा मात्रामें पेशाव होना या बार-बार थोड़ा-थोड़ा पेशाव होना, पेशाव दूधकी तरह सफेद अथवा अण्डलालकी तरह सादा ; बहुमूत्र ; कमजोर करनेवाला स्वप्न दोष हस्तमैथुनकी वजहसे पैदा हुआ सुख-वप।

इपिकाक—श्वास-यन्त्र और पाकाशयपर इसकी प्रधान क्रिया है। दमा, साँय-साँय या घरघर शब्द-मिला श्वास कष्ट। हमेशा जी मिचलाना ; सर-दर्दके साथ मिचली ; जरायु नाक, मुँह, गुदा या फेफड़ा वगैरह यन्त्रोंसे "चमकीला लाल रङ्गका" ज्यादा रक्त-स्राव ; फेन-फेन या पसीनेकी तरह या हरे रङ्गका दस्त ; एक दिन बाद नागा देकर आनेवाला जूड़ी बुखार ; किनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुआ बुखार अनियमित बुखार या बच्चोंके बुखारकी पहली अवस्था ; हरे रंगके आम-भरे पतले दस्त और उसके साथ थोड़े-थोड़े खूनके छींटे ; घासकी तरह हरे रंगका दस्त ; पित्तसे पैदा हुआ सरका दर्द ; हूपिंग खाँसी, खाँसते खाँसते कै कर देना ; अजीर्ण, आमाशय (हरी आम-मिला), नाभिके पास दर्द, हड्डियोंको तोड़नेकी तरह दर्द (टूट जानेकी तरह—युपेट-पर्फ) ; कै और लगातार मिचली इसका प्रधान प्रयोग लक्षण है।

ओपियम—दिमाग और पीठकी रीढ़ और सहानुभूतिवाले स्नायु-मंडलके ऊपर इसकी प्रधान क्रिया है। वृद्ध और बच्चोंकी बीमारीमें इसका अधिक व्यवहार होता है। रोगी दर्द बिलकुल ही जान नहीं पाता ; नहीं आती है, पर सो नहीं सकता ; मुँहसे पाखाना, कै करना। बदन खूब गर्म, पर पसीना नहीं होता। एकदम बेहोश है, परन्तु नाक बोलती खूब है। चेहरा लाल ; बिछावन एकदम गर्म मालूम

होता है। कब्जियत, पेशाब रुकना, हल्का प्रलाप, आँखकी पुतली फैली, भय या उद्वेगसे पैदा हुई बीमारियाँ ; चर्म-रोग एकाएक बैठकर मस्तिष्क-आवरक झिल्ली-प्रदाह, सान्निपातिक ज्वर, दिमागकी सुस्ती, गला घरघराकर साँस लेना, निस्तेज भाव, आँखोंकी पुतली सिकुड़ी हुई, पेटमें ज्यादा वायु संचय, गहरी नींद, उसके साथ अधखुली आँखें, नींदके समय बिछावनकी चादर नोंचता है (जागनेपर—हायोस, बेल), सर्दी-गर्मी : "तन्द्राका भाव ओपियमका प्रधान लक्षण है ;" जब किसी नयी बीमारीमें चुनी हुई दवा पूरा लाभ नहीं करती, उस समय ओपियमपर ध्यान देना चाहिये (कार्बो-वेज, सलफर बेसिलिनम)।

कैल्केरिया कार्बोनिका—परिपोषणकी विकृतिसे पैदा हुए (गण्ड-माला, गुटिका और हड्डियोंकी कोमलता) रोगोंपर इसकी प्रधान क्रिया है, नीचे लिखे किसी भी लक्षणमें कैल्केरिया-कार्ब फायदा करता है :—
(१) थुलथुला गोरा चेहरावाला या कोमल हड्डीवाला मनुष्य। (२) जिसे सर्दी लगकर सहजमें ही कोई बीमारी हो जाती है। (३) रातमें पसीना। (४) जिनके पैर खूब ठण्डे रहते हैं और थोड़ेमें ही जाड़ा मालूम होता है। (५) पाचन यन्त्रमें अम्ल (जैसे स्वाद खट्टा, डकार खट्टी, कै खट्टी, मलमें खट्टी बदबू)। (६) आंशिक पसीना (जैसे बच्चेके सरमें पसीना)। (७) हड्डियोंका अच्छी तरह पोषण न होना (जैसे—बच्चेका ब्रह्मतालु अपने समयपर न भर जाना या बच्चेका समयपर चल न सकना)। (८) धोबी आदि जो तरह पोषण पानीमें काम करते हैं। बच्चेको दाँत निकलनेमें तकलीफ ; बच्चेका समयपर चल न सकना ; आँखोंका प्रदाह ; गाँठें फूली हुईं, ज्यादा ऋतु स्राव और उसके साथ घुटनेसे लेकर तलवेतक दोनों पैर "बरफकी तरह ठण्डे" और तर ; नियमित समयसे बहुत पहले ऋतु होना ; 'दूध' की तरह श्वेत-प्रदर संगमके समय जल्दीसे वीर्यपात और उसके साथ ही कमजोरी ; रातको सरमें पसीना आना, अम्ल-रोग, पूर्णिमाके आस-पास

या पूर्णिमाके दिन बीमारीका बढना ; ठण्डी हवा और रोगवाली करवट सोनेपर बीमारीका कम होना । हरे या काले रगके जलन पैदा करनेवाले दस्त, बीच-बीचमें कै, अतिसार या हर तरहकी पुरानी बीमारीमें एक दिनका अन्तर देकर बीमारीका बढ़ना । इस दवाको खिलानेके बाद कभी "सलफरका प्रयोग न किया जाये ।"

कार्बो-वेजिटेबिलिस—रक्त स्नायुमण्डल और पाकाशयकी श्लैष्मिक-झिल्लीके ऊपर इसकी प्रधान क्रिया होती है। तेज धूप या आगके पास काम करनेके कारण बीमारी, "हिमांग अवस्थामें" जब जीवनी शक्ति एकदम खतम होना चाहती है (जब शरीर बरफकी तरह ठण्ड और नीला हो जाता है और रोगी हमेशा हवा करनेके लिये कहता है); किसी भी बीमारीकी 'अन्तिम दशामें जब बहुत ठण्डा पसीना" जीभ ठण्डी, साँस ठण्डी स्वरभग वगैरह लक्षण दिखाई देते है ; किसी बीमारी या चोटसे जो फिर अपना स्वास्थ्य न लौटा सका हो क्विनाइन वगैरह दवाओंके अपव्यवहारसे पैदा हुई बीमारी ; शरीरके भीतर मानो कोई चीज जल-भुन रही है—ऐसा मालूम होना, शरीरके किसी भी स्थानसे काले रगका रक्त-स्राव डकार छातीकी जलन, पेटका सट जाना ; पेट फूलनेके साथ ऊपरकी ओर वायु निकलना' सान्निपातिक ज्वर ; अतिसार ; दाँतका दर्द; मसूढ़ेसे सहजमें ही खून निकलना ; सड़ी बदबूवाला घाव स्वरभग ; मुमूर्ष अवस्थामें पैरके तलवेसे कमरतक ठण्डा हो जानेपर इसका प्रयोग होता है। ' रोगी एकदम लगातार हवा खाना चाहता है"—यह कार्बो-वेजका एक विशेष लक्षण है ।

कैमोमिला—स्नायु-मण्डल, यकृत, पाकाशय और श्लैष्मिक-झिल्लीके ऊपर इसकी प्रधान क्रिया है। चिड़चिड़ा स्वभाव ; "असहनीय दर्द" (जैसे—बाधक-वेदना, प्रसवका दर्द, दाँतका दर्द वगैरह उपसर्गोंमें रोगी सो नहीं सकता या बेचैनीसे रोने लगता है ; असह्य दर्द और बीच-बीचमें दर्दवाली जगहका शून्य हो जाना या झुनझुनी होना (जैसे—

वात, लकवा), रातके समय तलवेमें जोरकी जलन ; नींदके समयकी खॉसी ; वच्चे के दॉत निकलनेके समयकी वीमारियॉ (जैसे—पीले या हरे रंगका दस्त, अकड़न पानीकी तरह फुटकी-फुटकी दस्त, सड़े अण्डेकी तरह वदवूदार "पानीकी तरह हरी" या पीला आभा लिये आम-मिले दस्त) ; दॉत निकलनेमें वहुस तकलीफ, पेटमें काटनेकी तरह दर्द, दॉत निकलनेके समय वच्चेका एक ओरका गाल गर्म और लाल होना (दूसरी ओरका ठण्डा) और तकलीफ देनेवाली वेचैनी, गाल फूले और उसके साथ थोड़ा ज्वर भाव ; गर्म चीज पीनेसे दाँतका दर्द बढ़ता है ; स्नायुशूल, ऋतुके समय खून काला थक्का-थक्का ; गर्भावस्थामें औरतोंको ऐंठन ; "वच्चा हमेशा चिड़चिड़ा रहता है और थोड़ी-सी वातमें ही रंज हो जाता है ; वच्चेको गोदमें लेकर घूमानेसे वह शान्त रहता है।

चायना—ग्रन्थिवाले स्नायुमण्डलपर इसकी प्रधान क्रिया है ; शरीरसे वहुत ज्यादा खून या धातुका निकल जाना या पतले दस्त, पीव वहना या दूध वहनेकी वजहसे कमजोरी आ जानेपर चायना प्रयोगसे तुरन्त कमजोरी दूर होती और. आरोग्य हो जाता है। वँधे वक्तपर (जैसे ठीक एक दिन नागा देकर) "किसी वीमारीका प्रकोप" ; ऑख, मुँह, नाक प्रभृति किसी भी स्थानसे "रक्त-स्राव-प्रवणता", काले रंगका या थक्का थक्का 'खूनका स्राव, उसके साथ वेहोशी और देखनेकी ताकतका कम होना .और कानमें भों-भों शब्द, 'खूनकी कमी' ; खूनमें पानीका अंश ज्यादा, 'पेट फूलना' ऐसा मालूम हो, मानो पेट वायुसे भरा है (ऊपरी पेट फूलना—कार्वो-वेज ; तलपेट फूलना—लईको), डकार या वायु निकलनेसे आराम न मालूम होना (आरम, कार्वो-वेज) ; विना तकलीफका दस्त (पीला पानीकी तरह या मिट्टीके रंगका दस्त) ; जाड़ा या वहुत शीत ; प्यासके साथ पसीना ; नींदके समय या कपड़ेसे वदन ढँकनेपर पसीना पुराना गठिया वात ; 'फल खानेके वाद दस्त होनेपर' ; चाय पीनेकी वजहसे पेट फूलना ; वदनको छूना

(यहाँतक कि हवाका स्पर्श) रोगी सह न सकता हो ; खून इकट्ठा होनेकी वजहसे यकृत और प्लीहाका बढ़ना ; सविराम ज्वर (जिस बुखारमें जाड़ा गर्मी, और पसीना—ये तीनों अवस्थाएँ साफ-साफ मालूम होती हैं, ज्वर नित्य पहले दिनकी अपेक्षा दो घण्टा पहले आता है, रातमें ज्वर नहीं आता) सूजन भयानक भूख माथेमें टनककी तरह दर्द (ऐसा मालूम होना मानो सर फट जायगा) ; कमजोर करनेवा स्वप्न-दोष, ज्यादा स्त्री-संगम करनेकी वजहसे ध्वजभग ।

थूजा—जलन और मूत्रयन्त्र, गुदा और चमड़ेपर इसकी प्रधान क्रिया है। हैनिमैनके मतसे थूजा प्रधान मापक दोषको दूर करनेवाला (anti-sycotic) है । मांसके अकुर (vegetation) जैसी श्लेष्माकी गोटी एक तरहका नौसादर फोड़ा (जो जरायु, कंठ, नाकके छेद, कान या गुदामें पैदा होता है), मसे, प्रमेहसे पैदा हुआ उपमास वगैरह लक्षणोंका थूजा महौषध है । रुका हुआ प्रमेह, मूत्र मार्ग-प्रदाह, गाढ़ा स्राव, पेशाव हो जानेके बाद काटनेकी तरह दर्द और पेशावकी धारका बँटकर निकलना ; कान या नाकसे लगातार हरे रगका श्लेष्मा निकलना , तलपेटका फूलना ; दाँत निकलनेके समय ही उसका मसूढ़ा क्षय होने लगता है, पर अगले भागमें जखम नहीं होता (मेजे : अग्रमाण क्षय होता है—स्टैफि) ; वस्त्रसे ढँके अगके उद्भेद या न ढँके अगमें पसीना (विपरीत—साइलि) ; टीका लगवाने बाद या चेचक हो जानेके बाद शरीरका अच्छी तरह न सुधरना; तर हवामें रोगका बढ़ना या सुजाकका मवाद रोक देनेके कारण पैदा हुए उपसर्ग ; शोथ या अर्श ; मलद्वारका फटना ; पेशावकी नलीके मुँहके पास पीले या हरे रगका पीव जमा होना ; बार बार बून्द-बून्द पेशाब होना ; प्रमेहके बाद बहुमूत्र ; गर्मीकी बीमारीकी दूसरी अवस्था ; किसी-किसीके मतसे "थूजा" चेचक रोगकी एक बढ़िया दवा है और प्रतिपेधक भी है। ऐसा

मालूम होना कि उदरमें एक प्राणी हिल रहा है। यह थूजाका एक विशेष लक्षण है। कब्जकी बीमारीमें कड़ा मल आधा निकलकर फिर मलांत्रमें घुस जाये तो थूजा एक उत्कृष्ट दवा है। अधकपारीका दर्द और प्रमेहके कारण चक्षु-प्रदाह होनेपर (मर्क, आर्ज-नाई) थूजाको स्मरण करें।

नक्स-वोमिका—पीठ, मज्जा, गति-शक्ति और ज्ञान शक्ति देनेपर स्नायुपर इसकी प्रधान क्रिया है। शीर्ण, मलिन देह, चिड़चिड़ा मिजाज, सहजमें ही चढ़ उठना, झगड़ना, ईर्षा, द्वेष पित्त-प्रधान और दुश्चिन्ता-ग्रस्त, हमेशा पेटकी बीमारी भोगनेवालोंकी बीमारीमें यह मन्त्रकी तरह काम करता है। वायु-प्रधान धातु, जिसे सहजमें ही क्रोध आ जाता है; उद्वेग या दुश्चिन्ता, मानसिक परिश्रमसे (जैसे—पढ़ना आफिसका हिसाब करना) पैदा हुई बीमारियाँ, साधारणतः धनी लोगोंकी बीमारियाँ, जो दिनभर घरमें बैठकर लिखा-पढ़ा करते हैं मानसिक परिश्रमकी तुलनामें शारीरिक परिश्रम बहुत कम करते हैं, बहुत ज्यादा मसालेदार, स्वादिष्ट और गुरुपाक भोजन करते हैं या साधारण बीमारीमें भी बलवर्द्धक दवाएँ सेवन करते हैं, उनकी बीमारीमें नक्सको पहले स्मरण करना चाहिये। स्पर्शकातरता, आवाज रोशनी गन्ध आदि रोगी बिलकुल सहन नहीं कर सकता; खींचन या अकड़न, "तेज बुखारमें भी जाड़ा मालूम होना;" नशीली, उत्तेजक, तीती या "गर्म" दवाएँ सेवनकी वजहसे पैदा हुए उपसर्ग, "बार-बार पैखाना जानेकी चेष्टा, पर बहुत थोडा मल निकलता है" या बिलकुल ही पाखाना नहीं होता, नींद खुलनेके बाद थकावट मालूम होती है; भोजनके दो-एक घण्टा बाद पेडूमें भार मालूम होता है; कै या मिचली; पाखाना हो जाने बाद दर्द कुछ देरके लिये घट जाती है (खासकर रक्तामाशय रोगमें; बवासीरके साथ खुजली बादी मसा, "जुकाममें नाकसे दिनमें स्राव गिरता है, मगर रातको सूख जाता है;" सवेरे रोग बढ़ जाता

है, ऐसा मालूम होता है, मानो गलेमें कुछ अड़ा हुआ है; कब्जियतके साथ मलत्यागकी चेष्टा; सूखी खाँसी, सर्दी, रातमें जागना ज्यादा भोजन या मादक पदार्थोंके सेवनसे पैदा हुई बीमारियाँ, कभी पतले दस्त और कभी कब्जियत, शूलका दर्द, पेट फूलना छातीमें जलन, सर भारी और उसके साथ सरमें चक्कर, प्रसवके दर्दके समय बार-बार मलांत्रमें वग, कमरमें दर्द, आक्षेपिक दर्द होनेपर यह दवा देनी चाहिये। आँवोका वढना जीभका पिछला भाग मैला, भयकर सपने, नींदमें मानो कोई छातीपर चढ बैठा है; नाव या जहाजपर चढ़नेसे मिचली, आक्षेपवाला दमा, निचले अगमें ऐठन, जल्दी-जल्दी और ज्यादा परिमाणमें स्त्राव होना, ऋतुके समय और सवेरे ओकाई, पेशाव बून्द-बून्द होना मूत्राशयका पक्षाघात और यकृतकी बीमारी, पेशाव आदि पीनेकी वजहसे हाथ-पैरका काँपना। कोई-कोई कहते हैं कि सूर्यास्तके समय या सोनेके समय इसके सेवनसे ज्यादा होता है।

नेट्रम म्यूरियेटिकम—खून, लसिकामडल, परिपाक पथकी श्लैष्मिक-झिल्ली, यकृत और प्लीहापर इसकी प्रधान क्रिया है। दुर्निवार विषम ज्वर, ज्यादा मात्रामें क्विनाइन या आर्सेनिकके अपव्यवहारसे पैदा हुआ बुखार; "दुवलापन" रोगी पौष्टिक पदाथ परिमित मात्रामें खाता है, पर दुवला ही होता जाता है (आयोड ऐन्नोट); खूनकी कमी, कब्जियत, और यकृतका वढना, जीभपर नक्शेकी तरह मैल, प्रमेह, श्वेत-प्रदर; जुकाममें नाकसे खून गिरना, ज्वरके दाने, तीता या नमकीन स्वाद या स्वाद ही न मालूम होना, ओठ और मलद्वार सूखे और फटे-फटे, 'मेलेरिया ज्वर" (दस या ग्यारह वजे सिहरावन लगकर बुखार आता है); मुँह सरस, पर रोगीको सूखा मालूम होता है; जीभ, ओठ, नाक और अगुलीमें टनक या चिलककी तरह दर्द मालूम होता है, खुजली होती है और कलेजा धड़कता है। नेट्रम-म्यूरका रोगी दुवला, कमजोर रहता है, स्नायविक दुर्वलताके कारण रोगीके

हाथसे प्रायः चीजें गिर जाया करती हैं (एपिस, बोवि-)। रोगी सहजमें ही रो देता है, हमेशा दुःखित रहता है, बिना कारण ही रोता है ; पर यदि कोई सान्त्वना देता है, तो दुःख और रुलाईका भाव बढ़ जाता है। बहुत ज्यादा पढ़ना, सुईके काम करना या कोई दूसरा महीन काम करनेके कारण आँखोंमें स्नायुओंपर ज्यादा जोर पड़नेसे सर-दर्द हो जाये, तो नेट्रम-म्यूरके प्रयोगसे खूब फायदा होता है। नेट्रम-म्यूरका रोगी 'नमक और नमकीन चीजें' खाना पसन्द करता है। यह याद रखना चाहिये। 'तन्तुजायु' अध्यायमें 'नेट्रम म्यूर" देखिये।

पल्सेटिला—शरीरकी श्लैष्मिक झिल्ली, स्नैहिक-झिल्ली, शिराएँ आँख, कान नाक और जननेन्द्रियपर इसकी प्रधान क्रिया है। भारी चीज (जैसे—घी या तेलसे बनी); खाने-पीनेसे पैदा हुई बदहजमी, जीभपर मैल चढ़ा या पीली ; पित्त और श्लेष्मा कै करना ; अम्ल ; छातीमें जलन ; सफेद आम-मिले "पतले दस्त"; खसरा खसरेके बाद बहरापन, पनसाहा माता ; कानमें दर्द ; कानसे पीब बहना ; वात सन्धि-वात ; सविराम और स्वल्प विराम ज्वर ; मस्तिष्कमें सर्दी लगना और उसके साथ ही नाकसे गाढ़ा श्लेष्मा निकलना ; पलकोंका सट जाना ; "अनियमित ऋतु ; ऋतुका रक्त थक्का-थक्का काला ; ऋतु स्रावके समय दर्द ; श्वेत-प्रदर ; अण्डकोषका प्रदाह ; ऋतुका रुक जाना ; प्रमेह। "रोगके उपसर्ग हमेशा बदलते रहते हों"—कभी हँसना, कभी रोना, हर बार दस्तका ढंग और रंग अलग-अलग ; हमेशा जगह बदलता रहता है, दर्दके साथ रोगीको शीत मालूम होता है ; मुँह सूखता है, "पर प्यास नहीं रहती ; श्लैष्मिक-झिल्लियोंसे गाढ़ा, कोमल, पीली आभा लिये स्राव निकलता है"; पैर पीले रहनेके कारण ऋतु-रोध ; खुली ठण्डी हवामें रहनेपर बीमारीका घटना। प्रसवका दर्द उठनेके समय सेवन करनेपर जल्द सन्तान होनेकी सम्भावना रहती है और भ्रूणका शरीर घूमकर सर सामनेकी ओर आ जाता है। "थोड़ेमें

रहती किसी शारीरिक यन्त्रसे खून जाना, चेहरा लाल (खासकर कम्प अवस्थामें) बिना दर्दके अजीर्ण दस्त; मैलेरिया ; दिनभरकी खायी चीजकी डकार रातमें आना या कै हो जाना ; चेहरा उतरा हुआ, छातीमें धड़कन, खूनकी कै, दमा वगैरह रोगमें धीरे-धीरे टहलनेपर रोगीको आराम मालूम होना ; पुराना अतिसार, गलक्षत, ज्यादा रजःस्राव होना ; चाय या क्विनाइनके अपव्यवहारसे पैदा हुई बीमारियाँ। सुकुमारि औरतोंके लिये और स्नायु तथा रक्त-प्रधान धातुवाले मनुष्योंके लिये यह दवा बहुत ही फायदेमन्द है।

बेलेडोना—थुलथुला चेहरा और चमकीले लाल चेहरावालोंके लिये यह दवा ज्यादा व्यवहृत होती है। मस्तिष्क (cerebrum) और समूचे स्नायुमंडल और रक्त-संचालन यंत्रपर इसकी प्रधान क्रिया है। बेलेडोनाके रोगीको सहजमें ही सर्दी लग जाती है ; चटपट जल्दबाजीमें और हो-हल्लाकर काम करता है। सभी रोगोंमें बेलेडोनाके रोगीका चेहरा तमतमाया ; नाड़ी कठिन, पूर्ण और उल्लम्फनशील ; प्रचण्ड सर-दर्द ; प्रलाप ; खींचन या अकड़न ; आँखें लाल ; सरके भीतर टपक ; कनपटीमें टपक ; टकटकी लगाकर देखना ; मुँह, कंठ या जीभ सूखी या लाल। नयी बीमारीके प्रबल आक्रमणके समय बेलेडोनाका रोगी भूत, प्रेत और बाघ, भालु आदि जंगली जानवर देखता और डरकर बिछावनसे भागनेकी चेष्टा करता है। प्रलापमें हाथके पासकी चीजें तोड़ना चाहता है, काटने दौड़ता है, गाली देता है, जोरसे हँसता या दाँत कड़मड़ाता है। सारांश यह कि वह इतना उत्तेजित रहता है, कि सम्हालना मुश्किल होता है। (हल्का प्रलाप, काम-विषयकी बातें इत्यादि लक्षणोंमें—हायोस ; प्रलापमें लगातार हँसना, रोना या गाना लक्षणोंमें—स्ट्रैमो)। पेट फूला ; भोजनके समय गलेमें सड़ी बदबूका स्वाद मालूम होना ; शरीरका कोई स्थान उत्तप्त, सूजा, लाल, टनक या जलनकी तरह दद, "किसी स्थानपर खूनका इकट्ठा होना और प्रदाह" ;

(पीब पैदा होनेके पहले अर्थात् फोड़ा और व्रणकी पहली अवस्थामें) स्नायु-शूल ; पानीसे भय ; आम-रक्त ; थोड़ा रजः ; अतिरजः ; प्रसव-वेदना ; *खाँसी* ; *'आरक्त ज्वर ;'* विसर्प ; क्षत ; सन्यास। किसी तरहका दर्द "एकाएक आरम्भ और एकाएक बन्द होना", बेलेडोनाका एक खास लक्षण है।

ब्रायोनिया—फेफड़ेकी झिल्ली, मस्तिष्क और यकृतपर इसकी प्रधान क्रिया है। वात और पित्त-प्रधान धातुवालोंकी बीमारीमें इससे विशेष लाभ होता है। "सारे शरीरका सूखापन ही इसका निर्देशक लक्षण है।" मुँह और पाकाशयमें सूखापनकी वजहसे प्यास, आँतोंमें सूखापनके कारण कब्ज, शरीरका चमड़ा सूखा रहनेके कारण पसीना न होना, सूखी खाँसी, *फुस्फुस वेस्टका सूखापनके कारण खाँसी और प्लुरिसी* (कैलि-कार्ब) ; पेशाब गाढ़ा और थोड़ा—इस दवापर ध्यान देनेके विशेष विषय है। ओंठ, मुँह और पाकस्थली *'सूखी'*—इसीसे रोगी बहुत देर बाद ज्यादा पानी पीकर अपनी प्यास दबाता है ; ज्यादा गर्मी या बरसातमें सूखी ठण्डी हवा लगकर बीमारी होना। ऋतुके समय ऋतु न होकर नाकसे खून गिरना ; स्तन कड़े, गर्म और दर्द भरे। "कब्जियत, पर मल त्यागनेकी इच्छा बिलकुल ही न होना ;" दस्त देखनेमें सूखा, कड़ा, झामा ईंटकी तरह, वायुनली-प्रदाह, फेफड़ेका प्रदाह (पहली *अवस्थामें*) ; *वक्षस्थलमें सर्दी लगनेकी वजहसे दर्द (खाँसने और साँस* लेनेमें दर्द मालूम होना) ; सूखी खाँसी ; सन्धिवात (खासकर जब चलने-फिरनेमें तकलीफ मालूम हो) और कटिवात, वात-ज्वर, कामला, पित्तसे पैदा हुआ बुखार और सरमें दर्द, पित्तकी कै, वक्षस्थलमें जलन, तीती डकार, चिड़चिड़ा स्वभाव, सूतिका ज्वर, काँटा चुभने या कट जानेकी तरह दर्द ; हिलने-डुलनेपर "बीमारीका बढ़ना", स्थिर भावसे रहनेपर घटना, ब्रायोनिया प्रयोगका प्रधान लक्षण है। कोई भी बीमारी क्यों न हो, अगर रोगी प्रलापमें दिनभरके

(पीव पैदा होनेके पहले अर्थात् फोड़ा और व्रणकी पहली अवस्थामें) स्नायु शूल ; पानीसे भय ; आम-रक्त ; थोड़ा रजः ; अतिरज. , प्रसव-वेदना , खाँसी , 'आरक्त ज्वर ,' विसर्प ; क्षत ; सन्यास । किसी तरहका दर्द "एकाएक आरम्भ और एकाएक बन्द होना", बेलेडोनाका एक खास लक्षण है ।

ब्रायोनिया—फेफड़ेकी झिल्ली, मस्तिष्क और यकृतपर इसकी प्रधान क्रिया है । वात और पित्त-प्रधान धातुवालोंकी बीमारीमें इससे विशेष लाभ होता है । "सारे शरीरका सूखापन ही इसका निर्देशक लक्षण है ।" मुँह और पाकाशयमें सूखापनकी वजहसे प्यास, आँतोंमें सूखापनके कारण कब्ज, शरीरका चमड़ा सूखा रहनेके कारण पसीना न होना, सूखी खाँसी, फुस्फुस वेस्टका सूखापनके कारण खाँसी और प्लुरिसी (कैलि-कार्ब) , पेशाब गाढ़ा और थोड़ा—इस दवापर ध्यान देनेके विशेष विषय है । ओंठ, मुँह और पाकस्थली 'सूखी'—इसीसे रोगी बहुत देर बाद ज्यादा पानी पीकर अपनी प्यास दबाता है ; ज्यादा गर्मी या बरसातमें सूखी ठण्डी हवा लगकर बीमारी होना । ऋतुके समय ऋतु न होकर नाकसे खून गिरना ; स्तन कड़े, गर्म और दर्द भरे । "कब्जियत, पर मल त्यागनेकी इच्छा बिलकुल ही न होना ;" दस्त देखनेमें सूखा, कड़ा, झामा ईंटकी तरह, वायुनली प्रदाह, फेफड़ेका प्रदाह (पहली अवस्थामें) , वक्षस्थलमें सर्दी लगनेकी वजहसे दर्द (खाँसने और साँस लेनेमें दर्द मालूम होना) ; सूखी खाँसी ; सन्धिवात (खासकर जब चलने फिरनेमें तकलीफ मालूम हो) और कटिवात, वात-ज्वर, कामला, पित्तसे पैदा हुआ बुखार और सरमें दर्द, पित्तकी कै, वक्षस्थलमें जलन, तीती डकार, चिड़चिड़ा स्वभाव, सूतिका ज्वर, कांटा चुभने या कट जानेकी तरह दर्द ; हिलने-डुलनेपर "बीमारीका बढ़ना", स्थिर भावसे रहनेपर घटना, ब्रायोनिया प्रयोगका प्रधान लक्षण है । कोई भी बीमारी क्यों न हो, अगर रोगी प्रलापमें दिनभरके

कम बोले या घर जानेका आग्रह करे, तो ब्रायोनियाके प्रयोगसे आरोग्य होगी।

विरेट्रम-ऐल्बम—मस्तिष्क और पीठकी रीढ़की स्नायुमंडलके बीचमें परिपोषण यन्त्रोंपर इसकी प्रधान क्रिया है। कोई भी बीमारी क्यों न हो, शरीर जीर्ण-शीर्ण और बरफकी तरह ठण्डा, मलिन, उतरा चेहरा, आँख मुँह बैठ जाना, मृत्यु निकट, ऐसी अवस्थामें विरेट्रमको स्मरण करना उचित है। (हाइड्रो-एसिड, कार्बो-वेज, कैम्फर)। खासकर मैलेरिया, हैजा, आमाशय, न्युमोनिया प्रभृति नयी बीमारीमें ऊपर लिखे लक्षण रहनेपर वेरेट्रम खूब लाभ करता है। "हैजा", भातके नीचेका पानी या चावलके धोवनकी तरह ज्यादा परिमाणमें दस्त, कै, "समूचे शरीरकी शीतलता, अकड़न ;" शूल ; "कमजोरीके साथ ठण्डा पसीना ;" स्नायु-शक्तिमें सुस्ती, प्रलाप ओकाई या वमनके साथ "कपालपर ठण्डा पसीना" इसका निर्देशक लक्षण है। उन्माद रोग और उसके साथ चीजोंको फाड़ने या काट डालनेकी इच्छा ; निस्तब्ध भाव ; क्रोध आनेपर रोगीका पागल हो जाना ; वात रोग ; सर्द हवामें बढ़ना ; असह्य दर्द, तकलीफसे रोगीका अंट-संट बकना। 'बहुत ज़्यादा स्राव ;' पाखाना, पेशाब, लार, पसीना बहुत ज्यादा परिमाणमें निकलते हैं।

मर्क्यूरियस वाइवस—प्रत्येक यन्त्र और विधान-तन्तुपर इसकी क्रिया है। डाक्टर नैशका कथन है कि फोड़ा पकानेके लिये मर्क्यूरियस 'नीचा क्रम' और उसे बैठा देनेके लिये इसे 'ऊँचा क्रम' में प्रयोग करना चाहिये। मर्क्यूरियसके रोगीका मसूढ़ा फूलता है और उसमें छेद हो जाता है, उससे खून गिरता है ; जीभ फूल जाती है और झूल पड़ती है और ज़ीभपर दाँतके दाग दिखाई देते हैं ; जीभ रस भरी ; मुँह बदबू-दार लार भरा, परन्तु तेज प्यास रहती है, "दिन-रात बहुत पसीना होता है, परन्तु पसीनेसे रोग नहीं घटता।" हड्डियोंकी बीमारियाँ,

रातमें रोगका बढ़ना, दाहिने फेफड़ेका निचला अंश आक्रान्त होनेपर इसका प्रयोग होता है। ग्रन्थियोंका फूलना या पीब होना, गलेके भीतर घाव, लार बहना, लारमें धातुका स्वाद, मुँहके भीतर घाव, दाँतमें दर्द; कानसे पीब बहना, नाक या आँखसे श्लेष्मा या पीब निकलना, आँखें उठना प्रभृतिकी मर्क्यूरियस उत्कृष्ट दवा है। यकृतका प्रदाह (दाहिनी करवट सोनेपर दर्दका बढ़ना), यकृत कड़ा और फूला तथा उसमें दर्द; खट्टा पित्त निकलना, कामला, पैत्तिक उदरामयमें भी सफलतापूर्वक इसका प्रयोग होता है। गर्मीके घावका स्पष्ट दिखाई देना, पाकस्थलीका प्रदाह। उपदंश, वात, वाघी, उपदंशज वाघी और जिन घावोंमें सहजमें पीब नहीं होता। आमके साथ खूनके दस्त, काँखना (खासकर पाखाना फिरते वक्त) लक्षणमें इसको निम्न-शक्ति लाभ करती है। 'रातके समय बिछावनकी गर्मीसे रोगका बढ़ना' मर्कके प्रयोगका प्रधान लक्षण है।

रस-टक्स—शारीरिक यन्त्र, श्लैष्मिक-झिल्ली, चर्म, पेशी और जोड़ोंके विधान तन्तुपर इसकी प्रधान क्रिया है। जीभ लेप चढ़ी, फटी-फटी और 'जीभका अगला भाग लाल, तिकोनिया, बहुत बेचैनी, हमेशा करवट बदलना; आन्त्रिक ज्वरकी तरह उपसर्ग; थोड़ा प्रलाप, मोह, पैशिक वात, कमरका स्नायु-शूल (बाएँ भागमें) बायें बाँहका दर्द, उसके साथ हृद्-रोग। निकलनेके समय कन्धेमें दर्द, बुखारकी 'शीतावस्था' में तकलीफ देनेवाली सूखी खाँसी और 'उष्णावस्थामें' सब शरीरमें पित्ती निकल आना; वात, खासकर पुराना वात, सन्धिवात, कटिवात वातसे पैदा हुआ पक्षाघात, छालेवाला विसर्प, पनसाहा माता; सब बदनमें खसराकी तरह लाल दाने; अतिसार-मिला 'सान्निपातिक बुखार'; चर्म-रोग (असह्य जलन और खुजलाहट तथा अकौता); हिलने-डुलनेसे बीमारी दबी हुई मालूम होना और शान्त रहनेपर वृद्धि (विपरीत—ब्रायोनिया) रस-टक्सके प्रयोगका प्रधान लक्षण है। तर

ठण्ड लगकर बीमारियाँ या शरीरके किसी स्थानमें मोच आ जानेपर रस-टक्सके प्रयोगसे लाभ होता है। मैलेरिया रोगमें मुँहमें ज्वरके दाने निकलनेके लक्षणमें इसकी नेट्रम-म्यूरसे तुलना करें।

लाइकोपोडियम—श्वास-यन्त्र, परिपाक-यन्त्र, जनन और मूत्र-यंत्र श्लैष्मिक-झिल्ली, चमड़ा और यकृतपर इसीकी प्रधान क्रिया है। सुस्त मन, कमजोर स्मरण-शक्तिवाले मनुष्य; सहजमें ही जिन्हें क्रोध आ जाता है, उनकी बीमारीकी यह उत्कृष्ट दवा है। दाहिने अंगकी बीमारियाँ होनेपर लाइकोपोडियमको याद करना चाहिये। न्युमोनिया (दूसरी अवस्थामें सुरखीके रंगका बलगम निकलनेपर भी नासाफलक दोनों ऊपर उठते और उतरते हैं), आँत उतरना, फोड़ा वगैरह जो कोई बीमारी दाहिनी बगल हो-होकर बायीं ओर फैलती है; पेट फूलनेके साथ "नीचेकी ओरसे" वायु निकलना; तलपेटमें वायु-संचय, पेटमें भड़भड़ आवाज; पेशाबमें लाल रंगका तलछट जमनेपर लाइको खूब लाभ करता है। तीसरे पहर 'चार वजेसे रातके आठ बजेतक किसी बीमारीका प्रकोप'; एक पैर ठण्डा, दूसरा गर्म; भूख, परन्तु थोड़ा खानेसे पेटका भर जाना या पेटमें भार मालूम होना; पसीनेके बाद ही प्यास ये कई लाइकोके विशेष उल्लेख योग्य लक्षण हैं। "सविराम ज्वरमें" खट्टा स्वाद, खट्टा पसीना, खट्टी डकार, खट्टी कै; कब्जियत, पर मलद्वार सिकुड़ा रहनेकी वजहसे पाखाना नहीं होता; पुरानी बीमारी खूनकी खराबी; सवेरे नींद खुलते समय और बादमें सरमें चक्कर; जलन करनेवाली डकार, मुँहमें पानी भर आना और छातीमें जलन; मानसिक परिश्रमसे पैदा हुआ अग्निमान्द्य। 'डिफ्थीरिया रोगमें' श्लैष्मिक-झिल्लीका पर्दा पहले दाहिनी तरफ आरम्भ होकर धीरे-धीरे बायीं ओर फैलता है (विपरीत—लैकेसिस, लैक-कैन), वृद्धोंका रति-शक्ति-दौर्बल्य और युवकोंका अतिरिक्त इन्द्रिय-संगम या हस्तमैथुन आदि जनित ध्वज-भंग रोगमें लाइको विशेष लाभदायक होता है।

तरफ झुककर चलता है, खड़ा नहीं रह सकता। खड़े रहनेपर बहुत तकलीफ होती है। सल्फरका रोगी बच्चा नहाना नहीं चाहता। जल्दी-जल्दी काम-काज करता है, देर सह नहीं सकता। हाथ-पैर, माथेका ब्रह्मतालु—सबमें हर समय जलन रहती है। सोनेके समय जलन बन्द रखनेके लिये दोनों पैर बिछावनके बाहर निकाल रखता हैं। सब तरहके चर्म रोग और प्रायः सब तरहकी पुरानी बीमारीमें यह लाभ करता है। खुजली, कब्जियत, बवासीर, कफ, घाव, वात, फोड़ा, अंगुलवेढ़ा छोटी क्रिमि, अतिसार; सवेरे बिछावन छोड़ते ही पाखाना लगता है (ऐलोज, सोरिनम); माथेके भीतर मानो "गर्म" पानीसे दग्ध हो रहा है ऐसा मालूम होना, बार-बार पेशाब होना, पेशाब होनेके समय जलन, सब वदनमें (खासकर तलवेमें) बहुत "जलन मालूम होना"; ओंठ, कान, नाकके छेद, आँखोंकी पलकें, पेशाबकी नली, मलद्वार आदिका रंग लाल, मानो खून भरा है; कोई चमड़ेकी बीमारी दबकर कोई दूसरा तेज बीमारी होना, कोई बीमारी जल्दी छोड़ना न चाहता हो; चुनी हुई दवा देनेपर भी कोई लाभ न होता हो सोरा-दोष आदि सल्फरका प्रकृतिगत लक्षण रहनेपर सल्फरके प्रयोगसे विशेष लाभ होता है। आँखें उठना, नियमित समयके बहुत पहले या बाद थोड़े दिन रहनेवाला ज्यादा या थोड़े परिमाणमें रजः-स्राव; जलन और तकलीफ देनेवाला श्वेत-प्रदर। जिन रोगियोंको उपयुक्त दवा देनेपर भी कोई फायदा न होता दिखाई दे, उन्हें बीच-बीचमें सल्फर खिलाकर दवा देनेसे ज्यादा फायदा होता है; कभी-कभी बीमारीके पहले और अन्तमें यह दवा देकर इलाज करना पड़ता है। नहाने या वदन धोनेके बाद, बिछावनकी गर्मीसे या आधी रातके बाद, रोगका बढ़ना इस दवाके प्रयोगका प्रधान लक्षण है। "सल्फर प्रयोग करनेके पहले कभी कैल्केरिया-कार्ब न देना चाहिये।"

साइलिसिया—("तन्तु-जायु" अध्यायमें साइलिसिया देखिये) शिर्णता रोग, पुष्ट भोजन मिलनेपर भी बच्चेका शरीर न बढता हो और सूखता जाता हो—बच्चेका हाथ-पैर पतले लिक-लिक, चलना या बैठना सीखनेमें देर, पेट बडा, चेहरा बूढोंकी तरह, देहकी तुलनामें सर बडा रहता है, माथेका हाड नहीं जुडता ; सरमें ज्यादा पसीना होता है ; टीका (vaccination) के दुष्परिणामसे उत्पन्न बीमारियोंमें इसकी ऊँची शक्ति मन्त्रकी तरह काम करती है। सुई, काँटा, मछलीका काँटा वगैरह शरीरमें घुसनेपर सिलिकाके सेवनसे सहजमें ही उसके बाहर निकलनेमें सहायता मिलती है ; श्लैष्मिक-झिल्ली, ग्रन्थि, अस्थि और सन्धि-ग्रन्थियोंकी सूजन, अगुलबेढा, नासूर, तरह तरहके फोडे, गण्डमालासे पैदा हुआ घाव, साइलिसियाके निर्वाचनका प्रधान क्षेत्र है। बेचैनी, मस्तकमें बदबूदार पीब भरी पपडी जमना। स्नायुओंकी कमीकी वजहसे हाथ-पैरका पतला पड जाना, हड्डी और हड्डीको ढँकनेवाली चमडीमें पीब पैदा हो जाना, सर दर्द, गर्दनके पिछले भागसे सर-दर्द आरम्भ होकर समूचे माथेमें फैल जाता है। गहरी कब्जियत, जले झामेकी तरह मल, खूब काँखनेपर "कुछ निकलकर फिर मलांत्रमें घुस जाता है।" पूर्णिमा और अमावस्याके समय रोगकी "वृद्धि"। आँखमें नासूर, नखके कोनमें जखम, नख नष्ट हो जाना, चर्म रोगका शीघ्र आरोग्य न होना मलान्त्र या शरीरके किसी भी स्थानमें नासूर, पुराने जखममें फिरसे पीब हो जाना। पाखाना होनेके समय मलांत्रका फट जाना, शरीरमें खट्टी गन्ध, शरीर ठण्डा प्रभृति लक्षणोंमें भी साइलिसियाको स्मरण करना चाहिये।

सिकेलि-कोर—मस्तिष्क और पीठकी रीढके स्नायु मडलपर इसकी प्रधान क्रिया है। क्षीण, मलिन चेहरा और चिडचिडा मिजाज रहनेवाले व्यक्तियोंकी बीमारियाँ, खासकर स्त्रियोंकी बीमारियोंमें यह दवा ज्यादा फायदा करती है। जिन्हें ज्यादा रक्त-स्राव हुआ करता

है, ऐसी धातुवालोंके लिये यह दवा विशेष लाभदायक होती है। स्त्रियोंको ऋतु-स्रावके समय यदि स्राव आरम्भ होकर बन्द ही न होना चाहे, पानीकी तरह पतले रक्तका बराबर स्राव होता रहे या गर्भ-स्रावके बाद इस ढंगका स्राव हो, तो सिकेलि बहुत ज्यादा सहायता करता है। यदि वृद्ध मनुष्योंका कैन्सर प्रभृति दूषित फोड़ा जल्दी आराम न हो और मांसके धोवनकी तरह उससे रक्त बहा करे या सूखा सड़न रोग (गैंग्रीन) की बीमारी हो जाये या रक्तार्वुद खून चुनी हुई दवासे भी आरोग्य न हो, तो ऐसी अवस्थामें सिकेलि ही महौषध है। पक्षाघात ; प्रसवका दर्द, प्रसवके बादका दर्द, रक्त-स्राव (खासकर क्षीणांगी स्त्रियोंका)। "हैजा"—अकड़न ऐंठन ; हैजामें शरीरमें दाह—हमेशा हवा करनेके लिये रोगी कहा करता है, हाथ-पैर अवश हो जाते हैं और श्वासरोधका भाव रहता है ; अनजानमें कमजोर करनेवाले हरे रङ्गके बहुत ज्यादा दस्त ; समूचा शरीर ठण्डा, परन्तु रोगी शरीरमें असह्य दर्दके कारण छटपटाया करता है, गर्म प्रयोगसे या आवरणसे जलन घटनेके बदले, बल्कि बढ़ जाती है, ठण्डसे आराम मिलनेके लिये जमीनपर सोना चाहता है। आमाशयसे रक्त-स्राव, अधिक परिमाणमें और अधिक दिवस स्थायी ऋतु "गर्भ-स्रावकी आशंका" (तीसरे अथवा चौथे महीनेके गर्भ-स्रावकी आशंकाको सिकेलि एक उत्कृष्ट दवा है (सेबाइना) "प्रसव-क्रिया जल्दी होनेके लिये", सिकेलि खासकर θ या "निम्नक्रम सेवन करना बहुत बुरा काम है।" प्रसवके समय यदि दर्द नियमित रूपसे न हो या प्रसव-द्वार फैल जानेके बाद भी अनियमित दर्दके कारण प्रसव न होता हो, तो सिकेलि सुन्दर काम करता है।

सिना*—अंत्र नालीपर इसकी प्रधान क्रिया है। सिनाके बच्चेके पेटमें क्रिमि रहती है, मिजाज चिड़चिड़ा रहता है, आँखोंके नीचे काला

* इसका असली उच्चारण "साईना" (Cina) है।

दाग पड़ता है, यह वह मांगता है, किसी तरह सन्तुष्ट नहीं होता, हमेशा गोदमें चढ़कर घूमना चाहता है, रें-रें किया करता है, दिनभर खाना चाहता है, मीठा खानेका प्रबल आग्रह। हमेशा नाक खुजलाता है (क्रिमि रहे या न रहे), नाकमें अंगुली डालता है, चिड़चिड़ा स्वभाव, बच्चा हमेशा ही घूंट लेता रहता है, मानो कुछ गलेमें अटका है, एकाएक बार-बार तेज बुखार; नींद न आना, घुंडी खाँसी, खींचन या अकड़न, दाँत कड़मड़ाता है, अघोर अवस्था (क्रिमिकी वजहसे), आँतोंमें क्रिमि, भोजनमें अरुचि या बुरी भूख, रातमें अनजानमें पेशाब हो जाना, नींदमें बिछावनमें छटपटाता है, दूधकी तरह पेशाब, हूपिंग कफ या प्रबल खाँसी, क्रिमिसे पैदा हुए कितने ही उपसर्ग; अविराम ज्वर (क्रिमि रहे या न रहे) प्रभृति लक्षणोंमें सिनाका प्रयोग करना चाहिये।

हिपर-सल्फर—चमड़े और श्वास यन्त्रकी श्लैष्मिक-झिल्लीपर इसकी प्रधान क्रिया है। "पीव पैदा करना और बढ़ाना इसका प्रधान गुण है; ठण्डी हवा या सामान्य दर्द भी बिलकुल सहन नहीं होता; स्पर्शद्वेष;" थोड़ी सी चोट या छिल जानेसे भी जिन्हें पीव पैदा हो जाता है—"पीव पैदा करना या पीव बन्द करना।" बोरिक वगैरह डाक्टरोंका कहना है कि 'फोड़ा पकानेके लिये और फोड़नेके लिये' (अर्थात् पीव पैदा करनेके लिये) हिपर निचला क्रम (जैसे, २x विचूर्ण) देना चाहिये और 'फोड़ा बैठा देने' के लिये (अर्थात् पीव पैदा होना रोकनेके लिये) हिपर उच्च-क्रममें (जैसे ३०—२००) देना चाहिये। खून और पीव भरी फुन्सी, पीव-भरा जखम, सड़ा घाव, चारों ओर लाल रंग, सूखी ठण्डी हवा लगकर घर-घर खाँसी, घुंडी या दमा; 'गलेमें मानो मछलीका काँटा अटका हुआ है' मालूम होना (गलक्षतमें पीव होनेका यह पूर्व लक्षण है), टपक या खोंचा मारनेकी तरह दर्द; शीत मालूम होना, दिन रात पसीना, 'पेशियोंकी कमजोरीकी वजहसे कष्टसे पाखाना होता है और धीरे-धीरे पेशाब होता है, "पारेके

अपव्यवहारसे पैदा हुए उपसर्ग, सोरा और उपदंश धातु", स्वर-भंग, श्वासकष्ट (खासकर घुंड़ी खाँसीकी पहली अवस्थामें) फोड़ा, अंगुलवेढ़ा, माथेमें कड़ी फुन्सियाँ, पुरानी खाँसी, पुराना अग्निमान्द्य, बवासीर, कब्जियत, कानसे पीव गिरना, गर्मीके घाव और बदबूदार पीव निकलनेमें इसका प्रयोग होता है। गण्डमाला धातुग्रस्त मनुष्योंके लिये, "पारेके अपव्यवहारसे पैदा हुई बीमारी" में और पश्चिमी हवासे रोग बढ़नेके लक्षणमें, यह दवा बहुत फायदेमन्द है।

हैमामेलिस—खूनको ले जानेवाली रक्तवहा शिराओंपर इसकी प्रधान क्रिया है। शरीरकी किसी भी शिरासे "काले रंगका" (passive) रक्त स्राव हैमामेलिस प्रयोगका प्रधान लक्षण है। खूनी बवासीर, मलद्वार और कमरमें बहुत दर्द, भार और जलन; आभ्यान्तरिक यन्त्र (जैसे—आँखें, कान, नाक, फेफड़े, जरायु, मलद्वार वगैरहसे) "काला-काला थक्का-थक्का" रक्त-स्राव। स्त्री-जननेन्द्रियकी नसें-फूलीं, जरायु ज्यादा मात्रामें काला रजः-स्राव होनेपर इस दवाका भीतरी और बाहरी प्रयोग होता है।

[मेटीरिया-मेडिकाका विशेष ज्ञान प्राप्त करनेके लिये हमारा प्रकाशित "पारिवारिक भेषज-तत्व" और पूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेके लिये "भेषज-लक्षण-संग्रह" ग्रन्थ खूब ध्यानसे पढ़ना चाहिये।]

टीशू रेमिडीज या बायोकेमिक दवाएँ

बायोकेमिक निदान-तत्वके निकालनेवाले डा० सुसलर कहते हैं कि खूनका सफेद अंश या अंडलाल (albumen), मेद, शक्कर, पानी, अम्ल, क्षार आदि पदार्थ (inorganic salts अजैव लवण) जीव-जन्तु और खूनके प्रधान उपादान है। कैल्केरिया फ्लुओरिका, कैल्केरिया फास्फोरिका, कैल्केरिया सल्फ्यूरिका, फेरम फास्फोरिकम, कैलि-म्यूरियेटिकम. कैलि फास्फोरिकम, कैलि सल्फ्यूरिकम, मैग्नेशिया

फास्फोरिका, नेट्रम-म्यूरियेटिकम, नेट्रम फास्फोरिकम, नेट्रम सल्फ्यूरिकम और साइलिसिया—ये बारह साल्ट (या नमक) से जीव देहके सभी तन्तु (tissue) या अनुकोष (cells) बने हैं। वे कहते हैं कि इन साल्टमेंसे किसी एककी भी शरीरमें कमी होनेपर, तन्तुओंका क्षय होता है और बीमारी पैदा हो जाती है और उनका अभिमत यह है कि उस खास साल्टसे उस क्षयको फिर भर देनेसे बीमारी अच्छी हो सकती है। इसलिये उन्होंने उन बारह नमकोंका नाम "तन्तु-जायु" (Tissue Remedies) रखा है। उनका कथन कितना प्रामाणिक है, उस बातपर इस जगह विचार करना वृथा है। हाँ, नीचे लिखी दवाएँ होमियोपैथिके मतसे अच्छे शरीरपर परीक्षा की जा चुकी (proved) हैं और "रोगी शरीरमें बार-बार फायदा करनेके कारण", हमलोगोंने इन बारह दवाओंके प्रधान लक्षण इस पुस्तकमें शामिल कर दिये हैं। डा० सुसलर पहले होमियोपैथ थे। इसके बाद अपने नामको स्थायी करनेके लिये ही शायद उन्होंने इस मतका-प्रचार किया है।

होमियोपैथिक फार्माकोपियाके मतसे ही बायोकेमिककी दवाओंका क्रम तैयार होता है। सुसलर साहब साधारणतः ६x—१२x विचूर्ण व्यवहार करते थे; परन्तु होमियोपैथ सभी क्रम (१x—१०००) अवस्थाके अनुसार व्यवहार किया करते हैं।

कैल्केरिया फ्लुओरिका १२x, २००x—हड्डीमें अर्बुद; "कड़ा अर्बुद", हड्डीके जोड़वाली जगहका बढ़ना, गाँठें फूलना, गाँठोंका कड़ा होना, आँखोंमें मोतियाबिन्द, स्नायुओंमें सूजन, भगन्दर रोगमें नासूर, आँत उतरना, बवासीर, जरायुसे स्राव, कानमें कड़ा मैल, हाथ फटना, अलग, असमान या दर्द भरे दाँत, बच्चोंको देरसे दाँत निकलना, खाँसी और उसके साथ थक्का-थक्का पीला बलगम निकलना, शारीरिक यन्त्रोंका (खासकर जरायुका) अपनी जगहसे हटना, हृत्पिण्ड, कोष और शिराओंका बढ़ना, स्वरयन्त्र और कण्ठनाली सूखा मालूम होना।

विश्रामके समय और तर ऋतुमें रोगका बढ़ना और गर्म प्रयोगसे 'घटना'—इस दवाका विशेष लक्षण है।

कैल्केरिया फास्फोरिका २x, २००x—अंडलाल (albumen) का निकलना, खूनकी कमी, "भोजन भरपूर मिलनेपर भी बच्चेका शरीर पुष्ट न होना;" अजीर्ण, शरीरका सूखते जाना, शरीरकी टूटी हुई हड्डीका जोड़ अच्छी तरह न बैठना, बच्चेका ब्रह्मतालु न भरना", हड्डीकी बीमारी, देरसे दाँत निकलना, घुटनेके जोड़की जगह सफेद सूजन, अकड़न, खींचन और सुस्ती, हाथ-पैर ठण्डे, रक्त संचालन क्रियाकी गड़बड़ी, वंशगत धातु-दोषसे पैदा हुआ गुटिका दोष (यक्ष्मा वगैरह), मूत्रपिण्डकी बीमारी, श्वेत-प्रदर, हरित् रोग, रातका पसीना, जखम, दाँतोंका जल्दी-जल्दी नष्ट होना, बरसातमें वात होना, माथेमें जल-संचय, पीठकी रीढ़ और गर्दन कमजोर, सरमें दर्द, कपालमें बहुत पसीना (मोटे ताजे बच्चेको)। ऋतु-परिवर्त्तन, तरी या हिलने-डुलनेसे रोगका 'बढ़ना' और सोनेसे 'घटना' इस दवाका विशेष लक्षण है।

कैल्केरिया सल्फ्युरिका ३x, २००x—फोड़ा, सर्दी सफेदी लिये पीला स्राव, शरीरके किसी स्थानमें पीव पैदा हो जानेकी तैयारी, आँखोंका नासूर, कनीनिका (cornea) में जखम या पुराना आमाशय या पुराने जखमसे पतला पीव निकलना या उसकी वजहसे धीमा बुखार होना, "मसूढ़ेमें छाले", यकृत और मूत्रयंत्रकी बीमारी, न्युमोनिया और ब्रांकाइ-टिसकी तीसरी अवस्था, सरमें दर्द, मिचली, स्नायुशूल, शरीरमें स्पर्शा-नुभव शक्तिकी ज्यादती, फल और खट्टी चीज खानेकी इच्छा, फुन्सी या फोड़ा (खासकर मुँहमें), पुराना वात, चमड़ेकी बीमारी, ऐलोपैथिक मतसे किसी बीमारीका इलाज होने बाद यह दवा खूब काम करती है।

कैलि म्यूरियेटिकम ६x विचूर्ण, २००x—"प्रदाहकी दूसरी अवस्थामें" यह ज्यादा फायदा करता है। यह खासकर श्लैष्मिक-झिल्लीपर काम करता है। सफेद रंगका श्लेष्मा निकलना, जीभके पिछले

भागमें सफेद या धुमैले रंगका दाग, बीमारीकी पुरानी अवस्थामें थक्का-थक्का बलगम, खाँसी, स्वरभंग, सूखा श्लेष्मा, गले वा कानकी गांठका फूलना, वायुनली-सम्बन्धी बीमारी, मिचलीके साथ सरमें दर्द, कानमें भों-भों शब्द, मुँहमें जखम, मुखमें लारकी कमी, डिफ्थीरिया (प्रधान दवा), बदहजमी, मृगी रोग, वात, वातकी वजहसे जोड़ोंका सूजना, बिवाई फटना, बदनभरमें रूसी, पृष्ठाघात (carbunces), कब्जियत, पाडु रोग, युस्टेकियन टियुबके प्रदाहसे पैदा हुआ बहरापन, कानमें पीब (पुरानी बीमारी) गलेका जखम, पनसाहा माता, चेचक, आरक्त ज्वर, विसर्प रोग, अकौता, फेफड़ेका प्रदाह (न्युमोनिया), फेफड़ेके आवरणका प्रदाह (प्लुरिसी), श्वेत-प्रदर, उपदंश रोग, प्रमेह, रजःकृच्छ्र, रक्त-प्रदर, शोथ, अतिसार, सान्निपातिक ज्वर, प्लेग, अजीर्णकी वजहसे दमा श्वेतसार मिला पदार्थ खानेकी वजहसे पेटमें दर्द होना वगैरह। भारी चीजें खाना और हिलानेसे रोगका 'बढ़ना' इस दवाका प्रधान लक्षण है।

कैलि फास्फोरिकम ३x, २००x विचूर्ण—"यह मांस-पेशी, स्नायु, मस्तिष्क और खूनकी दवा है।" मनका सुस्त पड़ जाना (बड़ी उम्रके आदमियोंका भी बच्चोंकी तरह रोना); स्नायविक अवसन्नता, स्नायु रोग, खूनका बिगड़ जाना, सड़नेवाली अवस्था, सान्निपातिक ज्वर, दुष्ट-क्षत, मल और पसीना वगैरहमें बदबू, शरीरके किसी स्थानसे सड़नेकी पहली अवस्था; शरीरभरमें फुन्सियाँ, बदबूदार सर्दी, नाकके दर्द, छेदसे बहुत बदबूदार श्लेष्मा बहना; पतले दस्त, कानमें दर्द, गर्दन अकड़ जाना, दमा, सर्दी खाँसीके कारण गर्मीके दिनोंका बुखार, आँखें लाल, लकवाकी तरह अवस्था, मृगी रोग, ज्यादा शराब पीनेकी वजहसे नींदका न आना प्रभृति। पेटमें दर्द, बहुत कमजोरी (शारीरिक या मानसिक)। खूनका रंग काली आभा लिये, नाड़ी कमजोर—गति पहले तेज, पीछे मन्द, याददाश्तका कम पड़ जाना, बदहजमी, सूतिका ज्वर, काले रंगकी चेचक, रक्त-स्राव, शरीरपर रूसी, जरायुसे रक्त-स्राव, अण्डलाल मिला

पेशाब, गुल्म-वायु, उन्मत्तता, नींदमें घूमना, रोशनी और खुली जगहमें जानेसे डर, सरमें चक्कर, आमाशय-प्रदाह, पाकाशयका जखम, हूप खाँसी, वात, आमवात, नसोंका काँपना, मेहनतकी वजहसे हाँफना या अकड़न, रजसाधिक्य।

आवाज, सर्द हवा लगना, ज्यादा मेहनत या लिखने-पढ़नेसे 'बीमारीका बढ़ना', धीरे-धीरे घूमना, अच्छी बातें करना, भोजन करना और गर्मीसे "आराम मालूम होना" आदि इस दवाके लक्षण हैं।

कैलि-सल्फ्युरिकम ६x, २००x—"श्लेष्मामय पीला, गोंदकी तरह स्रावकी और सब तरहके प्रदाह और श्लेष्माकी तीसरी अवस्थाकी" यह बढ़िया दवा है। बहुत तरहके चर्म रोगमें भी यह फायदा करता है। गलेमें घरघर करनेवाला बलगम और सर्दीके साथ दमा, गला, कान और पाकाशयसे पीले रंगका कीचकी तरह श्लेष्मा निकलना, सरमें दर्द (सर्द हवामें आराम), रूसी, आगकी आँच लगनेसे मानो सर झुलसा जाता हो ; प्रदरका स्राव पीला, शरीरकी तकलीफ (मानो घूमती-फिरती है); शरीरभर दाद या रूसी, शरीरमें आक्सिजनकी कमीकी वजहसे सरमें चक्कर, जाड़ा मालूम होना, दाँतमें दर्द वगैरह। आरक्त ज्वर, छोटी माता, चेचक, विसर्प रोग, वायुनली-भुज-प्रदाह (bronchitis), घुण्डी खाँसी, डिफ्थीरिया, हूप खाँसी, फेफड़ेका प्रदाह (न्युमोनिया), हैजा, सान्निपातिक ज्वर वगैरह बीमारियोंकी तीसरी अवस्था, मैलेरिया ज्वर, पाकाशयमें श्लेष्माकी वजहसे पांडु रोग, शूल-वेदना, पाकाशयमें भार मालूम होना, अजीर्ण, ओंठकी छाला निकल जाना, चेहरा, जीभ, मुँह या किसी भी झिल्लीपर उपत्वक पैदा हो जाना। आधे अंगका पक्षाघात, नाककी छेद या कानसे बहुत बदबूदार स्राव निकलना, कानमें अर्बुद, एकजिमा, विचर्चिका, फोड़ा, खसराके बैठ जानेकी वजहसे पैदा हुए उपसर्ग, नख-रोग वगैरहमें।

कमरके भीतर (खासकर खिड़की बन्द रहनेपर), गर्म जगहमें या गर्मीके दिनोंमें और सूर्यास्तके बाद ही बीमारीका "बढ़ना"। ठण्डी हवामें, खुली जगहमें, सूखा मातदिल ऋतुमें आराम मालूम होना आदि इस दवाके लक्षण हैं।

नेट्रम-म्यूरियेटिकम १२x, २००x—"निराशा, अपनेको एकदम निराश्रय समझना, लगातार प्यास, शरीरका बहुत दुबलापन, मुँह सूख जाना, नमक खानेकी प्रबल इच्छा, कब्जियत" इस दवाका प्रधान लक्षण है। खूनकी कमी, चेहरा उतरा हुआ, सरमें दर्द, कलेजेकी धड़कन, मानसिक विसन्नता, गला पतला और क्षीण होना, ओंठ सूखे, ओंठके किनारे जखम, अधर या ओंठके बीचका स्थान फटा, बुखारके दाने, श्लेष्मा लसदार और साफ, अगुलबेढ़ा, पैरके अगूठेमें घट्ठा, नखकी बहुत तरहकी बीमारियाँ। "सविराम मैलेरिया ज्वर" (दस-ग्यारह बजनेके समय कँपकँपी होना, शीतावस्थामें या उसके पहले प्यास, गर्म उष्णावस्थामें या प्यासका न रहना, सरमें तेज दर्द, क्विनाइनसे रुका हुआ बुखार वगैरह उपसर्गमें), साफ पानीकी तरह श्लेष्मा बहना, खाने-पीनेको मिलनेपर भी बच्चेका शरीर न बढ़ना, भगन्दर, मस्सा, जखम-भरा, पीठमें दर्द (रोगीको ऐसा मालूम होता है, मानो पीठ फटी जाती है), रोगीका शरीर हमेशा तेल लगाया मालूम होता है, सफेद लसदार, गन्दी लार, एकाएक खूनका दौरान रुक जाता है, किसी भी नयी बीमारीकी वजहसे हृत्पिण्डकी पेशियोंका पक्षाघात, फेफड़ा, पाकाशय वगैरहसे रक्त स्राव, ज्यादा मात्रामें शराब पीनेकी वजहसे शोथ, गर्मीके दिनोंकी सर्दी, खाँसीका बुखार, गहरी नींद या अनिद्रा, मृगी रोग और उसके साथ मुँहसे फेन निकलना, सर्दी-गर्मी (६x सेवन और ब्रह्मतालुपर ठण्डा पानी सींचना। सावधान, सरके पीछे या गर्दनके पीछे 'पानी न लगे'), बर्रे, भौंरा और चिपैले साँपका काटना, क्विनाइनसे रुका हुआ

बुखार, आमवात या बदनकी खुजली, अच्छा खान-पान रहनेपर भी रोगीका शरीर सूखते जाना, सन्धिवात।

जाड़ेके दिनोंमें; समुद्रके किनारे रहनेपर, पेशाबके बाद, क्विनाइन, आर्सेनिक, मर्करी, नाइट्रेट आफ सिलवर, सल्फर वगैरहके अपव्यवहारसे रोगका "बढ़ना"। खुली जगहमें रहना, ठण्डे पानीसे नहाना, दाहिनी करवट सोनेपर रोगीको "आराम मालूम होना" इसका लक्षण है। "नेट्रम म्यूर" देखिये।

नेट्रम फास्फोरिकम २x, २००x—"यह अम्ल-रोगकी बढ़िया दवा है।" खट्टी डकार, कै, वात या सन्धिवात, पसीनेमें खट्टी बू, शरीरमें युरिक-एसिड (मूत्राम्ल) रहना। आँखोंसे पीले रंगका स्राव, मूत्राशयमें "पीले रंगका स्राव" और जलन, सविराम मैलेरिया ज्वर और उसके साथ खट्टी कै, ज्यादा परिमाणमें खट्टा दूध निकलना। शुक्रमेह, मेरुदंड क्षीण, शरीर कमजोर, अम्लसे पैदा हुआ अतिसार, बच्चेके शरीरसे खट्टी बदबू आना, ज्यादा चीनी या मिश्री देकर दूध पीनेकी वजहसे बच्चोंमें लैक्टिक-एसिड बढ़ जानेसे पैदा हुई बीमारियाँ, मेद या रस बहनेवाली ग्रन्थिका फूलना, प्रमेहकी बीमारी, छातीमें जलन, मुँहमें पानी भर आना, पाकाशयमें अम्ल, अम्लसे पैदा हुई बदहजमी, पीब पैदा होना, मृगी रोग, विसर्प रोग, टीका लेनेके दुष्परिणामके कारण रोग, सरमें दर्द, सरमें चक्कर, साँसमें खट्टी गन्ध, आँखोंका प्रदाह, एक कानका गर्म और लाल होना और उसके साथ खुजलाहट रहना, नाक खुजलाना, कानमें हमेशा बदबू मालूम होना, मुँह लाल होकर फूल उठना, खट्टा और ताँबेका स्वाद, जीभकी जड़में पीला दाग, पाकाशयमें जखम, पाकाशयमें वायु इकट्ठा होना; "क्रिमि रहनेकी वजहसे पेटमें दर्द या रक्त दूषित हो जाना", कब्जियत, पाखाना फिरते समय काँखना, मलका रंग सफेद या हरा; "बहुमूत्र रोग, अम्ल रोगकी वजहसे पेशाब रोकनेकी ताकत न रहना।" श्वेत-प्रदर, क्षयकास, हृत्पिंडका काँपना,

कमजोरीकी वजहसे पैरका लडखड़ाना, जांघ, ऍडी वगैरह सन्धि-स्थानोंमें दर्द ; खुजलीकी वजहसे नींद न आना, अकौता—शहदके रंगका स्राव, बच्चेका शरीर पतले होते जाना, वज्रपातके समय, चर्बी मिला या मीठा भोजन करनेसे बीमारी "बढ़ना।"

नेट्रम-सल्फ्युरिकम १२x, २००x—"पित्तसे पैदा हुई सभी बीमारियोंमें और जिनके शरीरमें पानीका हिस्सा ज्यादा है, उनके लिये यह एक महौषध है। पित्त ज्वर, पित्त मिली तीती कै, डकार या पतले दस्त पित्तसे पैदा हुआ सरका दर्द, तीता स्वाद, मैली जीभ ; बायोकेमिक मतसे यह इन्फ्लुएञ्जाकी एकमात्र दवा है। पांडु-रोग, शीत ज्वर, पाकाशयमें वायुके कारण दर्द, मैलेरिया बुखार, यकृतकी बीमारी, सर्दी, पीला या पीली आभा लिये स्राव, बहुमूत्र रोग, मूत्रपिण्डकी बीमारी ; अजीर्ण रोग ; दमा ; वायुभुजनलीमें श्लेष्माका जमा होना और साथ ही पीले या सब्ज रंगका बलगम निकलना ; नींदके समय हाथ-पैर मडोरना या खोंचन, प्रलाप, मस्तिष्कमें चोटकी वजहसे मानसिक यातना कब्जियत, हैजा अतिसार बच्चोंका हैजा, सीसक शूल (lead-colic or printer's colic) रोगमें २x सेवन करना चाहिये। खूनमें श्वेत कणकी अधिकता या लाल कणकी कमी ; पित्त कोषमें दर्द ; पुराना प्रमेह रोग, विसर्प रोग, वात या सन्धिवात (खासकर श्लेष्मा-प्रधान धातुवाले मनुष्यको), यकृतमें बीमारीकी वजहसे शोथ, मूत्रावरोध या पेशाब करनेकी ताकत न रहना, स्नायुशूल (मैलेरियासे पैदा हुआ), स्तनमें दूध कम करनेके लिये, पलकोंका सट-जाना (रोगी रोशनीमें जानेसे डरता है) ; कर्ण-शूल, कानमें ठ-ठं आवाज मालूम होना (नाकसे गर्मी रोगके कारण), बदबूदार पीब बहना, नाक और मुँहमें (मिर्चाकी तरह) जलन, किसी तरहकी भोजनकी चीजमें स्वाद न मालूम होना, दाँतोंके दर्द और उसके साथ और मसूढ़ेमें जलन धूम्रपानसे आराम मालूम होना ; पथरी रोग, गर्भावस्थामें कै, खाँसनेके समय

छातीमें दर्दकी वजहसे छातीको दबा रखना, पैर और एँड़ियोंमें सूजन, गहरी नींद, दमाकी वजहसे रातमें नींद खुल जाना, फोड़ा, "दाद" (२००)। (बहुमूत्रमें नेट्रम-फासके साथ पर्यायक्रमसे इसका व्यवहार करनेपर बहुत फायदा होता है।

बरसाती हवा, नर्म जमीन या जलाशयके पास रहना, पानीसे पैदा हुए पौधे या मछली खाने या बायीं करवट सोनेसे रोगका "बढ़ना", सूखी गर्म खुली जगहमें सोनेकी वजहमें बीमारीका "आराम मालूम" होना, इस दवाका खास लक्षण है।

फेरम-फास्फोरिकम—१x, २००x—आँख, कान, दाँत पाकाशय जखम वगैरह जिस किसी स्थानमें "प्रदाहकी पहली अवस्थामें" इसका प्रयोग होता है। वायुनलीभुज-प्रदाह (ब्रांकाइटिस,) फेफड़ेका प्रदाह (न्युमोनिया), फुसफुसवेस्ट-प्रदाह (प्लुरिसी), सभी प्रादाहिक बुखार सरका दर्द, सर घूमना। वात, कटिवात, विसर्प रोग, गलेका जखम, खाँसी, सर्दी, मस्तकमें श्लेष्मा वगैरह रोगको पहली अवस्थामें चमकीला लाल खून जाना, बवासीर, आमाशय, नाकसे खून जाना, फोड़ा पीठका फोड़ा, शरीर जहाँ-तहाँ फूला और उन-उन जगहोंका गर्म रहना, पेशाव रोकनेकी ताकतका न रहना, सरके दर्दकी वजहसे माथेमें टनक, सर्दी लगनेकी वजहसे दर्द-भरा अतिसार, बदहजमी, कै होना।

फेरम-फास ३x की जलपट्टी या मलहम, अर्श रोगमें लगाना चाहिये।

हिलने-डुलने या सेंकनेसे ऊपर लिखी बीमारियोंका "बढ़ना" और सर्द प्रयोगसे "घटना" होनेपर फेरम-फास फायदा करता है।

मैग्नेशिया-फास्फोरिका १x, २००x—"ऐंठन, अकड़न स्नायु-शूल वगैरह बहुत तरहके दर्दोंमें यह बहुत ज्यादा फायदा करता है। खूब गर्म पानीके साथ नीचे क्रमका विचूर्ण सेवन करना चाहिये, इससे दर्द घट जाता है।" सर, मुँह, दाँत पाकाशय वगैरहमें दर्द, स्नायु-

शूल, प्राण शक्तिकी कमी, अकड़न, खींचन, हूप खाँसी, पेशियोंमें अकड़न, धनुष्टंकार, आक्षेपकी वजहसे पेशाब रुकना, आक्षेपके साथ खाँसी शरीर काँपना इच्छा न रहनेपर भी मुँह- तथा हाथ पैरोंकी पेशियोंका काँपना, ज्यादा दिनोंतक शराब पीनेकी वजहसे बहुत तरहके उपसर्ग, क्लर्क वगैरहका हाथ काँपना, गुल्मवायु, बहुत खुजलाहट, हृत्पिण्डमें दर्द, दमा, चुन बवासीर, पानीकी तरह पतली सर्दी निकलना (ठंडमें बढ़ना, गर्मीमें घटना), वात-वेदना, दाँती लग जाना, हिचकी, लकवाकी वजहसे प्रत्यंगोंका काँपना, तुतलाना, शरीरभर खुजली, तालुमूल-प्रदाह पित्त-मिला और उसके साथ शूल वेदना (३x गर्म पानीके साथ सेवन और बाहरी प्रयोग) मिचली और कै, पाकाशयमें वायु इकट्ठा होना, मृगी रोग, जम्हाई आना, बहुत ज्यादा पसीना होना, नींद न आना।

धीरे-धीरे छूने या सर्दी लगनेसे दर्दका बढ़ना (खासकर दाहिने अंगका ; सेंकने, जोरसे दबा रखने, मलने या शरीरको दोहरा मोड़नेसे दर्द कम होना इस दवाका लक्षण है)।

साइलिसिया—२x, २००x—पृष्ठाघात, अंगुलवेढ़ा, जखम, फोड़ा व्रण, टीका लगवानेसे पैदा हुआ घाव, अर्बुद वगैरह जिन सब प्रदाहोंसे "पतला पीब निकलता है।" मोटे-ताजे बच्चोंके "मस्तकमें पसीना" पेट बड़ा, पर हाथ-पैर छोटे, कब्जियत, "मलका कुछ अंश निकलकर फिर भीतर घुस जाता है;" शरीरमें जीवनी-शक्ति और गर्मीकी कमी, थोड़ेमें ही सर्दी लग जाना, सरका पुराना दर्द, "पैरमें या बगलमें अस्वास्थ्यकर बदबूदार पसीना", हड्डीका जखम, जाँघकी सन्धिकी बीमारी वगैरह हड्डीके रोग, रातमें पसीना (खासकर माथे और गर्दनके पीछे), बहुत दिनोंतक ठहरनेवाला धीमा बुखार, यक्ष्मा रोग, पुराना वात या सन्धिवात, शारीरिक ताकतकी बनिस्बत मानसिक शक्तिकी ज्यादतीकी वजहसे जल्द क्लान्त हो पड़ना, सुननेकी ताकतकी ज्यादती, अनमना रहना, न बोलना और चुपचाप बैठे रहनेकी इच्छा करना, मिचली,

भीतर खूब सर्दी मालूम होना, मांस या गर्म भोजनसे अरुचि, केशोंका झड़ जाना, "पैरका पसीना बन्द"* होनेकी वजहसे आँखोंमें मोतिया-बिन्द, पक्षाघात, संन्यास रोग, बहरापन, नाककी ठोर लाल होना या फोड़ा हो जाना, नाककी हड्डीमें अर्बुद या घाव और उससे पीव बहना, जीभ या ओंठके किनारे घाव, श्वेत-प्रदर, स्नायु-शूल, नाककी श्लैष्मिक-झिल्लीके मोटेपनकी वजहसे नाकका बन्द हो जाना, पत्थर काटनेवाले या जांतावालोंका दमा, पथरी रोग, आँखमें पीव होना, जांघकी सन्धिमें सूजन, मृगी रोग (अमावस्या या पूर्णिमाको बढ़ना), दर्दवाला बवासीर, बदबूदार पतले दस्त, भगन्दर, मूत्राम्ल या युरिक एसिड, पुराना प्रमेह रोग, स्तन या स्तनके बोटेमें जखम, पुराना भुजनली-प्रदाह क्षयकाससे पैदा हुआ फेफड़ेका फोड़ा, हृत्पिण्डका जोरसे काँपना, पुराना बीमारियाँ खूनकी उत्तेजनाकी वजहसे नींदका न आना ("साइलिसिया', देखिये)।

आमावश्या और पूर्णिमाकी रातमें, ठण्डी हवामें रोगका 'बढ़ना', उत्ताप या गर्म कोठरीमें, सरमें गर्म कपड़े बाँधने या खूब गर्म पानीमें नहानेसे बीमारीका 'घटना', इस दवाका खास लक्षण है।

अंग-विशेषकी दवाएँ

दाहिना अंग आक्रान्त होनेपर :—आरम, आर्जेण्ट-नाई, एपिस, कोलोसिन्थ, कैन्थरिस, कैल्के-कार्ब, चेलिडो, नक्स-वोम, पल्स, बेल, ब्रायो, बोरैक्स, बेप्टीशिया, सिकेलि, लाइको।

---

* पसीना बन्द करनेके लिये बहुतसे आदमी फुट-पाउडर (foot-powder) व्यवहार करते हैं। इससे पसीना तो तुरन्त बन्द हो जाता है, परन्तु ऊपर लिखी कड़ी बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। साइलिसियाके प्रयोगसे बदनका पसीना और उपयक्त बीमारियाँ शान्त होती हैं।

बायाँ अंग आक्रान्त होनेपर :—ऐसाफिटिडा, आर्जेण्ट-नाई, फास्फो, युफोर्बिया, कोकस, कैम्फिकम, मेजेरियम, लैकेसिस, स्टैनम, साइना, सल्फ साइलिसिया।

दाहिना और बायाँ अंग पर्यायक्रमसे (alternately) आक्रान्त होनेपर :—ऐगा, ऐण्टिम-क्रूड, लैकेसिस।

किसी अंगके विपरित दोनों कोने (diagonally) आक्रान्त होनेपर :—ऐगारिकस, फास्फोरस।

भेषज-शक्ति और भेषज-क्रिया-स्थितिकाल

सम्वलित

ग्रन्थोक्त भेषज-तालिका

[दि=दिन। घ=घंटा। चि=चिचूर्ण]

इस अनुच्छेदके हरएक सफेमें चार खाने हैं। पहले वर्णानुक्रमसे हिन्दीमें दवाओंके "नाम", दूसरेमें उनके "संक्षिप्त नाम", तीसरेमें "भेषज-शक्ति (drug potnecy) किंवा बराबरसे व्यवहारमें आनेवाली दवाओंका क्रम (dilutions) या शक्ति (potencies)" और चौथे स्तम्भमें उस दवाकी शक्तिका "स्थितिकाल" (duration of action of the potentised drug—अर्थात शक्तिकृत दवाओंका कार्य-फल शरीरमें कितनी देरतक* ठहर सकता है), लिखा गया है :—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
आर्जेण्टम नाइट्रिकम	आर्ज-नाई	३—३०	३० दिन
आर्जेण्टम मेटालिकम	आर्ज-मेट	३—६ चि	२१-३० दिन

* किसी होमियोपैथिक दवाका स्थितिकाल, रोगकी प्रकृति और रोगीपर बिलकुल निर्भर करता है (Dr. Gibson Miller's *Relationship of*

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
आरम-म्यूर-नेट्रो	आरम-मि-नेट्रो	२—३ वि	—
आरम मेटालिकम	आरम	३x वि ३०	५०-६० दिन
आस्ट्रिया वार्जेनिक	आस्ट्रि	१—३	—
आस्मियम	आस्मि	६	—
आइबेरिस	आइबे	θ—३	—
आइरिस वर्सिकलर	आइरिस	θ—३०	—
आयोडियम	आयोड़	θ, ३, ३०	३०-४० दिन
आर्टिका युरेन्स	अर्टि	θ—६x	—
आर्निका माण्टेना	आर्नि	x—३, २००,	६-१० दिन
आर्सेनिकम आयोड	आर्स आयोड	३x, ३ वि	—
	(पानीके साथ विचूर्ण खाना मना है)		
आर्सेनिकम ऐल्बम	आर्स	३x, २००	३६-४० दिन
आर्सेनिकम-ब्रोम	आर्स-ब्रोम	θ—(पानीके साथ)	—

Remedies पृष्ठ १ देखिये)। इसीलिये चौथे स्तम्भ (खाने) का मतलब साधारण स्थितिकाल समझना चाहिये। जैसे—नक्स-वोमिकाका कोई डाल्यूशन सेवन करनेपर उसका कार्य-फल हमेशा एकसे सात दिनोंतक या ऐकोनाइटके क्रमका कार्य-फल आध घण्टेसे लेकर दो दिनोंतक रोगीके शरीरमें मौजूद रहता है।

स्वनामधन्य फ्रेंच डा॰ जारने कहा है कि साधारणतः नयी बीमारीकी तेजीके अनुसार किसी होमियोपैथिक दवाका स्थितिकाल कम-से-कम १५ मिनटसे लेकर ४८ घण्टेतक और पुरानी बीमारीमें उसका स्थितिकाल अन्दाजन ५ दिनसे लेकर ८ दिन तक, मान लिया जा सकता है। इसके बाद (जरूरत पड़नेपर) दवा बदलकर दूसरी दवा दी जा सकती है (Hull's Jahr, 6th American Edition (पृष्ठ १५-१७ देखिये)।

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
आर्सेनिकम-हाइड्रो	आर्स हाइड्रो	३	—
आर्सेनिकम-सल्फ फ्लो	आर्स-सल्फ	३ वि	—
इयुकेलिप्टस	इयुकेलि	θ	—
इयुपेटोरियम-पर्पि	इयुपेट-पर्प	१	—
इयुपेटोरियम-पर्फो	इयुपेट-पर्फ	θ—३	१-७ दिन
इयुफोर्बियम	इयुफर्बि	३—६	५० दिन
इयुफ्रेशिया	इयुफ्रे	θ—३	७ दिन
इयुरेनियम् नाइट्रि	इयुरे	२—३ वि	—
इग्नेशिया	इग्ने	θ—२००	२ घ० ६ दिन
इन्फ्लुएञ्जिनम्	इन्फ्लु	३०—२००	—

इनैन्थि (उच्चारण "ओनन्थि" किसीके मतसे) "ओनैन्थि" देखिये ।

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
इपिकाकुआन्हा	इपि	३x—३०	२ घ० ४ दिन
इरिजेरन	इरिजे	θ—३	—
इलैटेरियम	इलैटे	२—६	—
इलैप्स कोरालिनम	ईलैप्स	६—३०	—
इस्क्यूलस	इस्क्यू	θ—३	३० दिन

इस्क्यूलस (प्रकृत उच्चारण 'स्कियुलस') 'एस्कियुलस' देखिये ।

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
इलैप्स कोरालिनम	इलैप्स		६—३० दिन
ईथुजा	ईथू	३—३०	२०—३० दिन
एइलेन्थस	एइलेन्थ	१—६	—
एकिनेशिया	एकिनेशिया	θ	—
एपिस मेलिफिका	एपि	θ—३०	—
एपियम ग्रेवियोलेन्स	एपि-ग्रे	१—३०	—
एबिज कैनाडेन्सिस	एबिज	θ—३	—
एबिज नाइग्रा	एबि-नाइग्रा	१—३०	—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
एरम ट्राइफाइलम	एरम	३—३०	१-२ दिन
एसिड ऐक्जैलिक	एसि-अक्स	३—३०	—
एसिड ऐसेटिकम	एसि-ऐसे	३—३०	१४-२० दिन
एसिड कार्बोलिकम	एसि-कार्ब	१—३, २००	—
एसिड नाइट्रिकम	एसि-नाई	३x—३०	४०-६० दिन
एसिड पिक्रिकम	एसि-पिक्रि	१—६	—
एसिड फास्फोरिकम	एसि-फास	२x—३०	४० दिन
एसिड फ्लुयोरिकम	एसि-फ्लू	६	३० दिन
एसिड म्यूरियैटिक	एसि-म्यू	१—६	३५ दिन
एसिड लैक्टिक	एसि-लैक	३—३०	—
एसिड सल्फ्युरिक	एसि-सल्फ	θ—३०	३०-६० दिन
एसिड हाइड्रोसियानिक	एसि-हाइड्रो	१—३	—
ऐकालिफा इण्डिका	ऐकालि	३—१२	—
ऐकोनाइट नैप	ऐकोन	३x—३०	½—४८ घण्टा
ऐक्टिया रेसिमोसा	ऐक्टि-रे	θ, ३-३०	८—१२ दिन
ऐक्टिया स्पाइकेटा	ऐक्टि-स्पा	३	१ घं०, २१ दिन
ऐगेव अमेरिकाना	ऐगेव	θ	—
ऐगरिकस मस्के	ऐगार	३-२००	४० दिन
ऐग्नस कैक्टस	ऐग्नस	१—६	८-१४ दिन
ऐङ्गस्टियुरा	ऐङ्गस्टियु	३—६	२०-३० दिन
ऐट्रोपिन	ऐट्रोपि	२ वि	—
ऐण्टिमोनियम क्रूडम	ऐण्टिम-क्रूड	३—६	४० दिन
ऐण्टिमोनियम टार्टारि	ऐण्टिम-टार्ट	२—३ वि, ६—३०	२०-३० दिन

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
ऐड्रिनेलिन	ऐड्रि	२—३X	——
ऐनाकार्डियम-ओरि	ऐनाकार्ड	३—६	३०-४० दिन
ऐन्थासिनम	ऐन्था	३०	——
ऐपोमार्फियम	ऐपोमार्फि	३—६	—
ऐपोसाइनम कैनाबिनम	ऐपोसाइन	θ	——
ऐब्सिन्थियम	ऐब्सिन्थ	१—६	——
ऐब्रोटेनम	ऐब्रो	३—३०	——
ऐबिना सैटाइवा	ऐबिना	θ (गर्म पानीके साथ सेव्य)	
ऐमिल नाइट्रोसम	ऐमिल-नाई	१X—३	—
ऐमोनियम-कार्ब	ऐमोन कार्ब	निम्नक्रम ३	४० दिन
ऐमोनियम काष्टिकम	ऐमोन काष्ट	१—३	—
ऐमोनियम पिकरिकम	ऐमोन-पिक	२—३ वि	—
" फास	" फास	३X वि	—
" बेञ्जोयिक	" बेञ्ज	२ वि	—
" ब्रोम	" ब्रोम	१	—
" म्यूर	" म्यूर	३—६	—
ऐम्ब्रामिसिया	ऐम्ब्रा	२—३	२०-३० दिन
एर्टिमिसिया वल्गेरिस	आर्टि	१—३	४० दिन
ऐरानिया डायडे	ऐरानिया	६—३०	—
ऐलस्टोनिया-कसट्रिक्टा	एलस्टो	θ—३X	—
ऐल्यूमिना	ऐल्यूमि	६—३०	—
ऐल्यूमेन	ऐल्यूमे	१—३०	४०-६० दिन
ऐलो सोकोटिना	ऐलो	१—२००	बहुत दिनोंतक
			३०-४० दिन

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
ऐलिट्रिस फैरिनोसा	ऐलिट्रि-फैरि	θ—३	—
ऐलियम सिपा	ऐलिसि	१—३	१ दिन
ऐलियम सैटाइवा	ऐलि-सैटा	३—६	—
ऐस्क्लिपियस ट्यूब	ऐस्क्लपि-ट्यूब	θ—१	४०-६० दिन
ऐसाफिटिडा	ऐसाफि	२—३०	२०-४० दिन
ऐसाराम युरोपियम	ऐसाराम	३—६	८-१४ दिन
ओपियम	ओपि	३—२००	७ दिन
ओरिगेनम	ओरि	३	—
ओलियेण्डर	ओलि	३—३०	३-३० दिन
ओसिमम् कैनम्	ओसि	३—२०	—
ओनैन्थि क्रोकेटा	ओनैन्थि	३—६	—
कक्यूलस इण्डिका	कक्यू	३—३०	३० दिन
कक्कस-केक्टाई	कक्कस	१x वि, ३०	—
कण्डियुरैंगो	कण्डियु	θ—१x	—
काफिया क्रूडा	काफि	३—२००	१-७ दिन
कास्टिकम	कास्टि	३—३०	५० दिन
काडुंयस मैरियैनस	काडुं	θ—३x	—
कार्बो-ऐनिमेलिस	कार्बो-ऐ	३ वि—३०	४०-६० दिन
कार्बो-वेजिटेबिलिस	कार्बो-वेज	१ वि ३०	४०-६० दिन
कार्सिनोसिन	कार्सि	३०—२००	—
कोरैलिचिकम-टियुब्रम	कोरैल	३—३०	—
कोलच्चिकम	कोलच्चि	θ—३०	१४-२० दिन
कोलिन्सोनियम	कोलिन्सो	θ—३, २००	३० दिन
कोलेस्टेरिनम	कोलेस्ट	३ वि	—
कोलोफाइलम	कोलोफाइ	θ—३	—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
कोलोसिन्थ	कोलोसि	३—३०	१-७ दिन
क्यूप्रम आर्सेनिक	क्यूप्रम-आर्स	२—६ वि	—
क्यूप्रम ऐसेटिकम	क्यूप्र-ऐसे	३—६ वि	—
क्यूप्रम मेटालिकम	क्यूप्रम	६—३०	—
क्यूबेबा	क्यूबे	२—३	—
किनिनम-आर्स (चिनिनम-आर्स)	किनि-आर्स (चिनिन-आर्स)	२—३ वि	—
किनिनम-सल्फ्यू (चिनिनम-सल्फ्यू)	किनि-सल्फ (चिनि-सल्फ)	१x वि—३०	—
कियोनैन्थस (चियोनैन्थस)	कियोनैन्थ	θ—१	—
केनापोडियम ऐन्थेल	केनोपो-आ (चिनोपोड)	३	—
कैलि आयोडेटम	कैलि-आयोड	θ—१२	२०-३० दिन
कैलि आर्सेनिक	कैलि-आर्स	३—३०	—
कैलि कार्बोनिकम	कैलि-कार्ब	३०-२००	४०-५० दिन
कैलि फ्लोरिकम	कैलि-फ्लोर	१—६	—
कैलि नाइट्रिकम	कैलि-नाइ	३-३०	३०-४० दिन
कैलि परमैंगेनेटम	कैलि-परमैंग	२x वि	(पानीके साथ)
कैलि फास्फोरिकम	कैलि-फास	३ वि, २००	—
कैलि बाइक्रोमिकम	कैलि-बाई	२ वि, १२	३० दिन
कैलि ब्रोमेटम	कैलि-ब्रोम	θ—३ वि	—
कैलि म्यूरियेटिकम	कैलि-म्यूर	३—६	—
कैलि सायेनेटस	कैलि साये	२x वि	—
कैलि सल्फ्यूरिकम	कैलि-सल्फ	३—१२	—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
कैक्टस	कैक्ट	θ—६, ३०	७-१० दिन
कैडमियम-सल्फ	कैडमि	३—३०	—
कैनाबिस-इण्डिका	कैना-ई	θ—३	—
कैनाबिस सैटाइवा	कैना-सैट	θ—१२	१—१० दिन
कैन्थेरिस	कैन्थ	३X—३०	३०-४० दिन
कैप्सिकम	कैप्सि	३-६ (θ दूधके साथ)	७ दिन
कैमोमिला	कैमो	१—३०	२०—३० दिन
कैम्फर	कैम्फ	θ—३X	१ घं०—१ दिन
कैल्केरिया-आयोड	कैल्के-आयोड	२—३ वि	—
कैल्केरिया-आर्सेनिक	कैल्के-आर्स	६X वि—३०	—
कैल्केरिया कार्बोनिका	कैल्के	६—३०	६० दिन
कैल्केरिया फास्फोरिका	कैल्के-फास	१ वि २००	६० दिन
कैल्केरिया-फ्लुरेटा	कैल्के-फ्लु	३—१२ वि	—
कैल्केरिया-सल्फ	कैल्के-सल्फ	२—६ वि	—
कैलिमया	कैलिम	१—६	७—१४ दिन
कैलेडियम	कैले	३—६	३०—४० दिन
कैलेण्डुला	कैलेण्डु	θ—३	—
कोनायम	कोनायम	३—३०	३०—५० दिन
कोका	कोका	θ—३	—
कोपेवा	कोपेवा	१—३	—
कोब्रा (नैजा)	कोब्रा (नैजा)	६—३०	—
क्रियोजोटम	क्रियो	३—२००	१५-२० दिन
क्रोकस-सैटाइवा	क्रोकस	θ—३०	८ दिन
क्रोटन टिग्लियम	क्रोटन	३X—६	३० दिन
क्रोटेलस होरिडस	क्रोटे	३—६	३० दिन

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
क्रैटिगस	क्रैटि	θ	—
क्लिमेटिस-इरेक्टा	क्लिमे	३—३०	१४-२० दिन
क्लोरम	क्लोरम	४—६	—
क्लोरैल-हाइड्रेट	क्लोरैल	१ वि—६	—
गुयेकम (उच्चारण) ग्वयेकम	गुये	६	४० दिन
गैम्बोजिया	गैम्बो	३—३०	१—७ दिन
ग्रेफाइटिस	ग्रैफा	६—३०	४०-५० दिन
ग्रेटिओला	ग्रैटि	२—३०	—
ग्लोनोइन	ग्लोनो	३—३०	१ दिन
चायना	चायना	θ—३०	७ दिन
चिमैफिला	चिमै	θ—३	—
चेलिडोनियम	चिलि	θ—३x	७-१४ दिन
जिजिया	जिजिया	θ—३	—
जिंकम मेटालिकम	जिंक	२—३०	३०-४० दिन
जिंजिबार	जिंज	१—६	—
जिन्सेंग	जिन्सेंग	θ—३	—
जेन्सियाना-लुटिया	जेन्सि लूट	θ—३x	—
जेलसिमियम	जेल्स	θ—३०	—
जैकेरैण्डा	जैके	θ—३०	—
जैट्रोफा	जैट्रो	३—३०	—
जैन्थक्जाइलम	जैन्थो	१—३	—
जैबोरेण्डि	जैबो	२ वि—३	—
टाइफायडिनम	टाइफायड	३०—२००	—
टियुक्रियम	टियुक्रि	१—६	१४-२१ दिन

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
टियुबरक्युलिनम	टियुबर	३०—२००	—
टेबेकम	टेबे	३—२००	—
टेराक्सेकम	टेराक्से	θ—३०	१४-२१ दिन
टेरिबिन्थिना	टेरिबि	१—६	—
टेल्यूरियम	टेल्यू	६—३०	३०-४० दिन
टेरेण्टुला	टेरेण्ट	६—३०	—
ट्राम्बिडियम	ट्राम्बि	६—३०	—
डलिकस	डलि	६	—
डल्कामारा	डल्का	२—३०	३० दिन
डायस्कोरिया	डायस्क	θ—३	१—७ दिन
डिजिटेलिस	डिजि	२x—३०	४०-५० दिन
डिफथीरिनम	डिफथी	३०—२००	—
डेफनि-इण्डिका	डेफनि	१—६	—
ड्रोसेरा	ड्रोसे	१—६	२०—३० दिन
थिरिडियन	थिरि	३x—३०	—
थिया	थिया	३—३०	—
थूजा	थूजा	θ—२००	६० दिन
थ्लैस्पि-वार्सा-पा	थ्लैस्पि	θ—६	—
नाइट्रि-स्पिरिटस डलसिस	नाइट्रिक-स्पि-डा θ		
नक्स-वोमिका	नक्स-वो	१x—२००	१—७ दिन
नक्स-मस्केटा	नक्स-मोस	१—३	८—२१ दिन
नियुफर-लियुटिकम	नियुफर	θ—६	—
निकोटिनम	निकोटि	३—६	—

दवाका नाम	सक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
नेट्रम-आर्सेनिकम	नेट्रम आर्स	३—३०	—
नेट्रम-कार्बोनिकम	नेट्र कार्ब	३—६	३० दिन
नेट्रम-नाइट्रिकम	नेट्र-नाई	२ वि	—
नेट्रम-फास्फोरिकम	नेट्र फास	३—१२x वि	—
नेट्रम म्यूरियेटिकम	नेट्रम-म्यूर	६—२००	४० ५० दिन
नेट्रम सल्फ्यूरिकम	नेट्र सल्फ	२—१२ वि	३० ४० दिन
नेफेलियम	नेफेल	३—३०	—
नैजा (या कोब्रा)	नैना (कोब्रा)	६—३०	—
नप्थेलिनम	नैफ्थ	१—३ वि	—
पोडोफाइलम	पोडो	θ—६, २००	३० दिन
पाइरोजेन	पाइरो	६—३०	—
पाइलो कार्पस	पाइलो-काप	३	—
पल्सेटिला	पल्स	३x—३०	४० दिन
पल्सेटिला-नैट	पल्स नेट	३—३०	—
पेट्रोलियम	पेट्रो	३—६	४० ५० दिन
पेट्रोसेलिनम	पेट्रासि	१—३	—
पेरेरा ब्रेवा	पेरे ब्रे	θ—३	—
पैरिस	पैरिस	३	—
पैसिफ्लोरा-इनकार्नेटा	पैसिफ्लो	θ (मात्रा ३०-६० बून्द)	२०-३० दिन
प्लम्बम	प्लम्ब	३—३x	—
प्लेगिनम	प्लेगि	६—३०	३५-४० दिन
प्लैटिनम	प्लैटि	३—३०	—
प्लेण्टेगो	प्लेण्टे	θ—३	—
फार्मिका	फार्मि	६—३०	—
फास्फोरस	फास्फो	३—३०	४० दिन

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
फाइजसटिग्मा	फाइजस	३	—
फाइटोलैक्का	फाइटो	θ—३	—
फिलिक्स-मास	फिलिक्स	१—३	—
फेरम-आयोडेटम	फेरम-आयोड	३ वि	—
फेरम पिकरिक	फेरम-पिक	१—३ वि	—
फेरम फास्फोरिकम	फेरम-फास	३—६	—
फेरम-म्यूर	फेरम-म्यूर	३X	—
फेरम-मेटालिक	फेरम	१—६	३० दिन
फेलाण्ड्रिकम	फेलाण्ड्रि	θ—६	—
बर्बेरिस वल्गेरिस	बर्बा	θ—६	२०-५० दिन
बिस्मथ	बिस्मथ	१—६	२०-५० दिन
बियुफो	ब्यूफो	६	—
बेलिस पेरेनिस	बेलिस	θ—३	—
बेलेडोना	बेल	३X—३०	२-७ दिन
बोथ्राप्स	बोथ्रा	६—३०	—
बोविष्टा	बोवि	३—६	७-१४ दिन
बोरैक्स	बोरैक्स	१—३ वि	३० दिन
बैडियेगा	बैडि	१—६	—
बैप्टीशिया	बैप्टी	θ—३०	—
बैराइटा आयोड	बैरा-आयोड	२—३०	—
बैराइटा कार्बोनिका	बैरा कार्ब	६—३०	४० दिन
बैराइटा म्यूरियेटिकम	बैरा-म्यू	३ वि	—
बैसिलिनम	बैसिलि	३०—२००	—
ब्रायोनिया	ब्रायो	१—३०	७-२१ दिन
ब्रोमियम	ब्रोम	१—३	२०—३० दिन

दवाका नाम	सक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
ब्लेटा ओरियेण्टेलिस	ब्लेटा	θ—३x	—
वाइवर्नम ओप्युलस	वाइवर	θ—३x	—
वायोला ओडोरेटा	वायोला-ओ	θ—६	२—४ दिन
वायोला ट्राइकलर	वायो-ट्रा	निम्नक्रम, ३	८-१४ दिन
वार्वेस्कम	वार्बे	θ	८-१० दिन
विरेट्रम ऐल्बम	विरे	३—३०	२०-३० दिन
विरेट्रम विरिडि	विरे-वि	८—६	—
विस्कम ऐलबम	विस्कम	θ—निम्नक्रम	—
वेरियोलिनम	वेरियो	६—३०	—
वैलेरियाना	वेलेरि	θ	८-१० दिन
वैक्सिनिनम	वैक्सि	६x वि ३०	—
मार्फिनम	मार्फि	३—६ वि	—
मार्बिलिनम	मार्बि	३०—२००	—
मस्कस	मस्क	१—६	१ दिन

("मर्क्यूरियस" के अर्थमें "मर्क-सोल" या "मर्क-व"

मर्क्यूरियस कोरोसाइवस	मर्क कोर	३—६	—
मर्क्यूरियस डलसिस	मर्क-डल	३—६ वि	—
मर्क्यूरियस-प्रोटो-आ	मर्क-प्रोटो	१—२ वि	—
मर्क्यूरियस बिन आयोड	मर्क-बिन	३ वि	—
मर्क्यूरियस वाइवस	मर्क-वा	२—३ वि	१—३ दिन
मर्क्यूरियस सोल्यूबिलिस	मर्क-सोल	२—३०	—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
मर्क्यूरियस सायेनेटस	मर्क सोये	६—३०	—
मिनियेन्थिस	मिनि	३—३०	१४-२० दिन
मिफाइटिस	मिफाइ	१—३	१ दिन
मिलिफोलियम	मिलि	θ—१	१—३ दिन
मेजेरियम	मेजे	६—३०	३०-६० दिन
मेडोरिनम	मेडोरि	३०—२००	—
मेरिका	मेरिका	θ—३	—
मेलिलोटस	मेलिलो	θ—निम्न क्रम	—
मैग्नेशिया कार्बोनिका	मैग्ने-कार्ब	३—३०	४०-५० दिन
मैग्नेशिया फास्फोरिका	मैग्ने-फास	३x वि, ३, २००	—
मैग्नेशिया-म्यूर	मैग्ने-म्यूर	३—२००	४०-५० दिन
मैग्नेशिया-सल्फ	मैग्ने-सल्फ	θ—३	—
मैंगेनम एसेटिकम	मैंगे	३	४० दिन
मैलेरिया आफिसिनेलिस	मैले-आफि	३०—२००	—
मैलेण्ड्रिनम	मैलेण्ड्रि	३०—२००	—
रस-टक्स	रस	३—२००	१-७ दिन
रस-वेनेनेटा	रस-वेन	३—२००	—
रस रैड	रस-रैड	३—२००	१—७ दिन
रियुम	रियुम	३—६	२—३ दिन
रियुमेक्स क्रिस्पस	रियुमेक्स	३—६	—
रिसिनस	रिसि	३—६	—
रूटा	रूटा	१—३०	३० दिन
रेडियम ब्रोमाइड	रेडि	३०—२००	—
रोडोडेण्ड्रन	रोडो	१—३	३५—४० दिन
रोबिनिया	रोबिनि	θ—३	—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
			—
रैटानहिया	रैटान	३—६	३०-४० दिन
रेनानक्यूलस बल्ब	रेनान	θ, ३, ३०	—
रैफेनस	रैफेन	३—३०	४—८ दिन
लोरोसिरेसस	लोरो	θ—३	—
लाइकोपस	लाइकोपस	θ—३०	४०-५० दिन
लाइकोपोडियम	लाइको	६ २००	३० दिन
लिडम	लिडम	३—३०	—
लिथियम कार्ब	लिथि कार्ब	१ —३ वि	१४—२० दिन
लिलियम टिग्रिनम	लिलि	३	—
लिसिन	लिसि	३०	—
लेपटेण्ड्रा	लेपटे	θ—३	—
लोबेलिया	लोबे	θ—३	—
लैक केनिनम	लैक केन	३०—२००	३० ७० दिन
लैकेसिस	लैके	८—२००	—
लैकनेन्थिस	लैकनेन	θ—३	—
लैथाइरस	लैथा	३	—
स्टिक्टा पल्मोनेरिया	स्टिक्टा	θ—६	—
स्टिलिंजिया सिल्वैटिका	स्टिलिंजि	θ—२x	—
स्टैनम	स्टैन	३—३०	—
स्टैफिसाइग्रिया	स्टैफि	३—३०	—
स्टिकनिनम	स्टिकिन	१ वि, ३—३०	—
स्ट्रानशिया-कार्ब	स्ट्रान कार्ब	६ वि	—
स्ट्रोफेन्थस	स्ट्रोफे	θ	—
स्ट्रैमोनियम	स्ट्रैमो	θ—३०	—
साइक्यूटा वाइरोसा	साइक्यू	३—२००	३५—४० दिन

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम	क्रम या डा०	स्थितिकाल
साइना (सिना)	साइना (सिना)	१—२००	१४-२० दिन
साइमेक्स	साइमे	६—२००	—
साइलिसिया ["सिलिका" देखिये]।			
सार्साप्रेरिला	सार्सा	१—६	३५ दिन
सल्फर	सल्फ	६—२००	४०—६० दिन
सिकेलि	सिके	θ—३०	२०—३० दिन
सिक्लामेन	सिक्ला	३	१४—२० दिन
सिनकोना ["चायना" देखिये]।			
सिजीजियम जैम्बो	सिजि	θ	—
सिनिसियो	सिनिसि	θ—३	—
सिना ["साइना" देखिये]।			
सिनेरेरिया मैरिटिमा (साक्कास)	सिनेरि		—
सिनावेरिस	सिनाबार	१—३ वि	—
सिपिया	सिपिया	६—२००	४०—६० दिन
सिफिलिनम	सिफिलि	३०—२००	—
सिमिसिफ्यूगा रेसिमोस ["एक्टिया-रेसिमोसा" देखिये]।			
सिम्फाइटम	सिम्फाइ	θ	—
सियोनोथस अमेरिकाना	सियानो	θ	—
सिला मैरिटिमा	सिला	१—६	१४—२० दिन
सिलिका (साइलिसिया)	सिलि (साइलि)	३ वि ६-२००	४०-६० दिन
सिलिनियम	सिलिनि	३—३०	४० दिन
सिस्टस	सिलिनि	१—३०	—
सीड्रन	सीड्र	θ—३	—
सेनेगा	सेनेगा	θ—३०	—
सेबाल सेरूलेटम	सेबाल	θ (१०-१२ बून्द)	—

दवाका नाम	संक्षिप्त नाम °	क्रम या डा०	स्थितिकाल
सोरिनम	सोरि	३०—२००	३०-४० दिन
स्कूकम-चक	स्कूकम	३ वि	—
स्कुइला ["सिला" देखिये]।			
स्कुटेलेरिया	स्कुटे	θ—३	—
सोलेनम नाइग्रा	सोले-ना	२—३	—
स्पाइजिलिया	स्पाइजि	२—३०	२०-३० दिन
स्पंजिया	स्पंजि	θ—३	१ घं०—१ दिन
स्पिरिट कैम्फर	कैम्फ	θ	१—घं—१ दिन
सँगुनेरिया कैम	सँगु	θ, ३—६	—
सेण्टोनाइन	सेण्टो	१x—३ वि	
सेबाइना	सेबाई	१,३—३०	२०-३० दिन
सेम्बुकस	सेम्बु	θ—६	३—४ घं
सेरासिनिया	सेरासि	३—६	—
हाइड्रोकोटाइल	हाइड्रोकोट	३—६	—
हाइड्रोफोबिनम	हाइड्रोफो	३०—२००	—
हाइपेरिकम	हाइपे	θ—६	१—७ दिन
हायोसायमस	हायोसा	θ—२००	६—१४ दिन
हाइड्रैस्टिस	हाइड्रा	θ,—१,३०	—
हिपर-सल्फर	हिपर	३x वि २००	८ सप्ताह
हेक्ला लावा	हेक्ला	निम्नक्रम वि ३०	—
हेलियेन्थस	हेलि	θ—३०	—
हेलोडर्मा होराइडस	हेलोडर्मा	३०	—
हेलोनियस	हेलोनि	θ—६	—
हेलिबोरस	हेलि	θ—३	२०-३० दिन
हैमामेलिस	हैमा	θ—३x	१—७ दिन

भेषज-सम्बन्ध तथ्य

(Drug-Relationship)

सूचना

इस अध्यायमें शक्तिकृत (potentised) होमियोपैथिक दवाओंका आपसमें सम्बन्ध बताया गया है। अध्याय तीन भागोंमें बँटा है :—

(क) किस दवाके बाद कौन दवा चल सकती है।

(ख) किस दवाके बाद कौन दवा नहीं चलती।

(ग) किस दवाको विष-क्रिया किस दवाको नाश करती है।

अर्थात् "(क)" विभागमें शक्तिकृत किसी दवाके बाद शक्तिकृत दूसरी कौन सी दवा अच्छी चलती है, वह लिखा गया है। जैसे :— "ऐलो" दवाके बाद कैलि-बाइक्रोम. सिपिया, सल्फ्यूरिक-एसिड या सल्फर खूब चलता है—रोगीके शरीरमें कोई नुकसान नहीं पहुँचाता। इसीसे कैलि-बाइक्रोम, सिपिया, सल्फ्यूरिक-एसिड और सल्फर दवाओंको ऐलोके "बादवाली अनुकूल दवाएँ" (the remedy is followed well by कहते हैं।

इस "बादवाली अनुकूल दवाओंमें" जो बड़े अक्षरों में छापी गई हैं, उन्हें उन आलोच्य औषधका "अनुपूरक"* (complementary) कहते हैं। जैसे—ऐलोके बादवाली अनुकूल दवाओं में "सल्फर शब्द बड़े अक्षरोंमें छापा गया है, अतएव समझ लेना चाहिये, कि सल्फर दवा ऐलोकी "अनपूरक" है। यह तो बताना वृथा ही है, कि ऐलोके

---

* अर्थात् (complements) या "क्रिया-विशेष पूरक" दवाएँ ; जैसे ऐलोके प्रयोगसे बीमारी कुछ दब जानेपर बीमारीका बाकी हिस्सा सल्फरसे हट जा सकता है। इससे मालूम होता है, कि "सभी अनुपूरक दवाएँ" बादवाली "अनुकुल दवाओंके" अन्तर्गत हैं, यद्यपि सभी बादवाली अनुकुल दवाएँ "अनुपूरक"

साथ सल्फर दवाका "बादवाली अनुकूल और अनुपूरक", दोनों ही तरहका सम्बन्ध समझ लेना चाहिये।

"(ख)" किस शक्तिकृत दवाके सेवनके बाद कौन-सी शक्तिकृत दवा नहीं चलती या नुकसान पहुँचाती है, वही लिखा गया है। जैसे— ऐलोके बाद "ऐलियम सैट" सेवन करनेपर कोई कड़ी बीमारी पैदा हो जा सकती है। इसीलिये ऐलियम-सैटाइवा दवा ऐलोके "बादवाली प्रतिकूल या व्याघातक" (inimical or incompatible) दवा कही जाती है।

"(ग)" विभागमें किस शक्तिकृत दवाकी ज्यादा मात्रा सेवन करनेके बाद शक्तिकृत कौन-कौन-सी दवाकी व्यवस्था करनेपर उसकी विष-क्रिया नष्ट हो जाती है, यह लिखा गया है। जैसे—"ऐलो" सेवनके बाद कैम्फर, लाइको, नक्स या सल्फरके प्रयोगसे ऐलोकी विष क्रिया नष्ट हो जा सकती है अर्थात् यदि ऐलोके सेवनके बाद रोगीके शरीरमें उसकी विष क्रिया (poisoning) या कोई नया उपसर्ग स्पष्ट दिखाई दे, तो विष दोषको नष्ट करनेके लिये कैम्फर, लाइको, नक्स या सल्फरकी व्यवस्था करनी पड़ेगी। इसीसे कैम्फर, लाइको, नक्स या सल्फर दवाएँ ऐलोकी "विषघ्न या दोषको मारनेवाली या प्रतिकारक दवा या प्रतिविष" (antidotes) कहलाती है।

इस भेषज-सम्बन्धका ज्ञान हुए बिना दवा देनेका दायित्व पूर्ण गुरु भार किसीको भी अपने ऊपर न लेना चाहिये। आजकलके होमियोपैथोंकी अपेक्षा पहलेके चिकित्सकोंको इसका ज्ञान

नहीं है। [एक बात और भी याद रखने लायक है :—"अनुपूरक दवा" आलोच्य औषधिके पहले भी दी जाती है :—(जरूरत पड़नेपर) सल्फर दवा ऐलोके पहले भी बिना किसी विघ्नके सेवन की जा सकती है।

बहुत अधिक था ; इसीलिये इलाजमें उन्हें बहुत ज्यादा कामयाबी हासिल होती थी और उनकी वजहसे ही सभ्य जगतमें आज होमियोपैथीका इतना अधिक आदर है। दवाओंके सम्बन्धका ज्ञान रहे बिना दवा देना या चिकित्सा करना, रोकनेवाले यन्त्र (brake) के कौशलकी जाने बिना मोटर गाड़ी चलाना एक समान है ; पद-पदपर भयानक विपत्ति आ सकती है। वर्त्तमान अध्यायके सहारे होमियोपैथिक दवाओंका वेकायदा प्रयोग बन्द होगा, ऐसी आशा करना शायद असंगत न होगा।

इङ्गलैण्डके वर्त्तमान होमियोपैथिक डाक्टरोंमें अग्रणी डाक्टर क्लार्क साहबका कथन है कि—मैं जानता हूँ, कि एक पुरानी बीमारीके इलाजमें कैल्केरियाके प्रयोगसे कुछ फायदा हो रहा था ; परन्तु कैल्केरियाके बाद ही ब्रायोनिया सेवन करनेपर बीमारी "असाध्य" हो पड़ी (the case was irretrievably spoiled)। एक बार मुझे स्वयं ही तकलीफ देनेवाले कुछ उपसर्ग पैदा हो गये, उसका कारण खोजनेमें ही कई दिन लग गये ; इसके बाद कारण समझमें आया, कि कुछ दिन पहले नेट्रम-म्यूर २०० एक मात्रा खानेका ही यह नतीजा है। उस समय Jahr का लिखा ग्रन्थ खोलकर उसका प्रतिविष (नाइट्रिक-स्पिरिट डलसिस—Nitri-spiritus-dulcis) सूँघनेसे ही मैं उसी समय एकदम अच्छा हो गया। उस समय इन शक्तिकृत होमियोपैथिक दवाओंका सार-वत्ता मेरी समझमें आ गई। (Dr. Clarke's Dictionary of Practical Medicine, Vol. I. page viii and Vol. II. page 549 देखिये)।

गृहस्थ और नये चिकित्सकोंको औषध देनेके कामकी सुविधाके लिये दवाओंके ऊपर लिखे तीन तरहका सम्बन्ध-विवरण क्रमसे लिखा जाता है :—

(क) किस दवाके बाद कौन दवा खूब चलती है :—

(The Remedy is followed well by) :—

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

आर्जेण्टम नाई—कैल्क, कैलि-कार्ब, लाइको, मर्क, पल्स, सिपि,साइलि, स्पाई, स्पंजि, ब्रायो, विरे, हाइड्रो।

आर्जेण्टम-मेट—कैल्क, पल्स, सिपि।

आरम-मेट—एकोन, बेल, कैल्क, चायना, लाइको, मर्क, एसिड-नाई, पल्स, रस, सिपि, सल्फ, साइलिसिया।

आयोडियम—बैडि, लाइको, पल्स, ऐकोन, आर्ज-नाई, कैल्क, कैल्के-फास, कैलि-बाई, मर्क-सोल, फास।

आर्निका—ऐकोन, इपि, रस, विरे, हाइपे, आर्स, बेल, ब्रायो, बेरा म्यू, कैक्ट, कैल्क, चायना, कैमो, कैलेण्डुला, कोनायम, हिपर आयोड, नक्स, फास, लिडम, पल्स, सोरि, रूटा, एसि-सल्फ, सल्फ, बार्ब।

आर्सेनिक एल्ब—पैजियम-सैट, कार्बो-वेज, नेट्रम-सल्फ, फास्फो, पाइरो, थूजा, एपि, बेल, कैक्ट, कैमो, चायना, साइक्यू फेरम, एसि-फ्लु, हिपर, आयोड, इपि, कैलि-कार्ब, लाइको, मर्क, नक्स, बैरा-कार्ब, कैल्क-फास, चेलि, लैके, सल्फ, विरे, रस।

ऐकोनाइट—आर्नि, काफि, सल्फ, ऐम्ब्रा, आर्स, बेल, ब्रायो, कैक्ट, कैल्क, काक्यु, कैन्थे, हिपर, इपि, कैलि-ब्रो, मर्क, पल्स, रस, सिपि, स्पाइजि, स्पञ्जि, साइलि।

ऐगारिकस—बेल, कैल्के, क्युप्रम, मर्क, ओपि, पल्स, रस, साइलि, टैरेण्टुला, ट्युबर।

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

ऐग्नस-कैक्टस—आर्स, ब्रायो, कैलेडियम, इग्ने, लाइको, सल्फ, सिलिनि।

ऐंगस्टियुरा—बेल, इग्ने, लाइको, सिपि।

ऐण्टिम-क्रूड—कैल्के, लैके, मर्क, पल्स, सिपि, सल्फ, **सिला**।

ऐण्टिम-टार्ट—बैरा-कार्ब, सिना, कैम्फ, पल्स, सिपि, सल्फ, टेरि, कार्बो-वेज, **इपि**।

ऐनाकार्डियम—लाइको, पल्स, प्लैटि।

ऐन्थ्रासिनम—आरम, म्यूर-ने, साइलि।

ऐमोन-कार्ब—बेल, कैल्के, लाइको, फास, पल्स, रस, सिपि, सल्फ, विरे, ब्रायो।

ऐमोन-म्यूर—**ऐण्टिम-क्रूड**, काफिया, मर्क नक्स वोम, फास, पल्स, रस-टक्स।

ऐम्ब्राग्रिसिया—लाइको, सिपि, पल्स, सल्फ।

आर्टिमिसिया—कास्ट्रि "wine" नामक शराबके साथ **आर्टिमिसिया** दवा सेवन करनी चाहिये।

ऐल्यूमिना—आर्जें-मेट **फेरम**।

ऐलो—कैलि-बाई, सिपि, एसिड-सल्फ, **सल्फ**।

ऐलियम-सिपा—कैल्क, साइलि, **फास्फो, पल्स, सार्सा, थूजा**।

ऐलियम-सैटाइवा—**आर्स**।

ऐसाफिटिडा—चायना, मर्क, पल्स।

ऐसाराम-इयु—विस्मथ, कास्टि, पल्स, साइलि, एसिड-सल्फ।

एसिड-ऐसेट—**चायना**।

एसिड-नाइट्रिक—आर्नि, एरम, बेल, कैल्क, कार्बो-वे, सिके, कैलि-कार्ब क्रियो, मर्क, फास्फो, पल्स, सिपि, साइलि, सल्फ, थूजा, **आर्स**, **कैलेडियम**।

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

एसिड फास—आर्स, बेल, कैल्के-फास, कास्टि, चायना, फेरम, एसिड-फ्लू, फेरम-फास, कैलि-फास, लाइको, नेट्रम-फास, नक्स, सिपि, पल्स, रस, सिलिसि, सल्फ, विरे।

एसिड-फ्लू—ग्रेफा, एसिड-नाई, साइलि।

एसिड म्यूर—कैल्के, कैलि-कार्ब, पल्स, सिपि, सल्फ, साइलि, नक्स-वोम।

एसिड-सल्फ—आर्नि, रूटा, कैल्क, कोनाय, लाइको, प्लाटि, सिपि, सल्फ, पल्स।

युपेटोरियम-पर्फ—नेट्रम-म्यूर, सिपि, ट्यूबर।

युफोर्बियम—फेरम, लैके, पल्स, सिपि, सल्फ।

युफ्रेशिया—ऐकोन, ऐल्यूमि, कैल्के, कोनाय, मर्क, नक्स, फास्फो, पल्स, रस, साइलि, सल्फ, लाइको।

इग्नेशिया—बेल, कैल्क, चायना, काक्यू, लाइको, पल्स, रस-ट, नक्स, सिपि, सल्फ, जिंक, साइलि, नेट्रम-म्यूर।

इथ्यूजा—कैल्क।

इपिकाक—ऐण्टिम-क्रूड, आर्स, बेल, ब्रायो, कैल्क, एपिस, कैक्टस, कैडमि, कैमो, चायना, इग्ने, नक्स, फास, पल्स, पोडो, रियुम, सिपि, सल्फ, टेरे, विरे, ऐण्टिम-टार्ट, क्यूप्र, आर्नि।

एपिस—आर्स, ग्रेफा, आयोड, कैलि-आई, लाइको, फास, पल्स, स्ट्रैमो, सल्फ, आर्नि, नेट्रम-म्यूर।

एरम—युफोर्बियम।

ओपियम—ऐकोन, ऐण्टिम-टार्ट, बेल, ब्रायो, हायोस, नक्स-मस, नक्स-वोम, सैम्बु।

ओलियेण्डर—कोनाय, लाइको, नेट्र-म्यूर, पल्स, रस, सिपि, स्पाई।

ओसिमम—डायस्को।

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

कावयुलस—आर्स, बेल, हिपर, इग्ने, लाइको, नक्स, रस, पल्स, सल्फ, ओपि।

काफिया—आरम, वेल, एसि-फ्लू, लाइको, नक्स, ओपि, सल्फ, **ऐकोन**।

कास्टिकम—ऐण्टिम-टार्ट, एरम, गुये, कैलि-आयोड, कैल्के, नक्स, पल्स, रस, रूटा, सिपि, साइलि, स्टैनम, सल्फ, लाइको, **पेट्रोसे, कोलसि, कार्बो-वेज**।

कार्बो-ऐनिमेलिस—आर्स, बेल, ब्रायो, एसिड-नाई, फास, पल्स, सिपि, साइलि, विरे, (कार्बो-वे ?) **कैल्के-फास**।

कार्बो-वेज—आर्स, ऐकोन, चायना, लाइको, नक्स, एसिड-फास, पल्स, सल्फ, विरे, **ड्रोसे, कैलि-कार्ब, फास्फो**।

क्यूप्रम ऐसेट—**कैल्क, जेल्स, साइक्यू, जिंक**।

क्यूप्रम-मेट—आर्स, बेल, कास्टि, साइक्यू, हायोस, पल्स, स्ट्रैमो, विरे जिंक, कैल्के।

कैलि-आयोड—एसिड-नाई।

कैलि-कार्ब—**कार्बो-वेज, नक्स**, एसिड-नाई, फास, सिपि, आर्स, ऐसि फ्लू, लाइको, पल्स, सल्फ।

कैलि-नाइट्रिकम—वेल, कैल्क, पल्स, रस, सिपि।

कैलि-बाई—ऐण्टिम-टार्ट, **आर्स**, पल्स, वार्बे।

कैलि-ब्रोमेटम—कैक।

कैलि-सल्फ—ऐसिड-ऐसे, आर्स, कैल्के, हिपर, कैलि-कार्ब, पल्स, रस, सिपि, साइलि, सल्फ।

कैक्टस—डिजि, युपेट-पर्फ, लैके, नक्स, सल्फ।

कैडमियम—बेल, कार्बो-वेज, लोबे, एसिड-नाई।

दवाका नाम — दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

कैनाबिस-सैटाइवा—बेल, हायोस, लाइको, नक्स, ओपि, पल्स, रस, विरे।

केन्थरिस—कैम्फ, बेल, केलि-आयोड, केलि-बाई, मर्क, फास, पल्स, सिपि, सल्फ।

कैमोमिला—बेल, मैग्ने-कार्ब, पल्स, ऐकोन, आर्नि, ब्रायो, कैक्ट, कैल्के, काक्यु, फार्मि, मर्क, नक्स, रस, सिपि, साइलि, सल्फ।

कैम्फर—कैन्थ, आर्स, ऐण्टिम-टार्ट, बेल, काक्यु, नक्स, रस, विरे।

कैल्केरिया-आर्स—बेल, रस, ऐगार, बोरैक्स, बिस्मथ, ड्रोसेरा, डल्का, इपि, केलि-बाई, लाइको, नेट्र-कार्ब, ग्रेफा, नक्स-वोम, फास, पल्स, पोडो, प्लेटि, साइलि, सिपि, सार्सा, टियुबर, थेरिडियन। कैल्के-कार्बके बाद सल्फर या एसिड-नाई कभी न देना चाहिये; खिलानेसे तेज बीमारियाँ पैदा हो सकती है।

कैल्के फास—हिपर, रूटा, सल्फ, जिंक रस, आयोड, सोरि।

कैल्के फ्लुओर—कैल्क-फास, एसिड-फास, नेट्रम म्यूर, साइलि।

कैल्मिया—कैल्क लाइको, नेट्रम-म्यूर, पल्स, स्पाइजि, एसिड-बैंजोयिक।

कैलेडियम—एसिड-नाई, ऐकोन, कास्टि, पल्स, सिपि।

कैलेण्डुला – हिपर, आर्नि, आर्स, ब्रायो, एसि नाई, फास्फो, रस।

कोनायम—चैरा-म्यू, आर्नि, आर्स, बेल, कैल्क, कैल्क-आर्स, साइक्यू, ड्रोसे, लाइको, नक्स, सोरि, फास्फो, पल्स, रस, स्ट्रैमो, सल्फ।

कोरैलियम—सल्फ।

कोलचिकम—कार्बो-वेज, नक्स, पल्स, रस, सिपि।

कोलोसिन्थ—बेल, ब्रायो, कास्टि, कैमो, नक्स, सल्फ, स्पाइजि, स्टैफि, मर्क।

दवाका नाम — दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

क्रियोजोटम—आर्स, बेल, कैल्के, कैलि-कार्ब, लाइको, एसिड-नाई, नक्स, रस, सिपि, सल्फ।

क्रोकस—चायना, नक्स, पल्स, सल्फ।

क्रोटोन-टिग्लियम—रस।

क्लिमेटिज इरेक्टा—कैल्क, रस, सिपि, साइलि, सल्फ।

गुयेकम—कैल्के, मर्क।

ग्रेफाइटिस—**आर्स, कास्टि, हिपर, फेरम, लाइको,** इयुफोर्बि, नेट्र-सल्फ, साइलि।

चायना—**फेरम**, एसि-ऐसे, आर्स, आर्नि, ऐसाफि, बेल, कैल्के, कार्बो-वेज, कैल्क-फास, लैके, मर्क, पल्स, फास, एसि-फास, सल्फ, विरे।

चेलिडोनियम—ऐकोन, आर्स, ब्रायो, इपि, लिडम, लाइको, नक्स, सिपि, स्पाई, सल्फ, कोरैल।

जिंकम-मेट—**कैल्के-फास**, हिपर, इग्ने, पल्स, सिपि, सल्फ।

जेलसिमियम—बेप्टी, कैक, इपि।

टियुक्रियम—चायना, पल्स, सिपि।

टियुबरक्यू—**सोरि, हाइड्रो, सल्फ,** बेल, **कैल्क,** कैल्के-फास, कैल्के-आयोड, साइलि, बेरा-कार्ब, फास, पल्स, सिपि, थूजा। "बैसिलिनिम" देखिये।

टैबेकम—कार्बो-वेज, हाइड्रोफो।

टेरिबिन्थिना—मर्क-कोर।

टेराक्सेकम—आर्स, बेल, चायना, ऐसाफि, लाइको, रस, सल्फ, स्टैफि।

डल्कामारा—**बैरा-कार्ब, कैल्के, कैलि-सल्फ, सल्फ,** बेल, लाइको, रस, सिपि।

डिजिटेलिस—ब्रायो, बेल, कैमो, चायना, लाइको, नक्स, ओपि, फास्फो, पल्स, सिपि, सल्फ, विरे, एसि-ऐसे।

दवाका नाम दवाके बादवाली प्रतिकूल दवाएँ।

ड्रोसेरा—नक्स, कैल्क, सिना, पल्स, सल्फ, विरे, कोनाय।

थूजा—आर्स, नेट्र-सल्फ, सैबाई, मेडोरि, साइलि, ऐसाफि, कैल्क, इग्ने, कैलि-काब लाइको, मर्क, एसि-नाई, पल्स, सल्फ, वैबिस।

नक्स वोमिका—कैल्के, कैलि-कार्ब, सिपि, सल्फ, आर्स, ऐन्टि-स्पाई, बेल, ब्रायो, कैक, कार्बो वे, काक्यू कोलचि, हायोस, लाइको, फास्फा पल्स, रस सिपि, एसि-फास, इस्क्यु, सल्फ।

नक्स मस्केटा—ऐण्टिम टार्ट, लाइको, पल्स, रस, स्ट्रैमो, नक्स।

नेट्रम-कार्ब—कैल्के, नक्स, एसि-नाई, पल्स, सल्फ, सिलिसि, सिपि।

नेट्रम म्यूर—एपिस, कैल्सि इग्ने सिपि ब्रायो, कैल्के, हिपर, कैलि काब, पल्स, रस, सल्फ, थूजा।

नेट्रम सल्फ—आर्स, थूजा, बेल।

पोडोफायलम – सल्फ।

पाटु सिन—कोरेल कास्टि, पोडो, एपि।

पल्सेटिला—पेट्रि-सिपा, एसि-सल्फ, आर्ज-नाई, लाइको साइलि, स्ट्रैमो, कैलि-म्यू कैलि-सल्फ, (टियुबर) कैमो, ऐण्टिम-क्रूड, ऐण्टिम-टार्ट, ऐनाका, ऐसाफि, आर्स, बेल, कैल्क, इयुफोर्बि, मेफा, इग्ने, कैलि-बाई, एसि-नाई, नक्स, रस, सिपि, सल्फ, फास।

पेट्रोलियम—ब्रायो, कैल्क लाइको, एसि नाई, नक्स, पल्स, साइलि, सल्फ, सिपि।*

पेरिस—कैल्क, लिडम, लाइको, नक्स, फास्फो, पल्स, रस, सिपि, सल्फ।

सम्बम—आर्स, बेल, लाइको, मर्क, फास्फो, पल्स, सिलि, सल्फ।

---

* सिपिके पहले "पेट्रोलियम" सेवन किया जा सकता है, किन्तु सिपियाके बाद "पेट्रोलियम" सेवन नहीं किया जा सकता।

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

प्लैटिनम—ऐनाका, आर्ज-मेट, वेल, लाइको, पल्स, रस, सिपि, विरे, इग्ने, **पैलेडियम**।

फास्फोरस—**आर्स, पेलि-सिपा, कार्बो-वेज**, इपि, वेल, ब्रायो, चायना, केलि-कार्ब, केल्क, लाइको, नक्स, पल्स, रस, सिपि, सिलि, सल्फ।

फेरम—**ऐल्यूमि, चायना, हैमा**, ऐकोन, आर्नि, वेल, कोनाय, लाइको, मर्क फास्फो, सल्फ, विरे।

वार्बेरिस—**लाइको**।

विस्मथ—बेल, कैल्क, पल्स, सिपि।

बेलेडोना—**कैल्क**, ऐकोन, आर्स, कैक्ट, कार्बो-वे, कैमो, कोनाय, डल्का हिपर, हायोस, लैके, मक, मर्क-बिन, मस्क, एसि-म्यू, नक्स, पल्स, रस, सेनेगा, सिपि, साइलि, स्ट्रैमो, सल्फ, वेलेरि, विरे, चायना।

बैडियेगा—**आयोड, मर्क, सल्फ**, लैके।

बैप्टीशिया—हैमा, एसि-नाई, टेरिबि, क्रोटे, पाइरो।

बैराइटा-कार्ब—**डल्का**, ऐण्टिम-टार्ट, कोनाय, (कैल्क), चायना, फास्फो, पल्स, रस, सिपि, सल्फ, लाइको, मर्क, एसि-नाई, सोरि, टियुबर।

बैसिलिनम—**कैल्क-फास, लैके, कैलि-कार्ब**, हाइड्रो, ("टियुबर-क्यूलिनम" देखिये)।

बोविष्टा—ऐल्यूमि, कैल्के, रस, सिपि, विरे।

बोरेक्स—कैल्क, नक्स, आर्स, ब्रायो, लाइको, फास्फो, सिलि।

ब्रायानिया—**ऐल्यूमि, रस, कैलि-कार्ब, नेट्र-म्यू**, आर्स, ऐब्रो, ऐण्टि-टार्ट, वेल, बार्बे, कैक्ट, कार्बो-वे, डल्का, हायोस, कैलि-कार्ब,

दवाका नाम — दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

एसि-म्यू, नक्स, फास्फो, पल्स, रस, साइलि, सैवाडि, सिला, सल्फ, ड्रोसि।

ब्रोमियम—आर्स-नाई, कैलि-कार्ब।

बायोला-ओडो—बेल, रस, सिपि, स्टैफि।

वार्बेस्कम—बेल, चायना, लाइको, पल्स, स्ट्रैमो, सिपि, रस, सल्फ।

विरेट्रम-ऐल्बम—आर्नि, ऐकोन, आर्स, आर्ज-नाई, बेल, कार्बो-वेज, कैमो, चायना, क्यूप्रम, ड्रोसे, इपि, पल्स, रस, सिपि, सल्फ, सैम्ब्यू, डल्का।

वैलेरियेना—फास, पल्स।

मर्क्यूरियस*—चैडि, आर्स, ऐसाफि, बेल, कैल्क, कैल्क-फास, कार्बो-वेज, चायना, डल्का, हिपर, आयोड, लैके, लाइको, एसिड-म्यूर, एसिड-नाई, फास, पल्स, रस-टक्स, सिपि, सल्फ, थूजा।

मर्क्यूरियस वाइवस " सोल्यूबिलिस	ऊपर कहा हुआ "मर्क्यूरियस" देखिये।

मिनियैन्थिस—कैप्सि, लाइको, पल्स, रस।

मेजिरियम—कैल्क, कास्टि, इग्ने, लाइको, मर्क, नक्स, फास, पल्स।

मेडोरिनम—सल्फ, थूजा।

मैग्नेशिया-कार्ब—कैमो, कास्टि, फास, पल्स, सिपि, सल्फ।

मैग्नेशिया-म्यूर—बेल, लाइको, नेट्र-म्यू, नक्स, पल्स, सिपि।

मैंगेनम-ऐसे पल्स, रस, सल्फ।

---

* मर्क्यूरियस, कहनेसे "मर्क्यूरियस-सोल" या मर्क्यूरियस-वाइवस" समझना चाहिये।

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

रस-टक्स—**ब्रायो, कैल्के,** आर्स, आर्नि, बेल, बार्ब, कैक्ट, कैल्क-फास, कैमो, कोनाय, ग्रैफा, हायोस, लैके, मर्क, एसि म्यु, नक्स, पल्स, फास, एसि-फास, सिपि, सल्फ, ड्रोसे।

रस-वेन—रस-टक्स।

रस-रैड—"रस-टक्सके बादवाली अनुकूल दवाएँ" देखिये।

रूटा—**कैल्के-फास,** कैल्क, कास्टिक लाइको, एसि-फास, पल्स, सिपि, सल्फ, एसि-सल्फ।

रियुम—**मैग्ने-कार्ब,** बेल, पल्स, रस, सल्फ।

रियुमेक्स—कैल्के।

रेनानक्यूलस-बल्बो—ब्रायो, इग्ने, कैलि-कार्ब, नक्स, रस, सिपि, सैबाडि।

रेडियम-ब्रोमाइड—रस-वेन, सिपि, कैल्के।

रोडोडेण्ड्रन—आर्नि, आर्स, कैल्क, कोनाय, लाइको, मर्क, नक्स, पल्स, सिपि, साइलि, सल्फ।

लाइकोपोडियम—**आयोड, लैके, पल्स, चेलि, इग्ने, इपि, कैलि-आयोड,** ऐनाका, बेल, ब्रायो, कार्बो-वे, कोलचि, डल्का, ग्रैफा, हायोस, कैलि-कार्ब, लिडम, नक्स, फास, स्ट्रैमो, सिपि, साइलि, विरे, ड्रोसे (कैल्क), थेरिडियन।

लिडम—ऐकोन, बेल, ब्रायो, चेलि, नक्स, पल्स, रस, सल्फ, ए-सल्फ।

लिसिन—"हाइड्रोफोबिनम" देखिये।

लैकेसिस—**लाइको, एसि-नाई, हिपर, कैलि-आयोड, आयोड,** ऐकोन, आर्स, ऐल्यूमि, बेल, ब्रोम, कार्बो-वे, कास्टि, कोना, कैक्ट, कैल्क, चायना, हायोस, कैलि-कार्ब, मर्क, साइक्यू, नक्स, नेट्र-म्यू, ओलि, फास, रस, साइलि, सल्फ, टेरेण्ट, इयुफोर्बि, मर्क-प्रोटो आयोड।

दवाका नाम दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

लोरोसिरेसम—बेल, कार्बो-वेज, फास, पल्स, विरे।

सल्फर—ऐलो, नक्स, सोरि, ऐकोन, पल्स, आर्स, वेडि, एस्कियु, ऐल्युमि, एपिस, बेल, ब्रायो, बेरा-कार्ब, बार्बे, बोरेक्स, कैल्क, कार्बो-वेज, इयुफोर्बि, ग्रैफा, गुये, सार्सा, कैलि-कार्ब, मर्क, एसिड-नाई, फास, पोडो, रस, सिपि, सैम्बु, ड्रोसे।

साइक्यूटा-वाइरोसा—बेल, हिपर, ओपि, पल्स, रस, साइलि, स्टैन।

साइना (सिना)—कैल्क, चायना, इग्ने, प्लैटि, पल्स, रस, साइलि, स्टैन।

साइलिसिया—"सिलिका" देखिये।

सार्सापेरिला—पेलि-सिपा, मर्क, सिपि, बेल, हिपर, फास्फो, रस, सल्फ।

सिकेलि-कोर—ऐकोन, आर्स, बेल, चायना, मर्क, पल्स।

सिक्लामेन—फास्फो, पल्स, रस, सिपि, सल्फ।

सिङ्कोना—"चायना" देखिये।

सिपिया—नेट्र-कार्ब, नेट्र-म्यू, नक्स, सैबाडि, सल्फ, बेल, कैल्क, कोनायम, कार्बो-वेज, डल्कामारा, इयुफोर्बि, ग्रैफा, लाइको, पेट्रो, पल्स, सार्सा, साइलि, रस, टैरेण्ट, फास्फो, एसि-नाई।

सियेनोथस-अमेरिकाना—बार्बे, कोनाय, कायेकस।

सिला-मेरिटिमा—आर्स, इग्ने, नक्स, रस, साइलि, वेरा-कार्ब।

सिलिका (साइलिसिया)—कैल्क, सल्फ, थूजा, एसि-फ्लु, आर्स, ऐसाफि, बेल, क्लिमे, ग्रैफा, हिपर, लैके, लाइको, नक्स, मर्क, रस, सिपि, सल्फ, टियुबर।

सिलिनियम—कैल्क, नक्स, मर्क, सिपि।

सिटस—बेज, कार्बो-वे, मैग्ने-कार्ब, फास्फो।

सिनेगा—एरम, कैल्क, लाइको, फास्फो, सल्फ।

दवाका नाम — दवाके बादवाली अनुकूल दवाएँ।

सैबाइना—**थूजा**, आर्स, बेल, पल्स, रस, स्पंज, सल्फ।

सैबाडिला—**सिपि**, आर्स, बेल, नक्स, पल्स।

सैम्बुकस—आर्स, बेल, कोनाय, ड्रोसे, नक्स, फास्फो, रस, सिपि।

सोरिनम—**सल्फ, टियुबर**, ऐल्यूमि, बोरैक्स, बैरा-कार्ब, कार्बो-वेज, चायना, हिपर, लाइको।

स्कुइला—"सिला" देखिये।

स्टैनम—**पल्स**, कैलि, कैलि-कार्ब, नक्स, फास, रस, सल्फ, बैसिलि, हाइड्रोफो।

स्टैफिसाइग्रिया—**कास्टि, कोलोसि**, कैल्क, एसिड-फ्लू, कैलि-कार्ब, इग्ने, लाइको, नक्स, पल्स, रस, सल्फ, सिलिनि।

स्ट्रैमोनियम—ऐकोन, बेल, ब्रायो, क्यूप्रम, हायोस, नक्स।

स्पाइजिलिया—आर्नि, ऐकोन, आर्स, बेल, कैल्क, सिमिसि, डिजि, आइरिस, कैलि-का, कैल्मि, नक्स, पल्स, रस, सिपि, सल्फ, जिंक।

स्पंजिया—ब्रोमि, ब्रायो, कोनाय, कार्बो-वेज, एसि-फ्लू, हिपर, कैलि-ब्रोम, नक्स, फास, पल्स।

स्पिरिट-कैम्फर—"कैम्फर" देखिये।

हाइड्रोफोबिनम—नेट्रम-कार्ब, नेट्रम-म्यूर, जेल्स, लैके, नैजा वगैरह सर्प-विष।

हायोसायमस—बेल, फास, पल्स, स्ट्रैमो, विरे।

हिपर सल्फर—**कैलेण्डु**, ऐब्रो, ऐकोन, एरम, बेल, ब्रायो, आयोड लैके, मर्क, एसि-नाई, पल्स, नक्स, रस, सिपि, स्पंज, साइलि, सल्फ, आर्नि, जिंक।

हेलिबोरस—बेल, ब्रायो, चायना, लाइको, नक्स, फास, पल्स, सल्फ, जिकम।

हैमामेलिस—**फेरम**, आर्नि।

(ख) किस दवाके बाद कौन-सी दवा नहीं चलती या नुकसान करती हैः—

(Inimical or Incompatible Remedies)

दवाका नाम दवाके बादवाली प्रतिकूल दवाएँ।

आरम-म्यूर-ने—काफि, सुरासार।

आर्जेण्टम-नाई—काफि।

आर्निका—सुरा (पागल या तेज कुत्ता या सियार अथवा बिल्ली आदिके काटनेपर आर्निकाका सेवन बहुत नुकसान करता है)।

इग्नेशिया—काफि, नक्स, टैबे।

एपिस—रस, फास।

एरम-ट्राइफाइलम—कैलेडियम।

एसिड-ऐसे—आर्नि, बोरैक्स, कास्टि, रैनान, सार्सा, बेल, लैके, मर्क।

एसिड नाई—लेके (हैनिमैनने कहा है, कि कैल्के-कार्बके बाद एसिड-नाई नहीं चलता)।

एसिड-लैक्टिक—काफि।

ऐट्रोपिन—जेल्स।

ऐमोनियम-कार्ब—लैके।

ऐलो-सोक्रोटिना—ऐलि-सि, ऐलि-से।

ऐलियम-सिपा—ऐलो, ऐलि-सै, सिला।

ऐलियम-सैट—ऐलो, ऐलि-सि, सिला।

कानबुलस-इण्डिका—काफि, कास्टि।

काफिया-क्रूडा—कैन्थ, कास्टि, कावयु, इग्ने, सिस्टस, मिलि, स्ट्रैमो (आर्ज-नाईके बाद काफिया नहीं चलता)।

कास्टिकम—एसि-ऐसे, काफि, फास, कावयु, सब तरहके एसिड।

कार्बो-ऐनि—(कार्बो-वेज ?)।

दवाका नाम — दवाके बादवाली प्रतिकूल दवाएँ।

कार्बो-वेज—(कार्बो-ए ?) क्रियो।

कैलि-नाई—कैम्फर या कपूरकी गन्ध लेना।

कैलि-बाई—(कैल्केरियाके बाद **कैलि-बाई** नहीं चलता)।

कैनाबिस सैटाइवा—कैम्फर।

कैन्थरिस—काफि।

कैमोमिला—जिंक, नक्स।

कैम्फर—कैलेण्डुला (काफियाके बाद या **कैलि-नाइट्रिक**के बाद कैम्फर नहीं चलता है)।

कैल्केरिया-कार्ब—सल्फ, बैरा-कार्ब, ब्रायो। कैलि-बाईके बाद या एसि-नाईके बाद **कैल्केरिया-कार्ब** नहीं चलता)।

कैलेडियम—ऐरम।

कैलेण्डुला—कैम्फर।

कोलचिकम—एसिड-ऐसे।

कोलोफाइलम—काफि।

कोनायम—(सोरिनमके बाद **कोनायम** कभी नहीं चलता)।

क्रियोजोट—(कार्बो-वेजके बाद या चायनाके बाद **क्रियोजोटम** नहीं चलता)।

चायना—क्रियो (डिजिटेलिसके बाद या सिलिनियमके बाद **चायना** नहीं चलता)।

जिंकम—कैमो, नक्स, सुरा।

जेलसिमियम—(ओपि ?) [ऐट्रोपिनके बाद **जेल्स** नहीं चलता]।

टैबेकम—इग्ने।

डल्कामारा—लैक, बेल, एसि-ऐसे।

डिजिटेलिस—चायना, नाइट्रिक-स्पिरिटस-डलसिस।

थिया—फेरम।

दवाका नाम   दवाके बादवाली प्रतिकूल दवाएँ।

नाइट्रि स्पिरिटस डलसिस—डिजि, रैनान।

नक्स-वोमिका—एसि ऐसे, इग्ने, जिंक, सब तरहका एसिड।

(नक्स-वोमिकाके पहले या बाद एसि-ऐसे नहीं चलता)।

नेट्रम म्यूर—(नेट्रम-म्यूर, पोडोफाइलमकी क्रिया बढ़ता है)।

पेरिस—फेरम फास।

पोडोफाइलम—नमक (लवण पोडोफाइजमकी क्रिया बढ़ा देता है)।

फास्फोरस—कास्टि, एपिस।

फेरम फास—पेरिस।

फेरम मेट—एसि ऐसे ; चाय और बियर नामक शराब।

बेलेडोना—डल्का, एसि-ऐसे, विनिगर।

बोविष्टा—काफि।

बोरैक्स—एसि-ऐसे, विनिगर और शराब।

बेराइटा-कार्ब—(कैल्के कार्बके बाद बैरा-कार्ब नहीं चलता)।

ब्रायोनिया—कैल्के।

मर्क्यूरियस—एसि-ऐसे, साइलि [सिलिकाके पहले या बाद शक्तिकृत (potantized) मर्क्यूरियस नहीं चलता]।

मार्फिनम—विनिगर।

मिलिफोलियम—काफि।

रस टक्स—एपिस (रस-टक्सके पहले या बाद एपिस नहीं चलता)।

रस रेड रस-टक्सकी प्रतिकूल दवा।

रैनानक्युनम-बल्बो—एसि-ऐसे, स्टैफि, सल्फ, नाइट्रिक स्पिरिटस-डलसिस, शराब, अलकोहल और विनिगर।

लाइकोपोडियम—काफि (केण्टका कथन है, कि लाइकोके बाद सल्फ चलता है ; परन्तु सल्फके बाद लाइको नहीं चलता ; सल्फ, कैल्क, लाइको—इस तरह पर्यायक्रमसे दिया जाता है।

दवाका नाम — दवाकी बादवाली प्रतिकूल दवाएँ।

लिडम—चायना।

लैकेसिस—एसि-ऐसे, एसि-कार्ब, एसि-नाई, ऐमोन-कार्ब, डल्का, सोरि (सिपि ?)।

सल्फर—रैनान (हैनिमैनका कथन है कि कैल्के-कार्बके बाद कभी सल्फर सेवन न किया जाये और केण्ट कहते हैं कि लाइकोके बाद **सल्फ** चलता है, पर सल्फरके बाद लाइको नहीं चलता)।

स्टैफिसाइग्रिया—रैनान। स्टैफिसाइग्रियाके पहले या बाद रैनान नहीं चलता)।

स्ट्रैमोनियम—काफि।

साइलिसिया—"सिलिका" देखिये।

सार्सापैरिला—एसि-ऐसे।

सिंकोना—"चायना" देखिये।

सिपिया—ब्रायो, लैके।

सिला मेरिटिमा—एसि-सि, ऐलि-से।

सिलिका—मर्क।

सिलिनियम—चायना, शराब।

सिष्टस—कांफि।

सोरिनम—कोनायम, लैके (सिपि ?)।

स्कुइला—"सिला" देखिये।

हिपर—स्पंज (Dr. Smith)।

(ग) किस दवाकी विष-क्रिया किस-किस दवाको नष्ट करती है :—

(The Remedy is Antidoted by)

दवाका नाम — दवाका प्रतिविष (antidotes)।

आइरिस—नक्स ।

आर्जेण्टम-नाई—आर्स, कैल्क, लाइको, नेट्रम म्यूर, मर्क, सिलि, फास पल्स, रस, सिपि, सल्फ, आयोड, दूध ।

आर्ज-नाई—कैम्फ, सार्सा, सल्फ, शराब, काफि ।

आर्जेण्टम-मेट—मर्क, पल्स ।

आर्टिका—शासुकका रस ।

आर्निका—ऐकोन, आर्स, कैम्फ, चायना, साइक्यू, इग्ने, इपि, ऐमोन-कार्ब, सेनेगा, फेरम ।

आयोडियम—ऐण्टि-टार्ट, एपिस, आर्स, ऐकोन, बेल, कैम्फ, चायना, काफि, किनि-सल्फर, फेरम, ग्रैफा, ग्रैटि, हिपर, ओपि, फास, स्पंज, सल्फ, थूजा; पानी मिला, गेहूँका मैदा ।

आरम-मेट—बेल, चायना, काक्यु, काफि, क्यूप्र, मर्क, पल्स, स्पाई, कैम्फ ।

आस्ट्रिया—ब्रायो, नक्स ।

आर्सेनिक-आयोड—ब्रायो ।

आर्सेनिक-ऐल्ब—किनि-सल्फ, कैम्फ, कार्बो-वेज, चायना, युफोर्बि, फेरम ग्रैफा, हिपर, आयोड, इपि, कैलि-बाई, मर्क, नक्स-वोम, नक्स-म, ओपि, सैम्बु, सल्फ, टैवे, विरे, लैके ।

आर्सेनिक हाइड्रो—ऐमोन, एसेट, नक्स ।

इग्नेशिया—पल्स, आर्नि, कैम्फ, काफि, एसि-ऐसे, काक्यु, कैमो, नक्स ।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes)।

इथ्यूजा—उद्भिज-अम्ल।

इपिकाक—आर्नि, आर्स, चायना, नक्स, टैबे।

इयुफोर्बियम—एसि-ऐसे, कैम्फ, ओपि, नेबूका रस (ज्यादा परिमाणमें)।

इयुफ्रेशिया—कैम्फ, कास्टि, पल्स।

इलैप्स कोरेलिनम—आर्स, सुरासार, ताप।

एइलेन्थस—नक्स, रस, सुरासार।

एपिस मेलिफिका—कैन्थ, इपि, लैके, लिडम, नेट्र-म्यूर, प्लैण्टे, एसि-कार्ब, आर्टिका, जैतूनका तेल, प्याज।

एरम—एसि ऐसे, बेल पल्स, मक्खन, निकाला दूध या मठा।

एस्क्युलस हिप—नक्स।

एसिड आक्जैलिक—मैग्ने कार्ब, कैल्के-कार्ब।

एसिड-ऐसे—ऐकोन, नेट्रम-म्यूर, मैग्ने-कार्ब, नक्स, सिपि, टेबा।

एसिड-कार्ब—खड़िया, दूध चीनी मिला चूनेका पानी।

एसिड-नाइट्रिक—कैल्क, हिपर, कोनाय, मर्क, मेजे, सल्फ, पेट्रो।

एसिड-फास—स्टैफि, काफि, कैम्फ।

एसिड-फ्लू—सिलि।

एसिड-म्यूर—ब्रायो, कैम्फ, इपि (Dr. Teste)।

एसिड-लेक—ब्रायो।

एसिड-सल्फ—इपि, पल्स।

एसिड-हाइड्रो—कैम्फ, काफि, फेरम, इपि, ओपि, नक्स, विरे-विर।

ऐकोनाइट नेप—एसि-ऐसे, बेल, कार्बो, काफि, नक्स, सल्फ, कैमो, विरे, सिमिसि, पेट्रो, सिपि, विनिगर, सुरासार और शराब।

ऐक्टिया-रेसि—ऐकोन, बैप्टी।

ऐगरिकस—कैल्क, पल्स, रस, कैम्फ, शराब, चर्बी या तेल, काफि।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes)।

ऐग्नस कैकस—कैम्फ, नक्स, नेट्रम-म्यूर, नमक मिला पानी।

ऐड्रस्टियुरा—ब्रायो, चेलि, काफि।

ऐट्रोपिन - बेल, ओपि, फाइजस।

ऐण्टिमोनियम-क्रूड—कैल्क, हिपर, मर्क।

ऐण्टिमोनियम-टार्ट—ऐसाफि, चायना, काक्यु, इपि, लोरो, ओपि, पल्स, रस, सिपि, कोनाय, मर्क।

ऐनाकार्डियम—क्लिमे, क्रोटोन, काफि, रैनान, रस।

ऐन्थ्राक्सिनम—एपिस, आर्स, कैमो, एसि-कार्ब, कार्बो-वेज, कियो, लैके, पल्स, रस, सिलि, एसि-सल्फ, चायना।

ऐमिल नाइट्रेट—कैक्ट।

ऐमोन-कास्ट—आर्ज-नाई, उद्भिजोंकी खटाई, विनिगर।

ऐमोन-कार्ब—आर्नि, कैम्फ, हिपर, लैके, उद्भिजकी खटाई, रेढ़ीका, तेल, जयतूनका तेल वगैरह।

ऐमोन-म्यूर—कैम्फ, हिपर, काफि पल्स, नक्स।

ऐम्ब्राग्रिसिया—कैम्फ, काफि, पल्स, नक्स, स्टैफि।

ऐरानिया—तम्बाकूका धुआँ पानी।

ऐल्यूमिना—ब्रायो, कैम्फ, कैमो, इपि, पल्स।

ऐल्यूमेन—ऐलो, कैमो, नक्स, इपि, सल्फ।

ऐलो सोकोटिना—कैम्फ, लाइको, नक्स, सल्फ, ऐल्यूमे, सरसों।

ऐलियम-सिपा—आर्नि, कैमो, काफि, नक्स, थूजा, विरे।

ऐलियम-सैट—लाइको।

ऐसाफिटिडा—कैम्फ, कास्टि, चायना, मर्क, पल्स, वेलेरि।

ऐसाराम—एसि-ऐसे, कैम्फ, पौधोंकी खटाई, विनिगर।

ओपियम—एसि-ऐसे, बेल, कैमो, साइक्यूटा, काफि, क्यूप्रम, जेल्स, इपि, मर्क, एसि-म्यूर, नक्स, पल्स, विरे, जिंक।

दवाका नाम — दवाका प्रतिविष (antidotes)

ओलियेण्डर—कैम्फ, सल्फ ।

ओस्मियम—बेल, मर्क, हिपर, स्पंज, एसिड-फास, सिलि ।

काक्युलस-इण्डिका—कैम्फ, कैमो, क्यूप्र, इग्ने, नक्स, स्टैफि ।

काफिया—ऐकोन, नक्स, एसि-ऐसे, कैमो, चायना, ग्रैफि, मर्क, पल्स, इग्ने, सल्फ, टैबे ।

कास्टिकम—ऐण्टि-टार्ट, काफि, कोलोसि, डल्का, गुये, नाइट्रिक-स्पिरिट-डलसिस, नक्स, ऐसाफि ।

कार्बो-ऐनि—आर्स, कैम्फ, नक्स, लैके, काफि, विनिगर शराब ।

कार्बो-वेज—आर्स, कैम्फ, काफि, लैके, नाइट्रि-स्पिरिटस-डलसिस, कास्टि, फेरम ।

क्यूप्रम-आर्स—"आर्सेनिक" का प्रतिविष देखिये ।

क्यूप्रम-ऐसे—बेल, चायना, साइक्यु, डल्का, हिपर, इपि, मर्क, नक्स ।

क्यूप्रम-मेट—बेल, कैम्फ, साइक्यू, चायना, काक्यू, कोनाय, डल्का, हिपर, इपि, मर्क, नक्स, पल्स, विरे, आरम, कैमो, चीनी, अण्डेका सफेद अंश (दूधके साथ) सेवन करना चाहिये ।

किनिनम-सल्फ—आर्नि, आर्स, कैल्के, कार्बो-वे, फेरम, हिपर, लैके, नेट्र-म्यू, पल्स ।

कैलि-आयोड—ऐमोन-म्यूर, आर्स, चायना, मर्क, रस, सल्फ, वैलेरि, आर्ज-नाई, आरम, हिपर, एसि नाई ३० ।

कैलि-कार्ब—कैम्फ, काफि, नाइट्रि-स्पिरिट-डलसिस, डल्का ।

कैलि-क्लोर—हाइड्रै ।

कैलि-नाई—इपि, नाइट्रि-स्पिरिट-डलसिस सूँघना ।

कैलि-बाई—आर्स, लैके, पल्स, खटाई, खड़िया, दूध ।

कैलि-ब्रोम—कैम्फ, हेलोन, नक्स, जिंक पौधोंकी खटाई ।

कैलि-म्यूर—बेल, कैल्के, सल्फ, हाइड्रै, पल्स ।

दवाका नाम — दवाका प्रतिविष (antidotes)

केकस—ऐकोन, कैम्फ, चायना, युपेट-पर्फ ।

केनाबिस-सैट—कैम्फ, मर्क ।

केन्थरिस—ऐकोन, कैम्फ, सिम्फि, लोरो, पल्स, रियुम ।

कैप्सिकम—ऐकेलेडियम, कैम्फ, चायना, साइना, एसि-सल्फ, गन्धकका धुआँ ।

कैमोमिला—ऐकोन, ऐल्यूमि, बोरेक्स, कैम्फ, चायना, काक्यू, काफि, कोलोसि, कोनाय, इग्ने, नक्स, पल्स, बेलेरि ।

कैम्फर—कैन्थ, नाइट्रि-स्पिरिटस डलसिस, ओपि, फास्फो ।

कैल्केरिया-आर्स—ग्लोनो पल्स, कार्बो-वे ।

कैल्केरिया कार्ब—ब्रायो, कैम्फ, चायना, इपि, नाइट्रि-स्पिरिट डलसिस नक्स, सिपि, सल्फ, हिपर, आयोड, एसि-नाई ।

कैलिमया—ऐकोन, बेल, स्पाई ।

कैलेडियम—कैप्स, कार्बो-वे, हायोस, इग्ने, मर्क, जिंजि ।

कैलेण्डुला—आर्नि ।

कोका—जेल्स ।

कोनायम—काफि, डल्का, एसि-नाई, नाइट्रि-स्पिरिट-डलसिस शराब ।

कोपेवा—बेल, कैल्के, मर्क (मर्क-कोर मर्दोके लिये और मर्क-सोल औरतोंके लिये उपयोगी है), सल्फ ।

कोब्रा (नेजा)—टैबेकम ।

कोरैलियम—कैल्के, मर्क ।

कोलचिकम—बेल, कैम्फ, काक्य, लिडम, नक्स, पल्स, स्पाई, चीनी, शहद ।

कोलिन्सोनिया—नक्स ।

कोलोसिन्थ—कैम्फ, कास्टि, कैमो, काफि, ओपि, स्टैफि ।

क्रियोजोटम—ऐकोन, नक्स, फेरम (Dr. Teste) ।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes)।

क्रोकस-सैट—ऐकोन, बेल, ओपि।

क्रोटन टिग्लियम—ऐनाका, ऐण्टि-टार्ट, क्लिमे, रस, रैनान।

क्रोटेलस होरिडस—**लैकेसिस** (कैम्फ, काफि, ओपि और सुरासार और ताप हल्का प्रतिविष।

क्लिमेटिस—ब्रायो, कैम्फ, कैमो, ऐनाका, क्रोटन, रस, रैनान।

क्लोरम—ब्रायो, लाइको, स्लम्ब्रम-ऐसेट।

क्लोरैल-हाइड्रेड—डिजि, मस्कस, ताड़ित।

गुयेकम—नक्स।

गैम्बोजिया—कैम्फ, काफि, कोलोसि. कैलि-कार्ब, ओपि।

ग्रैफाइटिस—ऐकोन, आर्स, नक्स, चायना शराब।

ग्रैटियोला—कास्टि, बेल, युफोर्बि, नक्स।

ग्लोनोइन—ऐकोन, कैम्फ, काफि, नक्स।

चायना—आर्नि, एपिस, आर्स, ऐसाफि, बेल, ब्रायो, कार्बो-ऐ, कार्बो-वेज, कैल्के-कार्ब, कैप्सि, कास्टि, सिड्रन, साइना, युपेट-पर्फ, फेरम, इपि, लैके, लिडंम, लाइको, मिनि, मर्क, नेट्र-कार्ब, नेट्र-म्यूर, नक्स, पल्स, रस, सिपि, सल्फ, विरे।

चेलिडोनियम—ऐकोन, कैमो, काफि, कैम्फ, अम्ल (acids), शराब।

जिकम मेटालिकम—कैम्फ, हिपर, इग्ने, लोवे (Dr. Teste)।

जिजिया-कार्बो-ऐ।

जिंजिबार—नक्स।

जेलसिमियम—ऐट्रोपि, चायना, काफि, डिजि, नेट्रम-म्यूर, नक्स-मस, स्ट्रिकनि (Jephson)।

जेबोरेण्डि—बेल।

टियुक्रियम—कैम्फ।

टेरिबिन्थना—फास्फो।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes)।

टेल्यूरियम—नक्स ।

टेराक्सेकम—कैम्फ ।

टैबेकम—एसि-ऐसे, आर्स, क्लिमे, काक्यू, इग्ने, इपिका, लाइको, फास, नक्स, पल्स, सिपि, विरे, स्टैफि, कैम्फ, काफि, जेल्स, कैलि, प्लाटि, स्पाई, विनिगर, शराव, खट्टा सेवन ।

टैरेण्टुला—(आंशिक प्रतिविष वोविष्टा, कार्बो-वेज, चेल, क्यूप्रम, जेल्स, मैग्ने कार्ब, मस्कस, पल्स ।)

ट्राम्बिडियम—मर्क-कोर, स्टैफि ।

डलिकस—ऐकोन ।

डल्कामारा—क्यूप्रम, इपि, कार्ब, मर्क, कैम्फ ।

डिजिटेलिस—एपिस, कैम्फ, कैल्क (कोलचि), नक्स, एसिड-नाई, ओपि, उद्भिज-अम्ल, विनिगर, ईथर ।

डेफने-इण्डिका—ब्रायो, डिजि, रस, सिपि, सिलि, जिंक ।

ड्रोसेरा—कैम्फ ।

थिया—फेरम, थूजा, सुरासार, बियर नामक शराब, चाय ।

थूजा—कोलचि, कैम्फ, कैमो, काक्य, मर्क, नक्स, पल्स, सल्फ, स्टैफि ।

नाइट्रिक-स्पिरिटस-डलसिस—कैल्क, कार्बो-वेज, कास्टि, कोनायम, कैलि-कार्ब, नेट्रम-कार्ब, नेट्रम-म्यूर ओपि, सिपि ।

नक्स वोमिका—ऐकोन, आर्स, वेल, कैम्फ, कैमो, काक्यू, काफि, युफोर्बि, ओपि, पल्स, थूजा, ऐम्ब्रा, इग्ने, आइरिस, प्लाटिनम, स्ट्रैमो, शराब ।

नक्स-मस्केट—कैम्फ, जेल्स, लोरो, नक्स-वो, ओपि, वैलेरि जिंकम ।

निकोटिनम—"टैबेकम" का प्रतिविष देखिये ।

नेट्रम-कार्ब—कैम्फ, नाइट्रि-स्पिरिटस-डलसिस ।

नेट्रम-फास—एपिस, सिपि ।

दवाका नाम — दवाका प्रतिविष (antidotes)।

नेट्रम-म्यूर—आर्स फास, सिपि, नक्स, कैम्फ, **नाइट्रि-स्पिरिट्स-डलसिस** सूँघना।

नैजा—"कोब्रा" का प्रतिविष देखिये।

पोडोफालम—कोलोसि, लेप्टे, नक्स।

पल्सेटिला—ऐसाफि, काफि, कैमो, इग्ने, नक्स, स्टैनम, ऐण्टिम-टार्ट, कैल्के-फास (Dr. Teste), अम्ल (acids) मात्र ही। ['कैमोमिला' और 'पल्सेटिला' परस्पर "प्रतिविष" है अथवा आपसमें एक दूसरेकी "बादवाली अनुकूल दवा" है]।

पल्सेटिला-नेट—ऐण्टिम-क्रूड।

पेट्रोलियम—ऐकोन, काक्यू, नक्स, फास।

पैरिस—कैम्फ, काफि।

प्लम्बम—ऐल्यूमि, ऐल्यूमे, ऐण्टिम-क्रूड, आर्स, बेल, काक्यू, कास्टि, हिपर, ओपि, हायोस, कैलि ब्रोम, क्रियो, नक्स-वोम, नक्स-मस, पेट्रो, प्लैटि, एसिड-सल्फ, एसिड-ऐसे, कैमो, जिंकम, इथ्यूजा (Dr. Teste)।

प्लैटिनम—बेल, नाइट्रि स्पिरि-डल,पल्स, कोलचि (Dr. Teste)।

प्लैण्टेगो—मर्क।

फास्फोरस—काफि, कैल्के, मिजि, नक्स, सिपि, टेरि, आर्स, कैम्फ, क्लोरोफार्म।

फाइजस्टिग्मा—आर्नि, काफि, लिलि, वमन करानेवाली दवाएँ।

फाइटोलैक्का—बेल, काफि, इग्ने, आइरिस, मर्क, मिज़ि, नाइट्रि-स्पिरिटस-डलसिस, ओपि, सल्फ, दूध, नमक।

फेरम-आर्स—आर्नि, बेल, चायना, हिपर, इपि, पल्स, सल्फ, विरे, **बियर** नामक शराब।

फैलेण्ड्रिनम—रियुम।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes)।

बार्वेरिस—कैम्फर, वेल।

विस्मथ—काफि, कैल्के, कैप्स नक्स।

ब्यूफो—लैके, सेनेगा।

बेलेडोना—ऐकोन, काफि, हिपर, हायोस, मर्क, ओपि, पल्स, सैबाडि, शराब।

बेराइटा-कार्ब—ऐण्टि-टार्ट, बेल, कैम्फ, डल्का, मर्क, जिंक।

बोविष्टा-कार्ब—कैम्फ।

बोरैक्स—कैमो, काफि।

ब्रायोनिया ऐकोन—ऐल्यूमि, कैम्फ, कैमो, चेलि, क्लिमे, काफि, इग्ने, नक्स, एसिड म्यूर, पल्स, रस, सेनेगा, एण्टिम टार्ट, फेरम (Dr Teste)।

ब्रोमियम—ऐमोन-कार्ब, कैम्फ, मैग्ने-कार्ब, ओपि, (कोलचि ?)।

वाइवर्नम—ऐकोन, विरे।

वायोल-ओडोरेटा—कैम्फ।

वायोला ओडोरेटा—कैम्फ।

वायोला-ट्राइकलर—कैम्फ, मर्क, पल्स, रस।

बार्वेस्कम—कैम्फ।

विरेट्रम ऐल्बम—ऐकोन, आर्स, कैम्फ, काफि, (रटैफा ?)।

विरेट्रम-विरिडि—बहुत गर्म काफि।

विस्कम ऐल्बम—कैम्फ, चायना।

वेरियोलिनम—एण्टिम टार्ट, मैलेण्ड्रि, सेरासि, थूजा, वैक्सि।

वैलेरियाना—बेल, कैम्फ, पल्स, मर्क, सायना काफि।

वैक्सिनिनम—एपिस, एण्टि-टार्ट, मेलाण्ड्रि, सिलि, थूजा।

मार्निनम—एकोन, इपि, एट्रोपि, एवेना सेट, बेल, काफि।

मस्कस—कैम्फ, काफि।

दवाका नाम — दवाका प्रतिविष (antidotes)।

मर्क्यूरियस—आर्स, आरम, ऐसाफि, बेल, ब्रायो, कैलेडि, कार्बो-वेज, कैल्क, चायना, क्यूप्रम, कोनाय, क्लोरेल, विलमे, डल्का, फेरम, गुये, हिपर, आयोड, कैलि-आयोड, कैलि-क्लोर, कैलि-वा, लैके, मिजि, एसि-नाई, नक्स-म, ओपि, पोडो, फाइटो, रेटा, सार्सा, स्टैफि, सिपि, स्टिलिंजि, सल्फ, स्ट्रैमो, वेलिरि, कैप्सि, कास्टि, साइना, हाइड्रै, हायोस, आइरिस, लैके, कैलि-म्यूर, लाइको, एसि-म्यूर, नक्स-वो, पल्स, टेरि, थूजा।

मर्क्यूरियस-कोर—लोबे, मर्क-सोल, सिपि और ऊपर कहे हुए **मर्क्यूरियस**के लगभग सभी **प्रतिविष**।

मर्क्यूरियस-डलसिस—हिपर।

मर्क्यूरियस-प्रोटो-आयोड—हिपर, लाइको।

मर्क्यूरियस-विन आयोड—हिपर।

" वाइवस
" सोल } पहले बताये हुए "मर्क्यूरियस" के प्रतिविष सब देखिये।

मिडोरिनम—इपि, नक्स-वोम (Allen)।

मिनियेन्थिस—कैम्फ।

मिफाइटिस—कैम्फ, क्रोटे।

मेजेरियम—एमोन, ब्रायो, कैल्क, कैलि-आयोड, मर्क, नक्स, कैम्फ, खटाई (acids) मात्र।

मेरिका—डिजि।

मैग्नेशिया-कार्ब—आर्स, कैमो, मर्क-सोल, नक्स, पल्स, रियुम, कोलोसि।

मैग्नेशिया-फास—बेल, जेल्स, लैके।

मैग्नेशिया-म्यूर—आर्स, कैल्क, कैमो, नक्स।

मैंगेनम ऐसेटिकम—काफि, कैम्फ, मर्क-सोल।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes) ।

मैलेरिया-आफि—ब्रायो, नक्स, आर्स, रस ।

रस-टक्स—ऐनाका, (ऐकोन ?), ऐमोन-कार्ब, बेल, ब्रायो, कैम्फ, काफि, क्रिमे, क्रोटेन, ग्रैफा, सुपे, लैके, रैनान, सल्फ, सिपि, क्यूप्रम, सैंगु, लिडम (Dr. Teste) मर्क प्लेटे ।

रस-वेन—ब्रायो, क्रिमे, एसि-नाइ, फास, रैनान ।

रस रेड—"रस टक्स" का प्रतिविष देखिये ।

रिवटा—कैम्फ ।

रियुम—कैम्फ, कैमो, कोलोसि, मर्क, नक्स, पल्स ।

रियुमेक्स—वेल, कैम्फ, कोनाय, हायोस, लैके, फास ।

रेडियम ब्रोमाइड—रस-वेन (टेल्यु ?) ।

रेनान वल्बो—ऐनाका, क्रिमे, ब्रायो, कैम्फ, क्रोटन, पल्स, रस ।

रैफेनस—ज्यादा परिमाणमें ठण्डा पानी पीना ।

रोडोडेण्ड्रन—ब्रायो, कैम्फ, क्रिमे, रस, नक्स-वोम ।

लोरोसिरेसस—कैम्फ, काफि, इपि, ओपि, नक्स-म ।

लाइकोपोडियम—ऐकोन, कैम्फ, कास्टि, काफिया, कैमो, ग्रैफा, नक्स, पल्स ।

लिडम—कैम्फ, रस ।

लिलियम-टिग—हेलोनि, नक्स, पल्स, प्लेटि ।

लोबेलिया—इपि ।

लैकेसिस—ऐल्यूमि, आर्स, बेल, कैल्क, कैमो, काक्यु, कार्बो, वेज, काफि, हिपर, लिडम, मर्क, एसि-नाइ, एसि-फास, नक्स, ओपि, सिपि, टैरेण्टु, सिड्रन ।

स्टिलिञ्जिया—इपि ।

स्टैनम—पल्स ।

स्टेफिसाइग्रिया—ऐम्ब्रा, कैम्फ ।

दवाका नाम — दवाका प्रतिविष (antidotes)।

स्ट्रिकनिनम—ऐकोन, कैम्फ, क्लोरोफार्म, ऐमिल-नाई, आर्ज, काफि, हायोस, विरे-वि, सल्फ ३० (टेबे ?)।

स्ट्रैमोनियंम—ऐसि-ऐसे, बेल, हायोस, नक्स, ओपि, पल्स, टेबे, कैम्फ, नेबूका रस।

साइक्यूटा—आर्नि, काफि, ओपि, क्यूप्रम-ऐसे, टेबे।

साइना—आर्नि, कैम्फ, चायना, कैप्सि।

सार्सापैरिला—वेल, मर्क, सिपि।

सल्फर—ऐकोन, कैम्फ, आर्स, कैमो, चायना, कोनाय, कास्टि, नक्स, मर्क, पल्स, रस, सिपि, सिलि, थूजा।

सिकेलि—कैम्फ, ओपि।

सिक्लामेन—कैम्फ, काफि, पल्स।

सिनावेरिस—हिपर, एसि-नाई, ओपि, सल्फ

सिपिया—ऐकोन, ऐण्टि-टार्ट, रस, सल्फ, एण्टि-क्रूड, पौधोंकी खटाई (acids) मात्र ही नाइट्रि-स्पिरिटस-डलसिस सूँघना।

सिफिलिनम—नक्स-वोम (Allen's Nosodes देखिये)।

सियानोथस—नेट्रम-म्यूर।

सिला-मेरिटिमा—कैम्फ।

सिलिका—कैम्फर, एसिड-फ्लू, हिपर।

सिलिनियम—इग्ने, पल्स, (एसि-म्यू ?)।

सिस्टस—सिपि, रस, कैन्थ।

सीड्रन—लैके, बेल।

सेनेगा—आर्नि, बेल, ब्रायो, कैम्फ।

सेवाल-सेरुलेटा—सिलिका, पल्स।

सोरिनंम—काफि।

स्कूइला-मेरिटिमा—"सिला" का प्रतिबिष देखिये।

दवाका नाम दवाका प्रतिविष (antidotes)।

स्कूकम-चक—टैबे।
स्पाइजिलिया—अरेम, कैन्थ, काक्यु, पल्स।
स्पंजिया—ऐकोन, कैन्थ।
सैबाइना—कैन्थ, पल्स।
सैबाडिला—कैन्थ, कोनाय, पल्स।
सैम्बुकस—आर्स, कैम्फ।
सैरासिनिनिया—पोडो।
हाइड्रोफोबिनम—ऐग्नस, बेल, सीड्रन, हायोस, लैके, स्ट्रैमो।
हाइपेरिकम—आर्स, कैमो, सल्फ।
हायोसायमस—एसि-ऐसे, बेल, चायना, स्ट्रैमो, विनिगर।
हाइड्रैस्टिस – सल्फ।
हिपर-सल्फ—एसि-ऐसे, आर्स, बेल, कैमो, सिलि।
हेलिबोरस—कैम्फ, चायना।
हैमामेलिस—आर्नि, कैम्फ, चायना, पल्स।

रेपर्टरी*

रेपर्टरी होमियोपैथिक दवाओंके चुनावका प्रधान सहायक है। चिकित्साके समय सभी होमियोपैथिक दवाओंके लक्षण याद कर, दवाका चुनाव सम्भव नहीं है। चिकित्सक रेपर्टरीकी सहायासे सहज ही

---

* पारिवारिक चिकित्साके रेपर्टरी अध्यायमें सिर्फ मूत्राशय और ज्वरकी रेपर्टरी ही दी गयी है। सम्पूर्ण और विस्तृत रेपर्टरीके लिये हमारी प्रकाशित हिन्दी रेपर्टरी या Knerr's Repertory अथवा Lippe's Repertory (अंगरेजी) देखिये।

लक्षणवालीके किसी एक विषयका प्रभेद समझ लेते हैं और सदृश्य-विधानकी नीतिके अनुसार सटीक औषधका निर्वाचन कर सकते हैं।

हूपिंग खाँसीका इलाज करते समय पहले **ड्रोसेरा** दवा ही याद आती है, पर यदि सर-दर्दके साथ भौंहोंके ऊपर और नीचे फूल उठे, तो उस समय **कैलि-बाईसे** फायदा होता है। **ड्रोसेराके** सब लक्षण रहनेपर भी वमनके समय यदि कपालमें ठण्डा पसीना हो, तो **वेरेट्रम-पेल्बम** लाभ करता है। इसलिये, दिखाई पड़नेवाले बादके लक्षण एक रहनेपर भी किसी एक विशेष उपसर्गके प्रभेदसे औषधमें भी उलट-फेर हो जाता है। इसलिये, होमियोपैथिक मतसे औषध-निर्वाचन सहज नहीं है। साधारण गृहस्थ किसी दवाके प्रयोगसे जब इच्छानुसार लाभ होता नहीं देखते, तो उनकी श्रद्धा हट जाती है। इसके अलावा, कोई बृहत् मेटिरिया-मेडिका या भेषज-लक्षणको यादकर सब तरहकी अवस्थाके भेदसे पार्थक्य करते हुए, दवाके चुनावका अवसर या सुभीता सबको नहीं मिलता। इन सब असुविधाओंको दूर करनेके लिये ही रेपर्टरीकी जरूरत है।

जिस लक्षणमें, जिस दवाकी याद पहले आ सकती है, सर्वसाधारणकी सुविधाके लिये वही मोटे अक्षरोंमें छापी गयी है।

मूत्राशय (Kidneys)

अकड़न, दबानेसे दर्द करता है (Soreness)—ऐकोन, कैल्के, आर्स, चेलि, **ग्रैफा**, हेलोनि, हिपर, मैनसि, रैटा।

” दाहिने—हेलोन, नक्स-वोम, फाइटो।

” बायें—बेञ्जो-ए, जिक।

” मूत्राशय-प्रदेशमें—बार्बे, चेलि, हाइड्रो, मर्क-कोर, नक्स।

” खींच रखनेकी तरह—क्लिमे, कक्कस, नक्स-मस, **टेरि**।

अकड़न, कुचल जानेकी तरह (Bruised)—कैक्ट, मिलफे, मैनर्सि, पैरिरा, फाइसो।

" कुचल जानेकी तरह, मूत्राशय प्रदेशमें—यार्बे, फास्फो, जिंकम।

" कुचल जानेकी तरह उरुदेशतक फैलता है—बार्बे।

" मूत्राशय-प्रदेशमें—बार्बे, कैना सैट, मायो, टेरि, जिंक।

" " फैलता है, पुट्ठेमें—कैना-सैट।

" " " दाहिने पुट्ठे में—टेरि।

" सुई बेधनेकी तरह, डङ्क मारने जैसा—ऐकोन, आर्नि, बेज, बार्बे कैन्थ, चेलि, कोलसि, कैलि-बाई, कैलि-कार्ब, कैलि-नाई, लैके, मेजे, नक्स-वोम, टेरे।

" " फैलता है, मूत्रनली होकर नीचेकी तरफ—कैलि-बाई, प्रैफा, जाईको।

" मूत्रनलीमें—बार्बे।

" " " मूत्राशयतक—आर्जे-नाई, बेल, बार्बे, कैलि-बाई, लैके।

" घटना, हिलने-डुलनेपर—टेरि।

" बढ़ना, हिलने-डुलनेपर—कोलचि, हैमा।

" " छींकनेपर—इथू।

एडिसन्स बीमारी (*Addison's disease*)—आर्स, बेल, कैल्के, फेरम, फेरम-आयोड, आयो, कैलि कार्ब, नेट्रम-म्यूर, नाइट्रिक-एसिड, फास, साइलि; स्पाई, सल्फ।

गर्मी मालूम होना (Heat)—कैलि-आयोड, लैके, नक्स-वो, जिंजि।

" मूत्राशय-प्रदेशमें—बार्बे, चिमि, हेलोनि, फाइटो, सम्बम टेरिबि।

ठण्डा मालूम होना (Coldness)—स्पाइरो।

" मूत्राशय-प्रदेशमें—कैमो।

दर्द—ऐकोन, इस्कियु, ऐग्ने, एलि-सि, ऐल्यूमि, एपिस, आर्नि, वेल, बेञ्जो-ए, **बार्बे**, कैना-सै, कैना-ई, **कैन्थ**, चेलिडो, चिमा, **कोलचि**, युपे-पर्प, हेलोनि, हिपर, इपि, हिपोमि, कैलि-क्लोर, लिथि-कार्ब, लाइको, मिल, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम, पैरिरा, फास, प्लम्ब, पल्स, टैरे, टेरि।

दर्द, मूत्रनलीमें, दाहिनी तरफ (Right ureter)—एलियम-सिपा, बार्बे, कैना-सै, कैन्थ, डायस्को, लाइको, नक्स-वोम, डलि, सार्सा।

" " बाईं तरफ—बार्बे, हिपोमि, लाइको, पेरिरा।

" " फैलता है, उरुमें और दोनों पैरोंमें—(Thighs and feet)—पेरिरा।

" " अण्डमें (Testis)—सिफि।

" " उरुमें (Thigh)—नक्स-वोम।

" " दाहिने उरुसे—नक्स-वोम।

" " मूत्रनलीमें—**बार्बे**।

" " लिङ्ग और अण्डमें—कैन्थ, कोना, डाय, नक्स-वोम।

" " सीनेकी जड़में (Epigastrium)—हाइड्रो-एसिड।

" मूत्रनलीमें दाहिनी तरफ, मूत्राशयमें—आर्स, कैन्थ, चेलि, ओसि, फाइटो, टैवे।

" " पेशाब करनेके समय, उरुदेशमें—**बार्बे**।

" " चारों तरफ (Radiating from renal region)—**बार्बे**।

" मूत्रनलीमें, नीचेकी तरफ—सार्सा।

" फैलता है, मूत्रनलीमें (Ureters)—कैन्थ, चेलिडो, ओसि, फाइटो।

" " मूत्राशयमें—कक्कस, फाइटो।

दर्द, ऋतुके आरम्भमें—बार्बें, रैफे, विरे।
" नाक छिड़कनेपर—कैल्क-फास।
" बैठे रहनेपर—पैले, टैरि, पैले।
" घूमनेके समय—विलमे।
" पेशाब करते समय, वेग देनेपर—आर्स-अ, फेरम, ग्रैफा, मर्क-कोर, रूटा।
" पेशाब करते समय—इस्कि, बार्बे, रियुम, मिलि।
" हँसनेके समय—कैना-इ।
" मूत्राशय-प्रदेशमें—ऐलि-सैटा, आर्स-हायो, ब्रायो, कैल्के-फास, कैना इ, कैन्थ, चेलि, चिमा, कोपे, फेरम, केलि-नाई, लोबे, मिलि, आकजैलिक-ए, फास, फाइटो, प्लम्ब, रस-टक्स, सार्सा, टेरि।
" मूत्राशय-प्रदेशमें, उठानेके समय, कुछ—कैल्क।
" झुकनेपर—सल्फ।
" नाक छिड़कनेके समय—कैल्के-फास।
" कनकन करता है—कैना-इ, कैन्थ, क्रोटे, इयुपे-पर्पि, हेलोनि, लाइको, टेरि।
" पेशाब करनेके समय—इस्कि, इग्ने, ऐण्टिम-क्रू ड, बार्बें।
" " घटना, पेशाब होनेपर—लाइको, टेरि।
" " मूत्राशय-प्रदेशमें—ऐकोन, ऐगार, ऐलियम-सिपा, बार्बे, कास्टि, इलाटे, हाइड्रो, लाइको, पैले, सिपि।
दर्द, काट रहा है मानो—ऐकोनं, आर्ज नाई, आर्नि, बार्बें, कैन्थ, कोलोसि, कैलि-बाई, केलि-आयोड, मर्क, स्टैफि।
दर्द काट रहा है मानो, पेशाब होनेके पहले—ग्रैफा।
" " मूत्राशय-प्रदेशमें—प्लम्ब, स्टैफि, जिंक।
" " " गरमसे घटना, ठण्डसे बढ़ना—स्टैफि।

दर्द, काट रहा है मानो, युरेटर (मूत्रनलीमें)—एपिस, आर्जेण्ट-नाई, आर्नि, आर्स, बेल, **बार्बे कैन्थ, कार्बो-ऐनि**, डल्का, केलि-कार्ब, **लाइको** नक्स-वो, ओसि, ओपियम, **पेरिरा, फास, सार्सा**, टैबे, वेरे।

,, दबा रखनेकी तरह—कैल्के, कैन्थ, कार्लेस, कैलि-कार्ब, नाइट्रि एसिड, नक्स-वोम. थूजा।

,, पेशाब होनेके पहले—ग्रैफा।

,, मूत्राशय-प्रदेशमें—ऐगा, बार्बे, सिमि, हैमा, हाइड्रो, पैले।

,, **घटना**, हिलने-डुलनेपर—टेरि।

,, फाड़ डालनेकी तरह (Tearing)—इस्कियु, **बार्बे**, कैन्थ, मेजे रस-टक्स।

,, ,, मूत्राशय-प्रदेशमें—**बार्बे**, कैलि-कार्ब, लाइको, रस-टक्स, जिंक।

,, चारों ओर फैल जाता है (Radiating)—बार्बे।

,, ,, मूत्रनलीमें फैलता है, नीचेकी तरफ छूनेसे, हिलने-डुलने और साँस लेनेपर बढ़ता है—आर्ज-नाई, बेल।

,, ज्वाला—आर्स, बेंजो-एसिड, बार्बे, **कैन्थ**, हेलोनि, हिपर, कैलि-कार्ब, कैलि-आयोड, नक्स-वोम, टेरि।

,, ,, पेशाब होनेके पहले—रियुम, थूजा।

,, ,, ,, होनेके समय—रियुम।

,, ,, मूत्रस्थलीतक फैल जाता है—वेल, टेरि।

,, ,, मूत्राशय-प्रदेश—बार्बे, कोलोसि, लैक-डि, फाइटो, टेरिबिन्थ।

पथरी (Calculi)—बेल, बार्बे, कैन्थ, कोलोसि, इकुई, **लिथि-का**, लाइको, मिली, ओसिमम, **पेरिरा, फास, सार्सा**।

प्रदाह (Nephritis)—ऐकोन, ऐलियम-सिपा, एपिस, आर्निका पल्सक्नि, बेल, बेञ्जो-ए, ब्रायो, वार्बे, कैना-सेट, कैन्थ, कैम्फ, कार्बो-ए, चेलिडो, चिना, कोलचि, इरिजि, इयुपे पर्फ, जेल्स, हेलोनि, कैलि-कार्ब, कैलि-क्लोर, कैलि-आयोड, लाइको; मर्क, नक्स-बोम, ओसिमम, फास, फाइटो, पलिगो, सार्सा, साइलि, सल्फ, टेरि, थूजा ।

प्रदाह, पैरिनकाइमर (नवीन) कोरण्डग्रटित मूत्र-ग्रन्थि-प्रदाह (Acute parenchymatous nephritis)—एपिस, कैन्थ, कोलचि, कोनायम, कैलि-क्लोर नेट्रम-सल्फ, स्ट्रैमो, इयुरे ।

,, पीब पैदा करनेवाला (Suppuration)—आर्स, हिपर, मर्क, साइलि ।

,, रक्त दोष-जनित (Toxoemic)—क्रोटे-होर ।

,, हृदिण्ड और यकृत सम्बन्धी रोगके साथ (With cardiac or hepatic affection)—आरम, कैल्के-आर्स ।

भारी मालूम होना (Heaviness)—कार्लस, इस्कुई ।

भारी मालूम होना, मूत्राशय-प्रदेशमें—सिमि, हेलो, फास, टेल्यू, टेरि ।

मूत्रलोप (Suppression of urine)—ऐकोन, एपिस, इथू, आइलैन्थ, ऐन्थ्रा, एपिस, आर्नि, आर्स, आरम-ट्रि, बेल, कैक्ट, कैम्फ, कैन्थ, कार्बो-ए, कार्बो-वेज, कास्टि, सिकि, कोलचि, क्रोटेलस-हो, क्यूप्रम, क्यूप्रम-ऐ, डिजि, इलाटे, इरिजि, युपे-पर्पि, हेलि, हाइड्रो, हाइयो, कैलि-बाई, लैक-कै, लैके, लोरो, लाइको, मर्क-कोर मार्फि, ओपि, फास, प्लम्ब, पोडो, पल्स, रोबि, सिके, साइलि, स्ट्रैमो, विरे ।

मूत्रलोप, कालेरामें—आर्स, कार्बो-वेज ।

,, खींचन (Couvulsions) के साथ—क्यूप्रम, डिजि, हाइयो, स्ट्रैमो ।

मूत्रलोप, सुजाक बन्द होकर (Suppressed gonorrhoea)—**कैम्फ**, कैन्थ ।

„ ज्वरमें—आनि, आर्स, बेल, कैक्ट, कैन्थ, हाइयो, ओपियम, प्लम्बम, सिके, स्ट्रैमो ।

„ पसीनेके साथ—ऐकोन, एपिस, आर्स, कैम्फ, डल्का, हाइयो, लाइको, **ओपियम**, पल्स, स्ट्रैमो, सल्फ ।

„ सुन्न हो जाना, मूत्राशय-प्रदेश (Numbness in the region of)—वोवि ।

मेरुदण्डमें चोटकी वजहसे (From concussion of spinal colnmn)—आनि, रस-टक्स, टेरे ।

ज्वर (Fever)

अनियमित (Irregular paroxysm)—**आर्स**, कार्बो-वेज, युपे-पर्फो, इपि, इग्ने, मिनि, **नक्स-वोम**, **पल्स**, सिपिया ।

अविराम, टाइफायड, टाइफस (Continued fever, Typhoid, Typhus)—आर्स, **एरम-ट्रि**, **बैप्टी**, **ब्रायो**, कैन्थ, कैप्सि, कार्बो-ऐनि, **चायना**, **चिनि-आ**, **चिनि-स**, क्लोरे, काक्यु, **कोलचि**, **क्रोटे-होर**, **इचिने**, **जेल्स**, **हेलि**, **हाइयो**, **लैके**, लाइको, मस्क, म्यू-ए, नाइट्रि-ए, नक्स वोम, ओपि, फास ए, फास, सोरि, पल्स, रस-टक्स, रस-वेन, सिके साइलि, स्ट्रैमो, सल्फ-ए, टेरि, जिंक ।

अविराम, तीसरे पहर—आर्स, ब्रायो, कैन्थ, जेल्स, हाइयो, लैके, नाइट्रि-ए, नक्स-वो, फास, पल्स, रस, सल्फ ।

„ „ ४ बजेसे ८ बजेतक—लाइको ।

„ „ ४ „ ८ „ आधी रातमें—स्ट्रैमो ।

अविराम, सन्ध्यामें—आर्स ब्रायो, कार्बो-वेज, कैमो, लैके, लाइको, **म्यूर-ए, फास-ए, फास, पल्स, रस-ट, सल्फ।**

,, सन्ध्यामें ७ बजे—लाइको, रस-टक्स।

,, ,, ६ बजेसे १२ बजेतक—ब्रायो।

,, ,, १० बजे—लैके।

,, रातमें—**आर्स, बैप्टी, ब्रायो, कार्बो-वेज, चायना,** चिनि-आर्स, कोलचि, लैके, केलि-बा, मर्क, म्यूर-ए, नक्स-वो, ओपि, फास-ए, फास, पल्स, रस-टक्स, स्ट्रैमो, सल्फ।

,, रातमें, उत्ताप ज्यादा—बेल, ब्रायो, हाइयो, रस-ट, स्ट्रैमो।

,, आच्छन्न भावके साथ—आर्नि, आर्स, बैप्टी, बेल, ब्रायो, कार्बो-वेज, डाय, क्रोटे-होर, जेल्स, हेलि, हायो, लैके, **म्यूर-ए, ओपि, फास-ए,** फास, रस-ट, स्ट्रैमो, जिंक।

,, आधी रातमें—आर्स, रस टक्स, कैमो, सल्फ, वेरे।

,, आधी रातके पहले—आर्स, **ब्रायो, बैप्टी, कार्बो-वेज,** नक्स-वोम, स्ट्रैमो।

,, आधी रातके बाद—आर्स, ब्रायो, **फास, रस-टक्स,** सल्फ।

,, उदर-सम्बन्धी (Abdominal)—आर्स, बैप्टी, **ब्रायो,** कोलचि, लाइको, म्यूर-ए नाइट्रि-ए, फास-ए, **फास, रस-टक्स,** सिके, सल्फ, टेरि।

,, उद्भेद सम्बन्धी (Exenthematic) आइलेन्थिस, **एपिस,** बेल, ब्रायो, युफ्रे, लैके, मर्क, फास, **रस-टक्स,** सल्फ।

,, पक्षाघातके साथ फुस्फुसमें—ऐण्टिम-टार्ट, आर्स, कार्बो-वेज, लाइको, फास, सल्फ।

,, मस्तक-सम्बन्धीमें—एपिस, बैप्टी, ब्रायो, जेल्स, हाइयो, लैके, लाइको, ओपि, फास, रस-टक्स, स्ट्रैमो।

अविराम, रक्त अधिक होनेकी वजहसे (Congestive)—ब्रायो, जेल्स, ग्लोनो, लैके ।

,, पक्षाघातकी सम्भावनाके साथ, मस्तिष्कमें—हेलिबोरस, लैके, लाइको, ओपि, फास-ऐ, फास, जिंक ।

,, वक्ष-रोग-सम्बन्धी—ऐण्टिम-टार्ट, **ब्रायो**, कार्बो-वेज, हाइयो, लाइको, फास, रस-टक्स, सल्फ ।

,, संज्ञाहीनताके साथ—बेल, हेलि, हाइयो, ओपि, फास-एसिड, स्ट्रैमो ।

आगे बढ़कर आता है (Anticipating)—ऐण्टिम-टा, आर्स, बेल, **ब्रायो, चिनि-सल्फ, चायना, इयुपे-पर्फो, गैम्बो,** इग्ने नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम ।

आधे अंगमें (अर्द्धांगमें—one sided)—"उत्ताप" देखिये—ऐल्यूमि, बेल, **ब्रायो**, कास्टिक, **कैमो, डिजि**, ग्रैफा, कैलि-कार्ब, **लाइको, मस्क, नक्स-वोम, पेरिरा**, फास, जेल्स, रस-टक्स, सल्फ, टेरे ।

,, दाहिने—बेल, ब्रायो, कैमो, नक्स-वो, फास, पल्स, रैना-ब ।

,, बायें—लाइको, मेजे, प्लाटि, रैना-ब, रस-ट, सल्फ, स्टैनम ।

,, एक तरफका गाल गरम और दूसरा ठंडा और उजला—**ऐकोन, कैमो ।**

उत्ताप, साधारण (Heat in general)—ऐकोन, ऐम्ब्रा, ऐगा, ऐण्टिम-टा एपिस, आर्नि, आर्स, एरस-ट्रि, बैप्टी, बेरा-कार्ब, बेल, ब्रायो, कैक्टस, कैल्के, कैन्थ, कैप्सि, कार्बो-वेज, कैमो चेलिडो, चायना, चिनि-स, सिना, काक्यू, काफि, कोलचि, इपि, क्यूरे, साइक्ला, डिजि, डल्का, इलै, इयुपे-पर्फो, फेरम-फा, फ्लु-ए, ग्रैफा, जेल्स, हेलि, हिपर, हायो, इग्ने, आइयो, इपि, कैलि-आ, लैक-कैन, लैके, लोरो, लिडम, लाइको, मैग-कार्ब, मर्क-कोर,

मर्क स, मेजे, म्यूर, नेट्रम म्यूर, नाइट्रि-ए, नक्स वोम, थोपि, फास, पोडो, पल्स, रस-टक्स, रस-वे, सेबाडि, सैम्बु, सैंगुइ, सिके, सिपि, साइलि, स्पञ्जि, स्कुई, स्टैनम, स्टैफि, स्ट्रोमो, सल्फ-ए, सल्फ, टेरे, टेरेण्टु, बेल, वेरे, वेरे-वि, वायोला।

उत्ताप, सवेरे—ऐंगा, एपिस, आर्नि, आर्स, बेल, ब्रायो, कैल्के, कास्टि, कैमो, चायना, इयुपे पर्फो, हिपर, कैलि-आ, नेट्रम-म्यूर, नक्स वोम, रस-टक्स, सल्फ।

,, सिहरावनके साथ—एपिस, आर्स, कैमो, सल्फ।

,, दोपहरके पहले—ऐमोन कार्ब, वैप्टी, ब्रायो, कैमो, इयुपेट-पर्फ, जेल्स, मैग-कार्ब, नेट्रम म्यूर, नक्स वोम, फास, रस-टक्स, सल्फ।

,, ,, सिहरावनके साथ—आर्स, वैप्टी, कैमो, सल्फ।

,, ,, ६ बजे—ऐमोन-कार्ब, कैमो।

,, ,, ६ बजेसे ५ बजेतक—कैलि कार्ब।

,, ,, १० बजे, शरीरपर गर्म पानी ढाला जा रहा है या शिराके भीतरसे गर्म पानी बह रहा है मानो—रस टक्स।

,, दोपहरमें—आर्स, मर्क, स्ट्रैमो, सल्फ।

,, ,, १ बजे—आर्स, लाइको।

,, ,, २ बजे—पल्स, रस टक्स।

,, तीसरे पहर—ऐकोन, ऐनाका ऐड्रा, एपिस, आर्स, ऐसाफि, बेल, ब्रायो, कैन्थ, चेलिडो, चायना, कोलचि, जेल्स, इग्ने, कैलि-कार्ब, लैके, लाइको, नेट्रम-म्यूर, नाइट्रि-ए, फास, पल्स, रस-टक्स, रूटा, सिपि, साइलि, स्कुई, स्टैफि, सल्फ।

उत्ताप, तीसरे पहर, सिहरावनके साथ—**एपिस**, आर्स, कोलचि, पोडो, सल्फ।

" " ४ बजे—हिपर, इपि, लाइको।

" सन्ध्यामें—**ऐकोन**, इस्कियु, आर्स, बैप्टी, बेल, वार्बे, कैल्के, कार्वो-वेज, कैमो, चेलिडो, **चायना**, सिना, हिपर, हायो, **लैके**, **लाइको**, मर्क, मेजे, फास-ए, **फास**, **सोरि**, **पल्स**, **रस-टक्स**, सार्सा, सिपि, साइलि, सल्फ, थूजा।

उत्ताप, संध्यामें, सिहरावके साथ—**ऐकोन**, आर्स, कैमो, इलै, हिपर, साइलि, सल्फ।

" " ५ बजे—फास, रस टक्स, सल्फ।

" " ६ बजे—ऐण्टिम-टार्ट, चायना, हिपर, नक्स-वोमिका, रस-टक्स।

" " ६ बजेसे ८ बजेतक—कैल्के, **लाइको**।

" " ७ बजे—लाइको, पल्स, रस-टक्स।

उत्ताप, सन्ध्यामें ८ बजे—ऐण्टिम-टार्ट, हिपर, फास, सल्फ।

उत्ताप, रातमें (Night)—ऐकोन, ऐल्यूमि, एपिस, आर्स, वैरा-कार्ब, **बैप्टी**, **बेल**, **ब्रायो**, कैल्के, कैन्थ, कार्वो-वेज, कैमो, सिमि, सिना, कोलचि, ड्रोसे, हिपर, कैलि-बाई, मर्क लाइको, मर्क, मर्क-सल्फ, मार्फि, म्यू-ए, नेट्रम-ए, नाइट्रि-ए, नक्स-वो, ओपि, पेट्रो, फास-ए, फास, पल्स, रस-टक्स, सैबाडि, सिपि, साइलि, स्ट्रैमो, सल्फ।

उत्ताप, रातमें, उद्भेदके साथ (Nettle rash)—एपिस, इग्ने, रस।

" " पसीनेके साथ—ऐण्टिम-क्रूड, बेल, कोलचि, मर्क, फास, सोरि, पल्स, रस-टक्स, सिपि, सल्फ।

" " शीत मालूम होनेके साथ—ऐकोन, आर्स, इला, कोलचि, कैलि-बाई, साइलि, सल्फ।

उत्ताप, रातमें, सूखा जलन करनेवाला—ऐकोन, आर्स, बैरा-कार्ब, बेल, ब्रायो, सिना, कोलचि, लैके, नाइट्रि-ए, नक्स-वोम, फास, पल्स, रस-टक्स।

" " अनिद्राके साथ—बैरा-कार्ब, कैमो, ग्रैफा, हायो।

" " उद्वेगके साथ—ऐकोन, एपिस, आर्स, ब्रायो, रस-ट।

" " सूखा जलन करनेवाला, प्यास न लगनेके साथ—एपिस, आर्स।

" " ६ बजे—ब्रायो, लाइको।

" " ११ बजे—मैग म्यूर।

" " २ बजे—आर्स।

" आधी रातमें—आर्स, नक्स-वो, रस-टक्स, स्ट्रैमो, सल्फ।

" " और दोपहरमें—आर्स, इलै, स्ट्रैमो, सल्फ।

" " पहले—ऐकोन, ऐण्टिम-क्रूड, आर्स, ब्रायो, कैलेडि, कार्बो-वेज, चिनि-स, लोरो, मैग-म्यूर, फास, पल्स।

" " बाद—आर्स, कैलि कार्ब, लाइको, रैना, सल्फ।

" उत्ताप ऊपरके भागमें—"आधे अगमें" देखिये—ऐगा, ऐनाका, आर्नि, ब्रायो, सिना, नक्स-वो, पैरिरा, पल्स, रस-ट।

उत्ताप, नीचेके भागमें—ओपि।

" पिछले भागमें—कैमो।

" सामने—कैमो, इग्ने, रस-टक्स।

" अत्यधिक (Intense heat)—ऐकोन, ऐण्टिम टार्ट, एपिस, आर्नि, आर्स, एरम-ट्रि, आरम, बेल, ब्रायो, चिनि सल्फ, कोलचि, जेल्स, हायो, लैके, लाइको, मेजे, नेट्रम-म्यूर, नेट्रम-स, नक्स-वोम, ओपि, फास, पल्स, रस-टक्स, सिके, साइलि, स्ट्रैमो।

" आच्छान्न भाव और होश न रहनेके साथ—बेल, नेट्र-म्यू, ओपि।

उत्ताप, निद्रावस्थामें—ऐण्टिम-टार्ट, लैके, मेजे, नेट्रम-म्यूर, नक्स-मस, ओपि, रस-टक्स ।

" विकारके साथ (With delirium)—एपिस, आर्स, वेल, ब्रायो चिनि-सल्फ, नेट्रम-म्यूर, ओपि, पल्स, स्ट्रैमो ।

" सिर और चेहरा गर्म, शरीर ठण्डा—आर्नि, वेल, ओपि, स्ट्रैमो ।

" अवस्थाहीन (Heat absent)—ऐरानि, वोवि, कैम्फि, कास्टि, हिपर, लाइको, मेजे, सैवाड, **स्टैफि, सल्फ,** थूजा, वेरे ।

" ज्यादा देरतक ठहरनेवाला (Long lasting)—ऐण्टिम-टार्ट, आर्नि, आर्स, बेल, कैक्टस, कैम्फि, जेल्स, हिपर, नक्स-वोम, सिके ।

" भीतरी (Internal heat)—"भीतरी" देखिये ।

" बाहरी (External heat)—ऐकोन, ऐनाका, ऐण्टिम-टार्ट, आर्नि, **आर्स**, बेल, ब्रायो, कैल्के, कैन्थ, **कैमो**, चायना, चिनि-स, इग्ने, मर्क-कोर, नक्स-वोम, ओपि, **पल्स, रस-टक्स**, साइलि, स्ट्रैमो, टेरे ।

उत्ताप, बाहरी उत्ताप मालूम होना, उत्ताप न रहनेपर भी—कैमोमिला, इग्नेशिया ।

" सिहरावन मालूम होनेके साथ—ऐको, ऐनाका, आर्निका, **आर्स**, वेल, कैल्के, काक्यु, काफि, हेलि, इग्ने, लैके, लोरो, **नक्स-वोम, सिपिया**, सल्फ, थूजा ।

" सूखी (Dry heat)—ऐकोन, एपिस, आर्नि, **आर्स**, बेल, **ब्रायो**, कैल्के, सिड्र, कैमो, चायना, कोलचि, डल्का, लाई, मर्क, **नक्स-वोम**, ओपि, पेट्रो, फास-ए, **फास, पल्स,** रस-टक्स, सैम्बु, सिकेलि, स्पंजिया, स्ट्रैमो, सल्फ ।

उत्ताप, सूखी सवेरे—आर्नि, ब्रायो, सल्फ ।

" " सन्ध्यामें—ऌम्ब, पल्स ।

उत्ताप, सूखी, सन्ध्यामें, शिरायें फैली हुई, हाथमें जलन, ठण्डा स्थान खोजता है—पल्स।

" " रातमें—ऐकोन, आर्स, बैरा-का, बेल, ब्रायो, कास्टि, कोलचि, लैके, नाइ-ए, नक्स-मोम, फास, पल्स, रस-टक्स, रस-वे।

उत्ताप, सूखा, विकारके साथ—आर्स, बेल, ब्रायो, चिनि-सल्फ, काफि, लैके, लाइको, रस-टक्स।

उत्ताप, जलन करनेवाला—"जलन" देखिये।

उत्ताप, तरगकी तरह—ऐकोन, ऐानि, बेल, कैक्टस, कैल्के, कार्बो-वेज, चायना, कोलचि, इले, ग्लोनो, ग्रैफा, इग्ने, आयो, केलि-बाइ, केलि-कार्ब, केलि-आ, लैके, लाइको, मैंगे, मिनि, नाइट्रि-ए, नक्स-वो, पेट्रो, फास, रस-टक्स, सैंगु, सिपि, साइलि, सल्फ-ए, सल्फ, थूजा, जेन्थ।

उत्ताप, तरगकी तरह, सिहरावन मालूम होनेके साथ—आर्स, कार्बो-वेज, कोलचि, मर्क, पल्स, सल्फ।

उत्ताप, तरंगकी तरह, पसीनेके साथ—हिपर, सिपि, सल्फ, एसिड, थूजा जेन्थ।

उत्ताप, तरंगकी तरह, गरम पानी मानो माथेपर ढाल देता है—आर्स, जेलस, रस-टक्स, सिपि।

उद्भेद-सम्बन्धी (Exanthematic) ऐकोन, एपिस, आर्स, युफ्रे, हिपर, पल्स, रस-टक्स, सल्फ।

ऋतुके समय—ऐकोन, बेल, कैल्के, ग्रैफा, फास, सिपि सल्फर।

कँपकँपीके साथ (With shivering)—एपिस, आर्नि, बेल, कास्टि, कैमो, क्यूप्रम, ड्रोसेरा, इले, इयुपे पर्फ, जेलस, हेलि, हिपर, लैके, नक्स-वो, पोडो, पल्स, रस-टक्स, सल्फ।

कँपकँपी, उत्तापके साथ, पर्यायक्रमसे—ऐकोन, आर्स, बेल, ब्रायो, ड्रोसेरा, इले, इपि, नक्स-वोम, प्लैटि, कावयु।

" ओढ़ना उतारनेके कारण—आर्निका, चायना, लैके, नक्स-वोम, रस-टक्स, स्ट्रैमो।

" पसीना और उत्तापके साथ—नक्स-वोम, रस-टक्स।

" हिलने-डुलनेकी वजहसे—पोडो, स्ट्रैमो, एपि, आर्नि, नक्स-वो।

कृमिकी वजहसे—ऐकोन, सिकि, सिना, डिजि, फिलिक्स, हायो, मर्क, नक्स-वो, सैबाडि, साइलि, स्पाई, स्टैनम, स्ट्रैमो, सल्फ, वैलेरि।

क्रोधकी वजहसे—ऐकोन, कावयु, कोलोसि, कैमो, इग्ने, नक्स-वोम, पेट्रो, सिपि, स्टैफि।

खोलनेसे, गात्रावरण (Uncovering)—आर्निका, आर्स, वेल, कैम्फ, कार्बो-ऐनि, कोलचि, ग्रैफा, हिपर, मैग-कार्ब, मैग-म्यूर, मर्क, नक्स-वोम, पल्स, रस-टक्स, सैम्बु, साइलि, स्कूई, स्ट्रैमो, स्टैफि।

" शीतके कारण—ऐकोन, आर्नि बेल चायना, नक्स-वोम।

" इच्छा—ऐकोन, एपिस, आर्निका, आर्स, बोवि, चायना, काफि, युफ्रे, फेरम, हिपर, इग्ने, लैके, मैग-कार्ब, मस्क, म्यूर-ए, नाइट्रि-एसिड, ओपि, फास, प्लैटि, पेट्रो, पल्स, सिके, स्टैफि, सल्फ।

ग्रीष्म ऋतुमें—आर्स, वेल, ब्रायो, कैल्के, कैप्सि, इपि, जेल्स, लैके, नेट्रम-म्यूर, पल्स, सल्फ थूजा, वेरे।

छोटी माताकी वजहसे ज्वर—"उद्भेद ज्वर" देखिये।

जलन करनेवाला उत्ताप (Burning heat)—ऐकोन, एपिस, आर्स बेल, ब्रायो, कार्बो-वेज, कैमो, सिना, डल्का, इले, जेल्स, हिपर, लाइको, मर्क-कोर, नक्स-वोम, ओपि, फास, पल्स, रस-टक्स, सैम्बु, सिकेलि, स्पञ्जि, सल्फ।

जलन करनेवाला उत्ताप, सवेरे—ब्रायो, कैमो ।
" दोपहरके पहले—नेट्रम-म्यूर, नक्स वोम, फास ।
" " ६ बजेसे १२ बजेतक—कैमो ।
जलन, तीसरे पहर—आर्स, बेल, ब्रायो, हिपर, फास, सल्फ ।
" " ४ बजेसे आरम्भ होकर, रातभर रहनेवाला—हिपर ।
" " ४ बजेसे थोड़ी देरतक रुकनेवाला—लाइको ।
" " संध्यामें—ऐकोन, आर्स, बेल, ब्रायो, कार्बो वेज, कैमो, हायो, लाइको, मर्क-कोर, फास, पल्स, रस-ट, सल्फ ।
" रातमें—ऐकोन, आर्स, बैप्टी, बार्ये, बेल, ब्रायो, कैक्ट, कार्बो-वे, कैमो, हिपर, ओपि, फास, पल्स, रस-ट, स्ट्रैमो ।
" " आधी रातमें—आर्स रस-टक्स ।
" " " पहले—ब्रायो, कैमो ।
" " " बाद—आर्स, फास, थूजा ।
" भीतरी, ज्यादा, मानो, शिराओंके बीचमें जलन हो रही है—**आर्स, ब्रायो, रस-टक्स ।**
" विकारके साथ ज्यादा—बेल, स्ट्रैमो, वेरे ।
" शिराओंमें होकर फैलता है—बेल, चायना, हायो, लिडम, मर्क, पल्स ।
" सूखा, जलन करनेवाला उत्ताप, पर्यायक्रमसे शीत मालूम होनेके बाद—बेल ।
डेंगू ज्वर—ऐकोन, बेल, ब्रायो, इयुपे-पर्फो, जेल्स, रस-ट, रस-वे ।
दूधका ज्वर (Milk fever)—ऐकोन, आर्नि, बेल, ब्रायो, कैमो, काफि, इग्ने, मर्क, ओपि, रस-टक्स ।
धीमा बुखार (Slow fever)—आइलेन्थ, आर्निका, आर्स, बैप्टी, कैम्फ, लैके, म्यूर-एसिड, फास-ए, फास, रस-टक्स ।
पसीना नहीं होता है (Perspiration absent)—"पसीना" देखिये ।

पर्यायक्रमसे शीतके साथ (Alternating with chill)—ऐरनस, ऐमोन-म्यूर, ऐण्टिम-टार्ट, आर्स, वैप्टी, बैरा-कार्ब, बेल, ब्रायो, कैल्के, कैमो, चायना, काफि, डिजि, इस्क्यू, हेलि, हिपर, हायो, इग्ने, क्रियो, लोरो, लाइको, मैग-म्यूर, मर्क, नक्स-वोम, फास-ए, फास, रस-टक्स, सैंगुइ, सिके, साइलि, सिपि, सल्फ, वेरे, जिंक।

परिवर्त्तन होनेवाला (Changing paroxysm)—इलैट, इग्ने, पल्स, सिपि।

" क्विनाइनके अपव्यवहारकी वजहसे—आर्स, इलाटे, युपेट-पर्फ, इग्ने, इपि, नक्स-वोम, पल्स।

पाकाशय-सम्बन्धी (Gastric)—ऐकोन, ऐण्टिम-क्रूड, ऐण्टिम-टार्ट, आर्स, वेल, ब्रायो, कार्बो-वेज, कैमो, चायना, कोलोसि, जेल्स, इपि, मर्क, नक्स-वोम, फास, पोडो, पल्स, रस-टक्स, सिकेलि, सल्फ, विरे

पाला ज्वर—"शीत" देखिये।

प्रदाहजनित (Inflammatory)—ऐकोन, वेल, ब्रायो, कैक्ट, कैमो, कोलचि, लैके, मर्क, फास, पल्स, रस-टक्स, सल्फ।

विरक्तिकी वजहसे (From vexation)—पेट्रो, फास-ए, सिपि।

भीतरी उत्ताप (Internal heat)—ऐकोन, आर्नि, आर्स, वेल, ब्रायो, कास्टि, कैमो, मैग-कार्ब, फास-ए, फास, पल्स, रस-टक्स, सैबाडि।

" जलनसे भरा हुआ—आर्स, कैप्सि, वेल, मस्क, सिके।

" " शिराओंके बीचमें—आर्स, आरम, ब्रायो, हायो, रस-टक्स।

" " शरीर छूनेसे ठण्डा—कार्बो-वेज, फेरम।

" बाहरी शीतके साथ—ऐकोन, आर्स, वेल, कैल्के, कैमो, इग्ने, इपि, मेजे, मस्क, पल्स, रस-टक्स, सिके, सल्फ, विरे।

मैलेरिया (Malaria)—आर्नि, कैडमि, कार्बो-ऐनि, चिनि-सल्फ, चायना, चेलिडो, इयुके, इयुपे-पर्फो, जेल्स, एपि, मैले-आ, नेट्रम-सल्फ, नक्स वोम, सोरि, सल्फ-ए, टेरि, वेरे-वि ।

शीतावस्था नहीं रहती है (Chill absent)—ऐनाका, ऐह्वा, एपिस, आर्स, वैप्टी, बेल, ब्रायो, कैल्के, कैमो, चायना, सिना, फेरम-फास, जेल्स, इपि, ल्युको, नक्स वोम, रस-ट, स्ट्रैमो, सल्फ, थूजा ।

शीतावस्था नहीं रहती है, सवेरे—आर्नि, आर्स, ब्रायो, कैल्के, कास्टि, युपे-पर्फो, हिपर, नेट्र म्यूर, रस ट, सल्फ, थूजा ।

" दोपहरके पहले—कैमो, जेल्स, नक्स, रस टक्स, सल्फ ।

" " ६ बजेसे १२ बजेतक—कैमो ।

" " १० बजे—जेल्स, नेट्रम-म्यूर, रस टक्स ।

" " १० बजेसे ११ बजेतक—नेट्रम-म्यूर, थूजा ।

" " ११ बजे—बैप्टी, कैल्के, नेट्रम-म्यूर ।

" तीसरे पहर—आर्स, वेल, ब्रायो, जेल्स, पल्स, रस, साइलि ।

" " १ से २ बजेतक—आर्स ।

" " २ बजे—पल्स ।

" " ३ बजेसे ४ बजेतक—एपिस, लाइको ।

" " ४ बजे—ऐनाका, एपिस, इपि, लाइको ।

" सन्ध्यामें—बैप्टी, बेल, ब्रायो, कैमो, सिना, पेट्रो, पल्स, रस-टक्स, सल्फ ।

" " ६ बजे—नक्स-वोम ।

" " ६ बजेसे सारी रात—नक्स-वोम, रस टक्स ।

" " ६ बजेसे ७ बजे—कैल्के, नक्स-वोम ।

" " ७ बजे—कैल्के, नक्स-वोम ।

" रातमें—आर्स, वैप्टी, बेल, ब्रायो, कैल्के, कार्बो वेज, सिना, कैलि-वाई, फास, पल्स, रस-ट, सल्फ ।

शीतावस्था नहीं रहती है, रातमें, १० बजे—आर्स, हाइड्रो।

" रातमें, १२ बजेसे २ बजे—आर्स।

" " १२ बजेसे ३ बजे—आर्स, कैलि-कार्ब।

" " १ बजेसे २ बजेतक—आर्स।

" " २ बजे—आर्स, वेञ्जो-ए।

शीतके साथ (With chill)—ऐकोन, आर्स, वेल, ब्रायो, कैल्के, कैमो, चेलिडो, डिजि, फेरम, हेलि, इग्ने, मर्क, मेजे, नाइट्रिक-ए, नक्स-वोम, ओलियै, प्लम्ब, पोडो, पल्स, रस-टस, सैंगु, सिपि, स्ट्रैमो, सल्फ, थूजा, वेरे, जिंज।

शीत मालूम होना (सिहरावनके साथ—with chilliness)—एपिस, आर्नि, वेल, कास्टि, काफि, इलै, कैलि-बाई, कैलि-कार्ब, मर्क, पोडो, पल्स, सिपि, स्पाइजि, स्कुई, सल्फ थूजा, वेरे, जिंक।

" ज्यादा देरतक, उत्तापके साथ—पोडो।

" बिछावनसे हाथ बाहर निकालनेपर—बैरा-कार्ब, बोरा, हिपर, नक्स-वोम, स्ट्रैमो।

सर्दीकी वजहसे (Catrrahal)—ऐकोन, आर्स, ब्रायो, कार्बो-वेज, कोना, फेरम-फास, हिपर, कैलि-आयोड, लैके, मर्क, फास-ए, रस-टक्स, सैबाडि, सिपि।

सविराम, पुराना (Intermittent chronic)—आर्स, कैल्के, कैल्क-फास, कार्बो-वेज, हिपर, लाइको, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वो, सिपि, साइलि, सल्फ।

" नया—आर्स, वैप्टी, ब्रायो, चिनि-स, चायना, जेल्स, इग्ने, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम।

" यकृत बढ़नेके साथ—लाइको, नेट्रम-म्यूर, नाइट्रिक-ए।

सम्बन्ध—शीत, उत्ताप और पसीनेकी अवस्थाका आपसका (Succession of stages)

सम्बन्ध, शीतके बाद उत्ताप—ऐकोन, ऐल्युमि, ऐण्टिम-टा, आर्नि, बेल, कार्बो-वेज, चायना, सिना, कोलचि, ड्रोसेरा, युपे-पर्फ, ग्रैफा, हिपर, हायो, आयो, इग्ने, इपि, लाइको, मैग-कार्ब मर्क-कोर, नेट्रम-कार्ब, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम, ओपि, पेट्रो, फास, पल्स, रस-टक्स, सिके, स्पञ्जि, स्पाइजि, स्ट्रैमो, सल्फ, वेले।

सम्बन्ध शीतके बाद, पसीनेके साथ—ऐकोन, बेल, ब्रायो, कैप्सि, कैमो, चायना, फेरम, नक्स-वोम, ओपि, पल्स, रस-टक्स, सैबाडि, सल्फ।

" " बाद पसीना—आर्स, बेल, ब्रायो, चायना, इयुपे-पर्फो, ग्रैफा, इग्ने, लैके, नेट्रम-म्यूर, नक्स-वोम, पल्स, रस-टक्स, सैबाडि, स्पञ्जि, सल्फ, सिरे।

सम्बन्ध शीतके बाद ही पसीना (बीचकी उत्तापावस्था नहीं रहती)—ब्रायो, कैप्सि, कार्बो-ऐनि, कास्टि, क्लिमे, डिजि, लाइको, मेजे, ओपि, पेट्रो, रस-टक्स, थूजा, वेरे।

" उत्तापके बाद, शीत—बेल, ब्रायो, कैल्के, कास्टि, हेलि, नाई-ए, नक्स वो, पल्स, कैमो, सिपि, स्ट्रैनम, स्टैफि।

" " के बाद पसीना—ऐमोन-म्यूर, आर्स, कैमो, चायना काफि, इग्ने, इपि, मैग, नक्स-वोम, रैनान-कुल, रस-टक्स, साइलि, वेरे।

" " ठण्डा—वेरे।

सूर्यकी गर्मीकी वजहसे—ऐण्टिम क्रूड, बेल, कैक्टस, ग्लोनो।

सूतिका ज्वर (Puerperal fever)—बैप्टी, ब्रायो, फेरम, लैके, लाइको, नक्स-वोम, फास, पल्स, रस-वेड, रस-टक्स, सल्फ।

" लोकिया (प्रसवान्तिक स्राव)—बन्द होकर—लाइको, पल्स, सल्फ।

सेप्टीक फीवर (Septic fever)—ऐसे-ए, ऐन्थ्रा, एपिस, आर्नि, आर्स, बेल, **बैप्टी, ब्रायो**, कैडमि, कार्बो-वेज, क्यूरे, **कार्बो-वेज, क्रोटेलस-होर, एकिने** कैलि-फास, लैकसिस, लाइको, मर्क, म्यूर-ए, ओपि, फास, फास-ए, पल्स, पाइरो, रस-टक्स, रस वे, सल्फ, सल्फ-ए, टैबे, टेरि ।

सेरिब्रो स्पाइनल ज्वर (Cerebro spinal fever)—ऐकोन, एण्टि-टा एपिस, आर्ज-नाई, आर्नि, आर्स, बैप्टी, बेल, ब्रायो, सिकि, सिमि, क्रोटे-हो, क्यूप्रम, जेल्स, ग्लोनो, हायो, इग्ने, नेट्रम-म्यूर, नेट्रम-स, नक्स-वोम, ओपि, फास, रस-टक्स, वेरे-वि, जिंक ।

स्वल्प-विराम ज्वर (Remittent fever)—ऐकोनाइट, ऐण्टिम-टा, बेल, **ब्रायो, कैमो**, चायना, जेल्स, इपि, लैके, लाइको, मर्क, नेट्रम-स, नक्स-वो, पोडो, पल्स, रस-टक्स, सल्फ ।

" सवेरे—आर्नि, ब्रायो, रस-टक्स, सल्फ ।

" तीसरे पहर—आर्स, बेल, ब्रायो, जेल्स, लैक, लाइको, नक्स-वोम ।

" सन्ध्यामें—ऐकोन, बेल, ब्रायो, लाइको, नक्स-वोम, फास, पल्स, रस टक्स, सल्फ ।

" रातमें—ऐकोन, आर्स, बैप्टी, कैमो, मर्क, नक्स-वोम, फास, पल्स, रस-टक्स, सल्फ ।

" एक तरफका गाल लाल, दूसरी तरफका सफेदीके साथ—ऐकोन, कैमो ।

" टाइफायडमें बदल जानेकी सम्भावना—ऐण्टिम-टार्ट, आर्स, बैप्टी, ब्रायो, म्यूर-ए, फास-ए, फास, रस-ट, सिके ।

" क्विनाइनके अपव्यवहारके कारण—आर्स, इपि, पल्स, रस-ट ।

" बच्चोंका—ऐकोन, आर्स, बेल, ब्रायो, कैमो, जेल्स, इपि, नक्स-वोम, सल्फ ।

हाम ज्वर (खसराका बुखार)—"उद्भेद" देखिये ।

ऐक्टिक ज्वर (क्षय-ज्वर Hectic fever)—ऐसे-ए, आर्स, आर्स, आयोड, ब्रायो, कैल्के, कैल्के-फास, कैल्के सल्फ, कैप्सि-कार्बो-वेज, चायना, चिनिन-आर्स, क्लोरो, हिपर, आयो, इपि, कैलि-आर्स, कैलि-कार्ब, कैलि फास, कैलि-स, लैके, लाइको, मर्क, फास-ए, फास, पल्स, पाइरो, सैंगू, सिनि, सिपि, साइलि, स्टैनम, सल्फ, टेरे, थूजा, टियुबरक्यु ।

हेक्टिक ज्वर, घटना, भोजनके बाद—ऐनाका, आर्स, चायना, फेरम, इग्ने, आयो, नेट्र-कार्ब, फास, रस ट, स्ट्रान्सि ।

" घटना, खोलनेसे, गात्रावरण—ऐकोन, आर्स, बोवि, कैमो, चायना, फेरम, इग्ने लेडम, लाइको, म्यूर-एसिड, पल्स, वेरे ।

हेक्टिक ज्वर, घटना, हिलनेसे—कैप्सी लाइको, पल्स, रस, वेले ।

" " खुली हवामें—कैन्थ, मस्क, नेट्रम-म्यूर ।

" " घूमनेसे, खुली हवामें—फास, पल्स ।

हेक्टिक ज्वर, बढ़ना, खानेके बाद—ओडो, बेल, ब्रायो, कास्टि, कैमो, लैके, लाइको, नाई-ए, नक्स वो, फास, सिपि, सल्फ ।

" घटना, ओढना उतारनेपर—ऐको, कैमो, मैग-का, साइलि ।

" " गरम ओढनेसे—ऐकोन, एपिस, कैमो, इग्ने, लीडम, पेट्रो, पल्स, रस टक्स, सल्फ, विरे ।

" " " घरमें—ऐमोन-म्यूर, एपिस, ब्रायो, इपि, लाइको, पल्स, सल्फ ।

" " गरममें—एपिस, ब्रायो, इग्ने, पल्स, ओपि, स्टैफि ।

" " पीनेसे जलीय पदार्थ (Drinking)—बैरा—कार्ब, कैल्के, कैमो, काफि ।

" " हवासे खुली हुई—चायना, नक्स-वोम ।

खाद्यके उपादान और खाद्य-प्राण

इस पुस्तकके "उपक्रमणिका" अध्यायमें—"स्वास्थ्य-रक्षाके सम्बन्धमें कइएक जरूरी बातें" अनुच्छेदमें खाद्यके सम्बन्धमें संक्षिप्त आलोचना की गई है। खाद्य के सम्बन्धमें साधारण ज्ञान सबको ही रहना आवश्यक है। हमलोग इस अध्यायमें कुछ विस्तृत भावसे खाद्यके सम्बन्धमें आलोचना और हिन्दुस्तानियोंके दैनिक खाद्योंके उपादान और खाद्य-प्राण (विटामिन) की एक सूची प्रकाशित कर रहे हैं।

वैज्ञानिकगणने गवेषणा और परीक्षाके द्वारा खाद्यको प्रधानतः ६ भागोंमें विभाजित किया है। जैसे—(१) प्रोटीन या छाना या आमिष जातीय, (२) कार्बो-हाइड्रेट या शर्करा-जातीय, (३) फैट (चर्बी) या स्नेह जातीय, (४) पानी, (५) नमक और (६) वाइटामिन या खाद्य-प्राण। परीक्षा द्वारा देखा गया है कि खाद्य और मनुष्य-शरीरके रासायनिक उपादान प्रायः एक ही समान और पानी तथा खनिज पदार्थ समूह भी दोनों ही वस्तुओंमें प्रायः समान परिणाममें वर्त्तमान रहते हैं। जीवन-यात्राके निर्वाहके लिये अनुक्षण शरीरका जो क्षय हो रहा है, उस क्षयको रोकनेके लिये शक्तिका संरक्षण करना पुष्ट रखनेके लिये और रोगीकी प्रतिरोधक क्षमता पैदा करनेके लिये प्रत्येक मनुष्यको ही परिमित उपयोगी खाद्यका ग्रहण करना आवश्यक है।

प्रोटीन—शरीरमें ताप पैदा करना और शरीरकी दहन-क्रियापर नियंत्रण करना, शरीरके क्षयको पूरा करना, शरीरके उपादान-समूहोंका निर्माण करना, प्रोटीन खाद्यका काम है।

कार्बो-हाइड्रेट—शरीरका तेज, कर्म-क्षमता और ताप पैदा करना और चर्बीका गठन, कार्बो-हाइड्रेट या शर्करा-जातीय खाद्योंका प्रधान काम है। इस जातिके खाद्य ही हमलोगोंके शरीर-गठन और संरक्षणके प्रधान उपादान हैं।

फैट (चर्वी) या स्नेह-जातीय—शरीरमें तेज और उत्ताप पैदा करना और चर्वी तैयार करना, इस जातिके खाद्यका प्रधान काम है।

जल—शरीरमें इससे परिवर्त्तन होनेपर भी शरीरकी दूसरी क्रियाओंके स्वाभाविक परिचालनके लिये और शरीरके अस्वास्थ्यकर पदार्थ-समूहोंके निकलनेके लिये यह बहुत जरूरी खाद्य है।

लवण—पानीकी तरह ही नमक भी एक जरूरी खाद्य है, हमलोग, खाद्यके साथ साधारण नमकके अलावा ताजे फल-मूल, शाक-सब्जी और दूसरे-दूसरे खाद्यादिसे चूना, पोटास, सोड़ा इत्यादि नमक जातीय खाद्य आवश्यकताके अनुसार ग्रहण करते हैं, इन सब नमकोंके अभावसे स्कर्वी (शीताद) रोग हो सकता है।

वाइटामिन या खाद्य-प्राण—खाद्यके उल्लिखित उपादानोंके अलावा, खाद्योंमें ऐसा एक सूक्ष्म उपादान है, जिसके अभावसे मनुष्य जी नहीं सकता है। उल्लिखित उपादान सब बहुत अधिक या जरूरतसे ज्यादा परिमाणमें मौजूद रहनेपर भी केवल इस सूक्ष्म उपादानके अभावसे जीवनी-शक्ति तेजीसे घट जाती है और रोगीकी प्रतिषेधक और प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है और जीव पुष्ट होनेके बदले तेजीसे दुर्बल और शीर्ण होता रहता है। खाद्य-तत्त्वविद पंडितोंने इसका नाम—वाइटामिन या खाद्य प्राण रखा है।

वाइटामिन कितने ही प्रकारके हैं, इनकी कार्य-कारिताओंका आविष्कार अवश्य हुआ है; लेकिन इसके असली रूपका आविष्कार नहीं हुआ है। इसलिये ए, बी, सी, डी, इनका नामकरण हुआ है। वाइटामिन ए, डी और ई खाद्यके स्नेह-जातीय पदार्थमें गल जानेवाले और वाइटामिन बी और सी पानीमें गलनेवाले होते हैं।

वाइटामिन "ए"—इस जातिके वाइटामिनके अभावसे अतिसार, सूतिका, रतौंधी, आँव, नाकके प्रदाहादिकी बीमारियाँ, सर्दी, इन्फ्लुएञ्जा, खाँसी, न्युमोनिया, मूत्र-पथरी इत्यादि बीमारियाँ पैदा हो

जाती हैं और श्लैष्मिक-झिल्लियोंके क्षय और क्रिया-हीनताकी वजहसे रोगकी प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है।

बथुआकी तरकारी, खट्टा बैगन (टमाटो), शकरकन्द, सेम, गाजर, मटरकी छीमी, कोबी, पपीता कद्दू, पके आम, प्रभृति हरे पीले रंगके साग-सब्जी और फल दूध, मक्खन, ननी, अण्डे, मछलीका तेल, बकरेका मांस, बकरा और भेंड़की चर्वी, प्रभृति स्नेह जातीय खाद्यमें "ए" वाइटामिन मिलता है। चावलकी भूँसीमें भी "ए" वाइटामिन रहता हैं। हवा द्वारा बहुत देरतक औंटाने या पकानेसे "ए" वाइटामिन नष्ट हो जाता है। इसलिये पकानेके समय थोड़ी आँचमें ढँककर रसोई बनानी उचित है।

वाइटामिन "बी"—इस जातिके वाइटामिनके अभावसे कब्जियत, अजीर्ण, भूख न लगना, बेरी-बेरी, पेलाग्रा प्रभृति बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं और मातृ-स्तनके दूधके अभावसे और दूधसे बच्चोंकी परिपुष्ट न होनेके कारण बच्चोंका वजन घट जाता है और शीर्णता प्रभृति पैदा हो जाती हैं।

ईख, चक्कीका पीसा आँटा, ढेकीका कूटा चावल, जवकी सत्त, चना, मकई (भुट्टा), दाल, मटर छीमी, सायाबिन, चीना बादाम, सेम, मछलीका अंडा, अंडाका फूल, बकरे और भेंड़का मांस प्रभृतिमें बहुत ज्यादा परिमाणमें और कमला नेबू, नारियल, आलू, कोबी, प्याज खट्टा बैंगन (टमाटो), दूध, गुड़, मांस इत्यादिमें थोड़े परिमाणमें वाइटामिन "बी" रहता है। चावलकी भूँसी, चावलका शीर्ष या अंकुर स्थान, चावलके मांड़ प्रभृतिमें भी बहुत ज्यादा परिमाणमें "बी" वाइटामिन रहता है। कलका चावल या ढेकीमें छाँटकर महीन और साफ करनेपर और पकाये हुए धानका चावल बार-बार धोकर राँधकर मांड़ बहा देनेपर यह "बी" वाइटामिन प्रायः सब ही नष्ट हो जाता है। इस तरहका अन्न ग्रहण करनेके कारण अन्नजीवी हिन्दुस्तानी आज जीवन-

युद्धमें सर्वत्र पराभव स्वीकार कर रहे हैं। कम पानीमें, कम कड़ा अरवा चावलका भात तैयारकर मांड न निकालकर भोजन करनेसे यह "बी" वाइटामिन बहुत ज्यादा परिमाणमें मिल सकता है।

वाइटामिन "सी"—इस जातिके वाइटामिनके अभावसे स्कर्वीकी बीमारी होती है, रोग प्रतिरोधक शक्ति घट जाती है, दाँत और हड्डीकी पुष्टिमें गडबडी पैदा हो जाती है और बच्चेका वजन घट जाता है, शीर्णता और चिडचिडा मिजाज प्रभृति उपसर्ग पैदा हो जाते हैं।

सब तरहके नेबू, खट्टा बैंगन (टमाटो), तरबूज, अनारस, ईख सेब, खीरा, मूँग, जव, अकुरित चना, प्याज, बथुआ बाँधा कोबी आलू, मटर, छीमो, दूध, दही, दहीका शरबत आदिमें "सी" वाइटामिन रहता है। पहले ही कहा गया है कि यह पानीमें जमनेवाली चीज है, इसलिये रसोई करनेके समय तरकारीका पकाया पानी फेंक देनेपर या खुले बर्त्तनमें अधिक देरतक पकानेपर "सी" वाइटामिन नष्ट हो जाता है।

वाइटामिन "डी"—इस जातिके वाइटामिनके अभावसे बच्चोंको "रिकेट्स" और स्त्रियोंको "ओस्टियोमेलासिया" प्रभृति बीमारी होती है। दाँतमें कीडा लगता है, हड्डी शीर्ण हो जाती है, टेढी पड़ जाती है, खाद्यमें कैलसियम और फास्फोरस आदि लवण-जातीय पदार्थ शोषण और परिपोषणके लिये वाइटामिन "डी" की आवश्यकता होती है।

धूप और काडलिवर आयलमें बहुत ज्यादा परिमाणमें "डी" है। इसलिये धूपमें खडे होकर शरीरमें तेल या काडलिवर आयल बच्चोंको लगाना—बालक, युवक, वृद्ध, सबोंके लिये ही विशेष हितकर है। मछलीका अंडा, बकरेका मांस, अंडेका सफेद अश, दूध, मक्खन, वडी, पापड, अँचार प्रभृतिमें वाइटामिन "डी" मिलता है। यह गर्मीसे भी नष्ट नहीं होता है।

वाइटामिन "ई"—इस जातिके वाइटामिनके अभावसे गर्भस्थ बच्चेकी मृत्यु हो जाती है। बार-बार गर्भस्राव होता है, इसलिये इसे गर्भ-संरक्षक वाइटामिन कहते हैं।

ढेकीका चावल, चक्कीका आँटा, नारियल, केला, दूध, मांस, अंडा प्रभृतिमें भी वाइटामिन "ई" मिलता है। यह भी गर्मीसे नष्ट नहीं होता है।

खाद्यका परिणाम

प्रत्येक जवान स्वस्थ हिन्दुस्तानियोंको रोज प्रोटीन ६०-७० ग्राम, फैट ५०-६० ग्राम, कार्वो-हाइड्रेट ४५०—५००, ग्राम, पानी ३-४ सेर और जरूरतके अनुसार खनिज लवण और बहुत ज्यादा परिमाणमें वाइ-टामिन या खाद्य-प्राणका ग्रहण करना आवश्यक है।

प्रत्येक जवान मनुष्योंके लिये लाल आँटा ६ छटाँक—ताप ११६०', ढेकीका छाँटा चावल ४ छटाँक—ताप ६१६', दाल २ छटाँक—ताप ४००', तरकारी ६ छटाँक—ताप १०२', सरसोंका तेल आधा छटाँक—ताप २५२', गुड़ चौथाई छटाँक—ताप ५०', मछली २ छटाँक—ताप ८८', दूध २ छटाँक—ताप ७२', नमक कमवेशी आधा छटाँक, थोड़ा नींबू, तेल, ३०७'३ ताप विशिष्ट २३ छटाँक खाद्य ग्रहण करना आवश्यक है।

उल्लिखित तालिकामें पूर्णवयस्क हिन्दुस्तानियोंके साधारण खाद्यका हिसाब दिया गया है। खाद्य ग्रहणका कोई बँधा नियम नहीं हो सकता है। प्रत्येकको व्यक्तिगत आवश्यकताके अनुसार उपयोगी खाद्य-ग्रहण करना आवश्यक है।

प्रोटीन, कार्बो हाइड्रेट और फैट खाद्यांशसे उत्तापकी सृष्टि होती है। इस उत्तापका परिमाण कैलरीके हिसाबसे ठीक किया जाता है। एक

हजार ग्राम वजनके पानीका उत्ताप १ डिग्री बनाना हो, तो जिस परिमाणमें गर्मीकी आवश्यकता है, शरीर-विज्ञानके मतसे उसे कैलरीके हिसाबसे ग्रहण किया जाता है। एक ग्राम आमिषसे इस तरहकी चार कैलरी, एक ग्राम चीनीसे चार कैलरी और एक ग्राम चर्बीसे नौ कैलरी उत्तापकी सृष्टि होती है। थोड़े परिश्रमी व्यक्तिके लिये २४०० कैलरी, ज्यादा परिश्रमी व्यक्तिके लिये २६००—३२०० कैलरी गर्मीकी आवश्यकता है।

हिन्दुस्तानियोंके दैनिक ग्रहण करनेवाले कई खाद्यके उपादान, खाद्य-प्राण और शक्तिकी सूची*

खाद्य	वाइटामिन या खाद्य-प्राण				प्रोटीन या छाना-जातीय	कार्बोहाइड्रेट या शर्करा-जातीय	फैट या स्नेह-जातीय	कैलरी या शक्ति (ताप)
	ए	बी	सी	डी				
दूध और दूधकी वस्तुएँ—								
गायका दूध	+++	++	+	+	०'९४	१'२६	१'०२	१८
बकरीका दूध	+++	+	+	+	१'२१	१'२१	१'१३	२०
भैंसका दूध	+++	+	+	+	१'३५	१'२४	२'१८	३०
दही	++	++	....	...	१'४०	०'८०	१'००	१९
छाना	++	++	...	...	६'३	०'१	०'७	३२
मक्खन	+++	...	...	+	०'३	—	२३'१०	२१६
घी	...	...	...	...	—	—	२८'३५	२६३

* इस सूचीमें प्रति औंस ½ छटाँक (२८'३ ग्राम) खाद्य-शक्ति या तापका परिमाण और खाद्यका उपादान किसमें कितने परिमाणमें हैं, यह दिखाया गया है।

खाद्य	वाइटामिन या खाद्य-प्राण ए	बी	सी	डी	प्रोटीन या छाना-जातीय	कार्बोहाइड्रेट या शर्करा जातीय	फैट या स्नेह-जातीय	केलरी या शक्ति (ताप)
तैल—								
सरसों या समस्त उद्भिज तैल	○	○	○	○	—	—	२८·००	२५२
मछलीका तेल	+++	—	.	++	—	—	२८·००	२५२
मांसकी चर्बी	++				०·३४	—	२६·४०	२३९
मांस-मछली—								
टटकी तालाबकी मछली	.	+	..	...	५·५०	—	१·१५	३२
तेलकी मछली	+++	+		—	५·३२	—	३·१०	५५
बिना तेलकी मछली	..	+		—	५·१५	—	०·२०	२२
बकरेका मांस	—	+	...	—	७·२०	—	०·७५	३६
मुर्गीका मांस	+	+	...	...	५·५	—	४·६	६५
अंडा	++	+++	—	+	३·७९	...	२·९७	४२
चावल, आँटा प्रभृति—								
मीलका साफ किया चावल	...	...	...		९·७९	२६·०९	०·१३	११३
बिना धाँटा चावल	+	+	○	...	२·३०	२२·३०	०·०८५	९९

खाद्य	वाइटामिन या खाद्य-प्राण				प्रोटीन या छाना-जातीय	कार्बोहाइड्रेट या शर्करा-जातीय	फैट या स्नेह-जातीय	कैलरी या शक्ति (ताप)
	ए	बी	सी	डी				
भात कलमें साफ किया, पकाया—								
चावलका फेन निकाला	···	?	···	···	१·४	१६·७	०·३	७७
फरूई	···	···	···	···	२·१	१९·४	०·३	१०८
चिवड़ा	+	+	···	···	१·७	२१·१	···	९४
लाल आँटा	+	++	०	···	३·९०	२०·३५	०·५४	१०२
सफेद मैदा	०	—	०	···	३·१४	२१·५४	०·३७	१०२
सूजी	+	+++	०	····	४·२०	१४·२०	०·६८	८०
दाल—								
दाल	+	++	०	···	६·५०	१६·२०	०·९९	१००
चना	+	++	०	···	५·७०	१५·३०	१·३०	९६
सोयाबीन	+	++	०	···	९·६०	९·५०	४·७०	११९
मीठे पदार्थ—								
सफेद चीनी	०	०	०	···	—	२८·३०	—	११३
लाल चीनी	०	—	···	०	···	२६·८९	—	१०८

खाद्य	वाइटामिन या खाद्य प्राण ए	बी	सी	डी	प्रोटीन या छाना जातीय	कार्बोहाइड्रेट या शर्करा-जातीय	फेट या स्नेह-जातीय	कैलरी या शक्ति (ताप)
गुड़	०	—	०		०·०८	२५·००	—	१००
शहद	—	—			०·११	२०·२१	—	८१
मूल—								
गोल आलू	—	+	+		०·७०	८·१५	०·०४	३६
शकरकन्द	+ +	+	+ +		०·२	६·०	०·९	३४
कच्चू	·	+	+		०·३	५·७	—	२५
मूली	—	+	+		०·२८	०·९६	०·०३	५
प्याज	—	+ +	+	·	०·३७	३·०६	०·०३	१४
फल—								
केला	—	+	+		०·४५	२·२६	०·०३	११
अंगूर	··	+	—		०·१७	०·९३	३·०३	१७
पपीता	+	+	+ + +		०·१६	०·१०	···	१
नारंगी	+	+	+ + +	··	०·२५	२·६९	०·०३	१२
आम	+		+ +	—	००·४	५·७०	०·२७	२३
नारियल	+	+ +	···	+	१·६१	७·९०	१४·३१	१६७

खाद्य	वाइटामिन या खाद्य-प्राण				प्रोटीन या छाना-जातीय	कार्बोहाइड्रेट या शर्करा-जातीय	फैट या स्नेह-जातीय	कैलरी या शक्ति (ताप)
	ए	बी	सी	डी				
तरकारी—								
फूलकोबी	+	+	+	....	०'५४	१'६७	०'०६	९
बाँधा कोबी	+++	+++	+++	....	०'३९	१'२७	०'०३	७
बैगन	...	+	+	...	०'३४	१'४४	०'०९	८
बथुआ शाक	+++	+++	+++	....	०'५२	०'८२	०'०६	६
विलायती बैगन	—	+++	+++	...	०'२०	१'२७	०'०३	६
तरोई	...	+	+	...	२'५२	१'७०	०'३३	१२
बादाम—								
चीना बादाम	—	++	०	...	७'३०	६'९०	१०'९२	१५५
काबुली बादाम	—	++	०	...	५'२६	४'३०	१५'९६	१८२
अखरोट	+	+++	०	...	३'८५	३'९६	१९'९२	२११
जलपान—								
सन्देश	०	०	०	...	५'४०	१२'००	६'००	१२४
चाय	०	०	०	...	....	...	....	...

परिशिष्ट (क)

परमाणु-पात या शक्ति-विकाशवाद

होमियोपैथी चिकित्साका प्रधान वैशिष्ट्य यह है कि, इसमें औषधिका परिमाण अत्यन्त अल्प रहता है। अल्प कहनेसे भी बात स्पष्ट नहीं होती, क्योंकि वह इतनी सूक्ष्म मात्रामें रहती है कि, समय-समयपर उसके परिमाणकी कल्पना करना भी कठिन हो जाता है। इस सूक्ष्मतम परिमाणकी औषधिसे कोई व्याधि दूर की जा सकती है, यह बात धारणातीत है। दुरारोग्य अथवा दीर्घस्थायी व्याधिकी तो बात ही अलग है—साधारण व्याधियाँ भी इस सूक्ष्म परिमाणमें औषधिके प्रयोगसे दूर हो सकती है, यह भी अत्यन्त आश्चर्यजनक प्रतीत होता है। बहुतेरे होमियोपैथी चिकित्साकी सफलताके प्रति इतना सन्देह रखते हैं कि कहीं-कहीं प्रत्यक्ष सुफल देखकर भी उसे स्वीकार करनेमें आनाकानी करते है अथवा अस्वीकार करनेका कोई मार्ग न रहनेसे रोगीके मानसिक विश्वासकी दुहाई देते हैं। उनके मतसे इस प्रकारकी आरोग्यता "विश्वासकी आरोग्यता" (faith crue) अथवा "मनोवैज्ञानिक प्रभाव" (psychological effect) है।

होमियोपैथी चिकित्सामें कोई सत्यता है या नहीं—वह वास्तवमें विज्ञानसम्मत है अथवा केवल जादूगरी (magic)—वस्तुका इतना सूक्ष्म परिमाण शरीरपर कैसे प्रभाव डालता है, इन सब प्रश्नोंकी झड़ी होमियोपैथिक चिकित्सा-प्रणालीके जन्मसे ही एक वर्गके लोग लगाते रहे हैं। इन सब प्रश्नोंका विज्ञानसम्मत कोई उत्तर दिया जा सकता है या नहीं, इसे समझनेके लिये वर्त्तमान विज्ञानकी धारा और गतिके सम्बन्धमें कुछ जानना आवश्यक है। वर्त्तमान विज्ञानकी विचारधारामें

यह स्पष्ट ही दृष्टिगोचर होता है कि होमियोपैथिक चिकित्सा-प्रणालीमें बहुत चिन्ता और गवेषणाके अनेक तथ्य अन्तर्निहित हैं। इस अध्यायमें हम इसी विषयकी आलोचना करेंगे।

विश्वके उपादान

तीन मूल उपादानोंके संयोग और उनकी पारस्परिक प्रतिक्रियाके फलस्वरूप इस विश्वकी सृष्टि हुई है। ये उपादान हैं :—(१) जड़ (matter), (२) शक्ति (energy) और (३) चेतना (conciousness)। कुछ विद्वानोंने चेतनाको शक्तिके अन्तर्भुक्त करके इसे प्राणशक्ति कहा है। जड़ और शक्ति इन्द्रियानुभूतिकी सहायतासे हमारी चेतनामें वास्तवाकार पाती हैं। इस शृंखलामें किसी प्रकारका व्यातिक्रम होनेसे हम विश्वका अस्तित्व अनुभव नहीं कर पाते—इसीलिये जिसके इन्द्रियानुभूति नहीं है, विश्वका अस्तित्व भी उसकी धारणासे परे हैं।

चेतनाका चरम स्वरूप या प्रकृति अब भी रहस्यावृत है, वैज्ञानिक आज भी उसका रहस्योद्घाटन नहीं कर सके ; किन्तु जड़ और शक्तिके सम्बन्धमें वैज्ञानिक नाना तथ्य आविष्कार करनेमें समर्थ हुए हैं।

जड़ (matter)

जड़-पदार्थके स्वरूपपर प्राचीन कालके पण्डितोंने विविध कल्पनाएँ और मतवाद सामने रखे हैं। ईसासे द्वादश शताब्दी पहले वैशेषिक दर्शनके प्रणेता महर्षि कणादने बताया था कि, प्रत्येक पदार्थ छोटी-छोटी कणिकाओंकी समष्टि मात्रा है। पाश्चात्य विज्ञानके विकाशके साथ-साथ वर्त्तमान रसायनके पथ-प्रदर्शक जान डाल्टन (John Dalton) ने इस सम्बन्धमें हमारी धारणा स्पष्ट कर दी और रसायनिक प्रक्रियाका अन्तर्निहित रहस्य सर्व-प्रथम उद्घाटित कर दिया।

प्रत्येक पदार्थ सूक्ष्म कणोंसे गठित है। एक विन्दु जल अथवा एक पत्थरके टुकड़ेको विभाजित करते-करते एक ऐसे सूक्ष्मांशमें पहुँचा जा सकता है, जिसके आगे और विभाजन नहीं किया जा सकता। अधिकतर सूक्ष्म अंशोंमें विभाजित करनेसे द्रव्यका गुण या धर्म सुरक्षित नहीं रहता, वह नष्ट होकर एकाधिक अन्य किसी द्रव्यमें परिणत हो जाता है। ऐसे क्षुद्रतम अंशका नाम "अणु" (molecule) है। इस प्रकारके कोटि-कोटि अणुओंको लेकर एक विन्दु जलकी सृष्टि होती है।

जलके इस अणुको यदि बिजलीकी सहायतासे तोड़ डाला जाय, तो उससे उद्जान (hydrogen) और अम्लजान (oxygen) नामकी दो वायवीय पदार्थों का सूक्ष्मांश मिलेगा। जलके एक अणुमें उद्जानके दो अणु और अम्लजानका एक अणु रहता है, यह वैज्ञानिकोंने प्रमाणित कर दिया । अणुके इस सूक्ष्मांशको "परिमाणु" (atom) कहते हैं।

जिस पदार्थके अणुको तोड़कर दो या उससे अधिक पदार्थ न मिलें, उसे मौलिक पदार्थ (element) कहते हैं। सब मिलाकर इस प्रकारके ६२ मौलिक पदार्थ हैं, यह धारणा वैज्ञानिकोंकी है। जिस पदार्थके अणुको तोड़कर दो या उससे अधिक पदार्थ मिलें, उसे यौगिक पदार्थ (compound कहते हैं। ६२ मौलिक पदार्थोंकी सहायतासे ही इस ब्रह्माण्डकी सृष्टि हुई है। कोयला (carbon) एक मौलिक पदार्थ है—इसी प्रकार गन्धक (sulphur), अम्लजान (cxygen), उद्जान (hydrogen), यवक्षारजान (nitrogen) आदि भी मौलिक पदार्थ हैं। मौलिक पदार्थ और यौगिक पदार्थ, अणुओंकी समष्टि मात्र हैं, प्रभेद केवल यह है कि, मौलिक पदार्थके अणु उसी पदार्थके दो या उससे अधिक परमाणुओं द्वारा गठित होता है, किन्तु यौगिक पदार्थके अणु विभिन्न मौलिक पदार्थों के परमाणुओं द्वारा गठित होता है। जल एक यौगिक पदार्थ है—इसका अणु उद्जानके दो और अम्लजानके एक परमाणु द्वारा गठित होता है। अणुके गठनमें

परमाणुओंकी संख्या निर्दिष्ट होती है, क्योंकि उद्जानके दो परमाणुओंके साथ अम्लजानके दो परमाणुओंके मिलनेसे "हाइड्रोजेन पैरक्साइड" (hydrogen peroxide) नामक एक नया यौगिक पदार्थ बनता है।

महापंडित डाल्टनके मतसे जड़ पदार्थ परमाणु नामक अविभाज्य अखंडनीय सूक्ष्म कणों द्वारा गठित हैं और दो विभिन्न पदार्थोंके परमाणु जब अत्यन्त निकट आते हैं, तो वे एकमें मिलकर यौगिक पदार्थकी सृष्टि कर सकते हैं, किन्तु इस संयोगके फलस्वरूप शक्तिका अविर्भाव या तिरोभाव होता है।

यह कहना ही वृथा है कि ये अणु-परमाणु इतने सूक्ष्म होते हैं कि उन्हें हम देख नहीं पाते, ये इतने छोटे हैं कि अणुवीक्षण यंत्रसे भी दिखाई नहीं पड़ते। एक अणु या परमाणुका आकार इतना छोटा होता है कि उसका व्यास एक इञ्चका २० कोटि भाग होता है। एक फुटवालके आकारके लौहपिंडको यदि पृथ्वीके आकरके सामान बढ़ाया जाय, तो उसका एक-एक परमाणु फुटवालके आकारका होगा। इससे परमाणुकी क्षुद्रताकी एक धारणा की जा सकती है। एक और सुन्दर दृष्टान्त रूपककी सहायतासे दिया जा सकता है। पंडितोंने गणनामें देखा है कि कोटि-कोटि हाइड्रोजेन या अन्य किसी मारुत पदार्थके अणु एक घन-इञ्च स्थानमें रह सकते हैं। अब इस एक घनइञ्च हाइड्रोजेन गैसको इतना बढ़ाया जाय कि उसके एक अणुका आकार एक नारंगीके सामान हो। इसके बाद यदि दस हजार व्यक्तियोंको इन नारंगीके आकारके अणुओंको एक स्थानसे दूसरे स्थान हटानेके लिये नियुक्त किया जाय और प्रत्येक व्यक्ति दिन-रात प्रति सेकेण्ड एक एक अणु हटाता रहे, तो उन्हें काम समाप्त करनेमें २० कोटि वर्ष लगेंगे—"विज्ञान और विश्वजगत (विश्वविद्या संग्रहमाला)"—श्री प्रियदारंजन राय।

यहाँ यह भी स्मरण रखना है कि केवल अणुओंकी समष्टिसे पदार्थकी सृष्टि नहीं होती। इसमें एक केन्द्रीभूत शक्तिका भी प्रयोजन होता है।

इस केन्द्रीयभूत शक्तिके परिमाणके तारतम्यके अनुसार जड़ पदार्थकी त्रिविधि अवस्थाओंका उद्भव होता है, जैसे कठिन (solid), तरल (liquid) तथा वायवीय (gaseous) ; इसके अतिरिक्त एक अवस्था और होती है, जिसे तेजामय (radiant या excited) अवस्था कहते हैं। कठिन, तरल अथवा वायवीय सभी अवस्थाओंमें ही जड़ पदार्थ तेज या शक्ति सञ्चय करके तेजोमय अवस्था प्राप्त कर सकते हैं।

डाल्टनके इस परमाणुवादने उन्नीसवीं शताब्दीमें प्रचारित होकर यथेष्ट प्रतिष्ठा प्राप्त की थी, परन्तु बीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें सर वीलियम क्रूकसकी अपूर्व गवषणा (Crooks tube phenomena) और हनरी बक्वरेलकी पिच ब्लेण्ड (pitch blend) नामक धातव पदार्थसे निकली हुई एक प्रकारकी तेजोमय रश्मि (bacquerel rays) के आविष्कारने डाल्टन प्रवर्तित परमाणु विभाजित नहीं होता—इस सिद्धान्तकी मूलपर कुठाराघात किया। इसके थोड़े दिन बाद ही मडाम और मि० पियेरी कुरी (Madame and M Pierre curia) द्वारा रेडियम (radium) नामकी तेजोमय धातुके अस्तित्वके प्रमाण और साथ-ही साथ रजन-रश्मि (Rontgen ray or X Ray) के आविष्कारसे विज्ञान जगतमें एक विप्लव दिखाई पड़ा।

क्रूकसकी गवषणासे वैज्ञानिक जगत पहले पहल समझ सका कि परमाणु अविभाज्य नहीं है, क्योंकि परमाणुको विद्युत शक्ति द्वारा तोड़ डालना सम्भव है और इस प्रक्रियाके फलस्वरूप दो प्रकारकी तेज पूर्ण रश्मियाँ परमाणुसे बाहर निकलती हैं। एक रश्मिका नाम इलेक्ट्रोन (electron) और दूसरी इलेक्ट्रोनको छोड़कर परमाणु शिष्ट अंश है। यह शेषोक्त अंश सयोग-विद्युतयुक्त (positively charged) है, इसलिये उसका नाम Positive Ray अथवा सयोग रश्मि है। क्रूकसकी परीक्षाका अवलम्बन लेकर ही राजेनने उससे (rentgen ray) अथवा X-Ray का आविष्कार किया। क्रूकसकी इसी परीक्षासे प्रमाणित

हुआ कि परमाणु अविभाज्य नहीं है। परमाणुको भी सूक्ष्मतर वस्तुमें विभाजित करना सम्भव है और इस प्रकार विभाजित परमाणुके अंशोंका नाम इलेक्ट्रोन (electron) है। यह इलेक्ट्रोन ऋणात्मक (negative) विद्युत विशिष्ट है।

आश्चर्यकी वात यह है, कि जिन वस्तुओंके परमाणुसे एक ही तरहके इलेक्ट्रोन मिले, उन सबका गुरुत्व उद्जान (hydrogen) परमाणुके दो हजार भागोंका एक भाग है और सभी ऋणात्मक विद्युत युक्त हैं। और भी आश्चर्यका विषय यह है कि, वेक्वेरेलने भी इन तीन प्रकारकी रश्मियोंका आविष्कार पिच व्लेण्ड (pitch blend) नामक पत्थरसे निकली हुई रश्मिमें किया। पिच व्लेण्डमें यूरेनियम (uranium) नामकी धातुका अस्तित्व पहले ही ज्ञात था। वैज्ञानिकोंने समझा कि क्रूक्सके परीक्षागारमें जिस प्रकार परमाणुको विद्युतकी सहायतासे तोड़ डालना सम्भव हुआ था, उसी प्रकार प्रकृतिके विश्वमें भी युरेनियम धातुमें अपने आप ही तोड़-फोड़ चल रही है।

इस आविष्कारके लगभग चार वर्ष वाद मडाम और मि० कूरीने विशुद्ध यूरेनियम धातुसे निकली रश्मिकी शक्ति और तेजकी अशुद्ध पिच लेण्डसे निकली रश्मिकी शक्ति और तेजके साथ तुलना करके रेडियम (radium) नामक एक अन्य तेजपूर्ण धातुका आविष्कार किया। इन सब गवेषणाओंसे वैज्ञानिक इस सिद्धान्तपर पहुँचे कि, परमाणु अविभाज्य नहीं है। अपितु सुविधा और सुयोग मिलनेसे उपादान रूपान्तरित भी हो सकते हैं, यहाँतक कि रेडियो-प्रभावित धातु (radio-active elements) अपने-आप ही इस प्रकारका रूपान्तर प्राप्त करती है। अन्यन्य उपादानोंमें भी इस प्रकारका रूपान्तर करना सम्भव है, किन्तु वह सहज-साध्य नहीं हैं। उसमें अत्यन्त कठिन परिश्रम और अध्यवसायकी आवश्यकता होती है।

शक्ति (Energy)

शक्तिके प्रकृत स्वरूपके सम्बन्धमें प्रथम समाचार दिया क्लार्क मैक्सवेल (Clark maxwell) ने अपनी Electro-magnetic theory में उत्ताप, प्रकाश, विद्युत आदि जिन सब शक्तियोंका विकाश हम चारों ओर देखते हैं, वे सभी (electro magnetic wave) या तरंगे हैं। इस तरंगाकारमें ही ये एक स्थानसे दूसरी स्थान जाती हैं। प्रश्न हो सकता है, ये किसीकी तरंगें हैं? कोई जड़ पदार्थ—वह तरल, कठिन अथवा वाष्पीय जो भी क्यों न हो—इसका वाहन नहीं है, यह सभी वैज्ञानिकोंने स्थिर कर लिया। तब ईथर (eather) नामक अवास्तव पदार्थका अस्तित्व स्वीकार करके सभी पार्थिव शक्तियोंको उसीकी तरंग मान लिया गया। ईथरकी तरंगोंकी दीर्घताकी अभिव्यक्ति ही विभिन्न शक्तियाँ हैं। जिनका दैर्ध्य अधिक है, वे उत्ताप हैं, उससे छोटी प्रकाश और उससे भी छोटी "अति बैंजनी रश्मियाँ" या (Ultra violet Rays हैं। जो इन अति बैंजनी रश्मियोंसे भी छोटी है, वे ही रंजन-रश्मि या X-Ray हैं; जो और भी छोटी हैं, वे गामा रश्मि (X-Ray, Becquerel Ray) हैं। और जो सबसे छोटी है, उनका नाम ब्रह्मांड रश्मि (Cosmic Ray) है। ये ब्रह्मांड रश्मियाँ (Cosmic Ray) विश्वमें सर्वत्र विद्यमान हैं। जहाँ सूर्यका प्रकाश नहीं पहुँच सकता, वहाँ भी इन रश्मियोंका अस्तित्व है।

पहले ही कहा गया है कि, इस जड़ और शक्तिके सम्मिश्रण और घात-प्रतिघातसे ही ब्रह्माडकी घटनाओंका समावेश होता है। विंश शताब्दीके वैज्ञानिकोंकी प्रथम चेष्टा थी, जड़ और शक्तिके इस घात-प्रतिघातके प्रकृत स्वरूपका निर्णय करना। तरंग ही जब शक्तिका प्रकृत स्वरूप है, तो जड़ और शक्तिका मिलन और विच्छेद सदा अविच्छिन्न (continuous) है, यही पंडितोंका विश्वास था। किन्तु

जर्मनीके विख्यात वैज्ञानिक मैक्स प्लांक (Max Planck) ने दिखाया कि, शक्तिका स्वरुप तरंग होनेपर भी जड़के साथ सम्बन्ध स्थापनके समय वह अविच्छिन्न नहीं रहती,बल्कि गुच्छाकार (bundle) बनकर यातायात करती है। जड़से परमाणुओंकी भाँति शक्तिके भी सूक्ष्म गुच्छ होते हैं। Planck ने इन गुच्छोंका नाम Quantum या एकक दिया। ये एकक ही शक्तिकोके सबसे छोटे या क्षुद्रतम अंश अथवा परमाणु हैं। इनको आकृति शक्तिकी तरंगोंके दैर्ध्यपर निर्भर करती है। दैर्ध्य अधिक होनेसे एककोंका आकार अर्थात् शक्तिका परिमाण कम होता है और तरंगें जितनी ही छोटी होती है, उनके एककांको शक्तिका परिमाण उतना ही अधिक होता है। जड़ और शक्ति दोनोंके ही परमाणु या क्षुद्रतम अंश होते हैं और ये एक दूसरेसे अलग या मिल सकते हैं।

यह सत्य जिस दिन प्रकाशमें आया, उसी दिनसे जड़-विज्ञानमें एक अभूतपूर्व युगका प्रारंभ हुआ। शक्तिमें जड़का गुण विद्यमान है, तो जड़में भी शक्तिके (तरंग रूप) प्रधान गुणका विद्यमान रहना असंभव नहीं है। यह सत्य सर्वप्रथम प्रमाणित किया, वैज्ञानिक द ब्रयेल (De Broglie) ने शुद्ध गणितकी सहायतासे। उन्होंने प्रमाणित किया कि गतिशील जड़में तरंगोंके जिन गुणोंका होना स्वाभाविक है, वही है। तथ्यको परीक्षा-मूलक ढंगसे (experimentaly) प्रमाणित किया डेविसन और जाड़मार (Davisson and Germer) नामक दो वैज्ञानिकोंने। उन्होंने दिखाया कि, गतिशील इलेक्ट्रनों (electrons in motion) में भी तरंगोंके कुछ गुण विद्यमान रहते हैं।

जड़ और शक्तिमें कल्पनातीत एक ऐक्य स्थापित हुआ। जड़ और तरंगकी प्रकृति क्या वास्तवमें एक है? वाद्यतः जड़ गुच्छेके आकार (Corpus-cular) में रहता है और तरंग रहती है अविच्छिन्न

(Continvous) रूपमें जो गुरुत्व है, वह अविच्छिन्न कैसे रह सकता है ? इसका उत्तर हाइसेनवर्ग (Heisenberg) ने दिया :—
"प्रकाश और जड पदार्थ वस्तुतः विभिन्न प्रकृतके हैं। बाह्यतः इनमें जो वैसा दृश्य अथवा द्वैतरूप दिखाई पड़ता है, इसका मूल कारण हमारी भाषाकी सीमाबद्ध प्रकाश-क्षमता है। भाषाका आविष्कार हुआ था हमारी दैनिक अभिज्ञताओंकी अभिव्यक्तिके लिये। प्रसन्नताका विषय है कि गणित शास्त्र हमारी भाषाकी सीमा मानकर नहीं चलती और इसीलिये गणितकी सहायतासे ऐसी व्यवस्था करना संभव हुआ है, जिससे परमाणुके सभी गुणागुण तथा व्यवहार प्रकाशमें लाये जा सकते हैं। इस व्यवस्थाका नाम क्वांटम तत्त्व (Quantum theory) है।"

जड और शक्तिका यह अंगांगी सम्बन्ध यद्यपि बीसवीं शताब्दीमें ही एक निर्दिष्ट रूप ले सका है, किन्तु उसके अस्तित्वके सम्बन्धमें वैज्ञानिकोंके मनमें बहुत दिनोंसे ही एक क्षीण धारणा बद्धमूल थी। इस सम्बन्धमें एक पुराने मासिक पत्रसे कुछ अंश नीचे उद्धृत किया जाता है :—

"परमाणु प्रत्येक वस्तुमात्राका अविभाज्य चरम अंश है, यह धारणा अब वैज्ञानिकोंके मनमें स्थान नहीं पा रही है। प्रसिद्ध प्रोफेसर ला बल कहते हैं कि जिसे हम जड वस्तु कहते हैं, उसके अति सूक्ष्म कणके भीतर इतनी शक्ति (energy) है कि बाहरसे शक्ति न मिलनेपर भी वह अपने-आप बढ़ सकती है। जब कोई जड़ वस्तु किसी कारणसे चूर्ण-विचूर्ण हो जाती है, तब उसके परमाणुओंकी इस अंतर्निहित शक्तिका विकास दिखाई पड़ता है। सूर्यके तेज और तड़ितका उद्भव ऐसे ही होता है। जड-वस्तु (matter) और शक्ति (energy) एक ही वस्तुकी दो भिन्नमूर्त्तियाँ हैं। जब परमाणुगत शक्ति (intra-atomic energy) अचल भावसे विद्यमान रहती है, तब वह जड़ पदार्थ है और जब वह सचल-भावसे विराजमान होती है, तब वह तेज, प्रकाश तड़ित आदि होती है।" —तत्त्वबोधिनी पत्रिका, वैशाख १८२६ शकाब्द।

विज्ञानकी वर्त्तमान धारासे हम यही जान पाते हैं कि जिसे हम जड़ कहते हैं, वह गतिशील ईथरस्थित शक्तिकी समष्टि है (karl pearson's "Grammer of Science" 2nd. Edition Chapter VII), किसी-किसी पंडितके मतसे जड़ शक्ति संघात मात्र है। परमाणुके विश्लेषणसे शक्तिका उद्भव हो सकता है और ऐसी प्रक्रिया रेडियम-जैसी धातुओंमें सदा ही चलती रहती है, किन्तु जड़से जो महान शक्ति अन्तर्निहित रहती है, वह परमाणुके किस विशेष अंशमें रहती हैं और कैसे प्रकट होती है, यही इस समय आलोचनाका विषय है।

सर वीलियम क्रूक्सकी परीक्षासे प्रमाणित हुआ है कि परमाणुको सूक्ष्मतम अंशोंमें विद्युत द्वारा विभाजित किया जा सकता है। इसी तथ्यका अवलम्बन करके रादर फोर्ड (Rather-ford), बोर (Bohr) आदि पंडितोंने स्थिर किया कि सूर्यके चारों ओर जिस प्रकार ग्रह-उपग्रह घूमते हैं उसी तरह एक परमाणुके भीतर भी संयोग-तड़ितयुक्त एक केन्द्रीयभूत कणिका (Positive nucleus) को घेरकर ऋणात्मक-तड़ितयुक्त इलेक्ट्रन (Negative electrons) अत्यन्त भीषण वेगसे घूम रहे हैं। एक परमाणुमें जितने इलेक्ट्रन हैं, ठीक उसी परिमाण, संयोग विद्युत Nucleusके ऊपर भी विद्यमान रहती है। यह Nucleus उस परमाणुकी प्रकृत निर्णय करता है और बाहरके इलेक्ट्रनोंसे उसका गुणागुण निश्चित होता है। रेडियम आदि धातुओंसे जो इलेक्ट्रन बाहर निकल आते हैं और जिसके फलस्वरुप नये-नये उपादानोंकी सृष्टि होती है, वे प्रधानतः परमाणुके केन्द्रसे ही आते हैं। अतः इन सब धातुओंमें परमाणु-केन्द्र सदा सर्वदा टूकर इलेक्ट्रन विकीर्ण करता रहता है। अतएव परमाणु केन्द्र भी अविभाज्य नहीं है। नाना उपायोंसे परमाणु केन्द्रको तोड़कर उसका भीतरी तथ्य आविष्कृत हुआ है। परमाणु केन्द्रमें Neutron नामक पदार्थ है, यह पदार्थ ही परमाणुके गुरुत्वका कारण है। उसमें Positron या संयोग इलेक्ट्रन भी है।

जड़ और शक्तिके भीतर जब परस्पर परिवर्त्तन सम्भव है, तो परमाणुमें किस भीषण परिमाणमें शक्ति अन्तर्हित है, यह सहज ही समझा जाता है। यह शक्ति यदि सहसा बाहर निकल आये, तो उससे कितना भीषण विस्फोट हो सकता है, इसका प्रमाण द्वितीय महायुद्धमें परमाणु-बम (atom bomb) के प्रयोगसे मिला है। केवल कई पौण्ड यूरेनियम (uranium 235) के विस्फोटके चन्द मिनटके भीतर ही एक शहरमें प्रायः एक लाख व्यक्तियोंने प्राण खोये। सूर्य मण्डलमें और छाया पथ आदि नक्षत्र मण्डलमें भी सदा ही इस प्रकारसे परमाणुका तोड़ फोड़ चलता रहता है और इसीसे उनकी समस्त शक्ति और उत्तापकी उत्पत्ति होती है। सूर्य हमसे प्रायः ९ कोटि मील दूर है, फिर भी उसकी प्रखरतासे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सूर्य-मण्डलमें कैसे भयानक उत्तापकी सृष्टि हो रही है। परमाणुके विश्लेषणसे ये सब उत्ताप उत्पन्न होते हैं। पण्डितोंने गणितकी सहायतासे बताया है कि, यूरेनियममें इतनी शक्ति अन्तर्निहित है कि उसकी समस्त शक्ति व्यवहार में ला सकनेपर गगन चुम्बी हिमालय पर्वतको धूल बनानेके लिये केवल ३ या ४ औंस यूरेनियम पर्याप्त है। २३५ ग्राम यूरेनियम जब २०८ ग्राम सीसा (lead) बनती है, उस समय प्रायः २×१०¹² केलरी (2×10^{12} Calories) उत्ताप निकलता है। एक ग्राम यूरेनियम तोड़नेसे उतना ही उत्ताप मिलता है,जितना कि २ टन कोयला जलानेसे मिलता है।

अणु और परमाणुका प्रकृतिगत रहस्य जाननेके बाद यह प्रश्न स्वभावतः उठता है कि जड़ पदार्थमें इनका परिमाण कितना है। गणित और परीक्षाकी सहायतासे प्रमाणित हुआ है कि दो ग्राम (gram) या प्रायः ३० ग्रेन हाइड्रोजेनमें प्रायः ६×१०²³ अणु होते हैं और परमाणुओंकी संख्या उससे दुगुनी होती है। लार्ड केलविनका कहना है कि एक बून्द जलको पृथ्वी मानकर यदि उसकी परिधि २४०००

मील स्थिर कर ली जाय, तो उसके परमाणु उस कल्पित आकारकी तुलनामें बन्दूकको गोलीकी भाँति होंगे। और यदि उसी परमाणुको १६० फीट लम्बा, ८० फीट चौड़ा और ४० फीट ऊँचा एक कमरा माना जाय, तो उसके अभ्यन्तरीण इलेक्ट्रन फूलस्टापके आकारमें होंगे। इस सम्बन्धमें स्वर्गीय अध्यक्ष रामेन्द्र सुन्दर त्रिवेदी महोदयने जो लिखा है, वह अत्यन्त शिक्षाप्रद है।

"......परमाणुकी अपेक्षा सूक्ष्मतर पदाथ और शायद नहीं है, पर अब स्पष्ट है कि, परमाणुको तोड़कर टुकड़े-टुकड़े किया जा सकता है; ये टुकड़े भी कितने सूक्ष्म होते हैं? इन कणिकाओंका चाल-ढाल अत्यन्त अद्भुत है। एक सेकेण्डमें एक लाख मील चलना उनके लिये असाध्य नहीं है। सचमुच प्रायः उतने ही वे दौड़ते रहते हैं। नवाविष्कृत रेडियमके परमाणु भंगुर होते हैं, वे सदा ही वेगसे बाहर निकलते रहते हैं। उनके वेगका क्या कहना है। प्रत्येक परमाणुमें इस प्रकारकी शत-शत या सहस्र-सहस्र कणिकाएँ अटकी हुई हैं। किन्तु वे क्या अटकी रहना चाहती हैं? वे भीतर बन्द रहनेपर भी वेगसे घूम रही है और आकाशके समुद्रमें धक्का देकर प्रकाशकी लहरें उठा रही हैं। सुविधा मिलते ही वे बन्धन-मुक्त हो बाहर निकल आती है।"

"......जिस तड़ित् या इलेक्ट्रिसिटीको लेकर मनुष्य सौ वर्षसे इतने कारखाने बनाता रहा है, उनके स्वरूपके विषयमें वह कुछ भी नहीं जानता। आज वह देख रहा है कि जड़ परमाणुकी यह सूक्ष्म कणिका उस तड़ित्से अभिन्न है। उस सूक्ष्म पदार्थको जड़ पदार्थ कहा जाय या नहीं, यही बताना दुष्कर हैं। तड़ित् जड़ पदार्थ हो या न हो, जड़ पदार्थ तड़ित् कणोंसे निर्मित है। विश्वमें केवल तड़ित ही है, यही जड़ पदार्थका उपादान है; परन्तु मेरी भाषा क्रमशः दुर्बोध्य पहेलीमें परिणत हो रही है; विज्ञान यदि बुद्धिके अगम्य हो, तो वह अज्ञान हो

जाता। अतः यही समाप्त कहना श्रेयस्कर है।" प्रकृत सन् २१०६ ई० संस्करण, १७८-१७६ पृष्ठ।

वस्तुतः परमाणु तथा इलेक्ट्रन इतने छोटे होते हैं और मामूली जड़ पदार्थमें भी इतने अधिक परिमाणमें विद्यमान रहते हैं कि इन सब विषयोंको हम ठीक-ठीक हृदयंगम नहीं कर पाते। ज्यामितिके धैर्य-विस्तार-रहित बिन्दुओंका, जैसे—केवल मनमें ही अनुभव किया जा सकता है, उसी तरह परमाणुका और उसके आभ्यन्तरीण इलेक्ट्रनोंके क्षेत्रमें भी है। एक परमाणुका व्यास प्रायः १०-८ c. m. और एक इलेक्ट्रनका व्यास प्रायः १०-८६ c. m. है।

इन सब परमाणुओं और इलेक्ट्रनोंमें जो शक्ति निहित रहती है, वह भी प्रचुर है। केम्ब्रजके अध्यापक स्ट्राट Strutt, बादको लार्ड रेले (Lord Releigh) ने कहा है कि कांचके एक नलमें रेडियम ब्रोमाइड (radium bromide) रखकर उसमें थोड़ा-थोड़ा ताप देनेसे उससे खूब कम वाष्प बाहर निकल आता है। उस वाष्पका "घन परिमाण" एक पिनके मस्तकके घन-परिमाणसे अधिक नहीं होता, किन्तु निकलता हुआ उक्त वाष्प अपनेसे कई लाख गुनी वायुके साथ मिश्रित होनेपर भी विशुद्ध रेडियमके सभी गुण उस मिश्रित पदार्थमें रहते हैं। इसकी अद्भुत शक्ति और अत्यधिक कार्यकारिता देखकर विस्मित होना पड़ता है। इसके प्रयोगसे देह-तन्तुओंका ध्वंस करनेवाला दुष्टक्षत रोग भी दूर हुआ है।

होमियोपैथिक मतकी वैज्ञानिक भित्ति

अब देखना है कि होमियोपैथिक चिकित्साकी कोई वैज्ञानिक भित्ति है या नहीं?

चिकित्सा-शास्त्र विशारद Sollmoun ने अपनी "Manual of Pharmacology"में होमियोपैथीके सम्बन्धमें अपनी गवेषणा लिपिबद्ध

की है। उपसंहारमें उन्होंने यह मन्तव्य प्रकाशित किया है कि, होमियोपैथिक औषधिका परिमाण इतना कम होता है कि उससे कोई फल मिलता है या नहीं, वह ऐलोपैथी औषधि-प्रणालीके परीक्षा करनेकी पद्धतियोंसे ठीक-ठीक जाना नहीं जा सकता।

इस प्रसंगमें यह बात भी स्मरण रखनी होगी कि ऐलोपैथीके मतमें (Oligodynamic action नामके एक प्रकारके प्रभावको स्वीकार किया गया है। जिसमें औषधिका परिमाण अत्यन्त सूक्ष्म होनेपर भी उसके प्रभावको वैज्ञानिक उपायोंसे ज्ञात किया जा सकता है। इसी तरह उद्भिद विज्ञानमें भी Trace element) अथवा सूक्ष्मतम कई द्रव्योंका प्रभाव कितना प्रयोजनीय है, यह वैज्ञानिकोंने स्वीकार किया है। जस्ता (zinc), मैंगनीज (manganese) और कई अन्य धातु ऐसे Trace element के अन्तर्भुक्त हैं। इनके प्रभावके सम्बन्धमें उन्हें भी कोई सन्देह नहीं है। उद्भिदोंके खाद्यमें ये सब धातुएँ खूब सूक्ष्मतम परिमाणमें रहती हैं, किन्तु इस सूक्ष्मतम परिमाणमें ही इनका प्रभाव कितना अधिक होता है, यह स्पष्ट है; क्योंकि उस सूक्ष्मतम अंशके न रहनेसे उद्भिदका बढ़ना, फल आदि देना सुचारुरूपसे नहीं होता, बल्कि उसके न रहनेसे वे रोगग्रस्त हो जाते हैं। अतएव सूक्ष्मतम परिमाण द्रव्यके प्रभावका परिचय अनेक क्षेत्रोंमें ही मिलता है।

रसायन शास्त्रमें भी सूक्ष्मतम पदार्थकी क्रियाशीलता या प्रभावके दृष्टान्तका अभाव नहीं है; क्योंकि रसायनमें ऐसी बहुतेरी प्रतिक्रियाएँ हैं, जिसमें हो सकता है कोई धातु—जो उस प्रक्रियामें किसी काममें नहीं लगती—फिर भी उसकी उपस्थिति उस प्रक्रियाके लिये आवश्यक होती है; ये सब वस्तुएँ, जो अपनी उपस्थिति मात्रासे ही किसी-किसी रसायनिक प्रक्रियाको सफल बनाती हैं, उन्हें Catalyst या Catalytic agent कहते हैं। इन Catalytic agents का परिमाण अतिशय सूक्ष्म होनेपर भी उनके द्वारा अनेक असाध्य अथवा दुःसाध्य प्रक्रियाओंको

सफल बनाना सम्भव हो जाता है। Sulphuric acid प्रस्तुत-प्रणालीमें प्लैटिनम या वेनेडियम (platinum or vanodium) ऐसे ही Catalyst का काम करता है। मकरध्वज प्रस्तुत-प्रणालीमें भी स्वर्ण ऐसा ही एक प्रयोजनीय Catalyst है।

इस प्रकार अनेक क्षेत्रोंमें ही सूक्ष्म परिमाण द्रव्यकी प्रयोजनीयता तथा कार्य-कारिताका प्रमाण मिलता है। अतः होमियोपैथीक औषधियोंके सम्बन्धमें हो परिमाणकी सूक्ष्मताको दुहाई देकर उसकी क्रियाशीलताके सम्बन्धमें सन्देह करना न्यायसंगत नहीं है।

इस विषयमें स्वर्गीय आचार्य रामेन्द्र सुन्दर त्रिवेदीका मूल्यवान मतामत सचमुच ही हमारा पथ-प्रदर्शन करता है :—"बहुतसे रोगोंका धारणा है कि होमियोपैथिक चिकित्सा नितान्त ही अवैज्ञानिक है। अन्य देशोंकी बात मैं नहीं कह सकता, किन्तु हमारे "बंगालमें होमियोपैथीके साथ विज्ञान-चर्चाका एक पक्का सम्बन्ध" घटनाचक्रसे जुड़ गया है। बंगालके गौरव महामना डा० महेन्द्र लाल सरकार जहाँ एक तरफ बंगालमें "होमियोपैथिक चिकित्साको प्रतिष्ठित कर गये हैं", वहीं दूसरी तरफ "विज्ञान-चर्चाकी प्रतिष्ठाके लिये भी वे अपना जीवन उत्सर्ग कर गये हैं।" इस देशमें होमियोपैथीके प्रचारके लिये जिन्होंने जीवन समर्पण किया है, उनमें बहुतेरोंको साधक कहा जा सकता है। डा० महेन्द्रलाल भी ऐसे ही एक साधक थे। इस साधनामें एक "वीरत्व" है। चारों ओर लोग व्यंग करते हैं, विद्रुप करते हैं और उस व्यंग-विद्रूपको ठुकराकर होमियापैथोंको एकान्त निष्ठा और श्रद्धाके साथ साधना करनी पड़ती है। एकनिष्ठ श्रद्धा न रहनेसे ऐसी साधना नहीं चल सकती। यह श्रद्धा बहुधा कट्टरतामें परिणत हो जाती है; किन्तु वहाँ भी क्षोभका कोई कारण नहीं है, क्योंकि उस कट्टरताके मूलमें एकनिष्ठा श्रद्धा विद्यमान है। * * * होमियोपैथिक डाक्टरकी इस कट्टरताका उदाहरण आपमें अनेकोंने देखा होगा और मन-ही-मन आप

हँसे भी होंगे। *** आप इसे कट्टरता कहना चाहें, तो कहें, किन्तु मैं इसमें साधककी एकमात्र निष्ठाका ही परिचय पाता हूँ। इस एकाग्रता, इस वायस-निष्ठाके बिना साधना नहीं होती। आप इस देशके वैष्णवोंकी कट्टरतापर दिल्लगी उड़ाया करते होंगे—कट्टर वैष्णव अन्य देवताका प्रसंग नहीं लेता ; किन्तु इसके मूलमें भी वही एकनिष्ठा साधना ही है। जो लोग विज्ञान-चर्चामें जीवन बिताया करते हैं, उनमें इस प्रकारके कट्टर साधक बहुत दिखाई पड़ते हैं। वे यदि विज्ञानको ही आनन्द और विज्ञानको ही ब्रह्मस्वरूप मनाते हैं, तो आप विस्मत न हों, ऐसी साधनाके बिना सिद्धि नहीं मिलती।

होमियोपैथी विज्ञान-सम्मत है या नहीं, यह मै नहीं जानता। आपने सुना होगा कि विज्ञान चर्चा करनेकी थोड़ी-बहुत आदत मुझमें है ; किन्तु मैं केवल शिक्षार्थीमात्र हूँ, विज्ञान-भिक्षुमात्र हूँ। भिक्षाकी झोली कंधेपर रख मैं विज्ञानाचार्योंके घर-घर पहुँचता हूँ। क्या विज्ञान है और क्या नहीं, इसपर बहुतेरे तर्क-वितर्क मैंने आचार्योंके मुँहसे सुने हैं। एक समय जो तत्त्व, जो सिद्धान्त जय ध्वजा लेकर वैज्ञानिक समाजमें खड़ा था, उसे ही दो दिन बाद मिटते देखा है। बहुतेरे ध्वजाएँ इस प्रकार गिर चुके हैं, किन्तु एक मोटा तत्त्व-विज्ञानकी भित्ति बनकर खड़ा है। उस भित्तिको त्यगनेसे विज्ञानका कोई मन्दिर खड़ा न रह सकेगा। "वह भित्ति प्रत्यक्ष प्रमाणकी भित्ति है।" विज्ञानके सामने प्रत्यक्ष प्रमाणके अतिरिक्त कोई प्रमाण नहीं है। "इन्द्रियोंको यथोचित तीक्ष्ण करके उन्हींकी सहायतासे प्रमाण संग्रह करना होगा।" प्रत्यक्ष प्रमाणसे लब्ध—अनेकोंके प्रत्यक्ष प्रमाणसे लब्ध—जो सत्य है, विज्ञानमें वही एकमात्र सत्य है। होमियोपैथीकी वैज्ञानिकताको लेकर अनेक तर्क मैंने सुने हैं। अनेक वाद-प्रतिवाद, अनेक सिद्धान्तोंका समावेश, अनेक तत्त्व-वार्ताएँ मैंने सुनी हैं ; किन्तु उनसे मेरा मन नहीं भरा। गोमुखोमें एक चम्मच बेलेडोना डालकर गंगासागरमें एक

चम्मच जल पीकर यदि फल पाता हूँ, यदि विज्ञान-सम्मत वैज्ञानिक रीतिसे संस्कृत प्रत्यक्ष-प्रमाण द्वारा उसका फल पाता हूँ तथा और भी बहुतेरे फल पाते है, यह देखता हूँ, तो मैं उसे निडर भावसे सत्य मान लेनेको प्रस्तुत हूँ। किस प्रकार फल मिला, इसे लेकर तार्किक सर खपायें। "विज्ञान-विद्याके सामने प्रत्यक्ष प्रमाण ही एकमात्र प्रमाण है।" —सन् १६१८ ई० में ३ मार्चको शिवपुर विज्ञान-मन्दिरकी प्रतिष्ठाके अवसरपर सभापति रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदीका अभिभाषण।

सच ही वैज्ञानिकोंके सामने प्रत्यक्ष प्रमाणसे अधिक और कुछ नहीं है। सैकड़ों और सहस्रों मतवाद या Theory की अपेक्षा जरा-सा सूक्ष्म-प्रमाण भी विज्ञानमें आदरके साथ ग्राह्य होता है (an ounce of fact is worth of tons of theories)। विज्ञानकी भित्ति है प्रत्यक्ष प्रमाण; अतएव यदि होमियोपैथिक मतकी सफलताके सम्बन्धमें कोई प्रमाण मिलता है, तो उसे ग्रहण करना ही विज्ञान-सम्मत है।

अब प्रश्न यह है कि होमियोपैथीकी कोई सीधी वैज्ञानिक भित्ति है या नहीं? परीक्षागारमें इस विषयकी प्रत्यक्ष परीक्षामूलक भित्ति खड़ा करना बहुत ही कठिन है; क्योंकि औषधिका परिमाण इसमें अत्यन्त कम है। इतनी सूक्ष्म परिमाणकी औषधिका फल भी अत्यन्त सूक्ष्म गतिसे होना स्वाभाविक है। अतएव प्रत्यक्ष फल पानेके लिये समयकी आवश्यकता हो सकती है और उस अवस्थामें अत्यन्त अध्यवसायके साथ उसकी परीक्षा करना कर्त्तव्य है। इसके अतिरिक्त जो यंत्रादि विज्ञानने हमें औषधके फलाफलकी परीक्षाके लिये दिये हैं, उनकी क्रियाशीलताकी एक सीमा है। हो सकता है कि हमारे आविष्कृत यंत्रादि होमियो-पैथिक औषधिके फलाफल निर्णयमें अधिक दूरतक कार्यकारी नहीं हुए—वे सम्भवतः बहुत ही स्थूल हैं और उनसे भी अधिक सूक्ष्म यन्त्रोंकी आवश्यकता है। हालमें Electron microscope या विद्युतीन

अनुवीक्षण यंत्रका आविष्कार हुआ है और उससे मनुष्यकी दृष्टि सूक्ष्म से-सूक्ष्मतर हो गयी है। इस इलेक्ट्रोन माइक्रोस्कोपकी सीमा भी क्रमशः और भी सूक्ष्मतर हो रही है। आशा है, इस यन्त्रकी सहायतासे अणु, परमाणु और उनके भीतरी योगायोगकी परीक्षा सम्भव हो जायगी। सम्भवतः इन यंत्रों द्वारा होमियोपैथिक औषधियोंका फलाफल ऐलोपैथिक औषधियोंकी भाँति परीक्षागार (laboratory) में ही जाना जा सकेगा।

किन्तु यह तो भविष्यकी बात है। इस आशाकी बातको छोड़ देनेसे भी क्या आज हम होमियोपैथीके स्वपक्षमें कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं दे सकते? हमारे वर्त्तमान ज्ञानकी भित्तिसे जो प्रमाण मिलते हैं, उनमें बहुतेरे ही परोक्ष हैं।

(१) प्रथमतः विख्यात वैज्ञानिक (Milikan, Ruther Ford Niels Bohr, Enistin, Murcurie आदि) एकमत हैं कि सभी परमाणुओं प्रभूत परिमाणमें शक्ति अन्तर्निहित है। अतएव सूक्ष्मांशोंमें विभाजित होमियोपैथिक औषधके परमाणुओंमें भी विपुल शक्तिका रहना असम्भव नहीं है।

(२) प्राणी-विद्या-विशारदों (Biologists) ने प्रमाणित किया है कि जीव-पंक (Protoplasm) ही जीव-शरीका भौतिक उपादान है। यही जीवाणु-कोषोंका आदिम उपादान यानी उद्भिद और प्राणी-देहका मूल उपादान (material basis of life) है। जीवाणु कोषोंका यह जीव-पंक सुशृंखल अवस्थामें रहनेसे हम उसे स्वस्थ कहते हैं और विशृङ्खल अवस्थाका नाम रोग है। उत्तेजक पदार्थके द्वारा जीवनकी क्रियाशीलता परिवर्तित की जा सकती है। अतएव जीवनी-शक्तिकी विशृङ्खलता या ह्रासावस्था होनेसे उत्तेजक पदार्थ द्वारा जीवनी-शक्तिकी क्रिया बढ़ाई जा सकती है। इस दृष्टिसे औषधियोंकी जीव-पंकका रसायनिक उत्तेजक (chemical stimullii) या जीवनी-

शक्तिका क्रियावर्द्धक पदार्थ मानना असगत न होगा। "शक्तिशाली उत्तेजक (a large stimulus)" द्वारा जीवनकी क्रियाशीलता प्रतिरुद्ध होती है और अपेक्षाकृत "न्यून शक्तिशाली उत्तेजक" द्वारा जीवनी-शक्तिकी क्रियाशीलता बढती है।

अतएव होमियोपैथिक औषधियोंका गुणागुण इस ओरसे भी समझा जा सकता है। हो सकता है कि अति सूक्ष्म मात्राकी भी औषधियाँ रासायनिक उत्तेजक या Chemical stimullii का कार्य करती हो।

(३) प्रसिद्ध वैज्ञानिक (Pasteur, Kouch, Roux, Von, Behring) द्वारा प्रवर्तित रक्ताम्बु (antitoxin) चिकित्सा-प्रणालीमें भी अत्यन्त सूक्ष्मांशमें विभाजित औषधि प्रयोग की जाती है और उसके द्वारा पागल कुत्ते आदिके काटनेके रोग, यक्ष्मा, डिफ्थीरिया और धनुष्टकार आदि रोग सहजमें ही दूर किये जाते हैं। इस कम मात्रामें औषधिके प्रयोगका फल देखकर भी क्या कोई होमियोपैथीको अस्वीकार कर सकता है ?

प्रसिद्ध वैज्ञानिकोंमें वान बेरिंगने होमियोपैथीके सम्बन्धमें जो अभिमत दिया है, वह उल्लेख-योग्य है (Beitragezur experimenteller therapeutics, Heft II, Prof Von Behring Berlin, 1906)—

"तेरह वर्ष पहले मैंने Berlin Physiological Societyके सामने अत्यन्त सूक्ष्म परिमाण Tetanus antitoxinकी रोग-प्रतिरोधक शक्ति सबके सामने परीक्षा द्वारा प्रमाणित की थी और यह भी बताया था कि किस प्रकार यह विष जन्तुके शरीरमें प्रवेश कराकर यह Antitoxin बनाया जाता है। जन्तुके शरीरमें प्रवेश कराये गये विषका परिमाण जितना कम होता है, उसका Antitoxin भी उतना ही अधिक कार्यकारी होता है—इस विषयपर भी मैंने उस समय प्रकाश डाला था।

"दुरारोग्य व्याधियोंको दूर करनेमें मैं देखता हूँ कि सूक्ष्मतम परिमाणमें दी गयी औषधिकी अपेक्षाकृत अधिक कार्यकारी होती है, अतएव होमियोपैथिक चिकित्साको ग्रहण करनेमें मुझे कोई द्विधा नहीं है, यह मैं जोरके साथ कह सकता हूँ।"

(४) सन् १६१३ में Dr. Anshutz विशुद्ध रेडियमका ६०x (७०x) क्रम आधा ड्राम लेकर इसकी रश्मिके भीतर कोई पदार्थ रखकर फोटोग्राफ प्लेटके ऊपर ४८ घंटे रश्मिपात (exposure) करनेके बाद स्पष्ट फोटोग्राफ प्राप्त कर सके थे। अर्थात् प्रखर अनुवीक्षण यन्त्रसे भी अगोचर ६०x क्रममें भी रेडियम विद्यमान रहती है और उसकी रश्मिसे फोटोग्राफ मिल सकती है, इससे यह प्रत्यक्ष प्रमाणित होता है कि ६०x क्रमको औषध भी विज्ञान सम्मत है।

(५) जर्मनीकेStuttgart BiologicalInstitute की डायरेक्टर वैज्ञानिक मैडाम कलिस्को (४६२०-३७ तक) उद्भिद जीवोंपर शक्ति-कृत औषधिके प्रभावके सम्बन्धमें गवेषणा करके सूक्ष्म मात्राकी औषधिके बारेमें निम्नलिखित सिद्धान्तपर पहुँची है :—भेषज वस्तु वर्त्तमान रहती है, इसलिये निम्न-शक्तिकी औषधिके द्वारा गीले वीजसे उत्पन्न उद्भिदकी उपयुक्त वृद्धि नहीं होती। दूसरी ओर उच्चतर शक्तिकी औषधिमें भेषज वस्तुकी मात्रा जितना ह्रास पाती है, उन सब औषधियोंसे गीले बीजसे उत्पन्न उद्भिद उतना ही अधिक वृद्धि पाते हैं। प्राच्य और पाश्चात्यके बहुतेरे वैज्ञानिकोंने उनकी गवेषणाका फल प्रत्यक्ष देखा है और उसे स्वीकार भी किया है। (Homœopathic Herald नामकी पत्रिकाके सन् १६३६ की मार्च संख्यासे)।

(६) इसके अतिरिक्त उद्भिद और प्राणी-जीवनमें Trace elementके प्रभावके विषयमें भी हम आलोचना कर चुके हैं। Trace element की कार्यकारिताके विषयमें यदि हमें कोई सन्देह नहीं है, तो होमियोपैथीक औषधिमें सन्देह होनेका कोई कारण नहीं रह सकता।

पथ-प्रदर्शक पण्डित सभी अवसरोंपर अपने सम-सामयिकों द्वारा सामादृत नहीं होते—विज्ञान और दर्शनके इतिहासमें ऐसे दृष्टान्तोंका अभाव नहीं है। बहुतेरे वैज्ञानिक अपने मतामतोंके कारण अपने जीवन कालमें अशेष लांछना भोग चुके है, यहाँतक कि उन्हें प्राण भी खाने पड़े है और बादको यह भी देखा गया है कि उन्हींका मतामत विश्वमें अमूल्य सम्पदके रूपमें ग्राह्य होनेके कारण उनका चिरस्मरणीय हो गया है। सुकरात और गैलिलियोंका नाम इस सम्पर्कमें विशेष उल्लेख योग्य है। अपने जीवन-कालमें उन्हें जो लांछन और अपेक्षा भोग करनी पड़ी थी और अन्तमें जिस तरहसे मृत्युदण्डको गले लगाना पड़ा था, आज उन्हींके प्रवर्तित,जीवनसे भी प्रिय वही सत्य सिद्धान्त मानव-समाजमें समादार पा रहे हैं, अतः उनके लिये अब दुःख नहीं है ; क्योंकि, आज वे मृत्युजयी महावीर तथा मानव सभ्यताके अग्रदूत है।

हैनिमैन भी ऐसी ही महामानवोंमें हैं। सौ वर्षसे भी अधिक हुए वे अपनी सुतीक्ष्ण अभिज्ञता तथा बुद्धिसे जड़के अन्तरतम प्रदेशमें जिस अतिन्द्रिय शक्तिके अस्तित्वपर विश्वास रखते थे, आज बिंश शताब्दीका विज्ञान उसे स्वीकार करनेको बाध्य हुआ है। एक दिन था, जब उनके द्वारा प्रवर्तित होमियोपैथी उपेक्षित और उपहासास्पद भी, किन्तु आज वह दिन नहीं रहा। बिंश शताब्दीके उन्नत वैज्ञानिकयुगमें होमियोपैथीके मतको न मानने या उड़ा देनेकी सामर्थ्य अब किसीमें नहीं है। इतने दिनोंमें इसकी वैज्ञानिक भित्ति सम्यक स्पष्ट न होनेपर भी क्रमशःबोधगम्य होती आ रही है। मानव सभ्यताके अग्रदूत हैनिमैनके सम सामयिक तड़ित्-विज्ञानके प्रतिष्ठाता डा॰ गलवानीको भी एक दिन दुःखसे कहना पड़ा था—"विज्ञानवित्" और "कुछ नहीं जानता", इन दो सम्प्रदायोंसे मैं आक्रान्त होता आ रहा हूँ। दोनों पक्षके लोग मुझे मेढकोंका नचाने-वाला" कहकर मेरी खिल्ली उड़ाते है ; किन्तु मैं निस्सन्देह जानता हूँ कि मैंने प्रकृतिकी अन्तर्निहित एक महान शक्तिका आविष्कार कर लिया है।"

परिशिष्ट (ख)

धातुदोष और उसका निराकरण

("तरुण लौर चिर रोग"—१४३ पृष्ठ देखिये)

[होमियोपैथिक चिकित्सामें थोड़ी वहुत अभिज्ञता हुए बिना विद्यार्थी पाठक इस "परिशिष्ट (ख)" का प्रकृत मर्म ग्रहण नहीं कर सकते]।

प्रणिधान योग्यः—उपक्रमणिका अध्यायमें कहा गया है, कि १७६० ई० महाप्राण हैनिमैनने "होमियोपैथिक" का आविष्कार किया है ; परन्तु बहुत दिनोंतक होमियोपैथिक मतसे चिकित्सा करके उन्होंने देखा कि यथोपयुक्त औषधको प्रदान करनेपर किसी-किसी रोगीकी बीमारी एकदम आरोग्य नहीं होती, कुछ दब-भर जाती है। ऐसा क्यों होता है, १८१६ ईस्वीमें उन्होंने इस तथ्यकी खोज आरम्भ की। प्रायः बारह वर्षोंतक गवेषणा करने बाद उन्होंने यह सिद्धान्त स्थिर किया कि प्रमेह" "उपदंश" या "सोरा-विष" रोगीके शरीरमें वर्त्तमान रहनेपर ऐसा होता है। इस अध्यायमें उन तीनों प्रकारके धातुदोष वर्णन किया जायगा। "रजित-रोग" (पृष्ठ ६२६) "हैनिमैनके वताये हुए नये और पुराने रोगीके लक्षण (पृष्ठ १४२) और होमियोपैथीक मतसे रोग-लक्षण लिखनेका संकेत (पृष्ठ १४६) के साथ इस परिशिष्टको मिलाकर पढ़नेपर, सदृश-विधानाचार्यके मतसे सब तरहके पुराने रोगकी चिकित्सा करनेकी और होमियोपैथीके "मूलतत्व" (first principles) के समझनेमें बहुत सहायता मिलेगी। होमियोपैथी या "समविधि" के मूलतत्वको अच्छी तरह हृदयंगम न कर होमियोपैथिक चिकित्सा करनेकी

चेष्टा एक बिडम्बना मात्र है। वर्त्तमान होमियोपैथीक चिकित्सा-जगतके एकछत्र सम्राट महात्मा केण्टने यथार्थ ही कहा है, कि "यह सत्य है, कि होमियोपैथी सम्पूर्ण भूमण्डलमें परिव्याप्त हो पड़ी है ; परन्तु बड़े ही विस्मयका विषय है, कि जो होमियोपैथीकी उपासनाका दावा करते हैं, उनके द्वारा ही होमियोपैथीका 'मूलतत्व' अधिकतर बिगड़ता आ रहा है। नवीन चिकित्सक और कृतविद्य गृहस्थ महाशयोंका यह वाक्य विशेष रूपसे स्मरण रखना चाहिये। परन्तु बड़े ही परितापका विषय है आजतक बंगालके किसी होमियोपैथिक ग्रथके होमियोपैथीके प्रकृत मूलतत्वकी आलोचना न होनेके कारण, नये और पुराने रोगकी चिकित्साका संकेत नहीं पाया जाता। अतएव आशा है कि ये ऊपर बताये चारों अध्याय ध्यानसे पढ़नेपर यह कमी बहुत कुछ पूरी हो जायगी।

धातुदोषनय—नये रोगकी चिकित्सा करते समय ठीक-ठीक चुनी हुई दवाका प्रयोग करनेपर भी कभी-कभी इच्छानुसार लाभ नहीं दिखाई देता। ऐसी अवस्थामें समझना चाहिये कि रोगीकी रक्त दूषित हो गया है और वही दूषित रक्त (उपयुक्त होमियोपैथिक दवा सेवन करनेपर भी) आरोग्यमें विघ्न पैदा करता है। हैनिमैन कहते हैं कि तीन कारणोंसे (जैसे—सोराविष, उपदंश विष और प्रमेह विष रक्तमें प्रवेश करनेपर), यह "रक्तदोष या धातुदोष(dyscrasia)" पैदा हो जाता है अर्थात् धातुमें (constitution) कच्छु-विष (psora) प्रवेश करनेपर "कच्छु-दोष" उपदंश (syphilis) विष संक्रमण करनेपर उपदंश दोष और प्रमेह विष (sycosis) संक्रमण करनेपर 'साइकोसिस' ("मापक दोष") पैदा हो जाता है। वे विष तीनों अलग-अलग स्वतन्त्र रूपसे हो या सम्मिलित आकारमें हों, रोगी शरीरमें रहते तो हमलोग उसे "चिर-रोग" कहते हैं (नया और चिर-रोग अनुच्छेद पृष्ठ १४३ देखिये)। सभी धातुदोष या चिर-रोग स्पर्शाक्रमक (conta-

gious), कुल संक्रमक (hereditary)* और अन्तर्मुख (from outward to inward) होते हैं और इनकी 'प्रारम्भ' और विकास ये दो ही अवस्थाएँ होती हैं (ह्रासावस्था नहीं होती)। यह भी याद रखना चाहिये कि निसर्गज रोग-निशानी-शक्ति धातु-दोषको दूर नहीं कर सकती ।

जिन्हें कोई धातुदोष रहता है उनको कोई नयी बीमारी या सामान्य बीमारी होनेपर भी वह जटिल हो जाती है। यह सन्देह होते ही कि "धातुदोष" है, रोगीका पूर्व वृत्तान्त (past history) वगैरह अच्छी तरह जानकर, यह निर्णय करना चाहिये, कि इसे कौन-सा धातु-दोष है और इसके वाद उस धातु-दोषको दूर करनेके लिये पहले दवा देनी चाहिये ; इसके वाद (अर्थात् धातुदोष कुछ दब जानेपर) आवश्यकतानुसार नयी बीमारीकी दवा देनी चाहिये। कितनी ही वार ऐसा भी होता है, कि धातु-दोषघ्न दवाके सेवन करते ही धातु-दोष साथ-ही-साथ नयी बीमारी भी आरोग्य हो जाती है। अतएव ऐसे स्थानपर नये रोगकी अलगसे चिकित्सा ही नहीं करनी पड़ती है। डा० रिडपथका कथन है, कि धातुदोष ही नये रोगका पूर्ववर्ती कारण है—धातुदोष यदि न रहे, तो कभी नये रोगकी उत्पत्ति नहीं हो सकती (Dr. Ridprth's Law of Cure page 6 देखिये)।

---

* यदि एक वर्षके किसी बच्चेको सुखण्डी (marasmus) हो जाये और दो वर्षकी उम्रमें यदि उसमें यक्ष्मा रोगके लक्षण तथा वृद्धोंकी तरह चेहरा दिखाई दे तो समझना होगा, कि उसने अपने माता-पितासे कोई धातु-दोष ग्रहण किया है अर्थात बच्चेकी शीर्णता और यक्ष्मा-रोग-प्रवणता ये दोनों ही शिशु धातु-दोषत्रयके साधारण लक्षण हैं। उनका प्रकृतिगत या विशेष लक्षण पूर्वोक्त प्रत्येक "धातु-दोष" के वर्णनके समय स्वतंत्र भावसे लिखा जायगा।

हैनिमैनोक्त त्रिदोषका लक्षण और ओषधियाँ आदि अब संक्षेपमें बताये जाते हैं।

(क) कच्छु-दोष (Psora—सोरा)—कई हजार वर्ष पहले कुठव्याधि (या अकौताकी तरहके एक प्रकारका चर्मरोग) इतना फैला कि मनुष्य घबड़ा उठे। नाना प्रकारकी दवाओंके सेवनसे और बाहरी प्रयोगके कारण उक्त रोग नष्ट न होकर शरीरके भीतर दब (suppressed) गया और इस तरह उसने रक्तको दूषित बना दिया। इसी दबी हुई खुजली या चर्म-रोगका नाम "सोरा" या भीतरी "कच्छु विष"। वंशपरम्परासे यह "सोरा" नाना प्रकारके आकारमें (जैसे—अर्बुद, कुरूपता, सर्दी, यक्ष्मा, बहुमूत्र, हृत्कम्पन या मानसिक रोग आदिके रोगमें) प्रकट हुआ करता है। महामति केण्टका कथन है, कि "सोरा" "मानव-प्रकृतिगत दोष" आदि व्याधि हैं और प्रमेह रोग (तथा सभी नयी बीमारियाँ) "सोराके ऊपर ही अधिष्ठित हो रही है"—"सोरा" यदि न रहता, तो मानव-शरीरपर कोई भी बीमारी आक्रमण नहीं कर सकती। रजित-रोग (veneral diseases) के सिवा समस्त धातुगत (constitutional) और यान्त्रिक (organic) रोग भी भीतरी सोराके ही दिखावे हैं। जैसे पुरानी यकृतकी बीमारी एक अलग या स्वतन्त्र बीमारी नहीं है। यह यकृतमें सोराका रहना—अधिष्ठान (localisation) भर है; इसी तरह हृत्पिण्ड, फेफड़ा, मस्तिष्क, गुर्दा (kidney) आदि पुरानी बीमारियाँ भी अलग-अलग नहीं हैं, उन-उन यन्त्रोंमें यही समझना चाहिये कि सोरा पैदा हुआ है। "रुका हुआ सोरा" से कैन्सर (cancer) रोग हृत्पिण्ड और फेफड़ेकी बीमारियाँ और यक्ष्मा आदि शरीरको ध्वंस करनेवाली बीमारियाँ पैदा होती हैं।*

* हैनिमैनने निम्नलिखित रोगोंका उल्लेख किया है:—स्नायविक-दौर्बल्य, गुल्म-वायु (hysteria), अवसाद वायु (hypochondria), उन्माद रोग

"सोरा-विष साधारणतः रक्तवहा नाड़ियों (blood vessels) और यकृत (liver) को दूषित बना देता है और चर्ममें "पीव और फोड़ा" (boils) उत्पन्न कर देता है। स्पर्श (जैसे—हाथ मिलाना, पहने हुए वस्त्रका व्यवहार) द्वारा, यहाँतक कि साँस या छींकके साथ सोरा-ग्रस्त व्यक्तिसे यह विष स्वस्थ शरीरमें संक्रमित हो जाया करता है। विद्यालयके सहपाठियोंके श्वासके साथ वह स्वस्थ बालकोंमें संक्रमित हो जाया करता है।

यदि देखिये कि यथोपयुक्त होमियोपैथिक दवाका प्रयोगकर भी कोई नयी बीमारी आरोग्य न हो रही है या उसका भोगकाल बेहद बेकार बढ़ता जा रहा है अथवा यदि यह दिखाई दे, कि किसीका चर्म फटना या अकौता, खुजली, घाव या एकजिमा बराबर ही लगा रहता है या कभी-कभी शरीरपर जल-भरी फुन्सियाँ पैदा हो जाया करती है या हाथकी कलाईके पास बीच-बीचमें चर्म-रोग हो जाया करते हैं अथवा

(mania), विषाद वायु (melancholia), जड़ता (idiocy), क्षिप्तता (madness), मृगी और सब तरहके आक्षेप (epilepsy and convulsions of all sorts), अस्थि-विकार (rachitis), कर्कटिका (cancer), अस्थिक्षत (caries), रक्तकी तरह उपमांस या मसा (fungus hæmatodes), अर्बुद (neoplasms), ग्रंथिवात (gout), बवासीर, पाण्डु (icterus), नील-रोग (cyanosis), शोथ (dropsy), रजोरोध, पाकस्थली, नाक या फेफड़ा या मूत्राशय अथवा जरायुरोगसे रक्त-स्राव, दमा फेफड़ेमें पीव-संचय, ध्वजभंग और वन्ध्यत्व, अधकपारी सर-दर्द, बहरापन, मोतियाबिंद, अस्वच्छ दृष्टि (glacoma), मूत्र-पथरी (renal calculus), पक्षाघात, इन्द्रियोंके यथोपयुक्त कार्य करनेमें असमर्थता, सब तरहका शारीरिक दर्द प्रभृति इस सोराके ही अभिव्यक्ति हैं [The Organon Section 80 देखिये]।

बीस वर्ष पहले हाथकी सन्धियोंमें घमौरीकी तरह उद्भेद निकलते थे और इसके बाद नखोंमें विकार पैदा हो गया अथवा यदि यह सुननेमें आये कि जस्ता (zinc) अथवा गन्धक आदिका मरहम या कोई दूसरी अनिष्टकर धातु आदिसे बनी हुई बाहरी प्रयोगकी दवा लगानेकी वजहसे कोई चर्म-रोग बैठ गया है और उसके बादसे ही कोई तेज बीमारी पैदा हो गई है, तो समझना चाहिये कि रोगीके शरीरमें "सोरा" छिपा हुआ बैठा है।

सोराका दोष दूर करनेके लिये सल्फर ३०—२०० प्रधान दवा है। सोरिनम, कैल्के-कार्ब, लाइको, सिपिया, सिलिका, हिपर, नेट्रम-म्यूर, ग्रेफाइटिस, आर्सेनिक, ऐल्यूमिना, कास्टिकम, मेजेरियम, पेट्रोल, कार्बो-एसिड, टियुबरक्युलिनम, आरम-मेट, नाइट्रिक-एसिड, गुयेकम, बोरैक्स, जिंक, आयोड, बैराइटा-कार्ब, लैकेसिस, फास्फोरस प्रभृति दवाएँ (ऊँचे क्रममें) सोरा-दोषको नाश करनेवाली होती है। (antipsorics)।

"सल्फर वगैरह सोरा दोषघ्न दवाएँ सेवन करनेपर कभी-कभी दवा हुआ भीतरी सोरा, किसी चर्म-रोगके आकारमें शरीरके बाहरी भागमें प्रकट हो जाता है। ऐसी अवस्थामें समझना चाहिये कि रोग आरोग्यकी ओर अग्रसर हो रहा है" और दवा कुछ दिनोंतक बन्द रखनी चाहिये।

सोरा-दोष-नाशक दवाएँ सेवन करनेका मुख्य समय—सवेरे, गर्भावस्थामें, ऋतुमें पाँचवें दिन, ऋतुके समय और ऋतु होनेके कुछ ही "पहले या बाद दवा सेवन मना है।"

(ख) उपदंश-दोष (Syphilis सिफिलिस)—उपदंश-विषसे दूषित मनुष्यके साथ संगम करनेपर अथवा चर्मके कोई पतले (या छिन्न) अंशमें उस विषका स्पर्श हो जानेपर, स्वस्थ शरीरमें भी उपदंश-दोष फैल जाता है। इस विषके संक्रमणके बाद लगातार तीन अवस्थाएँ एकके बाद दूसरी दिखाई देती हैं :—(१) विष संक्रमणके एक या दो

सप्ताहके बाद उस विष लगे स्थानपर पहले एक जल भरी फुन्सी (vesicle) की तरह दिखाई देती है, इसके बाद यह जल भरी फुन्सी एक कठिन क्षत (chancre) हो जाती है और वंक्षणदेश या पुट्ठे तथा बगलमें गांठ हो जाती है। पुट्ठेकी गांठको बाघी कहते हैं। (२) कठिन छ्त होनेसे कम-से-कम दो महीनेके भीतर गलेमें जखम, ज्वर, अस्थियोंमें दर्द, नाना प्रकारके चर्मोद्भेद (syphilides), जखम केश झड़ जाना, नख विकार, उपतारा-प्रदाह (iritis),लसिका ग्रन्थियोंका बढ़ना वगैरह लक्षण प्रकट होते हैं और अन्तमें (३) लगभग डेढ़ वर्ष बाद—अस्थिवेष्टाबुर्द या गमेटा (gummata) अर्थात् अस्थि चर्म, मस्तिष्क, यकृत, अंडकोष, जरायु वगैरह शरीरके सभी यन्त्रोंमें और अंग-प्रत्यंगमें टियुमर या अर्बुदको उत्पत्ति या पीव पैदा हो जाता है। नाक, कंठनाली, मस्तक, तालु, मलनाली प्रभृति स्थानोंकी हड्डीमें जखम होना या सड़ जाना प्रभृति उपसर्ग दिखाई देने लगते हैं। कमजोर देहमें उपदंश विष संक्रमित होनेपर. ये तीनों अवस्थाएँ बहुत धीरे-धीरे प्रकट होती हैं ; पर बलवान शरीरमें बहुत तेजीसे और बड़े प्रचण्ड वेगसे ये तीनों अवस्थाएँ उपस्थिति हो जाया करती हैं। होमियोपैथिक मतसे ठीक चिकित्सा होनेपर, वह यथा-समय निर्दोष रूपसे आरोग्य हो सकता हैं ("उपदंश" रोग देखिये) ; परन्तु कुचिकित्सा या नाना प्रकारकी अनिष्टकर औषधि आदिके प्रयोगकी वजहसे उपदंश विष शरीरके भीतरी प्रदेशमें प्रवेश करनेपर रोग प्रायः भयंकर हो जाता है, उस समय बहुत होशियारीसे उपयुक्त होमियोपैथिक औषधका प्रयोगकर वह कल्मष शरीरके भीतरसे बाहर लाना पड़ता है।

किसी पुरानी बीमारीमें यदि "दोनों पार्श्वकी कपालास्थिमें बेहद दर्द, एकदम स्वास्थ्यनाश, मानसिक दुर्बलता, अस्थि-वेष्टका अर्बुद" (gummata) और गहरा जखम (deep-seated ulceration) प्रवणता, "रातके समय" (अर्थात् सूर्यास्तसे सूर्योदयतक) तकलीफका

वदना प्रभृति लक्षण दिखाई देते हैं, तो यह सब देखते ही समझना होगा कि रोगीकी देहमें उपदंश दोष छिपाकर बैठा हुआ है। इसके अलावा यदि किसी बच्चेका कपाल ऊँचा सामनेके ऊपरी भागमें चारों दाँत कघीकी तरह कटे कटे और नाककी जड़ बैठी हुई अर्थात् चिपटी दिखाई दे, तो स्पष्ट मालूम होता है कि इसके मुँहमें उपदंश विष घुसा हुआ है* अर्थात् उसके पिता या माताके ऊपरी अर्थात् तीन चार पुश्तमें किसी-न-किसीको निश्चय ही उपदंश हुआ है।

'उपदंश-दोषमें प्रधानतः अस्थि और अस्थिवेष्ट (periosteum) और मस्तिष्कपर रोगका आक्रमण हुआ करता है।" उपदंश दोषके चर्मोद्भेद, गाठे (tubercular), यह वास्तविक स्फोटक (boils) नहीं है, इसलिये साराजात स्फोटकादि चम-रोगके साथ उसका भ्रम होनेकी सम्भावना कोई भी नहीं है।

उपदंश-दोष निराकरणार्थ "मर्क-सोल" ६—२०० उत्कृष्ट दवा है। सिफिलिनम, हिपर नाइट्रिक एसिड, आरम-मेट, नेट्रम-म्यूर, साइलि, नेट्रम-सल्फ लैकेसिस, आर्सेनिक, गुयेकम, ग्रैफाइटिस, लाइको, केलि-बाई प्रभृति दवाएँ (उच्चक्रममें) उपदंश दोषघ्न हैं। यदि चुनी हुई दवा सेवन करनेपर भीतरी उपदंश कल्मष शरीरके बाहरी भागमें गलक्षत, उपताराका प्रदाह (iritis) प्रभृति आकारमें प्रकट हो, तो समझना चाहिये कि रोग आरोग्यकी ओर अग्रसर हो रहा है।

पिता माताओंमें किसीको भी उपदंश दोष रह, तो इस बातके लिये कि वह उनके वंशमें न फैले—निम्नलिखित उपाय करना चाहिये — "गर्भावस्थामें और जितने दिनोंतक बच्चा स्तन पीता रहे, तबतक माताको पक्षमें एक मात्र "सिफिलिनम" ३० और नित्य "मर्क-सोल" ६ (सवेरे)

---

* ऊँचा कपाल, कंघी-जैसा दांत और चिपटी नाक—इस बातको पैतृक उपदंशमें याद रखना चाहिये।

सेवन करना चाहिये। इसके सेवन करनेपर भी यदि बच्चेमें शीर्णता वगैरह लक्षण पाये जायें, तो बच्चेको नित्य सवेरे और सन्ध्याके समय मक-सोल ६ एक-एक मात्राके हिसावसे देना चाहिये (बाल-रोग अध्यायमें "धातु दोष" या वंशगत रोग" देखिये।

(ग) प्रकृति-प्रमेह-विष (Sycosis साइकोसिस)—डा० केण्ट और हैनिमैनका कथन है, कि प्रमेह-विष दो प्रकारके हैं :—नया और पुराना। नया विष फैलनेपर, स्थानिक (local) प्रमेह रोग पैदा होता है, इस कारणसे इसकी "प्रारम्भ", विकाश और "क्षय" ये तीनों अवस्थाएँ एकके बाद दूसरी आती हैं और पुराना कल्मष संक्रमण करनेपर सार्वाङ्गिक (constitutional) प्रमेह रोग पैदा होता है ; इसलिये इसकी "प्रारम्भ" और "विकाश" दो ही अवस्थाएँ होती हैं। "प्रकृत प्रमेह-दोष" या साइकोसिस (अर्थात् माषक-दोष) है। दोनों प्रकारके विष ही संक्रमण करनेवाले हैं और विष फैलानेके प्रायः आठ-दस दिन बाद मूत्रमार्गका प्रदाह (urethritis) रोगकी तरह इन दोनों ही प्रमेह रोगोमें मूत्र-मार्ग (urethra) से श्लेष्मा पीब मिला मवाद (muco-purulent discharges) निकला करता है। पिचकारी द्वारा नाइट्रेट आफ सिलवर वगैरह स्थानिक दवाएँ प्रयोग करनेपर कितनोंका ही यह स्राव बन्द हो जाता है, परन्तु इन सब उपायोंसे स्राव बन्द करना बहुत ही अनिष्टकारक है। "मूत्र-मार्ग प्रदाह" और रजित-रोगाध्यायमें "प्रमेह" रोग देखिये।

"स्थानिक (या साधारण) प्रमेह रोग" में सिर्फ मूत्रयन्त्रपर ही आक्रमण हुआ करता है, सारा शरीर दूषित नहीं होता। पेट्रोसेलिनम θ इसकी उत्कृष्ट दवा है। कैनाबिस-सैट, कैन्थरिस या कोपेवाकी भी कभी-कभी आवश्यकता पड़ा करती है। दोनों प्रकारके प्रमेह रोगोंमें, इस देशमें स्थानिक प्रमेह रोगकी संख्या ही अधिक दिखाई देती है। "सोरा"

धातुगत मनुष्यको स्थानिक प्रमेह रोग होनेपर पहले सीरा-दोषको नष्ट करनेवाली दवाका प्रयोग करना चाहिये और उसके बाद स्थानिक प्रमेह रोगकी चिकित्सा करनी चाहिये।

हैनिमैन कहते हैं, कि "साइकोटिक (या यकृत) प्रमेह" एक गुरुतर बीमारी है, यह सारे शरीरको दूषित बना देती है। "हमेशा बीमारीका आरम्भ होते ही उसका स्राव पीवकी तरह गाढ़ा, पेशाबमें तकलीफ, अपेक्षाकृत कम, पुरुषांग *(लिंगेन्द्रिय)* फूली और कुछ कड़ी और किसी-किसी को पुरुषांगकी पीठपर गांठदार गुटिकाएँ (glandular tubercles) होती हैं और दर्द हुआ करता है। "सगमेन्द्रियके चारो ओर गूलर और फूलगोभीकी तरह मस्से या उपमांस (excrescenes) हो जाते हैं।" यह साइकोसिसका प्रधान लक्षण है। गूलरकी तरह होनेवाले मस्से प्रायः सूखे रहते हैं और फूलगोभीका फूल (या मुर्गेकी चोटी) के आकारवाली श्लेष्मा गुटिकाएँ साधारणतः स्पञ्जकी तरह 'कोमल' रहती हैं और उनसे सहजमें ही रक्त-स्राव होता है। कास्टिकसे जलाना, छुरी आदि अस्त्रसे काटना, या कसकर बाँधना प्रभृति किसी भी उपायसे यदि यह शरीरसे हटा दिया जाता है या सुई (injection) का प्रयोगकर स्राव बन्द कर दिया जाता है अथवा यदि बहुत अधिक मात्रामें पारद आदि (mercury etc.) सेवन किया जाता है, तो स्राव क्रमशः बन्द होता जाता है और तब नीचे लिखे उपसर्ग पैदा हो जाया करता है :—अत्यधिक पैशिक (muscular) दुर्बलता और उग्रदाहिता (irritability), उत्कठा यातना या "विकट भय", स्नायविक दुर्बलता (neurasthenia), दमा या वायुनलीके रोग-समूह (bronchial affections); हाथकी अंगुलीका नख-विकार और तलहत्थीमें (palms) उद्भेद ; मूत्रमार्गका स्राव बन्द करनेके बादसे या उपमांसको हटानेके बादसे "वात-रोग" का (विशेषकर घुटना और एँड़ी) सूत्रपात हो जाता है। केश सूखे, मानो जले-जले, रागीणिके बाधकका दुःसह दर्द होता है या डिम्बकोष

प्रदाह या "बन्ध्यत्व" पैदा होता है, अंधड़-पानीके दिनोंमें दिनके समय (अर्थात् सूर्योदयसे सूर्यास्ततक) "यन्त्रणाकी वृद्धि हो जाती है।"

और अधिक दिन (अर्थात् दस-पन्द्रह वर्षतक) रोग भोगनेपर साधारणतः नीचे लिखे लक्षण दिखाई देते हैं। "रक्त-हीनता", मोमकी तरह चेहरा, सफेद ओंठ, कान स्वच्छ, शरीरमें कितने ही स्थानोंमें मसे ; आँख और "नाकसे गाढ़ा पीली आभा लिये हरा (yellowish green) श्लेष्मा" निकलना ; मूत्र-यंत्र, श्वास-यंत्र या यकृतके कड़े रोग ; बहुत ही तेज वात रोग (मूत्र मार्गका स्राव रुकनेकी वजहसे), अण्डकोष या सरलान्त्रका प्रदाह पैदा होकर रोगीको "तकलीफसे बेचैन बना" डालता है। उरुदेशमें पैरकी पोटलीमें और तलवेमें ऐंठन या अकड़नकी वजहसे रोगी खड़ा नहीं हो सकता या बड़ी तकलीफसे लंगड़ाकर चलता है।

यदि किसी बच्चेका चेहरा मोमकी तरह रक्तहीन हो जाये या अजीर्णके कारण दस्तके साथ खायी हुई चीज निकले या प्रत्येक गर्मीकी ऋतुमें हैजाकी तरह दस्त हुआ करे, तो समझना चाहिये कि बच्चेकी देहमें "साइकोसिस" उसके माता-पितासे आया है और छिपा हुआ बैठा है।

थूजा ३०, २००—रुके हुए साइकोसिस रोगकी प्रधान दवा है। मिडोरिनम, कैल्के-कार्ब (विशेषकर नाकसे गाढ़ा पीली आभा लिये हरे रंगका श्लेष्मा निकलता रहनेपर), नाइट्रिक-एसिड, कैल्के-फास, (विशेषकर रक्तहीनताके साथ एकशिरा रहनेपर), कैलि-आयोड θ—३०, हिपर-सल्फर, पल्सेटिला, मिलिफोलियम, एसिड-फास, साइलिसिया नेट्रम-म्यूर, कैलि-सल्फ, नेट्रम-सल्फ, नेट्रम-फास, सैबाइना, आर्जनाइट्रिकम, आर्स, बोरैक्स, कास्टिकम, क्लिमेटिज, ग्रैफाइटिस, हाइड्रैस्टिस, नक्स-वोम, कैलि-बाई, सिपिया प्रभृति दवाएँ भी (३-३० शक्तिमें) माषक-दोषको नाश करती हैं, चुनी हुई दवा सेवन करनेपर

"यदि रुका हुआ स्राव मूत्रमार्गसे निकलने लगे," तो समझना चाहिये, कि रोग आरोग्यन्मुख हो गया है।

मिश्रधातुदोष—कभी दो और कभी कभी तीन धातुदोष एक साथ ही एक ही रोगी देहमें वर्त्तमान रहते हैं, इसपर भी तेज-तेज ऐलोपैथिक दवाएँ अधिक मात्रामें सेवन करनेकी वजहसे चर्म रोग आदि शरीरके भीतर प्रवश करनेपर रोग अक्सर दुरारोग्य हो जाता है। ऐसे स्थलपर हैनिमैनका यही उपदेश है, कि सबसे पहले सोरादोष नाशक दवाका प्रयोग करना चाहिये, इसके बाद उपदंश या प्रमेह दोष इन दोनोंमें जिसके लक्षण अधिक स्पष्ट हों, उसकी ही चिकित्सा पहले करनी चाहिये और इसके बाद बाकी धातुदोपका निराकरण करना चाहिये।

त्रिदोषके सम्बन्धमें कुछ और बातें :—

(१) सभी धातुदोषकी "प्रारम्भ" और "विकास" ये दो अवस्थाएँ होती है। इनके अलावा "विकासवस्था" की प्राथमिक (primary), "गौण (secondary)", परिणत (advanced) प्रभृति "अवान्तर अवस्थाएँ" (substages) होती हैं। जिस अवान्तर अवस्थाके ही धातुदोष स्वस्थ व्यक्तिमें संक्रमित होता है, उसी अवान्तर अवस्थाके ही लक्षण उस समयसे ही उस व्यक्तिमें प्रकाशित होने लगते हैं, जिसमें रोग संक्रमित होता है और यथा समय उसकी परवर्त्ती अवस्थाके लक्षण सब दिखाई देते हैं, परन्तु उस अवान्तर अवस्थाके पूर्ववर्ती कोई भी उपसर्ग संक्रमित व्यक्तिमें उपस्थित नहीं होते। जैसे—स्त्री-पुरुष दोनोंमें स्वामीको उपदंश दोष रह और यदि गौणावस्थामें संगम द्वारा वह स्त्रीमें संक्रमित हो जाये, तो प्राथमिक अवस्थाके जखम आदि कोई लक्षण उस स्त्रीके शरीरमें प्रकाशित नहीं होते, परन्तु गौणावस्थाके चर्म रोग आदि (Syphiloderma) और बादके उपसर्ग उसमें यथा-समय

प्रकट होते हैं।* "मापक-दोष" के सम्बन्धमें भी ठीक ऐसा ही नियम है। परिणतावस्थामें सोरा दोषवाली स्त्रीसे संसर्ग करनेपर उसी परिणतावस्थामें सोराग्रस्तके साथ खेल-कूदमें निश्वास-वायु लगकर भी स्वस्थ बालकमें सोरा चला जाता है और बढ़ा करता है।

---

* एक सहृदय माननीय अस्त्र चिकित्सक the late lamented Dr. J. Kanjilal who died of heart disease in Sep. 22 last ने हमारी ऊपर लिखी उक्तिपर कहा था "Not true—Primary and Secondary symptoms not observed always. The poison of Syphilis taken from any stege is the same poison and will produce the same symptoms with stages. Similarly, with the gonorrhoea virus."

इस सम्बन्धमें हमारी उक्तिके समर्थनके लिये, हैनिमैन प्रणीत साधन या Organon की व्याख्या करते समय महामति केण्ट साहबने Post Graduate school of Homœopathics नामक विद्या मन्दिरमें जो सब अमूल्य उपदेश प्रधान किये थे और इसके बाद जो Homœopathics Philosophy के नामसे ग्रन्थाकार प्रकाशित हुए थे, उससे पाठकोंकी जानकारीके लिये निम्नलिखित कई पंक्तियाँ उद्धृतकी जाती है :—

Syphilis is transferred from husband to wife and it is *taken up in the stage in which it then exists* and from thence goes on in a progressive way. The woman catches it from the man in the stage in which he has it at the time of their marriage; she takes that which he has, if he has it in advanced stage; she takes it in that stage; she takes from him the stage he has to offer. *This is egually true of psora and sycosis.* Such things never occur in the acute miasms, but the three chronic miasms have contagion in the from in which they exist at the time. (Lecture XX).

(२) वंश परम्परागत या कुल संक्रमण भी ऊपर बताये नियमके ही अधिन है और प्रमेह आदिसे दूषित माता-पिताके सन्तानोत्पत्तिके समयकी "धातु-दोष अवस्था" के उपसर्ग उस शिशुमें जा पहुँचते हैं और ऐसे बच्चोंमें जो धातु दोष प्रवेश करता है, वही धातुदोष-प्रणता (अर्थात् प्रमेह आदि रोग ग्रहणका प्रभाव) उसके धातुके बादके समयमें भी दिखाई देता है।

(३) "सिफिलिस", "सोरा" या "साइकोसिस" मानव-देहपर "केवल एक वार"* आक्रमण किया करते हैं ; जीवनमें कभी भी दो या उससे अधिक वार किसीको भी प्रकृत उपदंश या सोरा अथवा असली प्रमेह रोग हो नहीं सकता। यदि कोई कहे कि उसे छः वार (सुजाक) हुआ है, तो समझना होगा, कि असली प्रमेह उसे केवल एक वार हुआ था—मापक दूषित धातु कभी भी दूसरी वार "प्रकृत प्रमेह विष" ग्रहण नहीं कर सकता।

कहना वृथा है, कि कुछ दिनोंतक धीरताके साथ परीक्षा करनेके बाद अभिज्ञता पैदा होनेपर नवीन चिकित्सकोंका जो मत ठीक मालूम हो, वही उन्हें ग्रहण करना चाहिये

* "एक वार सुजाक आराम हो जाने बाद फिर नया विष लगनेपर नये सिरेसे गोनोरिया (सुजाक) होता है"—यह बात एक प्रसिद्ध बंगला होमियोपैथिक चिकित्सा ग्रन्थमें पढ़कर बहुत आश्चर्य हुआ ; उस पुस्तकके बहुतसे संस्करण हो गये हैं, इसलिये इस सम्बन्धमें कुछ न कहना ही अच्छा है ; परन्तु विशुद्ध होमियोपैथीको विशुद्धिके लिये अपना जीवन जिन्होंने उत्सर्ग कर दिया था, उन्हीं धर्मप्राण बहुदर्शी चिकित्सक डा० केण्ट रचित ग्रन्थ सभी शिक्षार्थियोंको बहुत ध्यानसे पढ़ना चाहिये।

इसके अलावा पारिवारिक चिकित्सा बंगलाका नवम संस्करण प्रकाशित होनेपर कलकत्तेके एक विख्यात डाक्टरने हमलोगोंकी बातोंका प्रतिवाद किया था

(४) चिर-रोगमें दवा सेवन करनेके बाद—(क) यदि पहले ऊर्द्धाङ्गके (जैसे—माथेके) और इसके बाद निम्नांगके (जैसे—हाथ-पैर आदिके) उपसर्ग गायब हों (Symptoms disappearing from above downwards), (ख) यदि पहले शरीरीके भीतरके उपसर्ग और इसके बाद शरीरके बाहरी (जैसे—चर्म आदिके) उपसर्ग क्रमसे हीं (Symptoms disappearing from within outwards) या (ग) किसी रोगके धारावाहिक उपसर्गों यदि सबके अन्तवाला उपसर्ग सबके पहले आराम हो और इसके बाद उसके पूर्ववर्ती उपसर्ग क्रमसे आरोग्य हों (Symptoms disappearing in the reverse order of their coming), तो समझना होगा, कि प्रकृत होमियोपैथिक दवाका चुनाव हुआ है। जैसे—हृद्‌गह्वरको ढकनेवाली झिल्लीके प्रदाहमें (endocarditis) दवा सेवन करनेके बाद यदि घुटनेमें या एँड़ीमें सूजन दिखाई दे या कलेजेमें दर्दकी दवा प्रयोग करनेके बाद यदि कोई चर्मरोग प्रकट हो, तो समझना होगा, कि ठीक दवाका चुनाव हुआ है।

उसके उत्तरमें उन्हें विनम्र भावसे हमारा कथन है, कि "As regads the note with refrence to the fresh attack of Sycosis or of Syphilis. we would observe that we are firm belivers in Dr. Kent's view which has been frequently confirmed during our limited experience."

जो हो, विद्यार्थी और सुधी पाठक महाशयोंकी जानकारीके लिये शिकागो हैनिमैन होमियोपैथिक मेडिकल कालेजके मेटीरिया-मेडिकाके अध्यापक विख्यात डा० काउपरथायट (M.D.ph., D.L.L.D) पेरिसके सुविख्यात Saint Jacques Hospital के चिकित्सक और होमियोपैथिक अंतर्राष्ट्रीय महासभा (held at the Piers World fair in July 1900) के सभापति फ्रेंच डा० Pierre Jousset M.D. न्यूयार्क होमियोपैथिक मेडिकल कालेजके चिकित्सा शास्त्रके अध्यापक और फ्लावर अस्पतालके बहुदर्शी चिकित्सक डाक्टर सैण्डज मिल्स

(५) रोगके लक्षण-समूहोंका सादृश्य देखकर चिह्न रोगकी दवाका चुनाव करना पड़ता है और चुनी हुई दवाकी उच्च-शक्ति (जैसे—३०-२०० एक एक मात्रा सप्ताहमें केवल एक बार या उच्चतम शक्ति १०००—१०,००,००० एम, एम, क्रम ४५ दिनोंमें या महीनेभरका अन्तर देकर या तीन-चार मासके अन्तरसे एक-एक मात्रा) देनी पड़ती है। औषध सेवनके बाद कुछ लाभ दिखाई देनेपर दवा कुछ दिनोंतक स्थगित रखनी पड़ती है। इसके बाद आवश्यक होनेपर वह दवा या

(A B. M D.) होमियोपैथिक जगतका आदरणीय The Homœopath Recorder नामक मासिक पत्रके भूतपूर्व सम्पादक ,डा० पेन्सुटन M. D. और विशुद्ध होमियोपैथिक दर्शन-शास्त्रके प्रणेता हनहम मेडिकल कालेजके अध्यापक पुरानी बीमारियोंकी चिकित्सामें सिद्धहस्त डा० केण्ट (A.M M.D.) प्रभृति साहबोंके ग्रंथ आदिसे कुछ अंश उद्धृत कर दिया :—

"A person having once acquired Syphilis can *rarely* be reinoculated" और *the coosequnces of the tertiary stage* often remain *permanently*—Cowperthwaite's *Practice* pp. 7-9 and 7>5 देखिये।

2. When a physician permits a syphilitic to marry he should inform him before hand that his security is *not absolute* as testiary manifestations have occurrde ten, twenty thirty and even fifty seven years after an *adparent* cure—Pierre Joussets *Practice of Medicine* Translated by J. Arscha gouni, M-D. page 67 देखिये।

3. Tertiry symptoms (of syphilis) may develop even *fifty years after the disease has apparently disappeared.* और 'A simple gonorrhœa may be cured although at best a cure is very *uncirtain*. Many patients have *recurrent* attacks,

कोई दूसरी दवा रोगीकी अवस्थाके अनुसार प्रयोग करनी पड़ती है। (आर्गेनन देखिये)।

अधिक विवरण के लिये, इस ग्रन्थका हैनिमैनोक्त नया और पुराना रोग अध्याय (Hahnemanns *Chronic Diseases*, Kents *Lectures on Hom. Philosopy*, Allens Chronic Miasms Vol 1 & 11 और Bidwells *How to use the Repertory*) देखिये।

---

which are probably *only* recrude *scenes* of the original trauble,"—Walter Sands Mills *Practice* pages 184 and 175 देखिये। Needless for us to add that Mills work is the latest best Homœopathic *Practice of Medicine.*

4. Many physicians of *experience* contend that a man *never gete rid of this virulent poison of gonorrhœa.* Those who have contracted it got rid of discharge ottending discomfort, think they are cured and the many ills they may suffer afterwards.........may be *due directly to the infection*"—E. P. Ansutz's the Sexual Ills, Page 50 देखिये।

5. 'Man can only have one *attack* in his natural lifetime of one the *three chronic miasms, a man cannot take syphilis twice he cannot take sycosis twice. he cannot take psora twice.* This is not known, a man when asked how many times he has had gonorrœa will say ; "About half a dozen' times'; but only one of these was sycotic. The *Sycotic constitution cannot be taken a second time* One attack gives imnunity to that persons for ever after,"—Kent's *Lecture on Homœo. Philosophy, 1st* Edition, page 174 देखिये।

The *Italics* are ours.

परिशिष्ट (ग)

जीवाणु-तत्त्व और जीवागम-रहस्य

("गर्भ-धारण"—पृष्ठ ६७५ देखिये)

पाँचवें या छठे संस्करणके किसी-किसी वयोवृद्ध सम्माननीय समालोचकने यह कहा है कि "वर्त्तमान कालमें जो कल्पनाका विषय है, भविष्यमें उसीके वास्तविक विषय होनेमें बाधा क्यों पड़ेगी। अद्भुत-कर्मा आधुनिक विज्ञान, जब पूर्वके कवियोंके कल्पनातीत विषयको भी कार्यमें परिणतकर अघटन संघटित कर रहा है, तब यह जीव सम्भव समस्या वह क्यों न परिपूर्ण कर सकेगा। इसके अलावा, किसी-किसी जानकार पाठकके मुँहसे भी यह सुननेमें आता है कि जब कृमि, मच्छर, जूँ, मत्कुण आदि प्राणिगण क्लेदसे आप-ही-आप उत्पनन्न होते हैं, तब रासायनिक प्रक्रियाके बलसे जड़में प्राण-प्रतिष्ठा करनेकी चेष्टा क्या किसी समय भी फलवती न होगी? इन दोनों श्रेणियोंके ही प्रश्न करनेवाले महोदयोंको आगे कहे हुए चारों विषय खूब धीर-भावसे समझनेका अनुरोध करता हूँ।

१। स्मरणातीत कालसे ही सब देशोंके मनीषियोंने नाना प्रकारके पदार्थोंके संयोग, वियोग आदि कार्य द्वारा चेतना शक्ति उत्पन्न करनेकी बारम्बार चेष्टा की है और बार-बार असफल हुए हैं। पाश्चात्य रसायन-शास्त्र भी यह काम असम्भव समझकर इस सम्बन्धमें हस्तक्षेप करनेके लिये तैयार नहीं है। १८७२ ई० में डाक्टर बैस्टियनने जब "स्वतःजनन" के मतसे अनुकूल युक्ति प्रदर्शन करनी चाही, तो वैज्ञानिक-जगतमें उपहासास्पद हो गये और उनका रचा हुआ ग्रन्थ Beginings

of Life (1872) and Evolution of Life (1907) नामक दोनों ग्रन्थ काल-विस्मृतिके अतल जलमें डूब गये। उस दिन कैम्ब्रिजके वैज्ञानिक बक साहबकी कैवेण्डिसकी परीक्षाशाला (laboratory) में रसायनिक प्रक्रियाके प्रभावसे रेडियम (radium), बावरिल (bovril) आदिके संयोगसे जीव उत्पन्न हुआ करता है—इस ढंगकी एक घोषणा हुई है (Vide Burke's *Origin of the life* and Mc Cabe's from *Nebula to men*); परन्तु शायद पाठक भूले न होंगे, कि इस महा आडम्बरका परिमाण क्या हुआ था और जीवकी सृष्टि न होकर निरर्थक वितंडा रंगालयकी सृष्टि हुई थी।

२। अंडमें कुछ अम्लजान (oxygen), कुछ उद्‌जान (hydrogen) और कुछ परिमाणमें यवक्षारजान (nitrogen) रहता है। विज्ञानने खूब खोर-ढूंकर यह पता तो लगा लिया है; परन्तु कोई भी वैज्ञानिक पण्डित उन उक्त उपादानोंको यथोचित परिमाणमें मिलाकर आजतक ऐसा अण्डा तैयार न कर सका, जिसके फटनेपर पक्षीके बच्चे, यहाँतक कि वेंगचीके समान निकृष्ट जीव भी पैदा हो सके? अर्थात् विज्ञान जिन कई उपादानोंके सम्बन्धमें कहा करता है, उनके अलावा और भी कुछ ऐसा पक्षी आदिके-अण्डेमें अवश्य है, जिसका पता वर्त्तमान विज्ञानको आजतक नहीं लगा है और जिस उपकरणकी कमीके कारण रसायनिक प्रक्रिया द्वारा तैयार किये हुये अण्डेमें जीवका पैदा होना सम्भव नहीं होता।

३। वर्त्तमान कालके रसायनवेत्ताओंने बहुत तरहकी परीक्षाओंके बाद यह सिद्धान्त किया है, कि हंसनी और मुर्गीके अण्डेके उपादान सहधर्मक—एक ही प्रकारके हैं, उनमें कोई पार्थक्य नहीं है और वे समानुपातिक (अर्थात् सूक्ष्मतम कांटेके वजनके अनुसार सम-परिमाण-वाले हैं। दोनों ही रसायनिक उपादान समजातीय और समान परिमाणमें मिश्रित हैं और दोनों ही अचेतन अण्डेका आवरण फोड़कर

विचित्र साज सज्जासे विभूषित दो अपूर्व जीव निकला करते हैं; पर एकका अण्डा क्या मराल शावकके रूपमें बदल जाता है और तैर सकता है और दूसरेके अण्डेसे निकला हुआ जीव क्यों चोटीवाले वेशमें पैदा होता है और पानीमें तैर नहीं सकता? इससे स्पष्ट मालूम होता है, कि विभिन्न जातिके अण्डेमें विभिन्न प्रकृतिके और भी मौलिक उपादान विशेष अवश्य ही छिपे हुए भावसे मौजूद है, जिनका पता लगा लेना रसायन विज्ञानकी सामर्थ्यके परे है और जिस अतीन्द्रिय उपकरणके *प्रभावसे हंसनीका अण्डा फटकर हंस-शावक ही निकलता है और मुर्गीका* अण्डा तोड़कर मुर्गीका बच्चा ही अभ्रान्त रूपसे निकलता है। इसके अलावा, क्या यह भी एक रहस्यमय व्यापार नहीं है, कि नारी-गर्भके भीतरवाला भ्रूण पहले (१) अणुकोष (cell) मात्र रहता है, इसके बाद वह क्रमसे (२) शून्य गर्भ थैली, (३) वल्ल-मास्य, (४) मत्स्य, (५) नाना प्रकारके नभचर और स्तन्यपायी जीव और (६) बन्दरका वेश धारणकर अन्तमें (७) नरदेह धारणकर इस पृथ्वीपर आ पहुँचता है Hæckel s Evolution of man देखिये)? जिस तरह कई बुन्द दधि बीज, बहुतसे दूधको दहीमें परिणत कर सकता है और यीस्टका एक कण जिस तरह चार-पाँच मन चीनीको पदार्थान्तरके रूपमें बदल सकता है, दर्शनके अध्यापक फिशर (Fischer) प्रमुख विद्या-विशारदगण कहते हैं कि प्राणी और उद्भिदके शरीरसे निकला हुआ बहुत तरहका रस भी उसी तरह शरीरस्थ बहुतसे पदार्थोंको रूपान्तरितकर जीवनी शक्तिको प्रकट करता है (अर्थात् "जीवन व्यापार थोड़ेसे रासायनिक व्यापारके परिमाणके सिवा और कुछ नहीं है)—इसी धारणासे संगठन विज्ञानके बलपर परीक्षागारमें नकली प्राणी तैयार करनेकी वे आशा कर रहे हैं। अतएव, क्या हम उससे पूछ सकते हैं कि अन्न, जल प्रभृति शरीर गठनोपयोगी पदार्थोंमें, जो विपुल शक्ति छिपी हुई है और जिस छिपी हुई शक्तिको जागरितकर प्रकृति जीवसे जीवन क्रिया करा

लेती है, जो अद्भुत शक्ति उद्भिज और प्राणीदेहमें आजीवन विद्यमान रहकर शरीरकी समस्त रसायनिक क्रियाका परिचालन करती है, उस शक्तिका क्या किसीने अबतक परिचय पाया है अथवा उस अपरिचित महाशक्तिके पैर सींकलमें बाँध क्या कोई वैज्ञानिक उसे किसी दिन परीक्षाके काँचके नलमें प्रवेश करा सका है? अतएव, जो विज्ञानकी दोहाई देकर बड़े हर्षके साथ इस पहेलिका पारावाको पारा किया चाहते हैं, उन्हें पूर्वोक्त कृपापात्र वैस्टियन और बर्क साहबकी उछल-कूदके अवश्यम्भावी फलकी बात फिर याद कर लेनी चाहिये।

(४) पकाया हुआ अन्न अथवा दूध, दही प्रभृति खानेकी चीजें कई दिन रख छोड़नेपर उसमें छत्ता लग जाता है और कुछ दिनों बाद यह चीज सड़नी आरम्भ हो जाती है तथा उसमें छोटे छोटे कीड़े दिखाई देने लगते हैं। ये छोटे-छोटे कीड़े कहाँसे आये? प्राचीन कालके विद्वानोंकी धारणा थी कि ये कीटाणु इन खाद्योंसे स्वय ही पैदा हो जाते हैं। क्रिमि, केचुआ, कीड़े आदि नाली, पाखाना आदिमें दिखाई देते हैं, इसलिये इनकी उत्पत्ति क्लेदसे होनेके कारण ही एक धारण के वंशवर्ती हो, इनका नाम क्लेदज रख दिया और यह भी विश्वास करनेके लिये कि ये "स्वतः जनन" है (Aboigenesis or Spontaneous Generation); परन्तु रेडि, लीनवेल, होयेक, हेल्म-होल्तज, पैस्टेडर, टिण्डल, लीस्टर प्रभृति लब्धप्रतिष्ठ विज्ञानाचार्योंने दो सौ वर्षतक १६६०— ८६६ ईस्वीतक) प्रभूत अध्यवसाय और सूक्ष्मतम यन्त्र आदिकी सहायतासे बहुत तरहकी कठोर परीक्षाओके बाद निःसंशय रूपसे यह निरूपित किया है, कि ये पूर्वोक्त कीट स्वतः जात आप-हो-आप उत्पन्न) नहीं हैं—इनकी उत्पति हवामें उड़ते हुए धूलके रूसी जीवाणुसे हुई है। पृथ्वीके सभी स्थानोंमें हमलोगोंको धूलके कण दिखाई देते हैं; आचार्य टिण्डलने परम यत्नसे नाना प्रकारकी परीक्षाके बाद प्रमाणित किया है कि सारे जगतमें फैली हुई यह धूल वास्तवमें

सर्वांशमें धूल नहीं है (इसका स्थल भाग धूलके कण और सूक्ष्मांश जैव-पदार्थ क्षुद्र-क्षुद्र प्राणी है। ये धूलकण रूपी असख्य आनुवीक्षणिक जीवाणु बीज (Germs of Bacilli) जल, स्थल, हवा, आकाश सब जगह छाये हुए है ; हमलोग साँस या खान-पानके समय हजारों जीवाणु नित्य शरीरमें ग्रहण करते हैं। ये ही वास्तवमें मैलेरिया, हैजा, प्लेग, चेचक, यक्ष्मा प्रभृति रोगोंके मुख्य* कारण और फैलनेवाले हैं ; गले हुए पदार्थ या सड़े जखममें जो कीड़े दिखाई देते हैं, वे इन्हीं सूक्ष्म-शरीर जीवोंके वंशधर हैं। इन वायुमें रहनेवाले अप्रत्यक्ष जीवाणुके प्रभावसे ही दूध खट्टा हो जाता है। शराब, खजूरका रस वगैरह तरल मीठे पदार्थोंमें फेन या उफान (Fermentation) या ताड़ी पैदा हो जाती है, मानव-शरीरका कोई स्थान कट जानेपर ये जीवाणु उसी स्थानपर आक्रमण करते हैं और रोगवाली जगहपर पीब पैदा हो जाता है। वास्तवमें, आधुनिक वैज्ञानिक जगतने स्वतःजनन मत त्याग दिया है। जीव समागमके सम्बन्धमें वर्त्तमान कालके विज्ञानाचार्यों ने यह सिद्धान्त निश्चित किया है कि केवल प्राणीसे प्राणीकी उत्पत्ति हुआ

---

* वर्त्तमान कालके कीटाणु तत्वविदोंका कथन है, कि एक जातीय जीवाणुसे एक एक स्वतन्त्र प्रकारके रोग उत्पन्न हुआ करते हैं ; जैसे—"कैमा बैसिलस" नामक कीटाणु हैजा रोगोत्पादक है, "बैसिलस पेस्टिस" प्लेग महामारीका उत्तेजक कारण है इत्यादि (पृष्ठ २४१—२८९ देखिये) हैजा, प्लेग, प्रभृति रोगग्रस्त व्यक्तियोंके दस्त कै आदिमें उक्त जीवाणु दिखाई देते हैं, इसीलिये कीटाणु तत्वज्ञ उक्त जीवकुलको उस-उस रोगके आक्रमणका मुख्य कारण समझते हैं (अर्थात् वे कीटाणु स्वस्थ शरीरपर आक्रमण करनेसे ही रोग आदि पैदा होते हैं), पर क्या ऐसा नहीं हो सकता है, कि किसी कारणसे हमारा स्वास्थ्य भग होनेसे ही उक्त जीवाणु हमारे शरीरको उनकी आवास भूमि बना लेते हैं अर्थात् हमलोग अपने कामोंसे उन्हें अपने शरीरमें बुला लेते हैं। "रोग-बीज" पृष्ठ १८७ देखिये।

करती है—इसके विपरित नहीं होता। अनुसंधित सुस्पष्टवादी विज्ञानने दो शताब्दीकी अनवरत गवेषणा और कठोर साधनाके परिणामस्वरूप यह परम-तत्व जगतके सामने निःसंशय रूपसे प्रतिपादित किया है, परन्तु इस स्थानपर यह कहना उचित है, कि इन उल्लिखित जीवाणुओंके जनक (अर्थात् प्राथमिक जीवाणु अंकुर) किस तरह इस धरातलपर आ पहुँचे, इस विषयमें आधुनिक वैज्ञानिकोंमें घोर मतभेद दिखाई देता है। "अतीत युगके किसी शुभ मुहूर्त्तमें अद्भुत रसायनिक शक्तिके प्रभावसे एकाएक जड़में प्राणकी प्रतिष्ठा होकर विवर्त्त (या क्रम विकास) के नियमानुसार बहुत दिनोंसे और बहुत-सी अवस्थाओंका विपर्य्यय होनेपर भी भूमण्डल क्रमशः नाना प्रकारके जीवोंसे भर गया है; स्वाती नक्षत्र पूर्ण सिद्धयोगका वह महेन्द्रक्षण अब बीत गया है, इसलिये जगतकी वर्त्तमान अवस्थामें रासायनिक प्रतिक्रियासे जीव उत्पन्न होता नहीं दिखाई देता है" कहकर जो सब विज्ञान-सम्बन्धी प्रबन्ध लेखक मासिक पत्रोंमें भाषाके आडम्बरसे सजाकर या किसी तरह भानमतीका पेटारा सजाकर अपनी-अपनी कल्पना-शक्तिकी पराकाष्ठा दिखाते हुए जीवोत्पत्ति समस्याको पूर्ण कर डालते हैं, उनकी बात ही छोड़ देनी चाहिये; क्योंकि उल्लिखित उत्कट मीमांसाका विश्लेष यही है, कि "स्वतःजनन-मत" विवर्त्तवादकी सहायतासे प्रमाणित होता है और (पक्षान्तरने) "विवर्त्त-मत" स्वतःजननवाद द्वारा अनायस ही प्रतिपन्न किया जाता है—यह नया निकाला युक्ति-जाल उनके सरल विश्वासका यद्यपि परिचय प्रदान करता है, पर यह विस्मृत-प्रायः "बीजांकुर" की तरह या धोखाकी अपेक्षा भी सूक्ष्मतर हो सकता है, पर दुर्भाग्यवश परीक्षा पर्यवेक्षण मूलक नवीन विज्ञान या विछार-मूलक प्राचीन न्याय-शास्त्र उसका बिलकुल ही समर्थन नहीं करता। विज्ञान-जगतके सम्राट असामान्य प्रतिभा सम्पन्न लार्ड केलविन कहते हैं, कि आदिमें जीवाणु अंकुर उल्कापिण्डमें विद्यमान था, इसके बाद उल्कापिण्डके साथ वह जमीनपर गिरकर युग-युगान्तर

वश विस्तार करता हुआ क्रम-विकासके नियमानुसार नाना प्रकारके जीवमें परिणत हुआ है। सब प्रकारके विज्ञान विशारद जर्मन पंडित हेल्म-होल्वज और युरोपके बहुतसे प्रसिद्ध विद्वान इसी मतका समर्थन करते है, परन्तु आचार्य जोलनर (Zollner) ने इसका प्रतिवाद किया है। प्राज्ञ रिक्टर (Richter) साहब कहते हैं, कि महाकाशका सभी स्थान अति सूक्ष्म जीवाणु अंकुरसे भरा हुआ है—ब्रह्माण्डव्यापी ये अकुर उपयुक्त भोजन, वायु, ताप पानेपर बढ़ते हैं और कालक्रमसे कितने ही विभिन्न लोगोंमें नाना प्रकारके जीवके रूपमें आविर्भूत हुआ करते हैं। १२४४ पृष्ठमें कहा गया है, कि जड़में शक्ति (energy) छिपे रूपसे रहा करती है, खास-खास अवस्थाओंमें वह प्रकट होती है। बंगाल देशके गौरव विश्वविख्यात यशस्वी विज्ञानाचार्य Sri J. C. Bose, Kt., M. A , Dsc., C. I. E., C. S. I. महाशयके गवेषणापूर्ण Kesponse in the Living and the Non-Living नामक ग्रन्थ पढ़नेपर इस बातका बहुत कुछ आभास मिलता है, कि "ज्ञान या बोध" (अर्थात् चेतनाशक्ति Sensitivity भी) उस तरह प्रच्छन्न भावसे मौजूद है और अवस्था विशेषमें प्रकट हुआ करती है। *

---

* वेदान्तिकोंके लिये यह तथ्य बिलकुल ही नया नहीं है: युरोपीय विद्वानोंतकने इसे स्वीकार किया है; (Barclay Lewis Day) साहब लिखित (*Our Heritage of Thought*) नामक ग्रन्थसे नीचे लिखी कई पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं।—

"The Vedanta boldly asserts that *life* is latent even in what we call inorganic substance. There is no such thing as dead *matter* says the vedantist. "The whole universe is one life is one thought, is *Brahma*."

All honours however, to our Dr. Bose for unique service he has renderd to modern science by demonstra-

अपने-अपने बनाये यंत्रोंसे उन्होंने प्रमाणित किया है, कि उद्भिजके स्नायु भी उत्तेजित होनेपर शब्द करते हैं अर्थात् सुख-दुःख या "सजीवताका" परिचय प्रदान करते हैं। हेकेल प्रमुख मार्जित जड़द्वैतवादीगणने कहना आरम्भ किया है (vide Haeckels *Reedle of the Universe* pp. 57-868 Wonders of life) कि ब्रह्माण्डके प्रत्येक अणु परमाणुमें तीन गुण वर्त्तमान हैं :—(१) व्याप्ति (Extension), (२) बल (Force) और (३) अनुभूति (Sensation),

---

ting *unity of life*, A deep sense of awe is evoked in us when we think that it was reserved for an Indian to substantiate by *experimental* methods the bold ascertion that life is latent in all things—of our hoary forefathers of venerable antiquity. In the words of his Excellency the late Governor of Bengal (Lord Ronaldshay)." "Sir Jagdish appears to be one of the ancient sages re-incarnated in the modern epoch to prove by rigid scientific demonstration the existence of a world in which *life is omnipresent.*"

A. Neatby M. D. in his *reflections presented to the International Homœopathic Council* of the Hague on August 26, 1920 says :—

The very latest acceptance of the principal (the dual action of drugs the Similia Similibus Curentur of Hahnemann) I noticed in the column of the *Morning Post*, a London Newspaper, in its issue of July 28th that Journal Comments on the works of an Indian scientist Sit Jagdish Bose. After starting that Bose belived that plants react to influences—e. g. wireless electric stimulation—not felt by the most sensitive human beings, he adds and stranger still *he has proved* (italics mine) that even metals are stimulated by small doses of poison, large doses abo-

परन्तु जड़वादियोंके बड़े आदरके "परमाणु" अपनी कायाका अपवर्त्तनकर अरूप शक्तिसागर-गर्भमें सदाके लिये लीन होनेका रहस्य तत्त्व ("परिशिष्ट क" देखिये) क्या उस जड़ाद्वैतवादका पोषण करते हैं? वर्त्तमान विज्ञानके एक प्रधान नायक ऐरेनियस (Arrhenius) साहबके मतसे किसी दूरके सजीव नक्षत्रसे आदिम अति सूक्ष्म जैव-बीज विश्वव्यापी आलोकके दबावके कारण परिचालित हो पृथ्वीपर आ पड़ा है, परन्तु आधुनिक पण्डितोंके अन्यतम नेता बेकेरेल (Becquerel) इस मतके प्रतिकूल मत देते हुए कहते हैं, कि "इस आलोक तरगमें ऐसी जीवाणु नाशक रश्मि वर्त्तमान है कि उससे उक्त जीवाणु अङ्कुर कभी सजीव अवस्थामें पृथ्वीपर पहुँच ही नहीं सकते" और "उल्कापिंड या आलोकके आघातसे किसी दूसरे ग्रहसे जीवाणु बीज जमीनपर गिरना या महाशून्यमें जीवाणु बीजका उड़ते रहना" वाला मत यदि मान भी लिया जाये तो यह प्रश्न सहजमें ही उठ खड़ा होता है, कि "उक्त उल्कापिण्ड या ग्रहमें अथवा अन्तरीक्षमें आदिम जीवाणु अङ्कुर किस तरह पैदा हो गये?" अर्थात "जीवागम समस्या हमलोगोंकी विद्या-बुद्धिके माप-जोखके परे है"—जड़ विज्ञान आजतक इसकी मीमांसा न कर सका और मालूम होता है, कभी भी "कर न सकेगा।"

---

lishing the response Hare is our cardinal principle extended to the inorganic world It is of course acknow ledged every where in vaccine therapy In the *Lancet* of February last an annotation states that there is urgnt need to stir the mystaery surrounding the fact that the same agent can set up an ugly pathological process, meaning a—Similar not an identical process, the *Lancet* has never heard of Hahnemann's Law? —The *Homœopathic World* February, 1921 (pp 47 56) देखिये।

बल्कि, जीवोत्पत्तिके प्रसंगमें रसायन शास्त्रकी ओरसे पंडिताग्रगण्य सर हेनरी रस्की, प्राण बिद्याके नामसे विवर्त्तमतोद्भावयिता भुवन विख्यात डार्विन और विद्वान वालेस साहब तथा वैज्ञानिक अज्ञेयवादके आदि प्रचारक आबाल-वृद्ध-परिचित आचार्य हकसली, जड़ विज्ञानकी ओरसे असमान्य बुद्धिमान आधि-विद्या-विज्ञान-कवि महात्मा टिण्डल और विवर्त्तन दर्शनके पक्षसे स्वनामधन्य महान दार्शनिक मनस्तत्वविद् ऋषिकल्प हर्बर्ट स्पेन्सर और बीसवीं शताब्दीके क्रम-विकासवादके समर्थन कारियोंके अग्रणी फ्रेञ्च दर्शन-शास्त्रवेत्ता पूज्यपात बर्गसोने विनम्र-भावसे यही आभास दिया है, कि उनकी अपनी-अपनी आराधिता विद्या इस विषय समस्याके परिपूर्ण करनेमें एकदम असमर्थ है; बल्कि दीर्घ कालतक मस्तिष्क-चालनेके बाद आजीवन विज्ञानं सेवी महामहोपाध्याय सुकीर्तिके साथ-साथ यह विशेषज्ञ बुद्धमण्डली एक वाक्य और सम-स्वरसे स्वीकाद कर गयी कि दृश्यमान इस माया-पटकी ओटमें छिपी हुई अवाङ्—मानस-गोचर कोई एक ऐसी "अव्यय विराट-शक्ति" (One Inflnite and Eternal Energy) है, जिसके प्रभावसे यह आश्चर्यजनक व्यापार हुआ करता है।*

अब हमारा यह कहना है, कि सर्ववाद सम्मत विश्वव्यापिनी मनो-वाणीसे अतीत वह महागूढ़ महाशक्ति, जो जीवका जीवन और प्राणीका प्राण तथा जो जीव और उद्भिदके हितार्थ अधीन स्थूल-शक्तियोंको लगातार कल्याणके पथपर परिचालित करती है, वह "आद्या-शक्ति" अंब

---

* क्या वरद्म नवीन युरोपीय विज्ञान साधक श्रेष्ठ उन महात्माओंका अप्रत्याशित अनुभूति-राज्यके क्षीण आलोकसे तरङ्गित चरम सीमापर पहुँचनेका रहस्यवाद भारतके मुकुट विश्ववन्दित प्राचीन आर्य ऋषिकुलका ध्यान-लब्ध वह नित्य शाश्वत चिर देदीप्यमान "परम सत्य" या महासत्यके सम्बन्धमें साक्षी नहीं दे रहा है।

है या चिन्मयी—वह "परा-शक्ति" ज्ञानहीन है या उसके मूलमें मंगलमय सदिच्छा छिपी हुई है अर्थात् नवीन विज्ञान शास्त्रमें भी शुभ्यारष्टवाद प्रसंग* क्या समीचीन है—क्या ऐसा आभास पाया जाता है ? उत्तरका भार चिन्ताशील पाठक और भक्तिमती पाठिकाओंको अर्पणकर विश्व·

* Sir Arther Keith ने अपनी एक वक्तृतामें आडम्बर-शून्य भाषामें कहा है, कि—"जिस आदिम जीवाणुसे हमारे आदि पितामहकी उत्पत्ति हुई है, उसमें ही विधाता पुरुषने मानव जातिकी अस्पष्ट लिपि सदाके लिये लिख दी है—यह सुसभ्य और मार्जित जातिमें आजतक जो कुछ हुआ है या उससे जो कुछ मिला है (या जो भविष्यमें मिलेगा), उसकी सूचना विचित्र विधान द्वारा कालस्रोतके आरम्भकालमें हुआ या अर्थात् मनुष्यकी शक्ति·सामर्थ्य, उसकी गुणावली और सृष्टि रहस्यके समाधानकी उसकी अद्भुत सूक्ष्म-दृष्टि प्रभृति सभी उपादान अस्फुट या अंकुरावस्थामें उसमें मौजूद थे।" अतएव कीथ वगैरह विद्वानोंकर बताया नवयुगका यह अस्पष्टवाद अपूर्व होनेपर भी विद्वानके लिये अपरिहार्य है।

Lamark the real founder of organic Evolutionism, says in his *System Analytique* (1830). "Nature is but an order of things subject to laws originating from the *Will of the Supreme Being* (page 43) of whose existence and boundless power man has from observation concelved an indiract though sound idea (page 8)."

Even Darwin, home many represent as an atheist, concludes his epochmaking *Origin of specis* (page 193, cheap edition) thus —I infer that all organic beings hove descended from one primordial from into which *life was first breathed by the Creactor*, Again in his letters to Sir J. D. Hooker (march 29—1863). to V. Carus (Nov. 29—1865), to D Mackintosh (Feb. 28—1882, i. e. only two months before his death) respectively Darwin writes :—

वरेण्य कई विज्ञानाचार्योंका मत उद्धृतकर इस रहस्यमय अप्रासंगिक विषयका उपसंहार करते हैं।

और अन्तमें जन्मके समय क्षुद्र और असहाय अवस्थामें शक्ति-सागरमें फेंक दिया था। उस समय बाहरकी शक्ति भीतर प्रवेशकर हमारे

---

(1) "It it mere rubbish thinking at present of the origin of life; one might as well think of the origin of the matter."......(2) The principle of life seems to me to be *beyond the confines of Science*......(3) No *evidence* worth anything has as yet in my opinion, been advanced in favour of a *living, developed from inorganic matter.*"

"There are at least three stages in the development of the organic world where some *New cause or power* must necessarily have come into action. The first stage is the *change from inorganic to organic,* when the earliest vegetable-cell (or the living protoplasm out of which it arose) first appeard.........There is in this something quite *beyound* and *aprt from chemical changes* however complex; and it has been well said that the *first vegetable cell was a new* thing in the world *possessing* altogather *new powers.*" [The other stages presenting similar difficulteis are the *introduction of sensation* or consciousness (animal life) and at *rational thought and speech*]—Wallace's *Darwinism,* pages 474—475..

"Of the causes that have let to the origination of living matter it may be said that we *know absolutely nothing*...—Science has no means to from an opinion *on the commencement of life we can only make conjectures without any scientific valve*"—Huxley (article *Biology* in The Encyclopœdia Britannica),"

शरीरका पालन और वृद्धि हुई है। मातृ-स्तनके दूधके साथ स्नेह, माया, ममता भीतर प्रवेशकर और बन्धुओंके प्रेम द्वारा जीव जीवन प्रफुल्लित हो गया है। दुर्दिनोंमें और बाहरके आघातके परिमामस्वरूप अन्तरमें

"There are those who profess to fore-see that the day will arrive when the chemist by a succession of constructive efforts, msy pass beyond albumen and gather the *elements of lifeless matter into a living structure.* Whatever may be said of this from other standpoints, the *chemist* can only say that at present *no such problem lies within his province.*" Sir Henry Rofcœ's *Presidential Address* British Association 1887.

"The *evidence* in favour of spontaneous generation *crumbles* in the grasp of the competent inqurirer—"Tyndall's *Frangments,of science* (article "Spontaneous Generation"

"In the present of the world *no* such thing habpens as the *rise of living creature out of non-living matter*—Herbert Spencer (the Philosopher of Evolution *por excellence*) in the *Nineteenth Century* May 1886. page 769.

Sir Issac Newton declared that the existence of a Being endowed with intelligence and wisdom is a necessary inference from a study of celestial mechanics (vide *principia*, School. Gen.)

"The production of life is *not* within the *present* range of practical Chemistry"—prof. Matchinkoff.

"It does not follow" says Sir Oliver Lodge "that the nature of life is much better understood even when living protoplasm has been artificially put togather, thing which by its interaction matter confers on it what we

शक्ति-संचित हुई हैं और उसीके बलपर बाहरके साथ जूझनेमें समर्थ हो सका हूँ × × × × इसमें मेरा अपमान कहाँ है; इन सबके मूलमें मैं हूँ या तुम? × × × × भीतर और बाहरके इस शक्ति-संगममें ही जीवनका कितने ही गंगोंसे विकास होता है। दोनोंके मूलमें एक ही महाशक्ति है, जिसके द्वारा अजीव और सजीव अणु और ब्रह्माण्ड, अणु-प्राणित हो रहे हैं, उस महाशक्तिका उच्छ्वास ही जीवनकी अभिव्यक्ति है। उस पराशक्तिसे ही मानव दानत्वको छोड़कर देवत्वको पहुँचेगा।"
—आचार्य जगदीशचन्द्र वसु प्रणीत "नवीन ग्रन्थ" अव्यक्त (आश्विन १३२८ सन्में प्रकाशित (पृष्ठ २२७—२२८ देखिये)।

---

know as 'vitality' will still in all probability elude us. It does not apper to be a form of energy but it certainly is a guiding principle utilising forces known to Chemistry and Physics and all the ordinary laws of nature......... which appear to be outside the known laws of the Physical world." Again, in his recent work entitled *The Making of man.* Sir Oljver infers that "some Divine Activity and Purpose is suggested by what we know of the course of Evolútion,"

Lord Kelvin (vide report of his words amended by himself *The Nineteenth Century and ofter*, June 1903) says:—"I cannot say that with regard to the origin of life. Science neither affirms nor denies Creative power—*Science positively affirms creating and directive power*, welch she compels us to accept as an article of belief."

(The *Italics* are ours)

परिभाषा (Glossary)

और

कुछ कठिन शब्दोंका अर्थ

अचल—गति शक्ति हीन (Passive)।

अज्ञेयवाद—Agnosticism.

अणु—यौगिक पदार्थोका सूक्ष्मतम अंश, जिसमें यौगिक पदार्थके सभी गुण विद्यमान रहते हैं (Molecule)।

अणु-वियोजन—किसी यौगिक पदार्थोंके एकदम गल जानेपर, उसके अणु सबका ताड़ित विन्दुमें परिणत होना (dissociation of molecules)।

अद्व्यर्थ—जिसके दो अर्थ न निकलें ; एकार्थ बोध या सुस्पष्ट (Unequivocal)।

अनन्य-विधान—Isopathy, इसका दूसरा नाम "अभेद-विधान" "स एव विधान" है।

अनुपूरक-औषध—Complementary remedies या Complements ;

अभिव्यक्त—अव्यक्त—(या अप्रकाशित या अस्फुट) से "व्यक्त" (प्रकाशित या स्फुट) होना। प्राचीन आर्य दार्शनिक पण्डितोंके मतसे आकाश आदि सूक्ष्म भूतसे यह स्थूल जगत प्रकाशित होनेका (वर्तमान युगके वैज्ञानिकोंके मतसे किसी अज्ञेय एक ही वस्तुके विवर्त्तनसे सभी जड़ और सजीव पदार्थोंका उत्पन्न और स्वतन्त्र रूपसे परिणत होना) नाम "अभिव्यक्ति" (Evolution) है।

अभिव्यक्तिवाद—Theory of Evolution ("अभिव्यक्ति" शब्द देखिये)।

अवरुद्ध प्रमेह—साइकोसिस (Sycosis)।

आकाश—सूक्ष्मानुसूक्ष्म पदार्थ जो ओत-प्रोत भावसे विश्वमें वर्त्तमान है, जो ब्रह्माण्डके प्रत्येक अणु परमाणुकतमें व्याप्त है (Ether)।

आनर्त्तन—ताण्डव रोग (St. Vitu's Dance)।

आक्षेप—अनिक्षा रहनेपर भी मांसपेशीकी खींचन, ऐंठन या अकड़न (Spasm)।

उत्तेजक औषध—जो दवा किसी शारीरिक यंत्रमें उत्तेजना उत्पन्न करती है (Stimulant)।

उत्तेजक कारण—किसी रोगका उद्दीपक या मुख्य कारण (Exciting cause) "पूर्ववर्ती कारण" देखिये।

उद्गम—रक्त-संचारकी वजहसे कोई अंग कड़ा या फूल जाना (Eruption)।

उदरी—पेटका शोथ (Ascites)।

उपदाह—शरीर-विधानकी अतिशय 'उत्तेजना' की वजहसे स्नायु और पेशीकी क्रियाका अधिक होना (Irritation)।

उपादान—जिस जिस पदार्थसे कोई पदार्थ बना हो (Ingredients)।

एकांगीन रोगया स्थानिक रोग—किस रोगका आक्रमण केवल एक अंगपर होता है, समूचा शरीर दूषित नहीं होता (रक्त-दोष नहीं पैदा हो जाता), उसका नाम "एकांगी" या "स्थानिक" (local) रोग है। "कोमल क्षत उपदंश" एक एकांगीन रोग है; क्योंकि इस रोगका विष (virus) किसी स्वस्थ मनुष्यके शरीरमें प्रवेश करनेपर उसकी जननेन्द्रियमें ही एक कोमल जखम पैदा हो जाता है ((समूचे शरीरपर रोगका आक्रमण नहीं होता)। "सर्वाङ्गीन रोग" देखिये।

कटिपेशी वात—Lumbago.

गृध्रसी कटी-स्नायु-शूल—Sciatica.

कणा या कणिका—क्षुद्र अंश (Particles)।

कल्मष या कल्मिष—पूतिवाष्प (Miasms)। परिशिष्ट (ख)—धातु-दोष और उसका निराकरण देखिये।

कार्य—किसी वस्तुको यदि "बल" (force) के विपरीत चलाया जाये तो कार्य (work) करना हुआ। "कार्य" सभी "शक्ति" सहित (Cohesion) के विरुद्ध होते है। सभी "कार्य" में "शक्ति" एक स्थानसे दूसरे स्थानमें संक्रमित होती है [इस परिभाषामें "गति", "बल" और "शक्ति" देखिये]।

कुक्षि-रोग—Hypochondria.

कुलसंक्रमण—पैतृक (Hereditary)।

क्रम—औषधका विभाग किया हुआ सूक्ष्म अंश(Attenuation)।

क्रम-विकास—*Evolution* ("अभिव्यक्ति" शब्द देखिये)।

गति—वस्तुकी अवस्थितिके परिवर्तनको "गति" (motion)। कहते है। परिभाषाका "बल" और 'शक्ति' शब्द देखिये।

गतिशील—Dynamic.

जड़—किसी पदार्थमें परमाणुगत शक्ति जब अचल भावसे मौजूद रहती है, तभी उस पदार्थको 'जड' (matter) कहते हैं। परिशिष्ट (क) (१) अंक देखिये।,

जड़-जायु—Materialistic medicine (materialism in medicine)।

जड़-जायु-युग—*The age of materialistic medicine*।

जायु-विचारण—स्वस्थ शरीरमें औषधका गुण परीक्षण(proving) अर्थात् स्वस्थावस्थामें कोई दवा सेवन करनेपर देह और मनके जो सब लक्षण या भाव प्रकट होते हैं, उन सभी लक्षण और भावोंका लिखना।

जायुज-व्याधि—अफीम, पारा या किनाइन प्रभृति दवाओंके अपव्यवहारकी वजहसे रोगीके शरीरमें पुरानी बीमारीके लक्षणकी तरह उपसर्ग दिखाई देते हैं, उसीका नाम 'जायुज-व्याधि' (Drug-diseases) है।

जीवनी-शक्ति—Vital energy।

जीवाणु—आँखोंसे न दिखाई देनेवाले क्षुद्र-प्राणी (Germs or Bacilli); अनुवीक्षण यन्त्रकी सहायतासे मैलेरिया, प्लेग, उपदंश, हैजा प्रभृति बीमारीमें रक्तमें मिले दिखाई देते हैं। इसलिये, इसे, रोगत्पादक कहते हैं [रोग-बीज पृष्ठ १९७ और परिशिष्ट (ग) 'जीवाणु और जीवागम (४) अंक' देखिये]।

झिल्ली—कोमल सूक्ष्म जालको तरह स्वच्छ आवरण (Membrane)।

तन्तु—'विधान-तन्तु' देखिये।

तन्तु-जायु—Tissue remedies ११४५ पृष्ठ देखिये।

तड़िताणु या तड़ित-कण या तड़ित-विन्दू—Electrons 'पतिशिष्ट (क), देखिये।

द्रव—द्रवीभूत द्रव्य या गली चीज (A solution)।

द्रवीकरण—गलना (Process of solutoin)।

धातुगत रोग—Constitutional disease) 'सार्वाङ्गीण रोग' देखिये।

धातु-दोष—Dyscrasia 'परिशिष्ठ (ख)' देखिये।

नर्त्तनरोग—'आनर्तन' देखिये।

निसर्गज रोगनाशिनी-शक्ति—देहमें प्रकृतिदत्त व्याधि नष्ट करनेकी क्षमता (*Vis Medicatrix Naturae*—The healing power of Nature)।

परमाणु—मूल पदार्थका सूक्ष्मतम अंश (Atoms) परिशिष्ट (क) देखिये।

परमाणुगत शक्ति—Intra-atomic energy.

परांगपुष्ट—जो समस्त प्राणी दूसरेके शरीरमें वास किये बिना जी रह नहीं सकते (parasites)।

परीक्षण—Experiments.

पर्यवेक्षण—Observation.

पार्श्ववात—(दाहिने या बायें पार्श्वका)—पंजरास्थिकी बीचकी पेशियोंका दर्द (Pleurodynal)।

पिकच्चंचु-अस्थि-प्रदाह—Coceyx.

पिकच्चंचु-अस्थि-प्रदाह—Coccygodynia ६७४ पृष्ठ देखिये।

पीडका—व्रण, फुन्सियाँ या फोड़ा (Eruptions)।

पूर्ववर्ती कारण—किसी रोगका दूरवर्त्ती (या गौण कारण predispoting cause)। "उत्तेजक कारण" देखिये।

प्रतिविष—Antidotes.

प्रतिषेधक चिकित्सा—किसी रोगका आक्रमण होनेके पहले उसको रोकनेकी चेष्टा (preventive or prophylactic treatment)।

प्रदाह—जीवदेहके किसी अगमें दर्द, गर्मी, लाली और सूजन होना (inflammation), जैसे—पैर कट जानेपर, गर्दनमें फोड़ा होनेपर, हाथ टूटनेपर, अगुलीमें कांटा गड़नेपर 'प्रदाह होता है।'

प्राण-विद्या—Biology.

प्राण-शक्ति—Vital Energy

बल—आकर्षण या खींचन (attraction), भार (weiht) दबाव (pressure) प्रभृति, जिससे गति उत्पन्न होती है, उसीका नाम 'बल' (force) है। न्यूटन कहते हैं, कि, गति-उत्पादन बलका काम है—बल गति पैदा करता है। गतिकी उत्पत्ति होनेपर समझना

चाहिये, कि 'बल' है। (गति-उत्पादन—बल प्रयोग); पर गतिकी उत्पत्तिका कारण 'बल' नहीं है ; गतिकी उत्पत्तिका कारण कोई नहीं जानता। अतएव 'बल' नामक कोई पदार्थ नहीं है ; पदार्थ यदि कुछ हो भी तों वह शक्ति है (इसी परिभाषा प्रकरणमें "कार्य", "गति" और "शक्ति" देखिये।

बहुव्यापक—जिस बीमारीका हमला एक ही समय बहुतसे आदमियोंपर होता है (Epidemic)।

भेषज-क्रिया—Drug action or action of remedies

भेषज-क्रियाका स्थितिकाल—Duration of drug action

भेषज-लक्षण-संग्रह—Materia Medica.

भेषज-शक्ति—Drug-potency

भेषज-सम्बन्ध—Drug relationship (or relationship of remedies).

मात्रा—औषधका परिमाण (Dose)।

मात्रा-तत्व—औषधका परिमाण विषयक शास्त्र (Posology)।

मूल पदार्थ या रूढ़ पदार्थ—जो पदार्थ स्वजातीय पदार्थके सिवा किसी दूसरी जातिके पदार्थके संयोगसे उत्पन्न नहीं होते (Elements)। परिशिष्ट (क)—(१) अंक देखिये ?

योगिक पदार्थ—संयोग सम्भूत वस्तु (Compounds)। परिशिष्ट (क), (१) अंक देखिये।

रक्त-संचय या रक्ताधिक्य—जीव-देहके किसी स्थानके या किसी यन्त्रमें अधिक रक्त इकट्ठा या जमा होना (Congestion)।

रक्त-संचार—किसी अंगमें अधिक परिमाणमें और तेजीसे खूनका दौड़ना (Determination of blood)।

रक्ताम्बुज चिकित्सा-प्रणाली—(Serum Therapy) पृष्ठ १९९ देखिये।

रसायन शास्त्र—मूल पदार्थका गुण और उनके परस्परके संयोग वियोग आदिसे किस तरहकी क्रिया होती है या कैसे यौगिक पदार्थ उत्पन्न होते हैं—इस विषकी विद्या (Chemistry)।

रोग-विष—रोगोत्पादक जीवाणु या संक्रामक विष (Virus)।

रोग-बीज—Disease germs, (पृष्ठ १६७ देखिये)।

रोगज-जायु—Nosodes.

रोगज-जायु-विधान—हैजा, प्लेग, आदि संक्रामक रोगोंका विष (virus) या बीज (bacilli)—जैसा, उसका रस, पीव, रक्त आदि—शरीरमें प्रवेश कराकर उन रोगोंको हटाने या प्रतिकार करनेकी चिकित्सा-प्रणाली (Isopathy)।

विज्ञान—परीक्षण और पर्यवेक्षण-मूलक विशेष ज्ञान (Science)।

विधान—शरीर-यंत्रका निर्माण या गठन (Structure)।

विधान-तन्तु—जीव-देहके गठनके उपयुक्त सूतकी तरह उपादान (Tissues)।

विवर्त्त या विवर्त्तन—परिवर्त्तन (Evolution) 'अभिव्यक्ति' शब्द देखिये।

विवर्त्त-दर्शी—Philosophy of evolution.

विवर्त्तवाद—Theory of evolution ('अभिव्यक्तिवाद' शब्द देखिये)।

विवर्त्तमतोद्भावयिता—The originator of evolutionisn.

विमर्द्दन—चूर करना (Process of Trituration)

विश्लेष—वियोग या विश्लिष्टकरण (Analysis)।

विपन्न औषध—Antidotol remedies.

विषमगुण औषध—In-compatible or inimical remedies.

विषम ज्वर—जिस ज्वरकी विराम अवस्था कम या दीर्घकाल स्थायी होती है।

विसदृश विधान—Antipathy.

वेग—गतिका परिणाम अर्थात् सेकेण्ड दूरी जितना फुट बढ़ती या घटती है, उसी परिणामका वेग Velocity कहते हैं। जैसे—घोड़ा दो घण्टे (अर्थात् २×६०×६० सेकेण्ड) पन्द्रह मील (अर्थात् १५×१७६०×३ फुट) जानेपर उसका वेग $\frac{१५×१७६०×३}{२×६०×६०}$=फुट प्रति सेकेण्ड।

व्याप्ति—स्थान-व्यापकता, विस्तार (Extension)

शक्ति—कार्य करनेकी (अर्थात् प्रतिकूल बल रहनेपर भी कोई चीज चलानेके लिये) सामर्थ्यको शक्ति (energy) कहते हैं। जैसे फेंके हुए ईंटके टुकड़ेमें शक्ति है; कारण वह मध्याकर्षणके विरुद्ध बहुत कुछ बढ़ सकता है। 'शक्ति' की सृष्टि या नाश नहीं है। शक्ति ही एक जड़ पदार्थका उपादान है परिशिष्ठ (क) देखिये) और शक्ति ही एक पदार्थसे दूसरे पदार्थ में प्रवेश करता है। बाहर के किसी पदार्थसे शक्ति हमारे इन्द्रिय-द्वारमें प्रवेश करनेपर रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द आदिके साथ हमलोग उस पदार्थका अस्तित्व अनुभव करते हैं। इस (परिभाषामें 'कार्य, गति और बल' शब्द देखिये)। अध्यापक लाज (Sir Oliver Lodge. LL. D. D. Sc.) साहब कहते हैं, शक्ति ही बल (force) है। जनक उत्पादक (force generator) Lodge's Elementary Mechanics पृष्ठ १ देखिये।

पदार्थ विद्यामें कहे हुए शक्ति शब्दके उक्त लक्षणके प्रति नजर रखकर होमियोपैथीमें 'क्रम और शक्ति' (poteney or power) शब्द एकार्थमें व्यवहृत होता रहा है। (पृष्ट ११६ देखिये)।

शक्ति-तत्व या शक्तिरूपवाद या शक्ति-विकासनवाद—विमर्दन द्रवीकरण, विलोड़न आदि होमियोपैथिक प्रक्रिया द्वारा, किसी दवाका स्थूल भाग (जड़ांश या अचल भाव) त्यागकर वह रूप या सूक्ष्मांश (या सचल भाव) अर्थात् अन्तर्निहित 'शक्ति (energy or potency)' का विकास किया जा सकता है। इसी मतका नाम 'शक्ति-विकासनवाद'

(Theory of potentiation or dynamisation) ११८ पृष्ठ और इस परिभाषामें 'अणु-वियोजन' शब्द देखिये ।

शक्तिकृत—potentized

संक्रामक रोग—प्रत्यक्ष (direct) स्पर्श द्वारा हो या पदार्थान्तर जैसे—वायु, दूध, जल, खाद्य, वस्त्र, पत्र, मक्खी आदि) के द्वारा किसी मनुष्य से दूसरे किसी स्वस्थ मनुष्यमें रोग बीज संक्रमित (अर्थात् प्रवेश करना) होता है, उस रोगको संक्रामक (infections) रोग कहते हैं ; जैसे—प्लेग, खसड़ा, चेचक । (स्पर्शाक्रमक रोग पृष्ठ १६५ देखिये) ।

संगठन या संश्लेष—संयोगकरण (Synthesis) ।

संश्लेपवाद—Scepticism

सचल—गति शक्ति विशिष्ट (Active) ।

सदृश-विधान, सदृश-व्यवस्था, समविधि, सम-मत, सम-शास्त्र या सम-सूत्र—Homœopathy—The Law of Similars (The Method of Cure) पृष्ठ १०५ देखिये ।

समगुण औषध—Allied or kindred remedies

सर्वाङ्गीण रोग या धातुगत रोग—जिस रोगसे समूचा शरीर दूषित हो जाता है (अर्थात् रक्तमें दोष आ जाता है), उसका नाम 'सर्वाङ्गीण रोग' या 'धातुगत रोग' (Constitutional disease) है । जैसे—'कठिन-क्षत उपदंश' एक सर्वाङ्गीण रोग' है ; क्योंकि यह भयकर रोग विष (virus) किसी स्वस्थ मनुष्यके शरीरमें संक्रमित होनेपर उसमें रक्त-दोष हो जाता है (जैसे—सहवासके बाद विष संगमेन्द्रियमें पहले एक जखमके आकारमें निकलता है, इसके बाद संगमेन्द्रियसे वह ओंठ, अंगुली, स्तनवृन्त, नाड़ी, मलद्वार प्रभृतिके और-और अशोंमें फैल जाता है । 'एकांगीन रोग' देखिये ।

साइकोसिस—अवरुद्ध प्रमेह-विष (sycosis) परिशिष्ट (ख), देखिये।

स्थानिक रोग—'एकांगीन रोग' देखिये।

स्नायु चक्र या स्नायु मंडल—Nervous system.

स्वास्थ्य विधि—Hygienic rules.

सूक्ष्माणुसूक्ष्म—Infinitesimal.

स्पर्श संक्रमण या स्पर्शाक्रमक रोग—प्रत्यक्ष (direct) संस्पर्शकी सहायतासे जो रोग-बीज किसी रोगी मनुष्यसे किसी दूसरे स्वस्थ व्यक्तिमें संक्रमित (प्रविष्ट) होता है, उसको 'स्पर्शाक्रमक या लरछुत' (Contagious) रोग कहते हैं। जैसे—कर्णमूल-प्रदाह (mumps), हूप खाँसी (Whooping Cough), हैजा, इन्फ्लुएञ्जा, कुष्ठ यक्ष्मा, डिफ्थीरिया, चेचक, रक्तामाशय, न्युमोनिया, आन्त्रिक ज्वर प्रभृति रोग 'संक्रामक' और 'स्पर्श-संक्रमण' (दोनों प्रकारके धर्मसे भरे) रोग हैं। संक्रामक रोग पृष्ठ १६५ देखिये।

"स्वतः-जनन"—A biogenesis of sponteneous generation.

स्वयम्भूत—Idiopathic.

N. B-—अन्यान्य पारिभाषिक अथवा दुरुह शब्दोंका अर्थ ग्रन्थमें यथा-स्थान लिखा गया है।

हमारी प्रकाशित अन्यान्य हिन्दी पुस्तकें